वीर अर्जुन

उदयपुर में सहेलियों की

साप्ताहिक

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, सोमवार २२ आषाढ़ सम्वत् २००७ [अङ्क ११

कोरिया में युद्ध

जो शीतयुद्ध बहुत महीनों से चल रहा था, वह कोरिया में 'गरम युद्ध' के रूप में परिणत हो गया है। कोरिया जापान और चीन के बीच में स्थित एक देश है, जिस पर १९१० ई० में जापान ने अधिकार कर लिया था। स्वातंत्र्य के अनेक प्रयत्नों के बाद भी कोरियावासी स्वतन्त्र नहीं हो सके। गत विश्व युद्ध में जापान के परास्त हो जाने पर कोरियावासी स्वतन्त्र होने का स्वप्न ले रहे थे, किन्तु जर्मनी की भांति कोरियावासियों के दुर्भाग्य से उनका देश भी उस समय के मित्र और आज के घोर प्रतिस्पर्धी दो राष्ट्रों के अधिकार क्षेत्र में आ गया। उत्तरी कोरिया पर रूसी सेनाओं ने और दक्षिणी भाग पर अमेरिकन सेनाओं ने अधिकार कर लिया। जिस तरह जर्मनी आज दो सरकारोंद्वारा शासित है, उसी तरह कोरिया भी रूसी व अमेरिकन शासकों द्वारा शासित होने लगा। बीच में कई बार कोरिया को एक करने के प्रयत्न किये गये, संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक सरकार बनाने की नीयत से एक कमीशन स्थिति का अध्ययन करने के लिए भेजा, किन्तु रूस ने न केवल उस कमीशन का बहिष्कार कर दिया, बल्कि उसे उत्तरी कोरिया में प्रवेश तक नहीं करने दिया। १९४८ में रूसी सेनाएं कोरिया से चली गईं और एक वर्ष बाद अमेरिकन सेनाओं ने भी कोरिया छोड़ दिया। इसका परिणाम कोरिया की एकता होना चाहिए था, परन्तु इसके विपरीत एक देश के दो खण्डों में परस्पर विरोध उग्र भाव जोर पकड़ता गया और उसका परिणाम इस युद्ध के रूप में प्रकट हुआ है।

यह निश्चित है कि उत्तरी कोरिया केवल अपने बल पर यह दुःसाहस नहीं कर सकता था, और विशेषकर उस स्थिति में, जबकि वह जानता है कि दक्षिणी कोरिया अमेरिका व राष्ट्र संघ का शिशु है। रूस की सहायता का आश्वासन उत्तरी कोरिया को निस्संदेह होगा। सं० रा० अमेरिका ने सुरक्षा समिति में उत्तरी कोरिया को आक्रान्ता घोषित करा कर अपनी वायु सेनाएं कोरिया के क्षेत्र में भेज दी हैं। इधर ब्रिटेन ने भी प्रशान्त सागर में स्थित अपने समुद्री बेड़े का प्रयोग करने का अधिकार जनरल मैकआर्थर को दे दिया है। इस तरह यह युद्ध केवल कोरिया के दो खण्डों में नहीं रहा, यह युद्ध कोरिया की भूमि पर अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध का रूप धारण कर गया है। अमेरिका व ब्रिटेन के इस तरह कूदने से यह भी निश्चय समझना चाहिए कि यह युद्ध तब तक समाप्त नहीं होगा, जब तक उत्तरी कोरिया की सेनाएं वापस अपनी सीमा में न चली जावें। उत्तरी कोरिया की सेनाओं का दक्षिण में रहना अमेरिका के प्रभाव पर तीव्र कुठाराघात है। दूसरी ओर उत्तरी कोरियन सेनाओं का वापस अपनी सीमा में चले जाना रूस के प्रभाव को समाप्त कर देगा। यह विषम स्थिति है, जिसमें कोरिया का युद्ध लड़ा जा रहा है और इसी कारण विश्वशान्ति खतरे में पड़ गई है।

जापान के मन्चूरिया व जेहोल पर आक्रमण और इटली के अबीसीनिया पर आक्रमण ने राष्ट्र संघ की नपुंसकता प्रकट कर दी थी और हिटलर को पोलैण्ड पर आक्रमण का साहस हो गया था। इसी तरह कोरिया का युद्ध नये संयुक्त राष्ट्र संघ की व्यर्थता और प्रभावशून्यता की घोषणा कर रहा है। देखना यह है कि संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्ताव पर कितने देश उत्तरी कोरिया के विरुद्ध दक्षिणी कोरिया का साथ देते हैं और क्या वे उत्तरी कोरिया पर प्रभाव डालने में समर्थ भी होते हैं या नहीं।

उत्तरी कोरिया अपने पीछे रूस, विशाल साम्यवादी चीन को पाता है, तो दक्षिणी कोरिया को अमेरिका, ब्रिटेन, फारमोसा की च्यांग सरकार, जापान, आस्ट्रेलिया आदि का भरोसा हो सकता है। देखना यह है कि कोरिया का युद्ध किस नये घटनाचक्र को जन्म देता है और उसका विश्व के निकट भविष्य पर क्या प्रभाव पड़ता है? क्या कोरिया की चिंगारी इसी सदी में तीसरे विश्वयुद्ध को जन्म देती है!

*

कोरिया और भारत

कोरिया का विश्व युद्ध किस तरह विश्व शान्ति पर प्रभाव डालेगा, और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति क्या रूप लेगी, यह एक गम्भीर प्रश्न है। किन्तु हमारे लिये इस से भी महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि भारत पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, उसकी नीति क्या होगी, कोरिया काण्ड से वह क्या शिक्षा ले सकता है? इन सब प्रश्नों पर हमें अधिक गंभीरता से विचार करना चाहिये। कोरिया पिछले ४० सालों से जिस राष्ट्रीयता व अखण्डता के लिये लड़ता आया है, देश के विभाजन ने उस भावना को नष्ट कर दिया है। जर्मनी के विभाजन ने भी एक राष्ट्र को दो परस्पर संघर्षशील गुटों में बांट दिया है। यही स्थिति आज भारत की है। भारत व पाकिस्तान में भी आज परस्पर संबन्ध अच्छे नहीं हैं। जिस तरह ब्रिटेन ने पाकिस्तान को जन्म देने के लिये हिंदू-मुसलमानों में विरोध और संघर्ष को बढ़ाया है, उसी तरह कोरिया के दोनों खण्डों में भी रूस व अमेरिका एक दूसरे का विचार धाराओं का तीव्र विरोध करते रहे हैं। विभाजन सदा विरोध को प्रश्रय देता है। उनमें समझौता तब तक कठिन रहता है, जब तक वे दोनों एक न हो जाव। इस सत्य को हमें समझ लेना चाहिये।

कोरिया के समाचारों से यह भी प्रकट हुआ है कि उत्तरी कोरिया के राजनैतिक निर्वासितों के साथ साथ हजारों की संख्या में कम्यूनिस्ट भी दक्षिणी कोरिया घुस आये थे और वस्तुतः यही कम्यूनिस्ट दक्षिणी कोरिया के लिये एक कठिन समस्या पैदा कर सकते हैं। भारत को इससे शिक्षा लेना चाहिये। नेहरू लियाकत समझौते की आड़ में जो हजारों पाकिस्तानी भारत आ रहे हैं, उनमें ऐसे तत्व का समावेश नहीं होना चाहिये, जो कभी देश के लिये अहितकर सिद्ध हो सके। कल तक जो राष्ट्रीयताविरोधी लोगी नारे लगाते थे, और पाकिस्तान भाग गये थे, वे सब एक दम भारत भक्त बन जायेंगे, इसकी सम्भावना बहुत कम लोग कर सकते हैं।

तटस्थता और शान्ति

पर इन सब से बढ़ कर प्रश्न है भारत कोरिया के प्रश्न पर अपनी न का आधार क्या बनावे? क्या वह संयु राष्ट्र संघ के साथ, उस सत्र के साथ, काश्मीर के प्रश्न पर लगातार भार विरोधी रुख ले रहा है, अपने को ब ले? तब क्या वह रूस के साथ अपने मिला ले, उस रूस के साथ, जिस एजेण्ट कम्यूनिस्ट भारत की उन्नति प्रत्येक प्रकार की बाधा डाल रहे है वस्तुतः भारत को अनेक प्रकार के प्रलो भनों व उत्तेजनाओं के बावजूद तटस्थ रहना चाहिए। हम जानते हैं कि तटस्थता की रक्षा अत्यन्त कठिन है, किन्तु इसके सिवा भारत के लिए और कोई मार्ग नहीं है। हमें अपनी नीति का निर्धारण केवल आदर्शों या भावुकता के आधार पर नहीं, व्यावहारिकता की कसौटी पर करना चाहिए। यही आज हम अपने देश के कर्णधारों से कहना चाहते हैं।

किन्तु इससे भी अधिक आवश्यक बात यह है कि कोरिया-काण्ड के कारण जो नई विषम परिस्थिति पैदा हो रही है, उसमें किसी क्षण कुछ भी संभव है और इसलिए देश को अपना सैनिक बल बढ़ाने की बहुत अधिक आवश्यकता है। पाकिस्तान हमारे विरुद्ध कोई भी कदम उठा सकता है, काश्मीर-युद्ध अभी तक अनिश्चित स्थिति में है, पूर्व में बरमा का वातावरण कब कैसा रूप धारण कर ले, यह नहीं कहा जा सकता। इसलिए देश के सामने अपनी शक्ति बढ़ाने का कार्य सर्वप्रमुख हो गया है, पर इसके साथ हमें यह न भूलना चाहिए कि आन्तरिक शान्ति उससे भी पूर्व आवश्यक है।

स्व० स्वा० सहजानन्द

श्री स्वामी सहजानन्द के देहावसान से बिहार एक प्रमुख सार्वजनिक कार्यकर्ता से सदा के लिये वंचित हो गया। वे एक व्यक्ति नहीं, एक सार्वजनिक संस्था थे। बहुत वर्षों से वे देश के स्वाधीनता संग्राम के एक सैनिक व सेनानी के रूप में अब तक कार्य करते रहे। स्वाधीनता संग्राम के विविध अंगों में पूरा भाग लेते हुए भी उन्हें पददलित किसान से विशेष सहानुभूति रही। बिहार का किसान-संगठन यदि किसी भी अन्य प्रान्तीय संगठन से मुकाबला लेता है, तो इसका मुख्य श्रेय आपको ही था। किसानों के तीव्रगामी आन्दोलन के कारण ही उन्हें कांग्रेस का भी विरोध करना पड़ा। वे कांग्रेस से इसी लिये निकाल भी दिये गये, परन्तु किसानों के प्रति प्रेममें कोई कमी न हुई। आज देश में जमींदारी प्रथा [illegible] है। इसका श्रेय [illegible]

नेहरू-लियाकत समझौता (?)

सफल हुआ

(१) मैं मानता हूं कि समझौता बहुत कम सफल हुआ है और यही पहले भी मैं कह चुका था। किन्तु जिस प्रकार के विरोधी से हमें पाला पड़ा है उसे देखते हुये जो कुछ हुआ है, इसकी आशा भी नहीं थी। और इसी लिये मैं यह मानता हूं कि समझौता सफल हुआ है। सफलता और असफलता सापेक्षिक शब्द हैं, जिस तरह ऊंचा या नीचा। आशा से विपरीत वस्तु नीची या असफल होता है। किन्तु जो पहले से ही बहुत आशा नहीं करता, उस के लिये वह वस्तु सफल या ऊंची होती है। जो लोग पाकिस्तान का निर्माण हत्या उपद्रव और बर्बरता की नींव पर करने वाले थे, वे नेहरू जी के साथ बात कर सकें, पूर्वी बंगाल से बिना छेड़ छाड़ किये लोगों को आने दे सकें, यही क्या कम है।

(२) पं० जवाहरलाल नेहरू ने कलकत्ते में समस्त स्थिति पर विचार विनिमय के बाद यही विचार प्रकट किया कि समझौते की दिशा में कुछ प्रगति अवश्य हुई है।

(३) १८ जून को समाप्त होने वाले सप्ताह में पूर्वी बंगाल लौटने वाले हिंदुओं की संख्या ३६०६७ थी जो गत सप्ताह से २००० अधिक है। इसी तरह पश्चिमी बंगाल आने वाले हिन्दुओं की संख्या ३००० कम हो गई यद्यपि यह संख्या इस सप्ताह ४९८०० रही २७५६१ मुसलमान पूर्वी बंगाल गये, तो २५०१२ मुसलमान वापस भी लौटे पूर्वी बंगाल लौटने वाले हिन्दुओं में से ६००० स्त्रियां और ५२३८ बालक थे, जो इस बात का प्रमाण है कि हिन्दू परिवारों में विश्वास बढ़ रहा है।

(४) पूर्वी बंगाल ने कलकत्ता के जिन पत्रों पर पाबन्दी लगा दी थी, वह उठा ली गई है। अब अमृतबाजार पत्रिका, बसुमती, आनन्द बाजार पत्रिका। हिंदुस्तान स्टैण्डर्ड आदि पत्र पूर्वी बंगाल जा सकेंगे।

(५) पिछले दिनों एक समाचार अखबारों में छपा था कि पाकिस्तान के इतिहास में पहली बार एक सिख लाहौर में बिना पुलिस की सहायता से सारे शहर में घूमा। पाकिस्तानी लाहौर के लिये यह अभूत पूर्व बात आज हो सकी है, इसका श्रेय निस्सन्देह नेहरू लियाकत समझौते को है।

(६) पिछले दिनों एक समाचार छपा था कि गत पखवाड़े में पूर्वी बंगाल में भेजे गये जूट का बड़ा भाग भारत पहुंच गया है और आशा होती है कि अब पाकिस्तान शेष जूट भी कुछ अधिक जल्दी भेज देगा। सीमेंट की फैक्टरी की कुछ मशीनों के लिये यातायात का भी समझौता दोनों देशों की नई बदली हुई मनोवृत्ति का सूचक है।

(७) निष्क्रान्त सम्पत्ति सबसे विकट समस्या है। पाकिस्तान इस प्रश्न को टालता आया है। पर अब इस प्रश्न पर फिर चर्चा चली यही इस बात का प्रमाण है कि चर्चा के लिये कोई उभय सम्मत आधार निकल आया है, नहीं तो इस नाजुक प्रश्न पर कोई बात ही न होती। चलसम्पत्ति के विषय में तो समझौता हो ही गया है।

इसलिये मेरी नम्र सम्मति में समझौता सफल ही हुआ।

असफल हुआ

(१) नेहरू लियाकत समझौता सफल नहीं हुआ, इसका सबसे बड़ा प्रमाण इस सप्ताह यह मिला है कि इस समझौते के प्रधान स्तंभ पं० जवाहरलाल नेहरू ने दक्षिण पूर्वी एशिया यात्रा के बाद कलकत्ते में यह स्वीकार किया है कि समझौते की सफलता आशा से बहुत कम है।

(२) असफलता का इससे भी बड़ा प्रमाण यह है कि पं० नेहरू को भी विश्वास हो गया है कि यह समझौता व्यावहारिक नहीं है और पूर्वी बंगाल के हिन्दू वापस अपने घरों में नहीं जावेंगे। तभी वे शरणार्थियों को पश्चिमी बंगाल में बसाने की योजनाओं पर बहुत जोर देने लगे हैं। उन्होंने बंगाल बिहार, उड़ीसा तथा पड़ोसी राज्यों से उन्हें बसाने का बड़ा भारी अनुरोध किया है। एक संयुक्त पुनर्वास परिषद भी बनाया गया है। पं० नेहरू जबान से कुछ कहें, परन्तु उनका हृदय मानता है कि पंजाबी हिंदू और सिखों की तरह से पूर्वी बंगाल के हिंदुओं को बसाने का उत्तरदायित्व उन्हें ही लेना है, पाकिस्तानी सरकार उन्हें नहीं बुलायेगी।

(३) पूर्वी बंगाल में आज भी हिंदुओं पर जो बीत रहा है, वह पाकिस्तानी मनोवृत्ति पर बहुत अच्छा प्रकाश डालता है। २१ जून के एक शरणार्थी के वक्तव्य के अनुसार लूटमार सतीत्व भंग, नावों को रोकना, २०० मुसलमानों का सरकार परिवार पर आक्रमण आदि सबकुछ जारी है। अंसार अब भी बलात् धर्म-परिवर्तन करते हैं, हिंदुओं के खेतों से अनाज, वृक्षों से फल तथा जोहड़ों से मछलियां ले जाते हैं, हिंदू महिलाओं का सिंदूर पोंछ कर उन्हें मुस्लिम वस्त्र पहना दिये जाते हैं। अंसार समझौता नहीं जानते, उन्हें तो लूटमार चाहिए। ऐसी स्थिति में समझौता कैसे सफल कहा जा सकता है।

(४) थोड़ी सी दृष्टि इस पर भी डाल लें कि मुस्लिम नेताओं की मनोवृत्ति पर समझौते का क्या प्रभाव पड़ा है। हैदराबाद से भागे हुए लायक अली को, जिस पर भारत सरकार ने भयंकर आरोप लगा रखे हैं, एक समाचार के अनुसार पाकिस्तान सरकार ने युद्ध सामग्री मंगाने वाले विभाग का परामर्शदाता नियत कर लिया है। यह है भारतीय प्रतिष्ठा पर एक थप्पड़।

(५) पाठकों को मालूम होगा कि पाकिस्तान सम्पादक सम्मेलन के प्रधान पीर रशीदी पिछले दिनों भारत में आये थे और उन्होंने हमारी सरकार की प्रशंसा की थी। इस पर उनकी तीव्र आलोचना पाकिस्तान में हुई, और एक पत्र ने तो यहां तक लिखा — किन्तु मालूम होता है कि उनका दिल सुन्दरियों के केशों में उलझ कर रह गया है। स्पष्टतः यह भारतीय स्त्रियों पर घृणित आक्षेप है।

(६) खलीकुज्जमा पाकिस्तान के एक प्रमुख नेता हैं। वे आज भी एक पान-इस्लामिक साम्राज्य बनाने के फेर में हैं, जिसका उद्देश्य मध्यपूर्व के मुस्लिम राष्ट्रों को इस्लाम के झण्डे तले एकत्र करना है। वे चाहते हैं कि यह कान्फ्रेंस करो, दमिश्क या कराची में की जाय। जब तक पाकिस्तान मुस्लिम राज्य है, साम्प्रदायिक राज्य है, वह भारत से प्रेम नहीं कर सकता और यही सबसे बड़ा कारण है कि यह समझौता सफल नहीं होगा

(७) सारी दुनिया जानती है कि पूर्वी बंगाल में पिछले महीनों में जो दंगे फसाद हुये हैं, उन सबकी जिम्मेवारी वहां के अंसार संगठन पर है। जिस तरह १९४६-४७ में यहां मुस्लिम-नेशनल गार्ड ने बलवे फसाद किये थे, इस तरह इस वर्ष अंसार बलवा अग्निकांड, लूटमार और हत्या, स्त्री अपहरण आदि के लिये जिम्मेवार हैं। इसलिये यह स्वाभाविक था कि पूर्वी बंगाल के अल्पसंख्यक हिन्दुओं ने यह मांग की कि

[शेष पृष्ठ ३६ पर]

रूसी कम्यूनिस्ट जकोस्लोवाकिया के आगे लोहे की दीवार खड़ी करके उसका संसार से संबंध विच्छेद कर रहे हैं।

समाचार चित्रावलि

अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमैन ने अमेरिकन वायुसेना को दक्षिण कोरिया की सहायता करने का आदेश दिया है।

पख्तूनिस्तान का आन्दोलन ईपी के फकीर के नेतृत्व में और भी जोर पकड़ने लगा है।

अमेरिकन जनरल मेकआर्थर ने कोरिया के गृहयुद्ध में दक्षिणी कोरिया की सामरिक कार्यवाहियों का दायित्व संभाल लिया है।

अकस्मात घायल हो जाने के कारण मौ० आजाद ने अपनी टर्की की यात्रा स्थगित कर दी है।

श्री रामास्वामी मुदालियर ने संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रदत्त पद को अस्वीकार कर दिया है।

भारत के प्रसिद्ध किसान नेता स्वा० सहजानन्द सरस्वती का मुजफ्फरपुर में देहान्त हो गया।
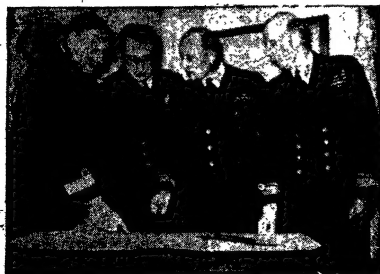
फ्रांस के प्रधान मंत्री जार्ज बिद्दे ल की सरकार का पतन हो गया है।

विस्के की खाड़ी में पश्चिमी यूरोप के राष्ट्रों के नौ सैनिकों का एक सम्मेलन हुआ था। चित्र में ब्रिटेन, फ्रांस तथा नीदरलैंड के सैनिक अधिकारी खड़े हैं।

कोरिया युद्ध की पृष्ठ भूमि

श्री सुरेश

योरोप की पूर्वी तथा पश्चिमी शक्तियों के राजनैतिक मतभेदों तथा उनकी पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा के परिणामस्वरूप पिछले कुछ दिनों से विश्व के विभिन्न राजनैतिक क्षेत्रों से शीतयुद्ध की सम्भावना के मूलभूत कारणों को ही समाप्त करने के लिये कुछ क्षेत्रों में विविध शान्ति योजनायें बनाई जा रही थीं कि सहसा विभाजित कोरिया में गृह-युद्ध की अग्नि अकस्मात ही प्रज्ज्वलित हो गई। रूस-प्रभावित उत्तरी कोरिया ने अमेरिका से सहायताप्राप्त दक्षिणी कोरिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी है तथा कुछ सीमावर्ती प्रदेशों को अधिकारगत कर लिया है। यह स्पष्ट है कि उत्तरी कोरिया की सेनायें रूस के आधुनिकतम शस्त्रास्त्रों, टैंकों आदि से सुसज्जित हैं। दक्षिणी कोरिया ने भी अमेरिका से सहायता की प्रार्थना की है तथा आशा की है कि उसको अमेरिका से अधिकतम सहायता प्राप्त होगी। संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद ने अपनी आकस्मिक बैठक बुलाई है वास्तव में शीतयुद्ध महायुद्ध की प्रस्तावना मात्र है। पिछले दो महायुद्धों के अनुभवों ने संसार को बता दिया है कि किस प्रकार एक युद्ध के समाप्त होने पर दूसरे युद्ध के लिये पृष्ठभूमि तैयार होने लगती है। विजेता राष्ट्र अपने अपने मित्र बल को निरन्तर बढ़ाते रहते हैं, अपने निजी स्वार्थों के कारण शान्ति समझौते करते हैं, किन्तु इन सब समझौतों तथा राजनैतिक दावपेंच का अन्तिम परिणाम हमारे समक्ष स्पष्टतय गुटबन्दी हो जाता है यही है कि राजनीति का आधार आज एक ओर रूस आर्थिक तथा राजनैतिक विषमता से पीड़ित राष्ट्रों की जनता के असन्तोष से लाभ उठा कर अपने प्रभाव-क्षेत्र को बढ़ा रहा है, दूसरी ओर अमेरिका की मार्शल योजना भी अपने प्रभाव क्षेत्र को बढ़ाने की आकांक्षा का ही परिणाम है!

द्वितीय विश्व-युद्ध से पूर्व विश्व राजनीति का प्रधान केन्द्र योरोप तक ही सीमित थी, किन्तु द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति पर आज की राजनीति का एक केन्द्र एशिया भी बन गया है कोरिया के गृहयुद्ध का आधार दक्षिणी-पूर्वी एशिया में अमेरिका तथा रूस की राजनैतिक प्रतिस्पर्द्धा है।

गृह युद्ध की पृष्ठभूमि

प्रथम महायुद्ध में जर्मनी तथा दूसरे युद्ध में जापान तथा जर्मनी दोनों ही योरोप की साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध थे। स्वभावतः ही एशिया के पराधीन राष्ट्रों की सहानुभूति जापान तथा जर्मनी के साथ बढ़ गई। सुभाषचन्द्र बोस का जापान से मिल कर आज़ाद हिन्द सेना का निर्माण तथा उसकी सैन्य सहायता से भारत को स्वतन्त्र कराने की योजना इसी मनोवृत्ति का परिणाम थी। किन्तु जो जापान रूस-जापान युद्ध के बाद, साम्राज्यवादी शक्तियों का घोर विरोधी होने के कारण, एशिया की जनता का आशाकेन्द्र बन गया था, वही अपनी बाद की आक्रमण नीति के कारण एक आततायी राष्ट्र के रूप में गिना जाने लगा। फलतः जापान ने सन् १९१० में कोरिया तथा मंचूरिया पर अपना अधिकार कर लिया। केवल यही नहीं, वह बाद में समस्त एशिया को ही अपने पैरों तले रौंदने का स्वप्न देखने लगा। १९१० में कोरिया पर पूर्णतया अधिकार करने के पश्चात जापान ने कोरिया की जनशक्ति तथा खनिज-पदार्थों का मनमाना उपयोग किया तथा कोरिया से ५०,००० व्यक्ति जापान में कार्य करने के लिये भरती कर लिये गये। उसी समय कोरिया के कुछ निर्वासित व्यक्तियों ने चीन में अपनी स्वतन्त्र सरकार की स्थापना की तथा १९४३ के सम्मेलन में ब्रिटेन, चीन तथा अमेरिका ने मिल कर निश्चय किया कि जापान को पराजित करने के पश्चात कोरिया को पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान की जायेगी। किंतु १९४५ के द्वितीय मास्को सम्मेलन में उन्होंने अपना यह निश्चय बदल दिया और यह निश्चय किया गया कि कोरिया को चार महान् शक्तियों के संरक्षण में रखा जायेगा।

जापान की पराजय पर रूस ने कोरिया में अपनी सेनाओं के आगे बढ़े होने के कारण ३८ वीं अक्षांश रेखा के उत्तर में जापानियों का आत्मसमर्पण स्वीकार किया, जब कि दक्षिण में आत्म-समर्पण स्वीकार करने वाले अमेरिकन थे।
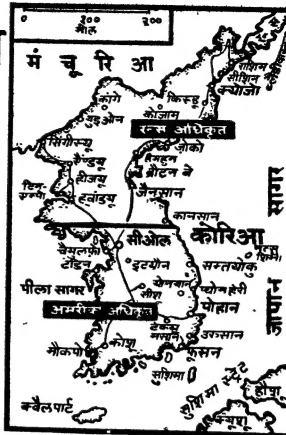
तदुपरान्त कोरिया दो भागों में बंट गया, और एकता के प्रयत्नों के असफल रहने पर उत्तर में रूस के प्रभाव में और दक्षिण में अमेरिका के प्रभाव में अलग-अलग सरकारें स्थापित हो गयीं।

यह आशा की जाती थी कि निकट भविष्य में ही दक्षिणी कोरिया पूर्णतया शासन सम्पन्न हो जायेगा। दक्षिणी कोरिया की जनसंख्या समस्त कोरिया की जनसंख्या का दो तिहाई है और यह उसे बड़ी सुविधा प्राप्त है।

उत्तरी कोरिया की स्थिति

रूस अधिकृत उत्तरी कोरिया अल्प जनसंख्या तथा खाद्यभाव के कारण सामरिक दृष्टि से दक्षिणी कोरिया की अपेक्षा निर्बल है। फिर भी उत्तरी कोरिया को रूस का पूरा पूरा सहयोग प्राप्त है तथा वह दक्षिणी कोरिया की सशस्त्र सेना की वीरता से सम्पन्न कर रही है।

युद्ध के कारण

गत वर्ष जून में दक्षिण कोरिया को स्वशासन देकर अमेरिकन सेनायें कोरिया से चला गयी थीं। किन्तु उत्तर से आये शरणार्थियों के साथ ५००० कम्यूनिस्ट भी दक्षिणी कोरिया में घुस आये और उसी समय से उत्तरी तथा दक्षिणी कोरिया में तनातनी बढ़ रही थी तथा दोनों प्रदेश अपनी आन्तरिक सुरक्षा के बारे में सतर्कशील थे। दक्षिणी कोरिया की राजधानी सीओल के केवल ३८ मील पर ही सीमान्त होने के कारण कभी सीमावर्ती झगड़े हो जाते थे। संयुक्त राष्ट्र संघ ने कोरिया के प्रश्न पर एक कमीशन भी नियत किया था, पर उसे कोई सफलता नहीं मिली। दोनों प्रदेशों को संयुक्त करने की योजना लेकर उत्तरी कोरिया के तीन गुप्तचरों का दक्षिणी कोरिया में प्रवेश संघर्ष का प्रधान कारण माना जाता है। दक्षिणी कोरिया के अधिकारियों ने उन तीन गुप्तचरों को गिरफ्तार कर लिया। उत्तरी कोरिया ने अपने गुप्तचरों की मुक्ति की मांग की तथा वहां की केन्द्रीय समिति ने कोरिया के दोनों प्रदेशों को संयुक्त करने के लिए राष्ट्रव्यापी आन्दोलन करने की योजना बनाई साथ ही उन्होंने दक्षिणी कोरिया के प्रेज़ीडेन्ट सिंगमैन पर अमेरिकन पूंजीपतियों से मिलकर गृहयुद्ध करने का आरोप लगाया और साथ ही युद्ध की घोषणा कर दी।

युद्ध के सम्भावित परिणाम

कोरिया के इस आकस्मिक तथा सशस्त्र युद्ध के सम्भावित परिणामों के सम्बन्ध में नाना प्रकार की अटकल-बाजियां लगाई जा रही हैं। कोरिया के गृह युद्ध में अमेरिका ने खुले, रूप से सहायता देना स्वीकार कर लिया है। इधर रूस उत्तरी कोरिया को सब प्रकार की सहायता पहुंचा रहा है। अतः यह संघर्ष उत्तरी कोरिया के बीच न होकर रूस तथा अमेरिका के बीच हो गया है। प्रकट रूप से अमेरिका शक्तिशाली प्रतीत होता है। किन्तु रूस के सैन्यबल के वास्तविक रूप के सम्बन्ध में अवगत हुए बिना किसी निश्चित परिणाम पर नहीं जा सकता। अमेरिका के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप से पूर्व स्थिति आज से सर्वथा भिन्न थी। किन्तु अब अमेरिका द्वारा दक्षिणी कोरिया को प्रत्यक्ष रूप से सहायता दिये जाने के कारण अन्तिम निष्कर्ष निकालना कठिन है।

कांग्रेस सरकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन की आवश्यकता

श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति

लगभग दो महीने में भारत में पूर्ण स्वराज्य की स्थापना हुए तीन वर्ष हो जायेंगे। तीन वर्षों में हम एक राज्य की गतिविधि को समझने के लिए पर्याप्त सामग्री एकत्र कर सकते हैं। हमें विदित हो सकता है कि जिस नीति से राज्य का संचालन हो रहा है उसमें कुछ परिवर्तनों की आवश्यकता है या नहीं और यदि है तो कैसे परिवर्तनों की।

नये राज्यों की स्थापना दो प्रकार से हो सकती है। एक तो शस्त्रास्त्रों के युद्ध में विजय प्राप्त करके और दूसरे नैतिक परामर्श और समझौते द्वारा। जो राज्य शस्त्र बल से स्थापित होता है, न्यून से न्यून कुछ वर्षों तक उसका संचालन और संरक्षण भी शस्त्रों द्वारा ही किया जाता है। दृष्टान्त के लिए इतिहास के बड़े बड़े आक्रमणों और उनके प्रभाव से स्थापित हुए नये नये राज्यों के इतिहास पर दृष्टि डाल सकते हैं। विजेता ने तलवार के जोर से जिस देश को जीतना प्रारम्भ में उस पर तलवार के जोर से ही राज्य किया। तलवार का आतंक सामान्य पुरुषों के लिए सबसे बड़ा आतंक है और यह सर्वसम्मत बात है कि शासन के कार्य में सफलता पाने के लिए राजदण्ड के आतंक की बहुत बड़ी आवश्यकता होती है। इस कारण जो राज्य शस्त्र बल से स्थापित किये जाते हैं, उनके प्रारम्भिक संचालन में विशेष कठिनाई नहीं होती।

इसके विपरीत जिन राज्यों की स्थापना नैतिक परामर्श, समझौता आदि शान्तिमय साधनों से होती है उनके सामने सबसे बड़ी कठिनाई यह रहती है कि शासन और नियंत्रण की सहायक शक्ति क्या हो? राज्य का आतंक तो होता नहीं और राज्य के प्रति प्रेम उत्पन्न होने में समय लगता है। ऐसी दशा में राज्य की गाड़ी को निर्विघ्न रूप से पटरी पर चलाना कठिन हो जाता है।

यही कठिनाई आज कांग्रेस सरकार के सामने है। भारत का पूर्ण रूप से स्वतन्त्र गणराज्य किसी शस्त्र विजय का परिणाम नहीं है। डा० राजेन्द्र प्रसाद, पं० जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल के अन्य गुणों पर चाहे भारतीय जनता कितनी ही मुग्ध हो, पर यह उनमें से किसी के भी शस्त्र बल या दण्ड बल से प्रभावित नहीं है। हमारे मुख्य शासक बहुत योग्य व्यक्ति हैं, उनकी कानूनी योग्यता के असंदिग्ध होते हुए भी अभी युद्ध के क्षेत्र का अनुभव उन्होंने प्राप्त नहीं किया। इन कारणों से यह स्पष्ट है कि हमारे देश के वर्तमान राज्य को व्यवस्था में रखने के लिए सांग्रामिक दबदबे की सहायता प्राप्त नहीं हो सकती।

तब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि वह कौन सी वस्तु है जो इस नवस्थापित राज्य की आंतरिक दृढ़ता और बाह्य रक्षा की साधिका बन सकती है। कई देशों की प्रजा में राज्य-विधान के प्रति भक्ति की भावना स्वाभाविक बन कर अत्यन्त दृढ़ हो जाती है, जैसे इंगलैंड में। कुछ देशों में राजभक्ति की भावना उतनी पुरानी न होते हुए भी राजनैतिक संस्कार, ऊंची शिक्षा और बढ़ती हुई विभूति के कारण साधारण जनता अपने देश के विधान से अटल प्रेम करने लगती है, जैसे अमेरिका में। अन्य बहुत से ऐसे देश हैं जिनमें अभी सभ्यता ने पूरा प्रवेश नहीं किया, शिक्षा भी कम है, परन्तु पुराने राजवंशों में भक्ति की भावना और राष्ट्रीय स्वाधीनता से प्रेम की गहराई इतनी है कि छोटे मोटे झोंकों से हिलाया नहीं जा सकता। जैसे अफगानिस्तान आदि देशों। में भारत की दशा इन सबसे भिन्न है। यहां का शासक मण्डल न वंशपरम्परागत शासक श्रेणी में से है, न उसने रणक्षेत्र में विजय प्राप्त किया है और न ही भारत की प्रजा की गणतंत्रीय राजनीति में अभ्यस्त और सुशिक्षित है। ऐसी दशा में यह एक विचारणीय प्रश्न हो जाता है कि भारतीय गणराज्य के सुशासन और नियंत्रण की स्थापना किस आधार पर हो। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे केन्द्रीय शासन के संचालकों ने ऐसा मान लिया है कि उन्हें व्यक्तिगत रूप से और भारतीय राज्य विधान को समष्टि रूप से वह भक्तिभाव पुष्कल मात्रा में प्राप्त है, जिसके बल पर अमेरिका जैसे गणतन्त्र राज्यों का शासन होता है। वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है। भारत के गणतन्त्र राज्य की जड़ें अभी बहुत उथली हैं। वे अभी भूमि की गहराई तक नहीं पहुंचीं। राज दंड का भय और भक्ति राज्यों में नियंत्रण की स्थापना के दो मुख्य साधन हैं। प्रजा के मन में यह आश्वासन भी होना चाहिये कि उनके शासक उनके मान और जीवन प्राण की रक्षा कर सकते हैं। इस विश्वास के बिना राजभक्ति स्थिर नहीं रह सकती।

उपर्युक्त विचारधारा को दृष्टि में रखते हुए गत तीन वर्षों के अनुभव के आधार पर वर्तमान केन्द्रीय सरकार के सम्मुख यह परामर्श रखना समयोचित प्रतीत होता है कि वह अपनी कार्य नीति में निम्नलिखित परिवर्तनों की उपादेयता पर विचार करें।

१. अभी कुछ वर्षों तक देश की राजनीति अन्तर्मुखी रहे। अन्तर्मुखी से मेरा अभिप्राय यह है कि राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और अन्य सब मंत्री मिलकर देश की वर्तमान समस्याओं को सुलझाने में एकाग्रचित होकर लग जायें। प्रधान मन्त्री संसार भर में यह घोषणा कर चुके हैं कि हमारा विदेशों की गुटबन्दी से कोई सम्बन्ध नहीं है। भारत किसी अन्य देश पर आक्रमण नहीं करना चाहता, परन्तु साथ ही वह अपने ऊपर किसी अन्य देश के आक्रमण को भी नहीं सहेगा। यह घोषणा हमारे विदेशों से सम्बन्ध को स्पष्ट करने के लिये पर्याप्त है। अब हमारे शासन की सारी शक्ति देश की समस्याओं के हल करने में लग जानी चाहिये।

२. किसी भी राज्य का मूलाधार उसकी प्रजा का सुख और सन्तोष है। महात्मा गाँधी ने जब यह कहा था कि 'कांग्रेस भारत में रामराज्य स्थापित करना चाहती है' तब उनका यही अभिप्राय था। यह सर्वसम्मत बात है कि स्वराज्य के लगभग तीन वर्षों में देश की साधारण प्रजा के कष्टों में कोई विशेष कमी नहीं हुई, और न सुविधाओं में वृद्धि हुई है। यह दशा बहुत भयपूर्ण है। कष्टों से असन्तोष उत्पन्न होता है और व्यापक असन्तोष पुराने से पुराने राज्यों की जड़ों को खोखला कर देता है। हमारी सरकार की अब यह मनोवृत्ति बनानी चाहिये कि बाह्याडम्बर के प्रलोभन में न पड़ कर प्रजा के कष्टों को दूर करने में लग जाये।

३. हमारे राष्ट्र शरीर का सबसे अधिक दुखता अंग वह है जिसे हम 'शरणार्थी' के नाम से पुकारते हैं। राष्ट्र की सारी शक्ति लगा कर शरणार्थियों के निवास और आजीविका का प्रश्न शीघ्र हल करना चाहिये और उसे राष्ट्र के कार्यक्रम में पहला स्थान मिलना चाहिये।

४. देश में विश्वास और बाह्य जगत में गौरव स्थापित करने के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि देश की सेना और प्रजा को सांग्रामिक दृष्टि से सर्वथा सन्नद्ध किया जाये। भारत की यह सदा उद्घोषित नीति रही है कि वह किसी दूसरे देश पर आक्रमण नहीं करना चाहता। परन्तु इसके साथ ही देशवासियों, पड़ोसी और दूर के विदेशियों को भी यह बता देना अत्यन्त आवश्यक है कि 'यदि तुम भारत की ओर बुरी दृष्टि से देखोगे या कोई आक्रमणात्मक कार्यवाही करोगे तो तुम्हें उसका दण्ड भोगना पड़ेगा।' संसार को बता देना होगा कि यह भारत अब ग्यारहवीं अथवा सत्रहवीं सदी का भारत नहीं रहा कि जो चाहे इस पर आक्रमण कर दे। सन् १९५० का भारत उस समय के भारत के समान है जब यवन, शक, हूण और सीथियन चढ़ कर आये और मुंह की खा कर लौट गये। संसार केवल हमारे कहने से नहीं मान लेगा, हमें सैनिक दृष्टि से अपने देश को ऐसा तय्यार करना चाहिए कि कोई आततायी उसकी भूमि और उसके निवासियों की ओर आंख उठा कर भी न देख सके यह तभी हो सकता है, कि जहां एक ओर देश की सेना को खूब शक्तिसम्पन्न बनाया जाये, वहां दूसरी ओर सर्वसाधारण प्रजा को भी युद्ध की आवश्यक शिक्षा दे कर देशरक्षा का साझीदार बना दिया जाये।

५. पांचवां और अन्तिम परिवर्तन, जिसकी सरकार के कार्यक्रम में आवश्यकता प्रतीत होती है, यह है कि उसे देश की शिक्षा की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। आपने गणतन्त्र तो स्थापित कर लिया और उसमें बालिग मताधिकार की योजना भी कर दी, परन्तु अब तक ऐसा कोई प्रयत्न नहीं किया कि सामान्य मतदाताओं को शिक्षित किया जाये या उन्हें गणतन्त्र राज्य के मूल सिद्धान्त समझाये जायें। कहने को तो शिक्षा के कार्यक्रम में 'सोशल एज्युकेशन', 'बेसिक एज्युकेशन' आदि बहुत से शीर्षक हैं, परन्तु असली बात यह है कि इस तैंतीस करोड़ व्यक्तियों से परिपूर्ण देश के केन्द्रीय बजट शिक्षा के लिये इतनी भी गुंजायश नहीं रखी जाती कि तीस व्यक्तियों पर एक रुपया भी खर्च किया जा सके। जो राशि बजट में स्वीकार की जाती है वह वर्तमान शिक्षणालयों को सहारा देने के लिये भी पर्याप्त नहीं। जनता के शिक्षण का कार्य तो उससे हो ही क्या सकता है। शिक्षा का विषय उत्साही और योग्य शिक्षा विशारदों के हाथ में दे कर उसका बजट अबकी अपेक्षा कम-से-कम पांच गुना तो तत्काल ही कर देना चाहिये। कालान्तर में तो उसे और भी अधिक बढ़ाना पड़ेगा। यह स्मरण रखना चाहिये कि अशिक्षित प्रजा के क्षेत्र में गणतन्त्र राज्य की बेल कभी नहीं पनप सकती।

———

इन्द्र धनुष

रूस में निजी घर

पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जहां एक ओर रूस गृहनिर्माण कर रहा है, वहां दूसरी ओर निजी घर बनाने के लिये भी रूसी नागरिकों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। पंचवर्षीय योजना के अनुसार एक करोड़ बीस लाख वर्गमील के फैलाव में निजी तरीके से घर बनाना निश्चित किया गया है। कारखानों और दफ्तरों में काम करने वाले श्रमिक सरकारी सहायता से अपना घर स्वयं बना रहे हैं।

हर सोवियत नागरिक को एक मंजिल अथवा दो मंजिल घर बनाने अथवा खरीदने का अधिकार प्राप्त है। इस किस्म के घर में पांच कमरे तक हो सकते हैं। जो लोग अपने लिये घर बनाना चाहते हैं, उन्हें सरकार की तरफ से हमेशा के लिए जमीन मिल जाती है। ये प्लाट ३०० से १,२०० वर्गमीटर (१ मीटर = १ गज ३ इंच) तक फैले हैं—जिसमें आऊट हाऊस तथा बाग फुलवारी के लिये काफी जगह होती है। यदि कारखाने अथवा दफ्तर का कोई श्रमिक अपने लिये घर बनाना चाहता है तो सरकार उसे १०,००० रूबेल का ऋण देती है, जिसे वह सात साल के अन्दर चुका सकता है। विगत महायुद्ध के रुग्ण सैनिकों तथा दिवंगत छापेमारों और उर सेवक सैन्य के परिवारों को विशेष सुविधायें दी जाती हैं। उन्हें घर बनाने के लिये मुफ्त में काष्ठ मिलता है और उसे ढोने का भी प्रबन्ध कर दिया जाता है। ऐसे हजारों घर कारीगरों ने बना लिए हैं।

औद्योगिक कारखानों के प्रबन्धक की तरफ से श्रमिकों के लिए बहुधा घर बनाये जाते हैं। ये घर श्रमिकों के हाथ सस्ते दामों पर बेच दिये जाते हैं। श्रमिक दस साल के अन्दर थोड़ा २ करके दाम चुका देते हैं। इस प्रकार रेलवे विभाग की तरफ से ४,००० से अधिक घर बनाये गये और उन्हें इंजिन के ड्राइवर, उनके सहायक तथा फायरमैनों के हाथ बेच दिया गया।

●

उल्टे रास्ते

मैं एक गांव का रहने वाला हूं, इसलिये यह कह सकता हूं कि तेल में मिलावट जिस मिकदार में हो रही है, उतना 'कटेला' तो उगता ही नहीं, यह बताते हुये श्री भारद्वाज हरिजन सेवक में लिखते हैं:— मिलावट तो घानी का मालिक—गांव का तेली भी करता है, लेकिन गांव में मैंने कभी किसी को इस काम के लिये कटेला के बीज इकट्ठा करते नहीं देखा।

'सच्ची बात यह है कि तेल के कारखाने तेल में मिलावट के लिये तेल जैसी एक चीज बना लेते हैं, जो उतनी ही आसानी से तेल में मिल जाती है, जितनी आसानी से घी में 'वनस्पति' मिल जाता है। 'जमाये तेल' की फैक्टरी में काम कर चुके एक भाई ने मुझे बताया है कि साफ तेल को जमाये हुये तेल में बदलने पर कुछ गाढ़ा-गाढ़ा तेल बच जाता है। उसमें सब तरह का कचरा और अन्य खराबियां मौजूद रहती है। इस तरह तेल में मिलावट करने के लिये एक चीज आसानी से और सस्ती कीमत पर मिलने लगती है। नतीजा यह होता है कि जमाये तेल के लिये बाजार बनता है, क्योंकि दूसरे दूषित तेलों से जमाये तेल को स्वभावतः तरजीह मिलती है और शुद्ध तेल का मिलना असम्भव बना कर वे लोग हमारे इस प्रचार को, कि ताजा तेल ही खाना चाहिये, जमाया हुआ तेल नहीं, मानों टांग ही तोड़ देते हैं।

उत्तर प्रदेश की सरकार ने कटेला के तेल में मिलावट के खिलाफ आर्डिनेंस निकाल कर जनता को, मिलावट किस चीज की होती है इस विषय में उलटे रास्ते चढ़ा कर चक्करों में डाल दिया है। सरकार ने यदि चुपचाप अपनी सी० आई० डी० की पुलिस को इस खोज में लगा दिया होता, तो किस या किन-किन चीजों की मिलावट हो रही है, यह जान लेना मुश्किल नहीं था। मेरा दृढ़ विश्वास है कि व्यापारी वर्ग के इस भ्रष्टाचार को सरकारी कर्मचारियों की मदद रहती है, वे इसे अनदेखा करते हैं और बेईमान व्यापारियों के इस अवैध और अनीति से कमाये हुये पैसे में हिस्सा लेते हैं।'

●

लाहौर में गुंडागीरी

करांची से प्रकाशित डान लिखता है कि लाहौर की भीतरी दुनिया की जांच से चौंका देने वाली बातों का पता चला है। मालूम हुआ है कि शहर में १२ गुण्डों की सरदारी में एक दल काम करता है। इनके अलग अलग दल हैं। ये लोग दिन दहाड़े गोली वर्षा कर डकैती डालते आदमियों को उड़ा ले जाते, और फिर उनकी रिहाई के लिये लम्बी लम्बी रकमें वसूल करते हैं। वे सरकारी अनुमति प्राप्त वेश्याओं से नियमित रूप से अपना कर वसूल करते हैं और कभी कभी नागरिकों की खुलेआम हत्यायें भी कर डालते हैं। कभी कभी ये सदल बलसहित सज्जित होकर धनवानों के घर डाका डालते हैं। वसूली के लिये नृशंस अत्याचार करते हैं। धन प्राप्ति व अपनी नारकीय व राक्षसी वासनाओं की तृप्ति यही उनका रोज का व्यवसाय बन गया है। स्थिति यहां तक भयानक हो गई है कि इन गुण्डों ने लाहौर के अनेक समाचार पत्रों के मालिक व सम्पादकों को धमकी दी है कि यदि उनकी कार्यवाहियों के बारे में उनके समाचार पत्रों में कुछ प्रकाशित हुआ तो उसका भयानक परिणाम भुगतना पड़ेगा। यह भी समाचार है कि इस गुण्डागीरी के पीछे कुछ प्रभावशाली राजनीतिक तत्वों का समर्थन है इसलिये उन पर कोई कड़ी कार्यवाही करना बड़ा ही दुष्कर हो रहा है। इस प्रकार लाहौर की १५ लाख जनता आज इन मुट्ठी भर गुण्डों की दया पर छोड़ दी गई है।

●

अरब लीग के सामने संकट

लन्दन के 'टाइम्स' पत्र ने मई १५ के अंक में लिखा है कि अरब लीग के सामने एक संकट उपस्थित है। विरोध ने लीग को पृथक विचारधारा के दो समूहों में बांट दिया है, जिसमें एक तरफ मिश्र है और दूसरी तरफ जोर्डन। अन्य सदस्य देश इनके बीच में समझौता करने के प्रस्ताव लिए डोल रहे हैं। सवाल है इजरायल के प्रति अरब राज्यों की नीति का। जोर्डन ने एक यथार्थवादी दृष्टिकोण लिया है। वह इजरायल को राजनैतिक व्यवस्था का एक स्थायी अंग मानता है। इसके विपरीत, मिश्र इजराइल से आर्थिक बहिष्कार जारी रखना चाहता है, इस आशा में कि मध्य पूर्व की शक्ति सन्तुलन में किसी परिवर्तन के परिणाम स्वरूप फिलिस्तीन में १९४८ से जो कुछ हुआ है वह पलट सकता है। इसलिए मिश्र इजरायल के साथ समझौता का विरोध कर रहा है। पत्र ने अन्त में तीन राष्ट्रों की उस घोषणा और उसके अर्थ की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है, जिसमें अरब राज्यों और इजरायल को यह चेतावनी दी गई है कि विराम संधि की वर्तमान सीमाओं का बल के प्रयोग द्वारा उल्लंघन करने का कोई प्रयत्न ब्रिटेन, फ्रांस और संयुक्तराज्य को बरदाश्त नहीं होगा।

●

महामानव और साधारण मनुष्य

महामानव सत्य के प्रति उद्बुद्ध होता है, निम्न स्तर के मनुष्य उपयोगिता के प्रति आकर्षित होते हैं। महामानव का प्रेम अपनी आत्मा के प्रति होता है, साधारण मनुष्य का सम्पत्ति से। महामानव को सदा अपनी भूलों के लिए मिले दण्ड का ध्यान रहता है, साधारण मनुष्य को सफलता के उपहारों का। महामानव दूसरों की सम्पत्ति के प्रति उदार तो होता है परन्तु उनसे पूर्णतया सहमत नहीं हो पाता। साधारण मनुष्य दूसरों से पूर्णतया सहमत हो जाता है किन्तु उदार नहीं होता। महामानव दृढ़ होता है परन्तु आक्रान्ता नहीं, वह दूसरों से सरलतापूर्वक मिल सकता है, परन्तु षड्यन्त्र नहीं रचता। वह अपने को दोषी ठहराता है जब कि जनसाधारण दूसरों पर दोषारोपण करते हैं।

महामानव की सेवा सुगम है, परन्तु सन्तुष्टि कठिन है क्योंकि केवल सत्य ही उसे सन्तुष्ट कर सकता है और वह मनुष्यों का उपयोग व्यक्तिगत योग्यतानुसार करता है। साधारण मनुष्य की सेवा कठिन है पर उसे प्रसन्न करना सरल है, क्योंकि उसकी वासनाओं की परितृप्ति से कोई भी उसे बिना सधा हुए भी सन्तुष्ट कर सकता है, परन्तु अन्यों से काम लेने में वह उनसे पूर्णता की अपेक्षा रखता है।

—कनफ्यूशियस

●

विशाखान्ता गता मेघा,
प्रसूतान्तं च यौवनम्।
प्रणामान्तः सतां कोपो,
याचनान्तं हि गौरवम्॥

विशाखा नक्षत्र के अन्त होने पर वर्षा काल, सन्तान होने पर युवावस्था, महात्माओं का क्रोध प्रणाम तक तथा मांगने पर गौरव का अन्त हो जाता है।

●

युगांडा में भारतीय

श्री ओमप्रकाश वर्मा

अफ्रीका की भूमि पर अपनी समस्त बुद्धि, बल और संचित धन को लगा कर जिन भारतीयों ने उसके सार्वभौमिक विकास को प्रखर बनाने की निरंतर चेष्टा की है, उन्हीं पर आज दिन दखाके श्वेत वर्ण परिपूरित सरकार के कुचक्र युक्त दुःखों का पहाड़ टूट रहा है। क्या यह ऐसा ही रहेगा !

युगांडा प्रदेश में ब्रिटेन ने सन् १८९३ में अपना सिक्का जमा लिया था। इसके पहले वह सूडानियों में अधिकार था। ब्रिटेन ने ज्यों ही वहां अपने जड़ जमानी आरम्भ की वैसे ही सूडानियों ने विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह को दबाने के लिये ब्रिटेन ने भारतीय सैनिकों की सहायता ली। विद्रोह दमन हो जाने के बाद इस प्रदेश के आर्थिक विकास की प्रगति चल पड़ी, जो भारतीय श्रमिकों के कारण ही सम्भव हो सकी। भारतीयों की सहायता का वर्णन करते हुये सर हैरी जान्सटन ने युगांडा प्रोटेक्टरेट को रिपोर्ट में उनकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की। उन्होने लिखा कि 'वे असीमित सफलता के कायल हैं क्योंकि इस प्रदेश में जहां पहले किसी प्रकार का व्यापार था ही नहीं वहां पर थोड़े व्यापार से काफी बढ़ाचढ़ा व्यापार प्रारम्भ कर दिया था।' भारतीय व्यापार, उनकी महत्वपूर्ण उपस्थिति एवं उनके निवास के विषय पर आगे चल कर उन्होंने कहा कि 'पूर्वी अफ्रीका एक अमरीकी की दृष्टि में सर्वथा हिन्दू हैं और ऐसा होना भी चाहिये।'

जिस समय सर हैरी महाशय पूर्वी अफ्रीका में विशेष कमिश्नर के पद पर कार्य कर रहे थे, उस समय वहां लगभग २०,४८४ भारतीय श्रमिक युगांडा के उत्थान में संलग्न विभिन्न पेशों में कार्य कर रहे थे। इसी काल युगांडा रेल निर्माण आरम्भ हुआ। उसके लिये पर्याप्त संख्या में मजदूरों की आवश्यकता हुई। युगांडा सरकार ने भारतीय सरकार से अभ्यर्थना की, तथापि उन्होंने मजदूर भेजनेका वचन दे दिया परन्तु शर्त के साथ। वह शर्त यह थी कि अवधि (ठेके की) समाप्त होने पर युगांडा सरकार भारतीय श्रमिकों को अपने व्यय से भारत पहुंचा देगी। सन् १९३१ की जनगणना से ज्ञात होता है कि उस समय पूर्व युगांडा में भारतीयों की संख्या १३,००० थी। जिसका २४ ०/० भाग कालोनी में ही उत्पन्न हुआ था इस संख्या में ६० ०/० व्यक्ति सदाके लिये यहां बस गये है क्योंकि यहां की भूमि कृषि योग्य है और साथ ही व्यापार करने के पर्याप्त साधन विद्यमान हैं। व्यापारी क्षेत्र में तो वैसे भारतीयों का एकाधिपत्य प्राप्त है। यहां के समस्त व्यापार का ९० ०/० अंश भारतीयों के सुदृढ़ हाथों में है इसका कारण भी स्पष्ट है। श्री टामस और स्काट अपनी उत्कृष्ट रचना 'युगांडा' में लिखते हैं कि जब भारतीयों के लिये भूमि पर बसने का भाग अवरुद्ध हो गया तब उनके लिये व्यापार द्वारा जीविकोपार्जन करने का मार्ग खुल गया। इसके फलस्वरूप, विशेषकर फुटकर व्यापार, जिसका सम्बन्ध अफ्रीकियों से अधिक है, तथा कपास व्यापार के मध्यस्थ जन प्रधानतया भारतीय हैं। निम्न श्रेणी के व्यापार-स्टोर स्थापित होने के प्रथम अफ्रीका में कारवां पूरी प्रकार चालू थे।'

युगांडा की प्रमुख व्यापारिक वस्तु कपास है जिसकी वार्षिक उपज का औसत ढाई लाख बेल से अधिक है। कपास निर्यात का समस्त व्यापार भारत अथवा अन्य एशियाई व्यापारियों के अधिकार में है। युगांडा में उपजी सारी कपास का ६१ ०/० अंश बम्बई में भेजा जाता है। यहां कपास साफ करने के १९४ मिल हैं जिनमें से १५३ फर्मों के मालिक भारतीय हैं। यहा का आन्तरिक व्यापार भी गुजराती और बम्बई के भारतीय व्यापारियों के अधिकार में हैं। व्यापारिक स्तर भी बहुत ऊंचा है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि एक भारतीय साइकिल व्यापारी ने एक मोसम में ५,००० साइकिले बेचीं। फुटकर तथा निर्यात व्यापार की तरह आयात माल को वितरण का उत्तरदायित्व भी भारतीयों का ही है। इस वितरण के लिये भारतीय सौदागर एक 'आवश्यक माध्यम' समझा जाता है। इसके अतिरिक्त रेल के दफ्तरों में भी भारतीय कर्मचारी काम करते रहे हैं। यद्यपि सरकारी नौकरियोंमें इनका अभाव है फिर भी गैर सरकारी क्षेत्रों में भी इनकी दाल गल गई है।

केनिया प्रदेश की तरह युगांडा की जलवायु योरोपीय वर्ग के लिए हितकर नहीं है। इसलिए भारतीयों को कुछ न कुछ भूमि मिल जाती रही है। यद्यपि यहां भी अब भूमि स्थानान्तरण में भारतीयों पर प्रतिबन्ध है। परन्तु केनिया जैसा जातिभेद नहीं है। सम्भवतः इस प्रदेश की निम्न आर्थिक दृष्टि को सामने रख कर जटिल जाति-भेद का हो सकना असम्भव-सा है। यदि भारतीय आर्थिक क्षेत्र से एकाएक पृथक हो जांय तो युगांडा प्रदेश की सारी आर्थिक प्रणाली एव विकास की स्थिति गम्भीर एवं डांवाडोल हो सकती है।

युगांडा विकास कमीशन का मत

भारतीयों की स्थिति पर युगांडा विकास कमीशन ने जो विचारशील विचार प्रकट किये थे वे उनके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने स्पष्ट व्यक्त किया कि "यह देश भारतीय व्यवसायी-वर्ग का अत्यन्त आभारी है और हमारे विचार से उनके प्रति सहृदय-नीति बरतनी चाहिए। उन्होंने साहस और मेहनत से काम किया है और आन्तरिक जिलों को देदीप्यमान करने में सहायता की है। कृषि क्षेत्र में भी भारतीय-वर्ग अमूल्य है, अतः उनके ऐसे विकास के कार्यों को अभिवर्द्धित करने का अवसर देना चाहिए।"

स्वामित्व की झांकी

युगाडा में भारतीय भूमि के स्वामी बन सकते हैं। इस लिए वहीं लगभग ६० बड़े बड़े भूमि स्वामी भी हैं, जो २१,००० एकड़ से अधिक भूमि के अधिकारी हैं। एक भारतीय एक महान गन्नों के बाग का स्वामी है। दो बृहत् चीनी के कारखानों के मालिक भी भारतीय ही हैं। इन कारखानों की वार्षिक चीनी का उत्पादन १०,००० टन होता है

कुछ भारतीयों को ऐसी रियायतें देने के अर्थ कदापि यह नहीं है कि यहां जाति भेद जैसी कोई चीज है ही नहीं। वास्तव में लार्ड मिलनर का निर्णय नेरोबी और ऐन्टेब जिलों में साथ ही साथ घोषित हुआ था। इस घृणित घोषणा के फलस्वरूप युगाडा में भी जाति भेद का प्रश्न खड़ा हो गया था। इस देश में वर्णभेद रेल के डिब्बों, नहर के जहाजों, स्कूल और अस्पतालों में वर्तमान है। परन्तु ऐसा घृणित व्यवहार जापानियों के साथ नहीं किया जाता था क्योंकि वे एक सत्ताधारी देश के नागरिक थे।

इमीग्रेशन की पृष्ठभूमि में कोई जातीय एवं राष्ट्रीय अभिलाषा नहीं है। सन् १९१३ और १९३४ के "इमीग्रेशन रेस्ट्रिक्शन एवं रेन्टवल आफ अनडिजाय रेबल आर्डिनेंस" और "इमीग्रेशन रूल्स" क्रमशः ऐसे नियम हैं जो केवल उन व्यक्तियों को देश में आने से रोकते हैं जो किसी सभ्य देश के लिए अहितकर हों अथवा जो आर्थिक रूप में देश की आर्थिक प्रणाली पर जोंक सरीखे प्रमाणित हो जाय।

भारतीयों और योरोपीयों का गठबन्धन

यहां के भारतीयों ने अफ्रीकियों को रौंदने के लिए सदा यूरोपीय वर्ग का साथ दिया है। इन दोनो की मिलीभगत रहती आई है। आए दिन भारतीय अफ्रीकियों पर हाथ साफ कर देते हैं। बस उद्योग में भारतीयों का एकाधिपत्य है। वे अफ्रीकियों की आर्थिक-हीनता का बुरी तरह फायदा उठाते हैं, जिससे अफ्रीकी उनमें और योरोपियों में विशेष अंतर नहीं मानते और यह ठीक भी है। दोनों शोषणकर्त्ता जो ठहरे। भारतीय यदा-कदा वहां के आदि निवासियों पर दुर्व्यवहार करते नहीं हिचकते। इन्हीं भारतीयों की सहायता से ही, युगाडा सरकार पर प्रभाव डाल कर, योरोपीयों ने "मालिक और नौकर" कानून पास कराया था। युगांडा विकास कमीशन वास्तव में योरोपीय और भारतीय पूंजीवादियो का एक संयुक्त कमीशन था। जब इस कमीशन ने ऐसी सिफारिशें कीं, जिनका विरोध स्वयं भारतीय करते यदि वह इनके लिए लागू होने को होता। किसी भारतीय ने उनका विरोध नहीं किया, किसी ने आवाज उठानेका प्रयत्न भी नहीं किया, वे सिफारिशें थीं कि (१) सब अफ्रीकी अपना नाम, पता आदि पुलिस में दर्ज करावें और अपना 'आइडेंटीफिकेशन कार्ड" हर समय अपने पास रक्खें।

(२) निजी काम करने वाले व्यक्ति, दूसरों के लिए स्वेच्छा से काम करने वाले व्यक्तियों से अधिक कर दें।

(३) फेरीवाले और हाट में बेचने वालों पर इतना अधिक कर लगा दिया जाय कि वे व्यापारिक क्षेत्र से पृथक हो जांय।

(४) सब अविवाहित व्यक्ति वर्ष में दो मास बाहर जाकर काम करें; और

(५) सब मालिक मजदूरी का निम्न-स्तर समान रक्खें।

भारतीयों के अड़ंगे

यदि सरकार इन अफ्रीकियों के सुधार की कोई योजना कार्यान्वित करना चाहती तो भारतीय विरुद्ध हो जाते। वे कहते कि सरकार भारतीयों के व्यापारिक हितों पर कुठाराघात करने की चेष्टा कर रही है। सरकार ने कहवा, कपास, शक्कर तेलहन इत्यादि क्षेत्रों मे विस्तृत मध्यस्थ

[शेष पृष्ठ २४ पर]

आधी दुनिया

नये वकीलों की ज्यादती

अब सावन नहीं आया करेगा

★ अमरचन्द्र पाण्डेय

मेरे कहने का मतलब वकालत के पेशे की निन्दा करना तो नहीं है, किन्तु 'चांद' के किसी पुराने विशेषांक में मैंने एक चित्र देखा था जिसमें तुला के एक पलड़े में वेश्या बैठी थी और दूसरे में वकील। उसमें वकील वाला पलड़ा वेश्या वाले पलड़े की अपेक्षा भारी होने से अधिक झुका हुआ था। यह 'झुकाव' शायद पापों के कारण था।

किन्तु दुःख तब होता है जब झगड़ों में काम आने वाली 'वकालत' हिन्दू जीवन में प्रवेश होने का प्रयत्न करती है। हिन्दू समाज के सुधारार्थ किसी विधान के निर्माण का अधिकार सरकार को है अथवा नहीं, इसके विवाद में न पड़ कर भी इतना कहने में कोई अत्युक्ति नहीं कि 'वकील' हिन्दू समाज के साथ खिलवाड़ करना चाहते हैं। यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि हिन्दू जीवन के— भाई बहिन के— झगड़े वकीलों के पास इतने अधिक आवेंगे कि वे और उनकी सारी पुश्तें, आराम से बैठ कर, मास धन को खा सकेंगे।

'वकील' हिन्दू जीवन के साथ खिलवाड़ करना चाहते हैं। प्रश्न हो सकता है 'कैसे ?' सीधा-सा उत्तर यह है कि हिन्दू कोड में निहित पिता की सम्पत्ति में पुत्री का अधिकार इसका प्रमुख उदाहरण है। लेख का शीर्षक है, शायद बहिनों के जीवन में भविष्य में सावन नहीं आयेगा! जब पिता की सम्पत्ति में पुत्री का अधिकार वैधानिक रूप से मान लिया जायगा तो अनेकों विवाद उठ खड़े होंगे— भाई यह कामना करेंगे कि उनके कोई भी बहन न हो। सम्भव है किसी समय प्रचलित कन्या को जन्मते ही मार देने की प्रथा फिर प्रचलित हो जाय और 'कन्या मेध' शुरू हो जावे।

भाई और बहिन के बीच का वह मधुर सम्बन्ध पूर्णतया समाप्त ही नहीं हो जायेगा, वरन् दो वादी प्रतिवादियों के रूप में बदल जायगा। आए दिन उनमें सम्पत्ति के बटवारे पर झगड़े होंगे और वकीलों के द्वार खटखटाये जायंगे।

आजकल माता पिता और भाई अपनी कमाई प्रेम से पुत्री या बहिन के विवाह में लगा कर प्रसन्न होते हैं और जीवनभर यथाशक्ति कुछ न कुछ देकर उन्हें संतुष्ट करने का प्रयत्न कर अपने को धन्य मानते हैं। आए दिन तीज त्योहार पर उन्हें सम्मान सहित आमन्त्रित किया जाता है और उनको उपहार दिया जाता है, किन्तु हिन्दू कोड की इस धारा के कार्यान्वित होने पर माता-पिता और भाई उनके विवाह में एक पाई भी खर्च नहीं करना चाहेंगे, क्योंकि सम्पत्ति से लड़की को भाग जो मिलेगा। फलतः बरातें अपने घर से भोजन करके या टिफिन कैरियर में पराठें बंद करके कन्या के पिता के घर जाया करेंगी और लौट कर अपने घर आकर भोजन किया करेंगी, अथवा वर का पिता बरात के भोजन की व्यवस्था किया करेगा और ज्योनार, भढ़ार, पत्तल बांधना आदि की बातें स्वप्न की कहानी बन जायेंगी।

'शादी' का मधुर और उल्लासपूर्ण महोत्सव किन्हीं सुधारवादियों तथा कथित विवेकियों की बुद्धि की सनक पर बलि चढ़ जायगा और बरात भी तो २-३ आदमियों की होगी—सो भी साक्षी के रूप में क्योंकि विवाह जो 'रजिस्ट्री' से होकर ठेके बन जायेंगे।

हिन्दू जीवन के अनेक त्यौहार भाई बहिन के मधुर सम्बन्धों पर आधारित हैं। भैया दूज (यमद्वितीया), हरियाली तीज और श्रावणी इनमें प्रमुख हैं। जब श्रावणी आती है तो बहिनों के जीवन में 'सावन' आ जाता है। सावन में बहिनें अपने पिता के घर बुलाई जाती हैं। झूला झूलतीं और मधुर सावन गा कर सावन को मन भावन बना देती हैं श्रावणी के दिन में वे अपने भाइयों के हाथों में राखी बांधती हैं और उपहार प्राप्त करती हैं। भाई-बहिन के मिलन का द्योतक यह मास वास्तव में बड़ा सुहावना लगता है, किंतु हाय रे दुर्भाग्य, बहिनों के कथित हितैषियों के दिमागों से प्रसूत हिन्दू कोड की अधिकार धारा के कारण, यदि वह कार्यान्वित होती है तो, भविष्य में शायद बहिनों के जीवन में सावन नहीं आयगा।

नारी : पुरुष की उलझन

अनुवादक — अशोक

जब स्रष्टा भगवान ने स्त्री का निर्माण किया, तो उन्होंने देखा कि सारी सामग्री तो पुरुष के निर्माण में ही व्यय हो गयी है तथा स्त्री को निर्मित करने के लिये कोई ठोस वस्तु बाकी नहीं बची।

काफी सोच-विचार के बाद स्रष्टा-भगवान ने निम्न लिखित ढंग से समस्या का समाधान किया !—

उन्होंने वर्तुलाकार चन्द्र की गोलाई लतिका का अवगुंठन, कलिका का विकास, मधुमक्खियों तथा अलिनों का गुंजन; सूर्य किरणों का उन्मुक्त हास, वायु की सरसराहट, मयूर का अहंकार, कीर के वक्षस्थल की कोमलता, मृग-शावक का दृष्टि-निक्षेप, मधु की मिठास, अनिल की उष्णता, कोयल की कोमल-स्वर, पाषाण की कठोरता, चीते की चतुराई तथा चक्रवाक का अटल प्रेम और इन सबको मिला कर एक नये जीव का निर्माण किया, और उसका नाम रखा स्त्री, और फिर उसे मनुष्य को सौंप दिया।

पर एक सप्ताह बाद मनुष्य वापिस भगवान के पास आया और बोला — हे भगवान, इस नये जीवन ने तो मेरा जीवन दुःख मय बना दिया है। उसकी वाणी कैंची की तरह निरंतर चलती रहती है। वह मुझे इतना छेड़ती है कि मेरी सहन-शीलता समाप्त हो जाती है, उसे कभी अकेला नहीं छोड़ सकता। आवश्यकता से अधिक उसकी देख भाल करनी पड़ती है। मेरा सारा समय वह ले लेती है, निष्प्रयोजन हर समय चिल्लाती रहती है, और हर समय निठल्ली बैठी रहती है। उसके कारण मेरी तो जान आफत में आ गई है। मैं उसके साथ तो कदापि नहीं रह सकता।

भगवान ने उत्तर दिया — बहुत अच्छा, और उसे अपने पास रख लिया।

पर एक सप्ताह बाद मनुष्य फिर भगवान के पास आया और बोला—भगवन मैं आजकल अपने आप को बहुत अकेला अनुभव कर रहा हूं। पहले जब वह मेरे पास रहती थी तो नाच और गाना सुना कर मेरा मन बहलाया करती थी। वह सदा मेरे साथ रहती और खेलती थी। उसके हंसने में संगीत की ध्वनि आती थी। वह अत्यधिक सुन्दर और कोमल थी। उसके बिना मेरा रहना तो कठिन है। इसलिये कृपया मुझे उसे फिर वापिस कर दीजिये।

भगवान ने कहा—

तथास्तु। और स्त्री को उसे वापिस कर दिया।

[शेष पृष्ठ २२ पर]

नारी-जीवन

● पंजाब सरकार ने अनाश्रित महिला तथा बालकों को स्थान देने की दृष्टि से करनाल रोहतक, जालन्धर तथा होशियारपुर में महिला आश्रम बनाने का कार्य सम्पूर्ण कर लिया है। इन आश्रमों में लगभग १४०० अनाश्रित महिलाएं रह सकेंगी इस कार्यमें सरकार का लगभग ७ लाख रुपया व्यय हुआ है।

● तिब्बत के महात्मा पंचमलामा को देखने के लिए ४६ वर्षीय एक गोरी महिला मिस विवन इतनी विकल हो गई कि वह बिना प्रवेश-पत्र लिए ही हिमालय के दुर्गम पथ को पार कर शिगेटसी पहुँच गई।

सीमा कानून भंग करने के अपराध में उसे २ जून को रंगपो (सिक्किम सीमा) में भारतीय पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया था। किंतु उसे बाद में जमानत पर छोड़ दिया गया। अभी वह दार्जिलिंग में है।

मिस विवन ने एक भेंट में बताया कि मैं तिब्बती महात्माओं के विषय में— विशेषकर शिगेटसी के निकट निवास करने वालों में विशेष रुचि रखती हूँ। किन्तु अभाग्यवश मैं उनसे न मिल सकी। शिगेटसी जाते समय उसने १८ हजार फुट बर्फीले रास्ते को गदहे की सवारी पर पार किया। उसने इस यात्रा को अपने जीवन का महत्वपूर्ण परीक्षण बताया। उसके साथ रहने वाली दुभाषिया ने बताया कि मैं १५ साल से घूम रही हूं, किन्तु ऐसी साहसी महिला मैंने अभी तक नहीं देखी।

● अगणित प्रेम गीतों का देश आयरलैंड, जहां जन-संख्या बढ़ी हुई है और तलाक का प्रायः नाम नहीं है, अब पुरुषों का देश बनता जा रहा है। नवीनतम जनसंख्या आंकड़ों के अनुसार हर १००० पुरुषों के पीछे ९७७ स्त्रियां हैं और स्त्रियों की संख्या निरन्तर घट रही है। चार वर्ष पूर्व जितनी स्त्रियां थीं, अब उनसे १०००० स्त्रियां कम हैं।

इसका सबसे बुरा प्रभाव युवकों पर पड़ा है। उनके लिए वधुएं चुनने का क्षेत्र बहुत ही सीमित है। १५ से लेकर ४५ वर्ष की आयु तक के पुरुष स्त्रियों से बहुत अधिक संख्या में हैं।

७५ और इससे अधिक आयु की स्त्रियां पुरुषों से अधिक हैं और ८० वर्ष से ऊपर की स्त्रियों की संख्या पुरुषों से बहुत अधिक है। इसका मुख्य कारण प्रवास भावना है। आयरिश लड़कियां देश की सीमा से बाहर जाने की बड़ी इच्छुक हैं अतः वह देश को छोड़ कर विदेश चली जाती हैं।

गगन चुम्बी पर्वत श्रेणी की उपत्यका अपने गुरुतम गौरव को चोटियों और शृंगों के रूप में उभरे आसमान की ओर अभिमान से न जाने कितने युगों से निहार रही है इसका किसी इतिहास में उल्लेख तक नहीं मिला। कहते हैं भाद्रपद देवझूलनी एकादशी को उस युग के किसी स्वर्ण समय में गुर्जरों के देवता अपना मनोरम रूप सवारे, हाथों में एक स्वर्ण रंजित ढाल, एक बल्लम और एक कृपाण लिए अपनी अर्धांगिनी लक्ष्मी के साथ आविर्भूत हुए। आसमान से चन्द्र किरणें बिखर पड़ीं— सारा पर्वत प्रांत उस दैविक वैभव श्री से देदीप्य हो उठा।

उसी समय एक गुर्जर परिवार ने उनका आतिथ्य किया— अर्चना की। उस परिवार को देव का वरदान मिला और आज तो उस फले-फूले कुटुम्ब से करीब २०० कुटुम्ब बस गये। वे एक नये ग्राम के रूप में परिवर्तित हो गये। आखिर वह देव का वरदान जो था। पहले तो देवालय न जाने कितने वर्षों तक उन गरीबों का झोंपड़ा ही बना रहा, लेकिन शनैः शनैः दूर दूर तक देव की सौन्दर्य निधि की सुगन्ध पहुंच चुकी थी। सैकड़ों लोग दर्शनार्थ आते रहे। उनकी आशायें देवानुसार फूलती-फलती और कुम्हलाती रहीं। भेंट पूजा की गुन्जायश इतनी बढ़ी कि उस उपत्यका में एक विशाल देवालय बना। युगों की गति के साथ कई तब्दिलियां उसमें हुईं।

एक ऐसी कहावत है कि गूजरों में ज्ञान नहीं होता, लेकिन फिर भी मंदिर का विधान बना, भक्त बढ़े, उच्चाधिकारी, पुजारी बढ़े। रियासत के महाराजाओं ने उन्हें मान्यता दी, लाग बाग की छूट दी, धन दिया और तरह की सुविधायें दीं। यदि यह सब कहा जाय तो कई नई नई कहानियां आपको सुनने को मिलें और इस का स्वरूप ही बदल जाये। अनिच्छा होते हुए भी मुझे कहानी में कुछ भी और अधिक न बढ़ाने के लिए विवश होना पड़ रहा है। गुर्जरों के देवता गुर्जर कौम के प्रतीक स्वरूप नहीं हैं। वे अत्यन्त सुन्दर हैं। उनके स्वर्ण के तो नेत्र हैं— सारी पोशाक ही स्वर्ण रचित है मानों वे स्वर्ग के ही देवता हों। न उन्होंने अन्धे 'सूर' का साथ छोड़ आंख मिचौनी सी खेली थी न वैसा कोई व्यवहार इन अबोध, निरीह और गरीब लोगों के साथ किया। लेकिन युग के साथ—कहते हैं वे भी बदलते गये और इतने बदले कि आज तो वे केवल पाषाण प्रतिमा के रूप में ही रह गये। लेकिन पुजारियों की और भक्तजनों की कमी कभी नहीं हुई होगी— ऐसा विशाल देवालय इस बात का साक्षी है।

आज भी बारी-बारी से गुर्जर लोग 'भक्तमाल' में जिनका नाम तक नहीं

कहानी

गुर्जरों के देवता

श्री शलभ

★

आया और उसी नामोल्लेखन के अमरत्व के उद्देश्य से यह कहानी लिखी जा रही है। आज भी बारी बारी से नियमित रूप से पूजा करते हैं, भेंट, पूजा और प्रसाद प्राप्त करते हैं। देवता उन्हें अपने पूर्वजों से विरासत में मिले हैं, गांव और देवालय उनकी जागीर है, कई एक शिलालेख बन चुके हैं अतः अब तक यह प्रमाणित हो चुका है कि देवता गुर्जरों ही के हैं।

आज भी वह उपत्यका जन-कोलाहल से परिपूर्ण देव झूलनों के महोत्सव की प्रतीक्षा में मुखरित है।

× × ×

संध्या का समय और सूर्य डूब गया है, हल्का-सा धुंधलापन पश्चिम की ओर ही नहीं हमारे इर्द-गिर्द भी दिखाई देने लगा। लोगों के दिल में दीपक जलाने की उत्कंठा के साथ साथ हम सब 'गुर्जरों के देव' के मेले में शरीक होने चल पड़े। हमारे परिचय की कोई खास आवश्यकता तो नहीं है फिर भी दो शब्द कह दें तो कहानी कोई अधिक लम्बी नहीं होगी। हम विद्यार्थी हैं — चौथी, पांचवी, छटी सातवीं से दसवीं तक की कक्षाओं में पढ़ते हैं। हम दो अध्यापक भी हैं। हमारे पास मामूली से कपड़े हैं। कम्बल, लिहाफ और तकिया। शायद हर विद्यार्थी के पास ४,५ रुपये भी हो सकते हैं। दो एक टार्च और एक केंडिल भी है। इतने से सामान से शायद हम से किसी को ईर्षा तो नहीं हो सकती। सबके पास दियासलाई की पेटियां भी हैं इसका यह अर्थ कदापि भी नहीं कि हम सब धूम्रपान करते हैं। हम भी एक तीर्थस्थान यों कहिये कि तीर्थस्थान के निवासी हैं। जहाँ अन्धे सूरदास अपने गीत अपने आराध्य को बड़ी तन्मयता से आत्म विभोर हो कर सुनाया करते थे। कल्पना कीजिये। वे दिन भी कितने सुन्दर होंगे जब सूरदास की सुरीली मधुर ध्वनि से उनके आराध्य का मन्दिर प्रतिध्वनित होता होगा। उन की सरस, सरल और निश्छल वाणी से श्रोताओं के हृदय आप्लावित हो जाते होंगे। इतने गाईडों की मोटी २ पोथियां पढ़ने के बावजूद भी जब कभी हम सूर के पद उनके आराध्य के मंदिर में तार-वाद्यों के तारों की स्वर लहरी पर सुनते हैं तो अपने जीवन की सब कड़वाहट धुल जाती है।

खैर, तो हम बहक गये थे, फिर भी कर तो हम अपने विषय में ही रहे थे। शायद ही दो तीन मील चल पाये होंगे कि अंधकार इतना घनीभूत हो गया कि हमें अपना केन्डिल जलानी पड़ी। हमारे साथ ग्रुप लीडर भी हैं लेकिन उनके आदर्शों से हम लोगों को कोई तकलीफ महसूस नहीं होती है। रात्रि का सन्नाटा, अनेकानेक कीट-पतंग और झिल्लियों की झन्कारें हमारे हृदय में एक अद्भुत कौतूहल पैदा कर रही हैं। लोग अपने अपने अनुभव सुना रहे थे, हम मीलों चल आये, लेकिन न उनके अनुभव ही समाप्त हुए न रास्ता ही। शायद दोनों में यह चुनौती थी कि कौन किससे बड़ा है— जीवनपथ या जीवनानुभव!

बीस मील चलने के उपरान्त ग्रुप लीडर का आदेश हुआ कि हम वहीं ठहर जायें। उनकी जबान से जब आदेश के उक्त शब्द निकले तो हमें बड़े ही मीठे मालूम हुए।

हम अंधेरे में चलते वक्त अपनी थकान, तारोंभरी रात और उसमें बहने वाली ठंडी २ हवा—सब भूल से गये थे। मन में एक अजीब उल्लास था, उमंग थी और हम बड़े मनोयोगपूर्वक कई किस्से-कहानियां व अनुभव सुनने-सुनाने में व्यस्त थे। हम आपको उन किस्सों या अनुभवों की सच्चाई की मान्यता के विषय में कोई दलील देना नहीं चाहते, आखिर दुनिया में कल्पना भी तो एक बड़ी चीज है, और कलाकार? कलाकार की बलवती प्रवृत्ति उसकी कल्पना है, जिससे सत्य को सुन्दरत्व प्रदान कर वह मंगलमय बना देता है—लोग ऐसा कहते हैं; लेकिन हमने उस बीस मील की थकावट को उन किस्सों की सजीदगी कर दिया। हमें थकान इतनी गहरी महसूस नहीं हो रही थी कि हम रुक जायें लेकिन हम सोच रहे थे कि कुछ देर तक 'कैम्प फायर' किया जाय, जिससे मनोविनोद हो—अन्तरशक्तियां जागृत हों। आखिरकार हम एक विशाल काय वट-वृक्ष के नीचे ठहरे, जिसके तने कई अन्य वटों का रूप धारण किये हुए अपनी मजबूती की धौंस हिमालय तक को देने में नहीं चूक रहे थे। आप सिर्फ इलाहाबाद युनिवर्सिटी के लेटरपेड पर लगी वट वृक्ष की छाप की तसवीर से हमारे इस महावट का अनुमान तक नहीं लगा सकेंगे। लेकिन हमें यह पक्का विश्वास है कि आप में वह कल्पना शक्ति है जो हमारे इस वट वृक्ष का अन्दाज लगा सकेगी, क्योंकि ऐसे वृक्ष, 'गुर्जरों के देवता' के गांव के रास्ते में बहुत आते रहते हैं, और यह प्रथम वट वृक्ष था जिसका जिक्र हमने यहां पर अपना कर्तव्य समझ कर किया है।

हमने अपना सब सामान धरती पर रख दिया। कम्बल बिछा दिया। हम पूरे ४० महाशय थे, जो इतनी काली व डरावनी रात में अपनी केन्डिलों के मन्द प्रकाश के चारों ओर वृत्ताकार में बैठे थे। सबसे पहिले राष्ट्र वन्दना हुई और उसके बाद प्रोग्राम शुरु हुआ। एक के बाद एक चीज सुनाई और दिखाई जाने लगी। हमारे मधुर, भैरवीय, गर्दभीय, वृषभीय आदि अनेकों मिश्रित स्वरों से सारा शून्य और धुंआकार वातावरण मुखरित हो उठा, जिनमें घुंघरुओं की रुनझुन भी एक महत्वपूर्ण विशेषता थी। लेकिन आप यह मत समझना कि हमारे कैम्प में कोई बहिन थी। दो चार पक्षी गण भी अपने २ नीड़ों में चूं-चां करने लगे। पता नहीं शिवजी के गण थे या नहीं, जो हमें यह निवेदन करने के लिये बोल पड़े हों कि जिन्दगी का शिवत्व अभी योगनिद्रावलम्बित है। चुप रहो—हल्ला न करो।

हम अपने प्रोग्राम में इतने व्यस्त हो गये कि बांसुरी की स्वर लहरियों और घुंघरुओं की धमक से हमें धीरे-धीरे झपकी आने लगी। सारा वातावरण हमें संगीतमय अनुभव होने लगा ऐसा मालूम पड़ता था कि वह धरती, जिस पर हम मजबूती से बैठे हैं, अपने चारों ओर घूमती हुई गा रही है बैलगाड़ियां जिन के मजबूत और हृष्ट पुष्ट बैलों के गलों में टोकरें और घुंघरु खन-खन, टन-टन कर रहे हैं—सुदूर क्षितिज पर दौड़ते हुये दिखाई दिये। उनमें से ग्राम-बन्धुओं की मधुर वाणी हवा की ठंडी लहरों पर बहती हुई हमारे कानों के सुकोमल पर्दे

[शेष पृष्ठ २० पर]

एक पहलू

नया चीन

माउत्से तुंग का चीन भी लोहे की दीवारों से छिप गया है, इसलिए उसके सच्चे समाचार भी दुर्लभ हो गये हैं। एक असाम्यवादी नये चीन को जिस रूप में देखता है, उसका संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जाता है।

आज कम्यूनिस्ट चीन की भीतरी दशा के सम्बन्ध में तरह-तरह की अटकलपच्चिया लगाई जा रही हैं। वहा विदेशी सम्वाददाताओ के प्रवेश पर जो पाबन्दी लगी हुई है, वही उसका मूल कारण है। निष्पक्ष सम्वाददाताओं के न होने के कारण ही यह सारी दिक्कत हो रही है। एक ओर राष्ट्रवादी सवाद दाता वहां पर भीषण अकाल के समाचार देते हैं तो दूसरी ओर कम्यूनिस्ट सम्वाद दाता वहा किसी भी प्रकार के अकाल के न होने की बात प्रकट करते हैं।

आज वहां कम्यूनिस्ट और राष्ट्रवादी संवाद समितियों के अलावा जो समाचार मिल रहे हैं उनका केन्द्रस्थान है हागकाग। आज कम्यूनिस्ट चीन से हागकाग में यात्री आ जा रहे हैं, उनसे प्राप्त सूचनाओं को ही सब से अधिक विश्वसनीय समझा जा सकता है। ये पूर्ण रूप से तटस्थ भी नहीं होते, क्योंकि वहा से जो लोग आते हैं, उन्हें चीन छोड़ने के लिए प्राय. विवश ही किया जाता है।

इन लोगों के कथनानुसार चीन की वर्त्तमान स्थिति कुछ निम्न प्रकार की है—

सबसे अधिक हानि तो अमीर और मध्य श्रेणी के लोगों को हुई है। उन पर नये नये टैक्स लगाये गये हैं। उनसे जबरन विकटरी बोंड भी खरीदवाये गये हैं। यही नहीं किसानों को भी, जिनके कारण कम्यूनिस्टों को यह सारी विजय प्राप्त हुई, काफी तकलीफों का सामना करना पड़ रहा है। किसान पर भी कई नये टैक्स लगाये गये हैं और उनसे जबरन अनाज छीना जा रहा है। खाने पीने की चीजों की भी वहा कमी प्रतीत की जा रही है।

ग्रामीण जनता का जीवनस्तर भी ऊचा नहीं हुआ है। उल्टे उन्हें अब पहले से अधिक कड़े अनुशासन में रहना पड़ रहा है। विद्यार्थी भी जो पहले कम्यूनिस्ट आन्दोलन के सब से बड़े पोषक थे, अपने में उत्साह की कमी अनुभव कर रहे हैं।

साधारणरूप से यह कहा जा सकता है कि अब तक माओत्से तुग की सरकार वहां कोई विशेष परिवर्तन नहीं कर सकी। अभी हाल में ही माओत्से तुग ने अपने एक भाषण में स्वीकार किया है और यह आशा प्रकट की है कि तीन वर्ष में वहां स्थिति में परिवर्तन हो जायगा। इस स्थिति में परिवर्तन न होने के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं.—

१. गृहयुद्ध वहा पर अभी तक चल रहा है, पर उसके शीघ्र ही समाप्त होने की आशा की जा रही है।

२. तुरंत हो कोई भी परिवर्तन मनुष्य प्रकृति के विरुद्ध है।

३. भारत और पाकिस्तान की तरह वहां की जनता में भी कई भ्रमपूर्ण बातें फैली हुई हैं।

इनके अलावा कुछ कारण और भी हैं। माओत्से तुग आदि नेता भी यह बात स्वीकार कर चुके हैं कि कम्यूनिस्ट अधिकृत प्रदेश में भी लगभग १,५०,००० उग्र राष्ट्रवादी कार्यकर्त्ता छिपे हुए हैं। उनके इलावा कुछ कम्यूनिस्ट नेता भी बहुमत के विचार से सहमत नहीं हैं।

सब बातों पर विचार करने के बाद हम इस परिणाम पर पहुचतेहैं कि वहा पर परिस्थिति यदि अभी विकट है पर कम्यूनिस्ट उन्हें पार कर जाएगे।

आजकल वहा कई सौ रूसी टैक्निशियन और इंजिनियर पहुचे हुए हैं। उनके साथ ही कई उच्च सैनिकाधिकारी भी गए हैं। वहा पर रूसी मित्रता को बहुत महत्व दिया जा रहा है। चीनी—रूसी मित्रता सघ स्थापित किये जा चुके है। आजकल इनकी सख्या १०,००,००० से भी अधिक है। वहा के समाचार पत्रों में अमेरिका की और उससे कुछ कम ब्रिटेन की आलोचना की जाती है। उतनी ही रूस की प्रशंसा की जाती है। अभी वहा रूस के प्रति विरोध की वह भावना जो कि टीटो के यूगोस्लाविया में है, नहीं है। निकट भविष्य में वहां इस बात की आशा भी नहीं है।

श्री माउत्से तुंग

पर यहा इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि चीनी लोग अन्य विदेशियों की भांति रूसी लोगों को भी बहुत पसद नहीं करते। रूसी भी इस बात को समझते हैं और इसलिये वे कभी जनता के सम्मुख आने की गलती नहीं करते। अमेरिकन इसी भूल के कारण वहां बदनाम हो गये थे।

जहा तक वहा की विदेश नीति का सम्बन्ध है, वहां वह दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियों का साथ देने की है। हो चि मिन्ह की सरकार की स्वीकृति इस तरफ पहला कदम है। भारत के साथ भी कम्यूनिस्ट चीन का व्यवहार सौजन्यतापूर्ण है। रूस के साथ तो कम्यूनिस्ट चीन का सम्बन्ध पिता पुत्र जैसा है ही। अमेरिका और ब्रिटेन वहा पर आलोचना की प्रमुख वस्तु बने हुए हैं। अन्य कम्यूनिस्ट देशों के साथ भी उनके सम्बन्ध मित्रतापूर्ण हैं ही।

जहा तक हागकांग का प्रश्न है अभी तक ब्रिटिश और कम्यूनेस्ट अधिकारियों में इस सम्बन्ध में कोई चर्चा नहीं हुई। अभी न तो ब्रिटेन और न ही चीन इस सम्बन्ध में कोई सिर दर्द मोल लेना चाहते हैं। कम्यूनष्ट पहले सम्पूर्ण चीन पर (फारमोसा) अधिकार कर के ही शायद इस समस्या की ओर ध्यान दें।

व्यापार सम्बन्धी नीति के अभी कई दिनों तक पूंजीवादी रहने की ही आशा है। इसका कारण यह है कि बिना इंगलैंड आदि की सहायता के कम्यूनिस्ट चीन आर्थिक और औद्योगिक दृष्टि से समुन्नत नहीं हो सकता। कुछ समय तक तो वहां के बाजारो पर ब्रिटेन का आधिपत्य रहेगा ही। पर पूर्वी योरोप के साथ सरकारी स्तर पर ही व्यापार होगा। और चीन के पूंजीवादियों से अब कोई खतरा भी तो नहीं।

हमारे बच्चे !!!

श्री एरिवांस्की

प्रत्येक विवेकशाली और हृदय वाला व्यक्ति यही चाहता है कि हमारे बच्चे अपने बाप-दादाओं की अपेक्षा अधिक अच्छा जीवन व्यतीत करें। बच्चा घर की रौनक होता है। बच्चे की गूं-गां, उसकी मुस्कराहट से बढ़ कर और कौनसी वस्तु अधिक प्रसन्नता देने वाली है। बच्चे को सहारा देने व जीवन पथ पर प्रथम चरण रखने में सहायता देने के लिये बड़ों के हाथ सदा फैले रहते हैं।

शायद ही कभी ऐसा होता है कि बुरे से बुरा व्यक्ति भी चाहे वह कितना ही भूखा क्यों न हो, बच्चे के हाथ से रोटी छीनने को तैयार हो जाय। किन्तु आज के युद्धप्रेमी मनुष्य करोड़ों बच्चों से न केवल हाथ का कौर ही छीन रहे हैं, अपितु उनकी जान लेने की तैयारियां तक कर रहे हैं। अणुबम की छाया नई सन्तति को, मनुष्य जाति के भविष्य को, उन बच्चों को, जिन्होने हमारी स्थानपूर्ति करनी है, मौत की नींद सुलाना चाहती है।

संयुक्त राष्ट्रों की सामाजिक कौंसिल ने अन्दाज लगाया है कि आजकल दुनियां में ८ करोड़ बच्चे निराश्रय और अनाथ हैं। ये गत महायुद्ध के शिकार हैं। उनके पिता रणभूमि में काम आए, और माताएं बमबारी के कारण मलबे में दब कर मर गई, या जलते हुए मकानों के साथ पर लोक सिधार गई। विभिन्न देशों की गलियों, शहरों, और गांवों में आपको ये बच्चे नजर आयेंगे। अन्धे, लूले लंगड़े, भूख व तपेदिक के कारण निढाल ये बच्चे निराश हो कर हाथ फैलाये गलियों की खाक छानते फिरते हैं।

अमरीका के शासक समूचे विश्व पर 'अमरीकन जीवन मार्ग' बलात् थोपने का प्रयत्न कर रहे हैं। किन्तु इस बात पर वे चुप्पी साध लेते हैं कि लगभग एक करोड़ अमरीकन बच्चे आंख के रोगों से ग्रस्त हैं। १० लाख से अधिक की श्रवण शक्ति दोषपूर्ण है, और चालीस प्रतिशत को डाक्टरी इलाज की जरूरत है।

लड़ाई के चार सालों में इस देश ने बहुत बड़ी मात्रा में पैसा कमाया—६४ अरब डालर। वालस्ट्रीट के बैंकों में सोने के अम्बार लगे पड़े हैं। किन्तु यह धन केवल एक ही प्रयोजन के लिए खर्च किया जाता है, अधिक धन कमाने के लिए। धन इकट्ठा करने के लिए अमरीका के महाजन और सेना अधिकाधिक शस्त्रों और तोपों तथा उड़नकिलों और एटम बमों की मांग कर रहे हैं।

स्कूल जाने की आयु वाले ६० लाख बच्चे (अर्थात् अमरीका के सब बच्चों का ५ वां भाग) आरम्भिक स्कूलों में दाखिल तक नहीं हैं। सरकारी आंकड़े भी बताते हैं कि २० लाख लड़के लड़कियों को जीवन धारण करने के लिए मजबूर हो कर डब्बे बन्द करने के कारखानों, तम्बाकू की फैक्टरियों और कपड़ामिल वगैरह में नौकरी करनी पड़ती है।

एक ट्रेड यूनियन का पत्र लिखता है कि 'प्रातःकाल २ बजते ही एक नौवर्षीया लड़की दौड़ कर बंदरगाह पर नौकरी के लिए चली आती है। ठीक इसी समय मछली पकड़ने वाली किश्तियां आ जाती हैं। ठीक ऐसे ही बच्चों की फौज की फौज को काम पर लगाया जाता है। इसका काम यह होता है कि जैसे ही जाल से मछलियां निकाल कर डाली जाय, वह उनका सिर काट डालें। एक नाद भर सिरकटी मछलियोंके बदले बच्चों को १५ सेण्ट मजदूरी मिलती है। यह कठोर, थका देने वाला और बहुत थोड़ी मजदूरी का काम है।

सान फ्रांसिस्को 'पीपल्स वर्ल्ड' लिखता है कि अमरीका वाले कैलीफोर्निया को पृथ्वी का स्वर्ग कहने के शौकीन हैं। वहां के बच्चो के विषय में उक्त पत्र कहता है। बेकर्सफील्ड और केनफोर्ड के बीच बहुत सी बस्तियां हैं। यहा के निवासी बागों में काम करते हैं। यहा बच्चे चीथड़े पहने हुए अर्धनग्नता की हालत में फिरते हैं। नंगे फर्शों पर सोते हैं। पुष्टिकर खाद्यों की कमी और भूख के कारण मृत्युसंख्या बहुत अधिक है। और जो मौत के पंजे से बच निकलते है, उनकी दशा भी कोई ईर्ष्या के योग्य नहीं है। सात और आठ वर्ष की आयु से बच्चे बड़ों के साथ मिल कर चुकन्दर, तम्बाकू और कपास के खेतों में चौदह, सोलह अठारह-अठारह घण्टे तक बिना विश्राम के प्रातःकाल से ले कर रात तक चिलचिलाती धूप में काम करते रहते हैं।

अमरीका के कानून इस बात की आज्ञा देते हैं कि नौ साल की आयु से बच्चों को कठोर शारीरिक परिश्रम के के कार्यों में लगाया जा सकता है। सब्जियों को डब्बों में बन्द करने के कारखानों में लड़के लड़कियों को एक सप्ताह में ६० घण्टे काम करना पड़ता है। सूत कातने की मिलों में पन्द्रह वर्ष की लड़कियां रात की पाली में काम करती हैं। १४ साल के बच्चों को डब्बे बन्द करने के कारखानों और बेकारियों में १२ घण्टे प्रतिदिन काम करना पड़ता है। और यह सब कुछ उस देश में, जहां १ करोड़ ८० लाख मजबूत और समर्थ वयस्कों को काम ढूंढे नहीं मिलता।

> बालक राष्ट्र का भावी नागरिक है, माता-पिता उसे अपने से भी प्रिय समझते हैं, किन्तु आज भी दुनिया के कितने उन्नत और प्रसन्न देशों में गरीबों के बच्चे उपेक्षित, दीन और दलित हैं।

फ्रेंच सरकार प्रत्येक पुलिस के कुत्ते पर ६४ फ्रांक प्रतिदिन के हिसाब से खर्च करती है। उस बच्चे को, जिसका पिता लड़ाई में फ्रांस की रक्षा करते हुए मारा गया था, केवल ३० फ्रांक का भत्ता मिलता है।

मैक्सिको में प्रतिवर्ष २॥ लाख बच्चे अनेक रोगों से पीड़ित हो कर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। अस्वास्थ्य प्रद अवस्था में रहने के कारण ६० प्रतिशत बच्चों को चर्म है। ६॥ हजार बच्चों को लाइलाज कोढ़ की बीमारी ने खा रखा है और लगभग ७ हजार को यह बीमारी लग जाने का खतरा है, क्योंकि वे अपने माता पिता के साथ कोढियों की बस्तियों में रहते हैं।

ईरान में ९९ फीसदी बच्चों को तपदिक, मलेरिया या ट्रेकोमा (आंख की बीमारी) है।

मोराको में प्रत्येक हजार में से ७०० बच्चे प्रारम्भ में ही मौत के शिकार बन जाते हैं।

लातिन अमरीकन देशों— ब्राजील बोलिविया और चिली— में बच्चों को बहुत कठिन और स्वास्थ्य के लिए हानिकर कामों में लगाया जाता है। १३ वर्ष की आयु वाले बच्चों को बड़ों के समान कार्य करते हुए बड़ों की अपेक्षा २० से २५ प्रतिशत कम मजदूरी दी जाती है।

बच्चे स्वयं अपनी रक्षा करने में असमर्थ हैं। उनकी रक्षा करना प्रत्येक ईमानदार युवक का कर्त्तव्य है। बच्चे प्रत्येक देश तथा सम्पूर्ण मनुष्य जगत के भविष्य होते हैं। बच्चों के आज के जीवन पर विश्व का भविष्य आश्रित है।

नई नस्ल के अच्छे जीवन के स्वप्न रखना ही काफी नहीं है। बच्चों की रक्षा के लिए संघर्ष की भी आवश्यकता है।

वर्ल्ड फेडरेशन आफ ट्रेड यूनियन्स' महिलाओं की अन्तर्राष्ट्रीय डेमोक्रेटिक फैडरेशन और 'प्रजातन्त्रीय युवकों की वर्ल्ड फैडरेशन' १४ साल से कम उमर वाले बच्चों से मजदूरी कराने की बिल्कुल मनाही करने की मांग करती है। इनकी मांग है कि १४ साल से कम के बच्चों के परिश्रम का शोषण कानूनी तौर पर दण्डनीय समझा जाय उन्होंने अपील की है कि बच्चों और नवयुवकों के अधिकारों की रक्षा डट कर की जाय।

भारत के संविधान में ही १४ साल से कम उम्र के बालकों को कलकारखानों में न लगाने की हिदायत दी गई है।

———

[१]

[२]

[३]

[४]

चित्र नं० १ 'फायर स्टेशन' के कर्मचारी आग बुझाने का अभ्यास कर रहे हैं। चित्र नं० २ में चित्रित यह सीढ़ियां इधर उधर घुमाई जा सकती हैं तथा इनकी सहायता से विशालकाय भवनों की छत पर से भी संकटग्रस्त व्यक्ति की रक्षा की जा सकती है। आग बुझाने में टेम्स आदि नदियां बहुत बड़ी बाधक हैं किन्तु यह किश्ती (चित्र नं० ३) इन सब बाधाओं को पार कर निर्दिष्ट स्थान पर पहुंच जाती है। चित्र नं० ४ में चित्रित स्थान प्रमुख 'फायर स्टेशन' है जहां दुर्घटना होने पर घंटी बज उठती है और अग्निकांड की सूचना निकटतम केन्द्र को दे दी जाती है।

लन्दन फायर-ब्रिगेड की कार्य कुशलता

संगठित रूप से आग बुझाने के प्रयत्न लन्दन में प्राचीन समय से हो रहे हैं और इस विषय में उपलब्ध ऐतिहासिक संकेत सन् १२१२ से सम्बन्ध रखते हैं। अतीतकाल में उपस्थित आग की अनेकों भाप तथा अन्य भी अपरिवर्तित रूप में मौजूद हैं। आग बुझाने और आग के खतरे को रोकने के दृष्टि से लन्दन का फायर ब्रिगेड सारे संसार में कार्य क्षमता का प्रतीक माना जाता है।

लगभग २१०० कर्मचारियों और ढाई सौ आग बुझाने के इञ्जनों का दल ५८ भूमि और तीन नदी स्टेशनों में (जो लन्दन के सम्पूर्ण नगर क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थानों पर स्थापित किए गए हैं) बांट दिया गया है। ये सब एक अत्यन्त सुगठित योजना के अनुसार काम करते हैं ताकि पांच मिनट के अन्दर आवश्यक स्थान पर पहुंच सकें और सौ आदमियों का दल आवश्यकता के समय पन्द्रह मिनटों में सदैव उपलब्ध हो सके।

लन्दन फायर ब्रिगेड के अन्दर प्रयोग और नए यन्त्रों की परीक्षा का काम चलता ही रहता है। कर्मचारियों को जो केवल शारीरिक योग्यता और शक्ति ही नहीं किन्तु यन्त्रादि को सम्हालने की योग्यता को देखते हुए चुने जाते हैं, नए विचार और सुझाव उपस्थित करने का प्रोत्साहन दिया जाता है। हाल की नवीनताओं में खाकी टाकी सामग्री का प्रयोग उल्लेखनीय है। गाड़ियों में रेडियो टेलीफोन लगा दिया जाता है। इस प्रकार वे चाहे जहां जाएं अपने कार्यालय से सम्पर्क बना रहता है। फलतः वे अधिक तेजी से काम कर सकते हैं और केन्द्रीय कार्यालय उन पर अधिक नियन्त्रण रख सकता है।

यद्यपि आग बुझाना लन्दन फायर ब्रिगेड का मुख्य कर्तव्य है, किन्तु वे जनता की सेवा अन्य प्रकारों से भी करते हैं।

★

[१]

[२]

[३]

[४]

अमेरिका में भावी युद्ध की तैयारी

★

राष्ट्रपति ट्रूमैन द्वारा बार-बार विश्व-शान्ति की घोषणा किये जाने पर भी अमेरिका अपनी सैनिक शक्ति को सुदृढ़ बनाने के लिये अनवरत प्रयत्न कर रहा है। स्थल-सेना, वायुसेना तथा नौसेना में निरन्तर वृद्धि की जा रही है। अभी हाल में ही राष्ट्रपति ट्रूमैन ने सर्वश्रेष्ठ उदजन बम को यथाशीघ्र तैयार करने के लिये अमेरिकन-कांग्रेस से ३० करोड़ डालर की मांग करने की घोषणा की है। अभी पिछले दिनों अमेरिका के 'सैनिक-दिवस' पर देशव्यापी प्रदर्शन का आयोजन किया गया था, (चित्र नं० १,४) जिसमें एक बमवर्षक ने विशेषरूप से जनता का ध्यान आकृष्ट किया। इस प्रदर्शन के निरीक्षकों में राष्ट्रपति ट्रूमैन भी थे। अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन से ५ मील की दूरी पर एक पंचभुजा कार भवन है (चित्र नं० ३) जहां युद्ध सम्बन्धी गुप्त मन्त्रणायें की जाती हैं। अमेरिका का यह प्रयास क्या वास्तव में विश्व-शान्ति के लिये है? व्यंग चित्र नं० २ में अमेरिका की तैयारियों पर यथेष्ट प्रकाश पड़ता है।

अंग्रेजी के साहित्यिक डिक्टेटर— डा० जॉनसन

श्री भवानीलाल भारतीय

साहित्यकार अपने देश की भावनाओं का प्रतिनिधि होता है। उसमें हम उसके देश के चरित्र को मूर्त रूप में देख सकते हैं इस दृष्टिकोण से विलियम शेक्सपियर और डा० सेमुअल जानसन अंग्रेजी जन समाज के प्रतिनिधि साहित्यकार थे। दोनों ही साहित्यकारों ने न केवल अपने देश में ही, अपितु समस्त साहित्यिक जन-समाज में पर्याप्त ख्याति अर्जित की है। शेक्सपियर की प्रसिद्धि और लोकप्रियता का कारण उनकी वे कलाकृतियां हैं, जो उसके देशवासियों को उनके साम्राज्य से भी अधिक प्रिय हैं। परन्तु डा० जानसन की प्रसिद्धि का एक दूसरा कारण है। वे अपनी साहित्यिक सेवाओं के कारण कम, किन्तु अपने व्यक्तित्व के कारण अधिक लोकप्रिय हैं। डा० जानसन की चरित्रगत विशेषताओं के कारण ही वे ब्रिटिश जन समूह के लोकप्रिय साहित्यकार हैं।

इंगलैंड के जीवन में वे इतने घुल मिल गये हैं कि वहां का प्रत्येक नागरिक उनके नाम का प्रयोग अपने वार्तालाप और वादविवाद में करता है। उनके जीवनकाल में ही उनकी यह प्रसिद्धि साहित्यिक-क्षेत्र के बाहर साधारण लोगों में फैल गई थी। कांपनेत्रिया उनसे बातचीत करने में गर्व अनुभव करती थीं, सिपाही अपने बैरकों में उनसे मिल कर खुश होते थे और सराय वालों को इस बात का गर्व था कि डा० जानसन ने एक रात उनकी सराय में विश्राम किया था। आज भी जब इंगलैंड के रहने वाले अपनी बातचीत में डा० जानसन की सूक्तियों का प्रयोग करते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्हें अंग्रेजी जन समाज में एक प्रकार का अर्द्ध पौराणिक स्थान प्राप्त है। वे एक राष्ट्रीय संस्था हैं।

वस्तुतः डा० जानसन के व्यक्तित्व में हम अंग्रेजी चरित्र के उन्नत और प्रतिष्ठित रूप का दर्शन पा करते हैं। उनकी इस प्रसिद्धि का कारण क्या है? जैसा कि पहले कहा जा चुका है वे अपनी साहित्यिक कृतियों के कारण प्रसिद्ध नहीं हैं। उनसे अधिक तो पोप और ग्रे की रचनायें इस समय अधिक सम्मान से पढ़ी जाती हैं। परन्तु फिर भी उन्हें डा० जानसन जितना राष्ट्रीय सम्मान नहीं मिला। वस्तुतः उनकी प्रसिद्धि का कारण उनका व्यक्तित्व ही था, जो समस्त अंग्रेज जाति की भावनाओं और आशाओं का प्रतिबिम्ब है। उनके देशवासी उनकी निर्भीक सत्यता असाधारण बुद्धि और अदम्य मानवता की ओर आकर्षित हुए।

अन्य साहित्यिकों की तरह डा० जानसन ने अपने आपको साधारण धरातल के मनुष्यों से ऊंचा उठा कभी नहीं समझा। उन्होंने शारीरिक दुखों और सुखों में एक साधारण मनुष्य की भावना रक्खी। उनके जीवन का अधिकांश भाग बीमारी और दुःख में व्यतीत हुआ, फिर भी उन्होंने कभी दुःखों को आत्म समर्पण नहीं किया, और इसी प्रकार इन्द्रियजनित सुखों के प्रति भी उन्होंने विराग की भावना प्रकट नहीं की। भोजन के प्रति उनका दृष्टिकोण एक साधारण जिह्वा लोलुप व्यक्ति का सा रहा, और उन्होंने इस विषय में अपनी राय स्पष्ट रूप से प्रकट की। एक अवसर पर उन्होंने कहा कि मैं अपने पेट का ध्यान रखता हूं और मेरा विश्वास है कि जो अपने पेट का ध्यान नहीं रखता, वह किसी का भी ध्यान नहीं रख सकता। विचार प्रकट करने की यह कोई सरकृत प्रणाली नहीं है और जिन्होंने भोजन की मेज पर उन्हें अपने काम में तल्लीन देखा है, वे उसे कोई अच्छा दृश्य नहीं बतायेंगे, परन्तु फिर भी इतना तो अवश्य है कि वे अपने विचारों द्वारा ठोस मानवीय धरातल पर खड़े हैं।

मनुष्य जीवन ही उनके अध्ययन और वार्तालाप का एकमात्र विषय था और इसी कारण अंग्रेजी जनता ने यह पहिचान लिया कि डा० जानसन के व्यक्तित्व में ही हमें उस बुद्धिमत्ता और अध्ययन शीलता के दर्शन होते हैं जो स्वयं धार्मिक होते हुए भी जीवन के तथ्यों की उपेक्षा नहीं करता था और जो एक विद्वान, दार्शनिक और एक आदर्श ईसाई होते हुए भी सर्वाधिक रूप से एक मनुष्य था।

डा० जानसन को उनके देशवासी अपने धार्मिक मतवादों में एक कट्टर ईसाई के रूप में देखते हैं। उन्होंने हमेशा नैतिक प्रश्नों को मुख्यता दी, परंतु वास्तव में उनका आधार रूढ़िवादी नहीं अपितु तर्क पर प्रतिष्ठित था। इन्हीं गुणों के कारण डा० जानसन की प्रतिष्ठा हुई। वह गम्भीर और यथार्थवादी थे। उनकी सादगी और स्पष्टवादिता ही वे गुण थे जिनके कारण वे राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के अधिकारी हो सके।

डा० जानसन आजन्म रोगी रहे। उनके जीवन पर दुःख के काले बादल सदैव छाये रहे। उन्होंने कभी अच्छे स्वास्थ्य का उपभोग नहीं किया। वे जीवन को दुःख और निराशावाद के दृष्टिकोण से देखते थे। दुःखवाद के पोषक डा० जानसन के स्वभाव में जो एक सहज कर्कशता थी, उसका कारण भी यही था कि जीवन में उन्हें स्वास्थ्य का सुख कभी नहीं मिला। उनकी प्रसिद्ध जीवनी के लेखक जेम्स बासवेलके अनुसार तो शायद ही उन्होंने कभी अपने अंगों का स्वतन्त्रतापूर्वक और सहज उपयोग किया हो। उनके मुंह की विचित्र आकृतियां उनके मित्रों को अत्यधिक पीड़ा पहुँचाती थीं और लोगों की भीड़ कभी २ उन्हें घेर लेती थी। वे स्वयं इस बात की चेष्टा करते थे कि लोग यह समझें कि उनके अंग प्रत्यंग एक स्वस्थ मनुष्य की तरह ही काम कर रहे हैं और इसको सिद्ध करने के लिए वे कभी कभी शारीरिक श्रम प्रदर्शित करने वाले खेलकूद में भी भाग लेते थे। यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि शारीरिक कष्टों का डट कर मुकाबला करने वाला वही व्यक्ति मृत्यु से घबराता था, परन्तु उनका मृत्यु से डरना, नैतिक या आध्यात्मिक भय (अभिनिवेश) ही अधिक था, शारीरिक नहीं।

अपने विरोधियों के प्रति उनका व्यवहार कितना कठोर होता था यह उनके लार्ड चेस्टर फील्ड को लिखित पत्र से प्रकट होता है। इस प्रकार जानसन के चरित्र में हमें कई विचित्र बातों का समावेश मिलता है। भोजन के विषय में उनकी सावधानी की चर्चा पहले की जा चुकी है। चाय के बीसों प्याले एक साथ पी जाना उनके लिए साधारण बात थी। उनका अकृत्रिम सहहास उनकी मित्र मण्डली में बहुत प्रसिद्ध था। ये बातें सिद्ध करती हैं कि मानवीय समस्याओं का विश्लेषण करने वाला यह दार्शनिक साधारण बातों को कितने निकट से देखता था। उसने यह विस्मरण नहीं किया था कि अन्य साधारण मनुष्यों की तरह उसके भी इन्द्रियां हैं।

उन्हें अपने देश की सामाजिक परिस्थितियों का विस्तृत ज्ञान था। वे स्वयं गरीब थे और उन्होंने सदैव गरीबों के प्रति सहानुभूति दिखाई। वे गरीबी को मानव समाज का शत्रु समझते थे और उनकी धारणा थी कि इसके नष्ट किये बिना मनुष्य अपने सद्गुणों का विकास नहीं कर सकता। गरीबी के प्रति उनकी यह धारणा ईसाई सिद्धान्तों के प्रतिकूल दिखाई देती है क्योंकि बाइबिल में गरीबी को अत्यधिक गौरवान्वित किया गया है।

डा० जानसन ने राजनैतिक और सामाजिक समानता के सिद्धान्तों में कभी विश्वास नहीं किया। उनके अनुसार साम्यवाद के ये आदर्श अनुचित और मूर्खता पूर्ण थे। परन्तु फिर भी एक विशेष

[शेष पृष्ठ २० पर]

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त.

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन महिला धर्मशीला और उसकी लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। अनिरुद्ध अपने दल के साथ मिरजापुर के गांवों में फैली हैजे की महामारी में तन-मन से सेवा करता है, वहां से लौटने पर विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं और विवाहेच्छु सज्जन के पास जाकर उसे समझाते हैं, किन्तु अन्त में सफल नहीं होते। तत्पश्चात वे कन्या के मामा रसिकलाल के पास जाते हैं। रसिकलाल को भी समझाने की उनकी चेष्टा जब व्यर्थ हो गई तो वे विवाह को बलपूर्वक रोकने के उद्देश्य से उस मकान को घेर लेते हैं, जहां कि विवाह होने वाला था। संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है।

(गतांक से आगे)

बुढ़िया के मन में अपने जीवन की बात एक मुहूर्त में चित्रपट के दृश्यों की तरह घूम गयी। उसका पति सरकारी अस्पताल में डाक्टर था। तरक्की का काफी मौका था। महायुद्ध में जाकर तो कितने ही डाक्टर फौरन मेजर हो गए। यदि वह जीवित होता तो क्या उसे आज दूसरे के अन्न पर पलना पड़ता। अवश्य धर्मशीला बड़ी शरीफ है, उसने कभी इस बात का इशारा नहीं किया, पर । वह तो परिश्रम कर हमेशा यही कोशिश करती रही कि जहाँ तक हो उसके परिवार के काम आवे।

बुढ़िया ने आगे कुछ नहीं कहा। वह जल्दी जल्दी माला जपने लगी, इस लिये सुजाता वहां से चली गयी।

बहुत सोच कर भी सुजाता अपने लिये कोई कार्यक्रम तैयार नहीं कर पा रही थी। ऐसे समय उसे अकस्मात् एक बात याद आई। अनिरुद्ध ने उसे एक बार स्त्रियों की बिक्री तथा वेश्यावृत्ति के सम्बन्ध में बातचीत करते हुए यह कहा था कि एलसाफेरन नामक एक जर्मन महिला ने वेश्याओं के मकान घूम कर उनकी जीवनियों का संग्रह कर एक पुस्तक प्रकाशित की थी जिससे समस्याओं पर यथेष्ट प्रकाश पड़े।

अनिरुद्ध ने कहा था—मैंने इस किताब से कोई नयी बात नहीं सीखी, क्योंकि भौतिकवाद ने शुरू में ही इस समस्या का समाधान कर रखा है। हमारे दृष्टनानुसार व्यक्ति का दोष नहीं है, अपराध के लिये समाज जिम्मेदार है, और चूंकि वेश्यावृत्ति भी एक तरह का अपराध है, दोष समाज रचना का ही है। ऐलसाफेरन की पुस्तक में मैंने इसी मत का समर्थन पाया है। मैं चाहता हूँ कि कोई भारतीय महिला भी इस प्रकार के सब तथ्यों का संग्रह कर एक पुस्तक लिखे तो वह पुस्तक दकियानूसी लोगों की आंखों में शलाजन शलाका का काम देगी।

सुजाता ने इस पर कहा था—पर यह काम बहुत ही कठिन है।

क्यों?

एक शरीफ औरत के लिये वेश्याओं के घर घर जाने में अपमान का भय है, इसके अलावा बदनाम होते कितनी देर लगती है। जैसे काठ की हंडिया एक बार ही चढ़ती है, उसी प्रकार स्त्री भी एक बार ही बदनाम हो सकती है याने एक बार बदनाम हुई कि स्त्री हमेशा के लिये बदनाम हो गई। चाहे या न चाहें यह हमारी हालत है, यही हालत भारत में तथा योरोप में सर्वत्र है, कहीं कम कहीं ज्यादा।

अनिरुद्ध ने सहानुभूति के साथ कहा था—यदि कोई इस प्रकार त्याग स्वीकार कर कीचड़ में पैर रखने की हिम्मत न करे, तो असली तथ्य किस प्रकार मालूम होंगे, और असली तथ्य मालूम नहीं होंगे तो बुराई की दवा किस प्रकार निकलेगी? कहकर कुछ हंसते हुए अनिरुद्ध ने कहा था—यदि मैं स्त्री होता तो मैं इस प्रकार का खतरा उठाने से नहीं हिचकता।

लाहौर में आ कर आज अनिरुद्ध की बातें सुजाता को याद आ गई। उसने सोचा सचमुच ही यह एक बड़ा काम है, वह उसे क्यों न उठा ले। जिस बदनामी के भय से एक दिन वह इस काम से हिचकी थी, आज मानों वही बदनामी उसे इस तरफ पुकार रही थी इस कार्यक्रम में अपने को लगा देने की चिन्ता से ही आज उसके सारे शरीर में बिजली दौड़ गयी, जैसे एक नया जीवन उसमें जागने लगा। उसने सोचा कि इस कार्य को करने से उसे इस महान दुःख से छुटकारा मिलेगा।

सिद्धांत और कल्पना के क्षेत्र से वह अब कार्य क्षेत्र में उतर पड़ी। प्रारम्भ में वह कई बार बाजार तक घूम आयी। यद्यपि वह किसी वेश्या के घर में नहीं गई, फिर भी वह यह बात देख कर आश्चर्य में पड़ गई कि इस प्रकार एक बार घूम आने में ही उसे बहुत सी नई बातें मालूम हो गईं। उसे ऐसा मालूम दिया कि वेश्याओं के चेहरे पर यह जो प्रफुल्लता तथा हर्ष की छाया रहती है, वह वकीलों के चोगे की तरह पेशे का एक अनिवार्य अंगमात्र है। असल में उसमें कोई आन्तरिकता, गहराई या सत्यता नहीं थी। वह प्रफुल्लता एकदम बनावटी थी, ग्राहकों को खींचने के लिए एक विज्ञापन मात्र था। उनके हृदय के साथ इस व्यापारिक हंसी का कोई संबंध नहीं होता।

एक दिन वह साहस कर एक वेश्या के मकान में घुस पड़ी। जो बुढ़िया दरवाजे पर रहती थी उसने जो यह देखा कि एक शरीफ औरत है, तो उसने उसे मकान के अन्दर घुसने देने में आनाकानी की। वह जानती थी कि इस प्रकार कभी कभी शरीफ औरतें वेश्याओं के मकानों पर धावा बोल कर अपने पुत्र पति या भाई को पथभ्रष्ट कर देने के लिए झगड़ा करने आती हैं। वह स्वयं जवानी में वेश्या थी। इसलिए उसे कई बार इन शरीफ औरतों से पाला पड़ा था। यह लोग अपने पति पुत्र को समझाने की बजाय वेश्या से आकर लड़ने लगती हैं। कोई उन्हें हाथ पकड़ कर थोड़े ही ले आया था। यहां तो यह है कि वह नहीं आयेगा तो और कोई आयेगा।

बड़ी आनाकानी के बाद बुढ़िया उसे दो मंजिले में ले गई। अभी अभी वेश्या दिन की नींद खतम कर उठी थी। सुजाता ने उसे देख कर मन ही मन कहा—अरे यह? इतनी साधारण? और कल सन्ध्या समय कैसी परी सी मालूम दे रही थी।

वेश्या ने अपने बिखरे हुये बालों को सम्हाल कर एक बार बुढ़िया की ओर देखा, और दूसरी बार आगन्तुक की ओर।

बुढ़िया ने कहा—मैं कुछ भी नहीं जानती, इन्हीं से पूछ देख कि क्या चाहती हैं?

सुजाता सोच रही थी कि बैठे या नहीं। उसका सारा शरीर घृणा से कण्टकित हो रहा था। एक अजीब बदबू चारों तरफ के वातावरण में तैर रही थी, यद्यपि उसने चारों तरफ ताक कर देखा कि ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिससे यह गन्ध निकल रही हो। कहीं पर गन्ध का नाम भी नहीं है, सब साफ सुथरा दिखाई पड़ रहा है। वह बू, उसी प्रकार की थी, जैसी किसी बंद मकान को खोलने से निकलती है कामुकता की इस प्याऊ से कितने ही लोग रोज आकर गन्दा पानी पीते रहते हैं।

पर जो लोग यहां आते हैं, क्या वे मनुष्य हैं? क्या उन्होंने मनुष्यता के नाम को व्यवहार करने के अधिकार को खो नहीं दिया है?

सुजाता फिर भी ज से धम से कुर्सी पर बैठ गई। इस कुर्सी पर उससे पहले कौन लोग बैठे होंगे? इस स्त्री के शरीर के भूखे लोग न? शायद कल सन्ध्या समय भी कितने ही आदमी बैठे हों, वह सिहर उठी।

उसने जहां तक हो सका सरल करके अपने उद्देश्य को व्यक्त किया। सुन कर वेश्या मुस्करा पड़ी। उसने सुजाता को ऐसी दृष्टि से देखा, मानों वह बहुत कुछ समझ गयी। उसके कठिन चेहरे में एक जोड़ा सरल आंखें थीं जो बरबस अपनी ओर उसकी दृष्टि को खींच रही थी, उसने सुजाता से कहा — आप शायद कांग्रेस की सदस्य हैं?

नहीं मैं कांग्रेस की नहीं हूं, पर पतिता बहिनों की सेवा करना चाहती हूं।

आप शादी शुदा हैं? कहकर उसने कुछ हिचकते हुए आगन्तुक की ओर देखा कि कहीं इससे आगन्तुक की मानहानि तो नहीं हुई।

सुजाता ने कहा — नहीं, इसके बाद आप कहें या तुम कहें इस उधेड़बुन में थोड़ी देर भटक कर उसने पूछा तुम्हारा नाम?

मेरा नाम छप्पन छुरी है। पर इस उत्तर को सुनते ही सुजाता की दृष्टि बड़ी कठिन हो गयी। यह देख कर वह बोली—ओह आप घर का नाम पूछ रही हैं वह निक्को है, मैं तो उसे भूल गई थी।

इस बात से सुजाता की दृष्टि फिर कोमल हो गयी उसने अत्यन्त मुलायम आवाज में कहा—अच्छा निक्को मुझे तुम सच सच बताओ कि तुमने यह पेशा क्यों अपनाया?

निक्को उर्फ छप्पन छुरी कुछ रुक कर बोली—वह लम्बी कहानी है। उसने बुढ़िया की तरफ एक आज्ञा मूलक इशारा किया, बुढ़िया गिड़गिड़ाती हुई निकल गयी

मैं खुशी से वेश्या नहीं हुई। मैं बहुत बड़े घर की बेटी थी, नाम न लूंगी। दूसरों को क्यों सानू। मेरे पिता तथा माता दोनों मुझसे प्यार करते थे, पर दुर्भाग्य से मेरी मा मुझे आठ नौ साल की छोड़ कर मर गयी। पिता जी ने फिर शादी की। बस यहीं से मेरे दुर्भाग्य का सूत्र-पात हुआ। घर की दुलारी लड़की से मैं एकाएक एक लोंडी बांदी हो गयी। जैसे तैसे स्कूल की पढ़ाई जारी रही। स्कूल मे जब तक रहत थी तब तक शान्ति से रहती थी, जिस दिन स्कूल में छुट्टी होती थी, वह दिन मेरे लिये पहाड़ हो जाता था। सोतेली मा से मैं बाघ की तरह डरती थी। जिस समय मैं छटे दरजे में पढ़ती थी, उस समय एक लड़के साथ मेरा परिचय हुआ। लड़का कालेज में पढ़ता था। लाहोर के एक प्रसिद्ध धनी का लड़का था। होते होते उसके साथ भाग गई और लाहोर में ही उसके पास रही। सोतेली मा तो खुश ही हुई, मेरी कोई खास खोज नहीं कराई गई।

अवश्य खोज करने पर भी मेरा मिलना मुश्किल था। पहले पहल मैं यह समझ घर से रूठ कर भागी थी कि पिता जी खोज कर खुशामद कर मुझे ले जायेंगे। वह लड़का भी मुझ से प्रेम करता था। दो साल बहुत चैन से कटे। इस बीच में वह बी० ए० हो गया। उसके पिता ने उसे विलायत भेजना चाहा। इसलिये उसे विलायत जाना पड़ा। जाते समय वह कह गया कि पत्र डालता रहेगा। मालूम नही कि उसने पत्र डाला है या नहीं। क्योंकि ऐसन पहुँचने के पहले ही नौकरों ने उस बंगले से निकाल बाहर किया। इसके बाद घूम-घाम कर मैं एक गुण्डे के हाथ पड़ गई, उसने मुझे वेश्या बनने के लिए मजबूर किया— यह कह कर वह सिसक सिसक कर रोने लगी।

सुजाता ने इस दिन और अधिक कुछ नहीं पूछा, पर कई एक बार भेंट के बाद उसने उसके सम्बन्ध में सारा ब्योरा जान लिया, और स्थानीय पत्रिका में इस विवरण को प्रकाशित करा दिया।

इस प्रकार धीरे धीरे सुजाता ने कई एक वेश्याओं की गभ कहानी मालूम कर प्रकाशित कराई। इन ब्योरों से स्त्रियों की बिक्री, विवाह प्रथा, इत्यादि अनेक विषयों पर काफी रोशनी पड़ी। इन लेखों से काफी सनसनी पैदा हो गई और विभिन्न भाषाओं मे इन लेखो पर लेख निकले।

इस प्रकार अनिरुद्ध द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चल कर सुजाता का समय बहुत कुछ कटने लगा। इस प्रकार जैसे कहीं पर अनिरुद्ध के साथ उसका एक सूक्ष्म योगसूत्र बाकी रह गया था, एक अत्यन्त क्षीण योगसूत्र।

इसके अलावा जब मन नहीं लगता था, अर्थात् जब इस पर भी उसका मन उचट जाता, तो वह जैसे मन की तलाश में गर्दन तोड़ वेग से मोटर साइकल चलाती थी।

[१०]

शादी कर के अनिरुद्ध एक मामले मे बहुत ही विपत्ति में पड़ गया। वह स्त्री को कहा ले जावे, क्योंकि अन्तर तम हृदय से इस विवाह को अस्वीकार कर देने पर भी वह बाहर के शिष्टाचारों तथा जिम्मेदारियों का जहा तक हो सके पालन करना चाहता था।

विवाह के मण्डप में उसने सरला से आखें ही नहीं मिलायीं। उसने सुहाग रात भी एक करवट में काट दी। सरला के साथ एक भी बात नहीं की, यहा तक कि एक दृष्टि डाल कर उसके अस्तित्व तक को स्वीकार नहीं किया।

जिस कारण से भी हो उसने यह तय किया कि स्त्री लेकर धर्मशीला के मकान में जाना ठीक न होगा, उसने इसे स्वतः सिद्ध कर के मान लिया न मालूम कहा से उसका विवेक तथा सुरुचि उसे मना कर रही थी। अवश्य वह इस बात को जानता था कि धर्मशीला इसमें कोई आपत्ति नहीं करेगी। ... फिर भी।

इधर उसने भी अपने ममिया ससुर रसिकलाल के यहा रहना भी उचित न समझा, यद्यपि वह ऐसा करता तो रसिकलाल और सरला दोनों खुश होते। शायद सरला के हक में यह अच्छा भी होता, क्योंकि अनिरुद्ध ने रातभर सोच कर इस बात को अन्तिम रूप से तय कर लिया था कि विशेष अवस्था में पड़ कर अन्धा होकर इस शादी के झमेले में पड़ जाने पर भी वह सरला को ऊपरी अधिकारों के अतिरिक्त कोई अधिकार न देगा। नहीं, कभी नहीं, यह तो एक प्रहसन मात्र होगा, वह सुजाता से प्रेम करता है, उसी से प्रेम करेगा। अवश्य वह प्रेम नीरव रहेगा। महीने के बाद महीना, साल के बाद वह चुपचाप अपनी सुजाता की नीरव पूजा करता रहेगा। एकलव्य की तरह सुजाता को इसकी खबर न होने देगा। वह अपने विवाह बन्धन के प्रति सच्चा रहेगा, पर उसका हृदय अपना है, वह सुजाता को हृदय देगा। उसने तो हृदय प्रदान नहीं किया, शादी ही की है।

उसको इस बात का आश्चर्य हुआ कि कल तक वह सुजाता के प्रति अपनी इस भावना को समझ क्यो नहीं पाया था। एक व्यर्थ क्रोध से वह फूलने लगा। तो क्या यह भावना बहुत पुरानी है? वह क्यों इस बात को पहले नहीं समझ पाया था?

अनिरुद्ध जब शादी के बाद के रोज सवेरे खड़े होकर इन बातों को सोच रहा था, सुजाता उस समय मा के लिये एक पत्र रख कर किसी की अनुमति न लेकर पंजाब मेल पर सवार चली जा रही थी। अनिरुद्ध को यह बात नहीं मालूम थी।

क्रमशः

सम्पादक के नाम पत्र

हमारे पाठक क्या कहते हैं ?

यह भेद क्यों ?

पंजाब विश्वविद्यालय की एफ० ए० परीक्षा अप्रेल में हुई। ३० अप्रेल को एकनामिक्स ए का पेपर था। प्रश्न पुस्तक के आधार पर न हो कर अजनबी नाक्षिप के थे, जिससे आनन्द पर्वत (दिल्ली) केन्द्र के कुछ परीक्षार्थियों ने उत्तीर्ण होने की कोई आशा न रख कर परीक्षा में विघ्न डाला और 'पेपर कोर्स से बाहर है' ऐसा कह कर पेपर छोड़ दिये और उपद्रव आरम्भ किया। परीक्षार्थियों की प्रार्थना पर प्रधान निरीक्षक महोदय ने शान्त विद्यार्थियों को एक अलग कमरे में बिठाया, मगर उपद्रवकारी वहां भी आ पहुंचे और परीक्षार्थियों की कापियां फाड़ डालीं, सीटें उलट दीं और परीक्षा-भवन छोड़ने को बाध्य कर दिया। प्रधान निरीक्षक महोदय से मदद की प्रार्थना किये जाने पर उन्होंने स्थिति काबू से बाहिर कह कर उन विद्यार्थियों को घर जाने को विवश कर दिया। विश्वविद्यालय की सीनेट ने अपनी २२ मई की बैठक में उन्हीं परिस्थितयों में हुए क्वीन्स बाग गर्ल्स सैंटर के उपद्रव पर भी विचार किया और उनके लिये शीघ्र ही उस पत्र में दुबारा परीक्षा लिये जाने का आश्वासन दिया, जब कि आनन्द पर्वत केन्द्र से प्रविष्ट होने वाले परीक्षार्थियों को ऐसी कोई सुविधा नहीं दी गयी। सीनेट के इस निर्णय से विद्यार्थियों में अत्यन्त क्षोभ है। एक सी ही परिस्थितियों में हुए दो उपद्रवों को शिक्षा के क्षेत्र में भी स्त्री पुरुष के भिन्न २ दृष्टिकोण से देख कर निर्णय करना कहां तक उचित है। लड़कियों के लिये दुबारा परीक्षा का प्रबन्ध किया ही जायगा। आनन्द पर्वत के परीक्षार्थियों को भी यदि उनके साथ ही प्रविष्ट होने की अनुमति दी जाय तो कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ेगा। क्या सीनेट अपने निर्णय पर पुनः विचार कर इस भेद को दूर करने का यत्न करेगी?

—सत्यभूषण वर्मा

●

परस्पर विरोधी लेख

श्री सम्पादकजी,

मैं आपके साप्ताहिक पत्र का नियमित पाठक हूं। पत्र अच्छा प्रकाशित होता है, उसमें बहुत ज्ञानवर्धक लेख प्रकाशित होते हैं, किन्तु कभी कभी कुछ लेख पढ़ कर सन्देह होने लगता है कि कौन-सा लेख ठीक है। कभी लेखक ब्रिटेन व अमरीका की कठोर आलोचना करते हैं, तो अंग्रेज व अमेरिकन लेखक हम को गालियां देते हैं। आखिर किस लेख को सच माना जाय? आपकी अपनी क्या सम्मति है? ऐसे लेखों से साधारण पाठक दुविधा में पड़ जाते हैं मैं तो यह समझता हूं कि दोनों पक्ष अपनी-अपनी प्रशंसा करने और दूसरे की निन्दा में झूठ सच का ध्यान नहीं रखते। तब आप उन लेखों को क्यों स्थान देते हैं?

—रामलाल

हम जानते हैं कि ऐसे लेख प्रोपेगंडा की दृष्टि से लिखे जाते हैं, किन्तु पाठक दोनों पक्ष भली भांति जान सकें, इसी लिये दोनों तरफ के लेख दिये जाते हैं सम्पादक इन लेखों में प्रदर्शित विचारों के लिए उत्तरदायी नहीं है। —सं०

●

मध्य भारत की राजधानी

मध्यभारत संघ की राजधानी के प्रश्न ने आज संघ के राजनैतिक जीवन को झकझोर डाला है, उसे संघर्षमय बना दिया है और यहां तक खतरा हो गया है कि संघ में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल ही समाप्त हो जावे। इन्दौर या ग्वालियर मेरी सम्मति में किसी को भी राजधानी न बना कर गुना को राजधानी बना देना चाहिए। गुना मध्य भारत के बीचोंबीच है, यातायात के साधन चारों ओर मौजूद हैं, आबहवा अच्छी है, बिजली और पानी की सुव्यवस्था है। शहर के चारों ओर विस्तार के लिये मीलों लम्बा मैदान खाली पड़ा है गुना की जनता ने यह भी एलान किया है कि छावनी के मकान मालिकान अपने मकान सरकार को देने के लिए तय्यार हैं। जनता ने यह स्पष्ट घोषणा कर दी है कि यह आन्दोलन प्रादेशिक भावना से नहीं वरन् जनहित की दृष्टि से चलाया गया है और इसी लिये गुना राजधानी बनाये सम्बन्धी आन्दोलन दिन पर दिन जोर पकड़ता जा रहा है। आन्दोलन की संगठित जनशक्ति का अपार बल देख कर ऐसा प्रतीत होता है कि सफलता निश्चित है। क्या सरदार पटेल व मध्यभारत सरकार ध्यान देगी?

●

हिन्दी प्रेमी सावधान

अखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के सहायक मंत्री तथा प्रबन्ध मंत्री महोदय द्वारा सूचना मिली है कि श्री दत्त विद्यावाचस्पति नाम धारी सज्जन अपने आप को हिन्दी साहित्य सम्मेलन का राजस्थान प्रान्तीय प्रचार मंत्री घोषित करते हैं तथा समाचार पत्रों में सूचना प्रकाशित की है कि वे विभिन्न परीक्षा केन्द्रों पर गये हैं, और वहां सम्मेलन के सम्बन्ध में भ्रान्ति पूर्ण भावनाओं का निराकरण किया है तथा यह भी सुनने में आया है कि अपने कुछ स्थानों पर सम्मेलन के नाम से चन्दा भी एकत्रित किया है। हम सम्मेलन की ओर से घोषित करते हैं कि उपरोक्त महानुभाव न तो सम्मेलन के राजस्थान प्रान्तीय प्रचारमंत्री हैं न परीक्षा केन्द्रों के निरीक्षक ही और न सम्मेलन की ओर से उन्हें किसी प्रकार के द्रव्य संग्रह का ही अधिकार है।

सम्मेलन ने इन्हें विद्यावाचस्पति की उपाधि भी प्रदान नहीं की है। राजस्थान की हिन्दी जनता तथा हिन्दी सेवी संस्थाएं सावधान रहें।

—हनुमानप्रसाद, कोटा

●

हमारी मानसिक दासता

अभी उस दिन एक महानुभाव का मेरे पास पत्र आया था। पत्र के अन्त में उन महानुभावों के हस्ताक्षर थे—बी० बी० शास्त्री। आप को आश्चर्य होगा कि 'बी० बी०' क्या है। बी बी तो 'लड़की'

[शेष पृष्ठ २२ पर]

गुर्जरों के देवता

[पृष्ठ ११ का शेष]

से टकरा रही थीं और उस मीठी टकराहट से सुरीली घुमकन हमारे हृदय में पैदा हो कर जिस भावना को गुदगुदा रही थी, उसे कहने के लिए हमारे पास अभी इस वक्त न तो समय है न शब्द ही।

हम तो यह सब देखते और सुनते रह गये — जीवन की बलखती बल खाती हुई सुरीली स्वर लहरी क्षितिज की धरती को गुदगुदाती हुई आगे बढ़ रही है। जब तक हम उसे सुन सके थे सुना और इसके बाद अपने-अपने लम्बायमान कम्बलों पर लेट गये, ताकि धरती जो कुछ गाती है उसे कान लगा कर सुन सकें!

× × ×

मैं ग्रुप मास्टर हूं। उसकी ड्यूटी कितनी सख्त होती है, यह तो यदि मेरे जैसे आदमियों के ग्रुप में आप रहे होंगे, तो जल्दी ही जान सकेंगे। कुछ भी हो ग्रुपमास्टर एक आदमी होता है, जिसे अपने कर्त्तव्य का खयाल भी रखना चाहिये। तभी देखिये, यह मैं कागज, पेंसिल लिये बैठा हूं। आप अपनी कल्पना से यह सोचने मे समर्थ हो सकेंगे या नहीं, लेकिन मैं यह बतलाये देता हूं कि मैं एक हाईस्कूल में ड्राइंग-मास्टर हू, सीनियर हूं और साथ ही मस्त तबियत वाला। आटा दाल का हिसाब लगा रहा हूं। हमें गुर्जरों के देवता के के इस गाव में आये हुए कुल चार दिन हुए हैं। हमारे आटे-दाल के हिसाब से आपको कोई दिलचस्पी नही होगी — न होनी भी चाहिये। मै अपने कमरे की खिड़की में बैठा हुआ दूर पर देख रहा हू कि धूल उड़ रही है। उस धूल के बादल मे से घंटियों की टन-टन स्पष्ट सुनाई दे रही है। अब सूर्यास्त हो गया है। गायें आ रही दीखती हैं — उनमे भैंसे, पाड़े और बकरियाँ भी होंगी यह तय बात है। अब गोधूली हो गई है। मुझे अचानक सिस्टर निवेदिता की याद हो आई। मेरे कमरे की कुछ दूरी पर ही मन्दिर है। मै उसके उन्नत स्वर्ण कलश, उसका चौक आदि देख रहा हूं। मैं चाय के लिए दूध की इन्तजार में बैठा हूं। बालीस आना चाय पियेंगे — यह भी कोई सीमा है। वह दूध लेकर एक गुर्जर आ गया। दबे पाव आकर दूध रख दिया — पैसे मांगे। मैने कमीज की जेब से मनीबेग निकालने को हाथ बढ़ाया कि उसने कहा —'अच्छा बाबू सुबह ले लूंगा।' फिर धीरे से बोला — 'बाबू, आपने एक बात सुनी है?' मुझे उसने 'क्या' या नहीं तो कहने का अवसर ही नहीं दिया। मैंने देखा, उसको आवेग से सांस चल रही है। धमनियां धौंकनी की तरह फूलती और बैठती है। वह कहने लगा — 'गजब हो रहा है, बाबू — राम! राम! यह संसार मला-बाल है, लोग बड़े मतलबी हैं, अन्यायी है, ढोंगी हैं। बाबू, हमारे यहां २०० घर हैं। हर कुटुम्ब का बारी-बारी से पूजा करने का नम्बर आता है। हमारी पंचायत भी है। पर आप तो जानते हैं — पंच लुच्चे और धूर्त होते हैं। बेचारे भोला का नम्बर ७ रोज शुरू हो जाना चाहिये था। पर पंचों ने कुछ चा-चू कर बर्खास्त कर दिया। दावा पूछी भी हुई, पर क्या बस चले, अकेले लड़के का। और तो ठीक अभी हक हड़पने वाला उसका खुद ससुर ही है। जमाई का हक हड़प लिया, राम! राम!' तो इन दिनों भारी पैदा होती होगी, करोड़पति लोग आये हैं, कल मैंने देखा था, सोने के जेवर भेंट हो रहे थे, हजारों रुपये चढ़ाये गये थे!' — मैंने कहा।

'हां, रुपये आदि तो पुजारी लोग ही रखते हैं। प्रसाद आदि सब वही तो हड़पते है! यहां के नियम से आप वाकिफ नहीं हैं।'

'तो लड़का अब यों ही शांत बैठा रहेगा? यह सारा समय तो गया!'

'हां, गये साल भी ऐसा ही हुआ, बाबू! राम इन्हें भली मति दे लड़का छटपटा रहा है।'

'अब क्या होगा?'— मैने पूछा।

'अब क्या होगा?'— मेरी आंखो की तरफ देख कर उसने कहा — 'छटपटाने से क्या हो सकता है, भगवान जाने— वही होगा।

मैं उसकी बात को नहीं समझ सका, वह धीरे से उठा और सीढ़ियां उतर गया। मै फिर अपने आटे-दाल के हिसाब में व्यस्त हो गया।

ठीक तीन बजे होंगे। मन्दिर के दरवाजे पर नौबत बजने लगी असंख्य दर्शनार्थी बाहर-भीतर सभी ओर भरे हैं। कई तरह की रंग-बिरंगी पगड़ियें, साफ, नंगे सिर लोग एक विशाल जन समूह के रूप में घुस रहे है। लेकिन आप उन गिरह कटों को न भूल जाइयेगा, जो अपनी कला स्लूबी यहां दिखाते हैं। थोड़ी देर में थाली और मादल-बजने लगी, टकोरे और घड़ियाल बजने लगे, झांझरे झनझनाने लगी। सारा देवालय सुगन्धित धूप से महक उठा। करीब २० मिनट तक पुजारी ने बड़े कलात्मक ढंग से देव की बलइयां ली। उसके अभिनयपूर्ण बाहु अपनी कला में देवदासियों की बलखाती हुई नृत्य भंगिमामय मुद्राओं को चित्रित सा कर रही हैं। देव के स्वर्ण रचित वस्त्र और उनकी स्वर्ण की ढाल, खड्ग, कृपाण और सबसे अधिक स्वर्ण-नेत्र पांच छः दीपा थारों के दीपकों के आलोकित प्रकाश में चमक रहे हैं। आखिर आरती संजोने के लिए सोने की मशालें प्रधान पुजारी ने आरती-वाहक को प्रदान की। आरती संजोई गई। नक्कारों और घंटे की टकोरों के घन नाद में लोगों के दिल तन्मय और विभोर हो चुके थे। पुजारी ने आरती हाथों में थाम ली और देवनान के सामने की। देवानन देदीप्यमान हो उठा। जयघोष के तुमुल नाद से सारा प्रदेश गूंज उठा। मन्दिर के प्रस्तर मूर्ति के यक्ष-किन्नर भी आरती के उस आरम्भिक प्रकाश में सजीव से हो उठे। मंदिर की कलात्मक छाप भी लोगों के दिलों पर गहरा असर डाल उठी। पुजारी आरती उतारने लगे।

आरती वंदन के उपरान्त देव को स्वर्ण मंडित रूप में आरूढ़ कराया गया। सुन्दर, पुष्ट, बैलो की चार सुडौल जोड़ियां थोड़ी ही देर में, असंख्य जन समूह जय-घोष के बीच तालाब की ओर चल पड़ी। मैं अपने छात्रों के समूह को लेकर देवरथ के समीप जा पहुचा। करीब पौन घन्टे में देवरथ बहुत धीरे-धीरे एक गली के मुहाने के समीप आ पहुचा। लोगो की भीड़ बेतहाशा चारों ओर घूम रही थी। बार-बार भेष पैर कुचला जा रहा था, और वह भी बड़ी बेरहमी से; पर करता क्या? धक्के धूम के साथ हमारा ग्रुप भी देवरथ के साथ बढ़ रहा था। एक मकान का नुक्कड़ था। एक नौजवान लड़का हाथों में पुष्प लिए छोटी सी चबूतरी पर खड़ा था। पास ही एक औरत भी खड़ी थी। देवरथ का जुलूस इसी रास्ते से गुजरने लगा। अचानक मुझ से कुछ कदम आगे एक अजीब हो-हल्ला मच गया — वह कुहराम में बदल गया। लोग चिल्लाने लगे। हजारों दौड़ पड़े — बड़ी धक्का-धूम ठेल पेला बड़ी मुस्तैदी से मैं भी अपने ग्रुप की बड़ी कोशिशों के बावजूद वहां पहुंच पाया। देखा — देवरथ भीमकाय पहियों के नीचे एक नौजवान लड़के की खोपड़ी दब कर चूर-चूर हो गई है, उस हाथों की पुष्पांजली बैलों के बलिष्ट पैरों के खुरों से कुचला कर बिखर गई है। लोग राम राम करने लगे। दो-चार औरतें देवरथ के सामने छाती-माथे कूट रही हैं...

एक अजीब नजारा था। साल का विशाल महोत्सव पर्व और उसमें यह व्याघात! मुझे प्रसादजी की 'देवरथ' की कहानी का स्मरण हो आया, पर वहां तो देवदासी ने अपने पापों का प्रायश्चित कर विगलित धर्म को बलि वेदी पर चढ़ाने के लिये देवरथ के पहिये के नीचे जान दे दी थी, और काला पहाड़ मुस्लिम लुटेरे की नुकीली बछों की नोंकें अश्वों टापों से उठते हुये धूल के बादलों में चमक रही थीं, पर यहां? यहां काले पहाड़ की बात नहीं थी। कुछ गुर्जर उसे अपने कन्धों पर उठा ले गये। देवरथारूढ़ रहे, कुछ न बोले — यह सब चुपचाप देखते रहे। फिर जयघोष के साथ रथ आगे बढ़ा। लेकिन लोग इधर-उधर बिखर गये। उस अमंगल से हृदय को एक धक्का लगा। लोगबाग कहते जा रहे थे — 'पूजा और प्रसाद का पैसा बुद्धि को भ्रष्ट कर देता है।' किसकी बुद्धि को? — यह किसी ने नहीं बताया।

उसी समय मैंने देखा — अंधकार बराबर बढ़ रहा है।

———

बाल बन्धु परिषद

रिजल्ट के दिन

और आखिर धक-धक करते हुये हृदय के ऊपर पत्थर रख कर मैंने कलेन्डर का पांचवा पन्ना भी फाड़ कर अलग कर दिया और उसके स्थान पर चमक उठा, मास 'जून' एक नया आशावाद लिये।

जून की पहली तारीख आई। सुबह और श्याम दोनों समय लाइब्रेरी जाने का प्रोग्राम बनाया। रिजल्ट की बाट देखी जा रही थी। यही नहीं, रात्रि में मन्दिर जाकर देवताओं से सिफारिश करवाने का प्रयत्न शुरू कर दिया।

दो जून आया। अफवाहें उड़ी ४-५ तारीख को रिजल्ट आने की। सीने पर हाथ रख कर 'हिन्दुस्तान टाइम्स' तथा अन्य अंग्रेजी दैनिकों के पृष्ठ उलटता।

इसी प्रकार दिन बीतते गये। मन में तरह-तरह के विचार आते ··· अगर रोल नम्बर गायब हुआ तो ··· नहीं-नहीं बलवन्त कह रहा था कि मैं प्रथम श्रेणी में पास होऊंगा — अरे वे तो यों ही कहा करते हैं, क्योंकि खुद जो प्रथम श्रेणी होने जा रहे हैं। मुझे तो यों ही चिढ़ाते हैं। और मैं सोचता यदि मैं तृतीय श्रेणी में पास ही हुआ तो— तो किसी से भी सात दिन तक नहीं बोलूंगा, खाना तो खाऊंगा ही नहीं।

फिर सोचता यदि तृतीय श्रेणी में— नहीं नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता। मैं मर जाऊंगा, पहले इसके कि तृतिय श्रेणी में अपना नाम देखूं ··· क्या है ६०० में से २४० तो आने ही चाहिये। द्वितीय श्रेणी के लिये — २४० क्यों? ३६० आने चाहिये, और यदि ३६० में से एक भी नम्बर कम हो गया तो ··· मैं विचारों में डूब जाता। रात्रि में मन्दिर में जाकर कहता — 'भगवान मुझे प्रथम श्रेणी में पास करा देना' — धीरे-धीरे मैंने सब देवताओं का प्रसाद बोल दिया। और मन्दिरों में जाना शुरू किया। हनुमान जी तथा दुर्गा, सबसे प्रथम श्रेणी की भीख मांगता।

मंगलवार था। आज प्रसाद बांटा जा रहा था, हमने भी खाया, और हनुमान-चालीसा पढ़ा। एक बार नहीं सात बार··· सुना था कि सात बार पढ़ने से मन की इच्छा पूरी हो जाती है। खूब अच्छी तरह से डंडोत की। प्रथम श्रेणी पास करने की कसम दिलाई और गंगाजी के दर्शन करके घर आकर सोया —

शाम हुई स्नान किया और मन्दिरों में जाना शुरू किया। शहर के प्रत्येक मन्दिर देख डाले। प्रत्येक शिवालयों में सिर झुका लिया। एक वही आशा लिये प्रथम श्रेणी में पास हो जाऊं।

लालिमा उदय हुई। पास के कुन्ड में स्नान करके हनुमान-चालीसा पढ़ता हुआ शहर की ओर वेग से बढ़ने लगा। सूर्योदय हो चुका था। एक जन समुदाय पर, जहां कोलाहल था, नजर पड़ी, मैं वहां गया। वहां हिन्दुस्तान टाइम्स खुला पड़ा था। प्रथम श्रेणी में नाम देखा, बीस तक देखा। रोल नम्बर गायब —

जोर से धड़कते दिल को लेकर घर आया। मुझे आंखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। कल रात को पांच पैसे की किशमिश ले आया था, कमरे में आकर सब देवताओं के नाम की किशमिश चढ़ा दी। सत्यदेव जी, हनुमान जी, शिव जी, गणेश जी वगैरह-वगैरह सबको प्रणाम करके राम-राम करता बाहर बैठ गया। पड़ोस का 'हिन्दुस्तान टाइम्स' आने वाला था। टकटकी लगी थी, दरवाजे पर खड़-खड़ आई, मैंने बढ़ कर अखबार लिया।

और धड़कते हुये दिल के साथ सब देवताओं के नाम स्मरण करके अखबार खोला। रिजल्ट पृष्ठ निकाला, रोल नम्बर ढूंढा, देखा पैरों तले जमीन ही गायब — आकाश से गिर कर दिल बैठ गया। अरमानों का घड़ा ऊपर से गिर के चूर-चूर हो गया।

मेरा नम्बर था द्वितीय श्रेणी में।

क्रोध के मारे दांत पीसता हुआ कमरे में घुसा, खून नहीं, आंसू अवश्य आंखों में थे।

सब के सब झूठी हो गये हैं। देवता कोई भी नहीं देता। और मन में न जाने कितनी गालियां दीं। किशमिश जो कुछ सुबह पूर्व मैंने ही श्रद्धा पूर्वक चढ़ाई थी उसे चबा गया एक ही सांस में। मैं जानता हूँ इनसब देवताओं ने मेरी तरह औरों को भी धोखा दिया होगा।

— जगमोहनलाल माथुर भरतपुर

क्या आप भी अपनी छुट्टियां इसी प्रकार व्यतीत करते हैं?

हमें बताते

हमें बताते काले बादल,
सुधा हमेशा बरसाना।
हमें बताती हवा निराली
प्राणों में जीवन भरना॥
हमें बताते फूल मृदुल भी
सदा सुगन्ध फैलाना।
हमें बताते 'नलिन' निराले,
कीचड़ ही में खिल जाना।
हमें बताती कोयल काली
मीठी तान सुनाना।
हमें बताती चींटी छोटी,
सदा परिश्रम करना।
हमें बताते सूर्य चन्द्र भी
एक लक्ष्य में डटना।
हमें बताते दीप प्रकाशी
अन्धकार को हरना।

—अरविन्द गोस्वामी

क्या तुम जानते हो?

● रोम नगर में एक भवन है, जिस में ११ हजार कमरे हैं। यह भवन संसार में सबसे बड़ा है।

● डाकखाने का सबसे पहला टिकट ६ मई बुधवार १८४० में संसार के सामने आया।

● जर्मनी में एक गिरजाघर है जो ६०० वर्षों में बन कर तैयार हुआ।

● एक यूनिट बिजली बनाने में लगभग १॥ पौंड कोयला खर्च होता है।

● जापानी बालक जिस दिन पैदा होते हैं, उसी दिन उनकी आयु एक वर्ष मान ली जाती है।

पंजाब में एक आदमी था। वह तीन मिनट तक जलते अंगारे मुंह में रख सकता था।

फ्रैंक ब्राउन नामक व्यक्ति के ललाट पर छेद हो गया था, बाद में वह उससे सिगरेट पीकर मुंह से धुंआ निकाल लेता था।

जरा हंसिये

शिक्षक ने विद्यार्थी से पूछा—क्यों जी न्यूफाउन्डलैंड में मछलियां क्यों अधिक होती हैं।

विद्यार्थी—क्योंकि वहां धुंध के कारण उन्हें आगे रास्ता नहीं दीखता।

× × ×

एक व्यक्ति का गाड़ी में आधा टिकिट देख कर चेकर ने पूछा जनाब यह आधा टिकिट क्यों?

इस पर उस व्यक्ति ने एक बालक की ओर संकेत करते हुये कहा—मैं केवल इस बच्चे को भेजने इलाहबाद जा रहा हूँ मैं दूसरी गाड़ी से तुरन्त वापिस आ जाऊंगा, वहां रहूँगा नहीं।

—गणेशप्रसाद खुरई

× × ×

एक बार एक पिता ने अपने लड़के से कहा—बेटा! तुम्हारी पढ़ाई में बहुत खर्च आता है। लड़के ने उत्तर दिया—पिताजी! तभी तो मैं बहुत कम पढ़ता हू

× × ×

एक व्यक्ति— (सेठजी से) मेरे बालक को कोई कामकाज देने की कृपा करें।

सेठजी—आपका लड़का क्या होशियार और परिश्रमी है?

व्यक्ति—यदि लड़का परिश्रमी और होशियार होता तो आपसे ही क्यों खुशामद करता।

—रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव

× × ×

बाल-बन्धु परिषद्

सदस्य-कूपन

(२६ जून १९५०)

यह रचना मेरी अपनी लिखी हुई है।

नाम·································

आयु·································

पता·································

दुमदार दोहे

गुस्ताख'

अफ्रीका में गोल से, मेज भई चौकोर।
पण्डित नेहरू ने दई, ठोकर तब पुरजोर॥
न कोउ चूं करि सको।

रहा न पाकिस्तान में, हिन्दुन को स्थान।
श्री 'मुखर्जी' को हमनु, जब ही सुन्यो बयान॥
कान बन्द करि लिये।

बढ़ि रह्यो पाकिस्तान में, बेकारी को जोर।
वापिस आने कूं करें, मुसलमान सब शोर॥
निकल गई ऐंठ सब।

जब से हमने है सुनी, है गई तेज कपास।
जाड़न में रुई मिलन की, टूट गई सब आस॥
दाम इतने कहां!

लाल किले में 'राष्ट्रपति', पहुंचे पहली बार।
सुनी तभी हम दूधिया, बूटी कर तैयार।
गटागट पी गये।

हमारे पाठक क्या कहते हैं

[पृष्ठ १६ का शेष]

नो है। एक स्थान पर लिखा है जी० ज० फेक्री। तो जा जो क्या? वहिन क्या यह घोर मानसिक दासता नहीं कि हम अंग्रेजी अक्षरों में अपने नाम लिखें और हम भी भारतीय रूप में हास्यास्पद। या नहीं वे महानुभाव अपने नाम का हिन्दी संक्षेप कर लेते, क्यों नहीं जी० जी० (गिरधर गोपाल) के लिये गि० गो० और कुछ हिन्दी रूप बना लेते।

यद्यपि हिन्दी राष्ट्रभाषा हो चुकी है, किन्तु लोग अभी तक अंग्रेजी का मोह नहीं छोड़ते। भारत सरकार के बड़े से बड़े अधिकारी के हस्ताक्षर होंगे तो अंग्रेजी में भाषण, तो बहुधा अंग्रेजी में। इनसे पूछिए जो हमारे भाग्य विधाता हैं कि क्या कभी किसी अंग्रेज या अमेरिकन ने अपने हस्ताक्षर हिन्दी या दूसरी भारतीय भाषा में किए हैं

भारत सरकार का शिक्षा विभाग प्राचीन भारत के इतिहास में राष्ट्र निर्माताओं की सूची बनाता है। सिकन्दर और अमरचन्द्रनाथ विक्टोरिया और वास्कोडिगामा जैसे विदेशी आक्रान्ता, शासक या यात्री और अली बन्धु जैसे कट्टर लीगी राष्ट्र निर्माताओं की सूची में हैं किन्तु हमारे वास्तविक देश निर्माता प्रताप, शिवाजी, रामकृष्ण, ऋषि दयानन्द मालवीयजी इस योग्य नहीं ठहराए गए कि उनका ज्ञान भी भारतीय विद्यार्थियों को हो।

—अमरचन्दपाण्डेय

युगौंडा में भारतीय

[पृष्ठ ६ का शेष]

वर्ग को कम करने के निमित्त देशी माल के उत्पादन के विक्रय को नियन्त्रित करने का प्रयत्न किया। वास्तव में, २॥ लाख बेल कपास को साफ करने के लिये १६४ कल कारखानों की क्या आवश्यकता है। इसी प्रकार हाट को नियन्त्रित करने के लिए सरकार ने केनिया के १६२६ के कानून का प्रतिरूप वहां १६३२ में देना चाहा। परन्तु भारतीयों, व्यापारियों तथा पूंजीवादियों ने इस पर घोर आपत्ति की।

निष्कर्ष

युगांडा में भारतीयों को वोट देने का अधिकार नहीं है। परन्तु सरकार वहां की लोक सभा में दो भारतीयों को सदस्य नियुक्त कर देती है। भारतीय इस बात से बहुत खिन्न हैं। उनकी मांग है कि उन को मतदान का वास्तविक अधिकार प्राप्त हो जाना चाहिए। इस मतदान का आधार साक्षरता एवं सम्पत्ति हो। इस विषय पर रंग एवं जाति सिद्धान्तों का कोई अड़ंगा नहीं लगाना चाहिए। भारतीयों को म्युनिसिपैलिटियों में मतदान प्राप्त है और वे उनके सदस्य भी हैं।

[पृष्ठ १० का शेष]

पर तीन दिन बाद मनुष्य फिर वापिस आया और बोला—कि भगवन कारण तो पता नहीं पर उसके साथ रहने पर मैंने यह निष्कर्ष निकाले हैं कि उसके साथ रहने में सुख के स्थान पर दुःख ही अधिक है। इसलिये आप उसे वापिस ले लीजिये।

पर तब भगवान् माने नहीं। बोले, मैं बार बार ले दे नहीं सकता और तुम्हें इसके साथ रहना ही होगा—

मनुष्य ने उत्तर दिया पर मैं तो इसके साथ रह ही नहीं सकता।

भगवान् ने कहा—पर तुम उसके बिना भी नहीं रह सकते।

फिर भगवान् अपना कार्य करने में संलग्न हो गये।

तब से मनुष्य बेचारा सोच में पड़ा है— स्त्री के साथ रहे तो आफत, न रहे तो आफत।

विविध समाचार

● सुप्रसिद्ध नर्तकी और फिल्म अभिनेत्री श्रीमती साधनाबोस ने चलचित्र उद्योग में विद्यमान नृत्यकला के स्तर की आलोचना करते हुए श्रीलंका तथा अन्य देशों के दौरे से लौटने के बाद नृत्यकला का स्तर ऊंचा करने की दृष्टि से एक विशाल नृत्य शिक्षणालय स्थापित करने का विचार व्यक्त किया है।

● भारत सरकार के वाणिज्य मन्त्री श्री श्रीप्रकाश ने भारतीय फिल्म निर्माताओं से अनुरोध किया है कि वे फिल्मोद्योग के लिए आवश्यक कच्चे माल का भारत में ही उत्पादन करने की सम्भावनायें उत्पन्न करें। उन्होंने इस बात पर खेद प्रकट किया कि सारे संसार में दूसरा स्थान होने पर भी भारतीय फिल्मोद्योग को अन्य देशों पर आश्रित रहना पड़ता है।

● 'स्वयंसिद्धा' के बाद शान्ता आप्टे एक और चित्र की मुख्य भूमिका में आ रही हैं। इस फिल्म का नाम 'मैं अबला नहीं हूं' रखा गया है, और इसके संगीत का निर्देशन स्वयं शान्ता आप्टे ने किया है, जो पिछले दिनों फिल्म-क्षेत्र से पृथक रह कर शास्त्रीय संगीत का अध्ययन करती रही हैं।

● 'छोटा भाई' की प्रेम-कथा-शून्य फिल्म की अभूतपूर्व सफलता के बाद न्यू थियेटर्स ने 'पहला आदमी' नाम से एक राष्ट्रीय चित्र का निर्माण किया है। इस चित्र का कथानक नेताजी सुभाष बोस और उनकी आजाद हिंद फौज की हलचलों पर आधारित है। चित्र का निर्देशक 'हमराही' के प्रसिद्धि प्राप्त निर्देशक विमलराय और संगीत परिचालन रामचन्द बोराल ने किया है।

● फेमस पिक्चर्स की नई फिल्म 'कमल के फूल' बन कर तैयार हो गई है, और उसका इस सप्ताह से बम्बई में प्रदर्शन आरम्भ कर दिया जायगा। फिल्म की मुख्य नायिका के रूप में कोकिल कण्ठी सुरैया ने अभिनय किया है और उसके साथ अमरनाथ, बाकन, बद्रीप्रसाद, निरञ्जन शर्मा, राजमेहरा और लीला मिश्रा हैं।

● हनरिक-गाल नामक एक अमेरिकन अभिनेता ने अपने तीन साथी अभिनेताओं पर इसलिये मुकदमा दायर करने का निश्चय किया है, क्योंकि उन्होंने उसके बालों को काट कर उसके 'हिटलर' बनने के अवसर पर पानी फेर दिया है। हेनरिक का कहना है कि मुझे एक अमेरिकन फिल्म कम्पनी ने 'हिटलर' का अभिनय करने के लिये ठेका दिया था, जो बालों के कट जाने के कारण अब नहीं मिल सकता।

चित्रलोक

पाठकों की कलम से

'हर हर महादेव'

सिनेमा प्रचार का एक उत्तम साधन है। इसके द्वारा देश के हित, समाज-सुधार उद्योग, उन्नति और धर्म प्रचार का कार्य सर्वसाधारण जनता के बीच बड़ी उत्तमता और सरलता के साथ हो सकता है। परन्तु खेद की बात है कि अधिकतर चित्र जो हमारे सिनेमाघरों में दिखाये जाते हैं, गन्दे शृंगाररस से भरे हुए तथा लोगों की रुचि को बिगाड़ने वाले होते हैं। देश के लोगों के नैतिक चरित्र को बिगाड़ने वाले जहाँ बहुत से साधन है, उनमें सिनेमा भी एक है। कभी कभी धार्मिक चित्र भी सिनेमा में दिखाये जाते हैं। परन्तु "रामराज्य" और 'भरत-मिलाप' जैसे दो एक चित्रों को छोड़ कर अधिकांश धार्मिक चित्र भी ऐसे होते हैं, जिनसे धर्म के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होने के बजाय उल्टी अश्रद्धा पैदा होती है। ऐसा ही एक चित्र हाल में "हर हर महादेव' के नाम से दिखाया जा रहा है इसमें भगवान शंकर और जगज्जननी पार्वती का साधारण मनुष्यों की तरह दिखाया तथा शृंगारपूर्ण प्रदर्शित किया गया है। देवी पार्वती जिनको हम जगत् माता के रूप में पूजते हैं, उक्त चित्रपट में एक साधारण नायिका के समान प्रेम करती है, नाचती है गाती हैं और हाव भाव प्रदर्शित करती है। यह कदापि हमारी श्रद्धा को बढ़ाने वाला नहीं हो सकता।

हम सरकार की ओर से स्थापित फिल्म सेंसर बोर्ड का ध्यान इस ओर आकर्षित करते हैं और उससे निवेदन करते हैं कि वे कम से कम धार्मिक चित्रों को पास करते समय इस बात का ध्यान रखें कि हिन्दुओं की धार्मिक श्रद्धा को बिगाड़ने वाले और कुरुचिपूर्ण चित्र सिनेमाघरों में कदापि प्रदर्शित न किये जायं। हम सनातन धर्म सभा आदि भिन्न भिन्न हिन्दू संस्थाओं का भी ध्यान इस ओर आकर्षित करते हैं। आशा करते हैं कि वे सम्मिलित रूप से इस सम्बन्ध में उचित कार्यवाही करेंगे।

मन्त्री— अखिल भारतीय आर्य हिन्दू धर्म सेवा संघ, दिल्ली।

राजधानी के रजत-पट पर

मन्जूर

शुक्रवार ३० जून से स्थानीय नावेल्टी और रिवोली में न्यूथियेटर्स की नयी कला कृति 'मन्जूर' का प्रदर्शन आरम्भ हुआ है। 'मन्जूर' का दिग्दर्शन श्री सुबोध मित्र ने किया है। मुख्य भूमिका में सिनेमा-प्रेमियों के प्रिय पात्र भारती, चन्द्रावती और अजित बरुआ हैं। पंकज का मधुर संगीत इस फिल्म की विशेषता है।

भाई-बहन

रामदरयानी का नया चित्र 'भाई-बहन' उनके पिछले सामाजिक चित्रों के समान ही समस्या प्रधान और मनोरंजक है चित्र मुख्य भूमिका में गीता बाली, निरूपाराय, प्रेमअदीब और भारत भूषण हैं। चित्र का प्रदर्शन एक सप्ताह से स्थानीय मिनर्वा, रीगल, इम्पीरियल और एक्सेलियर चार सिनेमा-घरों में एक साथ आरम्भ किया गया है।

पुतली

सुप्रसिद्ध अभिनेत्री मुमताज शान्ति बहुत दिनों बाद अपने पति कवि वली द्वारा निर्मित व दिग्दर्शित 'पुतली' फिल्म में आई है। यह फिल्म संगीत प्रधान और मनोरंजनपूर्ण तो है ही, इसमें भारतीय समाज में प्रचलित वर्तमान बुराइयों का चित्रण भी बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है। यह चित्र ओडियन, जुबली, सभा, न्यूअमर और पालम सिनेमाघरों में दिखलाया जा रहा है।

● बम्बई सरकार ने पाकिस्तान का जन्म 'नामक हिन्दी फिल्म पर से पाबन्दी हटा ली है।

फिल्म डिवीजन के नये फिल्म

'सहकारी खेती'

फिल्म डिवीजन के नये चित्र 'सहकारी खेती' में किसानों की सम्मिलित कृषि की प्रथा और उसके लाभ पर प्रकाश डाला गया है।

इस चित्र में, दिल्ली से कुछ दूर छत्तरपुर में किसानों की सहकारी खेती का सुन्दर परिणाम बताया गया है। शरणार्थियों ने मिल जुल कर इस बन्जर भूमि को उपजाऊ बना दिया है। उन्होंने यहां विविध उद्योग शुरू कर दिये हैं। छत्तरपुर में रहने वाले शरणार्थी किसानों के उज्ज्वल भविष्य का इस चित्र में आभास मिल सकेगा।

समाचार समीक्षा

पं० नेहरू की इण्डोनेशिया यात्रा के विविध दृश्यों का समाचार समीक्षा संख्या ८० में विशेष महत्व है। इसमें पेपेन्डाजाग में ज्वालामुखी विस्फोट के दृश्य भी दिखलाये गये हैं। इसके अतिरिक्त इस चित्र में प्रदर्शित उड़ीसा में आदिवासियों के सम्मेलन से स्वतन्त्र भारत में उनकी प्रगति का आभास होता है।

जनता का अन्तःकोप अधिक चिन्ताजनक है

★ श्री पं० जयदेव शर्मा विद्यालंकार

कौटिल्य अर्थशास्त्र में एक स्थान पर प्रश्न किया गया कि राज्य में जनता में अन्तःकोप और राष्ट्र पर वाह्य शत्रु के आक्रमण इन दोनों में से कौनसा अधिक घातक है। इन दोनों में से राज्य को कौन अधिक हानि पहुंचा सकता है। बुद्धिमानों में श्रेष्ठ चाणक्य विष्णु शर्मा की नीतिज्ञ लेखनी ने इस समस्या के उत्तर में कहा है कि राज्य को अधिक हानि पहुंचाने वाला राज्य का अन्तःकोप ही होता है। इसलिये राज्य के भीतरी छोटे प्रकोपों और प्रकोप के कारणों को दूर करते रहना ही वास्तव में राज्य को अधिक दृढ़ तथा चिरायु बनाने का कारण है।

वर्तमान सभी सरकारें अपने भीतर राष्ट्र में ५ वें स्तम्भ की गुप्त कार्यवाइयों से डरती रहती हैं और उनको किसी न किसी प्रकार उखाड़ती रहती हैं। परन्तु वर्तमान भारत सरकार इस राजनीतिक-सूत्र को जानते हुए भी अपने भीतर पाचवें कालम को पर्याप्त स्वच्छन्दता से काम करने देने के पर्याप्त कारण स्वयं उत्पन्न किये रहती है, करती है। और भविष्य में उनके कुफलों को भी भोगती है।

देश के अनेक नेताओं के कहने पर भी लाखों की संख्या में पाकिस्तान से लोगों को पुनः लाकर बसाना, यह एक इसी प्रकार की साधना है, जिससे प्रत्यक्ष शत्रुता की घोषणा करने वाला देश कालान्तर में समय समय पर जनता में मार काट, दंगों की ज्वालाओं में उलझता रहेगा। परन्तु यहां उदारता की पराकाष्ठा है। यह इस राजनीति के सूत्र को अपनाने नहीं देता। और बदले में दूसरा दल पाकिस्तान पर-धर्मी जनता को उत्पीड़न करने के सिद्धान्त को थोड़े काल के लिये भले ही शिथिल करता सा प्रतीत हो परन्तु सिद्धान्त रूप से वह इसे कभी छोड़ने वाला नहीं है।

इसके अलावा देश में अनेक कारण उत्पन्न हो रहे हैं, जिनमें अन्तःकोप मजे में पनप रहा है। उसके पनपने में कारण सरकार को जनता के दुःखों के प्रति निरीह उदासीनता मात्र है। जब वह भयंकर रूप में प्रकट होती है, तब 'आग-लगी और दौड़े रे' की पुकार मचती है। पाकिस्तान देश के सियानों ने राशन को उठा दिया दिया है और इसमें ब्लैक-मार्केट खतम हो जाने से जनता में अन्न-का अभाव नहीं है। महात्मा गांधी ने इस सत्यता को अनुभव किया था। परन्तु भारत सरकार भी राशन और राशन की छत्र छाया में पनपने वाले काले नाम ब्लैक-मार्केट को पोस रही है। सरकार के अफसर ही उन दोनों को बड़े वेग से चला रहे हैं, और चलना रहे हैं। ऊपर से शोर अवश्य मचाया जाता है कि ब्लैक मार्केट को दमन किया जा रहा है। पर दमन हो पाता नहीं। सब श्रेणी में सरकारी अफसर घूंस ले ले कर ब्लैक मार्केट का साधन बने रहते हैं। घूंस देकर मानों ब्लैक वालों ब्लैक मार्केट से कमाने का बड़ा लाइसेन्स मिल जाता है। फिर उनको रोकने वाला कौन है। वे सब माल बाजार से गायब करके मनमाना दाम चढ़ा कर गरीब जनता को लूटते हैं।

जिनका धंधा व्यवसाय है, वे बिना घूंस के धंधा नहीं चला पाते। तो घूंस सर्वोपरि सुगम साधन उनको सूझता है। हाथ रंगने वाले अफसर 'उनको पराया माल, दिल बे रहम' यह तृष्णा घूंस लेने में चुकने नहीं देती। उत्कोच हारी सरकारी शासक एक छोटे सिपाही से लेकर बड़े अफसर अपना दाव व हिस्सेदारी बनाये रहते हैं, सबके अपने अपने दाव रहते हैं। वह उन दावों से शिकारों पर वार करते रहते हैं। फलतः घूंस के साथ साथ काला बाजार खतम नहीं होता। हमारा विश्वास है कि अन्न वस्त्र का तो राशन उठने पर थोड़े काल के अन्तर में ही ब्लैक मार्केट समाप्त हो सकता है। परन्तु सरकार को इस बात का ध्यान रखना होगा कि जिन वस्तुओं का वितरण के अपने हाथों में ले वह लोभी अफसरों द्वारा न हो। अन्यथा यह कष्ट भी जनता में अन्तःकोप उत्पन्न करता रहता है। जनता जहां अफसरों के प्रति अनावश्यक कोप अपने मन में भरती रहती है वहां वह सरकार के प्रति स्नेह शून्य होती जाती है। परन्तु हमारे लोक प्रिय महा-महिम मन्त्रियों को अभी इस की परवाह नहीं है।

यदि गरीब जनता को अन्न खाने को नहीं मिलता तो उस में त्राहि त्राहि उत्पन्न होकर साम्यवाद की उत्पत्ति होती है।

यदि खरीदने वाला कोई न हो तो बनिया दुकान नहीं लगाता। न बनिया बेचने लायक सामान बटोरता है। जब ग्राहक खड़े रहते हैं, तो बनिया की दुकान भी धड़ाधड़ चलती, मनमाने जैसे बटोर लेता है, सरकार दिन को न बेचने देगी तो वह रात को बेचेगा, साहूकारी से नहीं बेचने पाएगा तो चोरबाजारी से बेचेगा। इसी प्रकार जिन शहरों में राशन है उन में भी सरकार प्रत्येक आदमी को ३ ४ छटांक अनाज देता है। पेट ८-१० छटांक में भी नहीं भरता, तब शेष अनाज जनता कहां से ले, वह बाधित होकर ब्लैक मार्केट से खरीदती है। अर्थात् राशन के द्वारा सरकार ने प्रत्येक आदमी को ब्लैक मार्केट का खरीददार बनाया है, पहले "फोड़ और राज-कर" नीति से राज करने वाली चालबाज ब्रिटिश सरकार ने यह जाल फैलाया। अनेक तरीकों से अनाज का त्रास उत्पन्न किया। शहरों में अनाज पर कब्जा कर के कुछ को लाइसेन्स दिया। दिन में १ घण्टे भर के लिये १) रु० से अधिक का अनाज न देने की पाबन्दी की। इस पाबन्दी के लिए अफसर रखे और घूस का बाजार गर्म हुआ।

परन्तु भारत सरकार सियाने इस अन्तःकोप प्रवर्तक बात पर ध्यान कब देने वाले हैं। राशन को निभाने के लिए पहला संघर्ष जनता से सरकार का तब होता है, जब वह उन पर कड़ी पाबन्दी लगा लगा कर उनसे अन्न बटोरती है, अफसर कड़ाई दिखाई हैं, लम्बरदार, पटवारी, कानूनगो, तहसीलदार, कलेक्टर, मजिस्ट्रेट, नाजिम सभी किसान वर्ग पर वक्र दृष्टि हो कर आंख लाल किये रहते हैं। अपने तक पहुंचने वालों में बहुतों को वह अनेक प्रकार की घूसों से मनाता है और थोड़ा भी चूकता है, तो राजदण्ड उसी पर बरसता है, पहले केवल 'कर वसूली' का ही वास्ता था, अब यह अन्नवसूली का एक झगड़ा सरकार ने अपनी प्रजा से और मोल ले लिया है। यह क्यों? इसलिए कि तथा कथित शहरी— सचमुच जनता भूखी न मर जावे। यह 'भूखी मर जाने का भय' भी राशन-प्रवर्तक अफसरों का एक उसी प्रकार का 'नारा' हो गया है, जैसा पाकिस्तान आन्दोलन के समय मुस्लिम नेताओं का नारा 'इस्लाम डूबा' का था। या हिन्दुमहासभा वालों का नारा 'धर्म डूबा' था।

लेखक

देश-विदेश का घटना चक्र

विगत कोरिया में अकस्मात ही गृह-युद्ध की आग भड़क उठी। साम्यवादी उत्तरी कोरिया ने अमेरिका द्वारा समर्थित दक्षिणी कोरिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी, और २० जहाजों में १० टैंकों सहित अपनी सेनाएं उसके पूर्वी तट पर उतार दीं। दक्षिणी कोरिया की राजधानी सीओल से ४० मील उत्तर-पश्चिम में स्थित महत्वपूर्ण रेल केन्द्र कायेसोंग पर अधिकार करने के बाद उत्तरी कोरिया की सेनाओं ने सीओल से ६ मील उत्तर-पूर्व में स्थित चुनचीन के क्षेत्र पर आक्रमण कर दिया। उत्तरी कोरिया की सेनाओं ने केसोंग के २१ मील पश्चिम ओंगजीन पर भी अधिकार कर लिया है। योंगडोंगपो रेलवे स्टेशन पर चार रूसी किस्म के विमानों ने आक्रमण किया, जिससे तीन व्यक्ति घायल हो गये। अमेरिका द्वारा मांग किये जाने पर संयुक्त राष्ट्र-संघ के महामन्त्री श्री० त्रिग्वेली ने सुरक्षा परिषद की आवश्यक बैठक बुलाई, जिसमें उत्तरी कोरिया को आक्रांता ठहरा कर उससे तत्काल ही युद्ध बन्द करने का आदेश दिया। सुरक्षा परिषद की बैठक में रूसी प्रतिनिधि उपस्थित नहीं था संयुक्त राष्ट्र-संघ ने उत्तरी कोरिया को अपनी फौजें ३८ वीं समानान्तर के सीमान्त के परे हटा लेने तथा कोरिया कमीशन द्वारा इसको पूर्णतया कार्यान्वित करने का आदेश दिया है। दक्षिणी कोरिया के राष्ट्रपति डिगमैनली द्वारा सहायता की मांग किये जाने पर अमेरिकन जनरल मैकआर्थर ने दक्षिणी कोरिया की सब सामरिक कार्यवाइयों का दायित्व सम्भाल लिया है तथा अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमैन ने दक्षिणी कोरिया को पूरी पूरी सहायता देने का आदेश दिया है। ट्रूमैन ने यह भी घोषित किया है कि यदि फारमोसा द्वीप पर आक्रमण किया जाय तो फिलिपाइन तथा हिन्दचीन को भी सैनिक सहायता दी जायेगी। अमेरिका द्वारा सहायता की घोषणा किये जाने पर दक्षिणी कोरिया ने भी शक्तिशाली प्रतिरोध करना प्रारम्भ कर दिया तथा सिओल में आक्रमण और प्रत्याक्रमण की भीषणता चरम सीमा पर पहुंच गई। प्रारम्भ में उत्तरी कोरिया की सेना ने दक्षिणी कोरिया की सेनाओं के प्रत्याक्रमण को विफल कर दिया था। किंतु अब तक समाचारों के अनुसार, दक्षिणी कोरिया की राजधानी सीओल का पतन हो गया है तथा सरकार दूरवर्ती स्थान सुवोन को रवाना हो गई है। जनरल मैकआर्थर ने जो अमेरिकी विमान युद्ध के लिये भेजे थे वे गिरा दिये गये हैं। अमेरिका की सुदूरपूर्व की सुलाई हवाई सेना ने सफलता पूर्वक सीओल के २५ मील उत्तर पश्चिम में मुंजन के निकट रेलवे लारियों और फौजी समूहों पर बम बरसाये। सियोल के उत्तर पश्चिम में बहने वाली हान नदी पर ८ वां उत्तरी कोरियन हवाई जहाज नष्ट कर दिया गया है अमेरिकी जहाजों ने उत्तरी और दक्षिणी कोरिया में पर्चे भी गिराये। इधर ब्रिटेन ने भी दक्षिणी कोरिया को सहायता देने का निश्चय कर लिया है, और जापानी समुद्रों में स्थित अपनी नौसेना की सेवाओं को तुरन्त अमेरिकनोंके अर्पित कर देने का आदेश दिया है। ब्रिटेन ने दक्षिणी कोरिया से ब्रिटिश और अमरीकी नागरिकों को सुरक्षित स्थानों पर ले आने के लिए अपने प्रसिद्ध युद्धपोत 'ट्राइफ' और क्रूजर 'जमैका' भी सौंप दिया है। अमरीकी युद्ध विमानों ने सिओल के ऊपर उत्तरी कोरिया के चार याक विमानों को गिरा दिया है। अमरीकी वायुयानों ने मुनसन के आसपास, जो सिओल से २१ मील उत्तर पश्चिम में है, सेनाओं से सम्बद्ध, लारियों के काफिले और रेलवे पर सफलतापूर्वक बमबारी की। अमेरिका का एक युद्ध बमवर्षक और मध्यम बमवर्षक लापता है।

कोरिया की स्थिति पर भारतीय मन्त्रिमण्डल में भी विचार विनिमय हुआ, किन्तु कोरिया कमीशन की अन्तिम रिपोर्ट न मिलने के कारण भारतीय सरकार किसी निर्णय पर नहीं पहुंच पाई है।

भारत पाकिस्तान

भारत और पाकिस्तान सरकार की अनौपचारिक वार्ता में निष्क्रान्तों की चल-सम्पत्ति के विषय में समझौता हो गया है, लेकिन अचल सम्पत्ति के सम्बन्ध में अब तक कोई निर्णय नहीं हो सका है। समझौते के अनुसार निष्क्रान्तों को, कस्टोडियन की बिना अनुमति के ही अपनी चल सम्पत्ति के हटाने या बेचने में हर तरह की सहायता दी जावेगी। इसके अतिरिक्त बैंकों में जमा रकम अथवा शेयरों या सीक्युरिटियों के रूप में जमा रकम के ले जाने या बेचने में भी सहायता दी जायेगी। चल-सम्पत्ति के मूल्य आंकने तथा उसकी रकम देने के तरीकों के सुविधा के सब नियम तैयार कर लिये गये हैं। इस समझौते से निष्क्रान्तों को विशेष लाभ होने की सम्भावना नहीं है, क्योंकि बैंकों या डाकखानोंके सिवाय अन्य चल सम्पत्तिके लिये पता लगाना कठिन है। गेहूं, जूट आदि की विवादग्रस्त व्यापारिक समस्यायें भी अभी तक पूर्णतया नहीं सुलझ सकी हैं।

संयुक्त राष्ट्रीय काश्मीर मध्यस्थ सर ओवन डिक्सन ने जम्मू काश्मीर का दौरा प्रायः समाप्त कर लिया है। आशा की जाती है कि सर डिक्सन ने सारी विवाद-ग्रस्त समस्याओं का पूर्णतया अध्ययन कर लिया है और वे शीघ्र ही अपना सुझाव प्रस्तुत करेंगे। सर ओवन डिक्सन को भारत तथा पाकिस्तान सरकार के बीच कोई शान्तिपूर्ण तथा स्थायी समझौता हो जाने की आशा है।

———

अंग्रेजी के साहित्यिक डिक्टेटर—डा० जानसन

(पृष्ठ १६ का शेष)

प्रकार के साम्यवाद में वे विश्वास करते थे और वह था एक आचारशास्त्री का आध्यात्मिक साम्यवाद। राजनैतिक क्षेत्र में अधिकार और श्रेणी भेद को वे एक आवश्यक वस्तु समझते थे। वे अधिकारों और पदों का आदर करते थे और उन्हें सामाजिक तथ्य और राजनैतिक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार करते थे। राजनीति में टोरी विचारधारा को मानने के कारण डा० जानसन को अपने अंग्रेज होने का गर्व था और वे अपने आपको एक महान स्वतन्त्रचेता राष्ट्र का नागरिक मानते थे। परन्तु इस संकुचित विचार धाराओं के होते हुये भी वे पूर्ण मानवता में विश्वास करते थे, इसलिए उन्हें मनुष्य मात्र से प्रेम था। दास प्रथा के खिलाफ उन्होंने सबसे पहले आन्दोलन किया। उन्हें दलित व्यक्तियों से अत्यधिक प्रेम था। प्रसिद्ध कवि गोल्डस्मिथ का यह कथन उचित ही है कि दुखी होना ही डाक्टर जानसन की सहृदयता पाने के लिये काफी है। उनके मानव प्रेम की इस भावना के कारण उनके स्वभाव की सभी दुर्बलतायें और त्रुटियें छिप जाती हैं। बच्चों, नौकरों और पशुओं के प्रति उनका व्यवहार अत्यन्त दयापूर्ण था। उन्होंने अपनी सम्पत्ति का एक बड़ा भाग अपने नीग्रो नौकर के नाम करा दिया था।

वार्तालाप के आनन्द की वृद्धि करने वालों में डा० जानसन का स्थान अग्रगण्य है क्योंकि उनके वार्तालाप में जितनी विदग्धता और ताजगी मिलती है, वह अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। लन्दन की स्ट्रैंड रोड पर स्थित उनके मकान की बैठक में उनकी मित्र मण्डली उनके अकृत्रिम अट्टहास का आनन्द अर्द्धरात्रि तक उठाया करती थी। वे प्रत्येक श्रेणी के व्यक्ति से प्रत्येक विषय पर बातचीत कर सकते थे और अपने अगाध ज्ञान द्वारा सुनने वालों को आश्चर्य चकित कर देते थे।

अंग्रेजों की एकान्त मनोवृत्ति की डा० जानसन ने भर्त्सना की है। वे कहा करते थे कि किसी दूसरे राष्ट्र के दो अपरिचित मनुष्य अपने वार्तालाप के लिये विषय ढूंढ निकालेंगे, परन्तु यदि दो अंग्रेज उस परिस्थिति में मिलेंगे तो वे दो विरुद्ध दिशाओं की खिड़कियों पर जाकर खड़े हो जायेंगे और वहां से अनन्त आकाश के क्षितिज को मूक भाव से ताकने लगेंगे। वे स्वयं कहा करते थे कि मैं कभी किसी जगह पर अपरिचित नहीं रहा। वे एकान्त में रहने से डरते थे। क्योंकि इसका एक नैतिक कारण था। उनको डर था कि यदि वे एकान्त में रहेंगे तो पागल हो जायेंगे।

यद्यपि धार्मिक दृष्टिकोण से वे कुछ उपवास आदि किया करते थे परन्तु फिर भी उन्हें तपस्यापूर्ण जीवन अधिक पसन्द नहीं था। कर्मठ जीवन से विश्राम लेना या पलायन करना वे महान भूल और अपराध समझते थे।

उनके इस आनन्द और उल्लासमय जीवन के नीचे एक गम्भीर और धार्मिक व्यक्तित्व की छाप थी। आचार की दृढ़ता और ईश्वर विश्वास यह उनके चरित्र की आधार शिलाएं थीं। ईसाई धर्म उनके लिये एक वास्तविक शान्ति प्रदान करने वाला सच्चा मार्ग था। ईश प्रार्थना करते समय वे इतने भाव प्रवण हो जाते थे कि उनके नेत्रों से आनन्द के अश्रु छलछला आते थे और वे गद् गद् हो जाते थे।

इतना प्रभाव पूर्ण और धार्मिक व्यक्तित्व होते हुए भी डा० जानसन की कुछ अपनी मान्यताएं थीं और इस क्षेत्र में वे एक कट्टर व्यक्ति की तरह व्यवहार करते थे। टोरी होने के कारण उन्हें ह्विग दल वालों से आन्तरिक घृणा थी। इसका कारण यह था कि ये लोग शासन और चर्च के सर्वाधिकार में विश्वास नहीं रखते थे। डा० जानसन के मन्तव्य के अनुसार शैतान ही प्रथम ह्विग था। इसी प्रकार स्काटलैंड के निवासियों के प्रति भी उनकी धारणा अत्यन्त असहिष्णु थी। ओट्स एक प्रकार का अनाज होता है जो योरोप में पैदा होता है। अपने प्रसिद्ध अंग्रेजी कोष में इसकी व्याख्या करते हुए डा० जानसन ने लिखा है—ओट्स वह अनाज है जिसे इंगलैंड में घोड़े और स्काटलैंड में आदमी खाते हैं। इसी प्रकार देशभक्ति की उनकी परिभाषा थी देशभक्ति एक गुण्डे का अन्तिम शरणस्थल है' बुद्धिमत्ता नहीं है अपितु तीव्र व्यंग और कटुता से भरी है यद्यपि जानसन ने अपने विचारों का आधार बुद्धिवाद को ही रखा था परन्तु फिर भी उनके उपरोक्त धारणा भी तर्क पूर्ण न होकर उनकी सनक पर ही आधारित थी। इसलिये वहां के प्राकृतिक सौन्दर्य ने उन्हें कभी आकर्षित नहीं किया। उन्हें अपने निवास स्थान लन्दन नगर से अत्यधिक प्रेम था और इस कारण वे उसकी प्रशंसा करते थे। उनके कथानुसार लन्दन ही वह स्थान है जहां मनुष्यता की नब्ज तीव्र गति से धड़कन करती रहती है।

उनके वार्तालाप के गुणों की चर्चा पहले की जा चुकी है। वे आज तक ज्ञात बातचीत करने वालों में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हो चुके हैं। उनके वार्तालाप का ढंग एक कलाकार का ढंग था तार्किक का नहीं। इसलिए उनकी बातचीत प्रायः उद्देश्यहीन हुआ करती थी, यदि उसका कोई उद्देश्य होता भी था तो वह आनन्द प्राप्त करना ही था। उनका वार्तालाप सर्वोपयोगी होता था। वे मनुष्य जीवन को ही अपने वार्तालाप का विषय बनाया करते थे। उन्हें इसके लिए किसी प्रकार की प्रारम्भिक तैयारी की आवश्यकता नहीं होती थी। कभी कभी वे अपनी बातचीत में आवश्यकता से अधिक कटु और कटाक्षमय हो जाते थे, परन्तु अधिकांश में उनकी बातचीत व्यंग, हास्य और सरलता से भरी हुई होती थी। सिगरेट के लिए उनका यह कथन है कि सिगरेट वह वस्तु है जिसके एक छोर पर धुआं होता है और दूसरे सिरे पर एक मूर्ख यह वाक्य अत्यन्त वाक् चातुर्य का सूचक है। बातचीत के सिलसिले में वे अत्यन्त सुन्दर सूक्तियों का प्रयोग करते थे यदि कोई व्यक्ति चाहे तो ऐसी सुन्दर सूक्तियों का चयन अपनी कुर्सी में बैठे बैठे आराम से कर सकता है परन्तु जरूरत के समय पर उनका स्वाभाविक प्रयोग डा० जानसन की ही विशेषता थी। भाषा पर भी उनका पूर्ण अधिकार था इसलिए उन्हें इस कला में दक्षता प्राप्त हुई।

ऊपर डा० जानसन के चरित्र की व्याख्या और विवेचना हुई है उससे यह स्पष्ट है कि उनके व्यक्तित्व में कितनी विचित्रताओं का समावेश था। उनकी सत्यप्रियता, निर्भीकता मानवता तथा आस्तिकता आदि दैविक भावनाओं के कारण ही उन्होंने अपने देश के जन समाज में इतनी लोकप्रियता प्राप्त की है। सचमुच डा० जानसन अंग्रेजी चरित्र के एक सच्चे गौरव और सम्पूर्ण संस्करण थे।

———

वीर अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

सर्वोत्कृष्ट ! नई जानकारी !!

स्वस्तिक एटलस १९५०

विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में प्रकाशित पूर्णतया आधुनिक

संयुक्त राष्ट्र संघ और नवीन १९५० तीन के भी नक्शे, भारत की समस्त आधुनिक जानकारी १० नक्शों में।

मगाने का पता—स्वस्तिक ज्योग्राफीकल पब्लिशिंग ब्यूरो, स्वदेशी मिल कम्पाउंड बम्बई ४।

वैद्यनाथ प्राणदा

मलेरिया आदि बुखार मात्र की अचूक निर्दोष दवा

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लि:
कलकत्ता · पटना · झांसी · नागपुर

♣ गर्भ न रहेगा ♣

यदि औरत की बीमारी, कमजोरी या किसी ऐसी ही वजह से जो सन्तान पैदा करना नहीं चाहते हों वे "वन्ध्याकारक दवा" मगाकर केवल ३ दिन सेवन करावें। इस दवा से गर्भ रहना बन्द हो जायेगा और सांसारिक सुख भोग बन्द नहीं करना पड़ेगा। दाम ४) डाक खर्च ।||–) इस दवा से हजारों औरतें फायदा उठा चुकी हैं। यह दवा औरत को कोई नुकसान नहीं करती। पूर्ण गुणकारी दवा है

बन्द मासिक धर्म

हर प्रकार के बन्द मासिक धर्म को फौरन खोलकर साफ लाने की दवा, दाम ७||) डाक खर्च ।||–) खबरदार गर्भवती स्त्री को यह दवा सेवन न करावें वरना गर्भ गिर जायगा।

सावधान

कुछ स्वार्थियों ने हमारी दवाइयों से मिलते-जुलते नाम रख कर जनता को धोखा देना शुरू कर दिया है उनसे सावधान रहें। आर्डर लिखते समय चपलादेवी दवाखाना याद रखें।

पता—सावित्री देवी वैद्या,

इन्चार्ज— चपलादेवी दवाखाना, चपला भवन, मथुरा।

वीर-बच्चा

बच्चों के लिये सर्वोत्तम पुष्टई

दुबले पतले बच्चों को मोटा ताजा और नीरोग रखने के लिये

VEER-BACHHA
A TONIC FOR CHILDREN

बिड़ला लेबोरेटरीज
कलकत्ता

बरेली के खास एजेण्ट— श्री लक्ष्मीआयुर्वेद स्टोर्स, टाउन हाल बरेली।

१९५०-५१ में क्या होने वाला है ?

इस वर्ष आकाश के ग्रह मण्डल में जबरदस्त उथल पुथल होने से संसार पर गहरा प्रभाव पड़ने वाला है, यदि आप इस अन्धेरी दुनिया में अपनी किस्मत के होने वाले उलट फेर का साफ-साफ उतरा हुआ फोटो वक्त से पहले देखना चाहते हैं तो फौरन पोस्टकार्ड पर किसी दिल पसन्द फूल का नाम लिख कर भेज दें, फिर हम इसी ज्योतिष के द्वारा आपके बारह मास की तकदीर की तस्वीर, लाभ हानि किस तरह से रोजगार मिलेगा, किस व्यापार में लाभ होगा, नौकरी में तरक्की व्यापार-तनुज्जुली, तन्दुरुस्ती बीमारी देश परदेश का सफर, स्त्री सन्तान का सुख, किसी से नया मेल जोल, दिलपसन्द सगाई शादी, जमीन में बुजुर्गों की गढ़ी दौलत, लाटरी सट्टा या किसी नामालूम कारण से सुख और दौलत का मिलना, पोस्टकार्ड की तारीख से ले कर बयमर में सही २ होने वाली सब बातों के विस्तार के साथ महावारी वर्षफल बना कर सिर्फ १।) सवा रुपए में वी० पी० द्वारा भेज देंगे। साथ ही बुरे ग्रहों की शान्ति का उपाय भी लिख दिया जायगा, ठीक न होने पर कीमत वापस। एक बार की आजमायश से आप अपने मित्रों में हमारे नाम की प्रशंसा करेंगे—खास्टी है आप जैसा ही एक भद्र दानी पुरुष हजारों रुपया खर्च करके हमारी इस ज्योतिष विद्या का प्रचार कर रहा है। अवश्य लाभ उठाएं।

श्री महावीर स्वामी, ज्योतिष कार्यालय, (V.W.D.) करतारपुर (E. P.)

प्यारी बहिनो !

न तो मैं कोई नर्स हूँ, न कोई डाक्टर हूँ, और न वैद्यक ही जानती हूँ, बल्कि आप ही की तरह एक गृहस्थी स्त्री हूँ। विवाह के एक वर्ष बाद दुर्भाग्य से मैं लिकोरिया (श्वेत प्रदर) और मासिकधर्म के दुष्ट रोगों में फंस गई थी। मुझे मासिक धर्म खुलकर न आता था। अगर आता था तो बहुत कम और दर्द के साथ जिससे बड़ा दुःख होता था। सफेद पानी (श्वेत प्रदर) अधिक जाने के कारण मैं प्रति दिन कमजोर होती जा रही थी, चेहरे का रंग पीला पड़ गया था, घर के कामकाज से जी घबराता था, हर समय सर चकराता, कमर दर्द करती और शरीर टूटता रहता था। मेरे पतिदेव ने मुझे सैंकड़ों रुपये की मशहूर औषधियां सेवन कराईं, परन्तु किसी से भी रत्ती भर लाभ न हुआ। इसी प्रकार मैं लगातार दो वर्ष तक बड़ा दुःख उठाती रही। सौभाग्य से एक सन्यासी महात्मा हमारे दरवाजे पर भिक्षा के लिये आये। मैं दरवाजे पर आटा डालने आई तो महात्माजी ने मेरा मुख देख कर कहा — बेटी तुझे क्या रोग है, जो इस आयु में ही चेहरे का रंग रुई की भांति सफेद हो गया है! मैंने सारा हाल कह सुनाया। उन्होंने मेरे पतिदेव को अपने डेरे पर बुलाया और उनको एक नुस्खा बतलाया, जिसके केवल १५ दिन के सेवन करने से ही मेरे तमाम गुप्त रोगों का नाश हो गया। ईश्वर की कृपा से अब मैं कई बच्चों की मां हूँ। मैंने इस नुस्खे से अपनी सैंकड़ों बहिनों को अच्छा किया है और कर रही हूँ अब मैं इस अद्भुत औषधि को अपनी दुःखी बहिनों की भलाई के लिये असल लागत पर बांट रही हूँ। इसके द्वारा मैं लाभ उठाना नहीं चाहती क्योंकि ईश्वर ने मुझे बहुत कुछ दे रखा है।

यदि कोई बहिन इस दुष्ट रोग में फंस गई हो तो वह मुझे जरूर लिखें। मैं उनको अपने हाथ से औषधि बना कर वी० पी० पार्सल द्वारा भेज दूंगी। एक बहिन के लिये पन्द्रह दिन की दवाई तैयार करने पर २।||–) दो रु० चौदह आने असली लागत खर्च होता है और महसूल डाक अलग है।

❀ जरूरी सूचना ❀

मुझे केवल स्त्रियों की इस दवाई का ही नुस्खा मालूम है। इसलिये कोई बहन मुझे और किसी रोग की दवाई के लिये न लिखें।

प्रेमप्यारी अग्रवाल, (३०) गुड़गांव, जिला हिसार, पूर्वी पंजाब।

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, सोमवार २६ आषाढ़ सम्वत् २००७ [अङ्क १२

सं० राष्ट्र संघ का भविष्य

इस एक सप्ताह में कोरिया के युद्ध को लेकर जो अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष हुआ है, वह निकट भविष्य की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। संयुक्तराष्ट्र संघ के साथ ४० से अधिक राष्ट्रों की सहमति और उत्तरी कोरिया के विरुद्ध दक्षिणी कोरिया से सहानुभूति वस्तुतः संयुक्तराष्ट्र संघ की अभूतपूर्व विजय है। संघ के ५९ सदस्यों में से केवल रूस, चैकोस्लोवाकिया, पोलैंड और यूगोस्लाविया ने संघ के निर्णय का विरोध किया है। मिस्र व यमन उदासीन रहे हैं, तथा अफगानिस्तान, बरमा, सीरिया, ईराक लेबनान, आदि १२ देश अभी तक कोई उत्तर नहीं दे सके हैं। शेष ४१ राष्ट्रों ने सुरक्षा समिति के निर्णय का स्वागत किया है और उसके पक्ष में अपनी सहमति प्रकट की है। ६ से अधिक राष्ट्रों ने सैनिक सहायता देने का भी निश्चय किया है। वस्तुतः सं० राष्ट्र संघ को इससे पूर्व इतना समर्थन पहले कभी प्राप्त नहीं हुआ था यह देख कर कर हम कह सकते हैं कि सं० राष्ट्र संघ को अभूतपूर्व सफलता मिली है। इसी सफलता से उत्साहित हो कर अमेरिकन सेनापति जनरल मेकार्थर को संघ के लाल नीले झंडे के नीचे संघ का प्रधान सेनापति नियत कर युद्ध करने का प्रस्ताव भी किया जा रहा है। यह प्रथम अवसर है, जबकि एक आक्रमण के विरुद्ध इतने देश उसे रोकने के लिए एक हो गये हों।

किन्तु एक ओर जहां राष्ट्र संघ के समर्थक इससे प्रसन्न हो रहे हैं, वहां उसके अन्त के आसार भी दीखने लगे हैं। कम्यूनिस्ट चीन के प्रतिनिधि के प्रश्न को लेकर संघ में पहले से ही तीव्र मतभेद था। अब सुरक्षा समिति के कोरिया संबन्धी निर्णय को लेकर वह मतभेद और भी अधिक तीव्र हो गया है। रूस,पोलैंड आदि देश खुल्लमखुल्ला परिषद के निर्णय को अवैध और अनधिकारपूर्ण बता रहे हैं। यह ठीक है कि सं० राष्ट्र संघ के ५९ सदस्यों में से बहुत कम राष्ट्र इस समय विरोधी रुख ले रहे हैं, किन्तु राष्ट्र संघ की सफलता के लिए उन राष्ट्रों का साथ अनिवार्य है। राष्ट्र संघ का उद्देश्य विश्वशांति है। इसके लिए सभी शक्तियों का परस्पर सहयोग अनिवार्य है और रूस के प्रभाववर्ती देश जिस संगठित शक्ति का परिचय दे रहे हैं, उसकी उपेक्षा असम्भव है।

रूस ने संयुक्त राष्ट्र संघ के आगामी अधिवेशन में भाग न लेने की सूचना दे भी दी है। अब रूस संघ से निकल गया, उसके अन्य साथी राष्ट्र भी निकल जायगे और ये सब देश संघ के किसी निर्णय को मानने न मानने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र होंगे। कोरिया के प्रश्न को ले कर जो स्थिति उत्पन्न हो गई है, वह निश्चित रूपेण संयुक्त राष्ट्र संघ के लिए किसी भी तरह संतोषप्रद नहीं है। यदि अमरीका उत्तरी कोरिया पर विजय पा लेता है,तो रूस और उसके साथी सबसे अलग हो जायंगे। यदि अमेरिका को कोरिया में सफलता न मिली, तो वह निश्चित रूप से इस पराजय का प्रतिशोध किसी अन्य मोर्चे पर आक्रमण करके लेगा और तब संघ की स्थिति और भी अधिक विषम हो जायगी। यह भी सम्भव है कि आज जिन ४० राष्ट्रों की सहमति संघ को मिल भी गई है, वे सब भी आगे साथ न दें। ऐसी स्थिति में सं० राष्ट्र संघ का भविष्य किसी तरह आशापूर्ण नहीं कहा जासकता इस हालतमें हमारी भारत सरकार को भी सोचना पड़ेगा कि वह निर्बल राष्ट्र संघ के प्रति क्या रुख ले! दक्षिणी अफ्रीका व काश्मीर के प्रश्न पर संघ के आदेश उसके लिए कहां तक मान्य होंगे? हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि राष्ट्र संघ में भारत को प्रत्येक प्रश्न पर विरोध का ही सामना करना पड़ा है। काश्मीर व दक्षिणी अफ्रीका के प्रश्न संघ द्वारा ही अधिक उलझा दिये गए हैं। इसका कारण यह है कि संघ में न्याय की अपेक्षा स्वार्थ का राज्य है। इसीलिए आज वह दुर्बल है।

★

कांग्रेस गौरव खो रही है

पिछले दिनों नासिक कांग्रेस के लिए देशभर में प्रतिनिधियों के चुनाव हुए हैं। इन चुनावों में जिस अनाचार भ्रष्टता और छल, षड्यन्त्र आदि के दर्शन हुए उसका परिचय देने की यहां आवश्यकता नहीं। प्रायः सर्वत्र ही कांग्रेस प्रतिनिधियों के चुनावों में धांधलेबाजी, शरारत, मार-पीट, गुंडागिरी और रिश्वतखोरी के दर्शन लोगों ने स्वयं किये हैं। मतदाताओं को शराब तक पिलाने के उदाहरण मिले हैं। कांग्रेस के चुनावों में यह प्रथम अवसर है कि उम्मीदवारों ने अदालतों का दरवाजा खटखटाया और उन्हें चुनाव स्थगित करने की आज्ञा देनी पड़ी। यह स्थिति जितनी दुःखद है, उसकी कल्पना भी किसी ने न की थी। क्या इसी कांग्रेस का गौरव बढ़ाने के लिए राष्ट्र के वीर स्वयंसेवकों ने अपूर्व बलिदान किये थे? क्या इसी के सम्मान की रक्षा के लिए राष्ट्र के प्रातः-स्मरणीय नेताओं ने अपना जीवन अर्पित किया था? त्याग और तपस्या से कांग्रेस की संस्था को न जाने कितने अज्ञात या ज्ञात वीरों ने राष्ट्र की सर्वश्रेष्ठ संस्था बनाया था, आज इसकी यह दशा देख कर म० गांधी के उस परामर्श पर गम्भीरता से पुनः विचार करना आवश्यक जान पड़ता है, जिसमें उन्होंने कांग्रेस को राजनीति से पृथक् कर देने की आवश्यकता बताई थी। यदि कांग्रेस का क्षेत्र केवल जनसेवा रहे, तो भले ही कर्मठ सदस्यों की संख्या कुछ कम हो जाय, किन्तु यह संस्था निर्दोष और इसीलिए प्रभावशालिनी बनी रहेगी।

ऐसे चुनाव नहीं

कांग्रेस प्रतिनिधियों के ये चुनाव कुछ उस स्थिति की भी पूर्व सूचना देते हैं, जो व्यापक चुनावों के समय देश में उत्पन्न होगी। कांग्रेस प्रतिनिधियों के चुनावों में जो मतदाता थे, वे बहुत कम थे और कुछ न-कुछ राजनीतिक समस्याओं से जानकार भी थे, किन्तु नये संविधान ने देश के बालिगमात्र को चुनाव में मत देने का अधिकार दे रखा है। यदि कांग्रेस प्रतिनिधियों का चुनाव आगामी व्यापक चुनावों का संक्षिप्त संस्करण माना जाय, तो हमें इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना पड़ेगा कि देश में चुनावों को यथासंभव पवित्र व निर्दोष बनाने के लिए कौन से उपाय बर्ते जायें। चुनाव आज राष्ट्रीय चरित्र का दर्पण बन गया है, और कांग्रेसी चुनाव उसे अत्यन्त हीन रूप में हमारे सामने रख रहे हैं। श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में विभिन्न राजनैतिक दल चुनावों में पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग कर रहे हैं। यह मांग अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु इससे भी अधिक आवश्यक यह मांग है कि सब प्रतिस्पर्धी दल मिल कर यह तय करें कि चुनाव निर्दोष रूप में कैसे किये जा सकते हैं, जिससे जनता गुंडागीरी व प्रलोभन और भय का शिकार न हो कर अपना स्वतन्त्र मत व्यक्त कर सके। सभी दलों के नेता अपने अपने दल को पवित्र बनाने की चेष्टा करें। प्रेम और युद्ध में कुछ भी अनुचित नहीं है, की कहावत का नाजायज उपयोग चुनाव के लिए खुलेआम और गर्वपूर्वक किया जाता है। ऐसा चुनाव हमें नहीं चाहिये।

हिन्दी और हमारा कर्त्तव्य

भारत सरकार ने १ जुलाई से अनेक शहरों से हिन्दी और देवनागरी में तार देने की सुविधा देकर एक प्रशंसनीय कदम उठाया है। अन्य भी भाषा में तार दिए जा सकेंगे, यदि वे नागरी लिपि में लिखे गए हों। बधाई आदि के तारों की भी व्यवस्था अंग्रेजी की भांति नागरी में की गई है। यद्यपि यह व्यवस्था आज से पूर्व होजानी चाहिये थी, तथापि आज भी हो गई, इसके लिए सरकार हिन्दी जगत के निकट कृतज्ञता की पात्र है। परन्तु, अब हिन्दी जगत का उत्तरदायित्व अधिक बढ़ जाता है। भारत सरकार ने उचित दिशा में एक कदम उठाया है, देखना यह है कि सरकार के इस प्रयत्न का हिन्दी-प्रेमी कितना स्वागत करते हैं। यदि हमने इस सुविधा का लाभ न उठाया, तो १५ वर्षों से पूर्व हिन्दी को राज-भाषा बनाने की हमारी मांग निर्बल पड़ जायगी।

राजस्थान में संस्कृत मंडल

राजस्थान सरकार ने संस्कृत मण्डल और पुरातत्व मन्दिर की स्थापना करके एक बहुत बड़ी आवश्यकता की पूर्ति की है। विदेशी शासन और पश्चिमी संस्कृति की चकाचौंध के कारण हम अपने साहित्य को भूलते जा रहे थे। प्राचीन संस्कृत साहित्य सदियों से उपेक्षित रहने पर भी संसार के साहित्य में अद्भुत और महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पुरातत्वविदों द्वारा अनुसंधानसे संस्कृत साहित्य के सैकड़ों अमूल्य रत्नों का उद्धार हो सकता है। मुनि श्री जिनविजय के निरीक्षण में यह मण्डल प्राचीन ग्रन्थों का अनुसंधान करेगा। जयपुर के प्रख्यात विद्वान् श्री मधुसूदन झा के ग्रन्थों का अप्रकाशन भी हमारी उदासीनता व अयोग्यता का सूचक है। राजस्थान-सरकार का उक्त मण्डल उन ग्रन्थों का भी प्रकाशन करेगा किन्तु हम राजस्थान सरकार से एक निवेदन भी करना चाहते हैं कि मंडल का कार्यक्षेत्र

कोरिया प्रश्न पर भारतीय निर्णय

सर्वथा उचित है

भारत सरकार ने संयुक्तराष्ट्र-संघ की सुरक्षा समिति के उन दो प्रस्तावों से सहमति प्रकट की है, जो उसने कोरिया के सम्बन्ध में स्वीकृत किये हैं। एक प्रस्ताव में उत्तरी कोरिया को अपना आक्रमण बन्द करने का आदेश दिया है और दूसरे में दक्षिणी कोरिया को सहायता देने का अनुरोध सब देशों से किया गया है। इन पंक्तियों का लेखक भारत सरकार की इस नीति को ही आज व्यावहारिक और दूरदर्शिता-पूर्ण मानता है। आप पूछेंगे क्यों? तो मेरा उत्तर संक्षेप से सुनिये।

१. भारत आदर्शवाद का सदा से पुजारी रहा है। उत्तरी कोरिया का आक्रमण विश्वशांति के लिए घातक था। शस्त्रबल से अधिकार करने की प्रवृत्ति को कभी प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता, इसलिए इस प्रवृत्ति को रोकना आवश्यक था। भारत से सभी यह आशा करते थे कि वह आदर्श का साथ देगा। आक्रमणकारी का तत्काल विरोध करके हम अन्तर्राष्ट्रीय नीति में एक नये अध्याय का सूत्रपात करेंगे।

२. भारत कामनवेल्थ का सदस्य है। कामनवेल्थ के सब देश — ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, कनाडा और अफ्रीका आदि सभी देश इस समय अमेरिका का साथ दे रहे हैं, तो भारत उनसे अलग कैसे रह सकता है? उसने अपना व्यापारिक सम्बन्ध कामनवेल्थ के देशों से जोड़ लिया है। अलगाव का अर्थ राष्ट्र-कुल के सदस्यों से विरोध मोल लेना है। अभी दक्षिणी अफ्रीका से हम नहीं सुलझ पाये हैं, राष्ट्रकुल के अन्य देशों से बिगाड़ लें, इतनी शक्ति हम में नहीं है। हमें अभी स्टर्लिंग बैलेंस ब्रिटेन से वसूल करना है, जिसे हम उससे बिगाड़ कर वसूल नहीं कर सकते।

३. पाकिस्तान हमारे सिर पर है। और वह निश्चितरूपेण अमरीका के साथ है। यदि हम अमेरिका के साथ न रहे, तो काश्मीर के मामले पर अमरीका व ब्रिटेन जो हमारे सदा विरोधी रहे हैं, ऐसी हरकतें कर सकते हैं, जो हमारे हितों के प्रतिकूल हों। इस अवसर पर हम अमरीका व ब्रिटेन के मित्र बन कर ही अपने हितों की रक्षा कर सकते हैं। यही व्यावहारिक नीति है। राजनीति में कल का शत्रु हमारा आज का मित्र भी हो जाता है।

४. फिर यदि हम कोरियाकाण्ड में अमेरिका को साथ न दें, तो क्या रूस का समर्थन करें? दक्षिणी कोरिया की सहायता न करना उत्तरी कोरिया और वस्तुतः रूस के बढ़ते हुए साम्राज्यवाद का समर्थन करना है। रूस भी अमरीका की तरह साम्राज्यवादी है। मार्शल टीटो का कथन बताता है कि उसे साम्यवाद की बजाय 'स्टालिनिज्म' अधिक पसन्द है। भारत के कम्यूनिस्ट सदा भारत की राष्ट्रीय सरकार का विरोध करते रहे हैं। जब भारत सरकार अन्न का संकट और उत्पादन वृद्धि की कोशिश करती है, तो कम्यूनिस्ट उसमें अड़ंगा लगाता है। मारकाट, अग्निकांड, लूटमार, शस्त्राक्रमण कम्यूनिस्टों की नीति है। भारत किस तरह रूस से सहानुभूति कर सकता है?

५. सबसे बड़ी बात व्यावहारिकता की है। मैं पं० जवाहरलाल नेहरू के आदर्शवाद का प्रशंसक अवश्य हूँ, परन्तु उसे व्यावहारिक नहीं मानता। मैं तो व्यवहार का साथी हूं, और मेरा यह विचार है कि आज के युग में भारत का तटस्थ रहना सम्भव नहीं है। उसे किसी न किसी गुट में मिलना ही पड़ेगा, तब वह उस गुट के साथ क्यों न मिले, जो शक्तिशाली हो और इसमें संदेह नहीं है कि आज रूस से अमरीका अधिक शक्तिशाली है, उस के पास पैसा है, उसके पास बल है,

[शेष कालम ४ के नीचे]

[कालम २ का शेष]

उसके पास सब साधन हैं और उसके साथ बहुत-से देश हैं। इसलिए हमें अमरीका के साथ मिलना चाहिये। अमेरिका से हम अपनी आवश्यक सामग्री प्राप्त कर सकते हैं, बड़ी-बड़ी मशीनें, शस्त्रास्त्र और इंजिन, मोटरें व अन्न आदि इसके विपरीत रूस के पास सैनिक शक्ति बहुत होते हुए भी वह अमरीका का मुकाबला नहीं कर सकता। आज भी संयुक्त राष्ट्र-संघ के ४० सदस्य राष्ट्रों ने सुरक्षा समिति के प्रस्तावों का समर्थन कर बता दिया है कि दुनिया किधर है, हम भी आदर्शवाद के चक्र में पड़ कर रूस का साथ नहीं दे सकते। इन सब कारणों से भारत सरकार की दक्षिणी कोरिया-समर्थक नीति से मैं सहमत हूं।

सर्वथा अनुचित

जब मैंने अखबारों में पढ़ा कि भारत के प्रतिनिधि श्री नरसिंह राव ने सुरक्षा समिति में अपना मत नहीं दिया, क्योंकि पं० नेहरू से टैलीफोन नहीं मिल सका, तो श्री नरसिंह राव की बहाना बनाने की कुशलता पर मैं बहुत प्रसन्न हुआ, किन्तु इसके दूसरे दिन जब भारत सरकार के प्रस्ताव पढ़े, तो वह प्रसन्नता निराशा में बदल गई। आप पूछेंगे, क्यों? तो मेरा उत्तर भी सुन लीजिए।

१. भारत अपनी जिस तटस्थता नीति पर गर्व करता था, वह नीति इस निश्चय से सर्वथा समाप्त हो गई है। अब भारत स्पष्ट रूप से अमेरिकन गुट में शामिल हो गया है। अब तक भारत अपनी स्वतन्त्रता कायम रखता था। कम्यूनिस्ट चीन को स्वीकार कर पं० नेहरू ने बहुत साहस का परिचय दिया था। सुरक्षा समिति में इटली के उपनिवेशों पर, इण्डोनेशिया के झगड़े पर भारत ने अपनी स्वतन्त्रता हो दिखाई थी। इसी तटस्थता के कारण भारत का अन्तर्राष्ट्रीय गौरव बढ़ा था। अमेरिका के साथ शामिल होकर आज हमने अपना गौरव नष्ट कर दिया है।

२. भारत सरकार ने यह वक्तव्य दिया है कि विश्वशांति के लिए शस्त्र प्रयोग घातक है। मैं मानता हूँ कि अपनी मांग मनवाने के लिए शस्त्र-प्रयोग अनुचित है। किन्तु दक्षिणी कोरिया पर ही तो आज शस्त्र-प्रयोग नहीं हुआ। राष्ट्र-संघ की स्थापना के बाद इससे पहिले भी तो पाकिस्तान ने भारत के प्रदेश पर आक्रमण किया था। उस समय सं० राष्ट्र-संघ कहां गया था? उसने क्यों नहीं पाकिस्तान को अपनी सेनाएं वापस ले जाने के लिए कहा? आज भी क्यों पाकिस्तानी सेनाओं को निकालने के लिए अमेरिकन अपना परमाणु बम नहीं ले आता? असल में सुरक्षा समिति अमेरिका के हाथ की कठपुतली है और भारत भी उसी का एक खिलौना बन गया है। हम अमेरिकन साम्राज्यवाद के शिकार हो गए हैं। मिस्र की तरह से हम भी तो तटस्थता का बर्ताव दे सकते थे।

३. यदि आज की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को देखें, तो भी दक्षिणी कोरिया के प्रश्न पर हमारी वर्तमान नीति दूरदर्शितापूर्ण नहीं है। दक्षिणी पूर्वी एशिया में रूस का प्रभुत्व लगातार बढ़ता जा रहा है। विशाल चीन आज माओ त्से तुंग के हाथ में है, हिन्द चीन में आज साओदाई की अपेक्षा हो चि मिन का प्रभाव अधिक है। उत्तरी कोरिया भी कम्यूनिस्ट है, इसलिए हमें सोचना चाहिए कि क्या यह वांछनीय है कि हम इतने शक्तिशाली कम्यूनिस्ट गुट का विरोध करें। अमेरिका तो बहुत दूर है, वहां कम्यूनिस्ट कब पहुंचे न पहुंचे, भारत में तो उसका हंसिया हथौड़ा किसी भी दिन पहुंच सकता है। आज अमेरिकन सैन्य उत्तरी कोरिया का भी कुछ बिगाड़ कर सका हो, यह हमें प्रतीत नहीं होता।

४. अमरीका हमारा सदा शत्रु रहा है। काश्मीर के मामले को उसी ने बिगाड़ा। गेहूँ देने में उसने अनुदारता का परिचय दिया। आज एशिया में वह डालर-साम्राज्य स्थापित करके समस्त-विश्व में शक्तिशाली बनना चाहता है। हम उसे क्यों सहायता प्रदान करें? एक ओर पं० नेहरू इण्डोनेशिया के प्रश्न 'पर एशिया की स्वतन्त्रता खतरे में' का नारा लगाते हैं, फिर अमेरिकन प्रभाव को एशिया में बढ़ाने में सहायक हो रहे हैं।

५. अन्त में एक बात मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि पं० नेहरू स्वयं अपनी भूल समझ गये हैं और इसीलिए यह अफवाह उड़ रही है कि भारत दक्षिणी कोरिया को नैतिक आश्वासन के सिवाय किसी प्रकार की सैनिक सहायता नहीं देगा। अपनी भूल के प्रायश्चित्त की दिशा में यह छोटा-सा कदम है।

केवल जयपुर न रहे। उदयपुर, बीकानेर कोटा और जोधपुर आदि में भी इसका शोधकार्य होना चाहिए।

क्या यही सफल है

पाकिस्तान सरकार ने पिछले दिनों एक विज्ञप्ति प्रकाशित की थी कि १ फरवरी १९५० के बाद सिंध से आने वाले निष्क्रान्त हिन्दू वापस आ सकेंगे और उन्हें उनकी सम्पत्ति मिल जायगी। किंतु २ जुलाई को जो हिन्दू सिंध से जहाज द्वारा बम्बई पहुंचे हैं, उनके वक्तव्य से पता लगता है कि सिंध में आज भी हिन्दुओं के साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है, उनकी दुकानें लूट ली जाती हैं, उन्हें परेशान किया जाता है। पूर्वी बंगाल में भी निर्मम हत्याओं लूट व जबरन अधिकार के समाचार मिलते रहते हैं और इन घटनाओं से वहां आतंक फैल गया है इसी कारण वहां से आने वाले शरणार्थियों का प्रवाह बहुत बढ़ गया है। क्या यही लक्षण नेहरू-लियाकत समझौते की सफलता के हैं?

समाचार चित्रावलि

राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद महात्मा गांधी की समाधि पर वृक्ष लगाकर वनमहोत्सव सप्ताह का समारम्भ कर रहे हैं।

प्रधान मन्त्री पं० नेहरू महात्मा गांधी की पुण्य समाधि के निकट वृक्ष लगा रहे हैं।

चीन की कम्यूनिस्ट सरकार के प्रमुख माओत्सेतुंग ने मित्र राष्ट्रों को एशिया से पृथक रहने की सलाह दी है

सुरक्षा परिषद् में भारतीय प्रतिनिधि श्री नरसिंह राव, कोरिया युद्ध में संलग्न परस्पर विरोधी राष्ट्रों में समझौता कराने के लिये प्रयत्नशील हैं।

रूस के उपराष्ट्र सचिव ग्रोमिको ने अमेरिको को शांति का शत्रु घोषित किया है।

पूर्वीय यूरोप के [illegible] को बार-हवें पोप [illegible] कर दिया है, जो चर्च का विरोध करते हैं—

वित्त मंत्री श्री देशमुख पंजाब से भारतीय संसद् के सदस्य निर्वाचित हुए हैं।
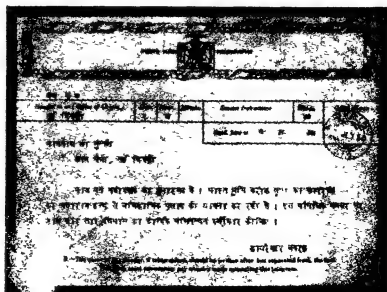
[illegible] में तारों का आदान प्रदान हिन्दी में प्रारम्भ हो गया है प्रस्तुत चित्र [illegible] भेजे जाने वाला सर्वप्रथम तार का है।

संस्कृतियों का मिश्रण

● श्री प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति

[१]

हमने देखा कि लगभग ५०० वर्षों तक भारतवर्ष में हकूमत करके भी मुसलमान भारत की संस्कृति पर कोई विशेष प्रभाव न डाल सके। बादशाह, उनके साथी और सिपाही भारतवर्ष में ऐसे रहे, जैसे किसी शहर में छावनी डाल कर परदेशी लोग रहते हैं। वे लोग न भारत के हृदय को जीत सके, और न मन को।

दक्षिण तो लगभग पूरा ही अछूता बना रहा। अलाउद्दीन खिलजी और मलिक काफूर के आक्रमणों के अतिरिक्त कोई प्रभावशाली आक्रमण भी दक्षिण पर नहीं हुआ और इस्लाम के पैर तो वहां सर्वथा नहीं जम सके। मुसलमान विजेता अपने विजय के मद में रहे, और हिन्दुस्तान के निवासी अपनी धार्मिक और नैतिक श्रेष्ठता की धुन में मस्त रहे। भारत में शक्ति-सम्पन्न होकर मुसलमानों ने परलोक की चिंता छोड़ दी, और राज्य खो कर हिन्दुओं ने इस लोक का मोह छोड़ दिया, और भक्ति की बंसरी बजा कर गम गलत करने लगे। दो-चार साहित्यिक दृष्टांतों को छोड़ कर मुगलों से पूर्व तक दोनों जातियों के धार्मिक, मानसिक या सामाजिक मिश्रण के कोई विशेष दृष्टांत नहीं मिलते।

इसके मुख्य कारण दो थे। पहला कारण तो यह था कि भारत की सभ्यता और संस्कृति बहुत पुरानी, बहुत दृढ़ और अपनी आध्यात्मिकता के कारण आक्रान्ताओं की संस्कृति से बहुत ऊंची थी। वह ऐसी निर्बल नहीं थी कि केवल शस्त्रबल के सामने झुक जाती।

दूसरा कारण यह था कि मुसलमान विजेता ५०० वर्षों तक यह न समझ सके कि उन्हें जिस जाति से वास्ता पड़ा है वह कच्चा घड़ा नहीं है, जो लाठी लगते ही टूट जायगा। वह भारतवासियों को केवल तलवार के बल से जीतने का यत्न करते रहे। जब यत्न सफल न हुआ तो उनका क्रोध और अधिक भड़क उठा और वह और अधिक कठोरता बरतने लगे, जिससे भारतवासियों के हृदयों में विद्यमान प्रतिस्पर्धा शतगुण होकर घृणा और उपेक्षा के रूप में परिणत हो गई। दोनों जातियां एक ही देश में रहती हुई भी एक दूसरे से लगभग अलग-अलग, सांस्कृतिक दृष्टि से स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करती थीं।

[२]

अब हम भारतीय इतिहास के मुगल काल पर आते हैं। यह शेष मुसलमान काल से सर्वथा अलग अपनी विशेषतायें रखने वाला महत्वपूर्ण काल है। इसके प्रारम्भिक और मध्यकाल में इतिहास में एक नया परीक्षण किया गया, जो बहुत दूर तक सफल हुआ। वह परीक्षण मौलरूप में राजनीतिक होता हुआ भी प्रारम्भ से ही सामाजिक, साहित्यिक और धार्मिक क्षेत्रों में फैल गया, और ऐसा फैला कि उसके प्रभाव काश्मीर से लेकर दक्षिण के सुदूरवर्ती हिस्सों तक फैल गये। वह परीक्षण दो सर्वथा विभिन्न संस्कृतियों के मिश्रण का परीक्षण था।

मुगल काल की जितनी विशेषतायें हैं उनका आदिमूल हम वंश के संस्थापक बाबर के चरित्र में तलाश कर सकते हैं। बाबर अपने से पूर्ववर्ती मुसलमान आक्रान्ताओं से कई बातों में भिन्न था। वह कट्टर मुसलमान होता हुआ भी मनुष्यता का प्रेमी था। उसका सारा जीवन बतलाता है कि उसका हृदय बहुत विशाल था—उसे कवि का हृदय कह सकते हैं। मजहबी पागलपन जैसी वस्तु उसे नहीं छू गई थी। वह वीर योद्धा तो था ही, साथ ही प्रेमी पिता, सहृदय कवि और महानुभाव शासक भी था।

उसने जिस वंश की बुनियाद रखी, उसके मौलिक विचार उदार और दूरदर्शितापूर्ण थे। उनमें स्वार्थ या मजहबी विचारों के कारण अन्धता की भावना नहीं थी।

बाबर ने १५२६ में मुगल साम्राज्य की स्थापना की। उसने भारत में केवल ४ वर्ष तक राज्य किया। १५३० में वह मर गया। इन चार वर्षों में वह केवल इतना कर सका, कि एक ओर पठान बादशाह को और दूसरी ओर राजपूत सेनाओं को परास्त करके उत्तरी भारत का शासक बन गया और साथ ही अपने उत्तराधिकारियों के सामने सहृदयता और मानवता का दृष्टान्त रख गया। बाबर अपने शत्रुओं से वीरतापूर्वक लड़ता था, उन्हें युद्धकला से परास्त करता था, और विजय प्राप्त करने के पश्चात् उनसे उदारता का व्यवहार करता था।

हुमायूं का जीवन घर में और बाहर भी संघर्ष में व्यतीत हुआ। उसे जम कर शासन करने या शासन नीति बनाने का अवसर न मिला। फिर भी हम हुमायूं के विषय में जितना कुछ जानते हैं, उससे प्रतीत होता है कि उसका हृदय झूठी धर्मान्धता से बहुत ऊपर उठा हुआ था। यद्यपि वह बाबर की तरह कवि नहीं था, परन्तु कवि हृदय अवश्य रखता था।

हुमायूं के पीछे अकबर राजगद्दी पर बैठा। अकबर के विषय में सामान्य रूप से अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं क्योंकि वह अपनी नीति और प्रवृत्ति के कारण केवल भारतीय इतिहास ही नहीं, अपितु संसार के इतिहास पर अपनी छाप छोड़ गया है। इस लेख में तो मैं अकबर के बारे में केवल उतना ही लिखूंगा, जितना उस समय की सांस्कृतिक प्रगति से सम्बन्ध रखता है।

अकबर ने अपने से पहले मुसलमान शासकों की नीति में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन किये, वे निम्नलिखित थे—

(१) उसने हिन्दुओं पर जो जज़िया कर लगाया जाता था, उसे रद्द कर दिया।

(२) उसने हिन्दुओं को और विशेषतः राजपूत क्षत्रियों को अपने राज्य में ऊंचे से ऊंचे पदाधिकारी नियुक्त किया।

(३) हिन्दू राजाओं से विवाह सम्बन्ध स्थापित किया। और

(४) इस्लाम के कट्टरपन से असन्तुष्ट होकर 'दीने इलाही' के नाम से ऐसे धार्मिक सम्प्रदाय की स्थापना का प्रयत्न किया, जिसमें सब धर्मों की सचाइयों को उचित आदर का स्थान दिया गया है।

यह उसके किए हुए बड़े-बड़े नवीन परिवर्तनों का स्थूल रूप था। यह तो था उनका स्थूल रूप, अब देखना यह है कि उसने यह परिवर्तन किस भावना से किये? क्या वे आकस्मिक थे, उसकी सनक के परिणाम थे, अथवा किसी गहरी नीति से प्रेरित थे?

दूसरा विचारणीय प्रश्न यह है कि अकबर की नीति का भारत की सांस्कृतिक प्रगति पर क्या प्रभाव हुआ?

इन प्रश्नों का उत्तर फिर आयेगा।

बीसवीं सदी और अमेरिका में

प्राचीन सँस्कृति के उपासक

पाठकों को यह जानकर विस्मय होगा कि आज के इस जटिल ऐटम-युग में भी सुदूर अमेरिका में एक ऐसा जन-समुदाय है, जिसके सदस्य आधुनिक विज्ञान की साधन-सुविधाओं का उपयोग नहीं करते। वे धार्मिक और मेहनती लोग जीवन के बुनियादी तत्वों पर चलते हुए अपनी सामाजिक सुख-समृद्धि का निर्माण करते हैं। वे सब आमिश नाम के एक ईसाई पन्थ के अनुयायी हैं। इनकी संख्या लगभग १,५०० है और अमेरिका के पेन्सिलवानिया राज्य के लंकास्टर जिले में रहते हैं। इन लोगों की खेती की योग्यता की तुलना दुनिया के अच्छे से अच्छे किसानों से की जा सकती है।

उन पर औद्योगिक क्रान्ति का कोई असर ही नहीं हुआ है; वह मानों उनके लिये हुई ही नहीं है। उनका धर्म उन्हें बिजली, टेलीफोन, मोटरगाड़ियों, गैस-एंजिनों आदि के उपयोग की, कुछ विशेष कार्यों को छोड़ कर, बाकी हर जगह मनाही करता है। वे अभी भी केवल—कुछ अपवाद छोड़ कर—घोड़े का ही उपयोग करते हैं; केवल जमीन जोतने-बोने के ही लिये नहीं, बल्कि उनकी संदूकनुमा लकड़ी के जाले जैसी हलकी गाड़ियों को खींचने में भी उनका सम्प्रदायसम्मत वाहन केवल यही है। वे अपने बच्चों को बहुत ज्यादा शिक्षा देने का विरोध करते हैं और आपस में पेन्सिलवानिया की एक डच बोली में बातचीत करते हैं। वे खुद को अपने देश के मुख्य जीवन-प्रवाह से बिलकुल बेदाग रख सके हैं।

'सभ्यता' से इतनी दूर रह कर भी, और अपनी अजीब रीति नीति और खेती की आदिम पद्धति के बावजूद आमिश प्रतिवर्ष गढ़व (अल्फाल्फा) अनाज, फल, और साग-भाजियों की, तथा वहां की सर्वोत्तम तम्बाकू की (यह अजीब-सी बात है, क्योंकि ज्यादातर लोग उसे पीते नहीं हैं) भरपूर उपज करते हैं। अमेरिका में खेती के विभाग की स्थापना के बहुत पहले से वे जमीन में खाद देने, फसल का फर्क करने, और पशु संवर्धन आदि का प्रयोग कर रहे थे। सरकारी खेती विशेषज्ञ आज भी उनके पास जाते और उनसे जो सम्भव हो, सीखते हैं। लंकास्टर के पूर्व की ओर के १७५ मील ब्यारी उस तिकोनी जमीन की, जहां आमिश लोगों की बड़ी संख्या रहती है, कीमत प्रति एकड़ १००० डालर है और कहीं कहीं उससे भी ज्यादा। एक औसत किसान प्रतिवर्ष ४००० से ७००० डालर तक कमाता है।

इतना कमाने के लिए एक आमिश आदमी गरमियों में सुबह ४॥ से लगाकर रात के लगभग ९॥ बजे तक काम करता है, और उसके लड़के भी लगातार उसके साथ काम करते रहते हैं।

आमिश लोग अपने पीड़ित पड़ोसियों की मदद साधारण तौर पर रखते ही करते हैं। यदि किसी आदमी की खलिहान आग में जल जाय, तो पूरा समाज एक मेले की आयोजना करता है। उस खेत पर सुबह सुबह लगभग २४० आदमी इकट्ठे हो जाते हैं और शाम तक एक नया खलिहान बन जाता है। इसी तरह यदि कोई आमिश डाक्टर या वकील-

[शेष पृष्ठ २६ पर]

हमारी अन्न समस्या

अन्न पर नियन्त्रण आवश्यक

भारत सरकार द्वारा स्थापित अन्नप्राप्ति समिति ने अन्न-समस्या पर जो सिफारिशें की हैं, उनमें से कुछ मुख्य निम्नलिखित हैं।

नियन्त्रित खाद्य प्रशासन 'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन का केवल एक दूसरा अंग है। अधिक उत्पादन के बिना देश खाद्य-भरित नहीं बन सकता। खाद्य उत्पादन में वृद्धि हो जाने पर भी सुरक्षा की भावना के बिना, जो केवल उचित मूल्य स्तर से ही उत्पन्न हो सकती है, हम खाद्य की कमी से मुक्त नहीं हो सकते। इस समय स्थिति ऐसी है कि हमें अपने खाद्य साधनों को उस समय तक और भी सुव्यवस्थित रखना चाहिए जब तक कि देशकी खाद्यस्थिति भरोसे योग्य नहीं हो जाती। क्योंकि उसी स्थिति में नियन्त्रण की आवश्यकता न रहेगी।

अन्न की प्राप्ति एवं वितरण में एकरूपता सम्भव और आवश्यक दोनों हैं। सरकार को अन्न के सर्वप्रथम बिक्री के के लिए आने पर, खरीद का एकाधिकार प्राप्त होना चाहिए। प्राप्ति-सम्बन्धी यह एकाधिकार न्यूनतम एकरूपी प्रणाली है, जो सारे देश में लागू होगी। इसका अर्थ हुआ कि गाव विशेष से बाहर के अन्न सम्बन्धी सारे सौदे सरकार या इसके अभिकर्त्ताओं(एजेंटों) के साथ सरकारद्वारा निश्चित मूल्यपर होंगे। इस प्रणाली से खुले बाजार और खुले बाजार के मूल्यों का अन्त हो जायगा और अन्न व्यापार सरकारी अभिकर्त्ताओं तक ही सीमित रह जायेगा। इसके फलस्वरूप हर अन्नोत्पादक से उसका फालतू अन्न वसूल करने की बात नहीं रह जाती, बल्कि ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है कि किसान स्वेच्छापूर्वक ही यह अन्न सरकार को समर्पित कर दे। किन्तु फिर भी अन्न की वसूली सभी क्षेत्रों में शायद बन्द न हो। इसलिए उन स्थानों में वसूली आवश्यक होगी, जहां अन्न की कमी अधिक हो और फलतः जहा ऐसी प्रणाली द्वारा अन्न उपलब्ध न हो सकेगा, जिसके अनुसार किसान अपना गल्ला जब चाहे, तब निकालने के लिए स्वतन्त्र हैं। अतएव वसूली की प्रथा को अधिक अभावग्रस्त राज्यों में एकाधिकार प्रणाली कार्यान्वित करने के एक साधन के रूप में प्रयोग में लाया जायगा।

उत्तरदायित्व भी

इस एकाधिकार प्रणाली से वितरण सम्बन्धी कुछ दायित्व भी उत्पन्न होते हैं। यदि सरकार किसी बाजार में खरीद का एकाधिकार लेती है, तो उसे उन सब लोगों के लिए खाद्य की सप्लाई की व्यवस्था भी करनी चाहिए, जो उस बाजार से अन्न खरीदते रहे हों। इसलिए वितरण उपभोक्ताओं को निश्चत मूल्य पर अन्न सप्लाई करने का एक साधन मात्र ही नहीं है, वरन् स्वयं एकाधिकार की सफलता के लिए अपरिहार्य है। इसके अन्तर्गत ये बातें करनी होंगी— (१) ५०,००० और इससे अधिक जनसंख्या वाले नगरों में राशनिंग व्यवस्था (२) अन्य नगरों में अनौपचारिक राशनिंग व्यवस्था और (३) जब भी तथा जहां तक भी आवश्यक हो, गावों की खाद्य-की सप्लाई की व्यवस्था।

किन्तु जब तक राज्यीय सरकारें जिलों तथा प्रधान कार्यालयों में निरीक्षण सम्बन्धी उच्च स्थानों के लिये अपने यहा के सर्वोत्तम अधिकारियों को भेज नहीं सकती, तब तक खाद्य समस्या में कोई प्रगति करना असम्भव है। यह बड़ी खेद-जनक बात है कि कई राज्यो में खाद्य विषयक कार्यों के लिए अनुभवशून्य अधिकारियों को लगा दिया गया है। निश्चय ही ऐसी बातों का दुष्प्रभाव जनता को भुगतना पड़ता है। इसलिए अन्नप्राप्ति तथा वितरण के कार्यों में अधिक प्रशासक कुशलता का परिचय देना चाहिए जिससे देश को आयातित अन्न पर कम निर्भर रहना पड़े। प्रत्येक राज्य में खाद्य नियन्त्रण तथा 'अधिक अन्न उपजाओ' कार्य एक ही मंत्री के अधीन होना चाहिए। 'खाद्य की समस्या एक अत्यन्त महत्वपूर्ण समस्या है और अगले कुछ वर्षों तक यह ऐसी ही बनी रहेगी, और प्रत्येक राज्य में यह किसी समर्थ तथा प्रभावशाली मंत्री के हाथ में छोड़ी जानी चाहिये।'

इन कार्यों को पूरी तरह से नहीं किया गया और हमारी वर्तमान कठिनाइयों का यही कारण है। खाद्य मन्त्रालय में ऐसा संगठन होना चाहिये, जो एकीकरण एवं निरीक्षण अधिकारी के रूप में प्रभावपूर्ण ढंग से और शीघ्रता से कार्य कर सके।

कुछ सुधार के साथ अन्न प्राप्ति और वितरण की वर्तमान प्रणालियां बम्बई, मद्रास, पंजाब, मैसूर और ट्रावनकोर कोचीन में जारी रहें। पटियाला रियासत संघ, उत्तरप्रदेश, मध्यभारत, मध्यप्रदेश, पश्चिमी बंगाल, आसाम, बिहार और उड़ीसा में अन्नप्राप्ति की एकाधिकार प्रणाली और राजस्थान, और सौराष्ट्र और हैदराबाद में उद्ग्रहण और एकाधिकार प्रणाली लागू की जानी चाहिये।

ईंधन के वृक्षों की उपयोगिता

अन्नसंकट की दूरी के लिए उत्पादन वृद्धि, उत्पादन के लिए खाद और खाद बचाने के लिए ईंधन के वृक्ष अत्यन्त आवश्यक हैं।

गंगा के प्रदेश में कृषि भूमि का इतना अधिक विस्तार हुआ है कि चरागाहों, गावों की सड़कों और पेड़ों की जमीन में भी खेती होने लगी है और इसका दुष्परिणाम यह है कि उपज दिनों दिन घटती जा रही है। कुछ लोगों का खयाल यह है कि इस प्रदेश की भूमि न्यूनतम उपज की अवस्था को पहुँच चुकी है, तथा उसकी उपज अब और कम न होगी। लेकिन यह खयाल अनुमान मात्र है। समय समय पर वर्षा के न होने और परिणामतः कृषि न होने से भूमि को जो विश्राम मिल जाता है, उसके कारण और वर्षा के जल में नत्रजनीय तत्वों के अधिक मात्रा में सम्मिलित रहने तथा सूर्य की कड़ी धूप से उर्वरता की क्षति पूर्ति होते रहने के कारण, इस प्रदेश को उपज में काफी स्थायित्व अवश्य आ गया है। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि यह सम्बन्ध स्थायी है और एक ऐसे देश में, जहां कि तेलहन के १/५ भाग का निर्यात होता है, जहा खेतों में बराबर फसलें कटती रहती हैं, जहा खाद के रूप में मलमूत्र का उपयोग बुरा समझा जाता है और जहा गाय भैंसों का गोबर जलाने के काम में लाया जाता है, वहा इस बात से आश्चर्य नहीं होता कि उपज कम क्यों है, बल्कि इस बात पर होता है कि वह उससे और भी कम क्यों नहीं। विभिन्न देशों में गेहूँ और धान की औसत उपज की तुलना निम्नलिखित तालिका द्वारा की गयी है—

प्रति एकड़ उपज (पौंडों में)

	धान	गेहूँ
अमेरिका	१,४८१	८४६
इटली	३,०००	×
जापान	२,३०६	×
कनाडा	×	९७२
आस्ट्रेलिया	+	७१४
यूरोप	×	१,१४५
रूस	×	६३६
भारत	८०१	६३६
उत्तर प्रदेश	८७०	७८६

भूमि क्षेत्र, कृषकों के साधन, युगों से चली आती हुई कृषि प्रथाओं तथा भूमि को पुनः उपजाऊ बनाने वाली प्राकृतिक शक्तियों पर फसल का उत्पादन निर्भर है। अन्य सब बातें समान होने पर भूमि को पुनः उपजाऊ बनाने की प्राकृतिक शक्ति ही एक ऐसा साधन है, जिससे प्रति एकड़ उपज निर्धारित होती है। सुधरे हुए बीजों, गहरी जुताई तथा गोबर की खाद आदि के उपयोग के कृत्रिम प्रयोग इस क्षेत्र को अधिक उपजाऊ बनाने में बहुत सफल हुए हैं। भूमि से वर्ष भर में हमें जो कुछ प्राप्त होता है, उसका कुछ भाग, उसे उपजाऊ बनाने के लिए, उसके सुधार में अवश्य लगा देना चाहिये।

ईंधन की कमी

कृषि विस्तार करने से प्रति एकड़ उपज में कमी हो जाती है निरन्तर खेती की भूमि में वृद्धि करते जाने से रहने के स्थान की इतनी अधिक कमी हो गई है कि छोटी छोटी मिट्टी की कोठरियों में बहुत से लोग भरे रहते हैं। मुख्यतः ढाक आदि के वृक्षों के उत्तरोत्तर अधिक संख्या में काटे जाने से कृषक को गोबर जलाने के लिए बाध्य होना पड़ता है, जो अन्यथा खाद का काम दे सकता है। इस क्षेत्र में एक सतुलित ग्राम्य अर्थ व्यवस्था को पुनः आरम्भ करने की आव

(शेष पृष्ठ २४) पर

इन्द्र धनुष

काँग्रेस को टूट जाने दो

'मेरी' अपनी राय है कि यदि अच्छे आदमी इतने प्रभावशाली नहीं कि भ्रष्ट बनती हुई किसी संस्था में शामिल हो कर उसे सुधारने की ताकत रखते हों, तो उनका उससे पूरा २ अलग हो जाना और असहयोग करना ही कर्तव्य है।' अपना यह मत बताते हुए श्री मशरूवाला कांग्रेस के सम्बन्ध में लिखते हैं—जिसमें हमारा जन्म हुआ हो, ऐसे पुरखों के मकान की तरह कांग्रेस हमारा पुरानी गौरव लेने योग्य संस्था है, फिर भी वह अगर सड़ती जा रही है और उसकी मरम्मत करना असम्भव है, तो उसे छोड़ देना या टूटने देना हमारा कर्तव्य हो जाता है। फिर भले सब बुरे लोग ही उस पर कब्जा कर लें और उसे चलाने की चेष्टा करें। जब यह स्थिति आवेगी कि कोई शरीफ आदमी न उसमें शामिल होता है, न मदद करता है, तब कांग्रेस आप ही टूट जावेगी, और साथ ही वे भी जो उसमें हठपूर्वक पड़े रहेंगे, जैसा गिरते हुए मकान से न निकलने वाले लोगों का होता है। शुद्धवृत्ति के लोग यदि राजकीय काम करना चाहें, तो अपनी अलग संस्था बनावें और उसे अपनी सेवा और चरित्र से धीरे धीरे बलवान करें।

जो लोग स्वयं राजकीय कामों में पड़ने की इच्छा नहीं रखते, फिर भी देश के राज कारोबार और राजकीय प्रश्नों में दिलचस्पी रखते हैं, वे किसी राजकीय संस्था में शामिल न हों। जब धारा सभाओं के चुनाव का समय आवे, तब अगर उनकी दृष्टि में कोई अच्छा उम्मीदवार हो तो उसको मत दें, फिर वह चाहे जिस पक्ष का क्यों न हो।

गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम में विश्वास रखने वाले लोगों को समझ लेना चाहिये कि इस वक्त एक भी पक्ष ऐसा नहीं हो सकता, जो सोलह आने गांधी जी का कार्यक्रम चला सके और न ऐसा ही जो उसे बिल्कुल फेंक सके। इसलिये उन्हें अपने मत का उपयोग करने में दो ही बातें देखनी चाहियें।

१. जाति सम्प्रदाय का मान रखने वाला वह उम्मीदवार न हो, और

२. शुद्ध चरित्र का ईमानदार आदमी हो।

यदि एक भी राजकीय पक्ष ऐसा उम्मीदवार अपने विभाग में खड़ा नहीं करता, तो बेहतर है कि वह मत देने के लिए जावे ही नहीं।

●

अमेरिका में वृक्षारोपण पर्व

भारत में वन महोत्सव मनाया जा रहा है, परन्तु अमेरिका में ८० वर्षों से यह उत्सव मनाया जाता है। वहां आर्बर डे एक विख्यात पर्व है। इस दिन वृक्षारोपण की आवश्यकता, विद्यमान वृक्षों की रक्षा और उनको बरबाद होने से बचाने के लिए साधारण व्यवहार बुद्धि को प्रयोग करने पर बल दिया जाता है। यह दिवस विशेषतः स्कूली बालकों द्वारा मनाया जाता है।

आज से ८० वर्ष पूर्व प्रमाद के कारण किए गए वन विनाश की हानियों के खतरे से बचने के लिए अनेकों उपाय सुझाए गए थे, जिनमें एक यह भी था कि वर्ष में एक निश्चित समय पर नियमपूर्वक वृक्षारोपण कार्य चालू किया जाय। इस विचार के अनुसार बनाई गई प्रथम योजना को १८७२ में नेब्रास्का में आर्बर डे मना कर क्रियात्मक रूप दिया गया। प्रथम वर्ष में इतना अधिक उत्साह बढ़ाया गया कि इस वृक्षविहीन राज्य में १० लाख से अधिक वृक्ष लगाये गये। अन्य राज्यों ने भी इस विचार को अपनाया और आज अमेरिका के सभी राज्य, कनाडा के अनेकों प्रान्त और हवाई द्वीप भी इस आर्बर पर्व को मनाते हैं।

यह आर्बर डे अमेरिका के भिन्न भिन्न स्थानों में भिन्न भिन्न समय पर मनाया जाता है। उत्तरी राज्यों में यह दिवस अधिकतर अप्रैल के अन्त में अथवा मई के प्रारम्भ में आता है, किन्तु दक्षिणी राज्यों और हवाई में यह दिसम्बर से मार्च तक विविध समयों पर मनाया जाता है।

●

विदेशी दूतावासों पर भारी व्यय

विदेशों में स्थित भारतीय दूतावासों के व्यय की जांच के लिये श्री नरहरि राव बाहर जारहे हैं। उनके भारी व्यय की आलोचना बहुत अधिक हुई है। पार्लमेन्ट ने कितना खर्च मंजूर किया है, इसके कुछ आंकड़े निम्न लिखित हैं—

१९५०-५१ के बजटमें भारतीय दूतावासों तथा अन्यान्य कूटनीतिक दफ्तरों पर खर्च करने के लिये ३ करोड़ १९ लाख ९६ हजार रुपये स्वीकृत किये गये थे, इन में ब्रिटेन स्थित भारतीय दूतावास के लिये ७७ लाख ११ हजार रुपये तथा अमेरिकी दूतावास के लिये २४ लाख ९० हजार रुपये स्वीकृत किये गये थे। रूस स्थित भारतीय दूतावास के लिये ७ लाख २७ हजार रुपये रखे गये हैं तथा कराची, लाहौर और ढाका स्थित हाई कमिश्नर के कार्यालय के लिये ११ लाख ९६ हजार रुपये निश्चित किये गये हैं। इसी प्रकार चीन-स्थित दूतावास के लिये ९ लाख फ्रांस के लिये ६ लाख २८ हजार, नेपाल के लिए १ लाख ९२ हजार अफगानिस्तान के लिये ४ लाख १७ हजार, फ्रांस के लिये ५ लाख ८४ हजार, मिश्र के लिये ४ लाख ५६ हजार, बर्मा के लिए ७ लाख २१ हजार, ब्राजील के लिये ४ लाख ४१ हजार, टर्की के के लिये ५ लाख ६२ हजार, राष्ट्रसंघीय प्रतिनिधि गर्यों के लिये ७ लाख ७२ हजार रुपये निर्धारित किये गये हैं।

●

रूस की साम्राज्य वादिता

"अन्तर्राष्ट्रीय नियम तीन मील के समुद्र को प्रादेशिक मानता है। परन्तु सोवियत रूस ने बारह मील का प्रादेशिक समुद्र घोषित कर दिया है। स्वीडन के मछली मार जहाजों का इस प्रकार बाल्टिक तट पर जाना रोक दिया गया है। स्वीडन परराष्ट्र मन्त्री श्री उन्डेन ने इसको अन्तर्राष्ट्रीय नियमों का भंग बताया है। अन्तर्राष्ट्रीय नियम को भंग कर उसको अपने अनुकूल बनाने का यह नया ढंग है" यह बताते हुए 'नवभारत' लिखता है —

सोवियत पत्र 'स्टेट एंड राइट्स' ने अब नई मांग रखी है कि बाल्टिक राष्ट्रोंका एक नया कन्वेंशन बनाने की आवश्यकता है। तुर्की की सहायता और सहमति प्राप्त न होने से डार्डेनल्स और दक्षिण भूमध्य सागर को वह रूसी झील बनाने में असमर्थ रहा। परन्तु बाल्टिक सागर को रूसी झील बनाने के मार्ग में कोई इस प्रकार की बाधा नहीं। रूस सब राष्ट्रों के लिये बाल्टिक सागर निषिद्ध ठहरा कर अपना यह उद्देश्य सिद्ध करना चाहता है। वस्तुत. रूस आज जिस नीति का अनुसरण कर रहा है, उससे उसकी उद्विग्नता स्पष्ट प्रगट होती है। बाल्टिक सागर में बाल्टिक राज्यों को छोड़ कर और किसी देश का कभी जहाज न घुसे, उसकी यह मांग भी इसी बात को सूचित करती है, कि वह अन्य राष्ट्रों की इस स्थिति से कुछ उद्विग्नता अनुभव करता है। यद्यपि बाल्टिक राज्यों का आज कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं और उनको अड्डा बना कर सोवियत पर किसी द्वारा आक्रमण होने का कोई भय नहीं।

लेटविया, लिथुआनिया और एस्टोनिया को दस साल पहले, यह कह कर कि उसकी आत्म रक्षा के लिये आवश्यक है, आत्मसात् कर लिया था। इनको आत्मसात् करने से पहले वहां रूसी पक्षपाती गवर्नमेंट स्थापित की गई, जो नाम को तो रूसी नहीं, परन्तु यथार्थ में रूसी थी। परन्तु इस पर भी रूस को विश्वास नहीं हुआ, और अपनी सुरक्षा खतरे में दिखाई दी। फलतः उसका स्वतन्त्र अस्तित्व समाप्त हो गया।

●

बिना टिकट रेलवे यात्री

सन १९४८-४९ में बिना टिकट यात्रा के विस्तार का अनुमान निम्नलिखित आंकड़ों से लगाया जा सकता है:—

रेलवे	यात्री
आसाम···	३ ९०,०५१
एस० आई···	४ ८४ ७५०
ई० आई··	११,०२ ६७०
एम० एस० एम० एम०	७ ४१ ४९०
जी० आई० पी··	७,५२ ३५०
बी० एन०···	६ ८६ २८५
ओ० टी० ··	२ २२ ८३७
ई० पी० ··	६ २५ ७५५
बी० बी० एण्ड० सी० आई	६,५६,६५०
योग—	५६ ६१, १०२

एक वर्ष में लग भग ६०,००,००० रेलवे मुसाफिर बिना टिकट पकड़े गये, और उनसे लगभग १,५०,००,००० रु० वसूल किए गए। इसके अतिरिक्त लगभग २१ लाख रु० उन लोगों से वसूल किए गए, जिन्होंने अपना सामान 'बुक' नहीं करवाया था। १२,००,००० के लगभग भिखमंगों को बिना टिकट पकड़े जाने पर रेलवे स्टेशनों से निकाल गया। यह आंकड़े बहुत भारी हैं और इससे समस्या का गम्भीरता का आभास होता है।

●

टिड्डी : मानव जाति का शत्रु

भारत के कृषि विभाग की एक विज्ञप्ति से पता चला है कि इस वक्त २०० से अधिक संख्या में टिड्डी दल राजस्थान, विन्ध्य प्रदेश और पूर्वी उत्तरप्रदेश तक घूम रहे हैं। दिल्ली और पाकिस्तान में भी टिड्डियों के आतंक के समाचार आ रहे हैं। इनके बारे में 'आज' में कुछ उपयोगी सूचनाएं दी गई हैं। उनके अनुसार सन् १९२६ और सन् १९३१ में दो बार टिड्डी दल के हमलों से फलस्वरूप फसल को भारी क्षति पहुंची थी। ऐसा अनुमान किया जाता है कि कुल क्षति १० करोड़ रुपये की हुई थी। टिड्डियां कई जातियों की होती हैं। मादा टिड्डियां जमीन में सूराख कर नली के आकार के एक खोल में अण्डे देती हैं। वे अण्डे

[शेष पृष्ठ २२ पर]

कोरिया में राजनैतिक संघर्ष

★

२९ जून को सायंकाल को भारत सरकार के मन्त्रिमण्डल ने एक बहुत महत्वपूर्ण निश्चय किया है, जो संभवतः उसकी निकट भविष्य की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को स्थिर कर देगा। इस संबंध में भारत सरकार ने जो विज्ञप्ति प्रकाशित की है, वह निम्नलिखित है।

"कोरिया की घटनाओं को भारत सरकार ने बड़ी चिन्ता से देखा क्योंकि उससे वहां युद्ध ही नहीं, विश्वशान्ति को भी खतरा हो गया है। वहां सीमान्त घटनाएं होती रही हैं। भारत सरकार को प्राप्त विभिन्न सूत्रों से यह प्रकट है कि उत्तरी कोरिया की सरकार ने दक्षिणी कोरिया पर बड़े पैमाने पर आक्रमण किया है। इस कारण सुरक्षा कौंसिल में भारतीय प्रतिनिधि श्री० एन० राव ने प्रथम प्रस्ताव का समर्थन किया था। उसमें आक्रमण की स्थिति को मान कर युद्ध-समाप्ति तथा उत्तरी कोरियन सेनाओं के ३८ अक्षांश रेखा पर लौट जाने का अनुरोध किया गया था।

"सुरक्षा कौंसिल का आदेश न मान कर आक्रमण जारी रखने पर फिर २७ जून को कौंसिल की बैठक हुई, जिसमें दूसरे प्रस्ताव द्वारा सदस्य देशों को आक्रमण के प्रतिकार में सहायता देने की अनुमति दी गई। भारत सरकार के आदेश न मिलने के कारण भारतीय प्रतिनिधि ने मतदान में भाग नहीं लिया।

"भारत सरकार ने उक्त प्रस्ताव पर सूक्ष्म विचार किया है। वह अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों को शक्ति अथवा आक्रमण द्वारा हल करने के विरुद्ध है इसलिये भारत ने कौंसिल के प्रथम प्रस्ताव के पक्ष में मत दिया था, ताकि आक्रमण बन्द होकर शीघ्र शान्ति हो जो कि संतोषजनक समाधान के लिये आवश्यक है।

"भारत-सरकार ने इसी दृष्टि से दूसरा प्रस्ताव भी स्वीकार किया है। किन्तु इससे उसकी विदेश नीति में कोई अन्तर नहीं आयेगा। उसकी विश्व-शान्ति और सब देशों से मैत्री की नीति जारी रहेगी तथा वह सब देशों से स्वतन्त्र रहेगी। भारत-सरकार को आशा है कि अब भी कोरिया की लड़ाई बन्द हो जायगी और मध्यस्थता से विवाद का निपटारा हो जायेगा।"

२५ जून को रविवार को प्रातःकाल ४ बजे उत्तरी कोरिया की सशस्त्र सेनाओं ने कोरिया के प्रजातन्त्र (दक्षिणी कोरिया) पर आक्रमण कर दिया था। इसके बाद सं० रा० अमेरिका ने सुरक्षा-समिति की बैठक बुलाई और उसमें वे दो प्रस्ताव पास किये गये, जिनका उल्लेख भारत-सरकार की विज्ञप्ति में किया गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ में उक्त प्रस्ताव पास होने के बाद भी उत्तरी कोरिया ने युद्ध बन्दी के आदेश को स्वीकार नहीं किया। तब प्रे० ट्रूमैन ने अमेरिकन जलसेना को दक्षिणी कोरिया की सहायता करने का आदेश दे दिया। इसके बाद ब्रिटेन ने अपने प्रशान्तसागर स्थित बेड़े के उपयोग का अधिकार अमेरिका को दे दिया। न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, हालैंड और बेलजियम भी दक्षिणी कोरिया को कोई भी सहायता देने को तैयार है। फ्रांस यद्यपि इस युद्ध में नहीं कूदा है, तथापि वह हिन्द चीन में अपनी सेनाओं को बलवान बना रहा है। जब तक यह अंक पाठकों तक पहुंचेगा बहुत संभवतः अन्य भी कुछ राष्ट्र दक्षिणी कोरिया को थोड़ी बहुत सहायता देने को तैयार हो जायेंगे। कोरिया का प्रश्न, जो इतना महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय रूप धारण कर गया है, आखिर क्या है उस युद्ध की पृष्ठ भूमि क्या है। इसे समझलेना चाहिये।

एकता में बाधा

अमेरिकन राजनीतिज्ञों की सम्मति में साम्यवादी उत्तरी कोरिया द्वारा दक्षिणी कोरिया पर किया गया हाल का आक्रमण स्वतन्त्रजनतन्त्रीय शासन के अन्तर्गत उत्तरी और दक्षिणी कोरिया के एकीकरण के राष्ट्र-संघीय प्रयत्नों को साम्यवादियों की कठपुतली उत्तरी कोरियाई द्वारा विफल करने की अनेकों कार्रवाइयों की शृंखला की सबसे नई कड़ी है।

कोरियासम्बन्धी राष्ट्र-संघीय आयोग ने गत सितम्बर में राष्ट्र-संघ की जनरल असेम्बली में बताया कि उत्तरी कोरियाई शासन रेडियो और प्रचार द्वारा पश्चिमी कोरिया पर मनोवैज्ञानिक आक्रमण कर रहा है। ३८ अक्षांश पर कोरिया को विभाजित करने वाली सीमा पर निरन्तर छुटपुट हमले हो रहे हैं। इसके बाद गत हमलों में वृद्धि हुई है, और इस मास के प्रारम्भ में उत्तरी कोरिया की ओर से दोनों कोरियाओं के एकीकरण की एक अपील भी निकाली गई थी। कुछ दिन बाद उत्तरी कोरिया के कुछ लोगों ने स्वयं ही इस अपील को ठुकरा दिया। उस क्षेत्र से आने वाले इन गुप्त दूतों ने इस प्रचार को कोरा धोखा और झूठ बताते हुए कहा था कि वह तत्व हीन है।

युद्ध में सैनिक दृष्टि से उचित जान कर और जापानियों के आत्मसमर्पण को सफल करने की दृष्टि से सितम्बर १९४५ में ३८ अक्षांश पर कोरिया का विभाजन कर दिया गया, जिसमें इस सीमा से उत्तर का भाग रूसी अधिकार में और दक्षिण का भाग अमरीका के अधिकार में रख दिया गया। उसी समय से रूसी अधिकारी उच्छृंखलता पूर्वक इस सीमा को स्थायी सीमा मानने लगे। अमेरिकी सेनानायक ने कोरिया के एकीकरण के लिए सेनाधिकारियों से अनेकों चर्चायें कीं, किन्तु वे सभी निष्फल हुईं। फिर सरकारी स्तर पर मोस्को में दिसम्बर १९४५ में विदेश मन्त्रियों के सम्मेलन में इस विषय पर चर्चा की गई। इस सम्मेलन में एक रूसी अमेरिकी आयोग की स्थापना की गई, जिसका कार्य था कि वह कोरिया के जन-तन्त्रीय दलों और सामाजिक संगठनों के साथ परामर्श करके कोरिया में एक स्थायी सरकार की स्थापना के लिए सिफारिशें करें और कोरिया की पूर्ण स्वाधीनता के विकास में कोरिया लोगों को सहायता [illegible] में सुझाव रखें।

रूस की शर्तें

इस संयुक्त आयोग ने अपना कार्य मार्च १९४६ से प्रारम्भ किया। इस में रूसी प्रतिनिधि मंडल ने यह मांग रखी कि कोरिया के उन दलों से परामर्श करे, जिनमें कि वास्तव में कोरिया लोगों की एक बहुत बड़ी संख्या को निकाल कर अल्पसंख्यक साम्यवादियों की प्रमुखता थी। अमेरिकी प्रतिनिधियों ने कोरिया की जनता से परामर्श की मांग की। चूंकि रूसी मांग के अनुसार एकीकरण करने का अर्थ स्वतन्त्र भाषण के सिद्धांत का हनन करना था इस प्रकार मई १९४६ में इस आयोग की कार्रवाई बिना कुछ निर्णय किए ही अनिश्चित काल के स्थगित हो गई।

इसके बाद अमेरिका ने इस प्रश्न को हल करनेके अनेकों प्रयत्न किये, किन्तु वे सभी निष्फल हो गए। अन्त में यह देख कर कि कोरिया के स्वतन्त्र और स्वच्छन्द राज्य के विकास में रूस द्वारा अड़चनें डाली जा रही है. अमेरिका ने सितम्बर १९४७ में इस मामले को राष्ट्र-संघ की बृहत्परिषद् के दूसरे अधिवेशन में उपस्थित कर दिया।

राष्ट्र संघ का कमीशन

राष्ट्र-संघ ने इस समस्या पर विचार करके, रूसी विरोध के बावजूद एक स्थायी आयोग की नियुक्ति की, जिसका कार्य कोरियाई राष्ट्रीय परिषद् का निर्वाचन कराना और संयुक्त कोरिया में एक सरकार की स्थापना करना था। रूस ने इस राष्ट्र-संघीय आयोग के कार्यों में भी बाधाएं डालीं और यहां तक कि उसके सदस्यों को उत्तरी कोरिया में घुसने भी नहीं दिया गया। इस पर राष्ट्र संघ की छोटी परिषद ने फरवरी १९४८ में दक्षिणी कोरिया में ही उक्त कार्रवाई करने के लिए उक्त आयोग को आदेश दे दिया।

इस आयोग के तत्त्वावधान में मई १९४८ में अमेरिकी अधिकारियों के पूर्ण सहयोग से निर्वाचन किए गए. राष्ट्रीय परिषद् की बैठक बुलाई गई, संविधान बनाया गया, उस पर हस्ताक्षर करके उसे लागू कर दिया गया और अगस्त १९४८ में सिंग मैनरी के राष्ट्रपतित्व में अधिकृत रूप से कोरियाई जनतन्त्र शासन का उद्घाटन कर दिया गया लगभग इसी समय उत्तरी कोरिया में भी रूस ने साम्यवादी शासन की स्थापना कर दी और यह घोषणा की कि वह दिसम्बर १९४८ तक अपनी समस्त सेनाएं हटा लेगा। उसने राष्ट्र संघ के कोरियासम्बन्धी कार्य को सुगम करने के लिए अमेरिका से भी दक्षिणी कोरिया से सेनाओं को हटाने की मांग रखी।

राष्ट्र संघीय परिषद ने अत्यधिक [illegible] मत से कोरिया जनतन्त्र को ही [illegible] जो सरकार मानते हुए [illegible] लेखक ने आयोग को कोरिया [illegible] को ही स्थान और सेनाओं को वहां से [illegible] वापस करने के लिए नियुक्त [illegible] प्रान्तों में ने पहले आयोग की [illegible] नतों में प्रेम अपने अधिकृत [illegible]ियाई

[शेष पृष्ठ २२ पर]

महिलाएं चरखा कात रही हैं।

पंजाब सरकार की नयी संस्था

निराश्रित महिलाओं का आश्रय

शिवालक के दामन में, होशियारपुर से दो मील दूर, रामकालोनी में पहाड़ियों और वृक्षों से घिरा हुआ एक महिला आश्रम है। इस आश्रम में जहां १६ मिलिट्री की बैरकें और छोटे छोटे कई भवन हैं, वहां लगभग १४०० निराश्रित महिलायें और यतीम बालक आश्रय व सहायता प्राप्त कर रहे हैं। ये महिलायें और बच्चे, जिनके जीवन को सुखद बनाने वाले सब साधन छूट चुके थे, जिनके सभी साथी छूट गये थे, सम्बन्धियों का कुछ पता न चलता था और जिनकी अभिलाषाएं और भावनाएं सर्वदा के लिये प्रसुप्त हो चली थीं अगस्त १६४७ की दारुण घटनाओं के उपरान्त अन्य विस्थापित लोगों के साथ भारत लाये गये। पहिले उन्हें कुछ समय के विस्थापित व्यक्तियों के शिविरों में रखा गया और फिर सेवा सदनों में। उसके उपरान्त सरकार, ने यह अनुभव करते हुये कि इनकी देख रेख की जिम्मेदारी राज्य पर है, स्थाई आधार पर चार महिला आश्रम खोलने का निश्चय किया। होशियारपुर (रामकालोनी) का महिला आश्रम भी इन्हीं में से एक है।

जीवन सफल बनाने का दृढ संकल्प

इस आश्रम में आपको यहां के निवासियों में दुख दर्दों को भूल कर जीवन को सफल बनाने की उत्कटभावना एवं दृढ संकल्प देखने को मिलेगी। मैं उस भावना और उत्साह को देख कर चकित रह गया, जिससे समस्त महिलाएं, नव यौवनाएं और वृद्धायें कुछ सीखने और अपने पांव पर खड़ा होने के लिए कार्य रत हैं। आश्रमों में व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र भी खोले हुए हैं जहां प्राइमरी पास महिलाओं को दाखिल किया जाता है। प्रत्येक प्रशिक्षार्थी को परिक्षावधि में जो, ६ मास है, २५ रुपये मासिक सहायता दी जाती है। यह सहायता केवल उन प्रशिक्षार्थियों को ही दी जाती है जिन्हें मुफ्त राशन नहीं मिलता। सामान्यतः एक समय में १२५ महिलाओं को ही प्रशिक्षित किया जाता है। इन में से ८० प्रतिशत प्रशिक्षार्थी आश्रम और बाकी २० प्रतिशत नगर में रहने वाली विस्थापित महिलाओं में से चुने जाते हैं।

चरखा दैवी वरदान

चरखा यहां की महिलाओं के लिये दैवी वरदान सिद्ध हुआ है। इससे वे न केवल धनोपार्जन ही करती हैं वरन जैसा कैम्प कमाडर ने मुझे बताया इस ने उन के दुखड़ों और कष्टों के भुलाने में काफी सहायता प्रदान की है। सरकार की ओर से सामान्य महिलाओं को क्रय व क्रय पद्धति के आधार पर चरखे दये गये हैं। प्रत्येक महिला को चार आना मासिक किश्त देनी होती है और अन्त में चरखा उसका हो जाता है। महिलाओं को उन के उत्पादन के अनुसार मजदूरी दी जाती है।

मिठाई देकर धूम्रपान

अब ब्रिटेन की महिलाएं ही अधिक धूम्रपान करती हैं और उनके पति मिठाई खाते हैं।

'[illegible]' के एक सम्मेलन में भाषण करते हुए स्कारबोरो के मेयरने इस सिलसिले में 'सामाजिक क्रांति' की चर्चा की और बताया कि सिगरेट पीने की आदत अब बदलती जा रही है। पति अब सिगरेट पीना छोड़ रहे हैं और यह काम अब पत्नियां करने लगी हैं। ऐसे बहुत से पुरुष हैं, जो बचपन के बाद अब जवानी और अधेड़पन में मिठाई की ओर आकृष्ट हुए हैं।

स्काटहोम के दन्त विद्यालय के प्रो॰ मस्टाक ईडरु ने एक रिपोर्ट में कहा है कि धूम्रपान करने से जबड़े की हड्डी धीरे धीरे कमजोर हो जाती है और धूम्रपान की मात्रा बढ़ने से दांत गिर जाते हैं।

अशिक्षित महिलाओं के लिये वृत्ति

आश्रम की अशिक्षित महिलाओं के लिये वृत्ति संगठन कर्ता नियुक्त किए गए। हैं, जो उन्हें कसीदा कढ़ाई, टोकरियां बनाना, निवार व दरी बनाना, साबुन बनाना, खादी का काम, खिलौने बनाना आदि विभिन्न पेशाओं में प्रशिक्षित करते हैं। दो सौ प्रशिक्षार्थियों के लिये एक वृत्ति संगठन कर्ता की व्यवस्था की गई है। कार्य केन्द्रों का यह प्रयोग बड़ा सफल सिद्ध हुआ है और एक औसत महिला की आय अपने काम के अनुसार १० रु॰ से २५ रु॰ के मध्य है। निष्क्रान्त सम्पत्ति से प्राप्त सिलाई की कई मशीनें भी इन केन्द्रों में प्रयोग के लिये दी गई हैं।

प्रसूति ज्ञान

इन पेशाओं के अतिरिक्त कुछ शिक्षित महिलाओं को लुधियाना के प्रसूति चिकित्सालय में नर्सों के रूप में प्रशिक्षित किया जा रहा है तथा उन अशिक्षित महिलाओं को, जो आत्म निर्भर होने के

[शेष पृष्ठ २० पर]

महिलाएं शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

नारी-जीवन

● लन्दन की एक १५ वर्षीय लड़की जब २८ दिन जेल में रह कर घर आई तो उसने जेल जीवन का आकर्षक वर्णन अपनी १२ वर्षीय बहिन से किया। इस प्रकार दोनों ने अपराध करके फिर जेल जाने का निश्चय किया।

यह घटना उस समय प्रकाश में आई जब दोनों बहिनें विक्टर स्ट्रीट पुलिस की बाल अपराध अदालत में उपस्थित की गयीं। इनको नजरबन्द करके इनकी चिकित्सा करने की आज्ञा अदालत ने दे दी है।

● इस वर्ष प्रयाग विश्वविद्यालय के एम॰ ए॰ के लगभग सभी विषयों की परीक्षाओं में छात्राओं ने छात्रों को पराजित कर प्रथम स्थान प्राप्त किया है। अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फिलॉसफी और एम॰ ए॰ परीक्षा में प्रथम स्थान छात्राओं को ही मिला है। हिन्दी में योग्यताक्रम से प्रथम १० परीक्षार्थियों में ६ छात्रायें हैं।

● अमेरिका में 'लीग ऑफ वीमेन वोटर्स' की ९३,०६० सदस्य महिलाएं विश्वशांति के लिए निर्दिष्ट एवं राष्ट्र संघ द्वारा पूर्णतः समर्थित अमेरिकी नीतियों के लिए राष्ट्रीय एवं विश्व की अर्थ व्यवस्था के विस्तार के लिए कार्य करेंगी। लीग ने १६५०-५२ के लिए इन राष्ट्रीय कार्यक्रमों का निश्चय हाल ही में अपने १६वें द्विवर्षीय सम्मेलन में किया है।

उक्त लीग एक निर्दलीय संस्था है। अमेरिका व्यापी ७६६ स्थानीय लीगों के सदस्य राष्ट्रीय संगठन के उद्देश्यों को प्रसारित एवं जनता तक पहुंचाने के कार्य में सहयोग प्रदान करेंगे और तथ्यों का प्रचार करके लीग के उद्देश्यों की सिद्धि के लिए कानून बनवाने में जनमत को पुष्ट करेंगे। राष्ट्र संघ की एजेन्सियों द्वारा विश्व व्यापार के विकास और अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक विकास पर अधिक जोर दिया जायगा।

उक्त लीग की स्थापना स्वर्गीय कैरी चैपमैन कैट ने १९२० में की थी। आप ने १६४० में १२ राष्ट्रों की एक 'अन्तर्राष्ट्रीय अलायेन्स ऑफ् वीमेन' की स्थापना में भी सहायता प्रदान की थी। अमेरिकी लीग भी इसकी सदस्य है। अमेरिकी लीग जानकार एवं सक्रिय रूप से भाग लेने वाले सरकारी कार्यों में शिक्षित नागरिकों के द्वारा राजनीतिक दायित्व को प्रोत्साहन देने के लिये समर्पित की गई है।

बिहार का प्रतिभाशाली कलाकार

दिनकर

★ प्रो० कपिल एम० ए०

> शताब्दियों पुराना इतिहास अपनी वेदना, वैभव और गौरव लेकर जिस कवि के गीतों में मुखर हो उठा है, दीनों, शोषितों और प्रताड़ितों की कसक, वेदना और विद्रोह को जिस कवि ने वाणी प्रदान की है और जिसे साहित्यकार संसद ने प्रथम पुरस्कार देकर सम्मानित किया है, उसी "पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल" से दिनकर के साहित्य का संक्षिप्त परिचय इस लेख में पाठक पढ़ेंगे।

'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा
हिमालयो नाम नगाधिराजः'

यह पंक्ति महाकवि कालिदास की है, जो यह बतलाती है कि भारत का कवि जब भी हिमालय की ओर उन्मुख होता है, तब उसके मुख से फूटने वाली कविता सरल होते हुए भी गम्भीर और गहन होते हुए भी हृदयवेधिनी होती है। भारत नाम में जो भी दिव्यता और विशालता छिपी हुई है, हिमालय उसका मूर्तिमान स्वरूप है और इसका आलम्बन लेकर लिखने वाला कवि सदैव दिव्यता का सौरभ बिखेरता है। सच पूछिये तो आधुनिक भारत के दो महाकवियों को तो जनता के सामने सबसे पहले हिमालय ने ही प्रसिद्ध किया। उर्दू और फारसी के दार्शनिक कवि डाक्टर इकबाल ने जब देशभक्ति की उषा मुद्रा में पहले पहल आंख खोली, तब उनके मुख से ये पंक्तियां निःसृत हुई थीं—

ऐ हिमालय, ऐ फसीले, किश्वरे हिंदोस्तां
चूमता है तेरी पेशानी को झुक के आसमां।

और दूसरे कवि हैं बिहार के श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' जिन्हें जनता ने उसी दिन कवि के रूप में स्वीकार कर लिया, जिस दिन उन्होंने सम्पूर्ण देश की ओर से 'हिमालय' को जगाते हुए अपनी ओजस्विनी तान छेड़ी—

साकार, दिव्य गौरव विराट।
पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल।
मेरी जननी के हिम किरीट।
मेरे भारत के दिव्य भाल।
मेरे नगपति! मेरे विशाल!

रेणुका

दिनकर की पहली पुस्तक 'रेणुका' उनके हिमालय युग की रचना है। रेणुका में हम उस किशोर कवि का व्यक्तित्व पाते हैं, जो प्रकृति की गोद में बैठा भूत और भविष्य की ओर देख रहा है।

गत विभूति, भावी की आशा
ले युगधर्म पुकार उठे,
सिंहों की घन अन्ध गुहा में,
जागृति की हुंकार उठे।

और प्रकृति की सुन्दरता को देखता हुआ वह कहता है—

धान की पी ओस चोंच हरतिया,
आज है उन्मादिनी कविता परी,
दौड़ती तितली बनी वह फूल पर,
लोटती भू पर जहां दुबा हरी।

दिनकरजी नारी और प्रकृति के रूप पर रीझते हुए आये थे तथा आरम्भ से ही उनमें दार्शनिकता का भी गहरा पुट विद्यमान रहा है। इन तीनों का मनोहारी समन्वय हम रेणुका की कविताओं में पाते हैं। वह आग की पहली लपट थी, जो स्वभावत ही गर्म और खूबसूरत होती है।

"मैं शिशिर शीर्णा चली अब जाग ओ मधुमासवाली" यह उनकी नारी सम्बन्धी अनुभूति की अभिव्यक्ति थी। यही नहीं, प्रत्युत निर्झरिणी के रूप में उन्होंने नारी के उद्दाम प्रेम का जो चित्र खींचा है, वह भी हमारे साहित्य के लिए एक दुर्लभ वस्तु है।

वनदेवि! तू मांचल श्याम हिला
फिरने का करो न इशारा मुझे,
उपलो! पदों न जहा, भुज खोल
न बांध तू हाय किनारा मुझे,
किसकी ध्वनि दूर से आई? पुकार
रहा, सुन अम्बुधि प्यारा मुझे!
जननी चरणों, तिरछी हो जरा,
अरी वेग से खींच तू धारा मुझे।

हुंकार

नारी रूप, प्रकृति और दर्शन पर दिनकरजी की जो आसक्ति थी वह रेणुका के बाद क्रांति की प्रज्वलित धारा धारा के भीतर खो सी गई, मानों कवि ने देश के दैन्य, दुर्भाग्य और भीषण संघर्ष के सामने उन्हें तुच्छ और नगण्य मान कर कहीं फेंक दिया हो। रेणुका के बाद उन्होंने देशभक्ति तथा क्रान्ति की भावना से प्रेरित होकर जो अनेक ओजस्विनी कविताएं लिखीं, वे 'हुंकार' के नाम से निकलीं। हुंकार का प्रकाशन आधुनिक हिन्दी साहित्य की एक उल्लेखनीय घटना थी, क्योंकि इस पुस्तक ने पहले पहल यह सिद्ध कर दिखाया कि छायावाद का कुहासा फट रहा है और हिंदी कविता प्रकाश और सबलता की ओर अग्रसर होना चाहती है। हिन्दी काव्य रसिकों ने हुंकार का जिस उत्साह के साथ स्वागत किया, उससे भी पता चला कि जनता निष्प्राण गीतों की अपेक्षा सबल, सुस्पष्ट एवं प्रसादपूर्ण उद्गारों को ही अधिक आदर देना चाहती है और देशभक्ति की कठोर साधना में निरत रहने वाले देश के असंख्य युवकों ने तो हुंकार को अपना कण्ठहार ही बना लिया। देश के राजनीतिक संघर्ष में किसी समय जैसे 'भारत भारती' ने अप्रतिम योगदान दिया था, उसी प्रकार, आजादी की लड़ाई के अन्तिम दशक में 'हुंकार' ने हमारी जाति को बहुत बड़ी प्रेरणा दी। हुंकार की प्रतियां जेल जाने वाले युवकों की नित्य संगिनी थीं हुंकार की कविताएं मस्ताने नवजवानों के कंठ की ज्वालामयी कड़ियां बन गईं और यद्यपि इन कविताओं का रचयिता सरकारी नौकरी में स्वयं कायरतापूर्ण जीवन व्यतीत करता रहा, किन्तु उसके गीतों ने हिन्दीभाषी भारत के पूर्वी अंचल में बसने वाले नवयुवकों को पागल बना दिया। अफसोस कि यह युग राजनीति ग्रसित युग है और साहित्य का सत्य स्वीकार करने में हमारे देश के लोग अभी हिचकिचाते हैं। किन्तु इतिहास उस सत्य को अंकित करने से नहीं चूकेगा जो सत्य युग युगान्तर की तमिस्रा को बेध कर भी अपनी सत्ता को कायम रखने की योग्यता रखता है। दिनकर का उद्बोधन देखिये—

हटो व्योम के मेघ पन्थ से
स्वर्ग लूटने हम आते हैं,
दूध! दूध! ओ वत्स! तुम्हारा
दूध खोजने हम जाते हैं।

रसवन्ती

मनोविज्ञान का एक सिद्धांत है कि यौन भावना का जब जोर से दमन किया जाता, है तब वह और भी वेग से प्रस्फुटित होती है। सभी युगों के साहित्य पर नारी रूप का बहुत बड़ा प्रभाव रहता आया है। किन्तु दिनकर ने अपनी चढ़ती जवानी में नारी-सम्बन्धी अपनी आसक्ति को क्रान्तिकारी भावों के शिलाखंड के नीचे दबाने की इतनी कोशिश की कि सुयोग मिलते ही वह अत्यन्त वेग से फूट निकली और उनकी कविताओं में सहसा वासना की ऐसी बाढ़ आ गई, जिसे देख कर उन्हें क्रान्तिकारी मानने वाले लोग एकदम निराश हो गये, किन्तु यौन भावना एक स्वाभाविक आवश्यकता है तथा क्रांतिकारी नौजवान इसके अपवाद नहीं हो सकते। कवि ने रसवन्ती की भूमिका में स्वयं लिखा है कि दिनभर सूर्य के ताप में जलने वाले पर्वत के हृदय में भी चांदनी के समय कोमल स्वरों में गाने की इच्छा जग उठती है।

बड़े यत्न से जिन्हें छिपाया,
ये वे मुकुल हमारे,
जो बच रहे किसी विधि अब
तक ध्वंसक इष्ट प्रलय से।

ये पंक्तियां ही बतलाती हैं कि रसवंती कवि के हृदय की अत्यन्त कोमल अनुभूतियों का प्रतिनिधित्व करती हैं, उन अनुभूतियों की जिन्हें कवि ने यत्नपूर्वक क्रांति की ज्वाला में भस्म होने से बचा लिया था।

रसवंती में नवीन हिन्दी कविता के कुछ अत्यन्त कोमल उदाहरण संगृहीत हैं। "प्रीति न अरुण सांझ के घन सखि!" "गीत अगीत कौन सुन्दर है" बालिका से वधू और "नारी" तथा "पुरुषप्रिया" वे सो कविताओं के बीच आदर के साथ रखी जा सकती हैं।

प्रसंगवश यह लिख देना अनुचित नहीं होगा कि जिन दिनों "रसवन्ती" प्रकाशित हुई थी, उन दिनों हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ सौ पुस्तकों की सूची तैयार करने का आन्दोलन चल रहा था। उस आन्दोलन के क्रम में दिल्ली के 'जीवन साहित्य' ने जो सूची प्रकाशित की, उसमें दिनकर जी की रेणुका रखी गयी थी, किन्तु उसका संशोधन करते हुए माधुरी में जो दूसरी सूची निकली, उसमें लेखक ने रेणुका को हटा कर रसवंती को ही स्थान दिया था।

रसवन्ती की कविताएं प्राणों में उन्माद भरने वाली तथा नसों में प्रेम

[शेष पृष्ठ १६ पर]

ये आत्महत्याएं कब तक होती रहेंगी ?

★ श्री उमाशंकर शुक्ल

> ये आत्महत्याएं एक सामुदायिक रक्त है और निघृंण समाज पर अविश्वास के प्रस्ताव हैं।.....आत्महत्याओं के लिए कौन जिम्मेवार है ? इस खून का अपराध किस पर है ?— समाज पर न ?

आये दिनों समाचार पत्रों में आत्महत्या के समाचार खूब पढ़ने को मिल रहे हैं। ऐसा कोई अखबार नहीं कि जिसमें आत्महत्या का समाचार न छपा हो। कोई विद्यार्थी कुवें में कूद कर आत्महत्या कर लेता है, तो कोई कुतुबमीनार से गिर कर। कोई गंगा में डूब जाता है, तो कोई रेल की पटरी के नीचे सो जाता है। गत एक माह में ही ऐसी कई घटनायें घटी हैं। एक विज्ञान-शिक्षक ने कुवें में कूद कर जान दे दी। एक प्रोफेसर ने कुवें में कूद कर जान दे दी, एक विद्यार्थी ने कुवें में कूद कर जान दे दी। इस तरह अन्य स्थानों में भी आत्महत्यायें होती रहती हैं। यों आत्महत्या करना जघन्य अपराध है, और आत्महत्या करने के प्रयत्न में जो पकड़े जाते हैं, सरकार उन्हें सजा दिलवाती है।

प्रश्न पूछा जा सकता है कि आत्महत्यायें लोग क्यों करते हैं ! अब तक की आत्महत्याओं के कारणों की छान-बीन करने से पता चला है कि अधिकतर आत्महत्यायें आर्थिक संकट के कारण होती हैं। इसके अलावा जो लोग अपने जीवन से ऊब जाते हैं, वे आत्महत्या करते हैं। परीक्षाओं में विद्यार्थी फेल हो जाते हैं, इसलिए वे ग्लानि के मारे आत्महत्या करते हैं। परन्तु अधिकांश हत्यायें आर्थिक तंगी के कारण ही होती हैं।

आजकल मंहगाई के कारण लोगों को आर्थिक संकट का सामना करना पड़ता है। आमदनी कम और खर्च अधिक होने के कारण वे परेशान हो जाते हैं। वे अपने बच्चों को भूखों रहते नहीं देख सकते। हमारे समाज की व्यवस्था ठीक नहीं है। किसी के पास लाखों रुपये हैं, तो किसी के पास पेट भरने तक को पैसे नहीं हैं। लोग काम करना चाहते हैं, किन्तु बेकारी के कारण उन्हें काम नहीं मिलता। मजदूरी करना चाहते हैं, किन्तु उन्हें मजदूरी नहीं मिलती। फिर वे बिचारे क्या करें। उनकी कोई सहायता नहीं करता। उनके प्रति कोई सहानुभूति नहीं, उनकी कोई सुनवाई नहीं। अपने को सभ्य समझने वाले लोगों के सामने हाथ पसार नहीं सकते। वे घुल घुल कर मर जाना ठीक समझेंगे, किन्तु अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा अवश्य करेंगे।

आज न जाने कितने लोगों के हृदयों में अशांति की ज्वाला सुलग रही है। झोंपड़ी व महलों का भेद कब मिटेगा ? धनियों के कुत्तों को घी की चुपड़ी रोटी, और गरीबों के बच्चों को ज्वार की सूखी रोटी कब तक मिलेगी ?

दूसरों को स्वावलंबन का पाठ पढ़ाने वाले स्वयं नौकरों से काम करवाते हैं और उनका शोषण करते हैं। गरीब भारत की छाती पर ये मोटी मोटी तनख्वाह पाने वालों का ताण्डव नृत्य कब बन्द होगा ? आज गरीबों को चूसा जाता जाता है। मानवता की बातें करने वाले स्वयं मानवता का खून करते हैं। ऐसा कब तक होता रहेगा ?

'निःस्पृह' के सम्पादक श्री कानेटकर इन आत्महत्याओं को सामुदायिक खून कहा है। ये आत्महत्यायें निघृंण समाज पर अविश्वास के प्रस्ताव हैं। यदि कोई मनुष्य अर्थ संकट में है और उसके हजारों जानपहचान वाले उसकी मदद न करें, और वह आत्महत्या कर ले, तो इसके लिये कौन जिम्मेवार है ? इस खून का अपराध किस पर है — समाज पर न ? कानून से भले ही चाहे अपराध न साबित होता हो, किन्तु मानवता की निगाह में वह सामुदायिक खून है।

अभी हाल ही में अकोट के प्रायमरी स्कूल के प्रधानाध्यापक ने आत्महत्या कर ली है। उसने आत्महत्या से पूर्व जो पत्र लिखा है, उसमें उसने बताया है कि उसके बच्चे बीमार थे, किन्तु वह दवादारू के लिये पैसे न जुटा सका, और उसके बच्चे काल की गाल में समा गये उसने स्कूल के अधिकारियों से बदली करने की मांग की, ताकि वह अपने भाई के पास जाकर रह सके, और उसे कुछ सहारा भी मिल सके। किन्तु उसकी दरख्वास्त नामंजूर हो गई और उसने ग्लानि के कारण आत्महत्या कर ली। अगर कोई सहृदय सज्जन उसे २५ रु० रुपये दे देता तो उसके बच्चे न मरते, और न उक्त प्रधानाध्यापक को आत्महत्या करने की नौबत आती। मरने के बाद तो अब सभी सहानुभूति बतावेंगे। जीवित अवस्था में उससे कोई कुशल क्षेम तक भी न पूछता था। अब उसकी विधवा पत्नी का क्या होगा ?

वर्धा के न्यू इंगलिश हाईस्कूल के विज्ञान के शिक्षक श्री सलोनी साधु-स्वभाव के पुरुष थे। उम्र यही करीब ५० के आसपास होगी। शाम को वे लोगों से मिले-जुले और रात को कुए में कूद पड़े। बाद में पता चला कि उन पर काफी कर्जा हो गया था।

महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध समाज सेवक व साहित्यिक श्री साने गुरु जी ने भी अपनी आत्महत्या की। आज देश में जो कुछ हो रहा है, उसका उनके कोमल हृदय पर खूब असर हुआ और उन्हें बड़ी ग्लानि हुई। क्या हम सब गुरु जी को श्रद्धांजलि अर्पित कर ही कर्त्तव्य मुक्त हो गये ? आज देश में जो अव्यवस्थित समाज रचना है, उसे बदलने के लिये हम कुछ नहीं करेंगे ? अगर देश का हर नागरिक यह सोचे कि हमें क्या करना है, सब आप ही आप हो जायगा, तो फिर कुछ न होगा। हर व्यक्ति पर जिम्मेवारी है कोई भी अपनी जिम्मेवारी से मुक्त नहीं हो सकता।

हम बड़ी बड़ी योजनायें बनाते हैं, लाखों के वारे न्यारे उन योजनाओं में होते हैं, किन्तु शिक्षकों को जिन्हें कि देश का भाग्य विधाता कहा जाता है, भूखों रखते हैं हमारे देश में प्राइमरी शिक्षकों की दशा कितनी खराब है। वह उफ नहीं कर सकता, वह दिन भर ज्ञानदान करता है किन्तु उसके पेट की ज्वाला को बुझाने के लिए साधन नहीं। वह पेट भरने के लिये रात को ट्यूशन करता है, फिर भी उसका पेट नहीं भरता। जो भूखे हों, उनसे हम कैसी आशा करें कि वे देश के भावी नागरिकों को उत्तम शिक्षा दे सकेंगे उन्हें हमें इतना कुछ देना चाहिये कि वे आराम से जीवन व्यतीत कर सकें। आश्चर्य की बात है कि कुछ लोग मखमली गद्दों पर बैठ कर मसनद के सहारे, बिजली के पंखों के नीचे अखबारों के लिये वक्तव्य निकालते हैं कि देशवासी खूब काम करें और राष्ट्र को आगे बढ़ावें। पर कोई उनसे पूछे कि क्या वे स्वयं कुछ देश के लिये करते हैं। चंदों की रकमों से अपनी गुजर करते हैं, नेतागिरी बनाये रहने के लिए वे उपदेश द्वारा लोगों को समझाते हैं और जनता के बीच में जाने को वे अपनी तौहीन समझते हैं। हां, वोट प्राप्त करने के लिये अवश्य भीख मांगते हैं। जिन्हें अपने परिश्रम से कमा-कर अपना व अपने बच्चों का पेट भरना होता है, जिन्हें घर का किराया देना होता है और जिन्हें घर का सारा काम करना होता है वे जानते हैं कि कुटुम्ब का पालन करने में कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। पर जो लोग मुफ्त या चंदे की कमाई से अपना

[शेष पृष्ठ ३० पर]

कहानी

निराश जीवन

★ श्री केशवदेव मिश्र 'कमल'

यौवन के कुछ क्षण कितने मधुर होते हैं! जब हृदय किसी अज्ञात स्पृहणीय की खोज बड़े ही आतुरता के साथ करता है। ठीक ऐसे ही समय पड़ोसिन मौलसिरी से मेरा परिचय हुआ। उषा-किरण सी पड़ोसिन ने पहली बार मेरे जीवन में झांका, फिर परिचय और अधिक बढ़ा। पड़ोसिन का परिचय भी क्या था? —नवजीवन परिचय था। मैं मान नहीं पाता था कि उनका स्वागत मैंने जीवन-वसंत के रूप में न किया हो!

परिचय उनका एकांगी न था। उनके भावुक हृदय की सरस उपजाऊ भूमि पर मैं भी किसी कोने में जा छिपा था। इस बात को छिपाने का असफल प्रयत्न वे करती ही रहती थीं। किन्तु उनका यह गलत दावा मान्य भी होता तो कैसे! सूर्य दर्शन के साथ कमल का अनायास ही खिल जाना स्वाभाविक नहीं है क्या?

वे परदा नहीं करती थीं, रूप-अनिंद्य सुन्दर था। मर्यादा की शुचिता व्यवहार में परिलक्षित होती थी। शरीर पर आभूषण नहीं लेती थीं। लकीर-सी बारीक चूड़ियां ही कलाई में देखी जा सकती थीं। सदा कच्चे दूध की नाईं, बिना किनारी की धोती वे पहनती थीं। उनके व्यक्तित्व की शालीनता और अभिजात्य से आस-पास का वातावरण भर कर उठता हुआ दिखाई देता था।

पड़ोसिन विवाहिता थीं अवश्य, पर नहीं कह सकता कि उन्हें अपने विवाह के कुछ क्षण भी याद होंगे? अब से लगभग बारह वर्ष पूर्व आठ साल की उम्र में उन्होंने अपना विवाह हुआ बताया और द्विरागमन से पूर्व वे अनाथ भी हो गईं। तभी से कटी पतंग की तरह वे इस दुनिया के थपेड़े खाती आ रही हैं। इस समाज ने जो-जो अत्याचार पड़ोसिन पर किये उनकी एक लम्बी कहानी है। पड़ोसिन के प्रति मेरे विशेष आकर्षण का हेतु मेरी स्वाभाविक सहानुभूति भी थी, जो किसी भी सहृदय को उनके जीवन के 'नोहे' गान सुन कर हो सकती थी।

अब पड़ोसिन घर में अकेली थीं। अध्यापन-कार्य उनकी जीविका थी। शाम को जब वे स्कूल से लौटतीं तो प्रायः मेरे घर चली आतीं और घड़ी-दो-घड़ी मेरी मां के पास बितातीं। इस नियमित क्रम के बहाने मैं उन्हें देखने का आदी था, और उनके आने की प्रतीक्षा बड़ी उत्सुकता से किया करता था। न आने क्यों! घर में उनके प्रवेश को मैं 'सौभाग्य' मानने लगा था। मां से बात करके जब वे लौटतीं तो मेरे कमरे के द्वार पर आते आते किंचित ठिठकतीं और पूछ लेतीं — 'कहिये! क्या पढ़ रहा है? रवि बाबू!'

'आज तो कुछ नहीं, आइये।'

कह कर मैं उन्हें भीतर बुला लेता!

'काफी समय हो गया, अब जाती हूं—कहती हुई वे अन्दर आ जातीं और फिर कुछ न कुछ ऐसा प्रसंग छिड़ जाता कि पड़ोसिन घर जाना भूल जातीं और मैं लिखना-पढ़ना। इस चर्चा के बहाने पड़ोसिन महसूस करने लगी थीं कि वह सिर्फ पड़ोसिन नहीं हैं, वह स्त्री हैं, और वे यह भी महसूस करने लगी थीं कि रवि के साथ-साथ मैं आदमी भी हूं।

नित्य की भांति आज वे आईं, तो द्वार पर 'बिना रुके ही वापिस चली गईं। इस पर मुझे शंका हुई। कुछ तय न कर सका कि क्या है? विचार आया — आज उन्हें कोई खास काम हो गया होगा और जल्दी में न रुक सकी होंगी। पर ऐसे क्या एक क्षण भी मुझसे बोलने का वक्त उनके पास न था!

फिर सोचा — मुझसे कोई गलती तो नहीं हो गई? किन्तु इस पर भी मन जमता नहीं था। इधर-उधर किसी बात पर शक नहीं रुकता था। वे सरल-हृदय हैं। ऐसे किसी गलती पर वे नाराज नहीं हो सकती हैं।

फिर सोचा—कहीं मां ने तो कोई ऐसी वैसी बात नहीं कह दी, जो उन्हें बुरी लग गई हो!

इस प्रकार शंका की खोज में काफी समय हो गया, पर समाधान मुझे नहीं मिला। आखिर थक कर, मैं पड़ोसिन के घर की ओर चल पड़ा।

वहां जाकर देखा, कि दरवाजा बन्द है, और चहल-पहल कहीं नहीं है। निराश हो मैं फिर घर की ओर लौट पड़ा। पर पैर उठते नहीं थे, जैसे मन-मन भर के भारी हो रहे हों!

रात काफी आ चुकी थी। लगभग बारह का वक्त रहा होगा। मैं चारपाई पर पड़ा करवटें ले रहा था और नींद आती नहीं थी। इतने में धीरे से मेरे कमरे का दरवाजा खुला और पड़ोसिन अप्रत्याशित अन्दर आ गईं।

मैं चौंक कर उठ बैठा। इस मध्य-रात्रि में पड़ोसिन का अकेली आना घटना ही थी। उन्होंने अब एक विरल दृष्टि मुझ पर डाली। आंखों में कुछ तैरती हुई वस्तु थी। तमाम चेहरे पर ही कुछ था, जिससे मैं स्तब्ध रह गया। किंचित रुक कर मैंने कहा—"शाम को तुम्हारी काफी प्रतीक्षा की, पर तुम तो बिना रुके ही चली गईं! क्या मुझसे कुछ ...?"

वे निरुत्तर धरती की ओर देखती रहीं।

मैंने अनुरोध पूर्वक कहा—'तुम इस तरह क्या सोचती हो? पड़ोसिन, क्या चाहती हो? जो कहना नहीं चाहती हो।'

वे व्यथा भरी वाणी में बोलीं—'रवि बाबू! मैं कुछ कहना तो चाहती हूं। आई भी इसीलिये हूं। पर कहूं किस मुंह से! तुम तो जानते हो, मैं विधवा हूं! और हम विधवाओं को इतना अधिकार कहां कि अपनी पीर किसी से कह सकें। अब तक जितनी भी चोटें इस दिल पर आईं सब सहन करती रही, पर अब हृदय पीड़ा असह्य है, और ऊपर से यह समाज के जुर्म बरदाश्त नहीं होते आज सुबह स्कूल जाते वक्त मेरे मकान मालिक ने कहा—'अब तो तुम्हारा आना जाना रवि बाबू के यहां हो गया है। अच्छा हो, अब तुम स्थाई रूप से उसी घर को अपना लो!' बाद को उसने कहा—'तुम्हारा रविबाबू से यह सम्बन्ध ...?'

'रवि बाबू! मैं अब तुम्हीं से पूछती हूं, क्या मेरा जीवन इसी तरह चोटें और समाज के थपेड़ खाने के लिए है?'

मैंने कहा—'पड़ोसिन! तुम इतनी दुःखी क्यों होती हो? इस घर का द्वार अपने लिए सदा खुला समझो।'

चेहरे पर द्विविधा ला कर बोलीं—'भला जब मैं आप से दूर, दूसरे मकान में रहती हूं, तब तो लोगों को अंगुली उठाते संकोच नहीं हुआ और जब इस घर में रहने ही लगूंगी, तब यह समाज न जाने क्या-क्या बखेड़े खड़े करेगा। तब मेरे साथ आप पर भी समाज के हमले होंगे, यह मैं नहीं चाहती।'

पड़ोसिन के इस कथन पर मैं द्रवार्द्र हो आया—यह समाज भी कैसा है! वह दीनों को ही दबाता रहा है। आह! वह कितना निर्मम है! ऐसे समाज को हमें कुचल......।'

तभी पड़ोसिन ने धीमी वाणी में कहा—'नहीं रवि बाबू! समाज सशक्त है, सबल है। व्यक्ति उसके समक्ष तुच्छ है। समाज से युद्ध के लिये बड़ी तैयारी की जरूरत है।'

'इस तरह समाज का विधान, जो स्त्री-पुरुष के मूलभूत अधिकार की ओर से सर्वथा उदासीन है अछूत बच रहता है। यह मनुष्य आखिर समाज की अनुचित बातों को कब तक सहन करता रहेगा?'

'नहीं तो फिर उपाय ही क्या है? इस समाज से तो मैं हार गई रवि बाबू! मैं अब अपने वश की नहीं हूं। नारी धर्म में स्वतन्त्र कुछ नहीं होता। मेरा सिर चकरा रहा है। मैं चलूं—जाती हूं!'

'नहीं, अब तुम जाओ नहीं। यहीं मां के पास सो जाओ। सुबह चली जाना।'

'मैं जाऊंगी रवि बाबू! मुझे जाना चाहिए—इतना उन्होंने कहा, और वे चली गईं।

प्रातः सो कर उठा, तो सिर भारी था। पड़ोसिन के प्रति सहानुभूति रह रह कर सजीव हो उठती थी—क्या उनके हृदय के कोमल तंतु सचमुच टूटना ही चाहते हैं! यह जिज्ञासा और उनसे मिलने की नैसर्गिक स्पृहा मुझे उनके घर की ओर ले चली।

पड़ोसिन के घर में आज चूल्हा तक न जला था बिना किनारी की सफेद धोती में अपने सम्पूर्ण यौवन को समेटे वे धरती पर बिछी चटाई पर बैठी थीं। उनके गोरे से सरल चेहरे पर विषाद की छाया स्पष्ट थी और रह रह कर यौवन उसमें से फूट पड़ना चाहता था। मुखाकृति कहती थी कि किसी उलझन में उलझ कर स्वयं में वे एक पहेली बन गई हैं।

मेरी उपस्थिति पर लज्जा-आवरण में सिमटती वे अभिवादन में खड़ी हो गईं।

मैंने बैठते हुए कहा—'यह भी क्या बात है, पड़ोसिन! आज तो चूल्हा तक नहीं जलाया! ऐसे आखिर कब तक चलेगा!'

'ऐसे जीने से वह अन्तर्यामी मुझे उठा क्यों नहीं लेता है! एक ओर मन की स्वाभाविक भूख और दूसरी ओर अकारण समाज की दुत्कार। यह दोहरी

[शेष पृष्ठ २० पर]

[१]

[२]

[४]

ब्रिटेन का वायु विश्वविद्यालय

★

(५) प्रफुल्लित तथा आत्मविश्वास पूर्ण मुद्रा में एक चालक

ब्रिटेन का वायु सर्विस प्रशिक्षण केन्द्र १९३१ में स्थापित किया गया था, विदेशी वायुसेनाओं के अफसरों के प्रशिक्षण में सहायतार्थ। फलतः हैम्बुल में जो साउथैम्पटन से सात मील की दूरी पर है, वायु और भूमि प्रशिक्षण में प्रयुक्त होने वाले आधुनिकतम और यन्त्र रायल ऐयर फोर्स की ट्रेनिंग प्राप्त शिक्षक रखे गये।

१९३९ तक संसार के लगभग सब देशों के विद्यार्थी यहां आने लगे थे। किन्तु युद्ध आरम्भ होने के कारण इस 'वायु विश्वविद्यालय' का असैनिक कार्य स्थगित हो गया और सारा संगठन ब्रिटिश और मित्रराष्ट्रीय कर्मचारियों को ट्रेनिंग देने के युद्धकालीन कार्य में लग गया।

फिर से संगठित और नए नए यन्त्र तथा साधनों से सज्जित होकर ब्रिटेन के वायु विद्यालय ने अप्रैल १९४६ में अपने द्वार फिर से खोले। दो वर्षों के अन्दर २५ विभिन्न जातियों के एक हजार विद्यार्थी ट्रेनिंग पा चुके थे। कहने की आवश्यकता नहीं कि नये रूप में वह फिर असैनिक प्रशिक्षण संस्था के तौर पर खुला था।

यह संगठन चार विभागों में विभाजित है। वायुयान चलाने की ट्रेनिंग का विभाग, भूमि ट्रेनिंग, रेडियो विभाग और वायुविद्या इंजीनियरिंग विभाग। विद्यार्थी लोग जिस क्लब में रहते हैं उसे ए० एस० टी० क्लब कहते हैं और इस क्लब का भी क्या कहना! यह विश्राम और व्यायाम, मनोरंजन और अध्ययन इन सबके समुचित साधनों से सम्पन्न है।

★

(१) विद्यालय के शिक्षक श्री स्टेफन वायुयान चालक के पैराशूट के सम्बन्ध में विद्यार्थियों को समझा रहे हैं।

(२) प्रातः काल की कक्षाओं का कार्यक्रम समाप्त कर विद्यार्थी अपराह्न के लिए आ रहे हैं।

(३) फ्लाइट लेफ्टीनेंट नील अपने विद्यार्थियों को एयरफील्ड की रूपरेखा समझा रहे हैं।

(४) विद्यार्थी बारी-बारी से वायुयान उड़ाने का अभ्यास कर रहे हैं।

अमेरिका में

(१) चालीस लाख जन संख्या का विशाल नगर शिकागो जहां आगामी सात अगस्त को अमेरिका की अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया है।

(२) अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमैन अमेरिका के वैदेशिक सहायता अधिनियम पर हस्ताक्षर कर रहे हैं। इस अधिनियम के अनुसार अमेरिका द्वारा अन्य अविकसित देशों के लिए लगभग १५ अरब रुपये की सहायता स्वीकार की गई है।

(३) अमेरिका ने अपनी निवास समस्या को सुलझाने के लिये इस प्रकार के पूर्व निर्मित मकान बहुसंख्या में बनाये हैं।

(४) गत १४ जून को मनाये गये ध्वज दिवस के अवसर पर अमेरिका के प्रसिद्ध चित्रकार वैन्सीरोज अमेरिकन अधिकारियों को ध्वज की रूप रेखा समझा रहे हैं।

(५) कम्यूनिज्म की बाढ़ को रोकने के लिए योरोप के पश्चिमी देश मजबूत बांध बनाने में व्यस्त हो रहे हैं।

[१]

[२]

[३]

[५]

[४]

दिनकर

(पृष्ठ ११ का शेष)

को क्षोभ का सञ्चार करने वाली है। जिन रसिकों ने भी 'रसवन्ती' की कविताएं पढ़ी हैं, अवकाश के समय, उनके मन में 'रसवती' उसी प्रकार तैरती होगी, जैसे दिनकर जी के मन में नारी का मूर्ति तैरा करती है।

तैरती स्वप्नों में दिन रात
मोहिनी छवि की तुम अम्लान,
कि जिसके पीछे पीछे नारी
रहे फिर मेरे भिक्षुक गान।

द्वन्द्व गीत

जिस प्रकार दिनकर का प्रकृति प्रेम 'रेणुका' में उनकी क्रांति भावना 'हुंकार' में तथा उनका नारी प्रेम रसवन्ती में प्रकट हुआ है, उसी प्रकार उनकी दार्शनिक अनुभूतियां 'द्वन्द्व गीत' में अभिव्यक्त हुई हैं। 'द्वन्द्व गीत' दिनकर जी की सौ रुबाइयों का संग्रह है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'द्वन्द्व गीत' में हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ रुबाइयां संग्रहीत हैं। इन रुबाइयों का विषय विलास और वैराग्य के बीच द्वन्द्व है। एक ओर विलास के कुंज ने कवि को यह निमन्त्रण दिया कि—

रति अनग वासित वरची यह
ठहर पथिक ! मधु-रस पी ले,
इन फूलों की छांह जुड़ा ले,
कर ले शुष्क अधर गीले।
आज सुमन मण्डप में सो कर
परदेशी, निज भ्रान्ति मिटा,
चरण थके होंगे तेरे पथ,
बड़े विषम ऊंचे टीले।

वहां वैराग्य की चोटी पर से वह सौन्दर्य की नश्वरता पर विलाप करता हुआ वह कह कर रो पड़ता है कि—

दो कोटर को छिपा रहीं
मदमाती आंखें लाल सखी !
अस्थि तन्तु पर ही तो हैं ये,
खिले कुसुम से गाल सखी !
और कुचों के कमल ! झड़ेंगे
ये तो जीवन से पहले,
कुछ थोड़ा सा मांस प्राण का
छिपा रहा कंकाल सखी।

'हुंकार' का रचयिता और राष्ट्रीयता का इतना समर्थ गायक सरकार के युद्धोद्योग में सहायक हो, यह बात देश को उस समय बहुत अखरी, जब सन् १९४२ ई० में दिनकर ने अपने सभी प्रशंसकों की इच्छा के विरुद्ध युद्धप्रचारक का पद स्वीकार कर लिया। अब तक लोग कहते हैं कि वह दिनकर के जीवन का एक अध्याय था और वे अपना सौभाग्य समझें कि देश ने उनकी सेवाओं को ध्यान में रखते हुये उन्हें वह दण्ड नहीं दिया, जिसके कि वे अधिकारी थे। किन्तु युद्धकालीन दिनकर ने हिन्दी को वह वस्तु प्रदान की, जो आज जीवित है और आगे सदियों तक जीवित रहेगी।

कुरुक्षेत्र

कुरुक्षेत्र दिनकरजी की युद्धकालीन रचना है। इसका विषय महाभारत के बाद युधिष्ठिरके हृदयमें उठने वाला निर्वेद है। इस काव्य मे युधिष्ठिर और भीष्म ये दो ही पात्र हैं। युधिष्ठिर निर्वेदाकुल होकर युद्ध के विरुद्ध अपने उद्‌गार प्रकट करते हैं और भीष्म उन्हें समझा बुझा कर यह कहना चाहते हैं कि तुम्हें राजसिंहासन का तिरस्कार करके वनवासी नहीं बनना चाहिए। महाभारत के आदि में अर्जुन के हृदय में भी इसी से मिलती जुलती भावना उठी थी, जिसके शमनार्थ भगवान श्रीकृष्ण को गीता कहनी पड़ी थी। अर्जुन के गीता के मोह के बाद भी, भारतीय साहित्य में अनेकों बार विचार हुआ है। किन्तु युधिष्ठिर के निर्वेद की हमने घोर रूप से उपेक्षा की और भारत की किसी भी भाषा में इस अत्यन्त उच्च विषय पर प्राय. कुछ भी नहीं लिखा गया। इस दृष्टि से कुरुक्षेत्र अत्यन्त आवश्यक ग्रन्थ प्रतीत होता है, क्योंकि वह भारत की राष्ट्रीय चेतना की धारा में वह योगदान देता है, जैसा योगदान प्रत्येक सदी का साहित्य नहीं दे पाता। कुरुक्षेत्र का दूसरा महत्व यह है कि युद्ध के विषय पर यह पहला महाकाव्य है, जो भारत की किसी भी भाषा में आज तक प्रकाशित हुआ है। स्मरण रहे कि समरों और महासमरों के वर्णन में हमारे यहां प्रायः सभी भाषाओं में अनेक काव्य लिखे गये हैं। किन्तु उन्हें हम आधुनिक अर्थ में युद्धकाव्य नहीं कह सकते। आज तो युद्धकाव्य से हम उसी काव्य का अर्थ लेते हैं, जिसमें जीवन दर्शन के रूप में युद्ध की व्याख्या की जाती है। इस दृष्टि से कुरुक्षेत्र का स्थान केवल हिन्दी में ही नहीं, वरन् भारत की सभी भाषाओं के बीच महत्वपूर्ण माना जाना चाहिये।

कुरुक्षेत्र में महाभारत की कथाओं की पुनरावृत्ति नहीं है। सच पूछिये तो कथा नामकी कोई वस्तु उसमें है ही नहीं। वह तो व्याख्या विचार और चिन्तन का महाकाव्य है। अगर इस काव्य को महाभारत साहित्य की परंपरा में रख कर उस पर विचार किया जाय तो चतुर्थ सर्ग में भीष्म के चरित्र चित्रण को ही हम कथारूप में ग्रहण कर सकते हैं। बाकी सभी स्थलों पर कवि महाभारत के बहाने जीवन की वर्तमान समस्याओं पर अपना विचार प्रकट करता है, मानो उसके अपने सभी चिन्तन महाभारत के ही विशाल उदर से आ रहे हैं। चतुर्थ सर्ग में चित्रित भीष्म के चरित्र में जो नवीनता आई है वह निश्चित रूप से महाभारत साहित्य को एक नूतन अवदान है। इसके सम्बन्ध में श्री सम्पूर्णानन्द जी ने कवि को लिखा था कि 'चतुर्थ सर्ग में आप जिस भीष्म को सामने लाये हैं, उसे अब तक किसने देखा था ? ऐसा लगता है कि उसका अस्तित्व अवश्य रहा होगा, किन्तु जीवन उसे आपने ही दिया।

हिन्दी प्रांतों के बीसियों लेखकों, कवियों, आलोचकों और सार्वजनिक नेताओं ने कुरुक्षेत्र की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है और उसकी रचना को देश के सौभाग्य का सूचक बतलाया है। इधर जो अध्ययन कुरुक्षेत्र का हुआ है, उससे आलोचक इस निष्कर्ष पर आ रहे हैं कि यह आधुनिक हिन्दी के तीन महाकाव्यों में से एक है। शेष दो के नाम 'प्रियप्रवास' और 'कामायनी' हैं। यह सत्य के पास पहुंचने का प्रयास है। वस्तुत. इतना कहने से कुरुक्षेत्र के युग और जीवन-सम्बन्धी समस्त महत्व पर प्रकाश नहीं पड़ता है।

कुरुक्षेत्र में हिंसा अहिंसा, विलास वैराग्य कर्मठता और सन्यास, युद्ध और शांति तथा मायावाद और निवृत्ति के सिद्धांतों पर जो गहन विचार किया गया है, वह न तो सस्ता है और न सहजता से ही उपलब्ध। कुरुक्षेत्र की कवितायें कुछ ऐसे चिंतन का प्रमाण हैं, जैसे चिन्तन काफी अरसे के बाद कहीं कहीं एक बार साहित्य में आते हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि भदन्त आनन्द कौशल्यायन और स्वर्गीय सुभद्राकुमारी चौहान जैसे लोगों ने उसे वर्तमान युग की गीता कहा है। इस काव्य में भाषा और भाव के बीच जो अद्भुतता दीखती है, उस पर प्रकाश डालते हुए आचार्य पं० हजारीप्रसाद जी द्विवेदी ने लिखा था कि 'अपने यहां एक प्राचीन आचार्य हुए हैं, जो साहित्य को भाषा और भाव के बीच चलने वाले द्वन्द्व का परिणाम मानते थे। कुरुक्षेत्र में यह द्वन्द्व इतना अधिक है कि आज उस आचार्य को भी आश्चर्य में पड़ जाना पड़ता।'

कुरुक्षेत्र का यह एक संक्षिप्त परिचय है। अभी उस काव्य का अध्ययन ठीक से शुरू भी नहीं हुआ है। ज्यों ज्यों उसका अध्ययन बढ़ेगा, त्यों त्यों लोग इस गम्भीर काव्य की महत्ता से उसी प्रकार चकित और अभिभूत होंगे, जिन से अभिभूत हो कर मैं ये पंक्तियां लिख रहा हूं।

अन्य रचनाएं

दिनकरजी के तीन और काव्यसग्रह निकले हैं, जिनके नाम 'सामधेनी' 'धूप छांह' और बापू हैं। सामधेनी में १९४२ से १९४६ तक की राष्ट्रीय कविताएं संग्रहीत हैं और उनमें तत्कालीन भारत का हृदय धड़क रहा है। एक क्रम से देखा जाय तो सामधेनी की कई कविताएं हमारे अन्तिम राजनीतिक संग्राम के सोपान के रूप में सामने आती हैं।

'वह प्रदीप जो दीख रहा है झिलमिल,
दूर नहीं है,
थक कर बैठ गये क्या भाई मंजिल
दूर नहीं है।'

उस समय का भाव है, जब बयालीस का आन्दोलन पहली लहर के बाद जरा थकने लगा था। आगे चल कर ४३ और ४४ ई० में जब देश में निराशा का अन्धकार छा गया, तब उसे भेदने के उद्देश्य से कवि ने 'आग की भीख' नामक कविता लिखी, जिसमें अपने देश के युवकों के लिये उसने भगवान से अंगारों की याचना की।

'प्यारे स्वदेश के हित अगार मांगता हूं,
चढ़ती जवानियों का शृंगार मांगता हूं।

सामधेनी में सांप्रदायिक दंगो दिल्ली और मास्को तथा जयप्रकाश के सम्बन्ध में भी अत्यन्त ओजस्विनी कविताए संग्रहीत हैं, जिनसे दिनकर के राजनैतिक दृष्टिकोण पर सम्यक् प्रकाश पड़ता है।

धूपछांह में कुछ मौलिक और कुछ अनूदित कविताए संग्रहीत हैं और 'बापू' में दिनकरजी की गांधी जी के सम्बन्ध की रचनाएं हैं, जिनमें से नोआखाली के सम्बन्ध वाली कविता देश में अत्यन्त प्रसिद्ध हुई है।

मिट्टी की ओर

'मिट्टी की ओर' दिनकर जी के लेखों और भाषणों का संग्रह है, जिनके भीतर से एक समकालीन कवि की अपने सह कर्मियों को देखने की दृष्टि प्रत्यक्ष होती है। इस पुस्तक में कुछ वर्तमान साहित्य पर दिनकर जी की सूक्तियां और कुछ विचार संग्रहीत हैं, फिर भी यह पुस्तक काफी समादृत हुई है तथा जिस प्रकार दिनकर काव्य ने अपने तेजस्वी स्वरूप के द्वारा छायावाद की कुहेलिका को फाड़ डाला, उसी प्रकार उनकी इस गद्य पुस्तक ने भी युगों से चले आने वाले तथा अपनी अस्पष्टता के ही कारण लोगों में मान्य समझे जाने वाले रहस्यवाद का पर्दा फाड़ कर दिया। आलोचना को दिशा में यह निर्भीकता दिनकरजी की खास देन है। 'मिट्टी की ओर' के आदर का एक कारण यह भी है कि इसका गद्य अंग्रेजी के ऊंचे से ऊंचे गद्य के साथ, स्वच्छता और सफलता में टक्कर ले सकता है।

धारावाही उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त.

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन महिला धर्मशीला और उसकी लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। अनिरुद्ध अपने दल के साथ मिरजापुर के गांवों में फैली हैजे की महामारी में तन-मन से सेवा करता है, वहां से लौटने पर विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं और विवाहेच्छु सज्जन के पास जाकर उसे समझाते हैं, किन्तु अन्त में सफल नहीं होते। तत्पश्चात वे कन्या के मामा रसिकलाल के पास जाते हैं। रसिकलाल को भी समझाने की उनकी चेष्टा जब व्यर्थ हो गई तो वे विवाह को बलपूर्वक रोकने के उद्देश्य से उस मकान को घेर लेते हैं, जहां कि विवाह होने वाला था। संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है और वहां वेश्याओं की दशा का अध्ययनकर नारीके अधिकारों पर पत्रों में कुछ मौलिक लेख लिखे।

[गतांक से आगे]

अन्त तक अनिरुद्ध ने डाक्टर ही को पकड़ा। 'डाक्टर तुम्हीं ने यह भारी बोझा मेरे सिर पर लादा है, अब तुम्हीं इसकी आफत उठाओ, कुछ दिन के लिये हम तुम्हारे ही घर पर रहेंगे।'

डाक्टर ने इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार किया। सेवा दल से लौटने के बाद उसने एक उच्च शिक्षिता से हाल ही में शादी की थी। डाक्टरी के कर्त्तव्यों के सम्बन्ध में उसे बहुत व्यस्त रहना पड़ता था, इसलिये उसकी स्त्री को एक सहेली दो साथी मिलेंगे, इसलिये उसने इस बात का स्वागत किया।

अनिरुद्ध स्त्री के साथ डाक्टर के यहां गया।

अनिरुद्ध ने डरते डरते धर्मशीला से भेंट की। धर्मशीला ने उसे आशीर्वाद दिया, और कहा कि उसकी स्त्री से भेंट करने वह चलेगी। पर उनके चेहरे की तरफ देख कर अनिरुद्ध को मालूम हो गया कि इन कई घंटों में जैसे उनमें झाईं सी पड़ गई है। कहना न होगा कि यह केवल अनिरुद्ध के उत्तेजित मन की कल्पना मात्र थी। असल में धर्मशीला पहले ही की तरह स्नेह शील रूप में पेश आती थी। अवश्य वह इस बात से बहुत परेशान थी कि सुजाता बिना कुछ कहे सुने क्यों चली गयी। वह अनिरुद्ध की शादी के साथ सुजाता का चले जाने का सम्बन्ध स्पष्ट देख रही थी, पर आशोक के मुंह से जो कुछ ब्योरा मालूम हुआ था, उससे वह अनिरुद्ध, रसिकलाल या डाक्टर किसी को भी दोष नहीं दे सकती थी। इन में से किसी का उद्देश्य महान के अतिरिक्त कुछ नहीं था। धर्मशीला को ऐसा मालूम पड़ा कि ये सभी एक आदर्श के द्वारा परिचालित हो कर अपने कार्य के जरिये से अपनी अपने महत्व की पूर्ति कर रहे थे, नहीं तो पहले से किसी को कुछ पता ही नहीं था कि घटनाएं इस दिशा में आ रही हैं।

अनिरुद्ध शादी के बाद डाक्टर के यहां उतरा धर्मशीला ने इस पर भी कोई आपत्तिजनक बात नहीं पाई। वह एक दिन तरह तरह के उपहार लेकर डाक्टर के घर गयी और नयी बहू देख आयी।

संध्या समय आशीष कुमार घूमते-घामते धर्मशीला के यहां पहुंचा। बातचीत होते होते इस शादी पर बात चल पड़ी। आशीष ने कहा—'आप इस शादी के सम्बन्ध में क्या समझते हैं?'

धर्मशीला के माथे पर बल आ गये, बोली—ठीक ही तो है······

आपकी राय में वे दुखी होंगे? समझ रहे कि यह प्रेम मूलक विवाह नहीं है।

हो सकता है, नहीं भी हो सकता है। यह उनके स्वभाव पर निर्भर है। पर एक बात को मैंने एक सिद्धान्त के रूप में मान लिया है कि चाहे जिस क्षेत्र में चले शादी के क्षेत्र में त्याग कर शादी करने की बात में मैं विश्वास नहीं करती। विवाह करने वाले को उचित है कि वह कौड़ी कौड़ी समझ ले। मैं अवश्य इस बात को अलंकारिक अर्थ ही में कह रही हूं। धन के लोभ में या आर्थिक फायदा देख कर जो शादी होती है, वह तो बहुत ही निन्दनीय है। जीवन के और सब क्षेत्रों में प्रेम से प्रिय को वरण करना शायद उचित है, पर विवाह में प्रेम ही श्रेय है। इस दृष्टिकोण के अतिरिक्त विवाह असफल होने के लिये बाध्य है। कम से कम यही मेरी धारणा है।

इसके माने यह हुए कि आप कह रही हैं कि यह विवाह असफल रहेगा, क्योंकि इस विवाह को करने में अनिरुद्ध को बहुत त्याग करना पड़ा।

दोनों में आलोचना चलने लगी। दोनो ने त्याग शब्द का प्रयोग किया, पर अनिरुद्ध का त्याग कहां और किस बात में है, इस प्रश्न पर दोनों बराबर बात करते रहे। अन्त में आशीष कुमार ने कहा—जानते हैं? कल संघ का अधिवेशन होगा।

चौंककर धर्मशीला ने कहा—कल फिर क्या बात है? बात का कुछ ऐसा मतलब था कि कल फिर किसकी शामत आ रही है?

कुछ नहीं, कल अनिरुद्ध को संघ की तरफ से विपुल रूप से अभिनन्दित किया जायगा।

धर्मशीला ने अस्पष्ट रूप से कहा—अच्छा यह बात? यह कहने जा रही थी घाव पर नमक!

पर यहीं पर अनिरुद्ध ने धर्मशीला को गलत समझा था। वह बड़े से बड़े कष्ट को भी बिना चूं किये सह सकता था, यही उसका स्वभाव था। यदि उसको कोई चोट लगी थी, तो उसका घाव के अन्तराल में रहने के लिए बाध्य था।

आशीषकुमार ने मानों धर्मशीला की बात को समझते हुये कहा—शायद अभिनन्दन से कुछ क्षतिपूर्ति हो।

यथा समय संघ का अधिवेशन हुआ और तुमुल जयध्वनि के बीच अनिरुद्ध को संघ की तरफ से उसके क्रांतिकारी आत्मत्याग के लिए बधाई दी गई। अनुपस्थित भवानन्द पर बड़ी बड़ी फबतियां कसी गयीं और उसका खूब मजाक उड़ाया गया। संघ की तरफ से अनिरुद्ध को बहुत सी जरूरी चीजें उपहार के रूप में दी गईं।

इन चीजों की तरफ देख कर अनिरुद्ध को रोना सा आ रहा था, क्योंकि वह समझ रहा था कि आक्टोपस की एक और लपेट उसके गले में पड़ गयी। वास्तविकता और भी कठिन रूप में दिखाई पड़ी, पर उसने एक भी सांस नहीं ली उसे चुपचाप अपने दुःख के बोझ को उठाना पड़ा।

[११]

मोटर साइकल चलाने-चलाते सुजाता लाहोर में बहुत दूर निकल जाती थी। मोटर साइकल पर उल्का के वेग से वायु को विदीर्ण करती हुई जाती हुई उसे ऐसा प्रतीत होता था कि वह अन्याय और विषमतापूर्ण इस जगत को पीछे छोड़ कर चली जा रही है, चली जा रही है, चली जा रही है। वेश्याओं में आने जाने रहने से और उनकी समस्याओं पर विचार करते करते वह जीवन के कृष्ण पक्ष के विषय में बहुत कुछ जान चुकी थी। वह उसी कृष्ण पक्ष को पूर्ण सत्य समझ रही थी। उसका मन लिखाई-पढ़ाई, बिज्ञान बल्कि सारे जगत के प्रति उदासीन हो चुका था।

उसकी मा उसे नियमित रूप से पत्र लिखती थी। ये पत्र ही उसके जीवन के एकमात्र आश्वासन थे। मा के पत्र में वह अपने निराशापूर्ण दृष्टिकोण का कोई भी समर्थन नहीं पाती थी। बीच बीच में मा के इन आत्मतृप्त तथा आत्मस्थ पत्रों को पढ़ कर उसे ऐसा सन्देह होता था कि कहीं यह सब ढकोसला तो नहीं है, कहीं यह नक्टो के ईश्वर दर्शन की तरह केवल आत्मप्रवंचना का एक ढोंग मात्र तो नहीं है।

वह ठीक ठीक कुछ भी नहीं समझ पाती थी। एक दिन जब वह गर्दन तोड़ वेग से लाहौर के बाहर मोटर साइकल दौड़ा रही थी, तो उसने देखा कि उसके सामने एक मोटर साइकल जा रही है। उसने गति बढ़ा कर उस साइकल को पकड़ने की चेष्टा की। एकाएक उसके दिमाग में यह झक्की चढ़ गया कि कुछ भी हो इस मोटर साइकल को पकड़ना ही पड़ेगा। सामने की मोटर साइकल वाले ने मानो उसकी यह बात समझ कर और भी गति बढ़ा दी। बड़ी देर तक यह होड़ चलती रही। अन्त में सुजाता को ऐसा मालूम हुआ कि वह प्रति मिनट सामने की सायकल के नजदीक जा रही है। उसके बाद उसने आश्चर्य के साथ देखा कि सामने की मोटर साइकल एक बार रुक गई और उसका चालक एक युवक जल्दी से उतर कर अपनी मशीन की जांच करने लगा। चारों तरफ गेहूं के खेत थे, कहीं कोई नहीं था।

मोटर विलासियों के शिष्टाचार के अनुसार सुजाता ने आगे जाने का ख्याल त्याग कर अहर मोटरिस्ट की सहायता के लिये गाड़ी रोक दी।

ये लो, आपकी मशीन बिगड़ गई।

युवक ने यंत्र की तरफ से एक बार मुंह उठाते हुए कहा—मैं अभी पांच मिनट में सब ठीक किये लेता हूं—कह कर वह औजार निकाल कर मोटर ठीक करने लगा।

सुजाता ने एक दृष्टि से देख लिया कि युवक ऊंचे घराने का है, और उसे

पंजाब के युवकों में भी सुन्दर मानना पड़ेगा उसका शरीर नसों से मानों लोहे के तारों से बंधा था यह बात सुजाता ने उसे काम करते हुए देख कर समझ लिया। बहुत ही त्रुटिहीन तरीके से उसने शाम की अंग्रेजी पोशाक पहन रखी थी। किसी तरफ ध्यान न दे कर वह अपना मरम्मत का काम कर रहा था। उसकी तितली मार्के की मूछें उसे बहुत खिलती थीं।

धीरे धीरे छोड़े हुए दीर्घ निश्वास की तरह शाम की हवा चल रही थी। युवक कुशलता से अपना काम कर रहा था। सुजाता एक बार दूर क्षितिज तक फैले हुए टेढ़े मेढ़े रास्ते की तरफ और फिर काम में लगे हुए युवक की तरफ देख रही थी। क्या युवक उसे किसी पथ का निर्देश दे रहा था?

सुजाता ने कहा—क्या बिगड़ा है?

युवक ने बिना मुंह उठाये कहा—ऐसी कोई खास चीज नहीं—और काम करते करते बिना मुंह उठाये सुजाता को समझाने लगा कि क्या बिगड़ा है।

बहुत जल्दी मरम्मत खतम हो गई। युवक ने खड़े हो कर सुजाता की ओर देखा और फिर साथ ही साथ अत्यन्त भद्रता के साथ बोला—'धन्यवाद आप को जैसे मैंने इसके पहले कहीं पर देखा है आप का शुभ नाम?

हो सकता है कि आपने मुझे देखा हो, मैं भी लाहौर ही की हूं। मेरा नाम सुजाता बेनर्जी है।

क्या कहा? सुजाता क्या?

सुजाता बेनर्जी।

युवक ने कुछ देर तक सोचा, फिर कहा—"आप का नाम मैंने सुना है। आप ही ने वेश्यावृत्ति तथा स्त्रियों के अधिकारों पर कुछ मौलिक लेख लिखे हैं?" कह कर उसने कुछ सोचते हुए कहा—आपके साथ परिचय से खुशी हुई।

सुजाता ने भी दो एक भद्रतासूचक बातें कहीं और बोलीं—"अपनी तुच्छ शक्ति के अनुसार पतिता बहिनों की कुछ कुछ सेवा करने की चेष्टा करती हूं। इतने दिनों में केवल एक पतिता का उद्धार कर उसे भद्र जीवन में वापस ला सकी हूँ।"

युवक ने कुछ देर तक कुछ भी नहीं कहा, मानों गहराई के साथ किसी बात को सोचा, फिर बोला—"मैं हृदय से आपके उद्देश्य की प्रशंसा करता हूँ, पर मैं समझता हूँ कि आप की खोज कुछ एकांगी है। आप केवल नारियों के कर्त्तव्य को सुन रही हैं, और उसी पर अपने सारे सिद्धांत को खड़ा कर रही हैं। पर इस विषय में पुरुषों का भी कुछ कर्त्तव्य है। नारी आन्दोलन में प्रगति तथा जागरण लाने के लिए नारियों को शहीद के रूप में दिखलाना शायद अधिक उपयुक्त है, पर आप जिस प्रकार की आलोचना कर रही हैं, वह एकांगी है। समाज विज्ञान भी एक विज्ञान ही है, इस लिए वैज्ञानिक की निरपेक्ष दृष्टि की आवश्यकता है। जोश में आकर बह जाना उचित न होगा।

सुजाता ठीक ठीक नहीं समझ पा रही थी कि युवक का क्या कहना है, बोली 'आप अपने कर्तव्य को कुछ और स्पष्टता के साथ कहें।

मान लीजिए जैसा कि आपने एक वेश्याकी जीवनी में लिखा था कि सौतेली मा की सन्तानसे परेशान होकर वह लड़की एक युवक के साथ भाग गई, फिर युवक के विलायत चले जाने पर वह गुन्डे के हाथों में पड़ गई

निक्को की कहानी—बात काटते हुए सुजाता ने कहा।

युवक एक मिनट के लिये जैसे चकरा गया, पर फौरन अपने को सम्भाल कर बोला निक्को हो, बिट्टो हो, या सब्बो हो इससे कुछ नहीं आता जाता। आप ने सब दोष उस युवक पर ही डाल दिया मानो उसने पहले से षडयन्त्र कर सब काम किया था पर सब बातें इस प्रकार से नहीं हुआ करता। मैं मानता हूँ कि कुछ लोग पहलें से सोच विचार कर षड्यन्त्र करते है पर एक बीस बाईस साल के भद्र युवक के लिये ऐसा मानने को दिल नहीं चाहता।

सुजाता नहीं जानती थी कि यही वह युवक है जो निक्को को लेकर भागा था।

युवक उत्तेजित होकर कहने लगा—यदि बहुत कम भी कहा जाय तो यह अन्याय है। युवक कोई अपनी खुशी से विलायत में बैरिस्टर होने नहीं गया था, यदि उसके लिये सम्भव होता तो वह शायद कभी भी न जाता। इसके अतिरिक्त उसने अपनी किशोर बुद्धि के अनुसार विलायत जाते समय अपनी प्रेमिका के लिये रहने का सब प्रबन्ध किया था, पर उसके जाने के तीन दिन ही बाद सब प्रबन्ध गड़बड़ हो जायगा, यह वह क्या जानता था? उसने शायद विलायत से पत्र भी लिखा था। अब वह बिल्कुल अप्रत्याशित रूप से गुंडों के हाथ में पड़ गई, इस में किसका दोष है? जरा रुक कर और भी कम्पे गले में उसने कहा और यह कौन कह सकता है कि वह युवक निक्को को लेकर भागा था? यदि निक्को ने ही उसे ऐसा करने के लिये मजबूर किया था तो

अपनी उत्तेजना से खुद ही लज्जित तथा भयभीत होकर वह चुप हो गया। सुजाता बोली आपके विचार मौलिक तथा दिलचस्प है। आप के साथ विचार विनिमय की सुविधा मिले तो खुशी होगी। आपका परिचय?

मेरा नाम हरी किशन है। उसके बाद उसने लाहौर के एक प्रसिद्ध धनी पुरुष का नाम लेकर कहा यहां पर स्वर्गीय सर राम किशन बात्रा के घर पर मिलूंगा।

ओह, वे तो लाहौर के प्रसिद्ध बैंकर थे, आप उनके

मैं उनका एक मात्र पुत्र हूँ।

हरिकिशन ने स्पष्ट देखा कि सुजाता के चेहरे पर पहले से अधिक सम्मान की भावना आ गई, वह मन ही मन आत्म प्रमोद से हंसा।

सुजाता ने अकस्मात कहा आपने जो बातें कहीं उन्हें लिखकर छपा क्यों नहीं देते?

आलस्य, परमालस्य, इसके अतिरिक्त यह मेरी लाइन नहीं हैं, समझीं? वह अपने शुभ्र दांतों को निकाल कर हंसा।

देरी हुई जा रही है, हरिकिशन ने कहा किसी दूसरे दिन विस्तार से बातचीत होगी, आप हमारे गरीबखाने में किसी दिन पधारें। अब चलिए—

—क्रमशः

सम्पादक के नाम पत्र

हमारे पाठक क्या कहते हैं ?

पाकिस्तान के साथ नया समझौता

भारत सरकार ने पाकिस्तान के साथ शरणार्थियों की चल सम्पत्ति-विषयक एक समझौता किया है। इसके अनुसार मशीनरी के सिवा अन्य चल सम्पत्ति का क्रय विक्रय और स्थानान्तरण हो सकेगा। जमीनों में गड़े हुए खजानों को वापस दिलाने की व्यवस्था का भी समझौते में उल्लेख है, किन्तु प्रश्न यह है कि जिस दिन कोई हिन्दू पाकिस्तानी अधिकारियों से इस सम्बन्ध में सहायता मांगेगा, इस बात की क्या गारंटी है कि पाकिस्तानी कर्मचारी और पुलिससिपाही उस शरणार्थी के वहां पहुंचने से पूर्व ही घर को खोद नहीं डालेंगे ! फिर इसका भी समझौते में उल्लेख नहीं है कि सम्पत्ति कैसे वहां आकर सुरक्षित रूपेण लाई जा सकती है। आज से कुछ समय पूर्व भी इस तरह का समझौता हुआ था। परन्तु हिन्दुओं को पाकिस्तान जाने के लिए न परमिट मिले, न सवारियां और न उनके साथ जाने वाले सिपाही। इसलिए पंजाब से बहुत कम लोग अपना सामान ला सके। इसी प्रश्न के साथ मुझे यह भी निवेदन करना है कि भोडल बैंक आदि कुछ बैंक इसी गड़बड़ में फेल हो गये थे, क्योंकि उन्होंने जिस भूसम्पत्ति की जमानत पर रु० कर्ज दिया था, वह पाकिस्तान में रह जाने के कारण रुपया वसूल नहीं हो सका। अब नये समझौते के अनुसार ऐसे बैंकों को उस जायदाद से रुपया वसूल करने और बैंक में रुपया जमा करने वालों को वापस करने की भी सुविधा होनी चाहिये।

—लक्ष्मीचन्द

●

इसी तरह हृदय जीतेंगे ?

डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी पिछले दिनों से पूर्वी बंगाल के शरणार्थियों को बिहार व उड़ीसा और आसाम आदि प्रांतों में बसाने के लिए उन प्रांतों की जनता से अपील कर रहे हैं। पूर्वी बंगाल के असहाय शरणार्थियों को बसाना अत्यन्त आवश्यक कार्य है, किन्तु हमें यह देख कर दुःख होता है कि एक ओर श्री मुकर्जी इस तरह का अनुरोध करते हैं, दूसरी ओर वे आसाम वालों को बंगाली-विरोध के लिए डांटते फटकारते हैं। बंगाल ने जिस क्षुद्र प्रांतीयता को जन्म दिया है, आज भी वह उसे नहीं भूला है और आसाम व बंगाल से भाषा के आधार पर जिला-विभाजन का नाम लेकर क्षुद्र मनोवृत्ति का परिचय दे रहा है। क्या श्री मुकर्जी इसी तरह बिहार व आसाम आदि का हृदय जीत सकेंगे ?

—एक बिहारी

●

सर्वोदयवादी का भोजन व्यय

पिछले दिनों हैदराबाद में गांधीवादियों द्वारा आयोजित एक सर्वोदय शिविर का वर्णन 'हिंदुस्तान' में पढ़ा था। उसमें सर्वोदय में सम्मिलित होने वाले कार्यकर्ताओं के भोजन के सम्बन्ध में लिखा है—भोजन के चार हिस्से थे—कलेवा (७॥ बजे), भोजन (११ बजे), जलपान (५ बजे शाम), और शाम का भोजन ७॥ बजे। कलेवे में इच्छा के अनुसार मट्ठा या चाय के अतिरिक्त हररोज बारी-बारी से उपमा, पुरी, अंकुर आये हुए मोठ मूंग, चना आदि दिया जाता। जलपान में लस्सी या नीबू तथा आम का शर्बत। भोजन में एक चटनी, एक तरकारी, दाल, चावल, चपाती (फुलकी) और छाछ। दाल या चावल में एक चम्मच घी। तरकारियां तीखी, फीकी दोनों तरह की। एक रोज सवेरे शाम का दूध बचा कर खीर। भोजन का कुल खर्च२६००)रुपया,कलेवा,जलपान मिला कर। शिविर में कुल १५० कार्यकर्ता उपस्थित थे और आठ दिन यह शिविर चला। इसका अर्थ यह है कि प्रति व्यक्ति प्रतिदिन भोजन पर २।) रु० व्यय हुआ। क्या त्याग का आदर्श रखने वाले सर्वोदयवादी इस व्यय को भारत की वर्तमान स्थिति में उपयुक्त समझते हैं ?

—जिज्ञासु

●

पंजाब की हिन्दी परीक्षाएं

पंजाब विश्वविद्यालय की हिन्दी परीक्षाएं बहुत लोकप्रिय हो रही हैं, और इस से उसे प्रतिवर्ष अच्छी आय होती है। किन्तु शायद इसी लिए वह इस ओर अधिक उदासीन हो गया है। पिछले जून मास में होने वाली परीक्षाओं में भूषण का दूसरा और चौथा प्रश्न पत्र कठिन थे, बहुत खटकता उनमें एक भी विकल्प का अभाव था। इसी तरह रत्न का छठा प्रश्न पत्र बहुत कठिन था, जो सम्भवतः पहला पत्र 'आउट' हो जाने के कारण ज्यादा कठिन बनाया गया था। प्रभाकर का छठा पत्र भी साधारण स्टैंडर्ड से भिन्न प्रकार का था। इन दिनों परीक्षक उत्तरपत्र देख रहे होंगे। विश्वविद्यालय के अधिकारियों का कर्तव्य है कि वे परीक्षकों को उचित उदारता के लिए निर्देश कर देवें। यदि इस कारण परीक्षार्थी अधिक संख्या में असफल हुए, तो मुझे भय है कि अजमेर बोर्ड और दिल्ली हिन्दी विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में विद्यार्थी अधिक बैठने लगेंगे और स्वभावतः पंजाब विश्वविद्यालय को भारी आर्थिक हानि होगी।

—पंजाबी हिन्दी अध्यापक

●

वृक्षारोपण नहीं, वृक्षसंरक्षण

श्री कन्हैयालाल मुंशी वन महोत्सव की नई योजना के उत्साह में शायद यह भूल गये हैं कि केवल योजना का सुनहला चित्र खींच देने, अखबारों में उसके विस्तृत वर्णन छाप देने, प्राचीन शास्त्रों से उनके माहात्म्य उद्धृत करने तथा वृक्षारोपण के लिए पुरस्कार की घोषणाओं से देश में वनश्री नहीं फूलने फलने लगेगी। वृक्ष की शाखा का आरोपण बहुत सरल है, छोटे बड़े नेता फोटोग्राफरों को साथ ले जा कर वृक्षारोपण कर देंगे और उनके तत्कालीन चित्र अखबारों में छप भी जावेंगे। कठिन कार्य तो यह है कि नेता तथा साधारण बोये गये वृक्षों की जनता वर्ष भर में देखभाल करते रहें, उन्हें पानी दें, सर्दी गर्मी से बचाने का प्रयत्न करें। धैर्य की और परिश्रम की परीक्षा इसमें होती है। इसलिये मेरा सुझाव है कि वृक्षारोपण के लिए पुरस्कार न रख कर वर्ष भर के बाद सुरक्षित वृक्षों की संख्या के आधार पर पुरस्कार दिये जावें, अन्यथा धन की हानि के सिवाय कुछ लाभ न होगा।

—एक माली

●

शुद्धि संस्कार अनावश्यक है

आर्यसमाज में जिस प्रकार सनातन धर्मियों, जैनियों और सिक्खों को बिना किसी प्रकार के शुद्धि समारोह के सदस्य बना लिया जाता है, उसी प्रकार मुसलमान भाइयों को भी मेरी सम्मति में आर्य समाज का सदस्य बना लेना चाहिए। इस सम्बन्ध में मैंने मन्त्री जी आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान अजमेर को लिखा है और उन्होंने उस विषय को सार्वदेशिक सभा दिल्ली के पास भेज दिया है।

मैंने इस विषय में बम्बई के कुछ आर्यसमाजों में भी चर्चा की है और उन्होंने इस विषय पर अपनी अपनी अन्तरंग सभाओं में चर्चा करके उसे आगे बढ़ाने को कहा है। आर्य विद्वानों से प्रार्थना है कि वे इस विषय पर अपने विचार प्रकट करें।

—मूलचन्द अग्रवाल

निराश जीवन

[पृष्ठ १२ का शेष]

मार अब बरदाश्त नहीं होती। मैं भी एक स्त्री हूं ? मुझ में भी युवती का हृदय और उमती लालसायें हैं ! मुझे उन सब से वंचित रखना कहाँ का न्याय है ! मेरा यह स्वत्व दुनिया मुझ से क्यों छीन लेना चाहती है !'—इतना कहते कहते पड़ोसिन की आंखें डबडबा आईं।

'तुम्हारी यह पीड़ा पड़ोसिन मुझ से अब नहीं सही जाती। मैं तुम्हारे सुख-दुख का भागी बनने को उत्सुक हूं।' कह कर करुणातिरेक में मैंने उनके स्कन्ध का स्पर्श कर लिया।

एक साथ मुंह पर डर लाकर वह बोली—'ओ बाबा ! कोई देख लेगा। आगे उन्होंने कहा— रविबाबू ! एक स्त्री की साध यही तो हो सकती है ! पिपासित को दो बूंद पानी ही चाहिए। मैं अपने आपको तुम्हें सौंप दूं, इससे बढ़ कर सुख मेरे लिए क्या होगा ! किन्तु मैं विधवा हूँ, इसमें स्थूलसत्य चाहे कुछ न हो, किन्तु समाज की नजरों में मैं विधवा हूं। मेरी दुनिया सदैव के लिए उजड़ चुकी है, उसे पुनः आबाद करने का हक मुझे नहीं। इसी से मैं नहीं चाहती कि मेरे साथ तुम्हें भी इस समाज के संकट उठाने पड़े। मैं तुम्हें अपना मानती हूँ और सदा मानती रहूँगी। प्रेम में दुराव नहीं होता, वह संसार की सब वस्तुओं से भिन्न है। ऐसे विवाह की बात तो दुकानदारी है, सचाई की बात तो प्रेम है। प्रेम की पवित्रता की परिभाषा असम्भव है। उसका पथ अनन्त है, और छोर उसका नहीं है।

'पड़ोसिन ! मुझे अब समाज का भय नहीं है। मैं तुम्हें पाकर उस समाज को ललकार देना चाहता हूँ। मेरा रोम रोम तुम्हारी पीड़ा से भर गया। तुम मेरी चिन्ता न करो। मुझे समाज से लड़ने को छोड़ दो। मैं······!'

इतने में किसी ने पुकारा और मुझे बीच ही में अपने शेष प्रश्न लेकर उठ आना पड़ा। मेरे ओझल होने तक वे अपलक आंखें फाड़-फाड़ कर मेरी ओर देखती रहीं ····।

× × ×

दूसरे दिन मैं पड़ोसिन के घर की ओर चला तो, मन में तरह-तरह के विकल्प उठते आ रहे थे। न जाने क्यों ! हृदय किसी अज्ञात आशंका से बैठा जा रहा था। घर पहुंच कर मैंने देखा, तो पड़ोसिन का कहीं पता न था। मेरा पड़ोस वे सदा के लिए रिक्त कर गई थीं। कमरे के किवाड़ किसी वियोगी की आंखों की तरह चौपट खुले पड़े थे। पंछी उड़ गया दूर—बहुत दूर !

बाल बन्धु परिषद्

संगठन ही शक्ति है

एक दिन की बात है कि पांचों अंगुलियों में परस्पर विवाद उठ खड़ा हुआ, कि हम में से कौन बड़ा है, पर निर्णय कुछ न हो सका। अन्त में सबने सोचा कि बारी-बारी से सब अपने कार्यों का उल्लेख करें इसी से उनकी महानता का अन्दाजा लगाया जा सकेगा। प्रथम अंगूठे से पूछा गया— 'तुम कैसे बड़े हो?'

अंगूठे ने कहा— 'बड़े-बड़े राजा महाराजाओं को राज्याभिषेक के समय मेरी ही आवश्यकता पड़ती है, विवाह आदि शुभ कार्यों में भी तिलक मेरे द्वारा ही किया जाता है, और यहीं तक नहीं खोटे और खरे रुपये की पहचान भी मैं ही करता हूं। क्या इतने गुण सम्पन्न होने पर भी किसी को मेरी महानता में सन्देह है?'

अंगूठेकी बात समाप्त होते ही अंगुली ने कहा— 'रुपये के खरे खोटे का परिचान करते समय यदि मैं अंगूठे की सहायता न करूं तो वे खुद कुछ नहीं कर सकते। राहगीर को मार्ग बतलाते समय मेरी आवश्यकता पड़ती है। लिखते समय यदि मैं लेखक की सहायता न करूं तो वे कुछ न लिख सकें— और सुनो बड़े बड़े धनुधारी मेरी सहायता के बिना धनुष कैसे चला सकते हैं।'

अब बड़ी उंगली की बारी आई, उसने कहा— 'अरे मैं तो आकार में तुम सबसे बड़ी हूं; मुझे अपनी महानता और विशालता बतलाने की आवश्यकता नहीं।'

बड़ी उंगली की बात समाप्त होते ही छोटी उंगली ने कहा— 'मेरे द्वारा पण्डित पूजन करवाते हैं— शुद्धि के सारे कार्य मेरे द्वारा होते हैं— यही नहीं आज जो मुसलमान भाई हिन्दू होना चाहते हैं, उन पर गंगा जल के दो छींटे दे कर मैं उन्हें धर्म में सम्मिलित होने में साथ देती हूं। वे मेरे इस उपकार को कभी नहीं भूल सकते।'

अब मुन्नी उंगली की बारी आई उससे पूछा गया— 'तुम कैसे बड़ी हो?' उसने कहा— 'मैं तुम सबसे अधिक धनवान् हूं— मैं दुलहिन की तरह सजी रहती हूं— तुम सबको मेरे भाग्य पर ईर्षा होती है, पर मैंने कहा न कि छोटी कहने से मैं छोटी नहीं, बल्कि सबसे बड़ी हूं— क्या मेरी महत्ता किसी को स्वीकार नहीं?' जब कोई निर्णय नहीं हुआ तो वे एक कवि के पास गई— कवि बोला— किसी को भी बड़ा नहीं कहा जा सकता। सभी अपने अपने स्थान पर श्रेष्ठ हैं। तुम सब समान हो। एक हो और एकता में ही सुख है। अलग अलग होकर तुम अपने कार्य कर न सकोगी, कवि की बात उंगलियों ने समझी और एकता का महत्व प्रत्यक्ष देखा घूंसे के रूप में।

—त्रिलोक कोटा।

जरा हंसिये

सेठ जी— बेटा राम! सरकार लिफाफे का दाम बढ़ा रही है।

रामू— पिता जी, दो हजार मन खरीद लीजिये, नफा हो जायगा।

× × ×

राम— मोहन! तुम्हारा कुत्ता रोज मुझे पांच बजे जगा दिया करता है, पर अब मैंने उसे लाचार कर दिया।

मोहन— कैसे?

राम—अब मैं चार बजे ही उठ जाया करता हूं।

× × ×

एक बार एक पण्डित जी किसी ग्राम में रामायण का पाठ सुनाने के लिए बुलाये गए। पंडित जी कथा सुनाते वक्त अपनी दाढ़ी हिला रहे थे। इस प्रकार दाढ़ी हिलाते देख एक गड़रिया रो रहा था। उसे रोते देख पंडित जी ने कथा रोकी और पूछा— तुम क्यों रोते हो?

गड़रिया— महाराज मेरा बकरा भी ठीक आपकी तरह दाढ़ी हिला हिला कर मर गया था।

× × ×

एक बीमार लड़का अपने बाप के बार-बार देने पर भी बुखार की गोलियां नहीं खाता था। इसलिए लड़के के बाप ने गोली पेड़े में रख कर खाने को दे दी। वह जब खा चुका तो उसके बाप ने पूछा— 'मिठाई खाली बेटा?'

लड़का तुरन्त बोल उठा— 'मिठाई तो खाली पर गुठली थूक दी।

—कृष्ण चौधरी

प्रीतमसिंह

'व्यापार मंत्रालय के चपरासी प्रीतमसिंह की मूछें दो गज लम्बी हैं, जिनको उसने ३० साल के निरन्तर प्रयत्न से बढ़ाया है उसका कहना है कि अगर आठ वर्ष पहिले उसके शरारती बच्चों ने उसकी मूछें दोनों ओर छः छः इंच न काट डाली होतीं तो अब तक उसकी मूछें पैर का अंगूठा छू लेतीं। उसकी हार्दिक इच्छा है कि उसकी मूछें सवा दो गज और बढ़ जायें लेकिन आयु अधिक होने के कारण वह अधिक आशावादी नहीं है। उसे दुःख है कि मूछों को बढ़ाने में सहायक घी असली और मक्खन उसे नहीं मिलता, जब वह फौज में था तो वह ऐसे व्यक्ति को टटोलता था जो उसकी मूछों की प्रतियोगिता में ठहर सके। किन्तु किसी को भी उसके आगे आने का साहस न हुआ। यद्यपि उसने कभी खिजाब जैसी कोई चीज मूछों पर नहीं लगाई। तथापि वे काली हैं। आज कल के मुंछ कटे फैशन से उसे सख्त नफरत है।

भाप के जहाज

भाप से लदे जहाज हजारों वर्षों तक हवा तथा ज्वारभाटा से गति प्राप्त कर पानी पर चला करते थे। किंतु आज से लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व रेलों में वाष्प का प्रयोग किया जाने लगा और कई आविष्कारक यह सोचने लगे कि जहाजों के लिये भी वाष्प का प्रयोग किस तरह किया जाए!

विलियम सिमिंग्टन नामक एक स्काटिश व्यक्ति ने, जो जमीन पर काम आने वाले वाष्प इंजन बनाया करता था, सोचा कि यदि वह जहाज में वाष्प इंजन लगा दे तो वातवस्त्र (पाल) की आवश्यकता पड़ेगी ही नहीं।

सिमिंग्टन के पास हेनरी बेल नामक एक कारीगर था जो वाष्प जहाजों में विश्वास करता था, और ऐसा एक जहाज बनाना चाहता था। कई वर्षों के बाद बहुत सा धन इकट्ठा कर लेने पर उसने स्काटलैंड में क्लाइड नदी पर एक जहाज बनाया, जिसका नाम कामेट रक्खा।

लेकिन लोग इससे बहुत डरे। उन्होंने कहा कि ये तो कोई भूत है, जो हवा और पानी के खिलाफ जा रहा है, और इससे आदमी को नुकसान के सिवा फायदा नहीं हो सकता।

इससे थोड़े समय पहले संयुक्त राज्य में राबर्ट फुल्टन नामक एक व्यक्ति इसी समस्या को सुलझाने की फिक्र में था।

तब वह इंग्लैंड आया और एक अच्छा इंजन बनाने में सफल हुआ इसे वह अमेरिका ले गया और अब इसके लिए एक जहाज बनाने लग गया। लोगों ने फुल्टन का मजाक उड़ाया लेकिन उसने किसी की पर्वाह नहीं की। बस, वह अपने काम में जुटा रहा। आखिर बोट बनी और पहली सफर के लिए तैयार हुई।

अब कई बन्दरगाहों में स्टीमर बनाये जाने लगे। कुछ स्टीमर लन्दन आये, लेकिन नाराज नाविकों ने जिन्हें इनके कारण जीविका की हानि का भय था, स्टीमरों का स्वागत नहीं किया। खैर १८१८ में एक स्टीमर स्काटलैंड में ग्लासगो से उत्तरी बेलफास्ट तक गया।

अमेरिका में लगभग इसी समय सवाना नामक जहाज के स्वामियों ने सोचा कि यदि हवा ने धोखा दे दिया तो वे एक वाष्प इंजन से काम लेंगे। यह प्रयोग सफल रहा,

किंतु सच्चे वाष्प जहाजों (अर्थात् ऐसे जहाज जिनमें पाल थे ही नहीं) द्वारा अटलांटिक को पार करना १८३८ की घटना है, उससे पहिले की नहीं। १८३८ में दो अंग्रेजी जहाज एक ही दिन न्यूयार्क में पहुंचे। इनके नाम थे सिरियस और ग्रेट वेस्टर्न। सिरियस काफी छोटा था और ग्रेट वेस्टन काफी बड़ा। छोटे ने, जो चार दिन पहले रवाना हुआ था, पूरी सफर में १८ दिन लगाये थे, और बड़े ने चौदह। जब कि वाष्प इंजन विहीन जहाज एक महीने का का समय मांगा करते थे।

क्या तुम जानते हो?

● ब्रिटेन की सड़कों पर संसार में सबसे अधिक भीड़-भीड़ रहती है। वहां प्रतिमील पीछे १६ गाड़ियां चलती हैं, जब कि अमेरिका में प्रतिमील पीछे केवल १२ गाड़ियां चलती हैं। ब्रिटेन में ३५ लाख गाड़ियां हैं। और यदि सब गाड़ियां एक बार चला दी जायें तो सड़कों पर वह एक-दूसरे से केवल ६० गज दूर होंगी।

(पृष्ठ ८ का शेष)

एक लसीले पदार्थ से आपस में जुड़े रहते । अण्डे से निकलते ही नये कीट अपनी विनाशकारी भूमिका आरम्भ कर देते हैं। पर निकलने के पूर्व भी नवजात कीट लम्बी से लम्बी यात्रा तीव्र गति के साथ कर सकते है पूर्णत्व को प्राप्त होने और पर निकलने के साथ साथ उनकी विनाशकारी शक्ति बहुत बढ़ जाती है। टिड्डियां लम्बी लम्बी दूरी तय करती हैं। कभी कभी १००० मील से भी दूर तक उड़ कर जाती हैं। साधारणतया इन का एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना शने शने होता है। फलस्वरूप इनके द्वारा विनाश की मात्रा भी भारी होती है। जब कोई विशाल टिड्डी दल किसी क्षेत्र पर हमला करता है तो वहां वनस्पति का नाम निशान नहा रहता। तब भी भूख से व्याकुल ये दल और आगे बढ़ते हैं। टिड्डियां यद्यपि वनस्पति भोजी होती हैं लेकिन भूखसे परेशान हो कर किस भी तरह का भोजन न पाने की हालत में कभी कभी वे नरमांस भक्षी भी हो जाती है। टिड्डी दल की उड़ान के समय भूमि से ऊंचाई के बारे में बताया जाता है कि यदि रास्ते में कोई पहाड़ न आये तो यह ऊंचाई ४० फुट से २०० फुट तक होती है। कभी कभी टिड्डी दल इतना विशाल होता है कि सूरज तक इससे छिप जाता है और उनके पङ्खों के रगड़ की आवाज कान फाड़ने वाली होती है। इन दिनों जो टिड्डी दल भारत मे घूमरहे हैं, उनमें से जो हिस्सा जबलपुर की तरफ गया था उसके, बारे में बताया जाता है कि टिड्डियो के समूह की लम्बाई चौड़ाई ३ ४ मील थी और उसके बीच से गुजरने में रेलगाड़ी को १० मिनट से अधिक समय लगा। इनकी संख्या के बारे में कुछ अन्दाजा निम्नलिखित आंकड़ों से हो सकता है। १८८१ में साइप्रस द्वीप में ऐसे १ अरब ६० करोड़ अण्डेवाली नलियां नष्ट की गयी थीं जिनमें एक एक में बहुत अण्डे थे। इन अण्डों का अनुमानित वजन १३०० टन था। फिर भी दो वर्ष बाद उसी द्वीप में ५ अरब अण्डों वाली नलियां पायी गयीं।

दक्षिण पूर्व अरब में १९४८ के अन्त में असाधारण अवस्था में वर्षा के फलस्वरूप टिड्डीदल पैदा हुआ। धीरे धीरे यह दल ओमान और अदन की ओर बढ़ा और भारत पाकिस्तान की सीमा तक पहुंच गया। इस वर्ष के आरम्भ में सउदी अरब, भारत, अदन, ब्रिटिश सोमालीलैंड, पाकिस्तान, फारस के तटों पर बड़ी संख्या में टिड्डियों के अण्डे देने के समाचार प्राप्त हुए थे। इन सबों में टिड्डी दल की बाढ़ को रोकने के लिए बड़े पैमाने पर निरोधात्मक कार्रवाई की गयी, लेकिन टिड्डियों ने इतनी अधिक संख्या में अण्डे दिये थे कि पूरी सतर्कता के साथ नियन्त्रण व्यवस्था करने के बाद जूद उन्हें पूर्णतया नष्ट नहीं किया जा सका।

विशेषज्ञों का कहना है कि अभी जो जो टिड्डियां देश में घूम रही हैं वे पूर्ण वयस्क नहीं हैं। पूर्ण वयस्क होने पर इन की संहारी शक्ति और बढ़ जायगी। इस लिये अभी महीने डेढ़ महीने में इनसे और खतरा बढ़ जायेगा।

मनुष्य के अलावा टिड्डियों के अन्य शत्रु भी हैं। कुछ पक्षी उन्हें बड़े चाव से खा जाते हैं। कभी-कभी ऐसा देखा गया है कि टिड्डी दल के पीछे शिकारी पक्षियों का दल भी उन्हें खतम करता चलता है। उनका सबसे खतरनाक शत्रु दूसरों पर पलने वाला (परजीवी) एक कीटाणु होता है जो टिड्डियों के अण्डों को अपना भोजन बनाता है।

कुछ जंगली और अर्धजंगली जातियों ने उन्हें अपने भोजन में भी स्थान दे रखा है और वे इसे सुस्वादु खाद्य पदार्थ समझते हैं।

कोरिया में राजनैतिक संघर्ष

[पृष्ठ ९ का शेष]

सुझाव दिया और इसकी जांच नहीं की जा सकी कि वास्तव में उत्तरी कोरिया से रूसी सेनाएं हटाई भी गई हे या नहीं जब कि जून १९४९ में अमेरिकी सेनाएं कोरिया से हट गई और उन्होंने वहां का समस्त शासनभार नवीन कोरिया जनतन्त्र के सुपुर्द कर दिया। कोरियाई सरकार की प्रार्थना पर एक अमेरिकी सलाहकार मंडल अवश्य वहा रह गया।

राष्ट्र-संघ के १९४९ के नियमित अधिवेशन में कोरिया का प्रश्न फिर उठाया गया, जिस में राष्ट्र संघीय आयोग ने रूस को बाधाओं का विशद उल्लेख किया और यह स्पष्ट कर दिया कि राष्ट्रसंघ के कार्यों मे रूस बराबर बाधा डाल रहा है। इस स्थिति में कमीशन को नाम मात्र की सफलता मिली है। कमीशन ने उत्तरी कोरिया द्वारा किए जा रहे रेडियो तथा अन्य प्रकार के प्रचार का भी उल्लेख किया। और बताया कि उत्तरी कोरिया की एकीकरण को अपील उसके कार्यों द्वारा थोथी सिद्ध होती है। राष्ट्र संघ ने कमीशन को भंग करने की रूसी मांग को ठुकरा दिया।

कमीशन ने बताया था कि सीमावर्ती प्रदेश का प्रेक्षण करने से यह पता चला है कि १९४९ मे उत्तर की ओर से ३६ हमले और इस वर्ष के मार्च तक १३ हमले हुए हैं।

निराश्रित महिलाओं का आश्रय

[पृष्ठ १० का शेष]

लिए उत्सुक हैं, विभिन्न चिकित्सालयों में दाइयों के कार्य की शिक्षा दी जा रही है। मैट्रिक की शिक्षा प्राप्त कुछ महिलाएं महिला स्वास्थ्य निरीक्षकों के रूप में प्रशिक्षित की जा रही हैं।

शिशुओं की शिक्षा

इस आश्रम में शिशुओं की शिक्षा का काम भी उचित प्रबन्ध है। पांच वर्ष से छोटे बच्चों के लिये शिशुगृहों और पोषण शालाओं की व्यवस्था की गई है। यहा पर उन शिशुओं को, जिनके माता पिता नहीं हैं, जिनकी माताएं व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों में व्यस्त रहती हैं या काम पर बाहर जाती हैं उचित देखभाल होती है। शिक्षा बोर्ड की ओर से इस आश्रम में एक मिडिल स्कूल खोला गया है जहा बालक और बालिकाएं प्रकृति की गोद में, आमों के वृक्षों तले, उन अध्यापकों से जो प्राय स्वयं भी विस्थापित हैं, शिक्षा प्राप्त करते हैं। छात्रों को किताबें तथा अन्य सामग्री आश्रम के अधिकारियों की ओर से मुफ्त दी जाती है।

वयस्क शिक्षा

अगस्त १९४९ में इन पाठशालाओं के अतिरिक्त आश्रम में वयस्क शिक्षण श्रेणियां भी खोली गई थी। क्योंकि यह अनुभव किया गया था कि प्रभावोत्पादक व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिये लिखने पढ़ने और साधारण गणित का ज्ञान आवश्यक है। यह अत्यन्त उत्साहवर्धक बात है कि आश्रम की सब अशिक्षित महिलाएं अब इन श्रेणियों में शिक्षा ले रही हैं।

परिश्रम महान औषधि

ऐसे आश्रमों की सफलता स्टाफ की सहानुभूति दक्षता और मानवीय योग्यता पर निर्भर है। बहुधा आश्रमवासी न केवल शारीरिक रूप से विस्थापित थे, वरन् सर्वस्व लुट जाने पर उनका मन भी अस्थिर हो गया था। जब वे सर्व प्रथम आश्रम में आए थे, तो उनके चेहरों से दुख दर्द के स्पष्ट चिन्ह दृष्टिगोचर होते थे। आज मैंने उनके पिछले दुखों के बावजूद उनके मुखों पर आशा की किरण देखी। जब मैं वापिस आ रहा था तो कैम्प की अधिष्ठात्री ने कहा 'उनका भविष्य उज्ज्वल है वे अब पिछली बातों को कभी नहीं याद करते।'

समय भी तो पुराने घावों के लिये एक रामबाण औषधि है। मैंने उत्तर दिया 'ठीक है' उन्होंने कहा, 'परन्तु परिश्रम, से ही यह अद्भुत सफलता मिली है। परिश्रम समय से भी महान औषधि है।

देश-विदेश का घटना चक्र

अमेरिका द्वारा प्रत्यक्ष रूप से युद्ध में भाग लेने तथा अन्य राष्ट्र मंडलीय देशों द्वारा दक्षिणी कोरिया को पूरी-पूरी सहायता देने की घोषणा कर देने के कारण कोरिया युद्ध की भयंकरता दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। अमेरिका ने जनरल मैकआर्थर को उत्तरी कोरिया पर बमबारी और घेरा डालने का अधिकार दे दिया है। अमेरिका ने यह भी धमकी दी है कि यदि उत्तरी कोरिया युद्ध समाप्त नहीं करता तो अणुबम का प्रयोग भी किया जायेगा। अमेरिका तथा मित्रराष्ट्रों की उक्त घोषणा के पश्चात् आस्ट्रेलिया ने अपने दो युद्ध पोत और आकलैंड ने अपने दो जंगी जहाज प्रदान अमेरिका को किए हैं। आस्ट्रेलिया ने अपनी सुरक्षा योजनाओं में भारी परिवर्तन करने के लिए अनिवार्य सैनिक प्रशिक्षण भी प्रारम्भ कर दिया है। भारत सरकार ने भी दक्षिणी कोरिया को सहायता देने के औचित्य को स्वीकार किया है, किन्तु किसी प्रकार की ठोस सहायता देने में असमर्थता प्रकट की है।

उत्तरी कोरिया की सेनाएं सीओल के दक्षिण पश्चिम का प्रतिरोध बन्द करके आगे बढ़ गई हैं, तथा ४०-५० बख्तर बन्द गाड़ियों के साथ हान नदी को पार कर लिया है। सिओल पर साम्यवादियों की तोपों ने एक अमेरिकी 'जेट' वायुयान को गिरा दिया है। हान नदी के दक्षिणी तट पर घोर युद्ध हो रहा है। जापान के गुप्त अड्डों से आकर अमेरिकी टुकड़ियां युद्ध में सहयोग दे रहीं हैं।

उत्तरी कोरिया की सेनाओं ने ३५ टैंकों के साथ आक्रमण कर सुओन पर अधिकार कर लिया था, किन्तु अमेरिकी सेनाओं ने सैनिक स्थलों पर और हान नदी के पुल पर बमबारी कर सिओल को पुनः अपने अधिकार में ले लिया! इसके पश्चात् अमेरिका ने अपनी नभ-युद्ध की कार्यवाही को और अधिक तीव्र कर दिया है। अमेरिका के 'बी २९' वायुयानों ने हान नदी के आस पास सिओल के पूर्व और पश्चिम में मार्गों और सैनिक जमावों पर बमबारी की तथा दक्षिण की ओर बढ़ते हुए उत्तरी कोरिया के टैंकों और काफिलों पर हमला किया।

इधर साम्यवादी सेनायें सिओल के ३५ मील दक्षिण पूर्व में समुद्र तट पर स्थित इंचन नगर की बाह्य बस्तियों तक पहुंच गई थीं, किन्तु अमेरिका के जेट विमानों द्वारा तीव्र प्रतिरोध किये जाने के कारण, उत्तरी कोरिया को सफलता नहीं मिल सकी। इसीलिये उत्तरी कोरिया की सेनाओं ने अपने आक्रमण की दिशा परिवर्तित कर दी है तथा सुओन पर स्थित अमेरिकी सेनाओं से लोहा लेने की बजाय अगल बगल से घेरने का प्रयत्न कर रही हैं। उत्तरी कोरिया की सेनाओं ने कंग्यो यांगयुंग कुंग और किंगजियो पर भी अधिकार कर लिया है और वोनजू की तरफ बढ़ रही हैं। ब्रिटेश और अमरीकी जहाजों ने दक्षिण के पूर्वी तट पर साम्यवादियों की ६ मोटर तारपीडो नावों से लड़ाई करके ५ नावें डुबा दी हैं। अमरीकी वायुयानों ने उत्तरी कोरिया की राजधानी प्योंगयांग पर भी बमबारी की है।

दक्षिण की ओर हुये साम्यवादियों के आकस्मिक आक्रमण के फलस्वरूप दक्षिणी कोरिया की सेना को सुओन से पलायन करने पर बाध्य होना पड़ा। उत्तरी कोरिया के २५००० साम्यवादी सैनिक इस नगर को अपने चंगुल में जकड़ते हुये तीव्र गति से दक्षिण की ओर बढ़ गये हैं। सुओन के हाथ से निकल जाने के कारण अमरीकियों को बड़ी भारी क्षति पहुंची है, क्योंकि वैमानिक कार्यवाही की दृष्टि से यह स्थान बहुत महत्वपूर्ण था। ब्रिटेन और अमेरिका की संयुक्त जल सेना की विमान वाहक टुकड़ी ने उत्तरी कोरिया के सैनिक अड्डों पर बम गिराये। साम्यवादियों ने दक्षिणी कोरिया की रक्षक सेना को ओसान के उत्तर की ओर ढकेल दिया है। उत्तरी कोरिया की सेनाओं ने इंचीन पर भी अधिकार कर लिया है तथा द्रुत गति से आगे बढ़ रही हैं।

वनमहोत्सव

समस्त देश में व्यापक रूप से वन-महोत्सव सप्ताह बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा है। राज्यों के प्रधानमंत्रियों, राजपालों तथा रियासती संघों के उच्चाधिकारियों ने विविध स्थानों पर इस महोत्सव का उद्घाटन कर जनता का उत्साह बढ़ाया। वृक्षारोपण का कार्य वेदमंत्रों के उच्चारण के साथ सब राज्यों में प्रारम्भ हुआ। मद्रास राज्य में ४० लाख से भी अधिक वृक्ष लगाये जाने की योजना है, जो कि अन्य राज्यों की अपेक्षा सर्वाधिक है। जनता के विविध वर्गों ने भी इस महत्वपूर्ण कार्य में पूरा २ सहयोग दे दिया है।

गाण्डीव के तीर

हमारा काम अपने देश के रचनात्मक कार्य को पूरा करना है, न कि युद्ध में पड़ कर हानि उठाना।

—विंशिस्की

जय हो श्रीमान की रचनात्मक वाणी की।
देनी पड़ी बुनाई जब, घटा बताया सूत।

× × ×

भारत सरकार पाकिस्तान के विरुद्ध बोलने वालों का मुंह बन्द करें।

—लियाकतअली

यहां किसको हिम्मत है मियां आपकी शान में बोलने की। कहीं कुएं की आवाज के प्रत्युत्तर से तो नहीं चौंक गये।

× × ×

पाकिस्तान का विधान एक साल में तैयार हो जायगा।

—पाकिस्तान सरकार

इतने दिन यदि चाहो तो भारत के बने बनाये विधान का उल्था करके काम चला लो।

× × ×

भारतीय जनता अब वनों का उत्पादन न करके वृक्षों का करे।

—कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

हां, फिर कुछ दिन बाद उन पेड़ों पर चढ़ाने के लिए बन्दरों की जरूरत पड़ सकती है। महिला मंडल मुंशी जी की योजना में कहां तक सहयोग देने को तैयार है, इसका पता शायद डा० अम्बेदकर को कुछ हो, तो हो।

× × ×

गुड़गांवा — दिल्ली रोड पर भूखे भूमिगत चूहे सरकारके टेलीफोन के तारों को कुतरते हैं।

—भारत सरकार

तार बचाने का सरल उपाय यह है कि गुड़गांवा के सारे भूखे चूहों को सरकार अपनी स्थगित की हुई योजनाओं की अलमारियों के हवाले कर दे। तार बच जायेंगे। रद्दी से चूहों का भला हो जायगा। क्या विचार है?

× × ×

गान्धी जी के सिद्धांत से ही विश्वयुद्ध रोका जा सकता है।

—डा० राजेन्द्रप्रसाद

चुनाव युद्ध पर भी यदि यही सिद्धान्त कारगर हो सके तो घर के हंडेवालों को भी बता दीजिये।

× × ×

भारत, कोरिया युद्ध के लिये अपने सिपाही नहीं दे सकता।

—भारत सरकार

लड़ने के बजाय यदि भाषण के लिए नेताओं की आवश्यकता हो तो हमारे समाजवादी भाई आजकल खाली ही हैं।

× × ×

बिहारके स्वास्थ्य मन्त्री जगलाल की पुत्र वधू के दहेज के गहने चोर ले गये।

—एक समाचार

ऐसा मालूम होता है कि बिहार के चोर दहेज विरोधी आन्दोलन शुरू करने जा रहे हैं।

× × ×

ढाकाके एक मंदिर की देवी की स्थापना कलकत्ते में स्थापना मकान की तलाश हो रही है। —एक शीर्षक

और कोई जगह न मिले तो भारत सरकार के पुनर्वास विभाग का एक कमरा शरणार्थी देवी को दे दिया जाय। कम से कम निराश लौटने वाले शरणार्थी अपनी शरणार्थिनी देवी को देख कर कुछ तो दिल ठंडा कर लिया करेंगे।

× × ×

उत्तरी कोरिया पर परमाणु बम गिरा दिया जाय।

—अमेरिकन सिनेटर

जुकाम होने पर नाक काट दें। इस सत्य वाणी पर विचार करके यदि १-२ और बच जायें तो कोरियासे ४ कदम और आगे बढ़ कर उन्हें वहां गिरा दीजिये।

× × ×

कोरिया के मामले पर बर्मा सरकार का विचार विमर्श जारी है।

—प्रे० ट्र०

वह जब तक जारी रहे, तब तक युद्ध चलता रहे।

× × ×

मुरादाबादी घंटों की अमेरिका में मांग बढ़ रही है।

—एक समाचार

मार्शल योजना में यह घंटे अनुगत देशों को दिये जायेंगे, ताकि योजना का लाभ उठाते रहें और खतरे के घंटे बजाते रहें।

× × ×

पूर्वी बंगाल से हिन्दुओं का प्रवाह फिर तेज हो रहा है।

सरकार में प्रवाह तो तेज बहना ही था, डर तो अब यह है कि कहीं बाढ़ न आने लगे।

× × ×

इंडोनेशिया का ज्वालामुखी काक-ताऊ २००० फिट ऊंचा कीचड़ और पत्थर फेंक रहा है।

—एक समाचार

कोरिया युद्ध के लिए अमेरिकन सरकार इस ताऊ को क्यों नहीं खरीद लेती है।

× × ×

दिल्ली कांग्रेस पर वामपक्षी और साम्यवादी लोगों का कब्जा होता जा रहा है।

—एक पत्र

दक्षिण पक्षी तो श्रीमान जी पहले ही खाने कमाने के तालाबों के किनारे लग गये।

[पृष्ठ ६ का शेष]

लाकी फीस नहीं दे सकता, तो उसे सरकार या जिले की शासन समिति की मदद मांगने की जरूरत नहीं होती, प्रार्थना-गृह का मुखिया उसके लिए इकट्ठे हुए समाज से पैसा इकट्ठा कर देता है। मोटे तौर पर उन लोगों को बुद्धिमान लोगों के रूप में प्रसिद्ध है।

युद्ध काल में अधिकांश आमिश युवकों की गिनती धर्म के नाम पर युद्ध विरोधियों में हुई थी। केवल तीन चार युवक सेना में भरती हुए थे, सो भी अपने मा बाप की मरजी के खिलाफ।

वे भविष्य का मुकाबला अपनी शांत सुप्रतिष्ठ जीवन दृष्टि से—जो हमेशा उनकी विलक्षण विशेषता रही है—करने के लिए तैयार हैं। भगवान में उनका विश्वास है और वे जानते हैं कि वह उन्हें उनका योग्य सेवक बनने में मदद करेगा।

चित्र परिचय

प्रथम पृष्ठ का चित्र पंजाब सरकार द्वारा संचालित महिलाश्रम की देवियों का है आश्रम के परिचय के लिये पृष्ठ १० देखियें।

[पृष्ठ २३ का शेष]

सम्बन्धी पिछले परदे सजावटी सामान और अन्य आवश्यक चीजें एक चलते-फिरते चबूतरे अथवा मंच पर रख दी जाती हैं। ये सब चीजें स्टुडियो के बाहर की ओर एक कारखाने में तैयार की जाती है, जिससे खड़खड़ाहट और हथौड़ों की चोटें, दृश्य लेते समय, बाधा न डाल सकें। ऐसे चबूतरे हरएक दृश्य के पूर्व और पश्चात् लोड किये जाते है और वहां जरासी जगह भी बेकार नहीं मिलती।

इस नवीन ढंग द्वारा ब्रिटिश फिल्मों में एक तिहाई समय, ६० प्रतिशत निर्माण सामग्री और बिजली आदि की बचत हो जाती है। इसी लिये वहां फिल्म निर्माण की संख्या अधिक हो जायेगी।

(हरिजन सेवक से)

साप्ताहिक वीरअर्जुन का शुल्क

वार्षिक	१२)
अर्धवार्षिक	६।।)
एक प्रति	चार आना

ये आत्महत्यायें कब तक होती रहेंगी

[पृष्ठ १२ का शेष]

पेट भरते हैं, जिनकी नजर घुमाते हीं कठ पुतलियों के समान नौकर नाचते हैं और जिनको बने बनाये आलीशान मकान यू ही मिल जाते हैं, वे क्या जाने कि कुटुम्ब का पालन करने में कितनी कठिनाइयां होती हैं। बांझ स्त्री को क्या मालूम कि प्रसव में कितना दर्द होता है।

आत्महत्याओं के पीछे हमारे देश की आर्थिक तंगी का चित्रण है, पर उस की उपेक्षा की जाती है। यों तो अनेकों आत्महत्यायें होती होंगी। किन्तु बहुत सी प्रकाश में नहीं आ पाती। हां, शहरों की आत्महत्यायें अखबारों के सवाददाताओं की कृपा से हमें पढ़ने को मिल जाता है।

आत्महत्यायें कैसे बन्द हों—यह एक विचारणीय प्रश्न है, जिस पर सरकार को तथा समाज को गम्भीरता के साथ विचार करना होगा। देखने में आता है कि बहुत सी नवजवान लड़कियां आत्म हत्या कर लेती हैं, क्योंकि उनके माता पिता के पास इतना धन नहीं होता कि वे किसी अच्छे घर उनका में विवाह कर दें। दहेज प्रथा की बलिवेदी पर न जाने कितनी युवतियों ने अपने प्राण चढ़ाये होंगे ?

भारत स्वतन्त्र हुआ है और उस पर अनेकों जिम्मेवारियां भी आ पड़ी हैं। उन सबको सरकार अकेले ही नहीं सुलझा सकती। इसके लिए जनता का सहयोग भी बहुत जरूरी है। जो लोग यह सोचते हों कि आत्महत्या करने से सब ठीक हो जाता है, बिलकुल गलत ख्याल करते हैं, बल्कि उल्टे उसके परिवार वालों को बहुत कष्ट सहना पड़ता है। यादा की खबर है वहां पर एक बंगाली युवक ने, जो कि दियासलाई के एक कारखाने का मैनेजर था कर्ज से तंग आ कर आत्म हत्या कर ली। उसके साथ बच्चे था और पत्नी भी। अब बताइये कि उस मैनेजर की पत्नी व बच्चों का क्या होगा ? आत्महत्या करने वाले व्यक्ति कायर होते हैं उन्हें तो जीवन में संग्राम करना चाहिये। कायरता व बुजदिली को जीवन में बिलकुल स्थान न दें।

देश के धनी मानी व्यक्तियों को चाहिये कि वे मानवता की दृष्टि से सोचें तथा अगर कोई उनके पास जरूरत का मारा आ जाय तो उसे अवश्य सहायता दें। सरकार को भी इस सम्बन्ध में कोई उत्साहवर्द्धक कदम उठाना चाहिये। आज देश में जो बढ़ती हुई महगाई है, उसे रोकने में भी अगर हम कामयाब हो गये तो आत्महत्याओं की वृद्धि में निश्चित ही कमी हो जायेगी।

विविध चित्रावलि

ब्रिटेन के फायर स्टेशन अपनी कार्यक्षमता तथा तत्परता के लिए आदर्श हैं। प्रस्तुत चित्र में ब्रिटिश फायर स्टेशन के दो कर्मचारी खड़े हैं।

अमेरिका की केन्द्रीय मोटर समिति तथा इस क्षेत्र में काम करने वाले कर्मचारियों के मध्य एक पंचवर्षीय समझौता हुआ है, जिसके अनुसार २५०००० व्यक्तियों के जीवनस्तर में वृद्धि होगी। चित्र में कुछ सम्बद्ध कर्मचारी प्रसन्नमुद्रा में खड़े हैं।

अमेरिका की वायुसेना तथा नौसेना के ६० हजार कर्मचारी एक विशेष योजना के अन्तर्गत नये युद्ध मोर्चों का परीक्षण कर रहे हैं। उक्त सेना के २००० व्यक्ति हवाई छतरी से क्रियापर उतर रहे हैं।

फ्लोरेंस में होने वाली यूनेस्को सम्मेलन के लिए ब्रिटिश प्रतिनिधि मण्डल में अफ्रीकन बैरिस्टर निलआम ओस्लेनो को सम्मिलित किया गया है।

पं० दुर्गाप्रसाद शर्मा, मुद्रक व प्रकाशक ने श्रद्धानन्द पब्लिकेशन्स लि० के लिए 'अर्जुन प्रेस' श्रद्धानन्द बाजार, देहली से छपवा कर प्रकाशित किया।
सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

वीर अर्जुन

साप्ताहिक

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७]   दिल्ली, रविवार ५ श्रावण सम्वत् २००७   [अङ्क १३

कांग्रेस को ऊंचे नेतृत्व की आवश्यकता

कांग्रेस कार्य समिति ने आखिर कांग्रेस के आगामी अधिवेशन की निश्चित तिथियां निर्धारित कर दीं। यह अधिवेशन गत दिसम्बर में होना चाहिए था, पर एक या दूसरे कारण से यह अधिवेशन पूरे नौ मास टल गया। यही गनीमत है कि दूसरा वर्ष बीतने से पूर्व ही यह अधिवेशन हो गया। किसी संस्था में कितना जीवन है और देश उसका कितना महत्त्व समझता है, यह उसके अधिवेशनों की नियमितता से कुछ जाना जा सकता है। कांग्रेस अधिवेशन का नौ मास तक न होना ही यह बताता है कि इसके बिना भी कोई कार्य नहीं रुका। कांग्रेस के अधिवेशन तो पहले भी रुके थे, परन्तु उस समय ब्रिटिश सरकार से संघर्ष उसका कारण था। आज वैसा भी कोई कारण नहीं है। यह देरी संस्था का अपना दोष है।

कांग्रेस का सबसे बड़ा दोष उसकी आन्तरिक शिथिलता है। आज उसके सदस्य आपस में लड़ने झगड़ने लगे हैं। कांग्रेस पंचायतों के चुनावों में जितनी गन्दगी प्रकट हुई है, उससे संस्था का गौरव नष्ट हो गया है। कांग्रेसी कभी इतनी ओछी और कमीनी करतूतों पर उतर आवेंगे, इसकी सम्भावना भी किसी ने न की थी। ये चुनाव कांग्रेसियों की अपनी कर्तव्यहीनता, चरित्र की कमी तथा स्वार्थपरता के प्रमाण हैं।

पर कांग्रेस इतना नीचे क्यों गिर गई? क्यों वह अपने उस गौरव को कायम न रख सकी, जिसकी प्रतिष्ठा के लिए हजारों ज्ञात या अज्ञात स्वयंसेवकों ने अपने जीवन को बलि दे दी, और दादाभाई नौरोजी से लेकर महात्मा गांधी तक देश नेताओं ने अपने जीवन को अर्पित कर दिया। क्यों वह कांग्रेसी, जो कल देश के स्वातन्त्र्य-संग्राम में हंसता-हंसता लाठी खाता था, जेल जाता था, और अपना सर्वस्व त्याग देने को उद्यत रहता था, आज निरा स्वार्थी हो गया है। वह देव से दानव कैसे बन गया है!

वर्तमान शोचनीय स्थिति के अनेक कारण हो सकते हैं, किन्तु हमारी नम्र सम्मति में निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं—(१) स्वातन्त्र्यसंग्राम में हमारा पशुत्व नष्ट नहीं हो गया था। महात्मा गांधी के असाधारण व्यक्तित्व से वह कुछ समय के लिए केवल सो गया था। (२) महात्मा गांधी के परामर्श का घोर तिरस्कार कर के भी कांग्रेसी नेताओं ने कांग्रेस को केवल जनसेवा के क्षेत्र तक सीमित नहीं किया, और (३) कांग्रेस सरकार का नियन्त्रण करने वाली संस्था न रही, परन्तु स्वयं अपना आदर्श भूल कर सरकार द्वारा सञ्चालित होने लगी। इसका एक परिणाम यह हुआ कि कांग्रेस सरकारी कुर्सियों तक पहुंचने के लिए अथवा सरकार से अनुचित लाभ उठाने की एक सीढ़ी मात्र बन गई। यही कारण है कि कांग्रेस जिस दलबन्दी का शिकार बनी, उसका आधार कोई सिद्धान्त न हो कर लोगों की निजी महत्त्वकांक्षा मात्र बन गया। यह स्थिति किसी जनतन्त्र संस्था के लिए अत्यन्त हानिकर है। कांग्रेस की इसी दलबन्दी या स्वार्थी लोगों के कांग्रेस पर प्रभुत्व के कारण श्री मशरूवाला जैसे शांत विचारक भी ऐसी कांग्रेस को तोड़ने की वांछनीयता प्रकट करने लगे हैं।

अब कांग्रेस का आगामी अधिवेशन करीब दो मास बाद होगा, किन्तु उसके अध्यक्ष का चुनाव आगामी मास अगस्त में ही हो जायगा। कांग्रेस अध्यक्ष की पहले जो स्थिति थी, वह आज नहीं रही। कुछ परिस्थितियों का अन्तर है और कुछ हमारे नेताओं का। आचार्य कृपलानी ने अपने अध्यक्ष काल में यह अनुभव कर लिया था कि सत्तारूढ़ मन्त्रिमण्डल कांग्रेस अध्यक्ष का आदर नहीं करता, उसके परामर्शों की उपेक्षा करता है। इस स्थिति को सहन न करके उन्होंने त्यागपत्र दे दिया था। डा० पट्टाभि सीतारामैया को मन्त्रीमण्डल का समर्थन इसीलिए प्राप्त हुआ था कि वे उसके अनुयायी बनने को तैयार हो गये। वे अपने पौने दो वर्षों के अध्यक्षकाल में कहीं भी सरकार पर जनता की इच्छा को प्रभावकारी रूप में प्रकट न कर सके। वे केवल सरकारी मशीनरी के ग्रामोफोन बने रहे। इस कारण कांग्रेस का प्रभाव लगातार कम होता गया। आज कांग्रेस को ऐसे अध्यक्ष की आवश्कता है, जो सचमुच जनता का तेजस्वी प्रतिनिधि हो, जिसका व्यक्तित्व सन्देह-कोटि से ऊंचा हो और जो एक ओर सरकार पर प्रभाव डाल सके, दूसरी ओर कांग्रेस को स्वार्थ व भ्रष्टाचार से शुद्ध कर सके। क्या कोई ऐसी श्रेष्ठ विभूति कांग्रेस को नेतृत्व के लिए मिल सकेगी?

विश्व किस ओर?

"यदि रूस की तरफ से हमला हो तो पश्चिमी देशों को ऐसे परमाणु एवं कृमिबम तैयार रखने चाहिए, जिनसे रूस का हमला होने के कुछ घंटों के भीतर ही मास्को, लेनिनग्राड, कीव और ओडेसा के कारखाने तथा नीपर बांध आदि पूर्णतया ध्वस्त हो जायं, तथा यूक्रेन, साइबीरिया में हजारों मील तक अनाज की फसल में आग लग जाय। इस तरह कुछ ही घंटों में समस्त रूस को नष्ट कर देना चाहिये।" यह वाक्य किसी पागल का प्रलाप नहीं है। यह है उस समिति की रिपोर्ट का सारांश, जो समिति यूरोपीय समस्याओं का अध्ययन करने के लिए नियत की गई थी। इसका अर्थ यह है कि इंगलैंड व फ्रांस के राजनीतिज्ञ आज इस दिशा में सोचने लगे हैं। अनेक अमेरिकन राजनीतिज्ञों ने उत्तरी कोरिया पर परमाणु बम गिराने की भी सम्मति दी है। जो विचार आज हमारे मस्तिष्क में आता है, वह कल क्रिया में भी परिणत हो कर रहता है। विश्व किस ओर जा रहा है, ये विचार उसकी सूचना भर देते हैं।

गाँधीवाद से समन्वय

समाजवाद का नया विचार रूस से भारत आया हुआ है। जिस तरह आज से कुछ दशक पूर्व हमारे विचारक इंगलैंड की विचार-धाराओं के भक्त बन गये थे, उसी तरह समाजवादी भी इस पाश्चात्य विचारधारा के अंध भक्त बन गये हैं। उनका देवता मार्क्स है और मार्क्सवाद के प्रचार में वे इतने मस्त हो जाते हैं कि भारतीय वातावरण और भारतीय संस्कृति तक को भूल जाते हैं। श्री जयप्रकाशनारायण ने समाजवादी दल के मद्रास-अधिवेशन में अपनी भूल को समझा है और मुक्तकण्ठ से यह स्वीकार किया है कि भारत में समाजवादी आंदोलन की आधारभूमि मार्क्सवाद और गांधीवाद का समन्वय है। वे कहते हैं कि गांधीवाद जहर नहीं है, वरन् भारत में वह ऐसी महान् निधि है, जिसे समाजवादी आन्दोलन न केवल आज, प्रत्युत सदा प्रेरणा और पथप्रदर्शन प्राप्त करता रहेगा। यहां न हम गांधीवाद की प्रशंसा करना चाहते हैं और न समाजवाद की निन्दा। हमारा तो उद्देश्य यह है कि यदि हम भारतीय परिस्थिति, भारतीय परम्परा और भारतीय दृष्टिकोण पर ध्यान दें, तो देश को अधिक सुगमता से उन्नति की ओर ले जा सकते हैं। भारतीय वातावरण में भारतीय संस्कृति सरलता से पनप सकती है।

नागरिकों के अधिकार

बम्बई हाईकोर्ट ने श्री भोपतकर, श्री केतकर आदि अनेक नजरबन्द हिंदूसभावादी नेताओं को एकदम रिहा करने का आदेश दिया है। उन्हें गत अप्रैल मास में सरकार ने इस संदेह में नजरबंद किया था कि उनके बाहर रहने से सांप्रदायिक अशांति की संभावना है। हाईकोर्ट ने इसे किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता में बाधा डालने का पर्याप्त कारण नहीं समझा और उनकी रिहाई का आदेश दे दिया है। कुछ कम्यूनिस्ट नजरबन्द भी रिहा किये गये हैं। अभी सरकारी अधिकारी यह नहीं समझे हैं कि नागरिकों के अधिकार क्या हैं और सरकार को उनके अधिकारों की रक्षा करनी चाहिये। यदि सरकार को देश के नागरिकों के मूलभूत अधिकारों पर कुठाराघात करने दिया जाय, तो फिर देश में एकदलीय सत्तावाद को आने से रोकना कठिन हो जायगा। उच्चतम न्यायालय और अनेक राज्यों के न्यायालयों के ऐसे निर्णय करते देख कर हमें संविधान परिषद् के उन सदस्यों का कृतज्ञ होना चाहिये, जो नागरिकों के अधिकारों का संविधान में समावेश करने के लिए लड़े थे।

जले पर नमक

ब्रिटिश फील्ड मार्शल स्लिम ने एक पत्रकार सम्मेलन में परामर्श दिया है कि भारत व पाकिस्तान में संयुक्त प्रतिरक्षा कौंसिल का निर्माण किया जाय। विश्व-युद्ध की दशा में भारत व पाकिस्तान को सर्व प्रथम एक दूसरे की सहायता करने का समझौता कर लेना होगा। हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि उनका यह परामर्श युक्तियुक्त है। दोनों देशों को केवल प्रतिरक्षा ही नहीं, व्यापार, मुद्रा और रेलवे यातायात आदि भी कर लेना चाहिए, क्योंकि वस्तुतः दोनों देश एक हैं। उन को खण्डित करना ही भीषण भूल थी, पर आज की परिस्थिति का वस्तुतः उत्तरदायी कौन है? ब्रिटेन ने ही भारत व पाकिस्तान के रूप में देश का विभाजन किया था। उसका उद्देश्य अंग्रेजों का निरा स्वार्थ था। आज आकर अंग्रेज हमें उपदेश दें यह कुछ खटकता है। उन के ऐसे उपदेश जले पर नमक का काम देते हैं।

चित्र परिचय

शिशु को स्तन्यपान करने की मुद्रा में एक माता का चित्र मुख पृष्ठ पर दिया गया है। यह भुवनेश्वर के मन्दिरों में निहित एक मूर्ति की प्रतिलिपि है।

●

कोरियां युद्ध में कौन जीतेगा ?

अमरीका जीतेगा

रूस कहने को साम्यवादी देश है, किन्तु पिछले कुछ वर्षों से वह साम्राज्यवादी नीति पर चल रहा है। उसका यह साम्राज्य प्रसार उस समय प्रारम्भ हुआ था, जब योरोप के देश जीवन मरण की घड़ियां गिन रहे थे और किसी को दूसरे की ओर ध्यान देने का रत्तीभर अवकाश न था। उसने लेटविया, लिथुआनिया और एस्टोनिया राज्यों को युद्धकाल में हड़प कर लिया था। इसके बाद भी वह पूर्वी यूरोप के देशों को अपनी विकराल दंष्ट्रा के नीचे दबाता गया। जब पश्चिमी यूरोप के राष्ट्रों ने उसके अग्रिम प्रसार को रोक दिया, तब वह एशिया की ओर बढ़ा। वहां कोई बाधा न पाकर वह बहुत आगे बढ़ गया। और अब दक्षिणी कोरिया में उसे पहली बार मुकाबला करना पड़ा है। मेरा ऐसा विश्वास है कि जिस तरह यूरोप में बाधा पाकर उसकी प्रगति रुक गई है, ठीक उसी तरह यहां भी रूस की प्रगति रुक जायगी। कोई देश इतनी अधिक दूर तक जब अपना प्रसार कर लेता है, तब उसकी प्रगति रुक जाती है। सीमा से बाहर प्रसार करना सम्भव नहीं है। पूर्वी यूरोप, यूरोपियन रूस, और एशियायी-रूस और विशाल चीन आज सब कुछ ही तो रूस के प्रभाव में है। प्रकृति भी इस से अधिक सीमा सहन नहीं कर सकती और इसी लिए मेरा विश्वास है कि उत्तरी कोरिया की आड़ में लड़ रहा रूस परास्त होगा।

२. अमेरिका की साधनसम्पन्नता से बीसवीं सदी के दोनों युद्ध जीते गये थे और यह तीसरा युद्ध भी उसी के बल पर जीता जायगा। इसमें आज किसी को संदेह नहीं कि अमेरिका अधिक साधन-सम्पन्न है। चर्चिल ने पिछले महायुद्ध में अमरिका की पैशाचिक उत्पादन शक्ति को बहुत अधिक बढ़ा दिया था। वह शक्ति आज १९४५ की अपेक्षा भी बढ़ गई है। फिर ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, कनाडा आदि देशों की भी उत्पादन शक्ति का आज अमेरिका को सहयोग प्राप्त है। इन सब देशों के एक साथ प्रयत्न अवश्य सफल होंगे।

३. कोरिया का युद्ध केवल दो देशों का युद्ध नहीं रहा। इसमें आक्रमणकारी यदि उत्तरी कोरिया और उसके साथ रूस है, तो दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय संघ के रूप में प्रायः समस्त संसार है। क्या विश्व राष्ट्र संघ परास्त हो जायगा? ऐसी स्थिति का आज अर्थ है ब्रिटेन व अमेरिका की सदा के लिए समाप्ति। इसे दोनों देश खूब समझते हैं और इसलिए वे इस युद्ध के विजय में पूर्ण शक्ति लगा देंगे।

४. बीसवीं सदी के दोनों विश्व युद्धों में प्रजातन्त्र और न्याय के नारे विजय प्राप्त कर चुके हैं। इस नये युद्ध में भी इन्हीं नारों की विजय निश्चित है। यही पक्ष आज अपेक्षाकृत अधिक न्याय-संगत है। तभी ४० से अधिक राष्ट्रों का इसे नैतिक समर्थन प्राप्त हो गया है। इस लिए उसकी जीत निश्चित है। विश्व के इतिहास में यह प्रथम अवसर है, जब विश्व संघ ने एक पीड़ित राष्ट्र की रक्षा के लिए तलवार उठाई है। इसलिये उस की विजय निश्चित है।

५. अमेरिका के पास अणुबम है, जिसका प्रयोग वह आज न करे, किन्तु यदि दूसरा कोई उपाय न मिलेगा, तो वह उसका प्रयोग करने से न चूकेगा। और वस्तुतः यही कारण है कि वह इतने शीघ्र अपनी सेनाओं को मैदान में ले भी आया है।

६. आज अमेरिकन सेनाएं युद्ध में पीछे हट रही हैं, यह ठीक है, किन्तु यह भी इसका प्रमाण है कि अमरीकन जीतेंगे। गत दो विश्व युद्धों का विस्तृत इतिहास यही बताता है, दोनों महायुद्धों में पहले जर्मनी जीता, पर पीछे उसे हारना पड़ा। इस युद्ध में भी इसी घटना की पुनरावृत्ति होगी।

७. आज रूस का दबदबा जरूर है, किन्तु यह दबदबा भय और आतंक का दबदबा है। यदि रूस के नीचे पिसने वाले देशों को मालूम हो जायगा, कि कोई उनका सहायक भी है तो उन देशों के गैर-स्तालिनिस्ट विद्रोह पर तैयार हो सकते हैं, यह हमें नहीं भुलाना चाहिये।

★

नहीं, उ० कोरिया

हां, तुम क्या कहते हो, उत्तरी कोरिया हार जायगा। बिलकुल गलत! मेरा यह विश्वास है कि उत्तरी कोरिया जीतेगा। मैं तो इस पर जितना कहो, शर्त बदने को तैयार हूं। मेरी इस मान्यता के जो कुछ कारण हैं, वे संक्षेप से यह हैं—:

(१) मेरी पहली दलील यह है कि रूस और उसका साथी बड़ा भारी शक्तिशाली चीन उत्तरी कोरिया के साथ है। अमरीकन सहायता को लेकर च्यांगकाई शेक भी बड़ी आशाएं बांध रहा था, किन्तु वह कम्यूनिस्ट सेनाओं के आगे टिक न सका और उसे फारमोसा के टापू में शरण लेनी पड़ी है।

(२) रूस से बढ़ कर उत्तरी कोरिया के पास एक नारा है— रोटी का, जमीनों पर किसानों की मिलकियत का। यह एक ऐसा नारा है, जो देश की जनता में उत्साह व नव प्राण का संचार कर देता है। जो यह नारा सुनता है, वही लाल झंडे के नीचे चला जाता है, वही लाल सेना का सिपाही बन जाता है। यही कारण है कि दक्षिणी कोरिया की जनता कोई प्रतिरोध न करके चुपचाप आत्म-समर्पण कर गई। वह वस्तुतः कोरिया की एकता चाहती है और इसलिए वह उत्तरी कोरिया की सेनाओं का चुपचाप स्वागत करती रही, यही कारण है कि अमरीकी सेनाओं के विरोध के बावजूद उत्तरी कोरिया आगे बढ़ता गया। अमेरिकन सेनाओं की उपस्थिति भी इसीलिए लाभकारी न हो सकी और लाल सेनाएं आगे बढ़ने में सफल हो गई।

(३) दक्षिणी कोरिया की जनता जापानी पूंजीवाद के फल पिछले ३५ सालों तक भुगतती रही है। अब वह किसी पूंजीवादी देश का स्वागत नहीं कर सकती। इसलिए कोरिया की जनता की सहानुभूति स्वभावतः साम्यवाद के प्रति है।

(४) री-सरकार के शासन में कोरियन जनता को कोई सुख नहीं मिला। एक रूसी रिपोर्ट के अनुसार पिछले चार सालों में (अमेरिकन व री-शासन) ६०००० कोरियन फांसी के तख्ते पर लटका दिये गये और करीब १। लाख आदमी आज भी जेलों में बन्द हैं। जनता का यह असंतोष ही दक्षिणी कोरिया और उसके साथ अमरीका की सबसे बड़ी कमजोरी है।

(५) संयुक्तराष्ट्र संघ की सुरक्षा-समिति ने उत्तरी कोरिया के विरुद्ध प्रस्ताव अवश्य स्वीकार किया है। ४०-४५ राष्ट्रों ने उसका समर्थन भी किया है, किन्तु कितने राष्ट्र हैं, जो सचमुच उसका साथ देने को तैयार हैं। स्वयं भारत ने ही कोई ठोस सहायता पहुंचाने में असमर्थता प्रकट कर दी है। इंगलैंड, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड की कुछ सहायता अमेरिकनों को प्राप्त होगी। फारमोसा का कैदी च्यांगकाई शेक क्या कर सकता है? केवल शाब्दिक सहानुभूति से कहीं कोई लड़ाई जीती जाती है?

(६) अगर यह सब राष्ट्र भी ईमानदारी से अमरीका को सहायता देते, तो भी कोई बात थी। हो यह रहा है कि सहायता देने वाले इन सब देशों में भी लाल कम्यूनिस्ट हैं, जो अपने अपने देशों में शत्रु के पांचवें कालम का काम करते हैं। आस्ट्रेलिया के बन्दरगाहों में कुछ मजदूर द० कोरिया को जाने वाला माल जहाजों पर लादने से इन्कार कर रहे हैं। स्वयं इंगलैंड में कम्यूनिस्ट अपनी सरकार की नीति का विरोध कर रहे हैं। भारत में तो शाब्दिक सहानुभूति भी देने के विरुद्ध बड़े जोर का आन्दोलन छिड़ गया था। जब इन सब देशों में ही विरोधी हैं, तो क्या ईमानदारी से सब देश लड़ सकेंगे?

(७) इसके विपरीत उत्तरी कोरिया में एक भी देशद्रोही या पांचवें कालम का व्यक्ति नहीं है। वहां एक नेता, एक दल और दृढ़ अनुशासन है। इसलिए उसी की विजय होगी।

(८) इतिहास का चक्र घूमता रहता है। आज रूस का सितारा बुलन्दी पर है। आधा यूरोप लाल रंग में रंगा जा चुका है और आधा एशिया भी आज लाल कहा जा सकता है, तो बिल्कुल साथ लगा हुआ कोरिया कैसे बच सकता है?

(९) अमेरिका के पास अणु बम है, किन्तु उसका प्रयोग खतरनाक है। एक तो रूस के पास भी ऐसा बम है, दूसरे एशिया में दूसरी बार अणुबम फेंक कर वह एशियावासियों की बढ़ती हुई भावनाओं का अनादर कर विरोधी वातावरण पैदा नहीं करना चाहता।

इसीलिए मैं जोर के साथ कहना चाहता हूं कि उत्तरी कोरिया जीतेगा, अमरीका नहीं। युद्ध की अब तक की प्रगति भी इसी का संकेत कर रही है।

जनरल मैकआर्थर

आप संयुक्तराष्ट्र संघ की ओर से कोरिया युद्ध में प्रधान सेनापति चुने गये हैं।

बेलजियम नरेश

आपके फिर राजगद्दी पर बैठने का प्रश्न अभी तक आकाश में लटक रहा है।

श्री मानवेन्द्रनाथ राय

आप पर भारत सरकार गुप्त पत्र को प्रकाशित करने का अभियोग चला रही है।

अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति के लिये उत्सुक

श्री राधाकृष्णन

आप रूस में रह कर ही अन्तर्राष्ट्रीय शांति के लिए प्रयत्न कर रहे हैं।

श्री ट्रिग्वेली

कोरिया युद्ध छिड़ जाने के बावजूद आपने रूस व अमेरिका में समझौते की आशा नहीं छोड़ी है।

श्री डिक्सन

काश्मीर मध्यस्थ श्री डिक्सन पं० नेहरू से बातचीत करने दिल्ली पहुंच गये।

समाजवादी दल से असंतुष्ट नेता
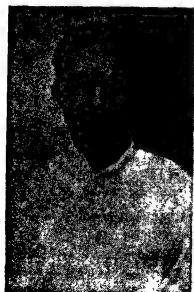
श्री अच्युत पटवर्धन

अ० भा० समाजवादी दल से मतभेदों के कारण आपने दल से त्यागपत्र दे दिया।

श्रीमती अरुणा आसफअली

आप समाजवादी दल से तीव्र मतभेद हो जाने के कारण पृथक हो गयी हैं।

आचार्य नरेन्द्रदेव

इस वर्ष भी अ० भा० समाजवादी दल के अध्यक्ष आचार्य नरेन्द्रदेव चुने गये हैं।

पथिक

महेन्द्र भटनागर

बन्धनों में, हार में रोना कभी अच्छा नहीं,
अच्छा नहीं !

पंथ में साथी, निमिष भर, सोच कर, रुकना न होगा,
देख, थकी स्वयं को मध्य में थकना न होगा;
हो अँधेरी रात चाहे घोर गर्जन हो प्रलय का,
घेर लें झंझा भयावह, नृत्य हो चाहे अनय का,
गाज गिरती हो अवनि पर, काँपती हों सब दिशाएं,
ज्वार उट्ठे सिंधु में या मृत्यु क्षण-क्षण पास आए—
एक क्षण भी चेतना खोना कभी अच्छा नहीं,
अच्छा नहीं !

'जागरण', 'साहस', 'प्रगति' बस कोश में ये नाम होंगे,
और उनके साथ चलने के डगर में काम होंगे;
देख कर विद्युत गगन में एक क्षण तड़पन न होगी,
सोच जीवन में मरण को एक क्षण धड़कन न होगी,
आज, साथी बन, चलेंगे वायु के झोंके भयंकर,
ले चलेंगे पार तुमको व्योम-पथ से शीघ्र फर-फर !
खोल आँखें ढूंढना खोना कभी अच्छा नहीं,
अच्छा नहीं !

जो रहे पीड़ित अभी तक, मौन रह कर दुःख न सहना,
न्याय पर, अधिकार पर तो हर कदम पर खूब लड़ना,
छोड़ दे यदि साथ साथी बीच जीवन की डगर पर;
जीत का आरम्भ होगा, गुनगुनाना मन करुण-स्वर,
आज जीवित जब जगत् में, फिर मरण का गीत क्यों हो !
पास हो भी यदि सफलता, फिर रुदन संगीत क्यों हो !
आंख भय से बन्द कर सोना कभी अच्छा नहीं,
अच्छा नहीं !

★

गीत

जयकुमार 'जलज'

अब करूं क्या ! जब कि उनका मिल गया है प्यार।

कल्पना की लहरियों पर चिर युवक यह प्यार,
जब अकेला था बढ़ा था खोल दुख का द्वार।
जिस तरफ जब पांव दौड़े वह चला उस ओर,
छोड़ जाता था निशा को कभी छूकर भोर।
आज वे सब मौन, साथी दूर मेरे;
अब बढ़ूं किस ओर जब यह मिल गया पतवार,
अब करूं क्या ! जब कि उनका मिल गया है प्यार॥

जब कभी मैं हार बैठा फिर दिखा आकार,
ज्यों सदा हारा कभी फिर पा गया मनुहार।
आह ! कितना सुख हुआ था जब निशा के द्वार,
मौन बैठा कर रहा था नयन का उपचार।
कब हटे बदली यही तब सोचता था,
अब करूं क्या ! शशि स्वयं जब मिल गया साकार।
अब करूं क्या ! जब कि उनका मिल गया है प्यार॥

जब पसारे हाथ मैंने कांपे कुछ भगवान,
प्राण तो थे मूक, केवल होंठ थे आह्वान।
इस तरह रातें कटीं दिन भी गये थे बीत,
मैं अकेला था कि कवि साथ तो था गीत।
किन्तु फिर भी जल रहा था, मैं सुखी था,
अब करूं क्या ! जब कि उन पर मिल गया अधिकार,
अब करूं क्या ! जब कि उनका मिल गया है प्यार॥

★

गीत

श्री 'कुसुम' जैन

मेरे सपनों में सपना बन,
तुम आ, तो देखो एक बार।

कितनी कलियां कितने प्रसून,
कितना मधु मेरे उपवन में।
कितना सौरभ, कितना विकास,
कितना रस इसके कण-कण में।

चन्दा की खिड़की से प्रियतम,
मुस्का तो देखो एक बार।
मेरे सपनों में सपना बन,
तुम आ तो तो देखो एक बार।

कितने स्वर कितने राग मधुर,
कितनी सुख सांसों के स्पन्दन।
कितना जीवन, कितना निठाव,
कितना इसमें स्मृतियों का धन।

फिर तुम हृदय की वीणा को,
सहला तो देखो एक बार।

कितनी आशाओं से बोझिल,
मेरे अरमानों की बस्ती।
तुम क्या जानों कितनी सस्ती,
इसमें मधु मदिरा की मस्ती।

मेरी इस बस्ती को निर्मम,
ठुकरा तो देखो एक बार।
मेरे सपनों में सपना बन,
तुम आ तो देखो एक बार।

★

तिनकों का सहारा

[श्री शलभ]

तिनकों के एक सहारे ही खग, अपना नीड़ बनायेगा !

अब भोर हुई, जगा जीवन;
कुछ सोच रहा वह चंचल मन।
सूना अन्तर जो धुंआ कर,
क्यों नहीं बिखेरूं निज आंगन !
कुछ ज्योतिष्कण !

... क सहारे ही दीपक, जलता जल ... या
खग, अपना नीड़ बनायेगा।

नभ, भरी दुपहरी मुसकाई,
सूखी धरती मन शरमाई।
तपती चेतनता बोली उर,
क्यों नहीं छिड़क दूं सघन नयन।
कुछ जल के कण !

छींटों के एक सहारे ही, सूखा जीवन लहरायेगा।
खग, अपना नीड़ बनायेगा।

तमको बटोर जब हुई रात।
मन ने मन से की तभी बात।
अपनी निधि तम की अन्तर से।
क्यों दान न दे डालूं उनको,
ये शीतल कण !

इनके ही एक सहारे कुछ जग रुख—पथ तो पायेगा।
खग, अपना नीड़ बनायेगा॥

★

फारमोसा

लोग कहते है कि कोरिया के बाद फारमोसा की बारी है, जो अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष का जल्दी ही अखाड़ा बनेगा।

कम्यूनिस्ट चीन की सरकार के विदेश मंत्री श्री चाउ एनलाइ ने घोषणा की है कि हम फारमोसा को स्वतन्त्र कराके छोड़ेंगे। वह चीन का ही अंग है।

अमेरिकन सरकार ने दक्षिण कोरिया के साथ साथ फारमोसा की रक्षार्थ अपनी सेनाएं भेजने का निश्चय किया है।

आजकल फारमोसा में च्यांगकाईशेक की सरकार और सेनाएं अपना केन्द्र बनाये हुए हैं और वहीं से अमेरिका की सेनाओं की सहायता से कम्यूनिस्ट चीन पर आक्रमण की तैयारी के मंसूबे बांध रही है।

पं० जवाहरलाल नेहरू ने फारमोसा के सम्बन्ध में कहा है कि जहां तक मुझे स्मरण है गत महायुद्ध के अन्त में बड़ी शक्तियों ने निश्चय किया था कि फारमोसा चीन को दे दिया जाय। मैं समझता हूँ कि प्रे० रूजवेल्ट, मा० स्तालिन और श्री चर्चिल की केरो-कांफ्रेंस

पुरानी सरकार के अवशेष

मार्शल च्यांग काई शेक

में यह चीज स्वीकार कर ली गई थी। वह निर्णय अब भी कायम है। यह संभव है कि कोरिया-युद्ध के बाद अथवा इसी युद्ध के मध्य में चीन की सेनाएं फारमोसा पर आक्रमण कर दें। इसीलिए फारमोसा के सम्बन्ध में कुछ जानकारी कर लेनी आवश्यक है।

फारमोसा का टापू द० चीन के फकीयन प्रांत के किनारे स्थित है, जिसे १२०-३०० कीलोमीटर चौड़ा मुहाना किनारे से अलग करता है। फारमोसा का दक्षिणी हिस्सा फिलीपाइन को स्पर्श करता है। फारमोसा के उत्तर में रुक्यू नामक द्वीप पुंज है। फारमोसा का क्षेत्रफल इसके पार्श्ववर्त्ती रुक्यू द्वीप समूह को मिला कर लगभग ३६,००० वर्ग कीलोमीटर (एक किलोमीटर = ५ फरलांग) है।

फारमोसा की महत्वपूर्ण भौगोलिक स्थिति (एक ओर चीन के नजदीक तथा दूसरी ओर द०-पूर्व एशियाई देशों से सटा होना) को देख कर ही १९ वीं सदी के अन्त में जापानियों का ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ, जो उन दिनों अपने राज्य विभाग की नीति चलाते थे। जापान तथा चीन में एक अर्से की लड़ाई के बाद १८९५ में शिमोनोसेकी नामक संधि हुई, और इस संधि के अनुसार फारमोसा, जो अब तक चीन के हाथ में रहा था, जापान के हाथ में चला गया। फिर भी फारमोसा के लोग जापानी आक्रमणकारियों के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष करते रहे। फारमोसा में उभरते हुए जन-आन्दोलन को कुचलने के लिए जापान को वहां काफी बड़ी फौज रखनी पड़ती थी। न केवल स्थल वरन हवाई फौज भी। फारमोसा के जिन जिलों में जन-आन्दोलन का जोर था, जापानी अधिकारियों ने उनको चारों ओर कटीले तार लगा कर पुलिस और सैनिकों का घेरा बिठा दिया। जापानी आक्रमणकारी नृशंसतापूर्वक फारमोसा की जनता का शोषण करते थे। जापान के कल कारखानों को कच्चे माल की सप्लाई करने के लिए उन्होंने फारमोसा को अपना विशाल डिपो बना लिया। जापानियों ने फारमोसा के लोगों की हजारों एकड़ सर्वोत्कृष्ट भूमि तथा जंगलात अपने कब्जे में कर लिये।

विगत महायुद्ध के समय जापानियों ने द० चीन तथा द०-पूर्व एशिया के विरुद्ध सैनिक कार्रवाई करने के लिए फारमोसा को अपना सैनिक अड्डा बना लिया। हवाई अड्डे, नौ-सेना के अड्डे तथा और भी अन्य सामरिक अड्डे उन दिनों वहां बनाये जा रहे थे।

अमेरिका भी चीन में अपना पांव फैलाने के लिये ठीक उसी तरह फारमोसा का इस्तेमाल कर रहा है। यह सर्व विदित बात है कि १९४५ में ज्यों ही जापान ने अपने हथियार डाले, त्यों ही अमरीकी फौज फारमोसा में दाखिल हो गयी।

मित्र राष्ट्रों के बीच किये गये पहिले समझौते के अनुसार फारमोसा चीन को लौटा देना चाहिये था, परन्तु आज तक फारमोसा पर चीन की सार्वभौमिकता नहीं स्थापित हुई। अमरीकन अनेक प्रकार की बहानेबाजी करके मित्रराष्ट्रों द्वारा किये गये समझौतों पर पानी फेर रहे हैं। चीन से मार खा कर भागे हुए कोमिनतांगी प्रतिक्रियावादियों को आश्रय प्रदान करने के लिये, फारमोसा अमरीका का सैनिक अड्डा बनाया जा रहा है। अमरीकियों ने फारमोसा के पश्चिमी किनार गावसेउन के पास तथा उत्तर सलीलून के पास अपने सैनिक अड्डे बनाये हैं। बड़े-बड़े अमरीकी फ्लाइङ्ग फोरटैसों के लिए हवाई अड्डे बनाये जा रहे हैं। भूतपूर्व सैनिक उद्योगों का विस्तार हो रहा है तथा सैनिक उद्योग खोले जा रहे हैं। बम वर्षक तथा लड़ाकू जहाज बनाने के लिए कारखाने तैयार हो रहे हैं। पिछली लड़ाई के बचेखुचे जापानी युद्धशास्त्रविशेषज्ञ जैसे— फारमोसा के भूतपूर्व गवर्नर ऐडमिरल वासेगोवा, प्रसिद्ध उद्योगपति एकावा तथा दूसरे लोग पुनः शासन प्रबन्ध में लगाये गये हैं।

फारमोसा का आर्थिक तन्त्र अब पूर्णतः अमरीकियों के हाथ में है। इन्हीं के हाथ में फारमोसा के सभी मुख्य व्यापार, बैंक तथा उद्योग हैं। रेनाल्ड्स मेटल्स को० के हाथ में फारमोसा के आलमीनियम का पूरा उद्योग है। अमरीकन पूंजीपतियों ने भूतपूर्व अधिकांश जापानी कारखानों पर अपना अधिकार जमा लिया है।

विगत चार वर्षों से फारमोसा में कोमिनतांगी डिवीजन अमरीकी पैसों से अमरीकी शिक्षकों की देखरेख में तैयार होते रहते हैं। कोमिनतांगी नेता अपने समस्त बहुमूल्य सामानों के साथ फारमोसा में छिपे बैठे हैं। फारमोसा में पहिले ही अमरीका से नई-नई युद्ध सामग्रियां लाकर रखी हुई हैं। फारमोसा को अमरीकी युद्ध विशारद उत्तर प्रशांत गुट के प्रतिरूप प्रशांत गुट का केन्द्र समझते हैं। अमरीकन द० पूर्व एशियाई देशों के जन आन्दोलन को कुचलने के लिए फारमोसा को एक सामरिक अड्डा समझते हैं।

कम्यूनिस्ट चीन के विदेश मंत्री

चाउ एन लाई

परन्तु जापानी साम्राज्यवादियों के दांत खट्टे करने वाले फारमोसा के लोग न अमरीकी धौंस सहने वाले हैं और कोमिनतांग की विगत चार सालों में फारमोसा की जनता ने नये 'अधिपतियों' के विरुद्ध भी कई बार सशस्त्र विद्रोह का आयोजन किया है। १९४७ के फरवरी, मार्च महीने में एक बहुत बड़ा सशस्त्र विद्रोह हुआ था, जिसे दबाने के लिए अमरीकियों को काफी बड़ी फौज, टैंक तथा बमवर्षक इस्तेमाल करने पड़े। इसके फलस्वरूप एक रूसी वक्तव्य के अनुसार अधिकारियों ने फारमोसा के १०,००० निवासियों को जान से मार डाला, विद्रोह के संचालकों की हत्या कर दी गयी तथा हजारों लोगों को जेल में बन्द कर दिया गया। फिर भी अधिकांश विद्रोही पहाड़ों में जा छिपे। इस समय भी फारमोसा के देशभक्त अपने देश को आजाद करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

———

इन्द्र धनुष

स्टालिन और हिटलर

ब्रिटेन के भूतपूर्व परराष्ट्र सचिव श्री एंथनी ईडन ने ५ जुलाई ब्रिटिश संसद में कहा कि दिसम्बर १६४१ में श्री स्टालिन ने उनसे कहा था कि हिटलर कूच करने पर रुकना नहीं जानता, किन्तु मैं जानता हूँ।

श्री ईडन ने स्टालिन का कथन इस प्रकार उद्धृत किया; "हमें हिटलर के कौशल को कम नहीं आंकना चाहिये। वह बहुत योग्य है। किन्तु उसने एक गलती की; वह यह नहीं जानता था कि कब रुक जाना चाहिये।······आप मुस्करा रहे हैं। मैं इसका कारण जानता हूँ। आप सोचते हैं कि यदि हम विजयी हो गये तो मैं नहीं रुकूंगा। आप गलती पर । मैं जानता हूं कि कब रुकना चाहिए।"

●

बीड़ी शराब से भी बुरा व्यसन

आज से बहुत व्यापारी ने गांधी जी के नाम एक बीड़ी चलाई थी। तब गांधीजी ने उसका विरोध करते हुए लिखा था:—

मुझे सिगरेटों से उतनी ही सख्त नफरत है, जितनीकि शराब से। बीड़ी या सिगरेट पीने को मैं एक दुर्व्यसन मानता हूँ। यह अन्तरात्मा की आवाज को खतम कर देता है और इसका प्रभाव शरीर पर धीरे धीरे पड़ता है, जो दिखाई नहीं देता। इस रूप में यह अक्सर शराब से भी बुरा व्यसन है। यह एक ऐसी आदत है, पड़ जाने बाद जिसका छूटना बहुत मुश्किल है। यह एक खर्चीला व्यसन है, जिससे सांस बदबू देती है, दांत पीले पड़ जाते हैं और कभी कभी 'कैन्सर' का रोग भी हो जाता है। यह एक गन्दी आदत है।

दो पहेलियां

कजाक में प्रचलित लोक-गीतों में निम्नलिखित दो पहेलियां 'भारती' में दी गई हैं:—

युवती कहती है—

"एक को बांध दिया था, एक को छोड़ दिया था और एक को लेकर अन्दर गई।"

सखी आश्चर्य से पूछती है कि—किसको बांधा था, किसे छोड़ा था और किसे अन्दर ले गयी थी?

युवती बड़ी चतुराई से उत्तर देती है कि गाय को बांधा था, बछड़े को छोड़ दिया था और दूध को अन्दर ले गई थी।

युवती फिर दूसरी पहेली पेश करती है—"एक को पैर दिया, एक को हाथ दिया और एक को साड़ी ही दे दी।"

फिर सखी संदेह में आकर पूछती है कि किसे पैर दिया, किसे हाथ दिया और किसे साड़ी दी?

युवती हंसती हुई उत्तर देती है—कुहार को पैर दिया, कुम्हारे को हाथ दिया और धोबी को अपनी साड़ी दे दी।

●

आप १२० वर्ष तक जियेंगे

अमेरिका के प्रसिद्ध रसायन-विशेषज्ञ डाक्टर टीमस इस० गार्डनर ने भविष्य वाणीकी है कि शीघ्र ही मनुष्य १२० वर्षकी आयु तक जीवित रह सकेंगे। यदि विज्ञान में निरन्तर गवेषणा की ओर ध्यान केन्द्रित किया गया तो आगामी दस वर्षों में मानव जीवन की अवधि को बढ़ाया जा सकेगा। डाक्टर गार्डनरने यह भी बताया है कि अभी तक वास्तविक आयु की सीमा का अनुमान नहीं लगाया गया है। यदि अंगों का अधिकतम उपयोग हो और वृद्ध होने की दशा में कोई परिवर्तन न हो तो औसत आयु लगभग १२० वर्ष होनी चाहिए। यदि वृद्ध होने की दशाओं में कमी हो जाए तो औसत आयु में तदनुसार ही वृद्ध हो सकती है।

डाक्टर गार्डनर के कथानुसार वृद्धावस्था में मृत्यु का प्रमुख कारण 'हृदय-की रक्तवाहिनी प्रणाली' में खराबी है। इस प्रकार की खराबी मुख्यतः रक्त वाहिनी नाड़ियों, हृदय, मांस-पेशियों तथा अन्य अंगों में कोलेस्ट्रल नामक पदार्थ के संचय से होती है। गवेषणा के परिणाम-स्वरूप यह विदित हुआ है कि इस पदार्थ के सचय को 'कोलाइन' और 'इनोसिटोल' के उपयोग से रोका जा सकता है।

●

शरीर सीधा रखना भी हानिकारक

अमेरिका की कालिफोर्निया यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिक डा० विकनो त्रिटन ने छोटे जानवरों पर आकर्षण शक्ति के प्रभाव का निरन्तर अध्ययन करने के उपरान्त यह परिणाम निकाला है कि मनुष्यों में आजकल होने वाले हृदय रोग और रक्त चाप का रोग मुख्यतः आकर्षण शक्ति के नियमों का पालन न करके शरीर को सीधा रखने के कारण ही कदाचित होते हैं।

जब व्यक्ति सीधा खड़ा होता है तब उसके हृदय को मस्तिष्क में रक्त संचार करने के लिए अधिक परिश्रम करना पड़ता है। इस अतिरिक्त कार्य से उसके मस्तिष्क का विकास पशुओं से कहीं बढ़ चढ़ कर हुआ, लेकिन इसके कारण उसे हृदय और धमनी के रोग विरासत में मिले हैं।

मनुष्य दिन में अधिक समय तक आराम से सीधा रह सकता है, लेकिन एक अच्छी किस्म का बन्दर इस से आधे समय तक ही सीधा खड़ा हो सकता है। अन्य जानवर सीधा खड़े होने को सहन नहीं कर सकते।

खरगोश एक मिनट से भी कम समय तक सीधा खड़ा किए जाने से तंग आ जाता है। ५ से १० मिनट तक सीधा खड़ा होने से खरगोश क्लान्त हो जाता है। यदि खरगोश को इस से अधिक समय तक सीधा खड़ा रखा जाय तो शायद उसकी आघात से मृत्यु ही हो जाए।

●

अंडा हानिकारक भोजन

अब सङ्कट से विचलित होकर भारत सरकार भी अंडों के उत्पादन पर विशेष ध्यान देने लगी है, किन्तु अण्डे कितने हानिकर होते हैं, यह बताते हुये श्री ब्रह्मदत्त शर्मा लिखते हैं:—

वास्तव में अंडा एक ऐसे बालक के समान है जो अपने पैदा होने के समय से २१ दिन पहले पैदा हो गया हो। इस २१ दिन के समय में या तो यह एक जानदार पक्षी बन जायगा या एक मांस के टुकड़े की तरह सड़ ही जायेगा।

अण्डा पेट में मांस की तरह गलता या पचता है, और पचने के बाद तेज से तेज तेजाबी मैल छोड़ता रहता है। इससे शरीर के भीतर के अलकाली (क्षार) कम पड़ते जाते हैं और लहू में तेजी या खटास बढ़ती रहती है, जिससे अनेक रोग उत्पन्न रहते हैं, इससे लहू का दबाव बदल जाता है और नसों में सूजने की बीमारी हो जाती है। मिस्टर फ्रोक बोक्स अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि अंडे की एसिड बनाने की शक्ति १६० से १७० तक है। इसके विपरीत दूध की अलकाली (क्षार) बनाने की शक्ति २५ से ३० तक है। अंडे से मांस की तरह ही पेट में सड़ाव बढ़ता है, इस सड़ाव को रोकने के लिये हमको छाछ या दही का प्रयोग करना पड़ता है। अंडे से बहुधा पेट में दर्द पैदा करने वाले और मियादी बुखार के कर्म पाये जाते हैं, और इन्हीं के कारण अण्डा देने वाले पक्षियों को सफेद दस्त की बीमारी हो जाती है, जो अंडे के द्वारा अंडा खाने वालों में भी फैल जाती है।

अण्डे की प्रोटीन दूध की प्रोटीन से घटिया किस्म की होती है, क्योंकि इसके पचने में कई प्रकार की बाधायें उपस्थित हो जाती हैं। दूध रखना रहने पर खट्टा

[शेष पृष्ठ २२ पर]

सड़क

लम्बी सड़क, काली सड़क!
जैसे किसी ने नोंक से सङ्गीन की—
हो चीर दी छाती शहर की पेट तक।
लम्बी सड़क, काली सड़क!
सावन कई बरसे,
मगर तन, दूब से, न इसका
रोमांचित हुआ।
सौभाग्य-अंचल, भर प्रसूनों से न
इसका—
मौलश्री ने ही छुआ।
संध्या सुबह, इस पर चले कब
देवता निर्माण के वे कृषक-गण!
जिनके हलों पर उभरती आती धरा,
शिशु-दन्त पर ज्यों मातु-स्तन।
अभिषेक ग्राम्या ने नहीं इसका किया,
अपने कलश से;
शीश पर धरने कि जिसकी चरण-रज
शशि-सूर्य नभ से कूप में आते उतर।
यह सहज निर्मित पथ नहीं,
ज्यों प्यार से इठला तनिक
गिरि शिखर पर,
कतरा शिरीषों, बरगदों से बढ़ चला,
उथली नदी को पार कर।
जैसे कि धरती और पैरों के हकों का
शक्ति भर, करता समन्वय अन्त तक!
* * *
उन्मत्त शूकर की तरह यह बीच में—
सब कुछ उखाड़ फेंकती;
मंदिर, कुटी, घर, रोध जिसने
भी किया—
उसके उदर को भेदती।
यह सभ्यता की आग पर
तपती हुई छड़,
स्पर्श से सबको जला;
फैला रही आतंक का उन्मत्त शासन
ज्ञान की काली कला।
रे, किस अमा के शून्य प्रहरों में
जगी थी—
इस सड़क की कल्पना।
जो पीट शिव का कंठ, इस पर
बिखरती—
जन में छुपी पशु-भावना!
देती गगन को यह चुनौती दम्भ से,
'डर, क्या करेगा? जल!
बरस पड़ या कड़क!!'
लम्बी सड़क—काली सड़क!

—श्री गोपाल

समुद्र के अन्तस्तल में

★ श्री अशोक

> विशाल रत्नाकर के महान गर्भ में जो कुछ गुप्त निधियाँ हैं, उनका परिचय अब आप पा सकते हैं।
>
> प्रकृति के कोप से मनुष्य की जो अमूल्य सम्पत्ति समुद्र के अन्तस्तल में जा कर विलीन हो जाती है, अब उनका पता भी लग सकेगा।
>
> संभव है कि सेनाएं भी पानी के नीचे नीचे छिप कर जाने लगें और यदि भारत की उपजाऊ भूमि पाकिस्तान ने छीन ली है, तो हिन्द महासागर के गर्भ में फसलें भी पैदा की जा सकें।

समुद्र गर्भ का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा मनुष्य में चिरकाल से है। प्रति वर्ष लाखों करोड़ों रुपये के जहाज इसमें डूबते रहते हैं और इसी कारण शायद हमारे यहां समुद्र को रत्नाकर कहा गया है। आज से आठ वर्ष पूर्व माल्टा के निकट प्रसिद्ध व्यापारिक जहाज ब्रेकनशायर डुबो दिया गया था। बिस्मार्क आदि प्रसिद्ध जहाज भी अब तक समुद्र-गर्भ में विलीन हैं। समुद्र में पड़ा हुआ यह धन भी मनुष्य की उत्सुकता का प्रधान कारण है। प्राचीन काल से ही भारत के दक्षिणी तट पर गोताखोर लोग गोता लगाते रहे हैं, पर आज समुद्र के गर्भ की खोज करना अधिक सरल हो गया, क्योंकि एक तो आज आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित गोताखोर अधिक समय तक समुद्र तल पर रह सकते हैं दूसरे एक विशेष प्रकार के कैमरे से वहां का फोटो ले सकते हैं।

नयी विधि

अभी हाल में ब्रिटेन की जलसेना ने एक नया ढंग निकाला है, जिसमें एक आदमी 'फ्रागमैन' नामक जामा पहन कर सौ फुट तथा अधिक नीचे पानी में स्वतन्त्रतापूर्वक तैरता है और एक फिल्मी कैमरे से समुद्र तल की आन्तरिक हलचल का चित्रालेखन कर सकता है। इस ढंग में पुराने भारी आवरण और भद्दे यन्त्रों की आवश्यकता नहीं पड़ती और समुद्र गर्भ की घटनाओं का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करना सम्भव हो जाता है। उदाहरणार्थ, अभी हाल में जलमग्न पनडुब्बी से छूटते हुए एक टारपीडो (जहाज छेदक गोला) का फिल्म सफलतापूर्वक खींचा गया था।

इस कार्य के लिए ३५ मिलीमीटर वाली फिल्में प्रयुक्त की जाती हैं। कैमरा बैटरियों से पैदा होने वाली बिजली से आप ही चलता रहता है। इस कैमरे की बैटरियां ऐसी होती हैं, जो दो सौ फुट की फिल्म रील में कई बार बिना बदले हुए प्रयुक्त की जा सकती हैं। कैमरे के बाहर लगे पुर्जों के द्वारा फिल्म चलाई और रोकी जाती है। यह कैमरा एक १६ इंच लम्बे और १० इंच घेरे वाले तांबे के सिलिण्डर में लगा होता है। धीरे-धीरे तैरने वाले इस सिलिण्डर से कैमरा चलाने में बहुत सुविधा रहती है। इस पर क्रोमियम पालिश चढ़ी होती है, जिससे उसे देखने में सरलता होती है।

विभिन्न काम

किन्तु चित्रलेखन के लिये तभी पानी में उतरना चाहिए, जब पानी साफ हो और ऊपर से सूरज की धूप भी पड़ती हो, क्योंकि इनके बिना कैमरे को आवश्यक प्रकाश नहीं मिलता। गहरे पानी में [illegible] बहुत घट जाता है और किसी-न किसी तरह की [illegible] रोशनी की आवश्यकता पड़ेगी। हां, इस प्रकार की रोशनी तैयार करने के प्रयत्न तो किये जा रहे हैं। ऊपर हमने जल के अन्दर चित्रालेखन की कुछ कठिनाइयों और सीमाओं की चर्चा की है। अब इसकी कुछेक विशेषतायें भी जाननी चाहियें। जैसे, पानी में छुपी किसी चीज से टकराने पर जहाज की पेंदी में होने वाली टूट-फूट जांचने के लिये 'फ्रागमैन' अपना कैमरा ले कर फौरन पानी में घुस सकता है और सतह पर रहने वाले इसका सम्पूर्ण चित्र प्राप्त कर लेते हैं। यदि कोई टूट-फूट होती है तो उसे तभी का तभी ठीक कर लिया जाता है और जहाज को किनारे लगाने की परेशानी नहीं उठानी पड़ती।

एक प्रसिद्ध गोताखोर ने ब्रेकनशायर डूबने के स्थान का रोचक वर्णन किया है। वह ब्रेकनशायर जहाज का वर्णन इस तरह करता है—

जहाज का ऊंचा मस्तूल रेत में धंसा पड़ा था और सारा जहाज एक करवट लेटा हुआ था। सारे जहाज पर हरी हरी सी काई जमी हुई थी और बहुत सारे समुद्री फूल यत्र-तत्र उगे हुए थे।

जहाज के अन्दर और बाहर रंग-बिरंगी समुद्री मछलियां चक्कर काट रही थीं।

जहाज के एक कोने में टूटे हुए ट्रक और मोटरें पड़ी हुई थीं, जो शायद जहाज के डूबते समय आपस में टकराने के कारण टूट गई थीं। रबड़ के टायरों पर कोई काई आदि नहीं लगी थी और वे अब भी बिल्कुल नये से प्रतीत होते थे।

अब सुनिये कैप्टिन के कमरे का हाल। यहां जहाज का सबसे अधिक अस्तव्यस्त रूप दिखाई देता, क्योंकि जहाज औंधा पड़ा था, इसलिए कमरे की एक दीवार समुद्र तल से लगी हुई थी और उस पर कमरे टंगे हुये थे, एक जगह चीनी मिट्टी के बर्तन पड़े हुये थे, जिन में कोई अब तक टूटे नहीं थे। वहीं पर कुछ पुस्तकें और जहाज के यन्त्रादि पड़े हुए थे। सारे कमरे के अन्दर भी काई का अखण्ड साम्राज्य था और उस पर चलना कठिन था। फिर मैंने वहां की तोपों का हाल देखा। वह अब भी ऊपर नीचे हो सकती थीं और उनमें तेल पड़ा हुआ था। तात्पर्य यह कि वह सब तरह काम योग्य थी।

फिर मैंने जहाज के घंटे की ओर ध्यान दिया। इसके ऊपर की काई चाकू से खुरचने के उपरान्त मैंने उसके ऊपर निम्नलिखित शब्द खुदे हुए देखे—

'एस० एस० ब्रेकनशायर १९३९'

जब मैंने जहाज की 'आठ घड़ियों' को बजाया, तो उनमें से धीमी-धीमी ध्वनि निकली।

एक टूटी हुई लाइफ बोट और लंगर भी वहीं पर था। शीशे की चमकती हुई जंजीर अब भी चमक रही थी और काई का उस पर कोई कोई असर नहीं पड़ा था।

× × ×

साधारणतया समुद्र में मनुष्य का कोई अवशेष नहीं मिलता, पर कभी कभी मनुष्य की हड्डियां मिल जाती हैं पर यह सब हड्डियां कुछ मील के घेरे में बिखरी हुई होती हैं न कि एक जगह पर इकट्ठा मिलती हैं।

× × ×

एक बार मैंने एक अंग्रेज लड़ाकू वायुयान देखा। जब मैं उसके पास पहुंचा तो मुझे ऐसा भान हुआ मानो चालक उसमें बैठा हुआ उसे चला रहा है। एक क्षण के लिए तो मुझे ऐसा लगा कि मानो जहाज सचमुच उड़ा जा रहा है। परन्तु पास से देखने पर पता लगा कि उसका एक पंख आधा कटा हुआ था और कटे हुए टुकड़े का कहीं पता नहीं था। उसका पिछला भाग (काट-पिट) खाली था। पर उसके कंट्रोल के सारे यंत्र ठीक ठीक थे। मैंने घड़ी में चाबी दी, पर वह चली नहीं।

× × ×

पानी के अन्दर फोटो खींचना सचमुच एक नई कला है। अभी लगभग ४ वर्ष पूर्व ही श्री जे० बी० कौलिंस और डब्ल्यू डी० चेस्टर ने इस सम्बन्ध में खोज प्रारम्भ की है। कुछ समय पूर्व मैं भी उनके काम में हाथ बंटाने लगा और अब हम इस बात के समर्थ हो गये हैं कि हम समुद्र के भीतर के समुद्र दृश्यों को अपने कैमरे में अंकित कर सकते हैं।

समुद्र के पानी से कैमरे को एक लाभ भी होता है। पानी के अन्दर जा कर कोई भी वस्तु बहुत हल्की हो जाती है, जिससे उसका हिलाना डुलाना बहुत सरल हो जाता है। यही हाल कैमरे का भी होता है। पानी के अन्दर उसको ऊपर नीचे, आगे पीछे, दाएं बाएं सरलता पूर्वक हिलाया जा सकता है। मेरा भारी कैमरा जो कि बिजली की मोटर की सहायता से उठाया जा सकता है, पानी में केवल एक पाव का रह जाता है।

एक हानि यह होती है कि इंगलिश चैनल जैसे कीचड़ वाले पानी में रोशनी बहुत कम हो जाती है। दूसरी बात यह है कि फिल्म केवल थोड़ी मात्रा में ही नीचे ले जाई सकती है और फिल्म थोड़ी सी हिल जाने से ही सारी फिल्म खराब हो जाती है।

एक अन्य दोष यह होता है कि पानी के हिलते रहने के कारण फोटो असल की अपेक्षा भी बड़ी आती है। पर यदि हम अपनी खाली आंख से देखें तो भी वे हमें बड़ी प्रतीत होंगी। इस तरह यह दोष कुछ कम हो जाता है।

× + ×

अब इस बात की आशा की जा सकती है कि जल्दी ही मनुष्य समुद्र तट इसी प्रकार परिचित हो जाएगा जिस तरह से वह पृथ्वी से आजकल परिचित है और मनुष्य इस सुअवसर का पूरा पूरा उपयोग करेगा। अब तक १८० फुट नीचे तक गोता लगा चुका हूँ, पर फ्रेंच गोताखोर तो ३०० फुट नीचे तक गोता मार चुके हैं। वहां तो आजकल गोताखोरी एक खेल बन चुका है। बारह-बारह वर्ष के बच्चे भी पहने हुए गोता लगाने के लिए तय्यार खड़े हुए दिखाई देते हैं।

अब तो इस बात की भी सम्भावना है कि भविष्य में सेनाएं छुप छुप कर पानी के नीचे चली जाएंगी। जीपकारें भी पानी के नीचे भागेंगी।

यह भी सोचा जा रहा है कि पृथ्वी पर स्थान की कमी के कारण फसलें भी समुद्र के अन्दर पैदा की जा सकेंगी और वह दिन बहुत दूर नहीं है।

× × ×

यह भी सोना और वह भी सोना

★ रामराजसिंह 'राकेश'

एक के लिये करोड़पति तरसते हैं और दूसरे के लिये गरीब

सोना भी क्या है! कितने सोने के लिए अपनी चारपाइयों पर गद्दे लगाते हैं तो कितने भूमि पर, हरी-हरी दूब पर ही अपने सोने का उपक्रम करने लगते हैं, कितनों को सोने के लिए प्रचुर सामग्री एवं स्थान विशेष चाहिये तो कितनों के लिए फुटपाथ ही शय्या और उसका एक अल्पांश-ही स्थान विशेष है, क्योंकि फुटपाथ भी तो रक्षित नहीं, अगाध जन समूह उन्हें धक्के दे देकर आगे बढ़ता चला जाता है। कहने का अभिप्राय यही कि सोना प्रिय है, नींद सबको मीठी लगती है। सोने वाले अपना अपना स्थान ढूंढ ही लेते हैं। किन्तु जब किसी को सोना होता है, नींद आती है, तब उसे स्थान का अन्वेषण नहीं करना पड़ता वह निद्रा देवी की गोद में दोलायमान रहता है। हमें रेलगाड़ी के तृतीय श्रेणी की लम्बी यात्रा में, अनेक अवसर ऐसे हाथ आये हैं, जब कि हमने ठसाठस मनुष्यों के भरे रहने के बावजूद भी लोगों को सोते देखा है। उन्हें अपने तन, मन, धन की अपेक्षा अपने सोने की खातिर करनी पड़ती है। सोना भी कितनी विचित्र वस्तु है। विपत्ति में पड़े मनुष्यों को सोना अच्छा नहीं लगता तो भी यदि उन्हें पीतवर्ण का सोना दिया जाय तो वे अति प्रसन्न होंगे एवं दाता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ साथ ही उसकी सहानुभूति के लिए कोटिशः आशीर्वाद अर्पण करने लगेंगे।

प्रसाद जी के 'कंकाल,' में, जहां तक मुझे ख्याल है, लिखा है—'प्रणयी जीवन में सुनहला पानी देखते हैं, और माता अपने बच्चे के सुनहले बालों के गुच्छों पर सोना ला देती है। यह कठोर निर्दय, प्राणहारी पीड़ा सोना ही तो सोना नहीं है। कठोर परिश्रम से लाखों वर्षों से, नए नए उपायों से, मनुष्य पृथ्वी से सोना निकाल रहा है। सोना और है, और सोना सोना ही है। लोग कहते हैं कि अमुक पिता ने अपनी पुत्री के श्वसुर-गृह को सोने से भर दिया। इसका तात्पर्य यह नहीं कि उसने सारी कपड़े, बासन, शृंगार-वस्तु आदि समस्त चीजें सोने की ही दीं, वरन् उसने उसे प्रचुर एवं बहुमूल्य सामग्रियां प्रदान कीं। भारत जैसे निर्धन देश में सर्वसाधारण दैनंदिन व्यवहार में पीत-वर्ण का सोना तो सुलभ नहीं, किन्तु रात्रि का सोना तो इस जैसे गर्म देश के लिए अनिवार्य है ही, प्रायः अधिकांश जनता दिन में भी सोना पसन्द करती है, यह इसके भविष्य की चिन्तनीय दशा को द्योतक है। दिन में सोना लोग अमीरों की निशानी समझते हैं, जब कि वैज्ञानिक युग में उन्नतिशील देशों में लोग रात्रि को भी बिना सोए व्यतीत कर देते हैं। यों तो अपने सोने के कारण ही, अपनी सुप्तावस्था में ही, भारतीय शताब्दियों तक पद-दलित रहे, पर अभी भी उन्हें सोना ही पसन्द है। और तारीफ तो यह है कि वे दोनों सोना चाहते हैं, पड़े पड़े सोना और पीतवर्ण वाला सोना भी। अरे, चाहिए तो ऐसा कि वे उठकर कर्त्तव्य का एक ऐसा नाद बजाएं, एवं स्वयं भी उठकर सोना त्याग कर काम में जुट जायें, जिससे कि धरती, भारत वसुन्धरा, सोना उगलने लगे। यद्यपि 'अधिक अन्न उपजाओ' के आन्दोलन ने भारत-व्यापी प्रभाव डाला है, किन्तु स्वयं न लपटेन तक, स्वयं व्यवहार में न लगने तक, उसकी फल प्राप्ति कहां!

सोना सोने को खींचता है, धन धन से आता है। आधुनिक वैज्ञानिक युग में जो निर्धन हैं, वे निर्धनतर एवं निर्धनतम होते जाते हैं, क्योंकि उन्हें साधन उपलब्ध नहीं, उन्हें सहायक नहीं और ना ही कोई योग्य पथ-प्रदर्शक। और जो धनी हैं, जिनके निज की अचल सम्पत्ति है, वे क्रमशः दिन-प्रति-दिन उन्नति की ओर बढ़ते जाते हैं—लखपति कोटिपति होते जाते हैं। किसी की मर्मस्पर्शी वाणी यहां चरितार्थ होती है—जिसके साधन हैं, साध्य उन्हीं का है, साध्य वस्तु उन्हें ही प्राप्त होगी। निर्धन पीत वर्ण सोने के लिए तो तरसते ही हैं, साथ ही क्षुधित भारतीय समाज के अभिशाप को सुख से सोना भी नसीब नहीं, नींद ही नहीं आती। भाग्य के अवलम्बी, बैठे-बैठे अपने कर्म से तो च्युत होते ही हैं, साथ ही पश्चाताप से उनका सोना भी दुर्लभ रहता है। वे यही सन्तोष करते हैं कि—

'किस्मत की शिकायत कौन करे,
तकदीर का शिकवा कौन करे।
जब तुम से मसीहाई न हुई,
बीमार को अच्छा कौन करे।'

कलकत्ते में जब द्वितीय महायुद्ध के बादल सिर पर आ गए थे और कदाचित यत्र-तत्र, छुट-पुट बम-बाजी भी हो गई थी, लोग जी-जान ले कर सोने को त्याग कर भाग रहे थे। अपनी प्राण-रक्षा के लिये लोगों को ऐसा करना पड़ रहा था, उन्हें न दिन चैन न रात। हर समय, हर घड़ी, यही कि अब गए, अब गए, चलो निकल भागें। ऐसे अवसर पर एक परिवार में तीन-चार बच्चे थे और माता-पिता। रात्रि के चतुर्थ प्रहर में जब बादल आरम्भिक हो गया, धमाकों के शब्द पड़ने लगे, माता ने बच्चों को जगा कर मैदान की शरण लेनी चाही। तब आंख मलते हुए छोटे बच्चों ने कहा, "मां, मुझे सोने दे नींद लगी है।" नींद सभी को प्यारी लगती होगी ऐसा मेरा विश्वास है, फिर वे नासमझ बच्चे, उन्हें क्या पता कि मां क्यों जगा रही है। मां ने कहा, "तुझे सोने की पड़ी है, चलो जान बचे तो सोना।" बच्चे ने आश्चर्य से पूछा, 'काहे मां" "बेटा जापानी बम वर्षा रहे हैं।" मां ने कहा। "अच्छा मां, चलो अपना सोने का गहना ले लेना।" बच्चों ने कहा मां ने विकलता से कहा, "उठ चल देख सोना, फोना यहीं रहेगा। यदि जान बची और सोने से जगते रहे तब फिर सोना आकर ले लेंगे।" बच्चे माता पिता के बीच आ रहे थे, पर अब उन्हें मां के सोने के गहनों से अधिक अपने सोने की परवाह थी। सोते सोते ठोकर खाते खाते मैदान में आकर सोने लगे। माता-पिता भी रही-सही हिम्मत की तिलांजलि दे भोर में न सोने की तन्द्रा में भी सोने से गाफिल हो गए। प्रातः शीतल, मन्द, सुगन्ध-समीरण के एक झोंके ने उन्हें निश्चिन्त बना दिया।

पीत वर्णीय सोना बहुमूल्य धातु है, सन्देह नहीं, किन्तु सभी को सुलभ कहां। तो भी ईश्वर प्रदत्त सोने को कौन छीन सकता है। सुख की नींद सोना भी सोने के धातु के एक टुकड़े से कम नहीं। जिस के पास सोना धातु है, वे भले ही सुखपूर्वक न सो पावें। शायद ईश्वर सब का कृपा पात्र रहना चाहता था। इसलिए उसने सोने जैसे शब्द के द्वि-अर्थ प्रदान कर उसे बहुमूल्यता में रख दिया।

इस प्रकार, सभी सोने के लिये लालायित रहते हैं। पर वास्तविक सोना वही उपार्जन कर सकता है, जिसने न सोकर ही, न सोने का बहाना त्याग कर ही, अथक परिश्रम किया है। किंकर्त्तव्य विमूढ़ बने बैठे रहने से सोना न दृष्टिगोचर ही हो सकेगा और न तो सोने के अभाव में रात्रिका सोना ही अच्छा लगेगा।

मेरे एक सोना नानी थी। यद्यपि उनका यह नाम नहीं था। हमी लोगों ने, उनके सुरुचिपूर्ण कहानी कहने पर, उनका नामकरण किया था यह बाल्यकाल किम्वा शैशवावस्था की बात है जब कि हमें सोने की इतनी प्रमुखता, बहुमूल्यता का भान ही न था। काश, आप लोगों के भी जीवन में सोना जैसी नानी आई हों। वह सोना नानी 'सोन चिरइया' कहानी कहती थी और उन्हीं के अन्तिम शब्दों से हमें यह प्रेरणा भी मिलती थी कि बेटा, यह भारत भी कभी सोने की चिड़िया थी।

कहानी

कलाकार

श्री नरेन्द्र
एम० ए०

★

विशाल नगर के छोर पर एक भव्य मन्दिर के पास एक छोटी सी कुटिया है। चारों तरफ छोटे-छोटे जंगली फूल के पौधे हैं; पास के टूटे से द्वार पर एक छोटा-सा लकड़ी का बोर्ड रखा है जिस पर सफेद अक्षरों में लिखा है। 'पागल चित्रशाला। मनचले युवक युवतियां और वृद्ध स्त्री-पुरुष सभी सुबह-शाम यहां एकत्रित होते हैं। कोई मन्दिर में भगवान के दर्शन के लिये, कोई हवाखोरी के लिए, कोई कलाकार की चित्रशाला देखने के लिये, बच्चों का जमघट तो हमेशा यहां जमा रहता है। कोई मास्टर की मार के डर से, कोई माता की झिड़क से और प्रायः सभी चाकलेट के लालच से चित्रशाला को घेरे रहते थे। चित्रशाला किसी का विश्राम-स्थल किसी का क्रीड़ास्थल तथा किसी के लिए मिठाई की खान और किसी के लिये रसभरी कहानियों का मधुवन है।

बसंत ऋतु का आगमन हो चुका था। प्रकृति का सौंदर्य निर्दोष सुन्दर षोडषी के समान आकर्षक था। यौवन की मस्ती में तरुवर डोल रहे थे। संध्या के सुहावने समय में सूर्य भगवान ने अपनी लाल रश्मियों का चोला पहन कर प्रकृतिदेवी को और भी अधिक मोहक और लावण्यपूर्ण रूप दिया था। ऐसे में अचानक तरुवर मस्ती में लहराते घूमने लगे देखते ही देखते सूर्य भगवान ने अपना सुन्दर सुनहरी चोला सिकोड़ लिया। रिमझिम वर्षा होने लगी।

इतने में पांच छः चंचल युवतियां रंगबिरंगी साड़ियों में सुसज्जित हिरनियों की तरह उछलती हुई, पानी की बूंदों से चेहरे का पाउडर और लिपस्टिक का रंग बिखर न जाय, इस डर से चित्रशाला में तेजी से घुसीं। सभी यौवनावस्था के प्रवेश द्वार में पदार्पण कर चुकी थीं। किसी कालेज की छात्रायें मालूम होती थीं।

सुनसान कमरे की दीवारें चित्रों से भरी थीं। कमरे के अस्तव्यस्त सामान से ही मालिक के एकाकीपन का ज्ञान हो जाता था। जमीन पर कहीं बोर्ड, कहीं ब्रुश, कहीं रंग और कहीं मूर्तियां नजर आ रहीं थीं। सभी कलाकार की कृतियों से प्रभावित हो खोई सी चित्रों को निहार रही थी। 'सुन्दर', 'आश्चर्यमय', 'अद्भुतम' आदि शब्द कभी कभी निस्तब्धता भंग कर देते थे। सब एक दूसरे को देख किसी को खोजने का प्रयत्न करने लगीं। एक ने उंगली से पीछे के बरामदे की ओर निर्देश किया। सभी उस तरफ चल दीं। देखा एक सुन्दर सा स्वस्थ युवक मैला ढीला कुरता और पायजामा पहिने, तन्मयता से कभी प्रकृति को निहारता और कभी ब्रश से अपने सन्मुख रखे हुए बोर्ड पर लाइनें खींचता। आहट सुन कर वह चौंका। ज्योंही पीछे देखा तो देखता ही रह गया। यों तो उसकी चित्रशाला खासी धर्मशाला ही थी, किन्तु आगंतुकों के पदार्पण से वह कुछ असमंजस में पड़ गया। 'माफ कीजियेगा—समझ में नहीं आता आप लोगों का कैसे स्वागत किया जाय। मैं तो इसका आदी नहीं, पर जब आप लोगों ने कष्ट उठाया ही है तो स्वागत करना जरूरी।आइए इस टूटी चारपाई पर ही बैठ जाइए।'

'स्वागत करने का इतना शौक है तो अब तक कोई स्वागताध्यक्ष चुन लिया होता?' उसमें से सब से कनिष्ठ किन्तु शोख बालिका शशि ने मुस्करा कर पूछा—'तो आप लोग यहां स्वयंवर रचाने आयी हैं।' शरारत भरे प्रश्न का जवाब उसी ढंग से कलाकार ने दिया। अपनी शर्म छिपाने के लिए सब खिलखिला कर हंस पड़ी। शशि ने कहा—'बात यह है कलाकार भैया भाभी के आजाने से हमें भी सुविधा हो जायगी और ये आगत् स्वागत का किस्सा ही खत्म हो जायगा।'

शादी तो मेरी हो चुकी है। आपकी भाभी आपके सामने हाजिर हैं। यदि आप न जान सकें, तो मेरा क्या दोष?' कलाकार ने कुछ गम्भीर होकर कहा। शशि मुस्कराकर बोली—'पहेलियां न बूझिये कलाकार, जी यदि नजर लग जाने का डर है, तो शुभनाम ही बता दीजिए।' 'हां हां जरूर उनका नाम भी उन्हीं के समान सुन्दर और मधुर है। सुनो उनका नाम है श्री मती कमलादेवी।' कलाकार ने हंसते हुए कहा।

सब लड़कियां (आश्चर्य से) कलादेवी! सच।

शशि—(उन में से एक को छोड़ते हुए) 'वाह मेरी कला भाभी अभी तक भेद छिपा रखा। अब पता चला हमें क्यों खींच लाई।'

सब लड़कियां उसे छेड़ती हैं। वह गुस्से में बाहर भागती है।

कलाकार—(हैरान सा) 'अरे, अरे यह कैसा मजाक है? सुनिये, मेरा मतलब तो यह था कि मैं कलाकार हूँ और मेरा विवाह कला से हुआ है। मेरी कला की कोई साकार प्रतिमा नहीं है, मेरी कला तो सृष्टि के कण कण में व्याप्त है। कलाकार ने किंचित विस्मित स्वर में कहा—'मैं यह नहीं जानता था कि आप में से किसी का नाम कला होगा।'

कला की दुर्दशा हो रही थी—सब लड़कियां उसका मजाक उड़ा रही थीं और उसके पीछे भाग रही थीं।

'अच्छा—कलाकार जी नमस्ते, फिर मिलेंगे। कह कर सब वहां से चल दीं।'

कलाकार कुछ देर तक कुछ चुप पूर्व घटित घटना के सम्बन्ध में विचार करने लगा। फिर स्वयं ही मुस्कराया तथा रंग और कूंची ले कर फिर अपने कार्य में लग गया।

जब उषाःकाल में मन्द हवा के थपथपाके ने उसे जगाया तो उसने देखा कि तख्ते पर जो तस्वीर बनी थी वह उस युवती की थी जिसे लड़कियों ने केवल इसलिए छेड़ा था कि उसका नाम कला था। अन्यमनस्क सा वह उठा, तेजी में चित्र पर एक कपड़ा ढांक बाहर निकल गया।

स्त्री जाति से वह अपरिचित तो नहीं था किन्तु कल की घटना से उसके जीवन में कुछ बेचैनी अवश्य पैदा हो गई थी। आंखों के सामने रह रह कर उस लावण्यमयी युवती का क्रोधित चित्र आ जाता—कानों में शशी के 'भाभी' शब्द की प्रतिध्वनी भी होती रहती।

दोपहर में जब बच्चों ने चाकलेट के लालच में अपने पागल चित्रकार को प्रवेशद्वार के समीप ही घेर लिया, तब उन्हें बहुत आश्चर्य और निराशा हुई। चाकलेट की जगह साबुन, आइना, कंघे, तेल और कुछ तैयार वस्त्र देख एक ने मुंह चढ़ा कर पूछा—पागल चाचा, मिठाई?'

पागल—'मिठाई! हां, देखो—गोविन्द हम चाकलेट लाना तो भूल ही गये, लो एक एक आने की चाकलेट ले कर सब खा लेना। बच्चे पैसे ले कर खुशी से उछलते हुये चल देते हैं।

संध्या समय जब मंगलाचरण अपना बोर्ड लेने चित्रशाला पहुँचे, तो यह नई व्यवस्था देख कर बोले— 'कोई मेहमान आये हैं क्या?'

पागल— "नहीं तो..."

मंगला— 'अच्छा तो बाबूजी, मुबारक हो, ईश्वर करे आपकी आशायें फलीभूत हों। ठीक भी तो है आखिर मनुष्य कब तक एकांकी जीवन व्यतीत कर सकता है और फिर कोई युवक बिना गृहस्थ बने समाज का आदर और विश्वास भी तो नहीं प्राप्त कर सकता। ठीक है, तो इस खुशी में आपने हमारा बोर्ड तो न बनाया होगा, चिंता नहीं, फिर आ जाऊंगा।'

पागल— 'नहीं, नहीं आपका बोर्ड तो तैयार है। यह रहा, आज आपकी बातें कुछ समझमें नहीं आईं।'

मंगला— 'अरे भाई, सत्य को आवरण की ढाल से छिपाया नहीं जा सकता। यह बाल कुछ धूप में सुफेद नहीं हुए, अभी आंखें मिली है तो कल पर भी बस जायगा।'

कलाकार मंगलाचरण की ओर दृष्टि गढ़ा कर देखता है, मानों उसके चेहरे के हावभाव से हृदयगत विचारोंका अध्ययन कर रहा है।

'समझ में नहीं आता, हर चीज बदली-सी मालूम देती है, परिवर्तन सृष्टि

[शेष पृष्ट २० पर]

कैलाश मानसरोवर

श्री महावीर शरण अग्रवाल

गीता में कहा है—

रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥

मैं ही रुद्रों में शंकर, यक्ष और राक्षसों में कुबेर, वसुओं में अग्नि और पर्वतों में मेरु कैलाश हूँ।

कैलाश और मानसरोवर के पुण्य प्रदेश जगतीतल में अपनी रमणीयता के लिए अद्वितीय हैं। इस महान् स्थान के सौंदर्य की गणना वेदों तक में आई है। शिव पार्वती का निवास स्थान और सुर-असुर, नर-यक्ष, किन्नर, गन्धर्व इत्यादि के लिए यह पर्वत एक क्रीड़ा-भूमि रहा है। कुबेर की राजधानी अलकापुरी कैलाश के समीप ही है। लक्ष्मण के मूर्छा-निवारण के लिए हनुमानजी ज्योतिष्मती संजीवनी बूटी को जिस द्रोणगिरि से लाए थे, वह इसी हिमालय में है। पांडवों ने राजसूय यज्ञ के लिए इसी पर्वत पर शिव की तपस्या करके पाशुपत और अन्य दिव्यास्त्रों को प्राप्त किया था। अश्वमेध के बाद इसी हिमालय के स्वर्गारोहण पर्वत से पांडवों ने स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया था। हिमालय के वनों में ही वस्तुत. भारत की रचना हुई थी। महाकवि कालिदास की कविता की अनुपम भेंट हिमालय के पर्वतों ने ही की थी।

हिन्दुओं के भूतल स्वर्ग कैलाश और मानसरोवर नामक महातीर्थ पश्चिमी तिब्बत में हैं। यह वह तपपुरी है, जहां पुराणों में वर्णित भस्मासुर भस्म हुआ, जहां लंकाधीश रावण ने शिव की तपस्या की, तथा इसी महान् पर्वत के पास सिंध, ब्रह्मपुत्र और करनाली नदियों के उद्गम स्थान हैं।

श्री कैलाश और पुनीत मानसरोवर उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत अलमोड़ा नगर से २४० मील ईशान कोण में और तिब्बत की राजधानी ल्हासासे ८०० मील मील पश्चिम की ओर हिमालय में स्थित है। इस स्थान के दृश्य बड़े मनोरम और रमणीय हैं। भूमंडल में कैलाश ऐश्वर्य मयी विभूति का अनुपम एवं निराला चमत्कार है। जिस समय इसकी चोटी पर प्रातः की किरणें पड़ती हैं, तो उसकी शोभा चांदी जैसी प्रतीत होती है। इस-लिए इसका रजताद्रि नाम सार्थक है। इसके शिखर स्वरूप शिखर से बर्फ के गिरते रहने से गोलाकार त्रिपुंड्र एवं दक्षिण मुख से सीढ़ी जैसी ऊर्ध्वपुंड्र विराजमान है। इस महान् पर्वत को तिब्बती भाषा में कङरिम्पोछे (पवित्र हिम) के नाम से प्रसिद्ध है। आध्यात्मिक दृष्टि-कोण से यहां पर सर्वोत्कृष्ट साधनोपयोगी साधन विद्यमान है। कैलाश पर प्रथम दृष्टिगत से ही एक दिव्य स्वरूप सामने आ जाता है। समुद्र के वक्षःस्थल से २२०२८ फीट की ऊंचाई पर कैलाश अपने मस्तक को उन्नत कर नीलाकाश का भेदन करता ऊपर चला जाता है। इसकी परिक्रमा की परिधि ३२ मील की है। इसके चारों ओर पांच मठ हैं। संस्कृत साहित्य में कैलाश की अपार महिमा गाई गई है। कैलाश से बीस मील की दूरी पर राजहंस से सुशोभित मानसरोवर और राक्षसताल का अवलोकन हो सकता है।

मानसरोवर आध्यात्मिक स्पन्दनों से युक्त, परम पवित्र, अतिप्राचीन गरिमामय तथा एक मनमोहक सरोवर है। हिन्दू शास्त्रों में मानसरोवर का उल्लेख बहुत जगह आता है। यह सरोवर ४० लाख वर्षों से अब तक वैसा ही रहता चला आया है। कैलाश के समीप होने से सरोवर की सौंदर्यभी बहुत अधिक हो गई है। प्रात.काल के समय यह महान स्थान चित्र विचित्र रंगों से रंग सा जाता है और रात्रि के समय चन्द्र की किरणों से चांदी से बिखरती प्रतीत होती है। इस महान स्थान के सौन्दर्य का आनन्द लेने के लिए दूर विदेशों से लोग आते हैं। यह समुद्रतल से १४६५० फीट स्वर्गीय ऊंचाई और ५४ मील की परिधि में और लगभग ३०० फीट गहराई में है। इस सरोवर का घेरा लगभग २०० वर्गमील है और इस के तट के साथ-साथ आठ मठ हैं।

जिन महानुभावों ने इस सुन्दर तट का दर्शन कर लिया, उन्हें सदा यही इच्छा होती है कि इस पवित्र स्थान पर अपना जीवन व्यतीत कर दें। शीतल वायु के स्पर्श होते ही कवि अपनी कविता का सागर उंडेलने लगता है। चित्रकार अपनी तूलिका को अनुपम लचक देकर एक अद्भुत रूप दे देता है।

तिब्बती भाषा में कैलाश की बहुत वर्णन किया गया है। एक जगह लिखा है कि बुद्ध भगवान ने इस शंका से कि राक्षस इस शिखर को उखाड़ कर ऊपर न ले जाये इसे चारों ओर से पैरों से दबा दिया था। आज भी कैलाश के चारों ओर बुद्ध भगवान के चार पदचिन्ह आज भी दृष्टिगत होते हैं। इस महान पर्वत के चारों ओर देवी-देवताओं के स्थान हैं। कैलाश के दक्षिण में हनुमान जी का आसन है।

गोवोफेड नाम का राक्षस अपना एक पग भारतमें दूसरा कैलाश के पश्चिम में रखता था अधिष्ठातृ देवता द्वारा शापित होकर वह शिलारूपमें परिणत हो गया। आजकल कैलाश के पश्चिम में जो गोवोफेड नामक पहाड़ है, वह वही राक्षस है।

एक समय लकगक ह्वो राक्षसहद का राजा केवल तीन पग में भारत जाकर बुद्ध भगवान की स्वर्ण मूर्ति लाकर राक्षस तल में रख कर कैलाश चला गया और उसे चारों ओर से रस्सी से बांध कर उठाने को उद्यत हुआ। इस दृश्य को बुद्ध भगवान ने दिव्य दृष्टि से जान लिया और अपने पांच सौ बोधि सत्वों के साथ हंस रूप से वायुपथ से उड़ कर बैकुण्ठ पहुंच गये। वहां पहुंच कर अनुपम रूप में नृत्य करने लगे और अपनी इस दशा से राक्षस को प्रातः तक रोक रखा। जब वह प्रातः के समय कैलाश को उठाने लगा तो भगवान बुद्ध ने चारों तरफ से दबा दिया और शाप दिया कि तू पत्थर हो जा। उस शिलाभूत रूप में गोवोफेड उसी पर्वत का नाम है।

पुराणों में कहा गया है कि कैलाश का पूर्व भाग ब्राह्मण जैसा श्वेत, दक्षिण भाग वैश्य जैसा पीत, उत्तर भाग क्षत्रिय जैसे रक्त और पश्चिम भाग शूद्र जैसा श्याम है। चारों तरफ के सुरक्षा के लिए बड़े-बड़े पर्वत हैं। रामायण और महाभारत में भी कैलाश की गणना गाई गई है।

लंकाधीश रावण की तपस्या जब पूर्ण नहीं हो सकी तो रावण कैलाश के नीचे घुस गया ताकि उसे हिला दे और भगवान शिव की तपस्या तोड़ दे। भगवान को यह उद्देश्य मालूम होते ही रावण के शीश को नीचे दबा दिया। उस समय रावण ने अपने दस सिरों को काट कर सितार बनाया और शिव के तांडव नृत्य का स्तोत्र रचा कर गाने बजाने लगा। इस बात से प्रसन्न होकर शिव ने रावण को वरदान दिया।

———

आधी दुनिया

स्वावलम्बी जीवन और विवाह

श्री केशवदेव मिश्र 'कमल'

यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि विभिन्न सरकारी विभागों में काम करने वाली युवतियों में से केवल २० प्रतिशत ही ऐसी होती हैं, जो अपने विवाह के बाद सरकारी नौकरी पर टिकी रहती हैं। शिक्षा और चिकित्सा विभाग ही शायद ऐसे विभाग हैं, जहां विवाह के उपरान्त भी युवतियां कार्य करना पसंद कर सकती हैं।

जो महिलायें कोई कार्य करना चाहती हैं, उनके लिये विवाह एक ऐसी अड़चन पैदा कर देता है, जिससे शायद वे अपने योग्य नौकरी तलाश नहीं कर पातीं। प्रत्येक युवती नौकरी करते समय यह अनुभव करती है, कि कुछ समय काम करने के बाद जब वह अपने कार्य में पूर्णतया योग्य हो जावेगी, तो विवाह के कारण बाध्य होकर शायद उसे वह कार्य छोड़ना पड़ जाये। यही कारण है कि महिलाओं को लोग किसी नौकरी पर लगाने में आगा-पीछा सोचते हैं। प्रत्येक भारतीय युवती के लिए विवाह जीवन का एक अनिवार्य अंग है। अतः जब वह किसी काम पर लगती है तो ऐसा प्रतीत होता है कि कालेज की शिक्षा समाप्ति के बाद और विवाह होने तक के बीच के समय को व्यर्थ में न खो कर, उसका एक प्रकार से सदुपयोग कर लेना चाहती है। क्योंकि इस बीच की समय में कोई नौकरी उसके मनोरंजन का भी साधन बन जाती है। युवतियों द्वारा विवाह के बाद नौकरी छोड़ देने पर उन का काम किन्हीं ऐसे व्यक्तियों के पास आ पड़ता है, जो उसमें अनभिज्ञ और अनुभव हीन होते हैं। इस प्रकार विभागों का कार्य बिगड़ता है, और अधिकारी वर्ग प्रायः शिकायतें करते रहते हैं।

चूंकि अनेक शिक्षित युवतियां किसी न किसी कार्य में लगने की सदैव इच्छा बनाए रखती हैं। अतः इस समस्या पर गंभीरता-पूर्वक विचार करना आवश्यक है। इस गंभीर समस्या के अनेक कारण प्रतीत होते हैं। प्रथम तो यही कि विवाह के बाद महिलाएं घरेलू धन्धों में, नये घर बसाने में और नये सम्बन्ध स्थापित करने में व्यस्त सी रहती हैं। जो समय कालेज की शिक्षा की समाप्ति के बाद व्यर्थ जाता प्रतीत होता था, वह आज काम-काज में भरा हुआ दिखाई देता है। इस समय में व्यस्त रहने के लिए किसी कार्य को ढूंढने की आवश्यकता नहीं होती. क्योंकि इस समय अनेक नई समस्यायें अपने आप पैदा हो जाती हैं। घरेलू कार्यों की जिम्मेदारी और रात-दिन कार्य में व्यस्त रहने के कारण दफ्तर में काम करने की आदत को वे प्रायः भूल-सी जाती हैं। इस प्रकार कुछ महीने अवकाश से ही दफ्तर में कार्य करने की भावना समाप्त सी हो जाती है। वैसे देखा जाय, तो युवती की इच्छा पर ही सब कुछ निर्भर रहता है।

यद्यपि स्त्री को काम में लगाने वाला मुख्य निर्देशक उसका पति होता ही है। तथापि ससुराल में उसको सलाह देने वाले अनेक और व्यक्ति होते हैं। कुछ भी कहें, अधिकांशतः पति के रवैये पर ही यह सब कुछ निर्भर रहता है। यदि वह चाहे और सहयोग दें कि उसकी पत्नी किसी कार्य में लगी रहे, तो महिला के लिए घर के दूसरे लोगों के विरोध के बावजूद भी किसी कार्य में लगे रहना काफी आसान हो सकता है। परन्तु, देखा गया है कि पति इसमें विघ्न बन कर सामने आते हैं। वे सोचते हैं हैं कि इस प्रकार उनकी पत्नी आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगी और अपना स्वयं का क्षेत्र तैयार कर अपना भिन्न व्यक्तित्व स्थापित कर लेगी और स्वतंत्र महिला बन जायगी। इस सबको पति बरदाश्त नहीं कर सकता, क्योंकि वह चाहता है, कि उसकी पत्नी उसके बताये हुए तरीकों पर उसकी इच्छानुसार ही जीवन व्यतीत करे।

इस समस्या के भी अनेक पहलू हैं। यह सत्य है, कि जो महिला अपना पूरा समय और योग्यता घरेलू काम धंधों में लगाती है, वह एक आदर्श व योग्य पत्नी उसकी अपेक्षा अधिक सिद्ध होगी, जोकि इधर उधर करके अपना कार्य समाप्त कर देती हैं। वह घर के अनेक आनन्दों का वे अनुभव प्राप्त नहीं ले सकती।

शारीरिक शक्ति का प्रश्न भी कम महत्व का नहीं है। यदि एक स्त्री घरेलू काम धंधों के साथ दफ्तर का कार्य भी करती है तो उसके लिए सामाजिक सम्बन्ध

(शेष पृष्ठ १२ पर)

अमेरिका की मातृ-समिति ने अमेरिका के सामाजिक तथा शिक्षण क्षेत्र की प्रमुख नेत्री श्रीमती एलिजाबेथ बेन्डर क्लाउड को 'वर्ष की माता' चुना है।

प्रजातंत्रवादी चैक महिला

अमेरिका के प्रसिद्ध पत्र न्यूयार्क टाइम्स ने 'डेथ इन प्रेग' (प्रेग में बलिदान) शीर्षक से एक अग्र लेख प्रकाशित किया है, जिसमें यह व्यक्त किया है कि किस तरह एक देशभक्त चैक महिला ने 'प्रजातन्त्रीय स्वतन्त्रता में अपने आदर्शों' के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया। यह महिला डाक्टर मिलाडा होरेकोवा हैं, जिनको चैक साम्यवादी सरकार ने गत सप्ताह फांसी दे दी।

डा० होरेकोवा चैक संसद की भूतपूर्व सदस्या तथा राष्ट्रीय समाजवाद पार्टी की, जिसे अब अवैध करार दे दिया गया है, भूतपूर्व अध्यक्ष थीं। आपको प्रेग में राजद्रोह और जासूसी कार्य के अपराध में फांसी दी गई है।

आपके अमेरिका और विश्व भर में अनेकों मित्र हैं, जो आपको कट्टर देशभक्त, और प्रजातन्त्रवादी जानते थे, और बड़ी प्रशंसा करते थे। युद्धकाल में आपने निसंकोच हो कर नाजी अत्याचारों का प्रतिरोध किया था और इसमें अपने जीवन की भी बाजी लगा दी थी। आप को जर्मनों ने नजरबन्दी शिविर में बन्द कर दिया था।

नजरबन्दी शिविर में आपके साथ चैक सीनेट की एक भूतपूर्व सदस्या मैडम प्लामिनकोवा भी थीं, जिन्होंने १९२३ में राष्ट्रीय महिला परिषद की स्थापना की थी आपको ३० जून १९४२ में जर्मनों ने फांसी दे दी थी।

नारी-जीवन

● दिल्ली की नगरपालिका ने अपने एक अधिवेशन में निश्चय किया है कि गुप्त रोगों की चिकित्सा के लिये एक चिकित्सालय खोला जाय, जहां वेश्याओं को मुफ्त इलाज की सुविधायें दी जायें। वेश्याओं के लिये इस प्रकार के चिकित्सालय खोलने का सुझाव १९४५ में सरदार सुन्दरसिंह घूरिया ने किया था। उन्होंने वेश्याओं को लाइसैंस की व्यवस्था जारी करने की और हर पन्द्रहवें दिन डाक्टरी परीक्षा करके उन्हें गुप्त बीमारियां न होने का प्रमाण पत्र देने का प्रस्ताव कमेटी के सामने रखा था। किन्तु कुछ सदस्यों ने इस प्रस्ताव का यह कह कर विरोध किया कि वेश्याओं को डाक्टरी प्रमाणपत्र देने से वेश्यावृत्ति को प्रोत्साहन मिलेगा। विरोधी सदस्य का मत है कि वेश्याओं को शहर के जीवन से सर्वथा पृथक रखना चाहिए। एक सदस्य ने लाइसैंस और प्रमाणपत्र देने के सुझाव को पसन्द किया और कहा कि वेश्याओं को शहर से अलग कर देने से वेश्यावृत्ति घटने की बजाय बढ़ जायेगी। आपने सम्भावना प्रकट की कि डाक्टरी देख रेख और लाइसैंस के कारण सम्भवतः वेश्यायें सामाजिक जीवन स्वीकार कर लें।

● प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी मसूरी के सवोय होटल में सौंदर्य प्रतियोगिता हुई, जिसमें श्रीमती गीतावुट्यालिया को मिस मसूरी की उपाधि से विभूषित किया गया। इसी प्रकार की प्रतियोगिता मिस शिमला के चुनाव के लिये भी हुई थी, जिसमें कुमारी शीला केवलरेमानी को मिस शिमला चुना गया। भारत की राजधानी देहली में अभी तक इस प्रकार की प्रतियोगितायें प्रारम्भ नहीं हुई हैं, अन्यथा देहली की महिलायें क्या कभी पीछे रह सकती थीं! आशा है देहली की प्रगतिशील सौन्दर्यप्रिय ललनायें इस ओर ध्यान देंगी।

● विभाजन के दुःखद अभिशापों के परिणामस्वरूप हजारों की संख्या में सम्भ्रान्त कुल की महिलाओं को देहली में अपने मा बापों तथा संरक्षकों से बिछुड़ कर नारकीय जीवन बिताने को बाध्य होना पड़ा है। पुलिस की सहायता से भ्रष्टाचार विरोधी बोर्ड ने कुछ अपहृत महिलाओं को इस नारकीय जीवन से मुक्त किया है। इस प्रकार के पतित जीवन से मुक्त महिलाओं ने पुनः सामाजिक जीवन व्यतीत करने की प्रतिज्ञा की है तथा सम्बद्ध अधिकारी भी उनके जीवन को सुखी बनाने के लिये प्रयत्नशील हैं।

समाचार चित्रावलि

उत्तरी योरोप के देशों द्वारा आयोजित एक सुरक्षा परिषद मैं ब्रिटेन, डेनमार्क तथा ब्रिटेन के प्रतिनिधि विचार विमर्श कर रहे हैं

ब्रिटेन की वायु सेना के कुछ उच्चाधिकारी रेडियो द्वारा संचालित एक नवनिर्मित नौका का निरीक्षण कर रहे हैं।

ब्रिटेन की एक प्रसिद्ध विज्ञानशाला।
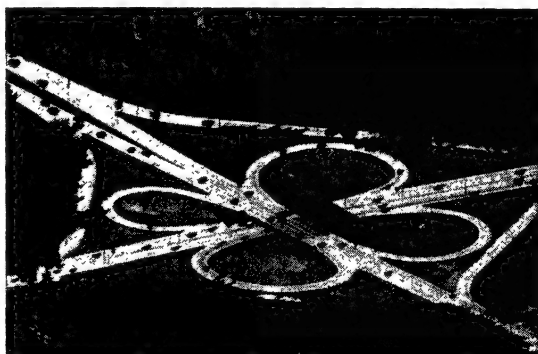
आदर्श यातायात प्रणाली

★

नागरिक सुरक्षा की दृष्टि से सुव्यवस्थित यातायात का विशेष महत्व है। नित्य प्रति होने वाली दुर्घटनाओं को रोकने के लिये ब्रिटेन तथा अमेरिका में कई प्रकार के नवीनतम साधन अपनाये गये हैं। जिनसे दुर्घटनाओं की सम्भावना प्रायः नहीं रहती। अमेरिका के विभिन्न भागों में लगभग ३१ करोड़ मोटरें हमेशा ही घूमती रहती हैं, किन्तु वहां दुर्घटनाओं की संख्या बहुत कम है। इसका कारण यह है कि वहां रेलगाड़ियों की पटरियों के ढंग की कोरे की पटरियों का जाल बिछा हुआ है, जिसमें आने-जाने, मुड़ने तथा रुकने की निश्चित प्रणाली है। ब्रिटेन ने भी इसी प्रणाली का अवलम्बन किया है तथा यातायात सम्बन्धी कुछ नियम बनाए हैं जिनका परिपालन पुलिस देख रेख में कठोरता के साथ होता है

★

अमेरिका के प्रसिद्ध उपन्यासकार विलियम फौकनर जिनको अपनी एक कृति पर अमेरिका का 'होवेल्स' पदक प्रदान किया गया है।

संयुक्त राष्ट्र परिषद के अधिवेशन में एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या पर विचार-विनिमय हो रहा है।

ब्रिटेन की इस प्रकार की 'मिजेट पनडुब्बियों' ने गत महायुद्ध में शत्रुओं के जलयानों को डुबाने में अपूर्व सफलता प्राप्त की थी। सिंगापुर में जापानी क्रूजर को डुबाने का श्रेय भी इन्हीं पनडुब्बियों को प्राप्त है।
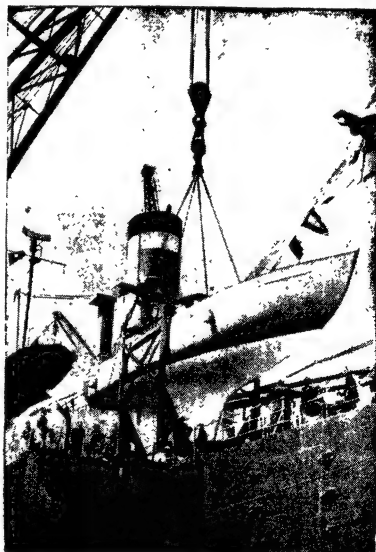
ब्रिटेन तथा अमेरिका के बीच होने वाली जहाजी दौड़ में भाग लेने के लिए ब्रिटेन का 'गुलेविन' पोत अमेरिका के लिए प्रस्थान कर रहा है।

रूस और पश्चिमी यूरोप

औद्योगिक क्षमता की तुलना

नेपोलियन ने कहा था कि सेनाएं अपने पेटों के बल चलती हैं। आज की सेनाओं की आवश्यकताएं सम्राट नेपोलियन की सेना की तुलना में बहुत बढ़ी हैं। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए महान औद्योगिक व्यवस्थाओं के अभाव में वे उपयोगी कार्य नहीं कर सकतीं।

द्वितीय विश्वयुद्ध में जनतन्त्रात्मक जगत की जीत का निर्णयात्मक कारण केवल उनका और उनके साथियों का साहस और युद्ध-भावना ही नहीं था किन्तु औद्योगिक उत्पादन-क्षमता और अपार टेक्नीकल आविष्कार, क्षमता भी विशेषतया संयुक्तराष्ट्र अमेरिका और ब्रिटेन की।

१९४५ से वैज्ञानिक और टेक्निकल युद्धविद्या में बहुत प्रगति हुई है, सशस्त्र बल यंत्रों और मशीनों का अधिकाधिक प्रयोग कर रहे हैं। फलतः यदि तीसरा युद्ध हुआ तो लड़ने वालों की औद्योगिक क्षमता और वैज्ञानिक आविष्कारिता युद्ध के परिणाम निश्चित करने में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगी। विरोधी दलों का औद्योगिक सन्तुलन केवल युद्ध का परिणाम निश्चित करने में ही महत्त्व नहीं रखता, किन्तु भावी आक्रमणकारी को युद्ध के भय से भयभीत करने के लिए भी।

इसलिए प्रश्न यह उठता है कि पश्चिमी जगत और सोवियत् गुट के मध्य में शक्ति का सन्तुलन क्या है? पूरी तुलना के लिए जिन संख्याओं की आवश्यकता है, उन्हें प्राप्त करना न सरल है और न सम्भव। यद्यपि पश्चिमी राष्ट्रों की औद्योगिक शक्ति का पता लगाना कठिन नहीं है, किन्तु सोवियत् यूनियन और उसके अधीनस्थ देशों के विषय में आवश्यक सूचना प्राप्त करना बहुत ही कठिन है। ये देश (शायद तुलना के भय से) उत्पत्तिविषयक उन संख्याओं को छिपा कर रखते हैं, जो अन्य देशों में आसानी से प्राप्त हो जाती हैं। फिर भी तुलना के लिए कुछ न कुछ मसाला तो मिल ही जाता है।

औद्योगिक शक्ति का आधार

औद्योगिक शक्ति और आधुनिक सैनिक शक्ति का आधार इस्पात है। योरोप के आर्थिक आयोग ने योरोपीय इस्पात उद्योग की एक आलोचना अभी प्रकाशित की है, जिसमें योरोप के मुख्य कच्चा लोहा और कच्चा इस्पात उत्पादन-केन्द्रों की संख्याएं दिखाई हैं और इनके आधार पर तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। इसी आलोचना से मालूम होता है कि पश्चिमी यूनियन के देशों में इस्पात उद्योग की उत्पादन क्षमता सोवियट समूह के देशों की तुलनामें तिगुनी अधिक है। संख्याएं इस प्रकार हैं— योरोपीय देशों के कच्चे लोहे की अधिकतम वार्षिक उत्पत्ति ३,५०,००,००० मेट्रिक टन है और सोवियट में लिए लगभग १,१६,००,००० मेट्रिक टन। कच्चे इस्पात में पश्चिमी जनतन्त्रों की अवस्था और भी अनुकूल है। इनकी सम्पूर्ण संख्या ४,५०,००,००० मेट्रिक टन वार्षिक है, सोवियत् समूह की १,३५,००,००० मेट्रिक टनों से कुछ कम।

यदि अमेरिका के महान् इस्पात उद्योग की उत्पत्ति ब्रिटेन, फ्रांस और अन्य पश्चिमी योरोपीय देशों की उत्पत्ति में जोड़ दी जाती है (और जनतन्त्रात्मक तथा सोवियत् समूहों की औद्योगिक शक्ति तथा सामरिक सम्भावनाओं के सच्चे तुलनात्मक अध्ययन के लिए ऐसा करना ही चाहिये) तो, इस्पात की दृष्टि से, जनतन्त्रों की शक्ति सोवियट की तुलनामें तीन नहीं, किन्तु नौ गुनी अधिक है। कच्चे तेल (मिट्टी) की उत्पत्तिके मामलेमें जनतन्त्र सोवियट समूह से और भी आगे है। १९४९ में जब विश्व की अनुमानित उत्पत्ति ४६,७६,६३,००० मेट्रिक टन थी, केवल संयुक्तराज्य अमेरिका की उत्पत्ति २५,१२,००,००० टन निकली। सोवियट यूनियन और पूर्वी योरप ने केवल ३,६३,८०,००० मेट्रिक टन उत्पन्न किये थे।

अन्य तुलनाएं

एक महान आधुनिक सैनिक मशीन की दूसरी मुख्य आवश्यकता यातायात की है। सोवियट यातायात प्रणाली की पूरी बातें बड़ी सावधानी से पोशीदा रक्खी गई हैं। हां, युद्ध के दिनों में ६५ हजार किलोमीटर रेलवे लाइनों, १३ हजार पुलों, लगभग साढ़े चार लाख माल डब्बों और लगभग सोलह हजार इंजनों के नष्ट हो जाने के कारण युद्धोत्तर-काल में सोवियट यूनियन के सामने एक अत्यन्त जटिल समस्या उपस्थित थी। प्राप्त प्रमाणों के अनुसार यद्यपि हानि पूरी करने में पर्याप्त प्रगति की जा चुकी है किन्तु सोवियट की यातायात प्रणाली आज भी पश्चिमी योरोप की तुलना में बहुत नीचे है। अटलांटिक पैक्ट के समय से सोवियट यूनियन पनडुब्बियों का एक बहुत बड़ा बेड़ा बनाने में लगा हुआ है। नौसेना निर्माण कार्यक्रम में १९५०-५१ तक हजार पनडुब्बियां पूरी तरह बनाने की बात कही गई है। किन्तु "जेन्स फाइटिंग शिप्स" नामक ब्रिटिश प्रकाशन के अनुसार (जो नौसेना सम्बन्धी अत्यन्त अधिकृत अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन माना जाता है) रूस के साधन इस कार्यक्रम की पूर्ति के लिए काफी नहीं। इस प्रकाशन का अनुमान है कि एक सौ या उससे थोड़ी अधिक ही पनडुब्बियां बनाई जा सकी हैं। कारीगरों और कारखाने के मैनेजर तथा फोरमैन जैसे कामकाजियों का अभाव औद्योगिक प्रणाली की एक अन्य त्रुटि है जिसका अनुभव युद्धकाल में मित्रराष्ट्रों के कारीगरों ने किया था। मालूम होता है कि ऐसी त्रुटि से जो फिजूलखर्ची और कार्य में अयोग्यता उत्पन्न होती है, वह आजकल भी जारी है। इसका प्रमाण सोवियट यूनियन और सोवियट अधीनस्थ देशों के इस वर्ष के मई दिवस आन्दोलन से मिलता है, क्योंकि उस समय कारखानों के बाहर रद्दी में फेंकी गई चीजों से यथासम्भव काम लेने की आवश्यकता पर बहुत ज्यादा जोर दिया जा रहा था।

सोवियट वैज्ञानिक

निस्सन्देह, कई प्रमुख सोवियट वैज्ञानिक बहुत योग्य व्यक्ति हैं। किन्तु रेडार और जेट वायुयान जैसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आविष्कारों के क्षेत्र में सोवियट यूनियन पश्चिमी योरोपीय राष्ट्रों और अमेरिका से बहुत पिछड़ा है। पिछले युद्ध में प्रतिरक्षा के आधुनिकतम साधनों के उपयोग सीखने के लिए सोवियट यूनियन पश्चिमी मित्रराष्ट्रों के वैज्ञानिकों और कारीगरों पर निर्भर था। इन साधनों और आविष्कारों में से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चीजें ब्रिटेन और संयुक्तराज्य में आविष्कृत और विकसित हुई थीं और उपलब्ध टेक्निकल ज्ञानराशि से रूस को सहायता दी गई थी।

कई अन्य नये हथियारों के विकास में सोवियट यूनियन के वैज्ञानिक ब्रिटेन और संयुक्तराज्य के सहयोगियों से बहुत पिछड़े हैं। ये नये हथियार वास्तविकता में महत्त्वपूर्ण हैं और सम्भावनाओं में और भी अधिक।

—फाविस विलियम्स

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त.

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन महिला धर्मशीला और उसकी लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। अनिरुद्ध अपने दल के साथ मिरजापुर के गांवों में फैली हैजे की महामारी में तन-मन से सेवा करता है, वहां से लौटने पर विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं वे लोग विवाहेच्छु भवानन्द और लड़की के मामा रसिकलाल को समझाते हैं। किन्तु इन्हें कुछ सफलता नहीं मिलती। अन्त में वे लोग विवाह को रोकने के उद्देश्य से विवाहस्थल को घेर लेते हैं। संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है और वहां वेश्याओं की दशा का अनुभव करती है। सुजाता हरिकिशन नामक एक सुसम्पन्न तथा सुन्दर युवक की ओर आकर्षित होती है।

[गतांक से आगे]

दोनों अपनी अपनी मोटर साइकलों पर सवार हुए। हरिकिशन की साइकल ने आसानी से सुजाता को पीछे छोड़ दिया। बहुत कोशिश करने पर भी सुजाता उसके साथ न चल सकी। हरिकिशन तीर की तरह बढ़ कर अदृश्य हो गया। सुजाता ने कुछ देर बाद देखा कि हरिकिशन साइकल रोक कर रास्ते के बगल में एक बहुत बड़े वृक्ष के पास खड़ा होकर सूर्यास्त देख रहा है। उसके तरुण सुन्दर चेहरे पर डूबते सूर्य की रोशनी एक विषादपूर्ण समारोह के साथ पड़ रही थी। सुजाता ने सोचा कि हरिकिशन कलाकार है, कवि है, या केवल भावुक है जो प्रकृति के समस्त उत्सवों के साथ ही निकटता का अनुभव करता है। हरिकिशन के चेहरे पर एक अनिर्वचनीय तृप्ति सुनहले अक्षरों में लिखी थी।

साइकल की फटफट की आवाज सुन कर हरिकिशन ने मुड़ कर देखा और एक छलांग में अपनी साइकल पर चढ़ कर स्टार्ट दे दिया। अगल बगल में फिर दो मोटर साइकलें चलने लगीं।

अब बस्ती आ गई थी। बस्ती के लोग इस जोड़ी की तरफ देख कर मुस्करा रहे थे। इसी बात को ध्यान में रख कर या अन्य जिस किसी कारण से हो, एक मोड़ पर हरिकिशन सुजाता को एक छोटा सा नमस्कार कर अलग हो गया।

गोधूली की इस बेला में इस नव परिचित तरुण के साथ इस प्रकार से अलग हो जाना सुजाता को कवित्वपूर्ण और ऐतिहासिक ज्ञात हुआ। अनजाने में उसे एक बार अनिरुद्ध की बात याद आई, तत्पश्चात् उसने सोचा कि अब अनिरुद्ध के साथ उसका सम्बन्ध ही क्या है! उसने एक क्षण के लिए अनिरुद्ध के साथ हरिकिशन की तुलना की, पर अगले ही क्षण अपने विचार प्रवाह से स्वयं ही सिहर कर दूसरी बात सोचने लगी। अब वह शहर के हृदय में आ पहुंची थी। अब बहुत ही सावधानी से साइकल चलानी पड़ रही थी।

कई दिन बाद सुजाता नोट लेने के लिए कापी, फाउन्टेन पेन आदि लेकर हरिकिशन के मकान पर पहुंची। बहुत बड़ा मकान था; जिधर देखा उधर नौकर ही नौकर थे। कहीं पर किसी स्त्री का पता नहीं था।

हरिकिशन खाकी कमीज खाकी हाफ पैन्ट, ब्रिचेज और बूट में था। दूर दीवार पर चांदमारी बनी हुई थी और एक तरफ दो तीन राइफलें और कारतूस का बक्स रखा हुआ था।

बन्दूकों की तरफ दिखाते हुए हरिकिशन ने कहा—"आप इनका कुछ जानते हैं?"

सुजाता मुस्करा कर बोली "मैं केवल इतना ही जानती हूँ कि ये बन्दूकें हैं, ये कारतूस हैं और हां यह चांदमारी है।"

सुजाता के हाथ में एक बन्दूक देते हुए हरिकिशन ने कहा—"तो आप तो फिर सभी कुछ जानती हैं। सिर्फ बाकी रहा इतना जानना कि किस प्रकार से गोलियां भरी जाती हैं और किस प्रकार से दागी जाती हैं। यह कह कर उसने अपनी हाथ की रायफल को मैगजिन में झट से गोलियां भरीं और बिना किसी को सावधान किये चांदमारी पर धांय धांय गोली चलाने लगा।

सुजाता ने आश्चर्य के साथ हरिकिशन की ओर देखा। हरिकिशन ने जब मैगजिन खाली कर दी तो सुजाता की ओर देखा, बोला—"यह मेरा एक व्यसन है, इसमें मैंने बहुत समय नष्ट किया।"

और कितने रुपये।

"रुपये तुच्छ हैं, पर समय का मूल्य है।"

आप अवश्य ही अच्छे निशाने वाज होंगे!

बालक की तरह उत्साह से हरिकिशन ने कहा—"सो भी नहीं होऊंगा! मैं आपके सिर पर एक सेब रख कर उसे मार सकता हूँ।" यह कह कर वह सचमुच ही सुजाता को अपना कौशल दिखाने को तैयार हो गया।

सुजाता ने किंचित भयपूर्ण मुद्रा से किन्तु मुस्करा कर कहा— रहने दीजिये, मैं यौंही आपका लोहा माने लेती हूँ।

आप शायद डर रही हैं। मेरा मतलब हिचकिचा रही हैं। अच्छी बात है कह कर हरिकिशन सीधा मकान के अंदर गया और एक छोकरे को तथा सेब को लेकर लौटा। बहुत बढ़िया कुल्लू का सेब।

इशारा पाते ही छोकरा सिर पर सेब रख कर बैठ गया। सुजाता का हृदय धड़कने लगा। माना कि हरिकिशन अच्छा निशाना मारता है, और उसमें अविचलित आत्मविश्वास है, पर यदि किसी कारण से जरा मामला गड़बड़ा गया तो एक बहुमूल्य प्राण समाप्त हो जायेगा। बहुत खतरनाक खेल है, इतना अधिक कि प्रायः अमानुषिक है।

हरिकिशन ने बन्दूक उठा ली, और बिना निशाना लिये ही धांय से मार दिया। एक तीव्र धुआं निकला। सुजाता का हृदय धकधक कर रहा था। उसके जीवन में ऐसा अनुभव कभी नहीं हुआ।

सेब छिन्न भिन्न हो गया, और साथ ही साथ वह छोकरा तालियां पीटते हुए हंसते हंसते हरिकिशन के सामने आ कर खड़ा हो गया। हरिकिशन ने खूब जोर से उसकी पीठ ठोंकी।

सुजाता को ऐसा मालूम दिया कि वह एक नाटक देख रही है। वह मन ही मन हरिकिशन की दक्षता की प्रशंसा बिना किये नहीं रह सकी। उसे ऐसा मालूम दिया कि यह व्यक्ति धीरे धीरे उसके सारे अस्तित्व पर शासन स्थापित कर रहा है। एक रहस्यमय आकर्षण से वह खिंची जा रही थी।

बन्दूक के अन्य प्रकार के कौशल दिखाते दिखाते दस बज गये। सुजाता इसके बाद नोट लिखने का प्रस्ताव न कर सकी। उस समय नोट लिखने का प्रस्ताव उसे कुछ अशोभन-सा प्रतीत हुआ।

इस प्रकार सुजाता बीच बीच में कापी ले कर आती पर लंदन, पेरिस, बर्लिन और न जाने कहां कहां की कहानी छिड़ जाती। उसी में घटों बीत जाते और सिलसिला रह जाता। बाद को सुजाता ने नोटबुक लाने की आवश्यकता ही नहीं समझी।

[२४]

अनिरुद्ध को एक दिन एक लम्बे लिफाफे में बीमा द्वारा भेजा हुआ एक पत्र मिला। उसे पत्र पत्रिकाओं के सम्पादकों से बीच बीच में मोटा मोटी चिट्ठियां मिला करती थी। पर यह चिट्ठी तो बीमा की हुई थी, तथा कुछ दूसरे ही ढंग की थी। इस लिफाफे के भेजने वाले उसके ताऊ राय साहब हरिकेशव थे।

अनिरुद्ध ने लिफाफे को फाड़ कर देखा तो उसमें से सौ सौ रुपये के बहुत से नोट निकले। अनिरुद्ध ने उनको अलग रख कर साथ के पत्र को पढ़ा। पत्र यों था—

"तुम्हारी मां श्रीमती स्नेहलता की मृत्युशय्या के पास मैं सपरिवार उपस्थित था। यथा साध्य चिकित्सा करने पर भी भगवान की इच्छा पूर्ण हुई। मेरी ही सलाह के अनुसार वे मकान मुझे दे गयीं। शर्त यह थी कि यदि तुम किसी दिन अपना गलत रास्ता छोड़ कर मन तन

भद्र रीति के अनुसार ब्याह करके गृहस्थ हो जाओ तो वह मकान तुम्हें लौटाया जायगा, नहीं तो इस मकान को बेच कर जो धन मिलेगा वह किसी विश्वविद्यालय को दे दिया जायेगा।"

"अब मैं विश्वस्त सूत्र से जान चुका हूँ कि तुम गलत रास्ता छोड़ कर गृहस्थ हो चुके हो, इसलिये मैं तुम्हारा मकान तुम्हें वापस दे रहा हूँ। मकान के स्वामित्व के लिये जिन दस्तावेजों की आवश्यकता होती है, मैं उन्हें इसी पत्र में भेज रहा हूँ। इतने दिनों तक मकान के किराये से जो आमदनी हुई है, वह हिसाब करके इसके साथ भेजी जा रही है।"

"इसके साथ ही तुम्हारी ताई जी बहू जी को आशीर्वाद के रूप में पांच सौ रुपये भेज रही हैं, वे भी इसी लिफाफे में बन्द हैं।"

"आशा करता हूँ कि भविष्य में तुम ऐसे चलोगे जिससे तुम्हारे वास्तविक हितैषियों को सुख हो।"

हम लोगों का आशीर्वाद।

तुम्हारा हितैषी
(राय साहब) हरिकेशव

अनिरुद्ध को जब यह पत्र प्राप्त हुआ तो उसकी समझ में यह न आया कि वह हंसे या नाराज हो। अवश्य उसे मकान तथा रुपये पाने पर प्रसन्नता हुई। विवाह करके दूसरे के मकान में रहने की असुविधा को वह अनुभव करने लगा था, विशेष कर ऐसा विवाह जिसमें पति ने प्रण किया था कि वह स्त्री के साथ एक अपरिचित व्यक्ति की तरह व्यवहार करेगा।

अनिरुद्ध ने उसी दिन किरायेदारों को नोटिस दे दिया और उनके जाते ही वह सपरिवार उस मकान में पहुंचा। अनिरुद्ध पहुंचने को तो इस मकान में पहुंच गया, पर उसे इससे कुछ विशेष सन्तोष नहीं हुआ, क्योंकि अब उसने यह देखा कि स्त्री को अलग रखने का अर्थ उसे सीधे सीधे एकान्त वास की सजा दे दना था। वह इतना निष्ठुर नहीं होना चाहता था। इसके अतिरिक्त वह अपने सम्बन्ध में भी कुछ डर रहा था। डर यह था कि बहुत दिनों तक एक मकान में रहने पर न मालूम क्या हो। उसने आराज हो कर चौबीसों घंटों के लिए एक नौकरानी रख ली। बनारस में ऐसी नौकरानी बहुत आसानी से मिल गई। इसके अतिरिक्त वह अपने मित्र रसिकलाल तथा उसके मित्र कवि-कल्याकान्त को अक्सर बुलाने लगा।

नित्य सन्ध्या समय जमकर एक अड्डा बैठने लगा। स्वभावतः ऐसे अड्डों में सुई सिलाई से लेकर बड़ी से बड़ी आध्यात्मिक समस्या पर विचार होता था। कल्याकान्त और आशीष कुमार इन सब वाग्‌ युद्धों में प्रधान भाग लेते थे। विवाह के बाद से अनिरुद्ध को न मालूम क्या हो गया था, वह किसी विषय पर जोशीला व्याख्यान नहीं देता था। मानो उसके व्याख्यानों का स्रोत ही सूख गया था। जो अनिरुद्ध बात के अन्दर से बात बनाता था, और जिसकी हर बात में मौलिकता की छाप होती थी। वह जैसे कि आघात से एकाएक झुक गया था। अवश्य उसके नियमित जीवन में कोई अन्तर नहीं आ रहा था, यंत्र चालित की तरह वह सभी काम किए जाता था, पर वह उत्साह, लगन, स्पर्धा कुछ भी नहीं रह गयी थी। उसके जीवन में जैसे कहीं घुन लग चुका था।

कल्याकान्त आज सन्ध्या समय की बैठक में कह रहे थे—कविता बहुत ही कृत्रिम वस्तु है—जो उसे पढ़ता है, उसके लिए शायद उतनी नहीं, पर जो लिखता है उसके लिए अवश्य कृत्रिम है। यहां तक कि लिखने के बाद स्वयं कवि के लिए कविता स्वाभाविक हो जाती है, परन्तु लिखने समय यह साहित्य के अन्य अंगों की अपेक्षा अधिक कृत्रिम होती है

आशीष कुमार ने बात को बीच ही में काटकर कहा—आप तो बिलकुल ही नयी बात कह रहे हैं, हम तो बराबर कुछ दूसरा ही सुनते आ रहे थे……

हां आप लोग बराबर पढ़ते सुनते आ रहे हैं, पर वह गलत है। मैं अपने अनुभव से कह रहा हूँ। मैं जिस बात को कह रहा हूँ पहले उसे समझने की चेष्टा कीजिए। मैं यह नहीं कह रहा कि कवित्व की अनुभूति ही कृत्रिम है। नहीं वह कृत्रिम नहीं है। यदि स्वच्छ मेघ मुक्त दिवस में कोई उषा काल में पूर्व की ओर उगते हुए सूर्य की ओर तथा और आकाश की उस स्वर्ण रजत मण्डित छवि की ओर निहारे तो आसानी से उसके मन में एक आनन्दानुभूति जाग्रत होगी, पर उसकी कविता में अर्थात् छन्दों बद्ध भाषा में व्यक्त करना दूसरी बात है। वह कम हो या अधिक हो कृत्रिम ही है। इतना तो अवश्य है रचना करते समय कवि स्वयं उस कृत्रिमता का अनुभव करता है। जो लोग छन्द रचना में सिद्धहस्त हो गए हैं, उनको यह कृत्रिमता बहुत कुछ नहीं अखरती। उन्हें एक तुक के लिए आध आध घंटे तक भटकना पड़ता है बहुधा तुक ही इस बात का निर्णय करता है कि कविता का रूप क्या होगा, जैसे मान लीजिए मैंने कहा—

अब इस पर मैं, कहना चाहता हूँ कि मोर नाचता है, पर इस बात को कह नहीं सकता। हिंदी भाषा में पढ़त के साथ तुक बैठ सकता है, ऐसे एक मकतपढ़त, बकत, मिरत, भरत इत्यादि है, इसलिये मेरे मन में मोर नाचने वाला जो भाव है, उसे या तो पीटपाट कर इन्हीं मकत, पढ़त, बकत आदि के अन्दर ले आना ही पड़ेगा या उसे अगली किसी पंक्ति के लिये स्थगित रखना पड़ेगा। इस प्रकार मेरा भाव अब यह हो गया है, पर समय-समय पर तुक ढूंढने में कुछ लाभ ही है। मान लीजिये कि वर्षा के वर्णन में मुझे कदम्ब, मोर, इन्द्रधनुष सब चीजें याद आयीं, पर यह याद नहीं आई कि सूखे पत्ते गिर रहे हैं, पर तुक खोजते हुए मुझे गिरत मिला, तो मुझे पत्तों के गिरने की बात याद आई तो मैंने कहा।

पातें गिरत।

इस क्षेत्र में केवल तुक की तलाश करते हुये हमें एक नया भाव मिला, यह कवि के लिये लाभ की बात हुई। रही अन्त्यानुप्रास हीन कविता — उसमें भी संस्कृत की तरह लघु गुरु न हो, बजन का बखेड़ा है ही।

डाक्टर ने कहा — आप स्वयं कवि होते हुये ऐसी बात कह रहे हैं!

हां, कवि होते हुए मैं ऐसी बात कह रहा हूं, केवल कवि नहीं, सब की राय से मैं एक बड़ा कवि मान लिया गया हूं — बूढ़े कवि ने एक बार चारों तरफ देख लिया फिर बोला — फ्रांस के सुप्रसिद्ध लेखक आनातोल ने कविता से अपने साहित्य-जीवन का सूत्रपात किया था, पर बाद को इन सब असुविधाओं का अनुभव कर, और यह देख कर कि उनकी प्रतिभा का एक बहुत बड़ा भाग तुक और छन्द के बखेड़े में नष्ट हो रहा है, उन्होंने सम्पूर्ण रूप से पद्य छोड़ कर गद्य लिखना शुरू किया।

डाक्टर ने आवेश में आकर कहा—

इससे तो आनातोल की पद्य प्रतिभा की कमी सूचित होती है न कि और कुछ। फ्रेंच-प्रतिभा की ही यह विशेषता है कि वह गद्य में ही अपने को व्यक्त कर सकती है। आप रवीन्द्रनाथ के सम्बन्ध में क्या कहते हैं!

इस प्रकार से आलोचना में गर्मी आती थी। कवि कल्याकान्त आज जिस मत का प्रतिपादन जोश के साथ करते थे, ठीक दस दिन बाद उसके विपरीत मत को उससे अधिक जोश के साथ प्रतिपादित करते थे, पर इससे कुछ आता-जाता नहीं था। बात करने की यदि कोई कला है, तो मानना पड़ेगा कि कल्याकान्त उसके आचार्य थे। जो वादविवाद वितंडा या झगड़े में परिणत होने जा रहा है, उसे अकस्मात वे परिहास की हवा दे कर ठंडा कर देते थे। युवक उन्हें बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। उनके अन्दर का विरोधाभास युवकों को विशेष रूप से आकर्षित करता था। उन्हें यह इच्छा होती थी कि बूढ़ा हो तो ऐसा हो। भारतीयों में कल्याकान्त एक रोमन थे। —क्रमशः

सम्पादक के नाम पत्र

हमारे पाठक क्या कहते हैं ?

● पाकिस्तान से अभी व्यापारिक समझौता न करो !
● राम को बदनाम करने का कुत्सित प्रयत्न !
● हमारा यह तरुण वर्ग !
● 'राजधानी' अंग्रेजी में क्यों !

अभी समझौता न करो

पश्चिमी पंजाब में गेहूँ ६) रु० मन बिक रहा है और कुछ स्थानों में तो और भी कम भाव हो गया है। इस कारण पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति उससे कहीं अधिक खराब है, जो आज भारत की है। और इसीलिए आज पाकिस्तान का व्यापारिक प्रतिनिधि मण्डल भारत घूम रहा है। आश्चर्य की बात यह है कि पाकिस्तान ५.६ रु० मन की कीमत के गेहूँ के लिये हम से १४) रु० मांग रहा है। मेरी सम्मति है कि आज भारत को उससे किसी शर्त पर व्यापार नहीं करना चाहिये। यह संभव है कि वह १४) रु० से १०) रु० पर तैयार हो जाय। किन्तु आज हमारी मुख्य समस्या भाव की नहीं है। पाकिस्तान और भारत में मुक्त व्यापार की मांग प्रथम मांग होनी चाहिये। पाकिस्तान ने विनिमय दर को बदल कर जो शरारत की है, वह आज भी उस पर अड़ा हुआ है। यह ठीक है कि आज देश में अन्न संकट है और इसलिये पाकिस्तान से गेहूं लेने की इच्छा स्वाभाविक है, पर यही समय है, उस पर चोट करने और उसे विनिमय दर के प्रश्न पर झुकाने का। अगर भारत सरकार द्वारा नियत मैत्र कमेटी की रिपोर्ट ठीक है, तो हमें अन्न स्थिति के सम्बन्ध में चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं। यदि गेहूँ एकत्र करने में कुछ और प्रयत्न किया जाय, तो अन्न बाहर से मंगाने की आवश्यकता ही न पड़े। मैत्र कमेटी ने बताया है कि १,५०,००० टन गेहूँ तो रेलवे से चोरी हो जाता है। इतना ही अनाज पाकिस्तान से मंगाने की बात चल रही है। आज वस्तुतः भारत को पाकिस्तान से गेहूं मंगाने की इतनी चिन्ता नहीं है, जितनी पाकिस्तान को अपना गेहूं बेचने की उत्सुकता है। उस की अर्थव्यवस्था को कायम रखने के लिए गेहूं की बिक्री अनिवार्य है। यदि हम थोड़ा सा अड़े रहें और उदारता, समझौते की बुद्धि अथवा घबराहट में न आवें, तो पाकिस्तान को झख मार कर हमारी शर्तें स्वीकार करनी पड़ेगी।

—एक व्यापारी

●

राम को बदनाम करने का प्रयत्न

श्रीमान सम्पादक जी,

इस समय मेरे आगे देहली से प्रकाशित होने वाली 'सरिता' का मई का अंक है। इसका प्रथम लेख 'शंबूकवध' नामक कहानी है, जिसके लेखक कोई वेदव्यास हैं। इसमें लेखक ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम एक अत्याचारी शासक थे, जिनके द्वारा शंबूक नामक एक शूद्र तपस्वी की हत्या की गई। कहानी के शीर्षक के साथ रामराज्य की कुछ विशेषताओं (!) का दिग्दर्शन कराया गया है, यथा— रामराज्य में बालि का वध, सीता का तिरस्कार, लव-कुश के साथ अन्याय इत्यादि। कहानी के बीच-बीच में विष्णु स्मृति और गौतम, धर्मसूत्र आदि उन अनार्ष ग्रन्थों के उद्धरण दिये गये हैं, जिनमें शूद्रों पर अमानुषिक अत्याचारों का उल्लेख है। हम यह समझने में असमर्थ हैं कि इस प्रकार की कहानियों से लेखक का क्या अभिप्राय है ! क्या उसका उद्देश्य मर्यादा पुरुषोत्तम को भारत वासियों की दृष्टि में गिराना है उसका यह अभिप्राय कभी सफल नहीं हो सकता। शम्बूक वध इत्यादि की जो कहानियां आजकल लिखी जा रही हैं, उनकी ऐतिहासिकता और प्रामाणिकता के विषय में प्रश्न हो सकता है, क्योंकि वाल्मीकि रामायण में इस घटना का नाम-निशान भी नहीं है। इस प्रकार की कपोल-कल्पित कहानियों का प्रचलन करना साहित्य साधना नहीं अपितु भारत की प्राचीन सर्वोच्च संस्कृति की हत्या करना है।

यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि आज हिन्दी में ऐसे साहित्य की सृष्टि हो रही है, जो अपनी प्राचीन परंपराओं और अपने महापुरुषों का तिरस्कार करता है और उन्हें बदनाम करने में ही अपनी सफलता समझता है। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक श्री यशपाल ने भी प्रक्षेप के उत्पादनों को लेकर एक ऐसी कहानी लिखी थी। घटनाओं के आधार पर खड़े किये काल्पनिक कथाओं से साहित्य का कितना भला होता है, यह हम नहीं जानते, हां इतना तो स्पष्ट है कि यह हमारी संस्कृति पर एक कठोर आघात अवश्य है।

— भवानीलाल भारतीय

●

हमारा यह तरुण वर्ग

मैं आपके पास हिन्दी के एक दैनिक में प्रकाशित एक समाचार भेज रहा हूँ। इससे आज के हमारे तरुण वर्ग की कुत्सित मनोदशा का परिचय मिलता है। क्या आप अपने पत्र द्वारा देश के नेताओं का ध्यान इधर खींचेंगे ? समाचार यह है।—

'आगरा (डाक से) पिछले सप्ताह संसार में प्रसिद्ध ताजमहल पर छात्रों ने धावा बोल दिया। हजारों की संख्या में छात्र-छात्रायें पैदल रिक्शा और साइकलों पर ताजमहल की ओर आने लगे। ऐसा प्रतीत होता था कि कोई विद्यार्थी सम्मेलन वहाँ होने वाला है, केवल आगरा ही नहीं, बल्कि टुंडला, हाथरस, अलीगढ़ के छात्र भी बड़ी संख्या में आये थे। जब इस भीड़ के कारण का पता लगाया गया, तो मालूम हुआ कि छात्रों को किसी प्रकार से खबर लग गई थी कि फिल्मी जगत के प्रतिष्ठित कलाकार सुरैया और देवानन्द अपना विवाह करने के लिये ताज पर पहुंचें थे। जब वे दोनों नहीं दिखाई पड़े, तो सारी भीड़ आगरा के छावनी स्टेशन पर टूट पड़ी और स्टेशन मास्टर की मुसीबत आ गई। उसने तंग आकर पता लगाया और बम्बई से पूछ कर बताया कि ऐसी कोई बात नहीं है, हजारों की भीड़ को गहरी निराशा हुई और सब अपने-अपने स्थान को लौट पड़े।'

— रामलाल

●

'राजधानी' अंग्रेजी में क्यों ?

दिल्ली म्यूनिसिपल कमेटी की ओर से 'राजधानी' नामक साप्ताहिक-पत्र प्रकाशित होता है। इस पत्र का स्टेन्डर्ड कैसा है, इस सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न मत हो सकते हैं, किन्तु यह बात असंदिग्ध है कि इस पत्र का अंग्रेजी विभाग व्यर्थ व्यय है। पुरानी दिल्ली के निवासियों में शायद ऐसे आदमी १ फी सदी भी न होंगे, जो हिन्दी या उर्दू नहीं जानते और सिर्फ अंग्रेजी जानते हों। कुछ बंगाली, मद्रासी आदि एक फी सदी में होंगे वे भी बहुत सम्भवतः 'राजधानी' पढ़ते भी न न होंगे। ऐसी स्थिति में अंग्रेजी खण्ड निकाल कर हिन्दी और उर्दू खण्डों को अधिक उपादेय बनाना चाहिये।

— एक दिल्लीवासी

●

कलाकार

(पृष्ठ ११ का शेष)

का नियम है। ईश्वर जो करता है संभवतः भले के लिए ही।' पागल उठ कर चित्र बनाने की कोशिश करता है, पर मन नहीं लगता। उठ कर बाहर टहलता है।

नमस्ते, कलाकार भैया।' पीछे देखा, सामने शशी एक रंगीन लिफाफा लिए खड़ी थी।

पागल— 'नमस्ते, कहिये कैसे कष्ट उठाया ?'

शशी— 'न जाने क्यों भैया जबसे आपको देखा है, ऐसा लगता है मानों मेरे स्वर्गवासी भैया ही मेरे सामने खड़े हैं, खैर देखिये कल कालेज में ड्रामा है, कलाकार जी अपनी कला देखने जरूर आइये। नमस्ते, जरा जल्दी में हूँ।'

पागल— 'अरे शशी, सुनो तो।'

शशी— 'फिर मिलेंगे।'

कालेज के हाल में निकलते समय अनेक कला के कोकिल कण्ठ की सराहना कर रहा था। कलाकार भी उनमें से एक था। कला की प्रशंसा सुन न जाने क्यों उसका हृदय हर्षोन्मत्त हो रहा था। कालेज के फाटक के बाहर न जाने क्यों उसके कदम रुक से जाते थे। अचानक पीछे से हार्न की आवाज आई— वह किनारे खड़ा हो गया। मोटर से दो युवतियां उतरीं और मोटर आगे बढ़ गई। पागल ने कोशिश की कि वह चुपचाप आगे बढ़ जाय, किन्तु शशी की चंचल आंखों ने उसे देख ही लिया।

शशी—"अरे कलाकार भैया, अच्छा तो रोष इतना बढ़ गया कि बंगले के चक्कर काटने की नौबत आ गई।"

पागल— 'नहीं नहीं शशी, तुम्हें क्या हो गया है। मैं तो कालेज से घर लौट रहा था। मुझे क्या पता कि आप लोग यहीं खड़ी रहती हैं।'

कला आगे बढ़ती है। कलाकार आगे बढ़कर बोला—'क्षमा कीजिए। शशी के मजाक के कारण मुझ पर नाराज न होइये। आज की सफलता के लिए इस पगले की बधाई स्वीकार कर लीजिये।'

शशी— 'बधाई क्या पता नहीं, आगे क्या क्या स्वीकार करने को कहें— चलो कला ऐसे आदमियों से अधिक मेल-जोल अच्छा नहीं।'

कला भी इस वक्त हंसी पर काबू न पा सकी। दोनों किंकर्तव्यविमूढ़ सी आगे बढ़ीं।

मिलन, आकर्षण, परिचय और फिर घनिष्टता, ये प्रकृति के नियम से हैं। बढ़ता हुआ मेल जोल बन्धन सा बन गया। यही शक्ति है— प्रेरिका भी। कला के सौन्दर्य और संगीत ने कलाकार की कला में प्राण का संचार किया। जिसको कल तक कोई नहीं जानता था, आज वह मशहूर हो गया। दुनिया पागल पर फूलों की वर्षा कर रही थी—पागल कला के चरणों पर।

बम्बई की कला परिषद का उद्घाटन कर जब कलाकार वापिस लौटा तो देखा टेबल पर रंगीन लग्न-पत्रिका थी, कला के विवाह की। साथ में एक पत्र था— कांपते हाथों से उठा, उसने पढ़ा, लिखा था—

देवता,

माता-पिता की इच्छार्थ मूक बलिदान— यही तो असहाय अबला का जीवन है, मुझ विश्वासघातिनी को भूल जाना, ईश्वर करे आपकी कला चिरायु हो, अमर हो।

—कला

नहीं कदापि नहीं, मैं ऐसा न होने दूंगा। मेरी कला को मुझ से कोई छीन नहीं सकता। वेग से बाहर की ओर जाता जाता है, किन्तु कुछ सोच कर वापिस आ जाता है। ठीक ही तो है, मेरे से क्यों कर कला का विवाह हो सकता है, जिसके माता-पिता, घर बार किसी का पता न हो, उसे अपनी 'होनहार' बेटी क्यों कर कोई पिता देगा! चित्रशाला से एक तस्वीर उठा तेजी से बन की ओर जाता है।

शशी और कला ने चित्रकार की बहुत खोज की, पर कोई पता न चला। आखिर वह वक्त भी आ पहुंची जब कला को अपनों को छोड़ कर बेगानों के साथ विदा होना था। अचानक भीड़ को चीरते हुए एक पागल सा युवक फटेहाल, लपकता हुआ हाथ में एक तस्वीर लिए पहुंचा। कला को संकेत कर बोला—'अपने पागल की यह अन्तिम भेंट स्वीकार कर लो, कला, अब तुझे अपने पास रखने का मुझे कोई अधिकार नहीं।'

सजी हुई डोली से कोमल कांपता हाथ आगे बढ़ा, दूसरे ही क्षण सब ने देखा, युवक का शव जमीन पर पड़ा था, तस्वीर चूर-चूर हो चुकी थी, खून से लथपथ।

इधर कला की विदाई हो रही थी। उधर कलाकार की अर्थी थी।

बाल बन्धु परिषद

ईश्वर की शरण

किसी समय एक बड़ा शक्तिशाली राजा रहता था, जिसे लड़ाई लड़ने का बड़ा शौक था वह अपनी जबरदस्त सेना लेकर दूसरे राजाओं पर टूट पड़ता और उनके राज्य जीत लेता था।

इतना धनवान और बलवान होते हुए भी वह दुनियां का सब से दुखी आदमी था, क्योंकि उसका मन इतना चंचल था, कि रात में उसे एक पल भी नींद नहीं आती थी।

अपने इस रोग को अच्छा करने के लिए उसने दुनिया भर के सब बड़े बड़े डाक्टर बुलाये। पर कोई भी उसे अच्छा नहीं कर सका। अन्त में उसने डुग्गी पिटवा दी कि जो उसे अच्छा कर देगा, उसे वह अपना आधा राज्य दे देगा, पर जो इलाज करने आयेगा और अच्छा नहीं कर सकेगा, उसे वह कैदखाने में डलवा देगा।"

एक दिन एक सुन्दर ग्वालिन राजा के पास पहुंची और बोली— 'महाराज! मैं आपका रोग अच्छा कर सकती हूं।'

राजा को विश्वास न हुआ। उसने उसकी ओर दया दृष्टि से देखते हुए कहा— 'तू तो निरी बच्ची है, घर लौट जा। जहां बड़े बड़े डाक्टर मुझे अच्छा नहीं कर सके, वहां तू क्या करेगी।'

ग्वालिन बोली— 'नहीं, मैं नहीं लौट सकती।

राजा ने कहा— अच्छा, पहले मुझे यह बता कि तेरे पास दवा क्या है।

वह देखिये, इतना कह कर उसने राजा का एक खुली खिड़की के पास जाकर आकाश की ओर संकेत किया।

'वहां क्या है? क्या तू मेरा मजाक उड़ाने आई है?' राजा बोला।

ग्वालिन ने कहा, 'नहीं, मैं आपको भगवान की प्रार्थना सिखाने आई हूं।'

किन्तु राजा को पूरा विश्वास हो गया कि ग्वालिन उसका मजाक उड़ा रही है। इसलिए उसने सिपाहियों को बुला कर उसे कालकोठरी में डालने की आज्ञा दे दी। उसके सामने ही सि[illegible] ने ग्वालिन को हथकड़िया पहना दी[illegible]। राजा ने उसे काल कोठ[illegible] मुस्कराते हुए बढ़ते देखा, तो [illegible] भर आया। वह उसके पीछे[illegible] गया और उसने देखा कि कोठरी में पहुंचने पर ग्वालिन झुक कर प्रार्थना करने लगी।

उसने कहा— दयालु भगवान! उसके पापों को क्षमा करने के लिए उसे नम्र हृदय से अपनी प्रार्थना करना सिखा दे, ताकि वह रात में प्रसन्न मन से शांति के साथ सो सके।'

इसके बाद वह वैसे ही सिर झुकाए चुपचाप प्रार्थना करती रही। राजा कोठरी के दरवाजे पर उछल पड़ा और सिपाहियों से चिल्ला कर बोला— 'उसे खोल दो। उसे फौरन स्वतन्त्र कर दो।'

राजा तब अपने कमरे में लौट आया और उसने पलंग के पास झुक कर अपने दोनों हाथ जोड़ दिये, जैसा कि उसने ग्वालिन को कालकोठरी में करते देखा था। जब वह लेटा तो उसे नींद आ गई। दूसरे दिन सुबह जब वह जागा, तब वह एक बदला हुआ और अच्छा आदमी बन चुका था। अब उसका मन युद्ध, धन और बल की ओर नहीं गया, बल्कि वह अपनी प्रजा को खुश करने के उपाय सोचने लगा।

उसने तुरन्त ही अपने दूतों को उस ग्वालिन की खोज में भेजा। लेकिन उन में से कोई यह पता न लगा सका कि वह कहां रहती है। इससे राजा को बड़ी निराशा हुई।

एक दिन उसके महल में एक सुन्दर स्त्री ने प्रवेश किया और उसने जीत की मुस्कराहट के साथ राजा से कहा—'क्या आप मुझे भूल गये हैं? मैं वही ग्वालिन हूं।'

मैं तुम्हारी राह देखता रहा कि तुम आकर मेरे राज्यमें से अपना आधा हिस्सा मांगोगी।

ग्वालिन ने उत्तर दिया— 'नहीं महाराज यह आपकी भूल है। मैंने अपना कर्तव्य निभाया है, इसके लिए मुझे किसी पुरस्कार की आवश्यकता नहीं।

बाल समाचार

ब्रिटेन में बच्चों के स्वास्थ्य सुधार के के लिए ६॥ करोड़ रुपया वार्षिक व्यय करने का निश्चय किया गया है।

युद्ध के प्रारम्भिक वर्षों में लगभग साढ़े सात लाख बच्चे खतरे के स्थानों से हटाए गए थे, इन्हें बड़े बड़े औद्योगिक शहरों से हटा कर दक्षिण और दक्षिण पश्चिम के छोटे स्थानों में ले आया गया था। युद्ध से सम्बन्ध रखने वाली सैनिक कार्यवाही तो आवश्यक थी, पर अनेकों कठिनाइयों के होते हुये भी बच्चों को खतरे से हटाने का यह काम कुछ ही समय में किया गया।

युद्ध के दिनों में १२,५०,००० बच्चों की जिनकी आयु ५ और १४ वर्ष के बीच में थी, प्रतिवर्ष डाक्टरी जांच की गई थी। युद्ध के पश्चात् सभी आयु के बच्चों की मृत्यु संख्या पिछले वर्ष की मृत्यु संख्या की अपेक्षा बहुत कम हो गई है।

● तीन वर्ष की आयु से लेकर १८ वर्ष तक की आयु तक के बालकों ने अमेरिका में अपनी नाटक कम्पनी खोली है, जिसका सारा काम वे अपने आप ही करते हैं। इस कम्पनी को लगभग ११००० बच्चों का सहयोग प्राप्त है। इस काम के साथ-साथ बालक अपनी पढ़ाई लिखाई भी करते रहते हैं।

● अमरिका के १६ वर्षीय स्टर्नबर्ग नामक बालक ने २८०० पौंड की 'विज्ञान पुरस्कार' प्राप्त किया है। इस बच्चे की प्रारम्भ से ही विज्ञान में रुचि थी और वह नये-नये आविष्कार करने की धुन में छोटे छोटे जीव जन्तु इकट्ठे करता था। अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा के साथ साथ वह गान विद्या में भी निपुण है। प्राप्त पुरस्कार की सहायता से वह अपनी आगे की पढ़ाई चालू रखेगा।

बालकों की रुचि

बच्चे वही काम करते हैं जो उन्हें रुचिपूर्ण लगते हों। अपने समय का सन्तोषजनक उपयोग करना प्रत्येक बच्चे के लिये सम्भव होना चाहिये। बच्चों की रुचियां भिन्न भिन्न होती हैं जो चीजें उन्हें आसानी से मिल सकती हैं उनके साथ खेलने में, उनके आजमाने और उनके परीक्षण में बच्चों को बहुत मजा आता है। अपने आसपास प्रयोग करने योग्य उन्हें जो कुछ भी मिलता है उसके प्रति वे अत्यन्त रुचि प्रदर्शित करते हैं। स्वयं अपनी देखभाल का कार्य सीखने में भी उन्हें बहुत आनन्द आता है। यही रुचियां उनके खेलों और विभिन्न व्यापारों का कारण होती है और इन्हीं द्वारा उनका दिन भर का समय पूर्णतया भरा जा सकता है।

— चेस्टई

जरा हंसिये

एक गंवार नौकर, जो सेठ के यहां काम करता था, अपनी तनख्वाह पर खुश नहीं था। एक दिन उसने मुनीम जी से कहा कि हजूर मेरी तनख्वाह बढ़ा दी जाय।

मुनीम जी दयालु और भोले भाले थे। उन्होंने फौरन सेठ जी से सिफारिश कर दी। सेठ जी ने कहा मैं कल उसकी परीक्षा लेकर जो कुछ करना होगा, करूंगा।

दूसरे दिन ठीक समय पर सेठ जी आये। मुनीम जी ने गंवार को चुपके से अपने पास बुलाया और कहा— 'देखो, सेठ जी तुम से पहले पूछेंगे कि तुम्हारी उम्र कितनी है तो तुम जवाब देना कि बीस बरस। फिर पूछेंगे कि तुम इस नौकरी पर कितने दिन से काम करते हो? तुम कहना कि तीन बरस से। फिर वे पूछेंगे कि तुम ज्यादा वेतन लोगे या उसके बदले में कपड़ा। तुम कहना कि दोनों।'

मुनीम जी इस तरह से सिखा पढ़ा कर गंवार को सेठ जी के पास ले गये।

परन्तु गंवार के दुर्भाग्य से सेठ जी प्रश्नों का क्रम ही बदल दिया। उन्होंने पूछा— 'तुम इस नौकरी पर कितने दिन से हो?'

गंवार ने कहा— 'बीस बरस से'

यह सुन कर सेठ जी के कान खड़े हो गये। उन्होंने फिर पूछा— 'तुम्हारी उम्र कितनी है?'

उत्तर मिला— 'तीन बरस।'

अब सेठ जी बड़े चिढ़ गये। उन्होंने जोर से कहा— 'अबे तू पागल है या आदमी?'

गंवार बोला— 'दोनों।'

इन उत्तरों को सुन कर सेठ जी से बिना हंसे नहीं रहा गया। मुनीम जी भी मुंह में रुमाल दे कर हंसने लगे।

—नरेन्द्रकुमार विशारद

यह दोनों भी अपने कार्य में व्यस्त हैं।

"आधुनिक भारतीय विश्वविद्यालय"

★ श्री हरिदत्त भट्ट

आधुनिक युग में विश्वविद्यालय शिक्षा के उच्चतम केन्द्र समझे जाते हैं, और उनका महत्व भी अत्यधिक माना जाता है, किन्तु इस क्षेत्र में जब हम संसार के प्रमुख राष्ट्रों के साथ भारत की तुलना करते हैं तो खेद होता है कि हिन्दुस्तान सबसे पीछे है। सन् १६३६ ई० की तालिका के अनुसार विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्या कुल जनसंख्या के अनुपात में निम्न प्रकार से थी।

१:२२५ अमेरिका में, १:३०० रूस में, १:५१० फ्रांस में, १:६५० आस्ट्रेलिया में, १:६६० जर्मनी में, १:८८० ब्रिटेन में और १:२२०० भारत में एवं आस्ट्रेलिया में ६ लाख जनसंख्या के लिए ६ विश्वविद्यालय, दक्षिणी अफ्रीका में २ लाख के लिए ५, इगलेण्ड में ८॥ लाख के लिए १२, संयुक्त राज्य अमेरिका में १३ करोड़ के लिए १७२० और भारत में ४० करोड़ के लिए लगभग १८ विश्वविद्यालय थे।

उपर्युक्त आंकड़ों से तथा सन् १८५७ ई० से आज तक के ऐतिहासिक निरूपण से यह स्वयं सिद्ध होता है कि भारत इस दौड़ में कितने पीछे है।

सन् १८५७ में चार्लस उड के कथनानुसार प्रारम्भिक और विश्वविद्यालय की शिक्षा पृथक् पृथक् कर दी गई, तथा २४ जनवरी को कलकत्ता, १८ जुलाई को बम्बई और ५ सितम्बर को मद्रास में विश्वविद्यालय स्थापित कर दिए गए। फिर सन् १८८२ में पंजाब विश्वविद्यालय और सन् १८८७ में प्रयाग विश्वविद्यालय स्थापित किये गये।

सन् १६०२ में लार्ड कर्जन की अध्यक्षता में एक यूनिवर्सिटी कमीशन नियुक्त किया गया। फलस्वरूप सन् १६४० में एक यूनिवर्सिटी एक्ट पास हुआ और बाद में सन् १६१६ में बनारस तथा मैसूर, सन् १६१७ में पटना, सन् १६१८ में उस्मानिया, सन् १६२० में अलीगढ़, लखनऊ और रंगून, सन् १६२१ में ढाका, सन् १६२२ में दिल्ली, सन् १६२३ में नागपुर, सन् १६२६ में आन्ध्र, सन् १६२७ में आगरा और १६२८ में अन्नामलाई में विश्वविद्यालय स्थापित किये गये। सन् १६३५ के विधानानुसार बरमा के पृथक् होने से रंगून और सन् १६४७ के विभाजन से ढाका विश्वविद्यालय हिन्दुस्तान से पृथक् हो गये तथा पंजाब विश्वविद्यालय के दो भाग हो गए। भारत में गोहाटी, सागर आदि विश्वविद्यालयों की स्थापना से आजकल इनकी संख्या लगभग २३ तक पहुंच गई है।

प्रबन्ध

विश्वविद्यालय का प्रधान कुलपति कहलाता है, जो कि प्रायः राज्यपाल ही होता है। फिर उपकुलपति होता है, जो विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी के द्वारा निर्वाचित होता है और फिर रजिस्ट्रार, प्रबन्धक समिति (जैसे सीनेट शिक्षा-बोर्ड आदि होती हैं।

अधिकार

विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षण मापदण्ड और शिक्षण-नियमों को निर्धारित कर सकते हैं।

वर्गीकरण

भारत में विश्वविद्यालय दो प्रकार के हैं। पहले वे हैं, जो केवल परीक्षाएं लेते हैं और दूसरे वे हैं, जो कि परीक्षाओं के साथ-साथ शिक्षण कार्य भी करते हैं।

आय

विश्वविद्यालयों में ४८ प्रतिशत शुल्क से, ३६ प्रतिशत जनता से और १३ प्रतिशत स्वतन्त्ररूप से आय के रूप में आता है।

परिवर्तन

अ. शिक्षा पद्धति—भारतीय आधुनिक विश्वविद्यालय यहां की संस्कृति, सभ्यता, भाषा आदि के सच्चे प्रतीक नहीं हैं, क्योंकि इनकी शिक्षण-पद्धति लार्ड मेकोले के दृष्टिकोण के अनुरूप है, जो कि शिक्षित समाज को पंगु सा बना देती है। अतः इसमें आमूल परिवर्तन होना चाहिए।

आ. माध्यम—सन् १८३५ से अब तक यहां शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है, जो कि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भारतीय छात्रों के लिए बिलकुल अनुपयोगी है, क्योंकि किसी भी देश में सर्वतोन्मुखी शिक्षा के लिए शिक्षा का माध्यम वहां की मातृभाषा होनी चाहिये। अतः अंग्रेजी, जो कि एक विदेशी भाषा है, के स्थान पर हिन्दी होनी चाहिए।

इ. पाठ्यक्रम—भारत में विश्वविद्यालयों का पाठ्यक्रम अभी तक अवैज्ञानिक, अपरिपूर्ण, असुन्दर, अप्राकृतिक और एकाङ्गी है। इसलिए जब तक पाठ्यक्रम सुन्दर, रुचिकर, परिपूर्ण, मनोवैज्ञानिक प्राकृतिक और अनेकाङ्गी नहीं होगा तब तक सर्वाङ्गीण शिक्षा का श्रीगणेश होना बिलकुल असम्भव है। पाठ्यक्रम में प्राकृतिक, जीवन सम्बन्धी, मानवीय और मानसिक विज्ञान के साथ साथ सामयिक विचारों का सम्पुट होना चाहिए।

ई. शिक्षक—विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों, रीडरों और लेक्चररों की दशा अति दयनीय है, क्योंकि उन्हें उचित और यथेष्ट सुविधाएं नहीं हैं—जिन से वे अपना बहुमुखी विकास कर सकें। अभी कुछ दिन पहले यूनिवर्सिटी कमीशन ने इस ओर कुछ ध्यान देते हुए उनके विकास के कुछ सुझाव रखे हैं। प्रोफेसरों, रीडरों और लेक्चररों के वेतन क्रमशः ६०० रु०- १३५० रु०, ६००-३०- ६०० रु० और २००- १५- ३२०-२०- ४००- २५- ५०० रु० तक निश्चित किए हैं, किन्तु फिर भी अन्य देशों की तुलना में कम ही है। अमेरिका में एक अध्यापक को १७५० रु० मिलते हैं। अतः शिक्षकों का मापदण्ड उन्नत बनाने के लिए एक महान उत्क्रान्ति होनी चाहिए।

उ. विद्यार्थी—पण्डित नेहरू जी के कथनानुसार विद्यार्थियों की बुद्धि भी कुण्ठित सी है, क्योंकि केवल पाठ्यक्रम और शिक्षकों का मापदण्ड ही अवनत नहीं है, अपितु छात्रों का मापदण्ड भी बिलकुल गिरा हुआ है। अतः विश्वविद्यालयों के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन होना नितान्त आवश्यक है। इसकी रूप रेखा निर्धारित करने के लिए आधुनिकता के साथ साथ तक्षशिला, नालन्दा, विक्रमशिला, उज्जैन, काशी आदि प्राचीन विश्वविद्यालयों के सिद्धान्तों को अपनाना भी श्रेयस्कर होगा।

उद्देश्यः—विश्वविद्यालय की शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण और बहुमुखी विकास, आलोच्य दृष्टिकोण, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, वैज्ञानिक आदि सम्पूर्ण विषयों का शिक्षण, समाज का आंतरिक एवं बाह्य उत्थान, सामयिक समस्याओं तथा विचारों का संकलन, सत्यान्वेषण, मानवीय जागरण आदि होना चाहिए। जिससे व्यक्ति, जाति, राष्ट्र आदि के साथ साथ सारे विश्व का कल्याण और उत्थान हो सके।

[पृष्ठ ८ का शेष]

होता और जमता है, इस के विपरीत अंडा सख्त और सख्त जाता है।

दूध की प्रमुखता उसकी मिठास के कारण है जो अंडे में होती ही नहीं।

एक अंडे में ३० इकाई गर्मी की है, आधी छटांक मेंस के दूध में ३१ और गाय के दूध में १८ इकाई गर्मी होती है। साढ़े चार छटांक मक्खन निकाला हुआ दूध शरीर में इतनी हड्डी बनाने वाला मसाला (चूना) पैदा करता है।

[पृष्ठ १२ का शेष]

स्थापित करने व मनोरंजन के वास्ते बहुत कम अवकाश रह जाता है। इस प्रकार उसको उसका जीवन सुस्त, थका सा व व्यर्थ सा प्रतीत होने लगता है। यह दलीली कि नौकरी चाकरी घरेलू व्यवस्था आसानी से कर सकते हैं, कुछ ठीक नहीं जचती। यदि नौकर परिश्रमी व ईमानदार हों, तो वह काफी सहायता कर सकते हैं, परन्तु फिर भी निगरानी के अलावा अनेक ऐसे कार्य हैं, जो कि स्वयं एक महिला द्वारा ही ठीक पूर्ण हो सकते हैं। ठीक प्रकार का नौकर मिलना भी आजकल एक समस्या हो गई है।

ऐसे कार्य करना भी ठीक नहीं है, जिनसे न तो काफी पैसा ही मिले और न इज्जत। जब तक कि किसी आर्थिक संकट से बचने की आवश्यकता न हो, किसी को भी, ऐसे कार्य का भार न लेना चाहिए, जिस में कि वह अनुभव हीन हो और जिस पर कि वह टिका रहना चाहता हो। वैसे ही यदि किसी महिला द्वारा लिया हुआ कार्य उपयुक्त है, और उनमें पति का सहयोग प्राप्त है तो उसे उस कार्य पर टिके रहना चाहिए, चाहे परिवार के दूसरे लोग कितना ही विरोध करें। यह ठीक है कि पिछले कुछ वर्षों में युवतियों ने लगभग सभी प्रकार के कार्यों में भाग लेने की अपनी क्षमता और योग्यता का अच्छा परिचय दिया है। अतः यदि वे किसी कार्य को संभालती हैं, तो वास्तविक लगन व पूर्ण निश्चय के साथ उसे करना चाहिए।

---

२५ सौ वर्ष का प्राचीन नगर

भारतीय पुरातत्व की एक सबसे बड़ी समस्या उस चौड़ी खाई को पाटना है, जो सिन्ध घाटी सभ्यता और ईसा पूर्व की तीसरी चौथी शताब्दियों की बीच पड़ती है। इस मध्यवर्ती अवधि की भारतीय सभ्यता का पुरातत्व विषयक इतिवृत्त लुप्त प्राय है। यदि उपर्युक्त युगों की मध्यवर्ती लुप्त शृंखला का शोध हो सके, तो भारत की प्राचीन सभ्यता में तारतम्यता स्थापित की जा सकती है। इस लुप्त शृंखला का पता लगाने के लिए भारत सरकार का पुरातत्व विभाग देश के अनेक अचलों के खण्डहरों, ढूहों आदि की खुदाई और शोध के कार्य में बहुत समय से लगा हुआ है।

तिलपत का टीला

हाल में ही दिल्ली, मथुरा सड़क पर दिल्ली से कोई १५ मील दूर तिलपत नामक स्थान पर, प्रयोग रूप में एक हाल की खुदाई से, न केवल उक्त समस्या हल कर सकने की दिशा में कुछ प्रगति हुई है, वरन् प्राय २५०० वर्ष प्राचीन एक नगर के अस्तित्व पर भी कुछ प्रकाश पड़ा है। इस समय यह टीला लगभग आध मील लम्बा और चौथाई मील चौड़ा होगा, किन्तु उसके आस पास की भूमि में प्राचीन मृत्तिका पात्रों एव अन्य वस्तुओं के मिलने से अनुमान किया जाता है कि किसी समय उसका क्षेत्र और बड़ा लगभग २ वर्गमील रहा होगा। इस बुनियाद से उसकी ऊंचाई प्राय ६० फुट है, किन्तु बुनियाद के नीचे लगभग २० फुट की गहराई तक पुरानी आबादी के चिन्ह मिलते हैं।

इस टीले की खुदाई से पता चलता है कि ईसा से पूर्व की छठी पाचवीं शताब्दियों में उस स्थान पर नगर था, किन्तु उसके आरम्भ की खोज अभी पूरी तरह नहीं हो पाई है। विभिन्न स्तरों की खुदाई से पकी मिट्टी के विशेष प्रकार के बर्तन तथा कुछ अन्य वस्तुयें प्राप्त हुई हैं। अधिकांश मृत्तिका पात्रों पर काले रंग का और किन्हीं किन्हीं पर लाल व हल्के पीले रंग का काम होता है। पकी मिट्टी की बनी स्त्री की एक मूर्ति भी मिली है। टीले के ऊपरी भाग से तांबे के कुछ सिक्के भी प्राप्त हुए हैं, किन्तु वे इतने चूर्ण हो गये हैं कि उनसे तारीख आदि का पता नहीं लगाया जा सकता। पक्की ईंटों की एक दीवार भी निकली है।

मृत्तिका पात्र

ये खण्डहर किस प्राचीन स्थान का पता देते हैं? हमारी वर्तमान जानकारी अभी इतनी अपर्याप्त है कि इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया जा सकता, किन्तु फिर भी कुछ बातें उल्लेखनीय अवश्य हैं। तिलपत के उपर्युक्त टीले की खुदाई से मिट्टी के जो बर्तन प्राप्त हुए हैं, उनमें कुछ भूरे तथा रंगे हुए बर्तन भी हैं और प्रायः इसी प्रकार के कुछ बर्तन १९४१ में हस्तिनापुर, (जिला मेरठ) में भी प्राप्त हुए थे। इसके अतिरिक्त उत्तरप्रदेश के बरेली जिले के अहिछत्र नामक स्थान की १९४०-४४ की खुदाई में भी ऐसे मृत्तिकापात्र प्राप्त हुए थे। अतएव तिलपत, हस्तिनापुर तथा अहिछत्र तीनों स्थानों में एक ही प्रकार के इन मृत्तिका पात्रों के मिलने से स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन काल में ये स्थान समकालीन अवश्य रहे होंगे। उनके काल का पूर्ण निश्चय करना अभी शेष है।

महाभारत का युग

एक बात और है। महाभारत में हस्तिनापुर को कौरवों की राजधानी बताया गया है और अहिछत्र पांचालों का नगर था। तिलस्त का उल्लेख महाभारत में नहीं है, किन्तु उस क्षेत्र में प्रचलित एक किंवदन्ती के अनुसार कहा जाता है कि तिलपत भी उन गांवों में से एक था, जिनकी मांग महाभारत होने से पहले समझौते की बातचीत में पाण्डवों ने कौरवों से की थी।

आशा है कि तिलपत और कुरुक्षेत्र, इन्द्रप्रस्थ, बागपत, बर्नव आदि महाभारत सम्बन्धी अन्य क्षेत्र में आगे की जाने वाली खुदाई एव खोज के परिणामस्वरूप इस समस्या पर और भी प्रकाश डाला जा सकेगा।

विश्व संघ का सेनापति

जनरल मैकार्थर

सुरक्षा परिषद के आदेशानुसार प्रेसीडेन्ट ट्रूमैन ने जनरल डगलस मैकार्थर को कोरिया में राष्ट्र संघीय सेनाओं का कमान्डिंग जनरल नियुक्त कर दिया है। जनरल मैकार्थर को ४७ वर्ष का सैनिक अनुभव है और आपका अधिक समय पूर्व में ही बीता है। २५ जून को साम्यवादी आक्रमण होने के बाद से ही सुरक्षा परिषद के निर्णय के अनुसार दक्षिणी कोरिया को भेजी गई अमेरिकी सेनाओं का नेतृत्व जनरल मैकार्थर के ही हाथ में था। मैकार्थर को कोरिया क्षेत्र में राष्ट्र संघीय सम्मिलित सेनाओं का सर्वोच्च कमान्डर नियुक्त करते हुये प्रेसिडेन्ट ट्रूमैन ने सुरक्षा परिषद के सुझाव के अनुसार उन्हें यह भी निर्देश दिया है कि अपनी सम्मिलित सेनाओं के लिये वे राष्ट्र संघ के नील श्वेत ध्वज का भी उपयोग करें। राष्ट्र संघ के इतिहास में यह पहला अवसर है जब कि सम्मिलित सेना निर्माण की गई है।

द्वितीय महायुद्ध में जनरल मैकार्थर दूर पूर्व में अमेरिकी सेनाओं के कमान्डर थे और १९४५ में जापानी आत्म समर्पण के बाद से वे अधिकृत जापान के मित्रराष्ट्रीय सेनाओं के सर्वोच्च कमान्डर हैं।

७० वर्षीय मैकार्थर द्वितीय महायुद्ध से पहले अनेकों वर्षों तक सैनिक अफसर रहे हैं। प्रथम महायुद्ध में आप सुप्रसिद्ध रेनबो डिविजन के कमांडर थे और जर्मनी से भीषण युद्ध किया था। आप दो बार घायल हुए, एक बार गैस के शिकार हुए, सात बार अपनी वीरता के लिये सम्मानित हुए और १७ बार विदेशी सरकारों से प्रशंसित किए जा चुके हैं। इसी काल में आपको ब्रिगेडियर जनरल बना दिया गया। १९३० में आप अमेरिका की स्थल सेना के स्टाफ चीफ नियुक्त हुए और १९३५ में दूर पूर्व भेज दिये गये। आप फिलीपिन सरकार के सैनिक सलाहकार भी रह चुके हैं।

१९४१ में जापान द्वारा फिलीपीन आक्रमण के समय आपने मुट्ठी भर सेना से (जापान के १० के मुकाबिले आपके पास १ सैनिक था) ९८ दिन तक मोर्चा लिया और भ यंकर बमवर्षा में भी बराबर डटे रहे। बाद में यद्यपि आपको आस्ट्रेलिया में आना पड़ा, किन्तु अक्टूबर १९४४ में आपने फिलीपीन को जापानी पंजे से मुक्त कराने का भगीरथ सैनिक प्रयत्न शुरू कर दिया।

जापान में मित्र सेनाओं के सर्वोच्च कमांडर के रूप में आपने वहां अनेकों राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तन किये हैं। आप ने जापान के युद्धापराधियों पर मुकदमा चलाया और वहां भाषण, प्रकाशन, विचार और सम्मेलन की स्वतन्त्रता स्थापित की, महिलाओं को मताधिकार दिलाया और कुछ ही महीनों में ऐसा आधार तैयार कर दिया है, जिस पर कि जनतन्त्र जापान का निर्माण किया जा सकता है।

गाण्डीव के तीर

यदि सिखों को अलग प्रांत न दिला सका, तो आत्म हत्या कर लूंगा।

—मास्टर तारासिंह

कुतुब मीनार का उपयोग करने का विचार हो तो साथी दो और ले आना। एक आदमी के चढ़ने के लिए मीनार बन्द है।

× + ×

युवक राजनीति में प्रवेश करें।

—जयप्रकाश नारायण

सिनेमाघरों में फिर किसे भेजोगे?

× × ×

कांग्रेस जन कायर हो गये।

—श्री गिडवानी

चुनावों से पहले थे। अब उन्होंने अपनी बहादुरी का पर्याप्त प्रमाण द दिया है।

× × ×

मुझे इंडोनेशिया का निमन्त्रण मिल गया है। —लियाकतअली

बराबर मिलेगा, कायदे आजम को भी गांधीजी के बाद इसी तरह मिलता था और सिलसिला स्वर्ग तक जारी रहा।

× × ×

दमोह की स्त्रियों के दो दलों में लाठी चली।

—एक शीर्षक

उन्नति का युग है। गालियों से लाठियों तक तो आ गई। अब पुरुषों को पछाड़ने में बस कुछ दिन की देर है।

× × ×

६ पैसे का लिफाफा लगभग २ गुना बड़ा होगा। —भारत सरकार

पहुँचने में भी शायद आकार के ही हिसाब से समय लेगा।

× × ×

एक समय का भोजन छोड़ने वाले पुलिसमैन मुझे अपने नाम दे।

—आगरे का एक अधिकारी

और एक समय की रिश्वत छोड़ने वाले अपने नाम हमें भेज दे।

× × ×

गायों को खेती के कार्य में लेकर प्रचलित प्रथा में परिवर्तन करना चाहिये।

—दातारसिंह

मौठीक, अपने राम की राय में तो आपके इस नये नुस्खे का प्रयोग पुरुषवर्ग पर भी होना चाहिये। फिर आपको भी छुट्टी और हमें भी और कोल्हू का काम, वह मुफ्त में रहा।

× × ×

मैं रूस और अमेरिका को मिलाने का प्रयत्न जारी रखूंगा। —त्रिवेदी

इनकी तो दूर की दुलत्तियां ही बहुत हैं। मिलने पर तो भगवान ही जाने।

× × ×

मैं न अब सरकार में घुसूंगा और न ही अब कांग्रेस में।

—श्री गोविन्द सहाय

भला भी इसी में है कि आप गोविन्द गोविन्द कहते रहें और कहीं न घुस कर अपने घर में घुस जाइये।

× × ×

जब तक मैं अपने प्रतिद्वन्द्वी को न हरा दूंगा, नंगा रहूँगा।

—एक पराजित कॉंग्रेसी

अपने इस नंगे नेता को नासिक अधिवेशन में कांग्रेस राष्ट्रपति क्यों न बना दे! सारे प्रतिद्वन्द्वी लोगों से एक साथ ही निपटने वाले की है भी उसे जरूरत।

× × ×

जनता का स्वास्थ्य और समृद्धि ही अच्छे शासन का नमूना है।

—एक नेता

टी० बी० और मलेरिया से मरने वालों के आंकड़े श्री राजकुमारी अमृत कौर के विभाग से उपलब्ध हो सकते हैं।

फिल्मी संसार के दो अभिनेता।

साप्ताहिक वीरअर्जुन का शुल्क

वार्षिक	१२)
अर्धवार्षिक	६॥)
एक प्रति	चार आना

जेबकतरों की दुनिया

एक सेठजी ५००) रु० में बिक गये

पिछले दिनों एक खबर छपी थी जिसका शीर्षक था — एक सेठजी ५००) रु० में बिक गये। समाचार में बताया गया था कि एक जेब कतरे ने दूसरे जेब कतरे से ५००) रु० लेकर एक सेठजी का पता बताया कि इस गाड़ी से वे कई हजार रुपया ले जा रहे हैं। जेब कतरों का थोड़ा बहुत तजुर्बा बहुतों को होगा। सचमुच जेब कतरना एक बड़ी कला है। इसे सिखाने की विशेष व्यवस्था प्रसिद्ध जेबकतरे करते हैं। इसी सम्बन्ध में श्री रामपाल ने 'प्रताप' में कुछ सूचनाएं दी हैं। उनके अनुसार इस काम को जो लोग नये नये सीखते हैं, उन्हें इस कला के किसी पुराने निपुण कलाकार की शागिर्दी करनी पड़ती है। इसके सिखाने वालों को उस्ताद के नाम से पुकारा जाता है। ये 'उस्ताद' हर समय समाज के बिगड़ैल लड़कों की टोह में लगे रहते हैं। और जब कोई नया लड़का इनके प्रभाव व गहरे सम्पर्क में आ जाता है, तब ये उसे पैसे देते, मिठाई व अच्छी चीजें खिलाते, व सिनेमा दिखा देने आदि का लालच देकर उन्हें जेब कतरने की ओर अग्रसर करते हैं। आमतौर से ऐसे लड़के या तो अनाथ होते हैं या फिर उनकी माता सौतेली होती है।

जेब कतरने के तीन पाठ

जब कोई नया लड़का जेबकतरों के गिरोह में पहले पहल शामिल किया जाता है, तो उसे एक निपुण जेब काटने वाले की सीधी मातहती में रख दिया जाता है। यह शिक्षक उसे इस कला के सारे भीतरी रहस्य सिखाता है। सीखने वाले की शिक्षा उस्ताद के घर में ही शुरू होती है।

उस्ताद एक कागज की जेब बनाकर उसे सूखे कागज से भरा कर देता है। तब सीखने वाले से कहा जाता है कि वह इस जेब से दो उंगलियों द्वारा चीज ऐसी सावधानी से निकाल ले कि वे उंगलियां काली न होने पावें। जब वह सीखने वाला इस काम को खूबी के साथ कर लेने लगता है तो उसे दूसरा पाठ सिखाया जाता है।

दूसरे पाठ में ब्लेड से काम लेना होता है। इस काम को सफलतापूर्वक करने के लिए बड़े अभ्यास की जरूरत होती है। ठीक स्थान पर और हाथ को ठीक से तोल कर चलाते समय आवश्यक जब कपड़े तो कट जायें, पर शिकार के बदन पर आंच न आनी चाहिये, ऐसे ढंग से काम करना होता है।

आम तौर से जेब काटने के लिए सेफ्टीरेजर ब्लेड काम में लाया जाता है। एक धार के कारण उसके प्रयोग में सुविधा होती है। वे इस ब्लेड को इतने सधे हाथों से चलाते हैं कि मनीबेग तक पहुंचने के लिए आवश्यक कपड़ा तो कट जाता है, परन्तु शरीर पर जरा भी चोट नहीं आने पाती।

अब इसके आगे तीसरा और सबसे कठिन काम आता है, शिकार के बटन खोल कर काम कर लेना और बटनों को फिर बन्द कर देना। यह बड़े ही निपुण जेब कतरे का काम होता है। साधारण आदमी इसे नहीं कर सकता। इस काम को करने के लिए कम से कम दो आदमियों की आवश्यकता होती है। एक बटन खोलता है, और दूसरा उन्हें बन्द कर देता है।

जब सीखने वाला घर में सब बातें सीख जाता है, तब उसे बाहर काम पर भेजा जाता है। पहले कुछ दिनों तक वह शिक्षक की कड़ी निगरानी में काम करता है। उसे तमाम ऐसे स्थान दिखाये जाते हैं, जहां जेब काटने का काम सुगमता से हो सकता है।

इस काम के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता जगह पर खूब भीड़ का होना है। इसी से रेलवे स्टेशन, प्लेटफार्म, टिकट घर, सिनेमा के टिकट घर, रेल, बस, मेले, नुमायश, सभाएं और अन्य भीड़ के स्थान जेब कतरों के लिए बड़े काम के स्थान हैं।

जेबकतरा पहले एक को लक्ष्य बनाता है। इसे उसकी भाषा में 'छोटा' के नाम से पुकारते हैं। फिर यह उसका पीछा करता है। जब शिकार कहीं पर दाम देने के लिए मनी बेग निकाल कर फिर स्थान पर रखता है या केवल दाम ही देता है, तो जेब कतरा अपने काम के स्थान को ठीक ठीक देख लेता है।

जेब कतरों की भाषा

यदि मनीबेग बाहरी जेब में हुआ तो वह दो उंगलियों से काम लेगा। इसे उसकी भाषा में सलाई या सींक मारना कहते हैं। और यदि वह भीतरी जेब में है तो ब्लेड से काम लेता है।

अब यदि एक आदमी कोट, उसके नीचे स्वेटर और तब कमीज पहने है, और मनीबेग कमीज की जेब में है, तो जेब कतरों की भाषा में कहा जायगा 'तीन घर पर' और तब वह ब्लेड को ऐसी सावधानी से चलायेगा कि तीनों कपड़े तो कट जायें परन्तु शरीर में कोई चोट न आए और मनीबेग खिसक कर नीचे आ गिरे।

आपसी व्यवहार

जेब कतरों के हल्के बने होते हैं। वे दूसरे की सीमा में शायद ही जाते हैं। उनके निश्चित गलियां सड़कें, बाजार, रेलवे लाइन और मुहल्ले निर्धारित होते हैं। और शिकार यदि दूसरे की सीमा में बिना काम हुए ही चला जाता है तो पहला जेबकतरा शिकार को बेच देता है। इसे नकटी कहते हैं। यदि काम सफलता से हो जाता है तो पहले जेबकतरे को भी माल में हिस्सा मिलता है।

जेबकतरों की अपनी भाषा है, जिनसे कुछ शब्द नीचे और उनके अर्थ नीचे दिये जा रहे हैं—

१००० का नोट— थान।

१०० का नोट— गज।

रुपया दमड़ी, अठन्नी तकी एकन्न, रत्ती, ब्लेड से कामको लकड़ मारना या घाव करना, उंगली से काम लो— सींक या सिलाई मारना, थानेदार— गंडा या थाना चौफ मक्खी चिमटा, का स्टेबुल काना, मनीबेग, नाटिक, बाजार या शिकार की सतर्कता और टिकट चेकर को मामा कहते हैं। इसके सिवा और भी अनेकों शब्द हैं, जिनका वे प्रयोग करते हैं। साथ ही वे हाथ आंख आदि शरीर के अवयवों के अनेकों इशारों का भी उपयोग करते हैं। इनके शिकार बनने से बचने के लिए बड़े ही सतर्क के रहने की आवश्यकता होती है।

रजि० नम्बर डी० १८२

यूरोप में रूस की परेशानी

Morale Booster

ATLANTIC PACT

COORDINATED DEFENSE PLAN

THEORETICAL DEFENSE

अटलटिक पैक्ट के रूप में पश्चिमी यूरोप रूस का मुकाबला करने को तैयार है।

GERMAN-FRENCH UNITY PROPOSAL

शूमां योजना जर्मनी व फ्रांस की एकता स्टालिन को चिंतत व हतप्रभ कर रही है।

भूस्वर्ग कश्मीर का रमणीय दृश्य

पं० दुर्गाप्रसाद शर्मा, मुद्रक व प्रकाशक ने श्रद्धानन्द पब्लिकेशन्स लि० के लिए 'अर्जुन प्रेस' श्रद्धानन्द बाजार, देहली से छपवा कर प्रकाशित किया।
सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

वीर अर्जुन

झूला झूलने में मग्न बालक

साप्ताहिक

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार ७ श्रावण सम्वत् २००७ [अङ्क १४

शान्ति की कोई आशा नहीं

कोरिया का युद्ध छिड़े हुए एक मास पूर्ण होने आया और उसकी समाप्ति के कोई लक्षण प्रकट नहीं हो रहे। उत्तरी कोरिया को आक्रान्ता घोषित करने के संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्ताव का कोई फल नहीं निकला। संघ के रक्षात्मक युद्ध की घोषणा का भी कोई परिणाम नहीं निकला और न अमरीका की गर्जन तर्जन करती हुई सेनाएं कोरिया के रणक्षेत्र में जा कर ही अभिलषित लक्ष्य प्राप्त कर सकीं। उत्तरी कोरिया की सेनाएं लगातार आगे बढ़ रही हैं।

यह स्थिति है, जब पं० जवाहरलाल नेहरू ने शान्ति की एक महत्वपूर्ण अपील रूस, ब्रिटेन और अमरीका से की है। इस अपील का उद्देश्य कोरिया के युद्ध को विश्वव्यापी बनने से रोकना और कोरिया के युद्ध की समाप्ति है। इस अपील के पीछे कुछ लोगों की वह सद्भावना थी, जो उन्होंने पं० नेहरू के असाधारण व्यक्तित्व के प्रति प्रकट की थी। इनका आशय यह था कि पं० नेहरू संसार के दोनों संघर्षशील दलों के बीच में पड़ कर शान्ति का उपाय सोचें। यह सम्भावना फल लाई और पं० नेहरू ने स्तालिन, ट्रूमैन और एटली के पास शान्ति के लिए अपना प्रस्ताव भेज दिया।

किन्तु इस सप्ताह उसकी जो प्रतिक्रिया हुई है, वह अत्यन्त निराशाजनक है। स्तालिन ने शान्ति के प्रयत्नों का स्वागत तो किया है, किन्तु अत्यन्त चतुरता से कम्यूनिस्ट चीन और उत्तरी कोरिया के प्रतिनिधियों का प्रश्न उठा कर एक नई सौदेबाजी का प्रस्ताव कर डाला है। पं० नेहरू उनके प्रस्ताव से सहमत से हो गये हैं, पर अमेरिका इस प्रस्ताव को मानने के लिए आज उद्यत नहीं है। कम्यूनिस्ट चीन को राष्ट्र संघ में स्वीकार किया जाय या नहीं, यह एक पृथक् प्रश्न है, किन्तु दक्षिणी कोरिया पर सशस्त्र आक्रमण करके इसे बलपूर्वक मनाने का अर्थ है शस्त्रबल के आगे आत्मसमर्पण। अमेरिका के इस विचार में सचाई अवश्य है। उसकी सम्मति में शान्ति के लिए युद्ध से पूर्व की स्थिति आवश्यक है अर्थात् उत्तरी कोरियन सेनाएं ३८ अक्षांश के उत्तर में चली जावें। रूस इस स्थिति को स्वीकार नहीं कर सकता और विशेषकर, तब जब कि कम्यूनिस्ट सेनाएं युद्ध में जीत रही हैं। रणक्षेत्र में अमेरिका की यही पराजय उसे किसी ऐसी बातचीत के लिए अनुत्साहित कर रही है, क्योंकि वह जानता है कि युद्धक्षेत्र की जय-पराजय बातचीत के रुख पर प्रभाव डालती है। जब तक वह उस क्षेत्र में अपना बल नहीं दिखा देगा, बातचीत का अनुकूल परिणाम नहीं निकल सकता। जो रुख अमरीका का है, वही ब्रिटेन का है।

इस तरह पं० नेहरू का शान्ति-प्रयत्न एक सद्भावना प्रदर्शन के अतिरिक्त कोई प्रत्यक्ष लाभ करने में अभी तक समर्थ नहीं हुआ। वस्तुतः संधि-चर्चा के लिए यह समय अनुकूल भी नहीं था। जब रूस और अमरीका दोनों अपनी अपनी बल-परीक्षा के लिए कटिबद्ध हों, तब शांति की कोई बात नहीं सुनेगा। यह केवल उसी स्थिति में सफल हो सकता है, जबकि भारत स्वयं इतना सशक्त हो अथवा अपने नेतृत्व में छोटे राष्ट्रों का इतना शक्तिशाली गुट बना दे कि वह अमेरिका और रूस को कोई बात मानने के लिए विवश कर सके। प्रेम, अहिंसा, शांति आदि नारे आज की मदमत्त शक्तियों को प्रेरणा दे सकेंगे, इसकी आशा हमें नहीं करनी चाहिये।

भारतवर्ष को तो इन नारों की विफलता का तीव्र और कटु अनुभव है। म० गांधी जैसी विशुद्ध विभूति मि० जिन्ना को अपने दुराग्रह से रत्ती भर भी विचलित नहीं कर सकी। स्वतन्त्रता से पूर्व कांग्रेस व लीग की संधि-चर्चाएं सदा स्थिति को विषमतर करती गईं। देश विभाजन के बाद भी किसी शांति-प्रस्ताव का कोई प्रभाव पाकिस्तान पर पड़ा हो, इसका अनुभव पं० नेहरू से अधिक किसे होगा?

ऐसी स्थिति में पं० नेहरू, नये शांति-प्रस्तावों का कोई शुभ परिणाम निकलेगा, इसकी आशा क्यों करते हैं?

★

संविधान और काश्मीर

कानूनी शब्दों में काश्मीर भारतीय संघ में पूरी तौर पर सम्मिलित न भी हुआ हो (केवल सेना, विदेशी नीति और यातायात के विभागों में वह भारतीय संघ में सम्मिलित है), तो भी व्यवहारतः वह भारतीय संघ में सम्मिलित है। भारत ने उसकी पाकिस्तानी बर्बरों के हाथ से केवल इसीलिए रक्षा नहीं की है कि वह भारतीय संघ से स्वतन्त्र रहेगा। उसकी जो अमित सहायता की गई है, उसका मूल आधार काश्मीर महाराजा की भारतीय संघ में मिलने की घोषणा थी। इसके बाद भी भारत का काश्मीर के प्रति जो सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार रहा है, उसका आधार भी शेख अब्दुल्ला और उनकी नेशनल कान्फ्रेंस की हजारों बार दोहराई गई यह घोषणा ही है कि काश्मीर भारत में ही मिल कर रहेगा। इसका भी अर्थ साधारण जनता (और हमारी सम्मति में भारत के राजनीतिज्ञ भी) यही लेती रही है कि काश्मीर अब भारत का अविभाज्य अंग है। ऐसी स्थिति में यह तो निश्चित है कि आज वैधानिक रूपेण न सही, परन्तु निकटभविष्य में काश्मीर भारत का अंग बन कर रहेगा। यही कारण था कि संविधान परिषद में काश्मीर के प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया था।

जब यह स्थिति है या निकट भविष्य में, यदि शेख अब्दुल्ला अपने ऊपर किसी प्रकार का संदेह पुष्ट नहीं होने देना चाहते, होने वाली है, तो यह अत्यन्त स्वाभाविक है कि काश्मीर में भी भारतीय संविधान की भावना का पूर्णरूपेण पालन किया जाय। भारतीय संविधान व्यक्तिगत संपत्ति के सिद्धान्त को स्वीकार करता है और बिना मुआविजा दिये वह किसी नागरिक की संपत्ति लेनेका अधिकार सरकार को नहीं देता। किन्तु शेख अब्दुल्ला ने पिछले सप्ताह यह घोषणा की है कि कोई भी जमींदार १२० एकड़ भूमि से अधिक पर प्रभुत्व नहीं रख सकता और अपने उपयोग तथा जोत के लिए केवल २० एकड़ रख सकता है। बाकी भूमि बिना किसी प्रतिफल के छीन कर उसे जोतने वाले किसानों में बांट दी जायगी।' यह भारतीय संविधान की भावना के बिलकुल विपरीत है। यदि काश्मीर को भारत में आज या कल सम्मिलित होना ही है, तो उसके विधान की भावना का आदर करना भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। क्या शेख अब्दुल्ला विधान के प्रति निष्ठा रखने वाले भारतीय नागरिक बनने को तैयार नहीं हैं?

वनस्पति घी पर जनमत

वनस्पति घी के विरुद्ध भारत में पिछले दस वर्षों से प्रचार हो रहा है। म० गांधी तो वनस्पति घी के निर्माण को देशवासियों को धोखे के नाम से स्मरण किया करते थे। किन्तु तीव्रतम विरोध के बावजूद अब तक बनस्पति घी का प्रचार लगातार बढ़ता जा रहा है। स्वयं कांग्रेसी सरकार के शासन काल में वनस्पति घी के कारखाने बने है और सरकार का उन्हें सहयोग प्राप्त हुआ है। भिन्न-भिन्न प्रान्तीय सरकारें भी वनस्पति घी के विरुद्ध अब तक कुछ कर नहीं पाई हैं। यह एक आश्चर्य की बात है कि व्यक्तिगत रूपेण प्रत्येक व्यक्ति इस घी का विरोध करता है, किन्तु सरकारी विशेषज्ञ कभी इसका विरोध करते हैं, तो फिर इसका समर्थन करने लगते। श्री ठाकुर दास भार्गव ने वनस्पति घी को रंगने का जो प्रस्ताव पेश किया है, उसे भी संसद् में हमारे प्रतिनिधि लगातार टालते जा रहे हैं। लोकमत जानने के लिए इसे प्रसारित कर दिया गया है। अब जनता का कर्त्तव्य है कि वह इस बिल के पक्ष में अपना तीव्र मत प्रकट करे और इसके लिए आवश्यक है कि प्रत्येक सार्वजनिक संस्था—धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक और जातीय संस्था वनस्पति घी के विरुद्ध अपना मत प्रकट करे। दिन बहुत कम रह गये हैं, इसलिये इस ओर हम सब को सचेष्ट हो जाना चाहिए।

हिन्दी का निर्वासन

'कपूरथला के विद्यालयों में जो पुस्तकें लगाई गई हैं, वे सब की सब गुरुमुखी लिपि में हैं। हिन्दी को बिलकुल निर्वासित कर दिया गया है। इससे लोगों में सख्त बेचैनी फैली हुई है। सरकारी स्कूल से विद्यार्थी धड़ाधड़ निकल कर स्थानीय मथुरादास हाई स्कूल में प्रविष्ट हो रहे हैं। इस स्कूल में शिक्षा का माध्यम हिन्दी है। देहली से डाक और तार विभाग का जो दफ्तर यहां आया है, उसके नौकरों को बड़ी तकलीफ का सामना करना पड़ा है क्योंकि उनके लड़के लड़कियां गुरुमुखी बिलकुल ही नहीं जानते।" यह समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है। इस पर किसी टीका-टिप्पणी की आवश्यकता नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या इसको ओर भारत सरकार का रियासती विभाग भी ध्यान देगा?

कम्युनिस्ट पार्टी की नई नीति

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी नीति बदलने की घोषणा की है। यह इसका प्रथम प्रमाण है कि मारकाट, बम और अग्निकांड की नीति से वह लोकप्रियता प्राप्त करने में असफल रही है न तो इससे सरकार पलटी जा सकती और न जनता को वह आकृष्ट कर सकी

भारत की आर्थिक नीति क्या हो?

भारत सरकार ने आर्थिक आयोग की नियुक्ति गत वर्ष अप्रैल में की थी। इसके अध्यक्ष श्री टी० टी० कृष्णमाचारी थे। इस में सात सदस्य थे। राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए उचित उपायों का निर्देश इस कमीशन का मुख्य उद्देश्य था। गत सप्ताह इस कमीशन ने अपनी विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित करते हुए तटकर-संरक्षण, ग्रामोद्योग, औद्योगीकरण, कृषि के विकास आदि के सम्बन्ध में अनेक सिफारिशें की हैं। यदि इन सिफारिशों को सरकार स्वीकार कर ले, तो देश के आर्थिक विकास में इनका महत्वपूर्ण स्थान होगा। वे सिफारिशें संक्षेप से नीचे दी जाती हैं।

उद्योगों में प्राथमिकता

औद्योगीकरण में एक सुयोजित नीति अपनाने के लिये निम्न सार्वजनिक व निजी उद्योगों को प्राथमिकता मिलनी चाहिये।

सार्वजनिकः— सैनिक उद्योग, बहूद्देशीय योजनाएं, जलशक्ति तथा मुख्य-खनिज, रेलें तथा अन्य भारी उद्योग।

निजीः— वर्तमान उद्योगों की जैसी भी क्षमता है, उसी में उनका उत्पादन अधिक से अधिक बढ़ाना, निर्यात व्यापार के लिये वर्तमान उद्योग में विस्तार करना, ऐसे उद्योगों की स्थापना और उन्नति करना, जो सार्वजनिक और निजी उद्योगों के सहायक और पूरक हों।

विदेश व्यापार नीति

देश की विदेश व्यापार नीति के मौजूदा उद्देश्य केवल आयात निर्यात में संतुलन स्थापित करना ही नहीं, अपितु इतनी विदेशी मुद्रा कमाना है, जो हमारे औद्योगीकरण के लिये आवश्यक आयातित माल के मूल्य को अदा कर सके।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये आंतरिक आर्थिक स्थिरता के निमित्त द्रव्य और बजट संबन्धी उपायों की, मुद्रा के अवमूल्यन की, उभयपक्षीय प्रादेशिक व्यापार व्यवस्था की, तथा उत्पादन में अनुकूलन की व्यवस्था हो। दीर्घकालीन उद्देश्य आयात व्यापार की इस प्रकार उन्नति होनी चाहिए, कि हम खेती और घरेलू उद्योगों के विकास के लिए पर्याप्त विदेशी सामान प्राप्त कर सकें, तथा इस प्रकार का निर्यात व्यापार बढ़ाना चाहिए कि देश अपने आवश्यक आयात माल का पैसा चुका सके और दूसरे देशों की प्रतिस्पर्धा में उसे मुंह की न खानी पड़े।

राज्यों का सहयोग

खेती, छोटे व बड़े पैमाने के उद्योगों की उन्नति के लिए राज्य को कहां तक सहायता देनी चाहिये, यह उसे सोचना है। किन्तु बड़े पैमाने के उद्योगों को ऐसी सहायता प्रदान करना या माल मुहैया करना मुख्य सरकार का काम होगा, जो उसके बिना उनको और कहीं से नहीं मिल सकती। इस विषय में राज्य को यह भी ध्यान रखना है कि उत्पादन का उचित वितरण हो। फिलहाल आयात निर्यात व्यापार पर सरकार को नियंत्रण रखना होगा, जिससे अदायगी संतुलन की समस्या हल हो सके।

उद्योगों का संरक्षण

उद्योगों के संरक्षण का आर्थिक उन्नति की सर्वांगीण योजना से सम्बन्ध होना चाहिए। अन्यथा जहां-तहां उद्योगों की ऊलजलूल स्थापना हो जायेगी, किन्तु ऐसी योजना बनने तक सैनिक उद्योगों तथा अन्य सामरिक महत्व के उद्योगों को संरक्षण मिलना चाहिए, चाहे उन पर कितनी ही लागत आये।

आधारभूत तथा कुञ्जी उद्योगों को किस हद तक और कैसा संरक्षण प्रदान किया जाए, इसका निर्णय तटकर अधिकारी कर लिया करें। अन्य उद्योगों को संरक्षण प्रदान करने के लिए कुछ कसौटियां हैं जो उद्योग स्थापित होने से पूर्व ही संरक्षण मांगते हैं, उनके विषय में तटकर अधिकारियों द्वारा जांच-पड़ताल होकर सरकार को सिफारिश करने के लिए कहा गया है।

संरक्षित उद्योगों के ८ कर्त्तव्य हैं जो कीमत की नीति, उत्पादन नीति, उत्पादित माल की किस्म, यंत्रौद्योगिक सुधार, अनुसंधान की सुविधाओं की व्यवस्था शिक्षार्थियों के लिए प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) की व्यवस्था, समाजविरोधी गुटों और हलचलों की रोकथाम, तथा घरेलू साधन-संपत्ति के अधिकतम उपयोग से संबंध रखती है।

तटकर निर्धारण के लिए एक स्थायी तटकर आयोग की स्थापना की जानी चाहिए, जिसको अधिक अधिकार दिये जायें, तथा जिसका काम वर्तमान तटकर बोर्ड से अच्छा हो। आयोग तटकर संरक्षण को औद्योगीकरण का एक आवश्यक उपाय समझता है, किन्तु विदेशी माल पर ऊंचे ऊंचे कर लगाने के बजाय उसे कोई अधिक व्यापक और अधिक रचनात्मक कार्यक्रम अपनाना चाहिए।

कृषि द्रव्यों पर भी संरक्षण दिया जाय। संरक्षित माल पर उत्पादन कर लगाये जाने तथा राज्यों द्वारा बिक्री कर लगाये जाने की जरूरत नहीं है। कच्चे माल की कीमत केन्द्रीय सरकार को निश्चित करनी चाहिए।

पूंजीनियंत्रण की वर्तमान व्यवस्था को खतम करके योजना आयोग की स्थापना को दृष्टि में रखते हुए इस उद्देश्य के लिए एक नई मशीनरी स्थापित की जानी चाहिए।

विदेशी पूंजी

उन सार्वजनिक उद्योगों में, जिनको पूंजीगत माल के आयात की आवश्यकता है तथा उन निजी उद्योगों में, जो नई चीजों का उत्पादन करना चाहते हैं, विदेशी पूंजी को आमंत्रित किया जाय। जिन देशी उद्योगों में वृद्धि की संभावना नहीं है, उसमें सरकार को विदेशी पूंजी आने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

औद्योगिक प्रबन्ध

औद्योगिक प्रबन्ध का एक परामर्शदाता ब्यूरो स्थापित किया जाय, जिसकी सेवायें निजी उद्योग ले सकते हैं। सार्वजनिक उद्योगों के लिये एक भारतीय आर्थिक तथा व्यावसायिक सर्विस की स्थापना आर्थिक हलचलों में सहयोग है।

देश की आर्थिक नीति के परिपालन के लिए सरकार की आर्थिक हलचलों में उच्च स्तर पर सामंजस्य होने की आवश्यकता पर बल देने और उद्योग बोर्ड की स्थापना होनी चाहिए।' जिसका उद्देश्य वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय में निकट प्रशासनिक एकता कायम करना हो।

हवाना चार्टर को भी सम्पुष्ट किया जाये, बशर्ते कि अमरीका और ब्रिटेन भी उसे सम्पुष्ट करें। जिनेवा और अनेसी में रजामन्द की हुई तटकर रियायतें देना जारी रखना चाहिए, यद्यपि उनकी उपयोगिता बहुत सीमित है।

भारत की आबादी की समस्या का अध्ययन करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति बनाई जाय।

है। अब विभिन्न दलों के साथ मिल कर विरोधी मोर्चा बनाने और तैलंगाना की तरह किसान संगठन करने का निश्चय किया गया है, किन्तु इस नीति में भी वह सफल होगी, इसमें सन्देह है। इसके दो मुख्य कारण एक तो यह है कि देशका कोई राजनैतिक दल उससे सहयोग नहीं करेगा, क्योंकि कम्यूनिस्टों का दृष्टिकोण सदा भारतविरोधी रहा है, वह सदा से रूस के संकेत पर चलता रहा है। देश में और कोई देशद्रोही दल नहीं है। दूसरा कारण यह है कि कम्यूनिस्ट दल जिस भी दल से मिलेगा, उसका सर्वनाश करके दम लेगा। फिर कम्यूनिस्टों की नीति में वस्तुतः कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। जब तक वह भारतीय जनतन्त्र में विश्वास नहीं करता, वैधानिक प्रणाली पर चलने पर आग्रह नहीं करता, तब तक कम्युनिस्ट नीति में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन समझना भूल होगी।

महत्व पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय संधि चर्चा

पं० नेहरू

स्तालिन

प्रधान मन्त्री पं० नेहरू कोरिया युद्ध को शान्तिपूर्ण तथा समझौते के ढंग से समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील हैं। कोरिया-युद्ध को विश्वव्यापी महायुद्ध का रूप धारण न कर देने के लिए उन्होंने रूसके अधिनायक मार्शल स्टालिन के पास अपनी शान्ति योजना भेजी है, जिसकी अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच पर पर्याप्त चर्चा है। ब्रिटेन तथा अमेरिका के प्रधान नेता तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के महामन्त्री श्री ट्रिग्वेली भी इस योजना पर अत्यन्त गम्भीरता से विचार कर रहे हैं।

ट्रूमैन

ट्रिग्वेली

एटली
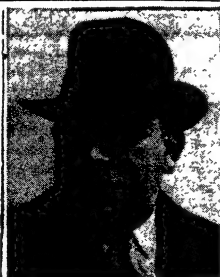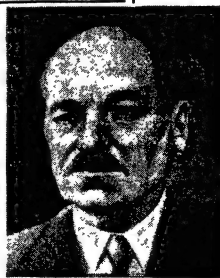
श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य ने केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में मन्त्री-पद की शपथ ग्रहण कर ली है।
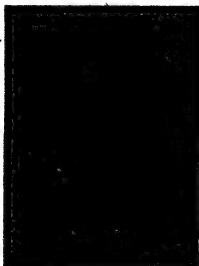
दीर्घकालीन नजरबन्दी के पश्चात् हिन्दू महा सभा के नेता श्री सावरकर मुक्त कर दिये गये हैं।
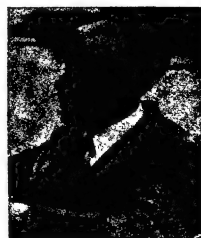
काश्मीर के मामले में मध्यस्थ श्री ओवन डिक्सन भारत तथा पाकिस्तान के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुला रहे हैं।

आर्यसमाज का कार्यक्रम

★ श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

कुछ समय से यह प्रश्न पूछा जाने लगा है कि अब आर्यसमाज का कार्यक्रम क्या होना चाहिए? यदि केवल तार्किक दृष्टिकोण से देखा जाय, तब तो इस प्रश्न का यह उत्तर दिया जा सकता है कि आर्यसमाज का कार्यक्रम तो उसके नियमों और उपनियमों में लिखा हुआ है। वह अपरिवर्तनशील है, अतः उस पर बारबार विचार करने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु वस्तुतः मनुष्य से सम्बन्ध रखने वाली कोई ऐसी संस्था नहीं है, जो परिस्थितियों से प्रभावित न होती हो। मनुष्य के चारों ओर का वातावरण परिवर्तनशील है, परिस्थितियां बदलती रहती है, इस कारण मनुष्य और उसकी संस्थाओं को भी उनके साथ सामंजस्य स्थापित करना पड़ता है। आर्यसमाज भी मानवीय संस्था है, वह भी अपवाद नहीं हो सकता। उस पर भी परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता रहा है, और भविष्य में भी हम यह आशा नहीं रख सकते कि वह परिस्थितियों के प्रभाव से अछूता रह सकेगा। इस कारण आवश्यक ही है कि समय-समय पर परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए आर्यसमाज के कार्यक्रम पर विचार होता रहे।

सिंहावलोकन

आर्यसमाज के गत जीवन में मूल सिद्धान्तों के स्थिर रहते हुए भी आर्यसमाज की कार्यपद्धति में जो उलटफेर होते रहे हैं, उनका सिंहावलोकन यहां अप्रासंगिक न होगा। जिस समय महर्षि दयानन्द ने प्रचार कार्य आरम्भ किया, वह धार्मिक दृष्टि से अन्धकार-काल था। सत्य पर रूढ़ियों का और अज्ञान का पर्दा पड़ा हुआ था। मानसिक और भौतिक पराधीनता के कारण भारत की आत्मा सोई पड़ी थी। महर्षि को अपना प्रचार कार्य अन्धकार के नाश से प्रारम्भ करना पड़ा। उन्हें धर्म और नीति का उद्यान तैयार करने के लिये बीहड़ जंगलों को काटना और शिलाओं को तोड़ना पड़ा। यह अत्यन्त प्रारम्भ का कार्यक्रम था। थोड़े ही वर्षों के पश्चात् महर्षि ने खण्डनात्मक कार्य के साथ मंडनात्मक कार्य प्रारम्भ कर दिया। वेद भाष्यादि अनेक आर्ष ग्रन्थ, सत्यार्थ प्रकाश और आर्यसमाज की स्थापना द्वारा महर्षि ने धर्म प्रचार के मंडनात्मक कार्य की दृढ़ नींव रख दी। इस प्रकार महर्षि के प्रचारात्मक कार्य के दो पहलू थे। एक खण्डनात्मक, दूसरा मंडनात्मक।

संस्था युग

महर्षि के निर्वाण के पश्चात् कुछ समय तक प्रचार का वही द्विचक्र रथ चलता रहा। महर्षि के शिष्य और अनुयायी अपनी शक्ति के अनुसार खण्डन और मंडन का क्रम चलाते रहे, परन्तु आर्य गृहस्थों का उससे सन्तोष न हुआ और उन्हें अपनी सन्तानों का सदुपयोग करने के लिए संस्थाओं के निर्माण की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। सब से पहली बड़ी संस्था, जो आर्यसमाज की ओर से स्थापित हुई, डी० ए० वी० कालेज था। वह वस्तुतः उस समय की परिस्थितियों का ही परिणाम था। देश में उन दिनों नई चेतना उत्पन्न हो रही थी, और नई-नई लहरें वातावरण को संचालित कर रही थीं। उनमें दो लहरें थीं, जिनका डी० ए० वी० कालिज की स्थापना में विशेष हाथ था। अंग्रेजी सरकार ने भारतीय शिक्षा के सम्बन्ध में अपनी यह नीति उद्घोषित कर दी थी कि भारतवासियों को अंग्रेजी भाषा और पाश्चात्य विज्ञानकला आदि की शिक्षा दी जाय। बंगाल, बम्बई आदि प्रान्तों में होती हुई यह लहर पंजाब तक भी पहुंच गई थी। साथ ही ईसाइयों की संस्थाओं द्वारा धर्म प्रचार की नीति की ओर देशवासियों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हो रहा था। ईसाइयों को अपनी प्रचार पद्धति में काफी सफलता मिल रही थी। उनके स्कूलों और कालिजों में पढ़े हुए सुशिक्षित भारतवासियों में से बहुत से ईसाई धर्म ग्रहण कर रहे थे। इन कारणों से जो प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई, उसका परिणाम आर्यसमाज का डी० ए० वी० कालिज था, और डी० ए० वी० कालिज की शिक्षा-प्रणाली में पूर्व की अपेक्षा पश्चिम का जो अधिक प्रवेश हो गया, उसकी प्रतिक्रिया का परिणाम था गुरुकुल। कन्या-विद्यालय आदि संस्थाओं की स्थापना सामाजिक परिस्थितियों का ही फल थी।

राजनीतिक झंझावात

२० वीं शताब्दी के आरम्भ से ही देश में राजनीतिक आन्दोलन जोर पकड़ने लगा था। देशवासियों में स्वाधीनता की जो चाह पहले केवल दिमागी तौर पर उत्पन्न हुई, धीरे-धीरे वह हृदयों के अन्तस्तल तक पहुंचने लगी, यहां तक कि बीसवीं शताब्दी के दस वर्ष व्यतीत होने से पूर्व ही वह झंझावात के रूप में परिणत होगई। भारत का मस्तिष्क और हृदय दोनों ही राजनैतिक क्रांति की भावनाओं से ओतप्रोत होगया। आर्य समाज एक जीवित संस्था थी। महर्षि दयानन्द ने जिस चौमुखी क्रांति का बीजारोपण किया था, उसमें राजनीतिक क्रांति भी सम्मिलित थी। इस कारण यह स्वाभाविक ही था कि आर्यसमाज के सदस्य उससे प्रभावित होते। यह मानने में किसी आर्य को संकोच न होना चाहिए कि लगभग ४० वर्षों तक भारत के राजनीतिक झंझावात ने आर्यसमाज और आर्य समाजियों को बहुत दूर तक प्रभावित किये रखा। यदि ऐसा न होता तो यह एक अत्यन्त असंभावित बात होती। आर्यसमाज के प्रचार तथा साहित्यिक कार्यक्रम पर भी स्वाधीनता आन्दोलन का स्पष्ट और पर्याप्त असर है।

साम्प्रदायिक प्रतिक्रिया

भारत का यह दौर्भाग्य रहा है कि गत दो सौ वर्षों में उसकी राजनीति की विशुद्धता सांप्रदायिक समस्या के कारण दूषित होती रही है। यह दौर्भाग्य अपने ही कर्मों का फल है। आजसे १ हजार वर्ष पूर्व न भारत उत्तर से आने वाले आक्रांताओं से परास्त होता और न यह समस्या खड़ी होती। न केवल हमारे पूर्व-पुरुषा परास्त हुए, उन्होंने लगभग ८०० वर्षों तक राजनीतिक पराधीनता को चलने दिया। उसका परिणाम यह हुआ कि जब अंग्रेजों ने भारत पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया तो हिन्दू-मुस्लिम भिन्नता को अधिक से अधिक उभरूप देकर अपने शासन का आधार स्तम्भ बनाया। इसी कारण हमारे राजनीतिक आन्दोलन में साम्प्रदायिक पेच उत्पन्न हो गया। उस पेच को निकालने के लिये महात्मा गांधी ने जो उपाय किया, उस पर सारा देश सहमत न हो सका। इस कारण राजनीति के सरल मार्ग में एक स्थायी अड़ंगा पैदा हो गया। देश के राजनीतिक आन्दोलन में १९२२ के लगभग एक ऐसी साम्प्रदायिक उलझन पड़ गई, जिसने राष्ट्रीय सेना को दो दलों में बांट दिया। राष्ट्रीय सेना के इस विचार-संघर्ष में भी आर्य समाज अछूता न रह सका। उसके प्रचार-कार्य पर परिस्थिति का प्रबल असर हुआ। थोड़ा बहुत आन्तरिक मतभेद होते हुए भी आर्य समाज का बहुमत उस विचार-परम्परा का समर्थक समझा गया, जिसमें साम्प्रदायिक समस्या के गांधी-सम्मत सुझाव का विरोध किया जाता था। आर्यसमाज का प्रेस तथा व्याख्याता दोनों ही उस प्रवृत्ति से बहुत कुछ प्रभावित हुए। इस प्रकार जो आर्य समाज १९२२ से पूर्व अंग्रेजी शासन का घोर विरोधी और राजनीतिक क्रांति का कट्टर समर्थक माना जाता था, वह बीसवीं शताब्दी के दूसरे चरण में साम्प्रदायिकता का अन्यतम स्तम्भ माना जाने लगा।

आर्यसमाज के प्रवर्तक

महर्षि दयानन्द

परिवर्तनों के हानि लाभ

इस प्रकार आर्य समाज के कार्यक्रम में परिस्थितियों के अनुसार जो परिवर्तन होते रहे उनके लाभालाभ पर विचार करें तो दो चीजें हमारे सामने आती हैं। लाभ पक्ष में तो यह बात कही जा सकती है कि प्रत्येक सामयिक प्रवाह में अग्रसर रहने से आर्य समाज निरन्तर लोगों की दृष्टि में रहा है। ब्राह्म समाज प्रार्थना समाज, देव समाज आदि बहुत सी ऐसी सुधारक संस्थायें हैं, जो गत ५० वर्षों के राजनीतिक झंझावात में बिल्कुल गौण पड़ गईं। उनकी परिमित सीमाओं से बाहिर उन्हें याद करने वाला भी कोई नहीं। इसके विपरीत आर्यसमाज सदा जनता की दृष्टि के सामने रहा है, क्योंकि वह सदा किसी न किसी मोर्चे पर अड़ा रहा है। यह तो हुआ लाभ का खाता। जब हम हानि के खाते की ओर दृष्टि डालते हैं तो वह भी काफी भारी दिखाई देता है। सामयिक आन्दोलनों से प्रभावित हो कर कभी-कभी उनका उपांग-सा बन जाने के कारण आर्य समाज का अपना कार्यक्रम इतना शिथिल हो गया है कि उसे हम लुप्तप्राय हुआ कह सकते हैं। आर्यसमाज का जो मौलिक कार्यक्रम था, वह अब इतनी गहराई में दब गया है कि खुदाई के भारी परिश्रम की आवश्यकता हो गई है। (अपूर्ण)

भारतीय सामाजिक क्रांति का रूप भारतीय ही हो

★ श्री कि० घ० मश्रुवाला

भारत ने जब अगस्त सन् '४७ को आज़ादी पाई और शासन का सूत्र अपने हाथ में लिया, तभी यह निश्चित हो गया कि भारत में सामाजिक क्रान्ति होना अनिवार्य है।

लेकिन जो प्रश्न उस समय अनिश्चित था और आज भी अनिश्चित है, वह है इस क्रांति का स्वरूप क्या होगा? उसका आधार स्वावलम्बी या अधिकांश स्वावलम्बी गांव होंगे अथवा आधुनिक यन्त्र-उद्योगों से भरपूर, और निवासियों की भीड़-भाड़ से तंग शहर, जो गांवों की उपज पर पलते हैं।

गांधी जी का कहना था और उनके विचारों से मेरी पूरी सहानुभूति है कि यदि भारत ने दूसरा अर्थात् पश्चिम के उद्योगवाद का रास्ता चुना, तो वे सारी बुराइयां, जो आज पश्चिमी दुनिया पर हावी हो गयी हैं, और उसे बढ़ते हुए वेग से विनाश की ओर ढकेल रही हैं, भारत में आजायेंगी और कोई उन्हें रोक नहीं सकेगा।

बड़े उद्योगों के विदेशी और भारतीय अधिपति भारत की इस हालत पर लोभ की आंख लगाए बैठे हैं। वे सोचते हैं, भारत के ये भूखे गरीब मजदूर हमारे शोषण के कितने उपयुक्त शिकार हैं। वैज्ञानिकों के लिए—पदार्थ-वैज्ञानिक, गणित-शास्त्री, इंजीनियर आदि के लिए ही नहीं, बल्कि अफसोस, मानस-शास्त्री के लिए भी, बहुत धन कमाने का कितना बड़ा क्षेत्र यहां है। मानस-शास्त्री का सम्बन्ध इस तरह आता है कि इसने पश्चिम में जनसाधारण के मानस का अध्ययन करके उसका यन्त्रों की मानवता-विहीन क्रियाओं से मेल बैठाने की कला हासिल की है, और उसके द्वारा पदार्थों को सस्तेपन का गुण प्रदान किया है और जगत के बाजारों पर अपना कब्जा जमा कर उद्योगों को बहुत फायदेमन्द बना दिया है।

पुरानी दलीलें बेकार

भारत अपने लाखों दीन-दरिद्र निवासियों का जीवन-मान जल्दी से जल्दी उठा कर, उसके जरिये साम्यवाद का संकट टालने की आशा से यह सोचता है कि वह ब्रिटिश और अमेरिकन पूंजी की सहायता लेकर बड़े पैमाने पर अर्थ-उत्पादन करने लगे। यदि उत्पादन का यही मार्ग उसने अपनाया, तो शीघ्र वह समय आयेगा जब उसके अपने बाजार में उसकी चीजें खपेंगी नहीं और दुनिया के मुकाबिले बाजारों में वह अपनी सस्ती कीमतें लेकर उतरेगा और पश्चिम के देशों को ललकारेगा।

यह याद रहे कि इस होड़ में चीन और जापान का सामना भी पश्चिम को शीघ्र ही करना पड़ेगा।

पहले यह दलील दी जाती थी कि पूर्व अपना जीवन-मान बढ़ने पर पश्चिम से उसकी विशेष चीजें, तथा वायरलेस सैट, बिजली का सामान आदि ज्यादा मात्रा में खरीदने लगेगा। लेकिन अब इस पुरानी दलील में कोई तथ्य नहीं रह गया है।

पूर्व एशिया का हरएक देश स्वयं पूर्ण बनने की कोशिश कर रहा है और जब तक वे उस मकसद पर नहीं पहुंच जाते, तब तक वे उपभोग के माल का आयात बहुत कम करेंगे। अपनी सारी शक्ति और साधन अपने नये उद्योगों का ज्यादा से ज्यादा विकास करने में लगायेंगे, ताकि लोगों की बढ़ती हुई क्रय-शक्ति को देश के अन्दर ही समा लिया जाय।

इसके सिवा भारत, चीन और जापान की १०० करोड़ जनता जब यंत्र-उद्योगों के नीरस व्यवसाय में लगा दी जायेगी, तब उसका कैसा और कितना भयंकर पतन होगा, इसका अनुमान कौन कर सकता है? मुझे लगता है जब यह १०० करोड़ जनता का विराट समुदाय ऐसा धन-निष्ठ जीवन बितायेगा, जिसमें पैसे की चाह ही मुख्य होगी, और यंत्र-उद्योगों की नीरस निर्जीव क्रियाओं को बार-बार करते-करते ऊब कर उसके अधिकांश व्यक्तियों का मन टूट-फूट जायगा, खंड-खंड हो जायगा, तब वे उससे उत्पन्न पागलपन में न जाने कितना उत्पात, उलट-पुलट और मारकाट करेंगे।

अमेरिका में तो साम्यवाद का आतंक लोगों के दिमाग पर है ही, भारत में भी वह शीघ्र उसकी सीमा तक पहुंचा जा रहा है। तब सम्भव है कि इसी बीच अमेरिका पूर्व में अपने साथियों के पक्ष का निर्माण करे। यह पक्ष-निर्माण संम्भव है पश्चिम में अटलांटिक पैक्ट, मार्शल योजना और ट्रूमैन-सहायता आदि के आधार पर जो संगठन हुआ है, उससे भी बड़ा हो।

इस भयावह स्थिति से बचने का एक ही उपाय है। भारत को अपनी गांवों की—जिनकी संख्या ७ लाख है, और जिनमें उसके ८५ प्रतिशत निवासी रहते हैं—परम्परा की नींव पर स्वाभाविक अर्थ-रचना खड़ी करनी चाहिये।

गाँवों की गरीबी का हल

इन गांवों का बड़ा निर्दय शोषण हुआ है। करने वाले अनेक रहे हैं; जमींदार, जो गांव में न रह कर शहर में रहता है, साहूकार, विदेशी पूंजी और सबसे ज्यादा साम्राज्यवाद, जिसने बल-पूर्वक मुल्क में यंत्र-उद्योगों द्वारा उत्पादित माल भर दिया और गांवों की आय को आधा कर दिया; क्योंकि उसकी होड़ में गांव के हाथ-कारीगर नहीं टिक सके। अपनी आधी आजीविका खो कर वे तब से इस शोचनीय गरीबी में ही पड़े हुए हैं।

गांधी जी का ध्यान इन गांवों के उद्धार पर केन्द्रित था। वे भारतीय गांवों को यह सिखाना चाहते थे कि वे अपनी उन्नति और पुनर्निर्माण कैसे कर सकते हैं और घर के तथा बाहर के उन असंख्य शोषकों से, जिन्होंने उन्हें अत्यन्त दुःखदायी, अवर्णनीय गरीबी की हालत में ला पटका है, कैसे बच सकते हैं। इस शिक्षा की जरूरत ने गांधीजी की बुनियादी तालीम की कल्पना को जन्म दिया।

मेरी समझ में नहीं आता कि ब्रिटिश सरकार एक ऐसा शासन कैसे स्वीकार करती और चलाती रही, जो भारतीय गांवों के इन असंख्य इन्सानों के ऐसे गहरे और विस्तृत कष्ट और अभाव को अविचलित भाव से देखता रहा। अपरिग्रह के व्रतधारी गांधीजी के अनेक अनुयायी आज भारत का उद्धार करने में अपना जीवन लगा रहे हैं। वे इसके लिए आर्थिक स्वयंपूर्णता की स्थापना करना चाहते हैं। गांवों के लोगों में नये प्रयत्न की और पराक्रम की वृत्ति जगाना चाहते हैं। उन्हें केवल आर्थिक और राजनीतिक नहीं, आध्यात्मिक स्वतन्त्रता भी देना चाहते हैं। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि ब्रिटेन उनके लिये कोई योग्य प्रेम की भेंट दे और पुरानी भूलों के लिये अपने अनुताप का और भविष्य के लिये अपनी हिताकांक्षा को प्रकट करे?

भारत आज एक दोराहे पर खड़ा हुआ हुआ है। गांधीजी के अनुयायियों का एक दल स्वशासन के उदय में स्वतन्त्रता केवल आरम्भ मानता है। अपने नेताओं के साथ यह दल कहता है कि इस स्वतन्त्रता की पूर्णता तभी होगी, जब आध्यात्मिक पुनर्जीवन और आर्थिक स्वयंपूर्णता की दुहरी क्रियाओं द्वारा गांवों का उद्धार किया जायगा।

दूसरे दल पश्चिम के यंत्र-कौशल और भौतिक विपुलता पर मुग्ध हैं। यहां उन्हें साम्यवाद के बढ़ने का डर भी लग रहा है और वे उसे रोकने के लिये काफी जल्दी आर्थिक सुख-सुविधा का विस्तार कर देना चाहते हैं। इस लक्ष्य को पूरा करने की आशा उन्हें पश्चिम की इस यंत्र-प्रधान सभ्यता में ही दिखती है।

काल्पनिक स्वर्ग

मैं कहूंगा कि ये लोग शेखचिल्ली की दुनिया में बस रहे हैं। वे उद्योगवाद के दुःखदायी नतीजों को नहीं देख पाते। उन्हें यह नहीं दीखता कि उद्योगवाद सर्जक शक्ति की उपेक्षा करता है, आध्यात्मिक मूल्यों की प्रतिष्ठा नष्ट कर देता है, सुख सुविधाओं के लिये मनुष्य की वासना और मांग बढ़ाता है; और इस तरह पृथ्वी को साधन निश्चित मार्ग का निर्देश किया था। लेकिन भारतवासी भी उसे अपनाने में सकुचाते हैं।

खैर, गांधी जी का मार्ग रहने दें, तो भी इतना निश्चित है कि यदि जनतन्त्रवादी देश वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था ही कायम रखना और दलित जनता की परवाह किये बिना अपना जीवन-मान मनमाना बढ़ाते रहने की सुविधा और स्वतन्त्रता लेना चाहते हैं, तो एशिया की जनता इस स्थिति को अधिक दिन तक नहीं सह सकेगी। यदि पूंजीवादी व्यवस्था शीघ्र ही अपना विसर्जन खुद ही कर डालने के लिए अग्रसर नहीं होती तो समय आ रहा है जब कि साम्यवाद की बाढ़ सम्पूर्ण एशिया को प्लावित कर डालेगी और किसी भी ताकत के लिए फिर वह कितनी ही शक्तिशाली और फासिस्ट ढंग की क्यों न हो, उसे रोकना असम्भव हो जायगा। सारा साइबेरिया, पूरा चाइना और उत्तर कोरिया अब साम्यवाद के लाल रंग में रंग गये हैं, और जब दक्षिण-पूर्व एशिया और भारत भी उसकी छाया से खाली नहीं है, बल्कि उत्तरोत्तर उसके प्रभाव में आते जा रहे हैं, तब अमेरिका दक्षिण कोरिया वासियों से यह उम्मीद कैसे करता है, कि वे जनतन्त्र की वंचक ओढ़नी में आवृत्त एक शोषक शासन-व्यवस्था की अधीनता खुशी से मान लेंगे? यदि जनतन्त्रवादी देश यह समझते हों कि साम्यवाद एशिया में केवल रूस की चालबाजियों के कारण पनप रहा है, या कि वह एशियायी देशों को कर्ज और शस्त्र की बड़ी-बड़ी राशियां दे कर रोका जा सकता है, तो मुझे लगता है कि वे बड़े भ्रम में हैं। वह तो इसलिए बढ़ता है कि एशिया गरीब है, भूख से मर रहा है, उसे बड़ी क्रूरता से लूटा गया है। उसकी आबादियां घनी हैं, और इसलिए कि अब उसे अपनी इस दुर्दशा का बोध हो गया है, और साथ ही वह देखता है कि इस भयंकर गरीबी के बीच भी उसके अपने ही देश मुट्ठी भर लोग ऐसे हैं, जो दौलत में गर्क हैं, स्वार्थी हैं, निर्दय हैं और मजा तो यह है कि सरकारें भी उनके ही कहने में है।

[शेष पृष्ठ २६ पर]

इन्द्र धनुष

शोषण क्या है ?

पूंजीवाद, शोषण को समाप्त करने का नारा लगाने वाला वर्तमान प्रगतिवादी साहित्यिक आज साहित्य का नया लक्ष्य चाहता है। किन्तु शोषण केवल आर्थिक शोषण नहीं है, यह बताते हुए श्री प्रो. इन्द्र लिखते हैं कि हमें इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करना है। वास्तव में देखा जाय तो रुपये पैसे का नाम पूंजीवाद नहीं है। पूंजीवाद का अर्थ है शक्ति का संचय। जहां तक एक व्यक्ति या वर्ग अपने हाथ में शक्ति का संग्रह करके दूसरे व्यक्ति या वर्ग का शोषण करता है, दुर्बल पर अत्याचार करता है, उसी का नाम पूंजीवाद है। रुपये में शक्ति है, किन्तु एकमात्र शक्ति नहीं है। धन-शक्ति से जन-शक्ति कहीं अधिक प्रभाव रखती है। यदि एक व्यक्ति जन-शक्ति का संग्रह करके अपने विरोधी दल पर आक्रमण करता है तो क्या वह पूंजीवाद नहीं है? उससे भी तो शोषण होता है। दूसरी ओर शोषण की परिभाषा भी अधूरी है। किसी का भूखा रखना शोषण है तो क्या विचारों की हिंसा करना शोषण नहीं है? शरीर बुद्धि और हृदय सभी के समूह का नाम व्यक्ति है। यदि इसमें से किसी का स्वाभाविक विकास रोका जाता है तो वह शोषण है। हिंसात्मक उपायों पर विश्वास रखने वाले साम्यवादी के पास इसका कोई उत्तर नहीं है। वह केवल शरीर को देखता है बुद्धि और हृदय को नहीं, वह तो यहीं तक सीमित है कि शोषण का एकमात्र साधन संचित सम्पत्ति है। जब इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया जायगा तो शोषण का अन्त हो जायगा, किन्तु यह अदूरदर्शिता है। शोषण का मूल्य कारण वे भावनाएं हैं जो व्यक्ति के स्वार्थ को संकुचित कर देती हैं। पारदर्शी साहित्यिक उन्हीं पर प्रहार करता है।

●

साहित्य में साधन शुद्धि

साधनशुद्धि को भी आज के प्रगतिवादी अनावश्यक मानते हैं। इस पर भी चोट करते हैं कि साधनों के विषय में इस प्रकार की खुली छूट का अर्थ है मनुष्य में मानवता के स्थान पर पशुता को आने देना व उसे क्रूर जंगली जानवर बनने देना। किन्तु मनुष्य यदि एक बार ऐसी प्रवृत्तियों को प्रश्रय दे देता है तो वे सब टूटे बांध के समान अनियन्त्रित हो जाती हैं। जब उन्हें बाह्य ईंधन नहीं मिलता तो अपने ही घर पर उतरती हैं। उनसे अभिभूत मानव सोचता है कि जब मुझे दूसरे वर्ग को नष्ट करके भी अपना पेट भरने का अधिकार है तो यह अधिकार अपने वर्ग के लिये क्यों नहीं है? आखिर 'दूसरा' और 'अपना' की सीमाएं कृत्रिम ही तो हैं। अपने स्वार्थ के अनुकूल उन्हें छोटी बड़ी किया जा सकता है। 'पेट भरने' का भी तो कोई निश्चित अर्थ नहीं है। भर पेट भोजन, वस्त्र, मकान, यातायात के लिये वाहन, बच्चों के लिये शिक्षण की सुविधाएं, काम के घंटों में कमी, मनोरंजन आदि सारी बातें 'पेट भरना ही तो हैं। और इन सब बातों के लिये दूसरे पर हिंसात्मक आक्रमण बुरा नहीं है। इस प्रकार यह एक गम्भीर प्रश्न बन जाता है कि मनुष्य कहां रुकेगा।

दूसरी ओर नैतिक बल सबसे बड़ा बल है। जो राष्ट्र उसे खो देता है उसके उत्थान की आशा नहीं रहती। महात्मा गांधी की तीक्ष्ण दृष्टि इस सत्य को पहचान गई थी। उन्होंने सर्व साधारण में नैतिकता की प्राण प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिये अपनी सारी शक्ति लगा दी।

हम चाहते हैं कि हमारा उदीयमान साहित्यिक दूरदर्शी बने। वर्तमान समस्याओं के गम्भीर अन्तस्तल में डुबकी लगाए। उसके हृदय में जितनी सहानुभूति पीड़ित दरिद्र के लिए है उतनी पीड़ित धनवान के प्रति भी होनी चाहिये। उसकी वाणी में युग की समस्याओं का समाधान हो किन्तु वह समाधान ऐसा होना चाहिये कि नई भीषणतर समस्याएं खड़ी न हो जायं। उसे 'बहुजन हिताय' से भी आगे बढ़ कर 'सर्वजन हिताय' पर पहुंचना है।

●

सब से अधिक रोगी देश

अमेरिका आज उन्नततम व समृद्धतम देश माना जाता है, किंतु वह विज्ञान व सम्पत्ति के सब साधनों के बावजूद वह सबसे अधिक रोगी भी है, यह 'हैल्थ हैरल्ड' बताता है—

'एक जानकार को यह कहने में कोई हिचक नहीं होगी कि दुनिया के पर्दे पर जितने राष्ट्र हैं, उन सब में अधिक रोगी अमेरिकन राष्ट्र है। जो वैज्ञानिक इस खोज में शामिल है, उनका कहना है कि दक्षिणी अमेरिका और अफ्रीका में बसने वाले जंगली और हिन्दुस्तानके पर्वतों पर बसने वाले कोल-भील, किसी सुसभ्य राष्ट्र के सुसभ्य शहरियों से कहीं अधिक स्वस्थ हैं। अमेरिका तो स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत गिरा हुआ है।

'यह नहीं कि भगवान हम से रूठे हुए हों। वह तो हम पर बहुत कृपालु हैं। अच्छे से अच्छा देश हमारा, प्रकृति की देनों से भरा हुआ, उत्तम हवा और उत्तम धरती, जो किसी जमाने में बहुत ही अच्छी थी। पर स्वास्थ्य कमाने की कौन कहे, हम तो उसे गंवाने बैठ गये हैं और अमेरिकन ही इसके पूरे-पूरे जिम्मेवार हैं।

'आप यह न मानें कि डाक्टरों के अभाव में अमेरिकनों की यह दशा है। नहीं, हमारे यहां एक लाख से कम डाक्टर न होंगे। अमेरिका की एक प्रसिद्ध औषध व्यापारी पत्रिका ने एक जांच का फल निकाला है। ३ करोड़ ७१ लाख नुस्खे लिखे गये और हर नुस्खे पर अनुमान ४।) रु० खर्च आया। इन नुस्खों की बदौलत १५ फीसदी अमेरिकनों के शरीरों में भांति-भांति के विष, सड़ा मवाद और कुने पेशाब डाले गये, न मालूम कितने बीमारी पैदा करने वाले कण शरीरों में प्रविष्ट कर दिये गये।

१५ फीसदी की तो गिनती मालूम हुई है, नुस्खे के हिसाब से, लेकिन इसके सिवाय और जो सैकड़ों टन चूरन-चटनी और रेचक दवाइयां तथा हजारों पीपे तेलों के दवा के नाते लोगों ने पेट में उंडेल लिये, उनकी कोई गिनती ही नहीं है। शायद दुनिया में कोई मुल्क इतनी दवा न खाता होगा, न इतना बीमार होगा।'

●

अमेरिका में रेलवे टायम टेबल

प्रति वर्ष यात्रियों की सुविधा के लिये अमेरिका में लाखों की संख्या में टायम टेबल छापे जाते हैं। भारत के विपरीत वहां यह टायम टेबल मुफ्त ही बांटे जाते हैं।

पिछले वर्ष अमेरिका में १,००,००,००,००० टायम टेबल छपे थे। इनमें से ग्रे हाउंड सिस्टम की बस लायन ने ही ५०,००,०० टायम टेबल छपवाये थे। व्यक्तिगत हवाई सर्विस भी प्रति मास २,५०,००० टायम टेबल छपवाते हैं। छोटे छोटे परिवर्तन तो वहां प्रतिमास होते ही रहते हैं पर प्रति तीसरे मास उनमें काफी बड़े बड़े परिवर्तन होते हैं। वहां का सबसे बड़ा टाइमटेबल रेलों का होता है जो कि ८२ वर्ष से छप रहा है। इसमें लगभग १५०० पृष्ठ होते हैं।

अमेरिका में पहला टायम टेबल बाल्टीमोर की एक रेलवे ने १८३० में प्रकाशित किया था। तबसे अब तक उसमें काफी परिवर्तन हो चुका है। पहले के उलझन भरे तरीके का स्थान अब सरल तरीके ने ले लिया है। बारीक टायप का युग भी अब आ चुका है।

●

रूस द्वारा शोषण

पूर्वी यूरोप में जनता के अधिकारों का शोषण हो रहा है। उसके विरुद्ध किसान पार्टियों के निर्वासित नेताओं ने अन्तर्राष्ट्रीय किसान-यूनियन में आवाज उठाई है लिथुएनियन प्रतिनिधि मण्डल के नेता डाक्टर जोजफ पाजाउंजस ने लिथुआनिया और अपने पड़ोसी बाल्टिक राष्ट्रों—लिटाविया, ऐस्टोनिया और पोलैंड का रूसीकरण करने के विषय में कहा कि लौह आवरण के भीतर सभी पूर्वी यूरोपीय लोग कारावासों और बाधित शिविरों में पीड़ा और यातना के शिकार हो रहे हैं। बाल्टिक देशों में जो रूसी योजनाएं हैं, वे तो मानव की कल्पना की सीमा से परे हैं। रूस इन लोगों का पूर्ण रूप से नाश करना चाहता है। रूस ने शान्तिकाल में बड़े उग्र रूप और विधिपूर्वक मानवता हीन जनघातित्व का अपराध किया है। पश्चिम के लिए जो शीत युद्ध है, वह बाल्टिक लोगों के लिए एक प्रकार से नरककुण्ड है।

स्लोवाक किसानों के प्रतिनिधि डा० जोजफ कैटरिक प्रतिनिधि १९४८ में साम्यवादी षडयन्त्र से तंग आकर अपने देश से भाग आये थे। आपने कहा —कि साम्यवाद की हार का अर्थ है स्वतन्त्रता और स्वाधीनता।

बल्गेरियन राष्ट्रीय किसान यूनियन के अस्थायी निर्देशक बोर्ड से एक विज्ञप्ति में संकेत किया गया है कि अन्तर्राष्ट्रीय किसान यूनियन १० करोड़ किसानों के हितों का प्रतिनिधित्व करती है। बल्गेरियन किसान यूनियन सहयोगी भावना का प्रतीक है।

●

केवल रूस के इशारे पर

भारतीय कम्यूनिस्ट आज जिस नीति पर चलने लगे हैं, वह केवल एक चाल मात्र है, यह बताते हुए श्री जयप्रकाश नारायण कहते हैं—:

उनकी नीति विदेशी शक्ति द्वारा निर्धारित की जाती है और देश तथा देशवासियों के हित का उन्हें कुछ भी ख्याल नहीं कम्युनिस्ट लूट, हत्या, अग्निकाण्ड बलात्कार आदि के पक्ष में है और कृष्णा, गुंटूर, वारंगल तथा नालगोंडा जिलों में उन्होंने वस्तुतः यही किया है। उनके सभी कार्य राष्ट्र विरोधी हैं।

[शेष पृष्ठ २२ पर]

फसल का प्रधान शत्रु टिड्डी, जिसके दल ने आज कल भारत पर आक्रमण कर दिया है

टिड्डियों के अण्डों को नष्ट करने के लिये जीप द्वारा कृमिनाशक चूर्ण का छिड़काव।

भारत की फसल पर भारी आक्रमण

टिड्डियो के विसय में सब से बाद की सूचनाओं से मालूम हुआ है कि विदेशों से आई टिड्डियों के बड़े-बड़े दल तो उत्तरी भारत पर उड़ ही रहे हैं, भरतपुर तथा राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में टिड्डियों से बचने के उपायों से काम लेना अब तत्काल आवश्यक है।

आक्रमण-चक्र

भारत पर टिड्डियों के हमले प्राचीन काल से ही होते आए हैं, और यही कारण है कि फसल, धन, पेड़ पौधे और हरियाली मात्र की परम शत्रु इन टिड्डियों का वर्णन प्राचीन हिन्दू साहित्य में पंगपाल के नाम से किया गया है।

टिड्डियों के आक्रमण-काल का एक क्रम भी होता है। १९ वीं शताब्दी के मध्य से इनके आक्रमणों का ब्यौरा निम्नलिखित रूप में रखा गया है। उससे पता चलता है कि तब से टिड्डियों के आक्रमण के ८ चक्र पूरे हो चुके, जो इस प्रकार है :—
१८६३-६७, १८६९-७३, १८७६-८१, १८८६-९८, १९००-१९०७, १९१२-१९२०, १९२६-३१, और १९४०-४६।
वर्तमान आक्रमण ९ वें चक्र में है, जो गत वर्ष अर्थात् १९४९ में आरम्भ हुआ था।

तीव्र गति

टिड्डियों के दल भारत, पाकिस्तान अफगानिस्तान, अरब, ईरान, ईराक, दक्षिण रूस, उत्तरी व पूर्वी व पश्चिमी अफ्रीका में पाये जाते हैं और वे बड़ी तीव्र गति से उड़ते हैं। कहते हैं कि अरब तट से भारत के सौराष्ट्र तक की प्रायः १२०० मील की दूरी, टिड्डियां, बीच में कहीं रुके बिना ही तय कर सकती हैं।

टिड्डियों का वर्तमान चक्र १९४९ के आरम्भ में पूर्वी अरब व बिलोचिस्तान के कुछ प्रदेशों से शुरू हुआ और उसके बाद टिड्डीदल सिंध, खैरपुर, मीर, बहावलपुर तथा राजस्थान में पहुंचे और बढ़े। १९५० के बसंत में भी पश्चिमी पाकिस्तान, दक्षिण ईरान, आदि में टिड्डियों के दल पैदा हुए, और गत मई के मध्य में भारत पर उनका इस वर्ष का पहला आक्रमण हुआ। तब से लगभग २ दर्जन टिड्डी दल इस देश में आ चुके हैं।

बचाव के उपाय

टिड्डियों से बचाव के उपाय आक्रमण ग्रस्त देश में तो करने ही होते हैं, साथ ही उन देशों में भी में यह आवश्यकता होती है जहां से टिड्डियों की पैदायश शुरू होती है। भारत व पाकिस्तान और ईरान में किये जाने वाले टिड्डी-नाशक उपायों का समन्वय, एक समझौते के अंतर्गत होता है। इस समझौते के तत्वावधान में गत वर्ष कराची में एक टिड्डी सम्मेलन हुआ था, जिसमें टिड्डियों से उत्पन्न होने वाले भावी संकट के विषय में काफी सोच-विचार किया गया था। इस वर्ष, ऐसा ही एक सम्मेलन, भारत में होगा।

आन्तरिक नियंत्रण

भारत में नियंत्रण संगठन का कार्य टिड्डी नियंत्रण के निर्देशक के, जो भारत सरकार के पौध संरक्षण मंत्रणादाता भी हैं, निरीक्षण में किया जाता है। राजस्थान, सौराष्ट्र और आस पास के राज्यों के लगभग १, ८०, ००० वर्ग मील रेगिस्तानी क्षेत्रों की देखभाल प्रत्यक्षतः केन्द्रीय संगठन द्वारा की जाती है और अन्य प्रभावित क्षेत्रों में टिड्डी नियंत्रण का कार्य सम्बद्ध राज्यों के टिड्डी संगठनों द्वारा किया जाता है।

बड़ी टिड्डियां

टिड्डी-नियंत्रण कार्यों का उद्देश्य टिड्डियों को नष्ट करना है। नष्ट करने का सबसे अच्छा, सबसे अधिक सस्ता और प्रभावशाली उपाय यह है कि नई टिड्डियों के अण्डे बच्चे नष्ट कर दिए जायें और जहां टिड्डियों ने अंडे बच्चे दिए हों, वहां से उन्हें किसी अन्य स्थान पर न जाने दिया जाये। बड़ी टिड्डियां जब उड़ने लगती हैं तो उनका नियंत्रण करना अत्यंत कठिन हो जाता है। जब टिड्डियों के विशाल झुंड तीव्र गति से उड़ कर फसलों का विनाश करते हैं उस समय उनकी रोकथाम के लिए कोई प्रभावशाली कार्रवाई नहीं की जा सकती। वायुयानों द्वारा कृमिनाशक पदार्थ छिड़क कर टिड्डियां नष्ट करने के सम्बन्ध में परीक्षण किया जा रहा है। यदि फसलों पर बड़ी टिड्डियां बैठ गई हों तो उनसे फसलों की रक्षा के लिये निम्न उपाय किए जा सकते हैं।

मारने के उपाय

रात्रि में या प्रातःकाल टिड्डियां क्रियाशील नहीं रहती, और उस समय उन्हें मारा या नष्ट किया जा सकता है। यदि टिड्डियां झाड़ियों या बाड़ों पर विश्राम कर रही हों तो उन्हें जलाया जा सकता है। और यदि वे उपयोगी वृक्षों पर बैठी हुई हों तो वृक्ष हिला कर उन्हें उड़ाया जा सकता है या उपयुक्त कृमिनाशक पदार्थ छिड़क कर नष्ट किया जा सकता है। यदि वे फसलों पर बैठी हुई हों तो उन्हें वहां से उड़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। और जब वे किसी बंजर भूमि में पहुंच जांय तो उन्हें नष्ट किया जा सकता है।

अंडों और पखहीन टिड्डियों का विनाश

अंडों और पंखहीन टिड्डियों को खाई खोद कर या जला कर नष्ट किया जाता है। छोटी टिड्डियों को घेरने के लिए खाई खोदी जाती है और खाई के किनारे इस प्रकार बनाने चाहिये ताकि पंखहीन टिड्डियां उन पर न चढ़ सकें। रासायनिक द्रव्यों अथवा यांत्रिक उपायों से टिड्डियां नष्ट की जा सकती हैं। पंखहीन टिड्डियां या तो जीवित ही भूमि में गाड़ दी जानी चाहिये या उन्हें जला देना चाहिये। इसी प्रकार कृमिनाशक पदार्थ या बेन्जीआइन हेक्साक्लोराइड आदि विष छिड़क कर टिड्डियां नष्ट की जा सकती हैं।

भारतीय जादू के खेल

श्री विराज

अब से लगभग २५ वर्ष पहले कलकत्ते के एक पार्क में हजारों आदमियों की उपस्थिति में भारतीय जादू का सबसे प्रसिद्ध खेल दिखाया गया था। इस खेल में एक रस्सी आकाश में लटकी हुई थी, जिसका एक छोर आकाश में बिना सहारे थमा था और इस प्रकार रस्सी अधर झूल रही थी। पास ही एक आदमी जमीन पर बैठा हुआ ढोल बजा रहा था और एक रहस्यपूर्ण सा दीखने वाला जादूगर एक बालक को खेल के लिये तैयार कर रहा था।

जादूगर और उस जंबूरे के अतिपरिचित और रोचक वार्तालाप के बाद जादूगर के आदेश पर वह बालक उस अधर लटकती हुई रस्सी पर चढ़ा और रस्सी के ऊपरी छोर तक पहुँचते पहुँचते अदृश्य हो गया। जादूगर ने बालक को आवाज दी, पर वह नहीं बोला। दो आवाज तीन आवाज बालक फिर भी नहीं बोला। जादूगर को गुस्सा आया। आखिरी चेतावनी देने पर भी नहीं बोला तो जादूगर ने तलवार निकाल ली। उस नङ्गी तलवार को मुंह में थाम कर जादूगर स्वयं भी उस रस्सी पर चढ़ गया। जादूगर से बच कर बालक आखिर कहां जाता। वह पकड़ा गया। जादूगर को क्रोध बहुत चढ़ा हुआ था। उसने बालक के तलवार से कई टुकड़े कर दिये और उन्हें नीचे फेंक दिया। पहले सिर गिरा फिर हाथ पैर और अंत में धड़—सबके सब खून में सने हुए। खून से लाल तलवार भी जादूगर ने नीचे फेंक दी और स्वयं भी नीचे उतर आया। नीचे उतरने पर जादूगर का पुत्र प्रेम फिर जाग उठा। पुत्र के शव के टुकड़ों को देखकर वह बारबार विलाप करने लगा। पुत्र के मर जाने से उसका बुढ़ापा कष्टपूर्ण हो जायगा, इसलिये उसने दर्शकों से आर्थिक सहायता की याचना की जो उसे प्राप्त भी हुई। अन्त में लाश के उन सब टुकड़ों को इकट्ठा करके एक चादर के नीचे रख दिया गया। जादूगर ने कुछ मंत्र पढ़े और बालक चादर के नीचे से फिर पहले जैसा उठ खड़ा हुआ।

फोटो नहीं आया

विशाल जनसमूह ने इस खेल को देखा। किसी ने कोई ऐतराज नहीं किया कुछ अमेरिकन पत्रकार भी इस खेल को देख रहे थे। उन्हें यह खेल बहुत अद्भुत लगा। बीच बीच में उन्होंने कई फोटो भी लिये। परन्तु जब उन्होंने अपनी फिल्में धोईं तो उन्हें और भी अधिक आश्चर्य हुआ, क्योंकि उन फिल्मों में उन दृश्यों का नाम निशान तक नहीं था जिनकी उनमें आशा की जाती थी। फिल्मों में खाली आकाश का चित्र था। केवल एक आकाशमें उड़ती हुई चील का फोटो था। फोटो लेने वाले अभ्यस्त फोटोग्राफर थे। उनके फोटो लेने में कोई भूल हुई हो इस बात की सम्भावना नहीं के बराबर है। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि जो जादूगर हजारों दर्शकों की हजारों जोड़ी आंखों को धोखा दे रहा था, वह काले कैमरे की एक आंख को धोखा नहीं दे सका।
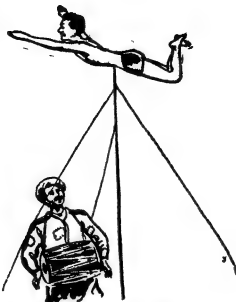
यह खेल भारतीय जादू का अंतिम-सिद्ध खेल है। पर पिछले अनेक वर्षों से कोई जादूगर इस खेल को दिखाने के लिये मैदान में नहीं आ रहा। खेल किस प्रकार किया जाता है यह ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता परन्तु कैमरे पर चित्र न आने से यही अनुमान किया गया है कि जादूगर अपनी प्रचंड मानसिक शक्ति से दर्शकों को सम्मोहित कर लेता है और इस प्रकार उन्हें जहां जहां कुछ भी नहीं होता वहीं रस्सी बालकहत्या आदि के अद्भुत दृश्य दिखा देता है।

ऐसा जादूगर बहुत खतरनाक हो सकता है। यदि वह चाहे तो बैंक के खजांचियों को आस पास खड़े आदमियों समेत सम्मोहित करके नोटों की गड्डियां की गड्डियां मांग सकता है, जिन्हें दिये बिना खजांची रह नहीं सकता। ऐसा व्यक्ति निश्चित रूप से अपने पति के साथ चलती हुई धनी सुन्दरी युवती को सम्मोहित करके उसके गले का बहुमूल्य हार मांग सकता है जो उसे देना ही पड़ेगा। इतना ही नहीं वह सुन्दरी को भी अपने साथ ले जा सकता है। शायद पाठक सोचें कि ऐसा होना कठिन है क्योंकि सम्मोहित करने में कुछ तो समय लगेगा ही, कुछ तो अजीबोगरीब प्रक्रियाएं जादूगर को करनी पड़ेगी ही, इतनी देर में तो ढेर भीड़ इकट्ठी हो जायगी। पर ऐसा नहीं है। सम्मोहित करने के लिये आंखों से आंखों का मिलना ही काफी है। आंखें न भी मिलें तो भी वाणी द्वारा चलते चलते आधे मिनट में सम्मोहन किया जा सकता है। चुपचाप चलते हुए कन्धे पर हाथ रख कर सम्मोहन करना भी उतना ही सरल है। केवल सम्मोहन करने की इतनी शक्ति प्राप्त करना ही कठिन है।

आम का पेड़ उगता है।

ठीक इसी प्रकार एक आश्चर्यजनक खेल है जिसके दिखाने वाले अपेक्षाकृत बहुत अधिक पाये जाते हैं। जादूगर दर्शकों के बीच में बैठकर सूखी भूमि में आम की गुठली बोता है। पानी से उसे सींचता है। देखते देखते पौधा उगता है बड़ा होता है। आधे घंटे में उस पर फल लग जाते हैं। पक भी जाते हैं। यहां तक कि छोटे बच्चे उन्हें खाकर उसका आनन्द भी ले सकते हैं। इसके बाद पौधा उसी आश्चर्यजनक रूप से लुप्त भी हो जाता है।

इस खेल में जादूगर किसी कपड़े या चादर का प्रयोग नहीं करता। कपड़े का प्रयोग केवल इनके हाथ की सफाई के लिए अधिक अवसर प्रदान करता है।

मुझे स्वयं एक खेल देखने का अवसर प्राप्त हुआ। जादूगर ने कहा कि वह लेटी हुई मुद्रा में भूमि से ऊपर उठ कर दिखायेगा। खेल निःसंदेह रूपसे विस्मयजनक था। जादूगर मंच पर लेट गया। एक बहुत लम्बी चौड़ी चादर उसे उढ़ा दी गई। प्रशान्त निस्तब्धता में एक मिनट तक प्रतीक्षा करने के बाद चादर से ढंका हुआ शरीर धीरे धीरे ऊपर उठना प्रारम्भ हुआ। यहां तक कि वह आकाश में पांच फीट ऊंचा तक उठ गया। चादर के भीतर लेटा हुआ जादूगर भूमि से स्पष्ट ऊपर उठा हुआ दिखाई पड़ता था। पर बाद में जादूगर से ही मालूम हुआ कि वह सारी कारस्तानी उन लकड़ियों की थी जो उसने चादर में लेटते समय अपने पास छिपा ली थीं। स्वयं ऊपर उठने के बजाय वह लकड़ियों को ही ऊपर उठाता गया था। इससे स्पष्ट है कि यदि चादर का प्रयोग किया जाय तो हाथ की सफाई के लिये पूरी गुंजाइश रहती है।

आग नहीं जलाती

जादू का अर्थ है कुछ अद्भुत बात कर दिखाना। यदि कोई व्यक्ति प्राकृतिक नियमों का सफलतापूर्वक उल्लंघन कर जाय तो वही जादू कहलाता है। रस्सी के जादू वाले पहले उदाहरण में जादूगर न्यूटन द्वारा आविष्कृत गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त का उल्लंघन करके दिखाता है। पर उससे भी अधिक आश्चर्यजनक है अग्नि की दाहकता का उल्लंघन। एक से अधिक जादूगरों ने दहकती आग पर चलने के खेलों का सार्वजनिक रूपसे प्रदर्शन किया है। ये खेल अच्छे से अच्छे वैज्ञानिकों के निरीक्षण में भी हुए हैं, और उनमें कोई चालाकी भी नहीं पकड़ी गई है। वे प्रदर्शन करने वाले स्वयं तो आग पर चले ही, उन्होंने अपने पीछे बिलकुल अपरिचित दूसरे आदमियों को भी नंगे पांव दहकते हुए कोयलों पर चलाया। आग का तापमान जलती हुई चिता के तापमान जितना था। उनके नंगे पांवों पर किसी प्रकार का लेप नहीं था। इस तरह के प्रदर्शन हिन्दू और मुसलमान दोनों ने ही किये हैं। आश्चर्य यह है कि प्रदर्शन के समय हिन्दू प्रदर्शनकर्ता संस्कृत के मंत्र बोलते थे और मुसलमान प्रदर्शनकर्ता कुरान की आयतें। दोनों ही पूर्ण सफल रहे।

जब एक प्रदर्शनकर्ता ने अपने पीछे लोगों की एक लम्बी पंक्ति को भी बिना किसी कष्ट के चला कर दिखाया तो एक दर्शक ने भी साहस किया और अकेले ही उस दहकती आग पर चलने का प्रयत्न किया। परन्तु परिणाम बहुत भयंकर हुआ। दो तीन कदम चलकर वह गिर पड़ा और तीन दिन अस्पताल में रहने के बाद मर गया। ये प्रदर्शन करने वाले लोग जलते कोयलों पर ऐसे चलते थे जैसे हरी घास पर चल रहे हों अपने पीछे जिनको उन्होंने चलाया, वे भी पचास कदम से अधिक दूर तक अंगारों पर चले थे। उनके पैरों पर छाले आदि का किसी प्रकार का कोई निशान नहीं पड़ा।

पुरुष से स्त्री

मौलाबक्स नाम के एक सुशिक्षित व्यक्ति ने जो पेशावर जादूगर नहीं था, परन्तु अच्छा जादू जानता था बहुत से खेल प्रदर्शित करने के बाद जनता में बड़ी उत्सुकता पैदा कर दी। जब उसने कहा कि कोई मैदान में आये, मैं उसे औरत बना दूंगा। बात इतनी अविश्वसनीय और रोचक थी कि कई लोग आगे आने को तैयार हो गये। अन्त में एक पहलवान सामने आया। पहले तो मौलाबक्स ने उसे उसी तरह की थोड़ी सी मनोरंजक बातें कहीं, जैसी कि सभी जादूगर कहा करते हैं। ये बातें सम्मोहन की भूमिका होती हैं। उसके बाद मौलाबक्स ने उस पहलवान की कमर पर रीढ़ की हड्डी के साथ साथ हाथ फेरना शुरू

(शेष पृष्ठ २२ पर)

काश्मीर का अमर शहीद

★ पं० दुर्गादत्त मेनन

बारामूला के सेबों के बाग में काम करती हुई फातिमा की आंखें सहसा सामने चमकने वाली किसी चीज को देखने लगीं। दुपहर की रोशनी में 'वह चीज आंखों को चकाचौंध कर रही थी। फातिमा उसकी ओर बहुत देर तक न देख सकी। उसकी आंखें लगातार देखने के कारण थक गई थीं। वह दिल में सोच रही थी कि इतनी चमकने वाली वह चीज क्या हो सकती है। कुछ देर के बाद जब उसने फिर उधर देखा तो वह चमक गुम हो गई थी। और उधर कुछ भी नहीं दिखाई देता था। हां एक प्रकार की विचित्रसी आवाज उसके कानों में आने लगी। उसे ऐसे मालूम होने लगा, जैसे कोई तेज चलने वाली मोटर उधर से आ रही हो।

उसी के साथ गर्दन झुकाकर घास को काटते हुए कादिर ने फातिमा की ओर देखा और कहा परी, कश्मीरकी परन्तु उधर क्या देख रही है। सारी दुनिया तो तेरी ओर देखती है।

फातिमा ने प्रेम से भरी चितवन से उसे देखा और कहा— कादिर, क्या मुझे बनाना चाहते हो।

जरा नजदीक आकर उसके हाथ से एक सेब छीनते हुए कादिर ने उत्तर दिया, फातिमा, मुझे अपने प्यारे कश्मीर की कसम। क्या मैं कोई अफसाना नवीस हूं, जो झूठमूठ की दुनिया रचता रहूं। हां तुम्हारे सौंदर्य ने इस बेकार कादिर के जीवन को बदल दिया अब उसे आकाश के तारों और चांद में फातिमा का मुसकराता हुआ चेहरा दिखाई देता है। संध्या के बादलों में उसकी गालों की लाली उसे दिखाई देती है। दूर सिन्धु नदीके तट से उड़ती हुई पवन में उसके मुख की भीनी २ सुगन्ध महकती हुई प्रतीत होती है। उषा के सुवर्णमय आलोक में तुम्हारा ही सुहावना मुखड़ा चमकता नजर आता है।

फातिमा— तुम तो सचमुच ही कवि बनते जा रहे हो।

फातिमा के कोमल बाहुओं को अपने गले में डालकर कादिर ने हंसते २ कहा— प्यारी क्या कवि कोई एक-आधी रात में ही बन जाता है। कवि मिलन से ही नहीं बनता वह तो विरहसे बनता है। संयोग में कभी कोई कवि नहीं बना, जब बना तब वियोग में ही, परमात्मा न करे अगर मेरा और तुम्हारा वियोग हो जाय, तो वास्तव में कवि बन जाऊंगा।

मैं तेरे विरह के गीत गाता २ अपने सुनवेदना नांगा-पर्वत की चोटी पर चढ़ कर अपने जीवन का विसर्जन कर दूंगा।

मैं कश्मीर की उपत्यका में झूलों, नदियों, झरनों, सरोवरों और झीलों की अपने प्रेम के गीत सुनाता हुआ बंजारों की तरह तब तक घूमता रहूंगा, जब तक थककर सदा के लिए न सो जाऊं। प्यारी फतिमा, आज न जाने रह २ कर मेरी आंखों में क्यों आंसू उमड़ रहे हैं। मुझे ऐसा लगता है कि हमारा प्यारा कश्मीर जल रहा है। उसमें ऐसी आग लगी है, जिसे उसकी सारी नदियों का जल भी नहीं बुझा सकता। उसके केसर के खेत उजाड़े जा रहे हैं। ओह, कोई तुम्हें मुझसे छीन रहा है। ओ फातिमा, देख सामने ये लोग कौन आ रहे हैं।

फातिमा डरकर कादिर से चिपट जाती है।

एक आवाज— खान, वह बारामूला शहर सामने दीख रहा है।

दूसरी आवाज— मलिक कश्मीर तो वास्तव में 'स्वर्ग है देखो, सामने, क्या सुन्दर सेबों का बाग है।

× × ×

एक आवाज—खानने जब से इस मुल्क में कदम रखा है जीत ने हमारा साथ दिया है। दुश्मन हमारा नाम लेते ही भाग उठते हैं। पर अब इस शहर को देखकर दिल चाहता है कि यहां कुछ दिन आराम से काटे जाएं।

दूसरी आवाज—मलिक, कुछ दिनोंके बाद सारे कश्मीर पर हमारा राज्य हो जाएगा। चिन्ता की कोई बात नहीं। यहां हमारे कश्मीर में सुन्दरियों की कमी नहीं, यहां का सारा सौन्दर्य हमारे पैरों में लोटेगा।

पहली आवाज— खान जरा इधर तो देखो कश्मीर की खूबसूरती का बड़ा अच्छा नमूना वह सामने सेब के दरख्त के नीचे दीख रहा है। आओ इधर चलें।

जरा राईफल को संभाल कर चलाना है। कहीं शोर हो जाने से वे भाग न जाएं। मलिक (फातिमा और कादिर के नजदीक आकर) तुम दोनों यहां क्या कर रहे हो। खान, इन्हें पकड़ कर कैम्प में ले चलो।

वे उन्हें पकड़ने की कोशिश करते हैं।

[कादिर उनके सामने गिड़गिड़ाता है। सहसा गोली के चलने की आवाज होती है और वह लड़खड़ाता हुआ जमीन पर गिर पड़ता है। फातिमा को पकड़ कर वे बाग के एक कोने में ले जाते हैं। इतने में कुछ और कबायली भी वहां आ जाते हैं। फातिमा को देख कर वे बड़े खुश होते हुए नाचते और गाते हैं।]

फातिमा अपने काले बालों में अपने मुंह को छिपा कर चीखें मार मार कर रोती है।

कबायली लोग उसे हर प्रकार के लालच दे मनाने की कोशिश करते हैं। पर वह उनसे मस नहीं होती। तब वे पठान उसे बालों से पकड़ घसीटते हैं। उसका सारा शरीर लहू-लुहान हो जाता है। उसके शरीर के कपड़े फट जाते हैं। वह उन पशुओं के हाथ से छूटने के लिए बड़ा छटपटाती है। पर उसका वश नहीं चलता।

इतने में एक ओर से फायर की आवाज आती है, जिसे सुन सारे पठान जमीन पर लेट कर मोर्चे की आड़ लेते हैं। फातिमा भी वहीं एक पुरानी मस्जिद के पीछे छिप जाती है। दोनों ओर से लगातार फायर होते जाते हैं।

फातिमा जमीन पर लेटी हुई रेंगती रेंगती कादिर की लाशके पास जाती है। उसकी छाती पर अपना सिर रख कर रोने लगती है। सहसा उसे ऐसा मालूम होता है, जैसे कादिर की खून से भरी हुई छाती कुछ गरम है।

वह पास के चश्मे से थोड़ा सा जल लाकर उसके मुंह में डालती है। कादिर की आंखें सहसा खुल जाती हैं। उसे वहीं लेटने का इशारा कर फातिमा अपने दुपट्टे को फाड़कर उसके जख्म को बांधती है।

× × ×

इतने में दोनों ओर से फायरिंग बन्द हो जाता है। पठान दबे दबे पैरों से मोर्चे की आड़ लेते बाग से बाहर की ओर भाग रहे हैं। फातिमा की चालाक आंखें सब कुछ समझ गईं। उसने कादिर को सहारा देकर उठाया और सफेद रूमाल हाथ में लेकर आने वाली सेना को दिखाकर हिलाया। सेना के नेता ने इस इशारे को समझ कर अपने सैनिकों को फायर करनेसे रोका और फिर समीप आकर पूछा— तुम कौन हो।

फातिमा— हम दोनों कास्मोरी हैं। हम दोनों महाराज कास्मीर की प्रजा हैं।

नेता— तुम्हारे साथी कौन है।

फातिमा—ये कबायली थे, जिन के अत्याचार से आपने हमारी रक्षा की। हम अब आप की शरण में हैं।

नेता—यह हमारी ?रति है, जिसे इन लोगों ने गोली मारी थी। पर परमात्मा की कृपा से यह बच गया।

नेता राजेन्द्रसिंह—इन दोनों को अम्बुलेन्स कार में डालकर बेस अस्पताल श्रीनगर मे भेज दो। हम दुस्मन का पीछा करेंगे। अगर वे शहर में घुस गए तो बड़ा नुकसान करेंगे। हम इस अपनी बची खुची सेना से उनका कुछ पीछा करते रहेंगे जब तक हिन्दुस्तान से हमें सहायता नहीं पहुचती। मेजर, सामने से दुस्मन को फौज आ रही है। हमें यहीं मोर्चे बना लेने चाहिए।

मेजर— श्री नगर जाने वाले सड़क को हमें रोक लेना होगा जिससे दुस्मन उधर न आ सकें। इन दोनो के लिए मैंने अम्बुलेन्स का बन्दोबस्त कर दिया है। दोनों को अम्बुलेन्स कार में बिठा कर शीघ्र श्री नगर भेज दिया जाएगा।

नेता— इस बाग की दीवाल ऊंची है। यहां मोर्चा काफी बन सकता है। सूबेदार जोरावरसिंह यहां अपनी पलटन लेकर मोर्चे पर डटा रहे। हम अब आगे चलते हैं।

सूबेदार जोरावर की पलटन वहीं छोड़ कर दुस्मन की आहट लेती हुई बाकी सेना आगे बढती है।

× × ×

श्रीनगर के हवाई अड्डे पर हिन्दुस्तानी वायु सेना के वायुयान जल्दी-जल्दी सैनिक सामान उतार रहे हैं। यह सारा काम इतनी फुरती और तेजी से हो रहा है कि किसी को किसी से भी बातचीत करने की फुर्सत नहीं। सब अपने अपने काम में लगे हुए है। आफिसर से लेकर सिपाही तक अपना अपना सामान उठाए हवाई अड्डे पर बाहर लगे हुए कैम्प में आ रहे हैं।

इन में सब से आग कर्नल डी० एस० राय है। सब सैनिकों के मुख पर विचित्र प्रकार का तेज दिखाई देता है। बिगुल बजते ही सारी सेना जो लगभग १५० के लगभग थी अपनी अपनी राइफलें लेकर लारियो में बैठ जाती हैं। रवाना होने से पहले एक कास्मीरी युवक और एक युवती कर्नल राय की कार के सामने आकर खड़े हो जाते हैं युवक। इशारा पा इस प्रकार कहने लगता है।

बहादुर, हिन्दुस्तानी दोस्त, आप हमारे मुल्क को पाकिस्तानी दरिन्दों से बचाने के लिए आए हैं। इसलिए हम कास्मीरी आप का सच्चे दिल से स्वागत करते हैं। पर आप लोगों को इस मुल्क की भौगोलिक परिस्थिति का कोई ठीक ज्ञान नहीं। हमारा मुल्क पहाड़ी है। इस के जंगल बड़े घने हैं। इसके पहाड़ बड़े ऊंचे हैं। इसके रास्ते टेढ़े मेढे हैं।

इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि आप हम दोनों को अपने साथ ले चलो। हमें यहां के सब लोगो व इलाकों की पूरी वाकफियत है। हम आपकी कुछ न कुछ सहायता अवश्य करेंगे।

क० राय—अच्छा तुम दोनों हमारी कार में बैठ जाओ। क्या तुम्हें बारामूले की लड़ाई का कुछ पता है।

युवक— हम दोनों ने वह लड़ाई अपनी आंखो देखी है।

क० राय — अच्छा तुम्हारा नाम पूछना तो हम भूल गये।

युवक— मेरा नाम कादिर है। और इस मेरी पत्नी का नाम लजाकर फातिमा है।

पठानों ने सब से पहले मुझे बारामूला में अपनी गोली का निशाना बनाया था। पर मेरे भाग अच्छे थे। मेरी फातिमा ने मेरी जान बचा ली।

क० राय—तुम दोनों बहादुर मालूम पड़ते हो।

कादिर — साहब, कस्मीर कब बहादुर न था? उसकी नसों में राजपूती रक्त खौलता है। पर वह जब से गुलाम बना, उसे सब कुछ भूल गया। अब तो वह बोझा उठाने वाले टट्टू और लकड़ी चीरने वाले मजदूर के सिवाय और कुछ नहीं।

फातिमा—क० साहब कस्मीर पर जो अत्याचार हुआ, उसको सुन कर किस का निर्दयी हृदय नहीं कांप उठेगा। यहां कितनी अबोध कलियों को तोड़कर पैरों के नीचे कुचला गया। यहां कितनी अबलाओं को अपने स्वामियों से बलपूर्वक छीन कर उन के साथ जो बर्ताव किया गया उस के सामने चंगेज खान और तैमूर की काली करतूतें भी भूल जाती हैं। अब हमें वीर हिन्दुस्तानियों पर ही भरोसा है। वे ही हमारे इस अपमान का बदला ले सकेंगे।

क० राय — भगवान पर भरोसा रक्खो वे स्वयं ही अधर्मियों का नाश करते हैं। अच्छा अब बारहमूला यहां से कितनी दूर रह गया।

कादिर—यहां से २ मील।

क० राय—यह सामने धुआं कैसा दिखाई देता है।

कादिर—ओह, मैं समझ गया। पाकिस्तानियों ने सारे शहर को आग लगा दी। यह धुआं वहीं से आ रहा है।

फातिमा मुझे बारा मूला से आने वाले शरणार्थियों ने बताया कि पठानों ने तीन दिन तक सारा शहर लूट लूटा, बहू बेटियों की बेइज्जती की। हजारों लोगों को मौत के घाट उतारा। और इस पर भी उनको कमीनियत पूरी न हुई तो सारे शहर को आग लगा दी।

क० राय—यह सामने कौन सा बाग है।

कादिर—यह मेरा सेबों का बाग है। जहां हम पर पहले हमला हुआ था। इस बाग की दीवारें बड़ी ऊंची और पक्की हैं। आप यहीं मोर्चा बनाकर दुस्मन का रास्ता रोकने की कोशिश करें।

क० राय — यह तुम्हारी सलाह ठीक है।

× × ×

कर्नल अपनी सारी सेना को वहीं पर उतरने का हुक्म देता है। सामने से सहसा मशीनगन और राइफलों की गोलियों का फायर होता है।

कर्नल राय के हुक्म से सारे सैनिक अपनी २ पोजीशन ले कर फायर करते हैं। कुछ घंटो तक दोनों ओर से लगातार गोली चलती है। इतने में क० राय अनुभव करते रहे हैं कि दुस्मन उन को घेरने की और उनकी लम्बाई बाहन काटने की कोशिश कर रहा है।

वे अपने आप को खतरे से घिरा जान अपनी सेना को पीछे हट कर दूसरी पोजीशन लेने का हुक्म देते हैं। सेना फायर करती हुई शनै: २ पीछे हटती है। क० राय अपनी जान की परवाह न करते हुए सेना संचालन का काम करते जाते हैं।

सेना थोड़े समय के बाद अपने दूसरे मोर्चे पर आ डटती है। अब दुस्मन के आगे बढने का खतरा जाता रहा।

इतने में सहसा एक गोली क० राय की छाती में आ कर लगती है। 'अच्छा मैं मरा तो क्या हुआ, मैं ने कास्मीर को बचा लिया। ये कहते हुए वे सदा के लिए आंखे बन्द कर लेते हैं। हिन्दुस्तानी सेना अपने वीर नेता की यादगार में आंसू बहाती हुई अपने मोर्चे पर डट जाती है। दुस्मन का हौसला पस्त हो जाता है। उस के पैर वहीं रुक गए।

× × ×

कादिर और फातिमा ने अपने प्यारे देश कस्मीर के रक्षक की मौत अपनी आंखों के सामने देखी थी। वे भला उसे कब भूल सकते थे।

उन के कानों में उनके वे अन्तिम शब्द गूंज रहे थे।

अपने प्यारे देश के लोगों को लाज की रक्षा करना उन का प्रधान कर्तव्य हो गया। उन्हों ने देश सेवा का व्रत धारण किया।

कस्मीर के जंगलों, पहाड़ों, दरयाओं और झीलों में उन के गीत गूंजने लगे। देश का कोना २ उन्होंने छान मारा।

आज जो कुछ कस्मीरमें हो रहा है। उस की पृष्ठभूमि में उन्हीं दो अमर प्रेमियों की वाणी बोल रही है।

उन्हीं का संगीत देश के कोने २ में गाया जा रहा है।

अब हमें भारत से कोई भी व्यक्ति पृथक नहीं कर सकती।

आधी दुनिया

तपस्विनी पतिप्राणा नारी

★ श्री धर्मवीर एम० ए०

स्व० भाई परमानन्द जी की साध्वी, तपस्विनी, पतिप्राणा वीर पत्नी का एक करुण चित्र श्री धर्मवीर एम० ए० ने खींचा है। वह भारतीय महिलाओं के लिए आदर्श थीं। उनका परिचय भारतीय स्त्रियों को चेतना और स्फूर्ति दे, इस इच्छा से यह परिचय दिया जा रहा है।

मेरे जीवन की सबसे अनोखी घटना अन्य लोगों की दृष्टि में शायद साधारण बात हो, परंतु मैं उसे आज तक भी नहीं भूली।

सरदी का मौसम था और इतवार का दिन। बच्चों को नहला धुला कर खाना खिलाया और मकान की छत पर धूप में भेज दिया। (धूप ही सरदी को रोकने का सबसे बड़ा साधन भी हमारे पास) स्वयं मैं भी चौका बर्तन करके ऊपर जा रही थी कि बैठक के कमरे का दरवाजा धीरे से खुला और दहलीज में एक काली सी मूर्ति खड़ी हो गई। सिर के बाल लंबे। दाढ़ी और मूछें लम्बी। धोती और कुरता लम्बा। कंधे पर रखा कंबल। चेहरे पर अंधेरा था, परन्तु आंखों से ज्योति निकल रही थी। एक पल के लिये मैं तो सहम गई। परन्तु फिर ख्याल आया कि कोई पराया आदमी घर में घुसा चला आ रहा है और तू चुप है।

'क्यों जी,' अंत में मेरे मुंह से निकला—'आप किसे पूछते हैं? पंडित जी का मकान तो इससे अलग है।'

'नहीं, मैं आपके—...' भरी हुई आवाज में ये शब्द थे, जो उस मूर्ति के गले में से निकले और बाहर निकल कर दाढ़ी के बालों में गुम हो गये। मेरे कानों में पहुंच भी न पाये।

इस आवाज से मैं परिचित हूं, मेरे मन में आया—पर वे तो आ नहीं सकते।

मेरे कान ऐसे मीठे शब्द और सुनना चाहते थे। लेकिन दिल को समझाया—क्यों सुनने में तकलीफ होती है?

मैं जरा रुक गई। बरतन को रख कर खड़ी हो गई।

वह मूर्ति भी अन्दर बढ़ती चली आई।

'आप किससे मिलना चाहते हैं?' मैंने धीरे से पूछा।

'मैं तुम से मिलना चाहता हूं,' उत्तर दिया।

अब मेरे लिए सन्देह के लिए कोई गुंजाइश न रही, मेरे शरीर के अंदर बिजली सी दौड़ गई। हर्ष के मारे हाथ पैर सन्न हो गए। मैं कई एक पल वहीं किवाड़ के साथ टिक कर खड़ी रही। वे कमरे के दरमियान में मूर्ति बने रहे।

वह अद्भुत घटना जब मुझे याद आती है तो इसके साथ ही अन्य कई एक घटनाएं भी सामने आ जाती हैं।

सन् १९१५ में सड़क के किनारे हमारा दवाखाना था, औषधियां बनाने की फैक्टरी थी। नीचे घर व दफ्तर थे, ऊपर रहने का मकान। एक दिन वे हस्ब-मामूल करके बारह बजे भोजन करने के लिये ऊपर आए। खाने के लिए बैठे तो मैंने थाली परोसकर उनके सामने रखी। परन्तु मुख की ओर जो देखा तो वहां उदासी छाई हुई थी।

'आज आप उदास क्यों हैं?' मैंने पूछा।

'कुछ नहीं, वे बनावटी हंसी हंस कर कहने लगे—तुम्हें यों ही ख्याल हो रहा है।'

मैंने अपनी बात पर फिर जोर दिया, तब वे बोले—'तुम्हारे हाथ का यह भोजन सम्भवतः अन्तिम है।'

'अन्तिम है! क्यों? इसका मतलब?'

'मतलब बस वही जो मैं कह रहा हूं।'

मैंने जिद न की, चुप हो गई। उन्होंने भोजन समाप्त किया तो जाते हुये मेरी ओर और एक बार देखने लगे। मुझे ऐसा मालूम दिया जैसे हमारे जीवन के इर्दगिर्द कोई बला चक्कर काट रही है।

वे सीढ़ियों से नीचे उतर रहे थे कि मेरी आंखों से आंसू छलछला आये।

वहां खड़े खड़े मुझे थोड़ी ही देर हुई थी कि वे फिर ऊपर आए।

'लो भाई,' वे कहने लगे—मैं तो चलता हूं।'

'चलते हैं!' मैंने पूछा—'कहां?'

'जहां इनकी मरजी होगी,' वे बोले—'अभी तक मुझे कुछ पता नहीं है।'

मैं चुप हो गई। उन्होंने नमस्ते कही और नीचे उतर गये। मैंने छत के किनारे आकर देखा, मकान के सामने तांगा खड़ा है। पुलिस के सिख सिपाही और एक अफसर उन्हें साथ ले कर तांगे में बैठ गए।

तांगा चल पड़ा। थोड़ी दूर जाकर वह आंखों से ओझल हो गए। परन्तु घोड़े की टापों की आवाज मेरे कानों तक आती ही रही। मैं न रोई, न चिल्लाई, मूर्ति बन कर वहीं खड़ी रही। मैं रोती या चिल्लाती, तब भी क्या बनता। उन दिनों लोग बहुत डरते थे, यदि किसी के साथ ऐसी घटना हो जाती तो उसकी ओर मुंह करके न देखते। डरते थे कि कहीं उन्हें भी सरकार न पकड़ ले।

कुछ दिन के बाद उन्हें फांसी का हुक्म हो गया। उसके साथ ही उनके सारे सामान की जब्ती का आदेश भी आ गया। पुलिस के सिपाही आए। उनकी दवाइयों, पुस्तकों मशीनों और अन्य सामान को उठा कर उन्होंने बाहर निकाल दिया। नीचे के कमरों की सफाई करने के बाद ऊपर आना था।

मैंने सुन रखा था कि वे हमारे बर्तन और कपड़े भी ले जाएंगे। मुझे बहुत चिन्ता लगी कि रात को बच्चे सोएंगे कैसे। सरकार उनका कसूर बताती है, लेकिन इन नन्हें बच्चों ने उनका क्या बिगाड़ा? इनका क्या अपराध है? केवल यही कि वे इनके पिता हैं? परन्तु इन तर्कों को कौन पूछता था।

सोचने लगी कि बच्चों के लिए क्या प्रबन्ध करूं। अक्सर घबराहट में कुछ नहीं सूझा करता। एक विचार आया। दीवार पर लिहाफ और कम्बल पड़े थे। दो दिन की वर्षा के पश्चात् धूप निकली थी। कम्बल और लिहाफ सिखाने के लिए दीवार पर डाल दिये थे। उन पर दृष्टि पड़ी। नीचे से उनको जरा हिला दिया। वे दीवार की दूसरी ओर जा पड़े। चलो ये दो-तीन कपड़े तो बच रहे। रात को बच्चे सरदी से कुछ तो बचेंगे।

इतने में सिपाही ऊपर आ गए। ट्रंक भी ले लिये। मिट्टी के बर्तनों में दालें आदि पड़ी थीं। इनको भी उन्होंने खाली कर दिया। आटा, दालें और चावल यों ही चौके में उंडेल दिए गए। मैं देखती रह गई। कुछ न बोल सकी। चकला-बेलन आदि सभी चीजों की उन्होंने फेहरिस्त बनाई और सबको उठा कर नीचे ले जाने लगे,

दो-चार 'वस्तुएं' ही शेष थीं। यह उनका अन्तिम फेरा था। वे उठा ही रहे थे कि इतने में साथ के मकान से आवाजें आईं — 'हमें क्यों पकड़वाते हो? ये कम्बल और लिहाफ इधर क्यों फेंक दिये हैं?'

मेरा दिल धड़कने लगा। तो भी ज्यों-त्यों करके खड़ी रही, जैसे कुछ हुआ

[शेष पृष्ठ १६ पर]

समाचार चित्रावलि

बर्नहाम (समरसैटशायर) में संसार में किसी भी स्थान पर जाने वाले ब्रिटिश जहाजों से रेडियो के द्वारा सम्पर्क कायम रखा जाता है। दीवार पर लौह-मानचित्र पर संसार के जहाजी मार्ग अंकित हैं। बड़े जहाजों की स्थिति चुम्बक चिन्हों द्वारा दिखाई जाती है।

ब्रिटेन की शाही वायुसेना का यह युद्धकारी यान नये किस्म का विमान है। इसमें रैडार के इंजीनियर के लिए भी एक कुर्सी रखी गई है।
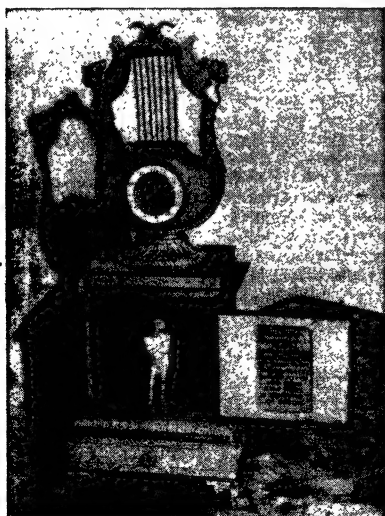
नेपोलियन की भेंट

सैंट हेलेना के टापू में रक्षा और देखभाल करने वाले सेनापति को फ्रांस के प्रसिद्ध सम्राट नेपोलियन बोनापार्ट ने मोतियों की एक टोकरी व एक घड़ी भेंट में दी थी। अभी उक्त चीजें एक प्रदर्शनी में दिखाई गई हैं।
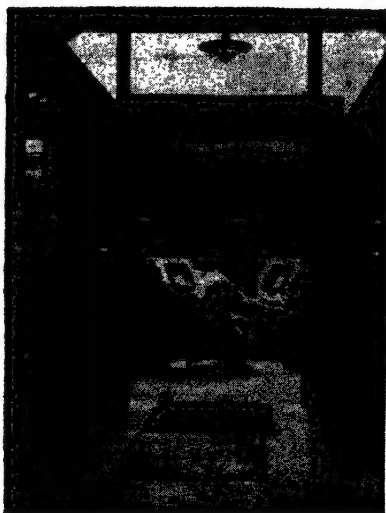
अणु रेडियो यंत्र

ब्रिटेन की एक अणुशक्तिसंस्थान संस्था रेडियो-सक्रिय 'इसौटोप' बनाती है। संसार के विभिन्न औषधालयों व परीक्षालयों में चिकित्सा के लिए यह 'इसौटोप' भेजे जाते हैं। चित्र में लगी पट्टियां इसकी शक्ति की सूचना देती हैं। उत्पादन की मात्रा-दर्शक रिकार्ड को यह किया जा रहा है।

बेतार के तार के प्रसिद्ध आविष्कारक श्री मारकोनी १८९६ से अपना पत्र लेकर लन्दन आये थे।
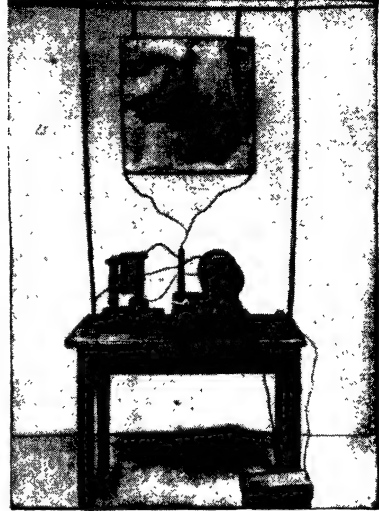
मारकोनी के सबसे प्रथम ट्रांसमिटर का मौडल। ताम्बे की तारों के एरियल आदि भी लगे हुए हैं।

एक जहाज पर पूर्ण ढंग सुसज्जित रैडार व वायरलैस-कार्यालय।

★

रेडार और रेडियो का कमाल

वह समय समाप्त हो गया है जब बन्दरगाह से प्रस्थान करने वाले जहाज समुद्रों में अदृश्य हो जाया करते थे और कभी कभी तो सदैव के लिए अन्तर्ध्यान। किन्तु आज एक जहाज दूसरे से बातचीत करता है और महासागर के मध्य में जहाज के मुसाफिर लोग लन्दन के किसी होटल में बैठे मित्र से बातचीत।

१९०१ में पहली बार ',लेक चैम्पलेन" नामक जहाज में बेतार फिट किया गया था। आठ वर्षों के बाद, "रिपब्लिक" नामक जहाज के रेडियो आफिसर ने बेतार से रक्षा की प्रार्थना भेजी और समय पर सहायता प्राप्त होने के कारण ७१,०० लोगों के प्राण बच गये। तब से समुद्री जहाजों में बेतार का महत्व सब का ध्यान आकर्षित करने लगा।

इस शताब्दि के प्रारम्भ में कोई समुद्री जहाज रेडियो युक्त नहीं था। आज संसार के बड़े से बड़े बन्दरगाहों में से दो सौ ऐसे हैं जिन्हें १२,००० जहाजों से सूचनायें मिलती रहती हैं।

रैडार के विकास ने बड़े जहाजों को बर्फ के पहाड़ों से टकराने के भय से बरी कर दिया है। यदि घने तुषार में भी जहाज विचलित नहीं होते तो इसका श्रेय भी रैडार को है। समुद्री जहाजों को परिवर्तनशील मौसम विषयक अग्रिम सूचना मिल जाती है। सचमुच समुद्र पर सुरक्षा की व्यवस्था में बेतार ने चमत्कार कर दिखाया है।

★

रैडार द्वारा जहाजों को सिक्रयुक्त ढंग अस प्रणाली में लाया जा रहा है। जहाज पर बैठा अफसर रैडार-यंत्र पर लगी हुई घड़ियों में सुइयों की गति देख रहा है।

तपस्विनी पतिप्राणा नारी

[पृष्ठ १२ का शेष]

ही नहीं। पुलिस वालों ने भी इस ओर कुछ ध्यान न दिया।

इतने में उसी ओर एक बुड्ढा चिल्लाया, इसके साथ ही उसने ऊंचा उठ कर दीवार पर से मुंह निकाला। वह तुतलाता था, इसलिए उसकी कोई भी बात पुलिस की समझ में न आई।

'क्या बड़-बड़ कर रहे हो?' एक सिपाही ने ज़ोर से कहा — 'हमें काम भी करने दोगे या अपनी ही हांके चले जाओगे?'

बुड्ढा पहले ही भयभीत था। सिपाही को गरम देख कर वह सहम गया। जब नीचे उतरने लगा तो उसका पांव फिसल गया और वह धड़ाम से गिर पड़ा। मुझे खेद हुआ कि बेचारे को मुफ्त में ही चोट आई।

दवा घर में न दवाइयां बनाने वाले रहे और न दवाइयां, तब किराये के इतने बड़े मकान को क्यों रखा जाये? इसके अतिरिक्त अब मेरे सामने किराये की भी बड़ी समस्या थी। बच्चों के खाने के लिये तो कुछ है नहीं, इतना बड़ा मकान रख कर क्या करूं? वह मकान छोड़ कर हम सदा के लिए एक छोटी-सी अंधेरी कोठरी में रहने लगे।

वहां रहते हमें कुछ बरस गुज़र गए थे। इस बीच में मैं दोनो समय उनके सुखपूर्वक घर लौटने के लिए परमात्मा से प्रार्थना करती थी। इसके साथ ही मुझसे जो कुछ बन पड़ता, मैं करती।

एक दिन शाम को हमारे घर पर एक अंग्रेज आया। सफेद दाढ़ी, तेजस्वी मुख और चौड़ा माथा। मुझे उनका चेहरा कभी नहीं भूलता। आते ही उन्हों ने बच्चों के सम्बन्ध में पूछा। शोभा तब बीमार पड़ी थी। उसे तपेदिक हो चुका था। मैंने उसे अलग एक चारपाई पर लिटा रखा था।

कमरे की अंधेरी और नमदार गुफा-सी पाकर वे साहब घबराए। मुझसे प्रबन्ध आदि के सम्बन्ध में पूछा। मैंने कह दिया—मुझे किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता नहीं। पाठशाला में पढ़ाने से मुझे पन्द्रह रुपया मासिक मिलते हैं। मेरा निर्वाह हो जाता है। मेरी सहायता करना चाहते हैं तो बस, उनको किसी प्रकार वापस लाइए।

उन्होंने इसकी प्रतिज्ञा की तो मैंने उनका धन्यवाद किया। जाते हुए साहब ने मुझसे उनकी कोई निशानी मांगी। मैंने साहब को वह पत्र दिए, जो उन्होंने अपने हाथ से मुझे कालापानी से लिख भेजे थे। इनको पढ़ने के पश्चात् साहब ने मुझे लौटाने की प्रतिज्ञा की। वे चले गए।

कालापानी अंडमान से वापस आने के बाद कई बार हम दोनों में झगड़ा-सा हुआ। वे कहते—'मैं घर पर खाना बनाया करूंगा और तुम पाठशाला में पढ़ाया करो।' मेरे लिये यह असह्य था। इस कारण वे कई बार नाराज भी हो गए। परन्तु मैं यह बात कैसे मान सकती थी? तब इन्होंने फोटोग्राफी सीखनी शुरू की। मुझे भी इस काम को सीखने पर ज़ोर दिया। परन्तु बाद में यह विचार उन्होंने छोड़ दिया। तब वे पुस्तकें लिखने लगे। इससे हमारा निर्वाह होने लगा।

कुछ लोग कहते हैं कि एक दृष्टि से मेरा सारा जीवन दुःख में व्यतीत हुआ है। मुझे मालूम नहीं कि वे क्यों ऐसा विचार करते हैं। मैं जानती हूं कि अपने जीवन में मुझे एक बात ने सुख पहुँचाया है। वे घर पर रहें या घर से बाहर, मैंने सदा इनके सुख की सोची और कोशिश की। उन्हें सुख मिला तो मैंने समझा कि बस, मेरा धर्म पूरा हो गया। वे जो कुछ काम करें, मैंने इनको कभी कुछ नहीं कहा। इन पर बम बनाने के अभियोग चले, इन पर सरकार उलटाने के मुकदमे बने। मैंने सब कुछ सुना और देखा। मैंने अपने पास एक ही अधिकार रखा। सेवा करने को मैं अपना धर्म समझती रही हूं।

यदि मुझे घर के काम करने की इजाजत न होती तो मैं समझती हूं कि मेरी कठिनाइयों में वृद्धि हो जाती। अब से कुछ दिन पहले तक मैंने दो भैंसें और एक गौ रखी हुई थी। इनको चारा डालना, इनका दूध निकालना और बिलोना—ये काम प्रतिदिन मैंने अपने हाथों से किए हैं। रुई कातकर खद्दर बनाया और फिर इनके लिए ही नहीं, बच्चों के लिए भी घर पर कपड़े सिए। मैले कपड़े मैंने किसी धोबी को नहीं दिए। नौकर या नौकरानी रखने का मुझे कभी ख्याल नहीं हुआ। मैं समझती हूं कि जो स्त्री घर पर नौकर रख लेती हैं; वह सुखी हो जाती हैं। मुझे याद है कि एक बार जब मैंने अपने पशुओं के लिए घासमंडी, लाहौर से मक्की का चारा खरीदा तो मुसलमान मजदूरों ने उसे उठाने से इनकार कर दिया। तब स्वयं अपने सिर पर उठाकर मैं उसे घर पर ले आई। उसके बाद कोई मजदूर मेरे सामने कभी नहीं झकड़ा।

अब 'वे-जी' के लिए औषधी खाने का समय हो गया था। इसके अतिरिक्त धूप के चले जाने से बाहर हवा भी कुछ तेज हो गई थी। दोनों ओर से चारपाई को पकड़कर मेरा जीवन-साथी और मैं उसे अन्दर ले गए

पूर्व अफ्रीका की यात्रा

★ श्री सरोजिनी नानावटी

आजकल काका कालेलकर पूर्व अफ्रीका में 'सर्वोदय' का प्रचार कर रहे हैं और प्रस्तुत लेख उनकी निजी सचिव श्री सरोजिनी नानावटी ने लिखा है जो कि जानकारी से पूर्ण है। —सं०

तारीख १६ मई को स्टीमर 'कंपाला' मोम्बासा पहुंचा। सुबह से प्रकाश होते ही, दूर किनारा नजर आ रहा था। बिल्कुल एक चित्र खींचने लायक रमणीय दृश्य था। चारों ओर हरियाली फैली हुई थी। नारियल के पेड़ उस शोभा को बढ़ा रहे थे। बारिश के दिन होने के कारण आकाश में पानी से भरे हुए श्याम बादल यहां वहां आते आशीर्वाद बरसाते थे। ऐसे रम्य मनोहर दृश्य पीते पीते हम मोम्बासा पहुँचे। साढ़े सात बजे तक तो हम किनारे लग गये थे, लेकिन जब डाक्टर स्टीमर पर आये तो मालूम पड़ा कि किसी एक बच्चे को चेचक निकली हैं। इसलिये हरेक मुसाफिर की जांच होने के बाद करीब ढाई बजे हम अफ्रीका की भूमि पर पांव रख सके। करीब दो बजे श्री आप्पा साहब पंत और उनके मन्त्री ईनामदारजी के साथ पुरानी पहचान निकली। उन्होंने गुजरात में संशोधन का काम किया है। वे कई साल गुजरात में रहे

स्टीमर से उतरते ही यहां के कुछ सज्जन मिले जो पूज्य काका साहब का और कमलनयन भाई का स्वागत करने आये थे। उनसे बातें होने के पहले ही अखबारनवीसों के कैमरोंने क्लिक् क्लिक् करके स्वागत किया ही।

श्री नानाजी सेठ के मकान पर हम गये, जहां हमें ठहराया गया। पहले दिन कोई ऐसा बंधा हुआ कार्यक्रम तो नहीं था। शाम को आप्पा साहब और दो चार यहां के भाइयों के साथ मोम्बासा शहर देखा। पुराना शहर तो बिल्कुल किसी हिन्दुस्तानी शहर के जैसा लगा— टेढ़ी-मेढ़ी संकरी गलियां थीं। लेकिन यहां की साफ-सफाई कुछ ज्यादा थी। यहां का पुराना किला पोर्तुगीज लोगों का बनाया हुआ देखा और उस पर पैदल चल कर पहली शाम का अच्छे से अच्छा उपयोग किया।

दूसरे दिन से कार्यक्रम बाकायदा शुरू हो गया। १७ तारीख की सुबह को तीन नर्सरी स्कूल देखने का कार्यक्रम था। पहले संतोक बाई नर्सरी स्कूल देखने गये। नर्सरी स्कूल यानी बाल-मन्दिर ३ से ६ साल तक के बच्चे यहां खेलते-पढ़ते हैं। बच्चे खुश दीखते थे। उनके गीत सुने, खेल देखे। फिर यहां के शिक्षक व संचालकों के साथ थोड़ी-सी बातचीत करने का मौका मिला। पूज्य काका साहब ने कहा कि 'यहां सब कौम के हिन्दू बच्चे आ सकते हैं और आते हैं, यह तो अच्छी बात है, मगर यह काफी नहीं है। अगर कोई अफ्रीकन अपने बच्चे को गुजराती द्वारा सिखाने को तैयार हो जाय तो आप उस बच्चे को अपनी शाला में लेंगे या नहीं।' पहले तो सीधा जवाब न मिला। लोग कहने लगे, 'ऐसा कोई तैयार कैसे हो?' पूज्य काका साहब ने कहा कि 'तैयार न हो तो आप उन्हें समझा सकते हैं कि आपके बच्चों को गुजराती के द्वारा शिक्षा देकर शिक्षण के लिये उन्हें हिन्दुस्तान में भी भेज सकते हैं। ऊंचे शिक्षण के लिये आप उन्हें मदद करने का वायदा भी कर सकते हैं। ऐसा करेंगे तो जरूर एक-दो अफ्रीकन विद्यार्थी तो आपको मिल हो जायेंगे और ऐसा होने से उसका असर बहुत बड़ा होगा। यहां के लोगों को लगेगा कि ये हिन्दी लोग हमारे मित्र हैं, हितेच्छु हैं। हमारी उन्नति वे चाहते हैं। ऐसे विद्यार्थी हिन्दुस्तान जा कर सीख कर आवेंगे तो वे पूरे-पूरे हमारे बन जायेंगे। अपने लोगों के नेता बन कर उन्हें कहेंगे कि हम और हिन्दी लोग एक ही है। यह समझनेकी दूर दृष्टि हममें न आ सकी तो हमारा भला यहां होने वाला नहीं है। यहां के आदिवासी भूमि-जनको पूरे-पूरे अपना कर उनके साथ एक दिल हो जाने में ही हमारा कल्याण है। और हम तभी उनके लिये आशीर्वाद बन सकते हैं।'

ये बातें कई लोगों के दिमाग को तो जंचीं लेकिन दिल तक पहुंची हों ऐसा नहीं लगता।

यहां के आगाखानी लोगों में अनुशासन अच्छा है, ऐसा लगता है। बच्चों की पढ़ाई की तरफ ध्यान देते हैं। इस जमात के बारे में अपनी यहां दैनिकी में पू० काका साहब ने लिखा है—'नामदार आगाखान की मरजी क्या है, यह सवाल मुख्य नहीं है। लेकिन आगाखां जिस जमात के और जिस संस्कृति के नेता हैं, उनके पास से खुदा क्या काम लेना चाहता है, यही एकमात्र सवाल है। इस जमात का जीवन धर्म आसान है। उसमें सद्भाव है। वह जुनूनी नहीं है। हिन्दू रस्मो-रिवाजकी ओर उसमें आत्मीय भाव (अपनापन) है। अंग्रेजी कौम भी वह कदर करते हैं। दोनों के सद्भाव की पूंजी बना कर यह जमात आगे बढ़ती गई है। उसके सामने उज्ज्वल भविष्य है।

शाम को यूनाइटेड केनिया क्लब में पू० काका साहब का व्याख्यान था। यहां आफ्रिकन लोग, अंग्रेज और हिन्दी सब इकट्ठी थे, इसलिये अंग्रेजी में ही बोलना पड़ा। दुनिया भर की जातियां हिन्दुस्तान में आईं और यहां की बन गईं, यहां हर एक धर्म के लोग आये और संघर्ष और सहकार करते करते साथ रहना सीखे। उन में से उत्पन्न होने वाले अनेक तरह के प्रश्न, उनके हल करने के जो अनेक तरीके हमने लिये, ऊंच नीच के भेद किये, भूलें कीं उनके नतीजे मूल मुश्किल से भी ज्यादा भयंकर निकले यह देख कर हमने सुधारने की सतत कोशिशें की हैं वगैरा। के उन्होंने यह भी कहा कि अपने अनुभव

कह रहा हूं ताकि आपके प्रश्नों के हल में उनको कुछ मदद हो और वहां आप के हल के तरीकों को] देख कर उसमें से कुछ मदद मिले, तो मैं लेना चाहता हूं।

यह एक दिनका वृत्तान्त एक उदाहरणकी तौर पर मैंने दिया है। बाकी के पांच दिन भी वैसे ही गये। दिन में चार पांच और कभी आठ आठ वक्त अलग अलग लोगों के सामने बोलना पड़ता था। वहां हर एक जाति विशेष की अपनी अलग संस्थाएं हैं। शुरू शुरू में शायद इनकी जरूरत हो तो भी अब वे बिलकुल बाधक हैं। अलग अलग संकुचित विभाग बढ़ने से सारी जमात को काफी नुकसान है।

जहां जहां गये, जहां जहां बोलना हुआ, वहां वहां काका साहबने बहुत भारपूर्वक दो बातें तो कही हीं। (१) अपने बीच के भेदभाव साफ मिटा देने चाहिए यह इस जमाने का तकाजा है। यह न करेंगे तो हमारी सारी शक्ति तितर बितर होकर निकम्मी हो जायेगी। संकुचितता पाप है। किसी को अपने से हलके मानना अधर्म है इस लिये (२) वहां के अफ्रिकन लोगों को अपनाना चाहिये। उनकी हर तरह की सेवा करनी चाहिए। और वहां कमाये हुए धन को इन्हीं की सेवा में, यहीं खर्चना चाहिए। ये दो बातें अनेक ढंग से, करीब करीब हर जगह आप कहते रहे।

अच्छी अच्छी संस्थायें देखीं, कुछ उत्साही कार्यकर्ताओं से मिले। ज्यादा तर हिंदियों से ही मुलाकात होती रही हम हिन्दुस्तान से बाहर हैं, यह ख्याल हो नहीं आता था। एक दो ही जलसे में चन्द पढ़े-लिखे आफ्रिकी भाई मिले। अफ्रिकनों के लिये सरकार का सेवा-केंद्र देखने गये। वहां छोटे छोटे अफ्रिकन बच्चों का नर्सरी स्कूल देखा, बहुत अच्छा लगा। अंग्रेज समाज सेवक उनमें बिलकुल घुल मिल कर काम करते हैं।

इस तरह मोम्बासा-निवासियों का कुछ परिचय और प्रेमभरा सत्कार पाकर हमने २१ तारीख़ की शाम को वहां से बिदाई ली।

आफ्रिका की भूमि पर पांव रखा था मोम्बासा में। वहां आने के बाद कार्यक्रमों की परम्परा में ऐसे फंस गये कि नहाना-सोना भी बड़ी मुश्किल से हो सकता था। कभी रात के ग्यारह साढ़े ग्यारह के पहले सो नहीं पाते और कार्यक्रम एक के बाद एक जैसे भरे रहते हैं कि दिन भर एक लाइन भी लिखना असम्भव हो गया है। आज मैं सुबह के एक कार्यक्रममें न गई, ताकि आपको लिख सकूं, और इस तरह "मंगल-प्रभात" के लिये कुछ भी तो मिल जाय।

हमने २१ की शाम को मोम्बासा छोड़ा। दूसरी सुबह नैरोबी के मार्ग में आते हिरण और जिराफ दीखे। जिराफ तो अपनी गरदन लम्बी करके बड़ी शानसे मूर्तिवत् खड़े थे। शतुरमुर्ग भी देखे। कभी खड़े कभी झपटकर कुछ खानेको चीज लेते, कभी इठलाते फिरते। नैरोबी के पास कुछ२० एकड़की जमीन नेशनल पार्क है। यहां जहां ये जानवर और साथ हिपोपाट्मस, बंदर और शेर रहते हैं, यहां किसी को गोली मारने का हुकुम नहीं है। इसलिये सब पशु निर्भय होकर यहां घूमते हैं।

नैरोबी में इसी भी तरह कार्यक्रमोंका तांता बंधा रहा। यहां की अनेक संस्थायें देखीं। मुश्किल यही है अपने लोगों को बुरी आदत बस, छोटे छोटे विभाग बना कर उसमें कूप मंडूक होकर बैठने की। दूसरी एक खतरनाक बात है हिन्दुस्तान के झगड़े यहां लाकर आपसी परस्पर विद्वेष बढ़ाने की। यहां भी पू. काका साहब को बार बार दुहराना पड़ा कि "आप सब मिलकर और एक होकर रहें। अपनी संकुचितता को छोड़कर विशालतामें प्रवेश करें। छोटे दलोंमें सुख नहीं है। सुख सिर्फ विशाल होते रहने में है। कल्याण भी उसी में है। जैसे यहां से आने वालों को कालरा वगैरा के लिये टीका लगाना पड़ता है, ताकि वहां से रोग लाकर यहां न फैलाया जाय, वैसे ही इस कुसंग और आपसी झगड़े के महारोग से बचने के लिये वहां से आने वाले लोगोंको टीका देकर ही आने देना चाहिये। यहां दूर आये हैं, एक होकर रहिये।" आपकी एकता और सर्वसमाजिकता हिंदुस्तान के लोगों के लिये एक नमूना, एक आदर्श बन कर रहे। तब आप हिन्दुस्तान की सच्ची सेवा करेंगे। यहां से पैसे भेज कर सेवा नहीं हो सकती। यहां आपने पैसे कमाये हैं, उसका अधिकांश यहीं इसी देश के सब लोगों की सेवा में और अपने बच्चों की अच्छी शिक्षा इत्यादि के लिये खर्च होने चाहियें।"

यहां हमने शालायें देखीं, पुस्तकालय देखा। यहां के अनेक हिन्दियों से मिले और यहां के सृष्टि-सौन्दर्य का भी पान किया।

हम नैरोबी में आठ दिन रहे। केनिया, प्रान्त का मुख्य शहर होने से यह एक अच्छा साफ शहर है। यहां रोज रात को कहीं न कहीं भोजन को जाना पड़ता था। उच्च स्तर के लोगों से अच्छी मुलाकात होती रही। उस प्रान्त के गवर्नर, मुख्य न्यायाधीश वगैरह लोग मिले। यूनायटेड केनिया क्लब में वहां के अफ्रिकन भाई भी मिले। वहां के अच्छे व लोकप्रिय नेताओं में पीटर कोम-का नाम मुख्य है। उनके पिता किकूयू जाति के ठाकुर थे। और किकूयू लोगों में उनके और उनके पिता के लिये बहुत ही आदर है। श्री पीटर हमें अपने घर ले गये। उनकी झोंपड़ियां देखीं। उनके रहन सहन के कुछ खास तरीके हैं, जो दिलचस्प हैं।

तारीख २८ की सुबह साढ़े छः बजे हमने वायुयान से नैरोबी छोड़ा। नीचे जमीन क्रेटर की बनी थी, इसलिये खास थी। बीच बीच में यूरोपियन लोगों के फार्म दीखते थे और सायसल के खेत। हमारी बाईं तरफ पर्वत केनिया दीख रहा था और दाहिनी तरफ पर्वत मेरू था। जरा आगे गये और किलिमंजारो के आह्लादकारी दर्शन हुए।

कुछ देर में बाईं ओर बादलों का क्षीर सागर बिछ गया। बस, सफेद धुनी हुई रुई की बिछात। उस पर इन्द्रधनुष का सुन्दर वर्तुल आ गया। उस वर्तुल के मध्य में हमारे वायुयान की छाया! क्या शान थी हमारे वायुयान की।

मोम्बासा का टापू ऊपर से सुन्दर दीख रहा था। वहां उतरे बीस मिनट ठहर कर फिर छोटे वायुयानों में बैठे। उस हवाई जहाज में सिर्फ दस लोग बैठ सकते थे। जब नीचे समुद्र दीखने लगा उसमें अनेक रंग की अनेक छटायें अपना सौन्दर्य दिखा रही थीं। खास कर हरा व फिरोजी रंग विशेष मोहक थे; और जहां पानी किनारे पर टकराता था, वहां एक श्वेत रेखा, चमकते मोगरों की हारों की तरह लहराती थी। जर्मनों के बनाये हुए टांगा शहर में हम उतरे। वहां दो दिन रहे। श्री आदमजी करीमजी व उनकी पत्नी जैतुन्निसा बहन से मिले। अपने बाग बागान दिखानेकी के हमें ले गये। रास्ते में अमानी के आसपास एक बड़ा बोटेनिकल प्रयोग केन्द्र है। हर किस्म के पेड़ व फलफ़ाड़ यहां बोये गये हैं। आसपास जंगल हैं। सृष्टि सौन्दर्य बहुत है। टांगा शहर में दो तीन सभाएं हुईं

ता० ३१ की सुबह टांगाकी देखी जर्मनों के सामने बचाव करते १९१४ में हिन्दुस्तानी फौज के चारसौ से छः सौ लोग यहां मारे गये थे, उस कब्रिस्तान में हिन्दू मुस्लिम व सिख सब सैनिक एक साथ सोये हुए हैं।

उसी दिन दस बजे वायुयान से होते हुए रास्ते में जान्जीबार टापू नीचे देखा। कुछ समय बाद दारेस्लाम आ गया। वहां का सागरका किनारा बहुत खूबसूरत है।

इस शहर में हिन्दुस्तानी लोग बहुत हैं और उनमें बोहरा भाई अधिक हैं। उनकी बड़ी व्यापारी पेढ़ियां हैं। चालीस पचास सालों से ये लोग यहां बसे हैं।

—(सस्तेंदु हिन्दी सिंडिकेट, वर्धा)

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त.

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन महिला धर्मशीला और उसकी लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। अनिरुद्ध अपने दल के साथ मिरजापुर के गांवों में फैली हैजे की महामारी में तन-मन से सेवा करता है, वहां से लौटने पर विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं वे लोग विवाहेच्छु भवानन्द और लड़की के मामा रसिकलाल को समझाते हैं, किन्तु उन्हें कुछ सफलता नहीं मिलती। अन्त में वे लोग विवाह को रोकने के उद्देश्य से विवाहस्थल को घेर लेते हैं। संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है, और वहां वेश्याओं की दशा का अध्ययन करती है। सुजाता हरिकिशन नामक एक सुसम्पन्न तथा सुन्दर युवक की ओर आकर्षित होती है। अनिरुद्ध की मां स्नेहलता की मृत्यु हो जाती है और अनिरुद्ध उसकी सम्पत्ति का अधिकारी हो जाता है।

[गतांक से आगे]

अनिरुद्ध कोने में बैठ कर खूब बातें सुनता था, और बीच-बीच में बहुत ही मजबूर किये जाने पर दो-एक बात कर देता था। जैसे फ्रैंच साहित्य पर बात चल पड़ती तो उसे दो-एक बात कहनी ही पड़ती।

इसी प्रकार से उसके दिन जा रहे थे। संघ के मंत्रिपद से वह इस्तीफा देने की बात सोचा करता था। उसकी पक्की धारणा हो गई थी कि अब उसका जीवन बिलकुल नीरस हो चुका है।

वह बीच-बीच में विषाद भरी दृष्टि से सरला की ओर देखता था। उसे ऐसा मालूम होता था कि उसी के लिये सरला का जीवन नष्ट हुआ जा रहा है, पर वह न तो उसके पास ही जाता था, और न उससे बात ही करता था। बुढ़िया नौकरानी यह सब देख कर दांतों तले अंगुली दबाती थी।

कई एक दिन से सरला के एक दांत में दर्द होता था। वह बीच-बीच में कराहती थी। अनिरुद्ध ने बुढ़िया से पता लगाया कि क्या मामला है, फिर डाक्टर को बुलवा भेजा। डाक्टर ने आकर क्रियोजोट या न मालूम क्या दवा भर दी, उससे दर्द घटा, पर आधी रात तक दवा का प्रभाव घट गया, और वह फिर कराहने लगी। बगल के कमरे से अनिरुद्ध सरला का वह कराहना सुन रहा था, पर कुछ किया नहीं जा सकता इसलिये चुप रहा।

सारी रात इस कराहने के कारण उसका स्नायु परेशान रहा, एक सर्वग्रासी असहायता और विरक्ति की भावना ने उसके सारे अस्तित्व पर सिक्का जमा लिया था। उसे अकस्मात यह बात याद आई कि वह जेल में इससे अधिक शान्ति में था। अपनी इस अजीब अवस्था से वह खुद ही सिहर उठा।

कभी धीरे और कभी जोर से कराहना जारी रहा। बीच-बीच में सरला जैसे सो जाती थी, और फिर बीच-बीच में ओह, ओह, ओह करती थी।

जिस समय सवेरे अनिरुद्ध उठा, उस समय भी वह कराहना जारी था। उस के मन में दया का संचार [हुआ]। वह सरला के कमरे में जा कर बोला — देखें क्या हुआ।

सरला उठ बैठी, और कुछ गुमसुम हो कर अपने दांत की तरफ इशारा करने लगी। उसका तरुण चेहरा मलिन हो गया था, उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में वेदना की छाप थी, परन्तु उस हालत में भी अनिरुद्ध के आने के कारण उसका चेहरा लाल पड़ गया। वह भूल गई कि उसे दर्द है, एक ऐसा दर्द जिसने उसे रात भर सोने नहीं दिया था।

अनिरुद्ध ने खोले हुए मुंह के अन्दर देखने की चेष्टा की, पर उसे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा। बड़ी देर तक देखने के बाद उसने कहा — किस तरफ दर्द है?

सरला ने उंगली से बायें मसूड़े के अन्तिम दांत को दिखला दिया। अनिरुद्ध ने फिर देखने की चेष्टा की, पर कुछ दिखाई नहीं पड़ता था। बड़ी देर तक देख कर उसने देखा कि जीभ बीच में पड़ रही है। उसने तब दाहिने हाथ की अनामिका से जीभ को दबा कर बायें हाथ से सरला के सिर के पीछे के हिस्से को पकड़ कर रोगग्रस्त दांत को देखने की चेष्टा की, पर यह क्या हुआ? उंगली जीभ के स्पर्श में आते ही उसने सरला के होंठ में सशब्द लोलुप चुम्बन किया — सरला को ऐसा अनुभव हुआ मानों एक तरुण ने अपने हृदय को इस चुम्बन के अन्दर डाल दिया।

सरला ने उसके इस आकस्मिक व्यवहार से आश्चर्य कर अपनी बड़ी-बड़ी वेदनाक्लिष्ट आंखों को विस्फारित कर उसे देखा, फिर एक तृप्ति से उसने अपनी दोनों आंखें बन्द कर लीं।

अनिरुद्ध को ऐसा मालूम पड़ा कि पीछे से कुछ खट से आवाज हुई। वह जल्दी से पकड़े गये, चोर की तरह उठ खड़ा हुआ, और जल्दी से वहां से चला गया। वह अपनी इस आकस्मिक दुर्बलता से बहुत लज्जित तथा क्षुब्ध हुआ था। सरला, वह तो उसी की स्त्री है, पर इससे क्या? उसने तो ऐसा नहीं चाहा था। उसने तो सुजाता को ही अपना हृदय दे रखा था। वह हर समय गुप्तरूप से उसी की ही चिन्ता करता है, यद्यपि वह जानता है कि वह उसे नहीं पायेगा, पाने का कोई रास्ता ही नहीं है। वह पश्चाताप की अग्नि में जलने लगा।

उसी दिन वह सरला को उसके मामा के घर छोड़ आया, और अकेला रहने लगा। वह अब अपने पर विश्वास नहीं करता था। ममिया-ससुर से उसने कहा कि वह कुछ दिनों तक अकेला रहना चाहता था। रसिकलाल को मालूम था कि उसका दामाद कुछ सनकी है, इसलिए उसने कुछ नहीं कहा।

इन्हीं दिनों धर्मशीला ६ घंटे के हैजे में मर गई सुजाता को आने का अवसर ही नहीं मिला।

[२५]

मातृ वियोग के बाद कई मास व्यतीत हो गये हैं। सुजाता कुछ तो समय के आरोग्यकारी प्रभाव से और कुछ कार्य के दबाव से शोक भूलने लगी थी। इस बीच में वह दो दिन के लिये बनारस गयी थी, पर न तो उसने किसी के साथ भेंट की थी और न वह मकान से बाहर गई थी। वह केवल अशोक के ही कारण गई थी। मातृवियोग का शोक शिथिल होने पर भी उसके मन में शान्ति थी, वह खुद ही नहीं समझ पा रही थी कि वह क्या चाहती है, पर एक अभाव के कारण उसका मन वेदना पूर्ण रहता था। वह चाहती थी कि कार्य-व्यस्तता से अभाव को पूर्ण कर दे।

एक दिन सुजाता कापी वगैरह ले कर हरकिशनलाल के घर गई कि आज वह अवश्य ही नोट लिख कर लौटेगी। स्त्रियों की ओर से लिखे गये वक्तव्य को उसने इतने दिनों से लिपिबद्ध किया था, अब वह चाहती थी कि पुरुषों के वक्तव्य को जनता के सामने रखे। अवश्य वह मोटे तौर पर हरिकिशन की बात जानती थी, पर वह उसे पद्धति के अन्दर लाना चाहती थी।

अभिवादन आदि सामान्य शिष्टाचार के बाद हरिकिशन ने कहा—

कहिए खैरियत तो है? इतनी कापियों को लेकर कहां जा रही हैं? क्या कोई नया लेख लिखा है? वह जरा मुस्कराया।

नहीं यह सब लेकर आप ही के पास आयी हूं।

मेरे पास? आश्चर्य में हरिकिशन बोला।

हां आप ही के पास, आपने जो सब क्या कहा था, उसे लिखाइए।

ओह, यह बात कह कर हरिकिशन कुरसी पर बैठ गया।

सुजाता भी सामने की कुरसी पर बैठ गई और नोट बुक इत्यादि को पास की मेज पर रख दिया।

हरिकिशन कुछ अन्यमनस्क-सा होकर सुजाता की तरफ शून्य दृष्टि से देख रहा था। इसके उज्वल गोरे चेहरे पर लाली दौड़ गई। सुजाता ने उसकी तरफ देखा, पर उसकी विषादपूर्ण आकुल दृष्टि को सहन न कर पाकर उसने आंखें नीची कर लीं।

अकस्मात हरिकिशन जैसे नींद से जगते हुए बोल उठा—मुझसे क्या लिखना चाहती हो?

उसकी आंखों की नसें स्पष्ट रूप से लाल हो गई थीं। उसका चेहरा इतना गम्भीर हो गया था कि वह रूखा मालूम होता था। सुजाता ने उसे इन आठ महीनों के परिचय में कभी इतना गंभीर नहीं पाया था।

आप बराबर यह कहते आए हैं कि अपने लेखों में मैंने स्त्रियों को शहीद रूप में चित्रित किया है, यह गलत है, पुरुषों की ओर से आपने कहा था, बहुत कुछ कहना था।

आपका कहना है कि वैश्यावृत्ति तथा स्त्रियों की दुरवस्थाओं के लिये पुरुषों पर सारी जिम्मेदारी डाल कर जो लोग निश्चिंत होकर बैठे हैं वे बिलकुल गलती पर हैं। मैं चाहता हूं कि आप अपने विचारों को ढंग से सजाकर कहिए,

सुजाता ने कापी खोल कर फाउन्टेनपेन निकाल कर लिखने की तैयारी कर ली।

हरिकिशन ने कहा—नहीं, नहीं कापी वापी हटाइए। यदि मेरे दिमाग में कुछ विचार आते भी होंगे तो इनको देख कर वे काफूर हो जायेंगे। वह जरा मुस्कराया, पर उसकी मुस्कराहट अजीब थी। उसकी काली काली तितलीनुमा मूछों के नीचे शुभ्र दन्तों की पंक्ति चमक गयी। आज सुजाता को यह दन्त पंक्ति हमेशा से अधिक चमकीली मालूम हुई।

हरिकिशन अकस्मात उठ खड़ा हुआ और बोला—अच्छा आज मैं एक व्यक्तिगत पश्चाताप से शुरू करूंगा—कह कर उसने चारों तरफ ताक कर देखा कि कोई देख या सुन तो नहीं रहा है, फिर उसने कमरे के दरवाजे भीतर से बन्द कर लिये।

सुजाता का हृदय धड़क रहा था। वह पीली पड़ गई, पर जब हरिकिशन फिर से आकर मामूली तरीके पर कुरसी पर बैठ गया, और मानों कुछ याद करते हुये आंखें बन्द कर ली, तब उसे तसल्ली हुई।

अत्यन्त आकस्मिकता के साथ हरिकिशन ने रुंधी हुई आवाज में कहा—निक्को की बात तो आपको याद होगी न?

हां

कुर्सी पर सम्हल कर बढ़ते हुए हरिकिशन ने जो धीमी आवाज में कहना शुरू किया—"मैंने उन दिनों अभी एफ० ए० की परीक्षा दी ही थी, उस समय निक्को के साथ मेरा परिचय हुआ। निक्को एक अधखिली कली-सी थी। मेरे और उसके घर की हालत एक ही थी। उसके पिता उसकी सौतेली मां के द्वारा बरगलाये जाकर उसका उत्पीड़न करते थे और मेरे पिता अपने व्यापार, अपनी यूरोपियन तथा एंगलोइंडियन उपपत्नियों को लेकर इतने व्यस्त रहते थे कि उन्होंने करीब करीब मेरी उपेक्षा करदी। अवश्य मेरे हाथों में प्रचुर रुपये और एक बंगला रहता था और आदमियों द्वारा जितनी मेरी देख-रेख हो सकती थी होती थी। एक दिन निक्को की सौतेली मां ने न मालूम किस छोटी सी बात के लिए उसे मारा, वह मेरे निकट आकर रो पड़ी। मैंने बहुत चाहा कि उसे समझा बुझा कर घर लौटा दूं, पर वह तब तक बराबर रोती बिलखती रही जब तक मैंने उससे यह वायदा नहीं किया कि उसे किसी भी हालत में हटाऊंगा नहीं। मैं पहले तो डरा कि क्या कह गया, पर वादा कर चुका था, उसे बंगले के एक कमरे में रखा। मैं उसके पास दिन भर रहता था, वह मुझ से प्रेम करती थी इसमें सन्देह नहीं। वह एक अद्भुत समय था। कालेज से आने में जरा भी देरी होती तो वह हैरान हो जाती। मेरे सिर में जरा-भी दर्द होता तो वह रोने लगती।—वह एक अनोखा ही युग था। उस युग में सभी बातें भली मालूम होती थी।

अब अच्छी देर रुक कर हरिकिशन बोला, "यह नहीं कि मेरे पिता कुछ जानते न हो, पर वे कुछ बोलते नहीं थे। बोलते किस मुंह से? पर केवल यही बात नहीं। उनकी यह आदत थी कि दूसरों के मामलों में कभी हस्तक्षेप नहीं करते थे। वे यह भी चाहते थे कि उनके मामलों में भी कोई हस्तक्षेप न करें। वे प्रति इंच शरीफ आदमी थे। अवश्य अपने ढंग के शरीफ। मैं उनके बंगले पर नहीं जाता था, वे ही बीच बीच में मुझे स्वयं बुला भेजते थे। मैं डरते हुए जाकर खड़ा हो जाता था। बड़े बड़े साहब उनके सामने खड़े होकर बात करते थे। मुझे पुत्र रूप में केवल इतना अधिकार था कि मैं जब उनके दफ्तर में जाता, तो चपरासी फौरन एक कुरसी लाकर रख देते। एक दिन उन्होंने मुझे संध्या समय टेलीफोन से बुलाया। डर ही डर कर मैं पहुंचा। चपरासी लोग मेरे आने की बात जानते थे, मेरी मोटरसाइकल रुकते ही वे सीधा मुझे पिता जी के बैठने के कमरे में ले गये। वे संध्या की पोशाक में सिगार फूंक रहे थे। वे जिस समय बैंक में जाते थे उस समय अपनी उम्र से दस साल बड़े जंचते थे, पर इस पोशाक में इस समय वे अपनी उम्र में पन्द्रह साल छोटे जंचते थे। पता नहीं इसमें क्या रहस्य था? उन्होंने मुझे खाली हुई कुरसी पर बैठने का इशारा किया और सिगार पीते-पीते मेरे मुंह की तरफ देखने लगे। सिगार बुझा कर उन्होंने अंग्रेजी में कहा—"माई बाय, तुम कैसे हो?"

अच्छा तो हूं पापा!

सुन कर खुशी हुई, पर तुमने बहुत ऐय्याशी शुरू कर दी, है यह बात कि नहीं?

मैं रहस्य पीड़ित और भयभीत होकर उनकी तरफ ताकने लगा। उन्होंने मेरे लज्जित चेहरे को न देखा हो ऐसी बात नहीं, पर उन्होंने लापरवाही के साथ कहा—"खैर, तुम बी० ए० कब दे रहे हो?"

अगले साल पापा!

अच्छी बात है, अब जरा डट कर पढ़ो, मैं चाहता हूं कि तुम्हारा बी० ए० का रिजल्ट अच्छा हो!

मैंने कहा—"कोशिश करूंगा!"

अच्छा, यह अच्छे लड़के की बात है, तुम्हें कुछ चाहिये तो नहीं?

कुछ नहीं पापा।

उन्होंने मुझे पास बुला कर खूब गम्भीरता से हाथ मिलाया, फिर कहा—"जो कुछ भी करो, कभी अपने असली काम से मुंह न मोड़ो, यही सफलता का रहस्य है।"

मैं चला आया। दरअसल ही यही उनकी सफलता का रहस्य था। उन्होंने हमेशा आमोदप्रमोद को अपने व्यापार से अलग रखा।

—अमरः

बाल बन्धु परिषद

बाल बन्धुओं से

हमारे बाल बन्धु अपना ग्रीष्मावकाश समाप्त कर अब पुन: अपनी अपनी पढाई के काम में लग गए होंगे। नई नई कक्षा की पढाई में तबियत खूब लगती होगी। इसके अलावा साल भर के परिश्रम के पश्चात हमारे बाल बन्धुओं को इधर उधर सैर सपाटे करने का समय मिल गया और वे साल भर की थकान उतार कर फिर अपनी नई कक्षाओं की पढाई में लग गए हैं।

पढाई के साथ साथ आप लोगों को एक बात का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है। वह है आपके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में। वर्षा ऋतु प्रारम्भ हो गई है। अब प्राय तीन माह तक आकाश में घटायें घिरी रहेंगी और पानी बरसता रहेगा। हमारे छोटे २ बाल बन्धुओं को यह ऋतु बडी सुहावनी लगती है। वे इस सुहावनी ऋतु का उपयोग करते २ कभी कभी वर्षा के पानी में नहाने की गलती कर बैठते हैं, जिस से वे बीमार पड जाते हैं और कभी २ तो महीनों वे खाट पर से नहीं उठ पाते। उनको खाने की कोई चीज नही दी जाती, जिस से उनका दिल बहुत दु:खी होता है।

आप जानते हैं कि वर्षा में नहाने तथा इधर उधर घूमने से ही आपको इतनी बडी हानि क्यों उठानी पडती है? उसका कारण यह है कि बरसात में मच्छर पैदा हो जाते हैं। मच्छर गन्दे स्थानों पर, विशेषतया गन्दे पानी के छोटे २ गड्ढों में पैदा होते हैं। जो मलेरिया फैलाते हैं। तेज वर्षा होने पर इधर २ की नालियां एक होकर तालाब सी बन जाती हैं, जिस में बच्चे नहाना भला समझते हैं। लेकिन उन्हें इसका बहुत बडा मूल्य चुकाना पडता है।

स्वस्थ रहने के लिये बरसाती पानी मे बचना ही नहीं बल्कि खान पान का भी विशेष रूप से ध्यान रखना जरूरी है। खाना प्राय देर में हजम होता है।

सडी गली बासी चीजें खाने से हाजमा खराब हो जाता है और नाना जाति के विकार पैदा हो जाते हैं। बरसात मे कभी सडी गली या बासी चीज नहीं खानी चाहिए। मलेरिया से बचने का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए। व्यायाम की इस ऋतु में विशेष आवश्यकता है वर्ना शरीर में सुस्ती का अनुभव होगा। गर्मियों में आप दिन में एकाध घंटा सो जाते होंगे, लेकिन इस ऋतु में आपका दिन में सोना आपके लिये बहुत ही हानिकार है। दिन में सोने से शरीर में आलस्य आयेगा। सिर में दर्द हो जायेगा, और काम कुछ नहीं होगा। इस मौसम में ओस भी बहुत पडती है। इस ओस में बाहर खुले में सोने से खांसी जुकाम हो जाता है। यदि गर्मी के कारण बन्द कमरे में न भी सो सके तो भी ऊपर टीन आदि का साया अवश्य होना चाहिए। इन सब बातों का ध्यान रखने से आप वर्षा ऋतु का आनन्द भी लूट सकेंगे और बीमार भी नहीं पडेंगे।

ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है

एक राजा का मन्त्री बहुत सज्जन था। जब कोई ऐसी विपत्ति आपडती थी, जिसमें उसका कोई बस न चलता था तो वह कह दिया करता था परमेश्वर जो करता है अच्छा ही करता है।

एक दिन राजा घोडे से गिर पडा और उसका हाथ का अगूठा टूट गया नगर के बहुत से लोग उसे देखने आए और शोक प्रकट करने लगे। मन्त्री भी आया और कहने लगा परमेश्वर जो करता है अच्छा ही करता है। राजा को यह सुनकर बहुत क्रोध आया और मन्त्री को अपने राज्य से निकाल दिया।

एक दिन राजा शिकार खेलने गया। एक हिरण का पीछा करते करते वह बहुत दूर निकल गया और उन लोगों के देश में पहुँच गया जहा लोग मनुष्यों को देवीको भेंट चढाते थे।

उन लोगों ने राजा को पकड लिया और रात भर एक कोठरी मे बन्द रखा। और सुबह को गाते बजाते उसे देवी के मन्दिर में ले गये। मन्दिर के पुजारी ने कहा आदमी है तो हृष्ट पुष्ट पर इसके एक अगूठा नहीं है इस लिए यह भेंट नहीं चढाया जा सकता, इसे छोड दो उस समय राजा को मन्त्री की बात याद आगई।

उन लोगों के हाथ से छुटकर जब राजा अपने राज्य में आया तो उसने मन्त्री को बुलवाया और सब हाल कह कर क्षमा मांग ली और बडे आदर से उसे मन्त्री बना लिया

एक दिन राजा ने मन्त्री से कहा—मुझे तो अगूठा टूटने से यह लाभ हुआ कि मेरी जान बची परन्तु तुम्हें इतने दिन नौकरी से अलग रहने से क्या लाभ हुआ। मन्त्री ने उत्तर दिया—यदि मैं नौकरी से अलग न होता तो अवश्य आपके साथ शिकार में गया होता।

(शेष पृष्ठ २६ पर)

क्या तुम जानते हो ?

★ हमारी इस दुनिया का वजन ६५१२००००००००००००००००००० (१८ शून्य—६५१२ परार्ध) टन है।

★ सिडनी के हेरल्ड एण्डरूज नामक आदमी ने २४ साल पहले अपने लिए कब्र बनाई थी जिसमें अब वह मरने पर दफनाया गया है।

★ आस्ट्रेलिया की सबसे अधिक बूढी श्रीमती एनी सार्जेण्ट १०४ साल ५ महीने जीवित रह कर हाल में मरी है।

★ न्यूयार्क में मालूम हुआ है कि युद्धकाल में वैज्ञानिको ने अमेरिकन विदेश विभाग को सूचित किया था कि उन्होने अभी तक जिस 'मृत्युकिरण' का आविष्कार किया है वह इतनी जोरदार है कि उससे, फुट की दूरी पर स्थित एक सामान्य पालतू चिडिया मारी जा सकती है।

जरा हंसिये

एक बार एक सेठ ने एक ब्राह्मण को निमन्त्रण दिया। जब ब्राह्मण का मिठाई परसी जाने लगी, तब ब्राह्मण चौंक कर कह उठा, 'मैं मिठाई नहीं खाऊगा।' सेठ ने मिठाई न खाने का कारण पूछा तो उसने कहा कि 'मिठाई रखने पर थोडी देर म उसमें चींटे हो जाते हैं। मेरे खाने पर कहीं मरे पेट में चींटे हो गए तो ।'

× × ×

सतीश ने मोहन से पूछा—'मोहन तुम सब से अच्छी चीज़ कौन-सी बना सकते हो ?'

मोहन ने थोडी देर बाद कहा, 'मैं बातें अच्छी बना सकता हू।

—राजकुमार गुप्ता

एक दिन एक आदमी बाल बनवा रहा था। नाई की असावधानी से उसके गाल पर छुरा लग गया। इस पर आदमी ने नाराज़ हो कर कहा कि यह क्या किया ?

नाई बोल उठा—हुज़ूर उसकी आप चिन्ता न करें। आपको सिर्फ बालो की बनवाई ही देनी पडेगी।

× × ×

ग्राहक—यह टोपी कब तक चलेगी ?

दूकानदार—जब तक न फटे तब तक।

—निर्मल कोटिया

आप अपनी छोटी-सी गुड़िया के साथ कितने प्रसन्न हैं।

कम्युनिस्ट पार्टी का देशव्यापी षड्यन्त्र

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी के सब सदस्यों को यह आदेश दिया जाता है कि भारत के एक-एक गांव तथा कस्बे तक मे जा कर अन्य कांग्रेस विरोधी वामपन्थी गुटों से सहयोग स्थापित कर जन-आन्दोलन को पुनर्जीवित करें तथा एक प्रजातन्त्रीय मोर्चा बना कर देहातो मे तेलंगाना की तरह सशस्त्र युद्ध छेड़ते हुए आगे बढ़े।' ये शब्द हैं, रूस-छाप भारत की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति द्वारा देश की कम्युनिस्ट पार्टियों के नाम भेजे हुए आज्ञापत्र के, जिसने पूरे देश को एकदम चौकन्ना कर दिया है।

इस प्रकार भारत की कम्युनिस्ट पार्टी असली रंग मे जनता के सामने प्रकट हो गई है। राष्ट्रीय संकट के इस भयानक कुसमय में शासन तथा देश को सुदृढ एवं शक्ति-सम्पन्न बनाने के बदले भारत को चीन बना रूसी तानाशाही के क्रूर जबड़ों में झोंक देने की कुत्सित, राष्ट्रद्रोह से परिपूर्ण तथा कलंकित करने वाला हीन-मार्ग भारत के इन पथभ्रष्ट सपूतों ने स्वीकार कर लिया है।

कम्युनिस्ट पार्टी के उक्त आदेश में कम्युनिस्टो को यह स्पष्ट आदेश है कि समूचे भारत को तेलंगाना बना दिया जाय।

आज विगत अनेक महीनों से तेलंगाना के आकाश के नीचे क्या हो रहा है ?

सर्वव्यापी लूटमार तथा अग्निकाण्ड, कम्युनिस्ट विरोधियों का व्यापक निर्मम हत्याकाण्ड तथा भीषण अशान्ति और दारुण हाहाकार के सिवा आज हमारे उस तेलंगाना में और क्या हो रहा है ? और विगत अनेक महीनों से भारतीय सैन्य तथा सशस्त्र कम्युनिस्टों में हैदराबाद राज्य के एक लम्बे-चौड़े भूभाग में एक सशस्त्र युद्ध ही तो चल रहा है। वहा की जनता के लिए शान्ति और सुख सपने की बात बन गई है।

स्पष्ट है, कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा बार-बार मारधाड़ की नीति के परिवर्तन की घोषणाएं उनकी असत्य और अनैतिक पाखण्ड को विश्वासघात की परिचित रूसी परंपरा के एक और हीन प्रदर्शन के सिवा और कोई महत्व नहीं रखती। क्योंकि शांतिमय मार्गों के अवलम्बन की धुंआंधार घोषणा के बाद भी क्या देश मे और क्या विदेश में कहीं एक भी क्षण भर के लिए भी कम्युनिस्टों ने अपने राष्ट्र विरोधी तथा कत्लेआम के व्यापक कार्यक्रमो को बन्द नहीं किया है।

दूसरी महत्व की बात यह है कि भारत की कम्युनिस्ट पार्टी के पालिट ब्यूरो की बैठक इसी मास के तीसरे सप्ताह में किसी अज्ञात स्थान पर गुप्त ढंग पर होगी जिसमे कोरियों के युद्ध पर भारतीय नीति के विरुद्ध किसी उग्र कार्यक्रम की रूपरेखा पार्टी द्वारा निर्धारित की जावेगी।

अपने उस आज्ञापत्र में पार्टी की खराब आर्थिक हालत का भी व्यर्थ का रोना गाया गया है। कहा गया है। आर्थिक खराबी के कारण आवश्यक खर्चों को कम कर दिया है। यहां तक कि पूरे समय काम करने वाले सदस्यों के मासिक भत्तों को कम करना पड़ा है।

पर वास्तव में स्थिति इसके ठीक विपरीत है। भारत में असंख्य स्थानों मे डाले गये भारी डाकों तथा मारधाड़ से कम्युनिस्टो के पास अरबों की निधि जमा हो गई है तथा रूसी स्वर्ण का आयात भी पिछले कुछ महीनो से भारत में बहुत ही अधिक बढ गया है।

इस अपार धन के बल पर कम्युनिस्टों ने हजारों की संख्या मे नये भारतीयों को मोल ले लिया है। 'मरता क्या न करता' के अनुसार घोर दारिद्र्य तथा भयानक असंतोष मे डूबा हुआ भारतीय समाज का एक बहुत बड़ा भाग कम्युनिस्टों के मायावी प्रलोभनों का सहज शिकार बन जाता है। ऐसे नये शिकारों के रूप में लाखों नये अवयस्कों का मुंह स्वर्ण से भर उन्हें रूस ने अपना पिट्ठू बना लिया है। अब की कमी तो चिर-परिचित कम्युनिस्टी झूठ का ही एक उदाहरण है।

[पृष्ठ ८ का शेष]

कम्यूनिस्टों ने अपनी नीति में परिवर्तन करने की जो घोषणा की है, यह उनकी चाल मात्र है। नीति परिवर्तन से साम्यवाद का वर्तमान रूप बदल नहीं सकता। सभी कम्युनिस्ट चाहे वे भारत के हों अथवा जापान, ग्रेट ब्रिटेन या अन्य किसी देश के हों, आज क्या क्रांति के पक्ष मे नहीं है। उनका एक मात्र उद्देश्य रूसी नीति को सफल बनाना है, चाहे वह नीति कुछ भी हो। 'भारत छोड़ो' के समय कम्युनिस्टों ने जो नीति ग्रहण की, वह कौन नहीं जानता। पर उन्होंने रूस के युद्ध में आते ही किस प्रकार अपना चोला बदल कर उसी युद्ध को जनता का युद्ध बताया, जिसे कुछ समय पूर्व वे साम्राज्यवादी युद्ध कहते थे, उस समय स्वातन्त्र्य युद्ध के लिये देश के आवाहन की उन्होंने पूर्ण उपेक्षा की थी।

बन्दरों का भयंकर व्यापार

ब्रिटेन यूनियन फार दी ऐबोलिशन आफ विवीसेक्शन गूंगे प्राणियों पर होने वाले चीर फाड़ के प्रयोग को अपनाने वाला संघ ४७, व्हाइट हाल, लन्दन के मंत्री मि० विल्फ्रेड रिशर्डस्सी लिखते हैं।

'भारत के अखबार में ऐसे समाचार आए हैं कि बालक के रोग के सम्बन्ध में अमेरिका भेजने की व्यवस्था करने के लिये एक अमेरिकन आपके देश में आया है। ब्रिटिश अखबारों में भी ऐसे समाचार छपे हैं कि अमेरिका की संशोधनशालाएं आगले वर्षों में ३,००,००० बन्दरो का आयात करने की सोच रही है। यह निश्चित है कि बन्दरों की बड़ी संख्या भारत से आयेगी और बाकी के दूसरे देशो मे आयेंगे। बहुत से बन्दर जब विमानों द्वारा ब्रिटेन होकर ले जाये जाते हैं। कुछ दिन पहले ऐसी खबर छपी थी कि ३० बन्दर बीच में वेल्जियम मे मर गए थे ३० बन्दर भाग्यवान थे। क्योंकि बाकी बन्दरों को अमेरिका की संशोधन-शालाओं मे इससे ज्यादा यातनाएं सहनी पड़ेंगी। भारत में इन गरीब प्राणियों को खासकर काफी तकलीफ भोगनी पड़ती है, और उन में से कितने ही मर जाते हैं।

'भारत ब्रिटेन अमेरिका के मूलदयावादियों के अनेक विरोधों के बावजूद यह भयंकर व्यापार वर्षों से चल रहा है। एक साल पहले मैंने पं० जवाहरलाल नेहरू को विरोध का एक पत्र लिखा था। ऐसा लगता है कि महात्मा गांधी की भावनाएं उनके मस्तिष्क में नहीं उतरी है।

'दूसरे प्राणियो को छोड़ कर सिर्फ बन्दरो का ही विचार करें, तो उन पर बरसोंसे प्रयोग करते रहने पर भी आज तक बाल लकवेको रोकने वाला या मिटाने वाला कोई उपाय हाथ नहीं लगा है, हाथ लगे ऐसा दीखता भी नहीं है। कृत्रिम ढंग से छूत लगाए हुए बन्दरों के लिए उपाय सोचे जायें, तो भी इसी बात की बहुत सम्भावना नहीं है कि मनुष्यों के रोगों को भी सुधारने में वह उपयोगी होगा। इस रोग को मिटाने में सफल हुआ मिस्टर केनि का एक इलाज प्रसिद्ध है और उसका प्राणियों पर प्रयोग करने से कोई सम्बन्ध नहीं।

'मैं आशा रखता हूं कि बन्दरों के इस भयंकर व्यापार के खिलाफ भारत अपनी विरोधी आवाज उठायेगा। प्राणियों पर किये जाने वाले प्रयोग के आधार पर टीका लगाने की जो पद्धति है, उनके नुकसान और व्यर्थता के बारे में आपके पाठकों को जानकारी चाहिए, तो मैं खुशी से भेजूंगा।

[पृष्ठ १० का शेष]

किया और कुछ मंत्र पढ़े। पांच मिनट बाद पहलवान चीखें मारने लगा, चिल्लाने लगा कि मैं स्त्री बन रहा हूं। मुझे छोड़ दे। मैं नहीं बनना चाहता। लोगों ने देखा कि पहलवान की छाती पर स्त्रियों की भांति स्तनों के उभार स्पष्ट हो उठे हैं। जब पहलवान बेतरह चिल्लाने और विनय करने लगा तो मौलाबक्स ने उसे छोड़ दिया।

विदेशों में प्रदर्शन

हाल ही में एक लंकावासी योगी ने जर्मनी तथा यूरोप के दूसरे देशों में आश्चर्यजनक खेलों का आरम्भ करके उन वैज्ञानिक देशों पर भी योग्यता की धाक बैठा दी है। जिसप्रकार इस देश मे बहुत से लोग २४ घंटे भूमि से गिरे रहने का खेल दिखाते हैं, उस योगी ने २४ घंटे तक शीशे की नली में बन्द रहने का खेल दिखाया। शीशे की एक विशाल नली में वह बन्द हो गया। वह सांस न ले सके, इसलिये नली पानी में डुबा कर रखी गई। २४ घंटे बाद जब वह नली में से निकला तो परेशान नहीं था। वैज्ञानिक दृष्टि से मनुष्य के लिए ऐसा कर सकना असंभव है। इसी योगी ने शीशा खाने आदि के और भी कई प्रदर्शन यूरोप के कई शहरों में किये।

'पन्त' जी का नवीन दर्शन

[प्रो॰ जयचन्द्र राय].

सन् १९४७ में 'स्वर्ण-किरण' के प्रकाशित होने पर कविवर 'पंत' के जीवन दर्शन में नया मोड़ स्पष्ट हुआ। 'युग-वाणी' और 'ग्राम्या' की अधिकांश रचनाओं में कवि मार्क्स के साहित्य और कला सम्बन्धी विचारों का काव्यात्मक उभार कर रहा था; भौतिकता की पृष्ठ-भूमि पर वही अपनी कल्पना की शक्ति आंक रहा था और साथ ही सैद्धांतिक दृष्टि से शोषितों तथा दलितों के प्रति बौद्धिक सहानुभूति प्रकट करके संतोष पाता था। इस बात के लिए कारण था। पंत जी का विश्वास था कि भारत का ग्रामीण जीवन सामंतवादी संस्कृति के मूल स्पर्शी संस्कारों और रूढ़ियों से आक्रान्त होने के कारण हेय है अनेक ऐसे मृतप्राय और दुर्वह तथा पथराये विचारों को यह समाज ढोता रहा है जिनका युग शताब्दियों पहले समाप्त हो गया। ऐसी दशा में इन जीवन के अंतराल में बैठकर उसके अश्रु हास को मुखरित करने की चेष्टा क्रियात्मक साहित्य को ही जन्म दे सकती थी। इसलिए इन रचनाओं में कवि तटस्थ दर्शक बना रहा। परन्तु द्वितीय महा-युद्ध के फलस्वरूप जब परिस्थितियों का वात-चक्र दूसरा रूप ग्रहण करने लगा तब कवि की स्थिति में परिवर्तन हुआ। जैसा स्वाभाविक था इस प्रकार के परि-वर्तन के फलस्वरूप पंत जी ने भारत के प्राचीन दर्शन की आध्यात्मिकता में पहुँचकर, भविष्य में निर्मित होने वाले समाज की कल्पना-रचित रूप रेखा उपस्थित करने का प्रयास किया। इस की प्रवृत्ति सर्वप्रथम 'स्वर्ण किरण' में दिखाई पड़ी। फिर आगे के संग्रहों में वह अधिकाधिक स्पष्ट होती गई। कवि की शारीरिक अस्वस्था की मानसिक प्रतिक्रिया भी उसके समक्ष मनुष्य की भौतिक असमर्थता को पोल खोल चुकी थी। निदान, वह लोक संगठन के संचा-लन के समानान्तर ऊर्ध्व सांस्कृतिक संच-रण के आन्दोलन को मानवता के कल्याण के लिए अनिवार्य समझने लगा। 'स्वर्ण-किरण' से उत्तरा तक पंत जी की कविता का प्रधान स्वर इसी ऊर्ध्वगामिता से संबद्ध है।

विकृति का मूल कारण

'उत्तरा' की भूमिका में लेखक का दृष्टि कोण अधिक सरल और स्पष्ट है। उसके विचार से मानव सभ्यता की विकृति का मूल कारण मनुष्य की बहि-रंतर शक्तियों का पारस्परिक द्वन्द्व है। इसी द्वन्द्व के फलस्वरूप अश्रु, स्वेद और रक्त से सना हुआ मानव सभ्यता का इतिहास, पीड़न, शोषण तथा संघ-र्षण की प्रतिरूप बन गया है। धरा वस राष्ट्रों के कटु स्वार्थों से खंडित तथा गगनचुम्बी महलों के स्वर्ण कलश विष से परिपूर्ण हैं : जन-मन का समुद्र उद्वेलित है और युग रक्त-जिह्व बनकर तांडव नृत्य कर रहा है, नष्ट काम के कुलिश करों से पावन प्रेम का कोमल कलेवर विमर्दित है और अंतर्मानव की मोहनिद्रा में मग्न। उसके विपरीत बहि चेतना उच्छृंखल हो गई। बुद्धि-प्राण जनसमूह तर्कों, वादों और सिद्धांतों से पीड़ित है। एवं धर्म-प्राण व्यक्तियों की बुद्धि-सीमा, नीति रीति तथा शास्त्र पंथों में ही निश्चित हो चुकी है वैज्ञा-निकों के साथ राज्य शक्ति भी महामृत्यु के पूजन में नियोजित है।

समाधान

इस प्रकार की सर्वग्रासी विषमता के मूलकारणों पर विचार करते हुए कवि ने समस्या का सुन्दर और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किया है। यंत्र का मानवीकरण न होना विकार का प्रधान कारण है : प्रत्येक बार जब उत्पादन के नवीन साधनों के आविष्कार के फल स्व-रूप युग परिवर्तन की परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं, तब सभ्यता के विकास में इसी प्रकार का गतिरोध आ पड़ता है; रूढ़ि-ग्रस्त विचारों और संस्कारों से संबद्ध होने के कारण वह नवीन परिस्थितियों से समझौता नहीं कर पाती। ऐसी दशा में अंतर्विरोधों के आधार पर एक विक्षुब्ध वातावरण का उपस्थित हो जाना अनि-वार्य है। आगे चलकर जीवन के क्रमिक विकास में मनुष्य की अंतर्चेतना अधिकऊर्ध्व गमिनी बनकर बहिर्जगत से सामंजस्य स्थापित कर लेती है। इस सामंजस्य का दूसरा नाम है 'यंत्र का मानवीकरण' इसी बात को दूसरे शब्दों में 'पंत' जी ने कहा है कि अभी यंत्र का सांस्कृतिक परिपाक नहीं हुआ। आधुनिक युग में विज्ञान के नवीन आविष्कारों की भौतिक उपयोगिता अभी प्रमाणित नहीं हो पाई। उनकी नाशकारी शक्ति से परिचय पाते ही समस्त मानवता भय-भीत और आतंकित हो गई। यह भय और आतंक स्वभावतः ही संक्रमणशील है और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसका प्रभाव दिखाई पड़ रहा है। सर्वत्र एक भयंकर अनिश्चय दृष्टि गोचर होता है। इस असमंजस परिस्थिति के लुप्त हो जाने पर ही विश्व में मनुजता की प्रतिष्ठा हो सकना संभव है, किसी अन्य दशा में नहीं। कवि की ओर से दिया गया समाधान निम्नलिखित है।

बहिर्नयन विज्ञान महत्,
अंतर्दृष्टि ज्ञान से योजित।

उसे विश्वास है कि अंतर्लोचन बन कर विज्ञान मानवता का कल्याण कर सकता है। मनुष्य भी अपनी अर्न्तगरिमा से अप-रिचित होने के कारण उद्भ्रान्त है। इसीलिये पंत जी ने लोकसंगठन के समाना-न्तर सांस्कृतिक आन्दोलन की बात कही है। 'इन्द्र धनुष' शीर्षक कविता इस बात को प्रमाणित करती है:—

ऊर्ध्व संचरण में, रे!
व्यक्ति निखिल समाज का नायक,
समदिक् गति में सामाजिकता,
जगत्‌ काम्य विधायक।
ऊर्ध्व चेतना को चलना,
भूपर धर जीवन के पग।
समदिक् मन की पंख खोल,
चिद् नभ में उठना व्यापक।

भारत के गहन दर्शन का अध्ययन करके कवि ने यह निष्कर्ष निकाला है कि 'अद्वैतवाद' की पीठिका पर नवीन मानवता की प्रतिष्ठा श्रेयस्कर होगी। जिनकी बुद्धि वाद ग्रस्त है उन्हें यह स्वीकार करने में अड़चन होती है कि भौतिकता और आध्यात्मिकता एक ही पदार्थ के विकास के भिन्न भिन्न स्तर हैं। वे परस्पर विरोधी नहीं अपितु एक दूसरे के पूरक हैं। समदिक मानों का जब ऊर्ध्व धरातल पर परीक्षण किया जाता है तो वह आध्यात्मवाद के अन्तर्गत आता है और ऊर्ध्व मानों के समधरातल पर किये गये परीक्षण को भौतिकवाद का नाम दिया जाता है। कवि, लोक-संग-ठन या समदिक् संचरण को उपेक्षणीय नहीं ठहराता, जैसा कुछ आलोचकों ने कहा है। परन्तु सम्पूर्ण युग संघर्ष को केवल वर्ग संघर्ष के रूप में केन्द्रित करके देखना उसे उचित नहीं जान पड़ता। इसलिए उसने भौतिक विकास का कहीं तिरस्कार नहीं किया, उसकी उपेक्षा नहीं की और उसे असत्य नहीं ठहराया, प्रत्युत उसके परिष्कार और आवश्यकता पर सर्वत्र बल दिया है। जिस सांस्कृतिक आंदोलन की चर्चा ऊपर की गई है वह लोक संगठन के विरोध में नहीं परचलित हो सकता,

श्री सुमित्रानन्दन पन्त

यह तथ्य 'उत्तरा' की भूमिका में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है। इस आंदो-लन से मनुष्य की बहिरंतर शक्तियों का का समन्वय होना जिसके लिये पहली शर्त पंत जी ने यह रखी है कि ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया जाय।

क्रांति कालीन साहित्य

सृजन प्राण कलाकार का उत्तर-दायित्व भी 'पंत' जी की दृष्टि में औरों से भिन्न है। वर्ग-कटुता, और शोषण से मुक्त जिस प्रकार का नया समाज भविष्य के गर्भ में है, उसका पूर्वाभास जन साधा-रण के सम्मुख उपस्थित करना संक्रमण कालीन साहित्यकार का प्रथम कर्त्तव्य है। नई कविताओं में इस समाज का रूप बार बार चित्रित हुआ है।

नग्न क्षुधातुर जीवन्मृत भू,
के असंख्य शोषित जन।
मानव तन को शोभावृत,
कर नवयुग को पदार्पण।
युग्म प्रीति के लिये प्राण,
आहुति फिर करें निरूपित।
अजित पंचशर के हित मोहक
ज्योति व्यूह रच विस्तृत।
फूलों के बाणों से जीवन,
का मधु हो चिर संचित।
यौवन के शोभा तोरण में,
युवति युवक विचरें स्मित।

इस प्रकार कवि सभी जगह मनुष्य की नैतिक मुक्ति का 'ज्योति वाहक' बन

[शेष पृष्ठ २६ पर]

चित्रलोक

विविध समाचार

● इस मास बम्बई में कई नयी फिल्मों के निर्माण का कार्य आरम्भ किया गया। इसमें मधुकर, नवबहार की 'लोकराज,' फिल्मकार लिमिटेड की 'घुंघरू' निर्माता हलद्विया की 'ईश्वर-भक्ति', किशोरसाहु की 'काली घटा' और 'जन्माष्टमी' तथा हुसनलाल भगतराम की 'अफसी' उल्लेखनीय है।

● हालीवुड के सुप्रसिद्ध फिल्म-अभिनेता साबू ने भारत में आ कर एक फिल्म तैयार करने की योजना बनाई है वह अगले मास टेक्नीशियनों के साथ सिंगापुर पहुंच जायगा। इस फिल्म में हाथियों तथा अन्य जानवरों का काम दिखलाया जायगा।

● भारत स्थित सोवियत दूतावास ने बम्बई के फिल्मसेन्सर बोर्ड से शिकायत की है कि 'दि रेड डेन्यूब' जैसी रूस विरोधी फिल्में तो बिना कोई आपत्ति के प्रदर्शनार्थ स्वीकार कर ली जाती हैं, रूस के पक्ष में प्रकाश डालने वाली फिल्में सेन्सर करते समय कठोरता से काम लिया जाता है।

ब्रिटेन के प्रसिद्ध फिल्म-निर्माता जे० आर्थर रैंक ने 'समुन्दर की सुन्दरी' नाम से एक हिन्दी फिल्म का निर्माण किया है, जिसका कलकत्ता और मद्रास में प्रदर्शन भी आरम्भ हो चुका है। इस चित्र के इंगलिश संस्करण को संसार भर के इंगलिश जानने वाले दर्शकों ने बहुत पसन्द किया था और फलतः निर्माता ने संसार की विभिन्न प्रधान भाषाओं में इसके संस्करण निकालने का निश्चय कर लिया।

● पारो पिक्चर्स के संगीत और मनोरंजन-प्रधान चित्र 'नखरे' का निर्माण अन्तः समाप्ति पर है। इस चित्र में इस सिनेमा की निर्माता पारो देवी के अलावा चंचल-अभिनेत्री गीताबाली, जीवन और देविड अभिनय कर रहे हैं। इस चित्र का संगीत-निर्देशन 'बरसात...' के स्वरकार हंसराज बहल ने किया है।

● कलकत्ता के फिल्म निर्माताओं तथा वितरकों ने फिल्म जांच समिति के समक्ष साक्षियां देते हुए इस बात की शिकायत की है कि बंगाल के विभाजन के बाद बंगाली फिल्मों के लिये मार्केट बहुत छोटा हो गया है। उनका कहना है कि बिहार, आसाम और उड़ीसा में भी बंगाली फिल्में बहुत कम दिखलाई जाती हैं।

'शादी की रात' : असफल हास्य-चित्र

श्री कलाधर

प्रकाश पिक्चर्स कृत 'शादी की रात' कालिज के विद्यार्थियों के 'बीबी कैसी हो' शीर्षक नृत्य-गीत से प्रारम्भ होता है। चित्र की कहानी विशुद्ध मनोरंजन की दृष्टि से लिखी गई है, किंतु जिस प्रकार इस देश में निरे मनोरंजन की दृष्टि से तैयार किये गये 'करोड़पति' जैसे एकाध चित्रों को छोड़ कर प्रायः अन्य सभी हास्य-फिल्म असफल हुए हैं, उसी प्रकार यह भी एक असफल चित्र है। इस प्रकार की कहानियों का चुनाव करते समय निर्माता शुरू में भले ही यह अनुभव करते हों कि हास्य-चित्र उन्हें पैसे देने में सफल होंगे, किन्तु सम्भवतः वे यह अनुभव नहीं करते कि इस प्रकारके चित्रों का निर्माण कहीं कठिन है। उनकी दृष्टि में हास्य अभिनय मानो बच्चों का खेल है, जिसे कोई भी अभिनेता आसानी से कर सकता है और जिसके निर्देशन के लिये किसी अच्छे दिग्दर्शक की आवश्यकता नहीं। जो भूल सोहराब मोदी ने 'उल्टी गङ्गा' के निर्माण में की थी, वही विजय भट्ट ने 'शादी की रात' में दोहराई है। बलवन्त पेंढरकर का निर्देशन बहुत हल्का है और मुख्य अभिनेता के रूप में रहमान का अभिनय अत्यन्त कृत्रिम हुआ है। रहमान इस चित्र में न केवल 'डल' बल्कि 'ओवर एज' भी दीखता है। अन्यों का अभिनय भी बहुत स्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। और 'सोहागरात' की नटखट कम्मो गीताबाली तो सम्भवतः इसके निर्देशन के कारण ही इस फिल्म में अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन नहीं कर सकी। गीताबाली का विभिन्न वेश भूषाओं में किया गया नृत्य असामयिक होते हुए भी वस्तुतः आकर्षक है, किन्तु उस समय प्ले बैक में गाया गया गीत न तो स्वर की दृष्टि से मधुर है और न शब्द रचना की दृष्टि से सुन्दर। गीत लेखक की बेवकूफी उस समय प्रकट होती है, जब कि मनोहर के अपने घर पहुंचने पर उसकी सात आठ वर्षीया बहिन दाम्पत्य जीवन के गीत गाती है।

कहानी इस प्रकार है—

निर्मला, मनोहर वर्मा और प्रभाकर एक कालिज में साथ साथ पढ़ते थे। एक दिन मनोहर के पिता आनन्दबाबू एक पत्र और मनोहर की होने वाली वधू उषा का चित्र भेजते हैं। उषा सारंगपुर के एक धनाढ्य व्यक्ति की पुत्री थी और मनोहरके पिता थे एक बैरिस्टर। दैवयोग से उक्त पत्र प्रभाकर के हाथ पड़ जाता है। वह पत्र तो मनोहर को दे देता है, परन्तु चित्र स्वयं रख लेता है। चित्र से उसे प्रेम हो जाता है। आगे चल कर इसका पता मनोहर को लग जाता है। मनोहर और प्रभाकर घनिष्ठ मित्र थे। कालिज की छुट्टियां होती हैं और मनोहर प्रभाकर को लेकर उषा के मकान पर पहुंच जाता है। गलत फहमी होती है और प्रभाकर मनोहर और मनोहर प्रभाकर घोषित कर दिया जाता है। उषा और कथित मनोहर का प्रेम दिन प्रति दिन बढ़ता ही जाता है। उधर कथित प्रभाकर अपनी मां द्वारा पाली गई एक अन्य कमला नाम की लड़की की सरलता, सीधापन और सुन्दरता पर मुग्ध हो जाता है। कुछ दिन के बाद मनोहर और प्रभाकर बम्बई वापिस आ जाते हैं। मनोहर को डर लगता है कि यदि किसी प्रकार रहस्योद्घाटन हो जाता है तो उसके अरमानों का भी अन्त निश्चित है।

मनोहर अपने पिता के पास जाता है, परन्तु रहस्य को रहस्य ही बनाये रखता है।

उषा की मां अपनी पुत्री के साथ बम्बई आती है। उषा अपनी सहेली निर्मला से मिलने जाती है। प्रभाकर निर्मला के भाई को पढ़ाता था। प्रभाकर और उषा की भेंट होती है, परन्तु वह अपनी योग्यता से वास्तविकता को प्रकट नहीं होने देता है। उषा और प्रभाकर उर्फ मनोहर बाबू साथ साथ घूमते और थियेटर जाते हैं। उसकी भेंट बाली हो जाती है, परन्तु उषा को उसकी गरीबी का पता नहीं चलता है। उषा की मां आनन्द बाबू को उषा की शादी तय करने को बुलाती है। रहस्य को रहस्य रखने के बड़े प्रयत्न किये जाते हैं, परन्तु अन्त में निर्मला द्वारा भंडाफोड़ किया जाता है। उषा पर इसका कुछ भी असर नहीं पड़ता। प्रभाकर के निर्धन होने के समाचार भी उसे विचलित नहीं करते और अन्त में उसी मुनीम के प्रयत्नों से कि जिसने गलत फहमी पैदा की थी उषा और प्रभाकर व मनोहर और कमला की शादी हो जाती है।

फिल्म विभाग का नया चित्र— 'वर्षा या धूप'

१७ जुलाई से आरम्भ होने वाले सप्ताह के लिए, भारत सरकार के फिल्म विभाग ने 'रेन और शाइन' (वर्षा या धूप) नामक जो चित्र प्रदर्शनार्थ निकाला है, उसके अंतर्गत मौसम की भविष्यवाणी करने के काम में लाई जाने वाली अद्भुत प्रणालियों का सचित्र निदर्शन है। चित्र में दिखाया गया है कि बादल किस प्रकार रूप बदलते हैं और वायुमण्डल का दाब तथा वायु की गति का पता लगाने के लिए किन यन्त्रों से काम लिया जाता है? मौसम सम्बन्धी भविष्यवाणी करने वाले कार्यालयों की कार्य-प्रणाली का आभास तो, दर्शक को, इस चित्र से होता ही है, साथ ही वह यह भी अनुभव करता है कि जहाज के कप्तान, विमान के चालक और खेतों में काम करने वाले किसान के लिए इन संभाव्य ऋतु परिवर्तनों का पूर्व ज्ञान कितना अधिक महत्वपूर्ण होता है।

एक अन्य समाचार-समीक्षा चित्र में हाल ही में दार्जिलिंग में भूमि फटने आदि प्रकृति के प्रकोप तथा भारतीय सैनिकों, आदि द्वारा की गई सहायता के दृश्य दिखाये गये हैं। इनके अतिरिक्त डा० सी० वी० रमन की हाल की यात्रा के और वन महोत्सव सम्बन्धी कुछ दृश्य भी इस चित्रमें सम्मिलित हैं।

गाण्डीव के तीर

भारत में दो साल में भुखमरी शुरू हो जावेगी।

—डा० लोहिया

नये समाजवादी कार्यक्रम में हड़तालों के साथ भुखमरी भी शायद शामिल कर दी गई है।

× × ×

लन्दन के राजदूत के मनोरंजन के लिए भारत सरकार ने २ लाख में एक थियेटर खरीदा है।

—भारत सरकार

भारतीय राजदूतों का काम ही सम्भवतः विदेशों में मनोरंजन करने का है।

× × ×

नेहरू जी को राजनीति से संयुक्त राष्ट्र-संघ को लाभ उठाना चाहिये।

—अमेरिकन पत्र

कश्मीर से लेकर कोरिया तक।

× × ×

कानपुर की पुलिस को अश्रु गैस की ट्रेनिंग दी जा रही है।

—एक समाचार

तब तो मालूम होता है म्युनिसिपल चुनाव पास आ रहे है।

× × ×

राष्ट्र संघ ने तीन वर्ष शांति के प्रयत्न में व्यर्थ ही गंवाये।

—चर्चिल

बिल्कुल, छलनी में जितना दुहता रहा, उतना ही निकलता रहा।

× × ×

पाकिस्तान का जन्म इस्लाम की सेवा के लिए हुआ है।

—लियाकतअली

नेहरू जी को और समझा दीजिये।

× × ×

'ईद के अवसर पर मुसलमानों को २ छटांक चीनी अधिक मिलेगी।

—हमीदुल्ला, इंचार्ज राशनिंग विभाग

भारत के असाम्प्रदायिक राज्य में तो मियां मुसलमानों की रोज ही ईद है।

× × ×

बेगम एजाज रसूल की अध्यक्षता में जमींदारों और लीगियों ने धारा सभा में एक नया दल बनाया है।

—एक समाचार

अपने राम को पूरे पन्द्रह आने यकीन है कि यह दल जल्दी ही त्रिलोकसिंह के दल से बाजी ले लेगा क्योंकि संचालिका त्रिगुणी है। पहली बेगम, दूसरी नारी और तीसरी पुरानी तअल्लुकेदार।

× × ×

सीमाप्रांत में लीगी सरकार ने अखिबार वाला कानून को भी मात कर दिया।

—सुहरावर्दी

अब तो मान गये होंगे, है यह भी कोई सरकार। मियां अभी तो इब्तदा है। आगे-आगे देखिये यदि अंग्रेजो को मात न दी तो, क्या किया।

× × ×

जमींदारी उन्मूलन एक ढकोसला है।

—गोविंद सहाय

बहुत ठीक, यह अक्ल यूरोप मे घुसते ही आ गई थी या लौटने पर नौकरी छूटी देख कर आई है।

× × ×

सरकार वस्तुओं के दाम बढ़ने देने के लिये कृतसंकल्प है।

—श्री मेहताब

दुकानदार आपकी कहां तक सुनते हैं इसका प्रमाण लेना हो तो लारी वाबली से ४ आने का धनिया लेते आइये।

× × ×

जेल के सुधारने का कार्य यथापूर्वक जारी रहेगा।

—यू० पी० सरकार

तब तो अपने राम भी एक कोठरी वहां ले लेंगे।

× × ×

अमेरिकन सिपाही आरामतलब और निरुत्साही हैं।

—शिकागो ट्रिब्यून

बस इतने से समझ लीजिये सब कुछ—

बणिक पुत्र जानत कहा,
गढ लेवन की बात।

× × ×

कांग्रेस देश को विनाश की ओर ले जा रही है। —जयप्रकाश

और रही-सही कमी आप पूरी कर रहे हैं।

× × ×

तुम तक कैसे मैं आऊं।

—एक कवियित्री (प्रश्न)

उत्तर—

मैं रास्ता तुम्हें बताऊं।
पंख पकड़ कर किसी चील के,
गगन मार्ग से आओ।
या चढ कर काले मेघों पर,
बस पर पैर गिर जाओ।
इतने पर भी दिक्कत हो,
तो लारी ही भिजवाऊं॥
मैं रास्ता तुम्हें बताऊं।

देश-विदेश का घटनाचक्र

कोरिया युद्ध को शान्तिपूर्ण ढंग से अविलम्ब समाप्त किये जाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में विचार विनिमय हो रहा है। किन्तु कोरिया का युद्ध दिन प्रतिदिन जोर पकड़ता जा रहा है। तीन दिन की आंशिक शांति के पश्चात् पुन कोरियाई मोर्चों पर युद्ध भड़क उठने के समाचार मिले हैं। साम्यवादियों के एक दबाव से तायेजोंग फांडेग रेलमार्ग को संकट पैदा हो गया है। यह मार्ग अमरीकी रसद बन्दरगाह पूसान तक जाता है। साम्यवादी सेनाओं ने दक्षिणी कोरिया सेना को ताएजोन से ४० मील दक्षिण पश्चिम मे स्थित दुरी नगर से खदेड़ दिया है। दूसरी ओर उत्तरी कोरिया में सेनायें हमचान, कुमचीन तथा योगट्-आन्दोग की ओरतेजी के साथ बढ रही हैं। इधर जनरल मैकार्थर ने भी तीन दिन की शांति से लाभ उठा कर अपनी वायु सैनिक सहायता मे वृद्धि कर अमेरिका की तीन डिवीजनें दक्षिण कोरिया में झोंक दी हैं। दक्षिण कोरिया की स्थायी राजधानी ताएजोन उजाड़ खण्डहर तथा नीरव गतिहीन नगर-सा बन गया है। ब्रिटेन ने भी दक्षिण कोरिया की सहायता मे और अधिक वृद्धि कर दी है तथा सिंगापुर तथा हांगकांग से ब्रिटिश सेनायें शीघ्र ही भेजने का निश्चय कर लिया है। कोरिया के समुद्री तट पर तीन अज्ञात पनडुब्बियां जिन पर किसी राष्ट्र विशेष का चिन्ह नहीं था, देखे जाने का कारण अमेरिकन सैनिक अधिकारियों को विशेष चिन्ता हो गई है। उत्तरी कोरिया के सैनिकों ने कुम नदी को पार कर लिया है तथा दक्षिण पश्चिम की ओर बढ रहे हैं।

शान्ति-चर्चा

कोरिया की समस्या को सुलझाने के लिए नेहरूजी तथा मार्शल स्टालिन, श्री एचीसन के बीच जो पत्र व्यवहार चल रहा है उसकी प्रतिक्रिया समस्त ससार में हुई है तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में इसकी खूब चर्चा है। पंडित नेहरू के प्रस्ताव का एकमात्र उद्देश्य कोरिया के युद्ध को बन्द करना तथा सोवियत तथा आंग्लो अमेरिकन गुटों से समझौता करा कर संयुक्त राष्ट्र-सघ के गतिरोध को दूर करना है। उक्त गतिरोध का प्रधान कारण यह है कि रूस सयुक्त राष्ट्र-संघ मे तब तक सम्मिलित नहीं होना चाहता जब तक कि साम्यवादी चीन को सुरक्षा परिषद् मे प्रतिनिधित्व नहीं मिल जाता। किन्तु अमेरिका ने साम्यवादी चीन के प्रवेश का घोर विरोध किया है। वाशिंगटन से प्राप्त उत्तर मे यह घोषणा कर दी गई है कि कोरिया मे साम्यवादियों की आक्रमण नीति और राष्ट्र-संघ के बहिष्कार के कारण अमेरिका सुरक्षा परिषद् मे शान्ति वार्ता प्रारम्भ करने के लिए तैयार नहीं है। ब्रिटेन ने यद्यपि इस सम्बन्ध मे अभी तक अपना निश्चय प्रकट नहीं किया है, तथापि आशा की जाती है कि ब्रिटेन का निश्चय अमेरिका के समान ही होगा। अमेरिका युद्ध का प्रतिरोध करने के लिए सयुक्त राष्ट्र-संघ के हाथ मजबूत कराने के लिए तैयार है, किन्तु संघ में चीन को प्रतिनिधित्व देने के प्रश्न पर उसका तीव्र मतभेद है। इस गतिरोध पर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों मे चर्चा है, किन्तु अन्तिम परिणाम संदिग्ध है।

कोरिया के बाद यूगोस्लाविया

कोरिया युद्ध अभी मन्दा नहीं पड़ा है, कि यूगोस्लाविया तथा सोवियत रूस में फिर तनातनी प्रारम्भ हो गई है। सोवियत रूस की कुछ समाचार समितियो ने योगोस्लाविया पर सोवियट गुट के विरुद्ध नये युद्ध की योजना बनाने का आरोप लगाया है। आरोप यह है मार्शल टीटो ने पश्चिमी जर्मनी को कुछ आवश्यक वस्तुयें देकर बदले मे शस्त्रास्त्र लेने का समझौता कर लिया है। हंगेरिया के एक कम्यूनिष्ट पत्र ने लिखा है कि योगोस्लाविया के टीटो विरोधी दल का कोरिया के युद्ध से प्रोत्साहन मिल रहा है। विरोधी आरोपो मे एक आरोप यह है कि यूगोस्लाविया सोवियत यूनियन के विरुद्ध अमेरिकनों और अंग्रेजों का युद्ध केन्द्र बन रहा है तथा पश्चिमी जर्मनी में एकत्र हिटलर की युद्ध-सामग्री को यूगोस्लाविया पर्याप्त मात्रा मे प्राप्त कर रहा है। पारस्परिक आरोप-प्रत्यारोप के पश्चात् योगोस्लाविया की स्थिति कोरिया के समान हो जाने की आशंका प्रकट की जा रही है।

काश्मीर पर त्रिदलीय वार्ता

सयुक्त राष्ट्र-सघ की ओर से नियुक्त काश्मीर मध्यस्थ सर ओवन डिक्सन काश्मीर के क्षेत्रों का व्यापक दौरा समाप्त कर तथा भारत-पाकिस्तान के उच्चाधिकारियों से विचार विनिमय कर शीघ्र ही देहली मे एक त्रिदलीय सम्मेलन बुलाया है, जो २० जुलाई मे प्रारम्भ हो गया है। काश्मीर के असैनिकीकरण के प्रश्न पर विचार किया जायेगा। सर डिक्सन का कथन है कि अब तक के अध्ययन के पश्चात् काश्मीर के प्रश्न पर उन्हे कोई बहुत बड़ी आन्तरिक कठिनाई नहीं दिखलाई पड़ी है। पाकिस्तान के प्रधान मंत्री लियाकतअली खां [illegible] देहली पहुंच गये हैं।

———

पन्त जी का नवीन दर्शन

(पृष्ठ २३ का शेष)

कर प्रकट हुआ है, गांधी और श्री अरविंद के जीवन दर्शन पर उनकी आस्था दृढ हो चली है। इसलिये 'खादी के फूल' 'युग-पथ' 'स्वर्ण-धूलि' और 'स्वर्ण किरण' तक मे इन दो महात्माओ के प्रति श्रद्धावनत होकर कवि ने अनेक कवितायें लिखी हैं।

पंत जी को पूर्ण विश्वास है कि उन्होने काव्य की नयी दिशा की ओर केवल पहला कदम उठाया है। उसका पूर्ण वैभव तो आने वाली हिंदी कविता मे दृष्टिगोचर होगा। 'उत्तरा' की 'नवपावक' शीर्षक कविता मे उन्होने कहा है—

मैं, रे। केवल उन्मन मधुकर,
भरता शोभा स्वप्निल गुंजन।
कल आयेंगे उर तरुण भृंग,
स्वर्णिम मधुकण करने वितरण।

प्रगतिवादी आलोचना

प्रगतिवादी आलोचको ने 'स्वर्ण-किरण के प्रकाशन के साथ ही कविवर' पंत को 'प्रतिगामी' कहना प्रारंभ कर दिया है। उनकी ओर से अनेक आक्षेप हुए जिन सबका उत्तर देना इस निबंध का उद्देश्य नहीं। परन्तु उनके मूल कारण पर विचार कर लेना अप्रासंगिक न होगा।

वर्ग-संघर्ष या वर्ग-युद्ध का निवारण करने वाला सारा साहित्य हिन्दी के 'प्रगतिवादी' आलोचको की दृष्टि में प्रतिक्रियावादी और 'जनवाद' का शत्रु है। परन्तु यदि आप ध्यान दें तो यह केवल वाद ग्रस्त बुद्धि का दुराचार जान पड़ेगा। यहा यह बताकर कि मार्क्स की अनेक भविष्य वाणियां किस प्रकार झूठी सिद्ध हुई निबंध का कलेवर बढाने से अच्छा यह होगा कि हम मार्क्स के उस कथन पर ध्यान दें कि समाजवाद तो विश्व-व्यापी सिद्धान्त है परन्तु उससे उत्पन्न प्रतिक्रिया विभिन्न परिस्थितियो मे एक समान नही हो सकती। यह आवश्यक नही कि वर्ग-युद्ध ही उसके लिये आवश्यक उपाय हो। इसलिए 'उत्तरा' को भूमिका मे कहा गया है कि सम्पूर्ण युग-संघर्ष को केवल वर्ग-संघर्ष में केन्द्रित करके देखना संकीर्ण दृष्टिकोण का परिणाम होगा। मार्क्स के साहित्य और कला संबंधी विचारों के सबसे प्रमाणिक और अधिकारी विश्लेषक क्रिस्टाफर काडवेल ने अपनी 'इल्यूजन एन्ड रियलिटी' नामक पुस्तक मे पूंजीवाद के ह्रास युग की अंग्रेजी कविता तथा 'कविता के भविष्य पर विचार करते हुए लिखा है कि संक्रमण काल में बूर्जवा संस्कृति के पोषक कलाकार अर्धविक्षिप्त होकर संस्कृति के नाश की ओर जाने से भयभीत रहते हैं, परन्तु इसके विपरीत सच्चा और प्रगतिशील कलाकार नई संस्कृति के निर्माण पर आस्था रखता है। 'पंत' जी की नवीन कविताएं आशावादिता से पूर्ण हैं। उनमें जन-संस्कृति के वैभव का सूक्ष्म सौंदर्य अंकित है। साथ ही वर्तमान संघर्ष के भीतर से ही नये समाज को देखने की चेष्टा की गई है। यहां 'उत्तरा' से एक उदाहरण दिया जाता है।

संघर्षण पर कटु संघर्ष,
यह दैविक भौतिक भूकम्पन।
उद्वेलित जन-मन का समुद्र,
युग रक्त-जिह्व करता नर्तन।
ढह रहे अंध विश्वास शृंग,
युग बदल रहा, यह महा प्रहर।
फिर शिखर चिरंतन रहे निखर,
यह विश्व संचरण रे नूतन।
यह रे भू का निर्माण काल,
हंसता नवजीवन अरुणोदय।
ले रही जन्म नव मानवता,
अब सर्व मनुजता होती जय।

यदि 'पंत' जी को प्रतिगामी मान लिया जाय तो काडवेल की विवेचना असंगत हो जाती है। इन उद्धरणों मे नई संस्कृति के प्रति कवि का विश्वास अत्यन्त स्पष्ट और दृढ है। इससे सिद्ध है वह रूढिग्रस्त विचारों से मुक्त है। यहां 'पंत' को संकीर्ण अर्थों में प्रगतिवादी नहीं सिद्ध किया जा रहा है अपितु 'प्रतिक्रिया-वाद' के विषय मे जो भ्रम चल रहा है उसका निदर्शन कम से कम शब्दो में करने की चेष्टा की गई है।

[पृष्ठ २४ का शेष]

जंगली लोग मुझे भी पकड़ लेते मेरा कोई अंग भंग नहीं है इस लिए में अवश्य देवी की भेंट चढाया जाता।

प्रायः ऐसा होता है कि जब हमारे ऊपर कोई बड़ी विपत्ति आती है तो हम ईश्वर को भला बुरा कहने लगते हैं। परन्तु हमारा यह कहना ठीक नही होता वास्तव मे ईश्वर जो करता है अच्छा करता है उसके प्रत्येक कार्य में कुछ न कुछ भलाई अवश्य छुपी रहती है।

—विनोद

वर्षा ऋतु में जब चारों तरफ पानी ही पानी भर आता है, तब वह नाव चलाते हैं।

भारतीय सामाजिक क्रांति का रूप भारतीय ही हो

(पृष्ठ ७ का शेष)

शायद यूरोप और अमेरिका के जनतन्त्रवादी देशों का रूस को कुचल डालना असम्भव नहीं होगा। लेकिन उससे संकट टलेगा नहीं। साम्यवाद अपने भीतर जिस सत्यांश का वहन करता आ रहा है, वह उनके अपने ही देशों में प्रकट होगा। साम्यवादका एक ही उत्तर हो सकता है, पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था को स्वेच्छापूर्वक खतम करना, अपने बढ रहे जीवन-मान का घटाना, और धनी आबादियों के देशों की जनता को दुनिया के खाली प्रदेशों में बसने के लिए बुलावा देना।

और, इसे छोड़ दें, तो भी सवाल यह है कि अमेरिका और रूस इस या उस दल का पैसा और अस्त्र शस्त्र और अपने यंत्रविद्या-विशारद क्यों देते हैं? अगर वे सचमुच दुनिया में शान्ति देखने के इच्छुक हैं, तो उन्हें पहली चीज यह करनी चाहिये कि वे किसी बाहरी देश को न तो अपने विनाशक-अस्त्र शस्त्र ही बेचें और न उन्हें अपने यंत्र-विज्ञ ही दें। रूस और अमेरिका दोनों कोरिया और जापान से विदा हो जायें और साथ में अस्त्र-शस्त्र, यंत्र-विद् और सैनिक-शिक्षक भी ले जायें। कोरिया वासियों को अपना झगड़ा किसी विदेशी राज्य के हस्तक्षेप के बिना सुलझाने दिया जाय। कोरिया के ये दो राज्य आजकी कृत्रिम सीमा-रेखा के दोनों ओर अपने अपने क्षेत्र के भीतर रहें, इससे समस्या का योग्य समाधान नहीं हो सकेगा। आवश्यकता इस बात की है कि इस विभाजक रेखा को मिटा दिया जाय और देश को फिर एक होने दिया जाय। यदि ये 'बड़े राज्य' एशिया की जनता (जिस में भारत भी आ ही जाता है) के प्रति सचमुच सद्भाव रखते हैं, तो वे कृपया किसी भी प्राकृतिक प्रदेशिक इकाई के दो-दो या तीन-तीन भाग करने की अपनी यह दुर्नीति हमेशा के लिए छोड़ दें। युरोप में टर्की और एशिया में फिलस्तीन, पंजाब, बंगाल, काश्मीर, इंडोनेशिया, और कोरिया आदि की जनता अब इन विभाजन के खेलों से बिलकुल ऊब गयी है। अगर 'बड़ी शक्तियां' अपनी सामर्थ्य इन देशो की जनता में एकता का भाव बढाने में नहीं लगा सकतीं, तो वे ऐसे प्रत्येक प्रदेश को उस के ही भाग्य और बल पर छोड़ दें। यदि वे आपस मे लड़ कर भाई-भाई की हत्या के सिवा और कुछ नही कर सकते, तो उन्हे वही करने दें। यू० ऐन० ओ० बीच में आये, तो ऊपरी शान्ति कायम करने के लिए नहीं, बल्कि प्राकृतिक प्रदेशों की जनता मे एकता पैदा करने के लिए आये। यदि यह सम्भव न हो, तो दूसरी श्रेणी का श्रेष्ठ हल यही होगा कि वह अनिवार्य हिंसा और युद्ध उन प्रदेशो के भीतर ही सीमित रहने दिया जाय। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब बड़ी शक्तियां एशिया से विदा हो जाय और युद्ध के लिए पागल देशो को शस्त्रास्त्र और अपनी विद्याबुद्धि को मदद न दें।

वीर अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

४ आना

कर्मयोग के सत्यस्वरूप के महान द्रष्टा

लोकमान्य तिलक

दिल्ली रविवार, १५ श्रावण सम्वत २००७

DELHI 30th JULY 1950

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७]　दिल्ली, रविवार १२ श्रावण सम्वत् २००७　[अङ्क १५

कर्मयोग का उपदेशक लोकमान्य तिलक

आगामी १ अगस्त को लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलक की पुण्य तिथि है। उन्हें यह लोक छोड़े एक तिहाई सदी बीत गयी। ये लम्बे तीस वर्ष हमारी मातृभूमि भारतवर्ष के विशाल इतिहास के एक महत्वपूर्ण अध्याय की सृष्टि कर गये हैं। यों किसी देश के हजारों वर्ष के इतिहास में ३० वर्ष कोई विशेष महत्व नहीं रखते, किन्तु १९२० से १९५० तक की यह एक तिहाई सदी इतनी अधिक महत्व-पूर्ण है कि देश के विस्तृत इतिहास में इसे भी नहीं छोड़ा जा सकता।

१९२० से भारत ने जिस स्वातन्त्र्य युद्ध का— सामूहिक धर्मयुद्ध का म० गांधी के नेतृत्व में सूत्रपात किया था, उसकी पृष्ठभूमि तैयार करने में लोकमान्य तिलक का प्रधान भाग था। सच तो यह है कि अपनी अदम्य वीरता, साहसिकता, उत्कट देशभक्ति और अद्भुत निर्भीकता से यदि लोकमान्य स्वतन्त्र भारतीय वाता-वरण का निर्माण न करते, तो देश को नया संग्राम लड़ने में सफलता प्राप्त न होती। लोकमान्य ने डंके की चोट पर घोषणा की थी 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' उनकी यह उत्कट अभिलाषा उनके देहावसान के बहुत समय बाद पूर्ण हुई। उनके समय में ब्रिटिश राजनीतिज्ञ भारत को विभक्त कर शासन करने की नीति पर चलना चाहते थे। मिण्टोमारले सुधारों के समय पृथक् निर्वाचनकी जिस नीति का सूत्रपात किया गया, तत्कालीन राजनीतिज्ञों ने उसकी भयंकरता को नहीं समझा था। म० गांधी के भारत के राजनैतिक रंगमंच पर आने से पूर्व ही हमारे नेता उस जाल में फंस चुके थे। १९१६ में लखनऊ में किया गया लीग कांग्रेस पैक्ट हमारी उस अदूरदर्शिता का सूचक था, जिस पर लगातार बढ़ते रहने का परिणाम देशविभाजन था। यह आश्चर्य की बात है कि लोकमान्य तिलक जैसा दूरदर्शी प्रकाण्ड देशभक्त भी अंग्रेजों की कूटनीति को न समझ सका। लोकमान्य ने देश की स्वतन्त्रता की जिस वीर भावना का संचार समस्त देश में कर दिया, वह लगातार आगे बढ़ती गई। स्वतन्त्र भारत की नींव रखने वालों में गौरव के साथ लोकमान्य तिलक का नाम अग्रगण्य है।

किन्तु राजनैतिक नेतृत्व के अतिरिक्त भी लोकमान्य तिलक का अपना एक असाधारण व्यक्तित्व था। उनका प्रकाण्ड पाण्डित्य, अविश्रान्त अध्यवसाय, अगाध मनन उन्हें भारत के उन महामनीषियों में बिठा देते हैं, जिनकी गणना अंगुलियों पर की जा सकती है। ज्योतिष, वैदिक साहित्य, इतिहास और धर्मशास्त्र में उनका अध्ययन विशाल था। उनकी चिन्तनशक्ति जहां गहरी थी, वहां उनका दृष्टिकोण उदार और व्यापक था। 'ओरायन' ग्रन्थ जहां उनके ज्योतिष और इतिहास के प्रकाण्ड पाण्डित्य की सूचना देता है, वहां गीतारहस्य उनके प्राचीन धर्मशास्त्रों के गम्भीर अवगाहन और मौलिक चिन्तन की अगाध प्रतिभा का परिचय देता है। ऋषि दयानन्द के बाद वे प्रथम नेता थे, जिन्होंने देश को वास्तविक कर्मयोग का उपदेश दिया। गीता का ज्ञान केवल विरक्तों के लिए नहीं है, हिन्दू शास्त्र संसार को असत्य कह कर इससे उदासीन होने का उपदेश नहीं देते, योग केवल त्याग या संन्यास नहीं है, कर्म में कुशलता का नाम ही योग है, यह अमर शिक्षा देने वाले महान् कर्म-योगी लोकमान्य तिलक को आज हम भूल गये हैं। राजनीति, धर्मनीति और व्यव-हार नीति में वे अद्भुत समन्वय करते थे। भारतीय दार्शनिक जीवन का कैसा स्वरूप चित्रित करता था, भारतीय संस्कृति और भारतीय दृष्टिकोण का वास्तविक रूप क्या है, यह लोकमान्य तिलक ने हमें बताया था। धर्मशास्त्रों का गम्भीर अध्ययन, ब्राह्मणों का सा नैष्ठिक तपोमय जीवन, उत्कट देशप्रेम, और अन्तस् में स्वातन्त्र्य का दावानल—इन सब के समन्वय का नाम तिलक था।

आज हम केवल राजनीति की चर्चा करते हैं और पश्चिमी अर्थशास्त्र में डूबे हुए हैं, लेकिन लो० तिलक के जीवन रहस्य को समझने के लिए भारतीय शास्त्रों, भारतीय संस्कृति और भारतीय जीवन के दृष्टिकोण को समझ कर उनके अनुकूल अपना जीवन बनाना चाहिए। यही लोकमान्य का सच्चा संस्मरण है।

★

वनस्पति धन्धों का निर्मूल भय

खाद्य तेलों को जमा कर घी का रूप देने वाले कल कारखानों में २२॥ करोड़ की पूंजी लगी हुई है और १५ हजार से अधिक मजदूर इस उद्योग में लगे हुए हैं। यह युक्ति देकर इस उद्योग की रक्षा की मांगें करने वाले यह भूल जाते हैं कि इस पूंजी की अपेक्षा तेल को जमाने में जो खर्च लगता है और जिसका बोझ खाने वालों पर पड़ता है, वह ज्यादा विचारणीय है। तेल और वनस्पति की कीमतों में ६००)रु० प्रति टन का फर्क है। यदि केवल दो लाख टन वनस्पति प्रति वर्ष खाने में खपे तो यह फर्क १२ करोड़ प्रतिवर्ष निकलता है। यदि उद्योग धन्धों में लगी हुई सारी पूंजी डूब भी जाय, तो यह कमी केवल दो वर्षों में पूर्ण की जा सकती है। फिर यह भी क्यों भूलें कि कारखानों में बनाया गया सब वन-स्पति केवल खाने के काम नहीं आता, साबुन आदि दूसरे धन्धों में भी काम आता है। इसलिए वनस्पति का भोजन के रूप में प्रयोग बन्द होने पर भी उद्योग की पूर्णतः समाप्ति नहीं होती।

हिन्दी सम्मेलन ध्यान दे

पाठक इसी अंक में अन्यत्र दक्षिण भारत के हिन्दी प्रेमियों का हिन्दी सा-हित्य सम्मेलन के अधिकारियों से एक अनुरोध पढ़ेंगे। यह एक दुर्भाग्य की बात है कि पिछले कुछ वर्षों से हिन्दी साहित्य सम्मेलन और दक्षिण भारत की हिन्दी प्रचार सभा में संघर्ष निरन्तर बढ़ता रहा है। इस अवांछनीय परिस्थिति के कोई भी कारण हो, आज की स्थिति को हिन्दी के विशुद्ध प्रेम की दृष्टि से किसी भी तरह अधिक समय तक सहन नहीं किया जा सकता। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का कर्तव्य है कि वह अपनी संस्था का मोह छोड़ कर विशुद्ध हिन्दी प्रेम से प्रेरित हो और दक्षिण भारत के हिन्दी प्रेमियों को प्रत्येक सुविधा दे। आशा है कि सम्मेलन के अधिकारी इस ओर ध्यान देंगे।

अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध संभव है

कोरिया के युद्ध में अमरीकन सेनाएं निरंतर परास्त हो रही हैं। और ऐसा प्रतीत होता है कि यदि ऐसी ही परि-स्थिति रही, तो अमरीकन सेनाओं को जल्दी ही कोरिया छोड़ना पड़ेगा। किन्तु इससे युद्ध की समाप्ति की कोई संभावना नहीं की जा सकती। ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया न्यूजीलैंड, टर्की बोलविया और स्याम ने अपनी स्थल सेनाएं युद्ध में भेजने का निश्चय किया है। इससे यह स्पष्ट है कि अमेरिका कोरिया में पराजित होकर भी युद्ध का अन्त करने अथवा अपनी पराजय मानने को किसी तरह उद्यत नहीं है। इस स्थिति का स्वाभाविक परिणाम है अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध। अमेरिकन राष्ट्रपति श्री ट्रूमैन ने तो स्पष्ट कहा है कि युद्ध किसी भी स्थान पर प्रारम्भ हो सकता है। हमने दो सप्ताह पूर्व लिखा था कि हारता हुआ अमेरिका किसी भी तरह युद्ध बन्द नहीं करेगा। अपने नष्ट होते हुए गौरव व प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए उसे बहुत कुछ बलिदान करना पड़ेगा। इसके फलस्वरूप दूसरे पक्ष को भी अपना बल बढ़ाना होगा और इस तरह जो चिंगारी सुदूर उत्तर-पूर्व में जलने लगी है, वह किसी भी दिन विकट रूप धारण कर सकती है।

काश्मीर की असफल वार्ता

काश्मीर की वार्ता अभी सफल नहीं हुई। श्री लियाकतअली चार दिन दिल्ली रह कर वापिस चले गये और काश्मीर के मध्यस्थ श्री डिक्सन का प्रथम प्रयत्न विफल हो गया। वस्तुतः पाकिस्तान व भारत में काश्मीर के प्रश्न पर मत भेद बहुत मौलिक व गहरे हैं। काश्मीर का राजा भारतमें प्रविष्ट होने की घोषणा कर चुका था। इसलिए काश्मीर भारत का अंग है। पाकिस्तान आक्रमणकारी है इस लिए समझौता तब तक हो नहीं सकता जब तक कि पाकिस्तानी सेनाएं भारत की भूमि के सीमान्त से—काश्मीर के पश्चिमोत्तरी सीमा से बिलकुल न निकल जावें। इसके विपरीत स्थिति को कुछ भी स्वीकार करना पशु बल के आगे आत्मसमर्पण है और यह आत्मसमर्पण विश्व में अशान्ति, आक्रमण और बलवान की स्वच्छन्दता को निमंत्रण देगा। इस-लिए काश्मीर के प्रश्न पर भारत सरकार का दृढ़ आग्रह आवश्यक है। फिर आज कोई भी सरकार थोड़ा सा झुकती है, तो वह अपने देश में शायद स्थिर नहीं रह सकती। यही कारण है कि काश्मीर की पहेली जिस तरह उलझ गई है, जल्दी हल नहीं हो सकती।

———

हिन्दी और राज्य सरकारें

मध्यप्रदेश व मध्यभारत की सरकारों ने परस्पर पत्र-व्यवहार हिन्दी में करने का निश्चय किया है। प्रत्येक हिन्दी प्रेमी इस निश्चय का स्वागत करेगा। जब तक विभिन्न राज्यों की सरकारें हिन्दी को अन्तःराज्य भाषा के रूप में व्यवहृत नहीं करेंगी, तब तक हिन्दी को वह रूप प्राप्त नहीं हो सकता, जो विधान के द्वारा उसे दिया गया है। उक्त दो राज्यों की सरकारें जो नया उदाहरण उपस्थित कर रही हैं, हम यह आशा करेंगे कि बिहार, राजस्थान, पंजाब और उत्तर प्रदेश की सरकारें भी हिन्दी को परस्पर सरकारी पत्र-व्यवहार की भाषा मान लेंगी। उनके ऐसा करने पर हिन्दी को बहुत अधिक बल मिल जायगा।

———

कॉंग्रेस का अध्यक्ष कौन होगा ?

श्री शंकररावदेव

कांग्रेस का सभापति कौन हो, यह प्रश्न आज उसके सामने है। यह प्रश्न प्रायः प्रतिवर्ष आता है, किन्तु अब इसमें दो अन्तर आ गये हैं। दो तीन वर्ष पूर्व यह प्रश्न सारे देश के सामने आया करता था, आज यह केवल कांग्रेस के सामने आता है। देश के लिए तो सरकार ही सब कुछ है, उसका उसी से वास्ता पड़ता है। इसलिए वह कांग्रेस अध्यक्ष के प्रश्न पर कोई दिलचस्पी नहीं लेती। दूसरा अन्तर यह आ गया है कि पहले म० गांधी का आशीर्वाद जिसे मिलता था, एक अपवाद को छोड़ कर वही अध्यक्ष चुना जाता था। इसलिए देशवासी इस संबंध में अपना दिमाग नहीं लगाते थे। जयपुर कांग्रेस के अध्यक्ष का चुनाव एक अच्छा संघर्ष था। उसमें केवल २७ मत अधिक आने के कारण श्री पट्टाभि सीतारमैया अध्यक्ष चुने गये थे। आज फिर यह प्रश्न कांग्रेस के सामने आ गया है और इसमें संदेह नहीं कि आज भी कांग्रेस का सर्वाधिक बड़ा संगठन है और इस कारण बहुत से देशवासी भी इस विवाद में रुचि रखते या उत्सुकता दिखाते हैं। इन पंक्तियों के लिखने तक दो नाम अध्यक्षपद के लिए प्रस्तुत होने के समाचार छपे हैं। एक है श्री शंकररावदेव और दूसरे हैं श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन। इन दोनों में से कौन सफल होगा ? मैं सट्टेबाज नहीं हूं, सट्टा नहीं लगाउंगा, किन्तु फिर भी मेरा ख्याल है कि श्री शंकररावदेव सफल होंगे। मेरी यह मान्यता निष्कारण नहीं है। पत्र के पाठक भी मेरे विचार और कारण जानना चाहेंगे। मैं भी कोई संकोच नहीं करता।

पहला कारण, जिससे मैं उमीद करता हूं कि श्री देव जीतेंगे, यह है कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी के वे सदस्य हैं। इस कमेटी की जितनी आलोचना आज होती है उससे नितांत अपरिचित नहीं हूं, फिर भी मैं यह समझता हूं कि उसका बल आज भी बहुत बड़ा है। प्रायः सभी प्रान्तों इस दल का जोर है। इस बल-वृद्धि के दो कारण हैं। एक तो योंही सरदार पटेल, राजेन्द्र बाबू और पं० नेहरू के प्रति लोगों की श्रद्धा किसी भी दूसरे कांग्रेसी नेता से अधिक है और इसलिए लोग उनका आदर करते हैं। दूसरा कारण यह है कि आज इसी दल के हाथ में देश की—केन्द्र व प्रान्तों की बागडोर है। और जिस दल के हाथ में शासनसत्ता है, उस दल को प्रसन्न करने का प्रलोभन बहुत कम कांग्रेसी छोड़ना चाहेंगे। भावी चुनावों में कांग्रेस पार्लमेण्टरी बोर्ड की कृपा सम्पादन करने के लिए क्या क्या नहीं कर सकते ? वे आज भले ही उन्हें गाली देते हों, किन्तु जब वे यह सोचेंगे कि आज कांग्रेस वर्किंग कमेटी के विरुद्ध दिया गया वोट उनके संसद् या राजकीय विधान सभा के भावी चुनाव पर गंभीर असर डालेगा, तब वे सब विरोध भूल कर कांग्रेस वर्किंग कमेटी का साथ देंगे। और यही कारण है कि मैं समझता हूं कि श्री शंकररावदेव जीतेंगे।

भावी चुनावों का प्रश्न ही नहीं, आज भी तो केन्द्र व राज्यों की सरकारें लोगों को बहुत तरह से उपकृत कर सकती हैं और कांग्रेस के सदस्य प्रायः जो चुनावों में स्वार्थ दृष्टि से गये हैं, कैसे यह मौका खोना चाहेंगे ?

फिर एक बात और है। केवल स्वार्थ की दृष्टि से ही नहीं, कांग्रेस में ऐसे भी बहुत से महानुभाव हैं, जो कांग्रेस व सरकार में मतभेद को देश के लिए हानिकर समझते हैं। आज देश की जो स्थिति है, उसमें कांग्रेस व सरकार का सहयोग अनिवार्य है, ऐसा समझ कर बहुत से वर्किंग कमेटी के उमीदवार को ही मत देंगे। दोनों उम्मीदवारों में से श्री शंकर-

[शेष पृष्ठ २६ पर]

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन

कांग्रेस की अध्यक्षता के लिए श्री शंकररावदेव के अतिरिक्त जो नाम प्रस्तुत हुआ है, वह है श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन का, इन दोनों के संघर्ष में कौन जीतेगा, यह कहना आज बहुत कठिन है। दोनों ही योग्य हैं, दोनों ही देश के भक्त हैं और दोनों ने देश के स्वातन्त्र्य के लिए कम त्याग नहीं किया है। दोनों ही आदरणीय व्यक्ति हैं, इसलिए जो भी सफल हो, वही ठीक है, किन्तु यह तो निश्चित है कि दोनों अध्यक्ष नहीं बन सकते। वहां तो एक ही कुर्सी रखी जायगी। तब कौन जीतेगा ? प्रश्न विकट है, पर परीक्षा में तो अंक तभी मिलते हैं, जब कठिन प्रश्न हल किया जाय। मेरी सम्मति में श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन सफल होंगे, इस सम्बन्ध में मेरी युक्तियां निम्नलिखित हैं—

श्री टण्डनजी गत चुनाव में ही जीत जाते, यदि ठीक अन्तिम समय में श्री राजेन्द्र बाबू अपनी सारी शक्ति डा० पट्टाभि के पक्ष में न लगा देते। एक ओर सारी कांग्रेस वर्किंग कमेटी थी, दूसरी ओर टण्डन जी, फिर भी डा० पट्टाभि केवल २७ मतों से सफल हुए। श्री शंकररावदेव का देश पर उतना भी प्रभाव नहीं है, जितना श्री पट्टाभि का था। इसलिए वे उतने वोट भी प्राप्त नहीं कर सकते। फिर एक बात और भी है। गत चुनाव में डा० पट्टाभि को ऐसे बहुत से लोगों ने वोट दिये थे, जो आंध्र प्रान्त के पृथक् निर्माण के लिए उन्हें शक्ति प्रदान करना चाहते थे। अब वैसे मत श्री शंकररावदेव को मिलने से रहे।

मूल प्रश्न यह है कि कांग्रेस का अध्यक्ष सरकार का 'जी हजूर' हो या स्वतंत्र व्यक्ति हो, जो लोकमत के अनुसार सरकार पर भी अंकुश रख सके। डा० पट्टाभि के असफल नेतृत्व ने अब अधिकांश कांग्रेसियों को यह स्पष्ट कर दिया है कि ऐसा व्यक्ति न देश का लाभ कर सकता है न कांग्रेस का। कांग्रेस का इस वर्ष घोर नैतिक पतन हुआ। इसका मुख्य कारण कांग्रेसियों में बढ़ती हुई पद लालसा है। इसे रोकने के लिए निर्भीक निष्पक्ष नेता की आवश्यकता है, यह बहुत लोग समझने लगे हैं।

यह भी बहुत निश्चित नहीं कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी श्री शंकररावदेव को अपना शतप्रतिशत आशीर्वाद देगी। यह ख्याल किया जाता है कि श्री देव भी, बम्बई को महाराष्ट्र प्रान्त में मिलाने की प्रान्तीय भावना से दूर नहीं। श्री पट्टाभि की आंध्र प्रांत की मांग ने वर्किंग कमेटी को जिस परेशानी में डाल दिया था, उसका अनुभव वह फिर नहीं लेना चाहेगी। श्री देव की प्रान्तीयता के कारण महाराष्ट्र के मत भले ही उन्हें मिल जावें, किन्तु गुजरात के मत उन्हें न मिलेंगे।

कांग्रेस वर्किंग कमेटी का यदि आशीर्वाद श्री देव को मिल भी गया, तथापि विविध राज्यों में वर्किंग कमेटी के प्रति जो घोर विरोध पैदा हो गया है, उसके कारण कमेटी का यही आशीर्वाद ही श्री देव को महंगा पड़ेगा। आज राजस्थान में वर्किंग कमेटी के प्रति घोर असंतोष है। आंध्र में भी यही स्थिति है। ये दोनों प्रांत वर्किंग कमेटी के उमीदवार को मत नहीं देंगे।

श्री टण्डन जी से राष्ट्र यह आशा करता है कि वह सरकार के आगे नहीं झुकेंगे, वे स्वयं प्रलोभनों में फसेंगे नहीं और सरकार की व्यर्थ आडम्बरयुक्त योजनाओं का, भारी खर्चों का, जनता के ऊपर अत्याचारों का विरोध करेंगे। वे शरणार्थी सम्मेलन के सभापति बन गये हैं, भले ही सरकार को बुरा लगे। वे हिन्दी के प्रश्न पर म० गांधी तक से मुकाबला करने में पीछे नहीं होते थे। जयपुर में पं० नेहरू की डांट फटकार का

(शेष पृष्ठ २६ पर)

रूस का शान्ति प्रस्ताव १९ अरब ८५ करोड़ डालर का युद्ध बजट (१९५० ई०)। यह संसार के किसी भी देश का सबसे बड़ा युद्ध बजट है।

कांग्रेस अध्यक्ष के दो उम्मीदवार

पं० गोविन्दवल्लभ पंत

आपके निरन्तर प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप उत्तर प्रदेश असेम्बली ने जमींदारी उन्मूलन बिल पास कर दिया।

श्री शंकरराव देव

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन

नासिक कांग्रेस अध्यक्षपद के लिए अब तक आप दोनों के नाम पेश किये गये हैं यदि ८ अगस्त तक कोई नाम वापस न लिया गया तो दोनों में संघर्ष होगा।

श्री लीलाधर जोशी

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय

मध्यभारत के प्रधान मन्त्री श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय मध्य भारत के भू० पू० प्रधान मन्त्री तथा विरोधी दल के नेता श्री लीलाधर जोशी का सहयोग प्राप्त करने में सफल हो गये।

श्री सिंगमनरी

अमेरिका का अपार सैन्य बल भी दक्षिणी कोरिया के शासक श्री सिंगमनरी को अब तक विजय नहीं दिला सका।

श्री मैकेंजीकिंग

कनाडा के प्रमुख नेता और भूतपूर्व प्रधान मन्त्री श्री मैकेंजीकिंग का हृदय सहसा देहान्त हो गया।

श्री त्रिगोप ल्ड

बेल्जियम की राजगद्दी ६ वर्ष बाद मिलने पर भी आप के विरुद्ध अशान्त उपद्रव जारी हैं।

श्री डिक्सन

काश्मीर के मध्यस्थ श्री डिक्सन अनेक दिन तक निरंतर परिश्रम के बाद भी भारत व पाकिस्तान में समझौता करने में असफल हुए हैं।

कांग्रेस के चुनावों से शिक्षा

जनतंत्र की शुद्धि कैसे हो

★ आचार्य दादा धर्माधिकारी

चुनावों से जनता की नैतिकता की हीनता — उम्मीदवारों को झूठा आश्वासन देने वाले कांग्रेसियों की अमित संख्या— मतदान कर्त्तव्य नहीं, दूसरे पर अहसान— जेल जीवन का कपट फल ला रहा है— सामूहिक असत्-भाषण की ट्रेनिंग— चुनाव की कपटकुशलता— अपनी करनी का नतीजा— पद्धति-परिवर्तन की आवश्यकता ।
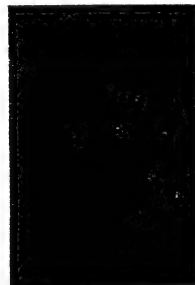
हाल ही में कांग्रेस प्रतिनिधियों के चुनाव हुए। उन चुनावों में जो गुल खिले, उनको देख कर मन में उथल-पुथल मच गई। जिन केन्द्रों में एक से अधिक उम्मीदवार खड़े थे, वहां पर एक विचित्र घटना देखने में आई। हर एक उम्मीदवार निश्चित रूप से यह समझता था कि चुनाव में उसकी सफलता होगी। यह यदि केवल आशानिष्ठा का परिणाम होता, तो हरेक के आत्मविश्वास का परिणाम होता, अथवा हरेक के अपने निर्वाचन केन्द्र के प्रति श्रद्धा का परिणाम होता तो उसमें किसी प्रकार की बुराई नहीं थी, बल्कि लोकनिष्ठा की दृष्टि से यह एक अच्छी चीज समझी जाती। लेकिन दर-असल बात ऐसी नहीं थी। हर केन्द्र में मतदाताओं की संख्या बहुत ही छोटी थी। कहीं कहीं अधिक से अधिक सवा-सौ डेढ़ सौ मतदाता थे। हरेक उम्मीदवार उनमें से हरेक से मिल आया था और हर उम्मीदवार ने हर मतदाता से अभिवचन ले लिया था। प्रत्येक उम्मीदवार को मतदाताओं की अपनी संख्या ने अभिवचन दे दिया था। अर्थात् हरेक की आशा का आधार ठोस संख्यात्मक था। वह कोई हवाई किले नहीं बना रहा था।

कौन झूठ कौन सच

मान लीजिये कि एक केन्द्र में साठ मतदाता हैं और दो उम्मीदवार हैं। हर एक अपने-अपने भरोसे के आदमियों से मिलता है और उनसे अभिवचन लेता है। एक कदम आगे बढ़ कर दस्तखत भी लेता दूसरा उम्मीदवार भी अपने भरोसे के आदमियों से मिल कर अभिवचन ले लेता है। कुछ कम पढ़ा लिखा होने के कारण हस्ताक्षर के बदले वह उनसे सौगन्ध लिवाता है। गंगाजल हाथ में लेकर वे मतदाता भी शपथ पूर्वक उसे अभिवचन दे देते हैं। हरेक उम्मीदवार कहता है कि मेरे ३२ आदमी पक्के हैं। उन्होंने कसम खा ली, मैं किसी तरह हार नहीं सकता। इसका मतलब यह हुआ कि इन तीस आदमियों में से कुछ झूठे हैं या सभी झूठे हैं।

यह बात केवल एक दो जगह नहीं हुई है, करीब-करीब सब जगह हुई है और आगे चलकर इससे अधिक बड़े पैमाने पर होती रहेगी। यदि हम इस केन्द्र में जनतंत्र की पथ्यकारक परिपाटियां कायम करना चाहते हैं तो हमें इस अनवस्था का कोई न कोई उपाय अवश्य करना चाहिए।

यश और सत्ता की लालसा

इस अनवस्था का मूलभूत कारण यह है कि जो उम्मीदवार होता है, उसको जनतंत्र की शुद्धता की अपेक्षा सफलता की फिकर ज्यादा होती है और सेवा की अपेक्षा सत्ता अधिकतम प्यारी होती है। मगर लोग दर-असल उसे चाहते हों तो उनकी खुशामद करने की जरूरत उसे क्यों होनी चाहिए ? सच तो यह है कि लोग किसी को नहीं चाहते। वे जिस मनोवृत्ति से अदालत में गवाही देने आते हैं, उसी मनोवृत्ति से चुनाव में वोट डालने आते हैं। वे समझते हैं कि हम इस उम्मीदवार पर मेहरबानी करने आ रहे हैं। अदालत में जब कोई व्यक्ति गवाही देने आता है तो ईश्वर-स्मरण पूर्वक हलफ पढ़ता है और उसके बाद बड़ी पवित्र भावना से झूठी गवाही दे देता है। यह समझ कर संतोष मान लेता है कि मैंने जिसके पक्ष में गवाही दी है, उसका बहुत बड़ा उपकार किया है। इस उपकार की श्रीलता की भावना से उसकी धार्मिक आत्मा को बड़ा संतोष मिलता है।

जेल-जीवन की कपट-नीति का परिणाम

परोपकार के लिये झूठ बोलना, चोरी करना साजिशें करना और षड्यंत्र रचना नीतिमान् और संभावित लोग दूसरों को सिखलाते हैं। हम जब जेलों में थे, तो वहां के चतुर और चलते-पुर्जे कैदियों का उपयोग गैर कानूनी चीजें मंगाने के लिए और गैर-कानूनी चिट्ठियां बाहर भेजने के लिये बड़ी पुण्य-भावना से कर लिया करते थे। उन्हीं कैदियों का उपयोग उतनी ही कर्त्तव्य भावना से हमारे खिलाफ जेल के अधिकारी कर लिया करते थे। सत्य और अहिंसा का आन्दोलन चलाने के लिये हमने निःसाहिचक से असत्य और कपट का प्रयोग किया।

तथा कथित अहिंसक का छलबल-प्रेम

हम सब अपनी अहिंसा की नीति समझाने के लिए सार्वजनिक सभायें कराते थे तो कई बार हमारे कुछ प्रतिपक्षी हमारी सभाओं में आकर हंगा-बखेड़ा किया करते थे। अपनी अहिंसा प्रचार की सभा में शांति रखने के लिए हम उन्हीं की टक्कर के दूसरे टंटाखोर और उपद्रव-कुशल व्यक्तियों का उपयोग कर्त्तव्य भावना से कर लिया करते थे। इन उपद्रव-प्रवीण व्यक्तियों ने हमारा पानी देख लिया। उनको यह अनुभव हो गया कि आखिर सज्जनता, शिष्टता और अहिंसा को भी असत्य और छल-बल की पनाह लेनी पड़ती है। दोनों तरफ के लोग जब उपद्रवकारियों की ही शरण लेते हैं, तो रुतबा उपद्रव-कारिता का बढ़ता है, सचाई और प्रामाणिकता का नहीं।

लोगों को झूठी गवाही देने के लिए मना करके हम उन्हें झूठी शपथ लेना सिखाते हैं। केवल झूठ बोलना ही नहीं सिखाता, व्यवस्थापूर्वक और पद्धतिपूर्वक झूठ बोलना सिखाते हैं। फलतः झूठी गवाही देना एक रोजगार बन जाता है, एक फन बन जाता है। उसे एक कला का, एक हुनर का रूप प्राप्त हो जाता है। फिर उसमें जो माहिर होते हैं, वे अपनी कुशलता पर गुमान करने लगते हैं।

हमारी करनी का नतीजा

१९३७ में जब कांग्रेस चुनाव के मैदान में उतरी तो उम्मीदवारों के खिलाफ बड़े बड़े धनपति और सत्ताधारी व्यक्ति खड़े हुए। उनके सामने उनको राय देने से इन्कार करना मतदाताओं के लिए करीब करीब असंभव-सा था। मुख्यतः लिहाज और डर के कारण वे दब जाते थे। इसलिए हम लोगों ने मतदाताओं को यह सिखाया कि तुम उनके सामने ही भर दो। उनकी मोटर में बैठ कर भी चले जाओ, उनके आदमियों से मतपत्रिका ले लो, लेकिन उसे कांग्रेस की संदूक में डाल दो। वहां तुम्हें कोई देखने नहीं आएगा। बहुत से भोलेभाले मतदाताओं ने संदूकों को हाथ जोड़ कर बड़ी पुण्य-भावना से इस असत्य का आश्रय करके कांग्रेस के उम्मीदवारों को मतदान किया। अब कांग्रेस के अंतर्गत चुनावों में भी उसी नीति का अनुसरण हो रहा है।

जिनका शांति में विश्वास है, वे भी अगर शांति की स्थापना के लिए युद्ध के ही मार्ग का अवलंबन करते रहेंगे तो युद्ध की नीति का अनुसरण कौन करेगा। जो लोग लोक-जीवन में सच्चाई और ईमानदारी का बीजारोपण करना चाहते हैं, वे भी अगर असत्य और कपट नीति का आश्रय लेने लगे तो हमारे सामाजिक और नागरिक जीवन में सत्य और शांति की प्रतिष्ठा करने की आशा को "जय राम जी" की ही करनी रहेगी।

हमको पद्धति बदलनी होगी

अपने अनुचित प्रभाव से या मित्रों के दबाव के प्रयोग से मतदाताओं से अभिवचन, शपथ या हस्ताक्षर करा लेने की हानिकारक नीति के ही ये सारे दुष्परिणाम हैं। इस नीति से साधारण जनता को हम बुद्धिपूर्वक असत्याचरण का पाठ देते हैं और उसका अभ्यास कराते हैं। इसलिए हमको मत-याचना की इस सार्वजनीन पद्धति का निश्चयपूर्वक त्याग कर देना चाहिये। हरएक व्यक्ति के पास जा-जा कर विनय-अनुनय से डरा-धमका कर, लोभ लालच दिखा कर या अन्य प्रकार से दबाव डाल कर मत-याचना करने की नीति को नाजायज़ कैनवासिंग को सर्वथा वर्ज्य समझ लेना चाहिये। इस प्रथा के कारण एक सार्वत्रिक अविश्वास का वातावरण पैदा हो गया है। मित्र मित्र का, एक दल का आदमी अपने साथी का भरोसा नहीं कर सकता। इसलिए उम्मीदवार और उनके सहायक तरह-तरह की तरकीबें काम में लाते हैं। वे मतदाताओं को घेर-घेर कर लाते हैं, सख्त निगरानी में रखते हैं, उन्हें प्रलोभनादि देते हैं और सब करने पर भी उनका पूरा-पूरा भरोसा नहीं कर सकते।

यदि हम इस देश में जनतन्त्र की स्वास्थ्यपूर्ण और कल्याणकारक परम्परा का उपक्रम करना चाहते हैं, तो हमें दृढ़तापूर्वक और निश्चयपूर्वक "कैनवासिंग" की वर्तमान पद्धति का त्याग कर देना होगा।

आर्यसमाज का कार्यक्रम

★ श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

आर्यसमाज की सब से बड़ी एक प्रधान समस्या है, उसका भावी कार्यक्रम। आर्यसमाज के वास्तविक स्वरूप की कल्पना न होने तथा सामयिक लहरों के प्रवाह में बह जाने के कारण आर्य विचारक भी भ्रम में पड़ गये हैं। विद्वान लेखक के निष्पक्ष व स्पष्ट विचार मननीय हैं और भावी कार्यक्रम के निर्धारण में सहायक होंगे, इस आशा के साथ यह लेखमाला यहां दी जा रही है।

[२]

जिन दिनों आर्यसमाज को मत-मतान्तरों के साथ संघर्ष के कारण खण्डन का कार्य अधिक करना पड़ता था, तब बहुत से आर्यसमाजी ऐसे थे जो खण्डन को आर्यसमाज का मुख्य कार्य समझते थे, और आलोचक कहते थे कि आर्यसमाजी झगड़ालू और कटुभाषी होते हैं। जब देश में फैले हुए राजनीतिक साम्राज्यवाद ने आर्यसमाज को प्रभावित कर दिया, तब जहां अनेक आर्यसमाजी विचारक यह कहने लगे थे कि आर्यसमाज का प्रधान उद्देश्य राजनीतिक झगड़े उत्पन्न करना हैं, वहां साथ ही अंग्रेजी सरकार के दिल में यह विश्वास जम गया कि आर्यसमाज का धार्मिक आवरण केवल एक ढोंग है, असल में तो वह एक बगावत पैदा करने वाली गुप्त सभा है। एक समय आया कि साम्प्रदायिक दंगों ने देश को ग्रस लिया। आर्यसमाज उनसे भी प्रभावित हुआ। उन दिनों आर्यसमाज की वेदी पर बहुत से महानुभाव यह कहते भी थे कि महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना हिन्दू जाति की रक्षा के लिए की थी। दूसरी ओर, आर्यसमाज के विरोधी भी कहने लगे थे कि आर्यसमाज एक कट्टर साम्प्रदायिक संस्था है, देश की शान्ति रक्षा के लिये उसका दमन कर देना चाहिए।

मौलिक लक्ष्य ओझल

इस प्रकार हम देखते हैं कि गत सत्तर अस्सी वर्षों में आर्यसमाज तीन अवस्थाओं में से होकर गुजरा है। उसके लिए कार्यक्रम पर समय समय पर सामयिक पैबन्द लगते रहे हैं, जो उसकी अवस्था में परिवर्तन करते रहे। इस पाबन्दी का दुष्परिणाम यह हुआ है कि आर्यसमाज का मौलिक लक्ष्य आंखों से बिल्कुल ओझल हो गया है। यही कारण है कि हरेक पड़ाव पर पहुँचकर थके हुए राही पूछते हैं कि "अब हम किधर को जावें? हमारा असली मार्ग कौन सा है?

वास्तविक लक्ष्य

आर्यसमाज का वास्तविक लक्ष्य उसके नियमों उपनियमों तथा उसकी स्थापना के समय की गई घोषणाओं से भासित होता है। आर्य-समाज के १० नियम उन मूल सिद्धांतों को प्रकट करते हैं, जिनके प्रचार और प्रयोग के लिये महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। वे मूल सिद्धांत अत्यन्त व्यापक थे। विश्व भर में उनका प्रचार आर्यसमाज का लक्ष्य है। महर्षि दयानन्द का "प्रचार" केवल वास्तविक या मौखिक नहीं था। वह व्यावहारिक था। हरेक बात जिसे वह मुंह से कहते थे, व्यवहार में कर दिखाते थे। ज्ञान और कर्म का समन्वय उनके जीवन का मूलमन्त्र था।

एक बात हमें स्पष्ट रूपसे समझ लेनी चाहिये। महर्षि का ध्येय विश्व-व्यापी था उनकी दृष्टि संसार की सीमाओं से कम में नहीं रुकती थी। सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में महर्षि लिखते हैं—

"परन्तु इस ग्रंथ में ऐसी बात नहीं रखी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी को हानि पहुंचाना इसका तात्पर्य है किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य काग्रहण और असत्य का परित्याग, करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।"

इन वाक्यों में महर्षि का दृष्टिकोण सर्वथा स्पष्ट हो जाता है। उनकी दृष्टि देश विशेष या जाति विशेष तक सीमित नहीं थी, उनका क्षेत्र सारी "मनुष्य जाति तक फैला हुआ था। सम्पूर्ण मनुष्यजाति में सत्य का प्रचार करना, और सत्य के अनुसार ही जीवन का निर्माण करना महर्षि का मुख्य लक्ष्य था।

महर्षि जिसे सत्य समझते थे, उसका मनुष्य जाति के हित के लिए प्रचार करते थे। उनका प्रचार मनसा, वाचा, कर्मणा तीनों प्रकार से था। महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए की, अपने जीवनकाल में जिस कार्य को महर्षि पूरा न कर सके, उसकी पूर्ति के लिए आर्यसमाज को स्थापित करके उन्होंने समझा था कि उनके पीछे भी सत्य के वाचिक और व्यावहारिक प्रचार का कार्य रुकेगा नहीं।

प्रधान लक्ष्य

यदि हम अत्यन्त संक्षेप से आर्य-समाज के प्रधान लक्ष्य का निर्देशन करना चाहें तो हम कह सकते हैं कि महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना मनुष्यमात्र में सत्य के वास्तविक तथा व्यावहारिक प्रचार के कार्य की पूर्ति के लिए की थी। आर्य समाज का स्थायी कार्यक्रम उस प्रधान लक्ष्य की पूर्ति करना ही है।

राजनीति और आर्य समाज

इस प्रसंग में इस प्रश्न के सम्बन्ध में कुछ शब्द लिख देना आवश्यक है कि आर्य समाज का राजनीति से क्या सम्बन्ध है? आर्यसमाज वैदिक सत्य का समर्थक और प्रचारक है। वेदों में जैसे अन्य सब धर्मों का प्रवचन है, उसी प्रकार राज-धर्मों का भी है। वैदिक राज-नीति में मनुष्य को अदीन रहने का उपदेश है, राष्ट्र की सब प्रकार से रक्षा के योग्य यज्ञ से उपमा दी गई है, और भूमि को माता के समान मान कर उस की रक्षा का आदेश दिया गया है। ऐसी दशा में यह स्वाभाविक है कि जिस देश में भी वैदिक सत्य का प्रचार होगा, उसके निवासी दास बन कर नहीं रह सकेंगे, वे स्वतन्त्र आर्य बनने का यत्न करेंगे। आर्यत्व और दासता इकट्ठे नहीं रह सकते। केवल भारत में ही नहीं, संसार के जिस देश में भी वैदिक राज-नीति का प्रचार होगा, वहां राजनीतिक जागृति अवश्य उत्पन्न होगी। बस यही वैदिक धर्म का या आर्य समाज का राज-नीति से सम्बन्ध है। केवल भारत के साथ उसका गठजोड़ा करना अनुचित है, और भ्रांति मूलक है।

साम्प्रदायिकता से तो आर्य समाज का कोई सुदूरवर्ती सम्बन्ध भी नहीं है। जो व्यक्ति एक बार महर्षि दयानन्द के मुख्य ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश पर पक्षपातहीन दृष्टि डाल जाय, वह और चाहे कुछ ही कहे, सत्यप्रकाश के निर्माता पर साम्प्रदायिक होने का आरोप नहीं कर सकता। अखिल चार समुल्लासों में उन्होंने अपनी आलोचना की मार से किसी सम्प्रदाय—या मतमतान्तर को नहीं छोड़ा। यदि महर्षि साम्प्रदायिक होते तो ११ वां समुल्लास कभी न लिखते।

महर्षि न पोलिटिकल एजीटेटर थे, और न कम्युनलिस्ट। वह तो सत्य के प्रचारक थे। उनकी दृष्टि क्षेत्र मनुष्य-मात्र तक विस्तृत था। जिसे वह सत्य समझते थे, मनुष्य मात्र में उसका वास्तविक और व्यावहारिक प्रचार करना उनके जीवन का लक्ष्य था, और क्योंकि आर्य समाज की स्थापना महर्षि के लक्ष्य की पूर्ति के लिए की गई थी, अतः आर्यसमाज का प्रधान लक्ष्य भी वही है।

आर्यसमाज साधन है— लक्ष्य नहीं

यहां एक और भ्रांति के सम्बन्ध में कुछ लिख देना भी अप्रासांगिक न होगा। चाहे हम शब्दों से न कहें, परन्तु हम में से बहुत से लोग ऐसे हैं, जो आर्यसमाज को लक्ष्य की पूर्ति का साधन न समझ कर लक्ष्य मानने लगे हैं। दृष्टान्त के लिए आप किसी आर्य समाज-सम्बन्धी कान्फ्रेंस के प्रस्तावों और व्याख्यानों को पढ़ जाइये। उसकी आर्य समाज की उन्नति की योजना के सम्बंध में विचार करते हुए यह सोचा जायगा कि आर्य समाज के सदस्य कैसे बढ़ाये जायं। आर्य समाजों की संख्या में वृद्धि कैसे हो और आर्य समाज का संगठन कैसे दृढ़ हो? उस विचार को सुन कर कभी कभी भ्रम होने लगता है कि शायद हमारा लक्ष्य मनुष्यमात्र को आर्यसमाज के सभासद् या सहायक बनाना, भूमण्डल के प्रत्येक नगर और ग्राम में यथासम्भव अधिक से अधिक आर्य समाज स्थापित करना और प्रांतिक व सार्वदेशिक सभाओं को आर्थिक दृष्टि से धनी और समुन्नत बनाना है। यह ऐसा ही है, जैसे कोई ब्राह्मण अपनी पुस्तक के पत्रों को संभालने में ही ब्राह्मणता की इति समझे या क्षत्रिय अपनी तलवार को मांज और चमका कर समझले कि मैंने क्षत्रिय धर्म का पूर्ण रूप से पालन कर लिया। हम भी यदि समझें कि केवल आर्यसमाजों की संख्या बढ़ा कर, या सभासदों की सूची में वृद्धि करके हमने महर्षिदयानन्द के लक्ष्य की पूर्ति कर ली, तो वह भयानक भ्रांति होगी। आर्य-समाज साधन है, लक्ष्य नहीं। यदि हम लक्ष्य को भुला कर साधनकी साधनामें ही लगे रहेंगे, तो हम उस सेठ की तरह उपहास्य समझे जायंगे जो संचित धन की कोठरी में प्रतिदिन धूप, दीप जला कर यह समझ लेता है कि उसने अपना जीवन सफल कर लिया। जीवन की सफलता तो धन के सदुपयोग में है, उसके पूजन में नहीं। मुझे यह देख कर दुःख होता है कि हमारी प्रवृत्ति भी धन की भरी हुई कोठरी का पूजन करने की ओर है। उसके सदुपयोग की ओर नहीं। हम यह देखते हैं कि आर्यसमाजों के कितने प्रति-निधि हैं और कितने सभासद् हैं और इस पर ध्यान नहीं देते कि आर्यसमाज मनुष्यमात्र तक सत्य का संदेश पहुंचा रहा है या नहीं? सदस्य थोड़े हों, इसमें कोई हानि नहीं। चिनगारियां थोड़ी ही होती हैं। असली प्रश्न तो यह है कि उन द्वारा सत्य के वास्तविक तथा व्या-हारिक प्रचार का कार्य भी हो रहा है या नहीं? कुछ लोग शायद यह समझ बैठे हैं कि आर्यसमाज के संगठन का उद्देश्य संसार के सब मनुष्यों को आर्य-सभासद् या सहायक बनाना है। वह

[शेष पृष्ठ २२ पर]

रद्दी चीजें भी कीमती हैं

रद्दी में फेंकी गई चीजों को नष्ट होने से बचाने के लिए ब्रिटेन में एक नया आन्दोलन प्रारम्भ हो रहा है। यह अनुमान लगाया गया है कि प्रति वर्ष लगभग दो लाख टन कागज रद्दी में फेंक दिये जाते हैं। यदि इन्हें नष्ट होने से बचाया जाय तो इनसे कई प्रकार के काम लिये जा सकते हैं। इनसे खाने की वस्तुएं तथा अन्य चीजें लपेटी जा सकती हैं और दफ्तियों के रूप में ये घरों की दीवालों और छतों में प्रयुक्त हो सकती हैं। युद्ध के दिनों में स्थानीय अधिकारियों ने लगभग पांच लाख टन रद्दी कागज एक वर्ष में इकट्ठे किये थे। ३० अक्तूबर १९४७ तक २,९०,००० टन रद्दी कागज इकट्ठे किए जा चुके थे। १९४४ के बाद से यह संख्या इतनी ऊंची कभी न पहुंची थी। १९३९ से ४७ तक ब्रिटेन में नष्ट होने से बचाई गई सब प्रकार की वस्तुएं १,५०,००,००० टन से कुछ ही कम थीं और इनका मूल्य २,८०,००,००० पौंड बताया जाता है। इन रद्दी चीजों में रसोई से निकली गई वस्तुएं, जो पालतू मुर्गियों इत्यादि को खिलाई जाती थीं, भी शामिल हैं। फेंकी गई हड्डियों से गोंद और साबुन बनाने का काम लिया गया। धातुओं की कतरन और रबर ने कारखानों में कच्चे माल का काम दिया, चिथड़ों को पहनने और घरों के सजाने के कपड़ों के रूप में परिवर्तित किया गया। यदि ब्रिटेन के प्रत्येक घर में एक पौंड अधिक रद्दी कागज निकाला जाए तो इनसे पांच हजार टन रेशे प्राप्त हो सकते हैं जिनकी सहायता से सारे देश के लिए एक महीने का चीनी का राशन पैक करने के बक्स, साठ लाख जोड़े जूतों के बक्स, सिगरेट के ८,८०,००,००० पैकट, नाश्ते की चीजों के नब्बे लाख डब्बे, साबुन की बुकनी के १,८० ००,००० पैकट ५,६०,००,००० माचिस की डिब्बियां बनाई जा सकती हैं।

●

मद्यपान पाप है

मद्यपान का किसी को अधिकार नहीं, अतः इसके निषेध से लोगों के अधिकार अपहरण का भय नहीं। जिस सीमा तक चोरी का अपराध है, मद्य का व्यापार भी उसी सीमा का अपराध मानना चाहिए।

जो मद्यपान करना चाहते हैं, उन्हें सुविधा होनी ही चाहिए, यह भ्रान्तिमूलक तर्क है। अपनी जनता के दुर्गुणों का पोषण करना राज्य का काम नहीं। चोर को चोरी करने की सुविधा नहीं दी जा सकती। मेरे मतानुसार मदिरा चोरी या व्यभिचार से भी हेय है, क्योंकि यह उपर्युक्त दोनों दुष्कर्मों की जननी है। इस प्रकार के घोर अभिशाप को देश से सर्वथा बहिष्कृत करने और प्रत्येक मद्य की दूकान को उठाने के कार्य का अत्यन्त आवश्यकता है।

—महात्मा गांधी

कितने ही प्रथम श्रेणी के साहित्यकार, कलाकार, संगीतज्ञ आदि सुरा पान के प्रसाद से ही अपने अपने क्षेत्र में विश्व मान्य कृतियों का सर्जन कर गये हैं, इस प्रकार की बद्धमूल भ्रान्ति मानव-मस्तिष्क को जकड़े हुए बैठी है।

इस सम्बन्ध में डा० ई० एच० स्टर्लिंग का कहना है—'मद्यपान के समर्थन में प्रायः ऐसे तर्क किए जाते हैं कि मद्यपीकर मनोबल भले ही कम हो जाता है, लेकिन उसकी कल्पना-शक्ति अत्यन्त विकसित हो उठती है। किन्तु कवित्व तो जन्म सिद्ध होता है। उसके लिये बाह्य उपकरण की आवश्यकता नहीं। मद्य के बिना भी उनकी कल्पना-शक्ति का विकास सम्भव था।' इस सम्बन्ध में सर विक्टर होर्सले ने भी कहा है—'इसका कोई भी आधारभूत कारण नहीं मिलता, कि अलकोहल (नशा) मस्तिष्क शक्ति को प्रोत्साहन देने वाला है मद्यार्क की किंचित् मात्रा भी मस्तिष्क की उद्बोध क्रिया शीलता में सलबली उत्पन्न कर देती हैं और इसके अधिक प्रयोग से तो मस्तिष्क का संतुलन भी नष्ट हो जाता है।'

महान् जर्मन कवि शीलरका कथन है—'मद्य मूर्खता जनन के सिवा और कुछ कर नहीं सकता।'

—डा० एच० सी० मुखर्जी

●

इन्द्र धनुष

३ का अंक

भारतीय साहित्य में ३ का अंक कितना महत्वपूर्ण है, यह श्री जगन्नाथ ने सन्मार्ग में बताया है —:

काव्य में प्रधानतः तीन ही गुण मुख्य माने गये हैं— माधुर्य, ओज तथा प्रसाद। वृत्तियां भी तीन ही होती हैं— उपनागरिका, परुषा और कोमला।

अहिंसा के मुख्य तीन प्रवर्तक हुए — बुद्ध, ईसा और गांधी।

वेद भी प्रधानतया तीन ही हैं:— ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद। ऋग्वेदादि से कुछ अंश लेकर ही चौथे वेद अथर्व वेद का आविर्भाव हुआ है।

काव्य के भी प्रधानतः तीन ही भेद हैं— उत्तम, मध्यम और अधम। अलंकार के तीन भेद हैं— शब्दालंकार, अर्थालंकार और उभयालंकार।

मानवीय जीवन में प्रधानतः तीन अवस्थाएं होती हैं:— बालापन, यौवन तथा वार्धक्य।

मानवोंकी तीन कोटियां हैं— पशु, वीर, और दिव्य।

भारतवर्ष पवित्र भूमि है। तीर्थराज प्रयाग तीर्थों का राजा समझा जाता है क्यों कि यहां की भूमि पर आकर गंगा, यमुना तथा सरस्वती नदियों की पवित्र धाराएं एक हो गयी हैं और 'त्रिवेणी' कहलाती हैं।

परमात्मा, जीवात्मा और प्रकृति की तीनों अनादि अनन्त हैं।

अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा कि 'ॐ', तत् और सत् शब्दों का क्या रहस्य है? अर्जुन को इसका रहस्य जानने को बड़ी उत्कंठा थी। श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया कि 'ॐ' तत् और सत् ये तीनों परमात्मा के ही नाम हैं। अकार, उकार और मकार से बना हुआ 'ॐ' उच्चारण प्राचीनकाल से आ रहा है।

मकार के उच्चारण के नीच आते हैं।

मनुष्य के अन्दर तीन वस्तुएं— कर्मेन्द्रियां, ज्ञानेन्द्रिय, अन्तःकरण प्रधान हैं।

कर्म भी तीन प्रकार के होते हैं — कायिक, वाचिक और मानसिक।

सृष्टि में तीन वस्तुयें प्रमुख हैं — जीव, जगत और ईश्वर।

ईश्वर सर्वश्रेष्ठ और सर्वोच्च स्थान ग्रहण करता।

सांख्यशास्त्र के अनुसार सृष्टि के सब पदार्थों के तीन वर्ग होते हैं। पहला अव्यक्त (मूल प्रकृति,) दूसरा व्यक्त (प्रकृति के विकार) और तीसरा पुरुष।

बिजली में भी तीन गुण होते हैं — दाहक, आकर्षक और द्रावक।

●

वर्तमान युग का सबसे बड़ा पाप

"वर्तमान भारत सरकार या कांग्रेस ने १९३५-४६ के चुनाव में भारत को किसी भी मूल्य पर अखंड रखने का दृढ़ आश्वासन जनता को दिया था, जनता ने विश्वास कर उन्हें मत दिया। परन्तु अचानक जून १९४७ में कांग्रेसी नेताओं ने जनमत लिये बिना ही देश को हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में विभक्त कर दिया।"

मेट्रोपिएटर्स बम्बई द्वारा आयोजित 'वर्तमान युग का सबसे बड़ा पाप' नामक ५० शब्दीय प्रतियोगिता में श्री एस० एस० अभे द्वारा दिये गये उपर्युक्त उत्तर को प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया।

●

समय ही जीवन है

समय बर्बाद मत कीजिये। जिसे हम समय कहते हैं वही तो जीवन है। जीवन के सारे घंटे, दिन महीनों और वर्षों को आप चाहें तो अपने जीवन को उच्च और सफल बनाने में लगा सकते हैं अथवा यों ही गंवा सकते हैं।

गंवाने में आप समय ही नहीं गंवाते', अपना मानस भी गंवा देते हैं।

पूर्वी यूरोप का स्टालिन—राकोसी

★ श्री सुरेशचन्द्र मिश्र

पूर्वी योरोप के 'स्टालिन तथा हंगरी के लब्धप्रतिष्ठ नेता श्री मत्यास राकोसी उन कतिपय असाधारण व्यक्तियों में से हैं, जो मार्ग में आने वाली अनेकानेक कठिनाइयों से जूझते हुए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अपूर्व कार्यक्षमता की धाक जमा लेते हैं। वे हंगरी के साम्यवादी दल के नेता, सफल पत्रकार, लेखक तथा आलोचक हैं, उपप्रधान के पद पर कार्य करते हुये भी आप राज्य के मन्त्रियों तथा अन्य उच्चाधिकारियों का मार्ग प्रदर्शन करते हैं।

अपनी लेखनशक्ति के कारण आप लालुविलासकी गारजियन, रेडियो पर गूंजने वाली आवाज के कारण डाक्टर मिंजल तथा अपने गुणों के कारण हंगरी के लेकानेन कहे जाते हैं। आप जनता के हृदय सम्राट हैं तथा आपका चित्र वहां घर घर मिलेगा। अब तक का आपका जीवन अत्यन्त संकटापन्न रहा है।

जीवन परिचय

आपका जन्म एक अत्यन्त सामान्य परिवार में हुआ। आपका प्रारम्भिक जीवन हंगरी के एक छोटे से गांव में, जहां आपके पिता स्टोरकीपर का कार्य करते थे, व्यतीत हुआ। वह गांव अब यूगोस्लाविया के शासन के अन्तर्गत चला गया है। मत्यास राकोसी की तीव्र इच्छा थी कि वह हंगरी के तत्कालीन शासन में कोई विदेशी नौकरी करे, किन्तु एक साधारण व्यापारी, विशेष कर एक यहूदी का पुत्र होने के कारण उनकी आकांक्षा अधूरी ही रह गई। विदेशी नौकरी की इच्छा पूरी न होते देख कर वह 'बुडापेस्ट औरियेन्टल एकेडेमी' में दाखिल हो गये और कुछ समय बाद ही मैट्रिक पास कर ली।

कार्य-क्षेत्र में

कुछ समय बाद वह यूरोप छोड़ कर पश्चिमी यूरोप चले गये, और लन्दन में एक साधारण-सी नौकरी कर ली। ब्रिटेन में आप कुछ ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के सम्पर्क में आये और शीघ्र ही ब्रिटेन की राजनीति में सक्रिय भाग लेने लगते यदि आपका ब्रिटिश अधिकारियों से मतभेद न हो जाता।

विश्वव्यापी प्रथम महायुद्ध में आप पुनः बुडापेस्ट लौट आये और अपने-आपको स्वेच्छा से 'आस्ट्रो-हंगेरियन' सेना में कार्य करने के लिए प्रस्तुत कर दिया। इस युद्ध में आपको रूस के विरुद्ध युद्ध करना पड़ा। फलस्वरूप आप बन्दी बना लिए गए। वह वहीं से

अ॰ राकोसी

आपके जीवन में आमूल परिवर्तन हुआ, और इस परिवर्तन से पूर्वी यूरोप की राजनीति पर बहुत प्रभाव पड़ा। बन्दी जीवन की घोर यंत्रणाओं से आप साम्यवाद की ओर झुके। इधर आपका लेनिन से परिचय हो गया, और आप एक कट्टर साम्यवादी बन गये। युद्ध की समाप्ति पर आप पुनः बेलाकुन के शासनान्तर्गत हंगरी का निरीक्षण करने गये और शीघ्र ही व्यापार कमिश्नर नियुक्त हो गये। थोड़े दिनों बाद आपने रूमानिया और चैकोस्लाविया के विरुद्ध युद्ध में सेनापति का काम किया। किन्तु सन् १९१९ में बेलाकुन के शासन को कुचल दिया गया। इस युद्ध में पराजय के बाद राकोसी रूस चले गये, जहां आप वैदेशिक कूटनीति के सफल राजनीतिज्ञ सिद्ध हुये।

गुप्त संगठन

साम्यवादी दल का गुप्त रूप से संगठन करने के उद्देश्य से आप पुनः हंगरी आये, किन्तु अपने ही दलीय साथियों के विश्वासघात के कारण पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिए गये। आप पर न्यायालय में मुकद्दमा चलाया गया, जिसकी हलचल उन दिनों समस्त विश्व में रही। अन्तर्राष्ट्रीय सहानुभूति प्राप्त होने के कारण आपका ८॥ वर्ष मृत्युदंड की कारावास में परिवर्तित कर दिया गया। कारावास की अवधि समाप्त होने पर, आप पर भूतकालीन बेलाकुन के शासन में जन-हत्या तथा राजद्रोह का अभियोग लगाया गया और आप पुनः बन्दी बना दिये गये। जन-सहानुभूति ने पुनः आपका साथ दिया, और आप दूसरी बार भी मृत्यु के मुख में जाते-जाते बच गये। आपको घोर परिश्रम सहित आजन्म कारावास का दण्ड दिया गया। कारावास की अवधि समाप्त करने पर आपने हंगरी के प्रसिद्ध तथा लोकप्रिय नेता के रूप में पर्याप्त ख्याति प्राप्त की। आज भी हंगरी की जनता के हृदय सम्राट हैं।

बी॰ सी॰ जी॰ रामबाण नहीं है!

★ श्री अशोक

आज हमारा स्वास्थ्य विभाग बी. सी. जी. के टीकों पर आवश्यकता से अधिक ध्यान दे रहा है। बी. सी. जी. के जन सम्पर्क अधिकारी के कथनानुसार एक पंच वर्षीय योजना के अन्तर्गत २०० दलों को टीका लगाने के काम की शिक्षा दी जायगी और यह दल दस करोड़ व्यक्तियों को टीका लगाएंगे। इस योजना पर प्रारंभ में तीन करोड़ रुपये व्यय होगा और फिर प्रतिवर्ष तीन करोड़ रुपये और। इस कार्य के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ से भी दस लाख डालर की सहायता प्राप्त हुई है।

एक ओर तो भारत में बी. सी. जी के टीकों को इतना अधिक महत्व दिया जा रहा है, जब कि दूसरी ओर अनेकों विद्वान् डाक्टर बी. सी. जी. के टीकों की उपयोगिता पर संदेह कर रहे हैं। अभी तक इस विषय की जांच हो रही है। इंग्लैंड तक में अभी तक बी. सी. जी के टीकों को साधारण जनता के लिये प्रचलित नहीं किया गया। एक बार पहले भी ऐसी घटना हो चुकी है। १९३८ में एक औषधि सलफानिलेमाइड बनाई गई थी और बिना पूरी जांच के रोगियों को दे दी गई थी। परिणामस्वरूप ७१ व्यक्तियों को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ गया, और इस दवाई का प्रयोग का कारण था व्यापारियों का झूठा प्रचार। और आज भी वह व्यापारी बी. सी. जी के टीकों के सम्बन्ध में इसी प्रकार का प्रचार कर रहे हैं। और क्योंकि यू. एन. ओ. इस सम्बन्ध में दस लाख डालर की सहायता दे रही है, इसलिये हमें तीन करोड़ रु० स्थायी रूप से और फिर तीन करोड़ रुपये प्रतिवर्ष का व्यय करना चाहिए, एक थोथी सी दलील ही है।

अब तक सब प्रकार के टीके, चाहे वे हैजे के हों या चेचक के हों अब तक सफल सिद्ध नहीं हुए। उनसे लाभ के स्थान पर हानि ही अधिक हुई है। सारा पाश्चात्य चिकित्साशास्त्र कुत्तों, बिल्लियों और चूहों के ऊपर हुए परीक्षणों पर ही निर्भर है, जो मनुष्य के सम्बन्ध में किसी प्रकार सत्य सिद्ध नहीं हो सकते। यही कारण है कि महात्मा गांधी इस प्रकार के टीकों के विरुद्ध थे और उन्होंने सारी आयु एक भी टीका नहीं लगवाया।

इसलिए भारत सरकार को बी. सी. जी. के टीकों पर व्यर्थ रुपया नहीं बहाना चाहिये। इसके विपरीत सरकार को चाहिए जनता के साधारण स्वास्थ्य पर इस धन को व्यय करना चाहिये। सरकार को चाहिए कि ग्रामीणों को साफ रहना सिखाए।

अगर विश्व स्वास्थ्य संस्था कुछ करना चाहती है तो उसे चाहिए कि वह भारत में हर जगह थूक फैंकने के विरुद्ध एक आन्दोलन शुरू करे। इस संस्था को चाहिये कि यहां के होटल और रैस्टोरैंट वालों को स्वच्छ रहना सिखावे। आज के अधिकतर भारतीय होटल गंदगी और बीमारी के घर हैं। अगर विश्व स्वास्थ्य संस्था वास्तव में कुछ करना चाहती है तो उसे इन होटलों की दशा सुधारनी चाहिये।

आज आवश्यकता इस बात की है कि स्वास्थ्य के साधारण नियमों से जनता को परिचित किया जाये। पुरानी कुप्रथाओं आदि को दूर किया जावे।

आज हम अपने ग्रामों में बिना नाक बन्द किये हुए चल नहीं सकते। इतनी अधिक धूलादि और बदबू वहां होती है कि वहां कोई भी रहना पसन्द नहीं करता। यही कारण है कि जब एक आदमी गांव से आकर शहर में बस जाता है तो वह फिर वापिस जाने का नाम नहीं लेता। जिन नालों में वे स्नान करते हैं, उसी पानी पीने को ले लेते हैं। और इसका कारण यह है कि अब तक सरकार ने इस ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया। इस ओर ध्यान देना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है। अगर हमने इस ओर ध्यान न दिया तो हमारी जनता का स्वास्थ्य कभी ठीक नहीं हो सकता भले ही हम कितने बी. सी. जी. के टीके लगाएं।

जनता में इस प्रकार के कार्यों का प्रसार करने के लिए हमें डैनमार्क के उपाय का अवलम्बन करना चाहिये। वहां पर विद्यार्थी वर्ष में कई बार ग्रामों में जाकर अन्य ग्रामीणों के साथ जाकर खेतों आदि पर काम करते हैं। ग्रामीणों के साथ रहने पर वे जहां उन्हें खेती के काम में सहायता करते हैं, उन्हें स्वच्छ एवं स्वस्थ रहने के उपाय भी बताते हैं। अगर यह अपनाएं तो हम अपने ग्रामों में क्लब, पुस्तकालय, औषधालय आदि भी खुलवा सकते हैं।

आज इन बातों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।❀

❀ एक अंग्रेजी लेख के आधार पर।

आधी दुनिया

स्त्री की स्वतन्त्रता से राष्ट्र नष्ट हो जाते हैं !

अभी कुछ दिन पूर्व सस्सेक्स नगर में लार्ड जस्टिस डेविंग नामक एक अंग्रेज न्यायाधीश ने भाषण देते हुए कहा था कि मुझे सन्देह है कि स्त्री जाति को दी जाने वाली स्वतन्त्रता कभी भलाई के लिए हो सकती है।' उन्होंने सभा को स्मरण दिलाया कि स्त्री की स्वतन्त्रता रोमन-समाज के लिए एक भारी अभिशाप सिद्ध हुई। इसके कारण रोमन-समाज में सदाचार का ह्रास हुआ और दाम्पत्य-जीवन के पवित्र बन्धन का जैसा पतन हुआ, उसका परिचय पाश्चात्य जगत को इससे पहले कभी नहीं हुआ था। नैतिकता के ह्रास के कारण ही रोमन-साम्राज्य का पतन हुआ। उनके कथनानुसार आधुनिक जगत में स्त्री केवल स्वतन्त्र ही नहीं, वरं कानून की वह एक उच्छृंखल प्रेयसी है, और पुरुष एक सहिष्णु भारवाहक घोड़े के समान है। कानून ने पति पर भारी दायित्व का बोझ लाद दिया है, उसे पत्नी का भरण-पोषण करना ही पड़ेगा और इसके लिए उसे घर के बाहर कोई न कोई काम-धन्धा करना ही होगा। इस पर भी पत्नी अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए अपने पति के नाम से कोई भी वस्तु उधार ले सकती है; परन्तु वह बेचारा ऐसा नहीं कर सकता, चाहे उसकी स्त्री कितनी ही धनाढ्य हो और चाहे वह कितना ही कमाती हो। स्त्री अपनी संपत्ति को सुरक्षित रखने के लिए पति पर अदालत में मुकदमा चला सकती है, परन्तु पति इस मामले में असहाय है, वह ऐसा नहीं कर सकता है। यदि पति-पत्नी में कहीं अनबन हो गई या विच्छेद की नौबत आ गई तो स्त्री के पास जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त साधन न होने पर और उस अवस्था में जबकि उसने अपने व्यवहार से अपना अधिकार नहीं खो दिया है, अदालत पुरुष को ही बाध्य करेगी कि वह स्त्री के जीवन-निर्वाह के लिए प्रबन्ध करे। पुरुष बेचारे को नियमानुसार बाध्य होकर यह सब करना पड़ेगा।

लार्ड जस्टिस डेविंग ने स्त्री-पुरुष की समानता के प्रभाव पर इसी प्रकार की और कई एक सरल दलीलें दी हैं, उनका कहना है कि— 'स्त्री जब घर के बाहर किसी काम को करने लगती है, जो वह उसे अन्य पुरुष के अधिक सम्पर्क में ला फेंकता है, वहां उन प्रलोभनों में फंस सकती है, जो उसे घर पर सुलभ नहीं होते।' अधिक स्वतन्त्रता देने से स्त्री के अधिक बिगड़ जाने की संभावना है, ऐसा उनका मत है। रोम में ऐसी स्वतन्त्रता का यही दुष्परिणाम हुआ है।

स्त्रियों का मूल्य

ब्रिटेन के 'विवाहिता महिला-संघ' ने पिछले दिनों एक नया आन्दोलन चलाया था। तलाक के मुकदमों में व्यभिचारिणी स्त्री के पति को उस स्त्री के प्रेमी से हर्जाना दिलाया जाता है। हर्जाने की रकम अदालत द्वारा आंकी जाती है। संघ का कहना है कि 'यह तो स्त्रियों की पशुवत बिक्री है। जो स्त्री दूसरे के साथ भाग जाती है, उसका तो मूल्य आंका जाता है, पर जो घर के काम में पिसती है, उसका कोई मूल्य ही नहीं। फिर किसी स्त्री के लिए ५० तो किसी के लिये ५०० और किसी के लिए ५००० पौंड हर्जाना देना पड़ता है। सब स्त्रियां समान ही हैं, फिर यह भेद क्यों, अतः संघ की राय में हर्जाने की प्रथा एकदम बन्द कर देनी चाहिये। यदि देखा जाय तो हर्जाने का नियम तलाकों पर कुछ रोक अवश्य रखता है। कोई युवक हर्जाना देने के भय से सहसा किसी की स्त्री को नहीं भगायेगा। यदि यह नियम हटा ही दिया जाय तो फिर किसी स्त्री को भी अपने पति से प्रेम करने वाली दूसरी स्त्री पर मुकदमा चलाने और अपने पति से गुजारा पाने का अधिकार न देना चाहिए। सम्भव है कि महिलाओं के आन्दोलन के विरोध में पुरुषों की ओर से इस तरह का आन्दोलन चलाया जावेगा। पश्चिम में जो भी न हो थोड़ा है।

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी मसूरी के सवोय होटल में सौन्दर्य प्रतियोगिता हुई, जिसमें कुमारी शीला केवलरामानी को मिस शिमला की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी चुना गया।

आपके पति ....

—क्रोधी हैं ? तो आप नम्र बनें, उनके स्वभाव में सुधार निश्चित है।

—का कद छोटा है ? तो टिप्पणियों की परवाह न करें—याद रहे अपनी चीज अपनी ही है।

—धनी हैं ? तो आप अनादि काल तक उनकी आभारी नहीं। वे जो कुछ भी देते हैं, आप उसके योग्य हैं, अगर आप गुणी हैं ?

—निर्धन हैं ? तो दोषारोपण न करें, जो है उससे ही सुख बरसायें, उन्हें अपनाने की चेष्टा करें, उन्हें नीचा देखने का अवसर न दें।

—अति व्ययी हैं ? तो कुटुम्ब के आर्थिक कार्यक्रम का भार ग्रहण करने में पीछे न हटें, यह आदत सराहनीय नहीं, इसे किसी भी मूल्य पर [illegible] कीजिये।

—चतुर हैं ? तो उनसे प्रतिद्वन्द्विता करने की चेष्टा न करें। ऐसे लोग शान्त और नेक पत्नी पसन्द करते हैं।

—घर में रहना ही अधिक पसन्द करते हैं ? तो आप उन्हें घर पर आराम और सुख दें, वे आपको बाहर अवश्य ले जायेंगे।

विविध समाचार

● महिलाओं के नेकर पहिनने पर रोक लगाने के प्रश्न पर ओटावा (कनाडा) शहर के दो धार्मिक दलों में संघर्ष पैदा हो गया है। रोमन कैथलिकों ने शहर कौंसिल से महिलाओं के नेकर पहनने पर रोक लगाने की मांग की है। प्रोटेस्टेंट चर्च की जनरल कौंसिल ने प्रस्ताव का विरोध करने का निश्चय किया है। प्रोटेस्टेंटों का कहना है कि नेकर-विरोधी कानून से व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर आघात होगा, जीवन में बन्धन पैदा होगा और मित्रता की भावना संकुचित हो जायगी।

मॉन्ट्रियल और क्यूबेक में, जहां कैथलिकों का बहुमत है, महिलाओं के नेकर पहनने पर रोक लगा दी गयी है।

● कानपुर में एक शादी (निकाह) की रस्म अदा की गई जब कि दूल्हे (पाकिस्तान नौसेना के एक अफसर) ने टेलीफोन द्वारा अपनी दुलहन (अवध के नवाबों के खानदान से सम्बद्ध) को अपनी सहमति प्रकट कर दी। दूल्हा उत्तरप्रदेश-सरकार के मत्स्य-विकास अधिकारी वजीरहसन का लड़का है।

● उड़ीसा सरकार के स्वास्थ्य विभाग ने कटक के रामचन्द्र भंज मेडिकल कालेज में एक साप्ताहिक गर्भनिरोध कार्यक्रम चलाने का निश्चय किया है।

● जोहन्सबर्ग में दो जुड़वां बच्चे एक सप्ताह के अन्तर से पैदा हुए हैं। पहले लड़का पैदा हुआ और उसके ठीक एक सप्ताह बाद लड़की जन्मी। दोनों बच्चे स्वस्थ हैं।

● १४ वर्ष पुरुष रह कर गत ६ महीनों में मंगलपुर (कानपुर) का नाहरसिंह नामक एक लड़का बड़े आश्चर्य-पूर्ण ढंग से एक पूर्ण विकसित स्त्री बन गया और अभी हाल ही में उसने एक नवयुवक से विवाह भी कर लिया है।

कहा जाता है कि यह लड़का अपने गांव की एक चक्की में काम करता था। चौदह वर्ष तक उसके सभी अवयव बिल्कुल ठीक अवस्था में थे। एकाएक गत ६ महीनों के अन्दर उसके शरीर में परिवर्तन होने लगे और वह एक युवा बालिका के समान हो गया। आकस्मिक आकर्षण के कारण गांव के सभी आदमी उसे देखने लगे, जिसकी रिपोर्ट बाद में पुलिस को भी गई। लोगों के कहने पर उसने हाल में एक नवयुवक से विवाह कर लिया है।

क्या अमरीका कोरिया में अणुबम प्रयुक्त करेगा ?

● श्री सूरजनारायण सक्सेना

वास्तव में आजका घटनाचक्र इतनी गति से चल रहा है कि आज जो मत प्रकट किया जाय, वह संभव है प्रकाशित होते होते एक असामयिक और निरर्थक बात हो जाय। अमरीका और ब्रिटेन के कई सुप्रसिद्ध और प्रभावशाली नेताओं और राजनीतिज्ञों ने यह प्रस्ताव किया है कि जनरल मैकार्थर को कोरिया में अणुबम काम में लाने की छूट दे दी जाय। जैसे जैसे अमरीका की सेनायें पराजित होती जा रही हैं इस प्रकार का विचार इन दोनों देशों में प्रबल होता जा रहा है, क्योंकि कोरिया युद्ध में अमरीका युद्ध नहीं लड़ रहा किन्तु प्रतिष्ठा गंवा रहा है। विश्व की प्रमुख शक्ति इस प्रकार एक छोटे से राष्ट्र द्वारा इस दुर्गति को प्राप्त हो—यह न तो स्वयं उसको और न उसके मित्रों को, जिन की प्रतिष्ठा और सुरक्षा भी आज अमरीका के साथ बन्धी हुई है, कभी सहन हो सकता है। अत उत्तरी कोरिया नहीं वरन् रूस पर आतंक जमाने की दृष्टि से कुछ लोगों की दृष्टि में अणुबम द्वारा युद्ध का शीघ्र निर्णय करना अनिवार्य है। पर यह देखना आवश्यक है कि क्या अणुबम के प्रयोग से अमरीकाको कोई अधिक लाभ होने वाला है। मैं यहां फिर यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि हमारे हाथ में आज न तो अणुबम है और न हमारे वश में उसका प्रयोग। इस कारण अमरीका के कर्णधार क्या सोचते हैं और वे इस युद्ध में किस सीमा तक जा सकते हैं, यह हमें पता नहीं। फिर भी सारी परिस्थिति का सिंहावलोकन करना आवश्यक है।

जापान और कोरिया के भौगोलिक भेद

हीरोशीमो पर गत महायुद्ध का शीघ्र अन्त करने के लिए अमरीका ने अणुबम छोड़ा था। यह ठीक है कि वह अणुबम आजके अणु और उद्जन बमों की तुलना में एक पटाख़ा जैसा था। पर कोरिया की भौगोलिक स्थिति अत्यंत भिन्न होने के कारण मेरे विचार में इन बमों का भी इतना विनाशकारी परिणाम नहीं होगा। उत्तरी कोरिया एक पहाड़ी प्रदेश है। मैदान बहुत कम और घाटियों के रूप में ही है। जापान की भांति कोरिया की जनसंख्या बहुत कम है, अत टोकियो हीरोशीमो ओसाका याकोहामा नागासाकी जैसे विशाल घने और एक दूसरे से बहुत निकट नगर नहीं है। जापान के इन बड़े नगरों की जोड़ का कोई भी नगर उत्तरी कोरिया में नहीं है। अणुबम जापान पर डालने में अमरीका के दो मन्तव्य थे और यह सदा ही कहते रहे है कि प्रथम तो जापानके युद्ध सामग्री के कल कारख़ाने नष्ट हो जायें और दूसरे यह कि जापानियों का साहस टूट जाय। दोनों ही बातों मे अमरीका के हित म वाञ्छित परिणाम निकला।

उत्तरी कोरिया में उद्योग धन्धों की दक्षिणी कोरिया से कहीं अधिक बहुतायत है अवश्य परन्तु फिर भी अधिकतर युद्ध सामग्री तो रूस के कारखानों और अड्डों से आ रही है और वह निरंतर आती रहेगी। जिस प्रकार काश्मीर में रावलपिंडी स्यालकोट, और सीमा प्रांत के अड्डों से सहायता मिलते तक आज़ाद काश्मीर की सेनाओं को खदेड़ कर निश्चिंतता से नहीं रहा जा सकता। उसी प्रकार सिर्फ उत्तरी कोरिया के अड्डे और कारखानों को नष्ट करने से काम नहीं चलेगा। साथ ही वह किन्हीं २-४ बड़े नगरों में ही सीमित नहीं इस पहाड़ी देश के भिन्न भिन्न भागों में बिखरी हुई हैं। सेना का भी इसी प्रकार कोई केन्द्र नहीं है। प्राय द्वीपमें पूर्व से पश्चिम तक युद्ध का मोर्चा फैला पड़ा है अत एक सांकेतिक अणु अथवा उद्जन बम से काम नहीं चलेगा। यदि युद्ध का निर्णय ही करना ही है तो अमरीकाको कई बमों के प्रयोग से ही इष्ट सिद्ध हो सकता है।

जापान के सैनिकों का सैनिक अड्डो पर प्रभाव

जैसे पहले कहा जा चुका है कि हीरोशीमा वाले अणुबम से आज का अणुबम और उद्जन बम सैकड़ों गुना अधिक विनाशकारी है, इस कारण यह भी संभव है कि कोरिया में डाले गए बमों का प्रभाव १०० मील समुद्र पार के जापानी नगरों और अड्डो पर भी पड़े और अपने ही शस्त्र से अपना और जापान का विनाश हो। इसके अतिरिक्त कोरिया और जापान के बीच जापान सागर में आज अमरीका की भारी नौ सेना पहुँच चुकी है। अत इन बमों से इतने निकट होने के कारण वह भी नष्ट हो सकती है। और यह संभव नहीं कि अपनी सारी सेना और नौ सेना पहले वहां से हटा लें और फिर बमों का प्रयोग करें।

बदनामी और नैतिक पतन

अभी तक अमरीका अपने प्रभूत-प्रचार और २७ अन्य राष्ट्रों के समर्थन प्राप्ति के पश्चात् भी संसार को पूर्णतया यह विश्वास नहीं दिला सका है कि कोरिया के घरेलू झगड़े मे पड़ कर उसने अन्याय नहीं किया है। प्राय सभी समर्थक राष्ट्रों मे एक बहुत बड़ा जनसमुदाय ऐसा है जो अमरीका को आक्रांता मानता है और रूसी प्रभाव की शेष आधी दुनिया तो उसके विरुद्ध है ही।

एशियावासियों के हृदय मे अमरीका के प्रति कोई सद्भावना नहीं है। समस्त एशियायी देश समझते हैं कि अमरीका और रूस दोनों ही अपने स्वदेश से हजारों मील दूर अपने बल-परीक्षा और अस्त्रपरीक्षा मे निरपराध काली और पीली जातियों का रक्त बहा कर स्वयं इससे विजय लाभ करना चाहते हैं और क्योंकि इस युद्ध में अमरीका की ओर से पहल हुई है अत उसके विरोध मे काफी जनमत है। यदि रूस प्रत्यक्ष रूप से पहल करता, तो उसके विरुद्ध भी इतना ही जनमत होता। घटनास्थल के अत्यन्त निकट होने के कारण जापान के लोग अपनी जीवन सुरक्षा के विषय में बहुत चिंतित हैं। विवशता के कारण वह अमरीका द्वारा अपने देश को सैनिक अड्डा बनाने का विरोध नहीं कर सकते। पर प्रत्येक जापानी अपने को रूस और अमरीका दो पाटों के बीच पिसता देख कर क्षुब्ध है। अमरीका भी इस उदासीनता और क्षोभ को समझता है। अत जापान के हार्दिक सहयोग के बिना अमरीका अणुबम द्वारा जनित वैधानिक और नैतिक प्रतिक्रिया से डरता है।

राजनीतिक उलझनें

सिंगमनरी की लोकप्रियता का तो इसी मई मास में हुये चुनावों से प्रकट हो जाती है कि उसके दल को २१० में से केवल ५० स्थान प्राप्त हुये हैं। अत ऐसे व्यक्ति के समर्थन मे उसी के देशवासियों को अणुबम से भून कर अमरीका दक्षिणी कोरिया के पक्षको नैतिक बल प्रदान नहीं कर सकता।

सबसे बड़ी उलझन रूस के रवैये ने उत्पन्न कर दी है। रूस अप्रत्यक्ष रूप से सब कुछ कर रहा है। पर इतना ही मान कर युद्ध की सारी योजना नहीं की जा सकती। अभी तक प्रत्यक्ष रूप से अमरीका की भांति वह युद्ध क्षेत्र में नहीं

[illegible] में अणुबम का परीक्षण हुआ [illegible] दिया से दक्षिण पूर्व में बहुत दूर समुद्र में किया गया था। वह विराट् जहाज नगर हो गया था।

झेंप

लेखक—
श्री [illegible]बिहारी एम० ए०

झेंप पर लेख लिखते हुए भी कुछ झेंप सी आती है। लोग कहेंगे कि क्या हिन्दीके शब्द-कोश का दिवाला निकल गया जो "झेंप" जैसे ग्रामीण शब्द पर साहित्यिक निबन्ध लिखे जाने लगे। संस्कृतज्ञ कहेंगे कि इसके स्थान पर व्रीड़ा अथवा लज्जा का प्रयोग किया जाय, अधिक दयालु हिन्दुस्तानी भाई इसके स्थान पर शर्म अथवा संकोच की सिफारिश करेंगे। पर थोड़े से गंभीर विचार से ही यह स्पष्ट हो जायगा कि इस तथाकथित ग्रामीण शब्द का भाव और अन्य इसके पर्यायवाची शब्दों की नागरिकता के लिए असाध्य सा ही है।

झेंप और लज्जा आपको एक ही बाजार में नहीं मिल सकते और न आप इसको एक ही थैले में रख सकते हैं। लज्जा झेंप से अधिक कोमल व सुन्दर वस्तु है। उसका क्षेत्र भी इतना व्यापक नहीं है। बालाओं, ललनाओं और कवियों में ही उसका उपयुक्त स्थान है। जब कि स्कूल और कालेज की भूमि पर पहला कदम रखने वाले छात्रों से लेकर यू. एन. ओ. के रंगमंच पर लम्बा भाषण झाड़ने वालों तक झेंप का साम्राज्य है। लज्जा अपने धारण करने वाले का एक आवश्यक अंग मानी जाती है और इसीलिए "निर्लज्ज" आदि गालियों की गिनती में आती है; किन्तु इससे ठीक विपरीत झेंप झेंपू के हृदय का कांटा और उसके सामाजिक जीवन की नीरसता का कारण होती है। लज्जा का सम्बन्ध भावना से होता है और झेंप का मस्तिष्क से। हां, रंग दोनों का लाल है, इसीलिए मनुष्य बहुत धोखे में आ जाते हैं।

लज्जा जन्मजात साथिनी होती है और उम्र के साथ व अनुभव के साथ, धीरे धीरे घटती जाती है; पर झेंप बाद में पैदा होती है और धीरे धीरे बढ़ती जाती है। ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो एक फौज के बर्बर कमाण्डर में लज्जा उत्पन्न करने की कल्पना कर सके? परन्तु यदि उसके विरोधी पक्ष का कमांडर उससे अधिक रणकुशल हुआ तो वह अपनी बाजगाजियों से उसे झेंपा अवश्य देगा। लज्जित होने के बाद साधारणतया क्रोध उत्पन्न होना जरूरी नहीं है. पर दबा हुआ क्रोध झेंप का सदैव अनुगामी रहता है। संक्षेप में लज्जा एक गुण है और झेंप एक बीमारी।

कोई कोई लोग झेंप का इलाज करते देखे गये हैं। किन्हीं का खयाल है कि एक स्थान छोड़कर दूसरी जगह चले जाने से यानी आबहवा बदल लेने से वह आसानी से दूर हो जाती है। पर डाक्टर लोग जानते हैं कि यह केवल भ्रम है। जब कोई झेंपू महोदय नये स्थान में जाकर अपनी वाक्पटुता और "झेंप-हीनता" का झंडा उड़ाने लगते हैं, तो श्रोताओं अथवा दर्शकों में से किसी एक के मुंह पर भूल से आई हुई ओछी मुस्कान की एक मात्र रेखा ही उनकी झेंप की झोली को बिखेर देती है और अल्पकाल में ही लोगों की हंसी और उन महाशय की झेंप मिलकर उस नये स्थान की सड़कों, बाजारों और गली कूंचों में घूमने लगती हैं।

हंसी और झेंप का चोलीदामन-का साथ है। हंसी को झेंप से भिन्न और झेंप को हंसी से अभिन्न और कोई वस्तु नहीं जंचती। वास्तव में दोनों एक दूसरे की वृद्धि में सहायक होती हैं। यहां तक कि यदि दोनों को अधिक समय तक पास-पास रखा जाय तो हंसी बढ़ते-बढ़ते ठहाका, कहकहा और अट्टहास बन जाती है और झेंप बढ़ते-बढ़ते गुरगुराहट, झपकी, खिसियाहट और अन्त में आंसू बन जाती है।

मेरी पहली उपमा शायद ठीक नहीं बैठी। हंसी और झेंप में चोली दामन का-सा नहीं, नाखून और गंज का-सा साथ है। दोनों एक दूसरे के दुश्मन हैं पर एक दूसरे के बिना नहीं रह सकते। गंज नाखूनों को निमन्त्रण देती है और उनके विछोह पर रोने लगती है—आनन्द से नहीं अघाय के। इसी प्रकार झेंप हंसी के चले जाने पर रह रह कर खलती है।

जब झेंप की बीमारी असाध्य अवस्था में पहुंच जाती है तो कभी-कभी अकेले में बैठे बैठे भी इसका दौरा आने लगता है। ऐसे सज्जन से आप जा कर मिलिए और पूछिए—'क्यों श्रीमती, अकेले में बैठे बैठे क्या कर रहे हो?' तो उनकी मूक कुछ खिसियाई हुई मुद्रा से उत्तर मिलेगा 'कुछ नहीं,' झेंप रहा था यहां झेंप की सीमा आ जाती है। इसके आगे भी यदि आप उस व्यक्ति को छेड़ेंगे तो वह पागलपन के प्रदेश में पहुंच जायगा और कुछ समय पश्चात् आप उसे किसी नाली के किनारे फटे पुराने कपड़ोंमें बाल-बच्चों पर पत्थर फेंकते हुए पाएंगे।

पर बहुधा झेंप मनुष्य को इतना शीघ्र अपने कब्जे में नहीं कर लेती है। अधिकतर यह मनुष्यों के एक भाग पर ही अपना अधिकार करती है। ऐसे अनेक मित्र आपने देखे होंगे, जो अन्य सब विषयों पर तो बड़े निःसंकोच रूप से बातें करते चले जायंगे, पर एक विशेष विषय आते ही झेंपने लगेंगे। जिस भाग में मनुष्य की दुर्बलता बार-बार छू जाती है, वही उसके झेंप का विषय बन जाता है। एक बार इस सीमा में आने के बाद फिर उस दुर्बलता का जाना कठिन हो जाता है—और यदि दुर्बलता चली भी जाय तो झेंप तो बनी रह जाती है।

इस प्रकार झेंप दुर्बलता के पदचिन्हों के समान है। यहां यह बात ध्यान में आने योग्य है कि दुर्बलता की [illegible] चाहे अस्थायी क्यों न हो—दुर्बलता के परिणाम अवश्य चिरस्थायी होते हैं। दुर्बलता वास्तव में सबलता से अधिक सबल होती है यही कारण है कि झेंप कीर्ति से अधिक व्यापक, प्रबल और स्थायी होती है।

अधिक मनोबल द्वारा झेंपको कीर्ति कीप्रथम सीढ़ी बनाया जा सकता है। पर उस अवस्था में भी अपनी कीर्ति अपने मुंह पर ही सुन कर आपको फिर कुछ झेंपने का आडम्बर अवश्य करना होगा। इस प्रकार की बनावटी झेंप लज्जा के बहुत पास आ जाती है।

लज्जा को झेंप और अच्छी [illegible] की साड़ी पहना दीजिए, वह 'व्रीड़ा' बन जायेगी। संकोच लज्जा का हाशिया है और गुणों की आंखों में मनुष्यों में वह शील कहलाने लगता है। शर्म का संबंध कुछ पाप और रहस्य से है। इसलिए चाहे हम कितना ही झेंपें, हमें हिन्दी के शब्दकोश में झेंप शब्द रखना ही होगा।

ठरा है। अतः सम्भव रूस के विरुद्ध भयानक अस्त्रों का प्रयोग अमरीका कर सकता है, वह इन्हें से उत्तरी कोरिया के विरुद्ध करने से हिचकता है। और अभी रूस को जब तक कि उत्तरी कोरिया की सेनायें विजयी हैं, युद्ध में कूदने की भला क्या आवश्यकता है। इस समय अपनी इज्जत आबरू बचाने के लिए अमरीका के तो हित में है कि वह चीन या हिन्दचीन अथवा युरोप तक युद्धक्षेत्र को बढ़ाये परन्तु रूस समझता है कि कोरिया की भांति और स्थानों में भी अमरीका द्वारा हस्तक्षेप करा कर उसको बदनाम करे, जिससे भिन्न देशों की सरकारों की ओर से यह बने, उनको अपने देशवासियों तक का पूर्ण सहयोग न मिल पाये। आज हम अपने ही देश में अमरीका के पक्ष और विपक्ष में बराबर का जनमत देखते हैं।

यह भी सम्भावना है कि रूस सारे कोरिया को अमरीकी अणु और उद्-जन बमों से श्मशान भी बन जाने दे और चुप रहे क्योंकि इस समय उत्तरी कोरिया के परास्त हो जाने से भी उसकी इतनी मानहानि नहीं है जितनी दक्षिणी कोरिया के हारने से अमरीका की। इन कारणों को दृष्टि में देखते हुए रूस के बिना युद्ध में आये अमरीका द्वारा अणु-बम का प्रयोग संभव नहीं दिखाई देता। पर कौन जाने, युद्ध के उन्माद में अमरीका नागरिक परिस्थिति और न्याय-संगति को ठुकरा भी दें।

जीवन की अन्तिम खोज

★ अनु० श्री सुशीलकुमार जौहरी

"क्या आप ताश की कुछ मनोरंजक चालें जानना चाहते हैं ?"

मैं कुछ भौंचक्का सा रह गया। कुछ समय बाद मैं यह समझ सका कि इस अनजान व्यक्ति के यह शब्द मेरे ही लिए कहे गए हैं और मैंने एकाएकी देखा कि उस डिब्बे में केवल मैं ही दूसरा व्यक्ति था। कलकत्ता, बम्बई एक्सप्रेस बड़ी तेजी से उस लम्बी यात्रा को पार कर रही थी। डिब्बे के अन्दर लैम्प का धुंधला सा प्रकाश था। रात घोर अंधेरी थी।

ताश खेलने वाला तरुण अवस्था का एक सुन्दर युवक था। इसकी आंखों में चंचलता परन्तु कुछ मलीनता थी। एक मुस्कान उसके होठों पर खेल रही थी। मुझे ताश के खेलों से विशेष रुचि न थी, परन्तु मैं उसकी तत्परता से समझ गया कि वह बातचीत करने के लिए एक साथी बनाना चाहता है। केवल हम दोनों ही उस डिब्बे में थे, बाहर घटाटोप अंधेरा, और अगले स्टेशन का लम्बा रास्ता, यह सब प्राकृतिक था।

"मैं तो केवल ताश का एक नव छात्र हूं," मैंने कहा फिर भी यदि आप ताश के कुछ खेल दिखायेंगे तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी" और मैं उसकी चतुराई को देखने की प्रतीक्षा करने लगा यद्यपि मुझे इसका कुछ भी विश्वास न था कि वह अब क्या करने वाला है। लेकिन कुछ भी नहीं हुआ।

"आप बंगाली नहीं है, बाबू जी ?" उसने पूछा। मैंने सिर हिलाते हुए कहा "मैं कलकत्ता बहुत समय से रह रहा हूं यद्यपि मैं यू० पी० का रहने वाला हूं।"

"आप कहां जा रहे हैं" मैंने पूछा "बम्बई, वहीं मेरा कारोबार चलता है।

"व्यापार ?"

"जूआ," मैं चकित रह गया। मेरी इस घबराहट को देखकर वह मुस्कराया।

"आप क्या काम करते हैं ?" उसने प्रश्न किया।

"व्यवसायिक कला।"

"ओह, कलाकार! वह तो अच्छा है, और बहुत ही अच्छा "उसने आश्चर्य से कहा।" क्या मैं भी एक कलाकार नहीं बन सकता ? मैं बनना चाहता हूं"

"जूआ एक कला है उसने हंसतेहुए कहा, बिना यह बताये 'जुआ' से उसका अभिप्राय क्या है। वह कुछ रूखेपन से हंसा। उसका मुख पीला पड़ गया। वह बूढ़ा-सा प्रतीत होने लगा। मैं कुछ घबरा सा गया और ऐसा अनुभव किया कि कोई पुरानी बात याद आने लगी, जिस को वह प्रगट नहीं करना चाहता।

"जूआ कोई कला नहीं थी, जब मैंने केवल आरम्भ किया था; हां अब है" उसने कहा। "बाबूजी, आप यह जान कर ताज्जुब करेंगे कि मैं कुछ घन्टों में ही हजारों रुपये जीतता और हारता हूं। कभी मैं अपने गरीब मां, बाप का एक मामूली बड़ा लड़का था। आह मैं केवल कृष्णकान्त परन्तु एक मेहनती किसान मां-बापका सबसे बड़ा और प्यारा बेटा था। और आज !" वह बड़बड़ाया फिर कहने लगा कि "लगभग दस वर्ष पहले मैं अपने छोटे भाई के साथ मेला देखने गया था। मेरी आयु दस साल और मेरे छोटे भाई रमाकांत कि छः साल की। उस दिन मेरी खुशीकी सीमा न थी। मेरी मांने एक चवन्नी मेरे और रमाकांत के लिए चीजों खरीदने को दी थी। उन दिनों चार आने एकदम मिल जाने की स्वप्न में भी आशा न थी। इसी कारण माता और पिता जी में सम्वाद भी हुआ था और हम दोनोंने उनकी बातचीत को सुना और अन्त में वह सुन्दर सिक्का हमारा होता गया।

"शाम को हमें अच्छे अच्छे वस्त्र पहनाये गये। मां ने हमें बासी चीजें न खाने की चेतावनी दी और कहा कि कहीं रमाकांत का हाथ न छोड़ देना। जब हम चल पड़े तो मां ने चिल्लाते हुए कहा कि सूर्योदय से पूर्व ही लौट आना। मैंने हाथ हिलाकर उत्तर दे दिया।

"हम चारों ओर आंखें घुमा २ कर इधर उधर घूमने लगे, कभी स्टालों के पास तो कभी फलों की दुकान पर कभी बड़े-बड़े तंबुओंके पास तो कभी खेल तमाशों के मैदान में, जहां बहुरूपिये अपने अपने भेष बनाये हुए लोगो को अपने कर्तव्य दिखाने के लिए आकर्षित कर रहे थे। वहीं पास ही जूये की भी एक छोटी-सी दुकान थी। एक व्यक्ति बराबर ताश को उलट पलट कर रहा था और जनता को आकर्षित करने के लिए चिल्ला रहा था "दो के चार आने, चार के आठ आने !" मैं एक दम पुलकित सा हुआ, मैं भी प्रयत्न करूं तो कैसा रहे ? मैं भी दूना कर सकता हूं और सारे मजे लूट सकता हूं ! और रमाकान्त का हाथ पकड़े हुए उस ओर खेलने केलिये बढ़ गया। दुकान वाले ने मेरे सामने ताश दिखाते हुए एक पत्ता निकालने को कहा। मैंने निकाल लिया। उसने दस कार्ड और लिये और उन सबको मिलाते हुए मुझे अपना पत्ता निकालने को कहा, मैंने एक पत्ता खींच लिया। अहा, यह मेरा पत्ता था। मैं जीत गया मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई और मैंने दुबारा सारा रुपया दाओं पर लगा दिया किंतु मैं असफल रहा। मैं घबरा गया। मैंने यह अनुभव किया कि मेरे पास जो कुछ था सब हार गया और अपने ही लिये नही भाई के लिये, जिस को मैं अधिक प्यार करता था, कुछ खरीद सका, मेरी आंखों में आंसू आगये, मस्तिष्क तपने लगा, मेरा दिल धकधक करने लगा। मैं जोर ओर से चिल्लाने और फूट फूटकर रोने लगा। एक छोटी सी भीड़ लग गई। जब मैंने उन्हे यह बताया कि मेरे साथ इस प्रकार धोखा किया गया है तो वह मुझे दुष्ट और आवारा कह कर चले गये मेरी आंखे धुंधला गईं। अब रमाकान्त ने भी रोना आरम्भ कर दिया। वह समझ गया कि कुछ दाल मे काला है। उसने एक गुब्बारा मोल लेना चाहा, इसके बाद गेंद और फिर छोटी छोटी गोलियां। वह उन्हें लेने के लिए जिद करने लगा। वह चिल्लाया, फिर ठुनकने लगा और मेरा हाथ पकड़ पकड़ कर खींचने लगा। मेरी समझ मे नही आया कि अब क्या करना चाहिए। "हमारे पास पैसा नही है" मैंने कहा। "मै नहीं जानता, मा ने तुम्हें एक सुन्दर चवन्नी दी थी" फिर चिल्लाया। 'मेरी चवन्नी मुझे दो" उसने रोष में कहा, "चोर, तुमने मेरा हिस्सा क्यो चुराया ?" मैंने उसके मुंह पर थप्पड़ मारा, उसको ठोकर से मारा, फिर धक्का देकर गिरा दिया और फिर डांटते हुए, खींचते हुए घर को ओर ले चला। वह रोता और जिद करता रहा।

"जब हम घर पहुंचे, अंधेरा हो चला था। मा चिन्तित सी द्वार पर खड़ी थी। पिता जी कही दिखाई न पड़ते थे। मैंने रास्ते मे एक झूठी रचना की और रमाकात को भी इसका अनुमोदन करने के लिए सहमत कर लिया कि मेरी जेब कट गई और रमाकांत भीड़ होने के कारण गिर गया और उसका मुंह कुचल गया। मा उदासीनता से हंसी और फिर भोजन परोसदिया। मैंने कुछ नहीं

[शेष पृष्ठ २० पर]

अमेरिका की गौशालाओं ने गायों को स्वास्थ्यकारी ढंग से दुहने का नवीन वैज्ञानिक ढंग अपनाया है। इस कार्य के लिए भूमि से ४० इंच की ऊंचाई पर प्लेटफार्म बना लिये जाते हैं तथा विद्युत-यन्त्र से एक-एक करके गायें दुही जाती हैं।

[illegible] अमेरिकन वायुसेना के इस जैट-बमवर्षक का परिमाण २१३०० पौंड है तथा इसमें ३२००० घोड़ों की शक्ति के आठ जैट एंजिन लगे हैं। इसने गत ४ मई को केलीफोर्निया पर अपनी सर्वप्रथम उड़ान की है।

पांच करोड़ पौंड की लागत से निर्मित यह समुद्री जहाज ३२६ गज लम्बा है तथा इसकी भारवाही शक्ति २१७०० टन है।

अमेरिका के प्रसिद्ध लेखक तथा कूटनीतिज्ञ थ्योडोर फ्रैंसिस ग्रीन।

एवेरेल हैरीमन
अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमैन के [illegible]

महायुद्ध के बाद हेंकले वर्नर पहिले जर्मन हैं, जिनकी अमेरिका में कान्सिल जनरल के पद पर नियुक्ति की गई है।

मास्को के भूतपूर्व अमेरिकन राजदूत जनरल वेडेल स्मिथ।

नव प्रकाशन

बापू के कदमों मे—लेखक - राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद, प्रकाशक—श्री अजन्ता प्रेस लिमिटेड नया टोला' पटना। मूल्य ४) रु०

डा० राजेन्द्रप्रसाद जी महात्मा गांधी के सच्चे अनुयायियो में प्रमुख माने जाते हैं। उनकी सात्विक वृत्ति तथा निरभिमानता आदि के कारण गांधी वादी समाज मे उनका स्थान गांधीजी के राजनैतिक उत्तराधिकारी पं० नेहरू से भी आगे है, यह सर्वविदित ही है।

वस्तुत. पुस्तक में डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने महात्मा गांधी के प्रथम दर्शन परिचय से लेकर उनके निधन तक की सम्पूर्ण उन घटनाओ का विस्तृत और और रोचक वर्णन किया है, जो उनके जीवन मे महात्मा गांधी के सम्पर्क में घटित हुईं।

इस पुस्तक में राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रमुख प्रसंगों के वर्णन के साथ-साथ डा० प्रसाद द्वारा गांधीवाद का जैसा विशद रूप सीधी और सरल भाषा में समझाया गया है, वैसा सम्भवतः किसी दूसरे गांधीवादी से सम्भव नहीं था। यदि राजेन्द्र बाबू को गांधीवाद का प्रामाणिक व्याख्याता मान लिया जाय, तो अनुपयुक्त नहीं होगा।

'बापू के कदमों मे' पुस्तक में यद्यपि डा० राजेन्द्रप्रसाद ने बापू के सम्बन्ध में अपने संस्मरण ही दिये हैं; और राष्ट्रीय कांग्रेस अथवा राष्ट्रीय आन्दोलन का कोई समयबद्ध एवं यथाक्रम इतिहास नहीं लिखा, फिर भी इसे यदि राष्ट्रीय चेतना और आन्दोलन के इतिहास के साथ बापू के जीवन को प्रयोगतालिका और उनके आदर्शों और सिद्धांतों की कुंजी मान लिया जाय तो अनुचित नहीं होगा। इस पुस्तक में राजेन्द्र बाबू ने राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं शिक्षा के सम्बन्ध में महात्मा गाधी के मन्तव्यों का विशद-वर्णन तो स्थान-स्थान पर किया ही है, उनके अपने व्यक्तिगत जीवन पर महात्मा जी के व्यक्तित्व का प्रभाव कब और कैसे होता रहा, यह भी बिना संकोच के कह डाला है।

इस पुस्तक में बहुत सी घटनाओं का वर्णन पढ कर राजनैतिक महत्व के बहुत से सन्देहो का निराकरण भी होता है तथा बहुत-सी ऐसी बातें सामने आती हैं, जिनकी कल्पना भी सर्वसाधा- नहीं कर पा सकते थे। हो सकता है कि उन बातो के प्रत्यक्षीकरण से हममे कभी वितृष्णा और अश्रद्धा का उदय भी किसी के प्रति हो जाता हो, परन्तु यह निश्चय है कि उससे असत् या अवांछित मार्ग की ओर प्रवृत्ति नहीं होती। महात्मा गांधी के अनुयायियों और भक्तों की बात तो अलग रही, वे लोग भी जो किन्हीं अव्यक्त कारणों से उनके सिद्धांतों और नेतृत्व मे विश्वास नहीं रखते, इस पुस्तक के अध्ययन से निश्चय ही महात्मा जी के व्यक्तित्व से प्रभावित हो कर उनमे श्रद्धा करने को बाध्य होंगे।

प्रस्तुत पुस्तक में आज के कांग्रेस के अन्य सभी नेताओ की तरह केवल महात्मा गांधी के नाम की दुहाई देकर चीख-पुकार नहीं मचाई गई, प्रत्युत उनके जीवन की सादगी सच्चरित्रता और सचाई की दैनिक चर्या का चित्र खींच दिया गया है, जिससे पाठक बरबस उस की ओर आकृष्ट हो कर श्रद्धा से नत मस्तक होने को बाध्य होता है। यही कारण है कि हमें डा० राजेन्द्रप्रसाद को गांधीवाद का सच्चा और प्रमुख व्याख्याता और अनुयायी मानने को बाध्य होना पड़ता है। वास्तव मे प्रस्तुत पुस्तक अपने नाम के अनुरूप ही बापू के पद चिन्हों पर चलने के लिए प्रेरणा देने वाली है।

युगदीप — लेखक — श्री उदयशंकर भट्ट, प्रकाशक — गौतम बुक डिपो, नई सड़क, दिल्ली। मूल्य २) रु०।

प्रस्तुत रचना नवीन प्रकाशन न होकर कवि की कृति का द्वितीय संस्करण है, जिसमें दो नवीन कृतियां और सम्मिलित कर दी गई हैं। प्रारम्भ से अन्त तक की सम्पूर्ण रचनाओं में निराशा की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। हो सकता है कि यह निराशा आज की कविता धारा की प्रतीक हो, परन्तु कवि के शब्दों में उसे उनकी निजकी आशा-निराशा का रूप ही मानना अधिक उपयुक्त होगा। युवकाल की

आलोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियां आनी आवश्यक हैं।

—संपादक

घटनाओं का उल्लेख यद्यपि स्पष्ट रूप में स्थान-स्थान पर हुआ है, परन्तु यह घटनायें प्रस्तुत कृति में व्यक्ति पर हुई प्रतिक्रिया मात्र प्रतीत होती हैं। वे सार्वभौम बन सकी हैं या नहीं, यह बात पाठकों पर छोड़ना अधिक उपयुक्त होता, कवि का अपने मुंह से उसके सम्बन्ध में कुछ कहना ऐसा लगता है, मानो एक कलाकार उपदेशक बन गया हो।

इसमे सन्देह नहीं कि युगदीप की कविताओं में एक प्रवाह है, जो व्यक्ति के मन को मथ देने वाली पीड़ा के सामञ्जस्य से एक ऐसे रस की सृष्टि करता है, जिसे हृदयग्राही भी कहा जा सकता है और मर्मस्पर्शी भी।

कविताओं की भाषा प्रायः शुद्ध, सरल, और भावानुगामिनी है, परन्तु या तो भावों को स्पष्ट रूप में व्यक्त करने के लोभ से अथवा 'आदतन' कवि ने ऐसे उर्दू शब्दों का प्रयोग स्थान-स्थान पर किया है, जो यदि प्रयुक्त न भी किये जाते तो कविता के सौन्दर्य में अथवा भावाभिव्यक्ति में कोई अन्तर नहीं आता। तूफान, खून, लाश, अरमान, तख्त, आबाद और मस्ती आदि के स्थान-स्थान पर उपयोग के साथ बाजार को बाजार के रूप में देख कर तथा राख और खाक का एकत्रित प्रयोग एवं पूंजी और अनमेल शब्दों के व्यवहार से ऐसा लगता है कि या तो कवि भाषा के सम्बन्ध में कोई नियम और अंकुश मानता ही नहीं है अथवा वह किसी उद्देश्य-विशेष से जानबूझ कर ऐसा कर रहा है।

कवि ने प्रस्तुत पुस्तक की भूमिका में देश और समाज आदि की जिन शृंखलाओं के टूट जाने का उल्लेख करके जिस नयी भाव-धारा की क्रान्ति की बात कही है, उसका आभास पाठक को भी इन रचनाओं के पढ़ने से होता है या नहीं, यह जानने की चिन्ता सम्भवतः कवि को नहीं हुई परन्तु वह अपनी बात तो कह ही गये हैं।

फिर भी कविताओं को पढने पर रसकी प्राप्ति न होती हो, ऐसी बात नहीं है।

— कृष्णचन्द्र शास्त्री

कुछ चुने हुए निबन्ध — लेखक श्री आचार्य रामसुन्दरलाल। प्रकाशक—सर्वोदय - साहित्यसदन, ४ जे० एन० बिल्डिंग्स, पास दीवानहाल, दिल्ली। मूल्य २) रु०।

प्रस्तुत पुस्तक में धार्मिक, राजनैतिक साहित्यिक और ऐतिहासिक विषयों पर ४० के करीब निबन्ध हैं। ये निबन्ध परीक्षार्थियों की दृष्टि से लिखे गये हैं। इसे अधिक उपयोगी बनाने के लिए स्वाधीन भारत, भारतीय विधान, जमींदारी उन्मूलन आदि सामयिक विषयों पर भी कुछ निबन्ध लिखे गये हैं। अंतिम प्रकरण मे पत्रों के लिखने के नियम पर्याप्त उदाहरणों सहित दिये गये हैं, तो प्रारम्भिक भाग में निबन्ध रचना के सम्बन्ध में उचित जानकारी दी है। इन कारणों से यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिए उपयोगी बन गई है।

—कृष्ण

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त.

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन महिला धर्मशीला और उसकी लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। अनिरुद्ध अपने दल के साथ मिरजापुर के गांवों में फैली हैजे की महामारी में तन-मन से सेवा करता है, वहां से लौटने पर विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं वे लोग विवाहेच्छु भवानन्द और लड़की के मामा रसिकलाल को समझाते हैं, किन्तु उन्हें कुछ सफलता नहीं मिलती। अन्त में वे लोग विवाह को रोकने के दल बल से विवाहस्थल को घेर लेते हैं। संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है, और वहां वेश्याओं की दशा का अध्ययन करती है। सुजाता हरिकिशन नामक एक सुसम्पन्न तथा सुन्दर युवक की ओर आकर्षित होती है। अनिरुद्ध की मां स्नेहलता की मृत्यु हो जाती है और अनिरुद्ध उसकी सम्पत्ति का अधिकारी हो जाता है। सुजाता हरिकिशन के अधिकाधिक सम्पर्क में आती है।

[गतांक से आगे]

निक्को मेरे लिए बहुत तड़पते हुये हृदय से प्रतीक्षा कर रही थी। मेरी बातें सुनकर उसे तसल्ली हो गई, पर मेरे मन में एक खटका लगा, जो लग गया। हम लोगों का प्रेममय जीवन फिर चलने लगा। कई साल देखते-देखते बीत गये। मैंने बी० ए० अच्छे नम्बरों में पास किया। यहीं से मेरे दुर्भाग्य और निक्को के सर्वनाश का सूत्रपात हुआ। अब मैं सोचता हूं कि मैं क्यों न बी० ए० में फेल हो गया। पापा ने एक दिन मुझे बुला कर कहा कि तुम पढ़ने के लिए विलायत जाना होगा। मैं तो विपत्ति में पड़ गया। पर पापा ने मुझे दिखलाया कि मेरा पासपोर्ट ले लिया गया है। यहां तक कि जहाज में सीट तक बुक हो गई है। केवल यही नहीं, उन्होंने अपने विलायत में रहने वाले मित्रों के नाम परिचय-पत्र भी लिख रखा था। मना करने की गुंजाइश ही नहीं थी।

बीच में केवल ग्यारह दिन थे।

निक्को को मैंने सब बातें कहीं। वह ऐसे हृदय विदारक रूप से रो रही थी कि उसे सान्त्वना देना कठिन था। मैंने निक्को के रहने का प्रबन्ध किया था, पर पापा जी स्त्रियों के मामलों में अधिक भावुकता पसंद नहीं करते थे। वे शायद यह समझते थे कि एक स्त्री को इस बात का अधिकार नहीं है कि वह अपने प्रेमिक से जीवन भर जोंक की तरह चिपटी रहे। बम्बई तक मुझे पहुंचा कर उन्होंने आज्ञा दी कि मेरे बंगले को खाली कर दिया जाय। इसके बाद निक्को का क्या हुआ, आप जानती ही हैं। [illegible] की आंखों से आंसू बरस जाती थी।

सुजाता ने निक्को के प्रेमिक को एक बदमाश समझा था, एक ऐसा बदमाश जिसका मुंह नहीं देखना चाहिये, पर अब अपने सामने के आदमी में उस व्यक्ति का आविष्कार कर उसमें करुणा का ही संचार हुआ। धीरे-धीरे हरिकिशन के चेहरे पर से भी पश्चात्ताप की वह भावना दूर हो गई, और फिर वह सुजाता को तरफ करे हुए तथा आकुल नेत्रों से देखने लगा। उसकी इस विक्षुब्ध और परेशान दृष्टि के मुकाबले में सुजाता को दृष्टि नीची हो गई। हरिकिशन अनुभव कर रहा था कि उसके अन्दर कोई एक चीज धीरे-धीरे, बहुत धीरे जग रही है, वह चीज भूतकाल के पश्चात्ताप से सम्बन्धित नहीं थी। इसके अन्दर भविष्य का संगीत था। जितना ही उसके अन्दर यह उल्लास भाव जागने लगा, उतना ही उसका चेहरा एक कठिन भाव धारण करने लगा। सहानुभूति प्राप्त करने की एक व्याकुल तथा उग्र इच्छा उसके अन्दर छटपटाने लगी। उसने अकस्मात यह अनुभव किया कि वह दुःखी और परित्यक्त है और उसे एक अवलम्बन की आवश्यकता है।

सुजाता मानों बताई हुई कहानी की बात ही सोच रही थी, उसने अकस्मात कहा—तो आप ही निक्को के ···

अधैर्य के साथ इस बात को ग्रहण करते हुए हरिकिशन ने कहा—हां मैं ही वह अभागा हूं। आप अवश्य मुझसे घृणा कर रही होंगी ···

नहीं, नहीं घृणा क्यों करूंगी? आपका तो इसमें कोई दोष नहीं ज्ञात होता—जल्दी में सुजाता ने कहा।

नहीं आप जरूर घृणा कर रही हैं—कह कर हरिकिशन अकस्मात अपनी कुरसी को पास में लाकर एक तरह से उछलते हुये विक्षिप्त की तरह सुजाता के पैरों में गिर पड़ा, गिड़गिड़ा कर बोला — आप मुझे क्षमा कर दें।

एक निमेष के अन्दर यह घटना हो गई।

सुजाता ने जल्दी से पैर छुड़ाने की चेष्टा करते हुए कहा — क्या बच्चे की तरह कर रहे हैं? पर हरिकिशन उसी एक बात की रट लगाता रहा — मुझे माफ कर दीजिये, मुझे माफ कर दीजिये।

बड़े कष्ट से सुजाता अपने पैरों को छुड़ा पायी। पर हरिकिशन का हाथ सुजाता के हाथ में रह गया। हरिकिशन निरन्तर रो रहा था।

हरिकिशन उत्तेजित हो कर कह रहा था — कहिए, बोल दीजिये कि आप मुझे माफ कर रही हैं। सुजाता कह रही थी — हां, हां कर दिया, कर दिया, आप क्या कह रहे हैं? दुर्भाग्य था और क्या?

हरिकिशन ने अपने हाथ में सुजाता के कोमल हाथ का स्पर्श अनुभव किया। एक निमेष के अन्दर ही उसके मन में अन्य बहुत-सी नारियों का स्पर्श स्मरण हो आया। इसके पहले उसने जितनी स्त्रियों को स्पर्श किया था, उनमें यही शायद सबसे अधिक अनछुआ सा प्रतीत हुआ फिर भी निक्को के मुकाबले में यह हाथ कुछ भी नहीं। एक परिभाषाहीन विषाद तथा साथ ही साथ एक आनन्द ने उसके सारे शरीर में रोमांच पैदा कर दिया।

हरिकिशन ने सिसकते हुए कहा—नहीं आपने मुझे क्षमा नहीं किया, क्षमा कीजिए। कीजिए—कह कर उसने फिर सुजाता के दोनों पैरों को पकड़ लिया। सुजाता उसे कोशिश कर उठाने लगी, पर वह क्या, सुजाता ने देखा कि हरिकिशन और वह एक दूसरे के गाढ़ा लिंगन में बद्ध हैं। और हरिकिशन उसकी आंख पर, नाक पर, ओठों पर, सर्वत्र सैकड़ों अग्निगर्भ चुम्बन अंकित कर रहा है। सुजाता ने आंखें बन्द कर लीं। और उसका सारा शरीर शिथिल हो गया। वह अपने रोम रोम में एक संदिग्ध आनन्द का अनुभव कर रही थी।

सुजाता की तरफ से कोई जवाब नहीं मिला।

कहो कहो, कि तुम मुझसे प्यार करती हो। मेरी रानी, मेरी देवी, मेरी साधना।

सुजाता ने अस्फुट क्रंदन की तरह एक शब्द किया।

हरिकिशन ने उसके ओंठो को चूमते हुए उसकी वाणी को नीरव कर दिया।

सुजाता के दोनों होठ कुछ हिल उठे, उसकी आंखे तो बन्द थी ही। वह प्रायः रोती हुई प्रतिवाद के सुर में बोल उठी—प्यार करती हूं······

हरिकिशन उसको आलिंगित अवस्था में ही उठा ले गया।

घंटा भर बाद सुजाता बालों को ठीक करती हुई बाहर निकल गयी। वह अपना नोटबुक तथा फाउनटेनपेन भूल कर जा रही थी।

(२९)

अनिरुद्ध की शादी के ठीक दैड़ वर्ष बाद एक दिन रास्ते में उससे और भवानन्द से भेंट हो गई।

अनिरुद्ध एक जरूरी लेख लेकर किसी स्थानीय पत्रिका के दफ्तर में जा रहा था उसने उसका ख्याल नहीं किया था। भवानन्द ने ही उसे देखा और ठिठक कर खड़ा हो गया। नमस्कार अनिरुद्ध जी।

अनिरुद्ध ने उसे देख कर पहिचानते हुए कहा—नमस्कार, कैसी तबियत है?

अच्छा ही हूं। पर हजार हो इस उम्र में दौड़ धूप नहीं होती— वह हंस रहा था।

अनिरुद्ध ने गम्भीर हो कर कहा—कैसी दौड़ धूप?

वह शादी हुई थी न, तो उससे एक लड़का हुआ। उसी लड़के के अन्नप्राशन के लिए दौड़ धूप है। बुढ़ापे का लड़का है न इस लिए जरा शान के साथ उत्सव होगा। आपके संघ के प्रत्येक व्यक्ति को न्यौता रहा, कृपा कर पधारिये और बच्चे को आशीर्वाद दीजिए। मेरा घर तो आप लोगों को मालूम ही है।

बूढ़ा मानों नम्रता की प्रतिमूर्ति हो रहा था। उसके चेहरे की तरफ ताक कर अनिरुद्ध ने देखा कि उसका स्वभाव पहले से अच्छा है।

अनिरुद्ध ने कुछ नहीं कहा।

भवानन्द ने पूछा—आप की तबीयत कैसी?

अच्छी है। अनिरुद्ध ने संक्षेप में कहा।

चेहरा देख कर तो ऐसी कोई बात नहीं मालूम हो रही है। आपका चेहरा कुछ मलिन है। इधर कुछ बीमार थे क्या ? सहानुभूति के लहजे में भवानन्द ने पूछा।

अनिरुद्ध ने जल्दी में कहा—नहीं नहीं अच्छा तो हू।

कुछ लड़के वाले ?

नहीं— न मालूम क्यों भवानन्द के सामने यह बात कहते हुए अनिरुद्ध को लज्जा मालूम हुई कि वह यदि भवानन्द के सामने कुछ और कह सकता तो अच्छा रहता।

भवानन्द ने तसल्ली के तौर पर कहा—इसमें कोई बात नहीं, मेरी भी पहली स्त्री का पहला लड़का शादी के तीन साल बाद हुआ था। सब उसी परमेश्वर की लीला है।

इसके बाद उसने हाथ दिखाते हुए कहा—हम लोग किस खेत की मूली है ? उसकी इच्छा न होने पर कुछ भी नहीं हो सकता। सूर्य उन्हीं के आदेश से तपता, और चन्द्रमा उन्हीं की इच्छा से चांदनी देता है

वह चला जाने लगा, पर दसकदम आगे बढ कर फिर लौटते हुए बोला—याद रहे कि परसों दिन बाहर बजे मेरे घर पर सब के सब सदस्यों का न्योता है, प्रत्येक के घर पर जाकर अलग अलग न्योता नहीं दे सकता, इसलिए क्षमा प्रार्थी हू।

क्या बुड्ढा हंस रहा था ? अनिरुद्ध ने देखा कि भवानन्द हंस रहा था, पर उसे क्रोध नहीं आया। वह मन ही स्वीकार करने के लिए बाध्य हुआ कि भवानन्द को हंसने का यथेष्ट कारण है। उसी ने न इसी आदमी के पास से छीन कर सरला से शादी की है। भवानन्द सरला को जितना सुखी कर सकता था, वह क्या उसे उससे अधिक सुखी नहीं कर सकता था ? सच बात तो यह है कि उसने उसे अधिक सुखी किया है। उसने केवल हठवश दो जीवन को असम्बन्धीय रूउ से नष्ट कर दिया, सरला का जीवन और अपना। वह गम्भीर विषाद के साथ मन ही मन सब बातों की आलोचना करने लगा। उसे ऐसा मालूम हुआ कि उसने शादी कर भूल की है। मान लिया कि भवानन्द सरला के योग्य पात्र नहीं था, तो उसे शादी करने से रोक लेता, बस। पर वह स्वयं उसकी जगह लेने लगा ? अवश्य डाक्टर और मित्रों ने उसे बाध्य किया था, पर उसे अपनी बुद्धि भी तो खर्च करनी थी। इस शादी के बाद उसने कितनी ही बार यह सोचा था कि वह इस शादी में राजी क्यों हुआ ? कैसे राजी हुआ ? निश्चय ही उस समय उसका दिमाग ठीक नहीं था ? इसके पहले ही पुलिस वालों ने उसे गिरफ्तार क्यों न कर लिया ? जैसे जब डाक्टर ने घर के आसन पर बैठा दिया तो सुजाता ने उसे हाथ पकड़ कर घसीट क्यों न लिया ? ओह, ऐसा होता तो कितना अच्छा रहता, पर अब उन सब बातों को सोच कर क्या लाभ है ?

अब बात यह है कि वह अपनी विवाहित पत्नी को लेकर क्या करेगा ? उसकी तो सांप छुछून्दर की गति हुई, न तो निगला ही जाता है, न उगला ही जाता है। बड़ी कठिन समस्या थी। वह कुछ सोच नहीं पा रहा था कि क्या करे। सरला को पति रूप में ग्रहण करना यह तो अधन्यता, अपने सब विचारों की हत्या करना होता। फिर सुजाता। यह तो हो ही नहीं सकता।

इसलिए उसने मजबूर होकर अनागत भाग्य के हाथों में अपने को सौंप दिया। तलाक हिन्दुओं में नहीं और होता भी तो वह कुछ कर न पाता क्योंकि उसने तो जानबूझ कर दूसरे के हाथ से छीन कर शादी की है, अब उसे कैसे अस्वीकार कर सकता था।

अनिरुद्ध पत्रिका के दफ्तर के सामने पहुंच गया था। वह भीतर घुस गया।

[२०]

सुजाता ने हरिकिशन के घर पर सात दिन रही, तब कि बहुधा रातें भी काटनी शुरू कर दीं। उसकी लिखाई-पढाई, स्त्री समस्या पर लेख आदि सब बन्द हो गया। सम्पादक गण उससे लेख मांगने के लिए जो पत्र लिखते थे, वह उनका उत्तर भी नहीं देती थी उसके लाहौर के मकान में जो बुढिया रहती थी वह सुजाता पर योंही खुश नहीं रहती थी, अब तो रंग-ढंग देख कर बिल्कुल आपे से बाहर हो गयी, पर सुजाता भी इन दिनों बहुत अभिमानपूर्ण मुद्रा में रहती थी, इस लिए बुढिया कुछ कहने की हिम्मत नहीं करती थी, बस कुनमुना कर अपनी मौत मांगती रहती थी। धर्मशीला जीवित होती तो उसे लिखना भेजती पर वह तो बहुत दिन हुए मर चुकी थी इसलिए बुढिया के पास इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं था कि वह माथा पीटे। वह ईश्वर से हर समय यह कहती थी—भगवान् सभी तो गये, क्यों मुझे अकेला की तरह आयु देकर यह सब देखने के लिए जीवित रखा है ? अब जीने में कौन सा सुख है ? मुझे जल्दी उठा लो।

बुढिया की यह मानसिक अवस्था अधिक दिन तक स्थायी नहीं रही। वह फिर नियम पूर्वक अपने सब काम करने लगी।

वही उसके पीछे जीवन का रहस्य था।

सुजाता बीच में बीच वह सोचती थी कि क्यों वह हरिकिशन के साथ पति पत्नी के रूप में रह रही है, तो बाकायदा सिविल मैरेज ऐक्ट से उसकी रजिस्ट्री क्यों न करा ले, पर यह बात उसके गले तक आकर रह जाती थी। हरिकिशन से यह बात कहने की हिम्मत नहीं होती थी। बात यह है कि हरिकिशन ने बार बार उससे कहा था कि विवाह युग प्रथा जिस युग में भी उपयोगी रही है, अब उसकी कोई भी उपयोगिता नहीं है बल्कि अब वह एक अजायब मात्र हो रहा है।

सुजाता स्वयं भी इस बात को मानती थी, पर उसके बच्चे होना एक बहुत गड़बड़ में डाल देने वाली बात है। समाज की वर्तमान अवस्था तथा कानून की इस हालत में लड़के बच्चे और विवाह प्रथा का लोप इन दोनों बातों में कोई सामंजस्य मालूम नहीं होता था। वह अनुभव कर रही थी कि उसमें इतना साहस नहीं है कि वह जनमत को इस प्रकार अंगूठा दिखा सके।

वह सम्पूर्ण रूप से हरिकिशन के प्रेम स्रोत में बह रही थी, न आगे देख रही थी न पीछे। बीच बीच में उसके मन में शूल की तरह एक भयानक सम्भावना कोंच जाती थी, पर वह उस तरफ ध्यान नहीं देती थी। वह एक अद्भुत रहस्य मय तरीके से सोचती थी कि उसके सम्बन्ध में यह सम्भावना पूर्ण नहीं होगी।

—क्रमशः

सम्पादक के नाम पत्र

हमारे पाठक क्या कहते हैं ?

देश विभाजन का दूसरा पहलू

साधारणतः देशविभाजन को मुसलमानों के लिए लाभकारी और हिन्दुओं के लिए भयंकर व हानिकर समझा जाता है। किन्तु श्री केवलरामानी 'विजिल' नामक पत्र में लिखते हैं—

'१९४७ के लीग के देशविभाजन के कार्य ने भारतीय इतिहास में पहली बार हिन्दू जाति को एक भूमि पर एक विशाल विराट् और अप्रतिस्पर्धनीय जाति के रूप में संगठित कर दिया और उनको तथा पर ६४ करोड़ अहिन्दुओं के जीवन, श्रम और भौतिक साधनों को छोड़ दिया। इसके विपरीत भारत के करोड़ों मुसलमानों को लीग ने प्रादेशिक और मानवीय रूप से तीन टुकड़ों में बांट दिया। इनमें से पश्चिमी पाकिस्तान का खण्ड राजनीतिक दृष्टियों से अत्यन्त भ्रान्त है। दूसरा खण्ड पूर्वी पाकिस्तान पश्चिमी पाकिस्तान से १००० मील दूर सैनिक दृष्टि से बिलकुल असुरक्षित है। तीसरा खण्ड (करीब आधी मुस्लिम जन संख्या) भारत में विलीन हो गया है।' आप के पत्र के द्वारा मैं उन पाठकों से प्रश्न करना चाहता हूं, जो भारत के नेताओं की अपेक्षा मुस्लिम नेताओं को सदा अधिक दूरदर्शी और राजनीतिज्ञ बताते रहते हैं और जिनकी एकमात्र राजनीति अपने नेताओं को कठोर आलोचना है कि क्या उन्होंने इस पहलू पर भी विचार किया है।

—एक कांग्रेसी

★

क्या कभी सीखेंगे ?

जो एक बार ठोकर खा कर भी कुछ न सीखे, उसे साधारण भाषा में 'मूर्ख' कहा जाता है। हमारी सरकार के लिए इस विशेषण का प्रयोग न करते हुए भी जब मैं मा० तारासिंह आदि के साम्प्रदायिक विषवमन को देखता हूं तो अनायास हृदय में विचार आता है कि मुस्लिम-लीगी कायद की पुनरावृत्ति का खतरा पैदा हो रहा है। १४ वर्ष पूर्व जयपुर कांग्रेस में श्री मोहनसिंह ने इसी खतरे की ओर ध्यान खींचा था। आज फिर हिन्दुओं को शत्रु कह कर पृथक् सिक्खराज की मांग की जा रही है। पंजाब व पटियाला संघ में हिन्दुओं के साथ अन्याय किया जा रहा है, जबर्दस्ती गुरुमुखी थोपने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। क्या सरकार एक बार पहले देश के विभाजन से कुछ नहीं सीखी ?

★

व्यय में कमी

कभी कभी ऐसा प्रतीत होता है कि भारत सरकार व्यय में कमी करने के लिए अत्यन्त आतुर हो उठती है और सब विभागों के व्यय में कमी करने तथा कोई नई योजना न बनाने का आदेश दे देती है। कुछ कर्मचारी छंटनी में भी आ जाते हैं। किन्तु-असल में व्यय की कमी होनी बड़े बड़े वेतनभोगियों के वेतनों व भत्तों में कमी करने से। पिछले दिनों से फिर पुराने सैकण्ड क्लास रेलों में खुल गये हैं। यदि फर्स्ट क्लास के रेलवे पासों की संख्या कम कर दी जाय, तो मेरी सम्मति में अफसरों को विशेष असुविधा होगी नहीं और व्यय बहुत कम हो जायगा। १५००) रु० से अधिक वेतन वालों को ही फर्स्ट क्लास का पास मिलना चाहिए। इसी तरह दूसरे भत्ते भी काफी कम किये जा सकते हैं। ५००) रु० से ऊपर पाने वालों के वेतन में तो भारी कमी की गुंजायश है ही।

—रामदेव

★

पंजाब में छात्रों पर भारी बोझ

पंजाब सरकार के शिक्षाविभाग ने पंजाब के आर्य समाजी हिन्दू स्कूलों के पास भी सर्कुलर भेज कर उन्हें आदेश दिया है कि वह अपने यहां पंजाबी गुरुमुखी भाषा का, गौण भाषा के रूप में शिक्षा देने का प्रबन्ध करें। इस सर्कुलर पर अमल करने का परिणाम यह होगा कि हरेक विद्यार्थी को पंजाबी गुरुमुखी, हिंदी, अंग्रेजी तीन भाषाएं आवश्यक रूप में पढ़नी पड़ेंगी। शिक्षालय के संचालकों को इनके लिए अध्यापकों का प्रबन्ध करना पड़ेगा। विद्यार्थियों को इनके लिये पुस्तकें खरीदनी पड़ेंगी। राष्ट्र की मध्यम श्रेणी की वर्तमान आर्थिक स्थिति को देखते हुए संरक्षकों पर इतना बोझ डालना भारी अन्याय है ? पंजाब के गैर सरकारी शिक्षालयों के संचालकों को चाहिए कि वह इस विषय में एक नीति स्वीकार करें। भारतीय संविधान के अनुसार भाषा तथा सभ्यता के सम्बन्ध में संरक्षकों को स्वाधीनता तथा स्वतन्त्रता दी गई है, उसे पंजाब सरकार क्या, कोई भी शक्ति नहीं छीन सकती।

—भीमसेन

★

कपूरथला की दुर्गति

जब से पटियाला व पूर्वी पंजाब रियासती संघ बना है, तभी से यह प्रयत्न हो रहा है कि पटियाला रियासत के सिवा शेष सब रियासतें समाप्त कर दी जाएं। संघ में विलीन होने से पूर्व प्रत्येक रियासत की राजधानी में आकर्षण और जाब का कोई न कोई पहलू अवश्य था। कहीं कोई कालेज था और कहीं कोई व्यापारिक मण्डी। प्रत्येक स्थान पर छोटी बड़ी अदालतें थीं, उनसे जनता को सुगमता के अतिरिक्त उस क्षेत्र की कुछ महत्ता भी थी। संघ बनने के बाद जब राजप्रमुख ने सब कुछ पटियाला में ही इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया, इस का परिणाम यह निकला कि शेष समस्त नगर उजड़ने लगे। इस षड्यन्त्र का सब से बड़ा शिकार कपूरथला बना। भौगोलिक रूप से कपूरथला का पटियाला से कोई सम्बन्ध नहीं। ऐसी अवस्था में चाहिये तो यह था कि प्रबन्ध के लिये कपूरथला को पृथक यूनिट बना दिया जाता, लेकिन राज प्रमुख को यह सहन नहीं कि पटियाला के सिवा कोई और शहर भी उन्नति करे। चुनांचे एक एक करके वे सब चीजें कपूरथला से हटाई गईं, जिनके कारण उसकी महत्ता थी। कपूरथला की एक महत्ता रह गई थी कि वह केवल जिला का हैडक्वार्टर था। अब यह महत्व भी समाप्त कर दिया गया है। पटियाला संघ सरकार ने निर्णय किया है कि कपूरथला को एक तहसील बना कर जिला बरनाला में विलीन कर दिया जाय। कपूरथला की दो तहसीलों फगवाड़ा और सुजानपुर की सब तहसीलें बना दिया जायेगा।

बरनाला और कपूरथला यदि भौगोलिक रूप से एक यूनिट होते तो भी बात थी, मजा यह है कि बरनाला व कपूरथला की कहीं आस पास में सीमा नहीं मिलती और यदि कपूरथला से बरनाला जाना हो तो कम से कम १२ घंटे लगते हैं। यदि कहीं गाड़ी लेट हो जाय तो बारह के चौबीस घंटे लगें। अब कपूरथला के लोगों को अपने जिला हैडक्वार्टर तक पहुंचने के लिए तीन गाड़ियां बदलनी पड़ेंगी। पहले कपूरथला से एक गाड़ी पकड़ कर जालन्धर आवेंगे। जालन्धर से दूसरी गाड़ी पकड़ कर लुधियाना पहुंचेंगे। लुधियाना से बरनाला पहुंचने के लिए तीसरी गाड़ी बदलनी पड़ेगी। संसार भर के शासन में शायद यह पहला उदाहरण है कि जिले का हैडक्वार्टर इतनी दूर हो।

—एक दुःखी

कांग्रेस—अध्यक्ष कौन हो ?

कांग्रेस के अध्यक्ष का चुनाव शीघ्र ही होने वाला है। अभी तक प्रायः सब समाचार-पत्र इस प्रश्न पर चुप हैं। कभी-कभी एकआध समाचार निकल आता है कि श्री शंकर रावदेव संभवतः अध्यक्ष बनें और कभी श्री टंडन जी के भी उम्मीदवार बनने का समाचार भी छप जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कांग्रेस की अध्यक्षता आज किसी ऐसे महत्व का प्रश्न नहीं रहा, जिसकी ओर देश अत्यन्त उत्सुक हो। यह इस बात का प्रमाण है कि कांग्रेस अपना महत्व खो चुकी है। इस बार कांग्रेस प्रतिनिधियों के चुनावों में जो गरमी पाई गई है, उसे देखते हुये यह आशा की जा रही थी कि कांग्रेस अध्यक्ष का चुनाव भी सरगर्मियों के साथ होगा। पर ऐसा हो नहीं रहा। हमारी सम्मति है कि कांग्रेस पर सरकार हावी हो गई है और कांग्रेस का अध्यक्ष सरकार का 'हिज मास्टर्स वायस' बन कर निर्बल हो गया है। जब तक कांग्रेस का अध्यक्ष जनता का निर्भीक स्पष्टवादी प्रतिनिधि नहीं होगा, जो सरकार पर जनता का अंकुश रख सके, तब तक कांग्रेस शासन में प्रभावशाली स्थान प्राप्त नहीं कर सकती। मेरी सम्मति में श्री शंकरावदेव इस पद के लिए सर्वथा अनुपयुक्त हैं। वे सरकार की आलोचना सर्वोदय संघ में भले ही करलें, किन्तु पं० नेहरू को वे दृढ़ता पूर्वक कह सकेंगे, इसमें पूर्ण संदेह है। श्रद्धेय टंडन जी ही आज एकमात्र व्यक्ति दीखते हैं, जो व्यक्तित्व के आगे हत प्रतिभ नहीं होते और अपनी बात दृढ़ता से कह सकते हैं। उन्हें ही कांग्रेस का अध्यक्ष बनाना चाहिये।

—प्रभुदयाल

———

जीवन की अन्तिम खोज

(पृष्ठ ११ का शेष)

आया मुझे रमाकांत के पीड़ित परन्तु सुन्दर चेहरे को देख कर पछतावा हो रहा था।

उस रात मुझको बिल्कुल नींद न आई। मुझे सब चालाक मनुष्यों से घृणा उत्पन्न हो गई। रमाकांत का पिटा हुआ चेहरा, अश्रुपूरित आंख अंधेरे में मेरे सामने घूम रही थी। इसलिए अधिक न सह सका और चुपके से उस रात के अंधेरे में ही अपने घर से निकल पड़ा। मैं सारी चालाकियों को सीखने का विचार लेकर सीधा स्टेशन की ओर भागा, ताकि बदला ले सकूं।"

कृष्णकांत ने एक सिगरट जलाई और एक मेरे लिए दी और वह कुछ देर तक बाहर के बढ़ते हुए अंधेरे को घूरता रहा

"मैं एक भिखारी की दशा में कलकत्ता पहुंचा परन्तु शीघ्र ही जेबकतरों के एक समूह ने अपने में मिला लिया। थोड़े ही वर्ष बाद मैं ताश का पक्का जुआरी बन गया। आत्मविश्वास बढ़ने लगा और मैं अपने में एक प्रकार की शक्ति सी अनुभव करने लगा। कुछ ही समय पश्चात् मैं जुआरियों के एक छिपे अड्डे का सरदार बन गया, जो कि इसके अतिरिक्त छिप कर जेब कतरी भी किया करते थे। एक दिन पुलिस की एक पार्टी ने उस अड्डे को घेर लिया। मुझे इस का पता लग गया और मैं साफ बच गया। बाकी सब पकड़े गये। मैं बम्बई चला आया। मैंने संकल्प किया कि अब छुप कर अड्डा नहीं चलाऊंगा। बड़े बड़े आदमी, सेठ, साहूकार और लखपति मेरे मित्र हो गये। मैं शीघ्र ही उन्नति कर गया। मैं एक होटल से दूसरे होटल में जाता रहता हूं। बड़े बड़े आदमी और धनी पुरुष मेरे चारों ओर घिर जाते हैं। मैं उनके हजारों रुपये लूटता हूं। जिस समय वह हारते हैं, कैसी बच्चों की सी हरकतें करते हैं, झगड़ते हैं, चिड़चिड़ाते हैं। मैं मदिरा पान करता हूं, मौज उड़ाता हूं, और रुपयों की बौछार करता हूं और कुछ दिनों तक करोड़पति की तरह जीवन व्यतीत करता हूं। अब पछतावा होता है। मन में पीड़ा सी होती है। मेरा हृदय खेलने के लिए आज्ञा नहीं देता लेकिन खेलता हूं और हारता हूं……बाबू जी अब थोड़ी देर के लिए सो जीजिए' उसने वार्तालाप समाप्त करते हुए कहा।

मैंने उसके चेहरे की ओर देखा, वही मधुर मुस्कान थी। मैंने उसे अधिक विकल न किया और न ही मुझे इसका अधिकार था। मैंने सोना चाहा, परन्तु सारी रात सो न सका। कृष्णकांत विक्टोरिया के स्टेशन पर उतर गया। उसने मुझे अपना पता दिया और अनेक बार वहां आकर मिलने का निवेदन किया, मैंने स्वीकार कर लिया।

लग भग एक महीना हुआ होगा, मैं उससे मिलने गया। मैंने देखा कि "उस ने शराब पी रक्खी है। कमरा गन्दा है। सिगरेट के बुझे हुये टुकड़े धरती पर इधर उधर पड़े हैं। ताश के कुछ बंडल तिपाई पर रक्खे हुए हैं।" उसने मुझे अपने साथ भोजन करने के लिए बुलाया जिस को मैंने विनीत भाव से अस्वीकार कर दिया। मेरी अस्वीकृति से वह कुछ दुखित प्रतीत हुआ। 'यह एक कुत्ते का सा जीवन है, बाबू जी!' उसने बताया—'रुपये का कुछ मूल्य नहीं जब तक कि उसको किसी वस्तु पर व्यय न किया जाय।' वह उदास दिखाई देता था 'क्या वास्तव में आप मुझे अपना 'बेटा' नहीं बना सकते बाबू जी? मैं आपके नौकर की तरह रहूंगा, मुझे बहुत बुरे दिन देखने पड़े हैं, बताओ क्या आप मुझे इस होटल से छुटकारा नहीं दिला सकते?' उसकी बोली बड़ी कारुणिक थी।

'आप अपने माता, पिता और परिवार की खोज क्यों नहीं करते' मैंने प्रस्ताव रक्खा।

'मैं असफल-रहा। वह इस विशाल लोक में कहीं खो गए हैं' उसने दुखित भाव से कहा 'मैं इस विस्तृत संसार में पिछले पांच साल से भटक रहा हूं, परन्तु सब व्यर्थ। इस चालीस करोड़ की जनसंख्या में से एक निर्धन किसान चौधे को खोज निकालना कैसे सम्भव हो सकता है!'

मैं उसी कमरे में एक कुर्सी पर बैठे हुए छोड़ कर चला आया। बड़ा हृदय विदारक दृश्य था। मैं उसकी होटल से छुड़ाने वाली प्रार्थना को नहीं भुला सका। वह एक शराबी की आकांक्षा थी, परन्तु उसकी वाणी मेरे चित्त पर पत्थर की लकीर थी। उस व्याकुल और मलीन वातावरण से मेरा हृदय खिन्न सी गया था।

लगभग एक सप्ताह पश्चात् मैं फिर कृष्णकांत से मिलने होटल पर गया। वहां पुलिस के आदमियों को खड़ा देख कर मैं चकित रह गया। वहां किसी ने आत्म-हत्या कर ली थी। बम्बई के कुछ नागरिक उसे भली प्रकार जानते थे। मैं भी शीघ्रता-पूर्वक अन्दर गया। शरीर ढका हुआ था। किसी को उसके सम्बन्धियों का पता नहीं था — कृष्णकांत ने किसी को भेद न दिया था। एक पुलिस इन्सपैक्टर कुछ घसीट लिखे हुए टुकड़े को पढ़ कर भ्रम में पड़ गया था। कोई नहीं जानता था कि इसका तात्पर्य क्या है "पिता एक कोढ़ी, मां एक भिखारिन, भाई एक कैदी। मैं जीता हूं, मैं हारा हूं।"

तब मुझे पता लगा कि जुआरी की अंतिम खोज अब समाप्त हो गई है।

———

बाल [illegible] परिषद

निर्भय बना

भय बाल्यावस्था, किशोरावस्था और युवावस्था प्रत्येक में पाया जाता है प्रत्येक व्यक्ति के डरने का कारण अलग अलग होता है। निडर तो बहुत कम होते हैं।

आखिर "हम डरते क्यों है ?"

सहसा मुझे भी अपनेबचपन की एक घटना याद आने लगी। ६-७ साल का था। मेरे मकान के पास ही एक पीपल का पेड़ था। संयोगवश किसी बच्चे की एक पंतग उसमें उलझ गई थी। पेड़ की शाखायें मेरे मकान के ऊपर तक फैली हुई थीं। जब हवा चलती तो पेड़ के पत्ते और पतंग आपस मे टकरा कर खड़-खड़ की ध्वनि पैदा करते। जब कभी मैं किसी बात के लिये जिद किया करता या रोता तो मेरी बूढी दादी कह दिया करती थीं 'हव्वा आया,-पकड़ ले जायगा रोओ मत' और मैं वास्तव में उसे हव्वा समझ कर डर कर सो जाता।

हव्वा का डर ऐसा भरा कि आज भी सता रहा है। सूने मकान में सोने से डर लगता है। रास्ते में अकेले जाते समय यदि किसी चीज की खड़खड़ाहट या किसी जानवर की आवाज सुनाई पड़ जाय तो कुछ हृदय सा कांप जाता है।

मूल रूप से डर का अंकुर जन्म से ही होता है, जो धीरे २ बढता रहता है।

आत्म रक्षा की आदत प्रत्येक प्राणी में पाई जाती है। बकरी शेर से डरती है, कबूतर बाज से डरता है, बिल्ली कुत्ते से डरती है। जहां अपनी आत्म रक्षा का प्रश्न होता है, हर एक को अपने से बलवान का भय अवश्य रहता है। आत्म-रक्षा के लिए हम भयभीत हो भागने लगते हैं अपने आपको छिपाने का प्रयत्न करते हैं। परन्तु इसका चरित्र पर बड़ा बुरा असर पड़ता है। एक नवजात शिशु भय को नहीं जानता, परन्तु भाव उसमें पैदा किया जाता है। हम कई बार सुन चुके हैं कि एक बालक ने खेलते खेलते सांप को पकड़ लिया और उसे मुंह में रखने लगा। वह उससे डरा नहीं। ८-९ मास के बालक दिये को पकड़ने की चेष्टा करते हैं क्योंकि वह नहीं जानते कि इसका पकड़ना भयानक है। यह सब उदाहरण इस प्रकार के हैं, जिनसे कहा जा सकता है कि यदि बालकों को अच्छी शिक्षा दी जावे तो उनसे भय को दूर किया जा सकता है, जो कि उनके चरित्र के लिए अति हानिकारक है।

उदाहरण लीजिये—एक दो वर्ष का बालक अंधेरे में जाने से नहीं डरता परंतु अगर एक बार उसको कोई डरा दे या स्वयं ठोकर लग जाय तो वह उसी अंधेरे से डरने लगता है। प्रसिद्ध भी है 'दूध का जला छाछ को फूक फूक कर पीता है।'

बालकों मे भय के कारण और भी हो सकते हैं, जैसे शारीरिक भय, जिस प्रकार गड्ढे में गिरने का भय, या कुएं मे देखने से डरना इत्यादि। कुछ बच्चे इस कारण भी डरते हैं कि उनके काम को देखकर कोई उनकी हंसी न उडावे। यह अधिकतर ४ वर्ष के ऊपर के बालकों मे पाया जाता है।

भय को विशेषता भी दी जा सकती है। जो काम हम आसानी से नहीं कर सकते, वह भय के कारण सरलतापूर्वक किया जा सकता है। डर के कारण हम बहुत तेज दौड़ सकते हैं, यदि हम कहीं जा रहे हो और कोई जानवर हमारा पीछा करें तो सम्भव है कि हम इतनी तेजी से दौड़ सकें कि अपने बैरी से बच सकें। कहा जाता है कि एक समय एक लड़के के पीछे भेड़िया लग जाने से वह एक लम्बी खाई कूद गया जो कि वह उमर भर प्रयत्न करने पर भी पार न कर सकता था। इस प्रकार भय में ऐसी शक्ति भी है जो कभी असाधारण कार्य भी करा सकता है।

भय के कारण हमको बहुत हानियां पहुंचती हैं और कभी-कभी तो केवल भय के कारण मृत्यु भी हो जाती है। कई व्यक्तियों के मुंह से यह भी सुना कि 'जब डाकू या चोर उन्हें सामने मिल गये तो उनकी 'घिग्घी' बंध गई।

भय के कारणों को सदैव दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। जब हम बालकों के चरित्र संगठन की बातें करते हैं तब माता-पिता और शिक्षा के क्षेत्र मे कार्य करने वालों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे बालकों को भयभीत होने से बचायें व्यवहार का मार्ग भय नहीं प्रेम होना चाहिए।

—सुशीलकुमार

जादू की माला

किसी नगर में एक योग्य पुरुष गंगाप्रसाद नाम का रहता था। वह बहुत धनवान और विद्वान् था, और साथ ही दानी और धर्मात्मा भी। उसकी प्रशंसा सब करते थे।

परन्तु गंगा को भी दुःख और चिंता बहुत थी। गंगा को जिस चिन्ता ने उसे बहुत उदास और दुःखी बना दिया, वह था उसका पुत्र यमुनाप्रसाद धूर्त न था पर फिर भी वह रात दिन झूठ बोलता रहता।

एक दिन ऐसा हुआ कि एक साधू गंगा के दर्वाजे पर आया और बैठ गया। गंगा ने उस साधू को देखा और कहा—महात्मा क्या आप मेरे लड़के का झूठ बोलना छुड़वा सकते हैं। मैंने उसके लिये बहुत-से उपाय किये पर वे सारे असफल रहे। मैंने अब कोशिश करनी छोड़ दी है। साधू ने कहा—यदि हो सका तो मैं उसकी इस आदत से उसको मुक्त कर दूंगा।

इसलिये उसने यमुनाप्रसाद को अंदर से बुलवाया, और एक माला देते हुये कहा—यह माला मोतियों की तुम्हें दे दूंगा, पर याद रक्खो अगर तुम झूठ बोले तो यह माला उड़ जायगी और साधू वहां से भीख ले कर रवाना हुआ।

जब साधू वहां से चला गया तब यमुना अपने मित्रों के पास गया और कहा कि ये माला मेरे लिये पिताजी लाये हैं।

उसका यह कहना ही था कि माला तुरन्त गायब हो गयी। यमुना घबराया और कहा—नहीं, ये तो मुझे महात्मा दे गये थे। बस माला फिर आ गयी।

इसी प्रकार यमुना जब झूठ बोलता तब माला उड़ जाती और, जब वह सत्य बोलता तब माला वापिस आ जाती।

कई दिनो बाद यमुनाप्रसाद ने अपनी आदत छोड़ दी। अब गंगाप्रसाद बहुत खुशी हुआ और आनन्द से जीवन व्यतीत करने लगा।

—अरविन्द गोस्वामी

जरा हंसिए

मास्टर (मोहन से) तुम आज देर से क्यों आए हो।

मोहन—पानी बरसा था रास्ता फिसलना हो गया था। एक पैर आगे रखता तो दो पैर पीछे फिसल जाते थे।

मास्टर—'तो स्कूल तक कैसे आये।'

मोहन—मैंने अपना मुंह घर की ओर कर लिया था।

× × ×

पिता—चन्दू तुम आज क्यों रोते हो।

चन्दू—मुझे गुरू जी ने बहुत मारा है।

पिता— क्यों ?

चन्दू—गुरू जी ने एक सवाल पूछा था। उसका उत्तर मेरे सिवा किसी ने नहीं दिया।

पिता— वाह ! फिर तो इनाम देना चाहिये था। अच्छा वह सवाल कौनसा था।

चन्दू—गुरू जी ने पूछा था कि मेज की दराज में बिल्ली का बच्चा किसने रक्खा था।

× × ×

एक सेठ जी के पास एक नौकर था। यदि नौकर को कहीं किसी काम करने में अधिक देर लग जाती थी तो सेठ उतने समय की मजदूरी काट लेते थे।

एक समय सेठ जी पास के गांव के बाजार को कपड़ा बेचने चले गये। वापिस आने मे रात हो गई। रास्ते में चोर मिले और चोर सेठ जी को मारने लगे। सेठ जी ने नौकर से कहा सहायता करो। नौकर ने कहा इतने समय की मजदूरी काट लीजियेगा।

—राममोहन शर्मा

क्या आप जानते हैं?

● मक्खियां मारना हमारे यहां बेकार का काम कहा जाता है। योरोप और अमेरिका में मक्खी भिनभिनाती हैं तो उनकी शामत आ जाती है। उन्हे मारते समय मनुष्य मन मे सोचता है 'यदि इसका कुछ उपयोग हो जाता तो क्या बात ! इससे क्या रुपया पैदा नहीं हो सकता ?'

● अमेरिका के वैज्ञानिको ने साधारण मक्खी के सिर व टांगो का उत्तम उपयोग किया है। बढ़िया कागज का गूदा व मक्खी के पैर व टांगो से इतना सुन्दर कागज बनाया कि जिसकी बराबरी नहीं हो सकती। उसकी मोहक सतह पर लिखने के लिए धन कुबेरो के हाथ कुलबुला उठते हैं। पश्चिम वाले भी मक्खीचूस हैं, पर हमारी भांति नहीं।

● ब्रिटेन की एक कार बनाने वाली फर्म ने युद्धकाल की 'जीप' के सिद्धान्त के आधार पर उड़ने वाली कार बनाने की योजना तैयार कर ली है। यह कार सड़कों पर चलने के अतिरिक्त उड़ भी सकेगी। इनके बनाने में जो धातु इस्तेमाल होती है, उसकी प्राप्ति सुविधापूर्ण हो जाने पर ऐसी कारों का निर्माण शुरू हो जायगा।

● ब्रिटिश आविष्कारक भारत, अफ्रीका अर्जेंटाइना तथा अन्य गर्म देशों मे बेमौसमी फसलें पैदा करने की संभावनाओं की खोज में तत्पर हैं। इस प्रकार की फसलें पैदा होने पर संसार की खाद्य स्थिति सुधर सकेगी। इन बेमौसमी फसलों के उत्पादन के पीछे एक आश्चर्यजनक तोप का आविष्कार है जो इस ढंग से बनायी गयी है कि उससे १ से ले कर तीन एकड़ भूमि पर पानी की हल्की बौछार गिराई जा सकती है।

दो गीत

[१]

कर रे मन, उसका पूजन !
जिसके संकेत सुनहले,
नभ में तारक बन आते !
निज झिलमिल चल-चितवन में,
स्वप्नों की सृष्टि बसाते।
जिससे ज्योतित जग-जीवन !
कर रे, मन उसका पूजन !!
जिसकी मृदु-स्मित ले हिमकर,
दिशि-दिशि ज्योत्स्ना बिखराता।
निज स्वर्ण-रश्मियों में भर,
वासन्ती - मधु बरसाता।

हंस जाता जीवन - मधुवन !
कर रे, मन उसका पूजन !!
जो ऊषा - हास में आकर,
आलोक - रश्मियां भरता !
निशि की नीरव - श्वासों को,
उज्ज्वल - उज्ज्वलतर करता !
करता जो नयनोन्मीलन !
कर रे मन, उसका पूजन !!
कलरव कर फेनिल सागर,
जिसके सुगीत गाता है।
जिससे मिलने को क्षण - क्षण,
आकुल हो लहराता है !
भरता प्राणों के स्पन्दन !
कर रे मन, उसका पूजन !!
न जिसके अन्त चरणों को,
धोने आकुल घन फिरते।
चपला की चपल लपक में,
निज अन्तर्ज्वाला भरते !
करते आंसू से अर्चन !
कर रे मन, उसका पूजन !!

—रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

★

[२]

सजनि ! प्रात होता निशा सो रही है
प्रभामय सलज हर दिशा हो रही है !
निशा रात भर केलि करती रही है;
अमल चांदनी बन बिखरती रही है।
उसे मधु मिला पान करती रही है—
बिसुध हो रही है तृषा खो रही है !
सजनि ! प्रात होता निशा सो रही है !

दिवस के नयन मंजु जलजात खुलते,
जगाती मलय अलि, अलस प्रात खुलते !
तुहिन के सुशीतल तरल मोतियों से—
दिवस के दृगों को उषा धो रही है;
सजनी ! प्रात होता निशा सो रही है !

कि उतरी हैं किरणें गगन प्यारसी में;
चपल मुग्ध उतरीं सुधा धार सींचे;
मिला आज नभ का प्रकम्पित परस है—
पुलक अंग तन्मय रसा हो रही है !
सजनि ! प्रात होता निशा सो रही है !

—शिवकुमार (बरहज)

★

छेड़ो मत यह तार प्रवासी

इसमें आशा है जीवन की,
इसमें स्मृति गत यौवन-धन की,
इसमें मेरी हार प्रवासी !!

इसमें कम्पित कर की काया,
इसमें मेरा प्रिय मुस्काया;
इसमें कोमल उर की छाया,
प्रिय की स्मृति से जी भर आया !
लाती है यह तार उदासी !!

इसमें कम्पित हास्य किसी का,
इसमें प्रणय, वियोग, विरह है;
इसमें छुपा किसी का रोदन
इसमें ही उजड़ा उपवन है !
जीवन का यह भार, प्रवासी !!

इसकी ध्वनि से उर कम्पित था,
इसकी ध्वनि में ही जीवन था;
आज नहीं संगीत, नहीं प्रिय,
आज नहीं जग में जो कल था !
अब इसका क्या सार प्रवासी !!

उस कर का अब स्पर्श कहां है,
जाने क्यों यह तार कहां है !
मेरे सम्मुख स्मृति बन कर है,
तार वहां संगीत वहां है !
जिन वीणा के तार, प्रवासी !!

इसे छेड़ कर तुमने मुझको,
स्मृति-अतीत में ला घेरा;
आज कहां उपवन का माली,
आज कहूं किसको—'मेरा है' ?
नहीं व्यथा का पार, प्रवासी !!

तुम अनजान पथिक क्या जानो,
उलझी मैं किन-किन राहों में—
जीवन में क्या क्या खेला है,
स्मृति किसकी पल-पल आहों में
लाती है एक ज्वार, प्रवासी ! छेड़ो मत यह तार प्रवासी !!

—श्री लेखा, एम० ए०

★

[पृष्ठ ७ का शेष]

महती भ्रांति है। आर्य समाज तो एक प्रचारक संस्था है, जिसका उद्देश्य मनुष्यमात्र तक सत्य का सन्देश पहुंचाना है।

लक्ष्य और कार्यक्रम

जब हमारे सामने लक्ष्य स्पष्ट रूप में आ गया, तो कार्यक्रम के सम्बन्ध में विचार करना कठिन नहीं रहा। कार्यक्रम के सम्बन्ध में प्रश्न करने वाले सज्जन कभी कभी यह सोच कर प्रश्न करते हैं कि मानों आगे बिल्कुल अन्धकार है। अब कहीं से प्रकाश की नई रेखायें आयें तो काम चले। स्वराज्य मिल गया, हिन्दू संगठन की चर्चा शान्त हो गई। अब शेष क्या रह गया ? वह सोचते हैं कि कुछ न कुछ तो चाहिये, अन्यथा आर्य समाज समाप्त हो जायगा और कुछ नहीं है तो आगामी चुनाव का मामला ही सही, चलो, चुनाव में भाग लेकर ही कुछ दिनों के लिए आर्यसमाज को जीवित रख लो। ऐसे महानुभाव यदि गम्भीरता से विचार करेंगे तो उन्हें विदित होगा कि ऐसे अस्थायी कार्यों में पांव फंसाने से आर्य समाज का गौरव घटता है बढ़ता नहीं है। सफलता तो प्राप्त होती नहीं, उल्टा निकम्मा होने का आरोप लग जाता है। सफलता का श्रेय कांग्रेस को मिला और साम्प्रदायिकता का कलंक आर्य समाज के माथे पर लगाया गया। फलतः, आर्यसमाज के कार्यक्रम पर विचार करते हुए उसके प्रधान लक्ष्य को अपना मार्गदर्शक बनाना चाहिये, अवान्तर और सामयिक चर्चाओं अथवा आन्दोलनों को नहीं।

—(अपूर्ण)

चित्रलोक

पाकिस्तान में रंगीन फिल्म का निर्माण

सुप्रसिद्ध फिल्म-अभिनेत्री मीना के पति दिग्दर्शक डब्ल्यू० जेड० अहमद ने 'यास्मीन' नाम से एक रंगीन फिल्म तैयार करने का निश्चय किया है, जो कि पाकिस्तान में निर्मित पहली रंगीन फिल्म होगी। इस फिल्म पर लगभग छः लाख रु० व्यय होंगे और मीना मुख्य अभिनेत्री के रूप में कार्य करेगी। इसकी कहानी १७ वीं शताब्दी में ईरान में घटित एक ऐतिहासिक घटना के आधार पर तैयार की गयी है। फिल्म की कागजी तैयारियां पूरी हो चुकी हैं और शूटिंग का कार्य शीघ्र ही प्रारम्भ किया जायगा।

●

प्लेबैक सिंगर अभिनेत्री बनी

'दर्द' फिल्म की प्ले बैक गायिका उमादेवी ने अब अभिनय क्षेत्र में आने का निश्चय किया है और वह शीघ्र ही एक फिल्म में आने वाली है।

●

मिश्र का फिल्मोद्योग

अनेक फिल्म-कथानकों के लेखक आगा जानी काश्मीरी हाल ही में मिश्र की यात्रा करके आये हैं। उन्होंने बताया कि मिश्र अरबी भाषा की फिल्मों का केन्द्र है। वे फिल्में मध्यपूर्व और उत्तरी अफ्रीका में भी दिखायी जाती हैं और टैक्नीक की दृष्टि से काफी उन्नत हैं। वहां पर फिल्मी कलाकारों की समस्या भारत के समान ही विषम है। मिश्र की अधिकांश अभिनेत्रियां स्थूलकाया और भद्दी हैं। उन्होंने यह भी बताया कि मिश्र के कई फिल्म-निर्माता ऐसी योजनायें बना रहे हैं कि भारतीय और अरबी पूंजी से भारतीय और अरबी कलाकारों के सहयोग से दोनों भाषाओं में फिल्में तैयार की जाय।

●

ब्रिटिश कैमरामैन लाहौर में

पाकिस्तान के एक फिल्म - स्टुडियो में कार्य करने और स्थानीय टैक्नीशियनों को प्रशिक्षण देने के लिए ब्रिटिश कैमरा-मैन जान डीन अगस्त के मध्य में लाहौर पहुंच रहे हैं। श्री डीन लाहौर की एशिया फिल्म कम्पनी में कार्य करेंगे और डोक्युमेन्टरी तथा छोटी फिल्मों का निर्माण करेंगे।
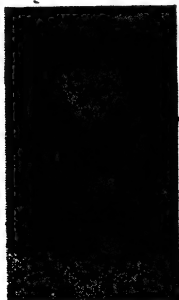
●

सुरैया दो वर्षों तक फिल्मों में कार्य नहीं करेगी

सुप्रसिद्ध फिल्म-अभिनेत्री सुरैया की मां ने अभी हाल में बम्बई के एम एण्ड टी स्टुडियो में हुसनलाल भगत राम की फिल्म 'अफ्सी' के मुहूर्त के अवसर पर एकत्रित व्यक्तियों को बतलाया कि मैं और मेरी पुत्री डाक्टर के परामर्श पर स्वास्थ्य - सुधार के लिए स्विट्जरलैंड जा रहे हैं और फलतः मेरी पुत्री दो-एक वर्षों तक किसी फिल्म में कार्य नहीं करेगी।

सिनेमा के दो कलाकार

स्वर्णलता भारत आयगी

ज्ञात हुआ है कि 'रतन' की नायिका स्वर्णलता ने, जो भारत के विभाजन के बाद अपने पति नजीर के साथ पाकिस्तान चली गयी थी, अब भारत लौट आने का निश्चय कर लिया है।

दिल्ली में स्टुडियो का निर्माण

स्वर्गीय दादा साहब फालके के एक पुराने सहयोगी श्री साठे दिल्ली रिपब्लिक स्टुडियोज (भारत) लिमिटेड के नाम से पहले फिल्म स्टुडियो का निर्माण-कार्य आरम्भ करने वाले हैं। इसके लिए ओखला के निकट भूमि प्राप्त कर ली है। यह स्टुडियो १ करोड़ रु० के व्यय से तैयार किया जायगा। इस सम्बन्ध में श्री साठे को श्री शान्ताराम, बाबूराव पाई और महबूब का सहयोग प्राप्त हो गया है।

झांसी की रानी की फिल्म

चित्रकला मन्दिर (पेप्सू) लिमिटेड पटियाला के दिग्दर्शक जगदीश गौतम 'बागी नेता' की बजाय 'कलंक' नाम से एक सामाजिक फिल्म तैयार करने के लिए अगस्त मास में बम्बई जा रहे हैं। इसके गीत व सम्वाद दिलगीर और आज़म ने लिखे हैं। बागी नेता का निर्माण कार्य आरम्भ होने में अभी छः मास और लग जायगे, क्योंकि इसके लिए स्वातन्त्र्य-संग्राम और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के युग का सही रिकार्ड हासिल किया जा रहा है।

मुकेश निर्माता बना

सुप्रसिद्ध प्लेबैक गायक मुकेश अब निर्माता बन गया है और डार्लिंग पिक्चर्स नाम से एक नयी संस्था को जन्म दिया है। इस संस्था की पहली फिल्म का मुहूर्त किया जा चुका है और उसमें दो नये चेहरे पेश किये जा रहे हैं।

'हमारा हिन्दुस्तान'

मीनू मसानी की 'अवर इण्डिया' पुस्तक के आधार पर पाथ फिल्म्स द्वारा निर्मित 'हमारा हिन्दुस्तान' फिल्म का इस सप्ताह गवर्नमेंट हाउस में राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद, प्रधानमन्त्री प० नेहरू तथा अन्य व्यक्तियों के लिए एक विशेष शो किया गया। पिछले ४००० वर्षों के भारतीय इतिहास को लेकर और भारत के २२ उच्च कोटि के कलाकारों के सहयोग से तैयार किये गये इस अनोखे फिल्म की राष्ट्रपति और नेहरूजी दोनों ने बड़ी प्रशंसा की। इस फिल्म को हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार किया है और इसका प्रदर्शन आगामी अगस्त में स्वाधीनता-सप्ताह के दौरान में देश के सभी मुख्य नगरों में आरम्भ किया जायगा।

अमेरिका की दो प्रसिद्ध तारिकायें

आइरेने डूने जो इंग्लैंड में निर्मित 'महारानी विक्टोरिया' फिल्म की भूमिका में प्रमुख भाग लेंगी।

ओलीविया डी हैवीलैंड, जिसको राष्ट्रीय महिला प्रेस क्लब के वार्षिक अधिवेशन में विशेष सम्मानपत्र प्रदान किया गया है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिकारियों से—

'हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' हिन्दी-प्रेमियों के गौरव की संस्था है। अतएव सम्मेलन के प्रति समुचित आदर-भाव रखते हुए दक्षिण भारत के कुछ निवासियों ने शुद्ध साहित्य-प्रचार की दृष्टि से कुछ अनुरोध किया है। आशा है 'सम्मेलन' के प्रतिनिधि तथा पदाधिकारी इस पर विचार करेंगे और अपने उदार निर्णय से दक्षिण के हिन्दी प्रेमियों को उपकृत करेंगे।

१ 'सम्मेलन' को शुद्ध, स्वस्थ तथा कार्य-क्षम रखने के लिए यह आवश्यक है कि उसके संगठन में किसी प्रकार की 'गुटबन्दी' न रहने पाए। उसका नियंत्रण ऐसे निष्पक्ष, उदार एवं; साहित्यिक प्रतिभा-संपन्न व्यक्तियों के हाथों में रहे जिसके ऊपर साहित्यिकों तथा साहित्य-प्रेमी जनता का भरोसा हो।

२. देश की समस्त हिन्दी-प्रचारिणी संस्थाओं के साथ 'सम्मेलन' का अनुकूल व्यवहार हो।— किसी पर प्रतिद्वन्द्विता की प्रतिछाया न पड़ने पाये। खास कर दक्षिण में जो संस्थाएँ हिन्दी प्रचार का काम कर रही हैं, उनके काम में 'सम्मेलन' सहायक हो। संभव हो तो साहित्य-प्रेमी परीक्षार्थियों की सुविधा के लिए 'सभा' के साथ किए गए पुराने समझौते फिर से स्थापित कर लिये जायें जिससे 'सभा' की ऊंची परीक्षाओं में उत्तीर्ण परीक्षार्थी 'सम्मेलन' के 'विशारद' तथा 'रत्न' में बैठने का आवश्यक सुयोग प्राप्त कर सकें।

३. अगर तत्काल वैसा कोई समझौता सम्भव न हो, तो स्थायी तौर पर कोई ऐसा प्रबन्ध अविलंब किया जाए, जिससे योग्य विद्यार्थियों को कम से कम 'सम्मेलन' की मध्यमा-परीक्षा में बैठने की अनुमति मिल सके। अन्यथा साहित्य-प्रेमी विद्यार्थियों के मार्ग में अनावश्यक अड़चनें आ खड़ी होंगी। उन्हें एक वर्ष तक 'प्रथमा' की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी, जो किसी भी दशा में न्यायपूर्ण नहीं कहा जा सकता है।

४ 'सम्मेलन' के 'रत्न' में भारत की अन्य भाषाओं के साथ दक्षिण की तेलगु, कन्नड़ मलयालम को स्थान दिया गया है पर तामिल उपेक्षित रह गयी है। यह अपेक्षा मिटा दी जाए, क्योंकि तामिल भारत की सबसे पुरानी भाषा है और उसका साहित्य अति पुरातन एवं समृद्ध है।

५ 'सम्मेलन' दक्षिणी साहित्य से अनुवाद कार्य में आवश्यक प्रोत्साहन दे तथा पारिश्रमिक-पुरस्कार देकर उसके प्रकाशन की समुचित व्यवस्था करे।

६ दक्षिण की देवियां बड़े उत्साह के साथ साथ हिन्दी-साहित्य के अध्ययन की ओर अग्रसर हो रही हैं। 'सम्मेलन' भी उनकी इस अभिरुचि का स्वागत करे तथा उनकी सुविधा पर ध्यान रख कर परीक्षा-सम्बन्धी नियमों में आवश्यक संशोधन कर दे, जिससे 'वैकल्पिक' का बोझ उठाना न पड़े।

७. दक्षिण भारत से हिन्दी में कई पत्रिकायें निकलने लगी हैं। उन्हें अपनी वस्तु समझ कर 'सम्मेलन' समय-समय पर उनमें प्रकाशित महत्वपूर्ण लेखों की समुचित रक्षा करे।

८. दक्षिण में हिन्दी के लेखकों की संख्या बढ़ती आ रही है। जब से यहां की उन्नत शिक्षण-संस्थाओं में हिन्दी का प्रवेश हुआ है, तब से हिन्दी के पंडित-प्रोफेसर हिन्दी में विशेष अभिरुचि दिखाने लगे हैं। 'सम्मेलन' उनसे सीधा सम्बन्ध स्थापित करे और उनके द्वारा दक्षिण के लोक गीतों तथा लोकोक्तियों का-संग्रह कराए तथा उनके प्रकाशन की सम्यक् व्यवस्था कर दें।

९ 'सम्मेलन' समय- समय पर योग्य विद्वानों को भेज कर दक्षिण में 'साहित्यिक यात्रा' का उपक्रम करे जिससे दक्षिण के हिन्दी-प्रचारक क्षेत्र का मूल्यांकन हो सके, और वहां के हिन्दी-केन्द्रों से उत्तर का सजीव सम्बन्ध स्थापित हो।

१०. 'सम्मेलन' आवश्यक छात्रवृत्ति देकर दक्षिण प्रांत से हिन्दी जानने वाले योग्य विद्यार्थी को अपने यहां आमंत्रित करे और अपने 'संग्रहालय' में उनके अध्ययन तथा रहन-सहन की विशेष व्यवस्था करे तथा उनसे तुलनात्मक साहित्य का सृजन करावे। आज ऐसे व्याकरण तथा कोश की सख्त आवश्यकता हो गई है। आदि।

इस अनुरोध के नीचे दक्षिण भारत के अनेक प्रतिष्ठित हिन्दी-प्रेमी विद्वानों के हस्ताक्षर हैं। क्योंकि हिन्दी में दक्षिणी भाषाओं से अनुवाद का अब तक श्रीगणेश भी नहीं हुआ है।

दुमदार दोहे

'गुस्ताख'

मार्क्सवाद सिद्धांत में, 'गांधी' के सिद्धांत।
घोटि-छानि जब के पियो, तब ही होवो शांत॥
अन्यथा रोओगे।

हिन्दू मंत्री के लिए, बैंक न पूछो मोल।
झुंझा-झुंझा कर रहे, 'जोगेन्द्र मण्डल' रोल॥
लियाकत ना सुने।

'जन - कांग्रेस - कांग्रेस' में, है मौलिक मतभेद।
'तिरलोकसिंह' को कहो, कहत-कहत ही स्वेद॥
खून की बात का।

एक बृद्ध आरोप से, दस पुत्रों की प्राप्ति।
'मुंशी' अग्नि पुराण की, पढ़ कर यही प्रशस्ति॥
खुशी में गाई उठे।

वाक् चीन को सभ्यता, अति आवश्यक आज।
नक्कारखाने में अमर, 'नेहरू' की आवाज॥
गूंज कर रह गई।

ठुकराया 'ट्रूमैन' ने, 'नेहरू' शांति प्रयास।
रूस उड़ावे दिल्लगी, ब्रिटिश करे परिहास॥
चाचा जी नमस्ते।

पांच दिना पीछे गई, दिल्ली बात समाप्त।
'नेहरू ल्याकत' में गई 'क्रिप्स' महिमा व्याप्त॥
मजूरी बनी रहे

दो तिहाई कोरिया, कम्यूनिस्ट गई छीन।
'मेकआर्थर' खिल रहे, लिए हाथ दूरबीन॥
चीन को छोड़ यहां।

'मिट्टी' बलवन्त' की, भई कम्बई में भेंट।
'डाक कर्मचारियों' को भई, वही तंबाकी टेंट॥
कहु है या नहीं।

वनस्पति के पक्ष समर्थकों से दो बातें

★ श्री हरदेवसहाय

आज कल वनस्पति तेल या घी के पक्ष में निम्न लिखित दलीलें हैं —

१. वनस्पति एक राष्ट्रीय उद्योग है और इस पर देश का २१ करोड़ रुपया लगा हुआ है।

२. वनस्पति स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं, यह पौष्टिक, स्वास्थ्य वर्द्धक और सर्व गुणसम्पन्न खाद्य पदार्थ है।

३. वनस्पति घी गोवंश और किसान को नुकसान नहीं पहुँचाता, अपितु लाभ ही देता है।

४. वनस्पति का समर्थन सरकार के मन्त्री तथा विशेषज्ञ करते हैं।

५, उत्तम वस्तु होने के कारण वनस्पति की मांग साधारण जनता में ही नहीं, फौजी सिपाहियों के लिए भी की जाती है।

वनस्पति वालों ने इस घी का प्रचार करने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगाया हुआ है। पर यह तर्क सम्मत नहीं। महात्मा गांधी ने वनस्पति घी को घोखा-दृग ही नहीं बताया, खोटे सिक्कों की उपमा देते हुये दण्डनीय भी कहा है। सरकार और वनस्पति घी वालों के लिए गांधी जी से प्राप्त यह वचन पर्याप्त होने चाहिए।

१. वनस्पति उद्योग नहीं है, न ही इसके बन्द करने से करोड़ों रुपये का नुकसान होगा।

कपास, रुई, ऊन रेशम से कपड़ा बुनना, चमड़े से जूते बनाना, कच्चे लोहे से लोहे की चीजें बनाना, दूध से घी बनाना, सरसों, तिल आदि से तेल निकालना आदि उद्योग हैं। पर वनस्पति घी न उद्योग है, न शिल्प। मूंगफली या बिनौले के तेल को घी का रंग-रूप देने से उसका खाद्य मूल्य नहीं बढ़ता, कितने ही विशेषज्ञों के मत में घटता ही है। इस समान गुण या हीन गुण वस्तु के लिए व्यर्थ परिश्रम ही नहीं करना पड़ता, मूल्य भी अधिक देना पड़ता है। वनस्पति एक खाद्य वस्तु है, तेल से अधिक इसमें खाद्यमूल्य नहीं, देश में चिकनाई की कमी होने के कारण वनस्पति के अधिक दिन ठहरने की दलील में भी कोई सार नहीं है। जो चीज अधिक होती है, उसे ही अधिक दिन रखने की आवश्यकता होगी। २१ करोड़ रुपये की लागत का सवाल भी उचित नहीं, वनस्पति के कारखानों में तेल के बीजों से तेल निकालने, तेल को शुद्ध करने, तेल को जमाने इत्यादि की क्रियाएं होती हैं। तेल को शुद्ध करने की क्रिया का विरोध हम नहीं करते। तेल जमाने के लिए सिर्फ जो मशीनें ४२ कारखानों में लगी हुई हैं, उनकी कुल कीमत चालीस लाख से अधिक नहीं। तेल का जमाना या वनस्पति बनाना बन्द हो जाए तो इन मशीनों से अन्य शिल्पकार्यों के लिए अरन्डेनामादि तेल जमाये जा सकते हैं। इस चालीस लाख की रकम के लिए पचास करोड़ का नुकसान बताना उचित नहीं।

जहर को अमृत बताने वाले विशेषज्ञ

वनस्पति घी प्रायः मूंगफली के तेल से बनता है। वनस्पति के पक्षपाती विशेषज्ञों के मतानुसार भी इसमें तेल से अधिक गुण नहीं, अतः वनस्पति घी न स्वास्थ्य वर्द्धक है, न पौष्टिक। वनस्पति घी, कारखाने वालों तत्सम्बन्धी राज्य अधिकारियों, विज्ञापन करने वालों के लिए ईश्वरीय देन है। जनता के लिए मूंगफली तथा मूंगफली का तेल उत्तर भारत के गर्म तथा शुष्क इलाके के लोगों के लिए अत्यन्त हानि कारक है। दक्षिण-पूर्व के लोग प्रायः तेल खाते हैं। उन्हें वनस्पति घी की जरूरत ही नहीं। वनस्पति घी सर्व प्रथम १९२७ में पंजाब के सरकारी विशेषज्ञ कैप्टन थामस तथा उसके बाद बम्बई के कर्नल सर साहिबसिंह और कितने ही सरकारी विशेषज्ञों, डाक्टरों, वैद्यों हकीमों, ने इसे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बताया है। सरकार ने स्वयं इज्जत नगर के अनुभव के आधार पर जनता में अनेक बीमारी पैदा करने वाली चीज बताया। पिछले महीने ही प्रेस ट्रस्ट इण्डिया दिल्ली ने आरविन अस्पताल के अनुभव का जिक्र करते हुए लिखा है कि पिछले चार साल में आंखों की बीमारियां आशातीत बढ़ गईं। इनबीमारियों के बढ़ने का प्रधान कारण वनस्पति घी और मक्खन निकला घी है। जिन विशेषज्ञों ने २४ नवम्बर १९४८ की रिपोर्ट में वनस्पति घी और साधारण तेलों में समान गुण-दोष बतलाए हैं, उन विशेषज्ञों की कमेटी का निर्णय भी अधूरा है, सर्वसम्मत भी नहीं। बताया जाता है कि अनुभव में चूहों या मनुष्यों को वनस्पति घी के साथ-साथ अन्य चिकनाई या विटामिन भी दिये गये, जिससे केवल वनस्पति के गुण-दोष ठीक मालूम नहीं हो सकते। अतः यह अनुभव, जो आज वनस्पति वालों और उनके साथियों का बड़ा सहारा है। सर्वसम्मत है न सम्पूर्ण। यह सब मानते हैं कि वनस्पति स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक नहीं तो सन्देहात्मक अवश्य है। भोजन की चीजों में सन्देह का लाभ व्यापारी की दृष्टि से नहीं, खाने वाले की दृष्टि से देखा जाता है। भोजन की जिस चीज में सन्देह होता है वह खाने योग्य नहीं समझी जाती। यदि हमारे दूध या चाय के प्याले में हमें यह सन्देह हो कि इसमें जहर है या अन्य स्वास्थ्य को हानि पहुंचाने वाली चीज है तो न हम उसे स्वयं पियेंगे न किसी और को पीने देंगे। यह अनुभव चूहों कैदियों आदि पर न होकर वनस्पति के कारखाने वालों, पर होना चाहिये 'जो स्वयं शुद्ध घी मक्खन खाते और लोगों को नकली खिलाते हैं।' तथा यह कार्य उनके पक्षपाती सरकारी अधिकारियों पर पूर्ण देख-रेख के साथ किया जावे। यदि इनको छः महीने तक कोई चिकनाई या विटामिन न देकर केवल वनस्पति खिलाया जाये और उनका स्वास्थ्य ठीक आज जैसा ही रहे, तो कहा जा सकेगा कि वनस्पति स्वास्थ्य के लिए बुरी चीज नहीं है।

पशुधन और किसान का शत्रु

हमारे देश में पशु दूध ही नहीं, हल चलाने, बोझ ढोने, कुएं आदि चलाने के काम में भी आते हैं। पशुओं से देश को बारह अरब रुपया वार्षिक या कुल आय की आधी आमदनी होती रही है। इसमें तीन अरब रुपया घी दूध आदि से मिला. अधिकतर पशु गांव में रहते हैं। प्रायः गांव शहरों से दूर है। वहां दूध बिकता नहीं, इसलिए घाटा उठा कर भी घी तैयार करना पड़ता है। घी निकालने से किसान को छाछ भी मिलती है और यही छाछ किसान के जीवन का एकमात्र सहारा है। छाछ के कारण ही वह कभी भूपसर्दी गर्मी की परवाह नहीं करता। किसान का घी तसल्ली से बिकना चाहिये और उसका उचित मूल्य भी मिलना चाहिये। नकली घी के कारखाने वालों ने वनस्पति घी का रंग रूप तथा सुगन्ध घी जैसी बना कर घी की मिलावट के दरवाजे खोल दिये हैं। शुद्ध घी की तसल्ली नहीं रही। अर्थशास्त्र के ग्रेशम नियमानुसार अब बाजार में नकली तथा सस्ती चीजें आ जाती हैं, तो असली चीजों को खदेड़, बाहिर करती हैं। वनस्पति घी के कारण आज शुद्ध घी की कोई तसल्ली नहीं रही। शुद्ध खरीदने वाले को शुद्ध घी का भरोसा नहीं रहा। अतः वह वनस्पति खरीदने पर बाध्य है। शुद्ध घी पैदा करने वाले किसान को यह निश्चय नहीं कि उसका घी उचित दामों पर बिकेगा। जब घी की बिक्री की तसल्ली ही नहीं रही तो पशु-पालन नहीं हो सकता। वनस्पति घी की मिलावट जारी रही तो पशु लाभ-दायक नहीं रहेंगे केवल मनबहलावे की चीज रह जावेगी। सरकारी कृषिकमीशन १९१८ तथा सरकारी पशु-रक्षा उन्नति कमेटी की रिपोर्ट १९४८ और प्रायः सब पशु व कृषि विशेषज्ञों ने वनस्पति घी को पशुओं की उन्नति की दृष्टि से हानिकारक बतलाया है। यदि किसानों का मत मालूम किया जाये तो, शायद ही कोई किसान वनस्पति के पक्ष में मत दे। भारतीय किसान वनस्पति घी को अपना तथा अपने पशुओं का शत्रु समझता है।

वनस्पति के कारखाने वालों ने विज्ञापनों में उत्तर प्रदेश के खाद्य तथा स्वास्थ्य मन्त्री श्री चन्द्रभान गुप्त तथा श्री जगरामदास दौलतराम जी भू. पू. खाद्य तथा कृषि मन्त्री भारत सरकार, बम्बई के स्वास्थ्य मन्त्री श्री गिल्डर और भारत सरकार के विशेषज्ञ श्री भटनागर का नाम बार-बार लिया है। श्री चन्द्रभान जी गुप्त ने वनस्पति वालों की विज्ञापन बाजी का विरोध करते हुए लिखा है— मैं वनस्पति का पक्षपाती नहीं हूं। ऐसे विज्ञापन नहीं छापने चाहिये। श्री जयरामदास जी भी वनस्पति को पौष्टिक तथा स्वास्थ्यवर्धक मानता है वनस्पति वालों के बड़े वकील हैं श्री भटनागर। श्री शांति स्वरूप भटनागर ने सदैव से वनस्पति वालों का साथ दिया है। जब पंजाब में रंग डालने का सवाल आया, तब भी आपनें जनता का नहीं, वनस्पति का पक्ष लिया। आप वनस्पति घी में मिलावट दूर करने के लिए रंग डालने के विरुद्ध हैं। आपकी दलील है कि यदि घी की मिलावट दूर करने के लिए वनस्पति में रंग डालना जरूरी है, तो क्यों न दूध को मिलावट में काम आने वाले पानी को रंग देना चाहिये। आपने लिखा है कि संसार के मान्य लोग रंगने के विरुद्ध हैं। पानी एक प्राकृतिक चीज है उसका रंगा जाना असम्भव है, पर वनस्पति का मिठाई शरबत आदि की तरह रंगा जाना असम्भव नहीं। पश्चिमीय देशों में वनस्पति के बदले मारग्रीन चलती है। वहां दूध गायों का ही होता है और उसके मक्खन का रंग हल्का पीला है। मारग्रीन सफेद होती है, उसे मक्खन जैसे बनाने के लिए पीला रंगा जाना सरकार ने कानूनन बन्द कर दिया। मारग्रीन वनस्पति की तरह केवल जमा हुआ तेल ही नहीं है पौष्टिकता लाने के लिए इसमें चर्बी दूध का छेना तेल तथा अन्य ऐसे ही कितने पदार्थ मिलाये जाते हैं। मारग्रीन और मक्खन के रंग स्वाद और सुगन्ध भिन्न भिन्न हैं। उनकी मिलावट

नही हो सकती। फिर भी किसान के लाभ और मक्खन की दस्तकारी की रक्षा के लिए कैनडा, दक्षिणी अफ्रीका और इटली ने मारग्रीन बनाना और बिकना कतई बन्द कर दिया। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड मे यह पनप ही नही सकी। इंगलैंड, अमेरिका और डेनमार्क तथा अन्य देशो मे जब तक मक्खन को पूरी रक्षा न मिली, तब तक मारग्रीन पर तरह-तरह के प्रतिबन्ध लगाये गये। डेनमार्क ने तो इसके विज्ञापन भी न छपने दिये। अच्छा होता भटनागर विदेशो के उदाहरण देने से पहिले अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन पुस्तक 'आयल एन्ड फैट' तेल चिकनाई और भारत सरकार की मूंगफली रिपोर्ट के २०१ से ३०६ तक पृष्ठ पढ लेते। दरअसल श्री भटनागर साहिब कबसे वनस्पति वालों के पक्षपाती रहे हैं। इसका कारण बतलाना मेरा काम नहीं है। पर सरकार का काम है वह मालूम करेंगे।

वनस्पति की मांग अच्छा होने के कारण नहीं

यह ठीक है कि पिछले १० सालों में वनस्पति घी आठगुणा अधिक बढा है और शुद्ध घी का उत्पादन आधा रहा है। वनस्पति घी की मांग इसलिए नहीं बढी, कि वह अच्छी चीज है अपितु इसलिये बढी कि वनस्पति की मिलावट के कारण शुद्ध घी की तसल्ली न रहने के कारण मजबूरन वनस्पति खरीदना पड़ता है। शायद कोई फौजी सिपाही होगा जो वनस्पति खाना पसन्द करे। यदि सरकार सच्चाई के साथ फौजी सिपाहियों का मत ले तो नब्बे प्रतिशत से भी अधिक वनस्पति के विरोधी मिलेंगे।

रंग भी नहीं सुगन्ध और दाना भी रहेगा

१९२७ से वनस्पति घी में मिलावट करने के लिए रंगने का सवाल जनता और सरकार के सामने आया पर जब जब रंग डालने की कोशिश हुई या की गई, वनस्पति घी के कारखाने वालो ने विशेषज्ञों तथा सरकारी अधिकारियों से मिल कर रंग न पडने दिया। कभी रंग न मिलने का बहाना किया। रंग मिल गया तो स्वास्थ्यके लिए खराब बतलाया। सरकार इन मायावी लोगों के मायाजाल में फंस कर कुछ न कर सकी। २२ मई १९४९ को कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने शीघ्र ही रंग डालने की तजवीज की। श्री जयरामदास दौलतराम जी ने ८ दिसम्बर को रंग का जिक्र किया और उसी सरकार के विशेषज्ञ श्री भटनागर, जिन के सुपुर्द रंग तलाश करने का काम हुआ था, कहते हैं रंग नहीं॰ डालना चाहिए। अब तक श्री भटनागर जैसे विशेषज्ञ रहेंगे रंग नहीं पड़ेगा। रंग के अतिरिक्त वनस्पति में घी जैसी सुगन्ध तथा रंग रूप देना भी उचित नहीं, वह केवल घी की मिलावट के लिए दिये जाते हैं। सरकारी मूंगफली रिपोर्ट के पृष्ठ ३०९ पर सिफारिश की गई है कि ब्यूट्रिकएसिड और सान्थेटिक इस्सेन्स जो वनस्पति को घी रंग रूप देता है, न मिलाए जाए, कुछ परवाह नहीं की गई। वनस्पति घी के कारखाने वाले उनके पक्षपाती विशेषज्ञ और सरकारी अधिकारी रंग न पड़ने देंगे और न घी जैसी सुगन्ध जैसी रूप रंग बन्द करेंगे। इसका एक ही उपाय है। वनस्पति तेल की तरह न बने बिके तथा न न जमाया जावे।

[पृष्ठ ४ का शेष]

राव देव अधिक 'वैसमैन' है, यह निर्विवाद कहा जा सकता है।

श्री शंकरराव देव की तपस्या, सादगी और देश के लिए बलिदान न उनके व्यक्तित्व का निर्माण किया है। श्री टण्डन का भी व्यक्तित्व ऊंचा है। इसमे संदेह नहीं, किन्तु उनकी निर्भीकता चुभने वाली है। टण्डनजी के विरोधियों ने उन्हे सांप्रदायिक के रूप में बदनाम किया है, इसलिए भी मुस्लिम सदस्यों के अतिरिक्त हिन्दू संस्कृति को मृत समझने वाले कांग्रेसी श्रीदेव को ही मत देंगे।

इन सब कारणो से श्री देव के सफल होने की आशा मैं करता हूं।

[पृष्ठ ४ कालम ४ का शेष]

उत्तर केवल श्री टण्डन ही दे सकते थे। ऐसा नेता हमे चाहिये। देश उन्हें इसी लिए यह पद देगा कि वे जनता के हैं।

यह एक भाग्य की बात है कि उत्तर प्रदेश के कांग्रेसी प्रतिनिधियों की संख्या कुल प्रतिनिधियों की संख्या में असाधारण भाग रखती है। वहां किदवई गुट भी अब शिथिल पड चुका है। इसलिए वहां के ८०—८५ प्रतिशत मत श्री टण्डनजी को मिलेंगे। इन सब कारणों से मैं समझता हूं कि श्री टण्डन जी विजयी होंगे।*

* लेख लिखने के बाद मालूम हुआ कि आचार्य कृपलानी का भी नाम पेश हुआ है। मेरा ख्याल है कि टण्डन जी व आचार्य कृपलानी में से कोई बैठ जायगा। श्री देव के मुकाबले में श्री कृपलानी भी जीत जायंगे, क्योंकि प्रायः सब दलीलें कृपलानी जी पर लागू होती हैं। वे नेहरू सरकार के निर्भीक आलोचक हैं, उत्तर प्रदेश के हैं, तपस्वी हैं, आदि आदि।

वीर अर्जुन

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार २ भाद्रपद सम्वत् २००७ [अङ्क १८

न्यूनतम व उचित मजदूरी

संसद् के इस अधिवेशन में अनेक महत्वपूर्ण विधेयक पेश हुए हैं। श्रम मन्त्री श्री जगजीवनराम ने न्यूनतम और उचित मजदूरी के सम्बन्ध में दो बिल पेश किये हैं। श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने खाद्य पदार्थों के गैरकानूनी संग्रह पर दण्ड देने के लिए बिल पेश किया। श्री हरिकृष्ण मेहताब का एक बिल था, जिसके द्वारा अनेक राज्यीय विभागों को केन्द्रीय सरकार के क्षेत्र के अन्तर्गत करने का अधिकार संसद् से मांगा गया था।

पिछले दिनों देश में सरकार के विरुद्ध जिस असंतोष और क्षोभ की ज्वाला फैल रही है, उसका मूल कारण विशुद्ध आर्थिक है। लोगों का जीवननिर्वाह कठिन हो गया है, चीजें महंगी होती जा रही हैं, व्यापार चौपट होता जा रहा है। महंगाई बढ़ती जा रही है, लोगों की आमदनी कम हो रही है। ये सब परिस्थितियां है, जिनके कारण देश में निरन्तर असंतोष बढ़ रहा है और देश के विविध राजनैतिक दल जनता के इसी असंतोष का लाभ अपने अपने दल की शक्तिवृद्धि के लिए उठा रहे हैं। किसी भी सरकार का बल उसके शस्त्रास्त्र-सुसज्जित सैन्य में नहीं, जनता के संतोष में है और यह एक दु:खद सचाई है कि पिछले दो-तीन वर्षों में जनता का जीवन कष्ट लगातार बढ़ता रहा है। सरकार को यह सचाई अनुभव न हुई हो, सो बात नहीं। वह बार-बार इस असंतोष को दूर करने के लिए वचन देती रही है। दुःख की बात यह है कि उसके वचन कभी क्रिया में परिणत नहीं हुए। पर अब ऐसा प्रतीत होता है कि वह सचमुच कुछ करना चाहती है। संसद् के पिछले अधिवेशन में उपर्युक्त बिलों का उपस्थापन इसी का चिन्ह है।

किसी भी मजदूर को इतना वेतन अवश्य मिलना चाहिए, जिससे कि उसका जीवन-निर्वाह हो सके। भारत सरकार ने १९४८ में यह कानून पास करके सब राज्यों की सरकारों को हिदायत दी थी कि वे ३१ मार्च १९५० तक अपने अपने क्षेत्रों में न्यूनतम वेतन नियत कर दें, किन्तु राज्यों की सरकारों को आपसी दलबन्दी से ही फुरसत न थी, इसीलिए एक भी राज्य में यह कानून अमल में नहीं आ सका। अब भारत सरकार ने नये कानून द्वारा ३१ मार्च १९५१ तक इसे क्रिया में परिणत करने का आदेश सरकारों को दिया है। न्यूनतम मजदूरी ठहराने का प्रयत्न हमारे देश में पहली बार किया गया है। यदि इसमें सफलता हुई, तो साम्यवाद और असंतोष की दिशा में यह बड़ा भारी कदम होगा।

न्यूनतम वेतन हमारा आदर्श नहीं है, वह तो आज की परिस्थिति देखते हुए कम से कम मांग है। ज्यों ज्यों उद्योग की स्थिति अधिक व्यय करने की होती जाय, त्यों त्यों मजदूरी का परिमाण भी बढ़ते जाना चाहिए। लाभ पर केवल उद्योगपति का ही अधिकार नहीं है। उस पर मजदूर का भी अधिकार है। इसलिए न्यूनतम वेतन को अन्तिम न मान कर केवल प्रथम सीढ़ी मानते हुए उसे बढ़ाने की व्यवस्था उचित वेतन बिलमें की गई है। परन्तु आज केवल न्यूनतम वेतन ही नियत करने की आवश्यकता नहीं, यह भी प्रधान आवश्यकता है कि लोग परिश्रमपूर्वक अधिक से अधिक काम करें। जब हम निर्वाह योग्य वेतन की मांग करते हैं, तब दूसरी ओर हमारा भी कर्त्तव्य हो जाता है कि हम अधिक से अधिक काम करें। न्यूनतम वेतन के साथ पेश किये गये उचित वेतनसंबंधी बिल में इसका भी विधान रक्खा गया है।

उत्तर प्रदेश में जमींदारी-उन्मूलन के नियम बन जाने के बाद अब कारखानों के मजदूरों की ओर ध्यान जाना स्वाभाविक था। आज देश में असंतोष की जो ज्वाला धधक रही है, उसे देखते हुए यह आवश्यक है कि किसानों व मजदूरों की उचित शिकायतों को दूर किया जाय।

★

नया समझौता

भारत और पाकिस्तान में बंगाल के अल्प संख्यकों के सम्बन्ध में कुछ नये निर्णय हुए हैं। इनके अनुसार सांप्रदायिक उपद्रवों का सामना करने, उन्हें रोकने, निष्क्रान्तों के वापस आने पर उन्हें उनकी जायदाद लौटाने तथा अपराधियों को कठोर दण्ड देने के निश्चय किये गये हैं। साम्प्रदायिक उपद्रवों के क्षेत्रों में बहुसंख्यकों पर सामूहिक जुर्माने लगाने का भी निश्चय इस समझौते में किया गया है। उसकी सबसे बड़ी महत्वपूर्ण बात यह है कि सरकारें निष्क्रान्तों को उनके मकान वापस दिलायेंगी। इसी तरह देहातों में निष्क्रान्तों की फसलें भी उन्हें वापस दी जायंगी। इसमें सन्देह नहीं कि यह समझौता निष्क्रान्तों को अपने अपने घर वापस आने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है। पिछले दिनों में यह शिकायत आई थी कि पश्चिमी बंगाल से वापस जाने पर पूर्वी बंगाल में अपने मकान नहीं मिले और फलतः उन्हें लौटना पड़ा। यदि पाकिस्तान सरकार इस नये समझौते पर अमल करे, तो पश्चिमी बंगाल में आये हुए शरणार्थी वापस जा सकते हैं। आज यदि उन्हें यह विश्वास हो जाय कि पूर्वी बंगाल में उन्हें अपना घर अपनी दुकान वापस मिल जायगी और अपराधियों को दण्ड मिलेगा, तो शरणार्थियों की पर्याप्त संख्या वापस अपने घरों में पहुंच जायगी। पर शर्त यह है कि पाकिस्तान सरकार इस समझौते पर ईमानदारी से अमल करे। यदि अन्य समझौतों की तरह ही यह भी एकतरफा रहा, तो भारत सरकार क्या कदम उठायेगी, इसका उल्लेख इस समझौते में नहीं है और इसीलिए यह भय है कि इसका पालन पाकिस्तान में न किया जायगा।

रेडियो और हि० सा० सम्मेलन

हिंदी साहित्य सम्मेलन ने रेडियो-बहिष्कार समाप्त करने का निश्चय किया है। यह बहिष्कार आज से करीब एक वर्ष पूर्व प्रारम्भ किया गया था। हमारी अपनी नम्र सम्मति में यह बहिष्कार जिन आधारों पर किया गया था, वे बहुत दृढ़ नहीं थे। और यही कारण है कि यह बहिष्कार बहुत सफल नहीं हुआ। हिन्दी के अनेक माननीय कलाकारों ने कुछ समय बाद असहयोग की नीति छोड़ दी। उन्होंने अनेक पदों पर कार्य भी प्रारम्भ कर दिया। बहुत से पत्रकार और लेखक बहिष्कार नीति के बावजूद इसमें बराबर सहयोग देते रहे। वस्तुतः यह रेडियो-बहिष्कार कुछ समय से अधिक नहीं चला। इसलिए सम्मेलन ने अपने असफल बहिष्कार को वापस लेकर वस्तुस्थिति के साथ सामंजस्य कायम कर लिया। बहिष्कार का परिणाम सम्भवतः परामर्श समिति के सदस्यों का पुनः सहयोग मात्र होगा। यों रेडियो से गाये जानेवाले अश्लील गीत अबभी जारी हैं। गीता और रामायण की कथा आज भी बन्द है। वस्तुत. ये शिकायतें ठीक होते हुए भी हिन्दी सम्मेलन के क्षेत्र के अन्तर्गत नहीं थीं। हमें आशा करनी चाहिए कि सम्मेलन आगे से कोई कदम उठाने से पूर्व पूर्ण विचार किया करेगा। दृढ़ आधारों के बिना कोई आन्दोलन सफल नहीं होता।

अब भी हिन्दी

मद्रास के शिक्षा विभाग ने हिन्दी को विद्यालयों में अनिवार्य न रख कर एक नया प्रश्न उपस्थित कर दिया है। क्या हिंदी इसी तरह आगामी कुछ वर्षों में राष्ट्र भाषा का स्थान प्राप्त करेगी? यदि उसे राष्ट्र भाषा बनाना है, तो यह आवश्यक है कि आज ही सब राज्यों के विद्यालयों में हिन्दी को अनिवार्य कर दिया जाय। आज भी विद्यार्थी हिन्दी न पढ़ेंगे, तो कुछ वर्षों बाद वही विद्यार्थी किस तरह हिन्दी में राजकार्य कर सकेंगे। यदि १० वर्ष बाद भी दक्षिण भारतीय हिन्दी से अनभिज्ञ रहेंगे, तो यह स्वाभाविक है कि वे हिन्दी को राजभाषा बनाने का विरोध करें, जैसा कि संविधान परिषद् में किया गया था। केन्द्रीय सरकार का कर्त्तव्य है कि वह किसी भी राज्य को ऐसा कार्य न करने दे, जिससे संविधान पूर्ति में किसी तरह की रुकावट पैदा हो।

अखिल भारतीय हित

खाद्य पदार्थों के अनियमित संग्रह पर कठोर दण्ड देने तथा अनेक राज्यीय विषयों पर केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण के अधिकार के सम्बन्ध में संसद ने जो कानून बनाये हैं, उनके उद्देश्य में किसी तरह का संदेह नहीं करना चाहिए। उनका उद्देश्य है पदार्थों के मूल्य में यथाशक्ति कमी करना। केन्द्रीय सरकार अनेक वस्तुओं के वितरण के सम्बन्ध में समस्त देश में एक नीति निर्धारित कर सकेगी और इस तरह यह सम्भव नहीं होगा कि एक राज्य में चना ९-१०) रु० मन बिक रहा है, तो दूसरे राज्य में २९) रु० मन। आजकल की सरकारें केवल अपने अपने राज्य के हिताहित दृष्टि में रखते हैं। अखिल भारतीय हितों की चिन्ता उन्हे नहीं होती। यह नया कानून केन्द्रीय सरकार को नये अधिकार दे कर वस्तुओं के मूल्य निर्धारण की सुविधा दे रहा है किन्तु जब तक जनता का सहयोग न मिले, सरकारी अधिकारी अधिक ईमानदार न हों, तब तक ऐसे प्रयत्न भी सफल हो सकेंगे, इसमें संदेह है।

रामचरित-मानस का भारतीय जीवन पर प्रभाव

प्रो० रामकृष्ण

बाल्यकाल ही से मुझे महाकवि तुलसीदास जी के रामचरित-मानस से अत्यन्त प्रेम रहा है। इस प्रकार से मेरे लिए यह कहना अनुचित न होगा कि यही पहली पुस्तक थी जिसने मेरे जीवन में ज्योति जगाई और मुझे वह पथ दिखलाया जिस पर चल कर कोई भी व्यक्ति केवल हाड़ मांस के पिण्ड के अतिरिक्त सभ्य और सुसंस्कृत मानव भी बन सकता है। तब से पर्याप्त हिन्दी और अन्य भाषाओं की पुस्तकें पढ़ने का अवसर मुझे मिला है। और उनमें से पर्याप्त ने अपने रूप रंग से मेरे मन को लुभाया है! किन्तु जो आनन्द, जो संतोष और जो स्वप्न मुझे रामचरित मानस ने जीवन के उस प्रभात में दिये और तब से बराबर देता आ रहा है वैसे किसी अन्य पुस्तक से न कभी मुझे मिले और न मिलने की आशा है। मैं नहीं समझता कि रामचरित मानस से मुझे केवल इसीलिए इतना स्नेह हो गया है क्योंकि वह मुझे उस समय मिला जब मेरे जीवन में राम का उदय प्रथम बार हो रहा था। यह ठीक है कि प्रथम राग में जो उन्माद होता है वैसा जीवन में पश्चात् उठने वाले रागों में नहीं होता।। किन्तु रामचरित मानस मेरे लिए गंगा की वह पुनीत धारा है जो सर्वदा ही अपने स्वच्छ सुमधुर और शीतल जल से मेरी आत्मा को आनन्द विभोर करती रहती है। अतः मिलन का जादू और आकर्षण बना रहता है।

सेवा, त्याग और स्नेह

मैं समझता हूं कि रामचरित मानस का सारा कथानक जिस आदर्श के संकेत पर चलता है वह है सेवा, त्याग और स्नेह का आदर्श। एक दृष्टि से ये तीनों शब्द ही एक ऐसी प्रवृत्ति के द्योतक हैं जो व्यक्ति को अहं के संकुचित क्षेत्र से निकाल कर समष्टि की ओर ले जाती है जो 'मैं' को इतना उन्नत और विस्तृत कर देती है कि 'मैं' और 'तू' में अन्तर नहीं रह जाता हमारे देश में इस प्रकृति को एक दृष्टि से वैराग्य का नाम दिया जा सकता है किन्तु इस को कुछ भी नाम क्यों न दिया जावे यह अकाट्य सत्य है कि इसी प्रवृत्ति पर मानव का अस्तित्व निर्भर करता है। उसके महल और उद्यान, उसके आभूषण और वस्त्र, उसके गान और नृत्य, उसका सुख और वैभव, उसकी संस्कृति और सभ्यता। यूं कहिए कि पशुजीवन से उसकी मुक्ति केवल इसी प्रवृत्ति पर आधृत है और सर्वदा रहेगी! इसी के बल पर तो उसने अपने पड़ोसियों से अपने को इस प्रकार बांध लिया है कि वे विभिन्न व्यक्ति न रह कर एक विराट प्राणी, एक समाज, एक समष्टि बन गये हैं। इसी के बल पर तो उसने उत्तुंग पहाड़ों और विशाल मरुभूमि की बाधाओं को नगण्य कर दिया है और आकाश और पाताल का चक्कर लगाया है। मैंने अब तक इसको प्रवृत्ति कह कर पुकारा है। सम्भवतः यह शब्द इस शक्ति का यथोचित वर्णन नहीं करता। सम्भवतः इसको सृजन शक्ति, भगवत शक्ति कुछ ऐसा नाम देने से आशय अधिक अच्छे प्रकार व्यक्त हो सके। किन्तु जैसा कि मैं कह चुका हूं नाम के झगड़े में न पड़ कर यदि हम एक क्षण के लिए इस शक्ति के हृदय को पहचान लें तो हमारा काम चल जायेगा।

रामचरित मानस के प्रत्येक पद में प्रत्येक काण्ड में इसी शक्ति की गाथा है और इसी आदर्श का वर्णन। वहां 'मैं' का अभाव नहीं है। 'मैं' तो है और अच्छी प्रकार है परन्तु वह 'मैं' अपने में ही बन्द नहीं है। राम, सीता, भरत, लक्ष्मण हनुमान इन सब का व्यक्तित्व पृथक-पृथक है। प्रत्येक में अपनी अपनी विशेषता है किन्तु साथ ही उनमें से कोई भी अपने ही में बन्द नहीं हो जाता वरन् प्रत्येक ही इस शक्ति से संचालित हैं इस आदर्श से ओत प्रोत हैं। राम के संकेत पर अयोध्या के नर नारी नगर में ऐसा विप्लव कर बैठते जो क्षण भर में राजसत्ता को उलट देता किन्तु क्या मुहूर्त भर के लिए भी राम के मन में ऐसा विचार आता है, नहीं। वे उतने ही शान्त चित्त से वनवास की आज्ञा सुनते हैं जितने से कि उन्होंने राजतिलक का संदेश सुना था। सच तो यह है कि उस समय जब सब व्याकुल हैं, राम ही पूर्वतया जाग्रत और निर्भ्रान्त बने हुए हैं। वह ही सबको अपनी मृदु वाणी से सांत्वना और शान्ति, बोध और कार्य शक्ति प्रदान करते हैं। मैं नहीं कह सकता कि संसार के साहित्य में इतना मर्मस्पर्शी आदर्श अन्यत्र कहीं भी है।

महाकाव्य

गीता के समान राम चरित्र मानस केवल दर्शन न हो कर महाकाव्य है। यह किसी आदर्श के विवेचन की पुस्तक नहीं है, जिसे केवल पंडित लोग ही समझते और पढ़ते हैं, यह तो उस आदर्श की जीती-जागती तस्वीर है। यहां कोई रथास्थल में खड़े हो कर उपदेश नहीं देता, यहां तो जीवन के प्रत्येक क्षण में इस आदर्श पर कार्य करने वाले चरित्र नायकों का वर्णन है। इसी कारण रामचरित की अपील केवल बुद्धि को न हो कर मन को भी है। यह केवल ज्योति का स्रोत ही नहीं वरन् आनन्द की अविरल धारा भी है। यह दूसरा कारण है, जिसके लिए मुझे यह सर्व प्रिय पुस्तक लगती है।

भरत से माता, गुरु, मन्त्री और नगरवासी राज्यगद्दी पर बैठने का आग्रह कर रहे हैं और अपनी सारी विद्वता और धारा प्रवाह वाणी से वशिष्ठ कहते हैं कि वे राज्य को अपने हाथ में सम्भालें। किन्तु जब सब लोग राज्य देने का आग्रह कर रहे हों, जब राजसत्ता स्वयं भी चरणों में पड़ी हो, उस समय राज्य ग्रहण करने में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है और हो भी तो इन सब के आग्रह को कैसे ठुकराया जा सकता है। और विशेष कर ऐसे समय जब पितृ वियोग से हृदय जर्जरित हो रहा हो, राज्यसत्ता जैसी सांत्वनाप्रद वस्तु को कैसे छोड़ा जा सकता है? किन्तु भरत आज के राजनीतिज्ञ तो थे नहीं, जो सत्ता पाने के लिये पागल हों और जो उसके पाने के लिए धर्म-अधर्म सब कुछ करने को तैयार हों। वे तो उस आदर्श को मानने वाले थे, जहां सेवा ही परम धर्म है और स्नेह ही परम सत्य। पर वे अकेले हैं और सब लोग उनके सिर हैं कि वे राजा बनें और अवश्य बनें। और जो लोग आग्रह कर रहे हैं, वे पद में इतने बड़े हैं कि भरत उनको दो टूक उत्तर भी नहीं दे सकते। इसके विपरीत उन्हें तो इन गुरुजनों को मनाना है कि वे उन्हें राजा बनाने का आग्रह छोड़ दें और उनके साथ राम के पास वन को इसलिये भेजें कि वे राम को मना कर वापस ले आवें।

भरत क्षण भर को भी यह नहीं कहते कि जो कुछ गुरुजनों ने उनसे कहा है वह अनुचित है अधर्म नहीं। उन्होंने जो कुछ कहा है वह सब ठीक है, पालनीय है। पर वे जानते हुए भी यह उत्तर देते हैं तो क्षम्य हैं क्योंकि वे अर्ध विक्षिप्त हैं। वे स्वयं ऐसी दशा में हैं कि औचित्य का कुछ निर्णय नहीं कर सकते। जब-जब मैं उनके इस विवेचन को पढ़ता हूं तो मेरा मन भर आता है। भरत जिस काम के इच्छुक थे वह तो भौतिक न था, पार्थिव न था। वह तो मानवता के चरम स्तर पर पहुँचना सबसे बड़ा काम मानते थे। इस आदर्श के सामने कौन-सा मानव है जो यह कहने की धृष्टता करे कि इस मार्ग पर चलने से मानव की मुक्ति नहीं। आज संसार में संघर्ष का साम्राज्य छाया हुआ है। जब मनुष्यों को अपनी छाया से भी प्रतिद्वन्द्विता की आशंका बनी रहती है भरत का यह आदर्श संसार को बचाने में समर्थ हो सकता है। गोस्वामीजी ने सत्य ही कहा है कि "सो जनमे सिय प्रेम पियूष पूरन जनम होत न भरत को ... कलिकाल तुलसी से सठन्हि हठि राम सन्मुख करत को" अर्थात् यदि भरत के प्रेम का उदाहरण उनके सामने न होता तो वे मर्यादा पुरुषोत्तम राम के उपासक न हो पाते।

जनता की निधि

इस सजीव और मूर्तिमान आदर्श को हृदय में रखे होने के कारण रामचरित मानस जन साधारण की निधि बन गया। भारत के इतिहास में जनता को संस्कृत बनाने में जो रामचरित मानस का भाग रहा है वह किसी अन्य मानव और किसी अन्य पुस्तक का नहीं। उत्तरी भारत के हिन्दी भाषा भाषी प्रदेश के ग्राम ग्राम में रामचरित मानस के पद प्रतिध्वनित होते रहते हैं। खेत में और खलिहान में, घर और चौपाल में, नर और नारी अपनी मधुर ध्वनि में इसकी चौपाइयों और दोहों को गाते हुए सुनाई देते हैं। उस समय जब कि राज्य का जनता से सम्पर्क केवल कर वसूल करने का था रामचरित मानस ने जनता की आत्मा को जागृत रखा। इतना ही नहीं उसने भारतीयों के सामने समाज और राज्य का वह चित्र बनाये रखा जिस चित्र के आधार पर वे अपने जातीय अस्तित्व को बनाये रख सकते थे और जिस से उन्हें अपने भविष्य पर भरोसा हो सकता था। हिन्दू संस्कृति शब्द सम्भवतः भ्रम हो सकता है पर किसी अन्य शब्द के अभाव में मैं इसी शब्द का प्रयोग इस संस्कृति के व्यक्त करने के लिये करता हूं जो इस देश के साधारण जनों में सहस्रों वर्षों से चली आ रही है। यह संस्कृति जिसकी आधार शिला है सेवा, त्याग, और स्नेह की प्रवृत्ति और जिसने यहां के सामाजिक संगठन को यहां के कौटुम्बिक जीवन को इतनी शताब्दियों तक जीवित और सबल रखा।

रामचरितमानस ने इस आदर्श को राम के जीवन में मूर्तिमान दिखा कर जन जीवन में भर दिया और उसी के सहारे वे मुगलों और अंग्रेजों की सत्ता के भार से सर्वथा पिस कर अस्तित्व हीन न हो गये। संसार बहुत सी पुस्तकों ने मानव सभ्यता पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है किन्तु कह नहीं सकता कि राम चरित मानस के सिवा और कोई भी पुस्तक है जिसने करोड़ों कृषकों और श्रमिकों को आदर्श की ज्योति दिखा कर एक विशेष पथ पर चलाया और

[शेष पृष्ठ २२ पर]

उत्तरी कोरिया के प्रधानमंत्री किमइरि ने अपनी सेनाओं को अगस्त में ही अमरिकनों को कोरिया से निकाल देने का आदेश दिया है।

सरदार बलदेवसिंह कोचीन में नौ सैनिक शिक्षण केन्द्र की आधारशिला रख रहे हैं।

दिल्ली में शरणार्थियों का एक नया नगर—राजेन्द्र नगर

अन्न संग्रह के निवारण के लिए श्री मुंशी का एक बिल संसद ने पास कर दिया।

मि० चर्चिल का यूरोपियन सेना बनाने का प्रस्ताव यूरोप कौंसिल ने पास कर दिया।

हिन्दू कोड बिल पर विचारविनिमय के लिए किये गये सम्मेलन का एक चित्र।

दो संस्कृतियों का मिश्रण

अकबर का दीनेइलाही

● श्री इन्द्रविद्यावाचस्पति

[१]

हिन्दू और मुसलमान लगभग ९ सौ वर्षों तक एक साथ रह चुके थे। कभी लड़ते-झगड़ते, और कभी मिल-जुल कर दोनों जातियों के वह पांच सौ साल किसी तरह व्यतीत हुए। इतने सहवास से दोनों ने ही यह बात अनुभव कर ली कि हम लड़ कर एक दूसरे को नहीं मिटा सकते। वह हिन्दू राजा, जिनके पूर्व पुरुष यूनानी, शक, हूण, सीथियन आदि कई जातियों के आक्रान्ताओं के के मुंह मोड़ चुके थे, इतने निर्बल हो गये थे कि न तो मुसलमान आक्रान्ताओं का प्रतिरोध कर सके, और न उन्हें देश से निकाल सके। जब कभी ऐसा अवसर आया भी कि दिल्ली के मुसलमान बादशाह निर्बल होने लगे तो उत्तर से नये आक्रांताओं का आक्रमण हो गया, और मुसलमानों में नया रक्त और नया उत्साह प्रचारित हो गया। पांच शताब्दियों के सम्पर्क से हिन्दू इस परिणाम पर पहुंच गये कि अब तो कलियुग आ ही गया है जिससे म्लेच्छों का राज्य भारत में स्थिर हो गया है।

दूसरी ओर ५ सदियों तक भारत पर इस्लामी ढंग की हुकूमत करके मुसलमान शासक और बहुत से अन्य समझदार मुसलमान भी इस परिणाम पर पहुंच गये थे कि सब हिन्दुओं को किसी प्रकार से भी इस्लाम का अनुयायी नहीं बनाया जा सकता। हिन्दू राजनीतिक क्षेत्र में लड़ाई हार कर भी धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में विजयी रहे। उसका फल यह हुआ कि मुसलमानों के बहुत से नैतिक और धार्मिक नेताओं का यह विचार हो गया कि यदि भारत में सुख चैन से रहना है तो मुसलमानों को हिन्दुओं से मिल कर रहना चाहिए।

इतने सहवास से हिन्दुओं और मुसलमानों ने अनुभव से यह भी सीखा कि भलाई और बुराई किसी मत या सम्प्रदाय तक ही परिमित नहीं है। दोनों ओर भले भी हैं और बुरे भी, अच्छा वही है, जो अपने प्रभु का भक्त हो, और दूसरों का भला करे।

[२]

इस उपर्युक्त अनुभूति ने हिंदुओं में जो प्रतिक्रिया उत्पन्न की, उसका प्रकाश कबीर, नानक आदि भक्तों की वाणियों में हुआ। मुसलमानों में वैसी ही प्रतिक्रिया सूफी सम्प्रदाय के आचार्यों में प्रकट हुई। इस्लाम का सूफी सम्प्रदाय हमारे वेदान्त से मिलता-जुलता है। सूफी लोग एक ब्रह्म में ही विश्वास रखते हैं, और मतान्तर मत-मतान्तरों को मुक्ति का बाधक समझते हैं। उस युग में भारत में बहुत से सूफी औलिया हुए, जिन्होंने इस्लाम की संकीर्णता के विरुद्ध प्रचार किया, और यहां तक कहा कि खुदा जैसे मस्जिद में है, वैसे ही मन्दिर में भी है। वह हिंदू और मुसलमान, आस्तिक और नास्तिक दोनों में समान रूप से विद्यमान है।

[३]

जिन मानसिक प्रवृत्तियों का मैंने यहां वर्णन किया है, उनका स्थूल रूप बादशाह अकबर था। बादशाह अकबर की राजनीति और उसकी धार्मिक नीति की मूल आधार मुख्य रूप से दो थे।

उसके पहला आधार व्यक्तित्व था। अकबर ने मुगल वंश में जन्म लिया था। वह बाबर का पोता और हुमायूं का पुत्र था। यह सर्वसम्मत बात है कि बाबर और हुमायूं दोनों ही कट्टर मुसलमान होते हुए भी वे विशाल हृदय रखते थे, उनमें कवियों और प्रकृति प्रेमियों वाली उदारता थी, और वे बात के बड़े धनी थे। अकबर उनके संस्कारों के साथ उत्पन्न हुआ था, अतः उनके हृदय में धर्मान्धता के बीज विद्यमान नहीं थे।

उस स्वाभाविक उदारता के साथ जब राजनीतिक दूरदर्शिता का मिश्रण हुआ तो परिणाम यह हुआ कि अकबर ने मुसलमान बादशाहों की उस नीतिका परित्याग करने का निश्चय किया, जिसके कारण हिन्दू-मुसलमानी राज्य के स्थायी विरोधी बने हुए थे। अकबर ने देखा कि ५ वर्षों तक हुकूमत करके भी मुसलमान बादशाह न तो हिन्दुओं को समाप्त कर सके और न उन्हें अपना बना सके। फल यह हुआ कि कोई मुसलमान चिरकाल तक राज्य न कर सका। प्रत्येक मुसलमान शासक को बाहर से आते हुए मुट्ठीभर मुसलमान योद्धाओं के भरोसे पर ही रहना पड़ता था। यही कारण था कि उत्तर दिशा से जो आक्रान्ता आता था, वह पुरानी पीढ़ी को उखाड़ कर फेंक देता था। अकबर के विवेकी मन ने यह परिणाम निकाला कि सल्तनत की जड़ों को पाताल तक पहुंचाने का एक यह उपाय है कि हिन्दुओं को सल्तनत का सहायक बनाया जाय।

अकबर ने अपने राज्य के प्रारम्भ से ही नई नीति का परिचय दे दिया था। अभी उसकी आयु बीस वर्ष की थी, जब उसने अम्बर की राजकुमारी जोधाबाई से विवाह कर जयपुर के राजपूत परिवार से ऐसा गहरा सम्बन्ध स्थापित कर लिया कि मुगल साम्राज्य की जड़ें भूमि की बहुत गहराई तक चली गईं। जोधाबाई से अकबर का विवाह १५६२ में हुआ। १५६३ में अकबर ने हिन्दुओं पर से वह कर उठा दिया, जो उनकी तीर्थ-यात्राओं पर लगा था, और अगले ही वर्ष १५६४ में जजिया कर रद्द कर दिया गया।

इस तरह शासन के प्रारम्भकाल में ही अकबर ने अपनी दूरदर्शिता-पूर्ण उदार नीति का परिचय दे दिया।

[४]

अकबर की उदार नीति के दो परिणाम निकलने आवश्यक थे। एक तो यह कि कुछ शक्तिशाली राजपूतों का, और उनके साथ ही बहुसंख्यक हिन्दुओं का अकबर की ओर सद्भाव उत्पन्न हो गया। वे बादशाह के सहायक बन गये और दूसरा यह कि बहुत से कट्टर पन्थी मुसलमान धर्माचार्य और उनके अनुयायी अकबर के विरोधी बन गये। यदि अकबर की इच्छा-शक्ति निर्बल होती, तो वह मुसलमान मुल्लाई और उनके शिष्यों से डर जाता, परन्तु इससे उसके मित्र और शत्रु दोनों ही सहमत हैं कि वह फौलादी मन्सूबे का आदमी था।

ज्यों ज्यों उसका विरोध बढ़ता गया, त्यों त्यों मुल्लाओं की धर्मान्धता के विरुद्ध उसकी भावना भी दृढ़ होती गई। अंत में अकबर यहां तक पहुंच गया, कि वह कभी कभी माथे पर टीका भी लगाने लगा, लम्बी दाढ़ी से तो उसे चिढ़ ही थी, गोमांस खाना उसने सर्वथा छोड़ दिया, और प्याज और लहसुन से भी परहेज करने लगा। इस प्रकार उसने मुल्लाई के संकुचित मार्ग को छोड़ कर ऐसे स्वतन्त्र मार्ग का निर्माण करना आरम्भ किया, जिस में इस्लाम और हिन्दू दोनों के अंश विद्यमान थे।

अकबर की इस मनोवृत्ति के विकास में उसके विद्वान साथियों ने भी सहयोग दिया। शेख मुबारिक सूफी विचार रखने वाला एक बहुत बड़ा आलिम था। अकबर उसका गुरु के समान आदर करता था। उसके फैजी और अबुल फजल नामक दोनों पुत्र भी सूफी मत के मानने वाले और ऊंचे दर्जे के विद्वान थे। वे अकबर के अभिन्न साथी और सलाहकार थे। अकबर स्वयं सर्वथा अनपढ़ था। उसने सारा ज्ञान सुन-सुन कर ही प्राप्त किया था। उसकी धारणा शक्ति इतनी प्रबल थी कि जो बात एक बार सुन लेता था, वह न केवल उसके स्मृतिपट पर बैठ जाती थी, पूरी तरह हृदय के अन्तस्तल में भी बैठ जाती थी। फैजी और अबुल फजल के संग ने उसके अंदर ज्ञान की पिपासा पैदा की, जिसे पूरा करने के लिए अकबर ने अपने आगरे के किले में एक शानदार इबादतखाना बनवाया। उस इबादतखाने में अनेक मतमतान्तरों के विद्वान एकत्र होकर धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों पर शास्त्रार्थ और ज्ञान चर्चा करते थे। अकबर उनके सामने विचार के लिए प्रश्न रखता था और वे उस पर अपने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन और अन्य सिद्धान्तों का खण्डन करते थे। बादशाह ही प्रश्नकर्ता और अन्त में बादशाह ही निर्णायक होता था। उन चर्चाओं में मुसलमान सय्यदों और मुल्लाओं के अतिरिक्त हिन्दू, पारसी, और ईसाई धर्माचार्य भाग लेते थे।

इस प्रकार के शास्त्रार्थों और कभी कभी विवादों को सुन सुन कर अकबर के मन पर यह विचार जम गया कि ये सभी प्रचलित मतमतान्तर भ्रांति से भरे पड़े हैं। सचाई सब में है परन्तु, पूरी सचाई कहीं भी नहीं। उसने यह विशेष रूप से अनुभव किया कि जिन हिन्दुओं को काफिर कहा जाता है, उनमें बहुत सी बातें ग्राह्य हैं।

यदि अकबर पढ़ा लिखा और विद्वान् होता तो अपने विचारों को विवेक की शाण पर चढ़ा कर शास्त्रीय रूप दे देता और एक नये वाद या सिद्धान्त का प्रवर्तक बन जाता। परन्तु जहां एक ओर वह किताबें पढ़ा लिखा नहीं था, वहां साथ ही वह एक स्वयं निर्मित विशाल साम्राज्य का शक्तिशाली शासक भी था। उसने जीवन में प्रायः जिधर दृष्टि उठाई, उधर विजयी हुआ। प्रायः मैंने इसलिये कहा कि एक महाराणा प्रताप को वह न जीत सका, और इससे उसके हृदय में हिन्दुओं के प्रति आदर का भाव और भी अधिक बढ़ गया। फलतः उसके मन में उस समय के प्रचलित इस्लाम के प्रति बहुत गहरी प्रतिक्रिया उत्पन्न हो गई, जो 'दीने इलाही' के रूप में प्रकट हुई।

इस लेख में 'दीने इलाही' की विस्तृत व्याख्या करने के लिये न स्थान है और न वह आवश्यक है। संक्षेप में इतना ही लिखना पर्याप्त है कि दीने-इलाही के घोषणा-पत्र में यह घोषणा की गई थी कि हिन्दुस्तान अब एक ऐसा लौकिक राज्य हो गया है, जिसमें सब संप्रदाय और विचार के लोग एकत्र हो गये हैं। इस कारण आवश्यक है कि यहां युक्तियुक्त और उदारतापूर्ण नीति से काम लिया जाय। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिये धर्म का उदार व्याख्या आवश्यक है, जिसके करने का

[शेष पृष्ठ २१ पर]

तथा अन्य प्रमुख अमेरिकनों ने भी इन अफवाहों का जोरदार खंडन किया था। फलतः इन अफवाहों को निर्मूल समझ कर हम उन्हें अपने दिमाग से निकाल सकते हैं। किन्तु इस प्रकार इतना स्पष्ट हो जाता है कि मित्रराष्ट्रों के लिए विश्वव्यापकता का विचार कितना अधिक महत्वपूर्ण है।

अधिक से अधिक संख्या में राष्ट्रीय समूहों को प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिए इस शर्त पर कि वे प्रभुतासम्पन्न और स्वतन्त्र हों। सचमुच, जब भावी इतिहासकार वर्तमान संसार के इस कष्टमय अध्याय पर अपनी दृष्टि डालेगा तो इस

मित्रराष्ट्र संघ अग्निपरीक्षा में से गुजर रहा है

श्री फ्रैंसिस वाट्सन

१९२० में बनाया गया राष्ट्र संघ असफल हो गया था। आज का राष्ट्र संघ भी अग्नि परीक्षा में से गुजर रहा है। इसका मुख्य कारण है पांच राष्ट्रों को शेष देशों पर अनुचित महत्व देना और इस तरह जनतन्त्र में अनिवार्य बहुमत के आदर की घोर उपेक्षा, जिसका रूस निरन्तर अनुचित उपयोग कर रहा है।

तीन वर्ष पहले मैं एक बार लेकसक्सेस में था और यूनान के प्रश्न पर एकत्रित हुई सुरक्षा-परिषद की बैठक में दर्शकों के कक्ष में उपस्थित था। उस समय किसी ने मुझ से पूछा कि क्या मेरे विचार से मित्रराष्ट्र-संघ असफल रहा है? उस समय मैं उसी उत्तर को दोहराना चाहता था, जो किसी ने ईसाई धर्म से सम्बन्धित ऐसे ही प्रश्न के जवाब में दिया था। 'हां, अभी तक तो उसकी परीक्षा भी नहीं की गई है।'

किन्तु आज हम यह जवाब नहीं दे सकते, एक चुटकले के रूप में भी नहीं। १९५० में, अन्तर्राष्ट्रीय शांति भंग की अप्रत्याशित घटना के घटने पर सुरक्षा-परिषद ने वही कार्रवाई की, जिसे करना उसका मुख्य उद्देश्य था। और मित्रराष्ट्र-संघ के एक बड़े बहुमत ने सुरक्षा-परिषद के निर्णय का समर्थन किया।

कोरिया में महान् प्रयोग किया जा चुका है, और मित्रराष्ट्र-संघ के विधान में विभिन्न प्रकार के सुधार का सुझाव रखने वालों को अब से कोरिया सिद्धान्त की अपेक्षा एक स्थूल समस्या का भी सामना करना पड़ेगा। किन्तु साथ ही साथ वह लोग इतनी बात नहीं भूल सकेंगे कि सुरक्षा-परिषद में रूस के उपस्थित न होने के कारण ही यह ऐतिहासिक निर्णय सम्पन्न हुआ।

यदि रूस का प्रतिनिधि परिषद में होता तो उसके द्वारा निषेधाधिकार का उपयोग अवश्य किया गया होता, उसी प्रकार जैसे कि इससे पहले इसका उपयोग तीस बार किया जा चुका है।

'बड़े पांचों' का सिद्धान्त

राष्ट्रों के मध्य में पांचों को बड़े राष्ट्र मानने, उन्हें सुरक्षा-परिषद के स्थायी सदस्य समझने के सिद्धान्त पर ही निषेधाधिकार निर्भर है। इस हद तक यह बात समान राष्ट्रीय पद सिद्धान्त का उल्लंघन है। सब राष्ट्रों ने सैनफ्रैंसिसको में (१९४५) इस बात को स्वीकार किया था। (क्योंकि ये शक्तियां जर्मनी, इटली और जापान के विरुद्ध युद्ध में अगुवा थीं और युद्धोत्तर काल में शान्ति रक्षा का दायित्व इन्हीं पर समझा गया था।)

मैं उन थोड़े लोगों में से था, जो १९४५ में ही इन 'पांच' बड़े राष्ट्रों को 'स्थायी' बड़प्पन देना ठीक बात नहीं समझते थे। हमारे सदस्यों में कई प्रकार के सन्देह थे। उदाहरणार्थ फ्रांस के पुनरुत्थान के विषय में। (यद्यपि अब यह सन्देह बहुत हद तक दूर हो गये हैं।) कुछ लोग समझते थे, और कुछ अब भी समझते हैं कि एशिया का नेतृत्व लेने के लिए चीन की अपेक्षा भारत की अवस्था कहीं अधिक अच्छी है।

हमारा ख्याल था कि जो राष्ट्र नैतिक और भौतिक नेतृत्व की योग्यता रखते हैं, वे अपने नेतृत्व और योग्यता की छाप विश्व की विचार-सभाओं में छोड़ने का अवसर अवश्य ही पावेंगे। किन्तु यह सम्भव है कि संसार का नेतृत्व सदैव इन्हीं राष्ट्रों के हाथों में न रहे। शब्द 'स्थायी' बहुत लम्बा-चौड़ा है। यह और किन्हीं पांच राष्ट्रों को विशेष और शाश्वत अधिकार देना इतिहास को सीमाबद्ध करने के समान था।

समान अधिकार का सिद्धान्त

बड़े और छोटे नवीन और प्राचीन तथा निर्धन और सम्पन्न राष्ट्रों के समानाधिकारों को स्वीकार करना इतिहास के प्रवाह के सम्मुख नतमस्तक होना है। इनसे जो आशा की जाती है, वह केवल यह कि स्वतन्त्र निर्णय लेने की योग्यता उनमें हो।

किन्तु दो सोवियट समाजवादी रिपब्लिकों को (बिलोरूसिया और यूक्रेन) सोवियट यूनियन की मांग पर मूल सदस्यता दी गई, यद्यपि ये दोनों राजनैतिक रूप में सोवियट यूनियन के अंग हैं। इसके विपरीत लंका को लीजिये। यदि लंका चाहे तो ग्रेट ब्रिटेन तथा अन्य किसी राष्ट्र मंडलीय देश के विरुद्ध वोट दे, किन्तु अब तक उसकी प्रार्थना स्वीकार नहीं हुई है। रूसी और यूक्रेनी विरोध के कारण।

मित्रराष्ट्र-संघ की सदस्यता के प्रार्थना-पत्र अन्य सात राज्यों ने भी भेजे और वे प्रार्थनापत्र स्वीकार नहीं किये गये अर्थात् ट्रांसजार्डन, आयर, पुर्तगाल, इटली, आस्ट्रिया, फिनलैंड और दक्षिणी कोरिया। इन सब की सदस्यता का विरोध रूस ने किया था।

लेकिन चैकोस्लोवाकिया अपनी कार्य स्वतन्त्रता खोने पर भी सदस्य है। यह सर्व विदित है कि जब चैकोस्लोवाकिया ने यूरोपीय पुनरुत्थान में सहयोग देने के उद्देश्य से मार्शल-योजना में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट की, तब मास्को ने उसे अपना प्रार्थना-पत्र वापस लेने पर विवश किया था।

१९५० के प्रारंभिक भाग में इस आशय की बातें बार बार सुनने में आया करतीं थीं कि शायद संयुक्तराज्य अमेरिका एक नये, सोवियट रूस रहित, मित्रराष्ट्र संघ की स्थापना में अग्रसर हो। इन विचारों की निन्दा कई प्रमुख राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने की थी, जिन में भारत और पाकिस्तान भी थे।

विश्वव्यापकता का विचार

इसके अतिरिक्त जनरल मार्शल बात का उल्लेख वह अवश्य करेगा कि स्वतन्त्र राष्ट्रों ने रूस के साथ अपने युद्धकालीन सहयोग को शांतिकालीन साझेदारी में परिवर्तन करने के लिए कितने असाधारण प्रयत्न किये थे।

रूस को सुविधाएं

इसी लिए एक के बाद दूसरी सुविधा रूस को दी गई। जापान के विरुद्ध रूस के आठ दिन वाले युद्ध के बदले में पूर्व में उसे अनेकों सामरिक और प्रादेशिक सुविधाएं दी गईं। रूस द्वारा बाल्टिक राज्यों पर आधिपत्य और पोलैंड के अंगभंग की ओर से आंखें बन्द करली गईं। मित्रराष्ट्र संघ में निषेधाधिकार का बचाव रूस के लिए एक बचाव था, यद्यपि रूस से इसका उपयोग बचाव के रूप में नहीं किन्तु अस्त्र के रूप में क्या है—और इस अस्त्र का सबसे अधिक शोकजनक उपयोग महाशक्ति के अन्तर्राष्ट्रीय निरीक्षण में भाग लेने का रूसी निर्णय रहा है।

संसार को तब रूसी सहयोग की आवश्यकता थी, और अब भी है। किन्तु इस सहयोग की प्राप्ति के लिए हम कोई असीमित मूल्य नहीं दे सकते। "रूस की सुरक्षा चाहिए" यही हम बार बार रटते रहे और हम ने ऐसी चीजों की ओर से आंखें मूंद लीं, जो अपने बचाव को खतरे में डाले बिना कोई अन्य देश न करता। किन्तु आज सुरक्षा है कहां? यही सारी बात की जड़ है। मित्रराष्ट्र संघ को यदि एक ओर विश्वव्यापकता की आवश्यकता है तो अपनी

[शेष पृष्ठ २९ पर]

इन्द्रधनुष

मोहंजोदड़ो— फिर सिंधुगर्भ में !

पुरान्वेषियों का मत है कि सिंधु ने मोहंजोदड़ो को आज से पांच हजार वर्ष पूर्व विनष्ट किया था। संस्कृति के उस केन्द्र को नष्ट करने के पश्चात् जैसे प्रायश्चित्तस्वरूप इस नदी ने अपना मार्ग बदल दिया था और इस प्रकार मोहंजोदड़ो के भग्नावशिष्ट ईंट पत्थर अपने स्थान पर सुरक्षित पड़े रह गये थे। उन पर बालू की मोटी तह भी जम गई थी, जो सहस्रों वर्षों तक रक्षा कवच का काम करती रही। अब जैसे सिन्धु को उस भूले हुए संस्कृति केन्द्र की फिर याद आगई है और वह उसका नाम-निशान तक मिटा देना चाहती है। (सिन्धु नदी उस ओर फिर बढ़ रही है।) मोहंजोदड़ो की रक्षा का उत्तरदायित्व प्रत्येक भारतीय पर है, वह चाहे भारत का निवासी हो या पाकिस्तान का। मोहनजोदड़ो बटवारे में पाकिस्तान के भाग में पड़ा है, पर इससे क्या ? उस मूल संस्कृति और मूल सभ्यता का उत्तराधिकारी प्रत्येक भारतीय है, जिसका जन्म और वर्धन मोहंजोदड़ो में हुआ था। सर जान मार्शल ने बालू की मोटी तह के नीचे नगर मोहंजोदड़ो को जब सन् १९२२ में खोद निकाला था और वहां से प्राप्त पुरानी वस्तुओं का अध्ययन करके जब पुरान्वेषियों ने घोषित किया था कि इन वस्तुओं का निर्माण कम से कम पांच सहस्राब्दि पूर्व का है, तब हम भारतीय प्रसन्नता से फूल उठे थे। मोहंजोदड़ो ने प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित करके सिद्ध कर दिया था कि भारतीय सभ्यता और संस्कृति संसार की समस्त सभ्यताओं और संस्कृतियों से अधिक प्राचीन है और सुमेरियन संस्कृति की तो वह जननी है। उज्ज्वल पुरातत्व किसी राष्ट्र के गौरव का कारण है और मोहनजोदड़ो ने हमें उसी उज्ज्वल पुरातत्व के दर्शन कराये थे।

भारत में प्राचीन स्मारकों की कमी नहीं है, पर मोहंजोदड़ो का महत्त्व हमारी दृष्टि में एक स्मारक से कहीं अधिक है। इसने हमें अपने अतीत को समझने में और उससे प्रेरणा प्राप्त करके भविष्य का निर्माण करने में बहुत बड़ी सहायता दी है। मोहंजोदड़ो ने पुरातत्वाभिमानियों से ललकार कर कह दिया है कि भारतीय सभ्यता की सीमा ऋग्वेद-काल तक नहीं है, वह और भी पीछे बहुत दूर तक फैली हुई है। हिन्दू धर्म, वैदिक धर्म जिसका एक परिष्कृत रूपभर था, बहुत प्राचीन है, उसकी जड़ें मोहंजोदड़ो को स्पर्श करती हुई न जाने अतीत में कितनी दूर तक चली गई हैं। 'गङ्गा हिन्दू धर्म का धाम है, उसकी असली माता तो सिन्धु नदी है।' सर जान मार्शल का यह कथन सत्य ही है।

सिन्धु के सिकतावृत का अन्वेषण अभी पूर्ण नहीं हुआ है। पूर्ण अन्वेषण होने पर न जाने क्या क्या रहस्य और प्रकट होंगे, जो संभव है हमारे इतिहासकारों की विचारधारा को ही बदल दें।

हमें विश्वास है कि पाकिस्तान का पुरातत्त्व विभाग सिन्धु नद के इस आक्रमण को व्यर्थ करने का प्रत्येक प्रयत्न करेगा; यही नहीं, भारत सरकार का भी नैतिक कर्तव्य है कि वह मोहंजोदड़ो की रक्षा के लिए पाकिस्तान सरकार को अपनी ओर से धन और जन की सहायता करे।

—सरस्वती

●

ज़मींदारी का अन्त

उत्तर प्रदेश ने जमींदारी उन्मूलन बिल पास कर दिया। इस बिल के दो भाग हैं। दोनों में छः-छः अध्याय हैं। पहले में पुरानी व्यवस्था का अन्त किया गया है और दूसरे में नई व्यवस्था को जन्म दिया है। प्रांत में बड़े और छोटे जमींदारों की कुल संख्या २०,१६००० इनमें से केवल १०,००० जमींदार २५० रु० मालगुजारी देने वाले हैं शहरी इलाका, पहाड़ी जिले, सरकारी जायदादें और हाल में विलय हुई रियासतें इससे मुक्त हैं।

बिल का आधारभूत सिद्धांत है, कि खेत का मालिक खेत जोतने वाला हो, इस सिद्धांत को मानने के बाद भी जमींदारों के पास इस समय जितनी जमीन है, उसका पांचवां भाग—६ लाख एकड़ जमीन—जमींदारों के पास बनी रहेगी। इस बिल में मूलतः ३१० धाराएं थीं, परन्तु जब पास हुआ, तब ३४१ हो गईं। लम्बाई की दृष्टि से यह बिल भारत में अब तक पास हुए बिलों में सबसे बड़ा है। जमींदारों को १८० करोड़ रु० इसके बदले मुआवजा दिया जायेगा। उत्तर प्रदेश की सरकार अभी तक जमींदारी उन्मूलन फंड में २६ करोड़ रु० जमा हुआ है। जमींदारी सम्पत्ति का आठ गुणा मुआवजा दिया जायगा। इसके अतिरिक्त ५००० रु० या या इससे कम मालगुजारी देने वाले जमींदारों को पुनर्वासन सहायता अनुदान निम्न प्रकार से दिया जायगा—

मालगुजारी	कुल सम्पत्ति का गुणा
२५ रु० तक	२० गुणा
२५ से ५० रु०	१७ ,,
५० से १०० रु०	१३ ,,
२५० रु० से ५०० रु० तक	११ ,,
५०० रु० से २००० रु०	५ ,,
२००० रु० से ३५०० रु० तक	३ ,,
३५०० रु० से ५०००० रु० तक	२ ,,

मुआवजा जमींदारी लेने की तिथि से दिया जायगा और उस पर २॥ प्रतिशत सूद दिया जायगा।

●

सुलभ और दुर्लभ मुद्रा क्षेत्र

भारत में आयात और भारत से निर्यात करने के लिये सुलभ और दुर्लभ मुद्रा वाले देशों की सूची संशोधित कर दी गयी है, जो इस प्रकार है—(क) डालर-क्षेत्र— अमेरिका और अमेरिका के अधीन देश। कनाडा व न्यूफाउंडलैंड, फिलिप्पाइन द्वीप समूह तथा दक्षिणी अमेरिका के देश। (ख) दुर्लभ मुद्रा क्षेत्र—अर्जेन्टीना, बेल्जियम और उसके आधीन देश। पश्चिमी जर्मनी अर्थात् जर्मनी के अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस अधिकृत क्षेत्र, (सार को छोड़ कर) स्विटजरलैंड, जापान। (ग) मध्यम मुद्रा क्षेत्र—पुर्तगाल और उसके अधीन देश [पुर्तगाली भारत को छोड़ कर]। (घ) सुलभ मुद्रा-क्षेत्र—अन्य समस्त देश, पाकिस्तान और दक्षिण अफ्रीका को छोड़ कर)

●

भोजन में दाल का महत्त्व

भारतीय भोजनों में दाल का विशेष महत्त्व है, क्योंकि उन लोगों के लिए जो मांसाहारी नहीं हैं, 'प्रोटीन' प्राप्त करने का मुख्य साधन दाल ही है। शरीर के बढ़ने एवं पुष्ट होने के लिए, मनुष्य को जिन पांच मुख्य खाद्यों की आवश्यकता होती है, 'प्रोटीन' उनमें से एक है, और वह मुख्यतः या तो मांस में या फिर दालों में अधिक पाया जाता है। दालों में २० से ३० प्रतिशत तक 'प्रोटीन' होता है और इसीलिए निरामिष भोजियों के लिए दालों का विशेष महत्त्व है। यह सौभाग्य की बात है कि अरहर, मूंग, मसूर, उड़द, चना, मटर आदि अनेक दालें हमारे इस देश में पर्याप्त मात्रा में उपजती और प्राप्त होती हैं। वैसे दालों में 'कार्बोहाईड्रेट' नामक खाद्य-तत्त्व भी पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है और कुछ चिकनाई भी होती है। उनमें विटामिन ए अधिक नहीं होता, पर बी और सी के विटामिन होते हैं। अनाजों में, दालों में केल्शियम नहीं होता, पर फास्फोरस और लोहा होता है। अंकुरित दालों में विटामिन-सी की मात्रा बढ़ जाती है। अंकुरित करने के लिए साबुत यानी बिना दली दाल को २६ घण्टे पानी में भिगोना चाहिए और फिर पानी से निकाल कर २४ घण्टे मोटे-गीले कपड़े में बांध कर रखना चाहिए। अंकुर निकल आने के बाद नमक, नीबू का रस, हरी धनिया, मिर्च आदि मिला कर दाल को स्वादिष्ट बना कर खाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अंकुरित दाल पका कर भी खायी जा सकती है।

●

[illegible]

श्री अरविन्द घोष ने अपनी धर्मपत्नी को लिखे एक पत्र में [illegible] पागलपन बताये थे—

मुझ में तीन तरह के पागलपन हैं !

१. मैं मानता हूं कि संसार की सारी सम्पत्ति प्रभु की है और उसे प्रभु के कार्य में लगाना चाहिए।

२. चाहे जैसे हो, मैं भगवान् का साक्षात्कार करना चाहता हूं।

३. तीसरा पागलपन यह है कि मैं अपने देश की नदियों, पहाड़ों, भूमि एवं जंगलों को एक भौगोलिक सत्ता मात्र नहीं मानता, मैं इसे माता मानता हूं और इसकी पूजा करता हूं !

●

भारतीय संस्कृति की परम्परा

श्री सी० पी० रामस्वामी अय्यर ने यहां बताया कि इतिहास इसका प्रत्यक्ष साक्षी है कि भारतीय संस्कृति का सदा एक ही उद्देश्य रहा है। विभिन्नताओं की प्रथम जांच पड़ताल, पुनः समझौता तब उपरांत की एकता की संस्थापना। श्री अय्यर ने कहा कि भारतीय जीवन में निर्भीकता, तर्क तथा परम्परा का निरन्तर प्रवाह ही युगों से यहां के संस्कृतिक्रम में विकसित होता आ रहा है और न ही इसके अंत हुए हैं। भारत के जो प्राचीन शासक तथा दार्शनिक थे वे भारतीय संस्कृति के आधार-स्तम्भ स्वरूप थे। विरोधी सिद्धांतों से उनकी कोई शत्रुता नहीं थी। प्रत्युत वे बड़े उत्साह से विपक्षियों से अपने विचार का आदान प्रदान करते थे। आधुनिक काल में जाति भेद, वर्ण आदि विभेद उपस्थित हो गये हैं पर पहले भारत में ज्ञान मार्ग में स्वयंभेदता नहीं थी। वह पूर्णतः निष्पक्ष तथा विश्वव्यापी था।

कम्युनिस्टों की कूटनीति

हमारे भारत देश में

सरदार पटेल

पिछले बुधवार २८ फरवरी १९४९ को भारत के साम्यवादी दल के प्रति सरकारी नीति के सम्बन्ध में एक विचारपूर्ण वक्तव्य दिया गया था। उस दिन प्रधान मंत्री ने भारतीय संविधान परिषद् को बताया था कि साम्यवादी दल ने सरकार का केवल खुला विरोध ही आरम्भ नहीं किया, ऐसा रवैया भी अख्त्यार किया है, जिसे खुला विद्रोह कहा जा सकता है। भारत के कुछ सीमित क्षेत्रों में यही नीति तेजी के साथ बरती जा रही है, और इसके फल-स्वरूप हत्या, अग्निकांड, लूट मार और तोड़ फोड़ के कार्यों की संख्या बढ़ी है। साम्यवादी दल ने अखिल भारतीय रेलवे हड़ताल द्वारा प्रशासन को पंगु बनाने तथा तोड़ फोड़ के विस्तृत कार्य क्रम के लिए अवसर ढूंढ निकालने के लिये जो प्रयत्न किये थे, उनकी ओर संकेत करते हुए, प्रधान मंत्री ने कहा था कि सरकार किसी क्षेत्र से मिलने वाली हिंसा की धमकी और सक्रिय विद्रोह की उत्तेजना को सहन नहीं कर सकती। और वह उसको दबाने के लिए उचित उपाय कर रही है।

प्रधान मंत्री के वक्तव्य के बाद साम्यवादी दल ने जो कार्य किये हैं, उनका विस्तृत विवरण देकर मैं सदन को उबाना नहीं चाहता। मैं उनका ध्यान केवल उन दो पुस्तिकाओं की ओर आकर्षित करूंगा, जो सरकार ने प्रकाशित की हैं। एक पुस्तिका का शीर्षक है "भारत में साम्यवादियों का हिंसाकार्य" और दूसरी का "हैदराबाद में साम्यवादियों के अत्याचार।" इन पुस्तिकाओं से विदित होता है कि अपनी हिंसात्मक विद्रोह-नीति के कारण साम्यवादी दल, हत्या, अग्निकाण्ड, लूटमार और तोड़-फोड़ के अगणित कार्यों के लिए जिम्मेदार है। अकेले हैदराबाद राज्य में, १५ अगस्त १९४७ से फरवरी १९५० तक इस दल ने सभी वर्ग मिला कर लगभग २,२०० व्यक्तियों का अत्यन्त नृशंसता के साथ वध किया है। सार्वजनिक गाड़ियों में निरपराध यात्रियों पर तेजाबी बल्ब और हथ गोले फेंकना, प्राधिकारियों की उपेक्षा करते हुए हिंसापूर्ण प्रदर्शन करना, और केवल इस कारण राजनीतिक विरोधियों की हत्या का प्रयत्न करना कि वे सांविधानिक ढंग की प्रगति में विश्वास रखते थे, ऐसी बातें हैं, जो सदन से छिपी नहीं हैं। इस धमकी को दबाने के लिए, समस्त राज्यीय सरकारों के सहयोग से देश भर में उपाय किए गये, और इन उपायों की सफलता के प्रमाण स्वयं साम्यवादी दल की ओर से ही प्राप्त हो रहे हैं।

कम्यूनिस्ट पार्टी के एक वक्तव्य के अनुसार मजदूर वर्ग और साम्यवादी दल के समक्ष इस समय आवश्यक कार्य साम्राज्यवादियों और उनके भारतीय सहायकों तथा सेवकों के विरुद्ध, स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए सार्वजनिक संघर्ष के आधार पर समस्त साम्राज्यवाद-विरोधी शक्तियों को संगठित करना है जिससे कि मजदूर वर्ग के अधिनायकत्व में एक विस्तृत, राष्ट्रव्यापी संगठित मोर्चे का निर्माण हो सके अगर अत्यन्त आवश्यक कृषि सम्बन्धी सुधारों को लागू करने के लिए संघर्ष किया जा सके। आगे चल कर वक्तव्य में कहा गया है जैसा कि केन्द्रीय समिति ने निश्चय किया है, "चीन के राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के अनुभव को ध्यान में रख कर जो चालें उपयुक्त होंगी उन्हीं का प्रयोग किया जायगा। चीन ने जिस मार्ग का अनुसरण किया है और जिसका आजकल दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों में अनुसरण किया जा रहा है, केवल वही मार्ग भारतीय जनता के लिए ठीक है।

"भारत को उसी मार्ग का अनुसरण करना चाहिए जिसका दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों में आजकल अनुसरण किया जा रहा है, इस वक्तव्य को केन्द्रीय समिति के एक पत्र में और भी विस्तृत रूप से दिया गया है, जो समिति ने दल के समस्त सदस्यों और दल से सहानुभूति रखने वाले व्यक्तियों के पास भेजा है। इस पत्र में स्पष्ट किया गया है कि ग्राम्य प्रदेशों में सशस्त्र छापमार युद्ध प्रणाली, उभार केन्द्रों और स्वाधीनता सेनाओं के निर्माण द्वारा भारत में शुरू करना होगा, जिससे कि समस्त भारत में सत्ता हस्तगत कर ली जाय। दल की ओर से, शहरों और औद्योगिक केन्द्रों में परिस्थिति के अनुसार चालें चलने का निर्देश है। उक्त पत्र के अनुसार "अवैध प्रचार, विभिन्न प्रकार के विरोधी कार्य और प्रदर्शन, हड़तालें, और सशस्त्र कार्यवाही आदि जो भी किसी विशिष्ट स्थान और समय के उपयुक्त है वही, क्रांतिकारी आन्दोलन को दृढ़ एवं संगठित करने के लिये प्रयुक्त होना चाहिये।

"हमें शहरों और औद्योगिक केन्द्रों

[शेष पृष्ठ २२ पर]

सुरक्षा-समिति में

डब्ल्यू एन० ईवर

श्री मलिक

सुरक्षा परिषद् में श्री मलिक की वापिसी वर्तमान द्विमुखी सोवियत राजनीति का अनुपम उदाहरण है। यह राजनीति रूक्षता और सूक्ष्मता, प्रचण्डता और चतुरता का सम्मिश्रण है। स्टालिन चतुरता के प्रदर्शक हैं। स्टालिन प्रचण्डता के पुजारी हैं। परिणाम? असफलता।

मैं श्री मलिक की व्यक्तिगत आलोचना नहीं कर रहा हूं। वे बेचारे क्या करें!

वे स्वामी के आदेशों के अनुसार चलते हैं। उनका व्यवहार ऐसा है तो स्टालिन की इच्छा ऐसी ही थी, वैसा है तो भी मालिक की मर्जी के मुताबिक। जब स्टालिन की इच्छा होती है तो वे बड़ी दक्षता के साथ दाव-पेंच चलते हैं। जब मलिक अपमानजनक हो जाते हैं तो उस असफलता का श्रेय भी स्टालिन को ही मिलना चाहिये। यह उनका एक खास लक्षण है। यह एक भयंकर लक्षण है।

और यह भी कैसी अस्पष्टता! पहले तो वह चतुर योजना, जिसकी सफलता के लिये सफाई और दक्षता अभीष्ट। और तब अवसर आने पर सारे मनोरथ को मटियामेट करने के लिए मद से भरे, मर्यादा से विहीन विधियों का उपयोग। यह मनोरथ बिल्कुल स्पष्ट था, आवश्यकता से अधिक स्पष्ट। स्वतन्त्र संसार को विभाजित करना और उसमें व्याकुलता उत्पन्न करना तथा अपने एक-छत्र नियन्त्रण में साम्यवादी संसार को शक्तिशाली बनाना स्टालिन की कूटनीति के सिद्धान्तों में से एक है।

इस लक्ष्य की प्रगति के लिए स्टालिन के एजेंट और उनके प्रचारक प्रत्येक देश में आंतरिक अशान्ति तो उत्पन्न करते ही हैं, किन्तु देश-देश के मध्य में भी दुश्मनी के बीज बोते हैं। इसलिए ब्रिटेन में साम्यवादी प्रचार अमेरिका विरोधी होता है और अमेरिका में ब्रिटेन-विरोधी।

"हमारा अवसर आया"

कोरिया घटना ने क्रेमलिन को मित्रराष्ट्रों के मध्य में विचारों और उद्देश्यों की अप्रत्याशित एकता का सामना करने पर विवश कर दिया। इस एकता को नष्ट करने का स्पष्ट उपाय सुरक्षा परिषद् का ध्यान कोरिया जैसे प्रश्न से, जिस पर उनमें एक-मत था, हटा कर मतभेद के किसी अन्य मामले पर केन्द्रित करना था। यदि ऐसा किया जा सका तो मतभेद उत्पन्न हो जायेंगे, झगड़े छिड़ सकते हैं और परिषद् की नवजात शक्ति का नाश किया जा सकेगा। यदि मित्रराष्ट्रों के संकल्प को रूस की ओर से सहयोग इत्यादि की झूठी आशाओं के बल पर तोड़ा जा सके तो और भी अच्छा है। यह भी है स्टालिन की प्रिय विधियों में से एक।

विषय का चुनाव भी स्पष्ट था। छः महीनों से सुरक्षा परिषद् चीन के प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर विभाजित रही है। और इस प्रश्न पर ग्रेट ब्रिटेन तथा संयुक्त-राज्य अमेरिका ने अपने को पृथक् शिविरों में पाया। इसलिए यदि वाद-विवाद फिर से बढ़ाया जा सके और यह आशा उत्पन्न की जा सके कि रूस मनमानी करने का अवसर पाने पर उत्तरी कोरिया का आक्रमण समाप्त करा देगा, तब मतभेद और फूट का अच्छा मौका हाथ आएगा, ऐसा मौका कि आक्रमण को रोकने का दृढ़ संकल्प, जो सुरक्षा परिषद् ने किया है, शिथिल पड़ जायगा।

यह जानना मनोरंजक होगा कि सुरक्षा परिषद् में चीनी साम्यवादी सरकार द्वारा प्रतिनिधित्व प्राप्त करने का कोरियन प्रश्न के शान्तिपूर्ण समझौते का ख्याल सबसे पहले किसके दिमाग में उठा था। किन्तु जब पंडित नेहरू ने अच्छी से अच्छी भावनाओं को लेकर शांति स्थापित करने में रूसी सहयोग की आशा से चीनी प्रश्न को कोरियन प्रश्न से मिलाया, तो स्टालिन ने सोचा हमारा अवसर आया।

यह आकस्मिक बात थी कि अगस्त के महीने में सुरक्षा परिषद् के अध्यक्ष

[शेष पृष्ठ २२ पर]

आधी दुनिया

चीन की नारी जाग रही है

— दो उदाहरण —

[१]

वेश्यावृत्ति कैसे मिटी ?

पिछले नवम्बर मे पेकिंग में वेश्या-वृत्ति को खतम कर दिया गया। भूतपूर्व वेश्याओं को सुधारने के लिए स्त्रियों की उत्पादन तथा शिक्षा इन्स्टीट्यूट खोली गयी। इस संस्था में १२६० भूतपूर्व वेश्याएं भेजी गयीं और इसने उन्हें सुधारने का काम सफलतापूर्वक पूरा कर दिखाया है।

इन औरतों को सुधारने के काम मे शुरू मे बहुत कठिनाइयां आयीं। इनमे अधिकतर १८ से २५ साल तक उम्र की युवतियां थीं और समाज द्वारा बहिष्कृत समझी जाती थीं। वेश्यावृत्ति के लिए वे बेच दी जाती थीं, नशे की चीजें खिला-पिला और मारपीट कर इन्हें पेशा अख्तियार करने पर मजबूर किया जाता था और उनका जीवन बेरहम दलालों के हाथ में रहता था। इसके लिए सरकारी शासन तथा सत्ता का मतलब होता था कुओमिंगतांग के छुए जिये अफसरों का आतंक।

इन्हें इस बात का विश्वास ही नहीं होता था कि कोई भी व्यक्ति उनकी सहायता करेगा और इसलिए वे नयी सरकार द्वारा भेजे गये अफसरों से बचने की कोशिश करती थीं और सुधार आन्दोलन में उन्हें कोई विश्वास नहीं था।

लेकिन पहले ही दिन उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ, जब कि उन्हें यह बताया गया कि यदि वे चाहें तो अपने बच्चों या मांओं को अपने साथ रख सकती हैं। इसके उपरान्त उन्हें अपने पुराने अनुभवों के बारे में बात करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। उन्हें इस बात के लिए राजी करने मे थोड़ा समय लगा कि वे अपनी डाक्टरी परीक्षा करायें और आवश्यकतानुसार इलाज कराके स्वस्थ हो जायं।

धीरे धीरे उन्होंने देखा और समझा कि सरकार वाकई इस काम में उनकी मदद करना चाहती है कि वे अच्छी जिन्दगी बसर कर सकें, और पेकिंग के कारखानों में काम करने वाली औरतों ने उनके पास प्रतिनिधिमण्डल भेजे कि वे इन लड़कियों से बातें करें और उन्हें दस्तकारी आदि का काम सीखने और काम करने के लिए प्रोत्साहित करें।

इनमें से ४०० से अधिक औरतें अब इंस्टीट्यूट छोड़ चुकी हैं और सामाजिक रूप से उपयोगी काम में लग चुकी हैं।

[२]

महिलाओं की ट्रेन

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस ८ मार्च ५० की एक ट्रेन डेयरन मे पोर्ट आर्थर को रवाना हुई। इस ट्रेन के ड्राइवर से लेकर गार्ड तक तमाम कर्मचारी औरतें थीं।

चीन में इस प्रकार की यह पहली ट्रेन थी। नगर की ट्रेड यूनियनों, कम्युनिस्ट पार्टी तथा महिला संगठनों के सदस्यों ने बड़ी धूमधाम और उत्साह के साथ ट्रेन को विदा किया।

जब सोवियट विशेषज्ञ केसोव ने महिलाओं को इंजिन ड्राइवरी सिखाने के लिए कक्षा शुरू की थी, तो बहुत ही कम पुरुषों ने ख्याल किया था कि यह प्रयोग सफल होगा। अधिक पिछड़े हुए मजदूर शुरू में नाराज हुए। 'उन्हें यहां आये हुए कुछ ही हफ्ते हुए हैं और इन्हें पुराने मजदूरों के बराबर ही वेतन मिलने लगा है।'

लेकिन लड़कियों की लगन और आत्मत्याग, कठिन परिश्रम और लगन के साथ काम सीखने और काम करने ने पुरुषों के रुख में भी परिवर्तन उत्पन्न किया। लड़कियों को अनुत्साहित करने या डराने की बजाय वे उनकी प्रगति मे दिलचस्पी लेने लगे और उन्हें प्रोत्साहित करने लगे।

लड़कियां अपने पैरों खड़े होने के लिए दृढ थीं और इस इच्छा से कि उन्हें काफी कार्य-कुशल समझा जाय, उन्होंने अनावश्यक जोखमें भी उठाना शुरू किया।

उदाहरण के लिए वाङ शु-चेन को एक दिन एक आँख के ऊपर हलका-सा घाव लग गया। घाव पर पट्टी बांध दी गयी, लेकिन उसने इस डर से कि उसे घायल समझा जायगा और ट्रेन पर चढ़ने नहीं दिया जायगा, पट्टी उतार कर फेंक दी। फलतः घाव में धूल और धुआं पड़ने से चोट का निशान बन गया। मजदूर कहते हैं— 'इसे पति मिलने में कठिनाई नहीं होगी, इसके माथे पर उस शानदार निशान को देखो।'

इन लड़कियों में उत्साह था कि वे औरतों के लिए एक नया पथ प्रशस्त कर रही हैं, शिक्षा प्राप्त करने और काम करने में उनके उत्साह की सीमा न थी।

रेलवे मन्त्री तेंग तेइ-युआन ने चीन की प्रथम महिला इंजिन ड्राइवर तिन ग्वेइ-यिंग को बधाई देते हुए कहा कि चीन में पहिली बार जनता की रेलों में औरतें इंजिन ड्राइवर हो पाई हैं।

'तुम्हारा उदाहरण उन तमाम महिला रेल मजदूरों के सामने एक आदर्श है, जो आज शिक्षा पा रही हैं— तुम्हारी सफलताएं उन सबके सामने टेक्निकल शिक्षा में महान् सफलताएं प्राप्त करने के लिए उदाहरण होंगी।

नारी के लिए

नया विशाल क्षेत्र

परिचर्या एक ऐसी वृत्ति है, जिसकी प्रशंसा और निन्दा दोनों ही आवश्यकता से अधिक की जाती रही है। जब कोई स्त्री परिचारिका बन जाती है, तो कुछ परिवार उसे गर्व की वस्तु समझते हैं, परन्तु दूसरे हेय समझकर छिपाते हैं। जो विचारशील व्यक्ति परिचर्या को स्वार्थ-रहित समाज सेवा समझते हैं, वे भी अपनी लड़कियों को उस क्षेत्र में प्रवेश करने से रोकते हैं।

परन्तु आजकल परिचर्या एक गौरवपूर्ण और श्रेष्ठ वृत्ति मानी जाती है, क्यों कि यह शिक्षित और सुयुव नवयुवतियों के लिए जीविका का उत्तम साधन उपस्थित करती है। यह ठीक है कि परिचारिका को मानसिक और शारीरिक श्रम अधिक करना पड़ता है, परन्तु उसके परिणामस्वरूप उसे जो पुरस्कार मिलता है, वह अनुपाततः बहुत अधिक अधिक होता है। पुरस्कार का मानसिक और आध्यात्मिक मूल्य ही नहीं, भौतिक मूल्य भी अधिक है—इस व्यवसाय में संलग्न स्त्रियों का वेतन अन्य किसी व्यवसाय में संलग्न स्त्रियों के वेतन से कम नहीं होता, साथ ही इसमें बेकारी का प्रश्न ही कभी नहीं उठता।

योग्यता-प्राप्त परिचारिका सरकार द्वारा रजिस्टर्ड होने के बाद अस्पतालों या सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में काम कर सकती है, या परिचर्या के किसी विशेष अंग में विशेषता प्राप्त कर सकती है। वह परिचर्या विद्यालयों में पढ़ाने का काम कर सकती है, प्रसाविका बन सकती है, बच्चों और उन्मत्तों की परिचर्या में विशेषज्ञता प्राप्त कर सकती है, संगठन और प्रबन्धकार्य हाथ में ले सकती है, तथा सैनिक परिचर्या-सेवा में भर्ती हो सकती है। इनके अतिरिक्त और भी बहुत से रोचक कार्यक्षेत्र उसके लिये खुले हुए हैं।

भारत में लगभग १९० विद्यालय रोगी-परिचर्या-प्रशिक्षण के लिये और १२० प्रसव-विज्ञान-प्रशिक्षण के लिये हैं। इनमें प्रति वर्ष लगभग १,००० परिचारिकाएं और १,२०० प्रसाविकाएं प्रशिक्षण प्राप्त करती हैं। परन्तु भारत में परिचारिकाओं और प्रसाविकाओं की संख्या बहुत कम है, इसलिए सरकार अन्य प्रशिक्षण-केंद्र स्थापित करने का विचार कर रही है। १९४६ में दो परिचर्या-महाविद्यालय स्थापित भी किये जा चुके हैं, एक नई दिल्ली में और दूसरा वेलोर के क्रिश्चियन मेडिकल कालेज में। इन महाविद्यालयों में परिचर्या विषय में 'बी० एस० सी०" की उपाधि दी जाती है।

अब हमें यह देखना है कि भारत को कितनी परिचारिकाओं की आवश्यकता है ? डेनमार्क में ४० लाख की जनसंख्या के लिए लगभग १८ हजार और ब्रिटेन में ४ करोड़ की जनसंख्या के लिए लगभग १ लाख ३० हजार परिचारिकाएं हैं। पर भारत मे ३० करोड़ से भी अधिक जनसंख्या के लिए केवल ७-८ हजार परिचारिकाएं हैं।

निकट सम्बन्धियों में व्यभिचार

बम्बई राज्य में निकट पारिवारिक सम्बन्धियों के बीच होने वाले मैथुन को दण्डनीय अपराध माना जायेगा और उसका दण्ड-अधिकार प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट अथवा फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट को होगा। 'बम्बई निकट पारिवारिक मैथुन दण्ड अधिनियम १९५०' नामक एक विधेयक (बिल) असाधारण गजट में प्रकाशित कर दिया गया है।

सरकार को सूचित किया गया है कि दादा-पोती, पिता-पुत्री, भाई-बहिन तथा पुत्र और मां जैसे निकटतम खूनी रिश्तों में अवैध मैथुन की घटनाएं होती हैं तथा बम्बई में इस समय ऐसा कोई कानून नहीं है जिससे इस प्रकार के लोगों को दण्डित किया जा सके। इंगलैंड में ऐसे अपराधों को १९०८ के निकट पारिवारिक मैथुन निषेध कानून के अधीन दण्डनीय माना जाता है। अतः उसी आधार पर यहां भी कानून बनाया जा रहा है।

●

कहानी

पुनर्जीवन

श्री नट्टूभाई वाणी

"नहीं, नहीं महेश ! अब मेरा विचार त्याग दो। मैं अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु तुम्हारे जीवन को विध्वंस बनाने की आकांक्षा नहीं रखती।"

"रमा तू मुझे क्या समझती है। मेरे हृदय में तेरे प्रति कितना प्रेम प्रवाहित है। मेरे अन्तःस्थल में तेरे प्रति जो सहानुभूति एवं प्रेम की उर्मियां उठ रही हैं उन्हें भुलाया नहीं जा सकता रमा ! मैं तुम्हें अपना वचन तथा अपना सर्वस्व प्रदान कर चुका हूं।"

'परन्तु महेश ! तुम क्यों मेरे कारण अपने जीवन की आकांक्षाओं को नष्ट कर रहे हो। मैं चक्षुहीन आपकी जीवन-यात्रा में क्या सहयोग दे सकूंगी। ओह महेश ! तुम मुझ अन्धी को प्राप्त कर केवल अपनी कठिनाइयों को ही बढ़ा लोगे। ओह ! मैं कितनी मूर्ख हूं कि आप जैसे निर्मल हृदय वाले प्राणी को अभी तक भरमाती रही ! सच मानो महेश ! उस रात को आपके पास से वचन प्राप्त करके रातभर रोती रही। मैंने क्यों इस प्रकार के वचन की इच्छा की। क्योंकर मैंने आपके संसार पर विपत्तियों के बोझे गिराने का प्रयास किया। इन्हीं विचारों में मैं रात भर सो नहीं सकी।' रमा महेश से बोल तो रही थी किन्तु बड़े प्रयास से। इस प्रकार के आघात करने के प्रायश्चित में उसका हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा था।

'रमा तुझे जैसा अच्छा लगे समझ किन्तु मेरा हृदय पुकार-पुकार कर कह रहा है कि तू मेरी है और मैं तेरे ही लिए इस संसार में भेजा गया हूं। रमा यह न भूलो कि यह जो मैं बोल रहा हूं, मेरे अन्तर की आवाज है। यह तुम जानती ही हो कि अन्तर की आवाज कभी व्यर्थ नहीं जाती। रमा ! हमारा संयोग किसी ईश्वरीय संकेत द्वारा ही हुआ है। नहीं तो अर्ध रात्रि मे तेरे माता-पिता का तेरे भावी जीवन की समस्या सुलझाने चिन्तितावस्था में बैठना और उस चर्चा को सुनने के लिये तेरा छत पर आना। वहां से गिर पड़ना, सिर में गहरा घाव लगना; मेरा का मेरे वहां आना। क्या यह सब कुछ कोई अस्तित्व नहीं रखते। क्या इसमें कोई तथ्य नहीं था !"

'महेश ! यह सब सत्य है, किन्तु मैं तो अन्धी ......'

'बस कर रमा, बस कर ! तू अन्धी है, यह मुझे विचार ही नहीं हुआ क्योंकि इस विश्व में नेत्रयुक्त होते हुए भी नेत्रहीन होते हैं। लेकिन तू नेत्रहीन होते हुए भी देखती है। तेरे बाह्य चक्षु भले ही बन्द कर दिये गये हैं किन्तु फिर भी तू देखती है। इतने पर भी मैं डाक्टर हूं। मेरी आन्तरिक आशा है कि तेरे नेत्रों का प्रकाश तुझे शीघ्र ही प्राप्त होगा।'

महेश की वाणी में प्रेम प्रवाहित था !

'महेश !'

'नहीं रमा !' महेश रमा के मुंह पर हाथ रखता हुआ बोला।

'अब तू किसी प्रकार न बोल रमा ! तुझे तेरे महेश की सौगन्ध है। मेरा ध्येय जितना जल्दी हो सके तेरे साथ लग्न करने का है। पिता जी तथा माता जी से मिल कर लग्नदिवस निश्चित कर लेता हूं' महेश ने रमा के मुख पर रखे हुए हाथ को दबा दिया।

'तूने अपनी वाणी द्वारा अभी तक जो व्यथा दी है उसकी सजा ले।' महेश ने इतना कह कर उसके उभरे हुए गाल पर एक हल्का चुम्बन जड़ दिया।

'क्षमा कीजिये। यदि आपको ऐसी मस्ती करना है तो कृपया दवाखाने पधार जाइये। वहां कई पीड़ित आपकी प्रतीक्षा में व्याकुल हो रहे होंगे।' मन्द मन्द मुस्कराती रमा बोली।

'ओह ! इस मस्ती में मैं दवाखाने जाना भूल गया। हां, मैं माता जी तथा पिता जी से शीघ्र ही लग्न निश्चित कर लेता हूं।' महेश उठते-उठते बोला।

'जो तुम्हें अच्छा लगे करो। मैं तो अब ऊब गई हूं जिद्दी !'

'जिद्दी तू है या कि मैं,' महेश बोला।

'क्या ! मैं—मैं—मैं ! तुम जाते हो या कि जोर से चिल्लाकर माता जी को बुलाऊं।'

'अगर तुझे सन्तोष ही करना है तो माता जी को बुला ले। वह मुझे निकाल देंगी !'

'मुझे सन्तोष नहीं करना यदि आप जाते है तो !'

'अच्छा ! मैं चला।'

हाथ मे बैग पकड़ कर महेश चल दिया। रमा उसके बूटों का शब्द सुनती रही।

'वह मनुष्य नहीं देवता है ! मनुष्य तो ऐसा दयावान नहीं होता।' रमा गुनगुनाई।

●

रमा मोहनलाल भाई की इकलौती कन्या थी। अनेक मान्यताओं के पश्चात मोहनलाल भाई को कन्यारत्न प्राप्त हुआ था, किन्तु दुर्भाग्यवश दैवात् वह नेत्र ज्योति हीन थी। प्रारम्भ में मोहनलाल एवं धन कुंवर को यह बात विदित नहीं हुई थी। उस समय रमा के नेत्र एक दम निखरे हुए थे। शंका करने की आव श्यकता नहीं थी। लेकिन जब उन्हें उसकी नेत्र हीनता विदित हुई तो वे अतिशय आश्चर्यान्वित हुए। उनके हृदयों से एक वेदना मिश्रित आह निकल पड़ी। वे भगवान से प्रार्थना करने लगे कि हे भगवान यदि पुत्र की अपेक्षा कन्या ही दी तो वह भी अन्धी। 'इससे तो यही अच्छा होता कि हम नि:संतान ही रहते। अब इसको किसके गले मढ़ने का प्रयास करूंगा।' मोहनलाल पाषाण हृदय होकर इस भारी वेदना को सहन कर रहे थे। वे इसे भाग्य का दोष समझ रहे थे। उन्होंने रमा की आंखे ठीक कराने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये किन्तु निराश हुए। डाक्टरों ने एक मत होकर यही राय दी कि विदेश जाकर ही इसका उपचार करना ठीक होगा।

लेकिन रमा के पिता की ऐसी स्थिति नहीं थी कि विदेश जाकर रमा की आंखों का उपचार कराया जाय।

दिन प्रति दिन रमा वयस्क होने लगी। १६ बसन्त पार करने पर रमा का अंग प्रत्यंग फूल की नाईं खिलने लगा भगवान ने वैसे तो रमा को साधारण रूप ही प्रदान किया था। लेकिन साधारण तौर पर रंग से वह यौवन काल में चन्द्रमा के नाईं चमकने लगी थी। जिस प्रकार चन्द्रमा की ओर देखते हुए नेत्रों को थकावट प्रतीत नहीं होती उसी प्रकार उसके मुख कमल की ओर दृष्टि पात करते हुए आंखें थकती नहीं थी। काश ! रमा को दृष्टि प्राप्त होती तो रमा स्वयं वर्तमान सौन्दर्य को दर्पण में देख कर पागल हो गई होती। कोई प्राणी रमा को देख कर एक बार यह कहने को नहीं हिचकता कि हे भगवान तूने इसको सौन्दर्य प्रदान किया लेकिन और फिर अन्धी भी बना दिया यह तेरे तेरा निर्ममता है ! तेरा अन्याय है।

इस प्रकार रमा के सौन्दर्यांग में नेत्र हीनता खटकने वाली थी। रमा के माता पिता इसी लिए प्रायः दुखी रहते करते थे।

कहते हैं कि यौवन का उफान जब आता है तब वह किसी भी बाधा चट्टान को चट्टान नहीं मानता। और ऐसा प्रतीत होता है मानों कोई सरिता अपने प्रचण्ड वेग में मस्त, उन्मुक्त होकर समुद्र स्वामी से परिणाम हित चल बढ़ी हो ! इसी प्रकार मनुष्य भी यौवन आते ही किसी के साथ खेलने को तत्पर रहता है, क्योंकि यौवन एकान्तवास करना उचित नहीं समझता। युवा हृदय एकाकी नहीं रह सकता। यदि कोई युवक एकाकी जीवन यापन करता प्रतीत हो तो आप उसकी तड़पन उसके हृदय की धड़कन से देख सकेंगे, क्योंकि उसमें मूक वेदना के शोले निकल रहे होंगे ? मैं तो कहूंगा जो युवक एकान्त जीवन यापन करता है, वह शीघ्र ही वृद्धावस्था को प्राप्त हो जावेगा।

आज इतने दिन हुए रमा के हृदय में एक अजीब पुकार की हूक उठ रही थी। वह हूक कैसी थी। रमा स्वयं अस्वस्थ रहती थी, किन्तु इसका भी उसे भान नहीं था। उसका हृदय किसी को बुला रहा था।

●

रात्रि को लगभग बारह बजने का समय हुआ था। मोहन लाल और धन कुंवर दीवान खाने में बैठे-बैठे वाद विवाद कर रहे थे। उन्हें दिन रात रमा की चिन्ता थी। युवती कन्या की चिन्ता ने माता-पिता की आहट सामग्री को छीन लिया था।

'जा तू अब सो जा ! भगवान् ने जैसा विचार होगा वैसा ही होगा।' आखिर में मोहन लाल ने शांति दिखाते हुए कहा—

'आप मुझे सोने को कहते हैं, किन्तु......किन्तु मैं किस सुख को लेकर सोऊं ! क्या इस प्रकार मेरी रमा की जिन्दगी समाप्त हो जावेगी।' धन कुंवर की आत्मा मानों आर्तनाद कर उठी।

'हमें यों ही समझना चाहिये कि भगवान् ने हमें 'रमा' नाम का पुत्र ही दिया है।'

'आप बाप हो, इसलिए रमा को पुत्र मान सकते हो। परन्तु मैं कैसे मानूं। मैं जानती हूं माता की ममता कैसी होती है ? आप नहीं समझ सकते हो।' बोलते बोलते धन कुंवर की आंखों के अश्रु प्रवाहित हो चले।

'पर इसके लिए क्या किया जा सकता है। तू ही बता। चारों ओर दृष्टि दौड़ा चुका हूं, लेकिन रमा के लिए वर नहीं पा सका हूं और इतने पर जहां भी मिलता है, तो अन्धी रमा को स्वीकार करने को कोई उद्यत नहीं होता। मैं एक दिन धनजी भाई के यहां रमा-सम्बन्धी बात करने गया था, उस समय उन्होंने क्या उत्तर दिया— तुम जानती हो। वे कहने लगे—मोहनलाल ! जाति मे अभी कन्या का काल नहीं पड़ा है जो तुम्हारी अन्धी छोकरी के साथ अपने लड़के को ब्याहूं। हां, अब कभी यह विचार मत करना कि किसी गरीब का जीवन बिगड़ जाय। मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा कि यह धरती फट जाय और मैं उसमें समा जाऊं।"

उत्तर में धनकुंवर के कोमल कण्ठ से एक दीर्घ स्वास बाहर निकल पड़ी।

[शेष पृष्ठ १६ पर]

हम धनी होना चाहते हैं : पर— धनिकों को नहीं चाहते! क्यों?

लेखक—
श्री रामराजसिंह, राजेश

वैज्ञानिक विकास में भी अगणित वादों की प्रतिच्छाया से कदाचित कोई अछूता रह पाया हो। वादों में ही प्रतिवादों एवं विवादों का प्रजनन है! जो इन सब से परे हैं, वे अवसरवादी तो होंगे ही, विवादी भले ही न हों। हम वादों से परे भले ही रहें, किन्तु जाति, समाज किंवा राष्ट्र एक-न-एक दिन हमें भी अपने अपने विवादों में जकड़ने का सफल अथवा असफल प्रयास करते ही हैं और करेंगे ही, क्योंकि हम सभी एक-दूसरे के पूरक हैं। हमारी मनोकामनायें कुछ भी हों, इतस्तत तो होंगी ही, हम भले ही कुछ सार्वभौम रीति-नीतियों से अनुप्राणित न हों। विश्व के इतिहास में आद्योपान्त एक विहंगम दृष्टि डालने पर हमें अन्ततोगत्वा यही उपलब्ध होता है कि वैभव पाना उतना कठिन नहीं है, जितना वैभव पाकर उसे निबाहना। लोग तरसते हैं वैभव के लिए! तो फिर तरसना कैसा? हां, वैभव का वर्गीकरण, विश्लेषण — सार्वजनिक दृष्टि से — प्रत्येक प्राणियों के अंग-प्रत्यंगों सा वैषम्य रखता है। किसी हरित-पल्लवित उद्यान के सभी विकसित कुसुम मधुर सुगन्ध वाले ही नहीं होते, सुगन्ध-हीन भी होते हैं। और प्रायः ऐसा भी होता है कि सुगन्ध-हीनों की कोमलता अन्यों की स्निग्धता को भी मात कर देती है। वैसे ही कितने लोग — रुपये-पैसे के—वैभवशाली हैं तो कितनों की वैभवशालीनता उनकी बात के बड़प्पन पर है, कितने कर्त्तव्य-संलग्नता को ही वैभव मानते हैं, तो कितने विद्याधनी निज वैभव का आभास अपने ज्ञान में, कल्पना में, विवेक एवं अनुभूति में ही पा जाते हैं। किसी को कुछ आकर्षित करता है, अच्छा लगता है तो किसी को कुछ। अधिकांश जन अभावों को मेटने एवं तज्जनित कठिनाइयों को झेलने में ही दिवा-रात्रि परिश्रमशील रहते हैं उन्हें न दिन चैन न रात!

किसी घनी जनसंख्या वाले नगरों में जब हम सड़कों पर पग बढ़ाते हैं तो उसी के साथ ही मोटर गाड़ियों, ट्राम-कारों की चिल्लपों, पों-पों, भों-भों, की शब्दावलियां हमारे कर्ण-कुहरों को तो छेड़ती ही हैं, आत्म-वेधन भी करती हैं। उस समय हमें मन मसोस कर ही रह जाना पड़ता है। 'कदाचित हमारे निज की मोटरकार होती' — ऐसी भावना, दुर्भावना या सद्भावना भी तत्क्षण आ जाती है और हमें यह अनुभव करने में प्रयास नहीं करना पड़ता कि हम अपनी कार को और तीव्र ध्वनि से ध्वनित करते। यहीं से हमारी प्रवृत्तियों का झुकाव अपने निर्दिष्ट-पथ से उलझ पड़ता है और यह उलझन तत्वतः ऐसा रूप धारण कर लेती है, जिसकी सुलझन में उलझन और बढ़ती जाती है।

अब आप पूछेंगे, हम धनी होना क्यों चाहते हैं? हम तो कहेंगे कि हमसे प्रश्न पूछने के पहले आप, अपने से ही पूछें — मानव-सुलभ स्वाभाविक लालसाएं अभीप्साएं क्या हैं, वे क्रमशः क्या-से क्या होती जाती हैं! यदि हम प्रसन्नता से जीवन-यापन कर रहे हों तो क्या हम प्रसन्नतर होने की अभिलाषा नहीं रखते और प्रसन्नतर से प्रसन्नतम नहीं होना चाहते? क्या हमारे उन्नतर होने की अवस्थाएं इन्हीं से अनुप्राणित नहीं होतीं? हमें अपनी वर्त्तमान दशा, वर्त्तमान प्रगति से संतोष नहीं, और फिर जब संतोष हो ही जायगा तो प्रगति कैसी? ऊर्ध्वमार्ग की इतिश्री नहीं हो जायगी। सुतरां वर्त्तमान का संतोष ही भविष्य की उज्ज्वलता का प्रतीक है, प्रतिबिम्ब है, चतुर्दिक निराशाओं की आच्छादित ही प्रकाशपुंज की द्योतिका है। इस असंतोष का उल्लंघन करने के लिए लोग उसे झेलते ही नहीं हैं, प्रत्युत कुछ करने का प्रयास भी करते हैं। यथानुसार उसके दमनार्थ उपक्रम करने से बाज नहीं आते। जीवन घुड़दौड़ की आपाधापी के असामञ्जस्य में अक्षम बन्धुओं का सतत आशापूर्ण प्रयास ही उनका अलौकिक सुख है, निश्चेष्टता तो अकर्मण्यता लाता है।

'सर्वे गुणाः काञ्चनम् आश्रयन्ति' की सत्यता हम आये दिन देखा करते हैं। जाति, समाज एवं राष्ट्र जिस अमानुषिक, अव्यावहारिक, अशिव एवं अधर्म कार्य को करने पर किसी धनिक से स्पर्धा रखने के स्थान पर सहानुभूति प्रदर्शन करते हैं उसी अकार्य किम्वा-कार्य में संलग्न किसी निर्धन अथवा साधनहीन व्यक्ति के प्रति अंगुलियां तो लोग उठाते ही हैं, जाति-समाजच्युत भी कर देते हैं। इन सबके बावजूद भी अवसरवादी समाज पड़ा-पड़ा, यथावसर अपनी भूमिका का प्रकाशन करते रहने पर भी अपने बहु-संख्यक भाग को परिष्कार नहीं कर पाता।

हमारी अवस्थाएं ठीक उन प्राणियों जैसी हैं जिन्हें समस्त उत्तरदायित्व वहन करना है, किन्तु साधन-सामग्री उन इने-गिने प्राणियों ने आधिपत्य कर लिया है, जिनका भार हमें ही वहन करना है। अनैतिकता की बहुलता एवं तज्जन्य सफलता हमारे देखते देखते ही दैनंदिन होती रहती है, हम अबोध, अबोल नहीं, अक्षम नहीं, अकर्मण्य नहीं, किन्तु हमारे मानस-पटल पर उस नीति का बीज वपन किया गया है, जिसकी औषधि, जिसका निदान उसी की प्रक्रिया में निहित है। कोई भी प्राणी यथास्थान, यथावसर, यही कहता है 'यदि अमुक की स्थिति में मेरी उपस्थिति होती!' ऐसा क्यों? केवल यही कि एक का कार्य-क्षमता में द्वितीय का अविश्वास! एकाकी पौरुष शक्ति से द्वितीय का अपरिचय! इस प्रकार उनके काल्पनिक अनुभव, उनकी क्षमता के प्रतीक बन कर, उनकी अनुपम, अजित प्रेरणा बन कर उद्भूत होते हैं। उनकी आत्मा पुकार उठती है, 'कुछ नहीं, चलो! आगे चलो" नहीं।' और उनके सहायक— हाँ हुजूरी भरने वाले अथवा लोहा मानने वाले— उनकी प्रशंसा में लग जाते हैं। और वे महानुभाव स्वयं यह कहते फिरते हैं कि अमुक कार्य को इस विधि से करेंगे, अमुक को ऐसे सुलझायेंगे। किन्तु ऐसा नहीं करेंगे, जैसा तत्कालीन पदारूढ लक्ष्य कर रहे हैं। हम ऐसी घटनाओं के—निर्वाचन के अवसरों पर—देखने के अभ्यासी से हो गये हैं। अपने अबोध से अवगत होने पर भी उम्मेदवार महोदय वैभव - लिप्सानुरागहित ढिंढोरा पिटवाने में वास्तविक पराजय को पहुंच जाते हैं। व्यावहारिकता से वे भले ही कोसों दूर भागें।

एक ओर वे पाषाण हृदय हैं जिनके प्रस्तरनिर्मित प्रासाद, अट्टालिकाएं, भावावश ही उनकी अन्तरात्मा के द्योतक हैं, जिनके कुसुम, कोमल चरणों पर वैभव भी लोट-पोट मचाए रहता है, लक्ष्मी भी चम्पुना किया करती है, जिनके अधर सदैव ही सुस्निग्ध अधरों का रसास्वादन किया करते हैं और जिनके यहां कितने प्रस्तर हृदय अपने जीविकोपार्जन हित आठों याम सलामी बजाया करते हैं, हां, हजूरी किया करते और जो असहायों, क्षुधातों, दीन-दुखियों और कंगालों की ओर फूटी आंख भी नहीं देखते। और दूसरी ओर? दूसरी ओर निर्धनों का वह जीर्ण-शीर्ण पार्थिव शरीर अपने सहजीवी को आशीर्वाद देता रहता है। आहार की समस्या उन्हें सदैव चिन्ताग्रस्त रखती है। होता यह है कि असन्तोष, निराशा, असफलता एवं तज्जनित घृणा, द्वेष, ईर्ष्या के कारण उनका मानसिक स्वास्थ्य भी दिन-प्रतिदिन पतनोन्मुख होता है और ईर्ष्या की व्यापकता ही समस्त्की सर्वप्रियता का कारण है। कभी-कभी—प्रायः यदि-कदाचः—तो ऐसा होता कि इन विकृतियों के कारण एवं सहयोगाभाव से ऐसे प्राणी अपने आत्मीयों, स्वजनों तक को अपना विनाशक, संहारक एवं भक्षक समझने लगते हैं। यह कहना न होगा कि उन्हीं में से कितने सहृदय, उदार, सहनशक्ति और अति सरल प्राणी अपनी वर्त्तमानावस्था से ही सन्तोष पाते हैं या तो विवशता उन्हें ऐसा करने पर बाध्य कर देती है, उन्हें सरल बना देती हैं। विविध बाधाओं, अगणित आपदाओं, असंख्य असफलताओं एवं जगत की निष्ठुरता झेलते-झेलते उनके हृदय पाषाणवत् हो जाते हैं। उनकी आत्मा इतनी अप्रभावित हो जाती है कि उनके दुर्दिन में क्षणिक सुख और अनेकानेक विहीनता का कुछ प्रभाव ही नहीं पड़ता। हृदय तो मरुभूमि हो जाता है, नेत्राम्बु भी सूख जाते हैं।

जानते हुए कि 'प्रभुता पाइ काहि मद नाहीं' लोग अपने को यह आश्वासन देते हैं कि यदि अमुक की वर्त्तमान स्थिति में हम होते तो पीड़ितों, प्रताड़ितों, सन्तापितों तथा दीन-दुखियों की सहायता करते, उन्हें विभिन्न प्रकार की सुविधाएं देते, साधन प्रदान करते। इस कल्पना निर्मित माया नगरी में उनकी आत्मा, उनका रोम-रोम पुलकायमान हो जाता है।

आज की स्थिति, जब हम अपने अतीत से प्रत्यागमन करते हैं, निश्चित रूप से अनुमिलित लगती है— वह भी इस आधुनिक वैज्ञानिक युग में जब कि साधनों का प्राचुर्य मानवता को विदुषित करना चाहता है। और यद्यपि मानवता का गला घोंटना एक सरल बात हो गई है, पर यह भी कि मानव- मानव का मानवीय सम्बन्ध विच्छृंखलित नहीं हो पाये— इसकी साधन-सत्ता भी न्यून नहीं है। मानव— मानव का मानवत्व-सम्बन्ध ही प्रत्येक वस्तु का सौन्दर्य है। तो फिर हम धनी होना क्यों न चाहें? हम चाहते हैं कि हम ऐसे धनी हों जिसमें किसी का गला न घोंटना पड़े, समाज को दुःख न देना पड़े क्योंकि इसी कारण तो हम इन धनिकों को नहीं चाहते!

★

हिन्दुओं के चार पवित्र मन्दिर

★

मार्तण्ड काश्मीर का प्राचीन सूर्य मन्दिर

भुवनेश्वर उड़ीसा का महान् मन्दिर

तंजोर (मद्रास) का बृहदीश्वर मन्दिर

दिल्ली का लक्ष्मीनारायण मन्दिर (बिरला मन्दिर)

आज तुम्हारा जन्म-दिवस है, हे भारत कवि !

श्री सुधीन्द्र

आज तुम्हारा जन्म दिवस है हे भारत कवि !
शताब्दियां बीतीं कि इसी भारत की भू पर
इसी दिवस तुम उदित हुए थे
दीन हीन मंथन ब्राह्मण की
किसी अकिंचन सी कुटिया में
कहा ज्योतिषी ने कि
"मूल है इस बालक का अति निषिद्ध निकृष्ट
जन्म-नक्षत्र,
और तब त्याग दिया तुमको जनपथ पर
ममता हीन जनक जननी ने
'तिजरा के टोटक सा !'
बीते कितने दिवस-मास, संवत्सर कितने।
तुम अनाथ से घूमे राजापुर, सोरों, काशी में
तुलाराम तुम, रामराम कह भीख मांगते
बने रामबोला तुम सबके।
सुनते हैं तुम हुए विवाहित
किसी सुघड़ सुन्दर मनस्विनी रत्ना के पति
प्रेम पाश मे बंधे कि जिसके
चले गये तुम झंझा-अन्धड़ की तूफानों की
कालरात्रि में
सुदूर-दूर ग्राम के अपने श्वसुर-सदन मे
किसी नाग को जो लटका था छज्जे के नीचे
बाहर तक,
वेणी समझ किसी रमणी के,
पकड़ चढ़ गये सौध सदन में तुम रत्ना के।
जाग उठी जो विस्मित भ्रमित तुम्हें पा उस क्षण
क्रुद्ध क्षुब्ध फुंकार उठी वह रत्नावली नागिनी काली
चुभा दंश यों उस रमणी का—
लाज न आवत आपको दौरे आयेहु साथ
धिक धिक ऐसे प्रेम को कहा कहौं मैं नाथ !
अस्थिचर्ममय देह यह ता में ऐसी प्रीत
होती जो श्रीराम महं होति न तौ भवभीति !
खुले तुम्हारे नेत्र हुआ उद्बोध और तब

"ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी
ये सब ताड़न के अधिकारी !"
जिस नारी के लिए लिखे तुमने ये अनुचित अंक
आह, तुलसी था ताड़न स्वयं एक नारी का ही तो
रामचरण में प्रीति लगाने तुम उस गृह से निकल
पड़े थे
और उसी की ज्वलित प्रेरणा
जलती रही तुम्हारे जीवन-मन-प्राणों में
फलित हुई जो राम-कथा में।
राम भक्त तुम,
रामचरण के भ्रमर बन गये
जिसका गुंजन आज हो उठा मुखरित जन के
रोम-रन्ध्र में

[२]

गुरु नरहरि से महामंत्र पा
पढ़ नाना पुराण निगमागम
उपनिषदों का मन्थन करके
लोकनीति का सार-तत्व ले
तुमने मधु नवनीत दिया जो
रामचरितमानस—रामायण
उसको पाकर भूल गये हैं
भारतीय जन भूल गये हैं अपने वेद, उपनिषद्,
ब्राह्मण
धर्म-शास्त्र या आरण्यक स्मृतियां
आदि काव्य रामायण भी कवि वाल्मीकि का
आज बन गया रामचरितमानस रामायण
करने लगा और जन जीवन का प्रतिपल
शासन-अनुशासन !

[३]

तुम थे सच्चे भक्त राम के
और दाशरथि राम तुम्हारे
इस भव में आदर्श बन गये
रोम रोम मे रमे राम भगवान बन गये
सचमुच मर्यादा पुरुषोत्तम
उन जैसा नर देखा किसने,
धीर वीर नर सिंह विक्रमी,
कुसुमादपि मृदु है जो कठोर वज्रादपि !
आर्य सभ्यता को फैलाया स्वयं जिन्होंने
अपनी यात्रा से, निवास से
दूर दक्षिणपथ में
भारत से समुद्र में सेतु बांध कर
राक्षसराजपुरी लंका तक
और बन गये आर्य अनार्य जाति दोनों को
एक बनाने वाले जीवित सेतु।
वानर-ऋक्ष-भालु-कपियों की
सेना वह सन्देश-वाहिनी आर्य अनार्यों के संगम की
स्वार्थ नहीं परमार्थ हेतु थे
अखिल लोक रंजन करने को किया राक्षसों का
विनाश था !
स्थापित किया जिन्होंने भू पर राम राज्य
आदर्श प्रजाप्रिय,
जिसमें मंत्र रहे राजा का
'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी
सो नृप अवसि नरक अधिकारी'

[४]

चित्राधार विराट तुम्हारा !
भरा उसे तुमने जीवन के आदर्शों से
एक एक चारित्र्य बन गया जन-जीवन के
अंधकार में
एक एक प्रज्ज्वलित दीप सा—
(१) राम कि जिनकी शक्ति शील सौंदर्य त्रिपथगा
जिधर बही आप्लावित करती ओतप्रोत लोक-
जीवन को
जिनके पथ में आया अपना धर्म भूल कर
बनी चारिणी,
शूल बन गये फूल चरण के
वन-पर्वत, नद स्मारक जिनके गौरवमय विजया-
भियान के,
निर्वासित होकर वन में भी रहे सदा श्रीमान्,
राज्य या कानन में भी उनके लिये अखंड
असीमित !
वे जाते थे जिन ऋषि मुनियों की कुटियों में
पाने उनकी तपोसाधना का प्रसाद
वे धन्य मानते थे कुटीर को उनके पावन चरण
स्पर्श से।
चित्रकूट बन गया चित्र ही उनकी महा-
महिमताओं का
पंचवटी बन गई कीर्ति नायिका नटी सी,
रामेश्वर प्रतीक नर के नारायणत्व का,
विजय पताका कहीं न उनकी झुकी रुकी भी
दिग् दिगन्त में,
चरणों को धो सागर ने भी स्वयं चढ़ाया अंका
शतदल !
(२) उनकी वह सहधर्मचारिणी सीता थी आत्मा
सतीत्व की,
प्रतिमा जग की, श्री सुषमा की,
तुलना मिलती नहीं कि जिसकी कहीं
शील सत सुन्दरता में,
आया नहीं स्वयं छाया ही उन मायामय जीव
राम की,
वर्षों तक जो रही राक्षसों के बन्धन में,
घोर तिमिर में रही प्रज्वलित दीपशिखा सी

व्याकुल और अकम्प !
पावक देवी स्वयं अग्नि ने उठा गोद में
फहराई थी पवित्रता की जिसका विजय पताका !
उसकी ही पवित्रता पर शका कर,
एक रजक का व्यंग भरा अपवाद कान कर,
जिसको पति ने त्याग दिया फिर वनवास में,
वहीं बिताने जीवन के अवशेष शेष दिन !
और अन्त में समा गई जो उस धरती में,
जिससे कभी प्रसूत हुई वह धरती की सुता—
वरण करने धरती के महा पुत्र को !
(३) लक्ष्मण, जिसने भूख प्यास निद्रा कामादिक
त्याग देह के,
ब्रह्मचर्य का भीष्म व्रती बन
अपना जीवन
किया समर्पित रामचरण में,
रामचरण का कर प्रतिपद अनुसरण,
अनुचरण,
भाभी सीता को जिसने माना माता था
जिसके शीशफूल कु डल को देख कहा था जिसने,
"भैया !
मैं तो उनके कर्ण कु डलों केयूरों को नहीं जानता
मात्र जानता हू मैं नूपुर !
ऐसा सीता का पदसेवी
अटल ब्रह्मचारी,
परास्त की अपनी सहज जितेन्द्रियता से
जिसने वह कामा शूर्पणखा ।

४ भरत, त्याग की मूर्ति, स्फूर्ति, जिसने ठुकराया
अकस्मात हाथों में आया,
वैभव राज मुकुट सिंहासन,
छोड़ त्वरित साकेतपुरी को, रोता, रामचरण रज
लेने
सेना प्रजा सहित जो दौड़ा चित्रकूट को,
लौटा लेकर दुखी राम की चरण-पादुका,
पूजा करता रहा उन्हीं की वनवासी बन,
राज रहा साकेतपुरी मे स्वय राम का
और भरत तो रहा राम का प्रतिनिधि बन कर !
वह अनुचर हनुमान दास्य का अद्वितीय आदर्श,
मित्र सुग्रीव, विभीषण परम भक्त,
था जिनका प्रतिपक्षी लका का राजा रावण,
महादैत्य वह, महामनीषी, महाबली, वह महा-
प्रतापी
जिसने अपनी मुक्ति के लिये रचा सृष्टि का महा
नाश
औ कम्पित किया समस्त धाराओं को अनाचार से।

[५]

चित्राधार विराट तुम्हारा
भरा उसे तुमने जीवन के विविध रंग से,
सौम्य मनोहर,
भयुक्त-दर्शक,
जिन्हें, देख कर पाकर होता लोक स्वर्ग
सीता सुत का,
भरत, लक्ष्मण, त्याग, और आतृत्वभाव का
दशरथ प्रणपालन का
और जनक मिथिलाधिप विदेहत्व का राज्य-
बोध का
हनुमान आज्ञापालन का,
अगद चर का,
वानरेन्द्र सुग्रीव सखा का,
और विभीषण अविचल भक्ति का,
कौसल्या वत्सल माता का,
कैकेयी रामा रमणी का,
और मन्थरा किसी मु हलगी सिर पर चढ़ी कुटिल
दासी का,
बालि कामलोलुप राजा का,
परशुराम गर्वित प्रभुत्व का,
रावण बल के अहकार का,
युग युग अब तक प्रतिनिधि और प्रतीक बन गये
शुक्ल कृष्ण दोनों पक्षों से है जीवन का चित्र
पूर्णतम
चित्रकार की महातूलिका,
अहो महा कवि, धन्य तुम्हारी महालेखिनी !
अमर उसी के प्रिय प्रसाद से
आज बस गया,
आज रग गया,
रोम रोम, घर घर, घट घट में राम तुम्हारा
नाम तुम्हारा !

[६]

तुम हो तुलसी अमर राष्ट्र कवि !
युग कवि, जन कवि, जीवन के कवि !
जब जीवन पर पड़ी विषमयी बन्धन छाया यवन
शासन की,
बना चुकी थी जीवन को महामरण से भी दुख-
दायी,
उस मृत प्राणी
महाजाति को राम नाम का अमृत पिलाया,
और जिलाया,
निरालम्ब असहाय अनाश्रित,
राष्ट्र तुम्हारा घोर प्रलय में डूब रहा था,
तब तुमने दे राम भक्ति का तिनका उसको कूल
दिखाया,
प्राण बचाया !
जीवन की विशाल आशा पाकर वह तिनका,
महाभवाम्बुधि के तरने को पोत बन गया

[७ [

था अकबर सम्राट विराजित
दिल्ली के उस सिंहासन पर,
भारत का अधिराज !
किन्तु तुम थे भारत के हृदयों के अधिराज !
भूल गया है, भूल जायगा
जग अपने उस मुगल राज को,
मुगल राज के रत्न राज अकबर महान का,
आज नहीं है चिन्ह राज्य का कहीं मुगल के,
और तुम्हारा यह विशाल साम्राज्य आज भी
जन जन के तन मन प्राणों पर !
कौन जानता है कैसा था उस अकबर का राज !
तुम्हारा राज्य किन्तु था राम राज्य जो
आज रमा है रोम रोम में, प्राण प्राण में, बन
प्राणों का प्राण श्वास सा
अमर नहीं अकबर महान
है अजर अमर तुलसी, तुलसी के राम और उनकी
रामायण !

पुनर्जीवन

[पृष्ठ ११ का शेष]

वह आह उसके अन्दर के समस्त दुःखों को मानों व्याप्त कर रही थी।

दीवान खाने के पासवाले कमरे में सोई हुयी रमा जाग पड़ी। माता पिता मेरे कारण इतने दुःखी होवें'। ये विचार रमा के नेत्रों में नींद आने को वाधित हो रहे थे।

'इस पर भी यह विचार ही आता था कि क्या सारा जीवन अकेले ही व्यतीत करना पड़ेगा।' माता-पिता के वार्तालाप को सुनने के लिए रमा उतावली हो उठी, क्योंकि बीच बीच में उसके नाम का उच्चारण होता रहता था। इसलिए उसे निश्चय हो गया कि बात उसके विषय में ही की जा रही है। रमा उठी और कमरे के बाहर निकली।

इतने में मोहनलाल के कान में किसी के ऊपर से धड़ धड़ धड़ कर गिरने की आवाज आई। दोनों उठ खड़े हुए। दीपक जलाया और देखा तो रमा ठीक छत के नीचे अन्तिम सीढ़ी पर पड़ी हुई है। 'मेरी बच्ची कैसे गिर गयी!' कह कर मोहनलाल और चन्द्रकुंवर गिरी हुई रमा के पास आ गये। रमा इस प्रकार से गिरी थी कि उसके मस्तिष्क में अन्तिम सीढ़ी की कठिन कोर गड़ गयी थी, जिसके कारण उसे सख्त घाव हो गया था। रक्त वाव प्रवाहित था और रमा अचेत थी।

इस खड़खड़ाहट से पास में सोया हुआ भोला (नौकर) जाग पड़ा।" यह क्या हुआ?" कहता हुआ भोला मोहनलाल के पास आ गया 'भोला! बहन छत पर से गिर गई है, जा! जल्दी जाकर डाक्टर को बुला ला तो।' मोहनलाल ने कहा।

'पर कैसे गिर गई यह?' भोला ने प्रश्न किया।

'यह सब तू पीछे पूछना। पहले डाक्टर को ले आ।' मोहनलाल ने कहा।

भोला दौड़ता हुआ डाक्टर को बुलाने गया। मोहनलाल और चन्द्रकुंवर ने रमा को उठा कर खाट पर लिटा दिया, घाव गहरा लगा था। खून बहते हुये बन्द नहीं होता था।

'रमा के बहुत लगी है।' मोहनलाल ने कहा।'

रमा के घाव पर से रक्त पूछते हुए चन्द्रकुंवर और मोहनलाल डाक्टर की राह देखने लगे।

●

रमा कमरे से बाहर तो निकली, किन्तु दीवानखाने की ओर न जा कर छत की ओर घूम गई। रमा यही जान रही थी कि मैं पांव दीवान खाने की ओर ही बढ़ रहे हैं, लेकिन छत वाली ही वह धड़ाम से अन्तिम सीढ़ी पर आ गिरी।

जो कुछ अच्छा या बुरा होता है, उसके पीछे कुछ न कुछ ईश्वरीय संकेत अवश्य होता है। रमा के गिरने में भी एक भावी संकेत छिपा था। इस घटना में छिपे रहस्यात्मक संकेत ने रमा के जीवन को पुनर्जीवन प्रदान किया। इस घटना ने उसके जीवन को बदल दिया।

●

महेश नगर का तरुण डाक्टर था। बाल्यकाल से ही वह निर्धन परिवार का सदस्य था। उसके अध्ययन-काल में ही उसके पिता का देहावसान हो गया था। लेकिन उसकी माता के प्रोत्साहन और पढ़ने की लगन ने उसे डाक्टर बना दिया। डाक्टर बनने के पश्चात् उसने दवा खाना खोला। थोड़ी-सी अवधि में ही उसका यश नगर के जन-जन मानस में गाया जाने लगा। उसके यशोवर्ती होने का एक मात्र कारण था—प्रत्येक पीड़ित के प्रति सच्ची सहानुभूति प्रदर्शित करना और यह कि गरीबों के साथ विशेषतः गरीबों के लिए वह आधी रात में नंगे पांव और नंगे बदन दौड़ पड़ता था। वह जानता था कि धनवान तो पर्याप्त 'फीस' देकर भी दवा करवा सकते हैं, लेकिन निर्धन गरीब कहां जावें। वे डाक्टरों के मुंह मांगे दाम कैसे देवें। डाक्टरों का जितना ध्यान धनवानों की ओर है, उतना गरीबों की ओर नहीं। उसकी ममता, उसका प्रेम गरीबों के लिए उमड़ा पड़ता था। वह एक प्रकार का गरीबों का भगवान था।

काली अन्धकारमय रात्रि में भोला डाक्टर को बुलाने दौड़ा तो, पर वह आधे रास्ते में जाकर रुक गया—सोचने लगा—'आधी रात में क्या कोई डाक्टर आ सकेगा। भोला वहीं खड़ा-खड़ा विचार सागर में डूब गया। हठात् उसे स्मरण हो आया महेश! दौड़ता-दौड़ता वह महेश के घर आया और उसे सोते से जगाया।

महेश रमा के यहां आया तो रमा अचेत पड़ी थी। उसके गहरे घाव से काफी रक्त बह गया। महेश ने उसके घाव को धोकर पट्टी बांधी।

'घाव जरा अधिक गहरा है। इसे भरते हुए जरा अधिक देर लगेगी; लेकिन चिन्ता की कोई आवश्यकता नहीं। कल सवेरे मैं वापिस आऊंगा।" कह कर महेश उठ गया।

रमा के सिर पर लगे घाव को भरने के हेतु लगभग १२ दिवस का समय लगा। और इस १२ दिवस के समय में महेश रमा के माता-पिता को प्रिय लगने लगा। महेश की सच्ची लगन और हंसमुख स्वभाव से आकर्षित होकर मोहनलाल और चन्द्रकुंवर के हृदय में उसके प्रति दुलार और ममता बढ़ चली। परन्तु मोहनलाल और चन्द्रकुंवर को यह क्या खबर थी कि उनके घर में उन दोनों के अतिरिक्त महेश को कोई तीसरा व्यक्ति भी प्रेम और प्यारभरी निगाहों से आह्लादित कर रहा है। उसके हृदय दर्पण पर महेश का प्रतिबिम्ब पड़ रहा था। वह व्यक्ति और कोई नहीं 'रमा' ही थी!

महेश का स्पर्श रमा को अति प्रिय प्रतीत होता था। जब रमा के सिर पर महेश पट्टी बांधता था तो उस समय रमा के हृदय में यही अनुभव होता रहता कि मैं बार बार गिरती रहूं और महेश सदैव इसी प्रकार पट्टी बांधने को आया करे। महेश के स्पर्श से रमा का समस्त शरीर रोमांचित हो उठता था।

इधर महेश के हृदय में भी ममता जागृत हो उठती थी। रमा का सर्वांग सुन्दर शरीर महेश के मनोरम नेत्रों में रम रहा था। रमा के सुन्दर मुख को महेश कितने ही समय तक देखता रहता था। कई बार महेश को लगा कि भगवान ने ऐसी सुन्दर देह का निर्माण किया, लेकिन नेत्रों को क्योंकर विकृति प्रदान की। रमा की नेत्र-हीनता पर महेश को आश्चर्य अनुभव होता।

रमा का घाव लगभग भर गया था। एक दिन महेश रमा के सिर पर पट्टी बांध रहा था। रमा बोली—'डाक्टर '

'बोलो!' महेश स्वाभाविक स्वर से बोला।

'डाक्टर ' बोलते हुए रमा अटक गई। उसका स्वार्थभरा रहस्य महेश जान गया।

'परन्तु तुम इस प्रकार संकोच क्यों कर रही हो' महेश बोला।

मुझे ··· मुझे ' फिर रुक गई।

'हां, हां! बोलो न।' महेश ने कहा।

'मुझे तुम से कुछ कहना है डाक्टर!' बोलते हुए रमा का हृदय जोर-जोर से धड़कने लगा और उसकी धड़कन महेश के कानों में पहुंच गई।

'लेकिन तुम बोलो, अकचकाने से क्या होगा?'

(शेष पृष्ठ २० पर)

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री मन्मथनाथ गुप्त

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं वे लोग विवाहेच्छु भवानन्द और लड़की के मामा रसिकलाल को समझाते हैं, किन्तु उन्हें कुछ संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध केवल उसके जीवन-रक्षा की कर्तव्य भावना से विवाह सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है, और वहां वेश्याओं की दशा का अध्ययन करती है। सुजाता हरिकिशन नामक एक सुसम्पन्न तथा सुन्दर युवक की ओर आकर्षित होती है। उसका मित्रवत मिलन प्रणय में परिणत हो जाता है। सुजाता को गर्भ रह जाता है। इसलिए वह हरिकिशन से विवाह का प्रस्ताव रखती है, किन्तु हरिकिशन उसे ठुकरा देता है। अन्त में निराश हो कर वह लाहौर छोड़ देती है काशी आ कर सुजाता ने अनिरुद्ध से कुछ छिपाये बिना अपने उद्धार के लिए विवाह का प्रस्ताव कर दिया।

[गतांक से आगे]

यह बात कह कर सुजाता मानो स्वयं अपने प्रस्ताव की असम्भावना तथा हास्यास्पदता को समझ गई, इसलिये फफक फफक कर रोने लगी।

अनिरुद्ध का भाव जैसे एक खरोंचे में पकड़ा गया। वह बड़े असमंजस में पड़ गया। वह बिल्कुल हतबुद्धि की तरह बोल उठा—ऐसा कैसा हो सकता है। यह तो बड़ी अजीब सी बात है।

डूबता हुआ व्यक्ति जिस तरह हाथ के पास तिनके को पकड़ कर लटक जाता है, उसी प्रकार से सुजाता बोली—"होने को क्या है? हिन्दू मत में पुरुष का बहुविवाह सिद्ध है और मैं तो केवल नाममात्र के लिये आपकी स्त्री होना चाहती हूं।"

निराशा की अधिकता तथा अपनी परिस्थिति की भयंकरता के कारण सुजाता वास्तविकता के साथ संस्पर्श खो चुकी थी, इसलिये वह यह नहीं समझ नहीं पा रही थी कि उसका प्रस्ताव कितना हास्यास्पद और अशोभन है।

अनिरुद्ध पर इन बातों का यह प्रभाव हुआ कि वह समझ गया कि इस मामले को इस बहाने टाला नहीं जा सकता कि यह असंभव है। यह पूर्ण रूप से संभव था। अब सिर्फ यह रह गया कि इतना त्याग स्वीकार करने के लिए वह तैयार है या नहीं? अनिरुद्ध ने जिस प्रश्न को इस प्रकार अपने सम्मुख उपस्थित किया, तो वह डर गया, क्योंकि वह इस प्रश्न का केवल एक तरीके से ही उत्तर देने में अभ्यस्त था। अनिरुद्ध के प्रशस्त ललाट में पसीने की बूंदें जोर से निकलने लगीं जैसे कोल्हू में से तेल निकलता है। वह सोचने लगा।

त्याग कोई मामूली त्याग न था। सब तरह का सार्वजनिक जीवन उसके लिए बन्द हो जायेगा, केवल यह नहीं कि लोग उसे अनैतिक, स्वमत-त्यागी, प्रतिक्रियावादी, ढोंगी और न मालूम क्या क्या कहेंगे! संभव है, काशी में उसका रहना ही असंभव हो जाय। वह मंत्र में विश्वास न तो करता था और न करता है, पर उसने मंत्र और पुरोहित की सहायता से विवाह किया था। उसमें और एक बहाना था। पर इसमें? इसमें तो उस से बड़ा कारण है, वह यह कि एक स्त्री की सुख्याति, यहां तक कि शायद उसका जीवन भी इसी पर निर्भर है, पर इस केस में मुसीबत यह है कि वह लोगों के सामने खोल कर यह नहीं बता सकता कि किस कारण से उसने पहली पत्नी के रहते हुए दूसरी शादी करना स्वीकार किया है। सबसे अधिक कठिनाई तो यहीं पर है। उसे चुपचाप सब व्यंग, बौछार, गालियां सहनी पड़ेंगी। लोग यह कहेंगे कि उसने कामुकता, निर्लज्ज कामुकता के वशवर्ती होकर विवाह किया है। लोग यह कहेंगे कि उसने अपने सारे सिद्धान्तों पर पानी फेर दिया। उसे बगुला भगत, लम्पट और न मालूम क्या क्या उपाधि देंगे। यह इतना बड़ा त्याग है कि इसके दबाव से वह परेशान हो जायगा, शायद धंस जाय। नहीं यह बहुत बड़ा त्याग है।

वह सोचने लगा कि जब प्रत्येक अखबार में उसकी निन्दा छपेगी, लोग उसे जब जो मुंह में आयेगा, वही कह कर गालियां देंगे, तब क्या वह हमेशा के लिए महीने के बाद महीना, साल के बाद साल चूं न कर इस वेदना को भी सहने में समर्थ होगा? क्या एक दिन पट से धैर्य नहीं टूट जायगा और वह इस भयंकर सत्य को जनता के सिर पर फेंक कर न मारेगा। कितना भयंकर है! सोचते सोचते वह हतबुद्धि हुआ जा रहा था।

उसने इन बातों को एक निमेष के ही अन्दर सोच डाला। उसने मन ही मन अपने मन को टटोल कर देखा कि उसने इस विवाह को एक ऐसी बात के रूप में मान लिया है, जो हो चुकी है। ओह! उसके मन में फिर भी दुःख की इस स्थूल कर्मगाथा के अन्दर एक क्षीण आनन्द की मन्दाकिनी प्रवाहित हो रही थी, परन्तु वह केवल क्षणिक थी।

सुजाता ने देखा कि अनिरुद्ध इस प्रकार हतबुद्धि हो गया है कि वह जैसे मूर्छित हो गया हो। विपत्तिग्रस्त जंगली पशु की तरह उसने तीक्ष्णता के साथ अपनी समस्त निराशा को अपनी आवाज में केन्द्रीभूत कर कहा—अनिरुद्धजी, मेरी रक्षा कीजिये।

अनिरुद्ध संभल कर बैठ गया, फिर कुरसी के अन्दर मानों डूबते हुए बोला—क्या आप समझ रही हैं कि इसका अर्थ क्या होगा? सीधी बात यह है कि मुझे मनुष्य-समाज त्यागना पड़ेगा।......

अनिरुद्ध और भी कुछ कहने जा रहा था, पर चुप हो गया।

सुजाता ने कुछ रुकते हुए कहा—तो आपसे नहीं होगा? उस हालत में मुझे कलंकमय जीवन या आत्महत्या इन दोनों में से किसी बात को चुनना पड़ेगा। अच्छी बात है! वह मानो उठने लगी, पर उठ न सकी।

अनिरुद्ध ने फिर भी कुछ नहीं कहा। सुजाता की आंखों से फिर आंसुओं की झड़ी जारी हो गयी।

सुजाता के अश्रुप्लावित चेहरे की ओर देखते-देखते अनिरुद्ध के चेहरे ने अकस्मात दृढ भाव धारण किया। उस में वह योद्धा और शहीद जग उठे जो अपने-अपने अग्रगमन के सामने मृत्यु को भी तुच्छ समझते हैं। उसने उत्तेजित हो कर कहा—मैं कर सकूंगा। जरूर कर सकूंगा।

सुजाता ने सोचा कि शायद यह एक क्षणिक जोशमात्र है, इसलिए उसने निश्चित तथा निश्चिन्त होने के लिए कहा—यह आपकी अन्तिम बात है?

हां मेरी अन्तिम बात है—अनिरुद्ध ने अधिकतर दृढता के साथ कहा। वह अपने अन्दर उस समय एक सौ हाथी का बल अनुभव कर रहा था।

सुजाता गदगद हो कर बोली—धन्यवाद, आपने मुझे जीवनदान दिया।

पर अनिरुद्ध विषादग्रस्त होकर मानो एक बहुत बड़ी मंजिल तय करने के बाद थक कर कुरसी में डूब गया। क्या वह धन्यवाद से कुछ अधिक उम्मीद कर रहा था? कौन जानता है?

शादी जल्दी होने की जरूरत थी। सुजाता उसी दिन संध्या तक बैठ कर शादी का दिन तय कर चली गई। इतनी निराशा में भी अनिरुद्ध को एक क्षीण आशा की रेखा दिखाई पड़ रही थी। पर यह मृगमरीचिका की यह आशा? क्या वह अपने को धोखा दे रहा था?

[२६]

सुजाता के लाहौर से चले जाने की खबर जब से हरिकिशन को लगी थी, तब से वह बहुत परेशान था। वह समझ नहीं पा रहा था कि ऐसा क्यों हो रहा है, पर कारण जो हो। वह अपने ऊपर और अपनी दुर्बलता पर बहुत नाराज हो रहा था, और कुछ डर भी रहा था, क्योंकि वह इस व्यर्थ भावुकता में अपने यौवन की समाप्ति तथा बुढ़ापे के आगमन का लक्षण देख रहा था। यही उसके निकट बहुत भय का कारण था, क्योंकि ऐसे लोगों के निकट यौवन के अन्त का अर्थ जीवन का अर्थ था।

हरिकिशन ने एक बार सोचा कि एक तार देकर सुजाता को वापस बुलावे, पर उसकी समझ ही में नहीं आया कि वह क्या लिखे। क्या वह तार में यह लिखे कि सुजाता लौट आओ, विवाह होगा? असम्भव। विवाह का नाम सोचते ही उसकी सिटी पिट्टी भूल गई, उसने मुंह से कहा—कभी नहीं, मानव जाति इससे कहीं अधिक जान चुकी है, और जोर से ठठा कर हंसने लगा।

उसने लिखने-पढने में तबियत लगाने की चेष्टा की, जिससे ध्यान आसानी से लगे, वह कुछ अंग्रेजी उपन्यास खरीद लाया, पर किसी में भी तबियत नहीं लगी। जरा पढते ही वह कहानी का छोर भूल जाता था। सच तो यह है कि

उपन्यास पढ़ने से उसका जी और भी उचटता था। उपन्यास की प्रत्येक घटना से वह अनिवार्य रूप से अपनी कहानी में आ जाता था। वह समझ गया कि वह अपने ही उपन्यास में इतना व्यस्त है कि दूसरे के उपन्यास में सिर खपाने की उसमें प्रवृत्ति नहीं रह गयी थी।

इसलिए पुस्तकें लाइब्रेरी में जमा हो गईं। हरिकिशन ने पुस्तक पढ़ने को व्यर्थ समझ कर मोटर साइकल की शरण ली। वह शहर छोड़ कर दूर बहुत दूर देहात और जंगल में प्रकृति की गोद में निकल जाने लगा। फिर उसके मन में जब शांति नहीं आई तो वह गम्भीर हो गया। जिस रोगी की सबसे अच्छी दवा करने पर भी रोग घट नहीं रहा है, उसके मन की जैसी हालत होती है, हरिकिशन के मन की भी वही हालत हुई। वह कुछ खिन्न हो गया, उसका उतना सुन्दर स्वास्थ्य भी बिगड़ने लगा।

सुजाता को भूलने की चेष्टा में उसने दो तीन दिन सिर्फ सोकर काट दिये। पर उसके नतीजे में सुजाता को भूल तो सका ही नहीं, रात की नींद भी जाती रही। इसलिए एक दिन वह परेशान हो कर चप्पल पैरों से निकाल कर निकल पड़ा। एक विषादपूर्ण उदासीनता के वशवर्ती होकर वह रास्ते में किसी तरफ न ताक कर खिन्न और अस्त-व्यस्त चाल से एक मकान के सामने जाकर खड़ा हो गया। एक मिनट के लिए किवाड़ पर खड़े हो कर वह हिचकिचाता रहा, पर बाद को आंगन पार कर सीढ़ी लांघ कर दो मंजिले के एक कमरे में घुस पड़ा, और सामने की कुरसी पर धम से बैठ गया। उसके व्यवहार से स्पष्ट ज्ञात हुआ कि इस सीढ़ी, आंगन और कमरे के साथ उसका पुराना परिचय है।

खादी के मूठदार अपने मोटे बेंत को दीवार से टिकाकर उसने कोट के गले के पास बटनों को खोलते हुए सामने बैठी हुई स्त्री को पुकार कर कहा—निक्को!

निक्को हड़बड़ा कर उठ खड़ी हुई। इस सम्बोधन से उसके अन्दर का मरा हुआ भूत फिर जाग उठा। बोली—किशन!

मेरा कोट उतार दे। कह कर हरिकिशन ने दोनों हाथ ऊपर ठीक इस प्रकार उठा दिये, जैसे चिड़िया उड़ने के पहले पंख उठा देती है।

आनन्द से गद्गद् होकर निक्को उसका कोट उतारने लगी। इन मौकों पर हर बार उसे जो विचार आते थे, इस बार भी वे ही विचार आये, उसने सोचा कि इस व्यक्ति के एक इशारे पर ही वह वेश्या वृत्ति छोड़ कर कुल वधू हो सकती है, पर यह आशा व्यर्थ है, वह कभी भी नहीं कहेगा। एक दीर्घ निःश्वास उसके हृदय के अन्दर जम कर घुटने लगता और मानों पुराने दिनों की याद में उसके माथे पर पसीने की बूंदें आ जाती।

कोट को खोल कर उसने खूंटी पर टांग दी।

हरिकिशन ने कहा—आज मैं यहीं रहूंगा...

हां—कह कर निक्को नीचे चली गई ताकि बुढ़िया से सब बन्दोबस्त करने के लिए कह सके।

आज उसके रूप के अन्य खरीदारों को लौट जाना है, यह भी एक बात थी, जिसके लिए प्रबन्ध करना था।

निक्को ने लौट कर निश्चिन्तता के साथ कहा—इतने दिन कहां रहे? और फिर हरिकिशन की कुरसी के हत्थे पर हाथ रख दिया। हरिकिशन ने यह देखा कि इस बीच में निक्को ने बैंगनी साड़ी बदल कर बसन्ती रंग की उस साड़ी को पहन लिया था, जिसे वह पसन्द करता है, याने कभी पसन्द करता था।

हरिकिशन ने प्रश्न सुन कर ऐसा भाव दिखलाया, मानों वह नींद से चौंक पड़ा, बोला—इतने दिन कहां हुए?

निक्को बोली—इतने दिन नहीं तो क्या करीब एक साल हो गये। इतने दिन कहां रहे?

रहे—संक्षिप्त रूप से हरिकिशन ने कहा।

—क्रमशः

सड़क दुर्घटना से बचाव की फिल्मों द्वारा शिक्षा।

दोनों ओर से मोटर आने पर सड़क कैसे पार की जाय यह बालकों को बताया जा रहा है।

बालकों को सड़क दुर्घटना से बचने की शिक्षा दी जा रही है।

हर ३॥ मिनट बाद सड़क दुर्घटना

संसार के प्रत्येक बड़े नगर में आये दिन सड़क दुर्घटनाओं के कारण अनेकों मनुष्य मरते रहते हैं। ब्रिटेन में सिलेक्टेड अनेक कई आन्दोलन के जरिये लोगों को सड़क पर चलने फिरने के कानून कायदे सिखाये जा रहे हैं।

ब्रिटेन के लोग यह बात अच्छी तरह समझने लगे हैं कि तंग बाजारों और घने यातायात के कारण सड़क पर किसी भी क्षण कोई मर सकता है और दुर्घटनायें घातक भी हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें यह भी शंका हो गई है कि सड़कों पर चलने वाले शायद बची रहें अथवा उनका कोई बाल बच्चा मोटर गाड़ी की जद में आकर कुचल जाये, घायल हो या मर जाये, क्योंकि सड़क दुर्घटनाओं के [illegible] हर दिन २५ मौतें होती, हैं ४७१ आदमी जख्मी बनते हैं और जो हर साढ़े तीन मिनट के बाद होती रहती हैं।

इसलिए अब वे सड़क पर बहुत देखभाल कर चलते फिरते हैं, और तीन वर्ष से चालू मार्ग-आन्दोलन में काफी रुचि लेकर पूरा पूरा लाभ उठा रहे हैं।

कैम्ब्रिज स्थित दुर्घटना परिषद् इंग्लैंड का एक उदाहरणीय संगठन है। इसकी चार समितियां हैं जिनके अधिकांश सदस्य साधारण नागरिक हैं। दो समितियां मार्ग सुरक्षा, एक घरेलू दुर्घटनाओं को रुकावट और एक संस्था के लिए जन सम्बन्धी कार्य करती रहती हैं।

मार्ग दुर्घटना समितियां स्थानीय दुर्घटनाओं के असली कारण पता चलाती हैं और उन पर गौर करके उन्हें रुकवाने का प्रयत्न करती हैं। प्रचार समिति ऐसे कार्यक्रम-प्रयुक्त करती है जो लापरवाही से चलने या गाड़ी चलाने वालों को सहायता पहुँचाते हैं। इसने दो फिल्में तैयार कीं जो ब्रिटेन और राष्ट्रकुल देशों में लोकप्रिय सिद्ध हुई हैं। पोस्टरों और प्रदर्शिनियों द्वारा भी शिक्षा प्रदान की जाती है।

प्रधान पुलिस अधिकारी, मुख्य सिपाही बी०एन० वेरिंग्टन कैम्ब्रिज कौंसिल के सम्बन्धी हैं जो 'मेफ्री फन' नामक बच्चों की एक कॉमिक [illegible] पत्रिका का संपादन भी करते हैं और जिसमें सुप्रसिद्ध बाल-लेखिका एनिड [illegible] को रचनायें रहती हैं।

चौराहों पर एकदम रुकजाने के कुछ उदाहरण दखे जा रहे हैं।

सड़कों पर बालक दुर्घटना से कैसे बचें— इसकी व्यावहारिक शिक्षा।

पुनर्जीवन

[पृष्ठ १९ का शेष]

'तुम्हें बुरा तो नहीं लगेगा ।'

'बुरा लगेगा तो भी बुरा न मानूंगा बस ।'

'मैं···मैं तुम्हें चाहती हूं डाक्टर ।'

'रमा !' महेश के मुंह से एक चीख निकल गई ।

'ओह ! रमा ! इसमें दुःख का प्रश्न ही क्या है ? मेरे हृदय के भार को तूने कम कर दिया । जो बात मैं कहने वाला था वही बात तूने कह दी ।'

'तो क्या आप भी·······।'

'हां रमा ! मैं भी तुम्हें चाहता हूं । परन्तु कहने की उत्कट इच्छा रखते हुए भी कह नहीं सकता था । आज तुमने मेरी सबसे बड़ी अभिलाषा पूर्ण की है ।'

'तुम ! तुम·······तुम क्या मुझ से ब्याह कर सकते हो ।' रमा आज ही सब कुछ पूछ डालना चाहती थी ।

'क्या तुझे इसमें कोई शंका है ?'

'तो मुझे वचन दो डाक्टर !'

'अच्छा । यही मेरा वचन है ।'

'ओह ! डाक्टर······ !' हर्षोन्मत्त रमा ने महेश का हाथ चूम लिया ।

●

महेश की शादी रमा के साथ हो गई ।

महेश की माता ने इस शादी के विरोध में आपत्ति की । उसने कहा— मेरे घर में मेरी बहू नेत्रहीन आवे यह नहीं हो सकता । किन्तु कुशाग्र बुद्धि महेश ने सब आपत्तियों को समेट लिया ।

शादी के बाद उसे अन्यान्य डाक्टरों से यही राय प्राप्त हुई कि वह अमेरिका जाकर रमा की आंखों का आपरेशन कराये । रमा की आंखों की पुतली पर एक पर्दी जम गई है वह साफ होते ही रमा पुनः दृष्टि-युत हो जावेगी ।

रमा को लेकर महेश अमेरिका चला गया ।

●

अमेरिका के एक विशाल 'हास्पिटल' में रमा सोई हुई थी । पार्श्व में बैठा महेश पुस्तक का अध्ययन कर रहा था ।

'मैं देख रही हूं महेश ।' रमा ने कहा ।

'रमा ।' महेश पलंग पर जा बैठा । 'मुझे आशा है कि तेरी आंखें शीघ्र ही अच्छी हो जायेंगी । भगवान पर श्रद्धा रख ।'

'अपने व्याख्यान रहने दो । मुझे अपनी प्रशंसा अच्छी नहीं लगती ।'

'यह पट्टी कब खुलेगी ?'

'दो दिवस पश्चात् ! ऐसा डाक्टर कहते थे ।'

●

दीवान खाने में प्रदीप्त प्रकाश व्याप्त हो रहा था । महेश अपने पलंग पर बैठ कर किसी की प्रतीक्षा कर रहा था । आज ही महेश रमा को लेकर अमेरिका से पुनः स्वदेश आया था । महेश की लगन और अविराम परिश्रम से रमा ने पुनरपि दृष्टि प्राप्त की थी । रमा का आपरेशन सफल हुआ था ।

पलंग पर बैठा महेश रमा की प्रतीक्षा कर रहा था । परन्तु महेश की माता रमा को छोड़ती ही नहीं थी । पुनः दृष्टि प्राप्त करने पर सबजन आनन्दोन्मत्त हो रहे थे ।

बड़ी देर पश्चात् रमा अपने शयन कक्ष की ओर आई । रमा की पदध्वनि ज्यों ही महेश के कान पर पड़ी त्यों ही महेश दरवाजे की ओट में छिप गया । और जैसे ही रमा कमरे में प्रविष्ट हुई वैसे ही महेश ने रमा को अपने बाहुपाश में जकड़ लिया ।

'ओह ···· मां ·····।' रमा के कण्ठ से एक हल्की चीख पड़ी ।

'डर गई रमा !' महेश रमा को पलंग पर बिठाता हुआ बोला— 'यहां कोई·····?'

'तू मुझ से डरती है रमा ।'

'महेश ! मेरे देव ! मेरे प्रभु ! यदि आप मेरे जीवन में न आये होते तो मेरा क्या होता नाथ ?' बोलते हुए रमा के नयनों से अश्रु धारा बह चली । 'आप के प्रबल प्रताप से ही तो मुझे पुनर्जीवन प्राप्त हुआ है स्वामी ! आप······आप आप तो·····'

'रमा ।' कह कर महेश ने रमा का मुंह अपने दोनों हाथों से ऊंचा उठा लिया । 'रमा······प्रताप तो भगवान् का है । उसी की कृपा से ये आंखें अच्छी हुए हैं ।' महेश बोला ।

रमा की गोल-गोल कजरी आंखों से टपटप अश्रु मुक्ता झरने लगे । वे आंसू ऐसे प्रतीत हो रहे थे, मानो रमा महेश पर अभिषेक कर रही थी ।

पांडे जी की परेशानी

पंडित प्रद्युम्न प्रसाद पांडे पुर्दिलपुर में रहते थे। पुराने इमली के पेड़ के पास पांडे जी का पुराना सा मकान था। पांडे जी पूर्णमासी को पास के गांव में पुन्ना के पड़ाव पर पुलिया के पास पूरन की पंचायत में पांच बजे पहुँचे। पूरन ने पांडे जी को पीपल के पेड़ के पास पत्तल में पन्द्रह पूड़ी पत्तल पर परोसी। पूड़ी पीली और पतली थीं। पांडे जी ने पूरन से पूछा—'पूड़ी पीली क्यों?' पूरन बोला—पांडे जी पतली हैं सो पीली हैं। और पांच प्रकार की तरकारी पत्तल परपरोस पूरन चला गया। पांडे जी के पेट में पांच प्रकार की तरकारी से पन्द्रह पूड़ियां प्रवेश कर गईं। पूरन ने पांच पापड़ और पांच पूड़ियां पत्तल पर और परोसीं। पांडे जी के पेट में पांच पापड़ और पांच पूड़ियोंने और प्रवेश पाया। पांच बजा पांडे जी पांच बजे पुर्दिलपुर चले। पांच मील पहुंचने के पश्चात पांडे जी के पेट में पीड़ा पैदा हुई। पांडे जी पीपल के पेड़ के नीचे पड़ गये।

पांडे जी पांच घन्टे पश्चात उठे, पीपल के पेड़ के पास पांच पीतल की परातें देख पांडे जी प्रसन्न हुये और परात उठा गांव की ओर पांडे जी ने पग बढ़ाये पांच मिनट पश्चात पांडे जी को पांच पुलिस के पहरेदारों ने पकड़ लिया और पूछा—पांडे जी यह पांच पीतल की परातें कहां से पाईं?"

पंडित जी पीले पड़ गये और घबड़ा कर बोले—पप परातें पप पीपल के पप पेड़ के पास पप पड़ी थीं।'

पीपल के पेड़ के पास पड़ी थीं? एक पुलिस वाले ने पूछा।

'हां। मैं पपूरन को पप पंचायत से पप लौट आ रहा था, पप पेट में पप पीड़ा हुई। मैं पप पीपल के पप पेड़ नीचे पप पड़ गया। सोकर उठा तो पप पेड़ के पास परातें पाईं।'

पेड़ के पास परातें कहां से आईं।' पुलिस ने पूछा?

मुझे क्या पप पता? पांडे जी ने उत्तर दिया।

'पपप प ता नहीं तो पपप चों में चलना होगा।' एक पुलिस के पहरेदार ने [illegible] हुए कहा।

पंचायत में पहुंच पंचों के पास पहुँच पांडे जी ने पूरा किस्सा फिर सुनाया

पंचों ने पांडे जी को निर्दोष कहा और एक परात दे विदा किया। और बाकी पंचायत के खजाने में जमा कीं।

[illegible] पांडे जी प्रसन्न हो घर पहुँचे। और पंडितानी को पूरा हाल सुनाया। पंडितानी ने प्रसन्नता में प्रकार २ के पकवान पकाये—पूड़ी, पापड़, पकौड़ी, और पुआ।

—[illegible] गुप्त

बाल परिषद्

मेरा मुन्ना

मेरा मुन्ना मुझको प्यारा।
छोटा-मोटा राज दुलारा॥

मेरा मुन्ना झूले में।
नहीं खेलता धूले में॥

मेरा मुन्ना चन्दा में।
रहाता कभी न गन्दों में॥

मेरा मुन्ना हंसता है।
सोता है, खुश रहता है॥

मेरा मुन्ना बच्चा है।
फिरता संग बच्चा है॥

मेरा मुन्ना गुड्डों में।
बड़े मजे से गुड्डों में॥

मेरा मुन्ना पलने में।
चंचल है अति चलने में॥

मुन्ना जितना छोटा है।
बस उतना ही खोटा है।

—आनन्द शंकर

जरा हंसिये!

एक बार एक लड़के के बाप ने अपने बेटे से कहा—बेटा तुम्हारी पढ़ाई का खर्च बहुत आ रहा है। यह सुन कर लड़के ने कहा—पिता जी इसी लिए मैं बहुत कम पढ़ता हूं।

× × ×

एक बार एक बालक की उसकी मां मारने लगी। वह बालक भाग कर पलंग के नीचे घुस कर बैठ रहा। जब उसका बाप आया तो उसको निकालने के लिये पलंग के नीचे घुसने लगा यह देख कर बालक ने कहा—क्या पिता आप को भी अम्मा ने मारा है।

× × ×

पोता—दादा क्या आपके मुख में दांत हैं।

दादा—नहीं बेटा क्या काम है?

पोता—जरा मेरे अखरोट रख लीजिये।

अजित मित्र

कुसंगति का फल

मोहन स्कूल में मन लगाकर पढ़ता था। स्कूल के होने वाले खेलों में भी वह अच्छा खिलाड़ी था। पढ़ने की लगन के कारण वह परीक्षा में पहले नम्बर पर पास होता था।

इधर श्याम परीक्षा में असफल हो जाता है। पिता जी जब यह सुनते हैं, और जेब (Pocket) में से रोज़ २ रुपए चले जाने के कारण उन्हें श्याम पर बहुत गुस्सा आता है और उसे डांट भी देते हैं। श्याम लाड़-प्यार में पले हुए थे उन्हें यह बात अच्छी नहीं लगी। एक दिन श्याम ने तिजोरी में से रुपये चुराकर अपने आवारा दोस्तों के साथ शहर से भाग निकले।

दूसरे शहर में भी श्याम और उसके साथियों ने अपना धंधा चालू कर दिया। श्याम के ऊपर सारे साथियों को भोजन कराने का खर्च था। माह दो माह बाद उनका तमाम पैसा खर्च हो गया। उदर पोषण के लिए अब कुछ चाहिए। अतः उन्होंने तय किया कि चोरी करें। आखिर उन्होंने एक मकान में चोरी भी की। श्याम व उसके मित्रगण मकान में पैसे का गल्ला ढूंढने लगे। थोड़ी ही देर में श्याम का पैर एक थाली पर पड़ गया और श्याम फिसल गया। थाली की आवाज़ सुनकर घर वाले जग गए। और उन्होंने श्याम व उसके मित्रगणों को पकड़ लिया। न्यायाधीश ने उन्हें ६ माह की सख्त सजा सुनाई। जेलर उसे रूखी रोटी सूखा साग देते पर श्याम उसे नहीं खाता था। आखिर वह प्रतिदिन दुर्बल होता जा रहा था। और समय के पहले ही वह इस संसार से कूच कर गया।

बाल-मित्रों! यह कुसंगति का परिणाम है।

बताओ तो जानें

देखी एक अनोखी नारी
गुण उसमें एक सबसे भारी
पढ़ी नहीं पर अचरज लावै
मरना जीना तुरन्त बतावै

× × ×

तीन अक्षर का मेरा नाम
सबको ढोना मेरा काम
बीच बीच कटे पक्षी कहलाता
अन्त कटे गठरी कहलाता

चित्रलोक

जादू

सुप्रसिद्ध निर्माता-दिग्दर्शक ए० आर० कारदार जिसने एक दशाब्दि पूर्व हालीवुड के ऐतिहासिक चित्र 'कार्निवल रिवेल्यू' के आधार पर 'बागी सिपाही' का निर्माण किया था, अब अपने नये फिल्म 'जादू' की तैयारियों में व्यस्त हैं। इस फिल्म का कथानक कोलम्बिया के 'लवेज कारमेन से लिया गया है, जिसके प्रदर्शन पर पिछले दिनों बम्बई में पाबन्दी लगा दी गई थी, किन्तु जो इन्हीं दिनों दिल्ली के मिनर्वा सिनेमा में दिखाया जा रहा है। कारदार इसे कोलम्बिया के समान ही आकर्षक बनाने में प्रयत्नशील है और सैटिंग्स, वेशभूषा, तथा प्रधान दृश्यों की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। कारमेन की जगह अभिनय करने के लिए नलिनी जयन्त को और डान जोस की जगह 'बन्धन' में 'चल चल रे नौजवान' गीत गाने वाले सुरेश को चुना गया है।

कारदार ने अपने अगले चित्रों के नाम 'इन्द्र सभा' और दिलेना-दों' घोषित किया है।

फिल्मिस्तान का निर्दोष

'समाधि' के बाद फिल्मिस्तान ने एक सामाजिक समस्या को लेकर 'निर्दोष' नाम से फिल्म तैयार की है। इस फिल्म में मनोरंजन का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है, यह इसी बात से प्रकट है कि इस फिल्म की नायिका चंचल अभिनेत्री रेहाना है। साथ में श्याम, कुलदीप और हास्य-अभिनेता ओमप्रकाश हैं। फिल्म-का निर्देशन 'पुनर्मिलन' के प्रसिद्धि-प्राप्त निरंजन शर्मा ने किया है। संगीत श्यामसुन्दर का है।

'मगरूर' बन कर तैयार

बम्बई टाकीज के सुप्रसिद्ध भूतपूर्व कैमरामैन आर० डी० माथुर द्वारा माथुर फिल्म्स के लिए दिग्दर्शित 'मग-रूर फिल्म बन कर तैयार हो गई है। इस फिल्म की प्रधान भूमिका में निगार, जयराज, दुर्गा खोटे, रहमान, मीना-कुमारी और लिली हैं। कहानी आगा-जानी काश्मीरी ने लिखी है और फिल्म सुमधुर संगीत और आकर्षक नृत्यों से परिपूर्ण है।

'अलख निरंजन' की लोकप्रियता

'माया मछिन्द्र' जैसी कहानियां अब भी सिने-प्रेमियों को आकृष्ट करती हैं, इसका प्रमाण सुपर पिक्चर्स द्वारा निर्मित 'अलख निरंजन' की वह लोकप्रियता है, जो उसे बम्बई में प्राप्त हो रही है। इस फिल्म को जिसका निर्देशन दादा गुंजाल ने किया है, शान्ति की खोज में अपने राजपाट का परित्याग कर देने वाले राजा गोपीचन्द की प्रसिद्ध कहानी के आधार पर तैयार किया गया है।

'मधुबाला'

पहले भी कई फिल्म निर्माता अभि-नेत्रियों के नाम पर अपनी फिल्मों का निर्माण कर चुके हैं। इस दिशा में नवीनतम प्रयत्न 'रणजीत' ने किया है, जिसने आज की सबसे अधिक लोकप्रिय अभिनेत्री मधुबाला क सहयोग से उसी के नाम पर फिल्म तैयार की है। 'मधु-बाला' में मधुबाला के साथ देवआनन्द और चरित्र अभिनेता जीवन है। चित्र का निर्देशन प्रहलाद दत्त ने किया है।

बेटा बाप से आगे बढ़ गया

भारतीय फिल्मों के इतिहास में यह पहला अवसर है, जब कि 'आवारा' फिल्म में पिता-पुत्र दोनों एक साथ कार्य कर रहे हैं और फिल्म का निर्देशक पिता न होकर पुत्र है। अभी उस दिन स्टु-डियो में जब पृथ्वीराज एक सम्वाद को एक विशेष प्रकार से बोलने का प्रयत्न कर रहे थे उनके पुत्र राजकपूर ने बीच में टोक कर कहा : 'कृपया इस प्रकार से न बोल कर ऐसे बोलिये।' इसके बाद राजकपूर ने उन्हें वह लहजा कह सुनाया, जिस लहजे में वह उक्त सम्वाद को अपने फिल्म में रखना चाहते थे। पिता ने अपने पुत्र के मुख से भिन्न लहजे में उक्त सम्वाद को सुन कर कहा : शाबाश, तुम ठीक कहते हो।

सादिक की 'सबक'

एम० सादिक की फार्मूला फिल्म 'सबक' दिलचस्प कहानी, सुन्दर नृत्यों और प्रभावशाली अभिनय के सफल मिश्रण से स्वाधीन भारत में दिल्ली का खास आकर्षण बनी हुई है। भूमिका में मुनव्वर सुलताना, जागीरदार, कुमार, ओमप्रकाश, करनदीवान आदि प्रसिद्ध कलाकार हैं।

'राज मुकुट' आ रहा है

नानूभाई वकील द्वारा निर्देशित तथा मोहन पिक्चर्स द्वारा प्रस्तुत नाच-रंग, युद्ध, तलवारी द्वन्द्व, हिंसा-प्रति-हिंसा, षड्यन्त्र, प्रणय, हास-परिहास से परिपूर्ण चित्र 'राज मुकुट' का प्रदर्शन शीघ्र ही दिल्ली के कई सिनेमाघरों में एक साथ प्रारम्भ होने वाला है। प्रधान भूमिका में 'बरसात' की निम्मी, बीना, जयराज, रामसिंह, सप्रू, बेबी तबस्सुम, लीला, मिश्रा, जानकीदास, रमेश सिन्हा आदि कलाकार हैं।

सोहराब मोदी की भव्य कृति 'शीशमहल'

सोहराब मोदी की भव्य कृति 'शीश-महल' का दिल्ली के रीगल और रिट्ज सिनेमाओं में प्रदर्शन आरम्भ हो गया है। निर्माता — निर्देशक — अभिनेता सोहराब मोदी ने इस फिल्म का निर्माण कई वर्षों की चुप्पी के बाद किया है, किन्तु नसीम, निगार सुलताना, पुष्पा हंस, अमरनाथ और मुबारक के सहयोग से निर्मित यह फिल्म उनकी भूतपूर्व भव्यनिर्माण कला की कीर्ति की रक्षा किये हुए है।

अकबर का दीनेइलाही

[पृष्ठ ६ का शेष]

अधिकार अकबर ने उलमाओं से छीन कर स्वयं ले लिया। 'अल्लाहो अकबर' इस उक्ति में जो अकबर शब्द है वह मूलरूप में परमात्मा का विशेषण है, परन्तु नये सम्प्रदाय के व्याख्याकारों ने उसे यह रूप दे दिया कि अल्लाह और ईमान का सबसे बड़ा जीवित व्याख्याकार अकबर ही है। फतेहपुरी मस्जिद में अपने नाम का खुतबा अकबर ने स्वयं पढ़ कर सुनाया।

[५]

अकबर का 'दीने इलाही' उसके जीवनकाल में भी बहुत परिमित दायरे में फैल सका, और अकबर की मृत्यु के पश्चात् ही वह सर्वथा समाप्त हो गया। संसार को उसका पता भी न चलता, यदि अबुल फजल अपने अकबरनामे से, और अन्य कुछ मुसलमान लेखक अपने आलोचनात्मक ग्रन्थों में उसकी चर्चा न करते। अकबर ने भी लगभग वही कार्य किया, जिसका उद्योग कबीर और नानक ने किया था। सिद्धान्त के शाब्दिक प्रचार में उन भक्तों को जितनी सफलता मिली, अकबर को उतनी भी नहीं मिली, क्योंकि 'दीने इलाही' पन्थ के रूप में जीवित न रह सका। इसका मुख्य कारण यह था कि अकबर की उदारतापूर्ण धार्मिक भावनायें बहुत कुछ राजनीतिक कारणों से उत्पन्न हुई थीं, और 'दीने इलाही' का मुख्य आचार्य बन कर अकबर ने उन्हें जो राजनीतिक रूप दे दिया, उससे उन भावनाओं को सांस्कृतिक दृष्टि से कोई स्थायी रूप न मिल सका। अकबर और उसका दीने-इलाही अन्य मरणधर्मा वस्तुओं का तरह काल के गाल में विलीन हो गये—तो भी अपने समय के इतिहास में इतना गहरा चरणचिन्ह अवश्य छोड़ गये कि आगामी ६० वर्षों तक मुगलों की सल्तनत में धार्मिक उदारता की बू विद्यमान रही। धार्मिक उदारता के अवशिष्ट अंशों का ही प्रभाव था कि शासकों की अनेक अयो-ग्यताओं के होते हुए भी ६० वर्षों तक मुगल साम्राज्य की प्रगति आगे ही आगे की ओर रही। उन ६० वर्षों में, ऊपर की सतह के नीचे, चुपचाप भारत में विद्य-मान दो संस्कृतियों का मिश्रण किस प्रकार जारी रहा, यह मैं अगले लेख में बतलाऊंगा।

सुरक्षा समिति में

[पृष्ठ १ कालम ४ का शेष]

की अधिक होने वाले थे और विचाराधीन विषयों का प्रस्ताव रखने में उपक्रमण उन्हीं के हाथों में होगा। इस बात ने सोने में सुहागा मिला दिया।

भयंकर बीमारी

रूस के कुशल कूटनीतिज्ञ इस परिस्थिति का बड़ी कामयाबी से उपयोग करते। मलिनाफ, रकासवस्की, और माहूस्की इस परिस्थिति का उपयोग पूरे-पूरे लाभ के साथ करते। लेकिन वहां क्या हुआ? बड़े-बड़े शब्दों और परम्परागत वाक्यों से काम लेने की आवश्यकता का अनुभव हुआ। संयुक्त राज्य अमेरिका के शासक-वर्ग संसार पर छा जाने की कोशिश कर रहे हैं। मित्रराष्ट्र-संघ का उपयोग आक्रमण के साधन के रूप में किया जा रहा है। सोवियट यूनियन द्वारा प्रस्तावित विचाराधीन विषयों के विरुद्ध वोट देना कोरिया के आक्रमण को जारी रखने तथा युद्ध के क्षेत्र को विस्तृत करने की घोषणा के समान होगा, इत्यादि इत्यादि।

हम यह सोचे बिना नहीं रह सकते कि उपर्युक्त प्रचार का मुख्य उद्देश्य क्रेमलिन के कर्णधार को प्रसन्न करना था, मार्शल स्टालिन के मन में यह विचार उत्पन्न करना था। शायद, इन लोगों का सामना रूसियों को ऐसा ही करना चाहिए। बड़े देश की बड़ी बातें ऐसी ही होनी चाहियें।

किन्तु इन चीजों को पसंद करना ऐसी बीमारी है जो तानाशाही के पेशे से अलग नहीं की जा सकती ... और है भी यह एक भयंकर बीमारी।

हमारे भारत देश में

[पृष्ठ १ का शेष]

में चलाये गये इस आन्दोलन का ग्राम्य क्षेत्रों के सशस्त्र छापामार युद्ध के साथ सामंजस्य करना होगा और एक सम्मिलित कार्यक्रम के साथ साधारण आंदोलन चलाना होगा।"

मेरे विचार से सदन के लिए यह स्पष्ट है कि साम्यवादी दल की बातों में चाहे जो भी परिवर्तन हुए हों किन्तु हिंसात्मक विद्रोह के द्वारा सत्ता पर अधिकार कर लेने की उनकी आधारभूत नीति में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ है। श्री डांगे ने जो सार्वजनिक वक्तव्य दिये हैं उनसे इस बात की और भी अधिक पुष्टि हो गई है। सदन ने यह अनुभव किया होगा श्री डांगे ने विशेष रूप से यह सुझाव दिया है कि हिंसात्मक उपाय अवैध नहीं है और उनका विचार है कि किन्हीं वैध उपायों का सुझाव संविधान में एक नई बात है। किन्तु भारत सरकार किसी भी ऐसे प्रयत्न को सहन नहीं करेगी और उसका दमन करने के लिए अपने समस्त साधनों का प्रयोग करेगी और यही समस्त राज्यीय सरकारों का सर्वसम्मत विचार है। २८ फरवरी १९४८ को जिस नीति की घोषणा की गई थी वह इसी प्रकार जारी रहेगी और उसमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। *

* संसद् में दिया गया वक्तव्य।

देश-विदेश का घटनाचक्र

१५ अगस्त

१५ अगस्त आई और गई। देश का तीसरा स्वातंत्र्य स्मृतिदिवस मनाया गया। दिल्ली में लाल किले पर झंडा फहराया गया, पं० नेहरू का भाषण हुआ। किन्तु एक बात स्पष्ट दिखाई देती थी कि उत्साह कहीं दिखाई नहीं पड़ता था। स्वयं पं० नेहरू के भाषण में भी नहीं। उनके भाषण के अधिकांश भाग में खिन्नता ही थी। किन्तु साधारण जनों की चर्चा में यही प्रकट होता था कि यदि इन गर्जनाओं के स्थान पर वास्तव में इन्हें कार्यान्वित किया जा सके। तभी कुछ मतलब बन सकता है।

समारोह के पूर्व एक दो दिन पहिले उसके समय और उसके पश्चात् के दिनों में लोगों में कुछ उमंग आई हो ऐसा दिखाई नहीं देता। जैसे लोग थे वैसे ही उस दिन भी रहे तथा उसके पश्चात् भी। जहां कहीं भी समारोह में लोग एकत्रित हुए थे मानों तमाशा देखने के लिए। स्वतंत्र राष्ट्र के स्वातंत्र्यस्मृति दिवस के पवित्र अवसर पर जिस प्रकार का चैतन्य और स्फूर्ति जन समाज में दिखाई पड़ना चाहिए वह कहीं दिखाई नहीं पड़ता था।

कोरियाई युद्ध

कोरिया में राष्ट्रसंघ के सैनिकों की स्थिति विषम होती जा रही है। उत्तरी कोरियनों द्वारा १५ अगस्त तक तेड्गु विजय कर अपना मुक्ति दिवस मनाने के प्रयास को दक्षिण कोरियनों ने विफल कर दिया। किन्तु क्या तेड्गु बचेगा यह एक भयंकर प्रश्न है जो विश्व के राजनीतिज्ञों के मस्तिष्क में घूम रहा है।

कोरिया युद्ध में उत्तरी सैनिकों तथा सेनाओं की अत्यन्त तीव्र गति से अमरीकी अधिकारी बौखला गये हैं। किन्तु एक स्थान पर वे साम्यवादियों का अभाव देख कर अपनी शक्ति उस ओर एकत्रित करते हैं तो साम्यवादी अधिकारी इकट्ठी हुई अमरीकी सेनाओं को वहीं उलझाये रखने के लिए कुछ सेना छोड़ कर शेष बल दूसरे सुदूर मोर्चें पर पहुँचा देते हैं जहां अमरीकी सामर्थ्य अल्प रहने के कारण पीछे हटना अनिवार्य हो जाता है। समस्त पर्वतीय प्रदेशों में वे ऐसा कैसे कर पाते हैं यह अमरीकियों के लिए एक समस्या है। वैसे अभी भी अमरीकी बल सैनिक संख्या तथा शस्त्रास्त्रों में साम्यवादियों से हीन है। केवल नभ तथा जल में उनकी शक्ति श्रेष्ठ है।

झूठा कौन है ?

बिहार तथा मदरास में अन्न की कमी ने विषम स्थिति उत्पन्न कर दी है, ऐसे समाचार प्रकाशित हुए हैं। प्रांतीय तथा केन्द्रीय अधिकारियों के दौरे तथा वक्तव्य प्रकाशन भी हुए हैं। किन्तु इन सब को देख कर एक साधारण नागरिक क्या समझे ? प्रान्तीय सरकार के मंत्रिपद सम्हालने वाले जैसे उत्तरदायी अधिकारी अत्यन्त असंदिग्ध व सुस्पष्ट भाषा में कह रहे हैं — हमारे यहां पूर्णतः अन्नाभाव की स्थिति है जिसके फलस्वरूप लोग भूखों मर रहे हैं। मूल्यवृद्धि होने का कारण भी वस्तुओं का अभाव ही है। दूसरी ओर केन्द्र में खाद्य के सर्वेसर्वा श्री मुंशी प्रान्तीय मंत्रियों द्वारा वक्तव्यों तथा पत्रकार सम्मेलनों में व्यक्तिगत रूप से प्रकट की गयी स्थिति के विपरीत बराबर यही घोषणा करते चले जा रहे हैं कि अन्न की कहीं कमी नहीं है। प्रांतीय सरकारी स्टोरों में अन्न है और भूख से कोई नहीं मरा।

यदि यह वक्तव्य विभिन्न राजनीतिक दलों के व्यक्तियों की ओर से होते तो राजनीतिक चाल कह कर टाला जा सकता था। किन्तु यह तो कांग्रेस सरकार के ही प्रामाणिक अधिकारी एक दूसरे को 'झूठा' कहते दिखाई देते हैं। अब इनमें झूठा कौन है, यह कैसे कहा जाय क्योंकि हमारी कांग्रेस सरकार और उसके अधिकारी तो कभी असत्य बोलते ही नहीं।

———

[पृष्ठ ? का शेष]

उसके जीवन को संगीत और स्नेह से भर दिया। यह है तीसरा कारण जिससे रामचरितमानस से मुझे प्रेम है। सच पूछिये तो राम चरित मानस से प्रेम तो मेरे रक्त में है, मेरे चारों ओर वायु मंडल में है और उससे मुक्त होना भी कोई चाहे तो हो नहीं सकता। हिन्दी की कोई अन्य पुस्तक अब जीवन में इतना हिलमिल नहीं गई है। जितनी भी पुस्तकें हैं उनको थोड़े से कालेजों के नवयुवक नवयुवतियां जानती हैं, पर जन जीवन से उनका सम्पर्क न कुछ के बराबर है। वे नागरिक उद्यान के सुन्दर किन्तु सुगन्धहीन पुष्प हैं। केवल रामचरितमानस ही जन सरोवर का प्रफुल्लित और सम्मोहक कमल है।

आज कुछ लोग रामचरितमानस पर यह आपत्ति करते हैं कि वह प्रतिक्रियावाद का पोषक है। किन्तु यदि मानवता का चरम विकास प्रतिक्रियावाद कहा जा सकता है, यदि भाई को मित्र के लिये उत्सर्ग कर देना प्रतिक्रियावाद कहा जा सकता है, तो रामचरितमानस को प्रतिक्रियावादी होने के लिये गर्व होगा। पर यदि यह गुण भावी समाज की आधारभूत शिलायें होनी हैं तो मैं यह दृढ़ता से कहता हूं कि उस समाज के बनाने में रामचरितमानस का मुख्य भाग होगा और उस समाज के बन जाने पर रामचरितमानस होगा उसका ध्रुव जो भूले भटके पथिकों को सीधा पथ दिखाता रहेगा

———

दुमदार दोहे

[गुस्ताख]

साढ़ महीना बाद फिर बीते इसी तीर।
पश्चिम राष्ट्र की लगी, फूट गई तकदीर॥
पार न रोइ रहे।

कांग्रेस को सभापति बनने हूं होइ चित।
मगर इलेक्शन के लिए, पास न हमारे वित॥
मिल्यो न उधार हू।

हर विपत्ति को झेलने, को नेहरू तैयार।
इसी लिए तो पिछलग्गू, मजा करि रहे, यार॥
पहनि खद्दर लकस।

छोड़ि निराशा और दुःख, आशा लेउ अपनाइ।
पर मोदी जी; कहां मिले, इतनी देउ बताइ॥
हार देखो न हम।

ईस्टर्न पंजाब रेलवे
हैड क्वार्टर्स आफिस
सूचना

२० अगस्त १९५० से व्यापारी फर्मों के प्रतिनिधियों के प्रयोग के लिए ईस्टर्न पंजाब रेलवे पर, उन यात्राओं के लिए जिनका योग ३००० मील हो, सैकिण्ड क्लास माइलेज कूपन बुक्स जारी की जायेंगी। प्रत्येक कूपन बुक की कीमत २१८॥) है। ये किताबें डिवीजनल सुपरिन्टेन्डेन्ट, दिल्ली और फिरोजपुर कार्यालयों से तथा ई० पी० रेलवे दि माल दिल्ली के हैड क्वार्टर्स आफिस से प्राप्त की जा सकती है। अधिक विवरण के लिए चीफ एडमिनिस्ट्रेटिव आफीसर ई० पी० रेलवे दि माल दिल्ली को लिखा जा सकता है।

चीफ एडमिनिस्ट्रेटिव आफीसर।

वीर अर्जुन साप्ताहिक का मूल्य

वार्षिक	१२)
अर्धवार्षिक	६॥)
एक प्रति	चार आना

४
आना

DELHI, 27th.Agust. 1950

१००० रु० इनाम !

(V. A.)

(V.W.D.)

(E.P.)

सम्पादकीय

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७]   दिल्ली, रविवार ११ भाद्रपद सम्वत् २००७   [अङ्क १९

अनुशासन हीनता की घातक प्रवृत्ति

गत वर्ष संविधान के पास होने पर डा० अम्बेडकर ने देश को चेतावनी देते हुए कहा था कि संविधान का बन जाना ही काफी नहीं है, उसका पालन करने की दृढ़ भावना भी जनता में होनी चाहिये। यदि विधान के प्रति जनता में आस्था न हुई तो अच्छे से अच्छा विधान भी असफल और पंगु हो जाएगा। डा० अम्बेडकर की यह चेतावनी बहुत अधिक महत्वपूर्ण थी।

यह दुर्भाग्य की बात है कि हमारे देशवासियों ने न तो लोकतन्त्र की भावना को समझने का प्रयास किया है और न लोकतन्त्र के विधान के प्रति हमारी श्रद्धा ही है। लोकतन्त्र का स्पष्ट अर्थ यह है कि बहुमत का शासन हो और प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार प्रकट करने, अपना दल संगठित करने की स्वतन्त्रता हो जिससे कि वह देश के बहुमत को अपने अनुकूल बनाने का प्रयत्न कर सके। यदि किसी नागरिक या दल को शासन से कोई शिकायत है तो वह प्रचार या न्यायालय आदि के द्वारा उसे दूर करा सकता है, किंतु यदि देश की सरकार जो बहुमत द्वारा निर्मित हुई है, उसकी विचारधारा को नहीं अपनाती तो भी उसे प्रजातन्त्र विधान यह अधिकार किसी भी अवस्था में नहीं देता कि वह सरकारी कानून या आदेश का भंग करे। नये चुनावों में स्वेच्छित नई सरकार के निर्माण के लिए वह प्रयत्न कर सकता है, परन्तु अनुशासन का भंग नहीं कर सकता है। इंगलैंड की जनता ने जिस दिन चाहा, चर्चिल को दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंका। पिछले छः वर्षों से चर्चिल लगातार मजदूर सरकार को गिराने की कोशिश कर रहा है, पर उसने कभी देशवासियों को कानून भंग की सलाह नहीं दी। एक बार प्रजातन्त्र विधान में कानून भंग या अनुशासन हीनता की अनुमति दे दीजिये फिर देश में कभी कोई वैध सरकार स्थापित ही नहीं हो सकती। फिर तो मुसोलिनी और हिटलर की तरह से शक्तिशाली दल अथवा लाठी की सरकार होगी। जो दल जनता को अपनी ताकत दिखा कर वश में कर लेगा, वही सरकार बना सकेगा। वह सरकार जनता की सरकार नहीं होगी। वह सरकार 'डिक्टेटर' की होगी।

बम्बई में सोशलिस्ट पार्टी के नेतृत्व में २० मिलों के मजदूर हड़ताल कर रहे हैं। यह हड़ताल सर्वथा अवैधानिक और अनुचित है। मिल मालिकों और मजदूरों में किसका पक्ष ठीक है, क्या न्याय है, क्या अन्याय है, इसका निर्णय कौन करे? दोनों पार्टियों का अपना २ जोर दिखा कर इसका फैसला नहीं करने दिया जा सकता। यह फैसला या तो जनता की प्रतिनिधि सरकार करेगी या उसके द्वारा मनोनीत जांच न्यायालय। दोनों पक्षों को यह फैसला मानने के लिए बाधित होना पड़ेगा। यदि कहीं दुर्भाग्य से सरकार, मजदूर या मिल मालिक किसी एक पक्ष से तरफदारी करती है तो भी दूसरे पक्ष को तब तक उसकी बात माननी ही चाहिये, जब तक कि उसकी जगह कोई दूसरी सरकार नहीं बन जाती। जब हम सरकार की आज्ञा का भंग करते हैं, तब हम उस सरकार को संगठित करने वाली जनता की आज्ञा को मानने से इन्कार कर देते हैं। प्रजातन्त्र विधान यदि इसको सहन करने लगे तो देश में अराजकता हो जाय। बम्बई में सोशलिस्ट पार्टी ने केवल अपने दल का प्रभाव बढ़ाने की इच्छा से ट्रिब्युनल के निर्णय के विरोध में यह व्यापक हड़ताल करवाई है और इसलिए यह देश में अराजकता फैलाने की ओर एक भारी कदम है।

ग्वालियर में विद्यार्थियों को स्थानीय शासन से कुछ शिकायतें थीं। वह शिकायतें जायज थीं या नाजायज, इसे हम नहीं जानना चाहते। किन्तु जब एक बार मध्यभारत सरकार ने गोलीकांड की जांच के लिए एक अधिकारी को नियत कर दिया तब जांच के समाप्त होने और उसके परिणाम की धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिये थी। इस अरसे में उन्हें सब प्रकार के प्रदर्शन रोक देने चाहिये थे। पर दुख है कि विद्यार्थियों के नेता इतनी सी बात नहीं समझ सके।

यह दुर्भाग्य की बात है कि देश में लोकतन्त्र विधान के जारी रहते हुए अनुशासन भंग और अवैध उपायों के अवलम्बन की दुष्प्रवृत्ति लगातार बढ़ती जा रही है। यदि देश के नेताओं ने, चाहे वो वे सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट और हिन्दूसभावादी हों, इस प्रवृत्ति को आज नहीं रोका तो कल उनकी अपनी सरकार बन जाने पर भी अराजकता और अनुशासन भंग की यह प्रवृत्ति नहीं रुक सकेगी। इस लिए आज प्रत्येक विवेकशील भारतीय का यह कर्त्तव्य है कि वह देश में ऐसी कोई परम्परा कायम न होने दे जो आगे देश की शांति, व्यवस्था और सुदृढ़ता पर ही कुठाराघात कर दे।

हम यह फिर स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि यह सब लिखने का हमारा अर्थ यह कतई नहीं है कि जनता को सरकार की आलोचना करने का अधिकार नहीं है। यह अधिकार तो नागरिक का मौलिक अधिकार है, किन्तु लोकतन्त्र विधान ने अधिकार देने के साथ साथ उस पर जिन मर्यादाओं का भार डाल दिया है, उनका भी पालन करना उसका प्रमुख कर्त्तव्य है।

काश्मीर की विकट समस्या

काश्मीर के विकट प्रश्न को हल करने का एक और प्रयत्न भी असफल हो गया। इसका मुख्य कारण पाकिस्तान की आक्रमण-कारिता को स्पष्ट रूप में स्वीकार न करना ही है। पाकिस्तान आक्रमणकारी है और भारत के आधीन काश्मीर आक्रान्त प्रदेश, इस स्थिति को स्वीकार किए बिना काश्मीर की समस्या पर न्याय की दृष्टि से विचार किया ही नहीं जा सकता। परन्तु प्रारम्भ से ही संयुक्त राष्ट्र संघ के कर्णधार दोनों देशों को एक समान स्थिति में समझने की दुरभिसन्धि करते रहे हैं। उसी के कारण यह मामला अब तक हल नहीं हुआ। उत्तरी कोरिया के आक्रमण को जिस तरह राष्ट्र संघ ने लिया, उसी तरह काश्मीर के आक्रमण को भी लेना चाहिये था। राष्ट्र-संघ की इस दुर्नीति का ज्ञान भारत को बहुत पहिले हो गया था, किन्तु उसने अपनी उदारनीति के कारण राष्ट्र-संघ कमीशन की बात मान कर १ जनवरी १९४९ को विराम-सन्धि स्वीकार कर ली। उस समय की युद्धस्थिति से जानकार लोगों का विश्वास है कि यदि भारतीय सेनाओं ने उस समय हथियार न डाले होते तो एक महीने के अन्दर-अन्दर पाकिस्तान की सेनाओं को एक कदम और पीछे हटना पड़ता और तब काश्मीर की समस्या इतनी विकट न रहती। अब भी यदि राष्ट्र-संघ पाकिस्तान को आक्रामक मान उसको अपनी सेनायें वापिस हटाने का आदेश नहीं देता तो भारत सरकार को यह मामला राष्ट्र संघ से वापिस ले लेने में कोई संकोच नहीं करना चाहिये।

शराब-बन्दी कानून

बम्बई हाईकोर्ट में शराब-बन्दी कानून के विरुद्ध चाहे जिस उद्देश्य से मुकदमा पेश हुआ हो, उसका परिणाम शुभ ही हुआ है। सेना को अंग्रेजी शासन काल से विशेष सुविधाएं दी जाती रही हैं क्योंकि उसमें अंग्रेजी अफसरों की अधिकता रहती थी। हमारे अपने विधान के अनुसार सैनिक और असैनिक में कोई विशेष अन्तर नहीं है। दोनों राष्ट्र के एक समान नागरिक हैं। सैनिक को शराब पीने की छूट का औचित्य किसी भी तरह समझ में आने वाला नहीं है। इसी तरह एक विदेशी को शराब मिले और एक भारतीय को नहीं, यह भी न्याय संगत नहीं है। बम्बई हाईकोर्ट ने इन दोनों कमियों को दूर करके बहुत प्रशंसनीय कार्य किया है। सैनिकों में अपने को शेष जनता से ऊंचा समझने और विशेष अधिकारी मानने की जो भावना है वह अच्छी नहीं है। उन्हें तो देश के नम्र सेवक की भांति सब पाबन्दियों को सहर्ष स्वीकार करना चाहिए।

लियाकतअली का रुख

पाकिस्तान के प्रधान मंत्री लियाकतअली ने सरडिक्सन की असफलता पर जो वक्तव्य दिया है और जिस तरह से भारत को अपराधी ठहराया है, उससे यह स्पष्ट है कि उनमें समझौते की भावना रत्ती भर भी विद्यमान नहीं है। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि जब तक काश्मीर की समस्या हल नहीं होती तब तक दोनों देशों के सम्बन्ध सुधर नहीं सकते। इस वक्तव्य के बाद बंगाल के नेहरू-लियाकत पैक्ट पर पाकिस्तान में क्यों अमल नहीं हो रहा, यह स्पष्ट हो जाता है। क्या पं० नेहरू लियाकतअली के इस वक्तव्य के बाद समझौते को अधिक प्रभावकारी बनाने के लिए अपनी नीति पर पुनर्विचार भी करेंगे।

मध्यपूर्व में भी

कोरिया के युद्ध ने राष्ट्र-संघ के नेताओं को काफी परेशान कर रखा है अभी तक अमेरिकन सेना को सफलता प्राप्त नहीं हुई है। किन्तु नये मिलने वाले समाचारों से ज्ञात है कि रूस मध्य पूर्व में भी एक नया संघर्ष करना चाहता है। ईरान ईराक और रूस की परस्पर मिलती हुई सीमाओं पर कुर्द जाति बसती है। यह कुर्द तीनों देशों में बंटे हुए हैं। रूस में रहने वाले कुर्दों को एक कुर्दिस्तान का नारा सिखाया जा रहा है। उसका प्रयत्न है कि ईराक ईरान के कई प्रदेश भी रूसी कुर्दिस्तान के साथ मिल जावें। यदि कोरिया में अमेरिकनों को असाधारण सफलता मिलने के कोई आसार दीखने लगें तो मध्यपूर्व में विस्फोट करके राष्ट्र संघ का ध्यान इसी तरफ खींचा जा सकता है। पूर्व जर्मनी के साथ रूस पृथक संधि करके उसे पूर्ण स्वतन्त्र घोषित करके जर्मनी में भी एकीकरण का नाटक खेल सकता है, यह सम्भावना भी आज की जाने लगी है। इस तरह अकेला रूस ही अनेक मोर्चे खोल कर अमेरिका को बहुत परेशान कर सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय रंग-मंच पर क्या क्या होने वाला है। इसका भविष्य वाणी आज नहीं की जा सकती।

कांग्रेस अध्यक्षपद अभिलाषियों पर एक दृष्टि

देव, कृपलानी व टन्डन का विश्लेषण

श्री देव

यदि कांग्रेस के अध्यक्ष आचार्य कृपलानी हों श्री टंडन जी हों या श्री शंकरराव देव हों तो इससे देश की राजनीति पर क्या विशेष प्रभाव पड़ेगा यह विचारणीय बात है। इसका कारण यह है कि आज कांग्रेस का देश की राजनीति, शासन नीति और अर्थ-नीति पर कोई प्रभाव ही नहीं है। आज सरकार कांग्रेस पर हावी हो रही है। इसलिए चाहे पं० नेहरू हजार बार कहें कि वे कांग्रेस के प्रतिनिधि के नाते ही प्रधानमंत्री बने हुए हैं, सचाई यह है कि सरकार कांग्रेस पर हावी हो चुकी है। इसलिए कांग्रेस का कोई अध्यक्ष हो, देश की नीति बदलना कठिन। यदि श्री शंकरराव देव कांग्रेस के अध्यक्ष चुने जाते हैं तो क्या होगा। यह प्रश्न मुझे बहुत महत्वपूर्ण इसीलिए प्रतीत नहीं होता। फिर भी वैधानिक दृष्टि से कांग्रेस का महत्व है और कांग्रेस पार्लियामेंट्री बोर्ड ही संसद या विधान सभा के लिए उम्मीदवारों का चुनाव करेगा और उन्हें एक निश्चित नीति पर चलने का आदेश भी देगा। किन्तु कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में शंकरराव देव, पं० नेहरू या सरदार पटेल का विरोध कर सकेंगे इस बात की बिलकुल सम्भावना नहीं है। वस्तुतः श्री देव की नीति वही होगी जो वर्तमान अध्यक्ष डा० पट्टाभि की है। उनका अपना व्यक्तित्व न प्रभावकारी है न आकर्षक ही है। वे तो सरकार और कांग्रेस इन दोनों के बीच एक पुल का सा काम करेंगे। सरकारी नीति पर चलने के लिए जनता की आवाज सरकार तक पहुंचा देंगे। भले ही उसका कोई प्रभाव हो या न हो। श्री देव ने अपने एक वक्तव्य में भी इस बात को स्पष्ट किया है। उनकी सम्मति में कांग्रेस और गवर्नमेंट में परस्पर सम्बन्ध रहना चाहिए और उनके अध्यक्ष बनने का परिणाम देश पर कुछ नहीं होगा। वे गांधीवादी अवश्य हैं। और इसी दृष्टि से सरकार की वर्तमान नीति से उनको भी असन्तोष होगा। किन्तु इसमें पूर्ण संदेह है कि वे सरकार की अर्थ-नीति को रत्ती भर भी बदलने में समर्थ हो सकेंगे। इसका मुख्य कारण यह भी है कि वे स्वयं यह जानते हैं कि यदि वे अध्यक्ष बने तो उनकी सफलता का श्रेय उनके व्यक्तित्व को न हो कर पं० जवाहरलाल को ही व्यक्तित्व को है। इसलिए उनके अध्यक्ष से चुने जाने से न कंट्रोल हटेंगे न ग्रामोद्योग का ही विशेष प्रसार होगा। श्री देव के अध्यक्ष चुने जाने का स्पष्ट अर्थ यह है कि देश पर पं० नेहरू की छाप रहेगी।

आचार्य कृपलानी

यदि आचार्य कृपलानी कांग्रेस के अध्यक्ष चुन लिये गये तो कांग्रेस के प्रभाव से देश में कोई क्रांतिकारी नीति अमल में आ जायेगी इसकी कल्पना मैं नहीं कर सकता। किन्तु मैं यह अवश्य मानता हूं कि देश के राजनीतिक और सरकारी अधिकारियों (मंत्रिमंडल) में इसके कारण कुछ हलचल, कुछ काना-फूसी और कुछ गरम, सर्द बातें जरूर होंगी। इसका मुख्य कारण यह है कि आचार्य कृपलानी शासन की वर्तमान कार्यनीति और अर्थनीति से अत्यन्त खिन्न हैं। वे सरकार के अत्यन्त कठोर आलोचक हैं। उनको सरकारी टीपटाप अनापशनाप खर्च और भयंकर आडम्बर सहन नहीं है। इस दृष्टि से श्री देव भले ही अन्य बातों में आचार्य कृपलानी की अपेक्षा गांधी जी के अधिक समीप हों। किन्तु भावुकता और अपने भाव के प्रकाशन में आचार्य कृपलानी अधिक तीव्र हैं। जयपुर कांग्रेस में जिन्होंने गांधी कोष के सम्बन्ध में आचार्य कृपलानी का भाषण सुना था वे जानते हैं कि उनके हृदय में गांधीवाद के प्रति कितनी श्रद्धा और गांधी जी की उपेक्षा के प्रति कितनी वेदना है। यह वेदना कांग्रेस अध्यक्ष होते हुए छुप हो जायगी यह सम्भावना आचार्य कृपलानी से नहीं की जा सकती। इसलिए यह सम्भव है कि वे अध्यक्ष रहते हुए सरकारी नीति की कठोर आलोचना करें और अनेक छोटे छोटे प्रश्नों पर सरकार को ग्रामोद्योग, खद्दर, शराब बन्दी तथा मितव्ययता के सम्बन्ध में कुछ अधिक प्रवृत्ति दिखाने के लिए विवश होना पड़े। यह भी सम्भव है कि मंत्रिमण्डलों के व्यक्तित्व में थोड़ा बहुत परिवर्तन हो। कुछ नये व्यक्ति जो गांधी आश्रम अथवा सर्वोदय-समाज से सम्बद्ध हैं संसद् और विधान-सभाओं के चुनाव में कुछ अधिक आ जावें।

किन्तु आचार्य कृपलानी श्री पं० नेहरू को अपने मार्ग पर चलने के लिए विवश कर सकेंगे इसकी आशा नहीं है। इसका कारण यह है कि नेहरू जी को प्रभावित करना अत्यन्त कठिन कार्य है और जवाहरलाल की जगह दूसरा प्रधान मंत्री चुनना सरल नहीं है। अतः उनको रखने के लिए कांग्रेस और कृपलानी को झुकना ही पड़ेगा।

श्री पुरुषोत्तम दास टंडन

श्री टण्डन जी के कांग्रेस अध्यक्ष होने पर कांग्रेस की नीति पर उनके व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है। एक विशेष बात यह भी है कि जहां श्री देव व आचार्य-कृपलानी खुलकर अपने लिये प्रचार कर रहे हैं वहां टण्डन जी पूर्णतः शान्त हैं। न तो उन्होंने कोई चुनाव सम्बन्धी वक्तव्य प्रकाशित किया है न इन दोनों सज्जनों के वक्तव्य पर कोई टीका ही की।

इसका कारण यह है कि टण्डन जी के विचार सर्वविदित हैं और उसके लिए उनको कोई वक्तव्य प्रकाशित करने की आवश्यकता नहीं। टण्डन जी का अंग्रेजियत का विरोध प्रसिद्ध है। वे भारतीयता के कट्टर समर्थक हैं और चाहते हैं कि हमारे देश में भारतीय दृष्टिकोण ही रहना चाहिए। जीवन की छोटी से छोटी बात में वे भारतीय ढंग चाहते हैं और विदेशी वस्तुओं, कार्यप्रणालियों अथवा विचारों को व्यवहारतः करने का प्रयत्न करते हैं।

फलस्वरूप टण्डन जी के कांग्रेस अध्यक्ष होने पर कांग्रेसी सरकारों द्वारा चल रहे अंग्रेजियत के अंधानुकरण पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। यह तो एक निश्चित सत्य कि स्वयं भारत के प्रधानमंत्री, पं० नेहरू अंग्रेजी ढंगों से जितनी अच्छी तरह परिचित हैं उतने भारतीय ढंग से नहीं। ऐसी दशा में कांग्रेस के अध्यक्ष पद से टण्डन जी का प्रभाव बहुत व्यापक होगा।

दूसरी विशेषता टण्डन जी की यह है कि वे सिद्धान्त से झुकेंगे नहीं, न किसी के आगे आत्मसमर्पण करेंगे। हिन्दी के विषय पर महात्मा गांधी का उन्होंने विरोध किया था। डा० पट्टाभि से लोगों को यही शिकायत थी कि वे नेहरू अथवा पटेल के व्यक्तित्व से दब जाते थे और यथार्थ में इन दोनों के, विशेष कर प्रधान मंत्री के हाथ में रबर की मुहर बने हुए थे। किन्तु टण्डन जी का व्यक्तित्व दूसरे प्रकार का है और उनके कांग्रेस अध्यक्ष बनने पर आशा है कि कांग्रेस का अनुशासन बड़े बड़ों को भी बांधेगा।

सरकारी अधिकारियों के वेतनों के संबन्ध में भी टण्डन जी के विचार स्पष्ट हैं और यह दिखाई देता है कि यदि वे निर्वाचित हुए तो अपने अध्यक्ष-पद के प्रभाव का समुचित उपयोग करेंगे जिससे अनाप सनाप वेतनों पर भी कुछ नियंत्रण आ सके।

(शेष पृष्ठ १२ पर)

अ० भा० आयुर्वेदिक कांग्रेस का स्मृतिपत्र

अखिल भारतीय आयुर्वेदिक कांग्रेस की ओर से उसके जनरल सेक्रेटरी श्री शुकदेव वैद्यभास्कर ने आगामी २१ अगस्त को नई दिल्ली में होने वाले स्वास्थ्य मंत्री सम्मेलन के लिए एक स्मृतिपत्र केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों को भेजा है। उक्त पत्र में कहा गया है कि अंग्रेजों ने जो चिकित्सा का ढंग देश पर लादा था वह उनके राजनीतिक स्वार्थों की सिद्धि के लिये था। १९२१ से १९४६ तक इस विषय पर जांच करने के लिए बिठाई गयी १२ विशेषज्ञ समितियों ने एक मत से यही सुझाव दिया था कि इस देश में आयुर्वेदिक प्रणाली स्वीकार की जानी चाहिये। उन्होंने यह भी कहा है कि आयुर्वेद 'चिकित्सा की वैज्ञानिक प्रणाली' है।

इनमें से अन्तिम चोपड़ा समिति की रिपोर्ट गत दो वर्ष से केन्द्रीय सरकार के सामने है। किन्तु हमें ज्ञात हुआ है कि केन्द्र के द्वारा प्रान्तों को एक सूचना पत्र भेजा गया है कि पश्चिमी चिकित्सा प्रणाली ही हमारे राष्ट्रीय स्वास्थ्य विकास का आधार रखी जाय। इस विषय पर आयुर्वेद कांग्रेस ने अपनी राय निम्न प्रकार प्रकट की है—

(अ) भारत सरकार द्वारा पश्चिमी चिकित्सा प्रणाली को संरक्षण देना देश के चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी हितों के घोर विरुद्ध होगा।

(ब) विशेषज्ञों की रिपोर्ट का भी सरकार पर कोई प्रभाव हुआ नहीं दीखता। क्या सरकार को विशेषज्ञों की सिफारिशों के विरुद्ध जाना उचित है? दूसरे क्या आयुर्वेद को अपनी विशुद्धता सरकार के आगे प्रमाणित करने की अभी और आवश्यकता है?

(स) आयुर्वेद ने 'भारत की राष्ट्रीय चिकित्सा प्रणाली' होने का अपना अधिकार सिद्ध कर दिया है। यह काल की कसौटी पर भी खरा उतरा है। भोर समिति ने एलोपैथिक प्रणाली को 'अयथार्थ' बताया है। इसके अतिरिक्त यह हमारी राष्ट्रीय व सांस्कृतिक संपत्ति है जिसका सुरक्षा और विकास हमारा कर्तव्य है।

(द) इन तथ्यों को देखते हुए आयुर्वेदिक कांग्रेस आगामी सम्मेलन में प्रान्तीय सरकारों से निम्न विषयों पर सहयोग की अपेक्षा करती है—

(१) आयुर्वेद को भारत की राष्ट्रीय चिकित्सा तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा का आधार घोषित किया जावे।

[शेष पृष्ठ १२ पर]

कांग्रेस के अध्यक्ष पद के तीन उमीदवार

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन

आचार्य कृपलानी

श्री शंकरराव देव

राष्ट्र संघ द्वारा काश्मीर के प्रश्न पर नियत मध्यस्थ श्री डिक्सन असफल हो कर वापस राष्ट्रसंघ में जा रहे हैं।

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी हिन्दी परिषद् द्वारा स्थापित हिन्दी संकेत लिपि व टाइप की कक्षा का उद्घाटन कर रहे हैं।

योजना आयोग परामर्श बोर्ड की प्रथम बैठक। प्रधान मंत्री पं० नेहरू ने बैठक का उद्घाटन किया था।

सुरक्षा समिति में श्री बी एन राव ने कोरिया का प्रश्न अस्थायी सदस्यों की समिति को सौंपने का प्रस्ताव रखा है।

दो संस्कृतियों का मिश्रण

क्रिया और प्रतिक्रिया

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

[१]

अकबर का देहान्त हुआ। उसके साथ ही समाप्त हो गया, परन्तु उसका भारत की राजनीतिक और सांस्कृतिक दशा पर पड़ा हुआ प्रभाव चिरकाल तक चलता रहा, इधर हिन्दू भक्तों के समष्टिवादी उपदेश और उधर अकबर की उदार धार्मिक नीति, दोनों ने मिल कर देश में एक ऐसी प्रवृत्ति उत्पन्न कर दी, जो पारस्परिक विरोध भावना के प्रतिकूल थी। उसने हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के समीप लाने का काम किया, उस सान्निध्य का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि समाज के सभी अंगों में समन्वय और मिश्रण की प्रवृत्ति जागृत हो गई। अकबर स्वयं ब्रजभाषा में कविता करता था, और उसके समय के अनेक अन्य मुसलमान कवियों ने भी हिन्दी में कवितायें की हैं। उधर मुगलकालीन वास्तुकला और चित्रकला में भारतीयता की झलक स्पष्ट है। उस झलक का प्रवेश अकबर के समय से ही हुआ। अकबर के समय में संगीत का प्रमुख आचार्य तानसेन हुआ, जिसने दोनों प्रकार के संगीत को न केवल मिश्रित किया, नयी राग-रागिनियों की रचना भी की। अकबर स्वयं पढ़ा-लिखा नहीं था, तो भी अद्भुत प्रतिभा-सम्पन्न होने के कारण समाज के प्रत्येक अंग पर उसका प्रभाव पड़ा। जैसे उसके दरबार में फैजी और अबुल फजल के साथ-साथ राजा बीरबल, राजा भगवानदास, राजा मानसिंह और राजा टोडरमल समान आसनों पर बैठते थे, उसी प्रकार देश के प्रत्येक भाग में और जीवन के प्रत्येक पहलू में दोनों संस्कृतियां पास-पास बैठने लगीं। समीपता बढ़ने के कारण एक दूसरे पर प्रभाव डालना, और प्रभाव लेना आवश्यक हो जाता है और मुगलकाल में यह प्रक्रिया लगभग १०० साल तक जारी रही।

[२]

अकबर के पीछे जहांगीर गद्दी पर बैठा। वह अकबर की भांति असाधारण प्रतिभा-सम्पन्न नहीं था। उस में किसी नई नीति के बनाने या किसी बनी हुई नीति का परित्याग करने की शक्ति नहीं थी, वह बहुत कुछ अकबर की बनाई लीक पर ही चलता रहा। वह स्वयं राजपूतनी का लड़का था। कट्टर मुसलमान होते हुए भी उसमें धर्मांधता नहीं थी। उसके समय में भी संस्कृतियों के मिश्रण की प्रक्रिया जारी रही। उस समय वह क्रिया अकबर-काल की तरह इच्छापूर्वक या यत्नपूर्वक नहीं चल रही थी। जैसे घड़ी का पैंडुलम एक बार हिलाया जाकर स्वाभाविक गति से तब तक चलता रहता है, जब तक उसे हाथ से न रोक दिया जाय, या स्प्रिंग को दी गई शक्ति न नष्ट हो जाय, उसी प्रकार समाज में सांस्कृतिक मिश्रण की जो प्रवृत्ति उत्पन्न हुई थी, वह जहांगीर और उसके पुत्र शाहजहां के समय में भी पूर्व प्रदत्त शक्ति के प्रभाव से अनायास चलती रही। शाहजहां में जहांगीर की अपेक्षा कट्टरपन अधिक था। उसने कई अवसरों पर हिंदुओं के मन्दिरों और मूर्तियों को तुड़वाया। बनारस के जिले में उसकी आज्ञा से ७६ मन्दिर नष्ट किये गये। ओरछा का विशाल मन्दिर भी उसके आदेश से ही तोड़ा गया। उसने यह आदेश भी प्रचारित किया था कि कोई हिन्दू मुसलमान स्त्री से विवाह न कर सके, यदि कोई हिंदू मुसलमान स्त्री को अपने पास रखना चाहे तो उसे मुसलमान हो जाना चाहिये, अथवा स्त्री छीन ली जायगी। यह कुछ होते हुए भी, शाहजहां ने अपने राज्यकाल में सामान्य रूप से हिन्दुओं पर अत्याचार नहीं किये। इसके दोनों कारण हो सकते हैं। सम्भव है, उसका हृदय अत्यधिक संकीर्ण न हो, अथवा विलासिता की ओर झुका रहने के कारण वह योजनापूर्वक भारी दमन करने का सामर्थ्य ही न रखता हो। कुछ भी हो, उसके समय में भी हिंदुओं और मुसलमानों के सामीप्य की प्रवृत्ति जारी रही, उसमें कोई विशेष रुकावट नहीं आई।

औरंगजेब १६५८ में दिल्ली के तख्त पर बैठा। उससे पूर्व वह अपने सब भाइयों को समाप्त करके, पिता को कैद कर चुका था। वह समय मुगल साम्राज्य के यौवन में पूरे यौवन का था, देश में बहुत कुछ शांति थी और समृद्धि थी। राजकोष भरा हुआ था और प्रजा भी बहुत कुछ निर्भयता से अपने कारोबार में लगी हुई थी। यों राजधर्म तो इस्लाम ही था, परन्तु सल्तनत के हिन्दू निवासियों पर सम्पूर्णरूप से अत्याचार नहीं होते थे। फलतः हिन्दू सांस्कृतिक और मुस्लिम संस्कृति के मिश्रण से धीरे धीरे एक मिश्रित संस्कृति—जिसे हम हिन्दुस्तानी संस्कृति या उर्दू संस्कृति कह सकते हैं— बनी जा रही थी, मुसलमान हिंदी पढ़ने और बोलने लगे थे और हिन्दू फारसी का अध्ययन करते थे। भक्तों और औलिया लोगों के चारों ओर हिंदू भक्त और मुसलमान चेले इकट्ठे होकर एक-सी विचारधाराओं में स्नान करते थे। सरकारी नौकरियों में और सेनाओं में दोनों धर्मों के अनुयायी मिलते जुलते और एक दूसरे से प्रभावित होते थे। इस प्रकार अकबर की उदार नीति के फलस्वरूप एक मिश्रित संस्कृति का आविर्भाव हो रहा था।

यहां एक बात पर ध्यान देना आवश्यक है। जब और जहां विजेता जाति अपने उदार व्यवहार द्वारा विजित जाति के दिल से अपने प्रति घृणा या द्वेष के भावों को दूर कर देती है या शिथिल कर देती है, तब और वहां राजनीतिक दासता की कटुता नष्ट होने लगती है और विजित जाति भेदभाव को भुला कर शासकों को अपनाने लगती है। अकबर और उसके दो उत्तराधिकारियों के समय में यही हुआ। सांस्कृतिक संघर्ष के कम हो जाने से राजनीतिक संघर्ष भी हलके हो गये। फलतः इन तीन मुगल बादशाहों के राज्यकाल को भारत पर मुस्लिम प्रभुत्व का मध्याह्न काल कह सकते हैं।

औरंगजेब के राज्यारोहण के साथ परिस्थिति में परिवर्तन होना आरम्भ हुआ। औरंगजेब का बड़ा भाई दारा शिकोह धार्मिक विचारों की दृष्टि से अकबर का उत्तराधिकारी बनने के योग्य था। अकबर ने अथर्ववेद, महाभारत के कुछ भाग और लीलावती का अनुवाद फारसी में करवाया था। दाराशिकोह का संस्कृत भाषा और हिन्दू तत्वज्ञान से प्रेम और भी अधिक गहरा था। उसने उपनिषद्, भगवद्गीता और योगवसिष्ठ के अनुवाद करवाये और हिन्दू धर्म के ग्रन्थों के सम्बन्ध में स्वयं भी एक ग्रन्थ लिखना आरम्भ किया। यदि शाहजहां के पश्चात् दाराशिकोह राजगद्दी पर बैठता तो भी भारत के इतिहास का रूप दूसरा ही होता, परन्तु दाराशिकोह अकबर की तरह उदार हृदय रखता हुआ भी उसकी तरह दूरदर्शी और वीर नहीं था। समय आने पर भी वह औरंगजेब की रोक-थाम न कर सका। दाराशिकोह के पराजय, और औरंगजेब की सफलता ने भारत के भावी इतिहास की धारा को ही बदल दिया।

औरंगजेब बचपन से ही अनुदार और कट्टर व्यक्ति था। संकीर्ण हृदय मुल्लाओं के संग ने उस पर और भी गहरा रंग चढ़ा दिया। जब शाहजहां की निर्बलता के कारण उसके पुत्रों में गद्दी के लिए संघर्ष आरम्भ हुआ, तो राजनीतिक आवश्यकता ने औरंगजेब के कट्टरपन को धर्मान्धता के रूप में परिवर्तित कर दिया, क्योंकि दाराशिकोह के विरुद्ध उसके पास सबसे अच्छा युक्ति यही थी कि वह काफिरों का पक्षपाती है। उसका यह संस्कृत प्रेम मुसलमान औलियाओं और उनके अनुयायियों की दृष्टि से घोर अपराध बन गया, जिससे प्रभावित होकर अधिकांश मुसलमान सिपाही और उनके मुखिया औरंगजेब के समर्थक बन गये। इस प्रकार राजनीतिक परिस्थितियों ने औरंगजेब के कट्टरपन को दस गुना करके भयंकर धर्मान्धता के रूप में परिवर्तित कर दिया।

औरंगजेब ने अपने लम्बे शासन काल में जिस हिंदू विरोधिनी नीति से कार्य किया, उसका मुगल वंश के भविष्य पर तो गहरा असर पड़ा ही, भारत के इतिहास की धारा के दिशा-परिवर्तन में भी पर्याप्त सहायता मिली। औरंगजेब ने हिंदुओं के दमन की दृष्टि से जो जो कार्य किये, उन सबका विस्तृत वर्णन करने के लिये न इस लेखमाला में स्थान है और न आवश्यकता है। संक्षेप में इतना ही लिखना पर्याप्त है कि राज्य के प्रारम्भ काल से ही उसने, अकबर की धार्मिक उदारता की नीति को परित्याग करके हिंदुओं का दमन आरम्भ कर दिया था। उसका सबसे अधिक अदूरदर्शितापूर्ण कार्य जजिया कर का फिर से विनियोग था। अकबर ने जजिया करको हटा कर देश में की बहुसंख्यक प्रजा के हृदयों को जीत लिया था। औरंगजेब ने उसे फिर से लगाकर प्रजा को बेचैन और असंतुष्ट कर दिया। जब राजधानी के बहुत से हिंदू इकट्ठे होकर बादशाह के सामने अपनी फर्याद करने के लिये एकत्र हुए, तब बादशाह ने अपने महावत को हुक्म दिया कि उनके सिरों पर से हाथी को गुजार दो। इस प्रकार हिंदुओं के हृदयों का दमन करके औरंगजेबने अपनी सल्तनत को दृढ़ करने की चेष्टा की। परिणाम उल्टा ही निकला, ऐसे दमन से शासन की दृढ़ता तो क्या होनी थी, मुगल साम्राज्य के सबसे दृढ़ स्तम्भ—राजपूत अत्यन्त रुष्ट हो गये, और साम्राज्य के अन्य भागों में भी विद्रोह की भावना जागृत हो गई।

औरंगजेब के हिन्दू विरोधी कारनामों की सूची बहुत लम्बी है। मन्दिर तोड़े गये, हिन्दुओं को जबर्दस्ती डरा धमका कर मुसलमान बनाया गया, और कई विश्वाससम्पन्न राजपूत राजाओं को अपमानित किया गया। ये तो उस नीति के दृश्यमान फल थे, जिसका व्यापक रूप औरंगजेब के शासन का कट्टर मुल्लापन था। वह मुल्लापन केवल हिन्दुओं तक ही परिमित नहीं रहा। उसका हिन्दुओं के दायरे से बाहिर भी प्रभाव पड़ता रहा। शिया मुसलमान औरंगजेब के राज्य में तिरस्कार के योग्य समझे जाते थे। बादशाह का इस्लामी

[शेष पृष्ठ २१ पर]

हमारा निर्जीव, निष्प्राण और अभारतीय विधान

★ श्री सम्पूर्णानन्द

> स्वतन्त्रता प्राप्त करने के बावजूद हम सफल क्यों नहीं हुए ? विद्वान् लेखक का कहना है कि भारतीय संस्कृति, परिस्थिति और परम्परा की उपेक्षा करके हम पाश्चात्य जनतन्त्रवाद के प्रति अंधश्रद्धा में बह गये, हमने असंख्य मतदाताओं की रचना तो कर डाली, किन्तु उन्हें योग्य बनाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। आज हमारे सामने कोई ऐसा आदर्श नहीं रखा गया जो धर्म या रूस में साम्यवाद की भांति जनता को राष्ट्र निर्माण के लिए उत्साह से सचारित व प्रेरित करे, जनता में दृढ़ इच्छा शक्ति पैदा करे। गांधीवाद को भी हमने अपने लिए प्रेरक आदर्श न बना करउसे केवल नारे का रूप दे दिया, हमारा विधान वकीलों के हाथ में पड़ कर अंग्रेजी व अमेरिकन विधानों का निर्जीव, आदर्शशून्य समन्वय मात्र बन गया।

मैं बहुधा सोचता हूं कि हमारे समाज की या यों कहिये कि सम्पूर्ण युगों की सबसे आश्चर्यजनक घटना भारतीय स्वतन्त्रता की प्राप्ति है। लगभग ३० करोड़ गुलामों का राष्ट्र एक रात में स्वतन्त्र मानवों का देश हो गया। यह सच है कि इस घटना के पीछे प्रयत्नों, सेवाओं, कष्टसहिष्णुता और त्याग की एक लम्बी गाथा छिपी है, लेकिन उसका प्रतिफल इतनी शान्ति, इतने समय और इतनी सरलता से मिला कि हम सब वस्तुतः आश्चर्यचकित हो गये, जब हमने देखा कि यह घटना सत्य है।

आज से १०० वर्ष पूर्व अमेरिकन स्वातन्त्र्य के पिछले कई दशकों में रूस की राज्य क्रांति को छोड़ कर इससे समता करने वाली दूसरी क्रांति नहीं हुई। स्वभावतः संसार ने हमसे हमारे पूर्ण राष्ट्रीयता के जीवन में प्रवेश कर जाने पर बड़ी-बड़ी चीजों की आशाएं कीं। हमने राजनीतिक गुलामी के इस कटु वे प्याले को सांस्कृतिक पतन और शोषण की मन्दगतियों के साथ पिया था। हमें महात्माजी के नेतृत्व का अपरिमेय लाभ भी मिला था।

घरेलू क्षेत्र में भी हमारी आशाएं इससे कम न थीं। साम्राज्य के पंजों की छाया में देश को अज्ञान, रोग, अकाल और निर्धनता से अथक युद्ध करना पड़ा।

कांग्रेस सरकार ने पिछले तीन सालों में जो कुछ किया उसकी चर्चा करते समय किसी भी कांग्रेसी के लिए क्षमा याचना या लज्जा से नतमस्तक होने का कोई कारण नहीं है। पिछले तीन वर्षों के काम पूर्ण सफलता के, घोर कठिनाइयों पर विजय के और समाज सेवा के द्योतक हैं और उनसे किसी को भी गर्व हो सकता है।

फिर भी एक भावना फैली हुई है, और वह एकदम गलत नहीं है कि इन तीन वर्षों में भी अधिक प्रयत्न किये जा सकते थे और इससे अधिक फल की प्राप्ति भी हो सकती थी। यह बात हम में से कुछ को चाहे जितनी भी आश्चर्यजनक और बुरी क्यों न लगे, लेकिन यह सत्य है कि हमारी योजना अधूरी रह गयी और जब तक चाहे जैसे भी हो विध्वंसात्मक परिवर्तन नहीं होगा, तब तक वे लोग जिन्होंने राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य के संग्राम का नेतृत्व किया था, अपने कर्तव्य को पूरा करने में समर्थ न हो सकेंगे।

पश्चिम के प्रति अंध श्रद्धा

ऐसा मालूम होता है कि वे लोग बहुत कुछ अपने ही बनाये गोरखधन्धे में जा फंसे हैं और अब उसके बाहर निकलना उनके लिए असम्भव सा मालूम पड़ता है। मैं एक उदाहरण दूंगा। हमारी बहुत कुछ कठिनाइयां पाश्चात्य जनतन्त्रवाद के प्रति हमारी गलत श्रद्धा के कारण उत्पन्न हुई है। निश्चय ही यह अत्यन्त विवादास्पद है कि एंग्लो अमेरिकन ढंग की जनतन्त्रात्मक शासन प्रणाली हमारी परिस्थितियों और परम्परा के पूर्णतया अनुकूल है। जनतन्त्र या गणतन्त्र की योजना से हम अपरिचित नहीं हैं। इस देश में सदियों तक शक्तिशाली गणतन्त्र रहे हैं और लोक स्वराज्य की परम्परा उत्थान और पतन के परिवर्तनों के बीच ग्राम पंचायतों में सुरक्षित रही है। शासन की मूर्धन्य रचना पाश्चात्य कल्पना से आवश्यकता से अधिक भिन्न थी। लेकिन आज हमने असंख्य मतदाताओं की रचना कर डाली है और ऐसी शासनप्रणाली को अपनाया है जो ऐसी परिस्थितियों की अनुगामी होती है, जिन का यहां नितान्त अभाव है। हमने अपने देशवासियों को उन उत्तरदायित्वों को सम्भालने के लिए, जिन्हें हम उनके कन्धों पर एकाएक फेंक रहे हैं, योग्य बनाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। अपनी सांस्कृतिक, और सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप शासन व्यवस्था की रचना करने का कष्ट उठाने की अपेक्षा हमने सीधे सीधे पश्चिमी प्रणाली को अपना लिया। यह हमारी राजनीतिक और बौद्धिक अयोग्यता का प्रतीक है। मैं नहीं जानता कि इस के समान कहीं भी कोई दूसरा उदाहरण मिलेगा, जहां लोगों ने सोचने के प्रयत्न से भी ऐसे ही मुख मोड़ा हो।

प्रेरणा का अभाव

मैं अपने को और स्पष्ट करना चाहता हूं। विद्रोह और क्रांति में अन्तर होता है। क्रांति असह्य राजनीतिक दासता को उतार फेंकने मात्र को नहीं कहते, वरन् वह विचारों और कभी-कभी आदर्शों की प्रतिमूर्ति भी हुआ करती है। भारतीय क्रांति, फ्रांस की, रूस की या चीन की राज्य क्रांतियों के समान होनी चाहिये थी न कि उन राजनीतिक विद्रोहों के समान जिन्होंने आयरलैंड पोलैंड आदि देशों को स्वतन्त्र राष्ट्रसंघ में ला बिठाया। जिन सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में व्यक्ति रहता और काम करता है उन को बदलने की आंतरिक आवश्यकता की अभिव्यक्ति का नाम क्रांति है। यह एक ओर तो मानव जीवन के नवीन उद्देश्य और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्ध के आदर्श को प्रतीपमान करती है और दूसरी ओर व्यक्ति और समाज के पारस्परिक सम्बन्ध को। प्रारम्भ में चाहे उसकी सत्ता अनिर्दिष्ट और अस्पष्ट भले ही हो चाहे जनसाधारण उसकी अनुभूति केवल असन्तोष के ही रूप में करता हो, यह कार्य नेतृवर्ग का है कि वह जनता के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन के पारस्परिक सम्बन्ध, उसकी शिक्षा और उसकी विधि, उसकी कला और उसके धर्मका आधार और प्रेरणा बनाने के लिए इसके रूप का निश्चय करे। हम साम्यवादी आदर्शों और तरीकों को पसन्द करें या नहीं, लेकिन उन्होंने इस बात को दिखा दिया है कि किसी आदर्शको जनता के जीवनका आधार उसके जीवन का बौद्धिक और आध्यात्मिक मूलतत्व बना कर कितनी उन्नति की जा सकती है। जनता का कायाकल्प करने और नवीन राष्ट्र का निर्माण करने का यह भी एक तरीका है। धर्म ने अतीत में ऐसा ही किया है और भविष्य में भी कर सकता है। सेक्यूलर आदर्श उसके स्थान को वहां तक ले सकता है जहां तक कि वह किसी प्रकार के उत्साह जीवन के उद्देश्य की चेतना की किसी प्रकार की इच्छा—अपने जीवन के सर्वस्व को किसी ऐसी वस्तु के लिए जो जीवन में ओतप्रोत तो मालूम होती है फिर भी उसकी पकड़ के बाहर रहती है, न्योछावर कर देने की इसी प्रकार की दृढ़ इच्छाशक्ति पैदा कर सके। हमें अपने राष्ट्र के नवीन निर्माण का अवसर मिला था, लेकिन हमने उसे खो दिया। विश्व के इतिहास में विभिन्न राज्य क्रांति के जनकों से कहीं बड़ा व्यक्तित्व हमें महात्मा गांधी के रूप में मिला था। हम यदि चाहते तो गांधीवाद को अपने पारस्परिक जीवन के लिए प्रेरणा बना सकते थे, किन्तु बजाय इसके हमने गांधीवाद को केवल नारे के रूप में बना रखा है। हम गांधीवाद की दोहाई देते हैं, किन्तु हमारे जीवन के किसी भी पहलू में उसका कोई स्थान नहीं है। हमारे विधान में उसकी झलक तक नहीं। वास्तव में इतनी जल्दी में विधान बनाने का हमारे लिये कोई कारण नहीं था। अगर हम अपने आप से ही डर नहीं रहे थे, तो हमें वैसा करना चाहिये था, जैसा रूसियों ने किया। हमारा प्रत्येक प्रयत्न गांधीवाद को जैसा कुछ

(शेष पृष्ठ २४ पर)

इन्द्र धनुष

घृणा पर विजय

बेल्जियम की वीरता कहावत बन गई है। पहले विश्व-युद्ध में उसने रक्त की अंतिम बूंद बहा कर शत्रु को अपने देश में आने दिया था। दूसरे विश्व-युद्ध में भी वह उसी अनुपम वीरता से लड़ा, परन्तु रक्त की आखिरी बूंद गिरने से पूर्व ही बर्बर जर्मन सैनिकों ने उसे आत्म-समर्पण के लिए विवश कर दिया। उसके बाद जर्मन सैनिकों ने उस बापल देश पर जो अत्याचार किये, उनकी कल्पना करके दानवता भी सिहर उठती है।

देश के नेताओं ने यह सब कुछ देखा और वे तड़प कर रह गये। प्रसिद्ध जनसेवी श्रीमती मान्द्रा यूरस युद्ध से घृणा करती थीं। वे शांति की उपासिका थीं, पर जर्मनों के इस अत्याचार ने उन्हें बुरी तरह त्रस्त कर दिया। वे अपने देशवासियों का पतन देख कर घृणा से भर उठीं। उसी दुरवस्था में वे पीड़ितों के आंसू पोंछती हुई इधर-उधर घूमा करती थीं। एक दिन उन्होंने एक घायल सिपाही को देखा। वह जर्मन था, उनके देश का शत्रु। वे घृणा से मुंह मोड़ कर आगे बढ़ गईं; लेकिन घायल की करुण पुकार निरंतर कानों में आ रही थी। उस पुकार में वही पीड़ा थी, वही दर्द था, जो बेल्जियम के नागरिकों की पुकार में था। वे जैसे कांपीं; पर दूसरे ही क्षण उन्होंने गरदन को जोर से झटका दिया—'नहीं, नहीं, इसे मरना ही चाहिये, मरना ही चाहिये। मैं इसके लिए कुछ नहीं कर सकती।'

और वे आगे बढ़ गईं, पर मन लौट रहा था। 'उसका स्वर वैसा ही है, वह उसी तरह मर रहा है! क्या उसके मरने से मेरे देश का भला होगा? क्या अत्याचार रुक सकेगा?'

श्रीमती ने फिर भी जोर से कहा—'नहीं-नहीं, मैं कभी नहीं लौटूंगी...।'

'न लौटो! वह एक मनुष्य है!' एक मनुष्य के मरने से संसार का क्या बिगड़ता है? हां, कोई अन्तर नहीं पड़ता! विचार वे ही रहेंगे। अत्याचार उसी तरह चलता रहेगा...।'

श्रीमती यूरस सहसा ठिठकीं, 'मनुष्य...संसार...विचार।'

वे फुसफुसाईं—'विचार वैसे ही बने रहेंगे। वैसे ही...।'

'हां, विचार वैसे ही रहेंगे। नाजियों का जुल्म उसके मरने से नहीं मिटेगा।'

'तो......?'

'कुछ नहीं! तुम जाओ। उसके मरने से तुम्हें सुख होगा...।'

न जाने क्या हुआ। श्रीमती यूरस चिल्ला उठीं—'मैं अपना सुख नहीं चाहती। मैं शांति चाहती हूं। मैं इस अत्याचार का, इस शोषण का अन्त चाहती हूं।'

और तभी घायल की करुण पुकार फिर उनके कानों में पड़ी। अचरज से उन्होंने देखा कि वह वहीं घायल सैनिक के पास खड़ी हुई अपने ही मन से तर्क कर रही थीं। बस, फिर तो वे वहीं उस घायल के पास बैठ गईं और देखने लगीं, उसे कैसे सहायता पहुँचाई जा सकती है।

जर्मन ने उन्हें देखा तो पीड़ा में भी विस्मित होकर बोल उठा—आप!

स्नेहपूर्ण स्वर में श्रीमती यूरस ने कहा—'बोलो नहीं! तुम्हें अभी अस्पताल पहुंचाने का प्रबन्ध करती हूं। तब तक ज़रा मुझे पट्टी बांध लेने दो। हां, तनिक ऐसे...बस, बस, तुम ठीक हो जाओगे...!' —(जी० सा०)

●

अगस्त क्रांति पर साहित्य

फ्रांस और रूस की क्रांति पर कल्पनातीत लिखा जा चुका है, परन्तु हमारी अपनी क्रांति पर? यह प्रश्न श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने उठाया है।

अगस्त-क्रांति—संसार की क्रांतियों में महानतम!

हां, महानतम—साधन की नवीनता की दृष्टि से, व्यापकता और विस्तार की दृष्टि से और अभूतपूर्व सफलता की दृष्टि से भी।

फ्रांस की क्रांति—पेट्रोग्राद (अब लेनिनग्राद) और मास्को की क्रांति—और ज्यादा से ज्यादा आधे दर्जन औद्योगिक नगरों की क्रांति!

किन्तु, अगस्त-क्रांति का विस्तार गांव-गांव में, कस्बे-कस्बे में, शहरों की गली-गली में था। और, इसमें शामिल होने वाले कौन थे?

फ्रांस की क्रांति—मुख्यतः पढ़े लिखे लोगों की क्रांति!

रूस की क्रांति—मजदूरों और सैनिकों की क्रांति!

यह अगस्त की क्रांति थी, जिसमें जनता के सभी स्तर के लोग समान रूप से शामिल थे। विद्यार्थी, मजदूर, किसान मध्यम श्रेणी का बहुत बड़ा भाग—इसमें शामिल थे।

बलिदान की दृष्टि से, साधन की पवित्रता की दृष्टि से, सम्पूर्ण जनता के सहयोग की दृष्टि से और अतः पूर्व सफलता की दृष्टि से हमारी यह क्रांति संसार की क्रांतियों में सर्वोच्च स्थान रखती है।

फ्रांस की क्रांति या रूस की क्रांति को लेकर जो साहित्य उन देशों में तैयार हुआ, ज़रा उसकी ओर दृष्टिपात कीजिये और फिर अगस्त-क्रान्ति पर जो हमने साहित्य का सृजन किया है, उसका सिंहावलोकन कीजिये।

उन देशों का तत्कालीन कोई ऐसा बड़ा साहित्यकार नहीं, जिसने उन क्रांतियों पर कुछ लिख कर अपनी लेखनी को धन्य नहीं किया हो।

विक्टर ह्यूगो की 'नाइन्टी थ्री' और शोलोखोव की 'ऐण्ड क्वायट फ्लोज द डोन' विश्व-साहित्य की अमर कृतियां हैं, जिनमें फ्रांसीसी और रूसी क्रांति की ऐतिहासिक घटनाएं कथा का अक्षय रूप धारण कर हमारे सामने आई हैं। रूसी और फ्रांसीसी कवियों ने भी अपनी भारती को क्रांति के रंग में सराबोर कर अपने को समाज के मुक्ति-दूत के रूप में उपस्थित किया!

किन्तु, क्या हिन्दी में अगस्त-क्रांति को लेकर कोई ऐसी साहित्यिक रचना आज तक हुई?

तमाशे की बात यह है कि अगस्त-क्रांति का सबसे प्रमुख केन्द्र हिन्दी भाषी ही क्षेत्र रहा।

१९२१ के असहयोग ने हमें 'प्रेमाश्रम' दिया था, जिसकी प्रशंसा महात्मा गांधी तक ने तक की थी!

प्रेमचंद के वंशधर १९४२ में कहां सोये हुए थे?

●

महंगी खरीद

चार आने की चीज के लिए बार-बार बंटे का अपव्यय और दीनता प्रदर्शन करने वालों का एक चित्र श्री सत्यभक्त ने 'संगम' में चित्रित किया है—

बात वर्षा आने के पहिले की है। एक दिन पड़ोसी आये। थोड़ी देर इधर-उधर की बात की, फिर बोले—मेरे फाउंटेन में आज स्याही नहीं है, ज़रा स्याही तो दीजिये।

मैंने स्याही दे दी।

कुछ दिन बाद वे फिर आये। मैं था नहीं, इसलिए मेरी पत्नी से कुछ इधर-उधर की बातें कीं, कुछ उधर दुहाकी की और फाउंटेन पेन में स्याही भरा ले गये। मेरे आने पर पत्नी ने यह बात कही। मुझे कुछ अखरी, पर मैंने कहा—खैर!

दस-पन्द्रह दिन बाद वे फिर घुमाते घुमाते ऐसा प्रकरण ले आये, जिसमें स्याही की बात स्वाभाविक कही जा सके। और फिर फाउंटेन पेन में स्याही भी भरी।

मैंने स्याही देते हुए कहा—आप एक दवात क्यों नहीं खरीद लेते?

बोले—ज्यादा काम पड़ता नहीं है। थोड़ा सा काम यों ही चल जाता है।

मैंने कहा—इतनी महंगी स्याही आप कैसे खरीद लेते हैं, मैं नहीं समझ सका।

बोले—मैं स्याही के लिए तो एक पैसा भी खर्च नहीं करता।

मैंने कहा—धन का प्रतीक सिर्फ पैसा नहीं है। पुराने जमाने में सिर्फ पैसे से ही दूसरी-दूसरी चीजों से लोग अपनी इच्छित चीज नहीं खरीदते। वे

बोले, पर मैं तो इसके लिए कोई दूसरी चीज भी नहीं देता।

मैंने कहा—देते हैं। मैं चार आने में एक दवात लाता हूं करीब ३२ बार स्याही भरता हूं। एक बार में आधा पैसा खर्च होता है। आप इस आधे पैसे को बचाने के लिए करीब आधा घण्टा बर्बाद करते हैं और इतना गौरव लुटा जाते हैं कि उतना गौरव मैं दस-बीस रुपये में लुटाने को तैयार न हो सकूंगा। उतना गौरव आधा घंटा खर्च कर आप आधे पैसे की स्याही खरीदते हैं। इससे बढ़ कर महंगी खरीद क्या होगी?

मालूम नहीं, फिर उन्होंने यह महंगी खरीद बन्द की या नहीं, पर मेरे पास कभी नहीं आये।

●

निराला को राखी कौन बांधेगी?

श्रीमती महादेवी वर्मा लिखती हैं—:

उस दिन मैं बिना कुछ सोचे हुए ही भाई निराला जी से पूछ बैठी थी—'आपके किसी ने राखी नहीं बांधी?' अवश्य ही उस समय मेरे सामने उनकी बन्धन-शून्य कलाई और पीले कच्चे सूत की ढेरों राखियां ले कर घूमने वाले यजमान खोजियों का चित्र था। पर अपने प्रश्न के उत्तर में मिले प्रश्न ने मुझे क्षण भर के लिए चौंका दिया।

'कौन बहन हम ऐसे भुक्खड़ को भाई बनावेगी?' में उत्तर देने वाले के एकाकी जीवन की व्यथा थी या चुनौती, यह कहना कठिन है। पर जान पड़ता है किसी अव्यक्त चुनौती के आभास ने

[शेष पृष्ठ ४० पर]

क्या चीनी कम्यूनिस्ट हांगकांग पर हम

श्री गंगाधर इन्दूरकर

आज अमरीकी गुट का बहुमत होने के कारण संयुक्त राष्ट्र-संघ आज चीन को चाहे मान्यता दे या न दे पर चीन पर कम्यूनिस्टों के अधिकार की अब कोई उपेक्षा नहीं कर सकता। कम्यूनिस्टों की अपने राज्य विस्तार की भीषण महत्वाकांक्षा देख कर कोई भी निकट भविष्य में जिस प्रकार फारमोसा पर आक्रमण होने की आशंका कर सकता है उसी प्रकार हांगकांग पर भी चीनी कम्यूनिस्टों के आक्रमण की सम्भावना बिलकुल टाली नहीं जा सकती। आज कोरिया के युद्ध के कारण कम्यूनिस्टों का ध्यान हांगकांग पर उतना केंद्रित नहीं है। पर जैसे ही कोरिया के रणक्षेत्र से वे खाली होंगे, हांगकांग पर उनका आक्रमण असंभव नहीं है।

कम्यूनिस्टों की आंखों में हांगकांग के सदा खटकते रहने का कारण क्या है? इसके कई कारण बताये जा सकते हैं। अमेरिका की तरह ही ब्रिटेन भी संसार का एक प्रमुख पूंजीवादी राष्ट्र है और इसलिए सभी कम्यूनिस्ट उसे अपना एक समर्थ शत्रु समझते रहे हैं। चीनी कम्यूनिस्ट इसके अपवाद नहीं है। विदेशी राष्ट्रों ने पहले चीनी राष्ट्र के टुकड़े तोड़ने में छीन झपट कर कई भागों पर अधिकार कर लिया था उसमें अब केवल हांगकांग ही एक ऐसा भाग है जिस पर अब भी विदेशी शासन है। हां मकाओ जैसे छोटे भाग को जिस पर पुर्तगाली शासन है, हमें छोड़ देना होगा हांग कांग पर अभी भी विदेशी शासन है, यह बात प्रत्येक चीनी के मन में सदा ही खटकती रहती है। प्रश्न केवल कैसे और कब का ही है। प्रत्येक नये शासन के साथ यह प्रश्न कुछ समय के लिए चीन में बहुत जोर पकड़ता है इसका भी यही कारण है।

हांगकांग कई वर्षों तक बड़े बड़े चीनी अफसरों तथा लुटेरों का विश्रामगृह रहा है। वे काफी धन जमा कर लेने पर यहां अपनी रखेलियों के साथ आ बसते थे, और अनुचित मार्ग से उत्पादित अपनी संपत्ति को या तो विलास और ऐशो आराम में खर्च करते थे या व्यापार में लगा देते थे। राष्ट्रीय चीन सरकार के ऊंचे अफसरों के हांगकांग में अपने मकान हैं, नहीं—बहुतों के महल हैं। शुंकिंग और पीकिंग के पतन के पूर्व भी राष्ट्रवादी चीन के बहुत से अधिकारी तथा धनिक चीनी चीन के अन्तरतम भाग से भाग कर यहां आकर बसने लगे थे। इसी प्रकार चीनी कम्यूनिस्टों का शांघाई पर अधिकार हो जाने के पश्चात् बहुत सी सरकारी बैंकों और हवाई कम्पनियों ने अपनी बहुमूल्य संपत्ति हांग कांग में ला रखी थी। यहां पर ब्रिटिश शासन होने के कारण उन्हें खतरा कुछ कम मालूम होता था। शांघाई से लौटा कर लाये माल से भरे बहुत से जहाज हांग कांग के बन्दरगाह पर बहुत दिन तक बेकार पड़े थे। इस प्रकार चीनी कम्यूनिस्टों की दृष्टि में हांगकांग चीनी जनता की संपत्ति के चोरों और लुटेरों का एक आश्रय स्थान है। हांगकांग के अधिकारी नियमानुसार उन्हें रोक भी नहीं सकते थे। हांगकांग के ब्रिटिश अधिकारियों के विरुद्ध कम्यूनिस्टों की भावना जागृत होने का यह एक प्रमुख कारण रहा था।

इस भावना को और भी अधिक तीव्र करने का एक दूसरा प्रमुख कारण एमेथ्स्टि युद्धपोत की घटना है। वैसे प्रारम्भ में चीनी कम्यूनिस्टों के अंग्रेजों के साथ सम्बन्ध बुरे नहीं थे। कम से कम वे अंग्रेज विरोधी तो नहीं ही थे। इतना ही नहीं केआन की खानों के अंग्रेज अधिकारियों के साथ उनके सम्बन्ध संतोषजनक भी थे। यह भी कहा जाता था कि अंग्रेज व्यापारी चीनी कम्यूनिस्टों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाने के प्रयत्न में लगे हुए थे और कम्यूनिस्ट उसे केवल उसी समय नहीं, अब भी चाहते हैं। पर इसी बीच यांग्टसे में कम्यूनिस्टों ने एमेथिस्ट नामक जहाज पर बम फेंका। दोनों के सम्बन्धों की दृष्टि से यह बड़ा ही दुर्भाग्य था। इसमें सन्देह नहीं कि वह जहाज किसी शान्तिपूर्ण कार्य से जा रहा था। पर यह समझ में नहीं आता कि कम्यूनिस्ट उसी शाम को नदी पार करने की कार्रवाई शुरू करने वाले हैं, यह मालूम होने पर भी यांगटसे की ओर जहाज ले जाना कहां तक उचित था। 'हमें अधिकार था' 'हमने नानकिंग की सरकार से अनुमति ले रखी थी', आदि तर्क बहुत मानें नहीं रखते। इस घटनामें दोनों ही ओर के बहुत से लोग हताहत हुए। इस घटना के तीन महीने के पश्चात् यात्रियों से भरी एक नाव डूब गई उसमें जिसमें सौ यात्रियों को अपनी जान खोनी पड़ी। कम्यूनिस्टों ने कहा कि 'इस नाव को उस जहाज ने ही डुबाया है। इसकी वास्तविकता ठीक-ठीक नहीं आंकी जा सकती। पर इससे कम्यूस्टों को ब्रिटिश विरोधी प्रचार का एक बहुत बड़ा अवसर हाथ लगा इसमें सन्देह नहीं।

पर यह सब होते हुए भी एक दूसरी विचार धारा के अनुसार हांग-कांग पर कम्यूनिस्ट आक्रमण की आशंका निकट भविष्य में तो नहीं ही है। ऊपर जो कारण बताये गये हैं उतने ही अथवा उनसे भी सबल प्रतिरोधक कारण वह मौजूद हैं।

पिछले वर्ष कम्यूनिस्टों ने अपना विस्तार इतनी तीव्र गति से किया है कि उन्हें बहुत-सी भूमि अव्यवस्थित छोड़ देनी पड़ी है। इस भूमि में आज अनेक सशस्त्र गिरोह रहते हैं। वे या तो कहीं छिप गये हैं या उन्होंने कम्यूनिस्टों साथ जल्दी जल्दी में कोई समझौता कर लिया है। कुछ ही समय में गिरोह किसी न किसी कारण फिर उठ खड़े होंगे और कम्यूनिस्टों को उनका मुकाबला करना होगा। कम्यूनिस्ट पत्रों में इन लोगों की कुछ हलचलों के समाचार भी प्रकाशित हो चुके हैं। अतः राष्ट्रवादी चीनी फौजों के हाथ से दक्षिणी चीन को छीन लेने के बाद कम्यूनिस्ट को अपनी सारी शक्ति, जो कुछ मिल

नव प्रकाशन

म्पादक श्री पुरुषोत्तम आयुर्वेदालंकार। काशक—नि० भा० आयुर्वेद सम्मेलन, १०। २ कनाट सर्कस, नई दिल्ली। मू० ४) वार्षिक।

मुलतान व कराची के प्रसिद्ध वैद्य श्री पुरुषोत्तमदेव मुलतानी के सम्पादन मे सम्मेलन की पुरानी पत्रिका अब निकल रही है। परीक्षाफलांक हमारे सामने है। इसमें अनेक शास्त्रीय लेख हैं— मन्थर ज्वर, प्राचीन दन्त विज्ञान, त्रिधातु विज्ञान आदि। ये लेख वैद्यों की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। उष पान, ज्ञानविज्ञान आदि कुछ सामग्री सर्वसाधारण के लिए है। वैद्य जगत् का कर्तव्य है कि वह अपनी इस पत्रिका से लाभ ले।

प्रेमदूती— लेखक — श्री विराज। स्थान—साहित्य मन्दिर कलकत्ता। बारह आने। पृष्ठ संख्या ६४।

यह छोटी-सी कविता पुस्तक हिन्दी काव्य की नई रचनाओं मे से एक गिनी जा सकती है। इसमें लेखक की कविताएं संगृहीत हैं। इनमें प्रेमदूती कविता लम्बी तथा हिन्दी में अपने ढंग की बिलकुल नई है। अग्नि संस्कार के बाद, उस दिन तथा मेरे मित्र शीर्षक कविताएं गहरी अनुभूति और परिष्कृत अभिव्यक्ति में अच्छी रचनाओं में स्थान ले सकती हैं। प्रायः सभी कविताएं श्रृंगार-रस की हैं कुछ संयोग श्रृंगार की, और कुछ वियोग श्रृंगार की। प्रेमदूती कविता में विरह वर्णन का कुछ सा अंश नीरस अवश्य हो गया है पर सरस स्थलों की कमी नहीं है।

—कृष्ण

...AN CONGRESS AF-...TO LOSE RAJAS-... —लेखक श्री ए० के० माथुर। —किताबघर, जोधपुर। मू० १।)

...पास पृष्ठ की पुस्तक एक सांस ...ने की वस्तु है—केवल इसलिए ...क इसका कलेवर छोटा है, ...सलिए भी कि इस छोटी सी ...। लेखक ने प्रवाहपूर्ण भाषा में ...। हमारे सामने ला रखी है। ...र का सामन्ती जीवन, रियासती

आलोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियां आनी आवश्यक हैं।

—संपादक

जीवन की दोहरी गुलामी के विरुद्ध कांग्रेस का विद्रोह, स्वाधीनता के उपरान्त सामन्तशाही पर कुठाराघात, कांग्रेस के हाथ में शासन की बागडोर, राजस्थान प्रांतीय कांग्रेस और राजस्थान की कांग्रेस-सरकार के बीच वैमनस्य और गतिरोध, उसके परिणामस्वरूप राजस्थान की जर्जरित कांग्रेस के प्रति जनता का असन्तोष और वर्तमान विषम परिस्थिति में सुयोग्य शासन सूत्र की मांग। शैली में ओज और प्रवाह है, उनके शब्दचित्रों के रंग गहरे हैं। शाब्दिक लीपापोती तथा विचारों की हिचकिचाहट पुस्तक में नहीं है।

पुस्तक राजस्थान की राजनैतिक प्रगति के विषय मे है, इससे पढने से पहले यह भ्रम हो सकता है कि शायद व्यास और शास्त्री की रस्साकशी में एक और जवान ने किसी तरह हाथ बटाया है। पढ कर प्रसन्नता होती है कि यह वास्तव में एक अध्ययन है। पुस्तक की उपयोगिता राजस्थान की कांग्रेस के लिए ही नहीं, प्रत्युत अखिल भारतीय कांग्रेस के लिए भी है।

पुस्तक में केवल कांग्रेस की आलोचना ही नहीं हैं ऐसे सुझाव भी हैं जिन में बताया गया है कि किस प्रकार यह संस्था अपनी प्रतिष्ठा को प्रांत में बनाये रख सकती है और साथ ही जनता के दुःख और असंतोष को दूर करके शासन के विकार को दूर किया जा सकता है।

—शास्त्री

विद्युत मार्ग प्रदर्शक—लेखक उपाध्याय श्री बलवी भाई फकीर भाई मिलने का पता—१२ कल्याण सोसाइटी पुलिस लिन, अहमदाबाद। मूल्य ४) रु० (दो भाग), ३) रु० (चार भाग)

योग्य उपाध्यायजी ने बिजली के किसी भी स्थान पर पहुंचने की विधियां तथा भिन्न भिन्न भागों का उपयोग भिन्न

[शेष पृष्ठ १६ पर]

शरणार्थी समस्या

[२]

श्री "आनन्द"

भारत की शरणार्थी समस्या विश्व के इतिहास में किसी भी देश के सम्मुख आने वाली इस प्रकार की समस्याओं में अद्वितीय है। अनेकों बार अनेकों राष्ट्रों के सम्मुख अपने नागरिकों के पुनर्वास की समस्या आती रही है। विशेषतः युद्धकाल में एक ओर की सेनाओं के आगे बढ़ने पर दूसरे पक्ष को शत्रु के हाथ में पड़ने वाले अपने नागरिकों को सुरक्षित स्थान पर पहुंचाने का प्रश्न हल करना पड़ता है। किन्तु यह युद्धकाल की बात होती है। शांति काल में इस प्रकार इतनी विशाल संख्या में जनसमूह के एक स्थान से उजड़ कर दूसरे स्थान पर आश्रय खोजने की यह घटना अपने जैसी अकेली ही है।

यदि इस विषय को छोड़ भी दें कि भारत की शरणार्थी समस्या का मूल कारण कांग्रेस की अनैतिहासिक विचार धारा तथा देश का विभाजन स्वीकार करने की महान् राजनीतिक मूर्खता थी और सीधे उजड़ कर आये व्यक्तियों के पुनर्वास पर ही विचार करें तो भी इसके तीन पक्ष तो स्पष्ट हो जाते हैं। आये हुए लोगों के लिए रहने की व्यवस्था, धन्धे की व्यवस्था तथा जिस स्थान पर उन्हें बसाया जावे, वहां के पूर्व निवासियों तथा उनके मध्य एक सद्भाव के वातावरण का निर्माण। यह होने के पश्चात् ही नवागन्तुकों के बालकों आदि की शिक्षा तथा अन्य भी इसी प्रकार के कुछ विषय विचारणीय होते हैं।

थोड़ी देर के लिए हम एक दूसरे राष्ट्र के सम्बन्ध में विचार करें। गत महायुद्ध में जर्मनी द्वारा रूस पर चढ़ाई होने के पश्चात् रूसियों के सम्मुख शरणार्थियों की बड़ी भीषण समस्या उपस्थित हुई थी। हमारे ही समान रूसी लोग भी इस प्रकार के किसी संकट के लिए तत्पर नहीं थे। रूस पर जर्मनी का आक्रमण विश्व को चौंका देने वाली घटना थी। यांत्रिक नाज़ी सेनाओं के भीषण वेग को संभालने में रूस समर्थ नहीं था। उनके अत्याचारों से ही भयभीत होकर लाखों की संख्या में रूस की पश्चिमी सीमा की ओर के प्रदेश के निवासी अपने स्थान छोड़ रहे थे। उनकी बढ़ती हुई संख्या देश में अधिकाधिक जर्मन आतंक का प्रसार कर रही थी। दूसरी ओर रूसी सेनाओं की गतिविधि में यह एक भयंकर बाधा थी। जर्मन अधिकारी इस बात को जानते थे कि जिस प्रदेश में लाखों व्यक्ति उजड़ कर अव्यवस्थित रूप से भागने लगें वहां यातायात की इतनी भयंकर कठिनाइयां खड़ी हो जाती हैं कि आगे बढ़ती हुई जर्मन सेनाओं को रोकने के लिए उन को अपनी सैन्य व्यवस्था ठीक बनाये रखना अत्यन्त कठिन है। रूसियों की इस कठिनाई का साथ-साथ तब ही जर्मन सेनायें आंधी की भांति बढ़ती गईं और उनकी प्रगति से बढ़ती गयी अधिकाधिक रूसी शरणार्थियों की संख्या।

किन्तु रूसी अधिकारियों ने अत्यन्त व्यावहारिक बुद्धि का परिचय दिया। शत्रु की प्रगति को रोकने में उनके ही उजड़े हुए देशवासी बाधा बने हुए थे। अतः उन्होंने इसके लिए सार्वजनिक सहयोग लिया। रूस के सुरक्षित पूर्वी भागों में उन स्थानों के बालक तथा बालिकायें भेज दिये गये जहां अभी तक शत्रु सेनायें पहुंची नहीं थीं किन्तु जिनका शत्रु के हाथों में पड़ जाने का भय था। रूसी समाचारपत्र जहां एक ओर जर्मन आक्रान्ताओं के विरुद्ध खड़े होने के लिए देशवासियों को भड़का रहे थे वहां शरणार्थी समस्या पर भी बड़ा प्रबल आन्दोलन कर रहे थे। संकटग्रस्त भागों के निवासी माता-पिताओं में इस बात का अत्यन्त प्रबल प्रचार किया जा रहा था कि अपने बच्चों की सुरक्षा के लिए वे उन्हें सरकार के द्वारा आयोजित सुदूरपूर्व में स्थित स्थानों पर शिविरों में भेज दें। बड़े बड़े लोगों ने अपने बच्चे भेजे और स्वयं घूम कर साधारण जनता के व्यक्तियों में नगर तथा गांवों में प्रचार किया कि लोग अपने बच्चों को सुरक्षित स्थानों पर भेज दें। फलस्वरूप सभी लोग अपने बालकों को सुदूरपूर्व भेजने को तत्पर हो गये। माता-पिताओं की सम्मिलित सभा में एक कमेटी बनायी गयी जिसके प्रतिनिधि ने जाकर उस स्थान पर बच्चों के रहने की सारी व्यवस्था देखी और लौट कर सम्मिलित सभा में वे सारी बातें बतायीं। सन्तुष्ट हो कर सभी ने अपने बच्चों को निश्चित स्थान पर भेज दिया। समय-समय पर संरक्षकों के प्रतिनिधि वहां जाते रहते थे और लौट कर सम्मिलित सभा में विस्तृत रूप से सारे समाचार सभी को बताते थे और उत्सुक माता-पिताओं के व्यक्तिगत प्रश्नों का समाधानकारक उत्तर देते।

दूसरी ओर सुदूरपूर्व के भागों में इस प्रकार का आन्दोलन किया जा रहा था कि पश्चिम से आने वाले इन बच्चों को वहां का समाज प्रेमपूर्वक अपनाये और उनकी अपने ही बालकों के समान चिन्ता करे। फलस्वरूप प्रत्येक स्थान पर जहां पश्चिमी भागों के बालक-बालिकाओं के निवास की योजना की गयी थी, वहां के निवासियों ने उनको सहर्ष अपनाया। वहां के भी प्रमुख व्यक्ति आगे आये और इन आगन्तुक बच्चों की चिन्ता का भार अपने सिर पर उठाने में योग दिया। चारों ओर घूम कर उन्होंने सभी निवासियों को यह समझाया कि देश के दूसरे भाग से आये हुए ये बच्चे उनके ही बच्चों के समान हैं और इनको भी उनके प्रेम का भाग मिलना चाहिये।

साथ ही युद्धभूमि से दूर के भागों में यह आन्दोलन आरम्भ हुआ कि पुरुषों को शस्त्र और स्त्रियों को खेत, मशीन अथवा व्यापार सम्भाल लेने चाहिये। युद्ध की स्थिति के कारण युद्ध-सामग्री के उत्पादन, सेनाओं के लिए खाद्य, वस्त्र आदि पदार्थों की उत्पत्ति के खेतों तथा कारखानों को स्त्रियों ने सम्भाला। बड़े-बड़े घराने की स्त्रियां इस कार्य में जुटीं और पुरुषों को सैनिक सेवाओं के लिए मुक्त किया। असंख्य नये कारखाने और विभाग खोले जा रहे थे जिनमें प्रत्येक व्यक्ति को अपने लिये कार्य मिल गया। पश्चिम से अपना सर्वस्व खो कर भागने वाले व्यक्तियों को भी पूर्व में नये खुल रहे कारखानों में कार्य मिल गया।

इस व्यवस्थित योजना की दो विशेषतायें थीं। एक तो यह कि इसे उन स्थानों पर क्रियान्वित किया गया जो अभी तक जर्मनों की पहुँच से दूर थे और वहां के सामाजिक जीवन में युद्ध के समाचारों से उत्पन्न हुई मानसिक व्यग्रता से अधिक स्थिति नहीं आई थी। वहां के बालक-बालिकाओं को सुदूरपूर्व भेज कर तथा स्त्रियों एवं पुरुषों को कारखाने खेत तथा सेना में काम देकर रूसी सरकार ने शरणार्थी समस्या की जड़ पर ही कुठाराघात किया। इस योजना के सफल होने पर जर्मनों के आगे बढ़ने पर भी शरणार्थियों की संख्या बढ़ना बन्द हो गया और सारा देश एक व्यवस्थित रीति से आक्रमण के विरुद्ध खड़ा हुआ। ऐसा होने पर केवल उन्हीं लोगों के पुनर्वास की समस्या रह गयी जो युद्धग्रस्त अथवा शत्रुअधिकृत प्रदेश से भाग कर आये थे। ऐसे व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि रुक जाने पर और पुनर्वास की मशीन के सुचारु रूप से चालू हो उठने से इन व्यक्तियों को ठिकाना देने का प्रश्न सरल हो गया। विशेष व्यवस्था के द्वारा इन लोगों को युद्धक्षेत्र से दूर के स्थानों में पहुंचाया गया। वहां खुल रहे कारखानों में, सेना में काम करने के लिए अच्छे वेतन पर स्त्रियों व पुरुषों की आवश्यकता के आकर्षक विज्ञापन प्रकाशित हो रहे थे जिन्होंने सर्वस्व खोकर भाग हुए इन व्यक्तियों की आजीविका की तुरन्त व्यवस्था कर दी।

दूसरे इस सारी योजना में सरकार ने जनता का अत्यन्त क्रियाशील सहयोग लिया। यथार्थ में सब कुछ जनता के लोगों के द्वारा ही कराया गया। सरकारी अधिकारी कहीं भी जाकर किसी पर दबाव नहीं डालते थे। प्रचार के तंत्र द्वारा जनता में प्रेरणा जागृत की जाती थी। संरक्षकों की समिति बनती, वे ही जाकर स्थान देखते, बच्चों को वहां पहुंचाते, बीच बीच में जाकर देखते थे। बच्चों के साथ शिक्षक व शिक्षकाएं रहती थीं। लोगों ने ही स्थानीय जनों में इन बच्चों के लिए प्रेम उत्पन्न किया और उनके सच्चे अभिभावकों के अभाव में उनकी देख रेख करने के लिए उन्हें प्रेरित किया।

एक अन्य विशेष बात ध्यान देने योग्य यह थी कि सरकार ने यथा संभव किसी भी व्यक्ति को अपने ऊपर बोझ नहीं बनने दिया। यदि वह चाहती तो उजड़े हुए लोगों को शिविरों में बसा कर उन्हें राशन दे सकती थी। इस पद्धति से चाहे सरकार का अपने नागरिकों के प्रति कितना भी प्रेम क्यों न प्रकट हो किन्तु दो भयानक राष्ट्रीय हानियां होती हैं। एक तो वह जनसमूह सरकार पर बोझ बन जाता है, दूसरे उन नागरिकों की स्वयं मेहनत कर आजीविका उपार्जन करने की वृत्ति नष्ट होने लगती है। यदि अधिक समय तक उन्हें इसी प्रकार रखा जाय तो उनका परिश्रम द्वारा रोटी कमाने का स्वभाव नष्टप्राय हो जाता है और केवल सरकार को कोसते ही रहते हैं। रूसी अधिकारी इतने मूर्ख नहीं थे जो इन परिणामों को न सोच पाते। उन्होंने अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय देते हुए प्रत्येक शरणार्थी की शक्ति का उपयोग युद्ध मशीन को और वेग से चलाने में किया जिसमें उसकी पुनर्वास की समस्या स्वतः हल होती चली गई।

यद्यपि रूस के संमुख युद्ध की परिस्थिति थी और इस दृष्टि से भारत की परिस्थिति उससे भिन्न है। किन्तु मैं इसी मत का हूं कि युद्धकाल में शरणार्थी समस्या तो कोढ़ में खाज के समान है जिसे युद्ध की परिस्थितियों के कारण हल कर पाना और भी अधिक कठिन है। यदि उस विषम स्थिति में रूस अपनी शरणार्थी समस्या हल कर सकता था तो शांत परिस्थिति में भारत क्यों नहीं कर सका ? अतः भारत की इस समस्या पर रूस से साधारण तुलना के ढंग पर नीचे की पंक्तियों में हम विचार करेंगे।

(क्रमशः)

———

स्वतन्त्र भारत के नये सिक्के

१५ अगस्त १९५० से शुद्ध निकल का बनाया गया रुपया चालू हो गया है। इसके साथ ही नये नमूने की अठन्नी, चवन्नी, दुअन्नी, इकन्नी, अधन्ना और पैसा भी चालू हो गया है। १८३५ में जब पहली बार भारतीय टकसाल में रुपया बनाया गया था, तब इसमें ११ बटे बारह शुद्ध चांदी ही थी। शुद्ध निकल का रुपया पहली बार १९४७ में ही चालू किया गया।

निकल के इस नये रुपये के अग्रभाग पर अशोक स्तम्भ का सिंह-शिखर और पृष्ठ भाग पर अनाज की बालें अंकित हैं जो न केवल भारत के अतीत गौरव का ही स्मरण दिलाती है अपितु बिक्री मैत्री श्री सो० डी० देशमुख के शब्दों में "खाद्य-समस्या" की ओर भी ध्यान आकृष्ट करती हैं।

आधुनिक वित्त का प्रभाव

एक शताब्दी से अधिक समय से चांदी का रुपया ही प्रामाणिक सिक्का था जिसे ग्रामीण लोग अपना सोना समझ कर जमा और इकट्ठा रखते थे। इस बीच संसार भर में औद्योगिक क्रांति हुई और भारत इसकी कृषि-प्रधान अर्थनीति के होते हुए भी इस क्रांति-के-प्रभाव से अछूता न रह सका। आधुनिक वित्त, विनिमय-दर की समस्त पेचीदगियों और वस अर्थ की मूल्य सम्बन्धी कठिनाइयों का प्रभाव भारतीय अर्थनीति पर भी पड़ा। परिणामतः चांदी का रुपया देशमें या देश के बाहर बड़े पैमाने पर व्यापार करने का उपयुक्त माध्यम न रह सका। इसलिये वस अर्थ सुधारकों ने अनुभव किया कि रुपये में चांदी की अधिक मात्रा रखना अनावश्यक एवं वास्तव में निरर्थक है।

चांदी के रुपये में दोष

चांदी के रुपये का दोष पहली बार तब प्रकट हुआ जब चांदी का संसार व्यापी मूल्य बहुत अधिक गिर गया और परिणामतः १८९३ में शुद्ध चांदी का सिक्का बनाने वाली भारतीय टकसालें बन्द कर दी गयीं। इसी प्रकार १९१७-१८ में प्रथम महायुद्ध के समय चांदी का मूल्य बहुत अधिक चढ़ जाने के कारण प्रामाणिक चांदी के रुपये को लोगों ने जमा किया और पिघलाया। इन कारणों से कागज के नोटों को चालू करने में प्रोत्साहन मिला। शुद्ध रूप से चांदी ही के बने सिक्कों के दोष को अनुभव करते हुए गत महायुद्ध के प्रारम्भ में वस अर्थ प्राधिकारियों ने प्रामाणिक चांदी के सिक्के का मूल्य कम कर दिया और ऐसे सिक्के चालू किये जिनमें आधी चांदी थी।

अन्य सिक्के

नयी अठन्नी और चवन्नी, शुद्ध निकल की हैं जिनके अग्रभाग पर अशोक स्तम्भ का सिंह-शिखर, और पृष्ठ भाग पर अनाज की बालें अंकित हैं। नयी दुअन्नी इकन्नी और अधन्नी, तांबा-निकल के सम्मिश्रण से बनी हैं और इनके अग्रभाग पर सिंह-शिखर और पृष्ठ भाग पर अशोक-वृषभ की प्रतिमूर्ति अंकित है।

कांसे का नया पैसा, पहले के "बाबर" किस्म के पैसे से कहीं अच्छा है। यह गोल और आकार में उसी के समान है किन्तु इसके बीच में छेद नहीं है और उससे अधिक ठोस है। सब सिक्कों का नाम और मूल्य अंग्रेजी और हिन्दी (देवनागरी लिपि) में अंकित हैं।

इन नये सिक्कों में सामने की ओर राजा के सिर के स्थान पर अशोक स्तंभ का सिंह शिखर है। पैसे के अतिरिक्त अन्य सब सिक्कों के भार, आकृति और बनावट में कोई परिवर्तन नहीं और इन बातों के सम्बन्ध में नये तथा वर्तमान सिक्के एक से ही हैं। इन सिक्कों के पृष्ठ भाग के लिए भी नये डिजाइन बनाये गए हैं। विशुद्ध निकल के बने रुपये, अठन्नी तथा चवन्नी पर "अनाज की बालों" और दुअन्नी, इकन्नी व अधन्ने पर "अशोक वृषभ" की छाप है।

अग्रभाग पर अशोक स्तम्भ के सिंह-शिखर की तथा पृष्ठ भाग पर 'अशोक अश्व' की छाप होगी।

राजा के सिर की छाप वाले वर्तमान सिक्कों के साथ-साथ ये नये सिक्के भी चलते रहेंगे और पुराने सिक्कों को घिस जाने पर धीरे-धीरे वापस लिया जाता रहेगा। अभी दोनों तरह के सिक्के विधि-मान्य रहेंगे।

भारत सरकार का नया मन्त्रिमण्डल

ब्रिटेन का स्वावलम्बी जीवन

ब्रिटेन में एक निराली कम्पनी फर्नीचर के ऐसे बक्स बनाती है, जिनसे ग्राहक अपना विभिन्न फर्नीचर तैयार कर सकता है। बक्सों में अखरोट, ओक या गहरे रंग वाले बबूल की लकड़ी के चौखटे होते हैं जिन्हें किसी भी तरह का आवश्यक फर्नीचर बनाने के लिए पतले इस्पात, क्रोमियम युक्त खूंटी नलियों के जरिये आपस में जोड़ा व खोल कर फिर जोड़ा जा सकता है।

चौखटे पौन इंच महीन परत वाले तख्तों से तैयार किये जाते हैं जो न मुड़ते हैं और न झुकते या ऐंठते ही हैं। इन पर लगातार पालिश किया जाता है जिससे वे गर्मी और नमी से बचे रहते हैं। उन्हें आपस में जोड़ने के लिए पेंच, सरेस, कील या औज़ार जैसी किसी भी वस्तु की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह आपकी मर्जी है कि आप किताब, खाना तैयार करें या किसी मेहमान के लिए मेज तथा सामान तिपाई खड़ी करें।

चित्र नं० १ में तख्तों को जोड़ कर फर्नीचर का सामान तैयार किया जा रहा है। चित्र नं० २ में लकड़ी के दो-दो तख्ते एक स्थान पर एकत्र करते में २ दम्पति हैं। चित्र नं० ३ में दम्पति द्वारा स्वयमेव निर्मित आलमारी कितनी सुन्दर है।

नव प्रकाशन

[पृष्ठ १२ का शेष]

प्रकार करना चाहिए। और भिन्न-भिन्न धातुओं की तारों में बिजली का वहन किस प्रकार होता है। इन बातों को लेकर प्रश्नोत्तरात्मक विधि से उन लोगों के लिये लिखा है, जो कि बिजली-घरों में या उन ठेकेदारों के यहां काम करते हैं जो मकानों, सरकारी महकमों मे महाभवनों या कारखानों में बिजली लगाते हैं। ऐसे लोगों के लिए यह हिन्दी की पुस्तक सुगम रूप से लिखी गई है। इस पुस्तक के दो भाग अभी तक हिन्दी में प्रकाशित हुए हैं। शेष दो भाग भी शीघ्र प्रकाशित हो जावेंगे। यह पुस्तक उपाध्याय महोदय ने गुजराती में लिखी थी, पर इसका अनुवाद एक ऐसे व्यक्ति ने किया है कि जिसको इस विषय का ज्ञान विशेष न था। अतः जो भी वैज्ञानिक शब्द प्रयुक्त हुए हैं वे सब अंग्रेजी में ही हैं। उनको वे लोग नहीं समझ सकते हैं जो कि इस दिशामें ऐसी कम्पनियों में कामकरते हैं। यदि वैज्ञानिक शब्दों को सुगम भाषा में व्याख्या के रूप में या तरजी बना कर एक पृष्ठ पर दे दिया जाता तो यह पुस्तक सर्वसाधारण के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध होती।

—सबभद्र

'इतिहास'—मासिक बृहत्तर भारत विशेषांक, प्र० सं०—श्री विष्णुस्वरूप, दिल्ली।

दिल्ली से प्रकाशित 'इतिहास' मासिक का अगस्त का अंक 'बृहत्तर भारत विशेषांक' के रूप में प्रकाशित हुआ है। हिन्दी जगत में इतिहास जैसे विषय पर अनेक योग्य पत्रिकाओं की आवश्यकता है जो भारतवासियों को उनके महान भूत का परिचय करायें। किन्तु यह एक वास्तविकता है कि इस प्रकार के पत्रों की बहुत कमी है। ऐसी दिशा में 'इतिहास' के कार्य का महत्व और भी बढ़ जाता है और इस दृष्टि से उसका 'बृहत्तर भारत विशेषांक' एक सुन्दर प्रयास है। 'बृहत्तर भारत' 'सुमात्रा भी कभी हिन्दू भूमि था' 'इन्डोनेशिया में हमारी सभ्यता' 'प्राचीन भारत के गणराज्य', 'चीन और भारत', 'भारत का अन्य देशों से सांस्कृतिक संबंध', 'सुदूर-पूर्व में भारतीय उपनिवेश', और 'काश्मीर में पुरातत्व' आदि लेख पर्याप्त सामग्री पाठकों के समक्ष उपस्थित करते हैं। कहानियां तथा अन्य सामयिक लेख भी सुन्दर हैं, मुखपृष्ठ पर महाराणा प्रतापसिंह तथा चित्तौड़ के विजय स्तम्भ का तथा अंदर योगीराज श्री अरविन्द का चित्र है। अंक प्रत्येक दृष्टि से सुन्दर बन पड़ा है।

क्या चीनी कम्युनिस्ट हांगकांग पर हमला करेंगे ?

[पृष्ठ ११ का शेष]

गया तो शस्त्रास्त्रों की सहायता तो कर सकता है पर प्रत्यक्ष युद्ध का संकट सिर पर ओढ़ने के लिए वह कभी तैयार न होगा। साथ ही एक बात और भी है। चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी सुसंगठित और राजनीतिक दृष्टि से प्रौढ़ता को प्राप्त हो चुकी है। उसके नेता बहुत ही शांत, कूटनीति चतुर तथा अनुभवी पुरुष हैं। अतः उनके द्वारा कोई बहुत बड़ी भूल होने की संभावना बहुत ही कम है।

आज चीन के कम्यूनिस्ट चीन का औद्योगीकरण करने की ओर अपनी सारी शक्ति लगा रहे हैं। उन्हें माल और औजारों की इतनी अधिक आवश्यकता है, इसलिए वे दूसरे राष्ट्रों से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाने के लिए अत्यधिक उत्सुक भी हैं। कैंटोन के पतन के पूर्व जो अवरोध था उससे प्रमुख नगरों का औद्योगिक जीवन कठिन हो गया था कैंटोन का पतन होते ही वह अवरोध धीरे धीरे कम होने लगा है। यदि अब वे हांगकांग पर आक्रमण कर उसे अपने कब्जे में कर लेते हैं तो वह बन्दरगाह वैदेशिक व्यापार की दृष्टि से उनके लिए व्यर्थ सा बन जायगा और पहले की अपेक्षा अधिक प्रभावी अवरोध निर्माण हो जायगा।

जहां तक अंग्रेजों का सम्बन्ध है, वे इसे चाहे रत्न की तरह बहुमूल्य समझ कर चाहे अन्तर्राष्ट्रीय बन्दरगाह होने के कारण उसका व्यापारिक महत्व मान कर किसी भी दशा में अपने हाथ से नहीं जाने देंगे। उसकी सुरक्षापंक्ति बहुत ही सुदृढ़ बना दी गई है और जल, स्थल तथा नौ सेना वहां इतनी पर्याप्त संख्या में है कि वह किसी आक्रमण का मुकाबला कर सकती है।

इस प्रकार हांगकांग पर कम्यूनिस्टों के आक्रमण की विशेष संभावना न होने पर भी यह 'ठंडा युद्ध' अनिवार्य-सा है और इसका कुछ कुछ प्रारम्भ भी हो गया है। चीनी नागरिकों के साथ असमान व्यवहार आदि कुछ ऐसी चीजें हांगकांग में चल रही हैं। जिन्हें चीनी कम्यूनिस्ट सहन नहीं कर सकते। वहां चीन के तथाकथित युद्धापराधियों को संरक्षण मिल रहा है। और चीनी जनता की बहुत-सी संपत्ति भी वहां पड़ी हुई है। किन्तु 'ठंडे युद्ध' में भी वास्तविक युद्ध से अधिक साहस और समय की आवश्यकता होती है। अतः यह भी संभव है कि दोनों अपनी हठ थोड़ी-थोड़ी मात्रा में छोड़ दें।

इस प्रकार चारों ओर युद्ध के बादल छाये होने पर निकट भविष्य में हांगकांग पर चीनी कम्यूनिस्टों के आक्रमण की संभावना बहुत ही कम रह जाती है।

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त.

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं वे लोग विवाहेच्छु भवानन्द और लड़की के मामा रसिकलाल को समझाते हैं, और अन्त में संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह केवल कर्तव्य भावना से सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है, और वहां वेश्याओं की दशा का अध्ययन करती है। सुजाता हरिकिशन नामक एक सुसभ्य तथा सुन्दर युवक की ओर आकर्षित होती है। उसका मित्रवत मिलन प्रणय में परिणत हो जाता है। सुजाता को गर्भ रह जाता है, इसलिए वह हरिकिशन से विवाह का प्रस्ताव रखती है, किन्तु हरिकिशन उसे ठुकरा देता है। अन्त में निराश हो कर वह लाहौर छोड़ देती है काशी जा कर सुजाता ने अनिरुद्ध से कुछ छिपाये बिना अपने उद्धार के लिए विवाह का प्रस्ताव करती है।

[गतांक से आगे]

निक्को ने आगे पूछने का साहस नहीं किया।

कुछ देर सोच कर हरिकिशन ने पूछा—"अच्छा सुजाता नाम की कोई औरत यहां आती थी?" अभी तक हरिकिशन का दिमाग सुजाता से ही भरा हुआ था।

"क्या कहा? कौन?"

"सुजाता, शायद बैनर्जी।"

"हां, हां, कुमारी सुजाता यहां आती थी, उनका क्या?"

"कुछ नहीं, यों ही कह रहा था," हरिकिशन चुप हो गया। वह सोच रहा था।

पर निक्को ने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, उसने सोचा कहीं दाल में काला जरूर है। हरिकिशन के चेहरे को आंखों से मजन करती हुई वह बोली—"तुमने उन्हें कैसे जाना?"

"कैसे जाना?" सारा लाहौर और पंजाब उन्हें जान रहा है, मैं क्यों न जानूं। उनके लेखों से मुल्क में एक सनसनी आ गई है।

हरिकिशन इतना कभी नहीं बताता, पर चूंकि वह एक जगह फंस गया था, इसलिए अपनी जान बचाने के लिए उसने पूरी बात कह देना उचित समझा।

"अच्छा," निक्को ने कहा मानों वह अब समझ गई। उसने और भी कहा—"मेरे भी दुर्भाग्य की कहानी को उन्होंने छपवा दिया था।"

"हां।"

"इस कहानी में मेरा असली नाम नहीं दिया था, पर तुम समझ गये थे न?"

"हां, यह कौन सी मुश्किल बात थी! खूब समझ गया था।" हरिकिशन की आंखों के सामने एक दूसरी तस्वीर आ गई...

भूले हुये जमाने की कुछ बिखरी हुई तस्वीरें उसकी आंखों के सामने नाच गईं।

हरिकिशन ने कहा—"निक्को और करीब आओ"......

"यह मैं तो पास ही हूं, आना कैसे होता है।" अत्यन्त कोमल स्वर से निक्को ने कहा। अभी तक वह अपने हरिकिशन से प्रथम यौवन की उच्छलता देकर प्रेम करती थी। हरिकिशन को पास पाकर उसे ऐसा ज्ञात होता था कि उसने अपने खोये हुए मनुष्यत्व को वापस पा लिया है। उसके हृदय के बहुत जोर से बन्द किए हुए किवाड़ उसी के सामने एक दम से खुल जाते थे।

हरिकिशन ने कहा—"ऐसे इधर आ।" कह कह कर उसने निक्को की ठुड्डी को अपनी आंखों के सामने कर लिया। स्त्री शरीर की स्पर्श की तीव्र अनुभूति ने उसके अन्दर फैल कर उसे गम्भीर कर दिया। वह निक्को के मुंह से एक बित्ता दूर पर अपने मुंह को रख कर बड़ी देर तक उसे आंख गड़ाए देखता रहा, मानों वह अपने भूतकाल के साथ योगसूत्र स्थापित कर रहा था। उसने अकस्मात पहले से अधिक गम्भीर होकर निक्को के मुंह को खींच कर अपने मुंह के साथ मिला लिया, पर चुम्बन नहीं किया।

निक्को ने अनुभव किया कि हरिकिशन के ओठों में कोई गर्मी नहीं थी। वे संगमर्मर की मूर्ति की तरह ठंडे हो रहे थे, पर वे अधिक देर तक ठंडे नहीं रहे!.. कई मुहूर्त के अन्दर वे आग की तरह हो गये। और निक्को ने आकर्षणकारी दृढ़ बाहुओं में अपने को अर्पित कर दिया। आनन्द की एक तीव्र जलती हुई धारा उनके दुःखों का गला घोट कर और चेतना को थपकियां देकर सुलगती हुई बहने लगी। निक्को रोज अपनी देह को इसको उसको अर्पण करती रहती थी। पर वह जितना ही निष्क्रिय रूप से अपनी देह को अर्पित करती थी उतना उसका मन उसके गाहक से हटता जाता था। वह तो केवल व्यापार होता था, जिसमें कम से कम देकर अधिक से अधिक लेना ही उसूल समझा जाता है।

पर आज और बात थी।

हरिकिशन जब आता था, तब और ही बात होती थी। आज उसने अपने को पूर्ण रूप से अर्पण किया। अन्य दिनों में सिर्फ देह का सौदा होता था, पर आज देह, मन, आत्मा और उससे भी कुछ अधिक हो तो उसका सौदा नहीं, बल्कि अर्घ्य था

हरिकिशन अब निक्को के पास अधिकतर समय व्यतीत करने लगा।

[४०]

अनिरुद्ध और सुजाता की शादी के केवल दो दिन रहे थे। पुरोहित ठीक हो चुका था। अनिरुद्ध का चेहरा इन दो-तीन दिनों में ही ऐसा लटक गया था, मानों वह कई दिन से उपवास कर रहा है। सुजाता उसे बराबर आंख के सामने रखती थी जिससे कि वह भिड़क कर विद्रोह न कर बैठे। वह कोशिश करती थी कि अनिरुद्ध खुश रहे। पर अनिरुद्ध अधिक नहीं बोलता था, एक मासिक पत्रिका या ऐसा कुछ उठा कर पढ़ने का बहाना करता था। सुजाता बात करने की कोशिश करती थी, पर बात चलती नहीं थी।

सुजाता के विरुद्ध अनिरुद्ध के मन में धीरे धीरे एक शिकायत बढ़ती जा रही थी। वह यह है कि वह जब सुजाता के लिए इतना विराट् त्याग कर रहा है, तो सुजाता को यह चाहिये था कि वह उसे पूरा किस्सा बता कर उस आदमी को बता दे। अनिरुद्ध के मन में इस सम्बन्ध में बहुत ही भारी कौतूहल हो रहा था। इस बात को जान कर उसका क्या लाभ है, पर इस पर भी वह समझ रहा था कि उसे जानने का अधिकार है। जब कोई किसी विषय में यह समझ लेता है कि यह उसका अधिकार है, तो उससे वंचित होने पर उसे बहुत कष्ट होता है।

उस दिन यह भावी पति-पत्नी परस्पर के प्रति उदासीन हो कर कमरे में बैठे थे, इतने में अशोक ने वहां प्रवेश किया। अशोक को देख कर अनिरुद्ध की आंखें हमेशा की तरह चमकीं, पर अगले ही क्षण नवीन परिस्थितियों पर विचार कर बुझ गईं। सुजाता डरी।

अपनी बहन की ओर ध्यान न दे कर अशोक अनिरुद्ध के पास एक कुर्सी खींच कर बैठ गया। भूतपूर्व शिक्षक और छात्र में कोई तीन-चार महीने बाद भेंट हुई। अनिरुद्ध ने कहा—"क्या हाल है?" पर मन ही मन उसे शंका हुई कि यह शायद उस के लिए आया है। उसके माथे पर बल आ गये।

अशोक ने पूछे हुए प्रश्न का उत्तर न देकर और कोई भूमिका न बांध कर आकस्मिकता के साथ कहा—"अनिरुद्ध भैया, आप भी?" वह और कुछ न कह सका, गला रुंध आया। उसका यह प्रश्न मानो जूलियस सीजर के "और तुम भी ब्रूटस" का अनुभव था। सुजाता पास ही में कुरसी खींच कर करीब-करीब दोनों के बीच आकर बैठ गई।

अनिरुद्ध ने कहा—"क्या? क्या? मैं क्या?" अशोक मानो तैयार हो था, उसने अपना तोपखाना खोल दिया—"क्यों, आप अपनी पहली स्त्री के मौजूद रहते हुए दूसरी शादी करने जा रहे हैं। यह क्या है और? मैंने आप ही से बार-बार सुना है कि पोलीगैमी अर्थात् बहु-विवाह दासता का सबसे जघन्य रूप है। आपने ही कहा था कि पाश्चात्य के सामने पूर्व देश के लोग हार गये हैं इसका प्रधान कारण यह है कि यहां के लोगों में बहुविवाह की प्रथा थी और यहां के लोगों ने स्त्रियों की इज्जत करना नहीं सीखा। और आप ही इसे जारी रखने जा रहे हैं। अनिरुद्ध भैया, मैंने आपको इतना कमजोर नहीं सोचा था? आप अपने विचारों को कार्यरूप मे परिणत करने की उपयुक्त रीढ़ हैं, पर अब मैं देख रहा हूं कि यह धारणा गलत थी। भारतवर्ष में आज अच्छे विचारों की कमी नहीं है, भारतवर्ष आज जो मर रहा है तथा उसका सारा रक्त प्रतिक्रियावाद के विष से जहरीला हो रहा है, उसका कारण यह नहीं है कि

उसके लोगों में उन्हीं कल्पनाओं को कार्य रूप में अनुवाद करने की और उसके लिए जिस त्याग की जरूरत है, उसे करने की हम में कमी है।"

अशोक उत्तेजना के मारे कुरसी छोड़ कर खड़ा हो गया और कहने लगा— "जिस युग में मनुष्य नहीं जानता था कि बहुविवाह अपराध है, उस युग की बात अलग है, पर आप से अधिक इस बात को कौन जानता है कि यह एक अत्यन्त दुष्ट प्रथा है। आप अपने सुन्दर ढंग से हमारे सामने इस बर्बर प्रथा के विरुद्ध जिन तर्कों को दिया करते थे, वे न तो मुझे याद ही हैं और न उनकी पुनरावृत्ति की कोई आवश्यकता है। आप सब कुछ जानते हैं।" कह कर उसने बहन की ओर मुंह फेर कर कहा— "और दीदी, तुम तो सब जानती हो, फिर तुम इस अपमानजनक व्यवस्था को क्यों स्वीकार कर रही हो? अनिरुद्ध बाबू का (अशोक ने अनिरुद्ध के साथ बाबू शब्द पहली ही बार इस्तेमाल किया।) इसमें उतना अपमान नहीं है, बल्कि प्रचलित धारणाओं के अनुसार उनकी आत्मश्लाघा पुष्ट ही हो रही है, पर तुम अपना तथा अपने नारीत्व का बहुत अपमान कर रही हो। तुम कहोगी कि यह प्रेम है, पर समझ नहीं आता कि यह कैसा प्रेम है। इस प्रेम में कहीं पर जड़ में गलती अवश्य है, यह रोगग्रस्त असामाजिक प्रेम है।"

इस प्रकार से अशोक तीखे तीखे शब्दों की चोट करने लगा। ज्वालामुखी जैसे गर्भित धातु उगल कर अपने क्रोध को व्यक्त कर पास की जमीन को विश्राम नहीं देता है, उसी प्रकार से अशोक तीखे तीखे तर्क तथा वाक्य पेश करने लगा। सुजाता और अनिरुद्ध दोनों चुप रहे। अनिरुद्ध एक शून्य दृष्टि से जंगल के बाहर दूर आकाश की ओर ताक रहा था। सुजाता सिर नीचा कर बैठी हुई थी। उस पर तर्कों का कोई असर नहीं हो रहा था। यों वह खुद विपत्ति में न होती तो अशोक का क्रोध उसे बहुत सुन्दर लगता, पर इस समय उसकी अपनी इज्जत यहां तक कि अपनी जान विपत्ति में होने के कारण वह अशोक की बातों को गुस्ताखी और बचपन के रूप में ले रही थी। वह अपने लिए शंकित नहीं थी कि उस पर अशोक की बातों का कोई असर पड़ेगा, क्योंकि उसके लिए विवाह कोई मूल्यगर्भ भावुकता नहीं थी, एक असंडनीय क्रूर वास्तविकता के कारण ही उसे इस विवाह के लिए तैयार होना पड़ा था। सुजाता अनिरुद्ध के लिए डर रही थी।

अशोक का व्याख्यान जितना ही जोशीला होता जा रहा था, सुजाता को उतना ही भय होता जा रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि अनिरुद्ध का धैर्य समाप्त हो जाय और वह एकाएक फट पड़ कर विवाह के रहस्य को खोल न दें। वह डर रही थी कि कहीं अनिरुद्ध अशोक के सामने पूरे सत्य को रख कर अपनी सफाई न देने लगे। वह सोच नहीं सकती थी कि अशोक उसे एक व्यभिचारिणी तथा भ्रष्टा समझे। अनिरुद्ध की बात और थी। उसे बिना कहे काम नहीं बनता था, फिर अनिरुद्ध को कहना एक दीवार के कहने के बराबर था। अशोक के सम्बन्ध में उसे यह भरोसा नहीं था, यद्यपि वह उसका सगा भाई था।

अशोक का व्याख्यान सुन कर सुजाता दांत से दांत दबा कर बैठी रही। धीरे धीरे अशोक पर वह क्रुद्ध होने लगी। अशोक का वक्तव्य चाहे कितना ठीक हो, यह महज अनधिकार चर्चा थी। अशोक अपनी अनजान में उसकी हानि कर रहा है, नहीं तो उसका उद्देश्य अच्छा है, इस विचार से सुजाता को तसल्ली नहीं हुई। अशोक जब इस तरह बोलता गया तो एक बिंदु पर आकर सुजाता से और सहन नहीं हुआ, वह कुछ बोल भी नहीं सकी, पर उठ कर अनिरुद्ध की कुरसी के बायें हत्थे को पकड़ कर खड़ी हो गई।

अशोक के सिर पर जैसे खून सवार हो गया था। वह अधिकतर उत्तेजना के साथ कहता गया— "भारत की लुप्त स्वतन्त्रता के उद्धार के लिए आपने एक जमाने में प्राणों की बाजी लगा दी थी, कार्यक्षेत्र में जीवन के कुछ अमूल्य साल आपने जेल में काट दिये। इसके बाद प्लेग के सेवा कार्य में आपने कितनी विराट विपत्ति अपने ऊपर ली और आज बैजनाथ जी की मृत्यु के दो साल बाद आप ऐसा कृत्य करने जा रहे हैं, जिसे किस भी दृष्टि से देखा जाय निर्लज्ज ही कहना पड़ेगा। बैजनाथ जी की पवित्र स्मृति

—क्रमश:

भारतमें शिक्षा की दुर्दशा

★ श्री महादत्त

भारत, विभाजित रूप में, स्वतंत्र हो गया और उसे स्वतन्त्र हुए तीन वर्ष भी हो गये। ११९२ ई० में उसकी स्वतन्त्रता का अपहरण हुआ था। ७५५ वर्ष पीछे स्वातन्त्र्य-प्रभात का शुभ दर्शन असीम आह्लाद का हेतु होना चाहिये था, परन्तु जिन्हें स्वतन्त्रता-जन्य परिणाम देखने की उत्कण्ठा है वे निरन्तर ही निराश हुए हैं। सम्यक् दृष्टि से विचार करने पर इसका कारण यही ज्ञात होता है कि शिक्षा के जिस क्षेत्र में बढ़ने से चारों ओर उन्नति ही उन्नति होती उसी की उपेक्षा, सर्वतोभावेन की जा रही है। इससे अधिक और क्या विचित्र-जनक होगी कि शिक्षा के क्षेत्र में, हिन्दी और भारतीय संस्कृति के प्रचार में, देश के कल्याण की योजनाओं में 'ब्रेक पर-ब्रेक' लगाये जा रहे हैं, बाधाओं के पर्वत खड़े कर दिये गये हैं, उद्धार का उपाय सोचना तो बड़ी बात होगी।

रहना गिना जाना चाहिए। संस्कृत का सबसे बड़ा अपराध यह माना गया कि यह ब्राह्मणों की भाषा है। पर यह विचार भ्रान्ति-मूलक था। यह किसी ने न समझा कि यह इस विशाल देश की पवित्रतम भाषा है। इसी पर उसका जीवन है। यह तथ्य जिस दिन एकदेशीय समझ लेंगे उसी समय देश का मंगल होने देर न न लगेगी। हमारे कहने का प्रयोजन यह कि अहिन्दू अल्पसंख्यक जिस क्षेत्र या विभाग पर अधिष्ठित हो जायेंगे, उसी का विनाश या अधोगति होते देर न लगेगी। क्योंकि अल्पसंख्यकों की भाषा या संस्कृति न्यायतः जब बहुसंख्यकों की भाषा या संस्कृति पर हावी नहीं आ सकती तो अल्पसंख्यक पदाधिकारी प्रति पद और प्रत्येक अवसर पर उन्हें हानि पहुँचाने से बाज नहीं आ सकते। भारत में शिक्षा की दुर्दशा का यही मूल कारण है।

अतीत पर एक दृष्टि

११९२ से १७७२ ई० तक कुछ कम ६ सौ वर्ष विदेशी ही नहीं विधर्मी राज्य भारत में रहा। उसे भारतीय संस्कृति व शिक्षा से क्या प्रयोजन था। फलतः भिखारी प्रजा पर ही, जो अधिकांशतः हिन्दू थी यह भार पड़ा था जिसे उसने उसे सहर्ष वहन किया। राज का काम चलाने के लिए बादशाहों को जिन व्यक्तियों की अपेक्षा थी वे, स्वतः या अन्य मान्यताओं से फारसी- अरबी की शिक्षा पा गये। अनन्तर अंग्रेजों के चरण फिरे और साथ ही इस देश में दुर्दिन और दुर्भिक्ष आ गये! अकेले बंगाल की ८०,-००० देशी पाठशालाएं अर्थात् प्रान्त की जन संख्या के प्रति सौ मनुष्यों के पीछे एक शिक्षा संस्था, नष्टभ्रष्ट हो गई। समझ रखना चाहिये कि इनमें स्वतंत्र संस्थाओं को छोड़ कर शेष संस्थाएं संस्कृत की थीं। अंग्रेजी का व्यापक प्रचार आरम्भ हुआ। धीरे धीरे संस्कृत की पुस्तकें एक दिन में कम्पास तक हो गईं। ज्ञान का दीपक भारत से बाहर गया। संस्कृत पर अंग्रेज का वह प्रकोप नया नहीं था, उससे पहले मुसलमानों ने यही खेल खेला था। इस भाषा की पुस्तकें जला जला कर नष्ट कर दी गई थीं। उससे पहले पूर्व बौद्धों ने संस्कृत भाषा को अतीव आहत किया था। सच पूछिये तो संस्कृत को जितनी हानि बौद्धों ने पहुँचाई उतनी अन्य विदेशी जातियां और विधर्मी इसे नहीं पहुँचा सके। संसार के आज [illegible] (इन पंक्तियों के लिखने के समय) जहां आज भारतीय संस्कृत का पुनरुज्जीवित

अंग्रेजी राज्य की स्थापना से लेकर १९१८ ई० तक शिक्षा अखिल भारतीय विषय बना रहा। अनन्तर १९१९ के एक्ट द्वारा यह प्रान्तीय विषय बना दिया गया। इस अधिनियम के लागू होने पर जब प्रान्तीय मन्त्रि-मंडल बने तो अधिकांश प्रान्तों में शिक्षासचिव के पद पर गवर्नरों ने अल्पसंख्यक जातियों के प्रतिनिधियों को नियुक्त कर दिया क्योंकि नियुक्त करने का एकाधिकार गवर्नर को था और ब्रिटिश राजनीति बहु संख्यकों को दबाने के लिए पूर्ण रूपेण सजग थी। अभिप्राय स्पष्ट था। हिन्दुओं को शिक्षा क्षेत्र में पछाड़ने से ही उसने सन्तोष नहीं किया। युद्ध विभाग में १९२२ में रोमन लिपि जारी कर दी और मुसलमान तथा सिखों को संतुष्ट करने के लिए १९२६ में उर्दू तथा गुरुमुखी उक्त विभाग की अधिकृत भाषाएं बना दी गईं। इस देश का बंटवारा करने में केवल सिखों को एक भूभाग न देकर न जाने वह कैसे चूक गई! यद्यपि यह षड्यन्त्र अब तक है जिसे पूरा करने का यत्न अब भी जारी है। अनन्तर १९-३९ तक के सभी निर्वाचनों में जब जब नए मन्त्रिमंडल बने तब-तब अधिकतर प्रान्तों में शिक्षा मन्त्री का पद हिन्दू के अतिरिक्त अन्य धर्मावलम्बी को दिया गया। इस नीति का भयंकर परिणाम यह हुआ कि बम्बई बिहार जैसे प्रान्तों में, जहां कोई उर्दू को जानता तक न था, उर्दू का दावा स्वीकार हो गया। पूर्व प्रान्तों में तो यह कार्य कांग्रेसी मन्त्री मंडलों द्वारा सम्पन्न हुआ।

दूसरे विश्वयुद्ध में भारतीय सरकार ने विशेष गजट द्वारा यह घोषणा कर दी कि समस्त भारत में रेलवे स्टेशनों के नाम तथा आवश्यक सूचनाएं उर्दू में लिखी जायं। फलतः हिन्दी को अपदस्थ किया गया। यह सब दिखावट में केवल सैनिकों की सुविधा के लिए किया गया, परन्तु इसके पीछे राजनीतिक षड्यन्त्र था। युद्ध विभाग की उर्दू गुरमुखी प्रधान नीति अब तक जारी है। इस सारी दुरभिसंधि का प्रयोजन हिन्दी को मारना और उसके मर जाने पर संस्कृति का स्वयमेव नष्ट होना था। भारत के सौभाग्य से वह राज्य तो इस देश से उखड़ गया परन्तु दुःख की बात यह है कि उसकी नीति प्रच्छन्न रूप में अद्यापि वर्तमान है। हम भारतीयों या बहुसंख्यकों को, अथवा जो इस देश को अपना आराध्य समझते हैं, उन सबको एक मिली-जुली संस्कृति के नाम पर बहु भाषाएं सीखने को बाध्य किया जा

भारत की अपनी भाषा संस्कृति पर पहले बौद्ध फिर छः सदी तक मुस्लिम शासक प्रहार करते रहे। इसके बाद २ सदी तक अंग्रेज। और आज—

रहा है, जिससे दूसरा देश अपनी अतीत ज्ञान समृद्धि से भी वंचित हो जाय। इस देश का यह बड़ा दुर्भाग्य रहा है कि उसने कई शताब्दियों से व्यक्ति को अपने से बड़ा समझ लिया। इसी कारण उस पर बड़ी बड़ी विपत्तियां आईं। यहां तक कि देश का विभाजन हुआ। इसी कारण भारत सरकार के कई विभागों के मन्त्रिपदों पर वे सज्जन विराजमान हैं, जो एक क्षण भर के लिए उन पर रहने की योग्यता नहीं रखते। किसी को अतीत की सेवाओं का ध्यान

(शेष पृष्ठ २२ पर)

क्या रूस सचमुच विश्व-शान्ति चाहता है ?

[पृष्ठ ६ का शेष]

पर आधिपत्य जमाया है जिसमें तीन समूचे राज्य, अर्थात् लेटविया, लिथुऐनिया और अस्टोनिया सम्मिलित हैं।। और इन तीनों राज्यों की जनसंख्या १,८२,००,००० है। इसके अतिरिक्त रूस ने छः यूरोपीय राज्यों पर सम्पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर दिया है —पोलैंड, चेकोस्लावाकिया, हंगरी, रूमेनिया, बल्गेरिया और अल्बेनिया। यूनान और चीन, बर्मा और हिन्देशिया तथा मलाया इस बात को नहीं भूलेंगे कि उनकी भूमि पर सोवियट यूनियन ने कई युद्धों की व्यवस्था और सहायता की।

यदि आपको सोवियट नीति का सच्चा रूप देखना है, तो यूगोस्लाविया जैसे दूसरे साम्यवादी राज्य के प्रति उसके व्यवहार में देखिये। क्रेमलिन के नौकरों की क्या मजाल कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की मांग करें या उसकी आशा करें। जब टीटो ने सोवियट साम्राज्य के अन्तर्गत "औपनिवेशिक स्वराज्य" का सपना देखा तो रूस ने बिगड़ कर उसके विरुद्ध बलवा खड़ा कर दिया। जब इससे भी काम न चला तो उसने यूगोस्लाविया के साथ पहले अपने व्यापारिक सम्बन्ध तोड़े और बाद में अपने कठपुतलियों से वही कर्म कराया। यदि आप इतिहास में एक बड़ी शक्ति द्वारा अपनी आर्थिक अवस्था का अनुचित उपयोग कर एक छोटे राज्य पर अन्याय करने का उदाहरण देखना चाहते हैं तो आपको अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं है। केवल यूगोस्लाविया की बावत याद रखिये।

यह कितने आश्चर्य की बात है कि रूस जैसे देश जिसके पास आक्रमणकारी साम्राज्यवादिता का ऐसा रिकार्ड है, शांति प्रेम का स्वांग रचता और रचने पाता है, जैसा कि "शांति पक्ष यूनियन" और "राष्ट्रीय शांति परिषद्" ने, जो ब्रिटेन की सभी शांतिवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती हैं, अपने अनुभवों से सीखा है। साम्यवादी आंदोलन में शांतिप्रियता का नाम निशान भी नहीं है। शांति की अपीलों पर हस्ताक्षर करने की प्रार्थनाएं और प्रोत्साहन के साथ साथ पश्चिम की असाम्यवादी सरकारों की नितान्त निन्दा भी रहती है और सचमुच उन सब की निन्दा, जो साम्यवादी दल के निर्धारित पथ से किंचित मात्र भी च्युत होने का दुस्साहस करते हैं।

जिस तरह साम्यवादी शब्दकोष में "जनतन्त्र" का अर्थ जुल्म होता है, उसी प्रकार "शांति" शब्द आक्रमणकारी के सामने घुटने टेकने का पर्यायवाची है। और इतना तो हम जानते ही हैं कि शांति के शत्रु को खुश करना युद्ध को आमंत्रित करना है। आज नहीं तो कल। सोवियट रूस की भयंकर साम्राज्यवादी नीति के समर्थकों को पहचानना और इस "शांति आन्दोलन पर से आवरण" हटाना सब जगह के शांति प्रेमियों का कर्तव्य है। इसी लिए मजदूर दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति ने यह कहा है कि मजदूर दल की सदस्यता के साथ साथ "ब्रिटिश शांति समिति" और उसकी स्थानीय कठपुतली समितियों की सदस्यता सामंजस्यपूर्ण नहीं है और ऐसी समितियां बहिष्कृत संगठनों की सूची में सम्मिलित कर दी गई हैं।

आज की राखी

श्री नरसिंह पंडित

आज रक्षा बन्धन है, राखी बांधने का पवित्र दिन। युग-युगों से चले आते हुये भगिनियों के अन्तर्गभीर प्यावित स्नेह की रक्षा के निमित्त उस स्नेह की वेदी पर अपना सर्वस्व अर्पण करने को उन्मत्त आतुर भाइयों की शपथों का स्मरण दिलाने वाला यह प्रति वर्षीय त्यौहार! अनादि काल से भारतीय-संस्कृति का पुनीत प्रभाव अपने पावन अंक में छिपाये राष्ट्र के गौरवमय इतिहास का साक्षात् कराने वाला यह पावन पर्व! सुख शांति के काल में हर्ष के हिलोरों पर झुलाने वाला एवं देश के संकट काल में यौवन की मादकता से उन्मादित और वसन्त की दिगन्त-व्यापिनी सुषमा से स्नात जीवन पुष्प को मर्यादा की वेदी पर सहर्ष चढ़ाने को उज्जीवित कराने वाला यह महान् राष्ट्रीय पर्व रक्षाबन्धन पुनः आया है। दिवसों के उत्थान पतन एवं घात-प्रति-घात के अनन्तर पूरे एक वर्ष के बाद अपनी छाती में भारत की अजस्र, इतिहास छिपाये यह रक्षा बन्धन पुनः आया है, एक नवीन संदेश लेकर!

वामन भगवान् अनन्तकाल के लिये शरणागत राजा बलि की चाकरी करते रहे। भगवान होकर भी पार्थिव राजा का चाकर! कितना हृदय को हिला देने वाला भयावह प्रसंग था वह! असह्य हो उठी थी वह दासता! भगवान् वामन ने तीन पग में तीन लोक और अर्द्ध पग में बलि की काया को नाप कर रक्षाबन्धन के सूत्र से ही बांध कर सर्वदा के लिए उसे पाताल भेज दिया और देवेन्द्र की, देवलोक की, पावन संस्कृति और धर्म की रक्षा की। और वही राखी आकाश की मन्द मन्द मुस्कराती सवेग वर्षा में स्नान करती भोग और विलास, सुख और ऐश्वर्य का स्मरण दिलाने नहीं आती है वरन् आती है कर्तव्य की पुकार और रक्षा का संदेश लेकर।

यों तो रक्षा बन्धन, राखी बांधने का पुनीत दिन, प्रत्येक वर्ष आता ही है। परन्तु आज की राखी का अपना एक विशिष्ट महत्व है। इतिहास साक्षी है कि जब-जब अबला नारियों पर आघात हुआ, अनेक अबलाओं का सुहाग छीना गया, सतीत्व की होली खेली गयी, तब उनके रक्षार्थ शस्त्रों की झंकार से खेल उठने को भारतीय पुरुषत्व गरज उठा था।

आज की राखी हमें मदान्ध म्लेच्छों की बर्बरता से किसी पतित कुमारी के सुहाग के लिए जीवन सर्वस्व की बाजी लगाने की प्रेरणा मात्र नहीं देती। आज वह एक अपहृता सीता या द्युत सभा में खड़ी द्रौपदी की करुण पुकार मात्र नहीं है। आज वह मर्यादा के रक्षार्थ अपने शैशव एवं यौवन की अनन्त आकांक्षाओं को अपने अन्तर में छिपाये कुम्हलाये और अश्रु-सिक्त नेत्रों से सिसकने वाली कोमलांगी अबलाओं का स्मृतिचिन्हमात्र नहीं है। वरन् सम्पूर्ण राष्ट्र वृक्ष के मूल पर आघात की एक करुण कहानी है। आज भारत के जन-जन के हृदय-हृदय में वेदना है, टीस है, कराह है, उनके जीवन की आधार शिला मानों हिल उठी है। स्वतन्त्रता के पूरे तीन वर्ष बीत जाने के बाद भी आज भारतीय जीवन में न सुख है और न शांति! और न सुख शांति के लक्षण ही दिखाई पड़ रहे हैं। अर्द्ध नग्न और अधपेट रह कर जीवन व्यतीत करने वाले अश्रु से लथपथ भारत की कोटि-कोटि संतान आज आंसू पीकर जीवन के क्षण-क्षण काट रही है। स्वतंत्रता के शंखनाद पर दहाड़ उठने वाली मानवकाया आज विवशता एवं दीनता के झंझा में सांस ले रही है। आहुतियों पर तड़प उठने वाला पुरुषत्व मृत्यु की गोद मे विश्राम करने को तत्पर हो उठा है। स्वतन्त्रता की वेदी पर सर्वस्व अर्पण करने को सतत उन्मत्त, आतुर, लप-लप अलमस्त जवानी उचित-मार्ग निदर्शन के अभाव में विलासिता एवं भोग के पाप-पंक में फंस कर मौत की घाटी मे छटपटा रही है।

आज चारों ओर विवशता है, कराह है आंसू की सरिता है, भारतीय जीवन की छटपटाहट है। कदम-कदम पर मौत का नगाड़ा है, विनाश की खिलखिलाहट है। सीमान्त दस्युओं के नुकीले चरण द्वय से प्रकम्पित अर्द्ध बंगाल की फटी नंगी छाती से रक्त-प्रवाह जारी ही है। कवि रवीन्द्र एवं वन्दावैरागी की पावन धरित्री का कण-कण आज भी चीत्कार कर रहा है। अपने ही देश में विदेशी बने मां की कोटि-कोटि संतति की करुण पुकारों से अंतरिक्ष की छाती हिल उठी है! लहलहाते हुए खेत नष्ट किये गये हैं। दूध मुंहे बच्चे भाले की नोक पर छोके गये हैं। सतीत्व की लूट हुई और लज्जा की हाट लगी है। भगिनियों की सुगन्धित वेणियों की वर्तिका बना कर जश्न मनाया गया है। अलमस्त यौवन कतर डाले गये हैं। अधखिली कलियां मसल डाली गयी हैं और अभी भी लप-लप निराश्रित भाइयों की करुण पुकारों से युग-युगान्तर वाहिनी जाह्नवी की तरंगमालायें विक्षुब्ध हो रही हैं।

विजयोन्मत्त आज भाखू की अपक्षपाती लाल जिह्वा भारतीयता को निगल जाने को आतुर हो उठी महाकाल की तरह दहाड़ता साम्यवाद के लिए उर्वर भूमि तैयार करता हुआ भयंकर दुर्भिक्ष मानों समग्र भारतीय जीवन को निज प्रखर जबड़ों से चबा डालने को दौड़ा आ रहा है।। भारतीय जीवन का आधार धर्म, संस्कृति, सभ्यता एवं परम्परा एक विशाल घर के भीतर कैद हो कर बलि पशुओं का सा परम कारुणिक जीवन बिता रहे हैं। नेताओं के आह्वान पर आह्लादित होकर तलवारों की तीक्ष्ण धार तक पर खेल जाने वाले एक ही मिट्टी की सन्तान विदेशी बने वर्जित प्रदेश में नित्यप्रति अपने अरमानों के शव बनाकर भारतीय जीवन बिता रहे हैं। मंजुल-मातृ मूर्ति की आराधना जघन्य अपराध हो रहा है। उनके लिए, 'हिन्दू-होना' एक विषधर व्याल के समान उनके गले में लटक रहा है। पुरुषोत्तम राम का भारत, कर्मयोगी कृष्ण का भारत, क्षत विक्षत अवस्था में दैहिक, दैविक, भौतिक-तापों का आह्वान करता हुआ दैन्य, नैराश्य, असंतोष एवं पतन के चौराहे पर खड़ा चीत्कार कर रहा है। ऐसे ही समय में, हां ऐसे ही सत्पु पर्व पर वह वंदनीय पर्व पुनः आया है, एक साथ ही मरण और जीवन का संदेश लेकर!

स्नेह का परम सुदृढ़ सूत्र

यह राखी रंग-बिरंगे धागों का एकत्रीकरण मात्र नहीं है, वरन् राष्ट्र-जीवन की जलती हुई कहानी का एक आज्वल्यमान पिण्ड है। इसमें माता की ममता है बहिन की आकांक्षा है और है निर्बल राष्ट्र जीवन की चीत्कार। कोटि कोटि अर्द्ध-नग्न अधपेट जीवन व्यतीत करने वाली मानवता को मौत की घाटी से निकालने का पुनीत सबक है। राजनीतिक कुचक्र के शिकार बने, प्रान्त भेद, भाषा भेद, वर्ग भेद, जाति भेद की गहन तमिस्रा को छिन्न-भिन्न कर करने वाला विद्युत का अलौकिक प्रकाश है। आज हमें इस राखी के महत्व को समझना है और समझाना है दीर्घ पावन परम्परा पर अधिष्ठित इसका वैशिष्ट्य! आज शत-सहस्र बहिनें कर मे राखी लिए दयार्द्र नेत्रों से ताक रही हैं। आज एक द्रौपदी के एक सीता की गुहार नहीं, लक्ष-लक्ष सीतायें और द्रौपदियां मांग का सिन्दूर खोकर और कर की चूड़ियां फोड़ कर, सुहाग के प्रदीप जलाकर मार्ग प्रशस्त करती नेत्रों में नीर और करों मे राखी लिए भारतीय पुरुषत्व की बाट निहार रही हैं, वह पुरुषत्व जो परकीयों के भी त्राहि त्राहि करते शरण में आने पर मौत से होड़ लेने को मचल पड़ता था। कर में राखी लिये शरण में आये शरणागतों की रक्षा के लिये अपने जीवन-सुमन को हसते-हंसते आग की लपटों में झोंक देता था। परन्तु बहिनों की करुण पुकार बिखरे केश, धुली मांग, फूटी चूड़ियां, रक्त रंजित साड़ियां, क्या हमारे हृदय को टुकड़े टुकड़े नहीं कर देतीं। जीवन सर्वस्व की बाजी लगाने की प्रेरणा नहीं देती?

अत: आज हर्ष और आनन्द करने का समय नहीं है। उत्तरदायित्व निबाहने का समय है और है कर्तव्य की कसौटी पर खरे उतरने का पावन मुहूर्त। परकीय अभिमानों के समूह का भेदन करने वाले पार्थ-सुतके सात्विक शौर्य की की भांति, एक सीता के लिये कुल समेत रावण का उन्मूलन कर स्वर्णभूमि को क्षार-क्षार बना डालने वाले श्री राम की भांति, मर्यादा पर आघात के समय शस्त्रो की झंकार पर मृत्यु से खेलने वाले राणा की भांति निज, विक्रम प्रकट करने को सन्नद्ध हों। फूलों के शृंगार करते हुए भी शूलों की शय्या पर सहर्ष विश्राम कर कलपती बहनों के आंसू पोंछने मे समर्थ होना—आजकी राखी का यही संदेश है।

———

रक्षाबन्धन

[पृष्ठ १० का शेष]

मेरे रहते तुम्हें क्या चिन्ता है ? कल माँ के आते ही कार से चल देंगे।" अपने उस समय कहे हुए शब्दों को कुछ के कोने में खड़े हो कर रात्रि में गुण्डों की आहट लेते हुए यशवन्त ने मन में दुहराया।

और माँ आज भी नहीं आयी। सोचा कि कब तक और प्रतीक्षा करें। कहीं ऐसा न हो जल्दी में १३ के स्थान पर १२ लिख गई हो। कहीं ऐसा न हो कि वे वहां से चलें और वह आ जावे। हृदय जिससे स्नेह करता है प्रतिक्षण उसकी कुशलता के विषय में शंकित रहता है। यशवन्त को क्या पता था कि दंगों के समाचार पाकर उसके मामा ने अपनी बहिन को आने नहीं दिया है।

चिन्ता और आशंका ने सारी रात उसके पलक लगने नहीं दिये। प्रातः लगभग नौ बजे माँ का कुशल पूछने वाला तार मिला। उत्तर का तार देकर उसने नौकर को तार घर भेजा, और चलने की तैयारी की। घर की सभी मूल्यवान वस्तुएं जो साथ ली जा सकती थीं, कार में रखीं। शकुन्तला तथा वीणा को जल्दी करने को कहता हुआ वह दौड़ता हुआ अपने कमरे में पहुंचा और मेज की दराज के अन्दर की एक चोर दराज में उसने हाथ डाला। दूसरे ही क्षण पिस्तौल उसके हाथ में चमक उठी। खोल कर देखा, सातों गोलियां पूरी थीं। एक गोली नाल में चढ़ा कर उसने उसे पतलून की जेब में शीघ्रता से रख लिया। उसके मन में बारबार यह आशंका उठ रही थी कि राखी के मान की रक्षा का अवसर आ गया है।

तार ले जाने वाला नौकर लौट कर नहीं आया। आवश्यकता से बहुत अधिक देर तक प्रतीक्षा करनेके बाद यशवन्त ने मोटर स्टार्ट की। वह खुद ही चला रहा था। दूसरा नौकर उसके पास ही अगली सीट पर था। शकुन्तला तथा वीणा दोनों पीछे बैठी थीं। वातावरण की गंभीरता सभी के चेहरे पर प्रकट थी। निकलते समय एक बार सभी ने आंसू भरे नेत्रों से घर को नमस्कार किया और यशवन्त ने कार आगे बढ़ाई। सूर्यास्त के पश्चात् का अंधकार फैल चुका था।

× × ×

सहसा सड़क के मोड़ पर मोटर की बत्तियों के प्रकाश में सामने का मार्ग अवरुद्ध दिखाई पड़ा। पेट्रोल के ड्रम, कटे पेड़ तथा गाड़ियों से सड़क एक कोने से दूसरे कोने तक रोकी हुई थी। यशवन्त का मन कांप उठा। अगर बचाने के लिए तुरन्त ब्रेक लगा कर तेजी से दौड़ती हुई कार को उसने रोका। भावी आशंका से उसका मन डोल उठा। शकुन्तला तथा वीणा की चीख तालुए से लग गई। नौकर तो बिल्कुल कांप रहा था।

बैक गियर लगा कर यशवन्त ने गाड़ी पीछे को काटी ही थी कि घूम कर जिधरसे आया है उधर ही लौट जावे, कि बिल्कुल उसके बराबर, गाड़ी के बाहर एक दीर्घकाय व्यक्ति आकर खड़ा हो गया। उसके हाथ की बन्दूक यशवन्त की ओर तनी हुई थी।

"गाड़ी रोको !"

दूसरे ही क्षण कितने ही लोगों ने गाड़ी को घेर लिया। कुछ लोगों ने दरवाजा खोला और यशवन्त को बाहर खींच लिया। नौकर दूसरी ओर खींचा जा चुका था। इञ्जिन बन्द हो चुका था, किन्तु बत्तियां जल रही थीं।

टार्च का प्रकाश यशवन्त के चेहरे पर पड़ा। "हिन्दू, काफिर" और कहने वाले ने उसके मुंह पर थूक दिया। दोनों ओर से दो बलवान लोगों ने उसे जकड़ा हुआ था। सामने वाले ने छुरी उठाई।

टार्च का प्रकाश कार की खिड़की तक पर घूमा। यशवन्त की इच्छा हुई कि छुरी देरी क्यों कर रही है। "ठहरो अभी मत मारना," सिमटी हुई, भयभीत हरिणी के समान कंपकंपाती शकुन्तला तथा वीणा के मुख पर प्रकाश सीधा पड़ रहा था। "साथ में हूरें भी हैं, अहः हः ह। नहीं, पहिले इसके सामने, मोटर की रोशनी में ......" और बलवान हाथों ने दोनों को बाहर खींच लिया।

"भैया," शकुन व वीणा का क्रन्दन उसके हृदय को चीर गया। ओह ! ये नर-पिशाच क्या करेंगे। "हां, हां, तेरे भैया ही के सामने" शब्द उसके कानों में टकराये और चार दुष्ट दोनों लड़कियों को घसीट कर मोटर के प्रकाश में ले आये।

एक बार उसने जोर मारा किन्तु उसे पकड़ रखने वालों में से एक ने खींच कर एक थप्पड़ उसके मुंह पर दिया, "साला, चुप नहीं रहता !" शकुन्तला और वीणा की चीखें उसके हृदय को बेध रही थीं। चार दुष्ट उनसे उलझे हुए थे और उन्हें भूमि पर गिराने का प्रयत्न कर रहे थे। शेष चारों ओर खड़े हंस रहे थे। उसका खून खौल उठा। उसके हृदय का भय — राखी की लाज, बहिनों के सम्मान का भय — उसके आगे खड़ा हो गया। एक क्षण में उसने यह अनुभव किया कि जीवन का अन्त आवश्यक। मरना व्यर्थ है, और मरे भी तो शकुन, वीणा को इन राक्षसों के हाथ में छोड़ कर ! निस्सहाय ने उसके मन में दृढ़ निश्चय जागृत किया।

सहसा उसने अपनी नसों में असाधारण शक्ति का संचार अनुभव किया। भय का कहीं कोसों पता न था। एक ही झटके में उसने अपना बांया हाथ छुड़ा कर दाहिनी ओर वाले व्यक्ति की नाक पर भरपूर घूंसा जमाया। दूसरे ही क्षण उसकी पकड़ में ढीला हुआ दाहिना हाथ झटक कर सावधान होते हुए बांयीं ओर वाले की नाक पर जा बैठा। तुरन्त ही लोग उस पर टूटे किन्तु तब तक जेब की पिस्तौल उसके हाथ में आ चुकी थी। बिजली से भी अधिक तेजी से धड़ाके के साथ अग्नि की लपटें निकलीं। तीन व्यक्ति धराशायी हो गये।

क्षण भर के लिए दुष्टों में आतंक छा गया। यशवन्त का मस्तिष्क विद्युत्-वेग से कार्य कर रहा था। चार गोलियां अभी और शेष हैं। पिस्तौल पुनः गर्ज उठी। दो गोलियां शकुन और वीणा के तथा शेष दो उन्हें पकड़ रखने वाले दुष्टों के हृदयों को छेद कर निकल गयीं। पिस्तौल खाली हो चुकी थी।

अब तक दूसरे पक्ष से गोली चलनी प्रारम्भ हो चुकी थी। किन्तु यशवन्त तो भय के परे की भूमि पर था। निश्शंक भाव से वह आगे बढ़ा। सामने ही उसकी प्रिय बहिनें तड़प रही थीं। उड़ती हुई एक गोली उसकी दाहिनी बांह के पार हो गयी। वह लड़खड़ाया किन्तु दूसरे ही क्षण अदम्य साहस कर बहिनों के सिरहाने बैठ गया। अत्यन्त प्यार से शकुन व वीणा के सिर उसने दोनों हाथों से ऊपर उठाये। मोटर की अभी तक जल रही बत्तियों के प्रकाश में उसकी दृष्टि मरती हुई बहिनों की दृष्टि से मिली। दूसरे ही क्षण एक गोली उसकी पीठ में लगी और हृदय को बेधती हुई दूसरी ओर निकल गई, और वह भी उनके ऊपर ही लुढ़क गया।

[पृष्ठ १२ का शेष]

रखता है तो उसे एक बड़ी पेन्शन देकर पुरस्कृत किया जा सकता है, उसे ऐसा सार्वजनिक पर उत्तरदायित्व हीन गवर्नर जैसा पद देकर सम्मानित किया जा सकता है, विदेश में राजदूत का पद दे कर इसकी प्रतिभा का चमत्कार देखा जा सकता है। परन्तु उसे ऐसे विभाग का अधिष्ठाता बनाकर बैठाना सरासर अन्याय है, जहां बैठ कर वह अपनी नीति से देश की प्रगति का बाधक हो जाय। फिर भारत की राज भाषा से अनभिज्ञ पुरुषों को ऐसे विभागों का सौंपा जाना, जिनके कारण भाषा का प्रचार ही रुक जाय कौन बुद्धिमानी है ? रेलवे, युद्ध आदि विभागों की यही दशा है और शिक्षा विभाग तो ऐसे सम्मानित महानुभावों का अखाड़ा है, जहां के महानुभाव दिन हिन्दी-विरोधी नीति का आविष्कार अथवा परिष्कार करते ही रहते हैं।

हमारा निर्जीव, निष्प्राण और अभारतीय विधान

[पृष्ठ ७ का शेष]

भी हम उसे समझते थे, अपने वास्तविक जीवन में उतारने के लिए होना चाहिए था, जनता के सामने गांधीवाद के तरीकों पर चलने के लिए तैयार करना था और इस कार्य के लिए आज की दुनिया को शिक्षा और प्रचार के जितने तरीके मालूम हैं उन सभी उचित तरीकों से काम लेना था। हमें भारतीय नागरिक के सम्मुख एक आदर्श, एक उद्देश्य और दुनियां की एक ऐसी तस्वीर जैसी गांधीवाद कल्पना करता है, रखनी चाहिये थी, हमें अपने नागरिक में इस गांधीवादी सिद्धान्त के अनुरूप बनने वाली दुनियां के निर्माण के लिए एक कसक, एक आंतरिक पुकार पैदा करनी चाहिये थी और तब हमें अपना राजनीतिक विधान तैयार करना चाहिये था, तभी हम ऐसी आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था कर सकते, जो हमारे नागरिक में उच्चतम और सर्वाधिक व्यापक वैयक्तिक अभिव्यक्ति और सामाजिक प्रेरणाओं को प्रादुर्भूत करती। हमने ऐसा नहीं किया। हमने विधान बनाने का कार्य कुछ वकीलों को सौंप दिया, जिनसे यह बिलकुल उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि वह गांधीवाद या जीवन के किसी भी ऐसे न्यारे दार्शनिक सिद्धातों के प्रवक्ता हो सकते थे। पाश्चात्य जगत मे व्यापक न्यायशास्त्र, उसका विधि और नियम के विशेषज्ञ वे थे और उसी के अनुरूप उन्होंने विधान के नाम पर एक ऐसा कानून का मसविदा तैयार किया जो अंग्रेजी और अमेरिकन विधान का समन्वय मात्र है। बीच बीच में कहीं पुराने गवर्नमेंट आफ इण्डिया ऐक्ट और भारतीय दण्डविधान का सहारा लिया गया है। कानूनी मसविदे के रूप में इसका जो कुछ भी महत्व हो, पर यह निष्प्राण और निर्जीव है और किसी को भी प्रेरणा देने में असमर्थ है। यह व्यक्ति और समाज के जीवन का कुछ भी पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकता।

आदर्शशून्यता का परिणाम

इसका परिणाम स्पष्ट है। हमारे देशवासी स्वभावतः यह नहीं समझते कि वह संसार को अपनी कल्पना के सांचे के अनुरूप सुन्दरतर बनाने वाले संग्राम के सिपाही हैं। इसका परिणाम यह है कि हम अपनी राष्ट्रीय सरकार के प्रति वैसे ही रूखे हैं और उसकी वैसी ही कटु आलोचना करते हैं, जैसी कि हम किसी दूसरी सरकार की करते। सरकार उनके अन्दर कोई भी अनुकूल वातावरण उत्पन्न करने में असफल है और वह जनता से केवल आर्थिक आधार पर अपील कर सकती है। यह सब हम सब उनमें कार्य-

... भीम उत्साह नहीं पैदा कर सकती, जिसकी जरूरत भौतिक उन्नति के साधनों की कमियों पर थोड़े ही दिनों में विजय पाने के लिए होती है। रूस की सरकार ने यह कार्य कर दिखाया।

कोई भी आदमी यह नहीं सोचता कि भारत सोवियट समष्टिवाद का शिकार हो, किन्तु भारतीय दण्ड विधान की धाराएं उसकी बाढ़ को रोक न सकेंगी। जेलर और मजिस्ट्रेट विचारों और आदर्शों की लड़ाई में कभी भी सफलतापूर्वक टिक नहीं सकते। हम इस साधारण तथ्य को भी स्वीकार करने से इनकार करते हैं। समष्टिवाद के प्रतिरोध के लिए हमारे पास न तो विचार हैं और न आदर्श। हम केवल सुशासन और आर्थिक उन्नति की बात करते हैं और यह कोई भी दल जो सरकार बनायेगा कर सकता है। कांग्रेस का कार्यकर्ता जो इन विघटनात्मक आदर्शों और कार्यों के विरुद्ध सबसे बड़ा सहारा हो सकता था वह भी लाचार है। उसके पास कम्युनिस्ट का प्रत्युत्तर देने के लिए कोई तर्क नहीं। कल की दुनिया की कोई तस्वीर जो कि वह कम्युनिस्ट तस्वीर से सुन्दरतर रूप में लोगों के सामने रख सके उसके पास नहीं है।

[पृष्ठ ८ का शेष]

ही मुझे उस हाथ के अभिषेक की प्रेरणा दी, जिसने दिव्य वर्ण-गन्ध-मधु वाले गीत सुमनों से भारती की अर्चना भी की है। और बर्तन मांजने, पानी भरने जैसी कठिन श्रम-साधना से उत्पन्न स्वेद बिन्दुओं से मिट्टी का शृंगार भी किया है।

मेरा प्रयास कभी जीवन्त बवण्डर को कच्चे सूत में बांधने जैसा था या किसी उच्छृंखल महानद को बाधी के तटों में सीमित करने के समान, यह सोचने-विचारने का तब अवकाश नहीं था। पर आने वाले वर्ष निराला जी के संघर्ष के ही नहीं, मेरी परीक्षा के भी रहे हैं। मैं किस सीमा तक सफल हो सकी हूं, यह मुझे ज्ञात नहीं, पर लौकिक दृष्टि से नि:स्व निराला हृदय की निधियों में सबसे समृद्ध भाई है यह स्वीकार करने में मुझे द्विविधा नहीं। उन्होंने अपने सहज विश्वास से मेरे कच्चे सूत के बन्धन को जो दृढ़ता और दीप्ति दी है, वह अन्यत्र दुर्लभ रहेगी।

●

वीर अर्जुन साप्ताहिक का मूल्य

वार्षिक	१२)
अर्धवार्षिक	६॥)
एक प्रति	चार आना

क्रिया और प्रतिक्रिया

[पृष्ठ ६ का शेष]

जोश यहां तक बढ़ा कि उसने राजधानी में संगीत की भी मनाही कर दी।

जो शासक केवल दमन द्वारा प्रजा के असन्तोष को दूर करने का यत्न करता है, वह बड़े संकट में पड़ जाता है। यदि दमन के शिकंजे को कम करता है तो असन्तोष के बढ़ने की आशंका हो जाती है, और यदि दमन को जारी रखता है तो विद्रोह का खड़ा होना अवश्यम्भावी हो जाता है। फलत: दमनकारी शासक मानो भाग्य की रस्सी से बंधा हुआ नाश की खाई की ओर खिंचा चला जाता है। वह जितना ही अधिक दमन करता है, असन्तोष उतना ही उग्र रूप धारण करता है, जिसका अन्तिम परिणाम यह होता है कि उनके राज्य की जड़ें हिल जाती हैं।

औरंगजेब की संकीर्ण नीति ने अकबर के लिखे हुए उज्ज्वल अक्षरों पर मानो हड़ताल फेर दी। उसके शासन के लगभग ५० वर्षों में भारतीय संस्कृति का वह मिश्रित रूप, जो अकबर की उदारनीति के प्रभाव से जन्म ले रहा था, बहुत कुछ लुप्त हो गया। हर दिशा में विक्षोभ और उससे उत्पन्न होने वाली तबाही के दृश्य दिखाई देने लगे। हिन्दी साहित्य की प्रगति तो रुक ही गई, फारसी का साहित्य निर्माण भी अवरुद्ध हो गया। जो थोड़ी बहुत नई इमारतें बनीं, उनमें से हिन्दूपन के चिन्ह यत्नपूर्वक निकाल दिये गये। संगीत का गला तो घोंट ही दिया गया। हम यह कहें तो अनुचित न होगा कि औरंगजेब के राज्यकाल में न केवल हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों के मिश्रण का कार्य बन्द हो गया, सामान्यरूप से संस्कृति का प्रवाह ही रुक गया। औरंगजेब ने अपनी संकीर्ण धर्मनीति की बलिवेदी पर दोनों संस्कृतियों को बलिदान कर दिया।

———

विविध समाचार

● भारत के सूचना मंत्रालय ने इस वर्ष के स्वाधीनता-दिवस समारोह की ६०० फुट लम्बी फिल्म का निर्माण किया है। इस फिल्म में अनेक प्रमुख दृश्यों मे एक राष्ट्रपति द्वारा देश के नाम दिये संदेश, प्रधान मन्त्री द्वारा लाल किले पर ध्वजारोहण तथा कलकत्ता, बम्बई आदि स्थानों पर मनाये गये समारोह के भी दृश्य हैं।

● सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ श्री खेमचन्द प्रकाश का गत सप्ताह बम्बई के हरकिशनदास अस्पताल में लम्बी बीमारी के बाद देहावसान हो गया। वह रणजीत कम्पनी में बहुत समय तक संगीत निर्देशक के रूप मे कार्य करते रहे थे। उनके प्रसिद्ध फिल्मों मे 'तानसेन', 'परदेसी,' 'सिन्दूर' और 'महल' हैं।

● न्यू थियेटर्स के 'हमराही' और 'पहला आदमी' फिल्मों के निर्देशक श्री बिमलराय कलकत्ता छोड़ कर बम्बई पहुंच गये हैं, जहां उनकी नयी फिल्मों के निर्माण के लिए फिल्मकार लिमिटेड से चर्चा चल रही है।

● सहारनपुर के मुहम्मद अहमद नामक एक व्यक्ति ने बम्बई के एक फिल्म-निर्देशक के विरुद्ध यह दावा दायर किया है कि उसने बिना अनुमति लिए उसकी एक कव्वाली को अपनी फिल्म में शामिल कर लिया है। इस सिलसिले में अन्य फिल्म-कलाकारों के अतिरिक्त सुमन्दर सुलताना को भी गवाह के रूप सहारनपुर बुलाये जाने की मांग की गयी है।

● गत नवम्बर में लन्दन में इंडिया लीग द्वारा स्थापित फिल्म सोसायटी, भारतीय निवासियों तथा विद्यार्थियों के लिए भारतीय फिल्मों के प्रदर्शन की व्यवस्था करती है। अब तक इस सोसायटी की ओर से 'किस्मत' और 'कल्पना' का प्रदर्शन किया जा चुका है।

● इस सप्ताह अमेरिकन दूतावास की ओर से दिल्ली में 'बर्लिन के पतन' की फिल्म दिखलाई गयी। इस अवसर पर ५०० से अधिक व्यक्ति उपस्थित थे, जिनमें मन्त्रियों, कूटनीतिक प्रतिनिधियों और उच्च नागरिक तथा सैनिक अफसरों से लेकर मजदूर तक शामिल थे।

● केदार शर्मा ने स्वर्गीय सहगल और मोतिका देसाई के सहयोग से 'भंवरा' फिल्म का निर्माण किया था। अब इसी नाम से दुर्गा-पिक्चर्स ने एक फिल्म तैयार की है। इस फिल्म की भूमिका में राजकपूर, निम्मी, ललिता-पवार, के एन. सिंह, हीरालाल और सुन्दर हैं।

चित्रलोक

फिल्म-निर्माण की लागत में कमी

—ब्रिटिश टेक्निशियनों का नवीन प्रयोग—

लेखकः—सिमोनर्ड वैलेस

आज सभी देशों में फिल्म उद्योग के सामने बढ़ती हुई निर्माण लागत की महान कठिनाई मुंह बाये खड़ी है। इसलिए इंग्लैंड के एसोसियेटिड ब्रिटिश स्टूडियोज में आजकल फिल्म निर्माण विषयक एक बहुत ही मनोरंजक प्रयोग किया जा रहा है। कई फिल्म टेक्निशियन (यन्त्रविद) किराये पर स्टूडियो लेकर अपनी मर्जी का चित्र तैयार कर रहे हैं, और जिसके लिए उन्होंने 'फिल्म बैंक' नामक राष्ट्रीय फिल्म वित्त निगम से आर्थिक सहायता प्राप्त कर ली है। इस समूह के सभी यन्त्रविद ब्रिटेन की साइन टेक्निशियन एसोसियेशन के सदस्य हैं और वे कम कीमत पर लाभदायक किंतु फिल्में तैयार करना चाहते हैं।

फिल्म स्टूडियों में काम करने वाले लोग बहुत पहले ही यह अनुभव कर चुके हैं कि हमें फिल्म निर्माण की कला में उद्योग की परम्परागत व्यवस्था से कुछ अधिक योग देना चाहिये। इसलिये हाल के वर्षों में प्रधान कम्पनियों के नीति निर्धारक अर्थात् बड़े कार्यपालकों और टेक्निशियनों के मध्य इतना अधिक सहयोग रहा है जितना कि युद्ध से पूर्व नहीं था। संयुक्त निर्माण समितियों के कारण ब्रिटेन और हालीवुड की टेक्निशियन ट्रेड यूनियनें योजनाओं की तैयारी में अपनी राय देने लगी हैं। फिर भी टेक्निशियन यह समझते हैं कि उनसे पर्याप्त सम्मति नहीं ली जाती। जैसे, विषय के चुनाव में वे अपनी मर्जी नहीं चला सकते और उनकी यूनियन का योग सिर्फ सलाह तक ही सीमित रहता है, जिसकी स्वीकृति भी निर्माता की मौज-मर्जी पर निर्भर होती है। प्रधान फिल्म उद्योगों की पेचीदी आर्थिक व्यवस्था को देखते हुए टेक्निशियन इससे अधिक की आशा भी नहीं कर सकते इसलिये ब्रिटेन और हालीवुड में यह स्पष्ट हो गया कि फिल्म कार्यकर्ता अपनी मर्जी और विस्तृत विचारों को व्यावहारिक रूप तभी दे सकते हैं जब कि वे अपना एक संगठन स्थापित कर लें और अपने लिये आर्थिक सहायता का प्रबन्ध करते रहें।

ब्रिटेन की साइन टेक्निशियन एसोसियेशन ने यह बात पूरी कर ली है और उसके एक चित्र का आधा भाग तैयार भी हो चुका है। इस संस्था ने ए० सी० टी० फिल्मस नामक एक निर्माण कम्पनी खोल दी है और जिसके डाइरेक्टर (मालिक) फिल्म उद्योग की विभिन्न शाखाओं के विशिष्ट लोग हैं। इन लोगों ने अपनी प्रथम फिल्म का कथानक काफी जांच-पड़ताल के बाद चुना और इसके लिए चोटी के आदमियों की तलाश की थी ताकि यह फिल्म एक ठोस समूह के हाथों बनता रहे। इस फिल्म के निर्माण में लगभग सभी टेक्निशियन हिस्सा लेना चाहते थे किन्तु बहुत से विशिष्ट कार्यकर्ता अपने पूर्व ठेकों के कारण ऐसा करने में असमर्थ रहे। लेकिन कुछ ने, जो अपने काम के चुनाव में स्वतन्त्र थे, अपनी संस्था के आदर्शों और सिद्धान्तों को व्यवहारिक रूप देने में सहायतार्थ हाथ आये लाभदायक अवसरों को त्याग दिया था।

न्यूनतम वेतन

ये अनुभवी और कुशल टेक्निशियन कम से कम वेतन लेकर काम कर रहे हैं क्योंकि उन्हें फिल्म के सब सिनेमाओं में चलने के पश्चात् नफे मे साझा मिलने की सम्भावना दिखाई देती है। कई मामलों में यह प्रबन्ध काफी तत्कालिक त्याग का सौदा दिखाई देता है। जैसे, एक प्रमुख कैमरामैन (चित्रलेखक) सामान्य निर्माण अवस्थाओं में इस कम वेतन से दुगनी रकम आराम से प्राप्त कर सकता था। लेकिन इन टेक्निशियनों को अपने फिल्म की कमाई शक्ति में पूरा भरोसा है और उन्हें यह भी विश्वास है कि आय व्यय का अन्तिम चिट्ठा इस बात को सिद्ध कर देगा। इन लोगों में इसी विश्वास, कार्यकुशलता और अपनी सुव्यवस्थित योजना के बल पर "फिल्म बैंक" से उनकी आवश्यक सहायता प्राप्त कर ली जितनी कि उसे देने का अधिकार है। भारत में जर्मन निर्देशक पाल जिल्स ने कुछ इसी प्रकार का परीक्षण किया है और उन द्वारा निर्मित हमारा 'हिन्दुस्तान' में सभी कलाकारों ने सहकारिता के आधार पर कार्य किया है —सम्पादक

इस फिल्म में चोरी से अंगामी ,कामों का अंदर्'लोका नया' है और एक ऐसी आदर्श स्थिति की गयी है, जो मनोरंजक होने के साथ-साथ भारत की परिस्थितियों में चलित निर्माण में भारी सहायक हो सकती है।

मिस गीता

"धन्य यह रक्षा-बन्धन आज"

श्री हरवंश 'उग्र' एम० ए०

उस रूप नगर के महलों के
आंगन में मिल सखि वृन्द संग,
वह रूप नगर की राज सुता,
वह चारु-मति अति सुकुमारी
लख रही प्रेम, विह्वलता से,
वह राज सिंह मूरत प्यारी।
उस वीर प्रवर की छवि न्यारी
लख निर्निमेष दृग मीनों से
शत बार गई वह बलिहारी॥
जब वृद्ध बिसातन ने फिर इक
हृदियक कन्या चुन दिखलाया
'दिल्ली का अधिपति, मुगलराज
औरंगज़ेब', यह समझाया।
"दिल्ली का अधिपति मुगल राज।
वह हाड़ मांस का पिंजर-सा!
अपनी मृत्यु के पल गिनता,
राजा क्या, वह तो रंगसाज!"
दिल्ली का अधिपति मुगल राज!
उस हँस-हँसोड़े में ही वो,
औरंगज़ेब-चुन टूट गया,
दुर्जन हाथों में टूट गया।
वह कुटिया कोर अभागी-सी
बालाओं को सबकाती-सी
बोली 'चुन की कीमत लाओ,'
बाला को खूब फुलाती-सी।
उस चंचल बाला चारुमति—
ने तुरत चित्र का सूत्र पकड़—
सब सखियों को आदेश दिया—
'सब चुन पर मारो तीन जूत।'

कहना क्या था—बस पल भर में
हो गई, वहां कुतूहल कारी,
अगणित जूतों की वर्षा सी।
वह मूरत कम्पित हो सारी।
मिट गया 'ज़ेब' दाढ़ी वारी॥

[२]

'पुत्री! दिल्ली के शाहन्शाह
ने भेजा है इक सन्देशा—
'सुकुमारी चारुमति को झट
मेरे रनिवासों में भेजो,
अथवा इस रूपनगर की तो,
भारी शामत आई समझो।'
मैं क्या कर सकता हूं बेटी,
है मार्ग वही कि—भेंट करूं।
मैं रूपनगर का रजवाड़ा—
वह दिल्ली का है शहंशाह,
सारे भारत का बादशाह।
उसमें सेना का बल अथाह।
यदि तुझे न भेंट किया मैंने
तो इस धरती की ईंट ईंट—
बज कर हो जायगी तबाह!!"

[३]

"हे राजपूत कुल के गौरव,
भारत-भू के मणिमुकुट रूप,
सतियों के रक्षक, पुण्य श्लोक,
हे स्वामी राजा राजसिंह!
वह परम्परा का पुण्य-सूत्र
'रक्षा के व्रत' का परिचायक—
तन्तु तन्तु में त्याग लिए,
औ' राष्ट्र धर्म अनुराग लिए
कुछ हाव लिए, कुछ भाव लिए,
कुछ अरमानों के चाव लिए,
'निर्बल-रक्षा' दायित्व लिए,
रण में बढ़ने का चाव लिए,
हिन्दू संस्कृति का अमर सूत्र—
मैं भेज रही हूं, आज नाथ।
यदि वीर बाहुओं में बल है,
तो आओ ले तलवार हाथ।
अथवा मैं तो क्षत्राणी हूं
(यह चारुमति है नहीं दीन)
पापी के हाथों में पड़ने
से पूर्व स्वयं कर सकती हूं
अपनी इस तेज कटारी से
यह कंचन काया प्राणहीन॥
यदि बचा सको तो आ जाओ,
संकट में सत्य सती का है।
अन्तिम क्षण में बस इतना ही,
कहना इस चारुमति का है।"

[४]

गढ़ रूपनगर के बाहर ही,
मुगलों के सैनिक शिविरों पर
मतवाला योद्धा राजसिंह,
भूखे नाहर के ही समान,
टूटा लेकर सेना महान।
वह प्रलय काल की आग बना
'जय जय शिव शंकर' बोल उठा
हलचल फैली बैरीदल में—
औरंगी लश्कर डोल उठा।
फिर मुगलों औ' रजपूतों की,
थी धार मिली तलवारों की।
आगे थे, जान बची, न बची!
चोटी दढ़ियल सरदारों की।
राणा की थी रमणीय शान,
कन्धे पै भाला, कर कृपाण,
रंजित थे सारे गात्र-प्राण,
पुलकित थे वे प्रण-पूर्ण-प्राण,
बजते थे रण-बाजे, विषाण,
लहराता था भगवा निशान,
गुंजाता 'हर हर' विजय गान!!

अखिल भारतीय आयुर्वेदिक कांग्रेस

[पृष्ठ ४ का शेष]

(२) आयुर्वेद के पुनरुज्जीवन के लिये ठोस सहायता दी जावे। उसकी शिक्षा के लिए विभिन्न संस्थायें खोली जावें।

(३) इसके लिए केन्द्र तथा प्रान्तों में अतिरिक्त डायरेक्टर की नियुक्ति हो।

(४) जब तक दोनों प्रणालियों का योग्य गठन न हो जावे पश्चिमी प्रणाली चलने दी जावे।

(५) वैद्यों को भी स्वास्थ्य तथा सफाई के उपायों की शिक्षा दी जावे जिससे उन्हें भी इस प्रकार की नौकरियों में स्थान मिल सके।

(६) राष्ट्र भाषा के समान ही आयुर्वेद के विकास के लिये भी कुछ अवधि निश्चित कर दी जावे। सरकार पूर्ण सहयोग दे और बीच बीच में उसकी प्रगति का हिसाब रखा जाय।

[पृष्ठ ४ का शेष]

सबसे महत्वपूर्ण बात है टण्डन जी का कांग्रेस के एक वर्ग की मुस्लिमपरस्त हिन्दी नीति का विरोध। टण्डन जी ने बार-बार यह स्पष्ट किया है कि मुसलमान इस देश में रह सकते हैं, अपने मत का पालन कर सकते हैं, नमाज़ आदि सब कुछ उसी प्रकार कर सकते हैं, किन्तु उन्हें भारत का होकर रहना पड़ेगा। वे रहें भारत में और स्वप्न देखें विदेशी, आदर्श रखें विदेशी, आचरण रखें विदेशी यह सब नहीं होगा। उन्हें भारत में बसने वाले विभिन्न मतमतान्तरों के समान ही अपने मत के पालन करने का अधिकार है। किन्तु, किसी प्रकार के विशेषाधिकार अथवा विदेशी जीवन को अपनाने का नहीं!

कांग्रेस की आज तक की नीति भारत के मुसलमानों की खुशामद करने की रही है। ऐसी दशा टण्डन जी का कांग्रेस अध्यक्ष होना न केवल कांग्रेस की इस नीति पर गंभीर प्रभाव ही डालेगा वरन् इस बात का भी प्रमाण होगा कि कांग्रेस के अधिकांश व्यक्ति इस मुस्लिम मसलहत के विरुद्ध हैं।

दानवीर बांगड़ जी

डीडवाना (राजस्थान) सुप्रसिद्ध बांगड़ परिवार के प्रमुख सेठ मंगनीराम जी बांगड़ का गत २१ जुलाई सन् १९५० शनिवार को अल्प कालीन बीमारी के पश्चात् वैकुण्ठवास हो गया सेठ मंगनीराम का जन्म विक्रम सम्वत् १९३२ श्रावण शुक्ल ९मी को हुआ था और परलोक गमन के समय उनकी आयु प्रायः ७२ वर्ष की थी आप १७ वर्ष की छोटी आयु में ही अपनी मातृभूमि डीडवाना से कलकत्ता गये। वहां पहुंच कर अपने पूर्ण परिश्रम एवं अद्भुत वाणिज्य कौशल से व्यवसाय प्रारम्भ किया। उसे उन्नत करने में आपकी व्यावहारिक कार्य पटुता विशेष उल्लेखनीय है, जिसके फलस्वरूप आपने देश के विशाल औद्योगिक एवं व्यापारिक तथा आर्थिक जगत में अपना प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया। बम्बई, दाम नगर, केन्द्र बिहार एवं राजस्थान आदि कई स्थानों में आपके विस्तृत व्यवसाय कार्य चल रहे हैं।

सेठ जी ने अपने जीवन में धार्मिक एवं सामाजिक अनेक संस्था बनाने पुनर्निर्माण कराने एवं संचालित करने में लाखों रुपयों की धनराशि उदारता पूर्वक प्रदान की। श्री पुष्कर में विशाल श्री रमा वैकुण्ठ मन्दिर का निर्माण आपने करवाया, जिसमें प्रायः २० लाख रुपयों की सम्पत्ति व्यय हुई। दक्षिण के महान कई विशाल देवस्थानों के जीर्णोद्धार कराने में लाखों रुपयों की सम्पत्ति आपने लगा कर उन प्राचीन संस्थाओं को जीवित रखा। सामाजिक कार्यों में भी आपने लाखों रुपयों की सहायता प्रदान की तथा आप की ओर से डीडवाना नगर में एक विशाल आयुर्वेदिक औषधालय चल रहा है जिस से लाखों सर्वसाधारण जनता को स्वास्थ्य लाभ होता है। वहीं एक बांगड़ शिक्षा विभाग भी चलता है जिसके द्वारा डीडवाना नगर में हाई स्कूल तथा राजस्थान के विभिन्न ग्रामों में प्रायः २५ विद्यालय संचालित हो रहे हैं तथा छात्र निवास भी चलता है। इसी तरह कई धर्मस्थान आपने भारत के अनेक भागों में लाखों रुपयों की लागत से बनवा कर जनता की विशेष सुविधा के लिए सेवाभाव से अर्पित की है।

कलकत्ते के प्रायः सभी व्यापारी केन्द्र एवं प्रमुख संस्थाओं के कार्य सेठ जी के शोक में स्थगित रहे। शेयर बाजार गन्नीमार्केट, बड़ा बाजार की सभी संस्थाएं एवं विद्यालयों आदि का कार्य स्थगित करके सेठजी के प्रति शोक पूर्वक सहानुभूति प्रदान की गयी।

सेठ जी के आज्ञाकारी भाई रामकुमारजी तथा पुत्र नारायणदासजी, गोविन्द लाल जी, गोकुलदास जी आदि महान, भाव उनके सुविस्तृत व्यापार तथा धार्मिक सन्स्थानों का उसी तरह से संचालन कर रहे हैं।

जरा हंसिये

मोहन— अरे भाई सोहन! सुना तुमने, गजब हो गया।

सोहन— क्या हुआ!

मोहन— अरे मियां, सारे आम गये और केले कटने लगीं।

सोहन— कहां!

मोहन— वही नेमीचन्द दरजी की दुकान पर, जो गली में कल ही से आया है।

× × ×

राधे— चल गई, चल गई। बेधड़क चल गई, एकदम चल गई।

पिता— अरे क्या चल गई! घर में बैठ, गोली चली या लाठी?

राधे— जी नहीं, वह खोटी चवन्नी जो आपने सवेरे मुझे दी थी।

अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

४

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार १८ भाद्रपद सम्वत् २००७ [अङ्क २०

पाकिस्तान को भारत से खतरा !

"अन्य देशों के लिए कम्यूनिस्ट रूस खतरा हो सकता है, किन्तु पाकिस्तान के लिए तो भारत ही है।" इन शब्दों में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने जो विचार प्रकट किये हैं, वे कम से कम इस वस्तुस्थिति की सूचना देते हैं कि पाकिस्तान के सर्वोच्च उत्तरदायी अधिकारी भारत के साथ अपने संबंधों को किस रूप में देखते हैं। और वह भी उस नेहरू-लियाकत समझौते के चार पांच मास बाद, जिसके कारण भारत का लोकमत पं० नेहरू से इसलिए क्षुब्ध है कि उस समझौते से भारत को लाभ की बजाय हानि ही हुई है।

नेहरू-लियाकत समझौते के बाद यह आशा करनी चाहिये थी कि समझौते की उस भावना के अनुसार लियाकत अली अधिकाधिक आचरण करने की चेष्टा करेंगे। किन्तु हुआ इसके विपरीत ही। समझौते के बाद भी लियाकत अली अमेरिका गये और वहीं दिनों उनका यह वक्तव्य प्रकाशित हुआ कि भारत से खतरे के डर से ही उन्होंने राष्ट्रमण्डल से अपनी सीमाओं को अक्षुण्ण रखने की प्रार्थना की। इसके बाद भी समय समय पर लियाकत अली भारत से भय प्रकट करते रहे हैं। ऐसे सब वक्तव्यों को यहां दुहराने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि उन्हें सब पाठक जानते हैं। काश्मीर सम्बन्धी वक्तव्य तो बिल्कुल नया है।

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री लियाकत अली का दिमाग किस दिशा में काम कर रहा है, इसका आभास भी उसी वक्तव्य से मिलता है, जिसकी चर्चा इससे ऊपर की है। वे कहते हैं कि पाकिस्तान की भौगोलिक स्थिति सामरिक दृष्टि से और विशेष कर रूस से युद्ध की स्थिति में बहुत महत्वपूर्ण है। ब्रिटेन व अमेरिका आदि रूस विरोधी राष्ट्रों को संकेत करते हुए वे कहते हैं कि दुःख तो यह है कि इन देशों की नींद बहुत देर बाद खुलती है। इसलिए मेरी सम्मति यह है कि उन्हें आज ही मध्यपूर्व के देशों की शक्ति की ओर ध्यान देना चाहिये, जिसमें ईरान की भी उपेक्षा न की जाय। उन्होंने यद्यपि मध्यपूर्व के देशों में पाकिस्तान का नाम नहीं लिया, किन्तु उनके मध्यपूर्व में पाकिस्तान अवश्य सम्मिलित है। उनके इस्लामिस्तान में और मध्यपूर्व में कोई अन्तर नहीं है। श्री लियाकत अली का यह वक्तव्य तथा काश्मीर सम्बन्ध डिक्सन के वक्तव्य के बाद भारत पर काश्मीर-सम्बन्धी सारी जिम्मेदारी डालने का अकर्म देखने के बाद यह समझने में जरा भी संदेह नहीं करना चाहिये कि हमारे पड़ोसी पाकिस्तान के अधिकारियों की मनोवृत्ति आज भी क्या है।

हम शांति और प्रेम के सदा इच्छुक हैं और विशेष कर समस्त भारत को अखण्ड मातृभूमि के रूप में देखने के इच्छुक हम यह कभी नहीं इच्छा कर सकते कि एक ही देश के दो भागों में, जो विदेशी शासकों की कूटनीति और मुस्लिम लीग की जहरीली साम्प्रदायिकता के कारण बन गये हैं, परस्पर युद्ध हो। हम चाहते हैं दोनों भागों में सद्भावना, प्रेम और एकता की भावना। लेकिन उसके साथ ही हम अपनी पूर्ण शक्ति के साथ इस बात पर भी बल देना चाहते हैं कि सद्भावना और प्रेम का सम्बन्ध केवल एक की इच्छा से स्थापित नहीं हो सकता। पूरी ईमानदारी के साथ समझौते पर अमल करके भी भारत सरकार पाकिस्तान की मनोवृत्ति को बदलने में कतई सफल नहीं हुई है। मि० लियाकत अली का उक्त वक्तव्य समझौते की निष्फलता की घोषणा करता है। हम चाहें या न चाहें, इस वस्तुस्थिति से इन्कार नहीं किया जा सकता। इसलिए भारत सरकार का कर्तव्य है कि इस नई वस्तुस्थिति के प्रकाश में वह अपनी नीति पर पुनर्विचार करे।

★

५ करोड़ गज कपड़े की हानि

बम्बई में सोशलिस्ट नेताओं के दुराग्रह के कारण कपड़ा मिलों की जो हड़ताल चल रही है, पिछले १५ दिनों में उसके कारण ५ करोड़ गज कपड़ा तैयार होने से रह गया। इस कपड़े का महत्व कितना अधिक है, इसे समझने की आवश्यकता है। आज भी भारत मे वस्त्र दुर्लभ है, बहुत से गरीब कपड़ा खरीद नहीं सकते। अब इतनी भारी मात्रा में कपड़े की कम पैदावार इसे और दुर्लभ तथा महंगा कर देगी। इसका दूसरा दुष्परिणाम यह होगा कि विदेश और विशेषकर मध्यपूर्व के देशों मे हम कपड़ा कम भेज सकेंगे। काफी देखते रहते हैं वे जानते हैं कि आज भारत का विदेशी व्यापार बहुत कठिनता से सन्तुलित होने लगा है। हमें इतनी भारी मात्रा मे विदेशों से मशीनरी, गेहूं और अन्य आवश्यक वस्तुएं मंगानी पड़ती हैं कि उसका मूल्य चुकाने के लिए भारी मात्रा मे निर्यात भी आवश्यक है। मध्यपूर्व के देश भारत से कपड़ा मंगाते हैं। आज ब्रिटेन और जापान भारतीय उद्योग के प्रतिस्पर्धी के रूपमें हमारे सामने खड़े हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में यदि हम अपने ग्राहक देशों को कपड़ा न भेज सकें, तो इन बाजारों पर सदा के लिए दूसरे देश अधिकार कर लेंगे और यह सब किस लिए? सोशलिस्ट पार्टी को अपनी राजनैतिक शक्ति बढ़ानी है।

—

उपयोगी चेतावनी

अन्न संकट से बेतहाशा घबरा कर विदेशी कृषिपद्धति अपनाने को अत्यन्त उत्सुक वैज्ञानिकों को राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसाद ने कहा है—गत कई शताब्दियों से कृषि भारतीय जनता का मुख्य व्यवसाय रही है, तथापि भूमि की उपज शक्ति कायम है, परन्तु अमरीका जैसे देशों में जहां व्यापक आधार पर मशीनों की सहायता से खेती की जाने लगी है, भूमि की उपज शक्ति की समस्या बड़ा उग्र रूप धारण कर रही है। उन्हें भूमि में बहुत खाद देने के लिए बाध्य होना पड़ा है, यद्यपि वहां की भूमि में २०० वर्षों से कुछ अधिक समय से ही खेती होने लगी है। अत भारतीय किसानों द्वारा अपनाई फसलों को अदल बदल कर बोने के तथा मिश्रित रूपमें फसल बोने के तरीको की अवहेलना नहीं की जानी चाहिए।" राष्ट्रपति ने यह भी कहा है कि "भारतीय किसान के पास आज अपनी एक सांस्कृतिक परम्परा है। संभवत इसीलिए आधुनिक तरीके न अपनाये जाने पर भी उसने उपज शक्ति को गिरने से रोक रखा है।" यह चेतावनी बहुत अच्छी है, परन्तु हमें संदेह है कि विदेशी शिक्षा और संस्कृति में पले हुए वैज्ञानिक इस उपयोगी परामर्श पर ध्यान देंगे।

—

भावी संतति का नैतिक पतन

गत कुछ अंकों से पाठक शरणार्थियों के सम्बन्ध में एक लेखमाला पढ रहे होंगे। हम उसकी ओर, और विशेष रूप से इस अंक में प्रकाशित लेख की ओर अपने पाठकों का ध्यान खींचना चाहते हैं। इस लेख में योग्य लेखक ने शरणार्थियों के उन लाखों बालकों की चर्चा की है, जो आज भीषण अव्यवस्था के कारण शिक्षा, जीवन निर्माण तथा मानसिक उन्नति की बजाय केवल उदर-पोषण में लगे हुए हैं। और आज के कन्ट्रोल व परमिट के भ्रष्टाचार के कारण भारत का यह भावी नागरिक झूठ, चोरी, रिश्वत आदि अनाचार विधियों में पारंगत हो रहा है। आज का यह बालक ही तो कल नागरिक बनेगा और हमें यह कल्पना भी रोमांचकारी प्रतीत होती है कि हमारे लाखों नौनिहाल अभी, धूर्तता व भ्रष्टाचार की शिक्षा पा रहे हैं। शरणार्थी समस्याके इस पहलू की ओर योग्य लेखक ने ध्यान खींच कर एक नये कर्तव्य का स्मरण राष्ट्र को कराया है। यह काम केवल सरकार की आलोचना से सम्पन्न नहीं हो सकता। देश के विचारकों, शिक्षाशास्त्रियों और सार्वजनिक कार्यकर्ताओं का कर्तव्य है कि वे इस विकट समस्या पर गम्भीरता से विचार करें और इसके समाधान के उपाय सरकार को बतावें।

—

राजस्थान में समझौता

राजस्थान के दलों की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा और संघर्ष ने वहां के जीवन को कलुषित कर दिया था और उन्नति व राष्ट्र निर्माण के कार्य में बाधा डाल दी थी। शास्त्रीजी और व्यासजी के दलों का संघर्ष सैद्धान्तिक नहीं था, केवल व्यक्तिगत था। यह हर्ष की बात है कि सरदार पटेल का परामर्श स्वीकार कर राजस्थान के दोनों सम्मानित नेताओं ने अब परस्पर मिल कर एक दूसरे को सहयोग देना स्वीकार कर लिया है। राजस्थान की कांग्रेस और सरकार दोनों के सहयोग से राजस्थान सबल होगा, उसकी जनता के कष्ट दूर होंगे। परन्तु हम राजस्थान के पत्रकार भाइयों से एक विशेष अनुरोध करना चाहते हैं कि यदि वे संयम तथा दूरदर्शिता से काम लेंगे, तो वर्तमान राजस्थान के इन दोनों निर्माताओं का सहयोग अधिक स्थायी और लाभकारी होगा। दलबन्दी की गंदी राजनीति के लिए अब आलोचना की जाती है, तब वह भले ही कुछ व्यक्तियों को संतोष दे सके, जनहित मे सहायक नहीं होती अपने उन साथियों पर नियन्त्रण करना नेताओं का कार्य होगा जो केवल आलोचना करने में ही रस लेते है।

—

जन्माष्टमी तू आगई !

★ श्री केशवदेव

भाद्रपद की कृष्णाष्टमी ! सघन घनों के हृदय में छिपी सौदामिनी के समान आशा की विद्युत् रश्मियों से नैराश्य तथा उदासीनता में डूबी हुई भारत भूमि को आलोकित कर निविड़ अन्धकार में भटकते हुए आर्य सन्तानों को मार्ग सुझाने वाली देवि ! प्रतिवर्ष की भांति तू इस बार भी इस आर्य भूमि पर अवतरित हो रही है।

तेरा शाश्वत, अमर संदेश, तेरे कृष्ण के पाञ्चजन्य का विजय घोष, दिशा-विदिशा में व्याप्त हो रहा है। तेरे शुभागमन पर स्वर्ग के देवता नगाड़े बजा रहे हैं, विद्युन्माला आकाश के विशाल प्राङ्गण में नृत्य करती हुई थिरक रही है।

पांच सहस्र से भी अधिक वर्ष हुए ऐसी ही महारात्रि में कारा के निविड़ अन्धकार में भारतीय राष्ट्र की सनातन आत्मा मानवरूप धारण कर मूर्तिमयी हुई थी। भयंकर घनगर्जन तथा विद्युत् की चकाचौंध हो रही चमक वातावरण को भयावना बनाये हुए थी। प्रकृति अपने रौद्र रूप का आनन्द लेती हुई विहार कर रही थी।

वहीं नहीं अत्याचारी शासक उसके विनाश के लिये कब से घात लगाये बैठा था। उसकी सत्ता को किसी भी प्रकार का भय न रहे, इसलिये सात पूर्वजन्मा अबोध शिशुओं के निर्दोष रक्त से हाथ रंग चुका था। माता कारा में थी, पिता कारा में था। यम के दूत प्रतिपल सजग सतर्क भाव से पहरा दे रहे थे। आसुरिता की मदोन्मत्त प्रवृत्ति समग्र देश को ग्रस्त कर रही थी।

ऐसे ही संदिग्ध क्षणों में अर्धरात्रि की वेला में भारतीय जीवन के प्रभातको छुपाये हुए तुम आयी थीं। शरीर के बन्धन टूट गये थे, कारा के द्वार खुल गये थे, कंस की समस्त माया विश्वात्मा की महामाया के सम्मुख ठगी सी रह गयी थी।

कंपित हृदय तथा शंकित पगों से एक मानव ने प्राकृतिक तत्त्वों के भीषण संघात में प्रवेश किया था। आकाश गर्ज रहा था, सौदामिनी तड़प रही थी, इन्द्र के अनुचरों को मनमानी करने की छुट्टी थी, अजस्र जलधारायें प्रवाहित थीं, यमुना भी अपनी मर्यादा को तोड़ने को मचल रही थी। केवल तुमने अपना आंचल चारों ओर फैला रखा था।

तुम्हारे हृदय का प्रकाश नन्द के घर बालसूर्य के रूप में प्रकट हुआ था। कर्तव्य प्रजाजनों के आवरणों को विदीर्ण कर वह अपनी तेजस्वी किरणों से जन जीवन को आलोकित करने लगा था। उसकी बढ़ती हुई ऊष्मा ने जनपदों में जीवन संचार किया था, मुरझाई हुई जनजीवन की लता पुनः लहलहा उठी थी। आशाओं को आश्रय प्राप्त हो गया था।

गीता का ज्ञानमयकर्मशील जीवन ब्रज की धूल में लोट रहा था। जीवन का आधार सात्विकता है, किन्तु सात्विकता का आधार शक्ति। आसुरिता से संत्रस्त जीवन की मुक्ति के लिए जनजन हृदयवासिनी समष्टि शक्तिरूपा दैवी शक्ति की आराधना करनी पड़ती है। इसी जागृत शक्ति ने देवराज इन्द्र के गर्व को चूर किया था, फिर कंस बिचारा किस गिनती में था।

कंस के विनाश ने भारत के आसुरी जीवन को चौंका दिया था। देश में चारों ओर आसुरिता का साम्राज्य था। भारतीय राष्ट्र अपने ही कपूतों के नीचे पड़ा कराह रहा था। देश का जन-जीवन व्याकुल था, व्यथित था। धर्म बाह्याडम्बर में ही रह गया था। चाटुकारिता, स्वार्थपरता, आतंक और और मदोन्मत्तता का बोल बाला था। धर्म की सभी विशेषतायें अपना मुख छिपा रही थीं। देश के शासक वर्ग का चरित्र गिर चुका था।

किन्तु भारत भूमि पर पुनः यथार्थ जीवन जगाने का, धर्मराज्य की स्थापना करने का संकल्प हो चुका था। राष्ट्र-पुरुष का वह संकल्प अडिग था। भारत के जीवन को विनाशक करने वाले सभी तत्त्वों को नष्ट करना था। फलस्वरूप पूतना गया, शिशुपाल गया, नरकासुर गया, जरासंध गया। अन्य भी अनेकों की आहुति दी गयी।

इस महायज्ञ की पूर्णाहुति हुई, कुरुक्षेत्र की पावन भूमि पर। राष्ट्र-पुरुष की अनुपम योजना से राष्ट्र-जीवन में व्याप्त समस्त विष एक स्थल पर एकत्रित हो गया था। एक बार पुनः वह महान् व्यक्तित्व अपनी पूर्ण महत्ता में प्रकट हुआ था। जीवन के प्रत्येक अंग की परिपूर्ण कला उसके प्रत्येक कर्म से प्रकट होती थी। धर्म के पक्ष की सुरक्षा और अधर्म का विनाश, ऐसी ही उसकी योजना थी, और ऐसा ही हुआ। कुरुक्षेत्र की पूर्णाहुति से वह धर्मयज्ञ विधिवत संपन्न हुआ।

और वहीं, उसी कुरुक्षेत्र के रंगस्थल पर अर्जुन के मोह को नष्ट करने के बहाने भारतीय जीवन का अमेय संदेश प्रकट हुआ था। कर्म, कर्म, अनवरत कर्म; हृदय की संपूर्ण श्रद्धा को केन्द्रित कर, बुद्धि के प्रकाश को तीव्रतम कर निष्काम भाव से, फलासक्ति से मुक्त रह कर, लाभालाभ, विजय, पराजय, समस्त द्वन्द्वों को विश्वात्मा के आधीन कर अनवरत अनवरत कर्मशील जीवन ! उठ, युद्ध कर ! नपुंसकता तुझे शोभा नहीं देती। युद्ध का निश्चय कर ! युद्ध का निश्चय कर !!

तब कहीं जड़ हुई आर्यभूमि में पुनः आर्य-जीवन उदित हुआ था। धर्मराज युधिष्ठिर को आगे कर पुनः रामराज्य का सूत्रपात हुआ था। देश का जन-जीवन विहंस उठा था।

तब से योगिराज श्री कृष्ण के उस अनुपम सन्देश को लेकर, उनके व्यक्तित्व की ओर ही राष्ट्र का ध्यान आकृष्ट करती हुई, सुख तथा दुःख, लाभ तथा हानि, जय तथा पराजय, सभी क्षणों में जीवन संघर्ष में [illegible] रही हो।

भारतीयों ने तुम्हारे सन्देश को सुना न हो, ऐसी बात नहीं। सब संघर्ष की कालरात्रि में तुम्हारी ही प्रेरणा ने उनके शस्त्रों को झंकार करते [illegible] दिया, उत्थान और पतन के भयानक झटकों से निराशा का संचार नहीं होने दिया, बारंबार गिरने पर भी पुनः पुनः उठने और युद्ध करने की प्रेरणा दी, चैतन्य दिया।

तुम्हारे ही संदेश को लेकर अगणित साधुसंतों ने अपना समस्त जीवन राष्ट्र को पुनर्जागृत करने में बिताया। तुलसी और समर्थ ने राम के रूप में वही चित्र चित्रित करने का प्रयास किया था, अगणित व्यक्तियों ने अपने प्राणप्रसून अर्पित किये। सच्चे अन्तःकरण से देश के गौरव पर मर मिटने की अमर भावना लिये हल्दीघाट और चित्तौड़, पंजाब का चमकौर तथा दक्षिण में सिंहगढ़। देश के कण-कण पर इन अमिट बलिदानों का इतिहास अंकित है। कुरुक्षेत्र के रणस्थल में श्री कृष्णोपदिष्ट आत्मा की अमरता का प्रमाण भारतीय राष्ट्र का आज तक का इतिहास है।

और पुनः तुम आई हो। आज पुनः देश मोह और जड़ता से अभिभूत है। पुनः यहां चाटुकारिता, स्वार्थपरता, आतंक और मदोन्मत्तता का नंगा नाच हो रहा है। आत्मविस्मृति भारतीय जीवन में शिथिलता, नैराश्य तथा अंधकार प्रवेश कर रहे हैं। जन जीवन की ओर उदासीन होकर अपने व्यक्तिगत सुख तथा महत्त्वाकांक्षा से प्रेरित हुए भारत के ही पुत्र—क्या इन्हें कपूत कहें ? पुनः इस आर्यभूमि पर आसुरी जीवन का प्रसार कर रहे हैं। चरित्र नष्ट हो चुका है सम्पूर्ण राष्ट्र जीवन विषमय हो गया है। कुरुक्षेत्र के पूर्व की दुर्दशा को आज भारत पुनः प्राप्त हो चुका है।

राष्ट्र के जन जन के अन्तःकरण में विषाद अर्जुन का मोहजाल ही निर्मित हो रहा है। [illegible] रहा है। [illegible] सहित गाण्डीव छूट रहा है। क्या तुम यह स्थिति [illegible] ? क्या कृष्ण की ही सन्तानों के लिए यह स्थिति उचित है ? आज भी 'अधर्म' नाच रही है, विद्युत [illegible] मेघ से [illegible] चमक रही है। प्रकृति के [illegible] जीवन को [illegible] कर रहे हैं। क्या तुम अपने अंधकार के अंचल में छिपी अनुपम, अपरिमित ज्योति की झलक नहीं दिखाओगी—जिस से पुनः [illegible]

[शेष पृष्ठ ११ पर]

अब तो मेघ बरसने को हैं

साहित्यरत्न 'कमलाकर'

अम्बर के सूने उर में ये नव नव भावों से घिर आये,
स्वर्ण तपन सूरज की सहकर जग पर नव छाया बन छाये।
उमड़-उमड़ कर झूमे अब तो मेघ गरजने को हैं॥
अब तो मेघ बरसने को हैं।

घुमड़ घटा पर घटा छा गईं सघन हो गये घन कजरारे,
अब न कहेगा कोई विरही नयनों से सावन घन हारे।
मोती झड़ने ही वाले हैं विद्युत-बाल विहँसने को हैं॥
अब तो मेघ बरसने को हैं।

मेघ-मुरलिका से फूटी हैं रिमझिम के स्वर की धाराएं,
पंखों में सुर-धनुष उतारे नचती मुग्ध मयूर कलाएं।
वन-उपवन निर्जन जन-मन में नई बहारें बसने को हैं।
अब तो मेघ बरसने को हैं।

★

हिन्दू संस्कृति का प्रत्याक्रमण

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

[१]

यह आश्चर्य की बात है कि यद्यपि क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त की थोड़ा बहुत जानकारी सभी लोग रखते हैं, उसके व्यावहारिक प्रयोग का ध्यान बहुत कम रखा जाता है। जैसे दीवार पर फैंकी हुई गेंद लौट कर आती है, इसी प्रकार व्यक्ति या जाति पर किया गया अत्याचार भी शीघ्र या देर में अवश्य लौट कर आता है। मुसलमान शासकों ने हिन्दुओं के प्रति जब-जब जबर्दस्ती का प्रयोग किया, तब तब उसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि देश के अनेक हिस्सों में इस्लाम और उसके मानने वालों के शासन के विरुद्ध भावना जागृत हो उठी।

मुसलमानों के भारत पर शासन करने वाले प्रारम्भिक पांच राजवंशों में सबसे अधिक जाबिर और धर्मान्ध शासक अलाउद्दीन खिलजी था। वह जितना ही बहादुर था, उतना ही पक्षपातपूर्ण था। वह हिन्दुओं से उग्र घृणा करता था, और उनके दमन को अपना मजहबी फर्ज समझता था। वह दिल्ली का पहला सुल्तान था, जिसने उत्तरी भारत को जीत कर राज्य की सीमाओं को दक्षिण में फैलाने का उपक्रम किया। उसके सेनापति मलिक काफूर ने और स्वयं सुल्तान ने दक्षिण के हिन्दू राज्यों पर कई आक्रमण करके विजय प्राप्त की। उन विजयों की एक विशेषता यह थी कि उनमें हिन्दुओं पर और उनके मन्दिरों और पूजास्थानों पर खुले आघात किये गये।

अलाउद्दीन के पीछे तुगलक वंश के बादशाहों ने दक्षिण भारत पर प्रभुत्व जमाने की चेष्टा जारी रखी।

उस समय तक भारत के उत्तर और दक्षिण भागों में बहुत भेद था। उत्तरीय भारत पर मुसलमान पूरी तरह छा गये थे। विदेशी आक्रमणों से आहत हो कर हिन्दू जाति मानो अपने खोल में दुबक गई थी। उधर दक्षिण में इस्लाम का सूर्य उदय नहीं हुआ था, और न हिन्दू जनता की पीठ ही टूटी थी। यही कारण था कि जब इस्लाम की सेनाओं ने दक्षिण में घुसने की चेष्टा की तो दो बहुत ही उग्र प्रतिक्रियाएं उत्पन्न हुईं। उनमें से पहली प्रतिक्रिया विजय नगर साम्राज्य के रूप में प्रकट हुई।

× × ×

विजय नगर राज्य की स्थापना हरिहर और बुक्का नाम के दो वीर और स्वाभिमानी भाइयों ने १३३६ ई० में की। उस समय दक्षिण में मुसलमान आक्रमणकारी [illegible] मुसलमानों को दक्षिण से निकाल दिया, और विद्यारण्य मुनि के निर्देश में चलते हुए विजय नगर राज्य की स्थापना की।

विजय नगर को दोनों भाइयों और उनके उत्तराधिकारियों ने कुछ ही वर्षों में समृद्धि की चरम सीमा तक पहुंचा दिया। मुसलमानों की ओर से उसे नष्ट करने का प्रयत्न निरन्तर जारी रहा, परन्तु लगभग २०० वर्षों तक विजय नगर का स्वाधीन ध्वज तुंगभद्रा नदी के तट पर सिर उठाये खड़ा रहा। उस का पतन तब हुआ, जब विजय नगर के रक्षकों में फूट पड़ गई, और उसके विरुद्ध अहमद नगर, गोलकुण्डा और बीदर की तीनों पड़ोसी मुसलमान रियासतें एक हो गईं। तीनों रियासतों की सम्मिलित सेनाओं ने विजय नगर के राजा रामराय पर वह आक्रमण कर दिया। रामराय युद्ध में बन्दी बन गया, उसकी सेनायें भाग निकलीं, और विजय नगर का धनधान्य और रत्नों से भरा हुआ नगर लूट लिया गया। कहा जाता है कि विजयिनी मुसलमान सेनाओं ने विजय नगर राज्य के बाजारों में कई दिनों तक कत्लेआम और लूटमार का बाजार गर्म रक्खा।

यह तो हुई विजय नगर राज्य के दो सौ वर्ष के राजनीतिक जीवन की कहानी। यदि हम उस जीवन के सांस्कृतिक पहलू पर दृष्टि डालें तो वह हमें बहुत ही समृद्ध दिखाई देता है। उत्तरीय भारत का इतिहास उन सदियों में बहुत कुछ अन्धकार-पूर्ण ही था। आगन्तुक संस्कृति का प्रतिरोध करना छोड़ कर प्राचीन भारतीय संस्कृति भक्ति और प्रेमरस की कविताओं की गुफाओं में घुसने का प्रयत्न कर रहा था। उस समय विजय नगर रात्रि के अन्धकारावृत आकाश में दीपक की तरह चमकता दिखाई देता है। साहित्य, चित्रकला, भवननिर्माण कला, तथा धार्मिक क्षेत्र में विजय नगर के जीवन की वे दो सदियां खूब समृद्ध हैं। माधव व विद्यारण्य तथा सायण ने वेदों पर भाष्य किये, संस्कृत दर्शनों पर पुस्तकें लिखीं। संस्कृत के बहुत से उत्तरकालीन काव्य उसी समय में लिखे गये। शुद्धाद्वैत और उसके पश्चात् विशिष्टाद्वैत का बहुत सा पोषक साहित्य उन्हीं दो शताब्दियों की उपज है।

उन सदियों की वास्तुकला के चमत्कार प्रायः सारे दक्षिण में मन्दिरों और राजभवनों के रूप में भरे पड़े हैं। पीछे से आने वाले जोशीले मुसलमानों द्वारा तोड़-फोड़ के हो जाने पर भी विजय नगर की अनेक निर्माणकला आज तक उस काल की विभूति को प्रकट कर रही है।

सामान्यरूप से विजय नगर का गौरव उन विदेशी यात्रियों के दिये विवरणों से ज्ञात होता है, जो उस समय दक्षिण में आये।

(अपूर्ण)

आसाम में खण्डप्रलय

सचित्र परिचय

स्वतन्त्रतादिवस के दिन आसाम में आये हुये भूकम्प की अभी तक समाप्ति नहीं हुई है। जब से भूकम्प मापने की प्रणाली चली है, आसाम का यह भूकम्प दूसरा सबसे बड़ा भूकम्प बताया जाता है। कुछ लोगों का कथन है कि पृथ्वी के गर्भ में सहस्रों वर्षों से कोई ज्वालामुखी उफन रहा था। यह उसी का विस्फोट है। अन्य भूगर्भशास्त्रियों का मत है कि हिमालय पर्वत काश्मीर से आसाम तक उत्तरी भारत तथा ब्रह्मा के मैदान को रौंदता हुआ आगे बढ़ रहा है। यह उसी का परिणाम है।

इससे पूर्व १८९७ में आसाम में भूकम्प आया था। वह शायद सबसे बड़ा भूकम्प था। उसके १० साल बाद तक भूकम्प के थोड़े बहुत धक्के आते रहे थे। इस प्रकार के धक्कों की संख्या २००० से भी ऊपर थी। यह देखते हुए अभी आसाम में बहुत कुछ होने की संभावना है। किन्तु तो भी यह भूकम्प उतना व्यापक नहीं होगा जितना १८९७ का था। कारण यह है कि इस भूकम्प का सीधा धक्का आसाम को नहीं लगा। वह तो और भी ऊपर तिब्बत की अगम्य पर्वतमालाओं में किसी स्थान पर लगा, जहां की तबाही के विषय में अनुमान लगाने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं।

किन्तु असली धक्का आसाम पर न पड़ने पर भी जो कुछ वहां पर बीता है वह अत्यन्त भयानक और प्रलय का सा दृश्य उपस्थित करता है। इस भूकम्प के कारण आसाम का मानचित्र ही बदल गया है। उस हानि का अभी तक कोई अनुमान नहीं हो पाया, कारण अनेकों स्थानों से अभी तक समाचार प्राप्त नहीं हो सके हैं, सहायता पहुंच पाना तो बहुत बड़ी बात है। वहां पर क्या बीत रही है, यह भली भांति ज्ञात नहीं हो पाया। आवागमन के मार्ग नष्ट हो गये हैं, नदियों ने अपने मार्ग बदल दिये हैं, अनेकों नवीन जलधारायें फूट कर बाढ़ को बढ़ाने में योग दे रही हैं। जंगल के जंगल उखड़ कर बहे चले आ रहे हैं। अभी तक नष्ट हुई संपत्ति का मूल्य दस करोड़ रुपये से अधिक आंका जा रहा है। इसके अतिरिक्त अनेकों खेतों के स्थायी रूप से नष्ट हो जाने और खेती के योग्य ही न रहने के कारण हुई स्थायी हानि का ठिकाना नहीं।

उत्तरी लखीमपुर के गांवों में सुवर्णश्री नदी बाढ़ से भयंकर नुकसान हुआ है। डिब्रूगढ़ सब डिवीजन के ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे बसे हुए गावों के निवासियों को डिब्रूगढ़ शहर में लाया गया है। अभी हजारो व्यक्ति वहां बाढ़ से घिरे हुए हैं। अभी तक कुछ ही गांवों में समाचार मिले हैं, जहां किसी का भी किसी प्रकार पहुँच नहीं हो सकती।

भूकम्प के कारण अनेक स्थानों में धान के खेत रेत से भर गये हैं, जिनकी वजह से वे अब स्थाई रूप से खेती के योग्य नहीं रहे। हजारों एकड़ जमीन की फसल पानी में डूब गई है और बर्बाद हो गई है। खेतों में कई-कई फुट पानी चढ़ा हुआ है। अनेक गावों में बस्तियां बाढ़ में बह गई हैं। अनाज की कमी की समस्या ने भयंकर रूप धारण कर लिया है।

एक गांव से दूसरे गांव में जाना बिलकुल असम्भव है। कितने ही गांव चारों ओर पानी से घिरे पड़े हैं। इन गांवों में दैनिक आवश्यकताओं की चीजें भी नहीं पहुंच पा रही हैं।

सरकार धान के सभी स्टाकों पर कब्जा करके उन्हें सहायता कमेटियों के जरिये बटवा रही है। रास्तों के बन्द हो जाने कारण सहायता के कार्य में बाधा पहुँच रही है। हजारों गांव ऐसे हैं जहां अभी तक किसी प्रकार की सहायता नहीं पहुंच पाई है।

भूकम्प के कारण जमीन के स्तर में बहुत अधिक परिवर्तन हो गया है। अनेक नदियों की तह मिट्टी से भर गयी है।

गहराई कम होने की वजह से इनका पानी दूर तक फैल गया है। सैकड़ों मील तक नदी के किनारे खत्म हो गये हैं और हजारों वर्गमील जमीन पानी में डूब गई है। कोई नहीं कह सकता कि यह पानी कभी कम होगा या नहीं? अनेक गावों में ऊंची जमीने नीची हो गई है और नीची जमीनें ऊंची। ऐसी जमीनों पर मकान बनाना भी एक खतरे की बात है।

खोवाग के पास असम ट्रंक रोड को पहले ही काफी नुकसान पहुँच चुका था। अब देहंग नदी की बाढ़ ने उसे दस स्थानों में काट दिया है। अब इस

[शेष पृष्ठ २९ पर]

इन्द्र धनुष

ब्रह्मांड रश्मि की खोज यात्रा

कनाडा में अमेरिकी वैज्ञानिकों के एक खोजी दलने ब्रह्मांड रश्मि (कोस्मिक रे) के आदि स्रोत की खोज के सम्बन्ध में एक नवीन विधि का अध्ययन किया है। अमेरिका की राष्ट्रीय भूगोल समाज तथा फ्रैंकलिन इन्स्टिट्यूट के बार्टल रिसर्च फाउन्डेशन ने मिल कर उक्त अध्ययन कार्यक्रम का संचालन किया है। फाउन्डेशन के वैज्ञानिक डाक्टर मार्टिन पोमरेन्ज जिन्होंने १९५१ में इस प्रकार के खोजी दल का नेतृत्व किया था, इस बार भी उक्त वैज्ञानिक दल के अध्यक्ष होंगे। वैज्ञानिकों के इस खोजी दल का कार्य उत्तरी मैनिटोबा में सम्भवतः लगभग ६ सप्ताह तक चालू रहेगा।

इस नवीन विधि के अन्तर्गत उपकरणों से सुसज्जित गुब्बारों को उड़ा दिया जायगा, जो २० मील या इससे अधिक ऊंचाई पर जायंगे। उपकरण ब्रह्मांड रश्मि सम्बन्धी आंकड़ों को अंकित करके रेडियो द्वारा भूमि पर स्थित एक चलती फिरती प्रयोगशाला को भेज देगा। गुब्बारों में ऐसे उपकरण भी होंगे जो वायुमंडल के दबाव तथा तापमान की सूचना भी लगातार प्रयोगशाला को भेजते रहेंगे।

लगातार कई एक ६-८ उड़ानों द्वारा गुब्बारों के साथ अन्य कक्षों (आयोनाइजेशन चैम्बर्स) को बहुत ऊंचाई पर उड़ाया जायगा, ताकि ब्रह्मांड रश्मियों द्वारा उत्पादित आणविक विस्फोटों का रिकार्ड किया जा सके।

ब्रह्मांड रश्मियों के आदि स्रोत की खोज करने के अतिरिक्त वैज्ञानिक दल कम शक्ति वाले ब्रह्मांड विकिरण का भी अध्ययन करेंगे, जिसका गत वर्ष वैज्ञानिकों के खोजी दल ने पता लगाया था। इस वर्ष डाक्टर पोमरेन्ज तथा उनके साथी इस बात की सम्भावना की खोज करेंगे कि क्या सूर्य का कोई परिवर्तनशील चौम्बिक क्षेत्र भी है।

●

आत्म विज्ञापन

इंगलैंड के सुप्रसिद्ध साहित्यकार बर्नार्ड शा के एक प्रसिद्ध चरित्र लेखक ने शा के सम्बन्ध में लिखा है कि प्रारम्भ में शा को कोई टके सेर भी नहीं पूछता था और इने गिने व्यक्तियों को छोड़ कर साहित्यिक जगत में न कोई उनको जानता था। इस पर शा ने स्वयं अपना विज्ञापन करने के लिये कमर कसी। उस समय वह लन्दन तथा उसके आसपास की पुस्तकों की दूकानों का चक्कर लगाया करते थे। अकस्मात् ही वे ग्राहकों से भरी हुई किसी दूकान में पहुँच कर दूकानदार से पूछते।

'महाशय! आपके पास बर्नार्ड शा की पुस्तकें तो होंगी?" आप दूकानदार चकित होकर उत्तर देता, "बर्नार्ड शा? कौन बर्नार्ड शा? मैंने तो इस लेखक का नाम भी नहीं सुना।"

तब शा धीरे से मुस्करा कर कहते "ओह! आप शा तक को नहीं जानते। आज पत्रों में उसके नाटकों की धूम मची हुई है। अमुक अमुक पत्रों में उनके सम्बन्ध में आलोचनाएं निकली हैं। बाहर उनकी पुस्तकों की बेहद मांग है और आप उनका नाम भी नहीं जानते? खैर, मुझे आशा है कि आपका बुद्धिमान पड़ोसी अवश्य उनकी पुस्तकें बेच कर भारी लाभ उठा रहा होगा।"

इतना कहकर शा चल देते। परिणाम यह होता कि दूसरे ही दिन उक्त दूकानदार शा की पुस्तकों का आर्डर भेजते हुए दिखाई देता।

●

अंग्रेज कहानियां पढ़ते हैं

अंग्रेज लोग अधिक बातचीत करने वाले नहीं हैं। वे प्रेम में उतनी ही दिलचस्पी लेते हैं, जितना आवश्यक है। विषम रूप से वे राजनीति पर बहस नहीं करते और भोजन खाने और पकाने के संबन्ध में भी उनके कोई विशेष विचार नहीं है। वे चाय काफी मात्रा में पीते हैं और भिन्न भिन्न उधार देने वाले पुस्तकालयों का भ्रमण करते हैं। वे पढ़ते नहीं हैं, बल्कि छपी हुई सामग्री का आश्चर्य जनक मात्रा में प्रयोग करते हैं। उन्हे "मैंने यह किस प्रकार किया" अंग्रेजी की पुस्तकें, तथा राजनीतिज्ञों, फिल्म अभिनेताओं, अभियोगियों आदि की आत्म कथाएं विशेष रूप से प्रिय हैं। अंग्रेजी राष्ट्र जो आधुनिक राष्ट्रों में सबसे अधिक संयमशील शांति प्रेमी तथा सभ्य है, उसकी जनता कभी भी अद्भुत कहानियां पढ़े नहीं थकती। मेरा मतलब जासूसी उपन्यासों से नहीं है, लगभग हर अंग्रेजी उपन्यास में एक खून होना आवश्यक है। कोई भी विदेशी यदि अंग्रेजी उपन्यासों के आधार पर उनके चरित्र पर विचार करे तो वह इस निष्कर्ष पर पहुँचेगा कि साधारण अंग्रेज कम से कम हर सप्ताह एक खून तो करता ही होगा।

अन्य यूरोप वालों की बातचीत करने से प्रेम है। उनका राष्ट्रीय मनोविनोद रेस्तोरां में बैठ कर पत्रिकाएं पढ़ना, स्त्रियों पर विवाद करना, हास-पूर्ण बातें करना, राजनीति पर विचार प्रकट करना तथा अल्प समय से ही जान पहिचान हुए लोगों से उनकी आय, गृहस्थ दाम्पत्य जीवन तथा व्यवसाय के बारे में पूछ ताछ करना है।

●

क्या यह सच है?

आसाम को पाकिस्तान का अंग और भाग बनाने के लिए विभाजन से पूर्व मुस्लिम लीग बराबर प्रयत्न करती रही। इस उद्देश्य से आसाम की खाली जमीन पर वह पूर्वी बंगाल के मुसलमानों को बसाने का प्रयत्न करती रही। स्व० श्री बारदोलाई के प्रयत्नों से उसका यह दांव विफल रहा। परन्तु पाकिस्तान के नेताओं ने आशा का त्याग नहीं किया। अब वे सरकार की सहायता से इस कार्य को कर रहे हैं। इसका परिणाम यह है कि श्री रामकुमार भट्टाचार्य के कथनानुसार आसाम का एक भाग 'मुसलमानाबाद' मालूम होता है, क्योंकि आपके ही शब्दों में यहां—

'आज भी भारत भूमि के एक भाग कछार में 'अल्ला हो अकबर' और 'पाकिस्तान जिन्दाबाद' की आवाजें गूंजा करती हैं, यदि कोई हिन्दू 'वन्दे मातरम्' कहता है तो उसे जेल में भर दिया जाता है। यह १९५० के आसाम के भीतर का गम्भीर सत्य चित्र है।'

इस स्थिति के होते हुए भी भारत सरकार उधर से उदासीन है, क्या यह आश्चर्य की बात नहीं? क्या आसाम भी दूसरा काश्मीर बनेगा?

●

मद्य-निषेध क्यों?

क्योंकि मद्य एक अभिशाप है।

क्योंकि व्यक्ति को निराशा के पथ पर उन्मुख करने वाली किसी भी वस्तु को वैधानिक मानने, चलाने या इससे 'कर' उपार्जित करने का अधिकार राज्य को बिल्कुल नहीं।

क्योंकि मद्य का व्यापार अपराध को अधिकाधिक प्रोत्साहित करता है।

क्योंकि मद्य का व्यापार दुर्नीतिमय, अनीति और हिंसा का अधिकाधिक पोषक है।

इसलिए मद्य-निषेध आवश्यक है।

कोई लुटेरा राह चलते मनुष्य को मारपीट कर उसका धन छीन लेता है, तो आस-पास के लोग हल्ला मचा देते हैं और लुटेरे को हर तरह से पकड़ने का प्रयास करते हैं। लेकिन कोई सुशिक्षित, सुथरा हुआ व्यक्ति अपने मित्र को जब के व्यसन में फंसा कर धीरे धीरे उसे बेहोश बना देता है, फिर भी उसे कोई कुछ कहता नहीं। यद्यपि पूर्वोक्त दोनों स्थितियों में कोई अन्तर नहीं, तथापि एक (लुटेरे) के लिए हो-हल्ला होता है और दूसरे (मद्य) के लिए कुछ नहीं कहा जाता। संस्कृति का यह कैसा वैचित्र्य!

—प्रकाश दोषी

●

दूसरों की आलोचना और वादविवाद

जो कोई भी अपना समय दूसरों के गुण-अवगुणों की आलोचना में बिताता है, वह अपना समय गंवा रहा है, क्योंकि वह समय उसकी अपनी आत्मा या परमात्मा के चिंतन में नहीं, बल्कि दूसरों की आत्मा के चिंतन में व्यय होता है।

●

केवल वाद-विवाद से तुम किसी को निश्चित रूप से उसका दोष जतला देने में कभी सफल नहीं होंगे। प्रत्येक मनुष्य अपने दोष तभी समझ पायगा जब उस पर भगवान् की कृपा अवतरित होगी।

—स्वामी रामकृष्ण परमहंस

●

मेरे बेटे, वादविवाद में अपना समय बिताना छायाओं के साथ लड़ाई करना है।

—हर्मिज

●

निरर्थक और मूर्खतापूर्ण विवादों से बचो, यह जानते हुए कि उनसे लड़ाई-झगड़े पैदा होते हैं।

अज्ञानी लोग यदि चुप रहें तो कलह का अन्त हो जाय।

—सुकरात

चित्र में (अ) भाग पूर्णतया मुस्लिम प्रदेश है। (ब) भाग में केवल ३० हजार बौद्ध और शेष मुसलमान हैं, (क) भाग में २० प्रतिशत मुसलमान हैं, इस में ७५ हजार हिन्दू हैं, किन्तु सरकारी कारोबार सब उन्हीं के हाथ में है। (ड) भाग में २० प्रतिशत मुसलमान हैं। (इ) भाग में प्रायः सभी हिन्दू हैं। मोटे बिन्दुओं द्वारा दिखाई गई रेखा युद्ध विराम रेखा है। काला भाग भारत को तथा अ और ब प्रदेश पाकिस्तान को दिये जाय और क प्रदेश में जनमत लिया जाय, यह प्रस्ताव काश्मीर में मध्यस्थ ओवन डिक्सन ने रखा था।

काश्मीर का विभाजन अथवा युद्ध?

श्री बलराज मधोक

सर ओवन डिक्सन के मिशन की असफलता और इस सम्बन्ध में पाकिस्तान तथा के प्रधान मंत्रियों द्वारा दिये गये वक्तव्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि राष्ट्र संघ की सुरक्षा-समिति की ढाई वर्ष की भाग दौड़ के बावजूद काश्मीर-समस्या वहीं है, जहां से यह शुरू हुई थी। पाकिस्तान सरकार का दृष्टिकोण आज भी उतना ही दूषित और उसका बर्ताव उतना ही आक्रमणात्मक है, जितना कि काश्मीर पर आक्रमण करने के समय था। यदि अन्तर पड़ा है, तो केवल इतना कि उस समय पाकिस्तान अपने आक्रमण को छुपाता था और आज वह उल्टा 'चोर कोतवाल को डांटे' की कहावत के अनुसार उल्टा भारत पर काश्मीर में आक्रमण होने का आरोप लगा रहा है।

आखिर समझ आ गई

यह अन्तर मुख्यतः भारत सरकार की नीति और सुरक्षा-समिति के अधिकारियों का फल है। पं० जवाहर लाल नेहरू के कथनानुसार भारत सरकार काश्मीर-समस्या को राष्ट्र० संघ में ले जाने के लिए आज तक पाकिस्तान तथा सुरक्षा-समिति की अनुचित बातों तथा सुझावों को भी मानती रही है। परन्तु यह प्रसन्नता [की बात है कि पंडितजी अब समझ गये हैं कि तुष्टीकरण और झुकने की नीति सफल नहीं हुई, बल्कि [इसका उल्टा ही फल निकला है। प्रातः का भूला यदि सायंकाल घर वापिस लौट आता तो उसे भूला नहीं कहना चाहिये। यदि पंडित जी अब भी तुष्टीकरण की नीति का त्याग कर दें और जैसा कि उन्होंने अपने वक्तव्य में कहा भी है, अब से आगे पाकिस्तान को सिर चढ़ाने की नीति छोड़ दें तो यह काश्मीर समस्या का शुभ वरदान ही होगा।

विभाजन स्वीकार है

जहां तक काश्मीर समस्या की इस समय की वस्तुस्थिति है, भारत ने पहली जनवरी १९४९ के दिन पाकिस्तान आक्रान्ताओं को सारी रियासत से बाहिर निकाले बिना युद्ध बन्द करने की आज्ञा देकर काश्मीर का एक प्रकार का विभाजन तो मान ही लिया है। इस समय रियासत के तीन प्रमुख भाग— गिलगित तथा गिलगित एजेंसी, बलतिस्तान तथा मीरपुर, पुंछ तथा मुजफ्फराबाद के पश्चिमी जिले पाकिस्तान के अधिकार में हैं। यह तीनों मुसलमान-बहुसंख्यक प्रदेश हैं और इनका सीधा भौगोलिक सम्बन्ध पाकिस्तान के साथ भी है। इनका कुल क्षेत्रफल ३२००० वर्गमील के लगभग है और कुल जनसंख्या कोई १३ लाख के लगभग है। इन प्रदेशों में कोई एक लाख के लगभग हिन्दू रहते थे। परन्तु उनमें से आधे से अधिक तो मार दिये गये हैं और बाकी शरणार्थी बन कर भारत में दर दर की ठोकरें खा रहे हैं। आज भी चार पांच हजार के लगभग हिन्दू स्त्रियां व बच्चे इन प्रदेशों में मुसलमानों के पास कष्ट और अपमान के दिन काट रहे हैं। भारत सरकार अपने कई बार दोहराये हुए वचन के अनुसार इन प्रदेशों को पाकिस्तान के हाथों से मुक्त करा कर फिर काश्मीर रियासत का भाग बनाने के लिए नैतिक तथा कानूनी दृष्टि से बंधी हुई है और काश्मीर समस्या का कोई सम्मानपूर्ण हल इनको वापिस लिये बिना सम्भव ही नहीं है। परन्तु इन प्रदेशों को पाकिस्तान के साथ खुल कर युद्ध करने के बिना वापिस लेना असम्भव है। पाकिस्तान अपने हाथ में आये हुए इस इलाके को सीधी तरह छोड़ने को तैयार नहीं है और इसमें उसको अमरीका की शह भी है, क्योंकि वह चाहता है कि गिलगित, जिसका रूस के विरुद्ध युद्ध की दृष्टि से बहुत भारी सैनिक महत्व है। पाकिस्तान के हाथ में ही रहे, ताकि समय आने पर वह उस प्रदेश का उपयोग कर सके। क्योंकि भारत सरकार युद्ध करना नहीं चाहती इसलिए इन प्रदेशों को पाकिस्तान में गये हुए अपने देश के अन्य भागों की तरह अभी तो गया हुआ ही समझना चाहिये।

पाकिस्नान क्या चाहता है?

परन्तु पाकिस्तान यह प्रदेश लेकर सन्तुष्ट नहीं। वह रियासत का बाकी भाग भी, जिसमें— जम्मू, लद्दाख और काश्मीर की घाटी शामिल हैं, लेना चाहता है। इन तीन प्रदेशों में से जम्मू तो हिन्दू बहुसंख्यक प्रदेश है और लद्दाख के रहनेवाले लोग १०० फीसदी बौद्ध हैं। इन दोनों प्रदेशों का सीधा सम्बन्ध भारत के साथ है और इनमें बसने वाले लोग किसी भी हालत में भारत से अलग नहीं होना चाहते। इसलिए यहां जन-गणना करने का तो कोई अर्थ नहीं। काश्मीर घाटी ही जम्मू काश्मीर रियासत के भारतीय भाग का ऐसा प्रदेश है, जिसमें मुसलमान बहुसंख्या में हैं। इसलिए पाकिस्तान इसको किसी भी प्रकार जरूर लेना चाहता है और शायद इसीलिए सर डिक्सन ने यहां जनगणना करवा लेने का सुझाव रखा था। भारत सरकार जनगणना के विरुद्ध नहीं, परन्तु जनगणना भारत सरकार और काश्मीर के लोगों का अन्दरूनी मामला है। यदि भारत सरकार डिक्सन की बात मान कर काश्मीर घाटी का अधिकार राष्ट्र-संघ के जनगणना अधिकारी के हाथ सौंपने को तैयार हो जाती तो यह पाकिस्तान की विजय और भारत की अपमानजनक पराजय होती। इसलिए भारत सरकार ने डिक्सन के सुझावों को रद्द करके यह तो जतला दिया है कि भारत सरकार काश्मीर की घाटी को भी पाकिस्तान के दबाव में आकर उसके हवाले करने के लिये हरगिज तैयार नहीं है।

श्री डिक्सन

मूल प्रश्न

काश्मीर समस्या का मूल प्रश्न यह नहीं कि काश्मीर में जनगणना कैसे और कब हो? मूल प्रश्न, जो कि भारत सरकार ने सुरक्षा-समिति के सामने रखा था, यह है कि काश्मीर में पाकिस्तान ने आक्रमण किया है और पाकिस्तान को ऐसा करने से रोकना चाहिये। जब तक सुरक्षा समिति पाकिस्तान को आक्रमणकारी घोषित नहीं करती और उसे काश्मीर से बिल्कुल निकल जाने के लिए बाधित नहीं करती, उसका भारत के सामने कोई भी सुझाव रखना या उस पर किसी प्रकार का दबाव डालना सरासर अन्यायपूर्ण है। यह हर्ष की बात है कि भारत सरकार ने इस बात को समझ लिया है और सुरक्षा-समिति को पहिले आक्रमणकारी का नाम बताने को कह है। सुरक्षा-समिति द्वारा कोरिया के बारे में जो कदम उठाया गया है, उस

[शेष पृष्ठ २२ पर]

गढ़वाल के भूमिहीन किसानों की समस्या

★ श्री बलदेवसिंह आर्य

पिछले चुनाव के बाद देश के करीब करीब सभी सूबों में कांग्रेसी सरकारें कायम हुईं और इन सब ने भूमि सम्बन्धी सुधारों को सबसे पहले हाथों में लिया, किन्तु हमारी उत्तर प्रदेश सरकार ने सबसे ठोस और क्रांतिकारी काम किया। जमींदारी प्रथा को समाप्त कर दिया गया। जमीन के जोतने वालों को, जो कि सही मानों में जमीन के मालिक थे, भूमिधर बना दिया गया। किन्तु कुमायूं कमिश्नरी के तीन जिलों, गढ़वाल, नैनीताल और अल्मोड़ा (टेहरी गढ़वाल के शामिल होने से अब चार जिले हो गये हैं) के भूमि-सम्बन्धी कानून मैदानी जिलों से भिन्न होने के कारण वहां के लिए अभी कोई नया कानून नहीं बना है। मैदानी हिस्सों के लिए जो कानून बना है, वह वहां लागू नहीं हो सकता। सुना है, उत्तर प्रदेश सरकार वहां के लिए भी शीघ्र ही कानून बनाने जा रही है। इससे पहले कि वह कानून बने, मैं सरकार तक वहां की समस्या को रखना चाहता हूं, जिससे कानून बनाते समय वहां की समस्याओं का पूरा पूरा ध्यान रखा जा सके।

उत्तर प्रदेश सरकार ने कुमायूं के भूमिहीन किसानों की समस्या को सुलझाने के लिए कुछ समय व्यतीत हुआ, एक 'कुमायूं नयाबाद एक्ट' नाम का एक कानून बनाया। अल्मोड़ा और नैनीताल के जिलों में इस कानून के बनने से भूमिहीनों की हालत पर क्या असर हुआ, यह तो मुझे ठीक प्रकार से नहीं मालूम किन्तु गढ़वाल की तो मुझे पूरी जानकारी है और इस जानकारी के ही बल पर मैं कह सकता हूं कि इस कानून के बनने में उनको लाभ के बजाय हानि हुई।

गढ़वाल के अधिकतर भूमिहीन किसानों का सदियों से धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक शोषण होता रहा है। उनके पास न जमीन है, न धन। धार्मिक कानूनों ने उनको मनुष्यता के दर्जे से नीचे गिरा दिया और उनके मनुष्यता के सब अधिकार छीन लिए। एक एक कदम पर उनको दूसरों पर आश्रित होना पड़ा। उनके लिए उन्नति के सब मार्ग बन्द पड़े थे। आर्यसमाज ने उन्हें एक नई चेतना दी, उनमें एक नई जागृति पैदा की। अपने अधिकारों के लिए उन्होंने संघर्ष किया और बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त की। सरकार ने कानून द्वारा छुआछूत को गैर कानूनी मान लिया है और हमें विश्वास है कि चन्द वर्षों के अन्दर यह सामाजिक अभिशाप हमारे देश से मिट जायेगा। किन्तु जहां तक आर्थिक समस्या का सवाल है वह अभी तक हल नहीं हुआ है। सबसे पहला सवाल उनकी भूमि का है। जब तक उनके पास अपनी जमीन नहीं होती, उनकी आर्थिक हालत ठीक होना कठिन है।

'कुमायूं नयाबाद एक्ट' में एक धारा है कि किसी भी गांव की बेनाप जमीन में से दस नाली उस गांव के की जानवर को छोड़ने के बाद ही शेष जमीन की अर्जियां दी जा सकती हैं। जब कि सरकार के पास पशुओं के सही आंकड़े नहीं हैं, प्रायः देखा गया है कि सरकारी कर्मचारी किसी गांव में पशुओं के आंकड़े मालूम करने जाते हैं तो गांव वाले उनको ठीक आंकड़े न देकर उनको बढ़ा चढ़ा कर देते हैं जिससे कि उस गांव के भूमिहीन किसान भूमि प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं। पशुधन को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए, किन्तु पशुओं से अधिक महत्व मनुष्यों का है। इस कानून के बनने से पहले जब बेनाप जमीन की दरख्वास्तें दी जाती थीं तो इस बात पर सरकार कभी भी ध्यान नहीं देती थी कि इस अमुक गांव में गोचर के लिए कितनी जमीन बेनाप है। गढ़वाल के सैकड़ों ऐसे गांव हैं जहां गोचर के लिए बेनाप जमीन नहीं के बराबर है। कुछ गांवों में तो नाप खेतों को गोचर के लिए बंजर छोड़ दिया गया है। फिर जब भूमिहीन किसानों को जमीन देने का सवाल आया तो सरकार ने भी जानवर पर दस नाली गोचर छोड़ना किसी प्रकार आवश्यक समझा। इन कमियों की वजह से भूमिहीनों को लाभ के स्थान पर हानि हुई है। अतः मैं सरकार से अनुरोध करूंगा कि तुरन्त इस कानून को रद्द कर दिया जाय।

उपर्युक्त 'नयाबाद एक्ट' के अनुसार एक आदमी को २० नाली से अधिक जमीन नहीं मिल सकती। पिछले एक वर्ष के अन्दर अकेले गढ़वाल जिले से ६००० के करीब दरख्वास्तें दी गयीं, जिनमें सिर्फ ३०० के करीब अब तक मंजूर हुई हैं। गढ़वाल के साप्ताहिक-पत्र 'कर्म भूमि' का अनुमान है कि इन दरख्वास्तों के सिलसिले में कतिपय छोटे सरकारी कर्मचारियों ने करीब २॥ लाख रुपये रिश्वत के रूप में कमाये। सरकार को इसकी ओर ध्यान देना चाहिये और आगे के लिए मैं सरकार को यह सुझाव दूंगा कि हमारे चार जिलों की प्रत्येक तहसील में प्रतिष्ठित आदमियों की एक-एक गैरसरकारी कमेटी बनाई जाय और भूमि-सम्बन्धी सब अर्जियां उस कमेटी के द्वारा सरकार के पास जांय तथा उस कमेटी की ही सिफारिशों पर भूमि-हीन किसानों को जमीन दी जाय।

मैं इस बात को पूरी तरह समझता हूं कि गढ़वाल में इतनी जमीन नहीं है, जिससे कि सब भूमि-हीन किसानों की जमीन सम्बन्धी समस्या हल हो सके, और इसके लिए यह आवश्यक होगा कि सरकार उनको वहीं अन्यत्र बसाने का आयोजन करे। कोटद्वार नजीबाबाद तक का काफी हिस्सा बंजर है और जंगलात विभाग के आधीन है। हरिद्वार से लेकर राम नगर तक का हिस्सा इसी प्रकार बंजर है और यदि सरकार चाहे तो इस हिस्से पर हजारों परिवारों को बसा सकती है। सुना है सरकार ने इस बारे में जंगलात विभाग से लिखा-पढ़ी की थी और जंगलात विभाग वालों ने उत्तर दिया कि यदि वह जंगल काट कर

[शेष पृष्ठ २२ पर]

कांग्रेस का शासन लोकसत्ता का उपहास है

योग्य व्यक्ति वर्त्तमान शासकों का स्थान लें

भारत के विधान में प्रथम वाक्य यह है कि हम भारत वासी भारत में लोकसत्तात्मक प्रजातंत्र स्थापित करने जा रहे हैं। इस राज्य में न्याय होगा। स्वतंत्रता होगी। समानता और भ्रातृभाव होगा।

यूं तो कांग्रेस का १९२१ से लेकर १९४७ तक का इतिहास यह बताता है कि लोकसत्तात्मक भाव तो इस के नेताओं में कभी नहीं रहा। यह संस्था इस काल में एकाकी शासन से चलती रही है। इस पर भी यह विचार था कि १९४७ में परिस्थिति बदल गई है और नेता लोग इस बदली हुई परिस्थिति का अनुभव कर अपना आचरण बदल डालेंगे। परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ। शासन सम्भालते ही इन में मनमानी करने आदि कुछ अधिक ही हो गई है।

देश विभाजन जैसे महत्वपूर्ण कार्य को इन्होंने लोगों की सम्मति लिए बिना स्वीकार किया इस पर भी ये लोग अपनी भूल स्वीकार न कर डींग हांकते रहे हैं कि उन्होंने देश का उपकार किया है। देश विभाजन में यदि ये लोग कुछ सूझ बूझ रखने वालों से भी राय कर लेते तो कम से कम जनता का स्थान परिवर्तन का विषय तो विचार लिया जाता। स्थान परिवर्तन की बात गांधी जिन्हा वार्तालाप में भी आई थी परन्तु गांधी जी ने इसे नहीं माना था। पश्चात्, श्री पं० जवाहरलाल जी इसे मूर्खतापूर्ण बात मानते रहे हैं। अब भी श्री मुकर्जी के वक्तव्य का संसद् में उत्तर देते हुए पंडित जी ने लोगों के देश परिवर्तन को महान मूर्खता का नाम दिया है।

पंडित जी को अपने विचार मुबारिक हों परन्तु जब वे विचार राजकीय-कार्यों में प्रयोग किये जाते हैं तो उस में जनता की सम्मति लेनी आवश्यक हो जाती है। संसद् जैसा कि सबको विदित है, भेड़ों की मंडी है। ये लोग १९२१ से आंखें मूंद कर नेता का कहना मानने का अभ्यास किये हुए हैं। फिर ये किसी नियमित चुनाव से संसद् के सदस्य नहीं बने। इसलिये उनका नेता की किसी बात पर आपत्ति न उठाना यह प्रकट नहीं करता कि देश नेता के निराधार विचारों का समर्थन करता है। जनता के देश परिवर्तन की बात उन लोगों से पूछनी चाहिए थी जो लोग अपने देश से पृथक किए जा रहे थे।

यह नेताओं की अनधिकार चेष्टा है कि वे बिना किसी से पूछे उनकी राष्ट्रीयता बदलने पर उतारू हो गये। मान लो कि देश विभाजन के पश्चात् पाकिस्तान सरकार हिन्दुओं की रक्षा करती, उनके अधिकारों को मानती और उनको राज्य कार्य में उचित भाग देती, तब भी किसी को क्या अधिकार था कि एक भारतवासी को बिना उससे पूछे पाकिस्तानी बनने पर विवश किया जाए? एक व्यक्ति जो जन्म से भारतवर्ष की देश भक्ति से ओत प्रोत रहा हो, जो गंगा जमुना, अयोध्या काशी, पुरी गोदावरी, इत्यादि स्थानों के इतिहास से अपने को सम्बन्धित समझता हो, जो भारत का अपनी मां तक की मान मर्यादा हृदय में धारण कर चुका हो, उसे दो तीन नेता दिल्ली में बैठ एक कलम की चोट से मिटा देने का निर्णय कर दें। कोई लोकसत्तात्मक भावना रखने वाला नहीं मान सकता। यदि किसी विवशता से ऐसा किया गया तो उन लोगों को, जिनकी राष्ट्रीयता बदल रही थी। भारत में अपनी धन सम्पत्ति के साथ निकाल लाने की योजना होनी चाहिये थी। इसको मूर्खता कहना तो अपने मस्तिष्क की विकृतावस्था को प्रकट करना है।

प्रजातन्त्र की होली

यह तो हुई १९४८ के पूर्व की बात। लोगों ने देश परिवर्तन करने का यत्न किया। वे लोग जो लुट पिट कर पाकिस्तान से आये वे अपने लिए भारत में स्थान बनाने लगे। सरकार की तो कोई योजना थी नहीं। सरकार तो चाहती थी हिन्दू, चाहे मरें, पिटें, लुटें अथवा उनकी बहू बेटियों से दुराचार किया जावे वे अब पाकिस्तान के भक्त बन कर रहें। यह मूर्खता तथा क्रूरता की चरम सीमा थी। महात्मा गांधी और पं० जवाहर लाल नेहरू इस अपराध के अपराधी हैं। इस पर भी लोग आये और देश में इन लोगों के लिए सहानुभूति का समुद्र उमड़ पड़ा। परन्तु ये लोकसत्तात्मकता की शपथ लेने वाले नेता न तो इन लोगों को भारत में बसाने की कोई योजना बना सके न ही उनको स्वयं बसने की स्वकृति दे सके।

यह स्वतन्त्रता के आरम्भिक दिनों की बात है। इससे आरम्भ हो कर यह तानाशाही चलती ही गई है। कई अंशों में यह इतनी अधिक हो गई है कि देश के हित चिन्तकों को देश की स्वतन्त्रता पर भी संदेह होने लगा है। नेता लोगों की विकृत मनोवृत्ति और तानाशाही के उदाहरण लिखने बैठें तो सहस्रों पृष्ठ की पुस्तक लिखी जा सकती है। यहां केवल एक दो उदाहरण देने ही पर्याप्त होंगे।

महात्मा गांधी की हत्या का मुकदमा चलने वाला था। श्री सावरकर को निर्दोष सिद्ध करने के लिए उनके मुकदमे मे पैरवी के अर्थ धन एकत्रित करने का कुछ लोग यत्न करने लगे थे। कांग्रेस के एक महान् नेता जो पी० ऐच० डी०, बैरिस्टर हैं एक दिन क्रोध में उतावले हो, बोले— 'देखो जी, महात्मा जी की हत्या की और अब खूनी को बचाने को मुकदमे के लिए चन्दा किया जा रहा है।'

यदि कोई बाजारू, कम शिक्षित व्यक्ति यह कहता तो क्षम्य था, परन्तु एक नेता, डाक्टर, बैरिस्टर और सरकार के रहस्यों को जानने वाले के द्वारा यह कहा जाना हिमाकत के सिवा और कुछ नहीं हो सकता। उस समय भी, उसके पश्चात् मुकदमे में भी और मुकदमा समाप्त हो जाने पर भी श्री सावरकर का गांधी जी की हत्या मे कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सका। इस प्रकार एक निर्दोष की पैरवी करने का अधिकार भी देना कांग्रेस के नेताओं को स्वीकार नही है।

श्री सरदार पटेल का संसद् मे नागरिक स्वतन्त्रता पर भाषण एक और उदाहरण है जिससे यह प्रकट होता है कांग्रेस सरकार चलाने वाले नेताओं ने प्रजातंत्र की होली करनी आरम्भ कर दी है। श्री सरदार ने खुले दरबार मे उन लोगों पर जो उनसे सहमत नही हैं लाञ्छन लगाये हैं जिनको किसी भी न्यायालय मे सिद्ध करने मे वह अशक्त है। संसद मे कही बात पर कोई कानूनी कार्यवाही नही कर सकता, परन्तु जब किसी राज्य का गृह मन्त्री यह कहता है कि अमुक व्यक्ति कोई हत्या करने का षडयंत्र कर रहा है तो परिस्थिति बहुत गंभीर हो जाती है। गृह मन्त्री को ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध न्यायालय में अभियोग चलाना चाहिये। परन्तु इस प्रकार के निराधार लाञ्छन गृह मंत्री पहले भी लगाने का स्वभाव रखते हैं। एक बार श्री माधवराव सदाशिव गोलवलकर से मिलने के लिए कुछ लोग ग्वालियर से आये। दुर्भाग्य से महात्मा गांधी की हत्या में प्रयोग होने वाला पिस्तौल भी ग्वालियर में प्राप्त किया गया कहा जाता है। तुरंत माधवराव गोलवलकर को १८१२ के आततायी कानून के अनुसार बंदी बना लिया गया।

इसके अर्थ यह हुए कि ग्वालियर का प्रत्येक व्यक्ति महात्मा गांधी की हत्या में अपराधी है। बुद्धि को अंधकूप मे बंद कर रखने का इससे अधिक स्पष्ट उदाहरण और क्या हो सकता है? परन्तु कोई भी विचारशक्ति रखने वाला व्यक्ति यह समझ सकता है कि श्री गोलवलकर को बन्दी इस कारण नहीं बनाया गया था कि ग्वालियर से कुछ लोग उनसे मिलने आये थे और ग्वालियर से महात्मा गांधी की हत्या करने वाला पिस्तौल आया था। यह तो झूठा बहाना था। वास्तव में बात यह थी कि श्री गोलवलकर की विचारधारा श्री पटेल को पसंद नहीं और महात्मा गांधी की तानाशाही से शिक्षा प्राप्त किये हुए श्री सरदार अपने विरोधी को सहन नहीं कर सकते थे। उन्हें आजन्म बंदी बना रखने की धारा से उस देश से बाहर करने का यत्न कर दिया।

पं० जवाहरलाल भी पटेल जी से कम तानाशाही चलाने वाले नहीं हैं। कुछ दिन हुए श्रीमान जी ने कहा था कि 'कांग्रेस में फूट पड़ गई है और शायद इसकी समाप्ति करनी पड़े, यदि कोई शक्तिशाली संस्था देश मे बन जाए।'

इसके अर्थ यह हैं कि जब तक कांग्रेस शक्तिशाली है तो पंडित जी उसके नेता हैं और जब कोई दूसरी संस्था शक्तिशाली होगी तो वे उसमें मिल जावेंगे। अर्थात् सिद्धान्त और उद्देश्य कुछ अर्थ नहीं रखते। संस्था के शक्तिशाली होने मे वे उसे अपना लेंगे।

यह बात एक और उदाहरण से भी स्पष्ट होती है। श्री पंडित जवाहरलाल जी ने पार्लियामेंट में एक वक्तव्य में कहा है कि '८ अप्रैल के नेहरू-लियाकत समझौते में यह बात मान ली गई है कि कोई व्यक्ति अथवा संस्था जो ऐसा प्रचार करे जिससे दोनों देशों की सीमाओं को बढ़ाने की बात हो तो उस व्यक्ति अथवा संस्था के विरुद्ध कार्य किया जावेगा। परन्तु भारत का विधान उन्हे ऐसा करने से मना करता है और उसे शोक है कि वह इस शर्त का पालन नहीं कर सके।'

तो प्रश्न यह उपस्थित होता है कि श्रीमान ने यह समझौता किया ही क्यों जो विधान के विरुद्ध है। और यदि

[शेष पृष्ठ १८ पर]

ले०— श्री गुरुदत्त

स्वतन्त्रता के पश्चात निर्माणकार्य हमारे सामने है

देश की आत्मा उसकी संस्कृति है

सांस्कृतिक अनुष्ठान

(लें०— श्री रामचन्द्र शर्मा, संपादक "महारथी")

राजनीतिक आन्दोलन का युग समाप्त हो चुका। अब देश हमारा है। भले लोग स्वतन्त्रता का उपभोग कैसे करते हैं और उस आनन्द को स्थिर किन उपायों से बनाते हैं, यह समझना समझाना इस जीवन की मांग है।

गांधी जी अपने देश में राम-राज्य की स्थापना करना चाहते थे। इस पुण्य भूमि ने कभी उस वैभव का सुख भोगा था और विश्व ने इसे देखा था। तब से अब तक न जाने कितने युग पलटे, ज्ञान भूला, विज्ञान बदला, राज्य बने और मिट गये पर वह सुखद स्मृति आज भी वैसी ही उत्साह-वर्द्धक बनी है। संसार भारत का वही दिव्य रूप देखना चाहता है जिसके वर्णन मात्र से आदि-कवि वाल्मीकि की लेखनी धन्य हो गई थी।

हमारा राष्ट्रीय मानस इस समय असंयत, अनैतिक, चंचल और विक्षुब्ध हो उठा है। युद्ध अथवा क्रांति के बाद सभी देशों को घोर संकट का सामना करना पड़ता है। हम उससे कैसे बच सकते थे? पर सदैव किसी न किसी महान् आत्मा ने अवतार ले कर भारत को उबारा है। समय समय पर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य, कबीर, नानक, रामदास, प्रताप, गुरु गोविन्दसिंह, शिवाजी, दयानन्द, विवेकानन्द, तिलक, गांधी प्रभृति महान् विभूतियों ने भयंकर से भयंकर परिस्थितियों में भारतीयता की रक्षा की है और उसका निर्माण भी किया है। लक्ष्य प्राप्त हो जाने पर राजनीतिक स्वतन्त्रता स्वयं अन्त नहीं होती, वह तो सामाजिक तथा आर्थिक विकास का निमित्त बनती है।

देश अपने वासियों की नैतिकता, निष्ठा और निग्रह के बल पर ही बढ़ते हैं। जन-जन में उच्च चिन्तन, सक्रियता और आत्म-निर्भरता का भाव, सौन्दर्य की शक्ति, सृजन का सार और जीवन की सचाई लाना ही महान् आत्माओं का कर्तव्य है। भारतीय जीवन की महानता त्याग और तपस्या में है। यहां के उज्ज्वल चरित्रों के प्रकाश में ही कर्म प्रधान इस पुण्य-भूमि के महापुरुषों ने जो कुछ किया है उस पर कोई भी देश अथवा जाति गर्व कर सकती है।

हम आज यह भी भूल गये हैं कि वास्तव में सुख है क्या। इन्द्रियों के भोग में ही हमारे सारे क्रिया-कलापों की इतिश्री हो जाती है। कोई समय था जब हम मन को वश में रखते थे। आज तो हम उसके संकेतों पर नाचने लगे हैं। चारों ओर चाहना का तूफान उमड़ रहा है जिसमें लोग डूब उतरा रहे हैं। अभिलाषाओं का कोई अन्त नहीं होता और इनका सीमा लांघ जाना मनुष्य-जीवन में निराशा का संचार करता है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि का चलन उठ जाने से हमारा सब कुछ अव्यवस्थित हो गया है। जीवन सुखमय बनाने के लिये उसका प्रत्येक अंग संवारना होगा। मर्यादा तोड़ कर चलने को भले ही हम प्रगति कह लें, परन्तु वह तो अपने उचित मार्ग पर ही सफल और सुखद हो सकती है।

इस कार्य में हमारी संस्कृति का सम्बल, जिसने आज तक भारतीयता की रक्षा की है, बड़ा सहारा देगा। चाहने पर भी तो हम उसे निकाल कर नहीं फेंक सके। किसी देश की संस्कृति ही उसके मानसिक धरातल का बोध कराती है। इसे किसी एक व्यक्ति का पुरुषार्थ नहीं बना बिगाड़ सकता। यह तो असंख्य ज्ञात-अज्ञात साधियों के भगीरथ प्रयत्न का पका फल होता है जो संस्कार बन कर व्यक्ति एवं समाज को चमका देती है। विदेशों में रहने पर भी वह मनुष्य के मन और आत्मा पर छाई रहती है। विदेशों में बसने वाले भारतीय जब कभी भारत आते हैं, तो उन्हें लगता है मानों मां की गोद में आ गये हों। भारतीय संस्कृति के विषय में अनेक भ्रामक विचार-धाराओं का मूल कारण हम में अपनी संस्कृति के प्रति आत्मीयता का अभाव है।

जिस रूप में भारत आज राजनीतिक दृष्टि से एक राष्ट्र है, देश की वैसी एकता तो बहुत थोड़े काल तक रही है। परन्तु भारत की सांस्कृतिक एकता सहस्रों वर्षों से अटूट चली आ रही है। इसे स्थापित करने में प्रमुख भाग ऋषि, मुनि, सन्त, तीर्थ-यात्री, विद्यार्थी और महत्वाकांक्षी नरपतियों ने लिया है। राजनीतिक इतिहास के नायक प्रायः युद्ध-लिप्सु रहे हैं किन्तु सांस्कृतिक इतिहास के निर्माता संसार को शान्ति और प्रेम का सन्देश देने वाले महात्मा बुद्ध, महावीर, कबीर, नानक जैसे साधु-सन्त, शंकराचार्य तुल्य दार्शनिक, कालिदास, सूर, तुलसी सरीखे अमर कवि हैं। अनेकत्व में एकत्व ही भारतीय संस्कृति की एकता का मूल-मंत्र है।

इस विशाल देश में सर्वत्र एक दूसरे से भिन्न दिखाई देने पर भी अनेक भाषायें, आचार और धर्म एक संस्कृति के सुनहरे तार में पिरोये रंग-बिरंगे मन के हैं। मर्यादा-पुरुषोत्तम राम और योगिराज कृष्ण को समान रूप में आदर्श स्वीकार करना, वेद, उपनिषद्, धर्मशास्त्र, गीता, रामायण, महाभारत, पुराण और ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा; गौ, गंगा और गायत्री का सर्वत्र पवित्र माना जाना; शिव, विष्णु, ब्रह्मा आदि पुराण-प्रतिपादित देवी-देवताओं का विधिपूर्वक पूजा-पाठ; हरिद्वार, प्रयाग, अयोध्या, मथुरा, काशी, कांची, अवन्ती आदि पवित्र तीर्थों पर सब की अटूट श्रद्धा; गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, गोदावरी तथा कावेरी को पतित-पावनी माता की गोद मानना; वर्ण-व्यवस्था के आधार पर ब्राह्मणों का रक्षा-बन्धन, क्षत्रियों का दशहरा, वैश्यों की दीवाली तथा अन्त्यजों की होली—चार प्रमुख त्योहारों की सार्वजनिक रूप से मान्यता आज भी सम्पूर्ण देश को एक सूत में बांधे हुये हैं।

कन्या कुमारी से पितरों की अस्थियों को प्रवाहित करने के हेतु हरिद्वार आने वाले दक्षिणी भारत वासियों और गंगा का जल रामेश्वरम् के मन्दिर में चढ़ाने वाले उत्तर भारतीयों के पारस्परिक सम्पर्क से सांस्कृतिक एकता का पुष्ट होना स्वाभाविक था। प्राचीन काल में इस एकता को संस्कृत और पाली ने पुष्ट किया, भविष्य में यह कार्य हिन्दी के द्वारा पूर्ण होगा।

वैदिक काल से अब तक हमारे समाज के आचार विचार में धीरे धीरे अनजाने बहुत अन्तर आगया है। भारत ने यवन आदि प्रभावों को अपने में समा लिया और धर्म के नाम पर किये गये भीषण अत्याचारों से पीड़ित हो कर आने वाले पारसियों, यहूदियों और ईसाइयों को केवल शरण ही नहीं दी, उनके धार्मिक विश्वासों को पनपने की खुली छूट भी दी। यह सहिष्णुता और उदारता हमें वेदों और उपनिषदों से मिली। ऋग्वेद के अनुसार एक ही भगवान् का वर्णन ज्ञानी नाना प्रकार से करते हैं। गीता के भगवान् कृष्ण ने यहां तक कहा है कि अन्यान्य देवताओं की श्रद्धा पूर्वक उपासना करने वाले मेरा ही भजन करते हैं। सात्विक जीवन और तपस्या द्वारा जो शक्ति भारतीय ऋषियों ने अर्जित की थी, जीवन के कल्याण के लिये उसे सम्पूर्ण मानव जीवन में व्याप्त कर दिया। यज्ञ हो या युद्ध, सभी के अंत में "ओम् शान्तिः" की प्रार्थना अनिवार्य है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति की महानता विनाश और विध्वंस में न हो कर प्रश्रय और संरक्षण में रही है।

इस भ्रम को बहुत पोषण मिला है कि भारतीय संस्कृति में केवल अध्यात्मवाद है और भौतिकवाद की अवहेलना है। परन्तु भारतीय शास्त्रों के मतानुसार तो प्रत्येक व्यक्ति को चार पुरुषार्थ प्राप्त करने अनिवार्य हैं। इनकी सिद्धि के लिए जीवन चार आश्रमों में बांटा गया है। ब्रह्मचर्य और गृहस्थ द्वारा धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति तथा वानप्रस्थ एवं सन्यस्थ आश्रमों में मोक्ष पाने का यत्न किया जाता है। जब तक इस क्रम पर समान रूप से बल दिया जाता रहा और यह धारणा बनी रही कि एक ही पुरुषार्थ में आसक्त होने वाला व्यक्ति घृणा का पात्र होता है तब तक भारत संसार का सिरमौर बना रहा। भारतीय संस्कृति की यह विलक्षणता है कि अत्यन्त विकट परिस्थितियों में रह कर भी इसके मौलिक आदर्शों में कोई अंतर नहीं आ सका। तभी तो—

> यूनान, मिश्र, रोमां,
> सब मिट गये जहां से।
> कुछ बात है कि गौरव,
> मिटता नहीं हमारा॥

शरणार्थी समस्या

[२]

श्री "आनन्द"

शरीर में किसी भी असाध्य रोग पर विजय प्राप्त करने के लिए सबसे प्रथम आवश्यक बात उसकी वृद्धि को रोक देना है। जब चिकित्सक रोग की वृद्धि को रोक पाने में सफल हो जाता है, तभी वह आत्मविश्वास के साथ यह कह सकता है कि मैंने रोग पर काबू पा लिया। और फिर रोगग्रस्त व्यक्ति को शीघ्रातिशीघ्र स्वस्थ करने का प्रयत्न करता है।

प्रवाह जारी रहा

राष्ट्र के जीवन में उत्पन्न होने वाली असाध्य अव्यवस्थाओं पर विजय पाने के लिए भी प्रथम आवश्यक पग उसकी वृद्धि को रोकना है। रूसियों ने इसी मार्ग का अवलम्बन किया था। किन्तु भारत में स्थिति आज तक वही विचित्र है। शरणार्थियों की संख्या वृद्धि को रोकने के सम्बन्ध में नेहरू सरकार ने घोर राजनीतिक बुद्धि-हीनता का परिचय दिया है। पश्चिमी पंजाब से शरणार्थियों का तांता बंधा, पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त से लोग प्राण बचा कर भागे और हमारे नेता यही सोचते रहे कि यह साधारण दंगे हैं, मुस्लिम लीग को पृथक राज्य चाहिये, वह पाकिस्तान उनको मिल गया है। चाहे शासन में विभाजन हो गया हो, किन्तु साधारण जीवन में अब हमने हिन्दू मुस्लिम एकता प्राप्त करली है। अतः पंजाब के हिन्दुओं को वहां के मुसलमानों के साथ प्रेम-पूर्वक रहना चाहिए।

अतः एक चतुर तथा दूरदर्शी राजनीतिज्ञ की भांति मुस्लिम लीग कि मन्तव्यों को कम से कम पंजाब में हुए इस हत्याकांड से ही पहिचान कर पूर्व पाकिस्तान के हिन्दुओं के विषय में पहिले ही से चिन्ता कर लेने की बुद्धिमत्ता प्रकट करने के स्थान पर हमारे नेता पश्चिमी पंजाब से निकल कर आये हुए हिन्दुओं में पुनः अपने स्थानों पर लौट जाने का प्रचार करने में ही लगे रहें। फलस्वरूप निकल आये हुए लोग जहां यह अपेक्षा करते थे कि हमारे साथ प्रेम तथा सहानुभूति का व्यवहार होगा, वहां वह अनुभव करने लगे कि हमें तो पुनः जलती हुई भट्टी में कूदने के लिए कहा जा रहा है, और उनमें एक प्रकार कटुता का सूत्रपात हुआ।

हमारे नेताओं द्वारा वास्तविकता से आंखें मींचे रहने का परिणाम शीघ्र ही दिखाई दिया। अधिक समय नहीं बीता था कि सिन्ध से हिन्दुओं का प्रवाह आरम्भ हो गया। हम पुनः अहिंसा, और 'हिन्दू-मुस्लिम एके' आदि विचारों को अपने राष्ट्रवासियों के जीवन से अधिक महत्व देते रहे, किन्तु ऐसा कोई कदम न उठाया, जिससे देश में शरणार्थियों की [illegible] आ सकती। अब लाखों पूर्वी पाकिस्तान के हिन्दू भी शरणार्थी बन कर हमारे बीच में आ गये।

किन्तु इसके पश्चात् भी हम नहीं समझ सके और सामने देख कर चलना आरम्भ नहीं किया। उसी ऊपर की ओर मुंह उठाये हुए चलने के कारण पूर्वी बंगाल के हत्याकाण्ड की घातक ठोकर पुनः लगी। साठ लाख से अधिक व्यक्ति इस ओर से निकल कर इधर आ गये हैं, और अभी तक प्रवाह रुका नहीं है। फिर भी हम संसार की वास्तविकता को पहिचानने से इन्कार कर रहे हैं और इसीलिए यह भय है कि पता नहीं कब शेष साठ लाख के लगभग भारतीयों पर दुर्भाग्य का पहाड़ टूटेगा और हमारे वे भाई भी उसी प्रकार दर दर भटकते फिरेंगे, जिस प्रकार का नारकीय जीवन असंख्य व्यक्ति बिता रहे हैं।

अतः यह स्पष्ट है कि नेहरू सरकार ने चाहे कुछ भी किया हो किन्तु वह इस समस्या के मूल पर कुठाराघात करने में पूर्णतः असफल रही है। यह पूर्णतः निर्विवाद एक तथ्य है और आज स्वयं पं० नेहरू भी विश्वास के साथ यह नहीं कह सकते कि देश की सीमाओं में और अधिक हिन्दू शरणार्थी के रूप में नहीं आवेंगे। यथार्थ में नेहरू-लियाकत समझौते के पश्चात् कितनी ही बार जब यह प्रश्न विविध रूपों में पं० नेहरू के सम्मुख आया है, उन्होंने भविष्य के विषय में न केवल सन्दिग्ध उत्तर ही दिये हैं, वरन उनके उत्तरों से यही ध्वनि निकलती है कि पता नहीं कब यह ज्वालामुखी फट पड़ेगा।

देश के भावी नागरिक

दूसरी विशेष बात जो इसी योजना में स्पष्ट दिखाई देती है सर्वप्रथम बालक-बालिकाओं की चिन्ता करना। कारण स्पष्ट है। इस पीढ़ी के लोग जिनके व्यक्तित्व का विकास हो चुका है, यदि किसी आपत्ति में पड़कर असाधारण कष्ट भी उठाते हैं तो इतनी अधिक चिन्ता की बात नहीं, जितना कि भावी पीढ़ी का संकट में पड़ जाना। बाल्यावस्था के जीवन में आंतरिक शक्ति, बुद्धि तथा योग्यता का विकास कर भावी व्यक्तित्व बनाने का कार्य होता है। इसी लिये प्रत्येक राष्ट्र सब से अधिक चिन्ता अपनी भावी पीढ़ी की करता है। यदि किसी देश के बालकों को पेट भरने के परिश्रम में ही अपनी शक्ति नष्ट करनी पड़े तो कुछ ही वर्षों में वहां का नैतिक स्तर बुरी तरह गिर जायेगा।

कितने दुःख का विषय है कि भारतीय स्वातंत्र्य के साथ-साथ हमारे देश में लाखों बालक अपना पेट भरने के लिए क्या कुछ करते दिखाई नहीं देते। कितना करुण दृश्य है। सड़कों पर, बाजारों में, रेल के डिब्बों में, चारों ओर छोटे छोटे भोले बालकों की दशा देख कर कितनी बार नेत्रों में आंसू उमड़ आते हैं। जिस समय इनकी शिक्षा दीक्षा हो, इनकी उन अन्तःस्थ शक्तियों का विकास हो, जिससे ये बड़े होकर देश के सुपुत्र बन सकें, वह समय न केवल किसी प्रकार ये अपना और अपने परिवार का पेट भरने के लिए दो पैसे कमाने में ही लगा रहे हैं, वरन अनेकों कानूनों से बचा कर, चोरी से अथवा छुपा कर यहां नहीं तो सरकारी कर्मचारियों को घूस देकर भी अपने को आय देने वाली सामग्री किस प्रकार रेल अथवा मोटर द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सकता है, यही बेईमानी के हथकण्डे और चरित्रभ्रष्टता के पाठ सीखने में ही उनका समय जाता है।

रेल में यात्रा करते समय इस प्रकार चलने वाले बालकों को लगभग सभी ने देखा होगा। कितने ही ऐसे बालकों से मैंने वार्तालाप किया है। उनके परिवार की दशा सुनकर तो आंखों में तरलता आई ही है, किन्तु उससे भी अधिक उनके दैनिक जीवन को जानकर हृदय रोता है। जब वह बताते हैं कि किस प्रकार रोक लगे हुए चावल, गुड़, घी, अथवा अन्य किसी पदार्थ को वे रेल में रख कर ले जाते हैं; कहीं पुलिस वालों को रिश्वत देते हैं, कहीं रेलवे कर्मचारियों को, किस प्रकार कस्टम अधिकारियों से बचाने के लिए वे स्टेशन आने के पूर्व ही वे माल नीचे फेंक देते हैं और वहां पहिले ही से प्रतीक्षा करते हुए उनके अन्य साथी उसे उठा ले जाते हैं, किस प्रकार और कहां २ वे माल को गाड़ी में छिपाते हैं, स्त्रियों के डिब्बे में और कभी कभी तो फर्स्ट क्लास में भी, तो हृदय रो पड़ता है। और इस प्रकार की जैसे जैसे अनेकों कथायें मैंने सुनी, हृदय में बार बार विचार उठता था क्या इन बच्चों को इस प्रकार जीवन बिताने देकर हमारी सरकार भविष्य के लिए एक बहुत बड़ी संख्या में चोर तथा धोखा देने वालों को जन्म नहीं दे रही है—एक ऐसे वर्ग को जो ऐसी अवस्था में इन सारी सामाजिक बुराइयों को सीख रहा है, जिस से बड़ा होकर वह यह समझ ही नहीं सकेगा कि इन बातों में कोई बुराई है?

निष्क्रियता की भावना

यदि स्पष्ट ही कहा जाय तो यह एक अत्यन्त कटु सत्य है कि इन बालकों के भविष्य के विषय में नेहरू सरकार और उसके पुनर्वास अधिकारियों ने कभी गंभीरता से विचार ही नहीं किया। अतः यह कहा जा सकता है कि नेहरू सरकार ने देश के लाखों बालकों का भविष्य बिगाड़ दिया, उन्हें सच्चरित्र नागरिक बनने के स्थान पर भ्रष्टचरित्र और पतित जीवन बिताने वाले मार्ग पर चलने के लिए बाध्य किया है।

रूस की योजना का तीसरा भाग सभी व्यक्तियों की शक्तियों का उपयोग देश का उत्पादन बढ़ाने में सफलतापूर्वक कर लेने में है। नेहरू सरकार इसमें पूर्णतः असफल हुई है। फलस्वरूप जहां रूस ने अपनी उत्पादन शक्ति को बढ़ा कर जर्मनी जैसे प्रबल शत्रु को न केवल परास्त ही किया, किन्तु देखते देखते अपनी क्षति पूर्ति कर आज वह अमरीका जैसे राष्ट्र के लिए भी भय का कारण बना हुआ है, वहां भारत की आर्थिक स्थिति संभाले नहीं संभल पा रही है और पाकिस्तान जैसा छोटा सा राज्य भी सदा हमारे सिर पर सवार है।

कांग्रेस सरकार ने इस समस्या का उपाय विशाल शरणार्थी शिविर खोल कर उनमें लाखों व्यक्तियों को बसा कर तथा उन्हें मुफ्त राशन बांट कर किया। बड़ी-बड़ी रिपोर्टें प्रकाशित हुई जिनमें यह बताया गया कि इतने करोड़ रुपया शरणार्थियों पर पर व्यय किया जाने वाला है और इतने लोगों को मुफ्त राशन बांटा जा रहा है। इसे अपना सर्वस्व खो कर आए हुए भाइयों के प्रति दयाप्रदर्शन कहा जा सकता है। किन्तु इसकी व्यावहारिक मूर्खता में कोई संदेह नहीं। देश में लाखों व्यक्तियों को इस प्रकार बैठे बिठाये खिलाते रहने का अर्थ देश के पूर्वजर्जरित आर्थिक ढांचे पर एक भारी बोझ ही नहीं था, वरन उनमें एक घातक निष्क्रियता, कामचोरी और बेईमानी के बीज-बोना है। सरकार का उद्देश्य सम्भवतः बहुत अच्छा होगा। किन्तु अच्छे उद्देश्य के रहते हुए भी यदि बुद्धि का साथ छोड़ कर उपाय किया जाय तो भयंकर हानि होने की सम्भावना रहती है।

यदि नेहरू सरकार वस्तुस्थिति को पहिचानती, थोथे तथा अव्यावहारिक आदर्श की कल्पना भूमि को छोड़ कर यथार्थता की कठोर भूमि पर आती, इस समस्या पर स्वतंत्र बुद्धि से विचार कर गंभीरतापूर्वक इसे हल करने के लिए कोई योजना बनाती और उसे कार्यान्वित करती तो कोई कारण नहीं था कि यह समस्या अभी तक सुलझ न पाई होती। किन्तु दुर्भाग्य तो यही है कि इसके लिए कोई योजना बनाई ही नहीं गयी। जिसके जो मस्तिष्क में आया करना आरम्भ कर दिया। उन्हें राजनीतिक स्वार्थों का

कहानी

धर्म-दर्शन क्या ?

श्री आनन्दप्रकाश

दार्शनिक पक्ष से जीवन को धारण करने वाली वस्तु का नाम धर्म है, व्यक्ति की आस्था को धर्म कहते हैं अथवा मनुष्य गतिमय और परिवर्तनशील विश्व में जिस भौतिक या अभौतिक स्थिति पर टिक कर विश्राम लेने का अधिक प्रयत्न करता है, उसका नाम धर्म है—इसे रणवीर नहीं जानता था। दैनिक व्यक्तिगत या राष्ट्रीय आंदोलन में धर्म का जो विकट रूप दिखाई देता है, रणवीर उसे अवज्ञा और उपेक्षा की दृष्टि से देखता था।

इसी प्रकार 'प्रेम' शब्द के अर्थों के बारे में भी रणवीर की धारणा कोई बहुत बढ़िया नहीं थी। पहली प्रेयसी जो उसने बनाई, उसके लिए किन मधुर या अमधुर घटनाओं से उन्हें होकर गुजरना पड़ा, यह इस कहानी का उद्देश्य नहीं है। किन्तु स्थिति जम जाने पर उसने सबसे पहिले जो प्रश्न उससे किया, वह था, 'यह प्रेम, क्या विवाह के रूप में अन्त होने के लिए ?'

जेनी ने उत्तर दिया, 'मैं ईसाई और तुम हिन्दू ! विवाह ? असम्भव !' लेकिन रणवीर ने नोट किया कि इस उत्तर में उपहास था। किसके बारे में था यह पहिले ही लिखा जा चुका है।

रणवीर ने गम्भीर ही बने रह कर कहा, 'चाहती हो ?'

"क्या ?" पूछा गया।

'विवाह !' रणवीर ने फिर स्पष्ट किया।

"क्या प्रेम का अन्त होने के लिए ?"

'हां !' रणवीर बोला।

'प्रेम का अन्त होने के लिये !' जेनी हंसी और इस बात पर हंसते-हंसते लोटपोट हो गई।

जेनी विवाह को प्रेम का अन्त मानती थी, आरम्भ या बीच, इस बात पर तब तो विशेष वाद-विवाद नहीं हुआ। फिर जिस दिन सांसारिक भाव सम्भव बनाये रखने के लिए रणवीर के विवाह का विधान ठाट-बाट हुआ और विशेष मान-मर्यादा वाले लोगों ने एक ईसाइन लड़की को सम्मानित मेहमानों की कक्षा में बधा पाया तो प्रकट परोक्ष, सभी तरह से नाक भौं चढ़ाए।

सुवासित हिना से वस्त्रों को सुगन्धित किए बहुत सी कीमखाबी नवयुवतियों ने विवाह मण्डप के आधुनिक वातावरण की शोभा बढ़ाई थी। इस सोसायटी में आपसी परिचय एक तो प्रत्यक्ष आप अमुक, आप अमुक की तरह कराया जाता है और एक कराया जाता है परोक्ष। असली परिचय यही होता है।

जेनी के इस परोक्ष परिचय से मनोरंजित होकर जब रणवीर और उसकी प्रेम कहानी को पफ पाउडर से लिपे पुते मुखों के दोनों ओर स्थित पहरेदारों ने बिना सेन्सर के पास कर दिया तो लज्जा और करुणा के मारे उनके गालों से लेकर कनपटी तक एक-एक लाल रेखा खिंच गई। करुणा इसलिए कि बिना उसके प्रदर्शन के इस सुमधुर, सुकर्णगोचर गाथा की बारीकियों को खोजा नहीं जा सकता था।

जेनी को सुनाते हुए एक अग्रगामिनी ने कहा, 'ओफ् ! कितनी बड़ी ट्रेजेडी है !'

जेनी ने समुचित उत्तर प्रश्न के रूप में दिया, 'और आप के जीवन में यह ट्रेजेडी कब होने जा रही है ?'

यह वर्ता आगे नहीं बढ़ी क्योंकि न जाने किस का आदेश पाकर बैंड बाजे वालों ने अपना कला प्रदर्शन आरम्भ कर दिया।

संस्कृतगर्भित, न समझ में आने वाले मंत्रों के बल से रणवीर बहू को खींच लाया। बहू के आने जाने में कुछ दिन बीत गये।

शाम को जेनी को टेनिस के दो गेम से हरा कर जिस समय पसीने से लथपथ रणवीर ने अपने लम्बे चौड़े सजे हुए मकान में पग रखा, बहू रामचन्द्र जी की आरती के लिए धूप-दीप थाली में सजाए मन्दिर जाने की तैयारी कर रही थी। रणवीर ने पूछा, 'रंजना, कहां को ?'

रंजना ने उत्तर दिया, 'कहीं नहीं, जरा रामचन्द्रजी के मन्दिर तक !'

गले से मफलर उतार कर खूंटी पर टांगते हुए रणवीर ने तनिक हास्य से कहा, 'भगवान की खुशामद करने ?'

रार न बढ़ा कर रंजना ने उत्तर दिया, 'हां !'

रणवीर ने उसी उपहास के स्वर में कहा, 'पण्डितों ने कहा है कि यदि पति को ही भगवान की जगह समझोगी तो शायद कुछ अधिक पा जाओगी !'

रंजना ने कहा, 'पत्नी होने के नाते जो अधिकार मिलता है, अभी वही पाना शेष है।' वह थाली लेकर चली गई, और रणवीर ने समझ लिया कि जेनी का परोक्ष परिचय रंजना से भी करा दिया गया है।

अगले दिन रणवीर टेनिस के बाद भी रात के एक बजे तक घर नहीं आया। रंजना सो गई। आहट से जिस समय चौंक कर आंखें खोलीं तो रणवीर कोट उतार रहा था। पूछा, 'कहां थे अब तक ?'

'यहीं जरा एलफिन्स्टन तक, जेनी साथ थी, इसलिए चला गया था !' रणवीर ने सीधे-सीधे कहा।

रंजना ने कहा, 'कल यदि मैं किसी के साथ एलफिन्स्टन तक हो आऊं तो आपको तो कोई एतराज न होगा ?'

'क्या एतराज हो सकता है ?' रणवीर ने पूछा, 'तुम रोज भगवान की खुशामद करने जाती हो, मैंने कभी एतराज किया है ?'

'आप भी मन्दिर चले जाया कीजिये ना !' रंजना ने कहा।

'तुम तनिक जेनी से हेलमेल बढ़ाओ। पत्थर की मूर्ति से ज्यादा आत्मा का दर्शन तुम्हें उसके हृदय में मिलेगा।'

'तब क्या मैं भी जेनी की तरह पराए मर्दों से टेनिस खेला करूं और उनके साथ सिनेमा देखती फिरूं ?' रंजना ने क्षोभ से पूछा।

'अरे रानी,' रणवीर बोला, 'मर्द भी कभी किसी के अपने या पराए हुए हैं ? मानो तो अपने, नहीं तो पराए !'

'जेनी मानती है ?' रंजना ने व्यंग किया।

'जेनी सारे संसार को अपना मानती है। तुम भी उसी प्रकार मानने की चेष्टा करोगी तो दिव्य दृष्टि प्राप्त करोगी।'

'हूं !' रंजना चिढ़ गई।

× × ×

जेनी ईसामसीह के बजाय उनके मानव प्रेम में अधिक विश्वास रखती है। रणवीर विवाह के बाद भी उसके साथ ही अधिक समय बिताता। जेनी ने उस से एक दिन कहा, 'तुम्हारी पत्नी को तुम्हारा यह व्यवहार कैसा लगता है ?'

'औरतों के अन्दर डाह करने की पुरानी आदत है !' रणवीर ने कहा।

'मेरे अन्दर भी ?' जेनी ने पूछा।

'शायद स्वतन्त्र नारी के अन्दर यह [illegible] नहीं होती !'

'अब आप स्वयं स्वतन्त्र रहना चाहते हैं तो अपनी पत्नी को भी स्वतन्त्र कीजिये !' जेनी ने कहा।

'यह धारणाओं का बन्धन है जेनी, जिससे मनुष्य चाहते हुए भी स्वतन्त्र नहीं हो सकता। मेरे स्वतन्त्र कर देने से उसका वही हाल होगा, जो परकटे पंछी का पिंजरे से बाहर निकाल देने पर होता है। उसका आश्रय का आधार भी टूट जायगा !' रणवीर ने एक लम्बी सांस ली।

'क्या तुम धारणाओं के बन्धन से मुक्त हो ?' जेनी ने पूछा।

रणवीर ने उत्तर दिया, 'नहीं तो, मेरे अपने विश्वास हैं !'

'तब ध्यान रखना,' जेनी ने चेतावनी के स्वर में कहा, 'तुम्हारे विश्वासों को ही किसी दिन ठेस लग कर [illegible] न कट जाएं !'

'ऐसा विश्वास धारणाओं को ठेस लग जाने पर तोड़ कर नई क्या देते हैं !' रणवीर ने जोर से अट्टहास करके बातचीत की गम्भीरता तोड़ दी।

× × ×

रणवीर ने घर में एक [illegible] खड़ा कर दिया है। जिसने सुना वही सिर पीट कर रह गया है। दादी ने कहा, 'क्या इसी दिन के लिए जन्म दिया था !' चाचा ने कहा, 'लड़के का दिमाग फिर गया है !'

और रणवीर ? उसने घोषणा की है कि वह ईसाई होना चाहता है। रंजना ने बातचीत करने का अवसर पाते ही कहा, 'ईसाई बनोगे ?'

रणवीर ने हामी भरी।

रंजना ने कहा, 'उसी [illegible] के कारण ?'

रणवीर ने कहा 'और भी कुछ सोच सकती हो ?'

'सोच क्यों नहीं सकती,' रंजना ने व्यंग किया, 'यही कि आपने सारे हिन्दू शास्त्रों और वेदों का अध्ययन करके जो ज्ञान प्राप्त किया है वह बाइबिल के ज्ञान की अपेक्षा तुच्छ है और इसीलिए · · !'

'नहीं रंजना, यह बात नहीं है। ईसामसीह का मानव प्रेम देख कर ही मैं

(शेष पृष्ठ १९ पर)

अखाड़ा बनाया गया, थोथी भावनाओं और विचारों को मानव जीवन से अधिक महत्व दिया और वास्तविक समस्या की ओर पूर्णत: दुर्लक्ष्य किया गया।

—सम्पादक

उपनिवेशों में नवजीवन

ब्रिटिश उपनिवेश अगले दस वर्षों में अपने आर्थिक साधनों, स्वास्थ्य और शिक्षा के विकासार्थ लगभग पचास करोड़ पौंड अर्थात् ६ अरब ६० करोड़ रुपया खर्च करने की योजना बना रहे हैं। इसमें से लगभग आधी रकम उपनिवेश स्वयं जुटायेंगे, बारह करोड़ पौंड ब्रिटेन से औपनिवेशिक विकास और कल्याण अधिनियमों के अन्तर्गत मिलेंगे, और पन्द्रह करोड़ पौंड औपनिवेशिक विकास निगम तथा परराष्ट्र खाद्य निगम नामक दो विशाल जन निगमों की अधिकृत पूंजी है।

औपनिवेशिक राज्य क्षेत्रों में अब तक २५० प्रधान आर्थिक योजनायें बन चुकी हैं, जिनमें गेम्बिया में मुर्गीपालन, उत्तरी रोडेशिया, जैमेका तथा युगान्डा में सीमेंट उत्पादन और दक्षिणी अटलांटिक में सील नामक मछली पकड़ना आदि सम्मिलित हैं। हाल में जैमेका में राष्ट्रकुल का सबसे बड़ा चीनी का कारखाना, हांगकांग में नई सूती कपड़ा मिल और टैंगानाइका में एक विशाल बूचड़खाना आदि उद्योग चालू कर दिये गये हैं।

इसके अलावा वहां एक ओर अस्पतालों, जर्राहों (सर्जनों) डाक्टरों और नर्सों इत्यादि की अधिकाधिक व्यवस्था की जा रही है तो दूसरी तरफ मच्छरों तथा विषैली मक्खियों का नाश और हर प्रकार की सफाई का प्रबन्ध किया जा रहा है जिसमें परिष्कृत जल व्यवस्था, मातृत्व तथा शिशु कल्याण केन्द्र और ग्रामीण दवाखानें भी सम्मिलित हैं।

लाइबेरिया में मलेरिया उत्पादक मच्छरों का नाश किया जा चुका है, जो एक समय वर्ष में १८००० लोगों को डसा करते थे। पूर्व में सर्वाधिक स्वस्थ बन्दरगाह, सिंगापुर में १९४९ की मृत्यु संख्या उतनी ही कम रही जितनी कि इंग्लैंड और वेल्समें थी। वहां दस वर्षों में बाल मृत्यु १६० प्रति हजार से गिरकर ७२ तक आ गई है। अफ्रीका में त्से नामक मक्खी का भय बहुत कम किया जा चुका है।

१९४९ के अन्त तक उपनिवेशों में अधिकाधिक स्कूल खोले गये, जिनमें पहले से बहुत अधिक बच्चे पढ़ रहे हैं। इसके अतिरिक्त नाइजीरिया, गोल्डकोस्ट, वेस्ट इंडीज तथा मलाया में विश्वविद्यालय सुविधाओं की व्यवस्था में भी तीव्र प्रगति हुई है और स्कूलों के बाहर अत्यन्त प्रोत्साहक विधियों द्वारा नागरिकता की शिक्षा भी प्रदान की जाती है। वहां लोगों को केवल पढ़ना-लिखना ही नहीं, सिखाया जा रहा बल्कि उन्हें ऐच्छिक नागरिक प्रयासों में सम्मिलित होना, अपने गांवों तथा नगरों पर गौरव करना और उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने कराने में अग्रसर होना भी बताया जाता है।

★

केनेडा के हवाई अड्डे पर ब्रिटिश पश्चिमी इण्डियन एयरवेज' का वायुयान खड़ा है

ब्रिटेन के उपनिवेश बालक जो ब्रिटेन की गृह निर्माण प्रगति को चित्रित कर रहे हैं

[illegible]

विज्ञान अनुसन्धानशाला में विद्यार्थी छोटे छोटे कीड़ों का परीक्षण कर रहे हैं

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त.

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है। विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं वे लोग विवाहेच्छु भवानन्द और लड़की के मामा रसिकलाल को समझाते हैं, और अन्त मे संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह केवल कर्तव्य भावना से सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है, और वहां वेश्याओं की दशा का अध्ययन करती है। सुजाता हरिकिशन नामक एक सुसम्पन्न तथा सुन्दर युवक की ओर आकर्षित होती है उसका मित्रवत मिलन प्रणय मे परिणत हो जाता है। सुजाता को गर्भ रह जाता है, इसलिए वह हरिकिशन से विवाह का प्रस्ताव रखती है, किन्तु हरिकिशन उसे ठुकरा देता है। अन्त मे निराश हो कर वह लाहौर छोड़ देती है काशी जा कर सुजाता अनिरुद्ध से कुछ छिपाये बिना अपने उद्धार के लिए विवाह का प्रस्ताव करती है।

[गतांक से आगे]

बैद्यनाथ का बार-बार ठहाका सुन कर अनिरुद्ध जैसे चौंक गया, उसके दोनों होंठ फड़कने लगे, मानो आंधी की तरह कोई शक्ति आकर उसके बन्द किवाड़ों को खोलने के लिए तड़फड़ा रही थी। वह उठ कर खड़ा होने लगा, पर सुजाता ने जल्दी से उसके हाथों को पकड़ कर बैठा दिया। इस प्रकार से बाधाग्रस्त होकर उसकी भावनाएं भंवर के रूप में फूट कर आंखों के अन्दर से अश्रु रूप में फूट कर निकलने लगीं। अनिरुद्ध की आंखों से टपटप आंसू गिरने लगे, पर उसने कुछ नहीं कहा। सुजाता उसकी तरफ पीड़ित दृष्टि से ताकने लगी, उसकी दृष्टि मे यह साफ आवेदन था कि अनिरुद्ध पर ही उसका जीवन तथा मृत्यु निर्भर है।

अनिरुद्ध को बच्चे की तरह देख कर अशोक थोड़ी देर के लिए किंकर्तव्य विमूढ सा हो गया, पर वह फिर बोलने लगा—अनिरुद्ध भैया अभी कुछ नहीं, बिगड़ा है, शादी अभी टूट सकती है। अभी तक सिर्फ दो ही चार को यह बात मालूम है, सबको मालूम होने के पहले मुझे यह अधिकार दीजिये कि मैं इसका खण्डन कर दूं और कह दूं कि ऐसा हो ही नहीं सकता। दो स्त्रियों के जीवन को नष्ट न कीजिये। प्रतिक्रियावादियों के घरों में घी के दिये न जलाइये। देश के शहीदों के नाम पर मैं आपसे अपील करता हूं, बैद्यनाथजी की पवित्रता पर बट्टा न लगाइये।

अनिरुद्ध से और सहन नहीं किया गया। वह उठ कर खड़ा हो गया। सुजाता ने धक्का देकर उसे रोकने की चेष्टा की, पर अनिरुद्ध ने उसके हाथ को झटके से छुड़ा लिया। सुजाता का हृदय ऐसे धड़कने लगा जैसे वह फट ही जायगा।

अनिरुद्ध ने कहा—'सुजाताजी, मुझे बात करने दीजिये। अशोक, झूठ-मूठ शहीदों को बीच में न घसीटो, मैं अपने काम के लिए जिम्मेदार हूं। मुझे जितनी चाहे गालियां दो, पर शहीदों को घसीट कर कुछ फायदा नहीं'—कह कर अनिरुद्ध आत्म समर्पित की तरह फिर कुरसी पर उसी तरह से बैठ गया जैसे अब तक बैठा था।

अशोक एक मिनिट के लिये हिचकिचाया। फिर एक कदम आगे बढ़ते हुए कहा—आप चाहे जो कुछ कहें आप प्रतिक्रिया वादी, गद्दार हैं। आपने अपने सारे गौरव को ग्लानि में परिणत किया है, क्रांतिकारियों के लिए आप कलंक स्वरूप हैं। आपने मेरी सरल बहिन को फुसला कर पथभ्रष्ट किया है। आप उसकी कमजोरी का लाभ उठा रहे हैं।

सुजाता ने एकाएक बीच में बोलते हुए कड़ाई के साथ कहा—उन्होंने किसी को नहीं फुसलाया, बिल्कुल झूठी बात है—सुजाता नागिन की तरह फुफकार रही थी। उसकी आंखें लाल हो चुकी थीं।

झूठी बात नहीं है, बहुत ही सच्ची बात है। सच और झूठ समझने की तुम मे तमीज रह थोड़े ही गयी है, नहीं तो तुम इस तरह की एक अपमान जनक बात मे राजी नहीं हो सकती थी—इस के बाद वह कुछ रुक कर बोला—मुझे तो ऐसा मालूम हो रहा है कि तुम्हीं ने यह आफत की है, तुम्हीं ने अनिरुद्धजी को इस घृणित शादी के लिए तैयार किया है। तुम्हारा व्यवहार देख कर ऐसा मालूम होता है कि इस शादी मे जैसे तुम्हें ही अधिक उत्साह है। मां, मां, मां, तुम आज कहां हो?—अशोक असहाय की तरह सिसक-सिसक कर रोने लगा।

सुजाता का हृदय भीतर ही भीतर बैठा जा रहा था। अब तक अशोक पर जो गुस्सा आ रहा था, उसे अब रोते देख कर उसका हृदय द्रवित हो गया। वह सहन की अंतिम सीमा पर पहुंच गया था एकमात्र सगे भाई को भी उसे इस प्रकार से दूसरे के मकान पर रुलाना पड़ा, और उस रोने का कारण वह स्वयं थी फिर भी वह क्या कर सकती थी? उसके तो हाथ पैर बंधे हुए थे। वह उस सत्य को कह नहीं सकती थी। कहने मे एक डर यह भी था कि उसका भाई, अनिरुद्ध का आदर्शवादी शिष्य कभी भी अनिरुद्ध को शायद यह विराट त्याग न करने दे। वह क्या करेगा यह मालूम है। वह कहेगा—दीदी अपनी इस नासमझी का नतीजा तुम खुद ही भुगतो, मैं तुम्हारा भाई हूं, तुम्हारा साथ दूंगा।

सुजाता मन ही मन यह सोच कर हंसी कि और कोई इसमें साथ दे सके, भाई इसमे कोई मदद नहीं दे सकता। वह क्या कर सकता है? पर अनिरुद्ध? अनिरुद्ध सब कुछ कर सकता है? नहीं उसे कठिन होना पड़ेगा।

सुजाता ने आगे बढ़ कर अशोक के कंधे पर हाथ रख दिया और बोली—छी· अशोक दिमाग को ठण्डा करो, जाओ घर जाओ ...... उसने हाथ से दरवाजा दिखला दिया।

अशोक बिना प्रतिवाद किये वहां से निकल गया। जाते समय उसने सुजाता की तरफ इस प्रकार करुण नेत्रों से देखा, मानों अब वह अनाथ हो गया, अब उसका कोई भी नहीं रहा। इस दृष्टि के आघात से सुजाता भीतर ही भीतर पागल-सी हो गई, पर अत्यन्त कष्ट से इच्छाशक्ति के एक प्रचण्ड प्रयास से उसने अपने को सम्हाल लिया।

अनिरुद्ध मुर्दे की तरह कुरसी पर बैठ गया। उसमे मानो समस्त जीवन एकाएक स्तब्ध हो गया था। अनिरुद्ध खूब समझ रहा था कि आज जो कुछ अपमान हुआ यह तो केवल शुरूआत-मात्र है। उसे यह उर्दू शेर याद आया—

इब्तदाये इश्क है रोता है क्या,
आगे आगे देखिए होता है क्या?

पर इस अपमान के कारण उसने एक बार भी यह बात नहीं सोची थी कि किसी तरह जान छुड़ा कर भाग जाय, उसने यह नहीं सोचा कि पीछे चला जाय, बल्कि विरोध से उसका इरादा पक्का हो गया।

[४१]

हरिकिशन को निक्को के पास भी शांति नहीं मिली। वह शारीरिक उत्तेजना के द्वारा मानसिक अवसाद पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा कर रहा था, पर वह उसमें सफल नहीं हुआ। सुजाता की स्मृति एक प्रेत की तरह बराबर उसके मन को विक्षुब्ध कर रही था। उसने यह सोचा कि वह अपने दुःख को भुला नहीं पा रहा है। इसमें शायद निक्को का ही कोई दोष है। उसका मन निक्को की तरफ से फिर गया। वह दिल्ली की दूसरी वेश्याओं के पास जाने लगा।

वह वेश्याओं की ठुड्डी पकड़ कर बहुत देर तक उनकी आंखों की तरफ एकटक देखता रहता, उन्हें निष्ठुरता के साथ मसलता मानों उनको मथ रहा है, उन्हें चिकोटी काटता था, और जब वे तकलीफ से कराहने लगती, तो वह उन के हाथ मे एक रुपया या जो कुछ भी हाथ मे आता दे देता। वे उसके मुंह की तरफ अजीब दृष्टि से देखती रह जाती।

एक दिन हरिकिशन ने संध्या समय के अखबार को खोल कर एक खबर पढ़ी। वह प्रसाधन आदि करके बाहर जाने के लिए तैयार हो रहा था, उसने सुना था कि काश्मीर से एक नया 'माल' आया है, जरा अखबार पर आंख फेरे ले रहा था।

उसने दो-तीन बार खबर को पढ़ा। ठीक ही थी, भूल नहीं थी। खबर काशी के सम्बन्ध मे थी। अखबार के निजी संवाददाता ने यह खबर भेजी थी इसके माने खबर मे कोई गलती नहीं। निश्चय ही वह वही सुजाता है। काशी मे कोई दस-बीस सुजाता और सो भी बैनर्जी नहीं हो सकती। पर यह अनिरुद्ध कौन है? सुजाता ने कभी भी उससे इसका नाम नहीं लिया था। उसने बहुत कोशिश की कि याद करे पर कुछ याद नहीं आया। वह फिर खबर को पढ़ने

(रेडियोहाम सम्वाददाता द्वारा)

बनारस ७ जून

"कल संध्या समय लाठी धारी पंडों के पहरे मे अनिरुद्ध कुमार और सुजाता बैनेर्जी की शादी हो गयी। कहा जाता है कि शादी हिन्दू मत से हुई। श्री कुमार की पहली पत्नी अभी जीवित है। कुछ उत्साही युवकों ने इस विवाह में बाधा देने की चेष्टा की, पर उस मकान मे घुस ही न सके जिसमें शादी हो रही थी। इसलिये वे लोग भी आधी रात तक शोर गुल मचाकर लौट गये। बाधा देने वालो में कन्या का भाई भी था।"

खबर पढकर न मालूम क्यों हरिकिशन बहुत खिन्न हो गया। उसने अपने को समझाने की कोशिश की कि सुजाता उसकी कोई नहीं है, पर इस बात से उसको कोई तसल्ली नहीं हुई। पराजय और हानि की भावना से उसका हृदय हा हा-कार उठा। उसने अपने को अपमानित, अज्ञात तथा पददलित समझा। उसने सोचा कि सुजाता ने उसके साथ अन्याय किया है, उसने विवाह से इन्कार किया था, पर उसने प्रेम तो किया ही था, अब भी प्रेम करता है। क्या प्रेम का कोई अधिकार नहीं ? और शादी में ही वह अन्त तक तैयार न होता ऐसी कोई बात नहीं, यदि वह इसकी जरूरत देखता तो शादी भी कर लेता, क्यों न करता ? हरिकिशन इस समय इस प्रकार से तर्क करने लगा, मानों वह तो शादी के लिए तैयार था। इस प्रकार वह आत्म समर्थन करने लगा। वह भूल गया कि कार्यक्षेत्र में बार बार अनुरोध तथा प्रार्थना करने पर भी उसने साफ साफ इन्कार किया था।

उस दिन हरिकिशन कहीं न जा पाया। काश्मीर से आये हुए नये माल के प्रलोभन पर भी वह सोचते सोचते सो गया। नींद भी उसे अच्छी तरह न आयी।

अगले दिन संध्या समय उसने रोज की तरह प्रसाधन किया और उस काश्मीर के माल के यहां गया। बड़ी रात तक उसने उसे मसला दबा दबा कर देखा कि उसके भीतर क्या है। उत्तेजना बार बार उसे कोंचे जा रही थी। उसके अन्दर का पशु जैसे उसकी पशुता को समारोह में अन्ध और भीत होकर सब कुछ गया, बहुत चाबुक मारे पर फिर भी उस पशु ने जानना अस्वीकार किया, पर आज जैसे हरिकिशन पर भूत सवार था। कथित काश्मीरी नया माल नया माल नहीं था। वह हरिकिशन के रंग ढंग को देख कर अवाक रह गयी, पर उसने अपने शरीर को भाड़े पर दे दिया था इसलिये वह चुप रह गयी।

—क्रमशः

प्रजातन्त्र की होली

[पृष्ठ ११ का शेष]

ऐसा समझौता कर लिया है तो अब उसे भूल क्यों नहीं मान लिया जाता और उस पर डटे रहने का प्रचार क्यों किया जाता है ? उत्तर केवल तानाशाही है।

और भी लीजिए ! स्वतन्त्रता दिवस शुद्ध प्रसन्नता और आनन्द का दिवस नहीं है। १५ अगस्त १९४७ भारत के इतिहास में, कुछ लोगों के विचार से एक काला दिवस है। काला दिवस इस कारण ही नहीं कि इस दिन देश का विभाजन हुआ था प्रत्युत इस कारण भी कि हमारे नेताओं की अदूरदर्शिता के कारण सहस्त्रों स्त्रियों का सतीत्व हरण, लाखों की हत्या और अरबों रुपयों की सम्पत्ति की लूट पीट हुई थी। इस कारण इस दिवस को आनन्दोत्सव न मना शोक मनाना, कुछ लोगो के विचार में ठीक है। पंडित जी का कहना है कि ऐसे लोगों को झाड़ू से बहार कर देश के बाहर कर देंगे तानाशाही का एक और प्रमाण है।

पंडित जी ने उस दिन एक राजनीतिक दल के नेता के रूप में व्याख्यान दिया है। देश के नेता के रूप में नहीं। भारत के प्रधान श्री राजेन्द्र प्रसाद ही इस दिन व्याख्यान देने के अधिकारी हो सकते थे।

इस प्रकार के उदाहरण एक के बाद दूसरे अनेकों उपस्थित हो चुके हैं। इन सबसे यह प्रकट होता है कि कांग्रेस के नेता लोकतन्त्रात्मक प्रजातन्त्र की होली कर रहे हैं। वे तानाशाही के अवतार देश में बल तथा छल से राज्य चलाने का यत्न कर रहे हैं। किन्तु यह देश के हित में नहीं होगा।

यदि तुलनात्मक विचार रखने वाले इन्हें राज्य-गद्दियों से नहीं उतारते तो घोर तानाशाही देश में आ जानी निश्चित ही है। वह तानाशाही कम्यूनिज्म के रूप में होगी अथवा फासिज्म के रूप में नहीं कह सकते, किंतु यह निश्चय है कि देश की आत्मा की हत्या कर ऐसी शक्ति उत्पन्न की जा रही है जो देश को पराभव में ले जाने में सफल होगी।

गढ़वाल के भूमिहीन किसानों की समस्या

[पृष्ठ २ का शेष]

आबाद किया गया तो सारे इलाके में गंगा से बाढ़ आने का डर है। यह उनके विशेषज्ञों की राय है। मैंने उनके इस कथन की गहराई में पहुंचने की कोशिश की, किन्तु मेरी समझ में नहीं आया कि कोटद्वार से नजीबाबाद के बंजर इलाके को आबाद करने से किस प्रकार बाढ़ आने का डर है। इस बात की फिर जांच कराई जाय और सब बातें जनता के सामने रखी जांय, ताकि सब को संतोष हो सके।

गढ़वाल में भी थोड़े बहुत इलाके ऐसे हैं, जहां कुछ भूमि-हीन परिवारों को बसाया जा सकता है। यदि उन परिवारों को वहां बसाया गया, तो उन्हें मकान भी बनाने होंगे और हल चलाने के लिए बैल भी खरीदने होंगे। गढ़वाल के भूमि-हीनों की आर्थिक हालत क्या है, वह सरकार से छिपी नहीं है। वे तो आज तक दूसरों के ही गुलाम रहे हैं।

कुमाऊं कमिश्नरी में मैदानी हिस्सों की तरह बड़े-बड़े जमींदार नहीं हैं। यहां किसानों की चार श्रेणियां हैं। पहली श्रेणी है 'हिस्सेदारों' की, जो अपनी जमीन के खुद ही मालिक होते हैं और वे उसे बेच भी सकते हैं। दूसरी श्रेणी है 'खायकरों' की, जो अपनी जमीन को बेच नहीं सकते, किन्तु उनको उस जमीन से बेदखल नहीं किया जा सकता। यदि वे उस जमीन को बेचना चाहें तो जो उस जमीन का 'हिस्सेदार' या 'थोकदार' है, उसकी राय लेनी आवश्यक है। तीसरी श्रेणी है 'सिरतानों' की, जो जमीन के किसी भी प्रकार मालिक नहीं हैं, किन्तु जमीन पर उन का कब्जा होने के कारण सरकारी कागजों में सिर्फ कब्जा उनका लिखा होता है। और चौथी श्रेणी है उनकी, जिनके पास बिल्कुल जमीन सही मानों नहीं है और जो मानों में भूमि-हीन हैं। गढ़वाल के दलित लोग जिन्हें कि शिल्पकार के नाम से कहा जाता है, 'हिस्सेदार' तो नहीं के बराबर हैं। बहुत थोड़े 'खायकर' हैं और अधिकतर या तो 'सिरतान' हैं या 'भूमि-हीन'। पिछले २० साल के अन्दर जब कि गढ़वाल में आर्यसमाज का आन्दोलन चला, तो बहुत से 'सिरतान' श्रेणी के किसान जो कि दलित लोगों में से थे, आर्यसमाजी हो गये। तथाकथित सवर्ण जातों ने अपने बहुमत के जोर से व सरकार तक अपनी पहुंच होने के कारण बहुत से 'सिरतान' किस्म के किसानों को उनकी जमीन से बेदखल कर दिया। अब भी कहीं-कहीं इस प्रकार की बेदखलियां हो रही हैं। अतः सरकार को चाहिये कि जैसा मैदानी इलाकों के लिए भूमि सम्बन्धी कानून बनाया गया है, जिससे कि 'भूमि-हीन' 'भूमिधर' हो गये हैं, उसी प्रकार कुमाऊं के लिए भी शीघ्र ही कोई कानून बनाये, जिसके द्वारा 'खायकर' तथा 'सिरतान' किस्म के किसानों को उनकी जमीन का पक्का हिस्सेदार बना दिया जाय तथा पिछले २० वर्षों के अन्दर जो भी बेदखलियां हुई हैं, सब नाजायज और गैरकानूनी करार दी जावें। जिन 'हिस्सेदारों' के पास जमीन आवश्यकता से अधिक है, मैदानी इलाकों की तरह उनसे भी वह जमीन मुआवजा दे कर सरकार ले ले और उसे भूमि-हीनों को वितरित करदे। इस प्रकार के ठोस कदम उठाने से ही भूमिहीनों की जमीन का सवाल कुछ हद तक हल हो सकता है। इसके बाद जो भी भूमि हीन बच जांय, उन्हें सरकार या अंगवात बंजर इलाकों में बसाने की योजना बना सकती है।

थोड़ा मैं भूमि-हीन किसानों से भी कहना चाहता हूं। सुना है वे लोग अपने ही गांव में जमीन चाहते हैं और उस गांव में जमीन नहीं है, जो उन को दी जा सके। अतः इस प्रकार के लोगों की समस्या किस प्रकार हल की जा सकती है, यह उन्हें ही खुद सोचना चाहिये और सरकार भी उनकी किस प्रकार मदद कर सकती है। ऐसे लोगों को चाहिये कि वे अपना हठ छोड़ दें और जहां भी उनको बसाने के लिए जमीन दी जाय, फौरन चले जांय। वे पहाड़ी तन में धरती के लाल हैं। उस बंजर जमीन को वे अपने पसीने के जोर से उर्वर बना सकते हैं। आज तक उन्होंने दूसरों के लिए पसीना बहाया है और आज के इस युग में यदि सरकार उन्हें अपने लिए पसीना बहाने का मौका दे तो उन्हें पीछे नहीं हटना चाहिये। यदि वे अपना हठ छोड़ देंगे तो उज्ज्वल भविष्य उनके सामने है। उन्हें शायद पता नहीं कि पंजाब के मेहनतकश किसानों ने लायलपुर और मिन्टगुमरी के बंजर इलाकों को अपने पसीने के जोर से लहलहाते हुए खेतों में परिवर्तित कर दिया था और वे इलाके आज भी गेहूं के भंडार माने जाते हैं। यह उनकी ही मेहनत का फल है। गढ़वाल के भूमि-हीन किसानों को पंजाब के किसानों से शिक्षा लेनी चाहिये। और जहां कहीं भी सरकार उनको बसने को कहे, फौरन चले जांय, इसी में उनका कल्याण है और उनकी आगे की सन्तान उनकी आभारी रहेगी।

कश्मीर का विभाजन अथवा युद्ध !

[पृष्ठ १० का शेष]

अवसर में भारत की यह मांग न केवल उचित ही है, आवश्यक भी है।

दो मार्ग

हमारे विचार में सुरक्षा-समिति भारत के इस पत्र का कोई उत्तर नहीं देगी, क्योंकि अमरीका पाकिस्तान को नाराज नहीं करना चाहता। इसलिये इस हालत में या तो विराम-युद्ध वाली रेखा कश्मीर के विभाजन की पक्की सीमा बन जायगी और या भारत और पाकिस्तान में युद्ध होगा, परन्तु हमें युद्ध की सम्भावना कम दीखती है, क्योंकि वर्तमान भारत सरकार तो रियासत का जो इलाका पाकिस्तान के हाथ जा चुका है, उसको वापिस लेने के लिए युद्ध करने को तैयार नहीं और पाकिस्तान युद्ध करके कश्मीर के साथ साथ अपने अस्तित्व को भी खतरे में डालने से झिझकता है। इसलिए कश्मीर में अभी तो गतिरोध होने की ही सम्भावना है। परन्तु यह दुविधाजनक स्थिति अच्छी नहीं। आशा है कि भारत सरकार रोज रोज की झक-झक बन्द करने के लिए पाकिस्तान को साफ-साफ कह दे कि वह उसे कश्मीर का कोई और भाग बिल्कुल देने को तैयार नहीं, ताकि कश्मीर के लोग, विशेष कर वहां के हिन्दू, अपने भाग्य के विषय में निश्चिन्त होकर सुख की नींद सो सकें।

भगवान श्रीकृष्ण का जन्मस्थान आज भी दुर्दशाग्रस्त है

★ उस भूमि का इतिहास आत्मा की अमरता का इतिहास है ★

क्या देश अपने उपेक्षित तीर्थ की ओर ध्यान देगा?

श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी का पर्व भारतीय जनता का धार्मिक एवं सांस्कृतिक पर्व है। इस अवसर पर प्रत्येक भारतीय गीता-गायक, योद्धा-राजनीतिज्ञ, रासेश्वर श्रीकृष्ण को अपनी विनीत श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है। देश के कोने कोने से हजारों श्रद्धालु भक्त इस तिथि पर मथुरा आते हैं, जहाँ अनेकों वैभवशाली मन्दिरों में जन्मोत्सव धूम से मनाया जाता है। किन्तु सारे देश के लिए कितने लज्जा की बात है कि जिस स्थान को हम परम्परा से अब तक भगवान श्रीकृष्ण का जन्मस्थान समझते आये हैं, उस स्थान पर एक साधारण-एक भी तीर्थयात्री तक नहीं फटकता और न उस स्थान की पवित्रता का किसी को ज्ञान है। भारतीय गण-तन्त्र की स्थापना के पश्चात हम आशा करते थे कि इन राष्ट्रीय स्थानों का वैभव बढ़ेगा। पर खेद है कि इस ओर हमारे वर्तमान जन-नायकों का ध्यान नहीं है।

भगवान श्रीकृष्ण के जन्म स्थान का इतिहास अब तक के प्राप्त ऐतिहासिक इतिवृत्त के अनुसार इस प्रकार है।

वर्तमान कटरा केशवदेव के नाम से विख्यात स्थान पर इतिहासकारों का मत है कि कभी इस स्थान पर बौद्धों का "यश-विहार" नाम का एक बड़ा मठ होगा! सातवीं शती में मथुरा नगर बौद्ध धर्म का अच्छा केन्द्र था। इस का पता चीनी यात्री हुएन-सांग के वर्णन से चलता है जिसने यहाँ पांच बड़े हिन्दू मन्दिरों का होना कहा है। इसके पश्चात का इतिहास तो उपलब्ध नहीं है पर ईसवी ७०० से १२०० तक की जो कलाकृतियां उपलब्ध हुई हैं उनसे पता चलता है कि इस युग में यहां हिन्दूधर्म उन्नति के उच्चतम शिखर पर था। इसके पश्चात सं० १२०७ (११५० ई०) के मध्य का एक लेख प्राप्त हुआ है जिससे पता चलता है कि उस समय यहां राजा विजयपालदेव का राज था जिसने श्रीकृष्ण के जन्म स्थान पर एक विशाल मन्दिर बनवाकर उसका प्रबन्ध ११ प्रधान नागरिकों की एक समिति को सौंप दिया था। इसके पश्चात का इतिहास लुप्त है।

संवत १०१७ ई० में मूर्तिभंजक महमूद के कानों में मथुरा के वैभव की भनक पड़ी और उसने यहाँ चढ़ाई कर पहिले ही यहाँ के राजा कुलचंद को परास्त किया, पश्चात मथुरा नगर को लूटकर चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समय में निर्मित मन्दिर को जो सब [illegible] मन्दिर [illegible] मूर्तिभंजक [illegible] के [illegible]

तक गुलाम, खिलजी, तुगलक, सय्यद, और लोदी वंशों के शासकों ने अपने २ समय में मथुरा को लूट [illegible] और मथुरा नगर का सबसे बड़ा विध्वंस १५१५ ई० में "तारीखे दाऊदी" के अनुसार सिकन्दर लोदी ने किया। इस समय भगवान केशवदेव का मन्दिर जो राजा विजयपालदेव के समय (११५०-ई०) में बना था भूमिसात कर दिया गया। इस प्रकार दिल्ली के मुसलमान शासन में सदैव मथुरा नगर तथा भगवान केशवदेव के मन्दिर पर विपत्ति के बादल छाते रहे।

१५२६ ई० में बाबर ने लोदी वंश का तख्ता उलट कर मुगल-शासन स्थापित किया। मुगल सम्राट अकबर के काल में मथुरा ने अच्छी उन्नति की, यहां का धार्मिक वातावरण अच्छा और

जय केशवराय !

श्री [illegible] वर्मा

अनेक नये मन्दिरों का नव निर्माण हुआ। मथुरा के इतिहास में जहांगीर के काल की सबसे उल्लेखनीय घटना ओरछा के के राजा वीरसिंहदेव द्वारा ३३ लाख रुपये खर्च करके केशवदेव जी के मन्दिर का निर्माण कराना था, जिसे १६५० ई० के लगभग अंग्रेज यात्री टेवर्नियर ने तथा उसके बाद १६६३ ई० बर्नियर ने देखा। टेवर्नियर ने अपने यात्रा वर्णन में लिखा है कि भारत में जगन्नाथ और बनारस के मन्दिरों के पश्चात् मथुरा का केशवदेव का मन्दिर सबसे अधिक विख्यात है। यह मन्दिर इतना विशाल तथा ऊंचा है कि ५-६ कोस की दूरी से भी दिखाई पड़ता है। यह आगरे से लाये हुए लाल पत्थर का अठपहलू कुर्सी पर बना है, विस्तृत चबूतरे के आधे भाग पर मन्दिर और आधे पर जगमोहन है, मन्दिर के मध्य का शिखर बहुत ऊंचा और बगल के कुछ नीचे बने हैं। मन्दिर की दीवारों पर उत्तम नक्काशी के पत्थर हैं तथा पशु-पक्षियों की बनावट के पत्थर लगाये गये हैं। मैंने केशव भगवान के दर्शन किये और देखा कि बहुमूल्य वस्त्रों तथा आभूषणों से आच्छादित मूर्ति काले पत्थर की है तथा दो छोटी मूर्ति बगल में हैं। बर्नियर ने भी इस मन्दिर की प्रशंसा की है।

१६६९ ई० में औरंगजेब के शासन-काल में जब मथुरा के फौजदार अब्दुल-नबी को महावन में कोकिला नामक जाट के नेतृत्व में विद्रोह कर जाटों ने मार दिया तो खुद औरंगजेब इस विद्रोह को दबाने यहां आया और ५० वर्ष पहिले ही बने राजा वीरसिंहदेव के मन्दिर को जिसमें भगवान केशवदेव विराजित थे, ढाने की आज्ञा दे दी। इतिहासकारों का कथन है कि यह मन्दिर बड़ी मुश्किल से गिराया जा सका।

मन्दिर की मुख्य मूर्ति को औरंगजेब के आने से पूर्व ही मेवाड़ के राना राजसिंह अपने साथ ले गये और उदयपुर से २२ मील दूर नाथद्वारा में स्थापित करा दिया। इतिहासकारों का मत है कि श्रीनाथ जी के नाम से विख्यात वर्तमान मूर्ति ही इतिहास प्रसिद्ध केशव भगवान की मूर्ति है, जिसने कालान्तर में श्रीनाथजी का नाम पा लिया है।

शेष जो मूर्तियां औरंगजेब के हाथ लगीं उन्हें उसने आगरे में कुदसिया बेगम की मस्जिद की सीढ़ियों में लगवा दिया और मन्दिर की कुर्सी पर ही एक बड़ी मस्जिद का निर्माण करा दिया, जो आज ईदगाह के नाम से विख्यात है।

१७३९ ई० में नादिरशाह ने दिल्ली पर आक्रमण किया और उसकी सेना की एक टुकड़ी मथुरा भी जा पहुंची, जिसने नगर को काफी आक्रान्त किया। इसके पश्चात् १७५७ ई० में अहमदशाह अब्दाली ने एक बार फिर ठीक होली के दिन सहस्रों नागरिकों को मौत के घाट उतारा, लूटा और नगर को जला कर खाक कर दिया।

एक बार १७५८ में भारतीय जाने वाला [illegible] लूट और धार्मिक अन्ध विश्वास ने हमारा पीछा न छोड़ा। १७६८ ई० में मरहठों ने मथुरा पर अधिकार कर लिया और माधो जी सिंधिया ने यह चाहा कि श्रीकृष्ण जन्म-स्थान पर औरंगजेब की मस्जिद के बनने से बचे हुए प्राचीन मन्दिर के आधे भाग पर केशव भगवान का मन्दिर बना दूँ। पर मथुरा के पण्डितों के अनुमति दे देने पर भी काशी के पंडितों ने मस्जिद के पास मन्दिर बनाने का निषेध कर दिया, इसलिए वह विचार कार्यरूप में परिणित न हो सका।

और यहाँ तक कि धार्मिक सहिष्णुता के कारण हिन्दुओं ने मस्जिद को हटाने के बजाय उस स्थान पर अपना स्वत्व रख कर ईद के दिन नमाज पढ़ने की आज्ञा दे दी। मरहठा नरेशों ने इस भूमि को नजूल की भूमि माना था।

१८०३ ई० में अंग्रेजों ने दौलत राव सिंधिया को हरा कर मथुरा पर अपना अधिकार कर लिया और सन् १८०४ ई० में जन्म भूमि का स्थान ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकार में आ गया, जिसने इस ऐतिहासिक भूमि को १८१५ ई० में बनारस के राजा रईस पटनीमल को बेच दिया। राजा पटनीमल जी के वंशज राय कृष्णदास जी ने इस स्थान को महामना मदनमोहन मालवीय जी और गो. गणेशदत्तजी के नाम बेच दिया। इस प्रकार आज इस परम्परागत मान्य भगवान श्रीकृष्ण के जन्म स्थान के उपयुक्त सज्जन स्वामी है।

महामना मालवीय जी का संकल्प था कि इस भूमि को पुनः उसके प्राचीन वैभव के निकट पहुँचा दूंगा, पर विधि को कब स्वीकार था। महामना स्वर्गवासी हो गये। संकल्प अधूरा रह गया।

इस समय इस भूमि को लेकर एक मुकदमा 'खुदावाला' की ओर से कुछ आदमियों ने चला रक्खा है, जिसमें उनका कहना है कि 'हकशफा' के अनुसार इस भूमि को यदि बिकना था तो उस स्थान पर हमारी मस्जिद होने के नाते उसको खरीद का अधिकार हमें है। यह मामला न्यायालय में विचार के लिये बहुत दिनों से पड़ा है, और निकट भविष्य में निबटने की आशा भी नहीं है।

वर्तमान केशवदेव जी का मंदिर प्राचीन मंदिर से लगभग २० हाथ की दूरी पर ग्वालियर के राजाओं ने बनवाया है और उसके प्रबन्ध के लिये छाता तहसील में ऊंची नामक गांव लगा दिया है।

क्या स्वतन्त्र भारत के धार्मिक राष्ट्रीय सरकार से यह आशा करें कि जिस व्यक्ति का हमारे राष्ट्र जीवन पर अद्वितीय प्रभाव पड़ा है, जिसकी गीता आज भी संसार के ग्रन्थों का सिरमौर है और जिसकी टक्कर का दूसरा कोई व्यक्ति आज तक पृथ्वी तल पर हुआ नहीं, उस सर्वश्रेष्ठ महापुरुष की पावन स्मृति का भौतिक प्रतीक स्वरूप उनके जन्म स्थान का समुचित आदर कर उसे पुन: प्रतिष्ठा युक्त करेगी?

चित्रलोक

मधुबाला का पूर्वी शरणार्थियों के लिये दान

फिल्म-अभिनेत्री मधुबाला ने, जिसका वास्तविक मुमताज बेगम नाम है, पूर्वी बंगाल से आये वाले शरणार्थियों की सहायतार्थ १०,००१ रु० दिये हैं। बम्बई के गृहमंत्री श्री मुरारजी देसाई को उक्त राशि भेजते हुए मधुबाला ने लिखा है कि मैं अपने जीवन में अब तक इतनी ही राशि बचा पाती हूं। श्री देसाई ने इस दान के लिए मधुबाला को धन्यवाद का पत्र भेजा है।

प्रमिला पगड़ी के अभियोग से मुक्त

बम्बई के प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट ने फिल्म-अभिनेत्री प्रमिला को अपने फ्लेट के लिए साढ़े चार हजार रुपये पगड़ी लेने के अभियोग से मुक्त कर दिया है। अलबत्ता उसके पिता रोबिन अब्राहम को दो मास के कारावास और साढ़े चार हजार रुपये के जुर्माने का दण्ड दिया गया है।

पाकिस्तान में फिल्मोद्योग के लिये योजना समिति

पश्चिमी पंजाब में फिल्मोद्योग के विकास के लिए वहां की सरकार ने बेगम शाहनवाज की अध्यक्षता में एक योजना समिति नियुक्त की है। यह समिति फिल्मोद्योग के विकास में उपस्थित कठिनाइयों पर विचार करके उन्हें दूर करने के उपाय सुझायेगी। समिति के अन्य सदस्यों में सैयद शौकत हुसेन, डब्लू० जेड० अहमद, सैयद अताउल्ला शाह हाश्मी और दीवान सरदारी लाल हैं।

बेगमपारा को उपहार

सुना जाता है कि आसाम में चाय का कारोबार करने वाले एक लखपती ने फिल्म-अभिनेत्री बेगमपारा को, जो 'चांद' और 'सोहागरात' जैसे प्रसिद्ध फिल्मों में अभिनय कर चुकी है, शिलांग में २०००० रु० की लागत का एक मकान भेंट किया है। किन्तु बेगमपारा इन दिनों इतनी अधिक व्यस्त है कि वह छुट्टी लेकर वहां नहीं जा सकती।

नेपाली की 'सनसनी'

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि श्री गोपालसिंह नेपाली ने अपने नये फिल्म 'सनसनी' का कार्य शुरू कर दिया है। मुहूर्त समारोह में नेपाल के राजा कमांडर जंग बहादुर, गीताबाली और श्री हरकिशन लाल आदि उपस्थित थे। इस फिल्म का निर्देशन श्री जगदीश सेठ कर रहे हैं। नायक व नायिका के रूप में देवआनन्द तथा गीताबाली आ रहे हैं।

'छोटा भाई' पर मनोरंजन कर हटा

बिहार सरकार ने इस आशय का आदेश जारी किया है कि राज्य में जहां भी विद्यार्थियों के लिए 'छोटा भाई' का विशेष शो होगा, वहां मनोरंजन कर नहीं लगेगा।

मराठी अभिनेता का देहान्त

मराठी फिल्म संसार के प्रसिद्ध हास्य अभिनेता काशी पूर्व स्वरूप का पिछले सप्ताह मद्रास में देहान्त हो गया।

'जोगन' के बाद 'बेदर्दी'

'जोगन' जैसी सुन्दर-कलाकृति के बाद सुप्रसिद्ध निर्देशक श्री केदार शर्मा अब 'बेदर्दी' की तैयारी में लग गये हैं।

'काले बादल' का निर्माण

राजकमल कला मन्दिर में 'काले-बादल' फिल्म का निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। इसके निर्माता हैं श्री रोशन लाल और इसका निर्देशन कर रहे हैं श्री अनन्त ठाकुर। मुख्य भूमिका में में पुष्पा हंस, मीना, श्याम, जीवन तथा योग हैं।

'नीली' प्रदर्शन के लिए तैयार

रणजीत का नया चित्र 'नीली' प्रदर्शन के लिए तैयार हो गया है। इसकी मुख्य भूमिका में सुरैया और देवआनन्द हैं। निर्देशन रवि भाई ने किया है। रणजीत का दूसरा चित्र 'महुअल' भी बन कर तैयार हो गया है।

'संहार' का 'संदेशा'

'आहुति' के निर्माता संसार मूवीटोन ने 'संदेशा' के निर्माण की घोषणा की है। इसकी कहानी बंगाल के प्रसिद्ध लेखक नारायण गांगुली ने और सम्वाद 'स्वयंसिद्धा' के ख्यातिप्राप्त मोहनलाल बा० पेंगी ने लिखे हैं।

'निर्दोष' में निहाना

तमाखू पर फिल्म

तमाखू का भारत के उद्योग धन्धों में मुख्य स्थान है। इस उद्योग से हमारे देश के लगभग पांच लाख व्यक्ति काम कर सकते हैं। भारत सरकार के फिल्म का यह चित्र १९ अगस्त को सारे देश में प्रदर्शित किया गया।

इस सुनहरी पत्ती की पैदावार और सिझाई, छिड़ाव, सिझाव की इसलाह और पुंजी के रूप में इसके व्यापार के दृश्य इस चित्र में दिखाये गये हैं।

समाचार समीक्षा संख्या ९६

देश के कोने कोने में मनाये गये स्वतन्त्रता दिवस के उत्साहपूर्ण दृश्य इस समाचार समीक्षा में प्रदर्शित किये गये हैं।

बम्बई में नन्हें-नन्हें बच्चों ने विविध वेष भूषा कर मनोहर वातावरण प्रस्तुत किया; इस कार्यक्रम को इस फिल्म में दिखलाया गया है। २६ अगस्त को समाचार समीक्षा संख्या ९६ का सारे देश में प्रदर्शन किया जायगा।

———

देश-विदेश का घटनाचक्र

कोरिया

पूरे अगस्त मास में कोरिया को लेकर [illegible] अमरीका तथा रूसी गुट के बीच संयुक्त-राष्ट्र-संघ एक अखाड़ा बना रहा है। रूसी प्रतिनिधि श्री जेकब मलिक ने अध्यक्ष पद के समस्त विशेषाधिकारों का लाभ उठाते हुए कोरिया से अमरीकी सैनिकों को लौटाने सम्बन्धी प्रस्ताव को उपस्थित किया। किन्तु अमरीका तथा इंग्लैंड के प्रबल विरोध से वह सफल न हो सका। तत्पश्चात् श्री मलिक ने लाल चीन के प्रतिनिधि को मान्यता देने तथा दक्षिणी कोरिया के साथ-साथ उत्तरी कोरिया के प्रतिनिधि को आमंत्रित कर सुनने का प्रस्ताव रखा, किन्तु वह भी आगे न बढ़ सका। इसी फूट रस्साकशी में अगस्त का महीना समाप्त हो गया और सितम्बर के अध्यक्ष ब्रिटेन के प्रतिनिधि होंगे।

कांग्रेस अध्यक्ष का चुनाव

दूसरी ओर कोरिया के युद्ध-क्षेत्र में स्थिति बदलती हुई स्पष्ट दिखाई देती है। यद्यपि साम्यवादियों की आक्रमणकारी सामर्थ्य कम नहीं हुई है और वे सभी मोर्चों पर पर्याप्त दबाव डाल रहे हैं, परन्तु अभी तक उखड़ते हुए अमरीकियों के पैर भी जमते दिखाई देते हैं। उनके प्रत्याक्रमण सफल होने लगे हैं और प्रतीत होता है कि साम्यवादियों की प्रगति उन्होंने रोक दी है। नाक्तग पर आई हुई उत्तरी सेनाओं को पुनः नाम-तोंग नदी के उस पार खदेड़ देना और और पोहांग को विजय इस तथ्य के प्रमाण हैं। इसी समय ब्रिटिश सेनायें भी युद्ध में भाग लेने के लिए पहुंच गई हैं। इसका अर्थ है कि अन्य देशों से सैनिक सहायता कोरिया पहुंचना आरम्भ हो जायगी। स्पष्ट ही अभी तक भूमि से लगा हुआ साम्यवादी पलड़ा ऊपर उठता हुआ प्रतीत होता है।

कांग्रेस अध्यक्ष के चुनाव में मतदान की तिथि समाप्त हो गई। तीन हजार से कुछ कम प्रतिनिधियों ने मत दिये हैं। जिस समय यह पंक्तियां प्रेस में जा रही हैं उस समय तक फल को घोषणा नहीं हुई है। पत्र के प्रकाशन से पूर्व यह घोषणा हो जायेगी। किन्तु दोनों प्रतिद्वन्द्वियों में भी देख का रंग तो जमा हुआ दिखाई देता है। आचार्य कृपलानी तथा टण्डन जी, दोनों ही पक्ष के लोग अपनी अपनी-अपनी सफलता का दावा कर रहे हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन दोनों उम्मीदवारों को प्रायः सभी प्रान्तों से कम या अधिक मात्रा में मत मिले हैं। किन्तु पलड़ा टण्डनजी की ही ओर झुकता दिखाई देता है। जितने अनुमान लगाये गये हैं वे टण्डन जी की विजय की ओर संकेत करते हैं, चाहे वह बहुत अधिक मतों से हो अथवा थोड़े से। हां, यदि ५० फी से कम मत टण्डन जी को मिले तो दूसरे चुनाव में आचार्य जी का पलड़ा झुका ही देता है।

जल प्रलय

जहां एक ओर आसाम के भूकम्प ने भारत के उत्तर पूर्वांचल में त्राहि-त्राहि मचा रखी है, वहां उत्तरभारत के हृदय प्रदेश पर जल प्रलय का दृश्य दिखाई देता है। गंगा तथा उसकी सहायक नदियों में आये हुए बाढ़ के जल ने उफन कर चारों ओर के ग्रामों को जल-मग्न कर दिया है। उत्तर प्रदेश तथा बिहार दोनों ही प्रान्तों में इन बाढ़ों का भयंकर प्रकोप दिखाई देता है। सहस्रों ग्राम जलमग्न हो गये हैं, लाखों व्यक्ति बेघरबार होकर निराश्रित दशा में हैं, लाखों बीघे भूमि पर खड़ी हुई फसलें नष्ट हो गयी हैं। बिहार में तो अकाल पड़ने की सी स्थिति आ ही गयी थी, उत्तर प्रदेश में भी अनेकों स्थानों भूखों मर जाने की सी स्थिति पैदा हो चुकी है। फसलों का नाश इतने विशाल परिमाण में हुआ है कि १९५१ तक खाद्य संबन्धी आत्म-निर्भरता का विश्वास बड़े वर्षों का डोलता दिखाई देता है।

बम्बई की हड़ताल

बम्बई की मजदूर हड़ताल का प्रश्न दिन प्रतिदिन विषम स्थिति की ओर जा रहा है। राजनीतिक स्वार्थों के लिये देश के स्वार्थों के खून का यह भी एक दृश्य है। पारस्परिक झगड़ों में देश के उत्पादन को रोकना आज की भारत की स्थिति में भयंकर नैतिक अपराध है। ऐसा प्रतीत होता है कि हड़ताल को सफल बनाकर समाजवादी बम्बई क्षेत्र के मजदूरों में कांग्रेस का प्रभाव पूर्णतः नष्ट कर डालना चाहते हैं। दूसरी ओर समस्त शक्ति प्रयोग द्वारा हड़ताल को असफल बना कर कांग्रेसी सरकार बम्बई में समाजवादी दल की कमर तोड़ देना चाहती है।

—

प्यारी बहिनो

न तो मैं कोई नर्स हूं, न डाक्टर हूं, और न वैद्यक ही जानती हूं, बल्कि आप ही की तरह एक गृहस्थी स्त्री हूं। विवाह के एक वर्ष बाद दुर्भाग्य से मैं लिकोरिया (श्वेत प्रदर) और मासिकधर्म के दुष्ट रोगों मे फंस गई थी। मुझे मासिक धर्म खुल कर न आता था। अगर आता था तो बहुत कम और दर्द के साथ जिससे बड़ा दुःख होता था। सफेद पानी (श्वेत प्रदर) अधिक आने के कारण मैं प्रति दिन कमजोर होती जा रही थी, चेहरे का रंग पीला पड़ गया था, घर के काम-काज से जी घबराता था, हर समय सिर चकराता, कमर दर्द करती और शरीर टूटता रहता था। मेरे पतिदेव ने मुझे सैंकड़ों रुपये की मशहूर औषधियां सेवन कराईं, परन्तु किसी से भी रत्ती भर लाभ न हुआ। इसी प्रकार मैं लगातार दो वर्ष तक बड़ा दुःख उठाती रही। सौभाग्य से एक सन्यासी महात्मा हमारे दरवाजे पर भिक्षा के लिये आये। मैं दरवाजे पर आटा डालने आई तो महात्माजी ने मेरा मुख देख कर कहा—बेटी तुझे क्या रोग है, जो इस आयु मे ही चेहरे का रंग रुई की भांति सफेद हो गया गया है? मैंने सारा हाल कह सुनाया। उन्होंने मेरे पतिदेव को अपने डेरे पर बुलाया और उनको एक नुस्खा बतलाया, जिसके केवल १५ दिन के सेवन करने से ही मेरे तमाम गुप्त रोगों का नाश हो गया। ईश्वर की कृपा से अब मैं कई बच्चों की मां हूं! मैंने इस नुस्खे से अपनी सैंकड़ों बहिनों को अच्छा किया है और कर रही हूं। अब मैं इस अद्भुत औषधि को अपनी दुःखी बहिनों की भलाई के लिये असल लागत पर बांट रही हूं। इसके द्वारा मैं लाभ उठाना नहीं चाहती क्योंकि ईश्वर ने मुझे बहुत कुछ दे रखा है।

यदि कोई बहिन इस दुष्ट रोग में फंस गई हो तो वह मुझे जरूर लिखें। मैं उनको अपने हाथ से औषधि बना कर वी० पी पार्सल द्वारा भेज दूंगी। एक बहिन के लिये पन्द्रह दिन की दवाई तैयार करने पर २॥।=) दो रु० चौदह आने असल लागत खर्च होता है और महसूल डाक अलग है।

❀ जरूरी सूचना ❀

मुझे केवल स्त्रियों की इस दवाई का ही नुस्खा मालूम है। इसलिये कोई बहन मुझे और किसी रोग की दवाई के लिये न लिखें।

प्रेमप्यारी अग्रवाल, (३०) बुढ़लाडा, जिला हिसार, पूर्वी पंजाब।

[illegible] मणीलाल चीमनलाल एण्ड कं.

डायमंड छापकी लगडीयाँ

[illegible]

५, १, ॥ और ॥ तोलेकी लगडीयाँ मिलेगी.

नकली मालसे सावधान रहिये

भारत के प्रत्येक प्रतिष्ठित व्यापारी के यहाँ मिलेगी.

Diamond Fine Gold — BOMBAY

मणीलाल चीमनलाल एण्ड कं.

(सोने चांदी लेने और बेचनेवाले तथा कमीशन एजन्टस्)

१८८ शराफ बाज़ार, बम्बई, २

फोन २०८९८ — ग्राम KAKALJI

ईस्टर्न पंजाब रेलवे

आवश्यक सूचना

शिमला आने वाले यात्रियों के लाभ के लिए निम्नांकित के मध्य दो महीने तक उपयोग मे आने वाले रियायती किरायों पर फर्स्ट क्लास के वापिसी टिकट अब जारी किये जा रहे हैं —

(अ) कालका-शिमला विभाग पर किन्हीं भी दो स्टेशनों के मध्य।

(ब) शिमला और निम्नांकित स्टेशनों के मध्य।

दिल्ली . . . अमृतसर
अम्बाला कैंट ... .. अम्बाला सिटी
जलंधर कैंट ... ... जलंधर सिटी
लुधियाना ... ... पटियाला
फिरोजपुर कैंट .. ... . फिरोजपुर सिटी

किरायों का विवरण और अन्य जानकारी सम्बन्धित स्टेशन मास्टरों से प्राप्त की जा सकती है।

चीफ एडमिनिस्ट्रेटिव आफीसर

जग-प्रसिद्ध बम्बई का ६० वर्षों का पुराना

मशहूर अंजन

(रजिस्टर्ड)

आंख शरीर का एक प्रमुख अंग है, जिसके बिना मनुष्य की जिन्दगी ही बेकार है। इसलिए "आंख ही जीवन है" का विचार छोड़ कर लोग लापरवाही से आंख को खराब कर लेते हैं और बाद में उम्र भर पछताते हैं। आंख की साधारण बीमारी भी, लापरवाही से, ठीक इलाज न करने से जीवन को अंधा बना देती है। आंख का इलाज समय और सतर्कता से होना चाहिये। हमारे कारखाने का नैन जीवन अंजन काफी वर्षों से आंख की ज्योति बढ़ाने तथा आंखों की ज्योति स्थिर रखने एवं आंखों की सभी बीमारियों को दूर करने के लिए प्रसिद्ध है और लोगों की सेवा कर रहा है, इससे आंखों में कैसा भी धुंध, गुबार, जाला, माडा फूला, पड़वाल मोतियाबिन्द, नाखूना, लाल रहना, आंखों से पानी बहना (ढलका), रतौंधी, दिनौंधी, एक चीज की दो चीज दिखाई देना, कीचड़ पड़ना, कम नजर आना या वर्षों से चश्मा लगाने की आदत ही क्यों न पड़ गयी हो, इत्यादि आंखों की तमाम बीमारियां बिना आपरेशन दूर होती हैं। आंखों को आजीवन स्वस्थ रखता है, डाक्टर, वैद्य भी नैनजीवन अंजन द्वारा आंख के रोगियों का इलाज करते हैं तथा अन्य लोगों को इसके इस्तेमाल की राय देते हैं। एक बार अवश्य अनुभव करें। हजारों प्रशंसा-पत्र आए हैं। कीमत प्रति शीशी १) २ शीशी लेने पर डाक खर्च माफ। हर जगह एजेन्टों की आवश्यकता है।

पता :— [illegible] नैन जीवन अंजन, १८७, सैन्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४।

गृहस्थ चिकित्सा

इस मे रोगों के कारण, लक्षण, निदान, चिकित्सा एवं पथ्यापथ्य का वर्णन है। अपने ४ रिश्तेदारों व मित्रों के पूरे पते लिखकर भेजने से यह पुस्तक मुफ्त भेजी जाती है। पता—

के० एल० मिश्रा, वैद्य मथुरा।

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति का

नया उपन्यास

आत्म-बलिदान

सरला की भाभी में जिस अद्भुत जीवन-गाथा का सूत्रपात हुआ था, और सरला मे जो विकसित हुई, आत्म-बलिदान में उसका रोमाञ्चकारी अन्त दिखाया गया है। साथ ही साथ गत २५ वर्षों के राजनीतिक जीवन का चित्र भी दिया गया है। मूल्य ३) सरला की भाभी, सरला और आत्म-बलिदान के पूरे सेट का मूल्य ७॥)।

मेनेजर: विजय पुस्तक भण्डार,

नया बाजार, । दिल्ली

वीर अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

४
आना

अर्जुन

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार २२ भाद्रपद सम्वत् २००७ [अङ्क २१

विश्वशान्ति और रूस

पिछले दिनों कुछ ऐसे समाचार मिले हैं, जिनकी ओर हम अपने पाठकों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करना चाहते हैं। जापान के उत्तर में स्थित सखालीन द्वीप पर रूस का अधिकार है। वहां रूसी अफसरों की देखरेख में एक जापानी सेना तैयार की जा रही है, जिसकी संख्या २०००० से १॥ लाख तक कूती जाती है। इस सेना का नाम मुक्ति सेना है और इसके प्रधान सेनापति जापान के भू० पू० प्रधानमंत्री श्री कोनोये के पुत्र फुमितारो कोनोये हैं। उन्हें १९४५ ई० में रूस ने गिरफ्तार कर लिया था। अब वे सब साम्यवादी बना दिये गये हैं। यह सेना किसी भी दिन जापान पर आक्रमण करने के लिए मास्को से कूच के आदेश की प्रतीक्षा कर रही है।

एक दूसरा समाचार यह है कि अफगान सीमा के उत्तर में ताशकन्द के क्षेत्र में रूस ने एक बहुत जबर्दस्त सैनिक अड्डा बनाया है। यहां हवाई अड्डों, कैंपों, सैनिक शस्त्रागारों और सैनिक क्षेत्रों का जाल-सा बिछ गया है। लेनिनाबाद, स्तालिनाबाद, समरकन्द, बुखारा, फरगना, आदि शहर भी इस सैनिक अड्डे के अन्तर्गत हैं। संवाददाता के कथनानुसार यह सैनिक संस्थान भारत व पाकिस्तान के उत्तरी भागों पर घूंसे की तरह तना हुआ है और आक्सस नदी के तट तक, जो अफगानिस्तान की सीमा पर बहती है, फैला हुआ है। इसकी सीमा पर स्थित कर्की और तरमेज रूसी नगरों में काफी लाल सेना पड़ी हुई है। ताशकन्द केवल सैनिक प्रवृत्तियों का ही नहीं, रूस की राजनैतिक प्रवृत्तियों का भी एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र बना हुआ है। एशियायी देशों के साम्यवादियों को यहां घुसपैठ आन्दोलन, तोड़फोड़, विध्वंस और विद्रोह आदि की शिक्षा देने का भी संगठित केन्द्र है। एक ब्राडकास्ट स्टेशन भी है।

तीसरा समाचार यह है कि ईरान के उत्तरप्रदेशवर्ती २०००० कुर्द सैनिकों ने विद्रोह कर दिया है। ईरान को पूरा सन्देह है कि इन कुर्दों को रूस की पूरी सहायता प्राप्त है। इसमें संदेह नहीं कि रूस की सीमा में रहने वाले कुर्दों ने कुर्दिस्तान का नारा लगाया हुआ है।

चौथा समाचार यह है कि रूस का एक बेड़ा जिसमें २०० जहाज शामिल हैं, आइसलैंड व उत्तरी ध्रुव सागर के बीच गश्त लगा रहा है। इनके साथ कुछ १०००० टन वजनी जहाज भी हैं। सम्भव है कि वे जहाज मछली पकड़ने के लिए आये हों, किन्तु सम्वाददाता के कथनानुसार यह मौसम मछलियों के शिकार का नहीं है। इसलिए एक भय यह भी है कि आइसलैंड पर रूस आक्रमण करना चाहता है।

पांचवां समाचार यह है कि रूस ने पूर्वी जर्मनी की सरकार से संधि का मसविदा प्रकाशित कर दिया है। इसके अनुसार संधि का अधिकारक्षेत्र समस्त जर्मनी पर लागू होगा। इसके अनुसार पूर्वी जर्मनी को ५०००० सैनिक, १ लाख पुलिस, रखने का अधिकार पांच वर्ष बाद अनिवार्य सैनिक शिक्षण, क्षतिपूर्ति की समाप्ति, बर्लिन से इग्लैंड आदि पश्चिमी देशों को निकल जाने के लिए छः मास का अल्टिमेटम आदि सम्मिलित हैं।

ये सब समाचार भारतीय पत्रों में पिछले तीन चार दिनों में ही प्रकाशित हुए हैं। कोरिया में जो युद्ध चल रहा है, उसे तो सभी जानते हैं। इन सब में संभव है कुछ अत्युक्ति भी हो, किन्तु इसमें संदेह नहीं कि रूस जिस दिशा में प्रगति कर रहा है, उसके सब प्रयत्न जिस लक्ष्य के लिए हो रहे हैं, वे सब विश्वशान्ति के लिए नहीं हैं। हम यह नहीं कहना चाहते कि अमेरिका और इंग्लैंड आदि देश स्वार्थ-साधन नहीं कर रहे या उनके उद्देश्य पवित्र हैं। वे भी स्वार्थवश चल रहे हैं वे भी विश्वशान्ति को दूर करते आ रहे हैं। किन्तु इससे समानता, स्वतन्त्रता और जनतन्त्रता का नेतृत्व करने का दावा करने वाला रूस दोषमुक्त नहीं हो सकता। ये सब समाचार विश्व की निकट भविष्य की अशान्ति के संबन्ध में संकेत करते हैं। यदि निकट भविष्य में युद्ध हुआ, तो उसके प्रभाव से भारत पृथक नहीं रह सकता। इसलिए आज समस्त देश को निकट भविष्य में किसी भी विषम परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। और यही कारण है कि देश के सभी दलों को केवल अपने दल की बजाय समस्त देश के हित पर सदा दृष्टि रखनी चाहिए।

प्रतिस्पर्धा नहीं पूरकता

कुछ दिन पूर्व उत्तरप्रदेश के राज्यपाल श्री होमी मोदी ने एक भाषण में भारतीय नारियों को सम्बोधित करते हुए कहा था कि यदि मैं आज युवक होता और मेरे सामने विवाह का प्रश्न उपस्थित होता, तो मैं लाठी और बन्दूक चलाने वाली खूंखार दृष्टि की तरुणी से विवाह करना कभी पसन्द नहीं करता। इसी प्रसंग में उन्होंने कहा था कि यदि नारी पुरुष पर विजय प्राप्त करना चाहती है, तो वह भोजनालय में उसे स्वादु भोजन खिला कर मजे में प्राप्त कर सकती है। ये शब्द उन्होंने यद्यपि कुछ हंसते हुए कहे थे, तथापि इन दोनों वाक्यों में जो एक गम्भीर सत्य है उस पर उन्होंने अपने भाषण में विशेष बल दिया था। आज की नारी अधिकार और समानाधिकार के युग के प्रवाह में अपने कर्तव्य को भूल कर आगे बढ़ना चाहती है और यही उसका बड़ा भारी भ्रम है। यूरोप की संस्कृति और सभ्यता में अधिकारों के लिए संघर्ष समझ में आ सकता है क्योंकि उसका लक्ष्य केवल भौतिक उन्नति रहा है। जहां भौतिक उन्नति का एकमात्र उद्देश्य सामने होगा, वहां स्वभावतः अधिकारों के लिए संघर्ष सामने रहेगा। भारतीय संस्कृति ने नारी और पुरुष को दो स्पष्ट पृथक क्षेत्रों में विभक्त कर दिया था। ये दोनों क्षेत्र एक समान आदरणीय थे, बल्कि माता का स्थान कहीं अधिक ऊंचा था। यह दुर्भाग्य की बात है कि पीछे से पुरुष ने अपनी शक्ति के मद में मातृत्व का निरादर प्रारम्भ कर दिया था और नारी जाति की स्थिति हीन से हीनतर होती गई। आज भारत का शिक्षित नारी-समाज जो कुछ सोचता है, वह उसी की प्रतिक्रिया मात्र है। किन्तु इस प्रतिक्रिया में वह और उसका समर्थक पुरुष विवेक को भूल गया है, कर्त्तव्य-भावना पर अधिकार की भावना हावी हो रही है। पुरुष का निर्माण वह शिक्षित-सुसंस्कृत माता बन कर कहीं अधिक अच्छा कर सकती है। और इसी में उसका महत्त्व है। राम, कृष्ण, म० बुद्ध, शिवाजी और म० गांधी का निर्माण, हवाई जहाज चलाने, सरकारी कुरसियों पर बैठ कर शासन करने और युद्धक्षेत्र में भयंकर अग्निवर्षा करने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण राष्ट्र सेवा है। किन्तु आज की नारी प्रतिस्पर्धा और पुरुष के गुण दुर्गुण सीखने को ही अपना लक्ष्य मानने लगी है। आज स्त्री-शिक्षा भी इसी दिशा में दी जा रही है, नारी-आन्दोलन भी इसी दिशा में हो रहा है, हिन्दु-कोडबिल की अनेक धाराओं में भी यही भाव काम कर रहा है। वस्तुतः आज समस्त दृष्टिकोण बदलने की आवश्यता है। यह कार्य सरकार करेगी, इसकी आशा हमें नहीं करनी चाहिये। उसके सामने अपनी ही बहुत गम्भीर समस्यायें हैं। देश को सांस्कृतिक और सामाजिक संस्थाओं का यह कार्य अपने ऊपर लेना चाहिये और नारी के भ्रमपूर्ण दृष्टिकोण को बदलने का संगठित व्यापक आन्दोलन करना चाहिये।

हिन्दी सा० सम्मेलन और परिषद

दिल्ली में हिन्दी परिषद्की स्थापना को हिन्दी साहित्य सम्मेलनके कुछ क्षेत्रों में आशंका और सन्देह की दृष्टि से देखा जाने लगा है। हमें स्वयं इन दोनों संस्थाओं में परस्पर आगे जा कर परस्पर ईर्ष्या और अविश्वास की भावना उत्पन्न होने का भय है। किन्तु इसीलिए हम हिन्दी परिषद का विरोध नहीं कर सकते। सम्मेलन की गति विधि और संकुचित मनोवृत्ति से हिन्दी संसार में असंतोष बहुत समय से विद्यमान है। सम्मेलन आज एक गुट की संस्था बना हुआ है। वह गुट तो सम्मेलन के नाम के साथ 'अखिल भारतीय' शब्द भी जोड़ने को तैयार नहीं और न वह समस्त देश को उसके संचालन में समान भाग देने को तैयार है। पटना के विशेष सम्मेलन की असफलता ने उसे और भी अप्रिय बना दिया है। आज तो उसका मुख्य उद्देश्य परीक्षाओं से पैसा कमाना भर रह गया दीखता है। इन कारणों से हिन्दी संसार में सम्मेलन के अधिकारी गुट के विरुद्ध असंतोष बढ़ता जा रहा है और वस्तुतः हिन्दी परिषद को प्रायः सभी प्रान्तों के हिन्दी प्रेमियों का जो सहयोग मिला है उसका मुख्य कारण यह असन्तोष भी है। आज इस नई संस्था का विरोध न करके अपने को देश के लिए और अधिक उपयोगी बनाने की ओर ही हिंदी साहित्य सम्मेलन को अधिक ध्यान देना चाहिये, उस पर इलाहाबाद का ही नहीं, सारे देश का अधिकार हो, यह उदार भावना आज के अधिकारी वर्ग को अपनानी चाहिये। हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार किये जाने के बाद उत्कृष्ट साहित्य का निर्माण उसका उद्देश्य होना चाहिए, हिंदी भाषी प्रान्तों में परीक्षाओं का कार्य विश्व विद्यालयों के सुपुर्द कर अहिन्दी प्रान्तों मे हिन्दी प्रचार उसका मुख्य कार्य होना चाहिए। हिन्दी परिषद से हिन्दी का जो हित साधन हो, उसे भी सादर व सप्रेम स्वीकार करना चाहिए।

महंगाई आर्डिनेंस

भारत सरकार ने पिछले दिनों एक आर्डिनेंस निकाल कर बहुत सी वस्तुओं के मूल्य को १५ जून के मूल्य से न बढ़ाने का आदेश दिया है। देश में महंगाई न बढ़ने देने के लिए यह वह प्रयत्न है

राजर्षि टण्डन

★ श्री रामेश्वरदयाल दुबे

टंडन जी ने अपने जीवन में देश को कितनी ठोस सेवा की है, उसके लिये कितना त्याग किया है, भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिये कितना अथक परिश्रम किया और अब भी कर रहे हैं, राष्ट्रभाषा हिन्दी की रक्षा और सेवा में एक जागरूक पिता की तरह अपने जीवन का प्रत्येक क्षण लगाया है, उस सब के उपलक्ष्य में पिछले दिनों उन्हें 'राजर्षि' की उपाधि देकर साधुओं और पंडितों ने उनका जितना सम्मान किया है, उससे अधिक उन्होंने अपने धर्म को सम्मानित किया है।

श्री टंडनजी का पवित्र जीवन और आदर्श आचरण सचमुच भव्य है। उनका नाम 'पुरुषोत्तमदास' अर्थ की पूरी सचाई के साथ सत्य और सार्थक है। टंडन जी के बारे में यह ठीक ही लिखा गया है 'भवभूति' के राम की तरह वे सिद्धान्तों पर वज्र की तरह दृढ़ रहने वाले और लोक व्यवहार में फूल की तरह सुकुमार मनोवृत्ति के महापुरुष हैं। जहां मर्यादा का प्रश्न होता है वहां वे 'पुरुषोत्तम' के रूपमें और जहां सेवा का प्रश्न होता है, वहां वे 'दास' के रूपमें मिलते हैं।"

अपने सिद्धान्तों और संकल्पों के प्रति दृढ़ता टंडन जी की एक ऐसी विशेषता है, जिसके कारण देश के नेताओं में उनका एक विशेष स्वतन्त्र स्थान है। अपनी स्पष्टवादिता सहृदयता और निर्भीकता के लिये वे विशेष प्रसिद्ध हैं। यों तो वे सरल स्वभाव के व्यक्ति हैं, सेवा परायण होते हुए भी बिलकुल निरभिमान हैं। हृदय के कोमल हैं, किन्तु अपने विचारों में और कार्य पद्धति में उनका सा चिपटने वाला शायद ही कोई दूसरा हो। कुछ लोग उन्हें इसीलिये 'जिद्दी' समझते हैं। यह लोगों का भ्रम है। टंडन जी संसार के उन महान पुरुषों में से एक हैं, जो अपने सिद्धान्तों का पालन करने के सामने अपनी महत्वाकांक्षाओं का विचार भी नहीं करते।

टण्डन जी एक स्वाभिमानी पुरुष हैं और धुन के बड़े पक्के। वे अन्याय और अन्यायी का प्रतिकार करने के लिये अपनी सारी शक्ति के साथ सामने आ डटते हैं। जहां उनकी दृष्टि में जनता के स्वाभिमान और स्वाधिकार को चोट पहुंचाने वाली बात उपस्थित होती है, वे अपने चिर सहयोगियों से ही नहीं, उन महान व्यक्तियों से भी, जिनके प्रति उनके हृदय में अपार श्रद्धा है, पृथक होना सहन करते हैं।

अपने सिद्धान्तों को छोड़ कर किसी के सामने झुकना वे कभी पसन्द नहीं करते। उनके स्वभाव का रहस्य और उनकी तपस्या का मर्म केवल इसी एक बात में है।

अपनी युवावस्था से आज तक हिंदी भाषा की रक्षा और उसके प्रचार का जितना व्यापक कार्य श्री टण्डन जी के द्वारा हुआ है, वह अकथनीय है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना कर उसके द्वारा श्री टंडन जी हिन्दी आन्दोलन को नियमित रूपसे और एकाग्र मन से चलाते रहे हैं। आज सम्पूर्ण भारत में राष्ट्रभाषा हिन्दी का और हिन्दी साहित्य सम्मेलन का इतना अधिक मान बढ़ा है उसका बहुत कुछ श्रेय श्री टंडन जी को ही है।

श्री माखनलाल जी चतुर्वेदी ने एक स्थान पर ठीक ही लिखा है कि—हिंदी की सेवा और उसकी रक्षा के लिए किये गये प्रण, प्रयत्न, पुरुषार्थ और प्राणाहुति का सम्मिलित नाम ही पुरुषोत्तमदास टंडन है।

जीवन के प्रारम्भ से ही श्री टण्डन जी भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन के एक प्रमुख सूत्रधार रहे हैं। अपने अपूर्व त्याग और अथक सेवाओं के बल पर युक्तप्रांतीय राजनैतिक केन्द्र में श्री टण्डन जी ने वर्षों तक सफलतापूर्वक नेतृत्व किया है। टण्डन जी के संबंध में यह ठीक ही कहा जाता है कि शायद इस देश के वे पहले और अकेले स्पीकर हैं जो स्पीकरी करते हुए भी सार्वजनिक जीवन में स्वतंत्र रहते हैं। व्यवस्थापिका सभा के विभिन्न दलों द्वारा वे समान रूप से समादृरित हैं।

टण्डन जी का दर्शन करना एक ऋषि का दर्शन करना है। उनकी अत्यंत सादगी, सरलपन और व्यवहार की अकृत्रिमता उन्हें एक साधु की कोटि में ले जा बिठाती है। उनकी वेशभूषा, उनका रहन सहन इतना सरल है कि कोई उन्हें स्पीकर समझ ही नहीं सकता। कोहनी के पास फटा हुआ खादी का कुर्ता पहने हुए जब वे किसी विराट सभा के मंच पर चढ़ते हुए दिखाई देते हैं तब न पहचानने वाले लोगों को यह विश्वास ही नहीं होता कि यह टण्डन जी हैं।

टण्डन जी का जीवन एक गरीब का जीवन है। वे अपने शरीर पर अधिक खर्च करना पसन्द नहीं करते। फटे हुए कपड़ों को उतार फेंकने के बजाय उन्हें सिलवा कर पहनते हैं।

उनके भोजन-सम्बन्धी नियम कुछ विचित्र से हैं। बिना नमक मसाले का उबला हुआ शाक, रोटी, दाल, चावल, दलिया आदि ही निरन्तर ३० वर्ष से उनका भोजन रहा है। वे दूध या दूध से बनी कोई वस्तु नहीं लेते। उनका कहना है "मैं शाकहारी हूं। यह पशुजन्य खाद्य मेरा भोजन नहीं हो सकता। गौ का दूध गौवत्स के लिए है, मेरे लिये नहीं।"

ऐसा अत्यन्त सादा और स्वादहीन बेस्वाद का श्री टण्डन जी का भोजन। पूर्व काल में शायद कोई संयमी संन्यासी ऋषि ही जैसा भोजन करता होगा।

चमड़े के जूते वे कभी नहीं पहनते। किरमिच के जूते पहन कर वे अपना काम चलाते हैं।

टण्डन जी का जीवन विभिन्न धाराओं में बह चुका है। प्रारम्भ में वे प्रयाग में एक सफल वकील रहे हैं। उसके पश्चात् नाभा रियासत के दीवान बन कर उन्होंने प्रबन्ध कर सकने की क्षमता दिखाई है। बहुत दिनों तक आपने बैंक का संचालन भी किया है। लाला लाजपतराय के देहान्त के बाद उनके "लोक-सेवक संघ', का नेतृत्व भी आपने अपने ऊपर लिया है।

सभी दृष्टियों से श्रद्धेय टण्डन जी वर्तमान युग के एक वंदनीय पुरुषोत्तम हैं। उनकी ऋषितुल्य आकृति और कृति उनकी वीरोचित वाणी और तेज, उनका सरल मृदुल स्वभाव; उनका पावन जीवन, आदर्श निर्मल चरित्र सहज ही हमारी श्रद्धा का विषय बन जाता है।

भारतीय राष्ट्र की उन्नति के लिए उनकी अनेक योजनाएं हैं। भारतीय संस्कृति के उद्धार के लिए उनके अनेक मौलिक विचार हैं। राष्ट्रपति के पद पर बैठने पर, सम्भव है, वे अपने स्वप्नों को साकार रूप देने में सफल हो सकें।

जिसकी घोषणा पं० नेहरू ने कुछ दिन पूर्व की थी। समस्त देश आज महंगाई को कम करने के लिए उत्सुक है, किन्तु इसमें सफलता नहीं होती। वस्तुतः यह इतनी कठिन समस्या है कि इसके लिए सरकार, सरकारी कर्मचारियों, व्यापारियों और जनता—सबको एक साथ मिल कर प्रयत्न करना चाहिए। सरकार का नया आर्डिनेंस भी तब तक सफल नहीं हो सकता, जब तक कि सभी दल ईमानदारी से इसे सफल करने का प्रयत्न न करें। सरकार ने कानून बना दिया, सरकारी कर्मचारी रिश्वत न ले कर जनसेवा के उद्देश्य से काम करें, व्यापारी भी निस्स्वार्थ भाव से काम करें और जनता भी इसकी सफलता में सरकार को सहयोग दें, तभी महंगाई कम हो सकेगी।

टण्डनजी की कुछ विशेषताएं

कांग्रेस के नये अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तम दास टंडन का जीवन एक दीर्घकालीन साधना और संयम का जीवन रहा है। सन् १९१९ में ही, जब महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय आंदोलन का बिगुल फूंका था, वह अपनी वकालत छोड़कर मैदान में उतर आये और तब से एक सच्चे, शांत और निष्काम राष्ट्र-भक्त सैनिक की तरह देश की सेवा कर रहे हैं।

प्राकृतिक जीवन प्रणाली और प्राकृतिक चिकित्सा में टंडनजी का अटूट विश्वास रहा है। साबुनका उपयोग वे केवल अपने वस्त्रों के लिए ही करते हैं और शरीर पर मुल्तानी मिट्टी का लेप श्रेयस्कर समझते हैं।

भोजन के सम्बन्ध में वे पक्के प्रकृतिवादी हैं। उन्होंने २९ वर्ष से चीनी का उपयोग बिल्कुल छोड़ रखा है और और उसके स्थान पर गुड़ का सेवन करते हैं। उनका प्रातःकाल का नाश्ता भीगी हुई मूंग और चनों का होता है। वे नमक का उपयोग भी बिल्कुल नहीं करते और कुछ दिनों से उन्होंने दूध और दूध से बनी हुई चीजें जैसे मक्खन, घी आदि को भी तिलांजलि दे रखी है।

टण्डनजी इन्जेक्शनों द्वारा इलाज के घोर विरोधी हैं। एक बार तीव्र हृदय रोग की अवस्था में डाक्टरों द्वारा इन्जेक्शन लेना अनिवार्य घोषित कर दिये जाने पर भी उन्होंने अपना मत नहीं बदला। यहां यह उल्लेखनीय है कि टण्डनजी ने अपने दीर्घकालीन संसदीय जीवन में जो पहला प्रश्न पूछा, वह भी यह था कि 'क्या वर्तमान जनव्यापी अस्वास्थ्य का कारण चेचक के टीके हैं?'

कांग्रेस के सिद्धांतों के टण्डनजी अनन्य भक्त हैं। वे नियमित रूप से चर्खा कातते हैं। गोरक्षा के प्रश्न पर उन्होंने चमड़े का उपयोग भी बन्द कर रखा था, लेकिन हाल में वे मरे पशुओं के चमड़े के जूते पहनने लगे हैं। वे वर्ष भर में केवल ३९) खादी पर खर्च करते हैं; इसमें उनके पहनने, ओढ़ने तथा बिछाने के सब कपड़े आ जाते हैं।

टण्डनजी के महान् चरित्र का कुछ अनुमान इस दृष्टांत से लग सकता है कि उन्होंने अपने बंगले के अहाते में २९ मन गेहूं उपजाये, लेकिन अपने पास कुछ न रखकर उन्होंने सारा गेहूं सरकार को यह कह कर दे दिया कि मैं सरकार से राशन प्राप्त करता हूं।

टण्डनजी ने अपने पद और प्रभुत्व से कभी लाभ उठाने की चेष्टा नहीं की।
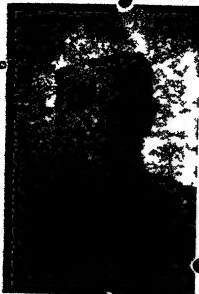
[शेष पृष्ठ २९ पर]

राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसाद ने मूल्य बढ़ाने के विरुद्ध एक नया आर्डिनेंस जारी किया है।

श्री वी० पी० मेनन हैदराबाद, राजस्थान व सौराष्ट्र में जागीरदारी प्रथा को समाप्त करने की अन्तिम योजना तैयार कर रहे हैं।

श्री बालकृष्ण केसकर ने घोषणा की है कि फ्रेंच बस्तियों के जनमत संग्रह को भारत सरकार स्वीकार न करेगी।

श्री मोहनलाल सक्सेना ने भारत सरकार से २० लाख बंगाली शरणार्थियों को बसाने का अनुरोध किया है।

श्री चांगकाई शेक को आज भी आशा है कि वे १९५४ ई० में वापस चीन आवेंगे।

श्री हो चि मिन हिन्द चीन में बाओदाई सरकार पर आगामी शरद् ऋतु में आक्रमण की योजना बना रहे हैं।

श्री हीरालाल शास्त्री ने राजस्थान के प्रधान मंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया है।

बेलजियम के राजा लियोपाल्ड के त्यागपत्र देने के बाद युवराज राजा बने हैं।

फ्रांस के प्रधान मंत्री पद पर मयच के बाद श्री रैने प्लेवेन आसीन हुए हैं।

भारत से टूटे हुए भाग में

काश्मीर पर कब्जे के लिये अमरीका को टुकड़ा

लियाकत का वक्तव्य शेष हिन्दुओं को निकालने की भूमिका है

कछार पर बलात अधिकार करने का आन्दोलन

पाकिस्तान के प्रधान मंत्री श्री लियाकत अली खां का हाल का वक्तव्य नेहरू सरकार की आंखें खोल देने के लिए आवश्यकता से भी अधिक है। एक प्रकार से यदि देखा जाय तो मियां लियाकत अली ने भारत के प्रधान मंत्री पं० नेहरू द्वारा भारतीय राष्ट्रीय हितों व भारतीय नागरिकों के हितों का बलिदान करके भी पाकिस्तान से मित्रता बनाये रखने की भावना को खाक माना है। पाकिस्तान का यह रूप आज ही बना हो ऐसी बात नहीं है। श्री लियाकत व उनके पाकिस्तानी अनुयायी अपने प्रत्येक कार्य से भारत को हानि पहुंचाने अथवा बदनाम करने का प्रयत्न करते रहे हैं। इस वक्तव्य में तो लियाकत अली की मनोवृत्ति नंगे रूप में सभी के सामने आगयी है।

घातक वक्तव्य

पाक प्रधानमंत्री ने कहा है कि पाकिस्तान को आक्रमण का भय केवल हिन्दुस्तान से है। इस बात के औचित्य के सम्बन्ध में यदि विचार करें तो यह स्पष्ट है कि पं० नेहरू के नेतृत्व में भारत सरकार ने आवश्यकता से ही अधिक नहीं, वरन् नीति और आत्म-सम्मान की सभी भावनाओं को ताक में रख कर पाकिस्तान के शत्रुतापूर्ण कार्यों को सहा है। इस बात का सबसे बड़ा प्रमाण एक करोड़ से भी अधिक की संख्या में दुर्भाग्य के भरोसे पड़े हुए भारत के वे लोग हैं जिन्हें 'शरणार्थी' करके पुकारा जाता है।

भारत ने काश्मीर में पाकिस्तान के आक्रमण को सहा और उसे केवल रक्षात्मक युद्ध ही बनाया। पाक सरकार द्वारा बारबार समझौतों का भंग किया जाना सहा। निकल कर आने वाले शरणार्थियों की २००० करोड़ से भी अधिक की संपत्ति का डकार जाना सहा। लाखों की संख्या में हिन्दू स्त्रियों का अपहरण सहा। भारतान्तर्गत मुस्लिम राज्यों में पाकिस्तानी एजेन्टों द्वारा चलायी जाती हुई भारत विरोधी कार्यवाहियों को सहा। यदि यथार्थ में पाकिस्तान द्वारा भारत के प्रति किये गए अपराधों की सूची मात्र ही तैयार की जावे तो एक बहुत बड़ा पोथा बन जायेगा।

हिन्दु निष्क्रमण का भय

भारत के इस रुख के पश्चात् भी पाक प्रधानमंत्री लियाकतअली खां के उपरोक्त वक्तव्य का गम्भीर अर्थ स्पष्ट हो जाता है। दोनों ही देशों के पारस्परिक सम्बन्धों पर इसका कुछ भी प्रभाव पड़े किन्तु पाकिस्तान के अन्दर पड़ने वाले एक सबसे गम्भीर प्रभाव की उपेक्षा नहीं की जा सकती। लियाकत अली की इस घोषणा से पाकिस्तान में शेष बचे हिन्दुओं का वहां अधिक समय तक रहना असंभव हो जावेगा। पाकिस्तान में रहने वाले प्रत्येक हिन्दू को भारत का एजेन्ट समझा जायगा और "भारत की पाकिस्तान विरोधी आक्रमणात्मक कार्यवाहियों" को न पनपने देने के लिए वहां के हिन्दुओं को निकाल बाहर करने अथवा नष्ट कर देने के प्रयत्न किये जावेंगे।

यथार्थ में लियाकत का यह वक्तव्य उन प्रवृत्तियों की ओर संकेत करता है, जो शेष बचे हिन्दुओं को वहां से निकाल फेंकने के लिए पाकिस्तान में तैयारियां कर रही हैं। पं० नेहरू के शब्दों में पश्चिमी पाकिस्तान प्रायः हिन्दू शून्य हो चुका है। पूर्वी पाकिस्तान के हिंदुओं की लगभग आधी संख्या निकल कर भारत में आ चुकी है और वहां शेष बचे लगभग १० लाख हिन्दुओं के सिर पर यह दुर्भाग्य मंडराता दिखाई देता है।

असत्य प्रचार

झूठे प्रचार में पाकिस्तान पूर्णतः गोयबल्स की पद्धति पर चल रहा है। पूर्वी पाकिस्तान सरकार द्वारा हाल ही में प्रकाशित आंकड़ों में दिखाया गया है कि पश्चिमी बंगाल से पूर्वी बंगाल आने वाले मुसलमानों की संख्या पूर्वी बंगाल से पश्चिमी बंगाल जाने वाले हिन्दुओं से अधिक है। सभी व्यक्ति जानते हैं कि पूर्वी बंगाल से आने वाले हिन्दुओं की संख्या जाने वाले मुसलमानों से कितने ही गुना है। पश्चिमी बंगाल सरकार द्वारा प्रकाशित आंकड़ों में आने वाले हिन्दुओं की संख्या जाने वाले मुसलमानों से लगभग चार गुनी है। अनधिकृत सूत्र तो इस परिमाण को भी घटा कर प्रकाशित किया हुआ बताते हैं। उनके अनुसार तो हिन्दुओं की संख्या मुसलमानों से और भी कई गुना अधिक है।

अंसार घोर सांप्रदायिक संगठन

पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दुओं पर किये जाने वाले अमानुषिक अत्याचारों में अन्सार संस्था का सबसे बड़ा हाथ रहा है। पूर्वी बंगाल के प्रधानमन्त्री नूरुल अमीन ने अंसार संगठन को भंग करने से स्पष्ट इन्कार कर दिया था। यही नहीं वह एक अर्ध सरकारी संगठन है और उसमें अनेकों हिन्दू सम्मिलित ही नहीं अधिकारियों के पदों पर काम कर रहे हैं, ऐसे समाचार 'डान' आदि पत्रों ने अनेकों बार प्रकाशित किये हैं।

हिन्दुस्तान टाइम्स के विशेष संवाददाता ने हाल ही में समाचार दिया है कि अंसार संस्था पूर्णतः साम्प्रदायिक संस्था है और उसके सदस्य केवल मुसलमान ही हैं। यह कई बार कहा जा चुका है कि यह संस्था उस मूल आधार के लिए भारी खतरा है, जिस पर नेहरू लियाकत समझौता आधारित है।

भारतीय हाई कमिश्नर तथा केन्द्रीय सरकार के अल्पसंख्यक मन्त्री ने हाल ही में पूर्वी बंगाल का दौरा किया था। अपने दौरे के समय वे अंसार संगठन के किसी भी हिन्दू सदस्य से नहीं मिले। पूर्वी बंगाल के उच्चाधिकारियों के नेताओं ने बताया कि उन्हें भी संस्था के किसी हिन्दू सदस्य का पता नहीं है। सूत्रों से मालूम हुआ है कि पहिले अंसार संस्था में चार हरिजन सदस्य थे किन्तु बाद में उन्हें रसद में बदल दिया गया।

अंसारों के एडजूटेन्ट तथा सहायक एडजुटेन्ट अफसरों में लिये जाते हैं और उन्हें सरकार वेतन देती है। कुछ समय पूर्व की बात है कि एक हिन्दू गृहरक्षक ने अंसार संस्था के अफसर पद के लिए प्रार्थना-पत्र भेजा और नागरिक रक्षा के डाइरेक्टर से मिला। डाइरेक्टर ने उससे कहा कि पूर्वी बंगाल सरकार की यह नीति नहीं है कि अंसार संस्था में किसी गैर मुसलमान को नियुक्त किया जाय।

कछार सम्बन्धी प्रचार

बंगाल के मुसलमानों में कछार को पाकिस्तान में बलपूर्वक मिलाये जाने का आन्दोलन जोरों से चल रहा है। जनसाधारण को भड़काने के लिए इस प्रकार के गीत गाये जाते हैं जिनका भाव है कि हम वीर मुस्लिम सन्तान हैं, हम निर्भीक हैं, हम लाठी के जोर से कछार छीन लेंगे। स्थान-स्थान पर इस प्रकार के गीत गाकर भारत के विरुद्ध वहां की मुस्लिम जनता को भड़काने के प्रयत्न प्रतिदिन हो रहे हैं।

अमेरिका को घूस

काश्मीर राज्य के जितने भाग पर पाकिस्तान का अधिकार है उस पर अपना अधिकार स्थायी बनाने के लिए पाकिस्तान, अमेरिका तथा इंग्लैंड की खुली सहायता लेने की तैयारी कर रहा है। यद्यपि आजाद काश्मीर सरकार के लोगों एवं दलों में असंतोष अत्यधिक हो चुका है और एक प्रकार से आन्तरिक युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो गयी है किन्तु उसे दबाने के लिए पाकिस्तान की सैनिक पुलिस पहुंच गयी है। ऐसी स्थिति में यह स्पष्ट है कि पाकिस्तान उस भाग के शासन को धीरे-धीरे अपने सीधे अधिकार में लेने की ओर बढ़ रहा है।

साथ ही समाचार प्राप्त हुआ है कि गिलगित की सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमि पर रूस के विरुद्ध हवाई

(शेष पृष्ठ २१ पर)

गीत

रचयिता—श्री "परिवर्तन"

जीवन की यह नदी निरन्तर, अविरत गति से बहती!
जन - निर्जन में,
शून्य - गगन में,
सिन्धु-मिलन आतुर विरह का तरल-ताप-सा सहती!!
गिरि आते—कंकड़ भी आते, शूल - भरे - द्रु म - रोते,
पथ की चट्टानों को जीवन - कण यह कैसे खोते;
मुड़ जाती है नदी स्वयं यह, करुण - कथा - सी कहती!
जीवन की यह नदी निरन्तर० !!

सागर में इसको लय होना, कण - कण को तर जाना,
अभिलाषा इसके मन की बस, सिन्धु - पुलिन को पाना;
कौन कील यह जिसे न लय में, यह मिलनाशा रहती!
जीवन की यह नदी निरन्तर, अविरत गति से बहती!!

टंडनजी और नेहरूजी

— महात्मा गांधी के दो पहलू —

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

पं० नेहरू

जैसे मनुष्य के शरीर का यन्त्र एक बहुत पेचीदा वस्तु है, वैसे ही उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व भी मिश्रित इकाई है। वह बिल्कुल सीधी रेखाओं से बना हुआ चित्र नहीं है। उसमें टेढ़ी मेढ़ी गोल और प्रायः एक दूसरे को काटने वाली रेखाओं की अधिकता रहती है। प्रकृति के उत्पन्न किये पदार्थों का विश्लेषण जितना कठिन है, मनुष्य की प्रकृति का विश्लेषण उससे भी अधिक कठिन है। महात्मा गांधी बहुत ही सरल और सीधी प्रकृति के महापुरुष थे; फिर भी यदि हम उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विश्लेषण करने लगें तो उसमें बहुत सी ऐसी बातें मिलेंगी, जिन्हें सुगमता से नहीं समझा जा सकता। कभी कभी तो उनका समन्वय करना कठिन प्रतीत होने लगता है। दृष्टान्त लीजिये।

म० गांधी एक पहेली

महात्मा गान्धी सिद्धांतरूप में मशीनरी के प्रयोग के विरुद्ध थे, परन्तु वे रेल मोटर घड़ी आदि सभी यन्त्रों का पूर्ण उपयोग करते थे।

वे प्रारम्भ से ही लोकभाषा के कट्टर पक्षपाती थे, उनकी ही कृपा से कांग्रेस में हिन्दी का प्रवेश हुआ, परंतु उन्होंने लेख रूपमें जितनी बपौती भारत को और संसार को प्रदान की है, उसका अधिकांश अंग्रेजी भाषा में ही है।

महात्माजी को किसी भी मूल्य पर हिन्दू मुस्लिम एकता, और मुस्लिम परितोष की नीति का उन्नायक समझा जाता है, परन्तु व्यक्तिगत जीवन में महात्माजी से बढ़कर सर्वांश में हिन्दू ढूंढने से भी मिलना कठिन है। वर्तमान भारत में, जब शिक्षित मुसलमान ने शिखा सूत्र को तिलांजलि दे रखी है, महात्मा जी इनका पालन करते थे, रहन सहन में, कपड़े लत्ते में तो वे हिन्दुत्व की मूर्ति दिखाई देते थे, और राम का नाम उनकी जिह्वा पर रहता था। मूर्ति पूजा में उनका विश्वास था, और भगवद्गीता को वे अपना मार्ग दर्शक मानते थे। उनके जमाने में रहकर बढ़े हुए मुसलमान मित्रों को मैंने प्रायः यह कहते सुना था कि गांधी जी के अनुयायी आर्यसमाजियों और ब्राह्म समाजियों से भी अधिक कट्टर हिन्दू हैं, क्योंकि वे तो बुतपरस्त भी हैं। अनेक विदेशी विचारक गांधी जी के व्यक्तित्व को समझने में सर्वथा असमर्थ रहते थे। वे यह देखकर आश्चर्य करते थे, कि इस व्यक्ति के जीवन में, उपदेशों में, और कार्यों में इतनी परस्पर विरुद्ध बातों का समन्वय कैसे हो गया?

महात्मा जी बहुत से मूल सिद्धान्तों के सम्बन्ध में अत्यन्त कट्टर थे, साथ ही वे व्यवहार नीति में अत्यन्त लचकीले थे। जब वे कोई आन्दोलन उठाते थे, तो उनके शब्दों से प्रतीत होता था कि सूरज और चांद अपना रास्ता छोड़ दें, पर इस बार गान्धीजी पीछे कदम न रखेंगे। देश उनके पीछे सरपट भाग रहा होता था। बीच में कोई नई परिस्थिति उत्पन्न हो जाती थी तो दूसरे दिन प्रातःकाल देशवासियों को समाचार पत्रों में यह पढ़कर आश्चर्य होता था, कि आन्दोलन स्थगित कर दिया गया है, और महात्मा जी ने अपनी भूल स्वीकार कर ली है।

यह कठोरता, और यह लचकीलापन ही था, जिसने महात्मा जी को भारत की राजनीति का २८ वर्षों तक नेतृत्व करने के योग्य बनाये रखा। गुण कुछ परस्पर विरोधी प्रतीत होते थे; परन्तु महात्मा जी में उनका समन्वय इतनी सुन्दरता से हो गया था कि इस भिन्नतायें भी देशवासियों के हृदयों पर से उनके आधिपत्य को न हटा सकीं। एक दूसरे के पोषक, और कभी कभी एक दूसरे के विरोधी गुणों का समन्वय ही मनुष्य को महान् बनाने का कारण बन जाता है।

मैंने महात्माजी के व्यक्तित्व में दो प्रकार की प्रवृत्तियों का समन्वय दिखाया है। भगवान् के दो रूप हैं—एक शिव, दूसरा रुद्र। प्रकृति के तीन गुण हैं, सत्व, रज और तम। सर्वथा सरल रेखा से चित्र नहीं बन सकता, और न केवल एक-सी मनोवृत्ति से संसार चल सकता है।

नेहरूजी और टंडनजी

टंडनजी के कांग्रेस का अध्यक्ष चुने जाने के कारण देश के सामने दो महापुरुषों का व्यक्तित्व स्फुट रूप में आ गया है। जानकार लोग खूब जानते हैं, कि इस वर्ष के निर्वाचन-युद्ध में श्री शंकरराव देव और आचार्य कृपलानी केवल आच्छादन मात्र थे। इनके पीछे जो शक्ति काम कर रही थी, नेहरू जी की। मेरा यह अभिप्राय नहीं कि टंडन जी के विरुद्ध जो प्रचार किया गया, वह नेहरू जी के कहने से या उनकी जानकारी से हुआ। मेरा अभिप्राय इतना ही है कि टंडनजी के विरोधियों के पास सबसे बड़ी यही युक्ति थी कि नेहरूजी टंडनजी को नहीं चाहते। यह युक्ति निरन्तर दी गई और इसका खण्डन नहीं किया गया। यदि यह युक्ति काम में न लाई जाती, तो टंडन जी को समूचे देश का मत मिलना असम्भव नहीं था।

> "मेरी सम्मति में वे दोनों अपने गुरु महात्मा गांधी के व्यक्तित्व के दो पहलुओं के अलग-अलग प्रतिनिधि हैं। नेहरू जी महात्मा जी के दिमाग के और टंडनजी उनके हृदय के प्रतिनिधि हैं। दोनों महापुरुष देशभक्त हैं, दोनों त्यागी और निःस्वार्थ हैं, दोनों ज्ञानी हैं और दोनों का एक ध्येय है। इस कारण आकाश वाणी यही कहती है, कि यह शिव और रुद्रका, सत्व और रज का समन्वय देश के कल्याण का कारण होगा— अनिष्ट का नहीं।"

कुछ लोगों को यह बात प्रिय लगे या अप्रिय, यह मानना ही पड़ेगा कि टंडनजी और नेहरूजी में अनेक समानतायें होते हुए भी बहुत सी मौलिक भिन्नतायें हैं। समानतायें तो सर्व सम्मत हैं। दोनों देशभक्त हैं, दोनों ने देश की स्वाधीनता के लिये असीम त्याग किया है, दोनों वीर और निर्भय सेनापति हैं, दोनों के जीवन सच्चे हैं।

साथ ही भिन्नतायें भी बहुत स्पष्ट हैं। नेहरू जी की देशभक्ति वर्तमान में केन्द्रित है। भारत की प्राचीन परम्परायें, और संस्कृति उनके हृदय को बहुत अपील नहीं करती। यही कारण है कि महात्मा जी के जीवन का वह पहलू, जो भारत की सर्वसाधारण प्रजा के हृदय को मोह लेता था, नेहरू जी के हृदय को न पहले छूता था, और न अब छूता है। भारतीय संस्कृति जैसी पुरानी वस्तुओं को नेहरू जी न केवल उपेक्षा की दृष्टि से, अपितु आशंका की दृष्टि से देखते हैं।

महात्माजी की परम्परा टूटी

यही कारण है कि रहन सहन में उन्होंने महात्माजी की परम्परा को बिल्कुल छोड़ दिया है। उन्होंने धोती और चादर का परित्याग कर दिया है, और ऐसे वेष को अपना लिया है जो भारतीय तो कहा जा सकता है परन्तु प्राचीन भारतीय नहीं। नेहरू जी की भोजनादि की व्यवस्था में भी अभिनवता है। वे महात्मा जी की प्राकृतिक चिकित्सा के चक्कर में न पड़ कर एलोपैथी से पूरा लाभ उठाते हैं, और देश का भी इसी में कल्याण समझते हैं।

राजनीति में नेहरूजी महात्मा गांधी के लचकीलेपन के प्रतिनिधि हैं, उनके कट्टरपन के नहीं। शायद आज लोग भूल गये हैं कि भारत में सोशलिस्ट पार्टी, जनाधिकार समिति, मजदूर संघ जैसे आन्दोलनों के प्रारम्भिक प्रचारक और उन्नायक नेहरू जी थे। भारत का इंगलैण्ड से सर्वथा सम्बन्धविच्छेद कर दिया जाय, इस भावना के प्रथम जोरदार वकील भी वही थे। वही नेहरू जी आज इन सब आन्दोलनों के तूफान के आगे चट्टान बन कर खड़े होने का यत्न कर रहे हैं। ये नेहरू जी के स्वभाव के लचकीले अंश के प्रमाण हैं।

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन

गांधी-हृदय के प्रतिनिधि टंडन

दूसरी ओर टण्डन जी महात्मा गांधी की हार्दिक प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि हैं। विरोधियों की दृष्टि में उनका सबसे बड़ा दोष और समर्थकों की दृष्टि में उनका सबसे बड़ा गुण यही है कि वे प्राचीन भारत की संस्कृति और परम्परा के प्रबल समर्थक हैं, जिसे वे अपने दैनन्दिन जीवन में और सार्वजनिक कार्यों में उग्ररूप से प्रकट करते रहते हैं। वेष-भूषा, खान पान और रहन-सहन में टण्डनजी नेहरू जी की अपेक्षा महात्मा जी के बहुत निकट हैं। सिद्धांतों पर अड़ने में भी वे महात्मा जी के कट्टर अनुयायी हैं। मैंने यह अकसर देखा है कि जब महात्मा जी किसी बात पर अड़ जाते थे, तो उनके बड़े-बड़े अनुयायी उन्हें नर्म करने की चेष्टा करते थे, परन्तु निष्फल रहते थे। टण्डन जी के एक कड़े

[शेष पृष्ठ २४ पर]

इन्द्र धनुष

भुलक्कड़ सैलिसबरी

इंगलैंड के सुप्रसिद्ध राजनीतिक लार्ड सैलिसबरी अत्यन्त ही भुलक्कड़ स्वभाव के व्यक्ति थे। एक बार आप एक भोज में गये। उन दिनों आप इंग्लैंड के प्रधान-मन्त्री थे। अत भोज में एक विशिष्ट स्थान आपको दिया गया। आप के पड़ोस में ही एक महिला की सीट थी।

भोज प्रारम्भ होने में अभी देर थी। अत महिला ने समय व्यतीत करने की दृष्टि से लार्ड साहब से कुछ बातचीत प्रारम्भ करनी चाही, किन्तु लार्ड साहब के निकट वह सर्वथा अपरिचित थी। अत उसकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि बातचीत कैसे प्रारम्भ की जाय? कुछ देर सोचने के पश्चात् उसे याद आया कि लार्ड सैलिसबरी के प्राइवेट सेक्रेट्री मि० फानशावे से उसका परिचय है। अत उसने बातचीत का सिलसिला शुरू करते हुए कहा, 'लार्ड साहब! मेरा ख्याल है कि मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानती हूं, जिनसे आप भी परिचित हैं। मेरा आशय मि० फानशावे से है।"

'फानशावे?' लार्ड सैलिसबरी ने बड़ी गम्भीरता से कहा और फिर भौंहों पर बल देते हुए उन्होंने ऐसी मुद्रा बनाली, मानों वह किसी भूले व्यक्ति का स्मरण कर रहे हों। अन्त में बहुत प्रयत्न करने पर भी जब यह नाम उनको परिचित न जान पड़ा तो वे सिर हिला कर बोले, 'मैं इस नाम के किसी भी व्यक्ति को नहीं जानता, श्रीमती जी, यथा सम्भव आपको इस सम्बन्ध में कुछ गलत फहमी हो गई है।'

लार्ड साहब की इस बात से महिला बड़े असमंजस मे पड़ गई और वे सोच ही रही थीं कि इस बात का क्या उत्तर दें कि भोज के एक अन्य मेहमान ने लार्ड साहब से कहा —

'क्षमा कीजियेगा श्रीमान। इन श्रीमती जी ने जो कुछ कहा है वह मेरे कानों ने भी सुन लिया है। श्रीमती जी का आशय उन मि० फानशावे से है जो गत अनेक वर्षों से आपके प्राइवेट सेक्रेट्री हैं और जिनके साथ आज प्रात काल ही आपने वैदेशिक विभाग मे मेरे कमरे में कई घण्टे बातचीत की है।'

●

बनस्पति घी से खाद्य संकट

बरार मे जब बनस्पति घी के कारखाने नहीं खुले थे, तब १० लाख गांठ कपास पैदा होती थी, जिसमें से २२ लाख बोरे बिनौले निकलते, किन्तु अब सिर्फ ३ लाख गांठ कपास होती है, जिस मे से १२ लाख बोरे बिनौले निकलते हैं। बरार के किसानों ने अनाज और कपास की जगह मूंगफली की खेती करनी शुरू कर दी है। यह सच है कि नकली घी के कारखानों से सरकार को 'रेवेन्यू' के रूप में कुछ रुपये मिल जाते हैं, किन्तु विदेशों से अनाज और कपास मंगवाने मे बहुत अधिक हानि उठानी पड़ती है। बरार को आज अपने लिए आवश्यक अनाज पैदा करना भी मुश्किल हो गया है। स्थिति यही रही तो बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा और यह देश आवश्यक अनाज और कपास पैदा नहीं कर सकेगा।

●

एटम बम

अभी तक एटम बम के निर्माता का रहस्य छिपा हुआ है। एटम बम के सम्बन्ध में एक लेख में बताया गया है कि जर्मनी के प्रोफेसर हान ने 'एटमबम' का आविष्कार सन् १९३९ ई में किया था। वह आविष्कार प्रोफेसर हान जर्मनी, बेलजियम और फ्रांस होते हुए ब्रिटेन ले आये। तब से उन्होंने इस काम को छोड़ दिया। आगे अमेरिकन वैज्ञानिकों ने फिर से एटम बम का अनुसधान किया।

आस्ट्रेलिया में सोना

कुछ वर्ष तक मजदूरों की कमी के कारण आस्ट्रेलिया की सोने की खानें बन्द रहने के पश्चात् फिर से चैतन्य हो गई हैं। लड़ाई खत्म होते ही आस्ट्रेलिया ने इस मूल्यवान धातु के उत्पादन के लिए फिर कदम बढ़ाया है। सन् १९४९ में ६,५५,००० औंस सोना उत्पन्न किया गया जिसकी कीमत ७ करोड़ ७० लाख पौंड थी। लेकिन लड़ाई के पहिले आस्ट्रेलिया कम से कम १६ करोड़ २५ लाख का सोना पैदा करता था। इससे यह आशा है कि आस्ट्रेलिया अगले वर्ष के अन्त तक काफी प्रमाण में सोना उत्पन्न कर सकेगा। पहिले जहां इस रोजगार में ३० हजार व्यक्ति थे, वहां अब ६ हजार ही हैं। अतएव स्पष्ट है कि ज्यों ज्यो फौज से लोग मिलते जायेंगे, त्यों त्यों सोने का उत्पादन बढ़ेगा। इस सम्बन्ध में आस्ट्रेलिया के सोने के उत्पादन के आंकड़े दिलचस्प प्रतीत होंगे।

सन्	औंस	कीमत (लाखों में)
३९	१६,४९,६९७	१७६०
४०	१६,४३,९९९	११२७
४१	१४,९१,९९८	१०५१
४२	११,५३,७१७	१३२९
४३	७,५१,२०६	९६२
४४	६,५६,९९६	७५६
४५	६,५५,०००	७७०

●

दुनिया का नवां आश्चर्य

दुनिया का सबसे बड़ा बांध कोलम्बिया नदी पर बांधा जा रहा है। इस पर करीब ११ करोड़ रुपया खर्च होगा। इससे १०,२६,००० एकड़ जमीन में पानी दिया जायगा। इसके खर्च का तीन चौथाई इस बांध के द्वारा उत्पन्न की जाने वाली बिजली की बिक्री से मिल जायगा।

इसमें चार बांध बांधे जायेंगे। सबसे बड़ा बांध १५ हजार फुट लम्बा होगा और ११० फुट ऊंचा। २७ मील के घेरे में पानी बांधा जायगा। इस बांध की नहर से दिल्ली सरीखे २६ नगरों को पानी दिया जायगा और वहां के कारखानों को बिजली भी। इस तरह यह योजना एक ओर सिंचाई के लिए सस्ते मूल्य में पानी देगी और व्यवसायियों को बिजली। बीस वर्ष में इस योजना की लागत इन मदों से प्राप्त हो जायगी।

●

रूस में व्यापार का नया रिकार्ड

सोवियत संघ के केन्द्रीय आंकड़ा सम्बन्धी विभाग के हाल की रिपोर्ट से पता चलता है कि १९५० की दूसरी तिमाही (अप्रेल जून) में १९४९ की दूसरी तिमाही के मुकाबिले फुटकर व्यापार में ३० प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

पिछले वर्षों के रिकार्ड बताते हैं कि अब तक सोवियत संघ में फुटकर व्यापार निरन्तर आगे को बढ़ता रहा है। १९४५ में लड़ाई समाप्त होते ही सोवियत संघ में शान्तिकालीन कार्य प्रारम्भ हो गए। अगले ही साल याने १९४५ में फुटकर व्यापार में ३० प्रतिशत की वृद्धि हो गयी।

१९४७ मे १७ प्रतिशतकी और वृद्धि हुई। अगर १९४६ में भयंकर सूखा न पड़ता और व्यापक पैमाने पर फसल का ह्रास न हुआ होता तो यह आंकड़ा कहीं ऊंचा होता।

फिर भी १९४७में ही सूखे के प्रभाव बिलकुल मिटा दिये गये। और १९४७ के अन्त तक सोवियत् सरकार ने समस्त खाद्य पदार्थ तथा खाद्य के सिवा उपभोग की दूसरी चीजों की राशनिंग खत्म करदी और सारे देश में खुले व्यापार जारी कर दिये।

इसका प्रभाव फौरन व्यापार पर पड़ा और १९४८ में व्यापार की काफी उन्नति हुई। उपभोग की आवश्यक चीजें जैसे रोटी, गोश्त, मक्खन, कपड़े जूते आदि की बिक्री में ५० से ६० प्रतिशत तक वृद्धि हुई।

१९४९ में फुटकर व्यापार में २० प्रतिशत और वृद्धि हुई। मौजूदा साल की पहली तिमाही में १९४९ की पहली तिमाही के मुकाबिले २५ प्रतिशत तथा दूसरी तिमाही में ३० प्रतिशत वृद्धि हुई।

अमूल्य रत्न

जो मुझे जिस भावना से भजता है, मैं उसी प्रकार का फल देता हूं।

—गीता

मनुष्य को चाहिए कि वह अंतिम वस्तु का ध्यान रख कार्य करें तो वह कभी पाप नहीं कर सकता।

—स्वामी रामतीर्थ

मनुष्य को कर्तव्य करना चाहिए केवल धर्म समझ कर, उसकी फल की इच्छा से नहीं।

—भगवान कृष्ण

भावना से कर्तव्य ऊंचा है।

—श्रीराम

आदत की हथकड़ियां पहले इतनी कमजोर होती हैं कि हम उन्हें देख नहीं सकते। फिर वही हथकड़ियां इतनी मजबूत हो जाती हैं कि हम उन्हें तोड़ नहीं सकते।

—महात्मा गांधी

●

तावदाश्रीयते लक्ष्म्या,
तावदस्य स्थिरं यशः
पुरुषस्तावदेवासौ,
यावन्मानान्न हीयते ॥

लक्ष्मी तभी तक पास रहती, यश भी तभी तक रहता और पुरुषार्थ भी तभी तक रहता है, जब तक मनुष्य मान से हीन नहीं होता। मनस्वी जिसे किसी भी कार्य को सम्पन्न करने में आत्म बल का अभाव नहीं है, और जो कि अपनी दुष्क्रिया से अनादर का पात्र बन कर मानहीन होता है उसी को सम्पत्ति अथवा श्रीकृपा लक्ष्मी वरण करती, और यश भी उसी के पास दौड़ता है, तभी तो वह पुरुष सिंह भी कहलाता है।

समाज और संस्था

श्री [illegible] अशोक

> जो सस्था समय की मांग को पूरा नहीं करती, उसका इतिहास कितना ही उज्ज्वल क्यों न हो, वह अपना प्रभाव नष्ट कर देती है। आर्यसमाज इस परीक्षा में फेल हो चुका है। कांग्रेस एक बार फेल होकर भी यदि श्री टण्डन के नेतृत्व में अपनी नीति में परिवर्तन कर ले, तो वह अपना जीवन काल बढ़ा सकती है। आज राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सामने भी परीक्षा का काल उपस्थित है।

एक समाज और उस में काम करने वाली विभिन्न संस्थाओं में, चाहे वह राजनैतिक हों अथवा सांस्कृतिक, अंतर सम्बन्ध रहता है। संस्थाएं समाज में से निकलती हैं और समाज अपने में काम करने वाली संस्थाओं व विचारधाराओं से प्रभावित होता है। इस प्रकार दोनों का जीवन और प्रगति एक दूसरे पर निर्भर रहती है।

साधारणतया एक जीवित समाज समय समय पर ऐसे महापुरुषों तथा संस्थाओं को जन्म देता है, जो उस समय के अनुकूल उसका मार्गदर्शन कर उसमें फैली हुई कुरीतियों और कमजोरियों को दूर कर सकें। परन्तु समाज की अवस्था सदा एक नहीं रहती। परिवर्तन संसार का नियम है और इसका मूल कारण मानव की परिवर्तन-शील प्रकृति (वृत्ति) है। समाज व्यक्तियों का समूह होने के कारण व्यक्ति २ के मस्तिष्क और हृदय को प्रभावित करने वाली विचारधाराओं, सामाजिक अनुभूतियों तथा बदलती हुई परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। इनके कारण कभी २ तो समाज के जीवन में बिल्कुल उथल पुथल मच जाती है। ऐसी अवस्था में यदि समाज तथा इसमें काम करने वाली संस्थाओं के नेता समाज के जीवन के सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक आधार को न छोड़ते हुए बदलती हुई परिस्थिति के अनुकूल समाज का योग्य मार्गदर्शन कर सकें तो समाज और संस्था दोनों का भला होता है। और यदि समाज में प्रभाव रखने वाली संस्थाएं रूढ़िवाद या सिद्धान्तवाद में फंस कर अपने दृष्टिकोण में परिवर्तनवाद और समय व समाज की आवश्यकताओं का ध्यान न रखें तो न केवल वे संस्थाएं धीरे २ खतम हो जाती हैं, बल्कि समाज भी उनके द्वारा उचित मार्गदर्शन न पा कर भटकने लगता है और बहुधा विनाशक तथा अराष्ट्रीय विचारधाराओं का शिकार बन कर अपनी सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को बिल्कुल भुला कर नये २ प्रयोगों में फंस जाता है।

दैवी गुण नष्ट हो रहा है

भारतीय समाज की अति प्राचीनकाल से यह विशेषता रही है कि समय २ पर यह ऐसे महापुरुषों तथा संस्थाओं को जन्म देती रहा है, जिन्होंने अपने जीवन के प्रभाव से तथा उचित मार्गदर्शन से इसके राष्ट्रीय जीवन को आज तक अक्षुण्ण बनाये रखा है। परन्तु समय तथा परिस्थितियों के अनुसार अपने को अनुकूल करने का यह दैवी गुण पिछले कुछ वर्षों से नष्ट होता जा रहा है। इसका कारण मुख्यतः भौतिकवाद की आंधी का समाज तथा इसके काम करने वाली विभिन्न संस्थाओं के सदस्यों तथा नेताओं के जीवन पर प्रभाव है। समय के अनुकूल उचित परिवर्तन करने के लिये सिद्धता उन्हीं लोगों में हो सकती है, जो एक तो व्यक्तिगत अथवा संस्था के स्वार्थ से ऊपर उठ कर सारे समाज के हित का ध्यान कर सकें और दूसरे जिनका मस्तिष्क और हृदय समाज तथा देश में चलने वाली विचारधाराओं तथा प्रतिधाराओं को समझने के लिये उदार हो। परन्तु आम तौर पर संस्थाओं के नेता व कार्यकार अपने अपने विशेष स्वार्थों के कारण परिवर्तन नहीं चाहते और सिद्धान्तों की आड़ ले कर पहले के कमाये हुये नाम या प्रभाव पर ही जीवित रहना चाहते हैं। इस दूषित प्रवृत्ति के के कारण पिछले कई वर्षों से देश के बहुत ही तेजस्वी महापुरुषों द्वारा शुरू की हुई कई प्रमुख संस्थाएं मृतप्राय हो चुकी हैं या हो रही हैं।

आर्यसमाज

उदाहरण के रूप में आर्य समाज और कांग्रेस के जीवन का अध्ययन करने से इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है। आर्य समाज को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उस समय जन्म दिया, जब कि भारत का हिन्दू समाज अपने मार्ग से बहुत कुछ पिछड़ चुका था और उसमें का आत्म विश्वास और जीवन-शक्ति प्रायः नष्ट हो चुकी थी। स्वामी दयानन्द ने अपने प्रयत्न द्वारा समाज में एक नई जान फूंक दी और अपना समाज-उद्धार का कार्य जारी रखने के लिए आर्यसमाज की स्थापना की।

आर्य समाज का उद्देश्य हिन्दू समाज की सर्वाङ्गीण उन्नति करना था। महर्षि दयानन्द ने भारतीय हिन्दू समाज के धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक पतन को देखते हुए इन सब पहलुओं की ओर पूरा ध्यान दिया और अपने सम्पर्क में आने वाले लोगों में एक अद्भुत आत्म-विश्वास का संचार किया। लोग आर्यसमाज को भारतीय हिन्दू समाज का नेतृत्वशाली मस्तिष्क समझने लगे और इस विश्वास से कि इसको बलवान बनाने से देश व समाज का सर्वाङ्गीण उन्नति हो सकेगी, इसमें बहुत संख्या में शामिल होने लगे। बीसवीं शताब्दी के अंत के वर्षों में आर्य समाज उत्तरी भारत में सबसे अधिक प्रभावशाली संस्था थी।

परीक्षा में असफल

उसी समय आर्य समाज के लिए परीक्षा का समय आया। भारत की विदेशी सरकार ने आर्य समाज के बढ़ते हुए प्रभाव और इसके कारण लोगों में बढ़ते हुए आत्म-विश्वास और राजनैतिक जागृति को देखते हुए इसका दमन करने की ठानी। कई आर्यसमाजी पकड़ लिये गये। इससे आर्य समाजों के सत्ताधारी कुछ नेता घबरा गये। उन्होंने उस सरकार को आश्वासन दिया कि आर्य समाज केवल धार्मिक व सांस्कृतिक संस्था है, जिसका राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है।

परन्तु उन्हीं दिनों देश में स्वतन्त्रता आन्दोलन जोर पकड़ रहा था। विदेशी सरकार द्वारा साम्प्रदायिक चुनाव और साम्प्रदायिक आधार पर नौकरों की भर्ती शुरू होने के कारण राजनैतिक संगठन की आवश्यकता और भी अधिक महसूस होने लगी थी। क्योंकि आर्य समाज ने राजनैतिक क्षेत्र में मार्ग-दर्शन करने का अपना कर्तव्य और हक छोड़ दिया, इसलिए बहुत से ऐसे लोग जिनमें देशभक्ति का भाव आर्य समाज ने पैदा किया था, कांग्रेस तथा अन्य राजनैतिक संस्थाओं में प्रविष्ट होने लगे। शनैः शनैः उन लोगों का लगाव उन राजनैतिक संस्थाओं के साथ अधिक बढ़ गया और आर्यसमाज केवल एक भजन, कीर्तन करने वाली बेजान सी वस्तु बन कर रह गई। आज अनेक आर्यसमाजी अपने नेताओं की उस समय की भूल पर पछताते हैं। परन्तु अब समय बीत चुका। उस समय आर्य समाजने देश की मांग की ओर ध्यान नहीं दिया। इसलिए आज समाज आर्य समाज से विमुख हो चुका है। बहुतेरे ऐसे लोग जो आज भी महर्षि दयानन्द को युग प्रवर्तक और आधुनिक युग का सबसे महान् भारतीय समझते हैं, आर्य समाज से परे हट चुके हैं।

कांग्रेस भी अनुतीर्ण

लोग आर्य समाज से हट कर कांग्रेस में गये, क्योंकि उस समय कांग्रेस समाज की राजनैतिक स्वतन्त्रता की अति उत्कट मांग को पूरा करने के लिए प्रयत्नशील थी। अपने राजनैतिक आंदोलन में कांग्रेस ने बहुत सी महान भूलें भी कीं, जिनके कारण देश के बहुत से लोगों व संस्थाओं ने उनका विरोध भी किया। परन्तु क्योंकि स्वतंत्रता की भावना देश में बहुत बलवान थी, इसलिये भारतीय समाज ने कांग्रेस का साथ न छोड़ा।

फिर कांग्रेस के जीवन में भी एक परीक्षा का समय आया। मुस्लिमलीग ने द्विराष्ट्र सिद्धांत के आधार पर पाकिस्तान की मांग करके कांग्रेस और कांग्रेसी सिद्धांतों को चुनौती दी। कांग्रेस के नेता यह समझते थे कि देश के विभाजन से कोई समस्या हल नहीं होगी और अहित बहुत होगा। उन्होंने जनता को आश्वासन भी दिये कि वे देश का विभाजन स्वीकार नहीं करेंगे। परंतु सत्ता प्राप्त करने की हवस ने उन्हें अंतिम समय पर मानों अदूरदर्शी बना दिया और उन्होंने विभाजन स्वीकार कर लिया।

यह समाज के साथ विश्वासघात था, परन्तु यदि विभाजन के पश्चात् भी कांग्रेस बदलती हुई हालत की मांग को समझते हुए अपनी नीति बदल लेती और अपनी गलत राष्ट्रीयता को छोड़ कर विशुद्ध भारतीय राष्ट्रीयता को अपना लेती तो शायद वह जनता की विश्वास पात्र बनी रहती। परन्तु कांग्रेस के कुछ हठिवादी नेताओं ने गांधी जी और सैक्यूलरिज्म के नाम पर उसी नीति को, जिसके कारण देश का विभाजन हुआ, अपनाये रखा। उसका फल हमारे सामने है। आज समाज का बहुत बड़ा भाग तो कांग्रेस से विमुख हो ही चुका है, उसके अन्दर भी इसके कारण विस्फोट हो रहा है। नेहरू और पटेल का झगड़ा जो कि श्री टण्डन और कृपलानी के मुकाबले की सूरत में जनता के सामने आया है, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। यदि कांग्रेस ने श्री टंडन के नेतृत्व मे समय व समाज की मांग का विचार करते हुए अपनी नीति बदल ली तब तो कांग्रेस को शायद जीवन की एक नयी अवधि

(शेष पृष्ठ २२ पर)

शरणार्थी समस्या

[२]

श्री 'आनन्द'

भारत की इस महान समस्या को सुलझाने के लिए एक ही साथ अनेक पहलुओं पर कार्य किया जाना आवश्यक है। यह बात इस समस्या के आरम्भ के दिनों में जितनी आवश्यक थी, आज उससे भी अधिक आवश्यक है। इस सम्बन्ध में उठाये जाने वाले पगों में सर्वप्रथम आवश्यक पग पाकिस्तान वासी हिन्दुओं को यह अनुभव कराना है कि उनका सम्मान अथवा सम्पत्ति किसी प्रकार से भी संकट में पड़ने पर भारत सरकार की शक्ति का उन्हें भरोसा है। जब तक उन हिन्दुओं में यह विश्वास जागृत नहीं होता, तब तक इस समस्या की समाप्ति का कोई भी प्रश्न उठाना बुद्धि के दिवालियेपन का परिचय देना होगा।

साधारण बुद्धि का व्यक्ति भी यह समझ सकता है कि नाव में छेद हो जाने पर अन्दर आये हुए पानी को बाहर निकालने से भी अधिक आवश्यक उस छिद्र को बन्द करना होता है। यदि अन्दर आये हुये जल को बाहर फेंकने में ही नाविक लगा रहे और छिद्र को रोकने का कोई प्रयास न करे तो बहुत संभव है कि शीघ्र ही ऐसी स्थिति आ जावे जब बाहर फेंके जाने वाले पानी से अन्दर आने वाले जल की मात्रा अधिक हो। ऐसी स्थिति में नाविक द्वारा पूर्ण शक्ति से जल को बाहर फेंकने का कर्म किये जाने पर भी नाव में जल बढ़ता ही जावेगा।

यही नहीं एक अन्य तथ्य भी, जो इसके पीछे ही चला आता है, विचारणीय है। यदि छिद्र के मार्ग का रोकने के स्थान पर जल फेंकने की ओर ही ध्यान रहा तो जल फेंकने वाले की शक्ति धारे-धीरे क्षीण होती जावेगी। कितना भी परिश्रम वह करे, आखिर मनुष्य की भौतिक सीमायें हैं, और सीमा से अधिक सतत परिश्रम करने के वाले के अंग अंग को थकान चूर-चूर कर देती है और वह थोड़ा भी परिश्रम करने में असमर्थ हो जाता है। दूसरी ओर जितना अधिक छिद्र से जल-प्रवाह आता रहता है उतना ही छिद्र चौड़ा होता जाता है और फलस्वरूप प्रवाह बढ़ता ही जाता है। ऐसी स्थिति में परिणाम क्या होगा यह किसी को समझाने की आवश्यकता नहीं।

शरणार्थी प्रवाह

यद्यपि नाव के इस रूपक से समस्या का कोई हल नहीं निकलता, किन्तु कई बार इससे कठिन विषयों को समझना सरल हो जाता है। जिन बड़े-बड़े प्रश्नों को आदर्श और व्यवहार के बड़े-बड़े आवरण घेरे रहते हैं वे जब उन्हीं के समानान्तर किसी साधारण से उदाहरण को लेकर समझे जाते हैं तो मार्ग अन्धों को भी कई बार दिखा दे जाया करता है।

यदि थोड़ा-सा विचार करें तो दिखाई देगा कि इस देश के राज्य-रूपी पोत के कर्णधार जब से हमारे नेता बने और उन्होंने खेना प्रारम्भ किया इस में एक विशाल संख्या में शरणार्थियों का प्रवाह आना प्रारम्भ हुआ। कांग्रेस के नेताओं ने उस प्रवाह के कारणों की ओर से आँखें मींच कर पाकिस्तान में छूटे हुए हिन्दुओं के पलायन के मनोवैज्ञानिक कारण, उनके हृदय में व्याप्त हुए सर्वनाश के भय, को दूर करने के लिए किसी भी प्रकार के उपाय के संबन्ध में विचार तक करना अस्वीकार कर दिया क्योंकि उसमें पं० नेहरू और उन्हीं के समान अन्यान्य व्यक्तियों को साम्प्रदायिकता की गन्ध आती थी। इसके विपरीत वे सभी आए हुए व्यक्तियों को पुनः लौट जाने की सलाह देते हुए उस महा मूल्यवान समय को नष्ट करते रहे जिस समय कि वे वास्तव में कुछ कर सकते थे।

यह भी दिखाई देता है कि जल उलीचने के इस प्रयत्न में ही सारी शक्ति लगा देने के समान ही जैसे जैसे आए हुए व्यक्तियों को वापिस लौटाने के प्रयत्नों में असफल हो कर वे नेतागण थक कर बैठते गये वैसे ही वैसे भारत में आता हुआ यह प्रवाह बढ़ता गया और इस भयकर भार से हमारा आर्थिक ढांचा टूटने लगा। बंगाल ने इसमें भीषण वृद्धि की और अभी भी इसमें वृद्धि होने की संभावना बनी हुई है।

उल्टा मार्ग

यथार्थ में यदि देखा जाय तो एक साधारण नाव में पानी भरने के अवसर पर नाविक के जिस व्यवहार को कोई भी मूर्खतापूर्ण ही नहीं वरन आत्मघात के समान कहेगा शरणार्थी समस्या के सम्बन्ध में पं० नेहरू तथा उनका पुनर्वास विभाग उसी प्रकार के व्यवहार पर न केवल आचरण ही करते रहे हैं वरन संसार भर के आदर्शों के आरोप उस पर करके स्वयं को ही नहीं अपितु समस्त देश को ही एक भयावक मानसिक भ्रम में रखने का प्रयत्न करते रहे हैं, और जिस किसी ने यह कहा भी कि यह किधर जा रहे हैं उसे 'साम्प्रदायिक' अथवा इसी प्रकार के विशेषणों से अलंकृत करते रहे हैं।

किन्तु जन साधारण अधिक देर तक भ्रम में नहीं रह पाते। यह संभव है कि वे जिन बड़े बड़े आदर्शों की हमारे नेता घोषणा करते रहते हैं उन्हें समझ पाते हों चाहे न समझ पाते हों, अथवा अच्छा भी समझते हों, किन्तु वे किसी भी सिद्धान्त की व्यावहारिकता की कसौटी पर कसते हैं। सुनने में अथवा कानों को सुनने में कोई आदर्श कितना भी अच्छा क्यों न लगता हो किन्तु यदि व्यवहार में वह हानिकर अथवा असफल सिद्ध होता है तो वह अनुचित है यह वे अवश्य देख लेते हैं।

जनसाधारण आदर्शों की विवेचना करने के लिये आवश्यक मानसिक स्तर पर नहीं होता। किन्तु जो समस्या उनके दैनिक जीवन पर प्रभाव डालती है, उनकी रोटी, उनके वस्त्र, उनका निवास-स्थान, उनके सामाजिक सम्बन्ध, उनके मित्र, बन्धु बान्धव तथा सम्बन्धियों आदि को प्रभावित करती है उसके हल को वे अपने दैनिक जीवन के अनुभव से परखते हैं। साम्प्रदायिक हो चाहे असाम्प्रदायिक इस बात की उन्हें चिन्ता नहीं होती। उन्हें चिन्ता होती है केवल इसी बात की कि जिन कारणों ने मेरा, मेरे बच्चों का, पड़ोसियों का जीवन दूभर कर दिया है वह कारण दूर होने ही चाहिए, चाहे जिस प्रकार से हों।

समस्या वैसी ही है

और जहाँ तक भारत की शरणार्थी समस्या का प्रश्न है यह एक ज्वलंत हुआ सत्य है कि वह समस्या आज भी वैसी की वैसी ही नहीं वरन उससे भी बुरी स्थिति में है। आज भी लाखों व्यक्ति सर्वस्व खो कर निराश्रित, हुए कहीं शिविरों में, झोपड़ियों में, सड़कों की पटरियों पर उन घोर अशोभनीय तथा असह्य परिस्थितियों में जीवन बिता रहे हैं जिनकी कल्पना भी असह्य है। आज भी चार पैसे कमाने के लिये अबोध बालक भटकते दिखाई देते हैं, आज भी अनेकों असहाय बहिनें पेट भरने के लिये शरीर बेच रही हैं, आज भी अनेकों व्यक्ति, जो कल तक साधन संपन्न थे, साधन हीन होकर रोग आदि से मर रहे हैं और उनके पास औषधि की व्यवस्था कर पाने लायक पैसे भी नहीं, आज भी अनेकों चौड़ सड़कों की पटरियों पर थोड़ा-सामान लेकर बैठ जाते हैं, पुलिस वालों के डंडे खाते हैं और फिर फिर कर वहीं बैठते हैं, और आज भी देश में होने वाले अपराधों की संख्या में वृद्धि का एक प्रमुख कारण यह है कि इस मार्ग के अतिरिक्त अन्य कोई अन्न-जल के पाने की स्थिति ही लाखों व्यक्तियों की नहीं है।

अतः यह परिस्थितियां उत्पन्न किया जाना नितान्त आवश्यक है जिससे भारत में शरणार्थी बनकर आने वालों की संख्या शून्य हो जावे। इसका अर्थ यह नहीं कि नवीन आने वालों पर किसी प्रकार प्रतिबन्ध लगा दे। वरन् इसके प्रतिकूल ऐसे कदम उठाये जावें जिससे पाकिस्तान में रहने वाले हिन्दुओं में यह विश्वास उत्पन्न हो सके कि वे वहां सुरक्षित रूप से रह सकते हैं और केवल इसलिये कि वे हिंदू हैं उन पर कोई संकट आने वाला नहीं है।

प्रवाह रोकना आवश्यक

यथार्थ में यदि पुनः हम अपने आरम्भ में दिये हुए उदाहरण पर विचार करें तो दिखाई देगा कि नाव में पानी भरने की समस्या उसी समय तक रहती है जब तक कि पानी अन्दर आता रहता है। जैसे ही पानी का अन्दर आना रोक दिया जाता है संकट समाप्त प्राय हो जाता है और अंदर आ गये हुए थोड़े से जल की चिन्ता करना शेष रह जाता है। वह भी यदि किसी कारण से निकाला न जा सके तो भी नाव के डूबने का भय नहीं रहता, वह उस जल को लिये हुए भी पार जाती है।

ऐसी दशा में यह स्पष्ट है कि यद्यपि इस शरणार्थी समस्या के हल के लिये अनेकों पहलुओं पर विचार तथा कार्य आवश्यक है तो भी सर्वप्रथम तथा सर्वाधिक इसका वही पक्ष महत्वपूर्ण है जो भारत की ओर बढ़ने वाले शरणार्थी प्रवाह को रोकने से सम्बन्ध रखता है। यह प्रश्न सफलता पूर्वक हल होने पर ही यह कहा जा सकेगा कि अब शरणार्थी समस्या की गुत्थी सुलझनी आरम्भ हो गई है। जब तक यह प्रश्न हल नहीं हो पाता इस समस्या के हल होने का कोई मार्ग निकलने का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः आगामी अंक में समस्या के इस पहलू पर ही हम कुछ विचार करेंगे।

तिब्बत पर कम्यूनिस्ट चीन की लाल छाया

★ श्री शिवकुमार नीरस योगी

तिब्बत भारत का निकटतम पड़ोसी है। आज वह अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का प्रश्न बन गया है, क्योंकि कम्यूनिस्ट चीन उसे अपना भाग मानता है। उसी समस्या पर लेखक ने कुछ विचार किया है।

भारत के उत्तर में स्थित तिब्बत हमारे पड़ोसियों में एक विशेष स्थान रखता है। सैकड़ों ही मील लम्बी भारतीय सीमा इसे स्पर्श करती है। इसकी दुर्गम पर्वत श्रेणियां मध्य एशिया के मैदानों के वासी खानाबदोशों के प्रभाव से भारत की रक्षा करती हैं। पर्वतीय हिम प्रदेश होने के कारण तिब्बत सदैव बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित रहा है। वह समय जो कि शताब्दियों से उसे सूना प्रतीत होता था अब उसे अपने भाग्य की ओर ले जा रहा है। चीन की मुख्य भूमि पर साम्यवादी प्रभुत्व हो जाने पर माओत्सेतुंग की सेनायें तिब्बत के भाग्य का निपटारा करने के लिये उसकी ओर अग्रसर हो रही हैं।

पेकिंग रेडियो की घोषणा के अनुसार तिब्बत चीन का ही एक भाग है और उसे निकट भविष्य में स्वतन्त्र किया जायेगा, एक गर्जना मात्र ही नहीं रह गई है। सीमा पर दिन प्रतिदिन छोटी छोटी घटनायें हो जाती हैं। तिब्बत की सरकार का धैर्य प्रायः समाप्त हो चुका है, क्योंकि चीन को जाने वाले प्रतिनिधि मण्डल को सदैव आदेश के लिये ही प्रतीक्षा करनी पड़ी है।

विशेषज्ञों का कथन है कि तिब्बत में कुछ परिवर्तन न होगा। वह यह भी जानते हैं कि तिब्बत अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण चीन के निकट ही अधिक रहा है। दो बार चीन की आधीनता के कारण जो कि कुछ समय के लिये ही थी तिब्बत के देश भक्त सदैव चीन के शासकों के प्रति विद्रोह करते रहे हैं।

सैन्य भक्ति

तिब्बत का क्षेत्रफल प्रायः ४६३२०० वर्ग मील है और जनसंख्या साढ़े तीन से ४ लाख तक। समुद्र तल से इसकी ऊंचाई ११००० फुट है। तिब्बत के मध्य भाग में राजधानी ल्हासा स्थित है। उत्तर के मैदान में उपज कुछ भी नहीं होती है। जीवन यापन की सामग्री के अभाव के साथ ही साथ वहां सैन्य-शक्ति का भी अभाव है। युद्ध काल में भी वहां १०००० से अधिक सेना एकत्रित नहीं की जा सकती है। भारत की ओर इसकी सीमा आसाम, भूटान, नैपाल और लद्दाख से मिलती है। उत्तर पूर्व की ओर चीन के प्रान्त तुर्किस्तान, मंगोलिया कानसू, सेचुआन और यूनान स्थित हैं।

तिब्बत का प्राचीन इतिहास एक भूली हुई कहानी है। ७वीं शताब्दी में यहां के एक शासक ने चीन व उसकी सीमा पर आक्रमण करके चीन वालों से उनकी राजकुमारी को भेंट लिया था। इस राजकुमारी ने नैपाल की एक रानी की सहायता से बुद्ध धर्म का प्रचार किया। टी सौंग दे ऐन के शासन काल में चीन पर फिर आक्रमण किया गया। इस समय चीन वालों ने राजधानी को बचाने के लिये कर देना स्वीकार किया। चीन की शक्ति बढ़ने पर मंचू वंश के सम्राटों ने तिब्बत पर आधिपत्य जमा लिया।

चीन का प्रभुत्व

चीन के साम्राज्य के अन्तर्गत तिब्बत में सभ्यता का विकास हुआ। उन्होंने अपने शासकों से मक्खन, पनीर, जौ की शराब, पनचक्की का प्रयोग, सामुद्रिक शास्त्र, हस्त शास्त्र व औषधियां बनाने की शिक्षा ली। चीन का एक प्रतिनिधि जिसे अम्बान कहा जाता था राजधानी में रहता था। उसका काम शासन की देखभाल के साथ साथ वैदेशिक विभाग का निरीक्षण भी था। तिब्बत वालों के स्वतन्त्रता के आन्दोलन को चीन वालों ने सदैव ही दबा दिया।

तिब्बत पर अनेकों बार चीन की मुख्य भूमि से आक्रमण किया गया। १२वीं शताब्दी में चंगेज खां व कुबलाई खां ने तिब्बत को खूब रौंदा। १६४० में मंगोलों ने आक्रमण किया, और दलाई लामा के पद की स्थापना की। इसे मंचू सम्राटों ने भी दस वर्ष पश्चात् स्वीकार कर लिया। चीन वालों ने आक्रमण के समय सदैव तिब्बत वालों को सहायता दी। जंगेरियनों और काश्मीर के शासक महाराज गुलाबसिंह द्वारा आक्रमण किये जाने पर चीन की सेनायें तिब्बत की सहायता के लिये भेजी गईं।

तिब्बत वालों ने सदैव चीन वालों का विरोध किया है। उनके लिये दलाई लामा आत्मसम्पन्नता का प्रतीक है और मंचू सम्राट उसका क्षुद्र सहायक। धार्मिक दृष्टि से सहायक कभी बड़ा नहीं हो सकता है। मंचू सम्राट इसके विपरीत तिब्बत को विजित देश मानते आये हैं उनके द्वारा नियुक्त अम्बान गवर्नरों की भांति रहते थे और तिब्बत वालों को अपनी प्रजा मानते थे।

चीन में आन्तरिक उथल पुथल होने के कारण तिब्बत वालों को स्वतन्त्रता मिल गई। १९०४ से यह स्पष्ट प्रतीत होने लगा था। दलाई लामा के राजधानी से भाग जाने पर मंचू सम्राट ने उसे निर्वासित आवारा घोषित कर दिया। तिब्बत में इसका विरोध किया गया और इस प्रकार १९१२ में दोनों देशों के सम्बन्ध प्रायः समाप्त हो गये। १९२० के पश्चात् तिब्बत पूर्ण स्वतन्त्र हो गया और आज तक उसी दशा में है।

भारत सदैव से शांतिप्रिय देश रहा है। अवसर मिलने पर भी उसने अपने पड़ोसी देशों में राजनैतिक अधिकार पाने की चेष्टा नहीं की है। उसके सम्बन्ध अपने पड़ौसियों से धार्मिक व सांस्कृतिक हैं। तिब्बत में भारत के बौद्ध धर्म की महायान शाखा के अनुयायी हैं। इसका प्रचार वहां पर भारत के एक सन्त पद्म सम्भव ने किया था। तिब्बत पर दो बार गोरखों ने आक्रमण किया परन्तु उन्हें किसी-न किसी कारण पीछे हटना पड़ा। १८५६ में एक सन्धि हुई जिसके अनुसार तिब्बत वालों ने १० हजार वार्षिक कर देना स्वीकार किया।

१८४१ में तीसरी बार जम्मू व काश्मीर के शासक महाराज गुलाबसिंह ने सेनापति जोरावरसिंह के साथ ५०० डोगरों की एक सेना भेजी। छोटे छोटे आक्रमणों के पश्चात् लद्दाख में एक सन्धि की गई। बाबू चन्द्रदास जो कि एक भारतीय थे दो बार १८७९-८१ में तिब्बत गये। इस प्रकार दोनों देशों के सम्बन्ध घनिष्ठ हो गये।

ब्रिटिश स्वार्थ

प्रारम्भ में अंग्रेज तिब्बत के संबन्ध में प्रायः उदासीन थे। उन्हें अपने शासन काल में भारत की समस्याओं से ही अवकाश प्राप्त न हो सका। तिब्बत से दो बार सम्बन्ध भी स्थापित करने की चेष्टा की गई। १७७४ में वारेनहेस्टिंग्ज ने मि० बोगल को तिब्बत भेजा। इसके नौ वर्ष पश्चात् मि० टर्नरमैंजी सन्देशा लेकर तिब्बत गये।

१९ वीं शताब्दी में रूस की शक्ति निरन्तर बढ़ रही थी। अंग्रेजों ने इस समय तिब्बत से मैत्री बढ़ानी चाही। १८७३ में प्राचीन सम्बन्धों को दुहराने की चेष्टा की गई। सिक्कम से एक सड़क बनाने की योजना पर भी विचार किया गया। इसके कुछ समय पश्चात् तिब्बत वालों ने भारतीय सीमा पार करली परन्तु उन्हें पीछे हटा दिया गया। १८८८ में जब तिब्बत वालों ने ब्रिटिश शिविर पर आक्रमण किया तो दोनों दलों के सम्बन्ध नाजुक स्थिति में हो गये। मंचू सम्राटों ने सिक्कम पर ब्रिटिश आधिपत्य स्वीकार कर लिया और दोनों देशों की सीमायें निश्चित कर दी गईं। चीन वालों ने तिब्बत सम्बन्धी एक व्यापारिक सन्धि भी अंग्रेजों से की परन्तु तिब्बत वालों ने उसे मानने से इन्कार कर दिया क्योंकि उनसे इस सम्बन्ध में परामर्श नहीं किया गया था।

१९०३ में एक ब्रिटिश दलस्हासा की ओर पर्वत पर चढ़ाई के लिए गया। वहां पहुंच कर इसने हमला कर दिया। तिब्बत वालों ने एक सन्धि की जिसके अनुसार उन्हे ७५ लाख रुपया देने को कहा गया। बाद में यह घटा कर २५ लाख कर दिया गया और जिसे ३ बार में चुकाना था। चीनी शासक इस विषय में शान्त न थे। उन्होंने एक कूटनीतिक चाल चली और यह रुपया अंग्रेजों को देना स्वीकार कर लिया। इसके पश्चात् तिब्बत वालों के अंग्रेजों से सम्बन्ध निरन्तर बढ़ते गये और १९०९ में तो दलाई लामा ने भाग कर भारत में शरण ली।

अंग्रेजों की नीति ध्यान पूर्वक स्थिति का निरीक्षण करने की थी। वह वहां के आन्तरिक मामलों में नहीं फंसना चाहते थे न वह अन्य किसी प्रकार का हस्तक्षेप करना चाहते थे। उन्होंने वहां पर केवल व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की। वह तिब्बत को भारत व रूस दो महान देशों के मध्य का प्रदेश मानते थे। १९०६ में हुई पेकिंग सन्धि के अनुसार तिब्बत पर चीन का स्वत्व स्वीकार कर लिया गया। इसी प्रकार एक सन्धि १९०७ में रूस के साथ की गई। इस सन्धि का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि तिब्बत के सम्बन्ध में वार्ता चीन से की जाने लगी। चीन के सम्राट इससे पहिले सदैव नैपाल, भूटान और सिक्कम पर आधिपत्य करना चाहते थे। इस सन्धि के पश्चात् वह सदैव के लिए शान्त हो गये।

साम्यवादी योजना

१९३० में तत्कालीन दलाई लामा से सम्बन्ध बिगड़ने पर पचेनलामा चीन भाग गया। उसकी मृत्यु हो जाने पर भी उसके उत्तराधिकारियों में वैमनस्य यथा पूर्व ही रहा। आज पचेन लामा की अध्यक्षता में चीनमें तिब्बत की समानान्तर सरकार बन चुकी है। इसमें ८० हजार तिब्बत निवासी सैनिकों के रूप में सहयोग दे रहे हैं। साथ ही साथ तिब्बत में भी चीन के समर्थकों की कमी नहीं है। चीन के नेता इस परिस्थिति से पूरा लाभ उठाना चाहेंगे।

भारत-पाकिस्तान समस्या

साम्प्रदायिक नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय है

★ श्री सतीश वेदालंकार

संसद् के संक्षिप्त वर्षाकालीन अधिवेशन में पूर्वी बंगाल की समस्या पर हुए वादविवाद के बाद डाक्टर मुकर्जी और अन्य कांग्रेसी नेताओं द्वारा नेहरू लियाकत पैक्ट की की गई कटु आलोचनाओं का उत्तर देते हुए प्रधान मंत्री पं० नेहरू ने कहा था— 'डा० मुकर्जी इस बात के लिए स्वतन्त्र हैं कि वे जो मन में आये कहें, परन्तु मुझे इस बात का अत्यधिक दु:ख और आश्चर्य है कि बहुत से कांग्रेसी भी इस प्रकार की बातें कह रहे हैं जो कि कांग्रेस के मूलभूत सिद्धान्तों से, जिसके लिए वह अब तक काम करती रही है, सर्वथा असंगत और प्रतिकूल हैं।'

पं० नेहरू ने कांग्रेसी सदस्यों की जिस मनोवृत्ति पर खेद और आश्चर्य प्रकट किया है, स्पष्टतया उनका संकेत भाषणों से प्रकट होने वाली सांप्रदायिक मनोवृत्ति की ओर ही था।

प्रश्न यह है कि क्या कांग्रेस की स्थापना का तथा उसने इतने समय तक देश की स्वाधीनता के लिए जो अहिंसक लड़ाई लड़ी उसका एकमात्र ध्येय सांप्रदायिकता का विरोध ही करना था? स्वराज्य की प्राप्ति के बाद वस्तुत: कांग्रेस ने तथा केन्द्रों और राज्यों की कांग्रेसी सरकारों ने सभी समस्याओं को यहां तक खाद्य और पुनर्वास की समस्याओं को भी एक कोने में डाल कर यदि किसी बात को सर्वाधिक प्रमुखता दी है, तो वह राज्य की असांप्रदायिकता को अक्षुण्ण बनाये रखना है।

उत्तर प्रदेश के एक कांग्रेसी नेता ने अपने एक भाषण में पूर्वी बंगाल की समस्याओं के बारे में डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी द्वारा सुझाये गये उपायों की आलोचना करते हुए कहा था कि डा० मुकर्जी के उपाय सांप्रदायिक हैं, जिसे असांप्रदायिक भारत की सरकार कभी भी स्वीकार नहीं कर सकती।

इसके उत्तर में डा० मुकर्जी ने कहा था कि देश का विभाजन साम्प्रदायिक आधार पर हुआ है, जिसे कांग्रेस के नेताओं ने ही स्वीकार किया है। जिस साम्प्रदायिक आधार पर भारत की स्वतन्त्रता की आधारशिला रखी गई है, उसके विधान में असाम्प्रदायिकता की बात एक राजनीतिक उपहास है। पूर्वी बंगाल से आने वाले पीड़ितों और दु:खियों की सहायता करना साम्प्रदायिकता नहीं, किन्तु मानवता का कर्तव्य है।

डा० मुकर्जी ने जिस बात को कहा है, वह एक ऐतिहासिक सत्य है। देश का साम्प्रदायिक आधार पर (हिन्दू और मुस्लिम बहुल प्रदेशों के रूप में) विभाजन और विधान द्वारा उसकी असाम्प्रदायिकता से एक ऐसे गोरखधन्धे का निर्माण हो गया है, जिसमें राष्ट्र की सभी समस्यायें उलझ गई हैं और अनेक प्रकार से प्रयत्न करने पर भी उनके हल होने की कोई संभावना नहीं दिखाई दे रही है।

राज्य का ध्येय

कांग्रेस का राज्य के स्वरूप का ध्येय निःसन्देह असाम्प्रदायिक रहा है। किन्तु राज्य का केवल असाम्प्रदायिक होना ही एकमात्र ध्येय नहीं हो सकता। देश की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक आदि अनेक समस्यायें हैं, जिन्हें राज्य को हल करना होता है। भारत की जैसी स्थिति है, उसमें हमारी प्रत्येक समस्या इस साम्प्रदायिकता के साथ इतनी सम्बद्ध हो गई है कि इन समस्याओं को यदि हम पृथक रूप से सुलझाने का प्रयत्न करेंगे तो वह किसी के शरीर से बिना रक्त की बूंद गिराये मांस निकालने के समान ही होगा। इस साम्प्रदायिकता की उपेक्षा करके ही हम असाम्प्रदायिकता से इन समस्याओं को सुलझाना चाहते हैं, जो असंभव है।

देश की आर्थिक स्थिति विषम है। पूर्वी बंगाल से आने वाले शरणार्थियों ने इसे विषमतर बना दिया है। खाद्य समस्या के कारण देश दुर्भिक्ष के किनारे पर खड़ा है। इस पर शरणार्थियों के ६० लाख मुंह खुले हुए और आ गये हैं। पुनर्वास की समस्या भी विशुद्ध शरणार्थियों की है। शरणार्थियों के कारण ही देश की सामाजिक और नैतिक स्थिति ऐसी हो गई है, जिस पर किसी भी देश का सिर लज्जा से झुक जाना चाहिये। इस प्रकार हमारी सभी समस्यायें शरणार्थियों के— जो कि साम्प्रदायिकता का ही अभिशाप है— कारण है।

हमें इन समस्याओं का समाधान वस्तुस्थिति को समझते हुए करना है। यदि हम देश को असाम्प्रदायिक बनाने में सफल हो गये और आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक समस्यायें सुलझाने में असफल रहे, तब हमने देश का विभाजन स्वीकार करके भी जिस स्वप्न को सत्यरूप में देखने के लिए स्वतन्त्रता की कामना की थी, वह स्वप्न केवल स्वप्न ही रह जायगा। क्योंकि हमारे नेताओं ने— गांधी जी के अनुयायी कांग्रेसियों ने— गांधीजी के जीवनकाल ही में देशका विभाजन स्वीकार कर लिया। अत: हम यह समझते हैं कि हमारे नेता साम्प्रदायिकता को सर्वाधिक महत्व नहीं देते हैं, अन्यथा वे विभाजन स्वीकार ही नहीं करते।

यदि कुछ कांग्रेसी सदस्यों ने संकुचित साम्प्रदायिकता से कांग्रेसके राज्य में विक्षोभ उत्पन्न कर दिया है, तब पं० नेहरू को यह नहीं भूलना चाहिए कि हाल ही में कांग्रेस चुनावों में जो भ्रष्टाचार, षड्यन्त्र और प्रजातन्त्र की विघातक राजनीतिक चालें चली गई हैं, उनसे राज्य के स्वरूप को कहीं अधिक धक्का पहुँचा है। यदि वे सरकारी मशीनरी की शिथिलता और कांग्रेसी सदस्यों के नैतिक पतन पर खेद और आश्चर्य प्रकट करते, तब उन्हें जनता का अभिनव सहयोग प्राप्त होता। पण्डित नेहरू तथा उनकी सरकार यह समझती है कि साम्प्रदायिकता के कारण देश में अशांति फैलने और अराजकता उत्पन्न हो जायगी, किन्तु इतिहास साक्षी है कि आर्थिक और सामाजिक विषमता के कारण ही बड़े बड़े संघर्ष और क्रांतियां हुई हैं।

विशुद्ध अन्तर्राष्ट्रीय समस्या

वस्तुत: यदि विचार कर देखा जाय तब पण्डित नेहरू जिस साम्प्रदायिकता के कारण सदा चिन्तित रहते हैं वह साम्प्रदायिकता न होकर भारत और पाकिस्तान की एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। भारत के नेताओं के लिए [illegible] प्रधान मंत्री इस बात की ओर से निरन्तर उपेक्षा दृष्टिकोण लिए हुए हैं, यही आश्चर्य की बात है।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने देश की आन्तरिक शान्ति बनाये रखने के लिए कोई भी प्रयत्न शेष नहीं छोड़ा। किन्तु जब जब ऐसा प्रतीत होता था कि देश की स्थिति सुव्यवस्था की ओर आ रही है, तभी पाकिस्तान की किसी हिन्दू विरोधी नीति के कारण देश की शान्ति पुन: विक्षुब्ध हो गई है। परन्तु हमारी सरकार रोग के मूल का निदान नहीं करती।

पाकिस्तान के कारण ही हमारी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का समतोल नष्ट होने पर भी पं० नेहरू एक बार से अधिक यह घोषणा कर चुके हैं कि "दूसरी ओर (पाकिस्तान) जो कुछ हो रहा है, उससे हमें कोई सरोकार नहीं, हमारा अपना यह कर्त्तव्य है कि हम करार का ईमानदारी से पालन करें।" अन्तर्राष्ट्रीय पण्डित नेहरू स्वयं यह कहते नहीं थकते कि विश्व के किसी भी कोने में घटी घटना का प्रभाव हम पर भी पड़े बिना नहीं रहेगा, वही पड़ोसी राष्ट्र (जो कि भारत को शत्रु देश समझता है) में जो कुछ हो रहा है, उसके प्रभाव से देश को सर्वथा अछूता देखना चाहते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि पाकिस्तान उन्हीं की इच्छा से एक विदेशी राष्ट्र बन गया है अब भारत व पाकिस्तान की समस्याएं अन्तर्राष्ट्रीय हैं जिनसे साम्प्रदायिकता कह कर अब भी चिपके हुए हैं वह भी एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या ही है। इस सम्बन्ध में डा० मुकर्जी या अन्य कांग्रेसियों द्वारा जो भी उपाय सुझाये गए हैं वे भी साम्प्रदायिक न हो कर अन्तर्राष्ट्रीय या राजनीतिक हैं। डाक्टर मुकर्जी ने दोनों बंगालों को एक करने का सुझाव दिया था। इससे पूर्व हिन्दुओं को पृथक बसाने के लिए सरदार पटेल ने स्वयं पाकिस्तान से भूमि की मांग की थी। क्या यह मांग साम्प्रदायिक है? जिस प्रकार पं० नेहरू दोनों देशों में निष्क्रान्तों की सम्पत्ति के विनिमय को साम्प्रदायिक नहीं समझते हैं, उसी प्रकार ये सब बातें भी जो देश की समस्याओं को सुलझाने के लिए आवश्यक हैं साम्प्रदायिक नहीं हैं। राज्य का मुख्य ध्येय अधिकतम रूप से अधिकतम जनता का हित होना चाहिए। यदि सम्पत्ति का विनिमय आवश्यक व्यापार, वस्तुओं का आदान प्रदान भारत पाकिस्तान में साम्प्रदायिक नहीं है तब जन संख्या का परिवर्तन भी साम्प्रदायिक नहीं है, यदि वह साम्प्रदायिक है तब सब बातें साम्प्रदायिक हैं। ऐसी स्थिति में पं० नेहरू अपने लेकुलर राज्य का आदर्श पाने में सर्वथा पंगु ही रहेंगे।

एशिया में साम्यवाद का प्रसार निरन्तर बढ़ ही रहा है। किसी सन्धि सूत्र के न होने पर अमरीका तिब्बत में सहायता देने में हिचकिचाता है। अमरीका द्वारा की गई घोषणा कि वह तिब्बत को साम्यवादी आक्रमण के समय सहायता न देगा उसकी विवशता का परिचय है। कोरिया में साम्यवादियों से निरन्तर हारने के कारण वह तिब्बत में सहायता देने से घबराता भी है। ब्रिटेन अपने राज्य के साथ साथ तिब्बत के साथ के समस्त सम्बन्ध भारत को सौंप गया है। भारत की वैदेशिक नीति किसी देश के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की है। इसी कारण तिब्बत के सम्बन्ध में वह मौन है। स्वतन्त्र तिब्बत भारत को बाह्य आक्रमणों से बचाने के लिए मेरु दण्ड है। परन्तु उसके साम्यवादी देश होने पर जो भविष्य पर ही दोनों देशों के सम्बन्ध निर्भर हैं।

गम्भीर प्रतीत हुए। क्या एक पुराने सहकर्मी के अपमान के कारण ही उनका यह विवाद था, या इसका कारण यह था कि जब अनिरुद्ध ऐसे दिमाग का पतन हुआ, तो अपने ऊपर ही क्या भरोसा, और फिर अपने ऊपर भरोसा नहीं तो आदर्शों के सफल होने का क्या भरोसा? वे बहुत दुःखी थे।

डाक्टर के चौड़े माथे पर चिन्ता की एक गहरी रेखा थी। क्रान्तिकी अग्रमाला को पीछे हटते देखकर ही इस रेखा की सृष्टि हुई थी। डाक्टर ने सोचा कि क्रान्ति के लिये वे जो कुछ कर रहे हैं वह यथेष्ट नहीं है, इससे भी ऊंचे बोल्ट वाली दवा की जरूरत है। उसने यह समझ लिया कि दो नाव पर पांव रखनेसे नहीं बनेगा, सारी शक्ति तथा समस्त समय लगा कर कार्यक्षेत्र में उतरना पड़ेगा।

पर आशीषकुमार को अनिरुद्ध के विवाह से आश्चर्य नहीं हुआ, मानो इसमें अपनी निराशावादी विश्व दृष्टि का ही समर्थन पा रहा था। वह नौजवानों का जोश देखकर मन ही मन हंस रहा था।

जो भूतपूर्व क्रांतिकारी दर्शक के तौर पर इस अधिवेशन में अनिरुद्ध की ग्लानि का उपभोग करने आये थे, वे अन्त तक विशेष खुश होकर नहीं लौटे। अनिरुद्ध जिस समय तक गौरव के उच्च-शिखर पर एक ज्योतिर्मय फौव्वारे की तरह थे, तभी तक वह उनकी आंखों में खटक रहा था, पर ज्योंही उन लोगों ने उसे अपनों से भी नीचे ग्लानि के अतल गह्वर में डूबते हुए देखा, त्योंही उनका मन दया से द्रवित हो गया। उनके हृदय में एक सहानुभूति का संचार हुआ। अब उसके साथ सहानुभूति करते उन्हें कोई दिक्कत नहीं थी, क्योंकि वह अब बहुत नीचे था। वे सदस्य जो पहले यह कह चुके थे कि अनिरुद्ध ने रुपयों के लिये शादी की थी अब अपने आक्षेपों पर पश्चाताप करने लगे।

अनिरुद्ध को उन्होंने जो दिमाग नाम से याद किया था, उसमें न केवल न्याय बुद्धि थी, बल्कि आत्म प्रशंसा भी थी। ये भूतपूर्व क्रांतिकारी यह समझ कर अपने को तसल्ली देते थे कि वे नये क्रांतिकारियों की तुलना में दिमाग थे। हाय आत्म प्रवंचना!

यथा समय स भ के पत्रों में अधिवेशन का विवरण प्रकाशित हुआ। अन्य पत्रों में भी यह विवरण विशेष रूपसे प्रकाशित हुआ। (क्रमशः)

सम्पादक के नाम पत्र

हमारे पाठक क्या कहते हैं ?

ऋषि दयानन्द चित्र पट पर

इधर कुछ वर्षों से आर्य जगत में यह प्रश्न बराबर विचाराधीन है कि श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती का चल चित्र बनाया जाय या नहीं। मेरी राय में तो यह होना चाहिए।

(१) यह निर्णय हो कि चित्र बनाया जाय या नहीं और इसका निर्णय श्री-परोपकारिणी सभा एवं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, आर्य कुमार सभा, मिल कर या अलग-अलग करें और बहुमत के आधार पर, यदि उचित हो तो, चित्र बनाया जाय।

(२) आज तक जो चित्र बनाये गए हैं, उनका लक्ष्य धन-कमाना है। वे चित्र निर्माता आज की जनता की दूषित मनोवृत्ति को सामने रख कर ही अच्छे से अच्छे सर्वोत्कृष्ट चित्र में भी अप्रासंगिक, हास्य, व्यंग नृत्य एवं मनोरंजन के अन्य स्थल सम्मिलित कर देते हैं और लाभ हो तभी निर्माण करते हैं। उनके सामने अर्थ है, आदर्श नहीं, हमें इस विषय में खूब ही सोच समझ कर बचने बचाने, दयानन्द के 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के आदर्श को ले कर चलना है।

(३) स्वामी जी का अभिनय कौन करे, यह प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण है। चरित्र वान व्यक्ति होना आवश्यक है ब्रह्मचारी भी हो। अभिनेता का चुनाव सार्वदेशिक सभा द्वारा नियत दयानन्द चित्र निर्माण समिति के द्वारा हो।

(४) चित्र को प्रामाणिक जीवन चरित्रों के आधार पर ही बनाए जाने की व्यवस्था हो, भावुकता में बह कर अंकन वाले स्थल छोड़ न दिए जावें। सम्पूर्ण जीवन चरित्र का संक्षेप आना ही चाहिए।

(५) स्वामी जी का अपना वसीयत नामा, परोपकारिणी सभा, वैदिक यंत्रालय, ट्रस्ट के सदस्य या जीवन चरित्र से सम्बन्धित जो सज्जन आज जीवित हैं चित्र में उन्हें भी प्रदर्शित किया जाय।

—राजपाल

●

नाम क्या हो ?

मैंने ६ अगस्त के वीर अर्जुन साप्ताहिक पत्र में श्री जगन्नारायण जी सक्सेना द्वारा लिखित पत्र पढ़ा, जो सर्वप्रथम प्रकाशित हुए मेरे पत्र का उत्तर था। अब यही समस्या सामने आई कि फिल्म का नाम कौन सा रखा जावे ! एक सज्जन ने लिखा है अनोखा जोगी, दूसरे लिखते हैं महान संन्यासी, तीसरे लिखते हैं कि 'आर० आफ दी वर्ल्ड' होना चाहिए। पर यह सोचना आवश्यक है कि इनसे कौनसा प्रभाव कारी अर्थ निकलता है। मेरी समझ से महान संन्यासी, अनोखा जोगी, तथा विश्व ज्योति के स्थान पर 'महर्षि दयानन्द सरस्वती' होना चाहिए क्योंकि महर्षि दयानन्द सरस्वती, वास्तविक तथा प्रभावकारी नाम है इन सज्जनों ने जो नाम चुने हैं वे इन्हीं फिल्मों की तरह चुने हैं कि फिल्म है किसी का, नाम है किसी का। जैसे शहनाई, गजरे, काजल, चार दिन आदि सब व्यर्थ के नाम हैं जिनसे फिल्म का कोई विशेष सम्बन्ध नहीं।

—प्रेमदत्त पाण्डेय

●

शुकताल आश्रम

आज का युग भारत के लिए निर्माण युग है। ऐसी ही योजनाओं में एक शुकताल योजना है, जिसके निर्माण का श्रेय श्री स्वामी कल्याणदेव जी को है। शुकताल जिला मुजफ्फरनगर में गंगा के तट पर एक धार्मिक स्थान है। यहीं श्री वैशम्पायन ने राजा जनमेजय को महाभारत की कथा सुनाई थी तथा यहीं पर तपस्वी-मुनियों में श्रेष्ठ श्री शुकदेवजी का आश्रम था। श्री शुकदेव जी के नाम पर यह स्थान शुकतार या शुकताल कहलाता है।

आजकल इसके पुनरुत्थान का भार श्री स्वामी कल्याणदेव जी ने उठा लिया है। यों तो स्वामी जी के आश्रम से लगभग तीस स्कूल चल रहे हैं, जिनमें कई हायर सैकण्डरी स्कूल भी हैं। परन्तु उन सब में शुकताल योजना विशेष महत्व रखती है।

इस योजना के दो पहलू हैं धार्मिक और सामाजिक। धार्मिक क्षेत्र में धर्मशाला, मन्दिर, भजनाश्रम इत्यादि सम्मिलित हैं। सामाजिक योजना में गोशाला, नहर, कृषि-योजना, सर्वांगपूर्ण महाविद्यालय तथा उद्योग-शाला सम्मिलित हैं। यू० पी० सरकार ने भी शुकताल योजना के वास्ते बिजली देने का निश्चय किया है। मुजफ्फरनगर से शुकताल तक एक पक्की सड़क बन कर तय्यार हो चुकी है। मुजफ्फर नगर की जनता की दृष्टि आज शुकताल पर लगी है।

यद्यपि यह योजना अभी आरम्भिक अवस्था में ही है, किन्तु निकट भविष्य में श्री स्वामी जी के पुरुषार्थ से इसके उन्नत होने की पूर्ण आशा है।

—श्री देवदत्त शर्मा-सुमन

●

मूला उस्ताद आत्महत्या करले !

गत ३ मार्च को, पाक्षिक 'पन्द्रह-अगस्त' में 'मूला उस्ताद आत्मघात करेगा' शीर्षक एक टिप्पणी प्रकाशित हुई थी।

इस टिप्पणी पर राजस्थान सरकार ने प्रायः पांच मास बाद पत्र के प्रकाशक व मुद्रक 'आजाद प्रिंटिंग वर्क्स लि. उदयपुर से एक हजार नकद की जमानत मांगी है जो ३ अगस्त को जमा करानी थी। टिप्पणी की आलोचना का जहां तक प्रश्न है जिसके आधार पर जमानत मांगी गई है, कुछ भी हो। जब विरोध किया गया है और जमानत मांग ली गई है तो ऐसे कारणों को टिप्पणी में ढूंढा जा सकता है। परन्तु प्रश्न तो वास्तविकता का है। हम क्यों नहीं उन कारणों को ही समाप्त कर दें जिनके सहारे 'आपत्ति-जनक' लेखादि प्रकाशित हों।

अध्यापकों के वेतन बढ़ाने हैं। पर सरकार कहती है कि पैसा नहीं है। कई आवश्यक और महत्वपूर्ण योजनाएं पहले पूरी करनी हैं, जिनमें—आवागमन के साधन (सड़कें), जलाशय, जलविद्युत, अधिक अन्न उत्पादन और कई ऐसी प्राथमिक योजनाएं हैं जिनके बल पर प्रजातन्त्र का विकास होता है और जो कि जनता (राजस्थान की अविकसित जनता) के सामने 'जिम्मेदाराना हुकूमत (रामराज्य) के प्रभाव के रूप में आ सकती हैं, इन्हीं के बल पर तो आज प्रजातन्त्र के सुन्दर भविष्य का चित्र खींच कर जनता का दिल जीता जा सकता है!

शिक्षक को त्यागी होने का आध्यात्मिक उपदेश वेदकाल से चलता आ रहा है। आत्मा का दमन करके, पेट काटकर, अभाव के भूत के साथ दृढ़ता से संघर्ष करके शिक्षक को समाज कल्याण की चिन्ता करनी होगी; तभी उसकी आत्मा का उत्थान होगा, उसकी महानता

विपदाओं में—

श्री रामपालसिंह 'कदम'

मैंने दिल की दुख दर्द भरी आवाजों को भी भुला दिया;
कितने भीषण तूफानों को, उर की धड़कन पर सुला दिया।

मैं भूल गया रोदन-क्रन्दन, जब रोम-रोम आफत आई;
हर ओर बलाएं मंडराईं, जब नई-नई शामत आईं!
जब चोटें सहनी हैं निशदिन, फिर आहों से होता क्या है?
इस अनचाहे जग में मेरी, इन आहों से बनता क्या है?
मेरे अन्तर की ज्वाला ने मेरे आंसू को जला दिया!
मैंने दिल की दुख दर्द भरी आवाजों को भी भुला दिया!

मैं मौन रहा पर मेरी उस पीड़ा से कोई बोल उठा;
हिल गया हृदय, कंप गया गात, कोई पागल बन डोल उठा!
मैं रहा देखता निष्ठुर बन, अपने कारण उनको मिटते;
उन हरी-भरी आशा वाले अरमानों के जग को लुटते!
मेरी निर्ममता ने कितनी हंसती आंखों को रुला दिया!
मैंने दिल की दुख दर्द भरी आवाजों को भी भुला दिया।

मेरी प्रतिभा की पुष्प-लता, जब कांटा बनकर लटक गई;
जब मान भरी सम्पदा अतुल विपदाएं सर पर पटक गई।
जब बार-बार विश्वासों की आधार शिलायें टूट गईं;
सपनों को सत्य बनाने की जब सब आशायें छूट गईं!
उन स्वर्णिम-स्वप्नों को भी तब मैंने मिट्टी में मिला दिया!
मैंने दिल की दुख दर्द भरी आवाजों को भी भुला दिया।

मैं मांगूं मदद किसी की भी, मैंने तो इस की चाह न की;
औरों को खुश करने की भी मैंने कोई परवाह न की!
दो दिन के इस जीवन में मैं किसको-किसकी पूजा करता?
अपने गर्वोन्नत मस्तक को किसके-किसके पग पर रखता?
निज स्वाभिमान के पानी में मैंने प्राणों को घुला दिया!
मैंने दिल की दुख दर्द भरी आवाजों को भी भुला दिया।

पथ पर बढ़ना स्वीकार मुझे, चाहे जितनी ठोकर खाऊं!
जब जीवन जीने योग्य मुझे फिर क्यों विपदा से घबराऊं!
पथ की बाधाओं से डर कर, मैंने न कभी रुकना सीखा;
अत्याचारों के सम्मुख भी मैंने न कभी झुकना सीखा।
कटु कटु कंटकों में मैंने, जीवन प्रसून को खिला दिया।
मैंने दिल की दुख दर्द भरी आवाजों को भी भुला दिया।

मैं प्रबल प्रभंजन से जूझा, झंझा के झोंकों में झूला;
मैं वज्र-कठोर बना पथ में, कुसुमों की कोमलता भूला!
उस क्रूर नियति की चोटों को, मैं हंसते-हंसते झेल गया;
दुर्दिन से होड़ लगाने को अपने प्राणों पर खेल गया!
मैंने अपने दृढ़-धीरज से वह अचल हिमालय हिला दिया।
मैंने दिल की दुख दर्द भरी आवाजों को भी भुला दिया।

★

अजर अमर होगी और उसका स्थान स्वर्ग में सुरक्षित होगा।

शिक्षक, अपने राष्ट्र के कल्याण का चिन्तन, तुझे अब करना है। अब तक तो तूने गुलाम भारत की सेवा के रूप में क्रूर सत्ताओं की सेवा की। तेरे पवित्र बलिदान का अवसर तो अब आया है! शिक्षा दान के महायज्ञ में शुद्ध एकाग्रता और कल्याण भावना से आहुतियां दिये जा। एक दिन तुझे इसका फल मिलेगा। यहां नहीं तो परलोक में अवश्य मिलेगा। इस यज्ञ को शिथिल मत करना चाहे तुझे अपनी अपने आत्मजों की और अपने सर्वस्व की आहुति दे देनी पड़े। तेरे मन पर मलिनता न आने पाये।

यह है वह आदर्श जिसे जीवन में उतार कर ही शिक्षक अपना और राष्ट्र का कल्याण कर सकता है। इस रहस्य को सरकार अच्छी तरह जानती है और शिक्षक को ज्ञात या अज्ञात रूप से इस की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती रहती है।

पर वर्तमान युग में शिक्षक अन-समझा गया है। वह अपने आपको समझना भूल सा गया है और इसी कारण वह भौतिकता—अर्थ का भक्त बन गया है। सरकार एक के द्वारा उसमें नईकल्पना का आह्वान करना चाहती है, उसके आत्म सम्मान को जगाना चाहती है और शिक्षक कहता है—"क्या उत्साह अवश्य करेगा?" नहीं उसे युग के साथ नहीं चलना है। उसे तो भविष्य में जीना पड़ेगा।

—एक हमदर्द

यात्रा का अन्त

[पृष्ठ १२ का शेष]

हो रही थी। आकाश पर काले विस्तार से बादल कड़क रहे थे। इमली का बूढ़ा पेड़ ठंडी आहें भर रहा था। आखिर ऐसा क्यों होता है। मनुष्य-मनुष्य पर राज्य करे, उस पर जुल्म करे, यह समस्या उनकी समझ में न आई इस लिए वह उदास थे। अन्त में ककनू ने निःश्वास छोड़ते हुये कहा—'सो जाओ बेटा सोने से तुम्हारी थकावट दूर हो जायेगी।'

रात्रि आधी से अधिक व्यतीत हो चुकी थी, सहसा किसी ने ककनू को ज़ोर से झकझोरा! 'बाबा' आवाज से घबराहट और चिन्ता टपक रही थी। ककनू आंखें मलता हुआ उठ बैठा। साथ वाली चारपाई पर युवक किसी घायल पक्षी की भांति तड़प रहा था। ककनू ने उसके मस्तक पर हाथ फेरा। उसका सारा शरीर बुखार की तेज़ी के कारण फुंक रहा था। 'जब से संसार बना है समाज में दो प्रकार के मनुष्य रहते आये हैं।' वह अर्धचेतन अवस्था में कह रहा था। 'एक वे जिनके ऊपर फर्ज ही फर्ज हो और अधिकार कुछ नहीं, दूसरे वे जिन्हें अधिकार ही अधिकार प्राप्त हैं। भवानी बाबा मैं इसको नहीं मानता, मुरली बाई और ज़ोर से नाचो, इतने ज़ोर से कि तुम्हारे पांव से आग की लपटें निकलने लगें, जो इन बंगलों को भी जला डाले। जहां मनुष्य नहीं, मनुष्य को खाने वाले देव रहते हैं।'

'पायल की झंकारें कितनी प्यारी हैं ··· मैं आ रहा हूं क्योंकि मुझे अभी तीन कोस चलना है।' बेहोश युवक का स्वर शीघ्रता से बढ़ रहा था। उसकी बेचैनी प्रतिक्षण बढ़ रही थी। धीरे-धीरे शब्द उसके कंठ में अटकने लगे और अंग शिथिल हो गया। मस्तक पर पसीने की बूंदें उभर आईं।

'बेटी अब यह कुछ क्षण का मेहमान है। इसके मस्तक पर तो मृत्यु के चिन्ह उभर आये हैं।" और युवक की चारपाई से उतार पृथ्वी पर लिटा दिया। उसके अन्तिम शब्द थे, "अभी मेरा सफर समाप्त नहीं हुआ। मुझे अभी कई कोस चलना है।"

दूर पूरब में एक नये दिन ने अपनी कच्ची आंख खोली। इमली के पेड़ के नीचे उस युवक की लाश पड़ी था, जिसे बूढ़े ककनू ने अपनी नई चादर से ढांक दिया था। कजरी का नन्हां बच्चा सहमा २ उसके पास खड़ा था। जैसे पूछ रहा हो, माँ यह मनुष्य चुपचाप क्यों लेटा हुआ है।

शिकार

एक मशहूर इलाके में दो दोस्त रहते थे। एक दोस्त तो महा डरपोक थे तथा दूसरे दोस्त उतने ही निडर। डरपोक महाशय का नाम देना हमारी सभ्यता के विरुद्ध है, इसलिए हम अपनी तरफ से पहले दोस्त का नाम 'डरपोक' ही रखते हैं, तथा दूसरे दोस्त का नाम 'निडर'। 'डरपोक' का डरपोकपन सायंकाल ७ या ८ बजे से आरम्भ हो जाता था। उन्हें रात का एक-एक पल खतरनाक मालूम होता था, जब कि वही रात और सज्जनों, मजदूरों आदि के लिए कितनी सुखकर तथा स्वर्ग के समान भली लगती है। चूहों की थोड़ी-सी खटपट 'डरपोक' का सारा खून सुखा देती थी तथा उन्हें खतरे की घंटी का काम देती थी।

एक दिन 'डरपोक' ने अपने आत्मीय दोस्त 'निडर' से कहा' "यार, रात को मेरे यहां हर रोज एक चोर आता है। मुझे तो साले से बहुत डर मालूम होता है और मैं अपने मुंह पर चद्दर ओढ़ लेता हूं। आज रात को तुम मेरे यहां सोना, समझे। "रात आने को कुछ भी देर न लगी। और हमारे 'डरपोक' की घबराहट भी प्रारम्भ हो गई। ठीक नौ बजे जब कि दोनों बातें कर रहे थे (और शहर की हलचल भी बहुत कुछ बन्द हो गई थी) कि जीने पर किसी के पैरों की धाप-ध्वनि सुनाई दी। फिर क्या पूछना था, 'डरपोक' कंपने लगे और और अपने बिस्तर पर मुंह ढांक कर सो गये। 'निडर' महान ही निडर तथा बेधड़क थे। उन्होंने भी चोर ही समझा और वे दरवाजे की ओर मोटा डंडा लेकर चोर का इन्तजार करने लगे। ज्यों-ज्यों धाप-ध्वनि पास तथा ऊपर को आती जाती थी त्यों-त्यों 'निडर' महाशय का डंडा भी संभलता जा रहा था। और वहां 'डरपोक' के प्राण निकल निकल रहे थे। 'निडर' बिलकुल तैयार खड़े थे। लैम्प हवा के कारण बुझ गया था। अंधेरा था। ज्यों ही ध्वनि दरवाजे पर आकर आगे बढ़ने लगी कि हमारे 'निडर' ने बलिष्ठ हाथों से वह मोटा डंडा उस ध्वनि के स्थान पर मार दिया।

देखने से पता चला कि वह बिल्ली

समाज और संस्था

[पृष्ठ १ का शेष]

मिल जायगी, वरना इसकी हालत भी बदतर हो जायगी।

इन दो संस्थाओं के साथ ही एक तीसरी महान संस्था भारतके वर्तमान युग में बहुत प्रतिष्ठा का स्थान प्राप्त कर चुकी है, वह राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ है। पिछले २२ वर्षों से यह भारत में काम कर रही है। अपनी विचारधारा तथा कार्य प्रणाली के द्वारा इसने हिन्दू समाज और विशेषकर इसके नवयुवक वर्ग में उत्कट देशभक्ति व समाजसेवा का भाव पैदा कर अनुशासन व राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण किया है। विभाजन से पहिले और उसके पश्चात् भी हिंदू समाज में आत्म विश्वास पैदा करके और समय २ पर आने वाली विपत्तियों का मुकाबला करने के लिये समाज को तैयार रहने का उपदेश देकर इसने समाज के दिल में अपने लिए एक स्थान बनाया है।

संघ की परीक्षा

परंतु आज राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ भी एक परीक्षा में से गुजर रहा है।

स्वतंत्रता मिल जाने और देश में स्वातंत्र्यात्मक राज्य स्थापित हो जाने से देश और समाज की समस्याओं ने एक नया रूप धारण कर लिया है। परिस्थिति बहुत कुछ बदल गई है। कुछ नई समस्याएं खड़ी हो गई हैं। उनको हल करने के लिये समाज का बहुत बड़ा भाग संघ की ओर आशा की दृष्टि से देखता है। संघ ने अभी समाज की इस नई मांग की ओर ध्यान नहीं दिया। परंतु यह परिस्थिति बहुत देर तक कायम नहीं रह सकती। या तो राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ को हालत के अनुसार अपने आपको ढालना होगा और समाज का मार्ग दर्शन करना होगा अथवा समाज संघ से विमुख हो जायगा। यदि ऐसा हुआ तो वह संघ और समाज दोनों के लिये अनिष्ट होगा।

[illegible]वास करते हुए शिव और पार्वती। १२ वीं शताब्दी की मूर्तियों में [illegible] बैठे हुए) और १६ वीं शताब्दी की मूर्ति "शेष शय्या पर विष्णु" कला के उत्कृष्ट नमूने हैं।

सिनेमा-संसार

फिल्मों में संगीत क्यों ?

ले०—श्री बी० शान्ताराम

उलटे-पुलटे सुझाव पेश किए जा रहे हैं, विरोधी विचारों का बाज़ार गरम है, और हमारे फ़िल्म उद्योग को बचाने की आख़िरी कोशिशें की जा रही हैं। चारों तरफ़ अव्यवस्था ही अव्यवस्था है, मगर इस अव्यवस्था में भी एक व्यवस्था है जो हमें इस गड़बड़ से सफलतापूर्वक बाहर ला रही है।

इन्हीं विचारों के अधीन लोग एक अजीब सा सवाल पूछ रहे हैं—क्या यह संभव है कि संगीत हमारी फ़िल्मों में से बिलकुल निकाल दिया जाए ? शुरू-शुरू में इस सवाल ने मुझे भी असमंजस में डाल दिया। बात यह थी कि मुझे सपने में भी ख़याल न आया था कि ऐसा सवाल पूछा जा सकता है। संगीत आख़िर हमारी फ़िल्मों का एक ऐसा अविच्छिन्न हिस्सा है, जिसे कभी अलग नहीं किया जा सकता।

इस सवाल ने जब मुझे चौंकाया, तो मेरा दिमाग़ भी अपनी उड़ान पर चल निकला। जन्म के झट बाद बच्चे के बारे में मैंने सोचा। वह रोना संगीत से भरा होता है और उसे सुनकर बच्चे की माँ में भावनाएँ पैदा होती हैं—और उसे इस बात का आभास दिलाती हैं कि अब उसकी ज़िम्मेदारियाँ बढ़ गई हैं, अब उसे प्यार, दुलार, स्नेह, से एक कोमल, नन्हें, सुन्दर शिशु का पालन करना है। यह इसी संगीत का नतीजा है कि उसके स्तनों में दूध उमड़ आता है जिससे बच्चा अपनी भूख मिटा सके और इसके बाद हमें माँ की लोरी के मधुर स्वर सुनाई देते हैं। बच्चा बड़ा होता है, और अब माँ को घर के कामकाज में फिर से जुटना है। उसे गेहूँ पीसना है, रसोई बनानी है, घर के दूसरे कामकाज करने हैं। इस मेहनत में उसकी मदद क्या है ? उसकी कड़ी मेहनत का धीरज क्या है ? वह एक मधुर गाने में सम्भव हो जाती है और वह गाना उसे शारीरिक मेहनत की थकावट को भुला देता है और काम उसी तरह चलता रहता है।

इसी तरह अगर आप खेतों में जाइये जहाँ किसान हल जोतने में लगे हैं, तो आपके कानों में एक मधुर लय गूँज उठेगी। कैसा अद्भुत संगीत है यह ! इस संगीत में आहार की उपयोगिता है, मगर राशनिंग से यह आहार बाहर है। हालांकि उसने अपनी ज़मीन जोतने में बहुत सख्त मेहनत की है, फिर भी भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया और उसे अब एक भयानक अकाल का सामना करना है। सो वह मन्दिर की तरफ़ जा रहा है, मन्दिर में पहुँचकर अमिट विश्वास और भक्ति के साथ वह भजन गा रहा है। और जब वह बाहिर आता है तो जीवन का संग्राम लड़ने की नई प्रेरणा उसके अंतर में आँखें खोल चुकी हैं।

अगर हम अपनी कल्पना की आँख से प्रकृति को देखें, तो हमें पहाड़ों से गिरने वाले कलकल करते झरनों में संगीत का मस्त करने वाला स्वर सुनाई देगा। झरना एक पत्थर से दूसरे पत्थर पर गिर रहा है और वहाँ से नीचे वादी में बह रहा है—इसका पानी पथिक को प्यास बुझाने का आमंत्रण दे रहा है। कोयल गा रही है और उसके गान में अमर बसंत के आगमन की पुकार है। बादलों की गरज में गंभीर संगीत है और जहाँ हवा के झोंके वर्षा-ऋतु को ला रहे हैं। प्रकृति का संगीत कितना सुहावना है !

संगीत सब जगह है, सब चीज़ों में है। जन्म और मृत्यु पर, शादी और शव-यात्रा पर, झोंपड़े और महल में, नामकरण और प्रेमप्रसंग में, शांति के सुखी पलों और लड़ाई के भयानक काल में, आनंद-प्रसन्न अवस्था में और कड़े शारीरिक परिश्रम के समय—हर वक्त संगीत शांतिमय औषधि का काम करता है।

संगीत और जीवन का साथ सदा-सदा है और रहेगा।

फ़िल्म क्या है ? फ़िल्म जीवन का चित्रण है। फिर फ़िल्मों से हम संगीत क्योंकर अलग कर सकते हैं ? साइलेंट-ज़माने में भी हम संगीत के बिना फ़िल्में न दिखा सकते थे। परदे के आगे बैठे कुछ आदमी हारमोनियम और तबला आदि बजा कर देखने वालों का मन बहलाते थे। सो बोलने वाली फ़िल्मों में मनबहलाव का सामान बढ़ा है, कम नहीं हुआ। इसलिए अच्छा, उचित संगीत हर समय फ़िल्मों में उपयुक्त है।

फ़िल्मों में से संगीत निकाल देने की सलाह देना वैसा ही है, जैसा यह कहना कि फ़िल्मों में मनोरंजन को स्थान

न देना चाहिए। कुछ लोग शायद यह भी सुझाव पेश करें कि फ़िल्मों में हर पात्र को बोलने की मनाही होनी चाहिए। और फिर शायद स्त्रियों को फ़िल्मों में न आने का प्रस्ताव भी हमारे सामने आ जाए। लोग शायद कुछ विदेशी फ़िल्मों की तरफ़ इशारा करें जिनमें से कइयों में संगीत नहीं होता, सिर्फ़ बैक-ग्राउंड संगीत होता है।

माना कि कुछ विदेशी फ़िल्मों में गाने नहीं होते। मगर इसका मतलब यह हरगिज़ नहीं कि हम अंधों की तरह उनका अनुसरण करें। आख़िर हमारी और उनकी संस्कृति में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। हमारी संस्कृति का आधार कविता है। श्रीमद्भागवत गीता, महाभारत, तुलसीदास की रामायण, ज्ञानेश्वर की रचनाएं, तुकाराम, रामनृसिंह मेहता, कबीर—सब हमारी संस्कृति के अंग हैं। ये सब कृतियां महान् हैं, महा-ग्रंथ हैं। उनका वर्णन सिर्फ़ संगीत द्वारा ही हो सकता है।

और जब संगीत हमारे जीवन का एक अनिवार्य अंग है, तो फिर फ़िल्मी संगीत पर हमें आपत्ति क्यों हो? मगर यह आपत्ति है, इसलिए इसका जवाब देना हमारे लिए ज़रूरी है। मेरे विचार में ऐसे ख़यालों की उपज का एक कारण है। वह यह कि हमारी फ़िल्मों में ज़रूरत से ज़्यादा गाने डाले जाते हैं और उनका उपयुक्त स्थान भी बहुत कम ध्यान में लाया जाता है। न वातावरण और कथानक को देखा जाता है, न धुन की उचितता को बस, गंदे अश्लील गानों से जनता को भरमाने की कोशिश होती है। संगीत का स्तर भी अधिकतर हिन्दुस्तानी फ़िल्मों में बहुत गिरा होता है।

कहानी के बहाव को रोकने वाले गाने फ़िल्मों में कभी न होने चाहिएं। इस तरह के गानों से रोचकता की कमी होती है और कहानी के विषय को भली प्रकार व्यक्त करने में भी बाधा पड़ती है। गलत ऋतु में कोयल का राग भी कानों को नहीं भाता। इसी तरह अगर नायक नायिका के साथ भागते के वक्त गाना शुरू कर देता है, तो सहनशील से सहनशील देखने वाले उतावले हो उठेंगे। नायक राग और ताल में मस्त हो और उधर उसका दुश्मन नायिका को ले उड़े!

अश्लील गाने या जिन्हें निचले दर्जे का संगीत कहते हैं, वह भी दर्शकों की रुचि को गिराते हैं। लोकप्रियता के लिए या कुछ सिक्कों के लाभ के लालच में ऐसे गाने फ़िल्मों में भर देना, एक सुन्दर कला का दुर्व्यवहार है जिसे वेश्या-वृत्ति के सिवा कोई दूसरा नाम नहीं दिया जा सकता। मुझे विश्वास है कि जो लोग गानों के विरुद्ध हैं, सिर्फ़ इसी वजह से हैं कि उन्होंने बहुत बुरी फ़िल्मी धुनों में भद्दे, अश्लील, सस्ते किस्म के गाने फ़िल्मों में देखे और सुने हैं।

हमारे देश के संगीत का भंडार बहुत बड़ा है और उसका बुरा इस्तेमाल करना क्रूरता है, आत्महत्या की तरह है। फ़िल्म-उद्योग के आने वाले इतिहासकार इस प्रवृत्ति को दोषी ठहराने में न्याय-संगत होंगे। हमें पूरी-पूरी कोशिश करनी चाहिए कि हमारे संगीत में उन्नति हो, अवनति नहीं। हमारा संगीत राग और रागिनियों से बना है और यह राग व रागिनियां प्रेम, क्रोध, त्याग, ईर्ष्या सभी प्रकार के भाव व्यक्त कर सकती हैं। कहते हैं, संगीत कई तरह के रोगों को दूर कर सकता है। कई राग वर्षा लाने में सफल होते हैं, और दूसरे राग—दीपक राग की तरह अंधेरी उदास जगह में उजाला कर देते हैं। इन्हें मज़ाक में उड़ा देना उचित नहीं। संगीत एक विज्ञान है और अगर हम उस विज्ञान को योग की तरह भली प्रकार समझ लें, तो इससे बहुत कुछ हो सकता है।

इन सब बातों के होते हुए हम फ़िल्मों से संगीत को कैसे निकाल सकते हैं? क्या हम मां को लोरी गाने से रोक सकते हैं? क्या हम भक्त को भजन में प्रार्थना करने को कह सकते हैं? क्या हम मरने की कसकन रोक सकते हैं, क्योंकि हम में कुछ संगीत पसन्द नहीं करते? संगीत हमारे अस्तित्व का एक भाग है—उस पुरातन समय से जब पहले पहल मनुष्य इस दुनिया में पैदा हुआ।

फ़िल्म में गाने का भाग कोई खेल नहीं। उपयुक्त समय पर दिया गया गाना देखने वालों को शान्त कर सकता है। जब उन्हें शान्त करना ज़रूरी हो। कहानी में ऐसी जगहें आती हैं जहां कहानी लेखक गाने का सहारा लिए बिना अपने आपको व्यक्त नहीं कर सकता। और फिर कई ऐसे विषय हैं जो संगीत के बिना एक कदम नहीं चल सकते।

अंत में हम यह कहेंगे कि एक किस्म का संगीत फ़िल्मों से बिल्कुल निकाल देना चाहिए। अनुपयुक्त संगीत, संगीत जो कहानी के वातावरण में नहीं बैठता, अश्लील गाने और सस्ते किस्म के बाज़ारू गाने। जो यह सब समझ कर भी घटिया दर्जे का संगीत लोगों के सामने रखता है (मैं किसी पर व्यक्तिगत हमला नहीं कर रहा) वह मेरी राय में या तो किसी रंडी से दुखी है, या किसी गाने वाले दुश्मन के हाथ हारा हुआ निराश प्रेमी, या उसकी मनोवृत्ति ही विकृत है। नहीं तो वह संगीत का इतना दुश्मन क्यों है? वह संगीत जिससे हमारा जीवन पैदा होता है।

जब तक हमारी फ़िल्में हमारे जीवन का चित्रण करती रहेंगी, तब तक उनमें से संगीत कभी अलग न होगा।

टन्डन जी और नेहरू जी

[पृष्ठ ८ का शेष]

समालोचक ने उनके विषय में लिखा है कि 'वे उन व्यक्तियों में से हैं, जो न झुकते हैं और न टूटते हैं।' भक्तों की दृष्टि में टण्डनजी का यही गुण है।

नेहरू जी के और टंडन जी के स्वभाव में जो भेद है, वह गत वर्ष राष्ट्र-भाषा के विवाद के प्रसंग में देश के सामने आ गया था। टंडनजी हिन्दी को राजभाषा बनाने के पक्ष में थे। विवाद के आदि से अंत तक वह उसी पक्ष पर डटे रहे। नेहरूजी हिन्दुस्तानी के पक्ष में तो थे, परन्तु वह चाहते थे कि हिन्दुस्तानी अभी बहुत समय तक सरकार की ड्योढ़ी पर बैठ कर उम्मेदवारी करे। इस स्थिति से सरकते-सरकते वे यहां तक आ गये कि राजभाषा के पद पर हिन्दी को बिठाया जाय, परन्तु अंक अंग्रेज़ी के ही रखे जायं। भाषा-सम्बन्धी लम्बे विवाद में दोनों महापुरुषों के स्वभाव की विशेषतायें बहुत ही उग्र रूप से प्रकट हो गई थीं। एक ने महात्मा जी की मौलिक दृढ़ता का और दूसरे ने उन के व्यावहारिक लचकीलेपन का प्रदर्शन किया।

दोनों गाँधी के प्रतिनिधि

इस प्रकार पुराने साथी और एक राह के राही, परन्तु भिन्न-भिन्न स्वभाव के ये दो महापुरुष हमारे इतिहास में पहिली बार राष्ट्र की पतवार को संभालने के लिए आमने-सामने खड़े हो गये हैं। मेरी सम्मति में वे दोनों अपने गुरु महात्मा गांधी के व्यक्तित्व के दो पहलुओं के अलग अलग प्रतिनिधि हैं। नेहरू जी महात्मा जी के दिमाग के और टंडनजी उनके हृदय के प्रतिनिधि हैं। राष्ट्र के इस घोर संकटकाल में घबराते से हुए देशभक्त का हृदय बड़ी उत्सुकता पूछता है कि इस नई परिस्थिति का परिणाम क्या होगा? ये दोनों उग्र शक्तियां मिल कर एक दूसरी की पोषक बन कर, देश के कल्याण का कारण बनेंगी, या आपस में टकरा कर देश की नौका को ले डूबेंगी। दोनों महापुरुष देशभक्त हैं, दोनों त्यागी और निःस्वार्थ हैं, दोनों ज्ञानी हैं और दोनों का एक ध्येय है। इस कारण आकाश वाणी यही कहती है कि यह शिव और रुद्र का, सत्य और रज का समन्वय देश के कल्याण का कारण होगा— अनिष्ट का नहीं।

वीर अर्जुन साप्ताहिक का मूल्य

वार्षिक	१२)
अर्धवार्षिक	६॥)
एक प्रति	चार आना

गाण्डीव के तीर

भारत में पहली बार दिल का सफल आपरेशन हुआ।

—एक शीर्षक

दिल के साथ यदि दिमाग का भी सफल अपरेशन डाक्टर साहब कर सकें, तो पाकिस्तान से काफी रोगी आने को तैयार हैं।

× × ×

काश्मीर-मेल गुरुदासपुर के पास गिरी। ११ मरे।

—एक समाचार

इसी तरह यदि गिरा-गिरी का सिलसिला महीने दो महीने चलता गया पायदानों पर सफर करने वालों की संख्या तो घट जायेगी।

× × ×

लन्दन की एक महिला के एक साथ चार बच्चे पैदा हुए।

—रायटर

यदि ब्रिटिश महिलाएं एटली सरकार को इसी तरह सहयोग देती रहीं तो कम-से-कम द्वितीय युद्ध की जन-क्षति तो दो साल में ब्रिटेन पूरी कर ही लेगा।

× × ×

बम्बई की कपड़ा-मिल हड़ताल धीरे धीरे टूट रही है।

—बम्बई सरकार

अच्छा है, धीरे धीरे टूट रही है। अन्यथा एकदम टूटने से कम्यूनिस्टों का हार्ट फेल हो जाता और सोशलिस्टों को गर्दन तोड़ बुखार चढ़ आता।

× × ×

लीग मर तो गई ही, अब उसे कब्र में दफनाया जायगा।

—लतीफ बेग

यदि लारी लाहौर से कोई नुस्खा भेज देंगे तो शायद नये चुनावों तक फिर नब्ज आ जाय।

× × ×

१९५४ तक हम फिर चीन की पुरानी राजधानी में पहुंच जायेंगे।

—च्यांगकाई शेक

यह तो खैर भगवान् जाने, पर इतना तो अपने राम को भी विश्वास है कि आप फारमोसा में नहीं रहेंगे, ४ साल के अन्दर अन्दर।

× × ×

रूस पाकिस्तान के पीछे अड्डे बना रहा है।

—पाकिस्तान सरकार

अजान लगाते किसी मुल्ला ने देखा होगा।

× × ×

हम विदेशी मामलों में मौन नहीं रह सकते।

—नेहरू जी

मौन रहने के लिए तो घर के ही मामले काफी हैं, कह दीजिये यह भी।

× × ×

मुरादाबाद के एक हजार हलवाई हड़ताल कर रहे हैं।

—एक साम्यवादी

अच्छा है, अब मुरादाबाद के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को हैजे की रोकथाम के काम से छुट्टी मिल गई।

× × ×

स्वास्थ्य मन्त्री राजकुमारी अमृतकौर कविराज सत्यवती पं० शिव शर्मा व अखिल भारतीय आयुर्वैदिक कांग्रेस के अन्य सदस्यों के साथ।

बड़े-बड़े शहरों में रविवार को फिर डाक बटा करेगी।

—एक समाचार

रेल के डिब्बों की तरह यह भी एक खेल था अधिकारियों का, सो पूरा हो गया होगा।

× × ×

मैं काश्मीर के फैसले के बिना पाकिस्तान न छोड़ूंगा।

—अफरुल्ला खां

अच्छा है, भगवान् आपकी अभिलाषा भी स्वर्गीय मुहम्मदअली की तरह ही पूरी करें।

—श्री चिरंजीलाल

[पृष्ठ ६ का शेष]

[पृष्ठ ६ का शेष]

अड्डे बनाने के लिए पाकिस्तान, ने अमरीका तथा इंगलैंड को अनुमति दे दी है। स्मरण रहे सामरिक दृष्टि से गिलगित का क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का क्षेत्र है। भारत के हाथ में इस प्रदेश के जाने पर इन विदेशी राष्ट्रों को वहां हवाई अड्डे बनाने की सुविधा मिल पाने का विश्वास नहीं है। अतः पाकिस्तान ने इनको यह अनुमति देकर एक टुकड़ा फेंका है, एक घूस दी है जिससे ये विदेशी राष्ट्र उस प्रदेश पर पाकिस्तान का अधिकार बनाये रखने में उसके सहायक हों।

देश-विदेश का घटनाचक्र

टंडनजी का चुनाव

नासिक अधिवेशन के लिये श्री पुरुषोत्तमदास टंडन का चुनाव कांग्रेस के अध्यक्ष पद पर हो गया। इस चुनाव मे आपको ५० प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त हुए और इसीलिये अन्य दोनों उम्मीदवारो, श्री देव व आचार्य कृपलानी की सीधी पराजय हुई।

श्री टण्डन का यह चुनाव अपने जैसा अनोखा है। चुनाव के पूर्व प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू का टंडनजी सम्बन्धी विरोध प्रकट हो चुका था। पंडितजी ने यह स्पष्ट कहा था कि टंडनजी के अध्यक्ष होने से सांप्रदायिक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलेगा। उन्होंने सीधा पत्र लिख कर श्री टण्डनजी को रोकने की चेष्टा की थी।

टण्डनजी देश में एक संस्कृति के समर्थक रहे हैं। किन्तु पं० नेहरू के इस स्पष्ट विरोध के रहते हुए भी टण्डनजी की यह विजय इस बात का प्रमाण है कि स्वयं कांग्रेसजनों ने प्रधानमंत्री की सांप्रदायिकता की कल्पना से असहमति प्रकट की है।

श्री [illegible] की विजय कांग्रेस के सांस्कृतिक दृष्टिकोण की ओर झुकाव का प्रमाण है। कई लोगो को भय है कि यदि पं० नेहरू उनसे निभाव न कर सके और स्वयं को बदल न सके तो उनकी वर्तमान स्थिति संदिग्ध हो जावेगी।

कोरिया युद्ध

कोरिया युद्ध का नया दौर व्यापक साम्यवादी आक्रमण से आरम्भ हुआ है। सहसा ही समस्त मोर्चे पर साम्यवादी सेनाओं ने प्रबल वेग से आक्रमण किया है और अमरीकनों तथा दक्षिण कोरियाई सेनाओं की रक्षा पंक्ति को अनेक स्थानो पर तोड़ कर आगे बढ़ आये हैं। पोहांग व क्योंग्जू पर उनका अधिकार हो चुका है। नाकटोंग नदी के मोर्चे पर भी उन्होंने प्रगति की है और टायगू को भी खतरा बढ़ना प्रारम्भ हो गया है।

साम्यवादी सेनाओ के इस विशाल आक्रमण से यह स्पष्ट है कि इतने दिन तक वे इसकी पर्याप्त तैयारी कर लेने के लिये ही रुके हुए थे। अब यह सत्य स्पष्ट हो गया है कि भारी अमरीकी बमबारी भी उन्हे पर्याप्त मात्रा में अपने अगले मोर्चों पर रसद, गोला बारूद, पेट्रोल तथा अन्य सभी सामग्री भेज पाने से रोकने मे समर्थ नहीं हो पाई है।

किन्तु कोरिया मे इतना पीछे हटने पर भी अमेरिका का आत्मविश्वास कम होता दिखाई नहीं देता। इसको झूठा विश्वास समझना गलती होगी। इसका एक ही अर्थ है कि अमेरिका को अपनी तैयारियों में तथा कोरिया भेजी हुई सेना में इतना विश्वास है कि वे वहां डटी रह सकेंगी और अधिक सहायता प्राप्त कर आगे बढ़ सकेंगी।

यंग इण्डिया

डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने अपने हाल के भाषण में एक नवीन संगठन के निर्माण की घोषणा कर दी है। इसका नाम यंग इंडिया अथवा नवयुवक भारत है। डा० मुकर्जी ने अपने भाषण में देश के युवकों से अपील की है कि वे विशाल संख्या में इस सगठन मे सम्मिलित हो कर देश को योग्य मार्ग पर लेजाने में सहायक बनें।

प्रधानमंत्री पं० नेहरू की पाकिस्तान विषयक नीति से देश में व्यापक असन्तोष है। यह असन्तोष नेहरू-लियाकत समझौते के समय बहुत स्पष्ट हो गया था। डा० मुकर्जी ने उस समय त्यागपत्र दे कर देश की इस आवाज को बलवान बनाया था और देश ने भी उनके इस कार्य की प्रशंसा की थी।

तभी से यह आशा थी कि वे एक स्वतन्त्र संगठन की स्थापना करेंगे और भारतीय संसद में एक विरोधी दल का संगठन करेंगे। संसद के गत विशेषाधिवेशन में जब वे नई दिल्ली आये थे, उस समय उन्होंने विरोधी दल के संगठन का प्रयत्न किया था। यह भी ज्ञात हुआ था कि इसमें उन्हें लगभग ४० सदस्यों का सहयोग प्राप्त होने की आशा है।

श्री हीरालाल शास्त्री

राजस्थान के प्रधानमंत्री श्री हीरालाल शास्त्री ने त्यागपत्र दे दिया है यह अब प्रकट हो गया है। इसका अर्थ है कि उनकी गद्दी पर अब श्री जयनारायण व्यास बैठेंगे।

मा० तारासिंह गिरफ्तार

लुधियाना में दिये गये एक आपत्तिजनक भाषण के अभियोग में सिक्खों के सांप्रदायिक नेता मास्टर तारासिंह गिरफ्तार कर लिये गये हैं। पंजाब सरकार की सम्मति में इसका कोई राजनैतिक महत्व नहीं है, क्योंकि वे एक साधारण कानून के अनुसार पकड़े गये हैं।

बम्बई की हड़ताल

बम्बई में सोशलिस्ट पार्टी नेतृत्व में ट्रिब्यूनल के एक फैसले के विरुद्ध व्यापक हड़ताल कई दिनों से कर रखी है। सरकार ने इसे अनियमित करार दिया है। इस हड़ताल को चलते हुए २२ (दिन १० सितम्बर तक) हो गये हैं। लेकिन अब हड़ताल कमजोर हो रही है, थोड़ी मिलें चलने भी लगी हैं। मिल मालिक और सरकार दोनों इसका दृढ़ता से मुकाबला कर रहे हैं। अब मजदूरों को फिर भड़काने के लिए सोशलिस्ट १४४ धारा का भंग कर रहे हैं, जिससे सरकारी कार्यवाही के विरुद्ध लोगों को भड़काया जा सके।

रुद्र देव का प्रकोप

ऐसा प्रतीत होता है कि मंगलमय भगवान रुद्ररूप धारण कर चुके काहिरा के पास एक भयंकर वायुदुर्घटना में ४८ आदमी मारे गये हैं, जिनमें ८ भारतीय हैं। पूर्वी और पश्चिमी पंजाब में भयंकर बाढ़ आ गई है। लाहौर खतरे में है। अमृतसर के २०० गांव रावी नदी की चपेट में आ गये हैं। गत मास उड़ीसा में आई बाढ के कारण ३ लाख एकड़ धान की खेती नष्ट होने का अनुमान लगाया गया है। पश्चिमी

(शेष कालम ३ के नीचे)

जापान में एक भयंकर समुद्री तूफान आया है। २५० आदमी मरे हैं और १२००० घर और ७०० जहाज नष्ट हो गये हैं।

मेल दुर्घटना और बाढ़ के पीड़ितों को स्वयं सेवकों ने सँभाला

पंजाब में रा. स्व. संघ का प्रशंसनीय सेवा कार्य

(विशेष संवाददाता द्वारा)

गुरुदासपुर — [illegible] मेल-दुर्घटना में सर्वप्रथम सहायता पहुँचाने वाले रा० स्व० संघ के स्वयंसेवक थे और अभी तक भी वे अपने सेवा-कार्य मे संलग्न हैं — इसके लिए संघ का कभी बन्द न होने वाला दैनिक शाखा-कार्य भी उपेक्षित हो गया है — इस तथ्य की ओर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया है। किन्तु संघ के स्वयंसेवक चाहे इस कार्य की कोई विज्ञप्ति प्रकाशित करें, चाहे न करें, यह सत्य है कि यदि वे तुरन्त घटनास्थल पर न पहुंचे होते तो मृत्यु-संख्या और भी ऊपर जाती।

३ सितम्बर को काश्मीर मेल-दुर्घटना हुई। रेलवे कर्मचारियों की असावधानी के कारण ही यह दुर्घटना हुई है। लगभग चार बजे यह दुर्घटना दीनानगर से २॥ मील के अन्तर पर (गुरुदासपुर की ओर) हुई। दीनानगर में समाचार पहुंचते ही वहां के स्वयंसेवक घटनास्थल की ओर चल पड़े। जब वे पहुंचे तो गाड़ी में से चीखों की भयानक आवाज़ आ रही थीं। कोई भी व्यक्ति वहां पर न था। स्वयंसेवकों ने लाशों तथा घायलों को बाहर निकाल कर प्राथमिक चिकित्सा करना शुरू किया।

इसके कुछ ही समय पश्चात् गुरुदासपुर तथा धारीवाल के स्वयंसेवक भी वहां पहुंच गये। इसके थोड़ी देर बाद गुरुदासपुर से सेना, पुलिस व मजिस्ट्रेट नगर के कुछ प्रतिष्ठित सज्जनों के साथ पहुंचे। रात के ११॥ बजे तक सभी घायलों तथा लाशों को गुरुदासपुर पहुंचा दिया गया। ११ व्यक्तियों की लाशें थीं और ६० घायल थे। हस्पताल में सब प्रकार की सहायता का कार्य अभी तक स्वयंसेवक ही कर रहे हैं। श्री चौधरी दिवलागराव जी भी स्वयंसेवकों के साथ लगे हुए हैं।

इधर वर्षा के कारण चारो ओर गांवों में बड़ी हानि हुई है। कई गांव बिलकुल बह गये हैं। धारीवाल में नहर का पानी उमड़ कर शहर के एक भाग में जाने लगा है, यह पता लगते ही स्वयंसेवकों ने बोरियों में मिट्टी भर-भर बांध लगाया। सारे दिन प्रयत्न करते रहने पर पानी बन्द हुआ। यदि आधा घंटा भी देर हो जाती तो शहर का बहुत बड़ा भाग तो बह ही जाता।

बटाला में पानी बहुत आ गया है। प्रायः सारे शहर में ३॥ फीट पानी है। लगभग ५०० मकान तथा दुकानें गिर चुकी हैं। बटाला से अमृतसर की ओर आने वाली सड़क पर पांच मील तक चार फीट तक गहरा पानी है। स्वयंसेवक छोटे-छोटे दलों में स्थान-स्थान पर लोगों का सामान सुरक्षित स्थानों पर पहुंचाने में संलग्न हैं।

[पृष्ठ ७ का शेष]

अपने पुत्र तक की सिफारिश करने से उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। उत्तर प्रदेश की विधान सभा के अध्यक्ष होने के नाते जब कभी सरकारी काम से मोटर पर जाते थे और कभी रास्ते में उन्हें निजी काम निकल आता था तब उतनी दूर के पैसे उस अनुपात से उन्होंने भत्ते में कम किए।

प्यारी बहिनो

न तो मैं कोई वैद्य हूं, न डाक्टर हूं, और न वैद्यक ही जानती हूं, बल्कि आप ही की तरह एक गृहस्थी स्त्री हूं। विवाह के एक वर्ष बाद दुर्भाग्य से मैं लिकोरिया (श्वेत प्रदर) और मासिकधर्म के दुष्ट रोगों में फंस गई थी। मुझे मासिक धर्म खुल कर न आता था। अगर आता था तो बहुत कम और दर्द के साथ जिससे बड़ा दुःख होता था। सफेद पानी (श्वेत प्रदर) अधिक आने के कारण मैं प्रति दिन कमजोर होती जा रही थी, चेहरे का रंग पीला पड़ गया था, घर के काम-काज से जी घबराता था, हर समय सिर चकराता, कमर दर्द करती और शरीर टूटता रहता था। मेरे पतिदेव ने मुझे सैंकड़ों रुपये की मशहूर औषधियां सेवन कराईं, परन्तु किसी से भी रत्ती भर लाभ न हुआ। इसी प्रकार मैं लगातार दो वर्ष तक बड़ा दुःख उठाती रही। सौभाग्य से एक सन्यासी महात्मा हमारे दरवाजे पर भिक्षा के लिये आये। मैं दरवाजे पर आटा डालने आई तो महात्माजी ने मेरा मुख देख कर कहा—बेटी तुझे क्या रोग है, जो इस आयु में ही चेहरे का रंग रुई की भांति सफेद हो गया गया है ? मैंने सारा हाल कह सुनाया। उन्होंने मेरे पतिदेव को अपने डेरे पर बुलाया और उनको एक नुस्खा बतलाया, जिसके केवल १५ दिन के सेवन करने से ही मेरे तमाम गुप्त रोगों का नाश हो गया। ईश्वर की कृपा से अब मैं कई बच्चों की मां हूं ! मैंने इस नुस्खे से अपनी सैंकड़ों बहिनों को अच्छा किया है और कर रही हूं। अब मैं इस अद्भुत औषधि को अपनी दुःखी बहिनों की भलाई के लिये असल लागत पर बांट रही हूं। इसके द्वारा मैं लाभ उठाना नहीं चाहती क्योंकि ईश्वर ने मुझे बहुत कुछ दे रखा है।

यदि कोई बहिन इस दुष्ट रोग में फंस गई हो तो वह मुझे जरूर लिखें। मैं उनको अपने हाथ से औषधि बना कर वी० पी० पार्सल द्वारा भेज दूंगी। एक बहिन के लिये पन्द्रह दिन की दवाई तैयार करने पर २॥।≈) दो रु० चौदह आने असल लागत खर्च होता है और महसूल डाक अलग है।

❋ जरूरी सूचना ❋

मुझे केवल स्त्रियों की इस दवाई का ही नुस्खा मालूम है। इसलिये कोई बहन मुझे और किसी रोग की दवाई के लिये न लिखें।

प्रेमप्यारी अग्रवाल, (३०) कुलाडा, जिला हिंसार, पूर्वी पंजाब।

मिर्गी का २४ घंटों में खात्मा तिब्बत के सन्यासियों के हृदय के गुप्त भेद, हिमालय पर्वत की ऊंची चोटियों पर उत्पन्न होने वाली जड़ी बूटियों का चमत्कार, मिर्गी, हिस्टेरिया और पागलपन के दुखमीन रोगियों के लिए अमृत दायक, मूल्य १०॥) रुपये डाक व्यय पृथक। पता—एच. एस. आर. रजिस्टर्ड मिर्गी का हस्पताल हरिद्वार।

ईस्टर्न पंजाब रेलवे

आवश्यक सूचना

शिमला आने वाले यात्रियों के लाभ के लिए निम्नांकित के मध्य दो महीने तक उपयोग में आने वाले रियायती किरायों पर फस्ट क्लास के वापिसी टिकट अब जारी किये जा रहे हैं —

(अ) कालका-शिमला विभाग पर किन्हीं भी दो स्टेशनों के मध्य।

(ब) शिमला और निम्नांकित स्टेशनों के मध्य।

दिल्ली	अमृतसर
अम्बाला कैंट	अम्बाला सिटी
जलंधर कैंट	जलंधर सिटी
लुधियाना	पटियाला
फिरोजपुर कैंट	फिरोजपुर सिटी

किरायों का विवरण और अन्य जानकारी सम्बन्धित स्टेशन मास्टरों से प्राप्त की जा सकती है।

चीफ एडमिनिस्ट्रेटिव आफीसर

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी

साप्ताहिक वीर अर्जुन

का

विजयादशमी-अंक

बहुत सजधज के साथ निकलेगा

लेखकों और कलाकारों से पूर्ण सहयोग का अनुरोध है। विज्ञापनदाता अभी से अपने लिये स्थान सुरक्षित कर लें।

विशेष विवरण की प्रतीक्षा कीजिये।

मैनेजर

अफीम बन्द होगी। ओपियम कट विलायती टिकिया के प्रयोग से घर बैठे आराम के साथ अफीम खानी बन्द हो जाएगी। आज तक पचास हजार आदमी अफ्यून छोड़ चुके हैं। नक्कालों से बचो।

मंगाने का पता— डा० ऋषीराम शर्मा, पक्की कोटफत्ता (पटियाला यूनियन)

एजेन्ट — वेलीराम एण्ड ब्रदर्स बैंक के पीछे दिल्ली।

बम्बई ४। ६० वर्षों का पुराना मशहूर अंजन

आंखों में कैसा ही धुन्ध गुबार, माड़ा, जाला, फूली, परवाल, मोतियाबिन्द, नाखूना, रोहे पड़ जाना, लाल रहना, कम नजर आना या वर्षों से चश्मा लगाने की आदत ही हो इत्यादि आंख की तमाम बीमारियों को बिना आपरेशन दूर करके 'नैनजीवन अंजन' आंखों को आजीवन सतेज रखता है। कीमत १।) रु० २ शीशी लेने से डाक खर्च माफ।

पता—कारखाना नैनजीवन अंजन, बम्बई नं० ४।

सौन्दर्य वृद्धि के लिये

आमला केश तैल

सिर और दिमाग को अपनी मनोहर सुगन्धि से प्रफुल्लित रखता है।

बिडला लेबोरेटरीज कलकत्ता

अजीर्ण और पेट दर्द के लिये

पुदीन-हरा

(REGD.)

डाबर डा० एस० के० बर्म्मन लि० कलकत्ता

साप्ताहिक

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार २ आश्विन सम्वत् २००७ [अङ्क २२

प्रतिगामियों की विजय नहीं

कांग्रेस के अध्यक्ष के चुनाव में अब कुछ लिखने की हमारी इच्छा नहीं थी। किन्तु पिछले दिनों दो एक वक्तव्य ऐसे निकले हैं, जिनके कारण इस विषय पर कुछ विचार प्रकट करने की आवश्यकता हम अनुभव करने लगे हैं। एक वक्तव्य है पंडित नेहरू का और दूसरा है आचार्य कृपलानी का। पं० नेहरू ने गहरे विचार-मन्थन के बाद एक वक्तव्य प्रकाशित किया है। इस वक्तव्य में कांग्रेस के लिये अन्तर्राष्ट्रीय, आर्थिक व साम्प्रदायिक प्रश्नों पर अपनी नीति स्पष्ट करने के लिए कहा है। इसमे कोई आपत्तिजनक बात नहीं है। कांग्रेस के प्रतिनिधि रूप में भारत के प्रधान-मंत्री को अपनी नीति पर संस्था का विश्वास प्राप्त करने का अधिकार है, इसलिए वक्तव्य के उस अंश की हम कोई चर्चा नहीं करना चाहते, किन्तु इस वक्तव्य की भूमिका में उन्होंने जो कुछ कहा है, वह विचारणीय है। उन्होंने कहा है — पिछले दिनों कांग्रेस-अध्यक्ष के चुनाव का जो परिणाम निकला, उस पर साम्प्रदायिक व प्रतिगामी शक्तियों ने मुक्तकंठ से प्रसन्नता प्राप्त की और इसलिए कांग्रेस को अपनी नीति-सम्बन्धी घोषणा स्पष्ट रूपेण कर देनी चाहिये।

दूसरा वक्तव्य है आचार्य कृपलानी का। वे टण्डनजी के प्रतिस्पर्धी थे, किन्तु वे असफल रहे। उन्होंने एक वक्तव्य में कहा है कि इस चुनाव के परिणाम से प्रगतिशील और जनतन्त्रवादी लोगों को अधिक सावधान हो जाना चाहिये। इसी सम्बन्ध में आचार्यजी का पत्र 'विजिल' लिखता है—"यदि डा० पट्टाभि सीतारमैय्या पर श्री सुभाष बोस की विजय गांधी जी के नेतृत्व में चलने वाले दक्षिण पक्षियों पर अधीर क्रांतिकारी दल की विजय थी, तो टण्डनजी की सफलता ठीक इसके विपरीत क्रांतिकारी दल की विजय न हो कर प्रतिगामी दल की जीत है। हम आगे नहीं बढ रहे हैं, इसलिए असंतोष नहीं है, हम पीछे क्यों नहीं हट रहे, इस असंतोष का प्रकाशन इस अध्यक्ष चुनाव से हुआ है।"

क्या वस्तुतः टंडनजी का चुनाव प्रतिगामिता की विजय है? 'विजिल' पत्र ने प्रकारान्तर से सरदार पटेल को भी प्रतिगामी कहा है, क्योंकि उसके शब्दों में यह चुनाव टंडन-कृपलानी का संघर्ष नहीं था, वह पटेल-नेहरू संघर्ष था। क्या वस्तुतः टंडनजी का चुनाव प्रतिगामिता का चुनाव है? यह हम मानते हैं कि टंडनजी की विजय से ऐसे कुछ लोग भी प्रसन्न हुए हैं, जिन्हें पं० नेहरू या आचार्य कृपलानी प्रतिगामी समझते हैं, किन्तु केवल यही तर्क टंडनजी के कांग्रेसी मतदाताओं को प्रतिगामी मानने के लिए पर्याप्त नहीं है। आचार्य कृपलानी ने स्वयं श्री देव को उत्तर देते हुए एक वक्तव्य में कहा था कि तीनों उम्मीदवार कांग्रेस प्रस्ताव में निर्दिष्ट नीति से बंधे हुए हैं, इसलिए नीति के भेद का प्रश्न नहीं है। वस्तुतः यह चुनाव प्रतिगामिता और प्रगतिशीलता के विचारों का संघर्ष नहीं था। यह चुनाव था केवल कांग्रेस सरकार की कुछ नीति के औचित्य के सम्बन्ध में। श्री देव कांग्रेस वर्किंग कमेटी के प्रतिनिधि के रूप में खडे हुए थे। और यदि टंडनजी खडे न होते और चुनाव केवल श्री देव और श्री कृपलानी में होता तो टंडनजी को मिले वे सब मत आचार्य कृपलानी को मिलते, जिन्हें वे प्रतिगामी बता रहे हैं। वस्तुतः टंडनजी और आचार्य कृपलानी दोनों सांस्कृतिक क्षेत्र में गांधीवादी हैं। टंडनजी ग्रामोद्योग, जीवन की सरलता, विदेशी चिकित्सा का विरोध आदि किसी बात में आचार्य कृपलानी से पीछे नहीं हैं। सच तो यह है कि यह चुनाव नेहरू सरकार की उस नीति का विरोध है, जो पाकिस्तान व भारत के सम्बन्ध में उसने अपनाई है। आचार्य कृपलानी स्वयं नेहरू-नीति के विरोधी हैं, किन्तु पिछले दिनों उन्होंने नेहरू जी से मिल कर मतदाताओं के हृदय में यह संदेह पैदा कर दिया कि वे शायद अब नेहरू जी की पाकिस्तान सम्बन्धी नीति का विरोध न कर सकेंगे। टंडनजी को और उनके समर्थकों को प्रतिगामी कहना अपनी दुर्बलता को छिपाना है। और ऐसी आलोचना कांग्रेस में अधिक संघर्ष उत्पन्न करेगी। वस्तुत श्री देव और उनके साथ आचार्य कृपलानी कांग्रेस सरकार की नीति के समर्थक माने गये और यह नीति केवल असाम्प्रदायिक, प्रगतिशील आर्थिक-नीति नहीं है, वर्तमान सरकार की अंधाधुन्ध खर्चों की नीति, गांधीवादी नीति का खुला उल्लंघन, जनता के आर्थिक कष्टों को दूर करने में असफलता आदि भी उसके चिन्ह हैं और इसके प्रति असंतोष का प्रकाशन कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने टण्डनजी को चुन कर किया है।

★

क्षतिपूर्ति का आश्वासन

भारत सरकार ने चिरकाल तक लोगों की धैर्य-परीक्षा के बाद पहली बार यह आश्वासन दिया है कि वह पाकिस्तान से आये हुए लोगों की क्षतिपूर्ति करेगी। यह घोषणा यदि आज से एक वर्ष पूर्व कर दी जाती तो शरणार्थी भाइयों मे असंतोष इतना उग्ररूप धारण न करता। किन्तु इस वक्तव्य में भी भारत सरकार ने यह स्पष्ट कर दिया है कि इस क्षतिपूर्ति का अनुपात इस बात पर निर्भर है कि सरकार को कितनी सम्पत्ति शरणार्थियों में बांटने के लिए प्राप्त होती है। परन्तु उसने अपनी घोषणा में यह स्पष्ट नहीं किया कि वह सम्पत्ति किस तरह प्राप्त होगी। यदि भारत से निकले हुए मुस्लिम शरणार्थियों की सम्पत्ति पर वह आश्वासन दे रही है, तो इससे शरणार्थियों को सन्तोष नहीं हो सकता। एक तो इसलिए कि यहां से लोग बहुत कम सम्पत्ति छोड़ कर गये हैं और सरकार ने उन्हें जाने नहीं दिया। दूसरे, जो गये भी हैं, उन्हें वापस बुलाने की सरकार चेष्टा कर रही है। यही कारण है कि जब सरकार क्षतिपूर्ति के चार लाख दावों की उम्मीद कर रही थी, उसे २१००० से अधिक दावे नहीं मिले। शरणार्थियों को तभी विश्वास मिलेगा, जब कि सरकार क्षति पूर्ति के लिये पाकिस्तान पर जोरदार प्रभाव डालने के प्रयत्न का भी वचन दे।

भारतेन्दु की शताब्दि

श्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की जयन्ती शताब्दि इस सप्ताह मनाई जा रही है। स्व० भारतेन्दु ने हिन्दी की जो सेवाएं की हैं, वे असाधारण हैं। उन्होंने हिन्दी को केवल खड़ी बोली का ही रूप देने में सफलता प्राप्त नहीं की, उन्होंने तत्कालीन साहित्य परिपाटी को भंग करके उसे नई दिशा की ओर प्रवृत्त किया। देश और समाज की विविध समस्याएं उन्हें आकृष्ट कर चुकी थीं और इसलिए उन्होंने काव्य नाटक, निबन्ध आदि सभी के द्वारा हिन्दी में नई दिशा का सूत्रपात किया। उन्होंने बीसियों नाटक लिखे — कुछ मौलिक और कुछ अनूदित। यह हर्ष की बात है कि हिन्दी संसार ने हिन्दी के साहित्यकारों का आदर करना शुरू किया है। अच्छा होता कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की इस जन्म शताब्दी पर उनके साहित्य का एक सुलभ संस्करण प्रकाशित किया जाता। आज हिन्दी संसार बहुत कुछ बदल गया है, किन्तु उसको रीतिकालीन जाल से निकालने का श्रेय भारतेन्दु को था और आज भी उनका साहित्य बड़े प्रेम से पढा जाता है।

धूम्रपान और अन्नसंकट

नव प्रकाशित आंकड़ों से प्रतीत होता है कि आगरे मे प्रतिदिन २८, ३६, २६० सिगरेटें और आगरा जिले मे १,८३,-४६,८३२ बीड़ियां पी जाती हैं। कुल मिला कर आगरा २ लाख रु० की सिगरेट बीडी प्रति दिन फूंक डालता है। कानपुर नगर मे २६ लाख सिगरेट तथा २ करोड ४ लाख बीड़िया प्रति दिन फूंक दी जाती हैं, जिनका व्यय करीब एक लाख रु० होता है। जो स्थिति आगरा व कानपुर की है, वैसी उससे अधिक बुरी स्थिति दूसरे बड़े नगरो की है। सिगरेट बीडी के साथ जलने वाली दियासलाई का खर्च इसके अलावा है। बीड़ी सिगरेट पीना पुण्य है या पाप, इस दिशा में न जाकर भी आज यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि जब देश अन्नसंकट से पीड़ित है, तमाखू की खेती में भूमि के एक बड़े खंड का लग जाना आर्थिक दृष्टि से भारत पर बहुत बडा भार है। तमाखू के व्यसन को अनुत्साहित करना सरकार का एक नैतिक कर्त्तव्य भी है। इस दिशा में नाबालिग बालकों के धूम्रपान पर प्रतिबंध समस्त देश में लगा देना देश की एक बडी सेवा होगी। देश की सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं का सहयोग भी इसमे बहुत सरलता से मिल सकता है।

नासिक से हिन्दी तार

टण्डन जी के कांग्रेस-अध्यक्ष चुने जाने के बाद हिन्दी की प्रगति निश्चित है, यह नासिक से हिन्दी में तार भेजने की व्यवस्था प्रारम्भ कर देने से भलीभांति ज्ञात हो गया है। यह पहला कांग्रेस अधिवेशन है, जहां से हिन्दी में तार भेजने की व्यवस्था की जा रही है। सरकार ने नासिक से हिन्दी में तार भेजने का निश्चय कर जहां टण्डन जी के व्यक्तित्व का आदर किया है, वहां हिन्दी पत्रों के लिए एक बहुत बड़ी सुविधा करदी है। अब अंग्रेजी न जानने वाले पत्रकार भी कांग्रेस के समाचार अपने-अपने पत्रों को भेज सकेंगे। इसके लिए सरकार का डाकविभाग प्रशंसा का पात्र है।

ब्रिटिश साम्राज्य के स्तम्भ दक्षिणी अफ्रीका के भू० पू० प्रधान मंत्री जनरल स्मट्स का देहान्त हो गया।

मध्यभारत संघ के मंत्री श्री लीलाधर जोशी स्तीफा दे कर संकट पैदा कर रहे हैं।

प्र० ट्रूमैन अमरीका का युद्ध मंत्री पद जार्जमार्शल को देने के लिये एक नया कानून बनाने पर विचार कर रहे हैं।

हैदराबाद के प्रसिद्ध रज़ाकार नेता कासिमरज़वी को अदालत ने एक पत्र संपादक की हत्या के अभियोग में आजीवन कैद की सजा दी है।

पंजाब के प्रधान मंत्री श्री गोपीचन्द भार्गव राजधानी विरोधी सत्याग्रह को शान्त करने में सफल हो गये।

सिखों के साम्प्रदायिक नेता मास्टर तारासिंह एक आपत्तिजनक भाषण के अभियोग में गिरफ्तार कर लिये गये।

नासिक के कांग्रेस अधिवेशन की स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री [illegible] नायक।

अधिवेशन के प्रचार तथा प्रकाशन अधिकारी श्री डी० सूह० पदमीत।

श्री गोविन्द मालवीय को हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति पद से ६ मास की छुट्टी दे दी गई है।

आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

श्री कौशल्या प्रभाकर

★

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र निःसंदेह आधुनिक हिंदी के जन्मदाता थे। उनके जन्म की प्रथम शताब्दि इस सप्ताह मनाई जा योग्य लेखिका ने महान साहित्यकार की हिन्दी सेवाओं का संक्षिप्त परिचय दिया है।

आज से ठीक १०० वर्ष पूर्व भारतेन्दु जी का जन्म काशी के एक सम्पन्न वैश्य कुल में भाद्र शुक्ल ५ संवत् १९०७ को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री गोपाल चन्द्र गिरधर दास था और उनकी माता का नाम पार्वती देवी था। इनके पिता भी साहित्यकार थे। उन्होंने छोटे बड़े कुल ४० ग्रन्थ लिखे। भारतेन्दु जी पर भी उनकी प्रतिभा का प्रभाव पड़ा। भारतेन्दु जी अभी ५ वर्ष के थे कि उन्होंने निम्नलिखित दोहा बनाया—

लै ब्योढ़ा ठाढ़े भये, श्री अनिरुद्ध सुजान।
बाणासुर की सेन को हनन लगे भगवान॥

भारतेन्दुजी आधुनिक हिन्दी गद्य के जनक कहे जाते हैं। वह बहु प्रतिभा-सम्पन्न लेखक थे। इनके आविर्भाव के समय हिन्दी गद्य की अवस्था अत्यन्त शोचनीय थी। मुंशी सदा सुखलाल की भाषा साधु होते हुए भी पण्डिताऊपन लिये थी, लल्लूलाल में ब्रजभाषापन और सदल मिश्र में पूर्वीपन था। राजा शिवप्रसाद का उर्दूपन तो शब्दों तक ही सीमित न रह कर वाक्य-विन्यास तक में घुसा हुआ था। राजा लक्ष्मणसिंह की भाषा विशुद्ध और मधुर तो अवश्य थी, पर आगरे का पुट उसमें कम न था। भाषा का शिष्ट निखरा हुआ रूप भारतेन्दु की कला के साथ ही विकसित हुआ। भारतेन्दु जी ने केवल हिन्दी गद्य का स्वरूप ही निर्धारित नहीं किया, बल्कि ब्रजभाषा पद्य में भी आवश्यक सुधार किये।

भारतेन्दु जी का बहुत बड़ा कार्य है। साहित्य को एक नयी दिशा में नये मार्ग पर प्रतिष्ठित करना। पश्चिमी शिक्षा के प्रचार से जनता के विचार अत्यन्त विकसित हो गये थे, शिक्षितों के मन में, देश सुधार, समाज सुधार, विधवा-विवाह आदि के भाव उत्पन्न हो चुके थे। परन्तु हमारा साहित्य अभी बहुत पीछे था, वह रीति काल के कुंजों में ही अंगड़ाइयां ले रहा था। उस समय एक ऐसे सामंजस्य-पटु, साहसी और प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकार की आवश्यकता थी, जो अपने कौशल से इन बढ़ते हुए विचारों और साहित्य में एकता स्थापित कर सके। यह कार्य भारतेन्दु जी ने किया।

भारतेन्दु भावुक कवि थे। वह सिद्ध वाणी के अत्यन्त सरस हृदय-कवि थे। अपनी लेखनी द्वारा एक तो इन्होंने अत्यन्त सरस शृंगार रस के कवित्त और सवैये लिखे और दूसरी ओर स्वदेश प्रेम से भरे हुए लेख और कवितायें। शुक्ल जी के शब्दों में "एक ओर तो वे पद्माकर और द्विजदेव की परंपरा में दिखाई पड़ते हैं और दूसरी ओर बंगदेश के मधुसूदन दत्त और हेमचन्द्र की श्रेणी में, एक ओर तो राधा कृष्ण की भक्ति में झूमते हुये नई भक्तमाल गूंथते दिखाई देते हैं और दूसरी ओर टीकाधारी बगला-भक्तों की हंसी उड़ाते तथा स्त्री-शिक्षा, समाज सुधार आदि पर व्याख्यान देते हुए पाये जाते हैं।" प्राचीन और नवीन की यह सुन्दर एकता ही भारतेन्दु की मुख्य विशेषता है। प्राचीन और नवीन के संधि स्थल पर खड़ा हो कर इन्होंने दोनों को इस प्रकार मिलाया कि नवीन प्राचीन का प्रवर्धित रूप दिखाई दे, न कि ऊपर लपेटी हुई वस्तु।

आधुनिक नाटकों के जन्मदाता

हिन्दी गद्य की भांति भारतेन्दु जी आधुनिक नाटक के भी जनक कहे जाते हैं। इनसे पूर्व रीतिकाल में कुछ नाटक लिखे तो अवश्य गये थे, पर वह केवल नाम मात्र के ही नाटक थे। भारतेन्दु जी ने दर्जनों की संख्या में नाटकों की रचना की उनके मौलिक नाटक हैं—वैदिक हिंसा हिंसा न भवति, चन्द्रावलि, विषस्य विषमौषधम्, भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी प्रेम जोगिनी, सती प्रताप और अनुवादित नाटक हैं—विद्या सुन्दर, पाखंड-विडम्बन, धनंजय विजय, कर्पूर मंजरी, मुद्राराक्षस, सत्य हरिश्चन्द्र और भारत जननी। इनमें से अधिकांश नाटकों में भारतेन्दु जी ने देश प्रेम की भावना को व्यक्त किया है। नील देवी भारत दुर्दशा आदि नाटकों में देश दशा की मार्मिक व्यंजना है। इनमें आई हुई कविताएं कहीं तो देश की अतीत गौरव गाथा का वर्णन करती हैं, कहीं वर्तमान अधोगति की क्षोभभरी वेदना व्यंजित करती हैं और कहीं भविष्य की भावना से जगी हुई चिंता इत्यादि अनेक पुनीत भाव संचार करती हैं। स्वदेश प्रेम की भावना का प्रथम दर्शन हमें भारतेन्दु की कविता में ही मिलता है—

आवहु सब मिल कर रोवें भारत भाई।
हा हा भारत दुर्दशा न देखी जाई॥

भारतेन्दु जी ने अपने नाटकों में भी समन्वय का काम किया है। उनमें न तो एक दम से संस्कृत नाटकों का प्रतिरूप है और न ही पश्चिम का अंधानुकरण। बल्कि कहना पड़ेगा कि उनके नाटक पश्चिम की अपेक्षा संस्कृत नाटकों के अधिक समीप हैं।

हरिश्चन्द्र और उनके सम सामयिक लेखकों में एक सामान्य गुण लक्षित होता है और वह है सजीवता या जिंदादिली। सब में हास्य व विनोद की मात्रा थोड़े बहुत रूप में पाई जाती है। और सब से बड़ी बात तो इन लेखकों में यह है कि उनके हृदय का मार्मिक सम्बन्ध भारतीय जीवन के विविध रूपों के साथ पूरा पूरा बना था। भिन्न भिन्न ऋतुओं में पड़ने वाले त्योहार इनके मन में विशेष उत्कण्ठा व उत्साह को जन्म देते थे जिनसे प्रभावित हो कर अनेक लेख लिखा करते थे। पश्चिम ने इन्हें प्रभावित तो अवश्य किया था पर साथ ही—

[illegible] राज सुख-साज सजे सब भारी। पर [illegible] [illegible] की बात भी इन्हें [illegible] थी।

भारतेन्दु का ध्यान ऐतिहासिक ग्रन्थों की ओर भी गया] और उन्होंने काश्मीर, कुसुम और बादशाह दर्पण नाम के दो ग्रन्थ लिखे। पंचनद और पानीपत आज भी कवि के मन का क्षोभ प्रकट कर रहे हैं—

हाय पंचनद! हा पानीपत!
अजहुं रहे तुम धरनि विराजत,
हाय चितौर! निलज तू भारी!
अजहुं खरो भारतहिं मंझारी।

पुस्तक रचना के साथ-साथ भारतेन्दु मंडल के कवियों का ध्यान पत्र-पत्रिकाओं की ओर भी विशेष रूप से गया। भारतेन्दु मंडल के सभी लेखकों—प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनारायण चौधरी, बालकृष्ण भट्ट, ठाकुर जगमोहन-सिंह, पंडित अंबिकादत्त व्यास, पंडित राधाचरण गोस्वामी आदि ने अपनी अलग-अलग पत्रिकायें निकालीं। परन्तु इन पत्रिकाओं का जीवन-काल अत्यन्त थोड़ा रहा और आर्थिक अभाव के कारण वह शीघ्र ही बन्द कर देनी पड़ीं। बिहार-बन्धु, भारतमित्र, भारत-जीवन, उचित वक्ता, दैनिक हिन्दुस्तान, ब्राह्मण हिन्दी प्रदीप आदि पत्रिकायें हिन्दी की बहुत दिनों तक सेवा करती रहीं।

दो शैलियां

भारतेन्दु युग के प्रायः सभी लेखकों की अलग-अलग व्यक्तिगत विशेषतायें लक्षित होती हैं। हर एक की अपनी अलग-अलग शैली है। भारतेन्दु में ही हम दो प्रकार की शैलियों का व्यवहार पाते हैं। इनकी भावावेश की शैली दूसरी है और तथ्य निरूपण की दूसरी। भावावेश के कथनों में वाक्य प्रायः छोटे-छोटे होते हैं और पदावली सरल बोल-चाल की होती है। भावावेश की शैली में वाक्य कुछ लम्बे होते हैं, परन्तु उनका अन्वय जटिल नहीं होता।

नाटकों और निबन्धों की ओर विशेष झुकाव रहने पर भी बंग-भाषा की देखा-देखी नये ढंग के उपन्यासों की ओर भी ध्यान जा चुका था और अंग्रेजी ढंग का प्रथम उपन्यास 'परीक्षा गुरु' इसी युग की रचना है। ला० बालकृष्ण भट्ट ने नूतन ब्रह्मचारी, सौ अजान एक सुजान आदि उपन्यास भी लिखे। भारतेन्दु ने स्वयं भी एक बंगला उपन्यास का अनुवाद प्रारम्भ किया था पर पूरा न कर सके।

हरिश्चन्द्र ने पत्र-पत्रिकाओं द्वारा भी समाज की सेवा करनी चाही। १८६८ में इन्होंने कविवचन सुधा नाम की एक पत्रिका निकाली जिसका नाम ८ संख्याओं के उपरान्त हरिश्चन्द्र चंद्रिका हो गया। भारतेन्दु ने स्त्री समाज के लिए बाला-बोधिनी नाम की [illegible] की एक पत्रिका भी निकाली।

[शेष पृष्ठ ११ पर]

भूकम्प का शिकार आसाम

गत १२ अगस्त को आसाम में आये हुये भूकम्प के बारे में अभी तक अनेकों समाचार तथा चित्र प्रकाशित हो चुके हैं, तो भी उस क्षेत्र के जिस थोड़े से भाग पर दौरा किया जा सकता है 'अर्जुन' के विशेष संवाद-दाता ने वहां पर लगभग १० दिन भ्रमण कर जो स्थिति देखी तथा जानी है, उसका आशय हम नीचे दे रहे हैं।

आसाम के भयंकर भूकम्प का आंखों देखा हाल

आसाम के भूकम्प की स्थिति को समझने के लिए वहां के भूगोल से थोड़ा परिचित होना आवश्यक है। आसाम प्रान्त की सबसे बड़ी नदी ब्रह्मपुत्र है। यह विशाल नदी भारत के उत्तर में मानसरोवर झील से निकल कर तिब्बत के पहाड़ों में पूर्व दिशा की ओर दूर तक बहने के पश्चात दक्षिण की ओर घूम कर आसाम में प्रवेश करती है। आसाम में सदिया के पास आकर इसका अंक-एक महानदी का रूप बनता है। वहां से उत्तर में इसका समस्त दीर्घकाय बने और अगम्य पर्वतों में होकर आता है। इस पर्वतीय प्रदेश में बहने वाले भाग को 'दिहांग' के नाम से पुकारते हैं और जहां से यह विशाल रूप धारण करती है, वहां से आगे इसका नाम ब्रह्मपुत्र है।

सदिया के निकट लोहित नामक नदी ब्रह्मपुत्र में आकर मिलती है। भूकम्प का सीधा धक्का तो तिब्बत के किसी अगम्य प्रदेश में लगा बताया जाता है, किन्तु आसाम का जो भाग सब से अधिक क्षतिग्रस्त हुआ है वह वाली, दिहांग तथा लोहित नदी के बीच का प्रदेश है। इसी क्षेत्र में ब्रह्मपुत्र की पश्चिम ओर बसे हुए लखीमपुर से उत्तर का प्रदेश आता और डिब्रूगढ़ से उत्तर का सारा प्रदेश भी।

अब तक ज्ञात हुए तथ्यों को संग्रह करने से यह पता चलता है कि भूकम्प का पहिला और सबसे भयानक धक्का १२ अगस्त को ७. ४० बजे (सायंकाल) आया था। यह धक्का ४॥ मिनट तक रहा और सबसे अधिक व्यापक हानि का उत्तरदायी है। किन्तु इससे भी अधिक हानि का कारण यह था कि पहिले २४ घण्टों में १२२ भूकम्प के धक्के आते रहे हैं और इनमें से अधिकांश तीव्र धक्के थे। इनमें १६ धक्के ३० सेकण्ड अथवा इस से अधिक काल तक के थे और लगभग २७ धक्के २०–२५ सेकण्ड समय के थे। यह धक्के कई बार तो इतनी तीव्रता से आये हैं कि प्रत्येक मिनट पर एक नये धक्के का रिकार्ड है।

पर्वत टकरा गये

भूकम्प के पहिले व्यापक तथा सबसे अधिक भयंकर धक्के के परिणाम स्वरूप अब तक जो समाचार प्राप्त हो सके हैं, उनके अनुसार दिहांग नदी के दोनों ओर खड़ी हुई विशालकाय पर्वतमालायें परस्पर एक दूसरे से टकरा गयीं। फल-स्वरूप दोनों ओर से अनेकों पर्वतशिखर टूट कर व चूर चूर होकर नदी के मार्ग में गिर पड़े। भूकम्प के धक्के से नदियां गायब हो गयी हैं।

नयी झीलें

इन पर्वतों के टूटकर दिहांग का मार्ग रोक लेने का परिणाम यह हुआ है कि आसाम की उत्तरी सीमा के पास दिहांग का जल रुक गया और वहां बड़ी बड़ी झीलें बन गयीं। दिहांग में वैसे ही जल अधिक मात्रा में आता है। भूकम्प के कारण और भी अधिक जल आया। फलस्वरूप बहुत थोड़े ही काल में इन झीलों ने रुके हुए जल ने अपने निकलने के नये मार्ग निकाले। दिहांग के जल ने अपने ब्रह्मपुत्र भाग में आकर मिलने के प्रयत्न में अनेकों गांव और जंगल बहा डाले हैं।

अपने लिए मार्ग बनाने में दिहांग ने कई स्थानों पर दो दो सौ फीट तक झरने बनाये हैं, इसके कारण जल की गति बहुत तेज हो गयी है। अत्यन्त वेग से बहता यह जल चित्र में दिखाये हुए दिहांग के अब तक के मार्ग के दोनों ओर के सघन वनों में से मार्ग निकालता है और मार्ग में पड़ने वाली प्रत्येक वस्तु को बहा जाता है। इस बहाव में अनेकों वृक्ष इस प्रकार के भी बह कर आए हैं, जिनके विषय में भारत सरकार के वन विभाग को कुछ भी ज्ञान न था। विशेषकर एक नये प्रकार का 'चन्दन' का वृक्ष है, जिसकी छाल दूध के समान श्वेत रंग की है। इस प्रकार बह कर आये हुये कुछ वृक्ष सरकारी अधि-कारियों के द्वारा गोहाटी में नीलाम किये गये हैं।

जिस प्रदेश में यह सब कुछ हुआ है वहां अका, अबोर, मिशमी तथा नागा जाति के लोग रहते हैं। इन चारों ही जातियों को बहुत अधिक हानि पहुंची है, यद्यपि अबोर और मिशमी का भाग इस दुर्भाग्य में और भी अधिक है। इस प्रदेश के निवासी विशेष कर बांस के मकानों में रहते हैं। जो गांव नष्ट हो गये हैं (और अधिकांश नष्ट हुये हैं) वहां के निवासी वृक्षों अथवा पर्वतों के शिखरों पर रह रहे हैं।

यह भी ज्ञात हुआ है कि इस ओर भारत सरकार की पांच सैनिक चौकियां थीं। उनमें से तीन चौकियों के सैनिक दलों का पता लग सका है। भूकम्प का पहिला धक्का आते ही (७. ४० बजे) तिब्बत की सीमा पर स्थित नं० १ चौकी से बेतार के तार द्वारा भेजा गया समा-चार पासीघाट के राजनीतिक आफीसर को प्राप्त हुआ था। उस सैनिक दल में

(शेष पृष्ठ २१ पर)

स्थिति, कल्पना से भी भयंकर

सहायता-कार्य में सबसे बड़ी बाधा—बाढ़

लखीमपुर में जल प्रलय का दृश्य— वायुयान से लिया गया चित्र

एक मौलिक प्रश्न

हमारी राष्ट्रीयता का आधार

★ श्री बलराज मधोक

आज भारत के सामने बहुत सी समस्याएं हैं। इन में से कुछ पुरानी हैं और कुछ स्वतन्त्रता के बाद की उपज हैं। देश के सभी लोग क्या जनता और क्या नेता और सरकार इन समस्याओं में उलझे हुए हैं और अपने अपने ढंग से उनको सुलझाने का प्रयत्न कर रहे हैं या केवल सुझाव प्रस्तुत कर रहे हैं। परन्तु एक बात, जो स्पष्ट दीख रही है, वह है कि समस्याओं का मुकाबला करने और उनका सुलझाने के लिए आज कोई सम्मिलित प्रयत्न नहीं हो रहा। इसके कारण कई हैं। परन्तु मेरे विचार में इसका एक प्रमुख कारण यह है कि हम भारतीय इस एक मूल-भूत बात पर भी एक मत नहीं है कि हम हैं कौन, हमारा राष्ट्र क्या है और हमारी राष्ट्रीयता का आधार क्या है?

यह एक मौलिक प्रश्न है, क्योंकि आज के युग में राष्ट्रीयता ही एक ऐसी शक्ति है, जो किसी भी देश के लोगों को अपनी समस्याओं का सम्मिलित रूप में मुकाबला करने के लिए प्रेरित कर सकती है। यही एक शक्ति है, जो कि हरएक समाज और राष्ट्र में पाये जाने वाले विभिन्न सम्प्रदायों, राजनैतिक दलों तथा साम्यवादी प्रचार के कारण पैदा हुए विभिन्न आर्थिक वर्गों को राष्ट्र के सामूहिक हित के लिए इकट्ठा कर सकती है और देश के लोगों में देश के लिए कठिनतम बलिदान देने की भावना उत्पन्न कर सकता है। जिन देशों मे विशुद्ध राष्ट्रीयता की भावना जागृत हो चुकी है, वे देश अपने अन्दर के परस्पर विरोधी दलों तथा पार्टियों के होते हुए भी एक हैं और एक रह सकते हैं और अपनी सभी देश-व्यापी समस्याओं का सफलता से मुकाबला कर सकते हैं। परन्तु जहां यह भावना जागृत नहीं हुई या जहां इस भावना को जागृत करने के लिए आवश्यक आधार के विषय में ही झगड़े हो रही हो, वहां का भविष्य कदापि उज्ज्वल नहीं हो सकता।

इंगलैंड की उन्नति का रहस्य

इस तथ्य को पुष्टि संसार के उन्नत तथा अवनत राष्ट्रों के जीवन पर एक दृष्टि डालने से तुरन्त हो सकती है। आज के पश्चिमी संसार में इंगलैंड बहुत ही उज्ज्वल राष्ट्र है और पूर्व में कुछ देर तक जापान रहा है। दोनों के बढने का रहस्य वहां के लोगों में विशुद्ध राष्ट्रीयता के आधार पर पैदा देशभक्ति है। इंगलैंड में आज भी कैथोलिक, प्रोटेस्टैंट मैथाडिस्ट इत्यादि बहुत से सम्प्रदाय हैं। वहां बहुत से राजनैतिक दल भी हैं। कन्जरवेटिव दल लेबर दल का विरोधी है। वर्किंग सदा दूसरी सरकार को गिराने की चिन्ता में लगा रहता है। परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी वहां के सभी दलों व सम्प्रदायों के अनुयायी इस बात को समझते हैं कि वे पहिले अंग्रेज हैं, एक राष्ट्र हैं और अपने राष्ट्र के हितों की रक्षा के लिये वे किसी भी विपत्ति के समय सब इकट्ठे हो कर काम करने के लिए सदा उद्यत रहते हैं। इसका कारण यह है कि वे समझ चुके हैं कि उनका राष्ट्रीय जीवन उनके सॉम्प्रदायिक तथा दलगत जीवन से विभिन्न है और उनसे ऊपर है। उसका आधार सारे राष्ट्र की साझी परपराए, दुःख सुख, स्मृतिया और भविष्य के लिए महत्वाकाक्षाए हैं। वे समझते हैं कि यदि उनके राष्ट्रीय जीवन का स्रोत अक्षुण्ण रूप में बहता रहा, तो उनके अंदर के दल और सम्प्रदाय राष्ट्रहित के लिए बाधक नहीं बन सकते। इसलिये वे सम्प्रदायों या दलों के विरुद्ध लट्ठ लेकर नहीं फिरते और न ही उन्हें भला बुरा कहते हैं। वे दलगत स्वार्थों को छोड़ते नहीं परन्तु उनको अपने सामूहिक राष्ट्रीय स्वार्थ से टकर नहीं खाने देते और जब कभी इस प्रकार की टक्कर की सम्भावना दीख पड़ती है तो वे अपनी राष्ट्रीयता के साथ आंख मिचौनी खेलने की बजाय तुरन्त अपने दलगत अथवा साम्प्रदायिक स्वार्थ को छोड़ कर राष्ट्र हित का चिन्तन करते हैं। यह इंगलैंड के उज्ज्वल तथा प्रभावशाली राष्ट्रीय जीवन का रहस्य है और यही जापान के उत्कर्ष का कारण था।

> समस्त देश को एक सूत्र मे ग्रथित करने वाली राष्ट्रीयता को भूल कर हम भारतीय अपने अपने सम्प्रदाय, राजनीतिक, और आर्थिक वर्गों के हित को ही सर्वोपरि समझते हैं और इसीलिए राष्ट्र की समस्याओं के सुलझाने मे जनता व सरकार व विभिन्न दलों का परस्पर सहयोग प्राप्त नहीं होता। इस खतरनाक स्थिति को देख कर लेखक ने गम्भीर चेतावनी दी है।

अन्तर्राष्ट्रीयता से विरोध नहीं

यह राष्ट्रीयता की भावना किसी भी प्रकार अन्तर्राष्ट्रीयता के विरोध में नहीं आती। अन्तर्राष्ट्रीयता के लिये प्रभावशाली राष्ट्रीयता आवश्यक सीढ़ी है। केवल बलवान् और सुसंगठित राष्ट्र ही अन्तर्राष्ट्रीयता को योग दे सकते हैं। निर्बल राष्ट्र जो अपनी समस्याओं को ही नहीं सुलझा पाते, वे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में क्या प्रभाव रख सकते हैं? [illegible] इतिहास और आज का अनुभव इस बात के साक्षी हैं कि केवल बलवान, संगठित और प्रभावशाली राष्ट्र ही अन्तर्राष्ट्रीय जीवन को प्रभावित कर सकते हैं। यह प्रभाव अच्छा भी हो सकता है, और बुरा भी। यदि सद्भावना और अच्छी प्रवृत्तियों वाले सुदृढ राष्ट्रों का अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रभाव होगा तो अन्तर्राष्ट्रीय जीवन अच्छा बन सकता है और संसार में शान्ति और सुख पनप सकते हैं, अन्यथा अन्तर्राष्ट्रीय जीवन का जो आज हाल है, वही रहेगा। इसलिये अन्तर्राष्ट्रीयता के लिये भी यह आवश्यक है कि सद्भावना वाले राष्ट्र अपने आप को बलवान बनायें, ताकि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उनका प्रभाव बढ़ सके।

भारत एक ऐसा देश है जो कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सद्भावना और शान्ति के लिये बहुत कुछ कर सकता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि भारत ने अपने उज्ज्वल काल में अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में में बहुत उत्तम प्रभाव स्थापित किया था और आज भी इसकी संस्कृति इस बात की गारंटी है कि भारत संसार भर में शान्ति और सद्भावना का सूत्रधार बन सकता है। परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में कोई चमत्कार दिखाने से पहिले भारत को अपने राष्ट्रीय क्षेत्र में चमत्कार दिखाने होंगे। भारत को पहले बलवान, सुसंगठित और समृद्ध बनना होगा। यह तभी सकता है, जब भारत अपने सन्मुख उपस्थित विभिन्न समस्याओं को सफलतापूर्वक सुलझा सकेगा। और यह तब तक सम्भव नहीं, जब तक कि भारत के सब निवासियों में विशुद्ध राष्ट्रीयता की भावना उत्कट रूप में जागृत न हो। राष्ट्रीयता की भावना ही साधारण मनुष्यों, और दलों को भी दलगत स्वार्थ से ऊपर उठने की प्रेरणा दे सकती है।

राष्ट्रीय भावना का केन्द्र बिन्दु

परन्तु दुर्भाग्य से अभी तक भारत में राष्ट्रीय भावना का सर्वथा अभाव दीखता है। आज भारत अपने दलगत या साम्प्रदायिक झगड़ों में इतना फंसा हुआ है कि इसे अपने राष्ट्रीय स्वरूप के विषय में भी आज स्पष्ट होने क्या है। यहां राष्ट्रीयता के [illegible] आधार के विषय में विभिन्न मत फैल गये हैं। हर एक दल अपने आप को राष्ट्रीय और अन्य सब दलों को साम्प्रदायिक और स्वार्थी समझने लग पड़ा है। इस कारण राष्ट्र को सुसंगठित और बलवान बनाने का प्रमुख तत्व और आधार हमारी आंखों और मस्तिष्क से ओझल हो चुका है या हो रहा है। इसके फलस्वरूप, भारतीय समाज के विभिन्न दलों व सम्प्रदायों का राष्ट्रीय केन्द्रीय बिन्दु, जिस पर सभी दल व सम्प्रदाय राष्ट्रहित के लिए इकट्ठे हो जांय एक विवाद का विषय बन गया है। यह केन्द्रीय बिंदु निश्चय ही एक हो सकता है, बहुत से नहीं। उसी की स्पष्ट कल्पना होने से भारतीय जनता में वह विशुद्ध राष्ट्रीयता को भावना उत्पन्न की जा सकती है जो कि इसे अपने आप को पहिचानने और देश तथा राष्ट्र हित के लिये दल तथा सम्प्रदाय के भाव से ऊपर उठ कर कुछ करने के लिये तैयार कर सकती हैं। इस राष्ट्रीयता के भाव को जागृत करना आज के भारत की प्रथम आवश्यकता है। एक बार उसके जागृत हो जानेके पश्चात देश की प्रगति की राह में लोग अड़चन न बन सकेंगे, क्योंकि वे भी देश हित को अपने दलगत हित से ऊंचा देंगे। ऐसा हो जाने के पश्चात् देशवासी चाहे वे किसी भी वाद या दल के अनुयायी बनें, देश के शत्रु नहीं बन सकेंगे। परन्तु यह भावना जागृत तभी की जा सकती है, जब यह स्पष्ट हो जाय कि हमारी राष्ट्रीयता का आधार क्या है। आज इस विषय में देश की साधारण जनता में भी और अपने आप को राष्ट्रीय कहने वाली कांग्रेस के अन्दर भी घोर संघर्ष चल रहा है। परन्तु देश की राष्ट्रीयता का विशुद्ध आधार न राजनैतिक वादविवाद का विषय बन सकता है और न दलगत स्वार्थ का। वह एक ही है और एक ही रहेगा। उसके ठीक स्वरूप को समझना आज की प्रमुख आवश्यकता है और उसके आधार पर अपने राष्ट्रीय जीवन का निर्माण करना आज की परिस्थिति का मौलिक प्रश्न और समस्या है।

रूस के एक करोड़ गुलाम मजदूर

★ श्री हरबर्ट 'ट्रेसी'

करीब एक करोड़ रूसी आज बलात् श्रम के शिविरों में कानून के जोर पर यंत्रणामय जीवन व्यतीत कर रहे हैं— किन छोटी बातों पर आपको भी पकड़ जबर्दस्ती मजदूरी के इन शिविरों में, जहां जीवन की कोई सुविधा नहीं है, भेज दिया जायगा, यह इस लेख में देखिये —

कम्यूनिस्ट नियंत्रित वर्ल्ड फेडरेशन आफ ट्रेड यूनियन्स् (विश्व ट्रेड यूनियन संघ) ने यह सुनाई दिया कि रूसी ट्रेड यूनियन् प्रतिनिधियों के सामने इस राक्षसी कुरीति के सम्बन्ध में खुली बहस नहीं की जा सकती। इसने अन्य देशों के प्रतिनिधियों — विशेषतया अमेरिका, स्कैन्डिनेविया, ब्रिटेन और राष्ट्र-समूहीय देशों से आने वाले प्रतिनिधियों की इस धारणा को बिलकुल पक्का कर दिया कि रूसी ट्रेड यूनियन ने स्वतन्त्र, स्वाधीन और कामकाजियों के हितों की रक्षा में समर्थ जनतन्त्रात्मक संगठन नहीं हैं।

यही बात थी, जिसके कारण अमेरिकन फेडरेशन आफ लेबर ने विश्व-संघ से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया था। किन्तु इसी ट्रेड-यूनियन से अन्तिम सम्बन्ध विच्छेद और अन्तर्राष्ट्रीय स्वतन्त्र ट्रेड यूनियन महासंघ की स्थापना के लिए १९४९ के अन्त में हुए स्वतन्त्र-संसार के प्रथम सम्मेलन में ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत हुआ, जिसमें यह दृढ़तापूर्वक घोषित किया गया था कि रूस और केम्लिन तथा पूर्वी यूरोप के कम्यूनिस्ट-शासित देशों की यूनियनें कामकाजियों पर पुलिस जैसी कार्रवाई करने के राज्यसाधन हैं। इस प्रस्ताव में कामकाजियों के शोषण, नजरबन्दी शिविरों और बलात्श्रम शिविरों जैसी पद्धतियों के अतिरिक्त कामकाजी दस्तों (यूनिटों) के सैनिक-संगठन और नागरिक अधिकारों की हत्या आदि की कड़ी निन्दा की गई थी।

संयुक्त राष्ट्रसंघ और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-संगठन दोनो ही कम्यूनिस्ट अधिनायकतन्त्र-शासनों के अन्तर्गत दासता की भयंकर वास्तविकता का पता लगाने में जुट गये हैं। क्योंकि रूस और उसके कठपुतली देशों में एक ऐसी बलात्श्रम पद्धति प्रचलित हो चुकी है, जो जारशाही रूस की दासवृत्ति की अवस्थाओं से भी बदतर है। यह बात रूस और चैकोस्लोवाकिया के सरकारी प्रकाशनों तथा अन्य साधनों से उद्धृत देकर सिद्ध भी का चुकी है। संयुक्त राष्ट्रीय आर्थिक और सामाजिक परिषद् की बैठकों में हुई [illegible] में ब्रिटेन के प्रतिनिधि मंडल ने बलात्श्रम के अनेकों नए प्रमाण दिये थे। इस वक्तव्य में ब्रिटिश सरकार का व्यक्तमत यह था कि रूस में बलात् तथा अधूरी मजदूरी पर नियुक्त श्रमिक पद्धति और आजकल रूसी शासित देशों तथा पूर्वी जर्मनी में भी इस पद्धति का अनुसरण एक अत्यन्त शोचनीय मामला है। इसलिए स्वतन्त्र सरकारों के अलावा विश्व के सभी स्वतन्त्र लोगों को इस पर अच्छी तरह से गौर करना चाहिये।

बलात्श्रम प्रयोग का सब से बड़ा दोष है कि यह एक ऐसी कानूनी तथा प्रशासकीय उपबन्धों पर आधारित है, जो रूसी दंड कोड के स्थायी अंग है। रूस के शुभचिन्तक बहुत से ट्रेड यूनियन वाले ने यह सोच कर अपने को सांत्वना दे रखी है कि युद्धबन्दियों को आवश्यक अनुशासन के अन्तर्गत केवल नियुक्त करने और राष्ट्रीय कानून भंग करने वाले अपराधियों से सुधारक उपयोगी कार्य लेने का ही अर्थ बलात्श्रम है। लेकिन इसके अलावा रूसी कानून की कठोरता भी आधुनिक युग की एक अनोखी बात है, क्योंकि दंडकोड तथा राजनैतिक तथा अराजनैतिक 'अपराधों' के लिए भी बलात्श्रम का दंड लागू करता है।

आखिर किन अपराधों पर ?

इन 'अपराधो' मे रूससे फरार होने वाले किसी सैनिक के किसी परिवार सदस्य की सहायता करना और अधिकारियों को ऐसी फरारी की तैयारी की सूचना न देना भी सम्मिलित हैं। 'अन्तर्राष्ट्रीय बुर्जुआों' के किसी विभाग से सम्बन्ध रखना, किसी विदेशी राज्य या उस राज्य में किसी जनसमूह के प्रतिनिधियो से सम्बन्ध स्थापित करके प्रभाव डालना राजभेद, के रूपमें आर्थिक सूचना एकत्रित करना या बाहर भेजना और प्रचार अथवा आन्दोलन करना (जिसमें केवल शासन को 'दुर्बल' बनाने वाले साहित्य का वितरण भी सम्मिलित है) इत्यादि बातें भी 'दण्डनीय' अपराध हैं। इ'ग्लैण्डवासी इस प्रकार की किसी कार्रवाई में भाग लेना अथवा जनता की धार्मिक या राष्ट्रीय भावनाओ को भड़काना भी एक 'जुर्म' है। ऐसी कार्रवाइयां चलाने की तैयारियों की विश्वसनीय जानकारी अधिवेदित करने में चूकना, किसी यातायात कर्मचारी द्वारा यातायात कानून कायदों का उल्लंघन, अन्तर्राष्ट्रीय वायु उड़ान नियम तोड़ना (रूस के अन्दर और बाहर की उड़ान और अधिकृत वायुमार्गों को छोड़ना) आदि अन्य 'अपराध' हैं। राज्य सीमा को गैर कानूनी तौर से पार करने में सहायता देना और धार्मिक स'स्थाओं पर लागू विनियमों का खंडन भी 'दंडनीय' अपराध है।

धार्मिक संस्थाएं शिकंजे में

यह बात बिलकुल अविश्वसनीय होते हुए भी सच है कि रूसी विधान धार्मिक स'स्थाओं को पारस्परिक सहायता-निधियें जारी करने या उत्पादकों के स'घों या उनके सदस्यों को भौतिक सहायता देने, अथवा विशेष प्रार्थना-सभाओं या बच्चों, तरुण, महिलाओं, समूहो, मंडलोंकी अन्य बैठकें बुलाने, और मनोरंजन समारोह, बाल क्रीडा-स्थलों, सार्वजनिक पुस्तकालयों वाचनालयों या चिकित्सालयों के स'गठन की भी आज्ञा नहीं देता। धर्म प्रचार चाहे वह कैसा भी हो राज्य, सामाजिक या प्राइवेट शैक्षणिक स'स्थाओं में वर्जित होता है।

निरी गुलामी

जो कोई भी रूसी कोड के किसी अनुच्छेद का उल्लंघन करता, है, उसे बलात्श्रम शिविरों मे 'एक नागरिक कर्त्तव्य के रूपमें काम सिखाया जाता है। १८ और ६० की आयु के बीच

(शेष पृष्ठ २२ पर)

अनाचार व भ्रूणहत्या में सहायक ये पापी......

इन दिनों भारत में शायद ही कोई ऐसा शहर हो, जहां स्त्रियों का अवैध व्यापार असाधारण रूप से न बढ़ गया हो। दूसरे शहरों की बात जाने दीजिये, काशी में ही आज तक जितने चकले आबाद हैं, जितने प्राइवेट हाउस चल रहे हैं, काशी के इतिहास में शायद कभी रहे हों। यहां तक कि पिछले द्वितीय महायुद्ध के दिनों में जब कि इसकी खुली छूट थी, सुरा सुंदरी की कोई कीमत नहीं रह गई थी। उन दिनों में आज जैसी भयावह स्थिति नहीं थी। काशी के प्राइवेट हाउसों की ठीक-ठीक संख्या बतलाना तो कठिन है, पर इसमें ज़रा भी अतिशयोक्ति नहीं है कि आज काशी में कोई गली या मुहल्ला शायद ही बचा हो, जहां दो चार गुप्त और प्रकट 'प्राइवेट हाउस' न चल रहे हों।

काशी के ये अड्डे

वेश्याओं की बस्ती बढ़ते-बढ़ते कचौड़ी, नमकी और बांस फाटक पहुंच जाना चाहती है। विगत वर्ष तत्का-लीन शहर कोतवाल श्री मिसल ने इस दिशा में नगण्य-सा प्रयत्न किया था। फलस्वरूप दशाश्वमेध, अगस्तकुण्डा और टेढ़ी नीम आदि के कुछ प्राइवेट हाउस कुछ दिनों के लिए वीरान हो गये थे। पर अब फिर वही स्थिति है। यदि स्थानीय अधिकारी ईमानदारी से प्रयत्न करें — यह समझ कर काम करें कि खाने-कमाने के और बहुत से रास्ते हैं, औरतों की कमाई का हिस्सा न लेने से कोई विशेष नुकसान नहीं होगा, तो काशी का यह कलंक दूर किया जा सकता है।

आजकल तो 'प्रायवेट हाउसों' का काम काशी के अधिकतर होटल भी करते हैं। कहा जाता है कि इन तथाकथित होटलों में आजकल यही हो रहा है। होटल का साइनबोर्ड लगा कर वे व्य-भिचार के अड्डे खुले आम चलाये जाते हैं। यह कोई छिपी बात नहीं है। काशी के अधिकतर नागरिक इन तथाकथित व्य-भिचारालयों से भलीभांति परिचित हैं। पर बेचारे दिल मसोस कर रह जाते हैं कि कहीं शिकायत करने का फल केवल यही होगा कि शहर में इज्जत आबरू बचा कर रहना कठिन हो जायगा। इन अड्डों से संबंधित गुण्डे रहना दूभर कर देंगे और पुलिस भी उन्हीं की सहायता करेगी, क्योंकि इस कमाई में उसे भी पर्याप्त 'हिस्सा' मिलता है।

दिल्ली में

पिछले कुछ सालों में दिल्ली में भी स्त्रियों व बालकों का अवैध व्यापार बढ़ रहा है। राजधानी में वेश्याओं की ठीक संख्या बताना यद्यपि कठिन है, तथापि कम से कम ५ हजार वेश्याएं तो होंगी ही। हौज काजी में व्यभिचार के ऐसे २०१ अड्डे हैं। युद्धकाल में भी, जब नैतिकता और मर्यादा काफी शिथिल हो चुकी थी, समस्या आज जितनी विकट न थी।"'१२—१३ वर्ष की कन्यायें जिन्हें बेच दिया जाता है, आज गुप्त रोगों से ग्रस्त हो रही हैं।' यह समाचार दिल्ली के एक प्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक में प्रकाशित हुआ था। यह अव-स्था केवल दिल्ली की नहीं है, प्रायः सभी प्रांतों में और विशेष कर बड़े नगरोंमें यह समस्या भीषण रूप से विकट होती जा रही है।

नैतिकता का नाश

पिछले महायुद्ध ने दुनिया के अन्य देशों की भांति भारत के भी नैतिक धरा-तल को झकझोर दिया था। अमेरिकन व ब्रिटिश सैनिकों की कामुकता, देश में बढ़ती हुई मंहगाई तथा भौतिक जीवन के आकर्षण ने हमारा आदर्श-सम्बन्धी नैतिक दृष्टिकोण ओझल कर दिया था।

जब हम स्वतन्त्र भी हुए, तब देश विभाजन की आंधी और उसके साथ होने वाले रक्तपात और अमानुषिक नृशंस अत्याचारों ने देश के एक बहुत बड़े भाग में नैतिक मर्यादा की भावना ही नष्ट कर दी। लोगों ने खुल कर नारी-त्व का घोर अपमान आम किया, उसे अपनी कामुकता की अग्नि में भस्म कर दिया। यद्यपि देश-विभाजन के साथ होने वाला वह अमानुषिक रक्तपात समाप्त हो चुका है, किन्तु नैतिक पतन का घोर दुष्परिणाम अपने पीछे छोड़ गया है। दिल्ली के हौजकाजी के व्यभिचार के २०१ अड्डों में से १८८ में पाकिस्तान से भागी हुई अनाथ स्त्रियां हैं, जो अपनी पेट की ज्वाला शांत करने के लिए पाप कर्म में लिप्त होने को विवश हैं।

सिनेमा का पाप

हमारी शिक्षापद्धति इतनी दूषित और विनाशक हो गयी है और दूसरी ओर कोढ़ में खाज की तरह ये सिनेमा वाले बची,खुची शिक्षा पूरी कर देते हैं। सिनेमा के अश्लील गाने, कामुक दृश्य देखकर नवयुवक और नवयुवती उसी कल्पना और अनुभूति की कामनाओं में लिप्त हो जाते हैं और धीरे-धीरे जब उनका पूर्णतः पतन हो जाता है तो उच्छृङ्खल जीवन व्यतीत करने के सिवा और उपाय ही क्या रहता है ? इस तरह के पापाचार में लिप्त लोगों में आधे प्रतिशत व्यक्ति सिनेमा से पीड़ित ही मिलेंगे।

सिनेमा के अश्लील और कामुक दृश्यों का जो परिणाम होता है, वह इतना अनिष्टकारी और भयावह होता है कि उसकी कल्पना भी दुःखद मालूम होती है। पर यह सत्य है। यहां ऐसे भी लोग हैं जिन्होंने इससे भी लाभ उठाने का प्रयत्न आरंभ कर दिया है। प्रतिदिन समाचार पत्रों में, पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले 'मासिक खोल' गर्भ न ठहरेगा आदि विज्ञापन ऐसे ही व्यापा-रियों के हैं।

ये भयंकर अपराधी

कहा जाता है कि गर्भपात करना, कराना या उसमें सहायक होना गम्भीर अपराध है और भारतीय दण्ड विधान में इसके लिए कठोर दण्ड व्यवस्था है। इस अपराध में कुछ लोगों के दण्डित होने का समाचार भी यदाकदा पत्रों में प्रकाशित होता है। परन्तु हमारी यह दृढ़ धारणा है कि इन विज्ञापन दाताओं की कृपा से प्रतिदिन हजारों भ्रूण हत्याएं होती हैं। पर यह बात हमारी समझ के बाहर है कि भ्रूण हत्या के लिए स्पष्ट प्रेरित करने वाले ये विज्ञापनदाता दण्डित क्यों नहीं किये जाते ?

इनके विज्ञापनों में स्पष्टतः यह लिखा रहता है कि 'बन्द मासिक धर्म खोलने की दवा—खबरदार गर्भवती स्त्री इस्तेमाल न करे। गर्भ गिर जायगा।' ऐसे विज्ञापनों को हम गर्भ गिराने की दवा का विज्ञापन और इनके विज्ञापकों को भ्रूण हत्यारों के अतिरिक्त और कुछ मानने के लिए कैसे तैयार हों ? ये विज्ञापन अपनी स्थिति इतनी स्पष्ट कर देते हैं, कि इन पर दो मत हो ही नहीं सकता।

इस तरह विज्ञापन करके समाज में अनाचार फैलाकर अपना पेट पालने वाले ये खूंखार भेड़िये क्या समाज में बने रहेंगे? एक ही दिन के दो तीन हिन्दी दैनिकों में इस तरह के २४ विज्ञापन मैंने देखे हैं। उनमें से सब की भाषा करीब करीब एक आशय की है कि उनकी दवा से गर्भ गिर जाता है। कुछ उदाहरण देखिये—

गर्भ न रहेगा

'यदि औरतों की बीमारी कमजोरी या किसी ऐसी वजह से जो सन्तान पैदा करना नहीं चाहती हों वे ...... [illegible] सेवन करावें। इससे गर्भ रहना बन्द हो जायगा और [illegible] भोग [illegible] नहीं होगा।'

'सब प्रकार से बन्द मासिक धर्म को फौरन खोलकर साफ लाने की दवा। खबरदार ! गर्भवती स्त्री इस्तेमाल न करें, वरना गर्भ गिर जायगा।'

गर्भ न ठहरेगा

'यदि गरीबी, बीमारी, अथवा और किसी कारण से अधिक बच्चे पैदा करना न चाहते हों तो हमारी दवा.............. का व्यवहार करें। इससे गर्भ न ठहरेगा, मासिक धर्म नियमित होता रहेगा।'

मासिक खोल

'हर प्रकार के बन्द मासिक धर्म को बिना तकलीफ खोलकर नियमित रूप से लाने की सर्वोत्तम दवा खबरदार, गर्भ-वती का गर्भपात हो जावेगा।'

बन्द माहवारी के लिए

'हमारी दवा प्रयोग करें। यह वह दवा है जिसे किसी भी प्रकार बन्द हुई माहवारी फौरन चालू हो जाती है (अर्थात्) चेतावनी गर्भवती स्त्रियां इसका सेवन न करें क्योंकि गर्भपात हो कर ऋतुस्राव फिर जारी हो जाता है।'

इन सब विज्ञापनों में गर्भवती को चेतावनी देने का अर्थ विज्ञापक बहुत अच्छी तरह जानते हैं। गर्भवती यह विज्ञापन पढ़ कर यह विश्वास कर लेती है कि यह दवा उसे गर्भपात में अवश्य सहायक होगी। साधारण गृहस्थ स्त्रियों की अपेक्षा दुराचारमय जीवन व्यतीत करने वाली स्त्रियां ही इन औषधियों का प्रयोग अधिक करती हैं। —संसार

कहानी

चोर

श्री आनन्दकिशोर 'जैन'

बहुत सर्दी थी। रामदीन का कहना था कि कहीं ओले पड़े थे। यदि उस पर विश्वास किया जाये तो आकाश पर बादल छाना और ओले पड़ना एक बात मानी जायेगी। इसका कारण भी था। गर्मियों में जो वह जगह जगह से फटी चादर ओढ़ता था, जाड़ा आते ही उतार देता था। उसका कहना था कि वह जाड़ा सहने का अभ्यास करता था। फिर भी भीषण सर्दी में लोगों ने उसे दांत बजाते और कुछ लोगों पर इसका दोष मंढकर गाली देते हुए सुना था। कभी कभी वह जंगल से लकड़ियां बटोर लाता और नीम के पेड़ के नीचे उसकी आग तापा करता और उसकी त्यागी हुई, पत्नी, लड़की और लड़का—सब एक में घुलीमिली हो कर।

वह जिन लोगों को गालियां देता था, उनमें हमारी हवेली के निवासी भी एक थे। फिर भी पल्लेदारी में उसे सदा सदा बुलाया ही होता था।

उस दिन तो सचमुच कहीं ओले ही पड़े होंगे और वह हवेली के सामने नीम के नीचे बैठा आग ताप रहा था। तभी बीरू आशीर्वाद की गाड़ी खटर पटर करती हुई हवेली के दरवाजे पर आ खड़ी हुई। बैलों ने ज़ोर से सिर हिला कर घंटियां बजाईं। मैंने अंगने में से सिर निकाल कर देखा, तो चाचा जी कम्बल से धूल झाड़ते हुए गाड़ी के ऊपर से उतरते दिखाई दिए।

मैं जल्दी से नीचे उतर कर आया। गाड़ी पर बहुत सारी बोरियां लदी थीं। मैंने प्रश्नसूचक निगाह चाचाजी की ओर उठाई। उन्होंने उसका कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रकार के मूक प्रश्नों का वह कभी उत्तर नहीं देते। इसे वह भावुकता नहीं गवारा समझते हैं। विशुद्ध कारोबारी आदमी को अपने काम से काम रखना चाहिए। इसीलिये पूछने पर भी उनसे कभी ढंग का उत्तर मिलने की आशा नहीं होती, फिर भी मैंने पूछा—

'क्या है?'

'गेहूं हैं,' उन्होंने कहा।

मैं समझा नहीं। गेहूं हैं तो उन्हें खाने होंगे, रखने होंगे या बेचने होंगे और उसके लिए उन्हें घर में रखना है, दुकान पर रखना है या उस तैखाने में जहां पर चिड़िया भी पर नहीं मार सकती, और की कौन कहे।

वह बोलना कभी नहीं भलाते। बोले, 'आदमियों को बुला।'

मैंने आदमियों के लिए इधर उधर नज़र दौड़ाई तो केवल रामदीन दिखाई दिया, गाड़ी की ओर टुकुर टुकुर देखता हुआ आगे से अलाव सेंक रहा था। क्या मतलब है, मैंने सोचा। मैंने पास जाकर रौब से कहा, 'क्यों बे, दिमाग चढ़ गये हैं क्या! जानता है कि आसपास कोई आदमी नहीं है, ठण्डा ही होगा, तो भी बैठा बैठा ताक रहा है!'

वह कुछ कहने ही वाला था कि चाचाजी को अपनी ओर ताकते हुए देख पहले उठा फिर बोला, 'जब आप चढ़ गये, रहना दूभर हो गया तो दिमाग चढ़ते क्या देर लगती है। हम लोगों का दिमाग आप लोगों की तरह आज़ाद थोड़े ही है कि अपनी मरज़ी चढ़े उतरे।'

मैं पी गया, क्योंकि वह चाचा जी के पास तक पहुंच गया था और चाचा जी और वह एक दूसरे को ज़रूरत से ज़्यादा अच्छी तरह समझते हैं। बीरू ने बैलों को खोल कर पेड़ से बांध दिया।

गेहूं की बोरियां रामदीन और बीरू पिछले खंड में रखने लगे। ऊपर छज्जे से सत्तू अम्मा ताक रहा था कि यह लोग भूत वाले घर में घुस कर वापस कैसे निकल रहे हैं। पिछले खंड के तीनों कमरे सुनसान पड़े थे क्योंकि दिन में भी वहां लालटेन लेकर घुसा जाता था और इस पर भी उसमें रखी बोरियां दिखाई दे जाएं या ढूंढी जा सकें, इसमें शक था। अब भी किसन नौकर हाथ में लाल-टेन लिए उन्हें बता बता कर बोरियां रखवा रहा था। कुल दस बोरियां थीं। काम ख़तम हुआ और रामदीन और बीरू आशीर्वाद ज़ोर ज़ोर से हांफते हुए चाचा जी के सामने मज़दूरी के लिये खड़े हो गये।

मुझे लगा कि वह लोग ज़रूरत से ज़्यादा ज़ोर से हांफ रहे थे। मुझे यही बताया गया था कि यह लोग इसी तरह मज़दूरी की ओर लाचारी करते हैं। फिर भी इनका वास्ता चाचा जी से पड़ा था। वही एक दूसरे को खूब समझने वाला मामला था। उन्होंने अठन्नी अठन्नी उन दोनों के हाथों पर रख दीं। बीरू बैलों के भूसे के बहाने पहले ही कुछ ले मरा था। किन्तु रामदीन को अठन्नी सम्भालती हुई अंगुलियों को ज्यों की त्यों फैलाये, आश्चर्य की मुद्रा में आंखें फाड़ते हुए देखकर वह भी सिक्के को लखने लगा। कहा किसी ने कुछ नहीं। मैं जानता था कि चाचा जी के सामने यह तरकीब कभी चलती ही नहीं, उन्होंने अठन्नी देकर फिर उन्हें देखा तक नहीं किसना को बुला कर उन्होंने कोठरियां बन्द करने का आदेश दिया।

दोनों मज़दूरों को अब तक भी आश्चर्यचकित मुद्रा में खड़े देखकर मुझ से न रहा गया। मैंने कहा—

'तुम लोग कुछ सोचते भी हो या नहीं? बाहर से अन्दर दस फेरे करने के आठ आठ आने थोड़े हैं?'

'हम पैसों की बाबत बहुत कम सोचते हैं, बाबू जी,' बीरू बोला 'ज़्यादा दिमाग ही कहां है! जो थोड़ा बहुत है, उसे मिट्टी के तेल, कपड़े और खंडसारी ने चट रखा है।'

चाचाजी ने यह ड्रामा देखा था। अब हम लोगों को ज़बान खोलते समय तालू से चिपकने का डर रहता था। उन्हो ने पलटते हुए गरज कर पूछा, 'क्या है?'

रामदीन ने खीसें निपोर दीं, 'चाचा जी, गेहूं पीठ पर लादे और पेट को न मिले। एक सेर मिल जाते तो ...'

रामदीन बड़ाकड़ा अचार और भाजी मांग ले जाता था। चाचाजी ने उसी की ओर संकेत करते हुए उत्तर दिया, 'अबे, रामदीन, तेरी नीयत नहीं भरती!'

'नीयत तो कभी की भर चुकी, चाचा, पेट नहीं भरता!' किंतु चाचाजी ने यह सुना नहीं, सुनने की कोशिश भी नहीं की और ज़ीना चढ़ गए।

चाचाजी के घर से जाते ही बूढ़ी दादी हाथ में दीया लिए नीचे उतरीं। किरपा से एक बोरी बाहर निकलवाई, ज़मीन पर टाट बिछाया और गेहूं साफ़ करने में जुट गईं।

शाम होने को आ ही रही थी। चाचाजी खाना खाने आए तो मां को इस प्रकार व्यस्त देखकर चिढ़ गए। ऊपर आकर खूब चिल्लाए।

'सब कुछ है, फिर भी आपाधापी पड़ी है। न होता तो न जाने क्या हाल होता। पूछना न गछना, बस जो घर में आया खा जाओ! घर में पहले से थोड़े गेहूं हैं, खाने को?'

दादी ने नीचे से कहा—'अरे, ले, मैं तो यूं बैठ गई थी कि फिर भी तो साफ़ करने पड़ेंगे ही। आख़िर यूंही थोड़े ही पिस जाएंगे।

चाचाजी ने साफ़-साफ़ कहा—'अरी, मां, यह गेहूं खाने के नहीं हैं, बेचने के हैं।'

बेचने के गेहूं साफ़ नहीं किये जाते, क्योंकि मिट्टी हटाने से उनका वज़न कम हो जाता है। इस ज़माने का यह अकाट्य सिद्धांत दादी को भी मालूम था। इस लिए वह उठ गईं।

चाचाजी के जाते ही मां ऊपर आ गई। किरपा अपने घर चला गया। चाचाजी काफी चिल्लाकर गये थे, इस लिए घर में शांति हो रही थी, या मालूम दे रही थी, कहा नहीं जा सकता।

अचानक चाचीजी ने कहा—'चोर!'

मैं चोर से नफरत करता था, कहना चाहिये, डरता था। एक दो बार पिता जी की चीज उनसे बिना पूछे अपने काम में ले आने के कारण मुझे इसी शब्द से संबोधित किया गया था और उनकी लपलपाती बेंत ने मेरी हथेलियों को चूमा था। मन्दिर के पंडितजी ने चोर की व्याख्या की थी कि यह वह पापी जीव होता है जिसके अनंतानंत काल तक मोक्ष में जाने की संभावना नहीं है। पंडित जी को किसी चीज के गुण समझाने से पहले उसका परिणाम बताने की सदा से ही जल्दी रही थी। पिता जी भी गुणावगुण समझाने से पहले पाठपूजा करना आवश्यक समझते थे। मां ने बताया था कि चोर एक काला भुसंड जीव होता है, बच्चों को पकड़ कर लेजाता है और उसके चलने फिरने में आवाज़ नहीं होती। उन्होंने भी मुझे यह न बताकर कि चोर क्या होता है, इस शब्द को मुझे शैतानियों से रोकने के लिए सुरक्षित हथियार की तरह रख छोड़ा था।

इसी कारण चाची जी के मुंह से यह सुनकर मेरी पुरानी आदत उभर आई और दिल धड़कने लगा। फिर भी मैं काफी बड़ा हो गया था इस लिए कुछ प्रगट नहीं होने दिया, बोला। 'कहां है, चोर?'

'नीचे कुछ खटपट सी हुई थी .. देखो अब भी हो रही है।' चाची जी ने कान लगाकर सुनने की चेष्टा की।

मुझे भी लगा कि कुछ है। घर के सारे बाल बच्चों को इकट्ठा कर लिया गया, मैंने हाथ में लाठी थामी और सब से घिरा मैं नीचे चला। बच्चों को डांटता जाता कि वह शोर न करें, नहीं तो चोर भाग जाएगा, यद्यपि यह बाद में समझ में आया कि बच्चों को इकट्ठा करने के माने ही यह थे कि शोर सुन कर चोर ठहरा न रहे बल्कि भाग जाए

देखा कोठे के किवाड़ ज़रा खुले हुए थे। दादी लालटेन लिए पीछे पीछे धीरे धीरे आ रही थीं। रोशनी दिखाने के लिए उन्हें आगे रहने को कह कर हमने किवाड़ पूरे खोल दिए। कुछ देर इंतज़ार की कि कोई निकले तो कुछ करें, हाथ में पकड़ी हुई लाठी का ध्यान ही न रहा।

जब कोई नहीं निकला तो अन्दर घुसे। देखा, कुछ गेहूं बिखरे पड़े हैं और एक बोरी का मुंह खुला हुआ है। साफ़

[शेष पृष्ठ २२ पर]

ये विध्वंसकारी भूकम्प

★ विराज

गत पन्द्रह अगस्त को, जबकि देश के लोग स्वाधीनता दिवस की प्रसन्नता में मग्न थे, देश की पूर्वी सीमा पर आसाम में खंडप्रलय का दृश्य उपस्थित हो गया। भूकम्प के भयंकर धक्कों ने हरे भरे सुन्दर पहाड़ों को तोड़-मरोड़ कर कुचल डाला। नदियों के प्रवाह बदल गये, पहाड़ों की चोटियां कुछ नीची और कुछ ऊंची हो गईं। बस्तियां बरबाद हो गईं। चाय के बाग उजड़ गये। विचित्र प्रकार की आवाज और विचित्र प्रकार की दुर्गन्ध अनुभव में आई। नदी की मछलियां किसी विषैले तत्व के कारण मर गईं। सब कुछ मिला कर भारी जन-हानि के अतिरिक्त १० करोड़ रुपये की आर्थिक हानि का अनुमान है। अमेरिका के पास जितने अणुबम हैं, उन सबके फैंक देने से भी इतना विस्तृत विनाश न हो सकता।

परन्तु बड़े भूकम्प इस देश में पहले भी आये हैं। सन् १९३४ का बिहार का और सन् १९३५ का क्वेटा का भूकम्प उस समय बहुत विनाशकारी माने गये थे। बिहार का भूकम्प बहुत विस्तृत प्रदेश में आया था। परन्तु तीव्रता की दृष्टि से क्वेटा का भूकम्प अधिक भीषण था। बिहार के भूकम्प में भूमि में बड़ी-बड़ी दरारें पड़ गई थीं। दो एक जगह गांव के गांव उन दरारों में समा गये और उन गांवों को निगलने के बाद वे दरारें बन्द हो गईं। कई जगह नदियों का प्रवाह एक जगह सूख कर किसी दूसरी बिलकुल नई ही जगह फूट निकला था।

क्वेटा भूकम्प रात को दो बजे के लगभग आया था। पांच मिनट में सारा शहर खंडहरों का ढेर मात्र रह गया था। हताहतों की संख्या बहुत अधिक थी। परन्तु आश्चर्य की बात है कि इस भूकम्प का क्वेटा के अतिरिक्त और कहीं दुष्प्रभाव नहीं पड़ा। एक भाग्यशाली युवक मुझे मिला था, उसने मुझे बताया कि वह मकान की उपरली मंजिल पर सो रहा था। जिस छत पर वह सोया हुआ था, वह ज्यों का त्यों सीधी जमीन पर आ गिरी। उसे कोई चोट खरोंच तक नहीं आई। उसके सिवाय उस मकान में और कोई आदमी जीवित नहीं बचा।

अतीत के भूकम्प

अब तक ज्ञात इतिहास में सन् १७५५ का लिस्बन का भूकम्प सबसे भयंकर समझा जाता है। वह पहली नवम्बर को साढ़े नौ बजे, जब कि लोग अपने अपने काम पर जाने की तैयारी में थे, आया। पांच मिनट पहले तक किसी को कोई आशंका या आभास न था। एकाएक भूमि के अन्दर अन्दर सारा शहर ईंट पत्थर का ढेर था। इसी प्रकार १७८३ में मेसिना का भूकम्प आया। इसमें केवल दो मिनट लगे और भूकम्प के झकोरों में आग लग गई, जिसने सब कुछ निःशेष कर दिया।

कई बार भूकम्प किसी एक छोटे से स्थान में ही केन्द्रित होता है और कई बार बहुत विस्तृत भूमि के स्तर को झकझोर डालता है। क्वेटा और मेसिना के भूमिकम्प पहले प्रकार के और लिस्बन, बिहार और वर्तमान आसाम का भूकम्प दूसरे प्रकार हैं। लिस्बन के प्रसिद्ध भूकम्प में सारा यूरोप और अफ्रीका का बहुत बड़ा भाग कम्पित हो उठा था। आल्प्स और पाइरिनीज़ की पर्वत-मालाएं तक हिल उठी थीं। समुद्र का भयंकर उत्पात स्वीडन, नार्वे, ब्रिटेन और अमेरिका के तट तक पर हुआ था। लिस्बन के विनाश के साथ ही साथ मोरक्को के लगभग सभी सम्पन्न नगर पूर्णतया विध्वस्त हो गये थे। मोरक्को की राजधानी के निकट एक खाइयों में बसा बसा दस हजार की आबादी का एक नगर तो निःशेष ही हो उठा था। उसका क्या हुआ, निश्चय से कुछ नहीं कहा जा सका।

कारण

इन भूकम्पों का पृथ्वी की उपरली पपड़ी में सिकुड़ने पड़ना कहा जाता है। यह तो सभी जानते हैं कि पृथ्वी अन्दर गरम द्रवधातु से भरी हुई है और ऊपर की कुछ मील मोटी पपड़ी ही कठोर है। अनेक कारणों से इस पपड़ी में सिकुड़नें और सिकुड़नों के कारण गति होती रहती है। सृष्टि के प्रारम्भ में जब पृथ्वी नयी थी, तो ये सिकुड़नें बहुत अधिक होती थीं। उस समय के भूकम्पों की तुलना में आजकल के भूकम्प बहुत देर आते हैं। इन सिकुड़नों का कारण पृथ्वी का धीरे-धीरे ठंडा होना है। ठंडे होने और सिकुड़ने की प्रक्रिया में विशाल चट्टानों की तहें तड़क जाती हैं, उसी के कम्पन सारी पृथ्वी के सभी जगह स्थित भूकम्प-मापक यंत्रों द्वारा मालूम किये जा सकते हैं, क्योंकि कम्पन वस्तुतः सारी पृथ्वी का हो जाता है। बहुत बार इन भूकम्पों के कारण ज्वालामुखी फटे हैं, जो फटने से पहले पृथ्वी की पपड़ी को बुरी तरह कंपाते रहते हैं। पर ज्वालामुखियों और भूकम्प का सम्बन्ध अनिवार्य नहीं है। विशेषज्ञों का विश्वास है कि आसाम के भूकम्प का ज्वालामुखी से कोई सम्बन्ध नहीं है।

विचित्रताएं

भूकम्पों के समय कुछ विचित्र बातें देखने में आती हैं : १७८२ में कैलेब्रिया के भूकम्प में पहाड़ों की चोटियां ऊपर उठीं और फिर कुछ देर बाद नीचे बैठती देखी गईं। कई मकान उनके निवासियों समेत एक स्थान दूसरे स्थान पर पहुंच गये और किसी का कुछ भी नुकसान नहीं हुआ। पहाड़ियों के कुछ मकान नीचे से ऊपर पहुंच गये। इसके विपरीत कुछ ऊपर के मकान नीचे घाटी में उतर आये। पृथ्वी में जगह-जगह से और कितने ही प्राणी उन दरारों में समा गये। आसाम के भूकम्प के कारण कहा जाता है कि हिमालय के सबसे ऊंचे शिखर सगरमाथा (एवरेस्ट) की ऊंचाई २० फीट बढ़ गई है।

एक और विचित्र बात यह देखी गई है, इमारतों के ऊपर घूमती हुई गति का प्रभाव पड़ा, जिससे ओबिलिस्क स्मारक एक मीनार का ऊपरला खंड चक्कर में घूम गया और निचला भाग यथापूर्व रहा। ऐसे ही एक प्रभाव से एक और मीनार ५० फीट पर टूट गई।

एक दिन की बात

छाछ का गिलास

श्री अनन्त

१९४२ के आन्दोलन के सिलसिले में जिला में मुझे नजरबन्द किया गया था। गांव के लम्बरदार से कुछ अधिक मित्रता हो गई थी।

एक दिन लम्बरदार के साथ मेरा घूमने का प्रोग्राम बना। दोनों घूमते घूमते न जाने कितने मील चले गये। लौटे, धूप खूब ज़ोर की थी, प्यास लगी, मुंह सूखने लगा। लम्बरदार एक बटिया पर ले चला—

लगभग आध घंटा चलने पर एक गांव दिखाई दिया—

'बड़ी प्यास लगी है लम्बरदार' मैंने कहा।

'पहला जो भी मकान मिलेगा वहीं पानी पिलाऊंगा, बाबू।' लम्बरदार ने मुझे दिलासा दिया।

पहला मकान सामने आया, ड्योढ़ी का बड़ा फाटक खुला था। अन्दर जा लम्बरदार ने पंजाबी में पुकारा, 'जैं सिंह जी!'

एक युवती, जिसकी आयु लगभग १९ वर्ष होगी, स्वस्थ, सुन्दर, मुस्कराती हुई सामने आ खड़ी हुई, बोली 'धन्न ते गये हन।'

'बाउ बाबू साब नूं ते त्रेह (प्यास) लग्गी ए' लम्बरदार ने कहा।

युवती ने सामने के कमरे से दो आदमियों के मूढ़े निकाल कर सेहन में बिछाये और, युवती के पल्ले से पोंछकर बोली, 'बैठ जाओ।'

लम्बरदार ने मुझे अन्दर आने को कहा। मैंने देखा, बाईं ओर रसोई थ, रसोई में जाकर उसने एक गीलस की बाल्टी की, पूछा 'दुध पिओगे कि?'

लम्बरदार ने कहा, 'जेड़ी शै (वस्तु) मिल जाय।'

रसोई की दाईं ओर लकड़ी की एक सीढ़ी थी उस पर चढ़कर युवती दूसरे मकान की छत पर पहुंची। कुछ देर बाद लौट कर आई, दो छन्ने (बड़ कटोरे) निकाल कर लाई, दोनों में भर कर लस्सी डाली, ऊपर से एक एक पेड़ा मक्खन का डाल उसने हमें छन्ने दिये। मुझसे एक ही छन्ना पिया गया, लम्बरदार ने चार छन्ने पिये मूछों पर हाथ फेर कर लम्बरदार ने आशीष की, 'जुग-जुग जीउंदी-रवें-मान्नां माणिये।'

और मकान से बाहर आ गया।

प्यास बुझ गई थी।

मैंने लम्बरदार से पूछा, 'तुम इन्हें जानते हो?'

'नहीं तो।'

'नहीं जानते? ये तुम्हें जानती थीं?'

'नहीं।'

'नहीं?'

'तो क्या हुआ? हमें प्यास लगी थी, उसके पास छाछ थी। इसमें जानना पहचानना क्या?'

मैं सोच रहा था—'एक यह लोग हैं, जानते नहीं, फिर भी अपनाते हैं और दूसरी ओर हैं सभ्य (?) शहरों के लोग…।

साम्यवादी शिविर के नेता

आज की सबसे बड़ी विश्व-समस्या

जनतंत्री शिविर के नेता

दो शिविरों में विश्व का विभाजन

इस लेख के लेखक हैं सुरक्षा समिति के वर्तमान अध्यक्ष श्री ग्लैडनबैब और इसलिए अपने विषय के प्रामाणिक अधिकारी हैं। संसार रूसी और अमेरिकन दो गुटोंमें विभक्त हो चुका है। रूस के आदर्शों, युक्ति क्रम और नीति का परिचय देते हुए लेखक ने उनका विवेचन किया है।

श्री स्तालिन

पिछले एक से अधिक वर्ष से सोवियट प्रचार इस बात को बार-बार दोहराता रहा है कि संसार दो शिविरों में विभाजित है। एक है साम्राज्यवाद और आक्रमण का शिविर, जिसके नेता हैं पश्चिमी देश और विशेषतया संयुक्तराज्य अमेरिका। दूसरा है 'जनतन्त्र और शांति' का शिविर, सोवियट यूनियन और संसार भर के साम्यवादी दलों के नेतृत्व में। ये प्रिय शब्द और शब्द समूह, जिनका सोवियट प्रचार व्यवस्था प्राय प्रयोग करती है, एक खास अर्थ रखते हैं और यह अर्थ उनके वास्तविक अर्थ का उल्टा होता है। यदि आप इस सीधे-सादे नुस्खे को काम में लावें, तब आप देखेंगे कि सोवियट प्रचार का वास्तविक अर्थ यह है कि संसार दो शिविरों में विभाजित है एक है जनतन्त्र और शांति का शिविर, जिसके प्रधान हैं पश्चिमी देश और विशेषतया संयुक्त-राज्य। दूसरा है साम्राज्यवाद और आक्रमण का शिविर, सोवियट यूनियन तथा विश्व के विभिन्न साम्यवादी दलों के नेतृत्व में।

बलप्रयोग से लक्ष्य प्राप्ति

'साम्यवादियों के आदर्श सिद्धान्त की एक मूल बात यह है कि युद्ध के अन्त में आकर बलप्रयोग द्वारा ही प्राप्त किये जा सकते हैं। हम लोग केवल एक राज्य में ही नहीं, किन्तु राज्यों की एक पद्धति के अन्तर्गत रह रहे हैं और साम्राज्यवादी राज्यों के साथ-साथ सोवियट रिपब्लिक का अस्तित्व बहुत दिनों तक बना रह सके, इस बात की कल्पना नहीं की जा सकती। अन्त में जाकर दोनों में से किसी एक को जीतना है और इस अन्त के आने से पहले ही सोवियट रिपब्लिक तथा बुर्जुआ राज्यों के बीच में कई भयंकर संघर्ष अनिवार्य हैं...' ये शब्द इण्टर-नेशनल पब्लिशर्स द्वारा १९३९ में छापे गये थे और 'प्राब्लम्स आफ लेनिनिज़्म,' शीर्षक स्तालिन के निबन्ध में जो १९२६ में प्रकाशित हुआ था, पहली बार दोहरा दे गए। किन्तु यदि हमें अपेक्षाकृत नये प्रमाणों की आवश्यकता है तो सोवियट साम्यवादी दल के 'बाल्शेविक' नामक प्रमुख-पत्र के पृष्ठ पलटने होंगे। अपने जुलाई १९४८ के अंक में इस पत्र ने लिखा था कि साम्यवाद यह सिखाता है कि अत्याचारी वर्गों का बलात् पदच्युत किया जाना और कामकाजियों के राज्य की स्थापना साम्यवादी क्रान्ति का साधारण नियम है। 'साम्यवाद', यह पत्र आगे चल कर लिखता है, 'इन अवसरवादी विचारों से मेल नहीं खाता कि पूंजीवाद से समाजवाद मे परिवर्तन पार्लियमेंटरी वोटिंग के आधार पर शांति-पूर्वक किया जा सकता है।

इस प्रकार आप देखते हैं कि इस सिद्धान्त के अनुसार और यदि हम कोरिया के युद्ध की गृह-युद्ध बताने वाले साम्यवादी सिद्धान्त को सत्य मान भी लें, फिर भी अवसर मिलने पर एक साम्यवादी अल्पमत का शस्त्रास्त्र और बलप्रयोग से एक जनतांत्रिक विधियों के अनुसार निर्वाचित सरकार को उखाड़ फेंकना बिलकुल उचित होगा। असल में हुआ भी यही है। अन्तर केवल यह था कि उत्तरी कोरियन अधिकारियों ने पहले पहल अपने को एक पृथक राज्य के रूप में संगठित किया और तब उचित अवसर का प्रयोग किया। (यह तो अभी देखना बाकी है कि जिसे उन्होंने उचित अवसर समझा था, वह सचमुच ऐसा ही आगे भी रहेगा या नहीं।) पूछा जा सकता है कि हिंसासम्बन्धी सोवियट सिद्धांत राज्यों के पारस्परिक सम्बन्ध पर भी लागू होते हैं या नहीं। 'लेनिन के प्रश्न' नामक पुस्तक में जिसे सब साम्यवादी दलों को सावधानी के साथ पढ़ने का आदेश दिया जाता है, स्वयं स्तालिन ने समझाया है कि रूसी क्रान्ति के फलस्वरूप 'सर्वप्रथम मजदूर राज्य' का जन्म हुआ। इस राज्य को उन्होंने विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन का शक्तिशाली और सबल आधार बताया है।

युद्धों का विश्लेषण

यों यह स्पष्ट हो जाता है कि जो राज्य अपने को इस दृष्टि से देखता है, उससे शांति और सहयोग की विदेशी नीति के पालन की आशा नहीं की जा सकती। अन्य सब ऐसे शासनों को जिन्हें वह विश्व क्रांतिकारी आंदोलन का विरोधी मानता है, कमजोर बनाना वह राज्य अपना कर्तव्य समझता है। दूसरे शब्दों में, किसी भी असाम्यवादी सरकार के लिए (और कुछ साम्यवादी सरकारों के लिए भी) सोवियट सरकार के साथ सच्ची मित्रता और घनिष्ठता का सम्बन्ध वास्तव में असम्भव है।

सचमुच यही प्रेरणा (मुक्तिदाता सम्बन्धी) सोवियट के युद्ध-विषयक दृष्टिकोण ('शार्ट हिस्ट्री आफ दि कम्यूनिस्ट पार्टी' नामक समस्त साम्यवादियों की अनिवार्य पुस्तक में जिस पर प्रकाश डाला गया है) को प्रभावित करती है।

रूस का तर्क

वह इस प्रकार है— युद्ध दो तरह के होते हैं, (क) न्यायोचित युद्ध, अर्थात् ऐसे युद्ध जो विजय नहीं किन्तु मुक्ति के लिये लड़े जाते है, लोगों को विदेशी आक्रमण स बचाने के लिए अथवा उन्हें पूंजीवादी दासता से बचाने के लिए अथवा उपनिवेशों और पराधीन देशों को साम्राज्यवादी भार से मुक्त करने के लिए और (ख) अनुचित युद्ध, विजय के युद्ध, विदेशी राष्ट्रों और देशों को जीत कर दास बनाने के लिए लड़े गये युद्ध। सोवियट यूनियन द्वारा किसी युद्ध का समर्थन या विरोध इस बात पर निर्भर होता है कि वह उस युद्ध को किस श्रेणी में रखने का निश्चय करता है और ऐसे निश्चयों पर पहुंचना आवश्यकता से अधिक आसान काम है। जिस किसी युद्ध में सोवियट यूनियन और उसके प्रभाव केन्द्र के देश सम्मिलित हैं, निश्चय ही मुक्ति का न्यायोचित युद्ध है। इसके विपरीत असाम्यवादी देशों के युद्ध विजय के युद्ध अनुचित हुआ करते हैं।

श्री ट्रूमैन

क्योंकि पश्चिमी देशों के लिए यह सम्भव नहीं है कि वे किसी उचित युद्ध में भाग लें, इसलिए उनके निःशस्त्रीकरण की मांग (या कम से कम उन्हें उस एक अस्त्र को इस्तमाल करने से रोकना जिसमें वे सोवियट यूनियन से आगे हैं) तर्कयुक्त बात है। इसके विपरीत, इस देश मे सोवियट यूनियन को सब प्रकार के सच्चे नियंत्रण से बरी रखना भी उतना ही तर्कयुक्त बात है, क्योंकि परिभाषा के अनुसार यह देश तो केवल उचित युद्ध (मुक्ति के युद्ध ही) लड़ सकता है। यही सारी बाते कोरियन युद्ध के प्रति सोवियट के विचित्र दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि में है। जैसा कि हम सब जानते हैं, सोवियट सरकार के मतानुसार इस युद्ध में उत्तरी कोरिया वाले 'साम्राज्यवाद' की आक्रमणकारी शक्तियों के विरुद्ध गम्भीर संघर्ष में संलग्न हैं।

'साम्राज्यवाद'— प्राय प्रयुक्त किये जाने वाले प्रिय शब्दों में से वह सर्वश्रेष्ठ है। संसार भर के शांतिप्रिय लोगों (जिन मे से अनेकों स्वयं सोवियट यूनियन में ही है) को धोखे मे डालने के लिए यह शब्द समर्थ है।

योरोप और एशिया

किन्तु साम्राज्य है क्या? यदि इसका अर्थ है 'रिनैसांस' (पन्द्रहवीं शताब्दि में साहित्य और कला का पुनरुत्थान) के दिनों में उदित नये विचारों और नई भावनाओं के आधार पर यूरप का विस्तार है, तो मैं यह बात समझ सकता हूं।

किसी शक्ति या शक्ति समूहो के विस्तार के अधिकांश युग नये विचारों, नूतन भावनाओं और नवीन विधियो पर आधारित थे। कई अवसरो पर ऐसे विस्तार एशिया मे योरोप को लक्ष्य कर प्रारम्भ हुए थ, इन विस्तारों का कारण नीच उद्देश्य, अथवा विजय की भावना नहीं थी, बल्कि कुछ ऐसी जानकारी दूसरों को देने की

इच्छा थी, जो वे बहुत समय तक प्राप्त न कर सकते थे। किन्तु मैं समझता था कि आज लगभग प्रत्येक व्यक्ति यह देख सकता है योरोपीय विस्तार का काम समाप्त हो गया है और इसका अंतिम प्रमाण हिटलर के अन्तर्गत जर्मनों का हाथ पांव फैलाना था। जिन पश्चिमी शक्तियों को आज साम्राज्यवादिनी कहा जाता है, वे हिटलर के विरोध में उतनी ही सक्रिय थीं जितना कि रूस था। कोई भी शासन जो समय से चालीस वर्ष पिछड़ा नहीं है और इस प्रकार आधुनिक विचारधाराओं से अपरिचित नहीं है, अनुमानतः यह देख सकता है कि एशिया के वे राष्ट्र जो आवश्यक कारीगरी के अभाव मे समान परिस्थिति में रखे गये थे, इस अभाव की पूर्ति काफी हद तक कर चुके हैं और पुरानी पद्धति, जो गुरु और शिष्य के सम्बन्ध पर आधारित थी, अब सहकारिता और सहयोग के संबन्ध का रूप ग्रहण कर चुकी है।

यद्यपि मानवीय सम्बन्धों में इस विशाल परिवर्तन के फलस्वरूप कुछ उथलपुथल उत्पन्न हो गई हो, किन्तु यह बात अवश्य है कि वह जिसकी निन्दा मार्क्स ने १८४८ में 'साम्राज्यवाद' कह कर की थी, अब नहीं रही। इसका उपयोग अब केवल कुछ निरंकुश स्वल्प-जन शासित राज्यों द्वारा अपने को अधिकार के सिंहासन पर आरूढ़ रखने के लिए किया जाता है। ब्रिटिश श्रम सरकार अथवा अमेरिकन प्रशासन के लिए इस शब्द को प्रयुक्त करना यदि शोचनीय न होता, तो उपहासास्पद अवश्य कहा जाता।

'शेष में, साम्राज्यवादी सम्बन्धी यह सारा प्रचार, जो मास्को रेडियो द्वारा प्रसारित किया जाता है, वास्तव में केवल एक धर्म-रचना है यह इस बात को छिपाने का प्रयत्न कि सारे संसार पर निरंकुशता लादने की कोशिश अमेरिका नहीं, किन्तु कोई अन्य देश कर रहा है।

गत्यवरोध का वास्तविक कारण

इस लिए, मैं अगस्त महीने मे हुए गत्यवरोध पर के वास्तविक कारणों पर अपने विचार यहां दोहराना चाहता हूं। शांति का प्रचार चाहे वह किसी अस्पष्ट-घोषणा के लिए हस्ताक्षर संग्रह का रूप ले, अथवा कोरिया में 'शांतिपूर्ण समझौता' प्राप्त करने के लिए 'दोनों दलों' का आपस में मिलाने के प्रस्तावों के रूप में प्रकट हो, वास्तव में तो वह शांति भंग के प्रयत्न को पक्का करने और उसे भविष्य में पहले से अधिक सफल बनाने का साधन मात्र है। वस्तुतः, शान्ति प्रचार आक्रमण की तैयारियों का एक अंग ही है। इसका मुख्य उद्देश्य है दूसरों को पीड़ित देश की सहायता करने से रोकना अथवा ऐसी सहायता के मार्ग में बाधाएं डालना। "सोवियट कूटनीति का इतिहास" नामक सरकारी प्रकाशन में इन करतूतों का विश्लेषण बड़ी स्पष्टता और सूझ बूझ के साथ किया गया है। द्वितीय पुस्तक में 'उच्च आदर्शों के पीछे विनाशक उद्देश्यों को छिपाना' नामक विषय पर एक बाद विवाद मिलता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के साधनों में एक यह बताया गया है। 'अपने उद्देश्यों के लिए निःशस्त्रीकरण और शांतिवादी प्रचार का समुचित उपयोग करना।' आगे चलकर यह पुस्तक कहती है' कि बहुत समयों से आक्रमणप्रिय सरकारों के उद्देश्यों और उनकी योजनाओं पर आवरण डालने के लिए निःशस्त्रीकरण का विचार अत्यधिक लोकप्रिय रहा है।"

इस विषय पर इंगेरी के साम्यवादी प्रतिरक्षा मन्त्री का एक वक्तव्य अच्छा प्रकाश डालता है। उन्होंने अप्रैल १२ को लिखा था। 'हमारे दल में एक प्रकार की शान्तिवादिता प्रकट होने लगी है, विशेषतया हाल के दिनों से और 'अब हमें युद्ध नहीं चाहिये' जैसे नारे इस शांतिवादिता के अच्छे उदाहरण हैं। इस लिए इस शांतिवादिता को अपने दल से बहिष्कृत करना हमारा पहला कर्त्तव्य है ताकि इसके बाद हम इस भावना को जनसाधारण के अन्दर उत्पन्न होने से रोक सकें . .. हमारी जनता में शांतिवादिता की भावना काफी मात्रा में फैल गई है, विशेषकर हमारी महिलाओं और हमारे किसानों में ...।'

कुछ भी हो, आक्रमण के विषय में सब सोवियट शासकों के मत विभिन्न रहे हैं। इसका कारण निस्सन्देह उन पुराने आदर्शों का बड़ी सख्ती से लागू किया जाना है जिनमें वे सदैव से विश्वास करते आये हैं। आपको याद होगा कि स्वर्गीय स्तालिन ने दिसम्बर २१, १९३९ को कहा था कि 'फ्रांस और ब्रिटेन पर आक्रमण करने वाला देश जर्मनी नहीं था, बल्कि जर्मनी पर फ्रांस और ब्रिटेन ने आक्रमण किया था और इस प्रकार इस युद्ध का उत्तरदायित्व उनके कन्धों पर है। ब्रिटेन और फ्रांस के शासकवर्गों ने एक ओर जर्मनी के शांति प्रस्तावों को दृढ़ता के साथ ठुकराया और दूसरी ओर युद्ध को शीघ्रातिशीघ्र समाप्त करने के सोवियट प्रयत्नों को पूरा नहीं होने दिया।' यदि १९३९ के युद्ध सम्बन्धी इस विलक्षण विश्लेषण में स्वयं स्तालिन ने विश्वास किया था तो कौन जाने १९५० मे हुए आक्रमण के विषय पर सोवियट दलील में कौन विश्वास करेगा?

सच यह है कि जब तक ये अर्थहीन विचार छोड़े नहीं जाते तब तक युद्ध की सम्भावना सदैव उपस्थित रहेगी। ये विचार भले ही स्पष्टतया न छोड़े जाएं, किन्तु शायद इतना सम्भव हो सकता है कि युद्ध पर अमल न किया जाए। एक निष्कर्ष हम निकाल सकते हैं। यदि स्वतन्त्र जगत में एकता रहेगी तो युद्ध विचारों पर अमल नहीं किया जायगा क्योंकि बल के प्रयोग द्वारा (अन्याय या अनुचित बल) उन लक्ष्यों की प्राप्ति सोवियट सरकार के लिए सम्भव नहीं है जिन्हें प्राप्त करने वाले आज कल्पनीय मालूम पड़ती है। मेरे विचार से यही है वास्तविक तथ्य, और यही सारे मामले की जड़ भी है।"

उपन्यास

अनिरुद्ध

श्री. मन्मथनाथ गुप्त

● भारत विभाजन से बहुत पहले की बात है। एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी अनिरुद्ध ने जेल से छूटने के बाद विप्लवकारी संघ बना लिया था। लाहौर की एक कुलीन लड़की सुजाता के साथ उसका परिचय होता है विप्लवकारी संघ के सदस्य एक १५ वर्षीय बालिका का एक पैंतालीस वर्ष के अधेड़ से होने वाले विवाह का विरोध करते हैं वे लोग विवाहेच्छु भवानन्द और लड़की के मामा रसिकलाल को समझाते हैं, और अन्त में संघ के सदस्यों की सम्मति से अनिरुद्ध का विवाह केवल कर्तव्य भावना से सरला से कर दिया जाता है। सुजाता निराश होकर लाहौर चली जाती है, और वहां वेश्याओं की दशा का अध्ययन करती है। सुजाता हरिकिशन नामक एक सुसम्पन्न तथा सुन्दर युवक की ओर आकर्षित होती है। सुजाता को गर्भ रह जाता है, इसलिए वह हरिकिशन से विवाह का प्रस्ताव रखती है, किन्तु हरिकिशन उसे ठुकरा देता है। अन्तमें काशी जाकर सुजाता अनिरुद्ध से कुछ छिपाये बिना अपने उद्धार के लिए विवाह का प्रस्ताव करती है। अनिरुद्ध ने उससे विवाह कर लिया। इससे उसके सब साथी नाराज हो कर उसे गालियां देने लगे।

[गतांक से आगे]

(४२)

अपने सम्बन्ध में जो खबरें तथा शोर निकले, अनिरुद्ध ने उन सब को देखा। अपने कार्य के फलस्वरूप उसने इन टिप्पणियों को स्वाभाविक समझा और इसलिए उनको उदासीनता के साथ ग्रहण किया। वह अपने मन में सम्पूर्ण रूप से निश्चित नहीं था कि वह जो कुछ कर रहा है, वह ठीक ही कर रहा है, क्योंकि सरला का पहलू भी तो था। हां, सरला के कारण ही वह मामला जटिल हो गया था, नहीं तो क्या था ? अनिरुद्ध ने यह सोचा कि सुजाता न आती तो वह सरला को पत्नी के सब अधिकार दे देता। वह इस दिशा में अपने को धीरे-धीरे तैयार कर रहा था, पर आंधी की तरह सुजाता के घुस आने के कारण उसके सारे मनसूबे मिट्टी में मिल गये, और एक बिलकुल नये जीवन का सूत्रपात हुआ। कौन जानता है, यह पानी कहां जा कर कहां ठहरेगा। अनिरुद्ध ने मन ही मन कहा—जाने दो।

वह मजबूरी से सार्वजनिक जीवन से हट गया। वह किसी के घर नहीं जाता था, और न वह किसी का आना ही पसंद करता था, क्योंकि आने का अर्थ अप्रिय आलोचना और लाचार अपमान भी था, जिससे वह बच नहीं सकता था। सुजाता प्रायः उसके साथ एक कमरे में बैठी रहती थी, पर दोनों में अपनी-अपनी दुनिया थी, वे उन्हीं में रहा करते थे। जब तक अखबारों में अनिरुद्ध के विरुद्ध लिखना जारी रहा, तब तक सुजाता अनिरुद्ध पर अधिक ध्यान देती थी, पर ज्यों-ज्यों महीने बीतते गए, त्यों-त्यों वह अनिरुद्ध के इस त्याग को स्वाभाविक समझने लगी, बल्कि वह समझने लगी कि यदि अनिरुद्ध यह त्याग न करता तो गलती करता।

अनिरुद्ध पुस्तकें पढ़कर तथा लिख कर ही समय बिताता था। दिनभर वह घर पर ही रहता था और दिया जलने के बाद वह लोकालय से दूर कहीं ऐसी जगह पर टहलने के लिए निकल जाता था कि जहां पर उसके भूतपूर्व मित्र उससे न मिलें। इसी प्रकार वह समाज से अलग तथा उसके द्वारा परित्यक्त होकर जीवन व्यतीत करता था। इस विवाह के बाद वह रसिकलाल के मकान की ओर नहीं गया, कैसे, किस मुंह से जाता। रसिकलाल भी नहीं आये थे, उन्होंने समझ लिया था कि कि उनकी सरला विधवा हो गई है।

पुस्तकें पढ़ने के अतिरिक्त अनिरुद्ध का और एक विशेष काम यह था कि वह प्रकृति-पर्यवेक्षण किया करता था। उस का यह अनुराग बहुत पुराना था, पर गत कई एक सालों से; जब से वह छूटा था, काम के मारे इस दिशा में समय नहीं दे पाता था, पर जब से वह विवाह हो गया, और उसे सब कामों से छुट्टी मिल गई, तब से छत पर एक डेकचेयर पर बैठे हुए घंटों वह रात को आकाश की तरफ देखा करता था। वह मोटे तौर पर आकाश तथा उसके रहस्यों से परिचित था। अब साथियों को खो कर वह नक्षत्रों का साथ पसंद करता था। रोशनी जो दुनिया में सबसे अधिक द्रुत वस्तु है, वह भी लाखों वर्ष में विश्व की परिक्रमा कर सकती है। कितना विराट और विपुल यह विश्व है। विश्व की विराटता और समय के अनन्तत्व पर विचार करते-करते वह अपने छोटे से जीवन की छोटी-सी दुंजड़ी भूल जाता था। छायापथ के छोटे-छोटे तारों की ओर देखते-देखते वह सोचता था कि मनुष्य के यह जो विभिन्न दर्शनशास्त्र हैं, क्या ये सब की सब कल्पनामात्र नहीं है? यहां तक कि अनात्मवाद भी? इस विश्व-जगत में मनुष्य का अस्तित्व कितना क्षुद्र है? वैज्ञानिकों की तथ्यराशि का अनुसरण कर वह सोचता था कि पृथ्वी की उम्र दो-सौ करोड़ साल, और उसी के अन्दर मनुष्य-जाति की उम्र केवल पचास-लाख साल है। इसके अर्थ यह हुए कि युगों तक पृथ्वी मनुष्यों से हीन हो कर सूर्य के चारों तरफ घूम-घूम कर नाचती रही, भविष्य में भी पृथ्वी इतनी ठंडी हो जायगी कि उस पर मनुष्य रह न सकेंगे। फिर पृथ्वी मनुष्य-हीन होकर रहेगी। तो ऐसी हालत में मनुष्य की सभ्यता, विज्ञान इनका क्या स्थायित्व है?

इसी प्रकार के नाना प्रश्नों को वह मन ही मन घंटों सोचा करता था। स्पष्ट है कि पहले के युग की क्रांतिकारी आग उसमें बहुत कुछ मर चुकी थी। उसके दुःखमय जीवन ने उसके मतवाद तथा हृदय पर अपनी छाया डाल दी थी। कभी-कभी अनिरुद्ध अपने इस परिवर्तन के कारण को समझ जाता था, उस समय वह समझता था कि उसका जीवन समाप्त हो आया है।

अनिरुद्ध सभी समय इस प्रकार की मानसिक अवस्था मे रहता था, यह बात नहीं, पर जब वह गहराई के साथ अपने चारों ओर की दुनिया पर दृष्टि डालता था, तो उसकी चिन्ताराशि पर सहज ही में विषाद का अन्धकारमय रंग चढ़ जाता था। वह किसी भी सूरत से अपने को इस हालत से मुक्त नहीं कर पाता था।

एक दिन अनिरुद्ध बड़ी रात तक छत पर बैठा रहा। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी, पर वह कम्बल में लिपट कर बैठा था। पूर्णिमा का चांद समस्त आकाश मे अपने शीतल प्रताप का विस्तार कर रहा था। छोटे-छोटे नक्षत्र जो मामूली रोशनी देकर जुगनू की तरह जीते थे, आज वे रोशनी के इस हंगामे से मुंह छिपा कर अलग हो गये थे। बहुत ही ठंडी हवा कभी-कभी उसकी हड्डियों तक को ठंडी कर बह रही थी। अनिरुद्ध आज आकाश के नक्षत्रों की ओर नहीं देख रहा था। वह एक फ्रेंच उपन्यास पढ़ रहा था। उसका मन उसी में पूर्ण था। वह उपन्यास की घटनाओं में बढ़ रहा था, इसलिए आज उसे कुछ दुःख नहीं था। एक आशा उसके मन के अन्दर अंकुर की तरह सिर उठा रही थी। वह अकारण ही खुश हो रहा था। उसने अपने को कहा — नहीं-नहीं मेरा जीवन समाप्त नहीं हुआ, समाप्त नहीं हो सकता।

उसे ऐसा मालूम हुआ कि समस्त विश्व प्रकृति उसकी बातों की प्रतिध्वनि कर रही है। वह पूर्ण चन्द्र, वे टिमटिमाते हुए तारे, वह चांदनी से झलकता हुआ आकाश, यह जीवन से पूर्ण वायु सभी उसकी प्रतिध्वनि कर रहे हैं। सभी उसे कह रहे हैं कि जीवन व्यर्थ नहीं है, नहीं है।

सुजाता नीचे के कमरे में सो रही थी। अनिरुद्ध इस बात को जानता था। इस बात का ज्ञान आनन्द प्रदान कर रहा था। सुजाता, हां वही सुजाता, जिसने उसे इस जटिलता मे डाल दिया है, जिसे ग्लानि और निन्दा से बचाने के लिये उसने अपने सार्वजनिक जीवन तथा सुयश पर लात मार कर एक बूढ़े भालू की तरह लोक समाज से दूर एक गुफा के अन्दर निवास कर रहा है, जिसके लिये उसने सब कुछ त्याग किया है, और जिसे वह प्यार करता है। सुजाता कोई नादान स्त्री नहीं है, वह क्या उसके त्याग की विराटता को समझती है या नहीं, फिर वह उसे क्यों दुतकारेगी? हमेशा उसकी यह बुद्धि विरोधी उदासीनता टिक नहीं सकती। उसने एक लम्पट को आत्म-समर्पण किया था और यह तो उसका बाकायदा पति है। किसी से किसी मामले में निकृष्ट नहीं। फ्रेंच उपन्यास तथा पूर्णिमा के वातावरण में आज पहले पहल अनिरुद्ध की चेतना पर यह स्पष्ट होगया कि वह रास्ते का आदमी, अपरिचित या आगन्तुक नहीं, बल्कि सुजाता का पति है। उसकी नसों में यह बात तर तर करके बह गयी।

एक बज चुका था। यन्त्र चालित की तरह अनिरुद्ध चलने लगा। उसके कमरे में आते हुए रास्ते मे सुजाता का कमरा पड़ता था। उस कमरे के किवाड़े खुले हुये थे। अनिरुद्ध ने चौखट पर खड़े हो कर देखा कि सुजाता सो रही है। सुजाता की छाती पर का कपड़ा जरा सा हट गया था, ठीक उतना ही जितने से कि उसकी लज्जा की हानि न होते हुए भी

अ ग सौष्ठव स्पष्ट हो आता था। अनिरुद्ध ने अपने मन को टटोलकर देखा कि उसमें कोई विकार नहीं था। कलाकार की निःस्पृहता से वह उसे देखने लगा। उसे ऐसा मालूम हुआ कि सारे विश्व की समस्याओं का समाधान क्या नारी के रूप में मौजूद नहीं है? इस रूप को पा लेने आत्म लेने के बाद भी कोई समस्या रहती है? पुरुष की सब समस्याओं का अवसान क्या नारी के रूप में नहीं हो जाता? अनिरुद्ध ने सोचा कि शायद पुरुष की सब समस्याओं का वास्तविक समाधान यह नहीं है पर इसके कारण कम से कम उसकी सब समस्याएं शान्त हो जाती हैं इसमें कोई सन्देह नहीं। अनिरुद्ध ने सोचा अच्छा तो है। समस्याओं के सबध में सिर खपाने से फायदा क्या है? उनका अंतिम समाधान न तो कभी हुआ है और न कभी होगा। उसने सोचा कि क्षणवाद ही एक ऐसा वाद है जो सत्य पर आश्रित है। इसमें कोई आत्म प्रवचना का प्रयास नहीं है पर इससे क्या? पृथ्वी तो ठंडी हो कर मनुष्य की बस्ती के लायक नहीं रहेगी, फिर? हां विज्ञान है वह अवकर अन्धकार में टिमटिमाता हुई बत्ती की तरह

अनिरुद्ध इस प्रकार कितनी देर तक खड़ा हो कर सोचता रहा वह उसे नहीं मालूम। उसे यह भी नहीं मालूम था कि कब वह चौखट पार कर सुजाता की खाट के पास खड़ा हो गया था। इतने में सुजाता ने शायद उसकी पैनी और गरम दृष्टि के कारण जग कर आंख खोल दी और अनिरुद्ध को सामने देख कर चट कर बैठ गयी। हाथ बढ़ा कर उसने बत्ती जला दी।

आप यहां पर?

अनिरुद्ध हक्का बक्का हो गया। सच मुच ही उसके वहां आने का कोई उपयुक्त कारण नहीं था, पर उसे सुजाता की गुस्ताखी भरी आवाज तथा परेशान आंखें पसन्द न आयीं। वह यों ही आया था पर यह तिरस्कार और अपमान क्यों? क्या उसने उसके लिये विराट त्याग नहीं किया? फिर यह उपेक्षा क्यों? अनिरुद्ध को क्रोध आ गया। वह पति का अधिकार भले ही न चाहे, पर यह क्या? उसने कहा—क्यों? कोई दोष है क्या?

आपके साथ मेरा क्या समझौता था? जरा रुक कर उसने कहा—याद रखिये कि मैं केवल नाम के वास्ते ही आपकी स्त्री हूं।

अनिरुद्ध ने खीज कर कहा—हां नाम से ही स्त्री है, पर समझ रखें कि तुमको बचाने के लिए ही मैंने अपने सार्वजनिक जीवन से स्तीफा दे दिया। वह मेरे लिये विराट त्याग है, मृत्यु से भी अधिक। सुना है उन लोगों ने मुझे क्या क्या कहा है? कायर, प्रतिक्रियावादी, रेनीगेड, जिससे बढ़ कर गालियां नहीं है। मुझ पर शेर बने हैं, मेरा व्यंग चित्र प्रकाशित हुआ है। इसके बाद हाथ को पटकते हुए कहा—और वे गालियां दे रहे हैं, दें। वे न तो जानते हैं और न कभी जानेंगे, पर तुम तो सब कुछ जानती हो, मुझ से इस प्रकार का व्यवहार कर रही हो। तुम्हें चाहिये था कि मेरे घावों को सहलाओ। पर तुमने ऐसा नहीं किया। जिसके लिए चोरी करू, वही? सोच कर देखो तुमने मेरे साथ कितना भारी अन्याय किया है।

सुजाता सम्हल कर बैठती हुई बहुत सहज तरीके से बोली—आपने मेरे लिए चोरी नहीं की, अपने लिये की थी।

कैसे? भौहों पर बल लाते हुये अनिरुद्ध ने कहा—बाहर उस समय ढन ढन कर दो बजे।

कैसा क्या? न आप मुझ से क्षमा केरम तथा उसकी कोखों के विषय में लिख कर मुझे वैसा करने के लिये कहते, और न मैं ऐसी आफत में पड़ती।

—क्रमशः

अमरीकी चिकित्सालय में रोगी परीक्षा के सब साधन हैं।

[पृष्ठ १५ का शेष]

यह चिकित्सा सर्विस सभी प्रकार के आवश्यक सामग्री से युक्त एक केन्द्रीय क्लिनिक (चिकित्सालय) से चलाई जाती है। इस जगह प्रारम्भिक मरहम पट्टी अथवा आकस्मिक दुर्घटना के इलाज के लिये दो महत्वपूर्ण केन्द्र खुल गये हैं। तत्काल बुलाया जाने पर यहां से हरदम तैयार खड़ी वह दुर्घटना-गाड़ी जिसमें डाक्टर और नर्स मौजूद होते हैं और उस क्षेत्र में दूर-दूर बसे कस्बों की दैनिक यात्रा करने वाला वह अस्पताली चिकित्सालय फौरन ही निर्दिष्ट स्थान पर भेज दिये जाते हैं।

ब्रिटेन में अपनी तरह का पहला, यह चलता फिरता मरहम पट्टी अस्पताल पांच टन भारी, तथा चौबीस फुट लम्बा तथा साढ़े सात फुट चौड़ा और तीन भागों में बटा होता है। पहला भाग बिल्कुल बन्द रहता है, क्योंकि उसमें जरूरत के लिए सौ गैलन पानी की एक टंकी और गैस यन्त्र तथा बिजली साधन लगे होते हैं। बाकी दो भागों का एक भाग चिकित्सा कक्ष और दूसरा परीक्षा कक्ष के रूप में सज्जित होता है।

चिकित्सा कक्ष में दवा दारू और मरहम पट्टी के अलावा सर्जन (जर्राह) का बेसिन (हाथ धोने का पात्र आदि), कीटाणु नाशक पात्र, यन्त्र मेज और रोगी की परीक्षा करने की कुर्सी रखी होती है। इसी प्रकार परीक्षा कक्ष में सभी आवश्यक साधन रहते हैं।

रोगी के द्वार पर आवश्यक सामान से लैस डाक्टर और नर्स पहुँचाने की कल्पना वास्तविकता बन गई है और अब इलाज तथा शारीरिक परीक्षाओं में काम करने का समय पहले जितना बर्बाद नहीं होता।

भारत में शिक्षा की दुर्दशा

शिक्षा विभाग की एक घातक विज्ञप्ति

★ श्री पं० [illegible] शर्मा

दूसरे विश्व युद्ध के उपरान्त ब्रिटेन में मज़दूर दल सत्तारूढ़ हुआ और प्रधान मन्त्री श्री एटली ने उच्च स्वर में घोषणा की कि 'आगे बहुसंख्यकों की प्रगति में अल्पसंख्यकों को बाधक न होने दिया जायगा।' फलस्वरूप कैबीनेट मिशन भारत में स्वायत्त शासन की स्थापना के हेतु आया। मेरे एक विश्वस्त सूत्र के अनुसार मुस्लिम लीग ने औपचारिक रूपसे यह मांग पेश की 'यदि समस्त भारत के रक्षा और शिक्षा विभाग अल्पसंख्यक दलके सिपुर्द कर दिये जायं, तो वह पाकिस्तान की मांग पर विशेष बल न देगी।' आशय स्पष्ट था यह मांग पूरी हो जाती तो सारा भारत मुस्लिम शक्ति और संस्कृति के बल पर स्वतः पाकिस्तान बन जाता। यह भी सुना है कि उच्चस्तर के कांग्रेसी नेता तैयार थे, यदि वे दोनों विभाग राष्ट्रीय मुसलमानों को दे दिये जाते। इस तथ्य को कांग्रेसी नेताओं ने अब तक गुप्त रखा है और मुस्लिम नेता कहते ही क्यों!' पर राष्ट्रीय मुसलमान शब्द से ही लीग को चिढ़ थी। उसने यह स्वीकार नहीं किया। फिर अन्य रूपसे विविध दावे पेश हुए, उनके दुहराने की अपेक्षा नहीं। २ सितम्बर, १९४६ को, लीग के शामिल न होने पर भी [illegible] की अध्यक्षता में १४ सदस्यों की कार्यसमिति बनी, उसमें रक्षा और शिक्षा दोनों विभाग अल्पसंख्यक जाति के नेताओं अर्थात् सरदार बलदेवसिंह और सर शफ़ाअत अहमदखां को मिले। सर शफ़ाअत दो ही महीने काम कर पाये थे कि उनकी हत्या लीगियों ने कर डाली। अब शिक्षा सदस्य बने श्री राजगोपालाचार्य। प्रारम्भ में श्री मौलाना अबुलकलाम आजाद अस्वस्थता के कारण अलग रहे, पर राजगोपालाचार्य के हटने पर वे शिक्षा सदस्य या मन्त्री पद पर बैठे। स्वाधीन विभक्त भारत के शिक्षा मन्त्री के नाते आज़ाद महोदय ने पहला यह पावन कार्य किया कि काबुल में राजदूत का पद सम्भालने को जाते हुए हिन्दी प्रेमी (?) डा० ताराचन्द को मार्ग में से वापिस बुला कर शिक्षा सचिव के पद पर नियुक्त किया। अनन्तर [illegible] भाषण के ब्याज से पटना में उनकी ललकार हुई कि निरन्तर [पांच वर्ष तक] कांग्रेसी राज्य की भाषा रहेगी उसकी और [illegible] से कोई न देखे और इसे [illegible] करने का विचार तो स्वप्न में भी न करें। अक्तूबर १९४७ और [illegible] ने भी [illegible] ऐसे ही राष्ट्रभाषा-विरोधी भाषण किये। अक्तूबर, १९४७ में युक्तप्रांत द्वारा हिन्दी को राज्य की अधिकृत भाषा मानने पर शिक्षामन्त्री के मस्तिष्क का सन्तुलन जाता रहा था। आगे चलकर उनके विभाग ने भारतीय संस्कृति की प्रतीक हिन्दी पर जो कुठाराघात किया, वह इतिहास में, इसलिए स्मरण रहेगा कि उससे बढ़कर बहुसंख्यकों की भाषा का उन्मूलन करने का अमोघ अस्त्र मिल नहीं सकता था। हिन्दी विरोधी तो, अपनों या अपनी भाषा की रक्षा के लिए उसे चार्टर कहते हैं। इसे निकालने से पूर्व पृष्ठभूमि तैयार कर ली गई थी। विधान न राजभाषा सम्बन्धी १७ वें भाग की रचना बहुत पहिले अर्थात् अगस्त, १९४८ में की जा चुकी थी। पाठकों की जानकारी के लिए उसका सारांश यहां दिया जा रहा है। जिन्हें अधिक देखने की इच्छा हो, वे १४ अगस्त, ४८ के गजट आफ इंडिया के पृष्ठ १०० पर देखें। खेद इस बात का बहुत है कि इस आदेश की देश द्वारा आलोचना ही नहीं की गई।

विज्ञप्ति

'भारत सरकार सभी शिक्षा शास्त्रियों की सहमति ले कर इस निष्कर्ष पर पहुंची है और प्रान्तीय तथा राज्यों की सरकारों को सूचित करती है कि वे बच्चों की शिक्षा का माध्यम ६ वर्ष से ११ वर्ष तक प्रान्तीय नहीं, क्षेत्रीय भाषा रखें। अनन्तर भी हाई स्कूल की श्रेणियों तक बच्चों को, उनकी अपनी (क्षेत्रीय) भाषा छोड़ने को बाध्य न किया जाय। यदि किसी प्रान्त में चार या अधिक भाषाएं बोली जाती हैं, तब भी चिन्ता न की जाय, क्योंकि कई प्रान्तों में ऐसी स्थिति है।' शिक्षाविभाग ने प्रांतों का जो उदाहरण दिया है, वह बड़ा रोचक है, 'बम्बई, कलकत्ता और मद्रास नगरों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। युक्त प्रान्त के कई जिलों और नगरों की भाषा बंगला बताई गई है' पर उन जिलों और नगरों के नाम नहीं लिखे गये। 'बम्बई नगर की भाषाओं में उर्दू भी गिनाई है।' इस पर हमने भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'भारत की भाषाएं' नामक अधिकृत पुस्तक देखी, उसमें उर्दू का कहीं नाम न मिला। अन्य भाषाओं की सूची जो नीचे दी गई है, उसमें १७ अन्य भाषाओं का नाम तो है। ऐसी दशा में बम्बई नगर की उर्दू भी राजभाषा है, यह [illegible] कैसे माना जाय? बम्बई के [illegible] की [illegible] तक ने इस आंदो-सम्बन्धी नीति का विरोध किया, क्योंकि एक बच्चे को, अंग्रेजी, हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड़ और उर्दू, छः छः भाषाएं पढ़ाना सम्भव नहीं है। फिर कई प्रान्त ऐसे हैं, जहां एक क्षेत्र में हिन्दी तथा दूसरे में अन्य भाषा बोली जाती है। पूर्वी पंजाब को ही लीजिए। वहां हरियाना के अधिवासियों की दुर्दशा का अन्त नहीं। उन्हें अंग्रेजी, उर्दू, हिन्दी और गुरमुखी चार चार भाषाएं पढ़नी पड़ रही हैं। फिर जब १५ वर्ष या तब शिक्षामन्त्री की आज्ञानुसार ५ वर्ष तक अंग्रेजी अनिवार्य रहेगी तो यह विरोधी आज्ञा कैसे निकाली गई! इस सारे आदेश का आशय यह है कि प्रान्त में जितनी भाषाएं बोली जाती हैं बच्चे को वे सभी आनी चाहिएं। रहे सभी शिक्षाशास्त्री, इनमें वही सज्जन हैं जिन्हें शिक्षामन्त्री ने बुलाया अथवा जिनकी राय ली गई। भारतीय संस्कृति का उपासक अथवा हिन्दी या संस्कृत-प्रेमी इन में एक भी न था!

आर्थिक दशा का उल्लेख भी इसमें किया गया है। 'यदि राज्यों की ऐसी दशा हो कि वे अधिक अर्थभार न उठा सकें तो भी यदि बालकों की उचित संख्या हो तो उनकी मातृभाषा के पढ़ाने का प्रबन्ध अवश्य करना होगा।' यह संख्या कितनी होनी चाहिए, इसका उल्लेख उसमें नहीं किया गया। वर्तमान शिक्षा-विधाता, एक अध्यापक के पढ़ाने के लिए ६०-६० बच्चों की संख्या बताने लग गये। शिक्षा-विभाग में, अपने पाण्डित्य की पराकाष्ठा की दुहाई देने वाले तीन दर्जन से भी अधिक उपाधिकारी हैं। इस प्रश्न या संख्या के निश्चित करने का उत्तर वे क्यों नहीं दे सके। सारे भारत के लिए रूपरेखा बनाना, बड़ी-बड़ी सिद्धान्तवादिता की बातें कहना, और उच्चादर्शों की स्थापना के लिए आज्ञाएं प्रचारित करना ही शिक्षा-मन्त्रालय का काम नहीं है! उसे मौलिक, व्यावहारिक, अर्थसाध्य और सुविधा-जनक तत्वों का भी उल्लेख करना चाहिये।

आगे चल कर यह बताया गया है कि इतिहास 'इसका साक्षी है किसी प्रदेश या किसी जाति के बच्चों पर बलात्-भाषा लादने का दुष्फल होता है। अंग्रेजों ने आयर में, जर्मनों ने पोलों पर अपनी भाषाओं को लादा, तो वे विद्रोही हो गये।" ठीक, पर आपका यह शिक्षा-विभाग, स्वतन्त्रता के तीन वर्ष बीतने पर भी, जनता और बच्चों पर १५ या तदोपरिक वर्षों तक अंग्रेजी लादने का परम प्रयास क्यों कर रहा है? जनता तो एक क्षण भर के लिए भी अंग्रेजी नहीं चाहती। हरियाना के बच्चों को गुरुमुखी पढ़ाने को क्यों बाध्य किया जा रहा है? और सबसे बढ़ कर अंग्रेजी अंकों और न्यायालयों की अधिकृत भाषा अंग्रेजी मानना क्या जनता को दबाना नहीं है? अंग्रेजी भाषा या अंग्रेजों के अस्तित्व से पहले इस धरातल पर क्या न्याय नहीं होता था? क्या सारा शब्द-शास्त्र निरर्थक था? यही बातें जनता को पराङ्मुख करती जा रही हैं, तिस पर वे परस्परविरोधी, भ्रांतिपूर्ण और अयथार्थ क्या कम हैं। कहना न होगा कि शिक्षा-विभाग के इसी आदेश के बल पर एंग्लोईसाइयों, सिक्खों तथा अन्य कई जातियों के नेता सर्वश्री फ्रैंक एन्थोनी, तारासिंह आदि राष्ट्रभाषाविरोधी नारे लगाते रहते हैं और तुर्रा यह कि अपनी भाषाओं को लादने और उनके गुणगान से नहीं चूकते। राष्ट्रभाषा के विरोध से तो यह देश कभी भी एक राष्ट्र नहीं बन सकता। मास्टर तारासिंह के गुरुमुखीवाले पंजाबी भाषा के प्रान्त का तात्पर्य वही है, जो १९४६ में लीगियों का था।

चोर

[पृष्ठ ११ का शेष]

था कि कुछ गेहूं चुरा कर चोर भाग गया है। अब जब यह निश्चित हो गया कि चोरी हुई है तो मैंने चिल्लाने के लिए मुंह खोला 'चोर ! चोर !!'

चाचाजी ने एकदम मेरे मुंह पर हाथ रख दिया। मैंने आश्चर्य से उनकी ओर देखा। उन्होंने हंस कर कहा—'पागल है, गेहूं चोरी जाने पर भी कहीं चिल्लाया जाता है। मुहल्ला इकट्ठा हो जायगा।'

मेरा समझ में नहीं आया कि गेहूं की चोरी पर क्यों नहीं चिल्लाया जाना चाहिये और मुहल्ला इकट्ठा होने में क्या डर है। एक बार चाची जी की एक नाक की लौंग खोई गई थी। उन्होंने गांव भर को पता लगने का सरंजाम कर दिया था।

दादी ने कहा—'अरे बाहर देह लीज में तो देखो !'

चोर को खोजा जाने लगा। देहलीज मे घुसते ही सब से पहले एक चीज पर निगाह गई। पास गया तो आश्चर्य और प्रसन्नता से उछल पड़ा।

एक कोने मे नई नकोर गरम चादर मे करीब बीस सेर गेहूं बंधे रखे थे। मालूम होता था कि पीछे हल्ला सुन कर चोर उन्हे बाहर ले जाने का साहस नहीं कर सका था और फिर कभी ले जाने की बात सोचकर उन्हे कोने में दुबका गया। मैंने देखा चादर कीमती तो नहीं है, लेकिन गरम काफी है। खुशी से उछलते कूदते हम सब ऊपर गये। खुशी इस बात की थी हजरत चौबेजी आए छब्बे बनने और गये दुबे बन कर।

रात को चाचाजी घर आए तो वह भी कुछ सुन कर सब हंसे। फिर सोचा जाने लगा कि यह किसकी कारगुजारी हो सकती है। किरपा की ? लेकिन वह चाहता तो इतने गेंहू खुद मांग कर भी लेजा सकता था। घीसू गाड़ीवान की ? वह सदा कहता गेहूं खाता ही रहता था। और दो मनी गेहुओं के ऊपर उसकी यह हिम्मत नहीं हो सकती थी। गेहूं तो वह हर एक बोरी में कांटे मार कर निकाल सकता था।

मैं चिल्लाया—'यह रामदीन की बदमाशी। वही चाचा से गेहूं मांग रहा था।'

यह तय हो गया कि यह चोरी रामदीन ने की है। हालांकि यह सवाल बाकी था कि रामदीन के पास गरम चादर कहां से आई ?

यह सवाल भी उठा कि इस चादर का क्या किया जाए। [illegible] कि जब हमारा कुछ नुकसान नहीं हुआ तो हम किसी गरीब को जाड़े में क्यों मारें, अपनी नीयत का फल वह आप परलोक में भुगत लेगा।

चाचाजी का कहना था कि पर लोक की बात कुछ निश्चित नहीं, इस लिये उसे इसी लोक में कुछ दण्ड दिया जाये। सुबह होते ही उन्होंने मेरे हाथ रामदीन को बुला भेजा।

मुझे देखने से ले कर चाचा जी के सामने आने तक रामदीन का भाव इस तरह का प्रसन्न रहा जैसे उसे घबराने की कोई वजह ही न हो। चाचा जी ने उसे घूर कर देखा।

नजर पहचान कर रामदीन ने कुछ हका बक्का होने का भाव दिखलाया। चाचा जी ने चादर उसके सामने रख कर पूछा—"तेरी है ?"

देख कर रामदीन बोला—"नहीं।"

"अबे कमीने," चाचाजी ने कहा—"क्यों मरने को फिरता है ? उस वक्त गेहूं नहीं मिले थे तो फिर मांगने से मिल जाते। जेल में भी तरसा तरसा कर ही मिलती है।"

"अब पहेलियां न बूझो, लाला," रामदीन ने चेहरा लाल कर के कहा—"अपनी कसम, रामदीन ने कभी इतनी बात सही सलामत नहीं सुनी। साफ कह दो, क्या बात है ?"

चाचाजी के नथने फूल गये, "अबे चोरी और सीना जोरी। साले, चक्की पीसता पीसता दुनिया से दफन हो जायेगा।"

"चक्की तो अब भी पीस ही रहे हैं," रामदीन अपनी उसी हेकड़ी से बोला "मगर जिस साले ने चोरी की हो और जो झूठा नाम लगाता हो, उसके घर कोई पानी देने वाला भी न रहे।"

यह सुन कर चाचा जी आग बबूला नहीं होते। ऐसी बातों को आगे के लिए उठा रखते और समय आने पर सब कसर निकाल लेते। उसी स्वर में उन्होंने कहा—"अच्छा ! रखो जी चादर को उठा कर।"

शरीर से बलवान रामदीन चाचा जी के सामने कुछ कर न सकने के कारण नीम के नीचे जा कर रो पड़ा।

उस चादर के बारे में किरपा से पूछा, घीसू से पूछा, कुछ दिन नीम के नीचे रखी गई और रामदीन उसे ताकता रहा। जब किसी ने हामी न भरी तो घर में उठा कर रख दी गई।

मलेरिया फैला और बड़े जोरों से फैला। कटहरे जाने की चार दिन की वर्षा ने मच्छर पैदा कर दिये। बड़ी लड़ाई रखो जा रही थी। लोगों की दिन रात अर्थियां निकलती देख कलेजा मुंह को आता था।

रामदीन का लड़का भाई आया, अपनी [illegible] के बच्चे को छोड़ कर चली अर गई। उस चादर वाली बात की सब भूल चुके थे। चाची जी ने कहा—"बेचारा रामदीन बड़े दुख में है, न हो तुम ही कुछ मदद कर दो।"

"अपने कोय भुगत रहा है, हराम-जादा।" चाचाजी ने बात खतम कर दी।

सुबह के समय देखा कि रामदीन हाथ जोड़े चाची जी के सामने खड़ा था। आंखें नीची कर के वह कह रहा था—"चादर मेरी है। गेहूं मैंने चुराये थे।"

चाचीजी मुंह-भौंचक कर उस की ओर देखती रह गयी। मुझे फिर भी उस से सहानुभूति हुई। वह अब दया के काबिल ही न रहा था। चुपचाप चादर उसे दे दी गई। बेचारी की आफत आगे आगई। घर में पानी देने वाले के भी लाले पड़ रहे थे। उसके बच्चे को निमो निया हो गया था।

लेकिन अब तक जो रामदीन को भला आदमी समझते थे, उन्होंने निमिष मात्र में अपनी धारणा बदल डाली। "बुरे कर्मों का फल बुरा होता है," स्त्रियां आपस में इशारे कर कर के कहतीं। "देखती नहीं रामदीन को।"

इस बीच रामदीन की सूरत दिखाई तक न दी।

कई दिन से किरपा घर नहीं आ रहा था।

उस रात चाची जी चुपचाप घर मे आये बोले—बोले "किरपा कब भी नहीं आवेगा।"

"क्यों ?" चाचीजी ने शंकित हो कर पूछा।

"उसे निमोनिया है। उसकी मा आई थी, कह रही थी कि सपने में देवी ने दर्शन दिये थे। उसकी आज्ञा के मुताबिक कहने आई थी कि गेहूं किरपा ने चुराये थे और चादर उनके मेह-मान की थी। मेरा आशीर्वाद ले गई है कि किरपा अच्छा हो जावे।

अगले दिन रामदीन अपने पानी देने वालों को उसी चादर में लपेट कर मरघट की ओर ले जा रहा था।

×

आसाम के भयंकर भूकम्प का आंखों देखा हाल

लगभग २०० जवान थे। वह समाचार निम्न प्रकार का था:—

'हम कमालखेला पोस्ट नम्बर दस से बोलता है- बहुत बड़ा खतरा आया है, क्या खतरा है बोल नहीं सकता, बहुत कम दिखाई देता है, सुनता भी बहुत कम है, खतरा बहुत बड़ा है, क्या होगा, कुछ नहीं कह सकता, था, ए'—समाप्त। इसके पश्चात् सम्बन्ध टूट गया और अभी तक इस सैनिक टुकड़ी का कोई पता नहीं लगा है।

लोहित नदी के दक्षिण और ब्रह्मपुत्र के पूर्व के प्रदेश में भी भूकम्प ने व्यापक हानि पहुंचाई है। इस भाग की मुख्य सड़क ट्रंक रोड अनेकों स्थानों पर टूट गयी है, चटक गई है और बाढ़ का पानी वेग से उसके ऊपर बह रहा है। रेल के पुल टूटने, पटरियों के बुरी तरह मुड़ जाने गाड़ियों और पुलियों के गिर पड़ने, भूमि के धस जाने उसमें बड़ी बड़ी दरारें हो जाने मकानों के गिर पड़ने आदि के अनेकों समाचार अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। बाढ़ से चढ़ी हुई ब्रह्मपुत्र में जंगलों के असंख्य वृक्ष और जानवर बह कर आ रहे हैं। अब इन बातों के स्थान पर मैं कुछ अन्य विशेष बातों का उल्लेख करूंगा।

भूकम्प से प्रभावित जिस भाग में किसी प्रकार से आ जा कर स्थिति देखी जा सकती है और सहायता की जा सकती है वह लोहित के दक्षिण तथा ब्रह्मपुत्र के पूर्व का भाग है। इस भाग में तिनसुखी, डुमडुमा, जोरहाट, गुईजान, सादिया अनेकों स्थान हैं। डिब्रूगढ़ तथा सिवसागर के बीच सड़क नष्ट हो गई है। वही दशा डिब्रूगढ़ और सादिया के बीच की है। सदिया क्षेत्र के ११ अगस्त को समाप्त हुये दौरे में देखे हुए स्थानों के समाचार संक्षेप में निम्न प्रकार हैं—

सदिया—नगर सुरक्षित है। मकानों को क्षति पहुंची है, किन्तु अधिक प्राण हानि नहीं हुई। नगर के बाहर भूमि नीचे दब गई है और पानी चारों ओर भरा हुआ है।

निजामघाट—सदिया से २४ मील दूर में है। मकानों की हुई क्षति को छोड़ कर सुरक्षित है। सदिया से निजाम घाट की सड़क पूर्णत टूट फूट गयी है और आवागमन के लिए बिलकुल अयोग्य हो गई है।

उम्मक—निजामघाट से १० मील पूर्व की ओर है। एक विशाल पर्वत टूट कर उस पर गिर पड़ा है और अभी तक [वहां का] कोई समाचार प्राप्त नहीं हुआ।

पुखेपगांव—निजामघाट से १२ मील दक्षिण में है। भयंकर क्षति हुई है और सैकड़ों व्यक्तियों की प्राणहानि हुई है।

मेका—निजामघाट से ३० मील के अन्तर पर, पूर्णत ३० फीट गहरे पानी में डूबा हुआ है।

परशुरामकुण्ड—कोई समाचार नहीं।

हेमाईघाट—पूरा पानी में डूबा हुआ है। डाक बंगला इत्यादि सब बह गये। यहां से परशुरामकुण्ड जाने वाले तीर्थयात्री लोहित नदी को पार किया करते थे जिसमें इस समय भयानक बाढ़ है। एक बड़ा पर्वत टूटकर उसके मार्ग में गिर पड़ा है। फलस्वरूप उसने दो नवीन मार्ग दक्षिण की ओर लिये हैं। इससे अनेकों स्थानों को संकट उत्पन्न हो गया है।

मारर्घिग—पर्वतों से नीचा होने के कारण पूर्णत पानी में डूबा हुआ है।

सहायता का कार्य

जहां तक भूकम्प से पीड़ित व्यक्तियों को सहायता देने का प्रश्न है, स्थिति बड़ी विचित्र है। आरम्भ में मैंने जिस सबसे अधिक क्षतिग्रस्त भाग का उल्लेख किया है अर्थात् वाली, दिहांग तथा लोहित के बीच का प्रदेश वहां की स्थिति बड़ी ही खराब है। इतने दिन बीत जाने पर भी पीड़ित और संकटग्रस्त व भूखे मरते हुए प्राणियों की सहायता के लिए कोई भी व्यक्ति पहुंच नहीं सका है। जितने व्यक्तियों ने इस क्षेत्र का निरीक्षण किया है वह सब वायुयान से ही। इस प्रदेश के चित्र भी वायुयान से ही लिये गये हैं और खाद्य सामग्री भी जो कुछ वहां डाली जा सकी है, वह सब वायु मार्ग से ही। किन्तु भूमि के मार्ग से कोई भी पहुंच नहीं सका है।

चान्दमारी (डिब्रूगढ़) में ब्रह्मपुत्र की बाढ़

इस असमर्थता के कारण संकटग्रस्त स्थानों में फंसे हुए लोगों को निकाल पाने की समस्या अभी तक वैसी ही बनी हुई है। वायु मार्ग से डाली हुई खाद्य सामग्री से भी उनका काम कब तक और कितना चलेगा यह जानने का भी कोई साधन नहीं। और अभी तक आ रहे भूकम्प के धक्के जरा से सहारे से टिके हुए कुछ प्राणियों के आधार को कब और कहां नष्ट कर देंगे कहना कठिन है। और जब तक भूभाग से सहायता नहीं पहुंचती संकट के स्थानों में फंसे हुई इन अभागे अबोर तथा मिश्मी लोगों को निकाल पाना असम्भव है,

नदियों की बाढ़

सहायता न पहुंच पाने के मार्ग में मुख्य बाधा बाढ़ से चढ़ी हुई नदियां हैं। इन नदियों में, विशेष कर ब्रह्मपुत्र में जंगल से टूटकर बहते हुए वृक्ष इतनी अधिक संख्या में आ रहे हैं कि किसी नाव का पार जाना बहुत कठिन दिखाई देता है। भूकम्प पीड़ितों से मौखिक समवेदना तो सभी प्रकट करते हैं, पैसा और अन्य सामग्री देने के लिये भी लोग तत्पर हो जाते हैं किन्तु अपने प्राणों पर खेल कर इन अबोर, मिश्मी आदि जातियों के संकटग्रस्त व्यक्ति के प्राण बचाने के लिए कौन जावे?

सैन्य अधिकारी भी अभी तक वायु मार्ग के अतिरिक्त अन्य कोई साहसिक कदम उठाने का साहस नहीं कर पाते हैं। इन [illegible] बाढ़ से चढ़ी हुई नदी को पार करना, जिसमें जंगल के जंगल बहते चले आ रहे हैं, मृत्यु के मुख में प्रवेश करने के ही समान है। पानी का बहाव इतना तीव्र है कि थोड़े ही समय में किनारे की मिट्टी कट जाती है और बड़े वृक्ष धराशायी होकर बहने लगते हैं। एक स्थान पर ब्रह्मपुत्र का जल १० दिन में २५ फीट किनारा खा गया है। अब किनारे को कटने से बचाने के लिए सरकारी कर्मचारी गिरने वाले वृक्षों में रस्से बांध कर [illegible] हुए किनारे के वृक्षों में बांध देते हैं, जिससे वह [illegible] के [illegible] वह वृक्ष किनारे लग जावें और इस किनारे पर जल का वेग कम हो जावे।

शक्तोमपुर और सदिया में जगह जगह भूमि फट गई है ऐसे एक स्थल का दृश्य

राष्ट्रीय स्व० सेवक संघ

इस दिशा में [कुछ] करने के लिए आगे बढ़ते हुए कुछ नौजवान यदि दिखाई देते हैं तो वह आसाम प्रान्तीय राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ द्वारा स्थापित की गई भूकम्प पीड़ित सहायता समिति के अन्तर्गत कार्य करने वाले संघ स्वयं सेवक हैं।

मुझे इन लोगों से सहायता-कार्य संगठित करने के जिस संगठन कौशल तथा प्राणों को जोर संकट में डाल कर भी घिरे हुए लोगों को निकालने के लिए आवश्यक जिस साहस का अन्य कहीं स्थानों पर परिचय मिला है वही यहां भी दिखाई दिया।

[शेष पृष्ठ २४ पर]

चित्रलोक

तीन नये चेहरे

योग्य निर्देशक किशोर साहू अपने आगामी चित्र 'काली घटा' में फिल्म दर्शकों के समक्ष तीन नये चेहरे—बीना-राय, आशा माथुर और इन्दिरा पंचाल— प्रस्तुत कर रहे हैं। इन्हें २००० उम्मीदवारों में से चुना गया है। इस फिल्म की कहानी साहित्यकार किशोर साहू ने स्वयं लिखी है और निर्देशन भी वह स्वयं कर रहे हैं।

सिनेमा घरों में धूम्रपान करने वाले गिरफ्तार किये जायेंगे

सिनेमा घरों में धूम्रपान करने से आस पास बैठे दर्शकों को कष्ट ही अनुभव नहीं होता, चित्र के अस्पष्ट दीखने से उसका मजा भी मारा जाता है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए पश्चिमी बंगाल की विधान सभा के आगामी अधिवेशन में एक बिल प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसके अनुसार पुलिस को सिनेमाघरों में धूम्रपान करने वाले किसी भी व्यक्ति को बिना वारन्ट गिरफ्तार करने का अधिकार होगा और अभियुक्तों को एक १०० रु० तक के जुर्माने का दण्ड दिया जा सकेगा।

आगाखां रजतपट पर

संसार के प्रसिद्ध धनिक और इस्मा-इलिया सम्प्रदाय के धर्मगुरु सर आगा खां— जो कि हालीवुड की सुप्रसिद्ध अभिनेत्री रीता हेवर्थ के श्वसुर भी हैं—के जीवन के आधार पर मैक्सिको की एक फिल्म कम्पनी एक चित्र तैयार कर रही है। सर आगा खां स्वयं इस चित्र के निर्माण-कार्य में रुचि ले रहे हैं। फिल्म में सर आगा खां के निजी जीवन को चित्रित नहीं किया जायगा। अलबत्ता लोगों के विषय में उनकी हलचलों के कुछ दृश्य फिल्म में रहेंगे। इस फिल्म के निर्माण के लिए निर्माता को अफ्रीका के अलावा भारत भी आना पड़ेगा और पर साढ़े तीन पौंड व्यय आयगा।

अमेरिका फिल्म-निर्देशकों पर पाबन्दी

अमेरिका के स्क्रीन डायरेक्टर्स गिल्ड के एक प्रस्तावानुसार हालीवुड के समस्त फिल्म-निर्देशकों को यह शपथ लेनी पड़ेगी कि वे कम्यूनिस्ट नहीं हैं। यह कदम इसलिए उठाया गया है, ताकि अमेरिका का कोई कम्यू० फिल्म-निर्देशक के रूप में आजीविका न कमा सके।

हिंदू धर्म का अपमान करने वाली फिल्म पर रोक

लन्दन में 'पूर्व की दुल्हिन' नामक एक अंग्रेजी चित्र के प्रदर्शन पर पाबन्दी लगा दी गई है। यह प्रतिबन्ध भारत, पाकिस्तान और श्री लंका के लन्दन स्थित कूटनीतिक प्रतिनिधियों के इस विरोध पर लगाया गया है कि इसमें [illegible] और बौद्ध [illegible] गया है।

'झांसी की रानी' का निर्माण

पिछले दिनों ऐतिहासिक चित्रों के प्रसिद्ध निर्माता सोहराब मोदी ने १८५७ के स्वातन्त्र्य-संग्राम की नायिका झांसी की रानी लक्ष्मी बाई के स्फूर्तिदायक जीवन के आधार पर फिल्म बनाने की घोषणा की थी। अब इसी विषय में फिल्मिस्तान वालों ने भी फिल्म बनाने की घोषणा कर दी है और उन्होंने इसके दिग्दर्शन का भार हेमेन गुप्त पर सौंपा है।

'सिरही की रात' में ओम

शांताराम की नयी फिल्में

दिग्दर्शक वा. शान्ताराम ने 'दहेज' के निर्माण के बाद दो नये चित्रों की घोषणा की है। एक फिल्म का नाम 'परछाईं' होगा, जिसकी कहानी 'दहेज' चित्र के कथा-लेखक शम्स लखनवी ने लिखी है। इस फिल्म का शूटिंग इस मास से आरम्भ हो गया है। दूसरी फिल्म की कहानी शान्ताराम के प्रायः कई सफल चित्रों के कथा लेखक दीवान शरर लिख रहे हैं।

'आन' पर 'चन्द्रलेखा' से भी अधिक व्यय होगा

दिग्दर्शक महबूब के नये चित्र 'आन' की अभी केवल तीन या चार रीलें ही तैयार हुई हैं और केवल उन्हीं पर दस लाख रुपये के आस पास व्यय हो चुका है। इन तीन-चार रीलों की शूटिंग में ११० शूटिंग-दिन खर्च हो चुके हैं जब कि महबूब की पिछली फिल्म 'अंदाज' केवल ७० शूटिंग-दिनों में हो गया था। 'आन' पर जैमिनी के 'चन्द्रलेखा' से भी अधिक व्यय आने की सम्भावना है, ('चन्द्रलेखा' पर २९ लाख रुपया व्यय आया था)। यह फिल्म रंगीन (टेक्नीकलर) [illegible] सन् १९५१-५२ के [illegible] की सम्भावना है।

'सोने की चिड़िया' का एक दृश्य

शरणार्थी समस्या

[२]

श्री 'आनन्द'

भारत में आने वाले शरणार्थी प्रवाह को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि इस उन कारणों पर विचार करें जिनके वश से एक विशाल जनसमूह अपने निवास स्थान, घर द्वार, धन संपत्ति आदि सब कुछ छोड़ कर निकल आया है, निकल कर आता रहा है और भविष्य में भी निकल आने की प्रबल संभावना है। कोई भी मनुष्य आज अपना सर्वस्व छोड़ कर अकारण नहीं सकता। जनसंख्या के भागने का कारण एक ही होता है कि उनके वहां रहने के लिये असह्य परिस्थितियां उत्पन्न हो गई हैं।

वे परिस्थितियां यदि प्राकृतिक हों, जैसे आसाम का भूकम्प, तो उनके कुछ समय पश्चात् शान्त हो जाने पर भागने वाले निवासी पुनः उस क्षेत्र में बसने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु यदि वे परिस्थितियाँ मानवकृत हों तो स्थिति बदल जाती है। मनुष्यों अथवा मनुष्य निर्मित संस्थाओं, जिन में से राज्य भी एक है, द्वारा जब इस प्रकार की परिस्थितियां उत्पन्न की जाती हैं कि मानवों की एक विशाल संख्या का किसी क्षेत्र में निवास असम्भव बना दिया जावे तो वहां उन्हें दूर करने के लिए उनकी उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी क्षेत्रों को ही ठीक करना पड़ता है।

पाकिस्तान की सरकार दोषी

अतः इस पक्ष पर विचार करते हुए हमें पाकिस्तान के अन्दर की स्थिति पर थोड़ा सा विचार करना पड़ेगा। यह एक निश्चित तथ्य है कि भारत से टूट कर पृथक हुए उस भूभाग में मुसलिम लीग के नेतृत्व में मुसलमानों ने हिन्दुओं का जीवन असम्भव बना दिया। इस कार्य में पाकिस्तान की सरकार न केवल पूर्ण सहयोग रहा वरन इस विशाल हत्याकांडों की आयोजना उसी के द्वारा की गयी। मुस्लिम लीग के गुण्डों का कार्य तो सरकारी योजनाओं के अनुसार साधारण मुस्लिम समाज को उत्तेजित कर लूट-मार तथा हत्याकाण्ड करने का था। इसमें जहां कहीं उन्हें कठिनाई आती है, वहां पाकिस्तानी पुलिस, सेना तथा अन्यान्य शासन करने वाले अधिकारी उन्हें दूर करने के लिये आगे आते रहे हैं।

हिन्दू नागरिकों से शस्त्रास्त्र वापिस ले लिये गये हैं। मुस्लिम वर्गों को सभी प्रकार के शस्त्रास्त्र दिये गये हैं। राइफल ही नहीं, मशीनगन तक दी गई है। आग लगाने के लिये उन्हें पेट्रोल पानी की तरह दिया गया। सेना के सिविल सैनिकों को छुट्टी दी गयी, जिससे वे उन्मुक्त जीवन में रह कर कार्य कर सकें। [illegible]

कहीं हिन्दू नागरिक आत्मरक्षा में कुछ प्रतिरोध कर सके वहां मजिस्ट्रेट आदि स्वयं ने जाकर तलाशी लेकर उन्हें पूर्ण निरस्त्र कर दिया। मुसलमान जो चाहे कर सकते थे। कर्फ्यू लाहौर के मि० चीमा को बहुत से लोग अभी भूले न होंगे। लाहौर में शाहालमी दरवाजे के हिन्दू गढ़ के तोड़ने का श्रेय उन्हें ही प्राप्त है। शान्ति स्थापन की आड़ में सेना को सब कुछ करने का आदेश था। बलूच रेजिमेंट के कारनामें, उदाहरणार्थ शेखूपुरा इसके प्रमाण हैं।

ऐसी दशा में यह प्रमाणित करने के लिए बहुत दूर जाने की आवश्यकता नहीं कि पाकिस्तान की सरकार इस सब समस्या के लिए उत्तरदायी है। किन्तु दूसरी ओर वही इस सब का दोष भारत के सिर मढ़ने में कोई भी कसर उठा नहीं रखती। आज तक भी स्थिति उसी प्रकार की है। अतः यह निश्चित है कि नेहरू-लियाकत समझौता अथवा अन्य इस प्रकार के सभी मार्ग तब तक पूर्णतः निरर्थक और भारत को धोखे में डालने वाले हैं, जब तक कि पाकिस्तान सरकार की अक्ल ठिकाने से नहीं लाई जाती। यथार्थ में जिस दिन पाकिस्तान सरकार को हम यह अनुभव करा सकेंगे कि उसके क्षेत्र के किसी भी हिन्दू को, जो न्यायपूर्ण सभ्य नागरिक जीवन बिता रहा है। वहां से उखड़ने के लिए बाध्य करने वाली परिस्थितियां यदि उसने उत्पन्न की तो भारत सरकार इस प्रकार की परिस्थितियां उत्पन्न कर सकती है जिससे पाकिस्तान की कठिनाइयों की सीमा नहीं रहेगी।

उपाय

यह करने के लिये कौन से मार्ग हो सकते हैं यह एक विचारणीय प्रश्न है। सर्व प्रथम यह आवश्यक है कि नेहरू सरकार अपनी नीति में परिवर्तन करे। पाकिस्तान की प्रत्येक दिशा में खुशामद करने, उसे नाराज न करने। किसी भी मूल्य पर उससे मित्रता बनाए रखने के लगातार हुए प्रयत्नों के परिणामस्वरूप ही मुस्लिम लीग और आज पाकिस्तानी सरकार का यह विचार बना हुआ है कि वे चाहे जितना लूटें, चाहे जितनी बेईमानी करें, चाहे जितने हिन्दुओं को मारें, स्त्रियों का अपहरण करें। किन्तु अपनी [illegible] की प्रवृत्ति अवस्था को लेकर [illegible] नेहरू सरकार कभी भी [illegible] कोई [illegible]

विचार तक नहीं कर सकेगी। यदि कभी किया भी तो अपनी शरारतों को और अधिक बढ़ाने से नम्र हो जावेगी। और यदि इस पर भी यह दिखाई दिया कि वह कोई कठोर विचार कर रही है तो थोड़ा सा नीचे झुक कर मित्रता का हाथ उठाते ही यह पिछला सब कुछ भूल कर मिलाने के लिए टूट पड़ेगी और सारे खून मार लूट का दोष कागज पर किये गये हस्ताक्षरों की स्याही के सूखने के साथ ही समाप्त हो जायगा।

दूषित मनोवृत्ति

पाकिस्तान की इस मनोवृत्ति को बदलना सर्व-प्रथम आवश्यक है। भारत की नेहरू सरकार पाकिस्तान से मित्रता बनाये रखने की अपनी सारी उत्सुकता को तिलाञ्जलि दे दे। मेरा अर्थ यह नहीं है कि युद्ध की घोषणा करदे अथवा आक्रमण कर दे, कदापि नहीं। किन्तु अपनी ओर से पाकिस्तान सरकार के पीछे लगना बिलकुल बन्द करदे। पाकिस्तान को भारत से व्यवहार करने का अवसर दे और इस प्रकार उसे यह अनुभव कराये कि अब तक जो कुछ हुआ वह हो चुका, भविष्य में वह जिस प्रकार का व्यवहार भारत से अथवा भारतीय हितों से करेगा ठीक उसी प्रकार के व्यवहार की अपेक्षा वह अपने लिए भारत से रखे। इस प्रकार सीधा अर्थ यह होगा कि पाकिस्तान भारत से अपने प्रति जिस प्रकार का व्यवहार चाहता है वैसा स्वयं ही पहिले भारत के प्रति बनाने के लिए उत्तरदायी होगा।

मुस्लिम लीग और पाकिस्तान सरकार से व्यवहार रखने में कांग्रेस तथा कांग्रेस सरकार ने आज तक पहल अपने हाथ में रखी है। 'वे कुछ भी करते रहें, हम अपनी ओर से आवश्यकता से भी अधिक ठीक व्यवहार करेंगे।' यह कहने की आवश्यकता नहीं कि कांग्रेसी नेताओं और स्वयं स्व० महात्मा जी की उदार से उदार भावनायें होते हुए भी आज देश के सम्मुख खड़े हुए संकटों के पहाड़ में से एक बहुत बड़े भाग का कारण उनकी यह नीति रही है। मेरे कहने का अर्थ यह है कि परस्पर व्यवहार करने में वह पहल जो आज तक कांग्रेस ने अपने हाथ में रखी अब पाकिस्तान के हाथ में दे और स्वयं जैसा-जैसा व्यवहार वह करता चले, वैसा-वैसा व्यवहार उसके साथ करती चले।

पहल लियाकत की हो

इसका अर्थ यह होगा कि हम अपनी ओर से पाकिस्तान से व्यापारिक समझौते की चर्चा नहीं चलायेंगे। भारत-पाक व्यापार से केवल भारत को ही लाभ हो ऐसी बात नहीं है। पाकिस्तान को भी भारतसे व्यापार बनाये रखना उतना ही आवश्यक है जितना भारत को, बल्कि उससे भी अधिक। यदि पाकिस्तान को उतना ही आवश्यक न होता तो अब तक दोनों देशों में चलने वाला व्यापार किसी न किसी कारण से बन्द हो गया होता और नेहरू सरकार के लाख सिर पटकने पर भी पुनरारम्भ नहीं होता। पाकिस्तान भारत से अनेकों वस्तुएं ऐसा लेता है, जिसके बिना उसका जीवन कठिन हो जायेगा। अत उसे ही व्यापारिक संधि करने के लिये वार्तालाप आरम्भ करने का श्रेय दिया जावे और जितनी सुविधायें वह भारत से चाहता है उतनी ही उसकी सीमाओं में उसके भारतीय व्यापारियों के लिए लेकर संधि करनी जावें। साथ ही यह बिलकुल असंदिग्ध शब्दों में स्पष्ट कर दिया जावे कि स्वीकृत शर्तों में किसी प्रकार भंग होते ही समझौता भंग समझा जावेगा।

संभव है कुछ लोग मेरे इस विचार को हास्यास्पद बतायेंगे और कहेंगे कि यह कैसे हो सकता है! किन्तु मेरा निवेदन है कि यदि वे थोड़ा गंभीरता-पूर्वक विचार करेंगे तो इस बात की यथार्थता उन्हें स्पष्ट हो जायगी। अपने जीवन के लिए कई आवश्यक चीजें हम पाकिस्तान से लेते हैं और उसके लिए आवश्यक देते हैं। माना कि यह पारस्परिक व्यापार बन्द हो गया, तो क्या हम मर जायेंगे? उन वस्तुओं के अभाव में जीवित नहीं रह सकेंगे? क्या उनके उत्पादक साधनों का विकास अथवा उनका स्थान लेने वाली किसी वस्तु का विकास हम नहीं कर सकेंगे? और यदि हम यह नहीं कर सकेंगे तो क्या पाकिस्तान भारत से आयात होने वाली वस्तुओं के अभाव को पूरा कर सकेगा? हमारी और पाकिस्तान की स्थिति बहुत कुछ समान है। फिर हम ही क्यों प्रत्येक विषय का आरम्भ करें? उसे ही क्यों न करने दें? हमने आज तक यह करके पर्याप्त से भी अधिक देख लिया है।

राजनीतिक सम्बन्ध भी

यही बात राजनीतिक संबन्धों में भी आनी चाहिए। यदि परस्पर मित्रता रखना आवश्यक है तो जितना वह भारत को है, उतना ही पाकिस्तान को भी है। फिर वह मित्रता के सम्बन्ध उत्पन्न करने का श्रीगणेश उन्हें ही करने दें और वे जिस प्रकार की शर्तों पर संबन्ध रखना चाहते हों, उसी प्रकार की शर्तें उनको भी स्वयं कर आगे रखें। यदि परस्पर

क्रमाक्रमण सन्धि आवश्यक है तो वह जितनी भारत को है उससे अधिक पाकिस्तान को है। फिर यह प्रस्ताव उनकी ओर से ही आने दें, और उनके व्यवहार के अनुसार हम अपना व्यवहार बनायें।

कुछ लोग कहेंगे कि अपने पड़ोसियों से मित्रता बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है। फिर पाकिस्तान के साथ तो हमारी सीमा इतनी अधिक दूर तक लगती है, और वह भी ऐसे पहाड़ी और रेतीले भागों में होकर, जहां पहुंचने के लिए यातायात के वर्तमान साधन बहुत दूर छोड़ देने पड़ते हैं। अतः हमें पाकिस्तान से मित्रता उत्पन्न करनी चाहिए। और मधुर सम्बन्ध बनाने चाहिए।

ठीक है, किन्तु मेरा प्रश्न है कि क्या यह सिद्धान्त केवल भारत के पालन करने के लिए है और पाकिस्तान के लिए नहीं? क्या भारत को ही पड़ोसी से मित्रता बनाये रखनी चाहिये, और पाकिस्तान को बनाये रखना आवश्यक नहीं है? क्या हमारी ही सीमा पाकिस्तान से लगती है, पाकिस्तान की सीमा हम से नहीं लगती? यदि हमें उसकी सुरक्षा की चिन्ता है तो क्या उन्हें नहीं है? किसी भी दृष्टि से विचार करें भारत का पलड़ा बराबरी से हलका नहीं पड़ता। ऐसी दशा में जो करना चाहते हैं वह यदि दोनोंके लिए आवश्यक और हितकर है और पारस्परिक सहयोग के बिना हो नहीं सकता, उसका प्रस्ताव उन्हीं की ओर से आने दें और तदनुरूप सहयोग अथवा बहिष्कार करें।

यदि गंभीरता से विचार करें तो अपनी ओर से पहल करने की इस मनोवृत्ति के कारण भारत सरकार ने जितनी हानि उठायी है, अन्य किसी कारण से नहीं उठायी। किन्तु यह चीज़ पाकिस्तान पर डाल देने से हम न केवल अपनी अनेकों समस्याओं को समाप्त होती देखने लगेंगे, वरन पाकिस्तान को भी ठीक होता देखेंगे। किन्तु इसके लिए आवश्यक है दृष्टि कोण में मूलतः परिवर्तन। पाकिस्तान के हाथ बढ़ाने पर ही हाथ बढ़ाना, अन्यथा हाथ उठाने की इच्छा तक का भी प्रदर्शन नहीं करना। यदि यह मूल परिवर्तन हुआ तो मियां लियाकत अली खां यह समझ सकेंगे कि पाकसीमा में हिन्दुओं पर होने वाले अत्याचारों के भारत में बहुत व्यापक परिणाम हो सकते हैं—परिणाम जो अन्य किसी के लिए नहीं, स्वयं पाकिस्तान के हितों में हानिकारक होंगे।

नासिक

[पृष्ठ ७ का शेष]

है प्रभु परम मनोहर ठाऊं।
पावन पंचवटी तेहि नाऊं॥
सो बन बरनि न सक अहिराजा।
जहां प्रगट रघुबीर बिराजा॥

पंचवटी में रामायण काल के अनेक स्थान बने हुए हैं। उनमें से कुछ वास्तव में प्राचीन हैं और कुछ पंडों द्वारा निर्मित। पंचवटी नाम पड़ने के कारण स्वरूप वहां आज भी पांच वटवृक्ष निकट निकट दिखाये जाते हैं। नासिक तीर्थक्षेत्र तो है ही प्रमुख आवक्षेत्र भी है। प्रति बारहवें वर्ष यहां कुंभ का मेला लगता है। यहां नदी के बीच में पत्थर से बांधे कई कुंड हैं जिनमें राम कुंड सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इस कुंड में एक ओर छोटा सा कुंड है और उसे अस्थिविलय तीर्थ कहते हैं। भारत के कोने कोने से श्रद्धालु हिन्दू यहां आकर अपने पितृ सम्बन्धियों की अस्थियां उन्हें पावन परम पवित्र गति प्राप्त होने के लिये कुंड में डाला करते हैं। कहा जाता है कि कुंड में डाली गई अस्थियां तत्काल अदृश्य हो जाती हैं। इसी कुंड में महात्मा जी की भी अस्थियां विसर्जित की गईं थी। नासिक का दूसरा नाम दक्षिण काशी भी है।

आज नासिक का प्रमुख व्यवसाय पीतल के सुन्दर बर्तन तंबूर तथा बीड़ी का है। १९३८ में स्वर्गीय डा० मुंजे ने यहां भोंसला मिलिटरी स्कूल की स्थापना की थी और यह अभी भी समुचित कार्य कर रहा है।

नासिक के निकट देखने योग्य कई स्थल हैं, जिनमें १८ मील पर गोदावरी का उद्गम स्थल त्र्यंबकेश्वर, समर्थगुरु रामदास का तपस्यास्थल टाकली, गंभीर चिंतन तथा मनन के उपयुक्त अति प्राचीन स्थल तपोवन, तथा श्री अहिल्याबाई होल्कर चांदुर का दुर्ग अत्यन्त प्रसिद्ध है।

इस प्रकार भारतीय और धार्मिक परंपरा से परिपूर्ण, राजनीतिक दृष्टि से उग्र विचारधारा से भरे नासिक में भारतीय राजनीति का ऊंट किस करवट बैठता है, इस ओर सारे ही भारत की दृष्टि लगी हुई है।

भारतेन्दु

(पृष्ठ १ का शेष)

इन सब विशेषताओं के होते हुए भी भारतेन्दु मंडल में एक बहुत बड़ी कमी है और वह है प्रकृति के प्रति उदासीनता। हिन्दी में प्रायः प्रकृति वर्णन का अभाव ही रहा है। भारतेन्दु ने भी उस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया, उन्होंने पर्वत, नदी, वन-उपवन आदि के प्रति अपना मोह नहीं दिखाया। इस-पांच आदमियों में बैठ कर उनकी मनोवृत्तियों की सूक्ष्म विवेचना करने में जो वह सफल थे पर प्रकृति से निराश थे, एक-दो स्थानों पर उन्होंने प्रकृति वर्णन किया भी है — जैसे —

नव उज्ज्वल जल धार,
हार हीरक सी सोहति।
बिच-बिच छहरत बूंदें,
मध्य मुक्ता मनु सोहति
अथवा
तरनि तनूजा तट तमाल,
तरुवर बहु छाये।
झुकें कूल सों जल,
परसन हित मनहुं सुहाये।

परन्तु भारतेन्दु की आत्मा इन पदों में रमी नहीं, अतः उन्हें विशेष सफलता भी नहीं मिली।

वीर अर्जुन

दिल्ली रविवार, १५ आश्विन सम्वत २००७

DELHI 1st. October 1950

दिल्ली सम्राट पृथ्वीराज चौहान द्वारा बनवाया हुआ यमुनास्तंभ जिसे भूल से आज कुतुबमीनार कहा जाता है।
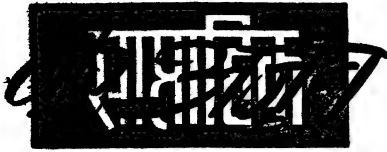
अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७]   दिल्ली, रविवार १२ आश्विन सम्वत् २००७   [अङ्क २४

कोरिया युद्ध का नया प्रश्न

कोरिया-युद्ध का पासा पलट गया। दक्षिणी कोरिया में अमेरिकन सेनाओं को धकेलती हुई विजयिनी कम्यूनिस्ट सेनाएं अब उससे भी अधिक तेजी से पीछे भाग रही हैं, जिस तेजी से वे आगे बढ़ रही थीं। अमेरिकन सेनाओं ने उनके पीछे पहुंच कर सारे मोर्चे की स्थिति को बदल दिया है। दक्षिणी कोरिया की राजधानी सिओल पर अब संयुक्तराष्ट्र संघ की अमेरिकन सेनाओं का अधिकार हो गया है। अब इस बात की भी सम्भावना नहीं रही कि युद्ध की स्थिति में कोई परिवर्तन हो सकेगा। रूस और चीन की सहायता उत्तरी कोरिया को मिलेगी इसके भी कोई लक्षण दृष्टिगोचर नहीं हो रहे। इसलिए अब उत्तरी कोरिया और रूस की ओर से संधि प्रस्ताव रखे जाने की अफवाहें भी उड़ने लगी हैं और यह असम्भव नहीं कि इस सप्ताह के अन्त तक ये अफवाहें सत्य का रूप धारण कर लें।

कोरिया युद्ध की समाप्ति की संभावना के साथ साथ नयी समस्याएं भी उठ खड़ी हुई हैं। क्या संयुक्तराष्ट्र संघ की सेनाएं दक्षिणी कोरिया से कम्यूनिस्टों को निकाल कर दम लेंगी या उसके आगे उत्तरी कोरिया में बढ़ कर उस पर भी अधिकार कर लेंगी? अगर वे उत्तरी कोरिया में प्रवेश नहीं करतीं और वहां जाकर आक्रमणकारियों को दण्ड नहीं देतीं, तो फिर शायद दक्षिणी कोरिया में उठाया गया अधिकांश भारी कदम व्यर्थ जायगा। आक्रान्ता को केवल उत्तरी कोरिया से निकाल देने मात्र से सारी समस्या हल नहीं हो जाती। वहां आक्रमणकारी फिर किसी दिन तैयारी करके दक्षिण कोरिया पर हमला कर सकता है। जब तक आक्रमणकारी को कोई दण्ड नहीं दिया जाता, तब तक युद्ध और आक्रमण न करने के लिए किसी को विवश नहीं किया जा सकता, इसलिए सिद्धांत और व्यवहार दोनों दृष्टियों से यह आवश्यक है कि उत्तरी कोरिया में जा कर वहां आक्रमणकारियों को दण्ड दिया जाय। ब्रिटिश सरकार की ओर से संयुक्त और स्वतंत्र कोरिया की स्थापना, संयुक्तराष्ट्रों की देखरेख में स्वतंत्र चुनाव तथा संयुक्तराष्ट्र-कमीशन की स्थापना आदि का जो सुझाव रखा गया है, वह उक्त आशय को ही पुष्ट करता है। इसके बिना संयुक्तराष्ट्र संघ का उद्देश्य पूर्ण नहीं होगा। आज तक जो युद्ध हुआ है, उसने आक्रान्त दक्षिणी कोरिया का ही ध्वंस किया है, उत्तरी कोरिया की सैन्यशक्ति अवश्य क्षीण हुई है, किन्तु और किसी तरह का नुकसान उसे नहीं हुआ। इससे न उसका बल बहुत कम हुआ है और न उसे आक्रमण न करने की शिक्षा मिली है। कोरिया का मामला केवल युद्ध प्रारम्भ होने पर पैदा नहीं हुआ। यह प्रश्न तो उसी दिन पैदा हुआ था, जब उत्तरी कोरिया में संघ के कमीशन को जाने की अनुमति नहीं दी गयी थी। तभी उत्तरी कोरिया के कम्यूनिस्ट अधिकारियों ने संयुक्तराष्ट्र संघ से संघर्ष मोल ले लिया था। इसलिए यदि संयुक्तराष्ट्र संघ उत्तरी कोरिया में अपनी सेना भेजने का निश्चय करता है, तो वह किसी तरह असंगत नहीं है।

किन्तु इसी के साथ ही व्यावहारिकता तथा रूस और चीन के भावी रुख के प्रति शंका और संदेह को देखते हुए यह असंभव नहीं है कि उत्तरी कोरिया पर असली आक्रमण न किया जाय, पर उसे दण्ड देने के लिए कोई न कोई कदम उठाया अवश्य जायगा।

जो कोई कदम संयुक्तराष्ट्र संघ उठाये, उसे यह नहीं भूलना चाहिए कि वैसा ही उदाहरण काश्मीर में भी उपस्थित है। संघ द्वारा नियत मध्यस्थ श्री डिक्सन ने आजाद काश्मीर व पाकिस्तान को आक्रमणकारी स्वीकार किया है। राष्ट्रसंघ का कर्तव्य है कि अपनी सेनाएं भेज कर आक्रमणकारी को न केवल निकाले, बल्कि पाकिस्तानी सेनाओं के अन्तर्गत काश्मीर प्रदेश को भी भारत के साथ मिला दे, तभी सं० राष्ट्रसंघ न्याय और अपना विश्वास संपादन कर सकेगा।

★

सच्ची जयन्ती

महात्मा गांधी के मानवता की वेदी पर बलिदान होने के बाद उनकी तीसरी जयन्ती इस सप्ताह मनाई जा रही है। यह जयन्ती न जाने कितने वर्षों से चरखा-जयन्ती, गांधीजी सम्बन्धी सभाओं तथा समारोहों और पत्रों के विशेषांकों के प्रकाशन के रूपमें मनाई जाती रही है और इस वर्ष भी मनाई जायगी। किंतु क्या इससे सचमुच गांधी-जयन्ती मनाने का उद्देश्य पूर्ण हो जायगा? आज प्राय सभी कांग्रेसी और सोशलिस्ट नेता अपने भाषणों और लेखों में गांधी जी का नारा लगाते हैं। सभी सार्वजनिक कार्यकर्ता गांधीजी की दुहाई देकर अपनी अपनी बात कहना चाहते हैं, किन्तु सचाई यह है कि आज बड़े से बड़े नेता भी केवल उनके नाम का नारा लगाते हैं, उनके सिद्धान्तों को कोई अपनाना नहीं चाहता। म० गांधी के प्रमुख सिद्धांत थे उद्योग और सत्ता का विकेन्द्रीकरण, जीवन में सादगी और पवित्रता। परन्तु कांग्रेस सरकारों की नीति में इन सिद्धान्तों की जो अवहेलना दिखाई देती है, उसे कौन नहीं जानता? यही कारण है कि सर्वोदयवादी कार्यकर्ता सरकारी नीति से जितने अधिक असंतुष्ट हैं, उतने उस से समाजवादी नेता भी नहीं, भले ही वे अपना विरोध उग्रता से प्रकट न करें। जब तक सरकार के ऊंचे पदों पर आसीन अधिकारी और कांग्रेस के उत्तरदायी नेता गांधीजी का नारा छोड़कर उनकी शिक्षाओं पर आचरण नहीं करेंगे, गांधी-जयन्ती के ये उत्सव किसी भी तरह लाभकारी सिद्ध नहीं होंगे, 'गांधीजी राष्ट्र के जनक थे', का नारा लगाने वालों के शासन में सरकारी भवनों में लाखों रु० का करका अपव्यय पड़ा है, सरकारी मंत्री और ऊंचे अधिकारी हजारों रु० प्रतिमास वेतन या भत्ते के रूपमें ले रहे हैं, वनस्पति घी के कारखाने बढ़ते जा रहे हैं, ट्रैक्टरों का नया युग आ रहा है, यह सब गांधी जी की महान् आत्मा का उपहास है। इसके बाद भी हम किस तरह गर्व के साथ गांधीजी का नाम ले सकते हैं?

चिन्तनीय स्थिति

भारत सरकार के पुनर्वास-संस्थापन कार्यालय ने कुछ समय पहले शरणार्थियों को ३१ अगस्त तक पाकिस्तान में छोड़ी गई सम्पत्ति के दावे दर्ज कराने की सूचना दी थी, किन्तु यह देख कर सचमुच बहुत आश्चर्य हुआ कि अपनी अपनी सम्पत्ति का मुआवजा लेने के लिए अत्यन्त उत्सुक जनता ने इस आनन्दप्रद सूचना से कोई लाभ नहीं उठाया और १० की सदी से अधिक आवेदनपत्र सरकार के पास नहीं पहुंचे। सरकार ने फिर घोषणा की कि ३० सितम्बर तक शरणार्थी दावे दर्ज करा सकते हैं और यह तारीख फिर नहीं बढ़ाई जावेगी। इसके साथ ही यह सूचना भी दी गई कि सरकार इन दावों के अनुसार प्राप्त सम्पत्तियों से एक अनुपात से मुआविजा देगी, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इस आश्वासन का भी प्रभाव शरणार्थियों पर नहीं पड़ा। अब यह अवधि ३१ अक्तूबर तक बढ़ाई गई है। आखिर इसका कारण क्या? क्यों नहीं शरणार्थी अपनी अपनी नष्ट संपत्ति के दावे पेश कर देते? इसमें उन्हीं का तो लाभ है। अगर शरणार्थी अब दावे पेश नहीं करते, तो इसका मुख्य कारण यह है कि उन्हें सरकारी सूचनाओं और आश्वासनों पर विश्वास नहीं रहा। सरकार ने न जाने कितने आश्वासन दिये, वे पूर्ण होते ही नहीं। कितनी बार जनता ने अपने दावे उपस्थित किये, किन्तु उन पर कार्यवाई होती ही नहीं। यही कारण है कि सरकार की अच्छी से अच्छी सूचनाओं को भी जनता गम्भीरता से नहीं लेती। सरकारी आश्वासनों पर जनता का विश्वास न रहे, यह स्थिति किसी भी राज्य के लिए चिन्ताजनक है।

समझौता सफल

पं० जवाहरलाल नेहरू पिछले अप्रैल में किये गये भारत-पाक समझौते के सम्बन्ध में अत्यन्त आग्रहशील हैं। वे इसके विरुद्ध आलोचना को सुनना भी पसन्द नहीं करते। संसद में या नासिक कांग्रेस में वे बहुत दृढ़ता के साथ समझौते का समर्थन करते देखे गये हैं। इस समझौते से उनका मोह स्वाभाविक है, इसे उनकी महान राजनीतिज्ञता का प्रमाण माना गया था। किन्तु जो राजनीतिज्ञ दूसरा पहलू नहीं देखता, वह धोखा खाता है। कांग्रेस-विरोधी के मुख से पं० नेहरू ने सच को सुन कर भी झूठ माना है। किन्तु बंगाल व आसाम के राज्यपालों द्वारा जब इस समझौते की सफलता के संबन्ध में संदेह प्रकट किया जाता है, तब उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। बंगाल के गवर्नर डा० काटजू कहते हैं कि समझौता कहां तक अपने ध्येय में सफल हुआ है, यह अब तक पता ही नहीं चला। आसाम के राज्यपाल श्री जयरामदास दौलतराम के शब्दों में भारत ने जिस तरह मुसलमानों को वापस बुला कर उन्हें बसाने की समस्या का समाधान कर लिया है, दुःख है कि इसके बदले पूर्वी बंगाल में हिन्दुओं के विश्वास लायक स्थिति उत्पन्न नहीं की जा सकी। हम पं० नेहरू से यह अनुरोध करना चाहते हैं कि वे अपने राज्य-

वे, जिन्होंने अलख जगाया

बाबू बालमुकुन्द गुप्त

★ श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

उनकी चरण-स्मृति में शतशः प्रणाम, जिन्होंने अंधेरे में वर्तिका जलाई, जिन्होंने स्वप्न देखा, जिन्होंने अलख जगाया। बाबू बालमुकुन्द गुप्त उन महानुभावों में एक अग्रगण्य जन थे।

बाबू बालमुकुन्द जी का स्मरण करते ही वे सब पूर्वज स्मृतिक्षितिज पर आ जाते हैं जिनके कारण आज हम अपने स्वरूप को पहचान सके हैं। व्याख्यानवाचस्पति पंडित दीनदयालु शर्मा, महामना पंडित मदनमोहन मालवीय, पंडित प्रतापनारायण मिश्र पंडित अमृतलाल चक्रवर्ती, श्री मोतीलाल घोष, पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी, पंडित श्रीधर पाठक आदि अनेक पूर्वजों का स्मरण बाबू बालमुकुन्द जी गुप्त के स्मरण के साथ ही हो आता है। ये सब महानुभाव उनके सहयोगी, सहकर्मी एवं समानधर्मा थे। बाबू बालमुकुन्द जी वास्तव में हमारी भाषा के निर्माता, हमारे भावों के संमार्जक एवं हमारे जनजन के निर्देशक थे। आज हम जो कुछ हैं, वह इन्हीं पूर्वजों के परिश्रम के फलस्वरूप है। जिस समय हमारे देश में स्तब्धता थी, जिस समय हमारी वाणी मूक थी, जिस समय हमारे हृदय स्पन्दनहीन थे, उस समय इन अग्रजन्माओं ने एक शंख-ध्वनि की और उस ध्वनि से हमारा यह भारतीय आकाश प्रकम्पित हुआ। उस वायु तरंग को आन्दोलित करने वालों में बाबू बालमुकुन्द जी गुप्त का विशेष स्थान था।

वह समय आज इतिहास के पृष्ठों के अध्ययन के द्वारा ही हृदयंगम किया जा सकता है। स्वतन्त्रता के उन्मुक्त वातावरण में; स्वाधीनता के बाल आतप के उदय से वह तिमिरकाल आज अतीत के गर्भ में विलीन हो गया है। उस काल की विवशता, उस काल की आत्म-हीनता, तत्कालीन मानसिक ग्लानि आज विलुप्त हो चुकी है। अतः आज जिस समय हम गुप्त जी के तथा उनके समकालीन अन्य महानुभावों के अतीत प्रयत्नों का मूल्यांकन करने बैठते हैं तो तत्कालीन विवशता को बहुधा भूल जाते हैं और इस प्रकार हम उनके प्रयत्नों के मूल्य को ठीक ठीक आंक नहीं पाते। पर, जब हम ऐसा करते हैं तो अपने आपको ऐतिहासिक समीक्षा के अयोग्य सिद्ध करते हैं। बालमुकुन्द जी गुप्त ने जो कुछ लिखा, जो कुछ किया, जो कुछ हमें दिया, उसका वास्तविक मूल्य हम तभी समझेंगे जब हम उनके समय की कठिनाइयों को, उस काल की विवशताओं को अपने सम्मुख रखें।

गुप्त जी का जन्म सन् १८६५ ई० में हुआ और सन् १९०७ ई० में उन्होंने अपनी इहलोक-लीला समाप्त की। इन बयालीस वर्षों के स्वल्पकाल में गुप्त जी ने जितना बड़ा काम किया — हिन्दी भाषा एवं हिन्दी पत्रकारिता की उन्होंने जो कुछ उन्नति एवं सेवा की, वह हमारे इतिहास में एक विशिष्ट घटना है। गुप्त जी बड़े पैने आलोचक, बड़े शैलीवान लेखक, बड़े प्राणवान व्यक्ति थे। पंडित महावीरप्रसाद जी द्विवेदी से उनकी खूब चला करती थी, पर वे बड़े ही निर्वैर व्यक्ति थे। उनकी आलोचना तीखी होती थी पर उस तीखेपन में व्यक्तिगत विद्वेष किंवा अहम्मन्यता का लेशमात्र भी नहीं था। अपने मित्रों में, जिन्हें भी उन्होंने अपना अग्रज मान लिया, उनके प्रति गुप्तजी सदा विनत रहे। पंडित मदनमोहन जी मालवीय, पंडित दीनदयाल जी शर्मा, पंडित प्रतापनारायण जी मिश्र, पंडित श्रीधर पाठक आदि महानुभाव गुप्त जी के प्रायः समवयस्क मित्र थे। पर इनके प्रति गुप्त जी ने अपने मन में अग्रज-भाव का आरोप कर लिया था और जीवन भर वे अपनी इस भावना को निभाते रहे। केवल एक यही बात गुप्त जी के चरित्र की एक बड़ी मनमोहक तथा ऊंची छटा हमें दिखलाती है। उन के इस प्रकार के व्यवहार से हमें पता चलता है कि वे स्वभाव से विनयशील थे। उनमें अहंमन्यता नहीं थी। उनमें शिष्य - भावना विद्यमान थी।

श्री बाबू बालमुकुन्द गुप्त, जिनका स्मृति-दिवस १० सितम्बर को मनाया जारहा है।

मैं बहुधा अपने अनुजों एवं मित्रों से कहा करता हूं कि जिस व्यक्ति के अन्तर से शिष्य भावना का तिरोभाव हो जाता है, उनका विकास रुक जाता है और उसका आध्यात्मिक, बौद्धिक एवं भावनात्मक पतन प्रारम्भ हो जाता है। बाबू बालमुकुन्द जी गुप्त में शिष्य भावना पर्याप्त मात्रा में विद्यमान थी और यही कारण है कि अपने जीवन में वे उत्तरोत्तर समुन्नत होते चले गये। स्मरण रखिये, शिष्य-भावना का अर्थ आत्म-दैन्य किंवा भूमि-रिंगण नहीं है। शिष्य भावना का अर्थ है कि अपने मस्तिष्क के वातायन को खुला रखना और सद् विचार वायु को प्रविष्ट होने देने का अवसर देना—बाल मुकुन्द जी गुप्त के इस शिष्य-भाव ने उन्हें 'भुवि न मत्ते विधि सकल कुलादू' की दशा को प्राप्त नहीं होने दिया और इसी भाव ने उनकी तीखी आलोचना वृत्ति को विद्वेष एवं घृणा के निम्न स्तर पर नहीं उतरने दिया।

हमारी हिन्दी भाषा पर, हमारी हिन्दी पत्रकारिता पर, हमारी आज की विचार परिपक्वता पर बाबू बालमुकुन्द जी गुप्त का बहुत ऋण है। उनकी परिश्रमशीलता को देख कर दंग रह जाना पड़ता है। उनके पत्र व्यवहार की दैनिक पंजिका उनके लेखों के विषयों की विविधता, उनका भाषा-पाण्डित्य, लार्ड कर्जन के नाम उनके खुले पत्र आदि इस बात के प्रमाण हैं कि वे अत्यन्त परिश्रमी, विचार तथा संयमशील एवं परिष्कार समायुक्त थे। वे अनन्य देशभक्त थे। भारती अक्षरों एवं हिन्दी भाषा के समर्थन में उनके अनेकों लेख इस बात को सिद्ध करते हैं कि वे कितने सचेष्ट, जागरूक एवं सच्चे पत्रकार थे। गुप्त जी जीवित भाषा लिखते थे। उनकी शैली पैनी, तीखी व्यंग्य युक्त एवं हृदय ग्राह्य होती थी। व्यंग्य लिखने में उनकी बराबरी कदाचित ही कोई कर सकता था।

पात्रों के वक्तव्य पर गंभीरता से विचार करें और इस विषम स्थिति के प्रतीकार का उपाय करें, अन्यथा समस्या के विकट हो जाने पर समाधान और भी कठिन हो जायगा।

दक्षिणी कोरिया को टैंकों से रौंदते हुए कम्यूनिस्ट शान्ति प्रतिज्ञा के लिए संसार से कागज पर हस्ताक्षर कराना चाहता है—अमरीकी पत्र में प्रकाशित एक कार्टून।

अरब यहूदी संघर्ष के मध्यस्थ श्री बुंचे को नोबेल का शान्ति पुरस्कार मिला है।

बीकानेर के (राजा) श्री शार्दूलसिंह का इस सप्ताह देहान्त हो गया।

उत्तर प्रदेश के प्रधान मन्त्री श्री गोविन्दवल्लभ पन्त ने गत २१ सितम्बर को ६४ वें वर्ष में प्रवेश किया।

२ अक्तूबर को सारे देश में महात्मा गांधी की जयन्ती मनाई जा रही है।

सुरक्षा समिति के रूसी सदस्य श्री जेकब मलिक ने स्टालिन-ट्रूमैन मुलाकात से सहमति प्रकट की है।

पंजाब में शरणार्थियों का शिक्षण

पंजाब सरकार की ओर से शरणार्थियों को कलाकौशल सिखाने के लिए व्यवस्था की गयी है। पहला चित्र खेल-सामग्री तैयार करने का कारखाना है। दूसरा चित्र प्रयोगशाला में कार्य करते हुए विद्यार्थियों का है।

उत्तरीय भारत की उर्दू-संस्कृति

★ श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

[१]

'उर्दू' यद्यपि एक भाषा का नाम है—पर मैं उसका प्रयोग संस्कृति के लिए कर रहा हूं। इसका कारण समझाने के लिए छोटी-सी भूमिका की आवश्यकता है।

पहले हमें यह देखना होगा कि "उर्दू" नाम की भाषा का कैसे जन्म हुआ और वह किनकी भाषा बनी? जब हम यह जान लेंगे तो हमें स्वयं विदित हो जायगा, कि उर्दू केवल एक भाषा के रूप में उत्तरीय भारत में नहीं आई, वह अपने साथ लगी हुई एक संस्कृति को भी घसीट कर लाई, जो उत्तर-मुगल-काल में उत्तरीय भारत में फैल गयी।

उर्दू भाषा के जन्म के सम्बन्ध में दो कल्पनायें हैं। एक कल्पना यह है कि उसका जन्म मुगल बादशाहों के लश्करों और बाजारों में हुआ, सदियों तक भारत के शासन की भाषा फारसी और जनता की भाषा हिन्दी रही, जिस का साहित्यिक रूप उस समय ब्रज-भाषा था। कुछ विद्वान् यह मानते हैं कि निरन्तर सम्पर्क के कारण सर्वसाधारण हिन्दू-मुसलमानों ने अपने मिलने के स्थानों पर एक खिचड़ी बोली का प्रयोग आरम्भ कर दिया, जो कालान्तर में 'उर्दू' कहलाई। आम तौर पर उर्दू के उद्भव के सम्बन्ध में इसी कल्पना को माना जाता है।

दूसरी ओर कुछ विचारक इस कल्पना को भ्रान्तिमूलक मानते हैं। उन का कहना है कि उर्दू का जन्म छाव-नियों या बाजारों में नहीं हुआ, अपितु दिल्ली के लाल किले में हुआ है। उर्दू के कई प्रसिद्ध मुसलमान लेखकों ने इस मत का प्रतिपादन किया है कि उर्दू जुबान शाहजहानाबाद के लाल किले के कारखाने में बनी गई, और वहीं से उस का फैलाव हुआ।

दिल्ली वालों की इस कल्पना का खण्डन करने वाले लोगों का कहना है कि वस्तुतः उर्दू का विकास तो हुआ ही दक्खिन में है। उनका दावा है कि शाहजहां के पीछे जब औरंगजेब ने दिल्ली में कलाओं का ब्लैक आउट कर दिया, तब दक्षिण के बीजापुर, अहमदनगर और गोलकुण्डा आदि राज्यों में ही उर्दू की पालना हुई। इस बात का आभास उर्दू के एक महाकवि की उस उक्ति से मिलता है, जिसमें उसने कहा है कि यद्यपि दक्खिन में साहित्यिकों के अधिक सम्मा-नित होने की बात सुनी जाती है, तो भी "कौन जाये ज़ौक पर दिल्ली की गलियां छोड़ कर" इससे प्रतीत होता है उत्तरकालीन मुगल शासकों के समय में उर्दू साहित्य का केन्द्र दिल्ली नहीं था, दक्षिण था।

मैं इस स्थान पर उर्दू के जन्मस्थान की बहस में न पड़ कर सारांश के रूप में इतना कहना चाहता हूं कि मेरी सम्मति में उर्दू भाषा का जन्म तो उन्हीं स्थानों पर हुआ, जहां सर्वसाधा-रण हिन्दू और मुसलमान मिलते और हाकिम महकूम के भेदभाव को छोड़ कर परस्पर वार्तालाप करते थे। वह स्थान छावनी, बाजार, और ग्राम आदि अनेक थे। ब्रजभाषा, जिसे उस समय के अनेक मुसलमान लेखकों ने ग्वालियरी भाषा का नाम दिया है, के साथ फारसी का मिश्रण हुआ। शरीर का अस्थिपंजर ब्रजभाषा से आया और उसमें मांस और मज्जा का समावेश फारसी शब्दों से हुआ। इस मिश्रण का परिणाम 'उर्दू' भाषा के रूप में प्रकट हुआ।

वह भाषा नीचे की सतह से होकर लाल किले में भी पहुंची। वहां के उम-रावों और सरदारों द्वारा उस खिचड़ी भाषा का परिष्कार किया, और वह परिष्कार खूब हुआ। इतना जोरदार परिष्कार हुआ कि उसके सामने छावनी और बाजार की उर्दू बिलकुल मन्द पड़ गई। कालान्तर में असली उर्दू वही समझी जाती थी, जिस पर दिल्ली और कुछ समय पीछे लखनऊ की छाप हो। जनता की भाषा को उस समय के उर्दू के कई विद्वान् लेखक 'उरदू' के नाम से पुकारते थे। इस प्रसंग में उन्नीसवीं सदी के मुसलमान लेखक के अवतरण बहुत मनोरंजक हैं। वह लिखता है—

"हम अपनी जुबान को मरहठी बाजी, छावनीबाजी की जबान, धोबियों के खदड़, जाहिल ब्याहकन्दी के ब्याह, टेसू के राज, बानी बेकर, या अतफ़ाल का मजमूआ बनाना कभी नहीं चाहते, और न आजादानः उर्दू को ही पसन्द करते हैं, जो हिन्दुस्तान के ईसाइयों, नवमुस्लिम भाइयों ताजा, विलायत साहिब लोगी, लाल सामानों, कैम्पवालों और छावनियों के सदर बेकदे बाशिन्दों ने अख्तियार कर ली है। हमारे शरीफ़ुल्ला दोस्तों ने मजाक में इसका नाम उरदू रख दिया है"

इस शिकायतभरे लेखके लिखने वाले सज्जन ने जिसे उरदू कहा है, असल में उर्दू का जन्म वैसी ही एक भाषा से हुआ था, जिसे लाल किले के कारीगरों ने शाण पर चढ़ा कर चमकाया और एक साहित्यिक भाषा बनाया था।

इससे किसी को भी इन्कार नहीं हो सकता कि हिन्दुओं और मुसलमानों के निरन्तर सम्पर्क से उत्पन्न हुई उर्दू-जबान का भारत के सांस्कृतिक विकास के इतिहास में बहुत विशिष्ट स्थान है। यद्यपि उसका जन्म छावनियों और बाजारों में हुआ, तो भी शीघ्र ही उसे सल्तनतों के संचालकों ने अपना लिया। उसका जन्म उत्तरी भारत के किस क्षेत्र में हुआ था, परन्तु राजा श्रय पाकर वह दक्षिण तक फैल गई। यहां तक कि जहां मुसलमानों की हुकूमत थी, उससे आगे बढ़ कर वह भाषा फुटकर रूप में मराठा साम्राज्य जैसे ठेठ हिन्दू राज्यों में भी जा पहुंची। उस समय की मराठी भाषा में, शासन सम्बन्धी बहुत सी परिभाषायें उर्दू फारसी की समाविष्ट हो गई थीं।

[२]

यदि हम उत्तरकालीन मुगल काल की सामाजिक दशा का गम्भीरता से अनुशीलन करें, तो हम इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि उर्दू भाषा केवल कोरी भाषा ही नहीं थी, वह एक संस्कृति का प्रकट रूप थी। उस समय की उत्तरी भारत की भाषा को यदि हम उर्दू भाषा कहें, तो हमें यह भी कहना पड़ेगा कि उस समय एक ऐसी संस्कृति भी उत्पन्न हो गई थी, जिसे उर्दू संस्कृति के नाम से पुकारा जा सकता है। वह संस्कृति भी सर्व-साधारण हिन्दुओं और मुसलमानों के सम्पर्क से उत्पन्न हुई। उसका भी लाल-किले में और उसके पश्चात् लखनऊ तथा अन्य मुसलमान नवाबों की राज-धानियों में परिष्कार हुआ। और वह तब तक बढ़ती रही, जब तक पश्चिम से आई हुई नई सांस्कृतिक बाढ़ ने उसे जबानी टक्कर नहीं लगाई।

[३]

उस उर्दू संस्कृति का जन्म कैसे हुआ?

हम देख आये हैं कि लगभग ४ सदियों के मुस्लिम शासन के पश्चात् हिन्दुओं और मुसलमानों में विचारों का लेना बहुत आदान प्रदान आरम्भ हो गया था। मुसलमानों में धर्मभेद के रहते भी भारतवासी होने की भावना उत्पन्न हो गई थी। वे स्थिर रूपसे हिन्दुओं के पड़ोसी और हमसाया बन कर बस गये थे, विचारों के आदान-प्रदान का प्रभाव यह हुआ कि दोनों ओर मिश्रित विचारधारायें प्रवाहित होने लगीं। हिन्दुओं के भक्त कवि, दार्शनिक तथा मुसलमानों के सूफी उस विचार-मिश्रण के परिणाम थे। विशेष बात यह थी कि कबीर जैसे भक्तों के शिष्यों में मुसलमानों की और सूफियों के मुरीदों से हिन्दुओं का अच्छा भाग था।

विचारों के संसार में जो मिश्रण आरम्भ हुआ, उसे क्रियात्मक जीवन में लाने का यत्न अकबर ने किया। उसने जहां अपनी शासननीति का निर्माण साम्प्रदायिक भेदभाव को छोड़ कर किया, वहां साथ ही दीने इलाही नाम से इस्लाम में एक नई विचारधारा को उत्पन्न करने का उपक्रम किया। दीने इलाही तो न चला, परन्तु अपने पीछे एक चेतना छोड़ गया।

यदि औरंगजेब अकबर के किये पर हड़ताल फेरने के लिये कटिबद्ध ही न हो जाता, तो सम्भवतः भारत की सांस्कृतिक और राजनीतिक अस्थिरता शीघ्र ही मिट जाती, परन्तु भारत को अभी अस्थिरता के दिन देखने थे। औरंगजेब ने अपनी धर्मान्धता से कुछ समय के लिए सांस्कृतिक संघर्ष को फिर ताजा कर दिया। परन्तु इसी बीच में देश के कोने कोने में कई रूप धारण करके हिन्दुत्व की प्रतिक्रिया जारी हो गई। महाराष्ट्र, राजपूताना, बुन्देलखंड, पंजाब आदि प्रदेशों में जो राजनीतिक क्रान्तियां उत्पन्न हुईं, उनके स्थूल रूप भिन्न भिन्न थे, परन्तु मौलिक रूपसे वह सांस्कृतिक प्रतिक्रिया की परिणाम थी।

एक बार तो ऐसा प्रतीत हुआ कि जो राज्य क्रान्ति महाराष्ट्र से उठी है, वह धीरे धीरे हिमालय से रामेश्वर तक छा जायगी, परन्तु पानीपत के रणक्षेत्र ने देश के इतिहास को फिर पलटा दिया मराठों की शक्ति को अहमदशाह अब्दाली की सेनाओं ने एक जबर्दस्त धक्का देकर उत्तर से पीछे धकेल दिया, जिससे परिस्थिति फिर पहले की भांति विषम हो गई। विषम इसलिए हो गई कि मुगल बादशाहों की शक्ति तो हिन्दू प्रतिक्रिया, और मुसलमान सरदारों के विद्रोहों के कारण क्षीण हो गई थी, अब पानीपत के पराजय के कारण हिन्दू प्रतिक्रिया भी निर्बल हो गई। फलतः हिन्दू और मुसलमान दोनों ही प्रायः एक स्तर पर आ गये। उनमें शासक और शासित की वैसी उग्र भावना न रही, जैसी पहले थी। दोनों कहीं शासक थे, और कहीं शासित। समतल पर आकर दोनों में आदान-प्रदान की प्रक्रिया फिर जारी हो गई, जिसका फल 'उर्दू संस्कृति' के रूप में प्रकट हुआ।

'धर्मनिरपेक्ष नारा प्रतिद्वन्द्वी के दमन का एक साधन है'
धर्म को मानने वाले ब्रिटेन तथा अमरिका धर्मनिरपेक्ष राज्य हैं

हिन्दू राज्य सदा धर्मनिरपेक्ष रहा है

धर्मनिरपेक्ष राज्य और उसका वास्तविक अर्थ

श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी

धर्म निरपेक्ष राज्य के वास्तविक अर्थ के सम्बन्ध में साधारणतः बड़ा भ्रम फैला हुआ है। जैसा कि सभी राजनीतिक नारों के साथ होता है, इस नारे का भी प्रयोग कोई विशेष अर्थ व्यक्त करने के बजाय प्रतिद्वन्द्वी पर आक्रमण करने में किया जाता है। संविधान परिषद् में तो 'ईश्वर शब्द तक के उल्लेख पर इस बिना पर टीका-टिप्पणी की गई थी कि चूंकि भारत एक धर्म-निरपेक्ष राज्य है, इसलिए संविधान-परिषद के सदस्य ईश्वर की शपथ नहीं ले सकते।

नास्तिक राज्य नहीं

'सबसे पहली बात याद रखने की यह है कि धर्म निरपेक्ष राज्य एक नास्तिक अर्थात् ईश्वर-विहीन राज्य नहीं है। धर्म-निरपेक्ष राज्य वह राज्य नहीं है जिसमें धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों के साथ बहिष्कृतों, अछूतों या प्रतिगामियों जैसा व्यवहार किया जाय। यदि ऐसा होता तो गांधीजी भारत-भूमि के पहले बहिष्कृत व्यक्ति होते। यह सोचना भी ठीक नहीं कि धर्म निरपेक्ष राज्य में धर्म का आदर नहीं होता; बल्कि इसके विपरीत धर्म-निरपेक्ष राज्य का लक्षण ही यह है कि उसमें धर्म का आदर होता है। ब्रिटेन का तो अपना एक राज्य-धर्म भी है, फिर भी वह धर्म-निरपेक्ष है। अमरीका के प्रोटेस्टेंट, कैथोलिक और यहूदी सभी कट्टर धार्मिक हैं, राज्य में उन्हीं का बोलबाला है और फिर भी कोई यह नहीं कह सकता कि अमरीका एक धर्म-निरपेक्ष राज्य नहीं है।

धर्म-निरपेक्ष राज्य क्या है?

सच पूछिये तो धर्म-निरपेक्ष राज्य वह राज्य है जिसमें प्रत्येक धर्म के अवलम्बी को अपने नियमों और अपनी प्रथाओं का पालन करने की स्वतन्त्रता होती है, जिसमें कोई व्यक्ति अपनी धर्म-वृत्ति के कारण नागरिक अधिकारों से वंचित नहीं किया जाता, जिसमें किसी भी जाति के व्यक्ति को ऐसाहीन नागरिक नहीं समझा जाता कि वह केवल अपने धार्मिक विश्वास के कारण शोषण, यंत्रणा अथवा बहिष्कार का अधिकारी बन जाय।

तीन मत

इस भ्रम का मुख्य कारण यह है कि भारतवर्ष में 'धर्म निरपेक्ष राज्य' के तीन परस्पर-विरोधी अर्थ लगाये जाते हैं। एक ओर तो यह उग्रतम धारणा है कि यद्यपि भारत में हिन्दुओं का बहुमत है तथापि यह गणराज्य धर्म-निरपेक्ष तभी माना जा सकता है, जब देश के दूसरे अल्पसंख्यकों के हितों के समक्ष बहुसंख्यकों के हितों का सदा बलिदान होता रहे। कहा जाता है कि यदि हिंदू वास्तव में धर्म-निरपेक्ष राज्य में विश्वास करते हैं तो उन्हें अपनी धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रथाओं और परम्पराओं का स्वतन्त्र रूपसे प्रयोग नहीं करना चाहिए; हां अल्पसंख्यकों को ऐसा करने की छूट अवश्य होनी चाहिए। यह भी कहा जाता है कि सामाजिक और सांस्कृतिक मामलों में जो दृष्टिकोण अल्पसंख्यकों के हित या दृष्टिकोण से मेल नहीं खाते, वे धर्म निरपेक्ष नहीं होते।

दूसरा मत यह है कि चूंकि देश में हिंदुओं का अतिशय बहुमत है, इसलिए यहां की राजनीतिक रूपरेखा पर हिंदुओं के जीवन और संस्कृति विषयक दृष्टिकोण का प्रभाव पड़ना अनिवार्य है, फिर भी यदि अल्पसंख्यकों को अपने धार्मिक नियमों और प्रथाओं का पालन करने की स्वतन्त्रता मिले और साथ ही साथ उन्हें समान नागरिक अधिकारों का सुख भोग करने दिया जाय तो धर्म-निरपेक्षित वृत्ति अपनी कसौटी पर खरी उतर सकती है।

तीसरा मत यह है यदि भारत का धर्म-निरपेक्ष राज्य अल्पसंख्यकों को राष्ट्रीयता की कसौटी समझता है तो इसका अर्थ यह है कि बहुसंख्यकों को उनकी न्यायोचित, धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतन्त्रता से वंचित रखा जाता है। यह भी कहा जाता है कि इस प्रकार का राज्य अपनी धर्म-निरपेक्षता के कारण ही अपने को उस शक्ति से वंचित कर देता है जो उसे अनायास ही बहुसंख्यकों की राज-भक्ति के फलस्वरूप प्राप्त हो सकती है। इतना ही नहीं, यह अल्पसंख्यकों को कृत्रिम प्रमुखता प्रदान करता है। इस मत के अवलम्बियों का विचार है कि चूंकि हमारे निकट पड़ोसी पाकिस्तान की राजनीतिक रूप-रेखा धार्मिक और साम्प्रदायिक है, इसलिए उसके कारण हमारे देश को स्वभावतः निरन्तर संकट है।

एक जीवित सत्य

किन्तु यह बात अच्छी तरह से समझ ली जानी चाहिए कि राज्य केवल सिद्धान्तों की एक कृत्रिम सृष्टि नहीं है; वह एक जीवित सत्य है, जिसको सदा ही बहुसंख्यकों की स्वेच्छिक राजभक्ति का समर्थन प्राप्त होते रहना चाहिए। किसी भी स्वतन्त्र देश के बहुसंख्यक लोग अपने को अल्पसंख्यकों द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के अनुसार ही सदा परिचालित नहीं होने दे सकते। उनके दृष्टिकोण का राज्य पर प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। ऐसी दशा में उपर्युक्त पहली धारणा स्वीकार्य नहीं हो सकती। अन्तिम मत भी अमान्य है। क्योंकि कोई भी बहुसंख्यक जाति अपने राज्य के अल्पसंख्यकों को ऐसा कार्य नहीं करने दे सकती। जिससे कि उसके राज्य में किसी पड़ोसी राज्य के हित को ध्यान में रखने के कारण दुर्बलता आने का डर हो।

मध्यम स्थिति ही भारत की राजनीतिक परम्परा के अनुकूल है। हिन्दू राजनीतिक विचारधारा में कभी धर्म-प्रधान राज्य को ठीक नहीं समझा गया और न कभी ऐसा हुआ कि किसी प्रबुद्ध हिन्दू शासक ने किसी अल्पसंख्यक को धर्म के आधार पर नष्ट या बहिष्कृत किया हो। राजा की परम्परा पृथुसे आरम्भ हुई थी जो अपनी असहनीय क्रूरता के कारण मार डाला गया था। 'महाभारत' से लेकर अब तक राजनीतिक विचारधारा सम्बन्धी ऐसा कदाचित ही कोई ग्रन्थ होगा जिसमें धर्म-प्रधान राज्य का समर्थन किया गया हो। हिन्दू राज्यकाल के इतिहास में एक भी ऐसा उदाहरण नहीं मिलता जहां कोई अल्पसंख्यक जाति अपने धार्मिक विचारों या प्रथाओं के कारण निकाली या बहिष्कृत की गई हो। सीरिया के ईसाई सदियों तक त्रावणकोर के हिन्दू शासनकाल में सुखपूर्वक रहे थे। राष्ट्रकूटों ने अपने राज्य के अरबों को बड़े-बड़े उपनिवेश दिये थे। गुजरात के चालुक्यों ने बारहवीं और तेरहवीं शताब्दियों में इस्लाम में धर्म-परिवर्तन की अनुमति प्रदान की थी। उस युग में, जब कुतुबुद्दीन ने बनारस में हजारों मंदिर ढा दिये थे और सहस्रों हिन्दुओं को उनके ही देश में दासों की भांति बेच डाला था, गुजरात के एक शासक ने एक मुस्लिम व्यापारी को मस्जिद बनाने की अनुमति दी थी। मेवाड़ के राणाओं का मुगलों के साथ सदियों तक घोर संघर्ष रहा, फिर भी उनका एक उच्चतम दरबारी मुसलमान था। इसी प्रकार जब महाराष्ट्र के ब्राह्मणों ने शिवाजी और पेशवाओं के के आधीन शासनतंत्र की स्थापना की थी तो मुसलमान उसमें से निकाले नहीं गये थे। राजनीतिक चाल के रूप में बलात् धर्म-परिवर्तन तो हिन्दू राजनीति में कभी देखने में ही नहीं आया।

आज के भारत में प्रत्येक भारतीय एक नागरिक है, चाहे उसके धार्मिक विश्वास कुछ भी क्यों न हों। उसे मूलभूत अधिकार प्राप्त हैं, वह राज्य में उच्च से उच्च स्थान प्राप्त करने का अधिकारी है, उसे अपने धर्म के अनुसार कार्य और प्रचार करने की स्वतन्त्रता है, उसे अपनी धार्मिक संस्थाएं बनाने और रखने का भी अधिकार है। जिस संविधान की बुनियाद पर भारतीय गणराज्य की नींव रखी गई है वह भारी हिन्दू बहुमत से स्वीकार किया गया है। आज के प्रबुद्ध हिन्दू धार्मिक राज्य बनाने का विचार नहीं रखते और न वे अल्पसंख्यकों को सामाजिक, सांस्कृतिक या धार्मिक मामलों में तंग ही करना चाहते। इस बात का बिल्कुल भी भय नहीं है कि भारतीय गणराज्य धर्म निरपेक्ष के अतिरिक्त कभी कुछ और भी हो सकता है।

श्री के० एन० मुन्शी

शरणार्थी समस्या

[•]

श्री 'आनन्द'

पाकिस्तान में गये शरणार्थी वर्ग की समस्या समाप्त करनेके लिये कई लोग कई प्रकार के उपाय सुझाते हैं, जिनमें वहां विद्रोह कराने तथा अपनी सेनाओं को पाकिस्तान में भेजने जैसे अत्यन्त कठोर उपाय भी हैं। किन्तु यदि हम विचार करेंगे तो यह प्रतीत होगा कि ऊपर दिये गये दोनों सुझावों का यदि ढंग से पालन किया जाय तो बिना किसी प्रकार का युद्ध अथवा खून-खराबा हुये (जिससे कि हमारी नेहरू सरकार इतना घबराती है) भी हम इस समस्या के मूल पर कुठाराघात कर सकेंगे। अर्थात सीधे शब्दों में पाकिस्तान में शेष बच रहे हिन्दुओं का जीवन असम्भव बना देने का साहस कम हो जायगा। इसका कारण यह है कि उसे यह दीखने लगेगा कि उसकी भविष्य में लूट, अत्याचार, अपहरण व हत्याकाण्ड करने की योजनायें उसके ऊपर न केवल करोड़ों व्यक्तियों का भार बढ़ा देंगी वरन् भारत की तुलना में उसका राजनीतिक पक्ष बहुत दुर्बल हो जायगा।

भारत और पाकिस्तान के बीच अनेक समस्यायें नहीं है, जैसा कि कुछ लोग भ्रमवश समझते हैं। इनके मध्य एक ही समस्या है और वह है राजनीतिक समस्या। इस एक समस्या के ही अनेक पहलू हैं, जिनमें शरणार्थी समस्या भी एक है। अतः जो लोग इस समस्या का हल शेष बातों से अलग हट कर निकालना चाहते हैं वे भयानक भूल कर रहे हैं, और दुर्भाग्य से हमारी वर्त्तमान सरकार उनमें सब से आगे है। यथार्थ में शरणार्थी समस्या भी भारत-पाक मध्य स्थित राजनीतिक समस्या का ही एक भाग है, यह समझ कर हमें इसके हल में राजनीतिक दृष्टिकोण ही ग्रहण करना होगा और तभी हल हो सकेगी।

यदि शुद्ध और उदार राजनीति की दृष्टि से विचार करें तो प्रत्येक राज्य यह चाहता है कि वह सुखी जीवन व्यतीत करे। किन्तु अपने सुख के लिए पड़ोसी को लूट लेना अथवा मार कर उसकी सम्पत्ति पर अधिकार जमाने का प्रयत्न करने की प्रवृत्ति संसार के आदिकाल से चली आई है। आज की यांत्रिक सभ्यता का सहारा पाकर तो यह प्रवृत्ति और भी बढ़ गयी है। ऐसी दशा में प्रत्येक राज्य इस बात के लिये अत्यन्त सजग व चौकन्ना रहता है कि उसका पड़ोसी क्या करता है। और यदि कहीं उससे शत्रुता हुई तो वह कभी भी बलवान न होने पावे।

एक राज्य के दूसरे राज्य से इसी आधार पर सम्बन्ध रहते हैं। इन सम्बन्धों में किसी भी प्रकार की भावुकता आत्मनाश का कारण होती है। किन्तु दुर्भाग्य से भारत की ओर से पाकिस्तान से रखे जा रहे सम्बन्धों में इस व्यावहारिक राजनीतिक बुद्धि का कहीं पता नहीं है। नेहरू सरकार ने इस विषय में पूर्णतया भावुकता का परिचय दिया है। यही कारण है कि उसे पग पग पर ठोकरें खानी पड़ी हैं।

यदि शुद्ध राजनीतिक दृष्टि से विचार करें तो दिखाई देता है कि मुस्लिम लीग ने अपने राजनीतिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिये भारत विरोधी आधार लिया था। देश के मुसलमानों में भारत और भारत से सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न करना उसके कार्यक्रम का महत्वशाली अंग था। भारतीयता के प्रति एक प्रकार की शत्रुता का भाव लेकर वह लड़ी हुई थी। और पाकिस्तान भी अपने जन्म के प्रथम क्षण से वही दृष्टिकोण अपनाये हुए है। अब यह प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं रही कि पाकिस्तान भारत से शत्रुवत् व्यवहार करता है और भारत को हानि पहुंचाने के एक भी अवसर को नहीं चूकता।

इसका सीधा अर्थ यह होता है कि हमारा सबसे निकट का पड़ोसी राज्य हमारे प्रति शत्रु भाव रखता है। यह स्थिति तब और भी विषम बन जाती है जब हमारे देश के ही करोड़ों व्यक्तियों का मानसिक झुकाव भी उसकी ही ओर हो ऐसी दशामें यह नितान्त आवश्यक है कि अपनी अपेक्षा हम उसकी शक्ति अधिक बढ़ने न दें, क्योंकि यदि वह हमसे अधिक बलवान हो गया तो उससे सहानुभूति रखने वाले भारतस्थित तत्वों का लाभ उठा कर वह हमारे राजनीतिक जीवन को नष्ट कर संकट ग्रस्त बना देगा। अपनी अपेक्षा उसकी शक्ति के बढ़ने को जिस प्रकार भी हो सके रोकना और अपनी शक्ति उसकी अपेक्षा प्रबल बनाए रखना—इन दो बातों में ही हमारी राजनीतिक सफलता है। अन्यथा वह चाहे जिस वर्ग आदर्शों की दुहाई अवश्य हो किन्तु राजनीतिक बुद्धि का अभाव ही होगा और उसके परिणाम भी हमें भोगने ही पड़ेंगे।

इसका सीधा अर्थ यह होता है कि हमें पाकिस्तान को यह दिखा देना होगा कि हम उसके मार्ग में उसके बूते से बाहर की समस्याएं पैदा कर सकते हैं। आज तक हमने वैसा किया नहीं है, यह हमारे उदार दृष्टिकोण का परिणाम है। किन्तु आज स्थिति सीमा के पार जा चुकी है और हम उसे एक इंच भी आगे बढ़ने देने को तैयार नहीं। वास्तव में मैं तो यह कहूंगा कि पाकिस्तान को इस प्रकार की धमकी देने के स्थान पर हम अवश्य ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करें जिसमें उसे दो चार गहरी ठोकरें लग कर यह बुद्धि आ जावे।

पाकिस्तान ने सदा ही भारत-पाक सम्बन्धों को राजनीतिक दृष्टि से देखा है। उसने सदा यह प्रयत्न किया है कि परस्पर की इस दौड़ में भारत तो अपने पैर से कांटे निकालता ही रह जावे और वह आगे निकल जाय। इसलिये उसने प्रत्येक प्रकार से भारत के मार्ग में रोड़े अटकाये हैं और अनेक प्रमुख समस्यायें उत्पन्न की हैं। शरणार्थी समस्या उसमें सर्व प्रथम है। भारत के जूट व्यापार को नष्ट करने के एक मात्र उद्देश्य से उसने अपने रुपये का अवमूल्यन नहीं किया। काश्मीर की सारी समस्या पाकिस्तान की कृपा है। आसाम के अनेकों जिलों में लाखों पाकिस्तानियों को प्रविष्ट करा कर उसने उन्हें मुस्लिम बहुल करने का प्रयत्न किया है। भारत के मुसलमानों में भारत विरोधी दृष्टिकोण बनाये रखने के लिये वह सतत प्रयत्नशील रहा है। हैदराबाद के कांटे भी उसी के बोये हुये थे। विदेशों में भारत विरोधी प्रचार करना उसके दूतावासों का प्रमुख कार्य रहा है। यही नहीं पाकिस्तान के भारत विरोधी प्रयत्नों की सूची कितनी लम्बी होगी कहना कठिन है।

साथ ही यह भी हम प्रारंभ में स्पष्ट कर चुके हैं कि भारत की नेहरू सरकार कभी पाक विरोधी कदम उठाने की सीमा तक न जावे इसके लिए पाकिस्तान सदा सतर्क रहा है। उसने सब से बड़ी सतर्कता शरणार्थियों के सम्बन्ध में रखी है, यह हम गत अंक में स्पष्ट कर चुके हैं। भारत के हितों का नाश करके अपना स्वार्थ सिद्ध करने की पाकिस्तानी चाल का ही फल यह शरणार्थी समस्या है जिसके द्वारा वह एक ढेले में दो शिकार करना चाहता है। अपने यहां के लगभग दो करोड़ हिन्दुओं को निकाल कर और उनकी अरबों रुपये की सम्पत्ति पर अधिकार करके जहां एक ओर अपनी आर्थिक स्थिति संभालते हुए उसने भारतीय आर्थिक ढांचे पर करारी चोट की है, वहां प्रधान मंत्री नेहरू की मुस्लिम पक्षपात पूर्ण नीति का लाभ उठा कर भारत में मुसलमानों की स्थिति संकटापन्न नहीं होने दी। इसके परिणाम स्वरूप जहां एक ओर आर्थिक लाभ प्राप्त किया है वहां उसकी दृष्टि में उसने भारत की जड़ें कमजोर बनाए रखने लिये एक विशाल संख्या में एक ऐसे समाज को भी यहां टिकाये और उसे अपनी ओर आकर्षित किये रख कर भारत की राजनीतिक एकता में एक स्थायी दरार भी बना रखी है। दूसरे वह यह भी समझता है कि जब तक उससे सहानुभूति रखने वाला यह विशाल जन समाज भारत में टिका है और उसके अनेकों व्यक्ति सरकार में अनेकों प्रमुख पदों को संभाले हुये हैं तब तक कभी भी भारत पाक संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होने पर उसका हाथ ऊंचा रह सकेगा।

ऐसी स्थिति में राजनीतिक बुद्धिमत्ता यह अपेक्षा करती है कि हमारी सरकार देशवासियों को सहायता देकर न केवल पाकिस्तान द्वारा मार्ग डाले गये इन रोड़ों को ठोकर मार दे वरन स्वयं पाकिस्तान के मार्ग में इस प्रकार की कुछ समस्याएं उत्पन्न कर दे जिनको सुलझाना उसके लिए या तो कठिन हो जावे या वह केवल भारत की सहायता से ही सुलझा सके। इस दृष्टि से विचार करने पर भारत के मुसलमान निवासियों की एक बहुत बड़ी संख्या को पाकिस्तान भेजना बड़ा प्रभावशाली कदम हो सकता है।

यह कहना कि देश के मुसलमानों को निकालना सांप्रदायिक ढंग है, भ्रम है। भारत से मुसलमानों को करोड़ों की संख्या में पाकिस्तान भेजना सांप्रदायिक कदम नहीं शुद्ध राजनीतिक कदम है। नेहरू सरकार को यदि मुसलमानों को निकाल देने में ही सांप्रदायिकता दिखायी देती है। इसलिये इस प्रकार के उपाय को सांप्रदायिक उपाय कहा जाता है। किन्तु जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं राजनीति में भावुकता हानिकारक होती है। वहां तो शुद्ध व्यावहारिक बुद्धि ही कारगर होती है। भारत से मुसलमानों की विशाल संख्या को पाकिस्तान की ओर इसलिये भेजने का हमारा आग्रह नहीं है कि वहां हिन्दुओं पर अत्याचार होते रहे हैं जिसका बदला हम चाहते हैं किंतु इसलिये कि हिन्दुओं को करोड़ों की संख्या में पाकिस्तान भेजना पाकिस्तान से खुला युद्ध करने के बराबर होगा। वहां 'हिन्दू आक्रमण' कह कर पाक नेता वहां की मुस्लिम जनता को भयंकर युद्ध के लिए तैयार कर सकेंगे। इन्हें रोकने के लिए सेना का प्रयोग करेंगे और भारत स्थित अपने लाखों चरों द्वारा अनेकों विध्वंसात्मक कार्य करवायेंगे।

मुसलमानों को उस ओर भेजने पर स्थिति भिन्न होगी। पाकिस्तान अपनी जनता को उनके विरुद्ध भड़का न सकेगा। वह इनके प्रवेश को रोक न सकेगा। इनके विरुद्ध सेना का प्रयोग नहीं कर सकेगा क्योंकि भारत के प्रत्येक मुसलमान के किसी न किसी संबन्धी के पाकिस्तान में रहने के कारण इनके विरुद्ध

(शेष पृष्ठ २२ पर)

नासिक में पण्डित नेहरू जनतन्त्र के विरोधी के रूप में

श्री बलराज मधोक

कांग्रेस पार्टी का आर्थिक अधिवेशन समाप्त हो गया है। जैसी कि सम्भावना थी, वहां कांग्रेस सरकार की सभी राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों का समर्थन कर दिया गया। कुछ और आशा रखने का कोई कारण भी न था। जो लोग भी पुरुषोत्तम दास टण्डन जी के कांग्रेस अध्यक्ष चुने जाने के कारण कुछ आशायें लगा बैठे थे, वे शायद यह भूल बैठे थे कि टण्डन जी भी कांग्रेस मशीन के एक पुर्जा ही तो हैं। पुर्जों की सफलता इसी में होती है कि वह या तो सारी मशीन के साथ हो जाय, ताकि वह भली प्रकार काम कर सके या उसमें इतनी दृढ़ता होनी चाहिये कि सारी मशीन को उसके अनुरूप चलना पड़े। श्री टण्डन जी ने नासिक में कांग्रेस मशीन का आज्ञाकारी पुर्जा बनना उचित समझा है ताकि कांग्रेस की मशीन भी नेहरू रूपी अपने चालक इंजन की इच्छानुसार चलती रहे।

ब्रिटेन में

वास्तव में इसमें हैरान होने की कोई बात नहीं। सर्वसाधारण अवस्था में सभी जगह राजनैतिक दल अपने मनोनीत सत्ताधारी नेताओं के आधीन हो जाते हैं और उन्हीं से मार्ग दर्शन पाते हैं। ब्रिटेन में लेबर पार्टी अपने दल संचालक की अपेक्षा अपने प्रधानमन्त्री एटली से अधिक मार्ग दर्शन पाती है। हैरॉल्ड लास्की को यों कि लेबर पार्टी का चेयरमैन था, लेबर पार्टी के अन्य सदस्यों के मुकाबले में मुंह की खानी पड़ी थी।

लोकशाही व तानाशाही में अन्तर

परन्तु ऐसा होते हुए भी तानाशाही और लोकशाही में एक विशेष अन्तर रहता है। लोकतांत्रिक राज्यों में एक तो सत्तारूढ़ दल की सत्ता ही प्रतिपक्षी दल को विचार तथा प्रचार की स्वतन्त्रता देनी होती है और यदि इस दल की नीति जनता को न पसन्द हो तो जनता इनको हटा कर प्रतिपक्षी दल को सत्ता दे सकती है। दूसरे सत्तारूढ़ दल के अन्तर्गत भी व्यक्तियों को व्यक्तिशः भी और समष्टि में भी दल की नीति के अनुकूल चलना पड़ता है, और यदि कोई व्यक्ति दल के बहुमत की अवहेलना करे तो दल उसको अनभीष्ट घोषित [illegible] कर सकता है। परन्तु तानाशाही में ऐसा सम्भव नहीं होता। वहां सत्तारूढ़ दल और सरकार एक ही रहती है, [illegible] विरोधी दल को पनपने का अवसर नहीं दिया जाता और सत्तारूढ़ दल के अन्तर्गत भी किसी को भी दल के डिक्टेटर की नीति का विरोध करने का दुस्साहस नहीं करने दिया जाता। इसलिए वहां भी एक ही डिक्टेटर की नीति चलती है और इसलिए ऐसे राज्य को तानाशाही कहते हैं।

प्रजातन्त्रीय संविधान

भारत का संविधान लोकतन्त्रीय है और इसके मन्त्रीमण्डल ने इसकी रक्षा करने और इसका पालन करने की सौगन्ध भी खाई हुई है। भारत में शासनारूढ़ कांग्रेस दल भी अपने आपको लोकतन्त्र का समर्थक बताता है और उसके नेता सभी कुछ जनता के नाम पर करने का दम भरते हैं। परन्तु नासिक अधिवेशन ने यह सिद्ध कर दिया है कि कांग्रेस और विशेषकर इसके मुख्यकर्णधार पं० जवाहरलाल नेहरू लोकतन्त्रीय तत्वों को उसी हद तक मानते हैं, जहां तक कि वे उनके लिए लाभदायक हैं।

नासिक कांग्रेस के सामने मुख्य प्रश्न भारत सरकार की पाकिस्तान तथा मुसलमानों के प्रति नीति का था। पं० नेहरू एक विशिष्ट नीति के समर्थक हैं। परन्तु देश में और कांग्रेस के अन्दर भी इस नीति का बहुत विरोध है और यह सम्भावना थी कि नासिक में कुछ कांग्रेसजन तो अपने विरोध का प्रदर्शन करेंगे। परंतु विषय समिति में इस नीति के सम्बन्ध में अपने प्रस्ताव पर बोलते हुये पं० नेहरू ने कांग्रेस के सारे प्रतिनिधियों को साफ कह दिया कि "यदि वे चाहते हैं कि वे (पं० नेहरू) कांग्रेस का नेतृत्व करें तो उन्हें उनके प्रस्ताव को बिल्कुल स्पष्ट रूप में पास कर देना होगा" इससे भी आगे बढ़ कर उन्होंने कहा कि वे और उन के साथी इस प्रश्न पर "खून खराबा करने तक के लिए तैयार हैं," क्योंकि इस मामले में कोई बीच का रास्ता या समझौता नहीं हो सकता।"

इस दबाव के नीचे आ कर कांग्रेस की विषय समिति के बहुमत ने उनके प्रस्ताव का समर्थन तो कर दिया। परन्तु उनमें से कुछ साहसी लोगों ने पं० नेहरू के इस तानाशाही व्यवहार पर अपना रोष प्रकट कर ही दिया। श्री अलगुराय शास्त्री, प्रधान मंत्री उत्तर प्रदेश प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी, ने कहा कि पं० नेहरू का भाषण सब सदस्यों को उनका मत मानने के लिए जबरदस्ती बाध्य करने वाला था। उन्होंने पं० जी को सम्बोधित करते हुए कहा कि "आपने कांग्रेस की मशीन को ऐसे बदल दिया है कि किसी साधारण सदस्य के लिए इसकी आलोचना करना असम्भव हो गया है। आप ने आलोचना को बिल्कुल न सुनने का ढंग पकड़ लिया है।"

पं० श्रीराम शर्मा ने इस से भी स्पष्ट शब्दों में आलोचना करते हुये कहा कि जिस ढंग से प्रस्ताव पास कराये गये हैं, वह हिटलर की पार्लमेंट को भी मात करने वाला है।

पं० श्रीराम की उपमा ठीक ही थी, क्योंकि खुले अधिवेशन में इसी प्रस्ताव पर बोलते हुए पं० नेहरू ने हिटलर द्वारा बहुधा कहे गये शब्दों को दोहराया कि यदि जनता का बहुमत उनके विचार से सहमत नहीं तो "ऐसा लोकतन्त्र जहन्नुम में जाय।" आगे चल कर उन्होंने कहा कि यदि कांग्रेस का बहुमत भी उनकी पाकिस्तान तथा मुस्लिम नीति का विरोध करेगा तो भी वे अपने लोकतन्त्री साथियों के साथ उसके खिलाफ लड़ेंगे। उनके कहने का अर्थ यही था कि वे और उनके समान सोचने वाले लोग ही ठीक हो सकते हैं बाकी सब प्रतिक्रियावादी और सम्प्रदायवादी हैं और इसलिये चाहे बहुमत भी उनके साथ क्यों हो वे इस देश में रहने और अपनी बात मनवाने का कोई अधिकार नहीं रखते।

निरकुंशता के मार्ग पर

इस प्रकार धमकियां देकर पं० नेहरू अपनी सब बातें नासिक में इकट्ठे कांग्रेस के प्रतिनिधियों से मनवा सके। किसी को उनके विरोध में खड़े होने की हिम्मत नहीं हुई। और हो कैसे सकती थी? वहां पर एकत्रित अधिकतर कांग्रेसजन आगामी आम चुनाव की चिन्ता में ग्रस्त थे। उनमें अधिकांश स्वयं कांग्रेस टिकट पर चुनाव के लिए खड़ा होना चाहते हैं। वे जानते हैं कि पं० नेहरू व सरदार पटेल के इकट्ठा रहने से ही कांग्रेस की साख बनी रह सकती है और चुनाव जीतने की सम्भावना हो सकती है। वे यह भी जानते हैं कि पंडित नेहरू कांग्रेस को छोड़ कर उसके विरोध में भी खड़े हो सकते हैं। पं० नेहरू ने अपने भाषण में यह बात स्पष्ट रूप में कही भी थी। इसलिये उनका स्वार्थ इसी में था कि जो कुछ पंडित जी कहें, उसे मां का दूध समझ कर पी लिया जाय ताकि किसी प्रकार पंडित नेहरू व कांग्रेस में विस्फोट न हो। परन्तु वे यह बात भूल गये कि पं० नेहरू ही कांग्रेस नहीं है और अपनी संस्था को किसी भी व्यक्ति के चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, अधीन कर देना उनके तथा संस्था के हित में नहीं हो सकता है।

दूसरा पहलू

परन्तु इस प्रश्न का एक और विस्तृत और महत्व का पहलू भी है। कांग्रेस ही भारत नहीं है। भारत की कुछ अपनी परम्परायें हैं और समस्याएं भी। उन परम्पराओं में सहिष्णुता का एक बड़ा महत्व का स्थान है। भारत ने कभी भी राजनैतिक, दलगत या व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए हिंसक साधनों के प्रयोग का समर्थन नहीं किया। यहां पर सदा विचारों की स्वतन्त्रता रही है और जैसा कि श्री टंडन ने अपने भाषण में कहा, यहां बुद्धिवाद का प्रभुत्व रहा है। परन्तु पं० नेहरू अपने विचार केवल सब पर लादना ही नहीं चाहते अपितु यह भी समझते हैं कि उनके अतिरिक्त इस देश में रहने वाले सभी लोग बुद्धिहीन और मूर्ख हैं। पं० नेहरू को इस भ्रम में से निकालने की आवश्यकता है।

दूसरे अब यह निश्चित समझना चाहिए कि पं० नेहरू की मनभाती पाकिस्तान नीति व मुस्लिम पोषक नीति देश पर लादी जायगी। वे देश को इसके विरुद्ध आवाज तक उठाने का अधिकार देने को तैयार नहीं। वे इस प्रश्न पर अपने विरोधियों से हिंसक गृहयुद्ध करने को भी तैयार हैं।

इस प्रकार व इस देश में तानाशाही का श्रीगणेश कर रहे हैं।

यह बात देश के सभी उन लोगों के लिए, जो देश का हित सोचते हैं और इस देश के शासन को लोकतन्त्रीय ढंग से चलाना चाहते हैं। खतरे की घंटी भी है और चुनौती भी। देश-भक्ति किसी व्यक्ति या समुदाय विशेष की बपौती नहीं है। देश के अनिष्ट से सभी देशवासियों का अनिष्ट होगा केवल पं० नेहरू या उनके साथियों का नहीं। इसलिए सभी लोगों को अपने देश की नीति के विषय में सोचने का और उसमें उचित परिवर्तन कराने का समान अधिकार है। परन्तु यह लोकतन्त्रीय अधिकार उनके पास तभी तक रह सकता है जब तक देश के नेता लोकतन्त्र के अनुसार चलते रहें। उनको उस मार्ग पर चलने पर बाध्य करने के लिए सभी देश भक्त लोगों के ऐसे संगठन की आवश्यकता है जो कि तानाशाही की चुनौती को स्वीकार करके उसका उचित मुकाबला कर सके। आज कांग्रेस और विशेषकर पंडित नेहरू भारत को तानाशाही की ओर ले जा रहे हैं। यह भारती संतानों का कर्तव्य है कि वे उनको बता दें कि यहां तानाशाही नहीं चल सकेगी और भारत भारत रहेगा हिटलर का जर्मनी या स्टालिन का रूस नहीं बनने पायेगा।

कहानी

नचिकेता का स्वप्न

श्री आनन्दप्रकाश जैन

ऋषि-कुल में ऋषियों की ज्ञान पिपासा का कोई अन्त नहीं था।

ऋषि वाजश्रवा का प्यारा और कम-वाय पुत्र इसी कारण अपने पिता से विद्रोही हो उठा। अरण्य से वायु आश्रम में लौट आतीं, किन्तु नचिकेता उनके साथ न होता, ऋषि का मन भय से त्रस्त हो उठता। वह शब्दों को उसका पता लगाने भेजते और जब तक वह न आ जाता अन्न-जल ग्रहण न करते। उसके आ जाने पर वह उसके मुंह को दोनों हाथों की कांपती हुई हथेलियों के बीच दबा कर उसको निहारते, उनके गंभीर मुख से द्रवित हो वह पूछते—"वत्स, तुझे क्या इच्छा है, मुझ से कह मैं तेरा पिता हूं।"

पिता के इस मोह से नचिकेता विचलित हो उठता। विकल हो कर वह पूछता—"तात, तू मेरा पिता है। मैं तेरा ऋणी हूं, मैं देवताओं और ऋषियों का भी ऋणी हूं। तू मुझसे इतना मोह क्यों करता है? तेरे इस उत्कट प्रेम से मेरी चिंतन शक्ति बंदिनी हो जाती है। तात, क्या तू यह चाहता है कि तेरा पुत्र ऋणी ही मृत्यु को प्राप्त हो?"

ऋषि वाजश्रवा विद्वान थे। उनके पास दूर-दूर से ज्ञानपिपासु युवक समा-धान के लिए इकट्ठे होते थे। ऋषि कहते—"अरण्य में ज्ञान नहीं है। ज्ञान चिंतन में है, ज्ञान मनन में है, ज्ञान समूह है। ईश्वर पर भरोसा कर, जग में रम, तू उबार लेगा।"

नचिकेता कहता—"तात, जग का ज्ञान, समूह का ज्ञान तो सब जानते हैं। सभी ईश्वर पर भरोसा करते हैं, परन्तु जब पीड़ित होते हैं तो रोते हैं, छटपटाते हैं। फिर एकदम निश्चेष्ट हो कर न जाने कहां चले जाते हैं। तुझे पता है, तात, वह कहां चले जाते हैं।"

पुत्र की इस उर्वर बुद्धि को लख कर ऋषि आनन्द विभोर हो उठते—"ईश्वर इस सृष्टि का कर्ता धर्ता है। यम इसका शासक है। मर कर मनुष्य यम के पास चला जाता है। तू ऐसी बातें पूछता है। चिरंजीव, तभी तो मेरा मन बादलों से रंजित मयूर की तरह नाचने लगता है। चकोर जिस भाव से चन्द्रमा को निहारता है, उसी भाव से मैं तेरे मुंह को देखा करता हूं। अपने कर्मों के फल से आगत जग के दुःख में न रम।"

नचिकेता स्नेह के इस सरल प्रदर्शन से क्षोभोद्विग्न हो जाता किन्तु उसका मर्म शांत न होता। उसे क्रोध आ जाता—"जानते और बिना कुछ किए सिद्धि को देख क्यों दुःखी होता है, जहां से इस सृष्टि के प्राणी आते हैं और जहां चले जाते हैं? यम और ईश्वर कहां रहते हैं? तात, तू कभी मुझे यह नहीं [बताता, प्रत्युत मुस्कराता है। तात, तेरे पास आने पर मेरी जिज्ञासा न जाने क्यों शांत हो जाती है। मुझे अपने कर्म का ध्यान नहीं रहता। मैं चला जाऊंगा, सच, मैं किसी दिन तुझे त्याग कर भाग जाऊंगा। अपने किये न किये कर्मों के फलस्वरूप अपराधियों की गूंगी और बहरी पंक्ति में खड़े होने से पूर्व ही उस ईश्वर और यम से भेंट करना मेरे लिए अत्यन्त आवश्यक है।"

ऋषि एक अत्यन्त आशंका से कांप उठते। अन्त में उन्होंने निश्चय किया—"पुत्र, तू मुझे न त्याग। तू मेरा ही अंग है। तेरे बिना मैं अपंग हो जाऊंगा। मैं तेरी ज्ञान-पिपासा शांत करने के लिए विद्वानों का संग्राम करूंगा। इस संग्राम में इकट्ठे हुये प्राप्त नेताओं के विभिन्न मतों और अनुभवों से तू ज्ञान को निचोड़ लेना।"

नचिकेता इसके लिए तत्पर हो गया। चारों दिशाओं में दुन्दुभि शब्द करने वाली भेरी बजवा दी गई। शिष्य लोगों ने समस्त चल-अचल ग्रामों और जन सभ्यों व आर्यखंड के समस्त भागों मे संदेश पहुंचाया—"ऋषि वाजश्रवा के आश्रम में ज्ञानेच्छुक, ज्ञान-पिपासु और ज्ञानी पंडितों का समुदाय अमुक तिथि को संग्राम के लिए जुटें।"

सब ओर से इस आयोजन का स्वा-गत हुआ। निश्चित तिथि पर कठ प्रदेश के विशाल अरण्य में आर्यों के जन एक-त्रित हो गये। जिसे ज्ञान की इच्छा थी वह भी, जिसे कुतूहल था वह भी ज्ञान के इस विराट मेले की ओर भाग चला।

देख कर नचिकेता के पिता हर्ष से नाच उठे, वह हृदय से अपने पुत्र को धन्यवाद देने लगे, जिसके कारण वह आज इतनी बड़ी ज्ञान-क्रीड़ा के भागी बने थे।

किन्तु नचिकेता? उसके मन पर विषाद की कालिमा चढ़ी थी। एक ऊंचे वट वृक्ष पर चढ़ कर उसने योजनों तक फैली ज्ञानोत्सुक जनता को देखा। फिर नीचे आकर उसने ऋषि से पूछा—"यह जीविका परिजीविका अर्जन छोड़ कर जो इतना सुदीर्घ ठट्ठ आ जुटा है, तात, क्या तुझे आशा है कि इन में से किसी ने ईश्वर और यम का साक्षात्कार किया है?"

"वत्स," ऋषि ने उसे संबोधित किया, "इन में महर्षि हैं, जो अपने अंत चक्षुओं से विश्व और ब्रह्मांड की गोचर अगोचर सभी वस्तुओं को प्रत्यक्ष देखते हैं। तपस्वी हैं, जिन्होंने ज्ञान की सिद्धि में अपने तन कृश कर लिए हैं और मनी-षी हैं, जिनके हृदय और मस्तिष्क चिंतन का पार नहीं है। यह सब मिल कर तेरे इस पूज्य कुतूहल को शांत करेंगे।"

नचिकेता मन में संशय और उत्कंठा लिए ऊंचे वृत्त मंच की ओर बढ़ा। अपने लिए नियत आसन पर बैठने से पूर्व ही उसने आगतों का नमन किया और दूर तक गूंज पहुंचाने वाली वाणी में बोला—"ज्ञान पिपासुओं, मेरी सुनो। मैं जानना चाहता हूं कि जिस दशा को आप और मैं आज प्राप्त हैं, उस के परे क्या है? यदि कोई ज्ञानी जानता हो, तो कहे।"

मृत्यु से परे क्या है, इस को ले कर सैंकड़ों स्थापनाएं नचिकेता के सम्मुख रखी गईं, किन्तु "क्यों," "क्या" और "कैसे," इन तीन प्रश्न बाणों के सम्मुख संग्राम किंकर्तव्यविमूढ़ रह गया। पूर्व और अगले जन्म की कल्पनाएं भी उसके सामने रखी गई। किन्तु "बीज पहले हुआ कि पेड़" की तरह उसके प्रश्नों का कहीं अंत नहीं था। वह जानना चाहता था कि "इस सृष्टि का कर्ता कौन है?" "उस कर्ता का कर्ता कौन है?" और "कर्म फल का यह दुरूह गोरखधंधा क्यों अस्तित्व में आया?"

कई एक ने ईश्वर को अपनी आंखों देखने की बात कही। नचिकेता की आंखें तिरस्कार से भिंच गईं। वह मंच पर से उतरा। कहने वालों में से एक के कान के समीप मुंह ले जा कर उसने फुस-फुसाया, "सच कह रहे हो? यह चेतना में स्वप्न तो नहीं देखा?"

आत्म अविश्वास के कारण सुनने वाले की दृष्टि और भावभंगी दयनीय हो उठी। नचिकेता सीधे खड़ा हो कर ज़ोर से ठठा कर हंस पड़ा। फिर उसने हाथ उठा कर संग्राम को ललकारा, "मंत्रों, सृष्टि और चेतना के उस पार क्या है, यह किसी को पता नहीं। जाओ और उसकी खोज करो। अज्ञान से उत्पन्न शास्त्रार्थ वितंडावाद की ओर ले जाता है। यह संग्राम आज विसर्जित हो कर आज से तीन सौ चौंसठ दिन बाद फिर इसी स्थान पर एकत्रित होगा। उस समय तक सब इस रहस्य का पता लगाने की चेष्टा करें।"

और संग्राम विसर्जित हो गया।

× × ×

ऋषि वाजश्रवा इतने भारी आयो-जन के असफल हो जाने से क्लांत हो गए। दृष्टि उठा कर उन्होंने देखा, बांह में बांह दिये, उनकी ओर दुःखी और कातर दृष्टि से ताकता हुआ नचिकेता दूर पर खड़ा था। उसकी पुतलियों की स्थिरता में उसके अन्तर्मन के किसी दृढ़ संकल्प की छाया उभर रही थी।

उस दिन गौएं चराने जा कर नचि-केता नहीं लौटा। बहुत बार इसी प्रकार वह नहीं लौटा था, किन्तु ढूंढ़ लाने से मिल जाता था। अब की बार वह मिला भी नहीं।

ऋषि वाजश्रवा परिताप से अंधे हो गए।

कठ प्रदेश के भिन्न भिन्न कोनों से पिपासा से जर्जर और कृशकाय युवक की किंवदंतियां फूट निकलीं। उसके बाद दूर दूर के प्रदेशों से एक अति क्षीण देह धारी मुनि कुमार के समाचार आते। बड़ी बड़ी रानियों और कामदग्धा कामिनियों के मन में उस मुनि कुमार को आहार कराने की इच्छा थी। अगाध सुंदरियां उसके सम्मुख सम्मोहन पूर्ण थाल रखतीं और कहतीं—

"देवता, भोजन कर।"

निर्लिप्त और निस्पृह दृष्टि ऊपर उठती, फिर भागों कुछ न देखते हुए नचिकेता पूछता, "सुन्दरि, क्या तुझे अपने इस कमनीय और मृदु तन के पार के रहस्य का पता है?"

बाचक नारी दुःख से अपना सिर हिलाती और नचिकेता कहता। "इस तन को भोजन देने से क्या होगा? तू इस से किसी बलिष्ठ और और संसारी युवक को रिझा, तू सुखी होगी। यह नचिकेता तो सृष्टि के रहस्य भेद का भूखा है।"

(शेष पृष्ठ १९ पर)

साहित्यिक लेख—

प्रसाद की नाट्यकला

श्री राधावल्लभ 'वनिहारी' विशारद

'प्रसाद' का हिन्दी नाटक साहित्य में आविर्भूत होने का काल सन् १९१२ से १९३३ ई० तक है। उस समय देश की राष्ट्रीय हलचल प्रबल हो रही थी। महात्मा गांधी के नेतृत्व में देशवासी अनेक आन्दोलनों में भाग ले रहे थे। इस हलचल का प्रभाव हमारे नाटक साहित्य पर भी पड़े बिना न रहा। अस्तु 'प्रसाद' की नाट्यकला भी इसी हलचल से सम्बद्ध होती हुई ऐतिहासिक भारत का चित्र उपस्थित करने में सफलीभूत हुई। प्रसाद जी ने हिन्दी नाटक साहित्य को शैशव काल के अनुप्राणित वातावरण से हटा कर यौवन के उन्मीलित वातावरण में प्रविष्ट किया। पहले नाटक धार्मिक विषय पर अधिक लिखे जाते थे, किन्तु प्रसाद के आगमन के पश्चात् वे ऐतिहासिक व सामाजिक विषयों पर अधिक लिखे जाने लगे। प्रसाद के पूर्व नाटकों मे आदर्शवादिता अधिक थी किन्तु उनके आगमन से नाटकों में चरित्र के विकास को स्थान मिला। प्रसाद जी के नाटक-चरित्र प्रधान, व अन्तर्द्वन्द्व प्रधान है। उनमें बाह्य संघर्ष भी है। उनके पात्र प्राचीन संस्कृति के प्रतिनिधि है। उनके 'चन्द्रगुप्त' में चन्द्रगुप्त और सिल्यूकस की भिड़ंत नहीं किन्तु चाणक्य व अरस्तू की अथवा यूं कहिये कि भारतीय संस्कृति व यूनानी संस्कृति का द्वन्द्व है।

प्रसाद के नाटक

प्रसाद के नाटक महाभारत काल से आरम्भ होते हैं। उनका 'सज्जन' व 'जनमेजय का नागयज्ञ' में पुत्र की अपने पिता के प्रति जो प्रतिहिंसा जागृत होती है वह अन्त में करुणा और सहानुभूति का स्थान ले लेती है। इसी प्रकार यही भावना हम उनके 'विशाख' (१९२१) 'अजातशत्रु' 'स्कन्दगुप्त' व 'चन्द्रगुप्त' मे पाते हैं। उनका 'चन्द्रगुप्त' उनके सभी नाटकों में श्रेष्ठतम है। इसमें पात्रों के संवाद विस्तृत हैं किन्तु भाषा सर्वत्र परिष्कृत और प्रौढ है। इसमें नन्दवंश का उन्मूलन व मौर्यवंश का अभ्युदय बड़ी सजीवता से अंकित है। इसमें चाणक्य की नीति चन्द्रगुप्त को पग-पग पर सचेत करती रहती है। वह एक महान नीतिज्ञ बतलाया गया है। उनके 'स्कन्दगुप्त' में भिन्न-भिन्न प्रकार की परिस्थितियां राज्य-शासन में अवरोधक होती हैं और उनका निराकरण भी किया गया है। इसमें आदर्श और यथार्थ का समावेश है। उनका 'राज्यश्री' सम्राट् हर्ष के समय का है। इसमें उनकी विचारधारा और भी दृढता प्राप्त कर लेती है। इसका महत्व कला की दृष्टि से भी कम नहीं है। उनका 'कामना' प्रतीकवादी परम्परा का नमूना है। 'प्रसाद' की विचार धारा को समझने के लिए इसका पठन अपेक्ष है। इसी प्रकार 'एक घूंट' भी जीवन की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं का परिचायक है। आदर्श और यथार्थ में क्या भेद है, स्त्री-पुरुष जीवन यात्रा में किस मेल की आवश्यकता है तथा जीवन का उद्देश्य क्या है आदि गहन विषयों पर प्रकाश डालने वाला यह हिन्दी में पहला साहित्यिक नाटक है। उन्होंने एकांकी नाटक भी लिखे हैं जो उनकी नाट्यकला के आरम्भ के सर्व प्रथम ग्रंथ है। वे चार हैं — 'सज्जन' (१८-१०-११) 'कल्याणी - परिणय' (१८१२) 'करुणालय' (१८१२) तथा 'प्रायश्चित' (१९१४)। नाट्यकला के विकास में ये नाटक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। 'करुणालय' एक वैदिक घटना का रूपान्तर है। इसमें हरिश्चन्द्र की कथा है तथा अहिंसा और करुणा नाटक का आधार हैं। उनका 'ध्रुव स्वामिनी' नारी समस्या पर रची गई एक अनुपम पौराणिक रचना है। इसमें नारी को मोक्ष पाने की अधिकारिणी बताया है। इस प्रकार प्रसाद' के प्रायः सभी नाटक अतीत से सम्बन्ध रखते हैं। प्राचीन संस्कृति का ज्वलन्त चित्र इनके नाटकों में स्पष्टतया चित्रित है। इनके नाटकों में सर्वत्र मौलिकता दृष्टिगोचर होती है। हिन्दी नाटक साहित्य में नूतन विषय का प्रतिपादन करने में प्रसाद जी ने कमाल कर दिया है। उन्होंने अपने नाटकों में भारतीय सिद्धान्त व पाश्चात्य सिद्धान्त दोनों का समावेश किया है, किन्तु आत्मा भारतीय रही है।

उसके पात्रों का चरित्र सर्वत्र ही भव्य है। अपने नाटकों में उन्होंने स्त्री पात्र भी उद्धृत किए हैं। 'चन्द्रगुप्त' में मालविका, कल्याणी व सुवासिनी जैसी आदर्श महिलाएं अन्यत्र दुर्लभ है। 'मालविका' का सम्राट के लिए अनुपम बलिदान स्त्री समाज के मुख को उज्ज्वल कर देता है। उनके पात्र आनन्द प्रकाश में आते हैं। यवन पात्रों के मुख से भी वे शुद्ध हिन्दी का प्रयोग करवा कर हिंदी को एक गौरव की वस्तु भेंट करते हैं। पात्रों के संवाद व्यंग्य, नीतियुक्त, एवं हास्य से ओत प्रोत है। नाटकों की भाषा संस्कृत गर्भित है। भाषा में कहीं भी दुरूहता नहीं आई है। कथावस्तु का उत्तरोत्तर विकास हुआ है। नाटक की संकीर्ण सीमाएं कल्पना की सजीवता से सजग हो उठी है। अंक व दृश्य विभाजन आदि प्रणाली संस्कृत नाटकों का अनुकरण मात्र है। प्रसाद के नाटकों में तत्कालीन विभिन्न शैलियों का समावेश है। उनके नाटक सुखान्त व दुखान्त दोनों भावनाएं लिए हुए हैं परन्तु उनकी दुखान्त भावना अन्त में सुखान्त में परिणित हो जाती है।

प्रसाद का सुखान्त पक्ष

भारतीय नाटक-शास्त्र सुखान्त भावना का पक्षपाती है। दुखान्त भावना पश्चिम की देन है। पश्चिमीय नाटकों में कई दुर्दम्य दृश्य जैसे— वध कर देना, लूट, अग्निकाण्ड, अपहरण, तथा कष्टदायक मृत्यु आदि होते हैं। इनसे दर्शक गर्ण का मन ग्लानि व पश्चाताप से सन जाता है। कभी-कभी तो लोग अत्यन्त व्यग्र हो जाते हैं। इनसे नाटकों की महिमा घटती है। अस्तु भारतीय नाटक साहित्य ने दुखान्त भावना का सर्वथा बहिष्कार कर दिया है। प्रसाद ने अपने नाटकों को फलागम में सुखान्त भावना में विमोहित कर दिया है। प्रसाद ने पाश्चात्य दुखान्त भावना को दार्शनिकता में परिणित कर दिया है। इससे आत्म संतोष की प्राप्ति होती है।

प्रसाद ने अपने कल्पनाकौशल से अपराधी को भी कर्तव्याकर्तव्य का बोध करा कर उसे पश्चाताप में निमग्न कर दिया जिससे वह मृत्यु जैसे भयंकर दण्ड को भी सहर्ष स्वीकार कर लेता है। प्रसाद की सुखान्त भावना हिन्दी नाटकों को एक अनुपम देन हैं।

प्रसाद के नाटकों में गीततत्व

प्रसाद के नाटकों में यत्र-तत्र गीतों की भी प्रधनता है। उनके गीत काल्पनिक न हो कर मानवी भावनाओ के वास्तविक प्रतीक है। इनसे पात्रो के चरित्र को उद्घाटन करने मे बड़ी सहायता मिलती है। दृश्य काव्य प्रसाद के गीत तत्वों को पा कर देदीप्यमान हो गया। 'चन्द्रगुप्त' की सुवासिनी का एक भावपूर्ण गीत देखिए—

'तुम कनक किरण के अन्तराल में,
लुक छिप कर चलते हो क्यों ?
नत मस्तक गर्व वहन करते,
यौवन के घन रस कन ढरते,
हे लाज भरे सौन्दर्य।

बता दो मौन बने रहते हो क्यों ?'

इनके गीतों की विशेषता यही है कि वे शुद्ध काव्य भी हैं और वे संगीत की अभिवृद्धि करने वाले व मनोरंजन की उत्कृष्ट सामग्री हैं। उनके गीतों में मानवी प्रेम, देश प्रेम, व ईश प्रेम है।

प्रसाद के नाटक हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। भारतेन्दु युग के नाटकों के रहे सहे अभाव यहां आ कर सम्पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं [illegible] नाटकों में मौलिकता की पराकाष्ठा है। प्रसाद के सभी नाटक रंगमंच की अभिनेय वस्तु है। कुछ लोग उनके नाटकों के विषय में यह आक्षेप उठाते हैं कि नाटकों की कथावस्तु इतनी विस्तृत है कि जिससे वे रंगमंच पर खेले जाने में असफल है। यदि उनके नाटकों को सम्यक् दृष्टि से देखें तो अंत में इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उसके नाटकों के लिए सुयोग्य व सुसंस्कृत अभिनेता की आवश्यकता है। यदि उक्त आक्षेप का निराकरण हो जाय तो निश्चय ही प्रसाद के नाटक हिन्दी नाटक साहित्य के कलेवर को और अधिक परिष्कृत बनाने में सफल होंगे। प्रसाद का आगमन हिन्दी नाटक साहित्य में एक स्वर्ण युग उपस्थित करता है। उनके समय में नाटक साहित्य की उत्तरोत्तर अभिवृद्धि होती रही तथा आज भी उनके प्रदर्शित मार्ग पर हिन्दी नाटक युग निसंकोच आगे बढ़ रहा है।

ब्रिटेन में—...

ऊपर से झगड़ते दोनों विरोधी दल आन्तरिक एकता की ओर

राष्ट्र की सुरक्षा सर्वप्रथम कर्तव्य

श्री सेबेस्टियन हैफनर

इस्पात उद्योग के राष्ट्रीयकरण पर दलों की नीति में मतभेद से उस आश्चर्यजनक एकता पर आवरण नहीं पड़ना चाहिये जो पुनः शस्त्रीकरण, प्रतिरक्षा और विदेश नीति के विषय में ब्रिटिश संसद के पिछले तीन दिनों के वाद-विवाद से प्रकट हुई है।

इसका अर्थ यह नहीं है कि हम इस एकता को सदैव स्वाभाविक समझ सकते हैं। उदाहरणार्थ १९३९ में, युद्ध से छः महीने पूर्व विरोध पक्ष ने अनिवार्य सैनिक भर्ती के विरुद्ध वोट दिया था। आज ऐसा कोई मतभेद उपस्थित नहीं है और यह सचमुच एक अत्यन्त प्रशंसनीय बात है। कारण, शस्त्रीकरण तथा सैनिक सेवा की अवधि में वृद्धि सम्बन्धी निर्णय ऐसे समय किये गए हैं जब ब्रिटिश अर्थ-व्यवस्था पहले ही से इतना बोझ उठा रही है और अब प्रतिरक्षा व्यय में वृद्धि के फलस्वरूप सब को सच्चे बलिदान प्रस्तुत करने पड़ जाएंगे।

ब्रिटिश लोग न बलिदानों को गंभीर, उद्वेग रहित भावनाओं के साथ बरदाश्त ही कर रहे हैं—बिना किसी शिकायत के, किन्तु बिना चहकमहक और आतंक जनक शब्दों के प्रयोग के भी। यदि आप जानना चाहते हैं कि इस समय ब्रिटिश राष्ट्र की भावनाएं क्या हैं तो यह स्मरण रखना आवश्यक है कि उन्हें अपने दस वर्षों के संकटपूर्ण जीवन की याद आती है और ऐसे समय, जब वे पहली बार साधारण शांतिकालीन और कठिनाइयों से मुक्त जीवन का कुछ आभास प्राप्त करने की आकांक्षा कर रहे थे, उन्हें सोच समझ कर और ऐच्छिक रूप में नए बोझ उठाने पड़ रहे हैं।

पृष्ठ भूमि

पिछले महायुद्ध में ब्रिटेन के प्रयत्न अन्य किसी राष्ट्र के परिश्रमों की तुलना में अधिक कष्टदायक थे और ब्रिटेन की आर्थिक शक्ति को देखते हुए अधिक बड़े भी। यह कहना अत्युक्ति नहीं है कि ब्रिटेन को विजय प्राप्ति के लिये, अपने आर्थिक अस्तित्व के आधार पर आघात करना पड़ गया, उन अनेकों संचित विदेशी सम्पत्तियों को बेचना पड़ गया था जिनकी आय से वह अपने भुगतान का सन्तुलन किया करता था। इसके अति-रिक्त ब्रिटेन को अपना निर्यात व्यापार लगभग नष्ट करना पड़ गया था। इस हानि को पूरा करने के लिये युद्ध के पश्चात् ब्रिटेन को पांच वर्षों तक कठिन परिश्रम करना पड़ा। आर्थिक सहायता के अभाव में अधिक समय लगा होता और अधिक बड़े बलिदान करने पड़े होते

किन्तु इतना तो निस्संदेह कहा जा सकता है कि पांच वर्षों का पुनर्निर्माण कार्य साधारण नर-नारियों के लिये मजाक नहीं था।

आज भी ब्रिटेन उन देशों में गिना जाता है जहां लोगों को कर का बहुत बड़ा बोझ सम्हालना पड़ता है। प्रधान खाद्य पदार्थों पर अभी तक राशन लगा हुआ है, विशेष सुख-सुविधा की कई सामग्रियां आज भी सरलता से प्राप्त नहीं हो सकतीं, आज भी मांग प्राप्ति से अधिक है। युद्ध के पूर्व से यह पहला वर्ष है जब ब्रिटेन के मोटर वालों को बिना कूपन पेट्रोल लेने की अनुमति प्राप्त हुई है। किन्तु नई मोटरें खरीदने के लिये उन्हें दो या तीन वर्षों तक प्रतीक्षा करनी होगी। ठंडा रखने वाली तथा धोने की मशीनें जैसी चीजें कठि-नाई से मिलती हैं और साधारण मध्यम श्रेणी के घरानों की पहुंच से बाहर है।

साबुन पर से राशन अभी अभी हटा है। समाचार-पत्र अभी भी बहुत छोटे हैं। सिगरेट की कमी निरन्तर हो जाया करती है। केवल पिछले छः या आठ महीनों से साधारण ब्रिटिश नर-नारी का दैनिक आर्थिक जीवन संयम की शृंखला तोड़ कर साधारणता की ओर लौटने लगा है।

इस पृष्ठभूमि को भलीभांति सम-झने पर ही यह मालूम हो सकता है कि ब्रिटिश संसद् में शस्त्रीकरण कार्यक्रम की एकमत से स्वीकृति क्या अर्थ रखती है— वह शस्त्रीकरण कार्यक्रम जो, कम से कम आगामी तीन वर्षों तक के लिए साधारण आर्थिक जीवन प्राप्त करने में हुई प्रगति पर प्रतिबन्ध लगा देगा और सम्भवतः उन संयमों को जिनसे लोगों ने अभी अभी मुक्ति पाई है, कुछ अंश तक वापस ले आयगा। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ब्रिटिश संसद् का निर्णय अधिकांश ब्रिटिश लोगों के संकल्प का सच्चा स्वरूप है। किन्तु यह कोई हल्के दिल से किया गया संकल्प नहीं है। यह है ब्रिटिश जनता के आन्तरिक बल का मापदंड, उनके नैतिक साहस का साक्षी।

गम्भीर भावना

कुछ लोग ब्रिटिश शस्त्रीकरण को अपर्याप्त और निराशाजनक समझते हैं। सचमुच ब्रिटिश सैनिक डिवीजनों की संख्या कम दीखती है। किन्तु ब्रिटेन की कोशिशों का अनुमान केवल डिवीजनों से नहीं लगाया जा सकता। ब्रिटेन एक उच्चकोटि के वायुयान का निर्माण कर रहा है और केवल स्वयं ही साधन सामग्रियों से सज्जित नहीं हो रहा है बल्कि दूसरे देशों को भी साधन-सामग्री प्रदान कर रहा है। किसी देश के प्रतिरक्षा प्रयत्नों का अच्छा अनुमान यह देख कर लगाया जा सकता है कि वह अपनी राष्ट्रीय आय का कौन-सा भाग प्रतिरक्षा व्यय में लगाता है। [इस दृष्टि से ब्रिटेन के प्रतिरक्षा प्रयत्नों का अच्छा अनुमान यह देख कर लगाया जा सकता है कि वह अपनी राष्ट्रीय आय का कौन-सा भाग प्रतिरक्षा व्यय में लगाता है।] इस दृष्टि से ब्रिटेन के प्रतिरक्षा प्रयत्न कुछ समय से पश्चिमी जगत के अन्य सब देशों से बढ़े चढ़े रहते आए हैं और आज भी हैं तथा आगामी समयों का जितना कुछ अनुमान अभी लगाना सम्भव है संयुक्त राज्य अमेरिका के अतिरिक्त अन्य किसी देश में इससे आगे बढ़ने की सम्भावना नहीं है।

ब्रिटेन प्रतिरक्षा के ये प्रयत्न क्यों कर रहा है? युद्ध को अनिवार्य समझने के कारण नहीं बल्कि शक्ति के प्रदर्शन से शान्ति प्राप्त करने के लिए। इस बात पर संसद् के वाद विवाद के समय सब दलों के नेताओं ने जोर डाला था। इसी बात में ब्रिटिश राष्ट्र के अत्यन्त गम्भीर संकल्प का प्रतिबिम्ब मिलता है।

ब्रिटेन में कोई ऐसा दल या समूह नहीं है जो किसी भी परिस्थिति में प्रति-बन्धक युद्ध की कल्पना करता हो। संसद् के वाद-विवाद के अत्यन्त महत्व पूर्ण अवसरों में से एक वह था जब श्री चर्चिल ने चेतावनी के शब्द कहे थे। तीसरा संसार व्यापी युद्ध सम्भवतः सबका संहारक सिद्ध होगा। ब्रिटेन में प्रतिरक्षा की भावना प्रचलित है— किंतु गम्भीर भावना। कौन जाने ब्रिटेन की शांत सुदृढ़ता और शांतिप्रिय स्थिरता अभी भी शेष संसार को लाभ पहुंचाए।

आन्तरिक स्वच्छता बाहरी सफाई से अधिक आवश्यक

शरीर स्वास्थ्य शास्त्रियों का निष्कर्ष

श्री रामेश्वर शर्मा

कुछ मास पूर्व 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में 'पोलियो' — बालकों का लकवा-रोग पर एक लेख प्रकाशित हुआ है। इस लेख में आया हुआ यह वाक्य विचारणीय है। 'इस रोग का प्रकोप उन देशों में ज्यादा दीखता है, जिनमें जीवन मान अधिक ऊंचा बढ़ गया है, जहां स्वच्छता कम है, वहां उस का उपद्रव इतना नहीं है।' इस सिलसिले में इंगलैण्ड के एक जिले में आज की कल्पना के अनुसार लोगों के रहन-सहन में सुधार करने के लिए किये गये उपायों के जो अनपेक्षित परिणाम मालूम हुए, उनकी जानकारी करना भी उपयोगी होगा। एक गन्दे मोहल्ले के निवासियों को वहां से हटा कर हवा, प्रकाश और स्वच्छता के सब साधनों से सम्पन्न ऊंची जगह पर बाँधे गए मकानों में ले जाया गया। करीब एक साल के बाद नयी और पुरानी बस्तियों के स्वास्थ्य के तुलनात्मक जांच की गयी, तब यह जान कर आश्चर्य हुआ कि स्वच्छ बस्तियों के निवासियों का स्वास्थ्य उस गन्दी बस्तियों के निवासियों से गिरा हुआ नजर आया। इस नतीजे का कारण क्या हो सकता था? सौभाग्य से परीक्षक ने उनके भोजन की जांच भी की थी।

उसमें पाया गया कि वे स्वच्छ घरों के निवासी सस्ती खुराक लेते रहे। साग-भाजियां और फल, जो स्वास्थ्य की रक्षा कर हमारी शक्ति बढ़ाते हैं, उन्होंने नहीं लिये, क्योंकि मकान भाड़ा चुकाने में उन्हें ज्यादा खर्च पड़ जाता था। अकसर ताजे अविकृत आरोग्यप्रद अन्न की अपेक्षा अन्य खाद्यों की कीमत कुछ सस्ती होती है, जो सड़ने से बचाने के लिये आज की वैज्ञानिक विधियों द्वारा अमेध्य और अप्राकृत बना दिये जाते हैं। पहले किस्म का अन्न यदि तीखी भूख लगने पर खाया जाय, तो वह हमारे शरीर के लिये गुणकारी होता है, शरीर को बांधता है। लेकिन दूसरे किस्म का विसत्व पेट के भीतर बिगड़ कर और सड़ कर एक घातकारी प्रक्रिया शुरू करता है। उससे शरीर में जहरीले द्रव्य तैयार होते हैं और यदि वे शरीर में ही रह जाते हैं — श्रीमान लोगों के शरीर में तो वे रह ही जाते हैं, क्योंकि एक तो वे भूख के बिना ही खाते हैं और फिर बहुत ज्यादा पकाये गये कृत्रिम और दुष्पाच्य व्यंजनों का भोग करते हैं — तो उनसे खून अशुद्ध होता है, मांस-पेशियां अस्वस्थ बनती हैं और एक भारी (बेचैनी की हालत) बन जाती है, जो तब तक कायम रहती है, जब तक कि प्रकृति उसे व्याधि नहीं बना देती। व्याधि तो भीतर इकट्ठी हो चुकी गन्दगी दूर करके व्यक्ति को फिर स्वस्थ बनाने का कुदरती क्रिया मात्र है।

इससे यह जाहिर है कि बीमारी का ज्यादा बड़ा कारण बाहरी गन्दगी नहीं, बल्कि हमारा आहार-दोष ही है, जिससे कि सारा शरीर दूषित हो जाता है। इसलिए भीतरी और बाहरी दोनों स्वच्छताओं की परवाह करना जरूरी है। इनमें भी आन्तरिक स्वच्छता को मुख्य मानना चाहिये और उसी पर ज्यादा बल देना चाहिये। आजकल रोगों को दूर करने के लिए लगाये जाने वाले टीकों में जिन दवाइयों का उपयोग होता है, वे तो इस भीतरी गन्दगी को ज्यादा बढ़ा देती हैं, क्योंकि वे क्षुद्र प्राणियों के शरीर में जबर्दस्ती उत्पन्न किये गये रोगों की ही उपज हैं। इन उपायों को उचित ठहराने के लिए अनेक सिद्धांत पेश किये जा सकते हैं। लेकिन साधारण बुद्धि रखने वाला कोई मनुष्य यदि इन उपायों के हरएक पक्ष की जानकारी कर ले, तो उसे इनका स्वीकार करना असम्भव हो जायगा। और इन सिद्धान्तों को प्रमाणित करना भी तो अभी बाकी है। प्राकृतिक चिकित्सा के अनुभव उन्हें प्रसिद्ध करते हैं। डाक्टर और रोग कीटाणु-विद्या के जानकार इस सवाल पर एक राय नहीं रखते। हरएक रोग के मूल में कुछ खास कीटाणु रहते हैं, यह मान्यता तो बहुत दिन पहले ही बेबुनियाद सिद्ध हो गई थी। इस विषय में अभी-अभी जो प्रयोग किये गये हैं, उन का अनुभव भी इस सवाल पर प्रकृति के मत का ही अनुमोदन करता है।

रोग का मूल कारण कीटाणु नहीं हैं। वे तो एक बड़ी शृंखला की एक एक कड़ी मात्र हैं। प्रकृति बीमारी की प्रक्रिया को सफलता की ओर यानी स्वास्थ्य की ओर ले जाने में उनका उपयोग-मात्र करती है, या ऐसा कह लीजिये कि इसी काम के लिए उन्हें पैदा करती है। वे कूड़ा-कचरा साफ करने में सफाइये का काम करते हैं। प्रो० एन्ड्रयू विलैम्प (एक बड़े डाक्टर, रसायनशास्त्री और पाश्चर के समसामयिक सहयोगी) तथा हाल ही अन्य वैज्ञानिकों ने जो प्रयोग किये हैं, उनसे भी ऊपर प्रगट किये गये मत का प्रतिपादन होता है।

कीटाणु को किसी जहर के प्रयोग से मार देने पर बीमारी का बाहरी लक्षण कुछ समय के लिये दब जाता है, लेकिन शरीर की इकट्ठी हो गई गन्दगी से जो मुक्ति मिलनी चाहिये, वह नहीं मिलती। उल्टे, जो बीमारी का मुख्य कारण है, वह जहरीला द्रव्य दवाओं आदि से शरीर में और ज्यादा बढ़ जाता है। शरीर में जहरीले द्रव्यों का आहार-विहार की भूलों से उत्पन्न गंदगी और दवाओं के भयंकर जहरों का एक ढेर लग जाता है। ये सब मिलकर भीतर ही भीतर जीवन की प्रक्रिया में अवरोध पैदा करते हैं और बाद में उसका क्षय करने लगते हैं। आजकल बढ़ते जा रहे क्षयकारी रोगों का असली कारण यही है। इंगलैंड में जब से यह कायदा बन गया है कि जिन्हें टीका लगवाने में तात्विक विरोध है वे उसे न लगवावें, तबसे ६० ०/० जनताने टीके नहीं लगवाये हैं। इस तरह यह सिद्ध होता

(शेष पृष्ठ २० पर)

हम इतिहास से खेल रहे हैं—

★ श्री हरीश अग्रेट

इतिहास अपने आपको दुहराता है। दुहराये भी क्यों न जब मनुष्य उससे कुछ भी शिक्षा ग्रहण करने की चेष्टा तक नहीं करता। हम विश्वास करें अथवा न करें यह एक अटल, सत्य, नियम है। हम इसे झूंठ कह कर आज की और कल को आने वाली मुसीबतों के सामने, मरुस्थल के शुतुरमुर्ग की भांति आंखें बन्द करने का प्रयत्न करते हैं। इसका फल होता है कि हम स्वयं ही कई विकट परिस्थितियों और जटिल समस्याओं का निर्माण कर बैठते हैं। फिर इतिहास भुला कर मार किसने नहीं खायी।

दूर जाने की बात नहीं, आज की ही एक जटिल तथा गम्भीर समस्या अर्थात् दो बंगालों की ओर एक नजर देखें। हमारे अपने नेताओं के सत्य और अहिंसा' के उड़ाये गये मजाक, 'शराफत और शांति प्रियता' के निकाले जनाजे के अतिरिक्त भी कुछ है जो जनता तक नहीं पहुँच पाया।

एक अमंगल प्रभात में पाक पुलिस और अन्सारों का खुलना जिले के हिंदुओं के विरुद्ध जिहाद आरम्भ हुआ। पाक से नापाक को धक्के लगने लगे। इस अमंगल प्रभात के पाक कुकृत्य पर उंगली उठाने वालों को उंगली ही नहीं नाक भी कटवानी पड़ी। पूर्वी बंगाल की सत्यवादी और वानप्रस्थी सरकार जिसको नोआखली को महात्मा गांधी के चरणों ने चूम कर पवित्र कर डाला था, के अनुसार खुलना का मनुष्य संहार कुछ कम्युनिस्टों के विरुद्ध 'पुलिस एक्शन' था। बेबस और भोले हिन्दुओं का कत्लेआम एक साधारण 'पुलिस एक्शन' बन गया।

पूर्वी बंगाल धारा सभा की बैठक में हिन्दू सदस्यों ने इस भयानक हत्याकांड को देख चीख मारी। धारा सभा में ही इस अमानुषिक अत्याचार तथा पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों की दशा की जांच के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय जांच समिति की नियुक्ति की मांग की गई।

पाक स्वतन्त्र और इस पर इस्लामिक राज्य में इस मांग के लिए स्थान कहां था। वहां तो अल्पसंख्यकों को गूंगे और बहरे होना आवश्यक है। इस मांग का अर्थ था राष्ट्रद्रोह, इसे समझा गया पंचमार्गी कार्य, इसको कहा गया शरारत और इसका उत्तर दिया गया इतिहास दुहरा कर। पाक सरकार के पाक धारा सभाइयों को काफिर की इस बात पर गुस्सा जो आ गया तो उन्होंने नर्क के कुत्तों को खुला छोड़ दिया। इन्होंने वह करतब किया जिसमें अबलाओं पर बलात्कार हुए, देवियों की मांग के सिन्दूर की जगह रक्तपुष्प खिल उठे, सुहाग लुटे, बच्चे अनाथ हुए, माताओं की गोदियों से उठा उठा लाल दहकती भट्टियों में झोंक दिये गये और मकान अपने धुयें से पाकिस्तान की छत और मुंह काला करने लगे। पाक ने नापाक को खाया। नर्क का नृत्य वहां हुआ। परन्तु यह कुछ भी नया नहीं था, यह था मार्च ४७ का रावलपिंडी, यह था अगस्त ४७ का पश्चिमी पंजाब। इतिहास ने पुनः भाई को बहिन से, पति को पत्नी से, मां को पुत्र से और भाई को भाई से जुदा किया।

फिर शान्ति की डिम डिम बजी। मियां लियाकत अपने ऊंट पर चढ़ भारत पहुंचे। पाक प्रधान मंत्री को अपने घर आया देख पण्डित नेहरू फूले नहीं समाये। वह देवियों के क्रन्दन को भूल गये। पीड़ितों की आवाज बैंड के सामने न टिक सकी। तब हुआ वह समझौता जिसे नेहरू लियाकत पैक्ट का नाम प्राप्त हुआ।

बस चारों तरफ ग्रामोफोन रिकार्ड की तरह बजने लगा, नेहरू लियाकत पैक्ट। रेडियो मिनिस्टर इसी का प्रचार करता, डाक मिनिस्टर इसी को डाक बांटता, रेल मास्टर के इंजिन से यही आवाज निकलती, पुलिस महोदय भी यही अलापने लगे। हमारे ही नहीं पाक नेता भी प्रचार करने लगे। रफीदी यही कहता, अमीन लाला ले इसे गाने लगा, मलिक साहब भी आंसू बहाने लगे। किसी को भी समझ न आया कि कल के कातिल आज अहिंसा और सत्य के मन्दिर में बांग कैसे देने लगे। पता न चले कि बर्बरता के उपासक हाथ में शांति की माला लिए क्यों जप रहे हैं। परन्तु आज हैं इस सब दौड़धूप के आंकड़े हमारे हाथ और वही हैं जिसे कहते हैं 'ढाक के तीन पात'। आज स्पष्ट है कि 'पाक' आंसू 'मगरमच्छी आंसू' ही थे। क्या आज पूर्वी बंगाल के हिन्दू धारा सभाई जांच समिति की मांग को दुहराने का साहस कर सकते हैं?

सब ने समझा नेहरू-लियाकत पैक्ट को मदारी की पिटारी से निकला एक नया जादू। हम भूल गये कि पंडित नेहरू हैं गांधी जी के उत्तराधिकारी और मियां लियाकत हैं जिन्ना के जुतकश। इन दो चेलों ने मिल कर इतिहास को वापिस बुलाया और हमने देखी मार्च ४७ के रावलपिंडी के हत्याकांड के बाद की गांधी जिन्ना अपील। तब अंग्रेज भारत में था और अब वह पुराना मास्टर हो गया है। इतिहास की वही घटना नया जन्म ले नेहरू-लियाकत पैक्ट के रूप हमें मोहने लगी। हम भूल गये कि गांधी जिन्ना अपील ने काफिर के रक्त से भीगे छुरे ही तो साफ किये थे। आज वह पैक्ट भी उसी की तरह पाकिस्तान के घृणात्मक कुकृत्यों पर परदे का काम दे रहा है। यह है इतिहास और यह है कटुसत्य।

इतना ही नहीं। इतिहास का वह दिन भी तो हमें याद है जब हिटलर ने जर्मनी के यहूदियों के विरुद्ध 'जहाद' किया था। वह ऐतिहासिक सत्य भी हम भुला नहीं सकते कि इन यहूदियों के साथ एक लाख से भी अधिक चतुर और मक्कार जर्मन गुप्तचर भी यहूदी की छाप लगा कर जहाजों में भर दिये गये थे। फिर जिन देशों ने इन शरणार्थी यहूदियों को गले लगाया। उन्हें भी वह हिटलर के बदमाश जोंक की तरह चिमट गये। रूस ही एक देश था जिसने इन यहूदियों को स्थान नहीं दिया। हिटलर की इस चाल का फल यह हुआ कि द्वितीय महायुद्ध में मित्रराष्ट्रों के गुप्ततम भेद भी जर्मनी पहुंचते रहे। इन गुप्तचरों ने भारी हानि की। हम यह भी जानते हैं रूस के हाथों जर्मनी के हारने का एक मुख्य कारण यह भी था कि जर्मनी के गुप्तचर वहां नहीं थे और इस कारण उसे रूस की चालों की कुछ भी सूचना नहीं मिल पाती थी।

हम भी उसी भूल को दुहरा रहे हैं जिसके कारण यूरुप भर ने जर्मनी के हाथों मार खाई थी। इसमें कुछ भी शक नहीं कि पाकिस्तान ने भारत में गुप्तचरों का एक जाल फैला रक्खा है। इस जाल को अधिक घना करने के लिए पाकिस्तान ने बंगाल की इस गड़बड़ का मक्कारीपूर्ण लाभ उठाया है। पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं को घर बार छोड़ कर भारत भागने के लिये मजबूर किया गया और इनके साथ ही भारत भूमि में आये हिन्दुओं का वेश धर कर पाक गुप्तचर। हमारी सरकार ने कुछ एक को पकड़ा जिससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि पाकिस्तान हिटलर की नकल कर रहा है।

हिन्दू अपने सजे मकान, हाट और बाजार पूर्वी बंगाल में छोड़ कर भारत आये थे और उन्हें सम्भालने चले पश्चिमी बंगाल के मुस्लिम। इन्होंने खूब खाया और उड़ाया और फिर इनके तथा पाक सरकार के सौभाग्य को हुआ नेहरू-लियाकत समझौता। बस इन कल के पीड़ित मुसलमानों ने भारत की तरफ मुंह करके क्विक-मार्च कर दिया और साथ में उठा कर कितने गुप्तचर लाये इसका कुछ हिसाब नहीं।

क्या हमारी 'स्टीम रोलर' सरकार ने पाक गुप्तचरों के इस अन्त प्रवेश की रोक थाम का कुछ प्रयत्न किया? मालूम यह देता है कि सरकार अपना मानसिक सन्तुलन खो चुकी है। नहीं तो क्या यह हो सकता था कि पाकिस्तान को प्रसन्न करने के लिये सैकड़ों को जेल ठूंस दिया जाता? पाकिस्तान की खुशामद में ही भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के उन वीर सिपाहियों, सीमाप्रान्त के उन खान भाइयों के साथियों को एक समाचार पत्र तक भी नहीं निकालने दिया जाता जो कि उनका वैधानिक अधिकार था।

चाहे हम सैंकड़ों पैक्ट करें, हजारों शेखचिल्ली की कहानियां रचें, लाखों खुशामदें करें परन्तु यह सत्य और स्पष्ट है कि पाकिस्तान अपने समय पर भारत के विरुद्ध 'जहाद' करेगा।

यह कुछ मनगढ़न्त कहानी नहीं। हम भारत की आन्तरिक स्थिति जानते ही हैं। दैनिक समाचार-पत्र भारतीय मुसलमानों को शस्त्र बांटने, भारत सरकार के प्रति नफरत और असन्तोष फैलाने, पाक गुप्तचरों की पकड़ धकड़ होने का समाचार लाते हैं। अमरीका में किया मियां लियाकत का भाषण यह स्पष्ट संकेत है कि मियां का पण्डित नेहरू से समझौता केवल पाकिस्तान की युद्ध तय्यारी के लिये और समय लेने के लिये ही है। यह भी स्पष्ट हो चुका है कि जनाब लियाकत अली का अमरीका में युद्ध सामग्री की 'दुकानदारी' के लिये ही गये थे। जिस पैक्ट के नाम पर हम दीवाने हो उठे हैं उसके बाद भी मियां साहब भारत को शत्रु देश ही समझते और कहते हैं।

इतना ही नहीं पाकिस्तान ने भारत के सामने समस्या पर समस्या खड़ी की है। पश्चिमी पाकिस्तान के शरणार्थियों की समस्या अभी सुलझी नहीं थी कि पाकिस्तान ने देश के दूसरे कोने से पचास लाख को और ठोकर मार इस समस्या को और भी जटिल कर दिया। काश्मीर की उलझन इसने पैदा की जिससे कि हमारा आर्थिक ढांचा ही हिल उठा है। इसी पाकिस्तान ने भारत में गुप्तचरों का एक भयानक जाल बिछा रखा है। इसी के द्वारा भारतीय मुसलमानों को पचमार्गी कार्य करने को उकसाया जा रहा है। और इधर हैं हम कि इस नेहरू लियाकत पैक्ट को शास्त्रों का आदेश मान इसकी माला जप रहे हैं। दिल पर हाथ रख कर सोचिये कि क्या हम आग से नहीं खेल रहे।

———

राजस्थान में शिक्षक की दुरवस्था

★ एक शिक्षक

राजस्थान राजपत्र के १२ जुलाई ५० के एक विशेषांक द्वारा राजस्थान सरकार ने विभिन्न नौकरियों के (वेतन दर एकीकरण) नियम प्रकाशित किये हैं। राजस्थान में एकीकरण का इच्छुक प्रत्येक कर्मचारी इसकी तीव्रता से प्रतीक्षा कर रहा था। शिक्षक इस एकीकरण योजना के क्रियान्वित होने की राह पिछले वर्ष भर से देख रहा था। राजस्थान के शिक्षक रियासतों की दृष्टि से वेतन दरों के मानों में अलग अलग बंटे थे। जागीरी स्कूलों के शिक्षकों की अवस्था तो बड़ी शोचनीय थी और अब भी है। कई बार पत्र व्यवहार किये, शिक्षा मन्त्री से शिष्ट मण्डल मिले। शिक्षामन्त्री जी और प्रधान मन्त्री ने मीठे आश्वासन दिये। सार्वजनिक सभाओं और विशेष आयोजनों में श्रीमानों ने शिक्षक की दुरवस्था पर आंसू बहाये, उसे समाज का जड़ा बताया और उसके दायित्वों की महानता सिद्ध की। इन सबों को देख कर पिछले प्रायः पन्द्रह मासों से जागीरी शिक्षक के भीतर जो रोष और क्षोभ के बीज पनपते—कुंठित होते रहे, वह शब्दों की सुन्दरता और आश्वासनों की मधुरता देख कर मदहोश होता रहा। अन्त में इस विशेषांक ने उसकी मदहोशी को तोड़ा और उसने अपने पैरों के नीचे धरातल अनुभव किया। आसमान में उड़ता हुआ वह अचानक धरती पर आ पड़ा।

मार्च ५० की अन्तिम तारीख को जागीरी स्कूलों के १५ और बीस रुपये मासिक पाने वाले शिक्षकों का एक शिष्ट मण्डल श्रीमान् शिक्षामन्त्री से उनके निवास पर मिला था। उस समय श्रीमान् ने स्पष्ट कहा था—मैं अपने शिक्षकों का स्तर नीचे नहीं गिरने दूंगा। क्लर्कों को मिलने वाली वेतन दरों से शिक्षकों की वेतन दरें अधिक ही होंगी या कम से कम उनके समान तो होंगी ही। वह आश्वासन इस विशेषांक में नग्न रूप में व्यक्त हुआ है—

शिक्षक	रुपये
मिडिल	२५
मैट्रिक	४०
इंटरमीजिएट	५०—२—८०
ट्रेन्ड इंटरमीजिएट	७०—३—८५—
	४—१०५—५—१२५
ग्रेजुएट	७०—४—१००
ट्रेन्ड ग्रेजुएट	९०—५—१६०
चपरासी व मेहतर	२५

साइकल सवार को ३ रु० मासिक विशेष

शासन प्रबन्ध

सचिवालय के जमादार व दफ्तरी	३०+५
लोअर मैट्रिक क्लर्क	४५—२—७५
(निम्न श्रेणी के क्लर्क)	५—६—८०—४—१००
का० कु० प्र०	५—१२०
उच्च श्रेणी के क्लर्क	७०—४—९०—५—१२०
का० कु० प्र०	८—१६०

विभागों के अध्यक्षों और सचिवालय में काम करने वाले निम्न और उच्च श्रेणी के क्लर्कों को क्रमशः ५ और १५ तथा १० और २० रुपये मासिक विशेष वेतन मिलेगा।

डिग्री कालेजों के लेक्चरार	२००—१०—२८०
डिग्री कालेजों के प्रोफेसर	२५०—२५—५००

शासन विभाग

सुपरिन्टेण्डेण्ट्स सचिवालय	२००—१०—२५०
का० कु० प्र०	१०—३००
विभागों के	१५०—१०—२००—१०—२५०
अन्य	१२०—८—१६०—१०—२२०
असिस्टेण्ट सेक्रेटरी	२५०—२५—४००
का० कु० प्र०	२५—५००
विशेष वेतन	५०
डिप्टी सेक्रेटरी	५००—२५—७००
विशेष वर्तन	१००

उपर्युक्त तालिका कितनी पक्षपातपूर्ण है। शासन प्रबन्ध से संबन्धित कर्मचारियों की वेतन दरें उदारतापूर्वक निश्चित की गई हैं और शिक्षकों की उपेक्षा से। कई बड़े वेतन पाने वाले शासकों के सहयोगियों को विशेष वेतन के रूप में बड़ी बड़ी रकमें दी गई हैं। इस विशेष वेतन नामक मद का क्या वैधानिक और व्यावहारिक महत्व है, इसका उत्तर इस नियमावली के निर्माता शायद बता देंगे।

मंहगाई भत्तों की दरें भी विचारणीय हैं—

मासिक वेतन रु० में	महगाई रु० में
३९ तक	१२
४० से ९९ तक	१५
१०० से १९९ तक	२०
२०० से ४९९ तक	२५
५०० से ६९९ तक	३०
७०० से १००० तक	४०

मंहगाई भत्तों की उपर्युक्त तालिका कितनी हास्यास्पद है। वेतन की कमी के साथ मंहगाई की दरों में भी कमी होती गई है। मंहगाई का सम्बन्ध मासिक वेतन से है—यह समझने की बात है। मंहगाई तो प्रत्येक व्यक्ति के लिये बराबर है। होना तो यह चाहिये कि कम वेतन वाले को मंहगाई भत्ता अधिक दिया जाय ताकि उसकी अभाव पूर्ति हो सके। यह ठीक है कि मंहगाई भत्ते की दरें क्रमशः धीमी गति से उठाई गई है। फिर भी जहां तक मैं समझता हूं २५० रु० मासिक पाने वाले को मंहगाई भत्ता दिया ही नहीं जाना चाहिए, जैसा कि पहले था। एक हजार मासिक पाने वाले को भी ४० मासिक मंहगाई भत्ते की भूख बची रह जाती है और २५ मासिक वेतन पाने वाला पेट के खाली कोनों को केवल १२ रुपयों पर ही भरने का प्रयत्न करे। इसे तो अन्याय ही कहा जाना चाहिए।

आजकल कम से कम सरकार की दृष्टि में तो शिक्षक एक निरीह प्राणी रह गया है, जिसे टुकड़ा डाल कर सरकार पालती है। (एक स्थान पर एक मन्त्री महोदय ने कहा भी था। .....'मेरा बस चले तो मैं स्कूल को बन्द कर खादी आश्रम खोल दूं')। प्रजातन्त्र एक्ट की जनता के समस्त आवश्यक गुण (दुर्गुण) नेताओं और निःस्वार्थ सेवक मन्त्रियों (एक-हजार मासिक पाने वाले) के भाषणों से ही उसमें उतर आयेंगे। फिर शिक्षालयों और शिक्षकों की आवश्यकता ही क्या है। इससे तो अच्छा है कि सभी स्कूलों और कालेजों को खाली कर शरणार्थियों को बसा दिया जाय, ताकि उनके निवास की विकट समस्या तो हल हो जाय। फिर उदरपूर्ति के साधन का ही प्रश्न रह जाता है, सो भी 'अधिक उत्पादन' आन्दोलन को जोरों पर कार्यान्वित किया जाय और उसमें उन्हें, विशेष कर भावी सन्तानों को (बैलों की जगह भी) लगा दिया जाय।

मंहगाई बढ़ती जा रही है और राज कर्मचारियों को उसे अधिक रूप में अनुभव करने के साधन सरकार तैयार कर रही है। इसमें शिक्षक की मौत है। अन्य कर्मचारी तो निश्चित रूप से 'ऊपरी आय का' आश्रय ले लेते हैं जिसका सम्बन्ध शासन से है। परन्तु शिक्षक के पास न तो इसकी योग्यता है और न क्षेत्र ही और इसी कारण अर्थवादी युग की मार उस पर कठोर पड़ती है।

भूख और शोषण एक बुनियादी संघर्ष की जननी है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है, जिसे समझना आज कठिन नहीं है। भूखे व्यक्ति में शैतान जाग उठता है और उसमें जब मृत्यु चिंघाड़ने लगती है तब आंखों से आंसू नहीं अंगार के शोले उबलने लगते हैं। इससे भी मना नहीं किया जा सकता। कहीं ऐसा न हो कि भूखा शिक्षक समाज के नवीन कर्णधारों में संघर्ष और आग के इन्जेक्शन न लगा दें।

जहां छात्र अपना रेडियो स्टेशन चलाते हैं

अमेरिका की शिक्षा-पद्धति के अन्तर्गत न्यूयार्क नगर का ब्रुकलिन टेक्निकल हाई स्कूल टेक्निकल शिक्षा का एक विशेष नमूना है। यह इस सिद्धांत पर कार्य करता है कि पढ़ाए जाने वाले प्रत्येक विषय का प्रयोग शालाओं और दुकानों में अनिवार्य रूप से प्रदान किया जाना चाहिये। कोई भी विद्यार्थी उन सिद्धान्तो का, जिनको उसने पढ़ा है, सर्वश्रेष्ठ प्रयोगात्मक व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त किये बिना पारंगत नहीं हो सकता।

इस स्कूल की स्थापना १९२२ मे एक इंजीनियर द्वारा की गई थी, जिसे न्यूयार्क नगर के स्कूल में अध्यापक नियुक्त किया गया था। ११ वर्ष पर्यन्त वह स्कूल जन सकुल और सकीर्ण स्थान मे चलता रहा। १९३३ तक इसकी शिक्षा संबन्धी महत्ता स्थापित हो गई थी और तब से उसे वर्तमान, विशाल और साधन-सम्पन्न भवन में परिवर्तित कर दिया गया। विद्यार्थियो को यान्त्रिक औद्योगिक क्षेत्रों मे शिक्षा देने के लिए स्कूल के भवन ही मे आवश्यक सुविधाएं प्राप्त हैं। औद्योगिक, रासायनिक विभाग में विद्यार्थियों के उदकपन संयंत्र विद्यमान हैं। यदि विद्यार्थी रंग बनाना सीखता है तो वह आकाच (इनैमिल) तथा रंगलेप (पेन्ट) अथवा प्रलाप (लैक्कर) बनाने के लिए तेल में रंग बनाने के पदार्थ मिलाना सीखता है। यदि वह कागज़ बनाना सीख रहा है तो वह अल्पमात्रा में लकड़ी प्रारम्भ करके कागज का तत्त्व निकाल कर प्रतिक्रिया को समाप्त करता है। वास्तुकला के विद्यार्थियों के लिए दो बड़े कार्यालय हैं। एक में वे दोतल्ला लकड़ी का बंगला दूसरे में लोहे व सीमेन्ट के भवन होते हैं। वे लोहे का ढाचा खड़ा कर उसे रिवट करके जोड सकते हैं। कार्य समाप्त होने के उपरान्त ये भवन गिरा दिये जाते हैं और इस सामग्री को दूसरे विद्यार्थी प्रयोग में लाते हैं।

यन्त्रों के अध्ययन मे विद्यार्थी, जिन्होने मशीन सम्बन्धी ड्राइंग तथा सादा खाका खींचना सीख लिया है, अपनी कल्पनाओं को कार्यरूप में परिणित करने के लिए लकड़ी के नमूने तैयार करते हैं। उन नमूनों की ढलाई की जाती तथा उनकी मशीनो पर सफाई होती है। तब मशीन से साफ किये हुये भागों को सामान्य प्रयोगशाला में ले जाया जाता है जहां पर यह निर्णय किया जाता है कि क्या प्रत्येक भाग अपना कार्य सुचारू रूप से करने में समर्थ है। प्रयोगशाला में परीक्षण यन्त्रो का पूरा प्रबन्ध है। वहा १,००,००० से ३,००,००० पौंड तक की शक्ति डालने वाली मशीनें उपलब्ध हैं। यद्यपि मशीनों का कार्य प्रदर्शन के लिए वहां शिक्षक रहते हैं किन्तु विद्यार्थी अपना परीक्षण स्वयं ही करते हैं।

रेडियो के विद्यार्थी जिन्होंने विद्युत शास्त्र का पाठ्यक्रम लिया होता है, अपना छोटा-सा रेडियो स्टेशन तैयार करते हैं। यहा उन्हे दुर्बोध यन्त्र से सम्बन्धित सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक भागों को सीखने का अवसर प्राप्त होता है। इस विषय की अन्तिम परीक्षा के लिए शिक्षार्थी को वहा परीक्षा देनी पड़ती है, जो अमेरिका में लाइसेन्स प्राप्त करने के लिए रेडियो स्टेशनों के चालकों को पास करनी पड़ती है। यदि विद्यार्थी चालक का प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेता है तो वह उस विषय मे उत्तीर्ण समझा जाता है।

बाल बन्धु परिषद

संपेरा

लेकर साथ संपेरा आया,
सब लड़कों के मन को भाया।
खुली टोकरी, निकले सांप,
देख रहे सबके मा बाप।
फन फैलाये बैठ गये वे,
ध्यान लगा सब लगे देखने।
बच्चे लाये घर से रोटी,
कोई पतली, कोई मोटी।
कुप्पी से जब बाहर आये,
सब लड़के झट घर को धाए।
कहा सभी को जाओ लड़को,
तब फिर गया संपेरा घर को।

—सौमित्र

गीत

हम बालबन्धु हैं होनहार।
हम होनहार, हम होनहार॥

हम विद्या पढ़ने जावेंगे,
जगती के कष्ट मिटावेंगे।
भूखे प्यासे दु:खित जनों—
को प्रेम सहित सहलायेंगे।

हम समय न खोयेंगे बेकार।
हम बालबंधु हैं होनहार॥

हम रण में लड़ने जायेंगे,
अरिदल को मार भगायेंगे।
भारत का मान बढ़ायेंगे,
हम सबको प्रेम सिखायेंगे।

हम भारत मा के भाग्य हार।
हम बालबंधु हैं होनहार॥

नेता का जो आदेश मिला,
गीता म जो उपदेश मिला।
हम सबको उसे पढ़ायेंगे—
हम विश्व में धूम मचायेंगे।

हम भारत मां के नौनिहार।
हम बालबंधु हैं होनहार॥

हम यद्यपि उमर के कच्चे हैं,
पर निज प्रण के हम पक्के हैं।
हम उन्हीं वंश के हैं सपूत,
हम उसी बाप के हैं सपूत।
जिन पर था सब ही का दुलार।
हम बालबंधु हैं होनहार॥

—ब्रह्मानंद शर्मा

विद्यार्थी पौधे सींचते हुए

धोबी की जरूरत नहीं

बिना पानी की धुलाई के लिए नये प्रकार की एक बहुत अच्छी मशीन तैयार की गयी है। यह अपने आप ही चलती है। मशीन के एक सिरे पर लगे डिब्बे में अपने कपड़े रख दीजिये और दूसरे सिरे के डिब्बे में से धुले धुलाये और साफ कपड़े निकाल लीजिये। धोबी की कोई जरूरत नहीं। कहते हैं कि कपड़े धोने की दूकानों के अलावा, बड़ी-बड़ी फैक्टरियां तथा यात्री जहाजों के लिए भी इनकी आवश्यकता प्रतीत होने लगी है। चूंकि मशीनें छोटी, बड़ी सब साइज की हैं, इस लिए वे सब लोगों के काम आ सकती हैं।

यही नहीं, कपड़ों पर लोहा करने की एक नयी छोटे साइज की 'इस्त्री' भी तैयार की जा रही है। यह बिजली और भाफ दोनों के प्रयोग से काम करेगी। हम लोग जानते हैं कि हमारे धोबी लोहा करने से पहले कपड़ों को कुछ भिगो लिया करते हैं, ताकि लोहे की गर्मी से कपड़ा झुलस न जाय। नई इस्त्री में इस बात की भी व्यवस्था बड़े अच्छे ढंग से की गयी है। इस्त्री के एक भाग में एक बन्द कटोरी में पानी भरा रहता है और बिजली की गर्मी से पानी की भाप बनती है और कपड़े पर फैल कर उसे नर्म तथा मुलायम करती रहती है। लोहा करने के इस यंत्र का नाम 'स्टीमोमैटिक' है।

खाद्य-समस्या हल करने वाली मशीन

एक आस्ट्रियन अनुसंधानकर्ता ने एक ऐसी मशीन का आविष्कार करने का दावा किया है जिसकी सहायता से संसार की खाद्य-संकट समस्या हल हो सकती है। इस मशीन से पौधों के विकास को बढ़ाया जा सकता है। बीज को मशीन में रख कर खास तरह के पम्प द्वारा उन्हें पौष्टिक तत्त्व पहुँचाया जाता है। बिजली के बल्ब से उन्हें उष्णता उपलब्ध होती है। इस प्रकार पौधे की जड़ें जमीन में उगने वाले पौधे की जड़ों से तिगुनी शक्तिशाली होती हैं। मक्का, राई, जौ, सोयाबीन, आदि सब इस प्रकार आश्चर्य पूर्ण तथा विकसित रूप में उपजाये जा सकते हैं किन्तु इस उत्पादन में विशेष व्यय भी नहीं करना पड़ता है।

जरा हंसिये

एक दफे एक अंग्रेज ने हिन्दुस्तानी से पूछा—"क्या बात है सभी अंग्रेज करीब करीब एक रंग के होते हैं, किन्तु हिन्दुस्तानी कई रंग के होते हैं?"

हिन्दुस्तानी ने जवाब दिया—"[illegible] करीब करीब सभी गधे एक रंग के होते हैं, किन्तु घोड़े कई रंग के होते हैं।

—[illegible] कुमार

आधी दुनिया

गृह प्रबन्ध स्त्रीयां ही कर सकती हैं

श्री आशाराम माहेश्वरी

जीवन एक गाड़ी है। दम्पति उसके दो पहिये हैं। कैसे खाये पियें और कैसे अपने जीवन की गाड़ी को आगे खींचे, इसके लिए धन की जरूरत पड़ती है। यह धन आजीविका का द्वारा पैदा किया जाता है और इस तरह से यह गाड़ी सुचारू रूप से चलती रहती है।

इस बात को सभी मानेंगे कि अधिकतर परिवारों में कमाने वाला पुरुष ही होता है और नारी अपने खर्च के लिए उस पर आश्रित रहती है। हिन्दु धर्म ग्रन्थों में नारी को लक्ष्मी, अन्नपूर्णा और न जाने किन किन नामों से विभूषित किया गया है। क्यों? स्वयं दूसरे की आश्रित होकर वह दूसरे को क्या दे सकती है? अधिकतर घरों में पुरुष की मरजी पर ही सारे कार्य होते हैं। उसी के पास रुपये रहते हैं और वही उनका हिसाब रखता है। नारी को जरा-जरा सी चीज के लिए उसके सामने हाथ फैलाना पड़ता है। पुरुष ने नारी को उपाधियां जो दे रखी हैं सिर्फ दिखावटी हैं। उसे खुश करने के लिए हैं। उसमें कुछ तथ्य नहीं है।

मैंने आपसे पहिले ही बता दिया कि धनोपार्जन पुरुष ही करता है। यह बात यथार्थ मे ठीक है। वह प्रातः से सायंकाल तक बैल की तरह जुतता है बाजार या आफिसों में, ग्राहकों की झिड़कियां वह सुनता है, अफसरों की डांट फटकार वह सुनता है। आशा निराशा में वह डूबता उतराता दिन पर दिन परेशान रहता है और इस तरह स वह थक जाता है और शाम को थका मांदा अपने घर पहुंचता है।

प्रातः से सायंकाल तक काम करने के पश्चात् उसके शरीर में इतनी जान नहीं रहती कि कुछ कार्य कर सके। उसका मन शान्ति चाहता है। उस वक्त जब वह घर पहुंचता है जहां उसकी पत्नी वगैरह कहती हैं अमुक चीज लाए या नहीं? वह बहुत सी चीजें लानी भूल जाता है। खासकर उसको स्त्रियों की चीजें जैसे साड़ियां, ऊपर के कपड़े गहने वगैरह लाने दिलाने चीजों में उसे खास दिक्कतें उठानी पड़ती हैं। अमुक का रंग फीका है। अमुक में भारी हलकी है। इस तरह से वह परेशान हो जाता है। ऐसे ही घर के और सामानों में रुपया आदमी के पास होने कारण उनको यह भी पता नहीं होता कि कितना रुपया इनके पास है या कितना पाते हैं। वह आंख मींचकर अपनी मांगे पेश करती रहती है और बिचारा मनुष्य उसकी मांगे पूरी करता थक जाता है। कभी कभी तो उसकी मांगे इतनी बड़ी होती हैं कि वह पूरी नहीं कर सकता है। वह अपनी असमर्थता बताता है कि मेरे पास इतना समय नहीं है या मेरे पास इतना रुपया नहीं। इसका नतीजा यह होता है कि घर मे कलह होती है और घर की शान्ति भंग हो जाती है।

इस तरह पारिवारिक सुख शांति के लिए यह ठीक है कि पुरुष जो कमाए पत्नी को सौंप दे और पत्नी परिवार के खर्चे का भार संभाले इससे यह फायदा होगा कि चीज अपनी तबियत से आवेगी। उस पर कोई विरोध नहीं होगा। आदमी अपनी चीज खुद ले ही आवेगा और अपने खर्चे के लिए रुपये उससे लेवेगा। मनुष्य को औरतों की चीजें लाने में जो परेशानी उठानी पड़ती है वह दूर हो जावेगी और इस तरह वह अपना काम पूरे मन से कर सकता है।

हमारा देश गरीब है और यहां के लोग कम शिक्षित हैं। कई चीजों ने अपनी जड़ बहुत गहरी जमाली है और वह दूर होने का नाम नहीं लेती। उसमें गहने भी आते हैं। स्त्रियां इसको अपना शृंगार समझती हैं। इनकी आभूषण प्रियता से भी इनको नुकसान होता है। कभी कभी तो चोर लूटते वक्त इनकी जीवन लीला ही हमेशा के लिए समाप्त कर जाता है। बापू ने गहने के बाबत अपनी पुस्तक "स्त्रियों की समस्या" में लिखा है। "सोने की कुंईंटों को दरिया में फैंकना और स्त्रियों के गहने बनवाने में पैसा खर्चना लगभग एक ही बात है।" सो मैं आप से कह रहा हूं कि यह एक प्रथा सी हो गई है और इसके लिए पत्नी अपने पति से कलह किया करती है। वह बिचारा इसको समाप्त करने के लिये कर्ज लेकर गहने बनवाता है। चाहे खाने को फल न मिलें चाहे पीने के लिये दूध न मिले लेकिन चाहिये स्त्री के लिये गहने। पर जब रुपये पैसे नारी के पास रहेंगे तब वह देखेगी कि इतने रुपये ही नहीं हैं कि गहने बनवाये जा सकें या और कोई मांग की जा सके। इस तरह से अनुचित मांगे खत्म हो जावेंगी।

स्त्रियों का स्वभाव ही कुछ ऐसा होता है कि वह अपने धन में से भी कुछ न कुछ संकट के समय के लिए बचाकर रखती है। जब पूरे घर की जिम्मेदारी उनके कन्धों पर आ जाती है तब तो उसमें कुछ न कुछ तो बचाकर रखेगी जो कि वक्त जरूरत काम ही आवेगा। लेकिन गृहिणी फैशनेबुल न हो। अगर हो तो उस पर नजर रक्खी जा सकती है और सलाह दी जा सकती है कि खर्च इस तरह से मत करो। कहने पर वह अवश्य कहना मान लेगी और इस तरह से खर्चा ठीक तरह से चलाती रहेगी।

हमारे देश के स्त्री पुरुष हर क्षेत्र में अंग्रेजों की नकल करते नजर आते हैं। अंग्रेज गृहणियां घर के सब काम काज ठीक ठीक करना जानती हैं तो हमारे देश के दोनों वर्ग स्त्री और पुरुष इधर कदम क्यों नहीं बढाते। हां रूढिवादी कह सकते हैं कि अमुक मनुष्य अपनी स्त्री का गुलाम है। क्योंकि जब वह कोई भी नई चीज देखते हैं तो वह आंख मीचकर और गला फाड़ कर विरोध करते हैं। करने दीजिये आप कार्य करने से डरिये नहीं जैसा कि किसी कवि ने कहा है जिसका भावार्थ यह होता है "अपने रास्ते पर बढे चलो और लोगों को चर्चा करने दो।"

हां, यह बात हो सकती है कि इस कार्य के द्वारा स्त्री के कार्य बढ सकते हैं। उसे सारी आमदनी व खर्च के बाबत ज्ञात होना ही है। उसकी भी तो आत्मा व व्यक्तित्व है, उसे भी तो अपने खर्च के लिये कुछ पैसे चाहिए और उसमें से वह उचित समझती है वह ले सकती है और लेना भी चाहिए।

इस तरह से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि आदमी जो कमाता है वह अपनी जरूरत के माफिक पैसे लेकर स्त्री को सौंप दे। उसका हिसाब व जमा खर्च स्त्री ही रक्खा करे। इसके बारे में गांधीजी ने अपनी पुस्तक "स्त्रियों की समस्या" में एक स्थान पर लिखा है कि नियमतः मैं स्त्री के लिए पति से स्वतन्त्र आजीविका की कल्पना नहीं कर सकता। बच्चे का पालन पोषण और गृहस्थी की देखभाल उसकी सारी शक्ति के व्यय के लिए काफी है। समाज में उस पर गृहस्थी के खर्च का प्रबन्ध करने के अतिरिक्त भार नहीं पड़ना चाहिये। पुरुष को भी गृहस्थी के खर्च का प्रबन्ध करना चाहिए इस प्रकार दोनों एक दूसरे के श्रम की पूर्ति करेंगे। ऊपर के शब्दों से यह चीज साफ हो जाती है कि गृह प्रबन्ध स्त्रियां ही कर सकती हैं और इसके अन्तर्गत हिसाब वगैरा भी आ जाता है।

★

पीड़ित स्त्रियां कसीदा काढ़ना सीख रही हैं।

फ्रांसीसी भारत में भारतविरोधी विषैला प्रचार

भारतीय सरकार के विदेश विभाग के उपमन्त्री डा० बालकृष्ण केसकर की हाल ही में हुई पाण्डिचेरी तथा कराइकल की यात्रा के पश्चात् फ्रांसीसी भारत मे तेजी से भारत विरोधी प्रचार की बाढ़ आ गई है। फ्रांसीसी भारत के अधिकारी उन व्यक्तियों और संगठनों का पता लगाने का जी जान से प्रयत्न कर रहे हैं, जो डा० केसकर से मिले थे और जिन्होंने उन्हें एक स्तुति पत्र दिया था।

फ्रांस के अनुकूल समाचार पत्र गत दो सप्ताह से डा० केसकर व भारत सरकार के विरुद्ध विषैला प्रचार कर रहे हैं। अनेक प्रकार के आक्षेपों से भरे हुए पर्चे और पुस्तिकायें बहुत बड़ी संख्या में बांटे जा रहे है।

अधिकारीगण पुलिस के गुप्तचर विभाग के कर्मचारियों पर दबाव डाल रहे हैं कि वे उन व्यक्तियों का पता लगावें जो डा० केसकर से उनकी यात्रा के समय मिले थे और किसी प्रकार उन्हें दिये गये स्तुतिपत्र की प्रतियां प्राप्त करें। जो अधिकारी इस कार्य में रुचि प्रदर्शित नहीं करते उन्हें दण्डित किया जा रहा है।

श्री दादाला रामनैया, इंस्पेक्टर पुलिस को अपनी नौकरी से त्यागपत्र देने के लिए बाध्य किया गया है।

श्री रामनैया ने जो यांत्र में स्थित के नाम नामक एक फ्रांसीसी बस्ती के एक निवासी हैं, फ्रांसीसी भारत की पुलिस के गुप्तचर विभाग में एक अधिकारी के पद से १९३१ में कार्यारम्भ किया था। श्री रामनैया ने एक वक्तव्य में बताया है कि उन्होने त्यागपत्र अपने उच्च अधिकारियों के "कठोर बर्ताव" के फलस्वरूप दिया है

एक वक्तव्य में त्यागपत्र देने की परिस्थितियों का उल्लेख करते हुये श्री रामनैया ने बताया है कि फ्रांसीसी अधिकारी तभी से क्रोधित थे जब उन्होंने मद्रास के पत्रों में डा० केसकर का एक वक्तव्य देखा जिसमें उन्होंने दक्षिणी बस्तियों में फ्रांसीसी नीति की आलोचना की थी। उन्होंने विलीनीकरण के पक्षपाती दल से सम्बन्धित व्यक्तियों के विषय मे सूचना प्राप्त करने की चेष्टा की, जिन्होंने मौखिक अथवा लिखित रूप से डा० केसकर को "फ्रांसीसी बस्तियों में अरक्षित जीवन" की परिस्थितियां सूचित की थीं।

"संभवतः उन्हे अभी तक कोई ठीक सूचना नहीं मिली है" — उसने बताया।

श्री रामनैया ने कहा कि एक सप्ताह पीछे लेफ्टिनेंट डेमिस्ट्रेट, पुलिस विभाग उपप्रमुख ने उन्हें आदेश दिया कि वे डा० केसकर की पांडिचेरी के विलय-दल से संबन्धित कार्यवाहियों के विषय में पता लगायें।

आठ सितम्बर को उन्हें फ्रांसीसी भारत के कमिश्नर, श्री मेनार्ड ने बुलाया और किसी भी मूल्य पर कितना भी रुपया व्यय करके उन्हें डा० केसकर को विलय-वादियों द्वारा दिये गये स्तुति-पत्र की कापी ला कर देने के लिये कहा।

श्री रामनैया ने इस विषय में कुछ भी करने में अपनी अपनी असमर्थता प्रकटता की, क्योंकि उन्हें इस प्रकार के किसी भी पत्र का पता नहीं था।

उसी रात्रि को श्री डेजिस्ट्रेट ने ने इन्हे बुलाया और श्री सेलोन नामक एक वकील द्वारा डा० केसकर को दिये गये स्तुति पत्र की एक कापी उन्हें लाकर देने का आदेश किया। श्री रामनैया ने उत्तर दिया कि उन्हें इस प्रकार के किसी भी पत्र का पता नहीं और यदि यह भी मान लिया जाय कि इस प्रकार का कोई पत्र था, तो भी वह उनका आदेश पालन कर पाने में असमर्थ हैं।

श्री रामनैया ने कहा कि ११ सितम्बर को उन्हे श्री डेजिस्ट्रेट के कार्यालय में बुलाया गया जहां पांडिचेरी के पुलिस के प्रमुख अधिकारी केप्टेन बोहार्ड ने उनकी ओर संकेत करते हुए कहा — "मुझे बहुत दिन से पता था कि तुम हमारे शत्रुओं, विशेषकर एडवोकेट सेलोन के साथ मिले हुए हो। तुम उन्हे धोखा देना नहीं चाहते, हमें देना चाहते हो। मैं तुम्हारा गला घोंट दूंगा।" श्री रामनैया ने इसका प्रबल रूप से प्रतिवाद किया।

डे० डेजिस्ट्रेट के आदेश तथा केप्टेन बोहार्ड के शब्दों के विरुद्ध प्रतिवाद करने के लिए और यह देख कर कि वह ऐसे अधिकारियों के नीचे कार्य नहीं कर सकता, श्री रामनैया ने बताया कि उसने नौकरी से पृथक किये जाने के आदेश के पूर्व ही उचित मार्ग से अपना त्यागपत्र भेज दिया।

श्री रामनैया ने कहा है — "आ[illegible] होते हुये भी मैं किसी भी क्षण अपनी नौकरी से पृथक किये जाने के आदेश की आशा कर रहा हूं।"

(पृष्ठ ८ का शेष)

कोई भी कठोर पग उठाना पाकिस्तान को असंभव होगा। दूसरे इस ओर से जाने वाला प्रत्येक मुसलमान न केवल पाकिस्तान पर एक बोझा बनता जायगा वरन भारत विरोधी उसकी भावी योजनाओं पर भी पानी फेरता जायगा। इस दृष्टि से आज की स्थिति में पाकिस्तान पर जनसंख्या के परिवर्तन के लिए जोर देना भारत की एक महान राजनीतिक विजय और अनेक समस्याओं की जड़ पर कुठाराघात होगा जिनमें शरणार्थी समस्या भी एक है। और यदि पाकिस्तान इसके लिए तत्पर न हुआ तो भी वह इतना अवश्य समझ जायगा कि भविष्य में उसकी सीमा में रहने वाले हिन्दुओं के जीवन से खिलवाड़ करना उसके लिए एक गम्भीर समस्या की सृष्टि कर सकता है और इस प्रकार हम इस समस्या के सुलझाव के पहिले कदम में सफल होवेंगे।

दुमदार दोहे

कम्युनिस्ट हारन लगे, दक्खिन कोरिया मांहि।
महा समर्थक उन्हीं के, बोलो अब का आंहि॥
'दादा' हू मौन हैं।

सहज खतम ना होयगी, कस्मई की हड़ताल।
ताल ठोंक 'अशोक' हू हैं-हैं कर बेहाल॥
ताल ठोकें बहुत।

कार्य समिति निर्माण में, श्री टंडन जी व्यस्त।
रचनात्मक प्रोग्राम को, उनके पंथ प्रशस्त॥
स्वयं शुरु कर दियो।

वर अचक दल को भयो, लखनऊ नगर प्रकोप।
तनिक न रक्षा करि सकी, मगर 'पंत' की तोप॥
'होम' अब कौन की।

यू० एन० ओ० में गिर गया, भारत का प्रस्ताव॥
'लाल चीन' हू अगड़ अब, मिलें न काहू भाव।
'ब्यांग' सूखे रमी।

बात बात पर लेहना, गांधी जी का नाम।
नेहरू को प्रतिबिम्ब लुखि, एकदम भयो गुलाम॥
'कुटमइये' का करें।

'गुम्नाम'

साम्यवाद स्वयं ही समाप्त किया जा रहा है

★ फ्रैंसिस वाटसन

विख्यात आल्डस हक्सले की "एण्ड्स ऐण्ड मीन्स" नामकी पुस्तक, जो १९३७ में प्रकाशित हुई थी, मैंने उस समय पढ़ी थी। आज मैं फिर उसके पन्ने पलट रहा हूं, उस पर पुनर्विचार कर रहा हूं। मैं यह स्वीकार करता हूं कि हमारा यह मान लेना कि आज वही शक्तियां फिर सक्रिय हैं जिनके कारण हक्सले की राय में, विश्वयुद्ध अनिवार्य हो गया था। तथा यह समझना कि संयुक्तराष्ट्र संघ में वही त्रुटियां हैं जो लुत लीग आफ नेशन्स में हक्सले तथा अन्य लोग देखा करते थे सचमुच चिन्ता और निराशा को निमन्त्रण देने के समान है।

पर मैं नहीं समझता कि ऐसा दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। आदर्श समाज अभी तक एक दूर का स्वप्न हो सकता है किन्तु इस आदर्श से थोड़ा बहुत पास पहुंचने तक संसार को एक सूत्र में बांधे रखना असम्भव बात नहीं मालूम पड़ती। प्रत्येक दृष्टि से संयुक्त राष्ट्र संघ लीग आफ नेशन्स से श्रेष्ठ है। इसके अतिरिक्त एक शक्तिशाली क्षेत्र के अतिरिक्त (कौन जाने वहां भी परिवर्तन हो!) अन्यत्र सब जगह अन्तर्राष्ट्री सहयोग की व्यवस्था को कार्यान्वित करने की प्रवृत्ति पहले से अधिक है।

संसार ने अपनी यातना से कई सबक सीखे हैं। कुछ नई बातें भी पैदा हो गई हैं, महत्वपूर्ण बातें। एक है अमेरिका का नेतृत्व। दूसरी नई बात है नई आजादी प्राप्त देशों का आविर्भाव। विशेषतया एशिया में। तीसरी है पश्चिमी योरोप के राष्ट्रों में सन्निकटतर सहयोग का आन्दोलन। स्मरण रहे कि पश्चिमी योरोप के देशों की पारस्परिक प्रतिद्वन्दिता और उनके भय लीग आफ नेशन्स की कमजोरियों के मुख्य कारण हुआ करते थे।

और चौथी बात है वह जिसमें प्रायः अपने युग की सबी क्रान्ति चाहता हूं। अर्थात् इस विचार का व्यावहारिक विकास कि, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर, सम्पन्न राष्ट्रों को निर्धन राष्ट्रों के प्रति कुछ कर्तव्य निबाहने चाहिए। सम्पदा का समुचित वितरण और संपन्नतया विकसित देशों की पूंजी की तथा टैक्निकल सहायता। ये संसार व्यापी युद्ध से सुरक्षा के लिए अत्यन्त आवश्यक तो है ही, पर ये ऐसे मानवीय कर्तव्य भी हैं जिनमें सभी अपनी क्षमता के अनुसार योगदान देना चाहिए। आपको मालूम होगा कि आर्थिक सहायता रूस को भी मिल सकती थी, पर उसने ऐसा मंजूर नहीं किया। यह सारी परिस्थिति उस अवस्था से बहुत भिन्न है जिसका मुख्य गुण धनी और दरिद्र का अनिवार्य संघर्ष हुआ करता था।

प्रगति पर प्रतिबन्ध

किन्तु संसार खतरे से खाली नहीं है। यह हम खूब जानते हैं। अभाव, युद्ध और अत्याचार अभी तक हमारी प्रगति के पथ पर रुकावटें डाल रहे हैं। हक्सले ने इस अनुमान को लेकर अपनी पुस्तक आरम्भ की थी कि मानवीय प्रयत्नों के आदर्श लक्ष्य के विषय में सामान्य एकमत उस समय था और सचमुच तीन शताब्दियों से रहा है। अर्थात्, "स्वतंत्रता, शांति, न्याय और भातृभाव," का युग। किन्तु इस लक्ष्य की प्राप्ति का पथ विघ्न और बाधाओं से भरा हुआ है, समझौते के अभाव के रूप में कठोर संघर्षों के रूप में, और हठधर्मी तथा अन्धविश्वास के रूप में। हक्सले को मालूम था कि वह स्वयं इस पहेली का कोई अन्तिम उत्तर नहीं दे सकता था। उसने प्रयत्न सिर्फ इस बात का किया था कि व्यक्तिगत और सामाजिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय आचरणों की समस्याओं में किसी न किसी प्रकार पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित किया जाए।

हक्सले को विश्वास था कि साम्यवाद में सिद्धान्तों में आदर्शवाद या व्यवहारिक विचार का अंश चाहे जितना भी हो, इन लक्ष्यों की प्राप्ति के साम्यवादी साधन अच्छे परिणामों की आशा पर गम्भीर आघात करते हैं। हक्सले ने पूछा था कि क्या श्रेष्ठतर नर नारी से निर्मित श्रेष्ठतर समाज पुलिस की जासूसी, सैनिक दासता, अधिकार के केन्द्रीकरण, एक विस्तृत राजनैतिक पंचायती के निर्माण, मुक्त वाद-विवाद की मृत्यु और अधिनायकतन्त्र की शिक्षा प्रणाली—इन सब विधियों से स्थापित हो सकता है? कदापि नहीं।

युद्ध के बाद

हक्सले ने यह पुस्तक युद्ध के पहले लिखी थी। उसने यह अनुभव किया था कि युद्ध और आक्रमण अथवा बचाव की तैयारी अधिकार के अधिकाधिक केन्द्रीकरण और मनुष्य की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध के कारण थे। यद्यपि मार्क्स ने राज्य के क्षीण होने की भविष्यवाणी की थी किन्तु सोवियट राज्य तो कम शक्तिशाली बनने के बजाय निरन्तर अब से अधिक शक्तिशाली बनता जा रहा था। इसका उत्तर सोवियट के समर्थकों ने साधारण तौर पर यह कह कर दिया है कि केन्द्रीय तानाशाही, सामरिकवाद तथा इससे सम्बन्धित अन्य चीजें स्थायी गुण नहीं, किन्तु क्षणिक आवश्यकताएं हैं। नये-नये अशक्त सामाजिक प्रबन्ध को बाहरी आक्रमण से बचाने के लिए।

जब हिटलर ने रूस पर आक्रमण किया था तब बहुत से लोगों ने सोचा था कि इन सोवियट समर्थकों की बात ठीक थी। सोवियट यूनियन नष्ट नहीं हुआ किन्तु जीवित रह सका। युद्धकाल में उसे उसके असाम्यवादी साथियों ने निर्वाचनात्मक सहायता दी थी। निश्चय ही यही समय था जब वह मित्रता शांतिकाल में भी प्रवेश कर जाती।

युद्ध की समाप्ति पर रूस ने सारे संसार में अपने प्रति गहरी सद्भावना कर ली थी। फलतः वह अपनी सामाजिक पद्धति को शांतिपूर्वक पक्की और ठोस बनाने का कार्य कर सकता था। उसे अपना पुनर्निर्माण करने के लिये भौतिक सहायता तो मिली ही थी। इसके अतिरिक्त युद्धकालीन साथी राष्ट्रों में रूस एक ऐसा देश था, जिसे सुरक्षा की भावना प्राप्त करने के लिये अपनी प्रादेशिक सीमायें निर्विघ्न बढ़ाने का अवसर मिला था। पृथकता, सैनिक तानाशाही, कठोर केन्द्रीकरण और मस्तिष्क और बुद्धि पर नियंत्रण को औचित्य प्रदान करने वाली बातें अब नहीं रही। संयुक्त राष्ट्र-संघ ने में सोवियट रूस का स्वागत किया गया था और 'पांच' महान्' राष्ट्रों में एक गिना जाकर उसे अपने पद के अनुरूप आवश्यक सुविधाएं प्राप्त हुई थी। सोवियट रूसने वह संचित सद्भावना खोदी है और मैं समझता हूं कि भावी इतिहासकार इस बात को युद्धोत्तरकाल की अत्यन्त शोचनीय और विचित्र घटनाओं में गिनेगा। यह सब तो हक्सले की इस धारणा को पुष्टि करता है कि यदि किसी लक्ष्य की प्राप्ति के साधन नीचे हैं तो उसका नतीजा अवश्य सामने आता है, केन्द्रीकरण और तानाशाही समाप्त होने वाली चीजें नहीं हैं।

साधन और लक्ष्य

किन्तु हक्सले की पुस्तक पर पुनर्विचार करते हुए मुझे ऐसा मालूम होता है कि हमें हताश होना नहीं चाहिये। हक्सले ने यह अनुभव किया था कि सारे नए वाद— साम्यवाद, फासिस्टवाद, नाजीवाद और राष्ट्रवाद— बहुत समानता रखते हैं। आज के संसार में फासिस्टवाद और नाजीवाद का नाश किया जा चुका है और उन्हें फिर से जीवित होने का अवसर नहीं दिया जाना चाहिये राष्ट्रवाद को हम एक नयी रोशनी के प्रकाश में देख रहे हैं। राष्ट्रवाद के सबसे बड़े अवगुणों (फाशिस्टवाद और नाजीवाद पर नियंत्रण रखा जा सकता है और अन्तर्राष्ट्रवाद के हित में कुछेक राष्ट्रीय अधिकारों का ऐच्छिक परित्याग राष्ट्रवाद के अच्छे गुणों को प्रकट होने का अवसर प्रदान करता है— सहयोग और प्रगति में हाथ बटाने का अवसर।

केवल साम्यवाद पुराने अवांछनीय तरीकों के प्रति अपनी पसन्द दिखा रहा है। साम्यवाद को स्वीकृत सीमाओं के अन्दर रखना ताकि साधन और लक्ष्य का सिद्धान्त और उसकी क्रिया अपने स्वाभाविक परिणाम प्रकट करें— यही स्वतन्त्र संसार का कर्तव्य है।

———

वीर अर्जुन साप्ताहिक का मूल्य

वार्षिक	१२)
अर्धवार्षिक	६॥)
एक प्रति	चार आना

प्रसिद्ध चित्रकार रविवर्मा

★ श्री विजयशंकर व्यास

किसी राष्ट्र का महत्व उसके राजनीतिज्ञ और सैनिकों पर नहीं उसके कला मन्दिरों पर अवलंबित है। जिस राष्ट्र मे कला को यथेष्ट प्रोत्साहन नहीं दिया जाता, वह राष्ट्र सभ्य नहीं कहला सकता। सैनिकों, राजनीतिज्ञों और वक्ताओं से भी अधिक कलाकार अपने देश को प्रसिद्ध करते हैं। भारत के यशस्वी कलाकार राजा रविवर्मा इसके एक उदाहरण हैं। उन्होंने अपनी उत्कृष्ट चित्रकला से विदेशों में भी भारत का नाम अमर कर दिया।

राजा रविवर्मा को आधुनिकतम साधनों से सुसज्जित किसी विद्यालय में सुयोग्य शिक्षकों के निरीक्षण में शिक्षा नहीं मिली थी, वरन् उन्होंने स्वयं अपने परिश्रम से कला को प्राप्त किया था।

रविवर्मा की सफलता का कुछ श्रेय उनके चाचा राजा राजवर्मा को भी है। राजा राजवर्मा स्वयं एक प्रसिद्ध चित्रकार थे। रविवर्मा को बचपन में संस्कृत पढ़ाना आरंभ किया गया, लेकिन संस्कृत की लंबे समासों से युक्त भाषा, जटिल व्याकरण और नीरस सिद्धान्त उनके उपयुक्त न थे। बचपन से ही उनकी रुचि चित्र कला की ओर थी। वे संस्कृत अध्यापिकाओं में आये हुए देवताओं के चित्र कोयले से भीतों पर खींचा करते थे। उस समय की एक घटना का उल्लेख अप्रासंगिक नहीं होगा।

रविवर्मा के चाचा राजवर्मा एक बार अपने एक चित्र को अधूरा छोड़ कर कार्यवशात् बाहर चले गये। रविवर्मा ने उस चित्र में चित्रित एक वृक्ष पर एक तोते का चित्र बना दिया। राजा राजवर्मा को वापिस आने पर पता चला, लेकिन उन्होंने डांट फटकार कर बाल चित्रकार का उत्साह भंग करना उचित नहीं समझा। उन्होंने तोते सहित ही चित्र को पूरा कर दिया और रविवर्मा को उत्साहित भी किया।

चौदह वर्ष की उम्र में ही राजा रविवर्मा ने चित्रकला में यथेष्ट प्रवेश कर लिया था। इसी अवस्था में वे अपने चाचा के साथ ट्रावनकोर गये। राजा राजवर्मा ने ट्रावनकोर नरेश के सामने अपने सुयोग्य भतीजे की चित्रकारी की प्रशंसा की। ट्रावनकोर महाराज आपसे बहुत प्रसन्न हुए और एक रंग का बक्स इनाम में दिया। इस बक्स से उन्हें बहुत लाभ हुआ। अब वे तरह तरह के रंग बनाने का प्रयोग करने लगे। वे स्वयं चित्रकला की शिक्षा लेने लगे।

एक बार ट्रावनकोर नरेश ने अपने व अपने परिवार के तैल चित्र बनवाने के लिए योरोप के प्रसिद्ध चित्रकार श्री थ्योडोर जैन सैन को आमंत्रित किया। उस समय भारत मे तैल चित्र एक नई वस्तु थी। राजा रविवर्मा ने भी उन्हें जब देखा तो उनका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। उन्होंने जैनसैन से इस कार्य को सिखलाने की प्रार्थना की। पर उसने इन्कार कर दिया। लेकिन राजा रविवर्मा को तो कला सीखनी थी, इसलिए वे हताश नहीं हुए। उनके बहुत आरज़ू मिन्नत करने पर उस चित्रकार ने जिस समय वह कार्य करता था, उस समय देखने भर की आज्ञा दे दी। अद्भुत प्रतिभा सम्पन्न रविवर्मा ने केवल देखने से ही इस कला को सीख लिया।

लेकिन उन्हें बहुत जल्दी सफलता नहीं मिली। लगातार छः साल तक के कठोर परिश्रम के पश्चात् कहीं जाकर उनका हाथ मंजा। लेकिन इस कठोर अध्ययन के समय उन्हें कोई उत्साहित करने वाला नहीं था। उसी समय सौभाग्यवश मद्रास शिल्पशाला के अधिष्ठाता मिस्टर चैसटम ट्रावनकोर आये। उन्होंने रविवर्मा की चित्रशाला को देखा और बहुत ही प्रभावित हुए। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि रविवर्मा ने स्वयं अभ्यास से बिना किसी शिक्षक के, कला सीखी है, तब वे बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्होंने राजा रविवर्मा को मद्रास प्रदर्शिनी के हेतु एक चित्र बनाने को कहा। ट्रावनकोर महाराजा भी उनकी चित्रकला से अपरिचित नहीं थे और उन्हें यथेष्ट आर्थिक सहायता दी। कई महीनों के कठोर परिश्रम के पश्चात् उन्होंने चित्र को तैयार किया। इस चित्र में बालों को चमेली के हार से गूंथती हुई एक नैर महिला प्रदर्शित की गई। इस चित्र की मद्रास प्रदर्शिनी में बहुत ही अधिक प्रशंसा हुई और उन्हें एक स्वर्णपदक मिला। इस सफलता ने उनके भविष्य का मार्ग खोल दिया और उनका उत्साह द्विगुणित हो गया।

इसके पश्चात् उन्होंने एक तामिल महिला का चित्र बनाया। यह चित्र भी उत्कृष्ट था और उन्हें इस चित्र पर भी एक पदक मिला। इसके पश्चात् उन्होंने 'शकुन्तला पत्र-लेखन' नामक चित्र बनाया, जो कुछ लोगों की राय में उनका सर्वश्रेष्ठ चित्र है। इस चित्र ने उन्हें सारे भारत में प्रसिद्ध कर दिया। मद्रास के गवर्नर ने अपने लिए इस चित्र को खरीद लिया। इसके बाद उन्होंने पौराणिक चित्रों का उत्कीर्तन प्रारम्भ किया। उन्होंने अपने चित्रों के बल से जनसाधारण की आँखों के सामने पुराणों की कहानियों को सजीव कर दिया। अब उनका नाम विश्व के श्रेष्ठ चित्रकारों में लिया जाने लगा।

एक असाधारण कलाकार होने के कारण उनके भक्तों की भी कमी नहीं थी। बड़े-बड़े राजा महाराजा भी उनका सम्मान करने लगे। उनके एक चित्र को सर० टी० माधवराव ने बड़ौदा नरेश को भेंट किया। वे उस चित्र को देख कर बहुत ही प्रभावित हुए और उन्होंने अपने राज्याभिषेक के अवसर पर उन्हें विशेष मान के साथ आमंत्रित किया। इसी प्रकार उनके चित्रों ने मैसूर महाराजा को भी उनका परिचित बना लिया।

वे अपने समय के भारत के सर्वश्रेष्ठ चित्रकार तो थे ही, लेकिन विश्व के सर्वश्रेष्ठ चित्रकारों में भी उनका विशिष्ट स्थान है। उनके चित्र हमारी राष्ट्रीय थाती हैं। लेकिन उनकी सफलता आकस्मिक सफलता नहीं थी। उसके पीछे बरसों के कठिन परिश्रम एकाग्रता और लगन का इतिहास है। उनका ध्येय कला कला के लिए था। वे स्वयं को अपनी कृतियों में भुला देना चाहते थे। उनके चित्रों में उनका व्यक्तित्व है, उनकी विशेषता है। एक बार एक व्यक्ति के पूछने पर कि, 'आप रंगों को कैसे मिलाते हैं,' उन्होंने कहा था, 'मस्तिष्क से', अर्थात् किसी खास रीति से, नहीं बल्कि अपने हृदय की प्रेरणा से। यही उनकी सफलता का मूल कारण था।

आलोचना

नव-प्रकाशन

प्रकाश प्रभाकर गाइड — प्रकाशक—कलामन्दिर, नई सड़क, दिल्ली। मूल्य ७॥)

प्रस्तुत पुस्तक उन विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है, जो प्रभाकर के परीक्षार्थी हैं। इस पुस्तक मे सातों परचों के मुख्य प्रश्न और उनके उत्तर, कठिन स्थल, अनेक लेखों के सारांश, नाटकों व उपन्यासों के विशेष चरित्र, पुस्तकों की आलोचना तथा हिन्दी साहित्य की प्रगति और विशेष कर साहित्यसमस्याओं पर संक्षेप से विचार आदि दिये गये हैं। परीक्षाओं से पूर्व विद्यार्थी के लिए इस पुस्तक के कुछ पृष्ठों पर दृष्टि डालने से समस्त पुस्तक उपस्थित हो जाती है। प्रकाशक ने अलग अलग परचे विविध अधिकारी लेखकों द्वारा लिखाये हैं। छटे परचे में आज के कोरिया-युद्ध तक का वर्णन आ गया है। इस कारण विद्यार्थी को नवीनतम अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय समस्याओं से भी जानकारी हो सकती है। आशा है, परीक्षार्थी इससे लाभ उठायेंगे।

प्रबन्ध पूर्णिमा — ले० हंसराज अग्रवाल एम० ए०। प्रकाशक वही। पृष्ठ संख्या ३१२। मूल्य ३॥) छपाई अच्छी, जिल्द अच्छी।

प्रस्तुत पुस्तक भी प्रभाकर के परीक्षार्थियों के लिए लिखी गई है, यद्यपि इसका विषयचयन और लेखों का स्तर तथा देखते हुए यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि साहित्यरत्न, बी० ए० (आनर्स) हिन्दी तथा अन्य उच्च हिन्दी परीक्षार्थी भी इससे लाभ उठा सकते हैं। साहित्यिक राजनैतिक, नैतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक, आर्थिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर ८० निबन्ध दिये गये हैं। सूर, मीरा, तुलसी आदि प्राचीन साहित्यकारों, प्रेमचन्द, प्रसाद आदि नवीन कलाकारों, छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद आदि विविध साहित्यिक प्रवृत्तियों की आलोचना, उपन्यास नाटक साहित्य आदि की विवेचना, नवीन संविधान, शासनप्रणालियां, संसार के मुख्य आन्दोलन, कोरिया युद्ध, संयुक्तराष्ट्र संघ, भारत पाकिस्तान समझौता, काश्मीर समस्या, आर्थिक योजना, महंगाई और मुद्राप्रसार, शरणार्थियों का पुनर्वास, भारत पाक समझौता, आदि राजनैतिक व आर्थिक विषयों की जानकारी सब कुछ इस पुस्तक मे मिल जायगी। विज्ञान-संबंधी भी कुछ लेख हैं। प्रायः लेखों का चुनाव करते समय परीक्षा का दृष्टिकोण रखा गया है। आज कल इस सम्बन्ध में छोटी मोटी अच्छी निबन्ध की पुस्तकें इस दृष्टि से विद्यमान हैं, उनमें से एक इसको भी स्थान दिया जा सकता है। इसके कुछ लेख ज्ञानवर्धन के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं। अभ्यास के लिए दिए गये प्रबन्धों की रूपरेखा ने पुस्तक की उपयोगिता बढ़ा दी है।

नया आलोक : नई छाया— (कहानी संग्रह) लेखक—श्री विराज। प्राप्ति-स्थान साहित्य मन्दिर, कलकत्ता। पृष्ठ संख्या १२०। मूल्य दो रुपये। छपाई सफाई मामूली।

इस पुस्तक में रामायण, महाभारत तथा मध्यकालीन इतिहास की अनेक मर्मस्पर्शी घटनाओं को नये आलोक में चित्रित किया गया है। पुराने साहित्य में जो वस्तु अविश्वसनीय जान पड़ती है, इस नये आलोक में वही चीज विश्वसनीय मालूम होने लगती है। जिन मर्मस्थलों को पुराने साहित्यकार अछूता छोड़ गये हैं, उन्हें श्री विराज ने सजीव रूपेण चित्रित कर दिया है। यशोदा की अपनी कोई कन्या भी थी, लक्ष्मण को वन में कभी उर्मिला की याद भी सताती थी, शूर्पणखा राम की लघुभ्राता

[शेष पृष्ठ २६ पर]

देश-विदेश का घटनाचक्र

कोरिया युद्ध

कोरिया के दक्षिणी भाग में चल रहे युद्ध की समाप्ति दिखाई देने लगी है। सियोल पर राष्ट्र संघीय सेनाओं का अधिकार हो जाने ने इस निर्णय पर मुहर लग गई दीखती है। इसके अतिरिक्त चोसान के निकट दक्षिण से बढ़ने वाली सेनाओं के इंचोन पर उतर कर पूर्व की ओर बढ़ने वाली सेनाओं से मिल जाने के कारण कोरिया के दक्षिण-पश्चिम में घिरी हुई साम्यवादी सेनाओं के लिए बच निकलने का कोई मार्ग नहीं रहा। समाचार मिला है कि इस घेरे में तीन साम्यवादी डिवीजन घिर गये हैं। भागते हुए साम्यवादियों के साथ साथ राष्ट्र संघीय सेनायें बढ़ती जा रही हैं।

इसका सीधा अर्थ यह है कि दक्षिणी कोरिया पर स्थापित किया हुआ साम्यवादी अधिकार समाप्त होने को आ गया है। पुराने निर्णय के अनुसार राष्ट्र-संघीय सेनायें ३८ वीं रेखा तक जो बढ़ गई हैं। किन्तु उससे भी आगे बढ़कर उत्तरी कोरिया पर भी अधिकार करने का प्रयत्न करेंगी या नहीं, यह अत्यन्त महत्व का प्रश्न सामने है। उत्तरी कोरिया पर अधिकार करने का अर्थ होता है राष्ट्र संघ के झंडे के नीचे अमरीकी सेनाओं का मंचूरिया की सीमा पर पहुंच जाना।

आगे बढ़ने और न बढ़ने—इन दोनों ही पक्षों के सम्बन्ध में प्रभावशाली तर्क उपस्थित किये जा सकते हैं। ब्रिटेन ने तो आगे बढ़ने के पक्ष में अपने मत की घोषणा भी कर दी है। किन्तु विचारणीय विषय यही है कि उत्तरी कोरिया में बढ़ने से अमरीकी सेनायें साम्यवादी चीन तथा रूस के बहुत निकट पहुंच जाती हैं। वहां से वे रूस के प्रसिद्ध बन्दरगाह व्लाडीवोस्टक के लिए भी एक आतंक बन सकती हैं। इस स्थिति में अमरीकी सेनाओं का रहना रूस कहां तक सहन करेगा। साथ ही उत्तरी कोरिया का युद्ध दक्षिणी कोरिया से भी अधिक कठिन है।

किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि मेक आर्थर उत्तरी कोरिया से आत्म-समर्पण की मांग करेंगे। राष्ट्र संघ की ऐसेम्बली में सारे कोरिया में ही आम चुनाव किये जाने की चर्चा जोरों पर है। उत्तरी कोरिया के द्वारा भी युद्ध समाप्त करने की चर्चा आरम्भ किये जाने के प्रयत्नों के समाचार मिल रहे हैं। जो भी हो, यह स्पष्ट है कि कोरिया-युद्ध को विश्व-युद्ध में बदल देने का जोखिम उठाने के लिए कोई तैयार नहीं है।

कांग्रेस कार्यकारिणी

नयी कांग्रेस कार्यकारिणी के निर्माण के प्रयत्न चल रहे हैं। श्री टंडन दो दिन तक राजधानी में रहकर अपने अगले कार्यक्रम पर चले गये। अभी तक उनके प्रयत्नों को कोई सफलता नहीं मिल पायी। यही नहीं, जाने से पूर्व तीन घंटे तक सरदार पटेल की कोठी पर प्रमुख कांग्रेस नेताओं के मध्य हुई चर्चा में किसी भी निर्णय पर न पहुंच पाने की स्थिति रहने से यह भी अनुमान लगाया जाता है कि दोनों पक्ष अपनी अपनी बात पर दृढ़ हैं।

गुत्थी यह है कि पं० नेहरू कार्यकारिणी में आना नहीं चाहते। उन्हें भय है कि कांग्रेस का अध्यक्ष एक ऐसे व्यक्ति के होने पर, जो उनकी मुट्ठी में न हो, उनका कार्यकारिणी में रहना उनकी गतिविधि अथवा कार्यवाहियों पर एक बन्धन बन सकता है। ऐसी स्थिति में वे कार्यकारिणी में आने को तैयार हैं जब टंडन जी उनके द्वारा सुझाये हुये व्यक्तियों को लेकर ही कार्यकारिणी बनावें। इसका सीधा अर्थ यही होता है कि टंडन जी अध्यक्ष के रूप में अपने अधिकारों का परित्याग कर दें और पं० नेहरू की इच्छाओं के अनुकूल चलें। टंडन जी, डा० पट्टाभि की स्थिति देख चुके हैं और वे अधिकार हीन अध्यक्ष बनना नहीं चाहते। आशा है कि अक्तूबर के मध्य तक कार्यकारिणी की घोषणा कर दी जायगी। किन्तु एक बात निश्चित है कि यदि पंडित नेहरू कार्यकारिणी में नहीं आये तो सरदार पटेल, मौलाना आजाद व राजगोपालाचार्य के भी सम्मिलित होने की सम्भावना नहीं है।

जलप्रलय

यह वर्ष हिंदुस्तान के नागरिकों के लिये प्रकृति का पर्याप्त क्रोध लेकर आया है। हाल ही के कुछ दिनों में प्रकृति के भयानक आघातों ने लाखों व्यक्तियों का सर्वस्व नष्ट कर दिया है और सहस्रों के प्राण लिये हैं। लगभग समस्त उत्तर-भारत पर प्रकृति का यह प्रकोप रहा है। काश्मीर में वर्षा और बाढ़ ने अनेकों परिवारों को आश्रयहीन किया। पंजाब में बाढ़ से चारों ओर हाहाकार मच गया। उत्तर प्रदेश तथा बिहार भी बाढ़ के भयंकर प्रकोप के शिकार हुए। आसाम में भूकम्प तथा बाढ़ ने महानाश का दृश्य उपस्थित किया। पश्चिम से पूर्व तक समस्त उत्तर-भारत के विस्तृत भूस्थल पर इस जलप्रलय तथा भूकम्प ने लाखों मकान गिराये, हजारों व्यक्तियों के प्राण लिये, लाखों को बेघरबार किया, रेलगाड़ियां उलटीं, सड़कें टूटीं, यातायात के मार्ग छिन्न-भिन्न हुए और परिणामस्वरूप भुखमरी से मृत्यु संख्या और ऊपर चढ़ी। अनेकों क्षेत्रों में किसी प्रकार की सहायता न पहुंच पाने के कारण अकाल की सी स्थिति उत्पन्न हो गयी। लाखों एकड़ भूमि पर पानी फैल जाने के कारण करोड़ों मन नाज नष्ट हो गया तथा आगामी वर्ष खाद्य सम्बन्धी आत्मनिर्भर हो पाने की हमारी स्थिति में भी सन्देह पड़ गया।

राज्यपालों के वक्तव्य

पश्चिमी बंगाल तथा आसाम के राज्यपाल श्री कैलाशनाथ काटजू व श्री जयरामदास दौलतराम के हाल ही में दिये गये भाषणों का यह अंश अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जो पूर्वी बंगाल में हिन्दुओं की सुरक्षा व नेहरू-लियाकत समझौते की ओर ध्यान खींचता है। दोनों ही राज्यपालों ने स्पष्ट कहा है कि उनके क्षेत्र में समस्या को उन्होंने हल कर लिया है और ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है जिसमें अपनी सुरक्षा के विषय में भरोसा मान कर मुसलमान बड़ी संख्या में लौट कर आ रहे हैं। किन्तु इसी प्रकार की परिस्थिति पूर्वी बंगाल में दिखाई नहीं देती। वास्तव में दोनों सरकारों का यह कर्तव्य है कि वे अपने अपने क्षेत्र में सुरक्षा की परिस्थिति उत्पन्न करें। किन्तु जब कि भारत की ओर दोनों प्रान्तों (बंगाल व आसाम) में यह स्थिति उत्पन्न की जा चुकी है। पाकिस्तान क्षेत्र में इसका अभी तक अभाव है। फलस्वरूप हिन्दुओं का निकल कर आना जारी है। डा० काटजू ने तो अपने भाषण में नामोल्लेख करके केन्द्रीय सरकार का ध्यान इस ओर खींचा है।

इसका सीधा अर्थ यही है कि जिस स्थिति के लिए प्रधानमन्त्री पं० नेहरू बार बार कहा करते हैं कि पाकिस्तान में हिन्दुओं पर अत्याचार होने पर भी यदि भारत में पूर्ण शान्ति बनी रहे तो वे पाकिस्तान पर पूरा दबाव डाल सकते हैं। वह स्थिति आज है। भारत में पूर्ण शांति रहते हुए भी पाक क्षेत्र में हिन्दुओं का असुरक्षित जीवन पं० नेहरू और उनके आदर्शों के लिए एक खुली चुनौती है। दोनों राज्यपालों ने उनका ध्यान इसी तथ्य की ओर खींचा है।

'[illegible]' में रहमान और निगार

गाण्डीव के तीर

बम्बई की अहिंसक साम्यवादी हड़ताल पूर्ण असफल हुई है।

—मुरारजी देसाई

होती हो, क्योंकि हड़तालें आरम्भ कराते बेचारे सोशलिस्ट हैं, और अंचालन शुरू करदेते हैं कम्युनिस्ट।

× × ×

हैदराबाद, जूनागढ और काश्मीर के बाद लीग की पोल खुल चुकी।

—सुहरावर्दी

जिसनी टिपरा, नौआखली और चांदपुर डिवीजन में सुहरावर्दी ने खोलाई थी।

× × ×

समस्त काश्मीर को स्वतन्त्र कराना हमारा ध्येय है। —नजमुद्दीन

मियां गुलाम कहिये गुलाम।

× × ×

सहशिक्षा से मां बनने में रूसी लड़कियों को बड़ी सफलता मिली है।

—सिवडोटर बर्लिन

और बच्चों के सफल सदुपयोग के लिए रूसी सरकार तैयारी भी कर रही है।

× × ×

अरब राष्ट्र इस्लाम से हटते जा रहे हैं। —एक लीगी

सम्भवतः आपकी १४ वीं सदी का प्रभाव अभी से उन पर शुरू हो गया हो।

× × ×

स्पेन ४४ डिवीजन सेना बनाले, यदि हथियार मिल जायें।

—स्पेनिश अखबार

बंट रहे हैं श्रीमान जी हथियार। ट्रूमैन को लिख दीजिये कि हथियार चलाने लायक हमारे पास भी कुछ आदमी हैं।

× × ×

दस अरब वर्षों में पृथ्वी का विनाश होगा। —डा० हूमेलुपेलिकोलस्की

यदि आसाम से विनाश का आरम्भ मान लिया जाय तो अरब-खरब तक तो मामला क्या पहुंचेगा। दस-बीस वर्षों में ही कामतमाम हो लेगा।

× × ×

१२ साल तक की आयु के अविवाहित लड़के-लड़कियां रात का शो बिना अभिभावकों के नहीं देख सकते।

—यू० पी० सरकार

यदि दोनों ही एक दूसरे के अभिभावक बन कर चलें जायें तब तो आपको कोई इतराज नहीं।

× × ×

लखनऊ कौंसिल के बाहर भेड़िया।

—एक शीर्षक

× × ×

जालंधर के कबीलों में शरणार्थी बसाये जायेंगे।

—एक शीर्षक

बसस्या कराची हो तो कबीलों की अपेक्षा जंगल अच्छा रहेगा श्रीमान।

× × ×

सारे देशों में आक्रमण का भारत जैसा ही हाल है।

—श्री मुंशी

और सभी जगह मुंशी जी से ही मंत्री।

× × ×

लाउडस्पीकर से अपना विज्ञापन नहीं कर सकते।

—कानपुर के कलक्टर

सार्वजनिक कार्यकर्ताओं को चाहिये कि जब तक लाउडस्पीकरों पर प्रतिबन्ध नहीं लगता है, गले को ही गर्दभ लाउड स्पीकर बना लें।

× × ×

कैदियों के लिए आदर्श चित्रों और कविताओं की व्यवस्था की जावेगी।

—उत्तर प्रदेश की सरकार

दिल्ली के रामराज्य वाले इस सरकारी समाचार का धार्मिक लाभ उठा सकते हैं।

× × ×

भारतीय युवक और युवतियां रक्षा-सैन्य में भर्ती हों।

—श्री राजेन्द्र बहादुर

रक्षा-सैन्य की बजाय यदि किसी फिल्म कम्पनी के खोलने का विचार हो तो निःशुल्क भर्ती की गारण्टी हमारी।

× × ×

उत्तर प्रदेश की सरकार के पी० डब्लू० डी० के मिस्त्री लौकत ७० रुपये लेकर पाकिस्तान भाग गये।

—एक समाचार

अभी सरकार शायद यह पता लगा रही है कि रुपया आदमी को पाकिस्तान भगा ले जाता है या आदमी रुपये को। इसके बाद कोई प्रतिबन्ध लगाया जायगा।

× × ×

पाकिस्तान के बकरे बाहर नहीं जा सकते।

—लीगी सरकार

शायद इसलिए कि वर्ना का ईद नहीं कर लेगा, भारतवासी ने कुर्बान कोगा।

न सिर है न पैर कबालियों जैसे पैर हैं कुछ पूर्व में कुछ पश्चिम में।

× × ×

जनगणना पर २१ लाख खर्च आवेगा।

—भारत सरकार

मत करवाओ। रहेंगे उतने ही जितने हैं। आंख मीच कर अन्दाज लगा लो। हजार दो हजार इधर या उधर।

× × ×

काश्मीर के मामले में पश्चिमी पाकिस्तान का धैर्य अब टूट चला है।

—अखबार

वही हाल मीर साहब अपना भी है।

× × ×

भारतीय मुसलमानों और पाकिस्तान की रक्षा के लिए जितनी सेना हमारे पास हो उतनी थोड़ी।

—मियां मिरवर

इस खर्च की बजाय तो यदि इस इज्जत को नहीं बुला कर काट लो तो मियां लाभ में रहोगे।

× × ×

कालिज की लड़कियां अपने लिए पति चुन कर माता-पिता का भार हल्का कर देती हैं।

—मद्रास के शिक्षा मंत्री

जी हां, आजकल कालिज शनैः शनैः स्वयंवर स्थल बनते जा रहे हैं। इसलिए यदि वहां गृहस्थ जीवन का कोर्स भी शामिल कर दिया जाय तो कोई हर्ज नहीं।

× × ×

क्या तुम जानते हो ?

● अमेरिका की खानों से ६१,७०,००,००० टन कोयला प्रतिवर्ष निकाला जा सकता है। अमेरिकी उद्योगों में कोयले की अधिकतम मांग ५६,३२,००,००० टन वार्षिक है।

● अमेरिका में १९४९ के प्रारम्भ में ३,८२,०५,००० टेलिफोन थे, जो समूचे संसार का ५८ प्रतिशत हैं। संसार भर का हिसाब लगाया जाय तो प्रति व्यक्तियों के पीछे एक के पास टेलिफोन है, जब कि अकेले अमेरिका में प्रति चार व्यक्तियों पीछे एक व्यक्ति के पास टेलिफोन है।

● अमेरिका में १,८०,००,००० महिला कामकाजी हैं, जिनमें आधे से अधिक विवाहित हैं। १९४० में १,३०,००,००० महिला कामकाजियों में से लगभग ३३ प्रतिशत ही विवाहित थीं।

● अमेरिका में प्रचलित दियासलाइयों की पुस्तकाकार डिब्बियों में उपयोग करने के लिए एक विशेष प्रकार के मसाले वाली पट्टी लगी रहेगी जो पानी में भीगने से न मुलायम होगी और न ही खराब होगी और इस पर रगड़ने से दियासलाई जल जायगी। छः महीने तक १०० फीसदी नमी में रखकर इसकी जांच कर ली गई है।

[पृष्ठ २४ का शेष]

प्रेम करती थी, रावण का सीता के प्रति अनुराग सर्वस्वदाही था, ताजमहल का बनाने वाला शाहजहां नहीं, बल्कि कोई कारीगर था, इत्यादि तथ्य इन कहानियों में मनोहारी रूपमें चित्रित हुए हैं। दशरथ और पितामह की स्मृतियां दो कहानियां सुन्दर बनपड़ी हैं। साहित्य अपने ढंग का अनूठा है।

कहानियां जैसी सुन्दर हैं उनके मुकाबले में छपाई प्रशंसनीय नहीं है। कहीं कहीं प्रूफ की गलतियां भी रह गई हैं। राजकुमार उत्तर और कर्ण की मृत्यु में भावों का वैसा उभार नहीं आ पाया जैसा कि और रचनाओं में है। —कुमार

१९५०-५१ में क्या होने वाला है ?

इस वर्ष आकाश के ग्रह मंडल में जबरदस्त उथल होने से संसार पर गहरा प्रभाव पड़ने वाला है, यदि आप इस अन्धेरी दुनिया में अपनी किस्मत के होने वाले उलट फेर का साफ-साफ उतरा हुआ फोटो वक्त से पहले देखना चाहते हैं तो फौरन पोस्टकार्ड पर किसी दिल पसन्द फूल का नाम लिख कर भेज दें, फिर हम इसमे ज्योतिष के द्वारा आपके बारह मास की तकदीर की तस्वीर, लाभ हानि किस तरह से रोजगार मिलेगा, किस व्यापार में लाभ होगा, नौकरी में तरक्की तबादला-तकलीफी, तन्दुरुस्ती बीमारी देश-परदेश का सफर, स्त्री सन्तान का सुख, किसी से नया मेल जोल, दिलपसन्द सगाई शादी, जमीन में बुजुर्गों की गढ़ी दौलत, लाटरी-सट्टा या किसी नामालूम कारण से सुख और दौलत का मिलना, पोस्टकार्ड की तारीख से लेकर वर्षभर में सही २ पेश आने वाली सब बातों के विस्तार के साथ महावारी वर्षफल बना कर सिर्फ १।) सवा रुपए में वी० पी० द्वारा भेज देंगे। साथ ही बुरे ग्रहों की शान्ति का उपाय भी लिख दिया जाएगा, ठीक न होने पर कीमत वापस। एक बार की आजमायश से आप अपने मित्रों में हमारे नाम की प्रशंसा करेंगे—गारन्टी है, आप जैसा ही एक भद्र दानी पुरुष हजारों रुपया खर्च करके हमारी इस ज्योतिष विद्या का प्रचार कर रहा है! अवश्य लाभ उठाएं।

श्री महावीर स्वामी, ज्योतिष कार्यालय, (V.W.D.) करतारपुर (E. P.)

गुरुकुल

खांसी, जुकाम, दमा व हृदकम्प को दूर करता है!

च्यवनप्राश

हमारी सोल एजेन्सियां

देहली के एजेन्ट—रमेश एण्ड कम्पनी चांदनी चौक, देहली। ग्वालियर—यूनियन मेडिकल हाल डंडीवाला चौकी लश्कर। पूर्वी पंजाब लक्ष्मी मेडीकल हाल, अम्बाला छावनी। अलवर, बीकानेर तथा भरतपुर के एजेन्ट — ए० दास को० होप सर्कस नीयर तेज टाकीज अलवर।

अजीर्ण और पेट दर्द के लिये

पुदीन-हरा

(REGD.)

डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) लि०
कलकत्ता

मधुमेह

[डायबटीज] शकरी मूत्र जड़ से दूर। चाहे जैसी ही भयानक अथवा असाध्य क्यों न हो पेशाब में शक्कर जाती हो प्यास अति लगती हो, शरीर में फोड़े, खाज, कारबंकल इत्यादि निकल आये हों, पेशाब बार-बार आता हो तो मधु-रानी सेवन करें। पहले रोज ही शक्कर बन्द हो जायगी और १० दिन में यह भयानक रोग जड़ से चला जायगा। दाम ११।) डाक खर्च पृथक। हिमालय कैमिकल फार्मेसी, हरिद्वार।

जग-प्रसिद्ध बम्बई का ६० वर्षों का पुराना

मशहूर अंजन

(रजिस्टर्ड)

आंख शरीर का का एक प्रमुख अंग है, जिसके बिना मनुष्य की जिन्दगी ही बेकार है। इसलिए "आंख ही जीवन है" का विचार छोड़ कर लोग लापरवाही से आंख को खराब कर लेते हैं और बाद में उम्र भर पछताते हैं। आंख की साधारण बीमारी भी, लापरवाही से, ठीक इलाज न करने से जीवन को अंधा बना देती है। आंख का इलाज समय और सतर्कता से होना चाहिये। हमारे कारखाने का नैन जीवन अंजन काफी वर्षों से आंख की ज्योति बढ़ाने तथा आंखों की ज्योति स्थिर रखने एवं आंखों की सभी बीमारियों को दूर करने के लिए प्रसिद्ध है और लोगों की सेवा कर रहा है, इससे आंखों में कैसा भी धुंध, गुबार, जाला, माडा फूला, पड़वाल मोतियाबिन्द, नाखूना, लाल रहना, आंखों से पानी बहना (ढलका), रतौंधी, दिनौंधी, एक चीज की दो चीज दिखाई देना, रोहे पड़ जाना, कम नजर आना या वर्षों से चश्मा लगाने की आदत ही क्यों न पड़ गयी हो, इत्यादि आंखों की तमाम बीमारियां बिना आपरेशन दूर होती हैं। आंखों को आजीवन तजेज रखता है, डाक्टर, वैद्य भी नैनजीवन अंजन द्वारा आंख के रोगियों का इलाज करते हैं तथा अन्य लोगों को इसके इस्तेमाल की राय देते हैं। एक बार अवश्य अनुभव करें। हजारों प्रशंसा-पत्र प्राप्त हैं। कीमत प्रति शीशी १।) ३ शीशी लेने पर डाक खर्च माफ। हर जगह एजेन्टों की आवश्यकता है।

पता :—कारखाना नैन जीवन अंजन, १८७, सैंडहर्स्ट रोड, बम्बई ४।

आधुनिक विज्ञान का आश्चर्य

बिजली की ऐनक

अब आपको पढ़ने लिखने या अन्धेरे में देखने के लिए रोशनी की कोई आवश्यकता नहीं है। इस ऐनक से आप पढ़ना लिखना तथा कोई भी काम जो आप चाहते हैं घने अन्धेरे में कर सकते हैं। यह कमरे में रोशनी के लिये भी उपयोगी है। आंखों के लिये बिल्कुल हानि रहित। मूल्य ६) डा० खर्च अतिरिक्त। दो ऐनकों पर डाकखर्च मुफ्त।

पता—बंगाल ट्रेडर्स अलीगढ़, (यू० पी०)

फोल्डींग बांसुरी

होशियार कारीगरों की बनी हुई पीतल की विलायती पाइप चमकदार पालिश युक्त की हुई उच्च श्रेणी की सुरीली बांसुरी जिसके दो टुकड़े करके जेब में रख सकते हैं। मूल्य ४) पो० पैकिंग १।) बांसुरी शिक्षक मूल्य १॥) पोस्टेज ॥)। पता— बंगाल ट्रेडर्स (४) अलीगढ़ (यू० पी०)।

वीर अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

४
आना

साप्ताहिक

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७]　　दिल्ली, रविवार २२ आश्विन सम्वत् २००७　　[अङ्क २५

आखिर भारत सरकार क्या करेगी ?

कांग्रेस के अध्यक्ष श्री टण्डनजी ने देश की सरकार को पाकिस्तान के साथ कठोरता से काम लेने का परामर्श दिया था। यह परामर्श जब से देश का विभाजन हुआ था, तभी से बहुत से विचारक और कार्यकर्ता देते रहे हैं, किन्तु भारत-सरकार इसके विपरीत उदार नीति से काम लेती रही है। उदारता स्वयं बहुत अच्छा गुण है, किन्तु दूसरे प्रत्येक गुण की भांति उसके प्रयोग के लिए भी पात्रापात्र और स्थानास्थान का ध्यान न किया जाय तो प्रयोक्ता को ही हानि पहुंचाती है, इसे पाकिस्तान ने भली-भांति सिद्ध कर दिया है। भारत-सरकार की एक के बाद एक बरती गई उदारता ने भारत को लाभ नहीं पहुंचाया, यह सिद्ध करने की आज आवश्यकता नहीं है। पाकिस्तानतोषिणी नीति के सबसे बड़े समर्थक पं० नेहरू ने काश्मीर सम्बन्धी वक्तव्य में स्वीकार किया है कि हमने शान्ति के लिए कुछ ऐसी शर्तें भी स्वीकार कर लीं, जिनसे आक्रान्ता को लाभ पहुंचा। नेहरू लियाकत समझौते का जितना लाभ भारत से जाने वाले मुसलमानों को मिला है, उसका शतांश भी पाकिस्तान से आने वाले हिन्दुओं को नहीं मिला। यही बात भारत एवं पाकिस्तान में होने वाली व्यापारिक संधियों के बारे में कही जा सकती है। पाकिस्तान ने अपने रुपये के मूल्य को अधिक ठहरा कर भारत को सरासर क्षति पहुंचाने का प्रयत्न किया। भारत ने पाकिस्तानी माल न खरीदने का निश्चय करके पाकिस्तान को इसका उचित उत्तर दिया। इसका असर पड़ा। पाकिस्तान का किसान दुःखी होने लगा। जूट, रुई और गेहूं का उत्पादक किसान ग्राहक न होने से चिन्तित होने लगा। पूर्वी बंगाल की स्थिति विकट हो गई, वहां विस्फोट होने की आशा थी कि भारत-सरकार ने पाकिस्तान से व्यापारिक संधि करके उसे जीवनदान दे दिया, यदि उस समय व्यापार का अस्थायी समझौता न होता, तो निश्चय ही उसे अपने रुपये का मूल्य कम करने पर विवश होना पड़ता। परन्तु भारत-सरकार की व्यापारिक नीति ने उसे कुछ समय और ठहर सकने की शक्ति प्रदान कर दी। स्वयं पूर्वी बंगाल के प्रधान-मन्त्री श्री नूरुल अमीन ने जूट सम्बन्धी दुःस्थिति को स्वीकार किया है।

यह प्रसन्नता की बात है कि भारत-सरकार ने २० सितम्बर के बाद अस्थायी व्यापारिक समझौते को आगे जारी रखने से इन्कार कर दिया है। इसका वांछित फल आज नहीं कुछ समय बाद अवश्य पड़ेगा। पाकिस्तान के नेता भारत को चिन्तित और व्यग्र करने के लिए व्यापार और अर्थशास्त्र के सिद्धान्त भी भूल बैठे हैं। ६)-७) मन का गेहूं वे भारत को १४) रु० मन पर बेचना चाहते हैं। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि भारत की उदार नीति का एक भी अभिलषित परिणाम नहीं हुआ। जिस पाकिस्तान का जन्म ही द्वेष, हिंसा, रक्तपात, बर्बरता और दो राष्ट्रों के सिद्धान्त की नींव पर हुआ है, उसकी रक्षा करने के लिए भी वे द्वेषपूर्ण नीति का आश्रय लेना चाहते हैं। इसीलिए आज आवश्यकता है कि हम ऐसी नीति का अवलम्बन करें, जिससे पाकिस्तान अपनी नीति को बदलने के लिए विवश हो जाय।

काश्मीर के सम्बन्ध में पं० नेहरू ने वक्तव्य देते हुए पाकिस्तान की जिद्दता और प्रलाप की निन्दा की है। किन्तु प्रश्न यह है कि यदि पाकिस्तान का रवैया न बदला और सं० राष्ट्र-संघ ने भी उसे आक्रमणकारी घोषित करके कोई प्रभावशाली कदम न उठाया, तो भारत-सरकार क्या करेगी ? इसी तरह पूर्वी बंगाल में किया गया जो समझौता असफल होता जा रहा है, उसे कार्यान्वित करने पर पाकिस्तान को विवश करने के लिए सरकार क्या करेगी ? रुपये की विनिमय-समस्या का अन्तिम रूपेण निपटारा न होने तक भारत-सरकार क्या फिर कोई समझौता तो नहीं कर लेगी ? और सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि यदि पाकिस्तान निष्क्रान्त सम्पत्ति, नहरी पानी अथवा अन्य विवादग्रस्त प्रश्नों पर कोई युक्तिसंगत समझौता करने को तैयार न हुआ, तो भारत-सरकार क्या करेगी ? क्या वह इन प्रश्नों को अनिश्चित काल तक लटकाये रखेगी अथवा कोई प्रभावकारी कदम उठा कर पाकिस्तान को विवश भी करेगी ? इसी प्रश्न के उत्तर पर भारत-पाक के भावी सम्बन्ध निर्भर हैं।

महान प्रगतिवादी लेखक

हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि कर हिन्दी को लोकप्रिय बनाने वालों में स्वर्गीय प्रेमचन्द का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उर्दू में प्राप्त प्रसिद्धि और यश का त्याग कर स्वर्गीय प्रेमचन्द ने जब अकस्मात हिन्दी में ग्रन्थ लेखन प्रारम्भ किया, तबसे हिन्दी के गगन में प्रकाशमान नक्षत्रकी भांति वे चमकने लगे। उपन्यास सम्राट का पद उन्हें अनायास ही नहीं मिल गया। उनके उपन्यासों का भाव और कलापक्ष दोनों ही उत्कृष्ट थे। कला का जीवन के साथ वे समन्वय करते थे। वे केवल मनोरंजन के लिए न लिखते थे। उनका मनोरंजन जनहित की भावना को कभी ओझल नहीं कर सका। रंगभूमि से लेकर गोदान तक की रचनाओं की देन दे कर श्री प्रेमचन्द ने हिन्दी साहित्य को जितना समृद्ध किया, वैसा शायद कोई दूसरा लेखक देन नहीं दे सका। समाज और देश की दशा देख कर जो वेदना उनके हृदय में उत्पन्न होती थी, वह उनकी रचनाओं से स्पष्ट है। यदि अमेरिकन जनता के हृदय को 'टाम काका की कुटिया' ने दासप्रथा के विरुद्ध प्रेरित किया, तो यह भी निस्सन्देह कहा जाता है कि उत्तर-प्रदेश की जनता को जमींदारी प्रथा के विरुद्ध उत्तेजित कर किसान के प्रति सर्वसाधारण की सहानुभूति उत्पन्न करने में भी प्रेमचन्द का प्रमुख स्थान था। इस सप्ताह उनकी पुण्य तिथि मनाई जा रही है। हम उन्हें भूल न जायें और उनके साहित्य की विशेषताओं को अपनाने का प्रयत्न करें, इस उद्देश्य से इस अंक में उनके सम्बन्ध में कुछ सामग्री दी जा रही है। आज का प्रगतिवादी लेखक भले ही उन्हें प्रगतिवादी न माने, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उनसे बड़ा प्रगतिवादी लेखक — उच्छृंखलता और मर्यादा-भंग का उपदेशक नहीं—अभी तक हिन्दी साहित्य ने पैदा नहीं किया। आज का कथाकार भी उनसे बहुत कुछ सीख सकता है।

कोरिया की विषमतर स्थिति

साम्यवादी चीन के विदेश मन्त्री ने अमेरिका और उनके साथ संयुक्त राष्ट्र-संघ को यह चेतावनी देकर स्थिति को कुछ विषम कर दिया है कि यदि उनकी सेनाएं उत्तरी कोरिया की सीमा में प्रवेश करेंगी, तो चीन इसे तटस्थ भाव से नहीं देखेगा। चीनी सेनाओं के कोरियाकी सीमा की ओर बढ़ने के समाचार भी मिले हैं। चीन की इस धमकी से कोरिया युद्ध के विश्वयुद्ध में परिवर्तित होने के आसार पैदा हो गये हैं। यदि चीन ने उत्तरी कोरिया की रक्षा के लिए अपनी सेनाओं को प्रगति दी, तो किसी समय रूस का प्रवेश असम्भव न होगा। किन्तु दूसरी ओर यदि अमेरिका या राष्ट्रसंघ चीन की धमकी से डर गये, तो वह अपनी उस प्रतिष्ठा को खो बैठेंगे, जो उन्होंने दक्षिणी कोरिया से कम्यूनिस्टों को निकाल कर प्राप्त की है। यह सब विजय उत्तरी कोरिया में प्रवेश न करने पर व्यर्थ जायगी। अमेरिका अपनी विजय को पूर्ण विजय के रूप में तभी परिवर्तित कर सकता है, जब कि उत्तरी-दक्षिणी कोरिया में राष्ट्रसंघ के निरीक्षण में एक सरकार बन जाय। इसलिए मैकार्थर की सेनाएं आगे बढ़ती जा रही हैं। बहुत सम्भव है कि कम्यूनिस्ट चीन की धमकी कार्य-रूप में परिणत न हो, क्योंकि अभी उसे फारमोसा में भी लड़ना है और इससे अधिक समस्त देश में व्यवस्था स्थापित करनी है, मध्यम और सम्पन्न वर्ग के असंतोष को दूर करना है। यदि ऐसा ही हुआ तो रूस के प्रभाव को बहुत बड़ा धक्का लगेगा।

साप्ताहिक वीर अर्जुन विशेषांक

साप्ताहिक वीर अर्जुन के पाठकों को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि उसका विशेषाङ्क दशहरे के शुभ दिन पर प्रकाशित हो रहा है। १९ अक्तूबर का साधारण साप्ताहिक अंक प्रकाशित नहीं होगा। पाठक नोट करलें।

बिहार की राज्यभाषा

बिहार की विधान सभा ने हिन्दी को राज्यभाषा के रूप में बाकायदा स्वीकृत करके एक प्रशंसनीय कार्य किया है। उर्दू भाषा, फारसी लिपि अथवा अन्य भाषाओं को फिर से जीवित करने के प्रयत्न असफल हुए हैं। बिहार सरकार को इस प्रस्ताव के द्वारा आदेश दिया गया है कि वह क्रमशः विभिन्न विभागों में अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी चालू करती जाय। बिहार सरकार को यह भी आदेश दिया गया है कि सात वर्षों में हिन्दी पूर्णरूपमें राज्यभाषा बन जाय। यह स्वाभाविक है कि सात वर्ष की अवधि हमें कुछ लम्बी प्रतीत हो, किन्तु यदि इतने वर्षों में भी हम हिन्दी को पूर्णतः अपना लें, तो हमारे लिए यह बहुत बड़ी बात होगी। आवश्यकता यह है कि बिहार की तरह अन्य राज्य भी हिन्दी को जल्दी से जल्दी राज्य-भाषा के रूप में स्वीकार कर लें। कुछ राज्य ऐसा भी कर चुके हैं। राज्य जितनी जल्दी हिन्दी को अपनायेंगे, उतना ही केन्द्रीय सरकार भी हिन्दी को यथाशीघ्र अपनाने के लिए विवश की जा सकेगी।

ब्रिटेन की पूँजी भारत में फिर बढ़ रही है

पिछले दिनों दक्षिण पूर्वी एशिया को समृद्ध करने के लिए एक सम्मेलन हुआ था। ब्रिटेन इसमें रुचि लेता हुआ भारत के उद्योग धन्धों में कितना भाग लेने लगा है, इसका कुछ परिचय इस लेख से मिलेगा।

दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया की सहायता से सम्बन्धित राष्ट्रमंडलीय मन्त्रियों के सम्मेलन की सम्पूर्ण सफलता के लिए ब्रिटेन उतना ही उत्सुक है जितना कि भारत, तथा इस विषय में अभिरुचि रखने वाले अन्य देश। इसलिए ब्रिटेन ने इन वाद विवादों में एक प्रमुख भाग लिया है और आशा करता है कि अधिकांश सम्बन्धित देशों—भारत, पाकिस्तान, लंका, मलाया और सिंगापुर, बोर्नियो, बर्मा, स्याम, हिन्देशिया तथा हिन्द्चीन के पश्चात् करोड़ प्राणियों के जीवन स्तर उन्नत करने के लिए पारस्परिक सहायता की एक छ वर्ष योजना तैयार की जा सकेगी।

वर्तमान विचार विमर्श में अवस्था की वास्तविकता समझने का प्रयत्न किया जा रहा है। आने वाले समयों की ओर हम आशाभरी दृष्टि से देख सकते हैं। इस प्रसंग में पिछली मई में सिडनी सम्मेलन द्वारा सम्पादित कार्य का स्मरण रखना सुसगत है पहला था एक टेक्निकल सहायता स्काम का समारम्भ और एक छ वर्षों की विकास योजना रचने की विधियों पर राजी होना। उस समय से राष्ट्रमंडल के अधिकारियों ने उपलब्ध साधनों के विषय में संग्रहीत सूचना का समन्वय किया है, प्रत्येक देश द्वारा प्रस्तुत अपनी अपनी अत्यन्त तात्कालिक आवश्यकताओं और आर्थिक अभिवृद्धि की स्कीमों को एक संयुक्त प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत करन का प्रयत्न किया है।

टेक्निकल सहायता स्कीम सारी योजना पर मूल विचार प्रकट करती है—अर्थात् पारस्परिक साधनों और जानकारी का संचय। इसमें एशिया के देशों को उनकी आवश्यकतानुसार इंजीनियरिंग विद्या सम्बन्धी, वैज्ञानिक, टैक्निकल तथा अन्य विशेषज्ञ दिलाने तथा इन देशों के लोगों को उपलब्ध वर्तमान ट्रेनिंग सम्बन्धी सुविधाओं को बढ़ाने का प्रबन्ध सम्मिलित है।

ब्रिटेन के अंशदान

ब्रिटेन तथा अन्य राष्ट्रमंडलीय देशों ने खर्च पूरा करने के लिए ८०,००,००० पौंडों का एक कोष स्थापित किया है। यह सब एक सहकारितापूर्ण प्रयास होगा। उदाहरणार्थ भारत, जिसे अपनी कई स्कीमें पूरी करने के लिये यन्त्रविदों और कारीगरों की आवश्यकता है किन्तु इसने अन्य देशों की सहायतार्थ अपने यन्त्रविद् और कारीगर देने की इच्छा भी प्रकट की है।

युद्ध की समाप्ति के समय से ब्रिटेन ने दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया की क्षति पूरी करने में और इसके विकास में जो अंशदान दिया है वह स्पष्ट दिखाता है कि इस विशाल क्षेत्र की, जिसमें संसार की जनसंख्या का पचीस प्रतिशत रहता है, आर्थिक अवस्था सुधारने में ब्रिटेन की अभिरुचि आज की घटना नहीं है। वित्तीय तथा साधनों का सर्वाधिक अंशदान ब्रिटेन ने ही दिया है।

एशिया और सुदूरपूर्व के मित्रराष्ट्रीय आर्थिक आयोग ने अपनी हाल की वार्षिक रिपोर्ट में अमेरिकन डालरों की जो संख्या दी है, उनसे मालूम होता है कि युद्ध के समय से ब्रिटेन ने भारत तथा अन्य दक्षिण एशियाई देशों को भेंट, ऋण तथा स्टर्लिंग पावने के रूप में १७७,२०,००,००० पौंड दिए हैं।

यद्यपि यह सत्य है कि ब्रिटिश अंशदान का काफी हिस्सा स्टर्लिंग पावने के हिसाब में से था। पर इनके कारण भारत, पाकिस्तान और लंका अपने विदेशी व्यापार की लेनदेन में काफी घाटे की पूर्ति कर पाये थे। यद्यपि यह भी सत्य है कि स्टर्लिंग पावने से प्राप्ति का अर्थ था भारत, पाकिस्तान और लंका को स्वयं उनकी निधि के उपयोग का अवसर देना, पर स्मरण रहे कि इन्हें माल और सेवाएं (विशेषतया ब्रिटेन से) भी उपलब्ध हो सकी थीं और जहां तक भारत और पाकिस्तान की बात है। इन्हें केन्द्रीय संकटों से स्वर्ण और डालर मिल सके थे।

भारत में प्राइवेट पूंजी नियोजन के क्षेत्र में ब्रिटेन ने प्रधान भाग लिया है। भारत के रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित आंकड़े बताते हैं कि दिसम्बर १९५१ को समाप्त होने वाले इक्कीस महीनों में भारतीय उद्योगों में कुल जमा पूंजी नियोजन ६,८६,०० ००० पौंड थे, जिन में से ब्रिटेन का भाग था ६,६२,००,००० पौंड। ब्रिटिश प्लान्ट, मशीनरी, मोटर, गाड़ियों और आधारभूत साधन सामग्रियों के निर्यात की संख्याएं ब्रिटेन द्वारा प्रदत्त सहायता के रूप पर और भी अच्छा प्रकाश डालती हैं। केवल भारतीय उपमहाद्वीप को लीजिये चार वर्षों (१९४६ से १९५१ तक) के निर्यातों में से मशीनरी का भाग पन्द्रह से लेकर [illegible] प्रतिशत था, बिजली के सामानों [illegible] [illegible] और बिजली तथा इंजिन के सामानों [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

पिछले चार वर्षों में भारत के प्रति निर्यात की संख्याएं उन [illegible] मिलों, उन कारखानों [illegible] का परिचय देती हैं, जो भारत के विकास और अभिवृद्धि में सचमुच अपना अंशदान देने के उद्देश्य से ब्रिटेन ने लगवाई हैं। दो उदाहरण देखिये १९४८ में ब्रिटेन ने भारत को ३,१०,००,००० पौंडों की मशीनें भेजी थीं, जब कि १९४६ की संख्या आधी थी। इसी प्रकार भारत ने १९५१ में जितने मूल्य के बिजली के सामान ब्रिटेन से प्राप्त किये थे, वे मूल्य की दृष्टि से १९४६ की अपेक्षा दुगुने थे।

केवल यही नहीं, ब्रिटेन अपनी टैक्निकल जानकारी और निपुणता का निर्यात भी कर रहा है। प्रशिक्षण की सुविधाएं इस सहायता का एक रूप है और दक्षिण तथा दक्षिण पूर्व एशिया के साढ़े चार हजार लोगों को ब्रिटिश विश्वविद्यालयों और ट्रेनिंग कालिजों में शिक्षा दी जा रही है।

सिन्द्री (बिहार) की खाद फैक्टरी, चितरंजन का रेलवे इंजन बनाने का कारखाना, कलकत्ता की एक वायसर फैक्टरी तथा मद्रास, बाइसिकिल, टेलीफोन के सामान और तार के उद्योगों की कई योजनाएँ— इन सब नए भारतीय प्रयासों में ब्रिटिश फर्में भाग ले रहे हैं।

ये सारी सहायता ब्रिटेन ने स्वयं अपनी कठिनाइयों का सामना करने के साथ-साथ प्रदान की है। अपनी ओर से और भी यथासम्भव अंशदान देने के लिए वह तैयार है।

———

पश्चिमी यूरोप संघ के रक्षा मंत्री लन्दन में पिछले दिनों में मिले थे ब्रिटेन के रक्षा मंत्री श्री शिनवेल दूसरे लोगों से बातचीत कर रहे हैं।

इंग्लैंड अपना निर्यात व्यापार बढ़ाने के लिए २ अरब डालर युद्ध के बाद व्यय चुका है। पाँच आदमी [illegible] [illegible]

शरणार्थी समस्या

[८]

श्री 'आनन्द'

शरणार्थियों की संख्या में वृद्धि को रोकने के उपायों पर विचार कर चुकने के पश्चात् हम इस समस्या के आन्तरिक हल पर कुछ विचार करेंगे। आज देश में लगभग [illegible] लाख व्यक्ति शरणार्थी के रूप में हैं। इनमें से कुछ लोगों ने अपने व्यापार आदि को इस ओर आ कर भी व्यवस्थित कर लिया है। किन्तु ऐसे लोगों की संख्या अत्यन्त थोड़ी है। अधिकांश में हमें दो ही प्रकार के लोग दिखाई देते हैं—वे जो कहीं पर कोई छोटा सा धंधा करके किसी प्रकार से अपनी गुजर चला रहे हैं और अभागे जिन्हें किसी प्रकार आधे पेट अन्न प्राप्त हो जाता। पेट की इस ज्वाला को शान्त करने के लिये चोरी, डकैती, हत्या, लूट, जेब काटना, बेईमानी करना आदि सब प्रकार की वृत्तियों को स्वीकार करने के लिये जिन्हें बाध्य होना पड़ा है। स्त्रियों को अपना शरीर बेच कर अपना पेट भरना पड़ा है। इस प्रकार समाज के चारित्रिक अधःपतन का मार्ग खुल गया है।

आन्तरिक हल की दृष्टि से एक मार्ग है कि इन सभी के पेट का हल होना चाहिये। मेरा यह [illegible] नहीं है कि यदि इन सभी व्यक्तियों को रोटी मिलने लगी तो यह सारी बुराई दूर हो जायगी। अच्छाई अथवा बुराई [illegible] के यह दृष्टिकोण विशेष से झुकाव का नाम है। प्रत्येक मनुष्य के मन में अच्छाई के साथ साथ बुराई के अंकुर भी होते हैं। इनको पूर्णतः भस्म कर डालने वाले बहुत थोड़े होते हैं। किन्तु सामाजिक सदाचार का स्तर तथा तत्सम्बन्धी मान्यतायें इस बुराई के अंकुर पर रोक लगा कर रखती हैं।

किन्तु पेट की ज्वाला इतनी भयंकर है कि उसके भड़क उठने के पश्चात नीति तथा सदाचार व चरित्र सम्बन्धी विचारों की स्थिति ज्वालामुखी के मुंह पर बैठने जैसी हो जाती है। कुछ समय तक तो ऐसे विचार मनुष्य को बुराई की ओर बढ़ने से रोके रखते हैं। किन्तु पेट की भड़कती हुई ज्वाला शीघ्र ही मानसिक संयम को शिथिल कर देती है। चारों ओर फैली हुई स्वार्थपरता का दृश्य मन में एक प्रकार की दुर्बलता अथवा प्रतिहिंसा उत्पन्न करता है। यदि पेट का प्रश्न निर्वाह कर पाने जितना भी सुलझा हुआ हो तो बहुत [illegible] लोगों की प्रवृत्ति बुराई की ओर होती है। आज देश में बहुत बड़ी संख्या के चारित्रिक पतन का कारण यही समस्या है।

किन्तु इतने लोगों की रोटी की समस्या कोई साधारण बात नहीं। देश का आर्थिक ढांचा पहिले ही दुर्बल है। इनको बिठा कर खिलाने का अर्थ तो दिवाला निकालना होगा। यही नहीं इस प्रकार बहुत से युवकों में परिश्रम करने का भाव ही नष्ट हो जायेगा। दुर्भाग्य से बिठा कर खिलाने बहुत की बड़ी गलती नेहरू सरकार ने की है। इसी कारण यह समस्या भी देश के आर्थिक ढांचे पर एक बोझ बन गयी है।

इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम प्रश्न निवास का है। यह एक सत्य है कि भारत सरकार डेढ़ करोड़ व्यक्तियों के निवास के लिए अकेले मकान नहीं बनवा सकती। किन्तु दूसरी ओर यह भी बात निश्चित है कि इन लोगों को निवास चाहिये और यह देने का उत्तरदायित्व सबसे अधिक कांग्रेस सरकार के कंधों पर है क्योंकि कांग्रेस के द्वारा विभाजन स्वीकार किये जाने के फलस्वरूप ही इन लोगों को सर्वनाश का सामना करना पड़ा।

अतः सरकार प्रबन्ध नहीं कर सकती यह कह कर इस प्रश्न को टाला नहीं जा सकता। इसके हल के लिये तो यथार्थ में सरकार तथा नेताओं को एक प्रकार का वातावरण निर्माण करना आवश्यक था। देश में इस प्रकार की एक लहर चलायी जानी आवश्यक थी कि जिन लोगों के पास उनकी आवश्यकता से अधिक स्थान है वे किसी शरणार्थी परिवार को उसमें बसाने की कृपा करें। इसके लिए व्याख्यानों के स्थान पर आचरण का सहारा लेना आवश्यक था। स्वयं प्रधान मंत्री इस विषय में उदाहरण उपस्थित करते। अन्यान्य मंत्रिगण तथा शासन के प्रमुख अधिकारी आगे आते। शासन के अतिरिक्त बाहर के समाज में प्रभावशाली व्यक्ति भी इसी प्रकार का आचरण करते तथा दूसरे लोगों को करने का प्रोत्साहन देते। यदि 'हमारा भाई पाकिस्तान में रह रहा होता और उजड़ कर आया होता तो क्या स्थान कम रहने से असुविधा होने के कारण हम उसे घर में स्थान न देते? उसी भाव से उजड़ कर आये हुए देश के एक अन्य नागरिक को अपना भाई समझ कर स्थान देना हमारा कर्तव्य है' इस भाव के प्रसार की सबसे अधिक आवश्यकता थी।

इस प्रकार के आंदोलन की सफलता उसके लिए प्रामाणिक प्रयत्न किये जाने पर निर्भर है। समाज में स्वार्थ और दया दोनों ही भाव गुप्त रहते हैं। इनमें से जिसको भी चाहा जाय जागृत किया जा सकता। आवश्यकता थी कि हम दया तथा सहानुभूति के भाव को जागृत करते। किन्तु हमने वास्तव में इसके स्थान पर घोर स्वार्थ के भाव को जागृत किया।

हमारे नेताओं को पीड़ितों के कष्टों की कोई अनुभूति न थी। वे अपनी राजनीतिक धारणाओं के अनुकूल व्यवहार करने के लिए उन्हें कहते थे। इसमें चाहे उनका भला हो या बुरा, उनका आदेश यही था कि उफ न करो। दूसरी ओर वे चाहते थे कि इस समस्या के हल में उन्हें किसी प्रकार की असुविधा न उठानी पड़े। वे तो केवल भाषण तथा उपदेश देने के उत्तरदायित्व का ही पालन करना चाहते थे। स्वाभाविक ही था कि उनके नीचे कार्य करने वाले अथवा उनकी ओर देख कर चलने वाले लोग भी अपनी असुविधा की पूरी चिन्ता करते तथा मौखिक सहानुभूति अथवा जनता के समक्ष भाषण करने तक ही वे भी अपने को सीमित रखते। समाज उपदेश के स्थान पर व्यवहार को महत्व देता है। अतः समाज के स्वार्थी वर्ग और विशेष कर उन लोगों को जिनके पास सम्पत्ति थी, खुल कर खेलने का अवसर मिला।

नई दिल्ली का सरकारी भवन इतना बड़ा है कि आवश्यकता आ पड़ने पर राष्ट्रपति के साथ ही सभी मन्त्री-गण उसमें रह सकते हैं। इस पर भी उसमें स्थान शेष बच रहेगा। स्वयं प्रधान मन्त्री पं० नेहरू की कोठी उनके सारे मन्त्रि-मण्डल को नहीं, तो उसके बहुत से सदस्यों को स्थान दे सकती है। किन्तु भारत के कर्णधारों के सम्मुख प्रश्न था प्रतिष्ठा का! एक ही कोठी में कई मन्त्री रह रहे हैं यह देख कर भारत स्थित विदेशी राजदूत क्या विचार करेंगे? उनकी सरकारों तथा उनकी स्वयं की दृष्टि में इतनी बड़ी भारत सरकार का क्या मान रह जायगा? विदेशी राष्ट्रों के सम्मुख भारत का सिर ऊंचा उठाये रखने के लिये यह आवश्यक है कि हम अपनी प्रतिष्ठा उनके मुकाबले किसी प्रकार कम न होने दें। भारत सरकार के मन्त्रियों राष्ट्रपति तथा अन्यान्य उच्च सरकारी कर्मचारियों का ठाटबाटपूर्ण जीवन आवश्यक है। यह यदि मिट गया तो हमारी प्रतिष्ठा मिट जायगी। यह तथा इसी प्रकार के विचार हमारे नायकों के मन में थे।

उनको यह कभी विचार नहीं आया कि देश के लाखों व्यक्तियों का आश्रयहीन अवस्था में सर्दी, धूप और वर्षा की मार सहते हुए, नरक तुल्य जीवन बिताने का दृश्य हमारी प्रतिष्ठा के लिए और भी अधिक कलंक है। अहिंसा, सत्य और प्रेम के सिद्धांतों की दिन रात रट लगाने वाले, महात्मा गांधी के अनुयायी बनने का दावा करने वाले और इन महान सिद्धांतों के आधार पर विश्व को उपदेश देने वाले लोग स्वयं विशालकाय कोठियों में बैठें, सब प्रकार के सुख साधनों का उपभोग करें, जब कि उन्हीं के लाखों देशवासी सर्वनाश के पंजे में जकड़े हुए सड़कों के किनारे वृक्षों के नीचे, अथवा अन्य ऐसे ही स्थानों पर सिर छिपाने के लिये स्थान, पेट भरने के लिये अन्न तथा शरीर ढंकने के लिए वस्त्र खोजते फिरें—यह क्या प्रतिष्ठा को बढ़ाने वाला आचरण है? क्या इस प्रतिष्ठा का मूल्य देश के लाखों प्राणों अथवा प्राणियों के कष्टों से भी अधिक है? अथवा हमारे सारे सिद्धांत केवल सभास्थल में जनता के समक्ष भाषण देने तक ही सीमित हैं, उसके बाद नहीं?

मेरी तुच्छ बुद्धि में कोई कारण समझ में नहीं आता जो इन महान महान व्यक्तियों को अपने निवास स्थान में पीड़ित व्यक्तियों को स्थान देने में बाधा बनता। यदि एक बार प्रधान मंत्री पं० नेहरू मंत्रिमंडल के सभी सदस्यों को साथ ले कर सरकारी भवन में चले जाते और अपनी कोठियां निवास समस्या को हल करने के लिये खाली कर देते तो इस बात का अत्यन्त शुभ परिणाम होता। आज के समान एक एक कोठी में एक एक बड़े आदमी के रहने की स्थिति शीघ्र ही बदल जाती और प्रधान मंत्री के इस आचरण के नैतिक दबाव के कारण किसी को भी आपत्ति करने का अवसर न मिलता। एक कोठी के कई भागों में कई बड़े अधिकारियों को एक साथ रहने के लिए कहा जा सकता था। इस प्रकार नई दिल्ली की कितनी ही कोठियां खाली हो जातीं।

यही नहीं, क्लर्क आदि के क्वार्टरों पर भी इसका प्रभाव पड़ता और सामयिक आपत्ति समझ कर एक ही क्वार्टर में दो लोग रह सकते थे। आज भी अनेकों क्वार्टरों में रहने वाले व्यक्ति आधे भाग में रहते हैं और आधे को किराये पर उठाये हुए हैं। सरकार कह सकती थी कि यह एक राष्ट्रीय आपत्ति है। इसका सामना हमें कष्ट उठा कर भी करना है। थोड़े ही समय में यह समस्या हल हो जायगी और तब सरकार पुनः कर्मचारियों के लिए पूर्ववत निवास की व्यवस्था कर सकेगी। इस प्रकार यदि प्रामाणिकता से प्रयत्न किया जाता तो कम से कम आधा नयी दिल्ली नगर खाली हो सकता था, जिनमें सरकार यदि चाहती तो शरणार्थियों को बसा सकती थी अथवा किन्हीं अन्य व्यक्तियों को वहां बसा कर उनके स्थान पर शरणार्थी बसाये जा सकते थे।

———

काश्मीर, पाकिस्तान और भारत

★ पं० जवाहरलाल नेहरू

श्री डिक्सन की रिपोर्ट के प्रकाशन पर पाकिस्तानी नेता जिस तरह काश्मीर में अनर्गल प्रचार कर रहे हैं, उसके बाद पं० नेहरू का यह वक्तव्य विशेष महत्व रखता है। इसमें उन्होंने स्वीकार किया है कि वे शान्ति की उत्सुकता में कुछ ऐसी बातें भी मान गये, जिससे आक्रमणकारी को लाभ पहुँचा, किन्तु अब भारत की भावी नीति क्या होगी, इस पर उन्होंने प्रकाश डाला है।

काश्मीर के विषय में हमारी बुनियादी स्थिति शुरू से ही ठीक रही है। यह ५ बातों से अनुशासित होती है।

(१) काश्मीर पर बेशर्मी से भरा हमला हुआ है, जिसका प्रतिरोध किया जाना है। आक्रमण के सामने कोई आत्मसमर्पण नहीं होना चाहिए।

(२) काश्मीर के भविष्य का निबटारा काश्मीर के लोगों द्वारा ही किया जाना चाहिए।

(३) झगड़े का निबटारा, जहाँ तक सम्भव हो, शान्तिपूर्ण तरीकों से किया जाना चाहिए जिससे बुरे परिणाम और नयी समस्याएं व संघर्ष न पैदा हों।

(४) हम किसी भी हालत में काश्मीर के विषय में द्विराष्ट्र सिद्धान्त को नहीं मान सकते, जैसे हमने समस्त भारत में उसे नहीं माना। इसलिए जहाँ तक हमारा सम्बन्ध है, इस समस्या पर उस सिद्धान्त को आधार मान कर विचार नहीं किया जाना चाहिए।

(५) तथा काश्मीर के लोगों को संरक्षण प्रदान करना हमारा वैधानिक और नैतिक कर्तव्य है। काश्मीर के भारत में शामिल होने से हमारे ऊपर यह दायित्व आ पड़ा है। उसके अलावा भी हमने काश्मीर के लोगों को वचन दिया हुआ है, और हम उसका पालन करेंगे।

इन विभिन्न पहलुओं में कभी कभी संघर्ष भी हो जाता है। यद्यपि हम शान्ति चाहते हैं, तथापि आक्रमण का सामना करने के लिए हमें हथियार उठाने पड़े। अथवा हम यह चाहते थे कि झगड़ा जल्दी से शान्तिपूर्वक निबट जावे, इस लिए हमने कुछ ऐसे प्रस्ताव भी मान लिए, जो आक्रान्ता के हक में थे।

यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे पहल करने पर ही १ जनवरी १९४९ को काश्मीर का युद्ध बन्द हुआ। इसके बाद सुरक्षा-परिषद् में संयुक्त राष्ट्रीय कमीशन व श्री डिक्सन के साथ बातचीत में हम कभी अपनी बात से नहीं फिरे। हम पहले जो कुछ कह चुके हैं; उस पर दृढ़ रहने का अब भी वचन देते हैं।

समस्या का निचोड़

अब स्थिति यह है कि पाकिस्तान ने हमला किया है, यह बात स्वीकार की गई है। काश्मीर आयोग ने अप्रत्यक्ष रूप से यह बात स्वीकार की और अब श्री ओवन डिक्सन ने साफ़ तौर पर मंजूर करली है। दूसरा सवाल है—कि जनमत लेने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ पैदा करना। मुख्य कठिनाई इन्हीं के बारे में है। हमने प्रारम्भ से ही इस बात पर जोर दिया है कि काश्मीर की प्रभुसत्ता वर्तमान सरकार के हाथ में ही रहे। इसे काश्मीर आयोग ने स्वीकार कर लिया था, जिससे कुछ परिणाम निकलते हैं। दूसरा हमने इस बात पर जोर दिया था कि राज्य की सुरक्षा की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए। हम किसी भी हालत में काश्मीर की सुरक्षा को खतरे में नहीं डाल सकते।

डिक्सन के बदलते हुए प्रस्ताव

श्री ओवन डिक्सन के साथ हमारी बातचीत के दौरान में मध्यस्थ ने समस्त काश्मीर में जनमत संग्रह के एक अंग के रूप में काश्मीर घाटी में जनमत कराने के कुछ प्रस्ताव लिखित रूप में पेश किए। मैंने उनमें से कुछ की आलोचना की, किन्तु सामान्यतः मैं उन्हें मानने को तैयार था। लेकिन जब आंशिक जनमत का सवाल उठा, तब श्री ओवन डिक्सन ने पहले से भिन्न कुछ ऐसे प्रस्ताव पेश किए, जिनका बड़ा दूरगामी असर पड़ता था। जैसे कि ६ महीने तक वर्तमान सरकार का शासन न रहे और अगर संयुक्तराष्ट्रीय शासनाधिकारी आवश्यक समझें तो हमें और काश्मीर राज्य को अपनी सब सेनाएं काश्मीर से हटानी होंगी। उन्होंने इतने पर ही बस नहीं किया और यह भी सुझाव दिया कि अगर जरूरत पड़ी तो कुछ भारतीय सेनाओं के साथ पाकिस्तान की सेनाओं को भी काश्मीर में आने की इजाजत दी जाएगी।

ऐसे प्रस्ताव को भारत कभी स्वीकार न करेगा

'यह प्रस्ताव उन सब सिद्धान्तों की हत्या करता था, जो मैंने ऊपर कहे हैं। हमारे लिए ऐसे किसी भी प्रस्ताव पर विचार करना असम्भव था और है, चाहे उसके कोई भी परिणाम क्यों न हों।

श्री ओवन डिक्सन ने इस आधार पर अपना उक्त प्रस्ताव पेश किया कि उससे काश्मीर का न्यायपूर्ण और निष्पक्ष जनमत हो सकेगा। वस्तुतः यह एक ऐसा शासन अवश्य संभव होगा, जो शुरू से ही अत्यन्त अन्यायपूर्ण होगा। काश्मीर की वर्तमान सरकार का, जो वहाँ की एकमात्र वैधानिक सरकार है, मुअत्तिल किया जाना आक्रमण की विजय होगी और हम अपने घोषित उद्देश्यों और कर्तव्यों की बलि दे रहे होंगे। काश्मीर में शेष भारत में इसके अन्य खतरनाक परिणाम होंगे। इससे शान्ति नहीं, अपितु सम्भवतः उथल पुथल और लड़ाई ही होगी।

इन सब बातों के अलावा अगर काश्मीर के लोगों को दिए गए हमारे वचन की और उसके प्रति हमारी जिम्मेदारी की कुछ भी कीमत है तब हम ऐसे प्रस्ताव को कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे।

जनमत में साँप्रदायिकता को नहीं घुसने दिया जा सकता

हम जनमत संग्रह के अपने वचन पर कायम हैं। किन्तु हम बराबर यह स्पष्ट करते आये हैं कि यह जनमत राजनीतिक व आर्थिक प्रश्नों पर होगा। साम्प्रदायिक क्रूरता के वातावरण में यह नहीं हो सकता। अगर धार्मिक और साम्प्रदायिक भावनाएं उत्तेजित करने दी जावें, तो कोई न्यायपूर्ण और निष्पक्ष जनमत संग्रह नहीं हो सकता। उससे शान्ति नहीं, अपितु लड़ाई होगी।

पाकिस्तान की अशिष्टता

पाकिस्तान कैसा जनमत चाहता है, यह जानना हो तो जब से श्री डिक्सन की रिपोर्ट प्रकाशित हुई है, उसके बाद पाकिस्तान के प्रेसों, सभाओं और वहाँ के नेताओं के वक्तव्यों को देखकर जाना जा सकता है। साम्प्रदायिक मतान्धता, जिहाद, धमकियों और अभिशापों का आश्चर्यजनक प्रदर्शन किया गया है। सब प्रकार की शिष्टता को ताक पर रख दिया गया है और अशिष्टता व प्रलाप का बोलबाला है, जिसमें किसी को भी नहीं छोड़ा गया है। भारत तो उनकी दृष्टि में पापी है ही, श्री ओवन डिक्सन की भी निन्दा की गई, लार्ड रेडक्लिफ पर असत्य भाषण और धोखादेही का आरोप लगाया गया, और लार्ड माउन्ट बेटन को बुराई की जड़ बताया गया। हमने इस विषय में कुछ नहीं कहा किंतु अब मैं यह कह रहा हूँ कि लार्ड माउन्ट बेटन, लार्ड रेडक्लिफ तथा श्री ओवन डिक्सन पर लगाये गये ये आरोप सर्वथा मिथ्या हैं, तथा उनमें सचाई की एक बूंद भी नहीं है।

सर ओवन डिक्सन

पाकिस्तान के इस सुव्यवस्थित और सुप्रकाशित प्रोपेगेण्डे का जरा भारत में, जो कुछ हुआ उसके साथ तुलना कीजिए। श्री डिक्सन की रिपोर्ट से असन्तुष्ट होने की हमें काफी गुंजाइश है। किंतु हमने इस पर शांत चित्त से विचार किया और अपना विवेक और सन्तुलन नहीं खोया। मैं समझता हूँ, हमने शिष्टता और संयम से काम लिया है।

काश्मीर में भी यही होगा

हमने पाकिस्तान का तरीका देख लिया है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि अगर पाकिस्तान को अवसर मिले तो वह काश्मीर में जनमत संग्रह के समय इससे भी अधिक जोर से उसकी पुनरावृत्ति करेगा। क्या यह न्यायपूर्ण और निष्पक्ष जनमत संग्रह का उचित वातावरण होगा?

सेनाओं का विघटन

श्री ओवन डिक्सन के कहने पर हम काश्मीर में अपनी सेनायें। २०-२१ प्रतिशत कम करने को राजी हो गये। जहाँ तक मुझे मालूम है, पाकिस्तान ने श्री डिक्सन के इस प्रस्ताव को टाल दिया और बाद में जो उत्तर दिया वह युद्ध की धमकियों से भरा था।

पाकिस्तान की इन उन्माद भरी धमकियों से हम अपनी नीति से जरा भी विचलित नहीं होंगे। हम शान्ति के मार्ग पर चलेंगे, लेकिन उस पर अगर कोई खतरा आया, तो हम पूर्ण विश्वास और शक्ति से उसका सामना करेंगे।

युद्ध वर्जन घोषणा

काश्मीर में जो कुछ भी रहा है, उसके बावजूद हमने "युद्ध-वर्जन" की

(शेष पृष्ठ २२ पर)

मध्यपूर्व की समस्या

★ श्री नीरस योगी

साम्राज्यवादी एक लम्बे से एशियाई राष्ट्रों का शोषण करते रहे हैं। भारत, बर्मा, हिन्दचीन, मलाया, जापान और अन्य पूर्व के देश उनकी नीति के शिकार बन चुके हैं। स्वार्थ साधन के लिए अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों से लड़ा दिया जाता है। पश्चिमी सभ्यता बाह्यरूप से देखने पर सामञ्जस्य प्रतीत होती है परन्तु वास्तविक क्षेत्र में विरोध की भावना ही प्रधान रहती है। भारत में पाकिस्तान, चीन में च्यांगकाई शेक, कोरिया में सिगमन री और हिन्दचीन में बाओदाई उनकी नीति के परिचायक हैं। मध्यपूर्व में तो यह पश्चिमी राष्ट्र कुछ आगे ही बढ़ गये हैं, वहां अनेकों पाकिस्तान (छोटे राज्य) को जन्म देने का प्रयत्न किया जा रहा है। संगठन की दुहाई देने वाले यह पश्चिमी राष्ट्र आज भी एशिया के देशों को भेदभाव की नीति का सहारा लेकर दास बनाये रखना चाहते हैं।

अल्पसंख्यकों का इतिहास

मध्य पूर्व के देश मुस्लिम बहुल क्षेत्र हैं। वहां पर अनेकों उपजातियां रहती हैं जो कि मुस्लिम धर्म की ही शाखायें हैं।

धर्म के सन्मुख सब विषय इन धर्मान्ध देशों के नागरिकों के लिए तुच्छ हैं।

उनकी इस कमजोरी से योरोप के राष्ट्रों ने काफी लाभ उठाया है। इसी कारण यह देश उथल-पुथल के केन्द्र रहे हैं। विदेशी वहां भिन्न-भिन्न स्वार्थ लेकर आये और इन देशों का खूब शोषण किया। आज भी इस क्षेत्र के तेलकूपों पर विदेशियों की दृष्टि लगी हुई है क्योंकि वह जानते हैं कि अशिक्षित जनता पर ठीक प्रकार से शासन किया जा सकता है। आज भी वहां साम्यवाद का बोलबाला है। रूस के भय के कारण भी पश्चिमी राष्ट्र इन देशों को छोड़ना नहीं चाहते हैं।

यहूदियों और इसाईयों का आगमन

यहूदी सदैव से ही अपने पड़ोसियों को द्वेष की दृष्टि से देखते हैं। उनकी इस मनोवृत्ति के कारण उन पर भिन्न-भिन्न देशों में अत्याचार किए गए। समस्त देशों से भाग कर उन्होंने अब अरब देशों में शरण ली। यहूदियों के आगमन के समय इन देशों में प्रायः व्यक्तिगत अधिकार ही प्रधान था। राष्ट्र-व्यक्ति विशेष द्वारा बनाए जाते थे। दैनिक कार्य में तो सत्ता का हस्तक्षेप प्रायः नहीं के बराबर ही होता था। इस के सम्बन्ध जनता से सीधे न हो कर सरदारों से होते थे।

प्रत्येक देश का वासी अपनी भाषा व संस्कृति को सम्मान की दृष्टि से देखता है। अतएव प्रत्येक आगन्तुक को किसी भी देश के जीवन में मिलने के लिए वहां की भाषा व संस्कृति को अपनाना आवश्यक है। यहूदी इस विषय में भी ठोकर खाकर पूर्ण सतर्क हो गये थे। उन्होंने अपने धर्म पर दृढ़ रह कर अपने देश की संस्कृति को अपना लिया। कान्सटैन्टिनोपुल में हुए युद्ध के पश्चात् देश के अन्य अल्पसंख्यकों को भी जिन्हें काफिर कहा जाता था स्वतंत्रता दे दी गई। यहूदी शिक्षा के महत्व को समझते थे अतएव उन्होंने शिक्षालय खोल दिये। उनके लिए न्याय का प्रबन्ध भी स्वतन्त्र रूप से किया गया। इस युद्ध का यह लाभ तो अवश्य हुआ कि देश में एक क्रान्ति की लहर दौड़ गई।

अल्प संख्यकों की स्थिति

ओटोमन साम्राज्य में प्रत्येक जिरगे के सरदार को पूर्ण स्वतन्त्रता थी। सुलतान द्वारा उनको सम्मानित भी किया जाता था। धर्म न्याय में भी पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। जिरगे के निर्णय को राज्य द्वारा स्वीकार किया जाता था। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता दूरानी के अनुसार इन देशों में अल्पसंख्यकों की दशा शोचनीय थी, वह राज्य की दया पर आश्रित थे। उनको स्वतन्त्रता तो दैनिक कार्यों में भी प्राप्त थी परन्तु वह नाम मात्र को ही थी। दूसरे धर्म के होने के कारण यहूदी व ईसाइयों की दशा तो और भी शोचनीय थी, पूर्ण स्वतन्त्रता तो इस्लाम ग्रहण करने पर ही मिलती थी। जिरगा अन्य जिरगों को घृणा व संशय की दृष्टि से देखता था।

पश्चिम का हस्तक्षेप

प्रत्येक देश में आन्तरिक गड़बड़ मची हुई थी। सैनिक शिक्षा ही देश के जीवन का प्रमुख अंग समझी जाती थी। अल्पसंख्यक विशेषाधिकार की मांग करने लगे थे। सब अपने अपने भविष्य के सम्बन्ध में सतर्क थे, रूस के कुछ नागरिक व रोमन कैथोलिक भी इससे वंचित न थी। इन ईसाइयों ने व्यापार द्वारा यथेष्ट उन्नति कर ली थी। इस गड़बड़ी से लाभ उठा कर पश्चिमी राष्ट्रों ने इस भूभाग पर अधिकार जमा लिया। यहीं से इन देशों की समस्या दिन प्रति दिन जटिल होती गई। टर्की के प्रथम महायुद्ध में हार जाने पर समस्त अरब देशों को स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई, परन्तु विजयी पश्चिमी राष्ट्रों ने इस भाग पर पेट्रोल की इच्छा से अधिकार कर लिया। मध्यपूर्व के देशों में अपने नवीन शासकों के प्रति विद्रोह की लहर दौड़ गई। विजेता राष्ट्र भी इस विषय में शान्त न बैठे थे। उन्होंने छोटी-छोटी उपजातियों को उकसा कर स्वतन्त्र देश बनाने की आशा दिखाई। लेबनान की स्थापना इस कूटनीति का पहला चित्र है।

मध्यपूर्व की जातियां

मध्यपूर्व के सभी राष्ट्र मुस्लिम बहुल क्षेत्र हैं परन्तु उनमें अनेकों उपजातियां हैं। यह सब अपनी उन्नति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं। इन जातियों में अरमीनियन, कुर्द, द्रुज, नासारी, असीरी, काप्ट, मारोयटी, यहूदी व ईसाई प्रमुख हैं।

१. अरमीनियन

एक योद्धा जाति है। प्रथम महायुद्ध से पहले इनका एक स्वतन्त्र राज्य था जो कि बाद में रूस में मिला दिया गया। इनकी भाषा व संस्कृति का काफी विकास हो चुका है। यह समस्त विश्व में फैले हुए हैं और जीवन निर्वाह के लिए कृषि पर निर्भर हैं। लेबनान वाले इनके विरोधी हैं क्योंकि इनके कारण मुस्लिमों और ईसाइयों की जनसंख्या का अनुपात घट गया है।

२. कुर्द

इस जाति का संगठन कबीलों के आधार पर हुआ है। इसका क्षेत्र कुछ परगनों का ही है।

भाषा के अभाव में इस जाति के साहित्य का भी अभाव है। पिछले कुछ वर्षों से इनमें राजनैतिक जाग्रति आ गई है। प्रचार द्वारा यह समस्त जाति को भिन्न भिन्न गतिविधियों से परिचित रखते हैं। एक स्वतन्त्र कुर्दिस्तान की भावना भी दिन प्रतिदिन जोर पकड़ती जा रही है जिसका ईराक की सरकार दमन करना चाहती है।

द्रुज,

यह जाति अल्पसंख्यकों में अपना विशेष स्थान रखती है। यह इस्माइली धर्म के अनुयायी हैं तथा समस्त कार्यों को गुप्त रखते हैं। इस जाति संगठन में दिन प्रतिदिन दरार पड़ती जा रही है क्योंकि नवयुवक अन्य जातियों से सम्बन्ध रखने के इच्छुक हैं। इनकी औरतें परदे में रहती हैं और जीवन निर्वाह का साधन कृषि है।

नासारी व असीरी

इन दोनों जातियों ने काफी उन्नति की है। जीविका का साधन कृषि व भेड़ें चराना है। असीरी लोग सरदारों के आधीन हैं और ईराक ने उन्हें काफी स्वतन्त्रता प्रदान कर रखी है।

काप्ट, मारोयटी इत्यादि:—

समस्त जातियों में इनका स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। काप्ट मिश्र में फैले हुए हैं तथा इतिहासकारों के अनुसार प्राचीन मिश्र वासियों की सन्तान हैं। अल्पसंख्यक होते हुए भी इन्होंने कभी विशेषाधिकार की मांग नहीं की है। यह जाति वफ्द-दल के अन्तर्गत संगठित है, जो कि धर्म को राजनीति से पृथक रखना चाहता है। व्यापार इनका मुख्य कार्य है। यूनानी कट्टरपन्थी व्यापार व कृषि से अपना निर्वाह करते हैं। भाषा व संस्कृति से यह पूर्णतः अरब हैं। मारोयटी लेबनान के बहुसंख्यक कृषक हैं। शिक्षा का प्रसार होने पर यह अपने सरदारों से विद्रोह करके स्वतन्त्र हो गये हैं।

यहूदी

इनकी समस्या दिन-प्रतिदिन विषम होती जा रही है। यह इस देश के पुराने नागरिक होने के साथ-साथ भाषा व, संस्कृति से पूर्णतः भिन्न हैं।

धार्मिक भाषा हिब्रू है। यह परिश्रमी होने के कारण समस्त देशों में फैले हुए हैं। सामाजिक रूप से अलग रहने के कारण अरब इन्हें सदैव सन्देह की दृष्टि से देखते हैं।

अरबों व इसाईयों में आर्थिक दृष्टि से कोई अन्तर नहीं है। इनके पारस्परिक सम्बन्ध केवल नाममात्र के लिए हैं। शहरों में तो यह खाई और भी चौड़ी हो जाती है। मुस्लिमों में आन्तरिक भय की भावना प्रधान है। कोई भी उपजाति बहुसंख्यक होने का दावा नहीं कर सकती है। एकता के लिये समस्त अरब देशों में अल्पसंख्यकों के साथ सभ्य व्यवहार किया जाने लगा है। उदाहरण के लिए लेबनान के राष्ट्रपति ईसाई होते हैं तो प्रधान मन्त्री मुस्लिम। धारा सभा के निर्वाचन में भी सब दलों का सहयोग प्राप्त किया जाता है।

मुस्लिम राजनीति व धर्म का सम्मिश्रण चाहते हैं।

यही दशा अरबों की है। शिक्षा का प्रसार बहुत ही कम है। आर्थिक दृष्टि से अरब देश काफी पिछड़े हुए हैं। इसी कारण उनका सदैव शोषण किया गया है। आपस की फूट भी उनकी उन्नति में बाधक है अतएव वह एक-दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। विभाजन सदैव राजनीति में लाभकारी होता है अतएव पश्चिमी राष्ट्र इस दिशा में पूरा प्रयत्न करते हैं। फ्रांस ने भी सीरिया के कई भाग कर दिये थे परन्तु स्वतन्त्र होने पर वह सब मिल कर एक हो गये। अरब के नेता इस विषय में जागरूक हैं कि उनके देश की उन्नति किसी प्रकार भी न रुक सके। इसके विपरीत पश्चिमी राष्ट्र जिनको कि पैट्रोल की आवश्यकता है भेद नीति का आश्रय लेकर इन देशों को छोड़ना नहीं चाहते हैं। दूसरे इन देशों को छोड़ देने पर वहां साम्यवाद का प्रसार हो जाय।

—|—

इन्द्र धनुष

'भूमि पर बलात्कार'

प्रथम महायुद्ध के समय अमेरिका में ४ करोड़ एकड़ परती भूमि तोड़ कर उपजाऊ बनायी गयी और वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा खूब गेहूं पैदा करके धन कमाया गया। किन्तु छाती पर हर समय ट्रैक्टर चलते-चलते वह भूमि थोड़े ही काल में निर्जीव हो गयी और पानी तथा हवा से कट कर छिन्न-भिन्न होने लगी। इस तरह दुर्भिक्ष सामने देखकर भूमि का कटाव रोकने के लिए कई देशों में बड़े बड़े उपाय किये जा रहे हैं। अमेरिका में अरबों रुपये खर्च करके जंगलों की रक्षा की जाती और घास उगायी जाती है। जंगली पशु-पक्षियों का विनाश भी रोका और उनकी वृद्धि का प्रयत्न किया जाता है। कहा जाता है कि 'ऊदबिलाव जैसे पशुओं के रहने से भूमिकी रक्षा में बड़ी सहायता मिलती है,' क्योंकि वह हर समय नयी भूमि बनाया करता है। यह देखकर वैज्ञानिकों के मन में इतना परिवर्तन हो रहा है कि टिड्डियों के विनाश की उपयोगिता में भी सन्देह प्रकट किया जाने लगा है।

मिस्टर जैक तथा व्हाइट की एक पुस्तक १९४० में प्रकाशित हुई थी, जिसका नाम है 'दि रेप आफ दि अर्थ' अर्थात् 'पृथ्वी पर बलात्कार,' जिसमें इस विषय पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। विद्वान लेखकों का कहना है कि 'मनुष्य अपने विज्ञान के मद में प्रकृति पर कितना अत्याचार करता आ रहा है और वह भी उसे खूब छका रही है। शारीरिक परिश्रम का स्थान मशीनों ने ले लिया, जिससे थोड़े समय में अधिक काम होने लगा। खेती जीवन निर्वाह की अपेक्षा धन कमाने का साधन बन गयी। बाहरी चमक-दमक की चीजें खरीदने के लिए पुराने संसार को अपनी बहुमूल्य भूमि से हाथ धोना पड़ा। इसके पहले पृथ्वी का उदर कभी भी इतनी निर्दयता से खरोंचा न गया था। सहस्रों वर्षों के कठिन परिश्रम से पुराने संसार ने जो पाया था, उसे नये संसार ने थोड़े ही दिनों में लूट लिया। फल यह हो रहा है कि प्रयत्न करने पर भी उपज कम होती जा रही है। मरुस्थल बढ़ रहे हैं, जंगल और बाढ़ ऊधम मचा रही है, चारों ओर दरिद्रता का दौर दौरा है और संसार भर में सामाजिक अराजकता फैली हुई है।'

●

'टोडरानन्द'

राजा टोडरमल का नाम प्रसिद्ध है। वे मुगल सम्राट अकबर के दीवान थे। सम्राट को खुश रखने के लिए उनके दरबारी कई हिंदू नरेश अपने धार्मिक कृत्य छोड़ बैठे थे। राजा टोडरमल कट्टर हिन्दू थे, इसी कारण उस समय के मुसलिम इतिहासकार उनसे चिढ़ते थे, पर उनकी योग्यता के वे भी कायल थे। एक बार वे अकबर के साथ पंजाब का दौरा कर रहे थे। मार्ग में उनके पूजन की मूर्तियां कहीं खो गईं उस पर कई दिनों तक उन्होंने उपवास किया। वे प्रायः काशी यात्रा किया करते थे और पण्डितों का बहुत सम्मान करते थे। प्रसिद्ध विद्वान श्रीनारायण भट्ट के नेतृत्व में कई पण्डितों द्वारा उन्होंने धर्मशास्त्र संग्रह का एक 'टोडरानन्द' नाम का बड़ा ग्रन्थ तैयार कराया। इसमें २३ खंड हैं। आयुर्वेद और वास्तु पर ही लगभग ८० हजार श्लोकों का संग्रह है। राजनीति और कर्म विपाक छोड़ कर इस हस्तलिखित ग्रन्थ के बाकी सब खंड बीकानेर राज्य के 'अनूप पुस्तकालय' में सुरक्षित हैं। श्री वैद्य के सम्पादकत्व में इसका प्रथम खंड प्रकाशित हुआ है। इसमें 'सर्ग, प्रतिसर्ग तथा अवतार' के विषय हैं। इस पर श्रुति, स्मृति, पुराण के वचनों का संग्रह किया गया है। इसकी भूमिका में विद्वान सम्पादक ने टोडरमल की जीवनी भी दी है, जिसमें उन्होंने दिखलाया है कि संस्कृत से उन्हें कितना प्रेम था। साथ ही 'टोडरानन्द' के तैयार करने में श्री नारायण भट्ट तथा श्री नीलकंठ ज्योतिषी ने कितना परिश्रम किया, यह भी दिखलाया है। सम्पूर्ण ग्रंथ प्रकाशित हो जाने से बड़ा लाभ होगा। यह खेद की बात है कि राजनीति सम्बन्धी खंड प्राप्य नहीं। उससे इसके सम्बन्ध में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त होती, जिसकी इस समय आवश्यकता भी है।

●

विष या महौषधि

दक्षिणी अमेरिका में एक विष है जिसका नाम है 'ऐरो प्वायजन' अर्थात् कर-[illegible] द्वारा [illegible] का खोज होने के २४ वर्षों बाद सन १९१६ ईस्वी में एक इटालियन ने कहा था कि उक्त विष से आधुनिक चिकित्सा विज्ञान को एक चुनौती मिलेगी। उक्त विष कई जंगली पौधों से प्राप्त वस्तुओं के सम्मिश्रण से बनता है। इसे दक्षिणी अमेरिका के आदिवासी बनाना जानते हैं। इस विष ने बड़े-बड़े रसायन शास्त्रियों को आश्चर्य में डाल दिया है। इसके भीतर पाये गये पदार्थों में से एक पदार्थ है ट्यूबोक्यूराइन। लन्दन के नेशनल मेडिकल रिसर्च इन्स्टीच्यूट के डाक्टर किंग ने १९३५ में उक्त पदार्थ को शर विष से अलग करके परीक्षा की और गायना के कुछ पौधों का नामोल्लेख किया जिनसे ट्यूबोक्यूराइन बन सकता है। इसके बाद एक अमरीकी ए० सी० गिल ने कई वर्षों तक शोध की और उन पौधों का पता लगाया तथा यह भी खोज निकाला कि कहां से ये पौधे प्रचुर परिमाण में मिलते हैं। इन पौधों में से एक पौधे की डंठल से डी-ट्यूबोक्यूरेरिन नामक दवा निकलती है। पेट में जब आपरेशन होता है, तब मांस पेशियों को आराम पहुंचाने के लिये इसका प्रयोग होता है। इसी कार्य के लिये सबसे अधिक ताकत की अनेस्थिया देनी पड़ती थी। डी-ट्यूबोक्यूरेरिन को मानसिक विकृति की रामबाण महौषधि समझा जाता है। डाक्टर किंग द्वारा उक्त पौधों का आविष्कार किये जाने और गिल द्वारा उनकी प्राप्ति के स्थान ज्ञात किये जाने के पूर्व रसायन विद् अनेक रासायनिक प्रक्रियाओं से प्रस्तुत औषधियों को काम में लाते थे। नये आविष्कृत पौधों से बनी दवा बाजार में डीक्लेथोनियम आयोडाइड के नाम से बिकने लगी है।

उक्त विष को यदि किसी पाइप में रख कर फूंका जाय तो १ सौ फीट के भीतर के जीव उसके प्रभाव में आकर मर जायेंगे। इसी विष के सहारे आदिवासी कभी स्पेनवासों के सामने घुटने नहीं टेकते थे। इसे वे देवता का वरदान मानते हैं। इससे दैहिक और भौतिक दोनों प्रकार के ताप दूर भगाने की आशा और विश्वास उन्हें रहता है।

●

जनता ही विधाता

पार्लमेंट राष्ट्र निर्माण के लिये प्रायः अपने अधिकारियों पर ही निर्भर रहना चाहती है। कदाचित उसकी दृष्टि में जनता एक उपास्यदेव के तुल्य है, जिसका नामजप और और जयघोष मात्र करना चाहिए; किन्तु जो निष्क्रिय और कूटस्थ है। वस्तुतः जनता जड़ और अचेतन नहीं है; आज के युग में तो यह नित्य प्रति अधिकाधिक सक्रिय होती जाती है। जनता ही स्रष्टा और विधाता है। उसकी उपेक्षा नहीं हो सकती। नव निर्माण और मंगल के कार्यों में उसके सहयोग की आवश्यकता है।

— आचार्य नरेन्द्रदेव

●

रोने पर ही उल्लास मिलता है!

'रुदन में कितना उल्लास, कितनी शान्ति, कितना बल है। जो कभी एकान्त में बैठ कर अपनी अतीत की स्मृतियों में, वियोग में सिसक-सिसक कर, बिलख-बिलख कर नहीं रोया, वह जीवन के ऐसे सुख से वंचित है, जिस पर कि सैकड़ों हंसी न्योछावर हैं। उस मीठी वेदना का आनन्द उन्हीं को पूछो, जिन्हें यह सौभाग्य प्राप्त हुआ हो। हंसी के बाद मन-खिन्न हो जाता है — आत्मा क्षुब्ध हो जाती है, मानों थक गये हों — पराभूत हो गये हों। रुदन के पश्चात् एक नवीन स्फूर्ति नवीन उत्साह, एक नवीन जीवन का अनुभव होता है।'

— स्वर्गवासी मुन्शी प्रेमचन्द

●

एक उपयोगी शिक्षा

'स्टार्लिंग' नाम की एक चिड़िया १८४५ में अमेरिका पहुंची। अब वहां उसके वंशज इतने बढ़ गये हैं कि अन्न की फसल को एक बड़ा खतरा उत्पन्न हो गया है। वहां की कांग्रेस की प्रतिनिधि सभा ने इस आशय का एक बिल स्वीकृत किया कि 'इन दुष्ट चिड़ियों का एक दम सफाया कर दिया जाय।' परन्तु 'परिषद' (सिनेट) ने उक्त बिल अस्वीकृत कर दिया। वहां कहा गया कि 'उक्त चिड़िया कुछ ऐसे कीड़े खाती है, जो फसल के लिए उससे भी बढ़ कर खतरा है।' इस पर वहां का 'न्यूयार्क टाइम्स' पत्र लिखता है कि 'संतुलन बनाये रखने का प्रकृति का निजी तरीका है, प्रत्येक प्राणी से, चाहे वह स्टार्लिंग हो या मनुष्य, कुछ न कुछ काम लेता है।' प्रसिद्ध कवि शेक्सपियर का भी कहना है कि 'बुरी चीजों में भी कुछ अच्छाई है। निचोड़ कर मनुष्य को उसे ग्रहण करना चाहिये।' आधुनिक सभ्यता क्या उपयोगी शिक्षा ग्रहण करेगी? भारत की तो यह सदा ही शिक्षा रही है। उसके 'मानव धर्म' का यह अर्थ नहीं कि 'जो कुछ भी हो सब मनुष्य के लिए हो,' उसकी दृष्टि में तो 'जीव, पर्वत, वन, अचर कोई भी ऐसी वस्तु नहीं, जिसमें एक ही परमात्मा व्याप्त न हो।' परन्तु आज भारतीय ही यह शिक्षा भूलते जा

(शेष पृष्ठ १४ पर)

पाकिस्तान रुपये का मूल्य क्यों कम नहीं करता?

लेखक— श्री अवनीन्द्र विद्यालंकार

पाकिस्तान ब्रिटिश राष्ट्र-मंडल का सदस्य है, उसका विदेशी व्यापार उसके प्रतिकूल जा रहा है, वहां रुई, गेहूँ और जूट के मूल्य लगातार गिरते जा रहे हैं, फिर भी वह भारत के साथ व्यापार करने के लिए आवश्यक अवमूल्यन का आश्रय नहीं लेता। उसके इस हठ और दुराग्रह में जो रहस्य है, उसीका उद्घाटन लेखक ने अपने दृष्टि-कोण से किया है।

इंगलैंड द्वारा भी समर्थन

पेरिस में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रानिधि और पुनर्निर्माण बैंक का वार्षिक अधिवेशन समाप्त हो गया। परन्तु भारत-पाक का मति अवरोध पहले के समान बना रहा। भारत की आस्था और विश्वास को गहरा धक्का लगा। राजनीतिक क्षेत्र के समान आर्थिक क्षेत्र में भी उसको पाकिस्तान के सामने नीचा देखना पड़ा। भारतीय प्रतिनिधि और अर्थमन्त्री श्री चिन्तामणि देशमुख इसके अध्यक्ष थे। इस पर भी उनके अनुरोध की अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रानिधि ने उपेक्षा की और पाकिस्तान द्वारा घोषित पाक-रुपये के विनिमय दर, २ शि० २ पें० पर विचार करना फिलहाल स्थगित कर दिया। पाक-अर्थमन्त्री श्री गुलाम मोहम्मद का इस विजय से प्रसन्न और सन्तुष्ट होना स्वाभाविक है। श्री देशमुख की निराशा और उनका अवसाद भी समझ में आने की बात है। भारत को आश्चर्य हो सकता है कि जब पाक-रुपये की ऊंची विनिमय दर से ब्रिटेन को अधिक परिमाण में स्टर्लिंग देने पड़ रहे हैं, तब भी क्यों उसको एंग्लो-अमरीका समर्थन प्राप्त हुआ। परन्तु जो जानते हैं कि राजनीति को अर्थनीति से अलग नहीं किया जा सकता, भारत के इस पराजय और आर्थिक क्षेत्र में पाकिस्तान का एंग्लो-अमरीका द्वारा समर्थन देख कर चकित न होंगे।

भारत का विरोध

परन्तु दो देशों के बीच व्यापार और व्यवसाय शक्ति के बल पर नहीं हो सकता था। पाकिस्तान के पास जूट, कपास और गेहूं निर्यात के लिये है। इस वर्ष भी उसने स्टर्लिंग-पावना से इस वर्ष पिछले साल की अपेक्षा दुगने परिमाण में स्टर्लिंग लिया है, और उसको अपना व्यापारिक-सन्तुलन कायम रखना कठिन हो रहा है। १८ सितम्बर १९४९ को जब भारत समेत लगभग २५ देशों ने अपनी मुद्रा का मूल्य-ह्रास किया और अवमूल्यन का मार्ग पकड़ा, उस समय पाकिस्तान ने इन राष्ट्रों का साथ देने से इन्कार कर दिया। उसने डालर के समक्ष अपनी मुद्रा का मूल्य गिराया नहीं। क्या पाकिस्तान के सम्मुख डालर संकट नहीं था? अवमूल्यन का मार्ग ग्रहण करने से क्या उसका व्यापार असन्तुलित नहीं रहता? फिर पाकिस्तान ने अविमूल्यन का, परिपुष्ट मुद्रा का मार्ग क्यों ग्रहण किया? क्या इसका कारण भारत के उद्योगों को पंगु बनाना और आर्थिक दृष्टि से उसको कमजोर बनाना नहीं था? क्या इस प्रकार शरणार्थियों द्वारा पाकिस्तान में छोड़ी गई अरबों रुपयों की सम्पत्ति का मूल्य एक चौथाई कम करना नहीं था? यदि छोड़ी हुई शरणार्थी-सम्पत्ति के प्रश्न पर अन्तर्राष्ट्रीय पंच नियुक्त हो तो वह पाकिस्तान की मुद्रा में ही परित्यक्त सम्पत्ति के मूल्य का निर्धारण करेगा। १६ अरब रु० के बदले यदि पाकिस्तान को १२ अरब रुपया ही भारत को देना पड़े, तो क्या उसको कम आर्थिक लाभ होगा? क्या यह लाभ स्टर्लिंग-पावना में हुई कमी को पूरा न कर देगा? इसलिए यदि पाकिस्तान के अर्थमन्त्री और प्रधानमन्त्री जोर से कहते हैं कि पाक रुपए का अवमूल्यन न करने का निश्चय पाकिस्तान ने विशुद्ध आर्थिक दृष्टि से किया है, तो इसको मानने में हमें आपत्ति क्यों हो? हम दिन-प्रतिदिन के व्यापार पर ही क्यों अपनी नजर सीमित रखें?

संगठित प्रयत्न

सितम्बर १९४८ में अ-डालर देशों द्वारा डालर संकटों को दूर करने के लिए संगठित प्रयत्न किया गया और उसका परिणाम अवमूल्यन के रूप में प्रकट हुआ। इसका उद्देश्य डालर की कमी को दूर करना और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार प्रवाह को पुनः गतिमान करना था। अमरीका ने इसको उत्साहन किया, क्योंकि अमेरिका और अ-डालर देशों के बीच लागत मूल्य के ढांचे में भारी अन्तर था और इस कारण व्यापारिक संतुलन उन देशों के विरुद्ध जाता था। फलतः यूरोपियन और स्टर्लिंग क्षेत्र के देशों ने अपनी मुद्रा का अवमूल्यन किया, जिससे आयात को घटाया जा सके और निर्यात व्यापार को बढ़ाया जा सके और इस प्रकार असन्तुलित व्यापार का संतुलन किया जाय। निःसंदेह अवमूल्यन करने या न करने के प्रश्न का निर्णय इस प्रश्न के गुण-अवगुण का विवेचन करके करना चाहिये था। पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को पुनरुज्जीवित करने के लिए चौबीस राष्ट्रों द्वारा किये गये प्रयत्न को सफल बनाना और उन राष्ट्रों का इसमें साथ देना पाकिस्तान का कर्त्तव्य नहीं था? परन्तु पाकिस्तान ने अ-डालरीय देशों का इस विषय में साथ नहीं दिया।

स्टर्लिंग-क्षेत्र का होकर भी

पाकिस्तान राष्ट्रकुल— कामनवेल्थ से बंधा हुआ है। उसका सदस्य है। दूसरी ओर वह स्टर्लिंग-क्षेत्र के अन्य देशों के समान पाकिस्तान की मुद्रा और साख तथा प्रत्यय ढांचा का आधार स्टर्लिंग है। इसको मजबूत और शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता सब स्वीकार करते हैं। जुलाई १९४८ में अर्थ मंत्रियों की लन्दन में कांफ्रेंस हुई थी और उसमें यह तय किया गया था कि स्टर्लिंग को मजबूत बनाया जाय। इसी विचार से २५ प्रतिशत डालर देशों से आयात घटाने का निर्णय किया गया। इसी अवसर पर "राष्ट्रकुल डालर-भण्डार" का निर्माण करने और उसका सम्मिलित रूप से संचालन करने का निश्चय किया गया। सितम्बर में वाशिंगटन-कांफ्रेंस में ब्रिटेन ने अमेरिका को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वह स्टाक जमा करने का प्रोग्राम पुनः चालू करे और स्टर्लिंग-क्षेत्रों में अधिक पूंजी का विनियोग करे। इसके बाद स्टर्लिंग का अवमूल्यन किया गया।

यह सब कुछ स्टर्लिंग को मजबूत बनाने के लिए संगठित प्रयत्न था। परन्तु पाकिस्तान ने अपने को इससे अलग रखा। उसके इस असहयोग की निन्दा नहीं की गई। इसके विपरीत उसका यह असहयोग पुरस्कृत किया गया और पाक-रुपये के विनिमय दर प्रश्न के विचार को स्थगित कर दिया गया। क्या यह भारत के प्रति एंग्लो-अमेरिका का विरोधी रवैया नहीं? क्या यह सूचित नहीं करता कि भारत के उद्योगों पर घातक आक्रमण करने में वे भी पाकिस्तान के साथ हैं? क्या इसके बाद भी हम आंखें बन्द किये रहेंगे?

श्री चिन्तामणि देशमुख

सितम्बर १९४९ के बाद से

लन्दन में ही नहीं, पेरिस में भी पाकिस्तान के अर्थ मंत्री श्री गुलाम मुहम्मद ने कहा है कि पाकिस्तान ने पाक-रुपये का अमूल्यन न करने का निर्णय राजनीतिक कारणों से नहीं, विशुद्ध आर्थिक कारणों से किया है। क्या यह दावा सच है? पाकिस्तान का ८० प्रतिशत बाह्य व्यापार भारत के साथ है। पाकिस्तान द्वारा अवमूल्यन न करने के निर्णय का प्रभाव भारत के लिए घातक सिद्ध होगा। यह वह न जानता हो, यह मानने की बात नहीं। विनिमय दर आंतरिक और बाह्य लागत मूल्य ढांचा में ठीक ठीक सन्तुलन कर सकता है। यदि माल को मुहैय्या करने वालों में विक्रेता और मुख्य उपभोक्ता अपने को असन्तोषजनक स्थिति में पावें, तब मानना चाहिये कि विनिमय दर में मूलतः कहीं गलती है। पाकिस्तान को भी अन्य देशों के समान डालरों की जरूरत थी। फिर भी उसने अवमूल्यन की नीति ग्रहण नहीं की। क्यों? क्या इस नकारात्मक नीति का आर्थिक दृष्टि से समर्थन किया जा सकता है?

भारत के बल पर

पाकिस्तान भूल गया कि यदि उसका व्यापार सन्तुलित है और उसके अनुकूल है तो भारत के बल पर। भारत के भूतपूर्व अर्थ मंत्री डा० जान मथाई ने अपने बजट भाषण में कहा था कि जुलाई १९४८ से जून १९४९ के बारह मासों में भारत से पाकिस्तान को ८३ करोड़ रु० का माल गया, और पाकिस्तान से भारत को ११७ करोड़ रु० का माल आया।

पाकिस्तान के पक्ष में ३४ करोड़ रु० का व्यापारिक सन्तुलन रहा। पाकिस्तान से भारत को आयात ११७ करोड़

(शेष पृष्ठ १८ पर)

रूस में विशाल औद्योगिक निर्माण-योजना

"वोल्गा नदी पर स्तालिन हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन बनाने तथा कास्पियन नदी के इलाकों में आबपाशी करने के लिए पानी पहुंचाने" के सम्बन्ध में सोवियत् संघ की मंत्रिपरिषद का निर्णय प्रकाशित हुआ है।" "इज़वेस्तिया" के संवाददाता को एक भेंट में "गिद्रोप्रोक" के प्रधान एस० वाई० झुकने बताया।

स्तालिनग्राद के हाइड्रो-एलेक्ट्रिक स्टेशन का निर्माण जिसको खड़ा करने का सुझाव जे० वी० स्तालिन ने रखा था, उन एक सूत्र में बद्ध कार्यवाहियों की शृंखला में एक नयी और मुख्य कड़ी है जो वोल्गा के उस पार की सुविस्तृत शुष्क भूमि की प्रकृति के पुनर्निर्माण तथा इसकी अपार असीम विद्युत् शक्ति के इस्तेमाल के लिए बनाई गयी है।

इस शृंखला की पहली कड़ी है। वोल्गा के ऊपर किवीशेव हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन का निर्माण करना जिससे वोल्गा उस पार के बीच की तराई में १०००,००० हेक्टर भूमि की आबपाशी होने की सम्भावना है। स्तालिनग्राद का हाईड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन बन जाने से केवल सस्ती बिजली ही न मिलेगी तथा वोल्गा पार की भूमि की आबपाशी हो सकेगी वरन् कास्पियन की निम्न तराई की सिंचाई भी होने लगेगी।

जलवायु की स्थिति खराब होने तथा पानी के अभाव के कारण कास्पियन क्षेत्र की निम्न भूमि के उत्तर भाग के सुविस्तृत शुष्क प्रदेश, जो वोल्गा और यूराल नदी के बीच में अवस्थित हैं, बहुत कम उपयोग में आते हैं।

वनस्पति को समृद्ध बनाने, रेत को वनस्पति द्वारा बांध देने, जंगल तैयार करने, कास्पियन की निम्नभूमि में जल का विस्तार करने से जलवायु की स्थिति में आमूल परिवर्तन हो जावेगा, हवा में तरी आ जावेगी तथा शुष्क वायु का बहना रुक जावेगा।

स्तालिनग्राद के बाहर से वोल्गा के पानी से कास्पियन की निम्न भूमि की आबपाशी होने पर ये सब कार्य सिद्ध हो जायेंगे।

स्तालिनग्राद का बांध वोल्गा के सतह को ऊपर उठायेगा तथा एक बहुत बड़ा आहर बनायेगी। इस प्रकार से आबपाशी के लिए यूराल नदी की तरफ एक नहर निकाली जाएगी जिससे हो कर वोल्गा का पानी पूरे गुरुत्व के साथ लगभग ६०००,००० हेक्टर भूमि की आबपाशी करते हुए बहा करेगा, जिसके उत्तरी किनारे पर स्तालिनग्राद नहर, द० में कास्पियन समुद्र तथा पश्चिम और पूर्व में क्रमशः वोल्गा और यूराल नदियां होंगी।

वोल्गा के बायें किनारे की शुष्क भूमि में आबपाशी के लिए पानी ले जाने के सिवाय, सोवियत सरकार के उक्त-निश्चय में वोल्गा के दाहिने किनारे स्तालिनग्राद के दक्षिण तथा कास्पियन की निम्नभूमि के उत्तर पश्चिम भाग की भूमि की आबपाशी की व्यवस्था की गयी है। यह भू भाग जो सार्पिंस्क की निम्न तराई, येर्गेनी जेम्ली और नोगेस्क स्तपी के नाम से मशहूर है पशुपालन के लिए अत्यन्त उपयोगी है परन्तु जलाभाव के कारण इस दिशा में अब तक प्रगति नहीं हो सकी है। उन पंपिंग स्टेशनों के सहारे जो स्तालिनग्राद के हाईड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन से चलाये जायेंगे वोल्गा का पानी सार्पिस्क झीलों के इलाके में लाया जाएगा जो उसके दाहिने किनारे पर अवस्थित हैं। ये झीलें पानी के बुनियादी धमनियां और आहर का काम करेंगी।

सार्पिस्क की झीलों से नहरों के जाल सार्पिंस्क की निम्नभूमि तथा येरगेने जेम्ली में फैल जाएंगे। वहां तथा वहां से और दूर दक्षिण की ओर नोगेस्क स्तपी में लगभग २,२००,००० हेक्टर भूमि की आबपाशी की योजना बनायी गयी है।

आबपाशी किए हुए इन भूभागों में चरागाह और हरियालियां उगेंगे और मवेशियों के लिए चारा तैयार होगा जो स्तपी में पशुपालन की उन्नति के लिए नितान्त उपयोगी है। इन इलाकों में भी जंगलों की स्थापना तथा उपयोगी वृक्षों के जंगल लगाए जाएंगे।

आबपाशी तथा जंगल लगाने के फलस्वरूप कास्पियन की निम्नभूमि सुविस्तृत शुष्क प्रदेश, जहां से अब तक गर्म शुष्क हवाएं बहती रही हैं, पशुपालन के लिए एक समृद्धिशाली इलाके की शक्ल में परिवर्तित हो जाएगा।

स्तालिनग्राद के हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन का पावर किवीशेव स्टेशन से कुछ ही कम होगा याने इससे लगभग १००० करोड़ किलोवाट बिजली का पावर पैदा होगा।

स्तालिनग्राद का हाइड्रो-एलेक्ट्रिक स्टेशन अपने कुल उत्पादन का काफी बड़ा अंश, याने ४०० करोड़ किलोवाट घंटे हर साल मास्को को देगा।

स्तालिनग्राद में हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन तथा आहर बन जाने से वोल्गा के नीचे वाले भाग में ३००० किलोमीटर से अधिक के फासले में जहाज चलाने में बहुत अधिक तरक्की होगी।

स्तालिनग्राद की हाइड्रो एलेक्ट्रिक व्यवस्था में किवीशेव की तरह एक हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन, अतिरिक्त पानी ऊपर से बह जाने के लिए एक कंक्रीट का बना हुआ बांध, एक मिट्टी का बांध तथा जहाज चलाने के लिए पानी के फाटक रहेंगे।

जहां पर भविष्य में निर्माण कार्य होना है वहां भूतत्त्व विद्या के विशेषज्ञों के दल के दल इस समय प्रारम्भिक काम कर रहे हैं।

सोवियत संघ की मंत्रिपरिषद के निश्चय के अनुसार १९५९ में उक्त हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन पूर्णरूप से चालू हो जाएगा। इतने थोड़े समय में ऐसे विशाल हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन की तत्सम्बन्धी हाइड्रो इंजीनियरिंग ढांचे के साथ साथ तैयार करना अत्यन्त उच्च कोटि की नवीनतम मशीनों के ही द्वारा सम्भव होगा।

सोवियत संघ कारखाने प्रचुर परिमाण में निर्माण करने वालों की मशीन सम्बन्धी सुविधाएं तथा जमीन खोदने की शक्तिशाली मशीनें सप्लाई कर रहे हैं, नवीनतम मास्को के नमूने के पम्प पूर्णतया यन्त्रचालित कंक्रीट और पत्थर तोड़ने के कारखाने तथा दूसरी मशीनें और यंत्र।

हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन तथा आबपाशी योजना की डिजाइन तैयार करने में विभिन्न सचिवालयों और संस्थाओं के हजारों इंजीनियर तथा विज्ञान एकेडमी एवं कृषिविज्ञान के अखिल संघीय लेनिन अकादमी में काम करने वाले वैज्ञानिक भाग लेंगे।

एस० वाई० झुक ने अन्त में कहा "स्तालिनग्राद के हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन की डिजाइन तैयार करने वाले तथा निर्माता इस विशाल योजना को अहाद् स्तालिन युग के बनाने के लिए कुछ भी नहीं उठा रखेंगे।"

पश्चिमी यूरोप में साम्यवाद का प्रभाव नष्ट हो रहा है

★ श्री डब्ल्यू॰ एन॰ ईवर

> समय का प्रवाह सर्वत्र साम्यवादियों के प्रतिकूल जा रहा है। वे दिन गए जब वे वैधानिक विधियों से अधिकार प्राप्ति की आशाएं किया करते थे। आज तो वे किसी मिले जुले शासन में भाग लेने का भरोसा भी नहीं कर सकते।

स्वीडन की नगरपालिका के निर्वाचनों में जो अप्रत्यक्षरूप में संसद के उच्च सदन के निर्वाचन भी हैं-साम्यवादियों को गहरी हार खानी पड़ी थी। इन्हें समस्त वोटों के पांच प्रतिशत मात्र प्राप्त हुए और इस प्रकार उनकी शक्ति दो वर्ष पहले की तुलना में दो तिहाई कम हो गई।

सचमुच, सारे पश्चिमी योरोप में साम्यवादी पार्टियां पराजित हो चुकी हैं अथवा हो रही हैं। सारे पश्चिमी योरोप में साम्यवादी दलों का अधःपतन एक प्रभावहीन – यद्यपि उत्पाती – अल्पसंख्यक दल के रूप में हो रहा है। केवल फ्रांस और इटली में साम्यवादी दल इस समय भी बड़े राजनीतिक दल माने जासकते हैं। किन्तु वहां भी उनका आगामी अधःपतन अस्पष्ट नहीं रहा।

सर्वत्र पराजय

डेनमार्क के सार्वजनिक निर्वाचनों में, जो सितम्बर में हुए थे, शांति के एकमात्र समर्थक और युद्धप्रेमियों के एकमात्र दुश्मन होने का दम भरने वाले साम्यवादी १५० स्थानों में से केवल छः स्थान ही प्राप्त कर सके थे, जब कि १९४५ में इनके पास १८ स्थान थे।

और नार्वे के पिछले नवम्बर में हुए निर्वाचनों में इन्हें "स्टार्टिंग" (संसद) की अपनी सारी ग्यारह सीटें गवानी पड़ी थीं।

बेल्जियम के तीन निर्वाचनों में भी वे बुरी तरह हारे। १९४६ में २३ स्थान, १९४९ में १२ और १९५० में सिर्फ सात।

पिछले वर्ष के डच नगरपालिका के निर्वाचन और इस वर्ष के प्रान्तीय निर्वाचन यही परिचित प्रवृत्ति प्रकट करते हैं: १९४८ के सार्वजनिक निर्वाचनों की तुलना में शक्ति में लगभग पचीस प्रतिशत का ह्रास।

जहां तक ब्रिटेन की बात है तीस वर्षों में यह पहला अवसर है जब लोक सभा में एक साम्यवादी तक नहीं है। और पश्चिमी जर्मनी की परिस्थिति इस प्रकार है। जून के महीने में नार्थ राइन-वेस्टफेलिया, जिसमें रूर का महान औद्योगिक क्षेत्र पूर्णतया सम्मिलित है, में निर्वाचन हुए थे। जर्मनी के साम्यवादी दल ने जीतने के बड़े जबरदस्त प्रयत्न किए और विपक्षियों की भारी पराजय की भविष्यवाणियां भी सुनने में आई थीं। किन्तु सचमुच इसे मतों के ५.५ प्रतिशत मात्र मिले थे जब कि तीन वर्ष पूर्व चौदह प्रतिशत प्राप्त हुए थे। श्लेसविग-होल्सटीन में साम्यवादियों को २.२ प्रतिशत वोट मात्र मिले थे और हेम्बर्ग में, जिसे हम किसी समय साम्यवादियों का दुर्ग समझते थे, सिर्फ सात प्रतिशत।

समय का प्रवाह सर्वत्र साम्यवादियों के प्रतिकूल जा रहा है। वे दिन गए जब वे वैधानिक विधियों से अधिकार प्राप्ति की आशाएं किया करते थे और श्रम तथा समाजवादी दलों से श्रमिक वर्ग के वोट छीनने के स्वप्न देखा करते थे। आज वे किसी मिले जुले शासन में भाग लेने का भरोसा भी नहीं कर सकते। इस अवनति के मूल कारण अस्पष्ट नहीं हैं। कम्यूनिस्ट करतूतों की कलई खुल गई है। जैसा वे अक्सर अन्य लोगों के विषय में कहा करते हैं, वे स्वयं "अनावरण" कर दिये गए हैं।

स्तालिनवाद का सच्चा रूप

साम्यवादी दलों की पुरानी सफलताएं छल और कपट का परिणाम थीं। ट्रेड यूनियनों की एकता करने और सामाजिक असमानता को समाप्त करने के आदेश प्राप्त वे साम्यवादी लोग श्रमिकवर्ग की एकता करने के समर्थन का झूठा प्रचार किया करते थे। जिस समय वे साम्यवादी फासिस्टवाद से कभी दुश्मनी का ढिंढोरा पीट रहे थे तब मार्शल स्तालिन हिटलर के सामने मित्रता का हाथ बढ़ा रहे थे। जब कभी साम्यवादियों ने देशभक्ति में अपना लाभ देखा तो वे देशभक्ति का दम भरने लग गये। कभी-कभी तो वे व्यक्तिगत किसानों और साधारण व्यापारियों के रूप में भी संसार के सामने आ चुके हैं।

"शांति के समर्थक"— वे हैं साम्यवादियों का सबसे बड़ा ढोंग। इस स्वांग ने न जाने कितने सुखदायी स्वप्नों की रचना की होगी। किन्तु कोरिया में हुए आक्रमण के समर्थन में इन्होंने इतनी उत्सुकता दिखाई कि उनकी उल्टी-सीधी बातें उपहासास्पद मालूम होने लग गई।

इसी नीति ने इसी निरन्तर परस्पर विरोधिनी नीति ने साम्यवादियों का नाश कर दिया। जैसा कि अब्राहम लिंकन ने एक बार कहा था: कुछ लोगों को थोड़े समय के लिये मूर्ख बनाया जा सकता है, किन्तु सब लोगों को सदैव मूर्ख बनाना सम्भव नहीं है। साम्यवादी पाखण्ड के वश में आ जाने वालों की संख्या शीघ्रता से घट रही है।

स्तालिनवाद का अर्थ

इन सब बातों के अतिरिक्त स्वयं साम्यवादियों के सर्वेसर्वा ने अपनी असलियत स्पष्ट करदी है। कोरिया, पूर्वी योरोप की घटनाओं को देखते हुये "स्तालिनवाद" को जनतन्त्र, व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का पर्यायवाची कहना बेकार है। यह कहना कि "स्तालिनवाद" कामकाजी और कृषक के कल्याण का अभिलाषी है, अनर्गल प्रलाप प्रतीत होता है। युद्धपूर्ण की परिस्थितियों के प्रसंग में यह प्रचार कि "स्तालिनवाद" का अर्थ शांति है, केवल भ्रान्ति के अतिरिक्त क्या है? सच तो यह है कि "स्तालिनवाद" समस्त संसार के सामने अपने सच्चे रूप में प्रकट हो गया है। इस बात में जितना कम सन्देह आज है उतना पहले कभी भी नहीं था कि पश्चिम यूरोपीय साम्यवादी जिस छल कपट की छत्रछाया में अनुचरों जैसा आचरण कर रहे हैं, जिस छल-कपट के वे शिकार हैं, उसे उनके अधिकांश साथी नागरिक गहरी घृणा की दृष्टि से देखते हैं।

विदेश के अनुचर

साम्यवाद का पतन प्रारम्भ हो गया है और जारी रहेगा। निस्सन्देह साम्यवादी नेतागण पतन की क्रिया पर प्रतिबन्ध लगाने के भरसक प्रयत्न करेंगे। उदाहरणार्थ, इटली में इस समय वे मार्क्सवाद के समस्त सिद्धान्तों पर, "वर्गयुद्ध" की बातों पर, पर्दा डाल रहे हैं। उनकी नवीनतम घोषणा में सब इटालियनों से, चाहे वे अमीर हों या गरीब, 'बूर्जुआ' हों या 'प्रोलेटेरियट,' साम्यवादी दल को उसके शांति स्थापना के प्रयत्नों में बल प्रदान करने की अपील की गई है। अपील इतनी भद्दी है कि उसकी सफलता की आशा नहीं की जा सकती।

और भविष्य? इन्हें अब यह आशा नहीं है कि वे वैधानिक कृत्यों से अधिकार प्राप्त कर सकेंगे या क्रान्ति द्वारा अधिकार छीन सकेंगे। कारण, जैसा कि वे स्वयं ज़ोर देकर कहते हैं, इनमें से कोई भी मार्ग जनता के समर्थन के बिना सम्भव नहीं है।

अब क्या करें?

साम्यवादी क्रान्ति अनिश्चित समय तक के लिए स्थगित कर दी गई है। ऐसी परिस्थितियों में क्रान्तिकारी दल क्या करे?

इसका जवाब जनरलिसिमो स्तालिन के हाथों में है। यदि स्तालिन पश्चिम विरोधी 'ठंडे युद्ध' की समाप्ति का निश्चय करते हैं तो पश्चिम के साम्यवादी भी ठंडे पड़ जाएंगे। किन्तु जब तक यह निरस्त्र युद्ध नहीं रुकता तब तक पश्चिम के साम्यवादी विनाश की उन सब विधियों का उपयोग करना चाहेंगे जो एक छोटे अल्पमत को प्राप्य हैं। वे औद्योगिक अशांति की अग्नि प्रज्वलित करने के प्रयत्न करेंगे, वे विध्वंसक कृत्यों का आश्रय लेंगे। और कौन जाने हत्या भी इन विध्वंसक कृत्यों में सम्मिलित की जाए? यदि नये साम्यवादी सिद्धांतों के अनुसार यह मलाया में मुमकिन है तो भला योरप में क्यों नहीं? संक्षेप में हम कह सकते हैं कि साम्यवादी लोग गहरी कठिनाइयां उत्पन्न कर सकते हैं और करेंगे। यदि इन्होंने बहुत ज्यादा उत्पात किया तो इनके प्रति कड़ाई जरूरी हो जाएगी। ... किन्तु इन सब निर्वाचनों का निष्कर्ष यह है कि अब पश्चिमी योरप में साम्यवादियों को विदेश की सेवा में नियुक्त उपद्रवकारी दल मात्र मानना चाहिए। अब वे न एक राजनैतिक दल हैं, न क्रान्तिकारी भय।

नव प्रकाशन

यों तो हिन्दी में गांधीजी के साहित्य-प्रकाशन के लिए सस्ता साहित्य-मण्डल ने बहुत पहले से ही प्रसिद्धि प्राप्त की हुई है, किन्तु उनके अमर बलिदान के बाद मंडल ने इस दिशा में विशेष प्रगति की है। महात्मा गांधी के विचारों से कोई सहमत हो या असहमत, किन्तु यह निश्चित है कि उनके विचार मननीय और पठनीय अवश्य हैं। विशुद्ध राजनैतिक नेता ही नहीं थे, वे महान् विचारक भी थे। वे समय के प्रवाह से अपने को तटस्थ करके प्रत्येक प्रश्न पर मौलिक दृष्टि से विचार करते थे। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने स्वतन्त्र दृष्टि से विचार किया है। अर्थशास्त्र, शिक्षा, चिकित्सा, समाज, धर्म, राजनीति सभी क्षेत्रों में उन्होंने एक नया दृष्टिकोण उपस्थित किया है। इसलिए सस्ता-साहित्यमंडल ने उनके सभी प्रकाशनों और लेखों को एक माला में प्रकाशित करके और सर्वसाधारण के लिए सुलभ करके बहुत सुन्दर कार्य किया है।

इस समय हमारे सामने गांधी साहित्य के ३रा, ४था, और ५वां खंड उपस्थित हैं, जिनके मूल्य क्रमशः ४)२) और २) हैं तीसरा खंड गीता माता के नाम से प्रकाशित हुआ है।

भगवद्‌गीता के प्रति हिंदुओं में जो अपार श्रद्धा है, गांधीजी उसके मूर्तिमान् रूप थे। उन्होंने एक दफा एक ईसाई मित्र को कहा था कि यदि बाइबिल में पर्वत संदेश जैसी उत्तम शिक्षा है तो गीता का प्रत्येक अध्याय उसके समान है। गांधीजी ने गीता के निष्काम कर्मयोग को अपने जीवन में घटाने का प्रयत्न किया था। एक योग्य लेखक के शब्दों में उन्हें ही निकट से देख कर गीता के 'स्थितप्रज्ञ' का अर्थ समझा जा सकता है। यही कारण है कि प्राचीन धर्मशास्त्रों व संस्कृत का पर्याप्त ज्ञान न होते हुए भी वे गीता पर बहुत कुछ लिख सके हैं। प्रस्तुत खंड में गीताबोध, अनासक्ति योग, गीता पदार्थ कोश, और गीता प्रवेशिका नामक गांधीजी की चार पुस्तकों के अतिरिक्त मूल गीता भी दी गई है। गीताबोध में गीता का सरल भाषा में अध्यायक्रम से सार दिया गया है। अनासक्ति योग में गीता का सरल हिन्दी में अर्थ है, गीता प्रवेशिका में गीता के मुख्य-मुख्य श्लोकों का चयन है, जो गीता के सारभूत रत्न कहे जा सकते हैं। गीता पदार्थकोश में गीता के शब्दों के अर्थ दिये गये हैं और इसमें श्री कालेलकर आदि से सहायता भी ली गई है। गांधीजी — गीता के कृष्ण को अनैतिहासिक कल्पित व्यक्ति मानते हैं और महाभारत के युद्ध को दैवी और आसुरी प्रवृत्तियों का संघर्ष मानते हैं, इसीलिए गांधीजी गीता के युद्ध से भी अहिंसा का उपदेश लेते हैं। यह लोकमान्य तिलक से उनका गहरा मतभेद है, किन्तु इसी कारण गांधी जी का दृष्टिकोण और भी अधिक विचारणीय हो जाता है। गीता सम्बन्धी सब पुस्तकें मोटे टाइप में हैं, जिससे कम शिक्षित लोग भी उसे पढ़ सकें। गीता माता नामक प्रकरण में गांधीजी के गीता सम्बन्धी फुटकर विचारों का संग्रह है।

गांधी साहित्य के चतुर्थ खंड में १५ अगस्त १९४७ से ३१ जनवरी १९४८ तक अपने (अमर बलिदान) तक के लेखों का संग्रह है। देश के सामने उपस्थित समस्याओं पर गांधीजी ने जो लेख लिखे थे, उनका उनका क्षेत्र बहुत विस्तृत है।

पन्द्रह अगस्त की स्वतन्त्रता, सच्चा इस्लाम, दुष्ट दोष, हिन्दुस्तानी गवर्नर, गोरक्षा, कलकत्ते व दिल्ली के दंगे, बिहार बिहारियों के लिए, मंत्रियों के वेतन, शरणार्थियों का सवाल, राष्ट्रीय स्वयं सेवक-संघ, खादी, सत्य, अहिंसा, देश का भाषाक्रम के आधार पर विभाजन, उपवास, मिश्रित खाद, सोमनाथ के दरवाजे, कांग्रेस का प्रस्तावित विधान आदि बीसियों विषय इन सौ लेखों में आ गये हैं। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में वे किस दिशा में विचार कर रहे थे, यह इन लेखों से स्पष्ट हो जायगा।

पांचवां खंड धर्मनीति के नाम से प्रकाशित हुआ है। इसमें गांधी जी की 'नीतिधर्म' 'सर्वोदय' 'मंगल प्रभात' और 'आश्रम वासियों से'— ये चार पुस्तिकाएं संगृहीत हैं। पहिली दो पुस्तकें दक्षिणी अफ्रीका में और दूसरी दो यरवदा जेल में लिखी गई थीं। इनमें से सर्वोदय सबसे अधिक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध पुस्तक है। यह रस्किन की 'अनटू दिस लास्ट' का अनुवाद है। गांधी जी के दृष्टिकोण पर इसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है। मंगल प्रभात में सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य आदि विषयों पर १५ लेख हैं, तो आश्रमवासियों से में विविध विषयों पर २२ लेख हैं, जिनमें से दो ज्योतिष सम्बन्धी भी हैं। यह पुस्तक भी मोटे टाइप में छपी है।

तीनों पुस्तकें सजिल्द हैं और बढ़िया छपी हुई हैं।

—कृष्ण

आलोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियां आनी आवश्यक हैं।

सम्पादक

चारों धाम की यात्रा— लेखक श्री विद्यामणि शर्मा उपाध्याय। प्रकाशक रघुनाथदास पुरुषोत्तम अग्रवाल। छत्ता बाजार, मथुरा, मू० २)

धर्म प्रधान भारत देशमें उसके तीर्थ स्थानों का सर्वाधिक महत्व है। प्रति वर्ष श्रद्धालु भक्त सहस्त्रों की संख्या में भारत के कोने कोने में घूम कर अपनी भक्ति भावना का परिचय देते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने पौराणिक दृष्टिकोण के आधार पर भारत की चारों दिशाओं में स्थित मन्दिरों, तपोवनों तथा अन्यान्य धार्मिक क्षेत्रों का सचित्र इतिहास क्रमबद्ध रूप में दिया है, जो देश की अधिकांश जनता के लिए एक मनोरंजक अध्ययन सामग्री है। पुस्तक की उपादेयता में संदेह न करते हुए इसमें एक कमी अवश्य खटकती है। वह है तीर्थ स्थानों के महात्म्य के सम्बन्ध में। तीर्थ-स्थानों का महात्म्य बताते हुए लेखक का दृष्टिकोण विशुद्ध पौराणिक ही रहा है। निःसन्देह पुराण भारतीय विचारधारा को समझने में तथा दैनिक जीवन में स्फूर्ति प्राप्त करने में विशेष सहायक हैं, किन्तु अतिरंजित तथा अलंकारिक शैली में होने के कारण वे जनता के लिए दुर्बोध हो जाते हैं तथा बुद्धिजीवी तर्कशील जनता को सन्देह में डाल देते हैं। पुराण में वर्णित अधिकांश घटनायें अधिकल रूप से चित्रित करने में असंगत प्रतीत होती हैं। फिर भी लेखक का प्रयत्न सराहनीय है और पुस्तक कुछ नहीं तो तीर्थ स्थानों का इतिहास अवश्य मिलता है।

—सुरेश

कहानी

प रा या

★ श्री ओम्प्रकाश सक्सेना

माँ की आंखों में आंसू थे और पिता के ओठों पर फीकी मुस्कराहट। तांगे के एक कोने में मुंह छिपाये ऊषा थी और विजय पासने में पड़ा सो रहा था। इन सब को छोड़ते हुये मुझे दुःख हुआ, मेरी आंखों में आंसू उमड़ आये। मन में आया मना कर दूं कि मैं ताऊजी के साथ नहीं जाता पर पिता का मन था। उस समय मैं कुछ नहीं समझ सकता था कि मां-बाप मुझे धन के अभाव के कारण भेज रहे हैं तथा मेरा भविष्य उज्जवल करने के लिए। उस समय तो मैं केवल इतना समझ पाया कि मां-बाप मुझ से रूठ गये हैं, रुष्ट हैं और इसीलिए मुझे कुछ कहने का साहस न होता था।

ताऊजी पिताजी के ममेरे भाई थे और [illegible] महीने से हमारे घर में रह रहे थे। [illegible] मुझ से बहुत प्यार करते थे, मुझे [illegible] दई देते, अच्छी सी पेंसिल और चित्र [illegible] और ऊषा को मैं वे चीजें दिखा कर [illegible] ता था। इतना प्यार करने पर भी [illegible] उनके साथ नहीं जाना चाहता था। [illegible] ऊषा और विजय साथ चलते तो [illegible] रोते हुए मैं सहर्ष चला जाता। परन्तु [illegible] नहीं दी और मेरी इच्छा की किसने [illegible] की। पिता ने घूर कर मेरी ओर देखे तो मेरे आंसू भी सूख गये और मैं [illegible] अब मसोस कर रह गया। [illegible] से तो बात करने का भी साहस न [illegible] था, विजय को चूमने का भी अवसर न मिला।

जब तक तांगा नहीं चला रोके हुए आंसू रुके रहे, पर जब तांगा चला और मैंने देखा कि पुराना घर छूट रहा है, मां-बाप ऊषा और विजय बिछुड़ रहे हैं तो मैं मिला का पूरना भी भूल गया और मैं फूट-फूट कर रोने लगा। पर तांगा चल दिया था।

रोने में अपने को मैं इतना भूल गया था कि मुझे पता नहीं चला कब [illegible] आ गया। जब ताऊजी ने गोदी में लेकर मुझे उतारा तो मुझे ज्ञात हुआ कि मैं घर से दूर आ चुका हूं और शीघ्र ही और दूर जाने वाला हूं। गाड़ी का [illegible] हुआ तो वह पुराना [illegible] नहीं था, गाड़ी चलने की वह [illegible] भी नहीं थी। जब गाड़ी चल [illegible] पड़ी तब [illegible] वह पराया भाव नहीं था। अन्य [illegible] हो कर, मैं भागते हुए हरे भरे खेतों और दौड़ते हुए पेड़ों की ओर देखता रहा और देखते ही देखते न जाने कब सो गया।

× × ×

और जब ताऊजी के [illegible] के झकोरे से जागा तो रात हो चुकी थी। ताऊजी ने कहा, "विनोद! घर आ गया।" मैं चौंक पड़ा। घर! अपना घर! पर वह तो [illegible] था। अपने घर से तो मैं मीलों दूर तक पहुंच चुका था।

टमटम में बैठ कर मैं ताऊजी के घर पहुंचा। अनजाना घर था वह, सूना और डरावना। मुझे विश्वास हो गया कि मैं मां-बाप से ऊषा और विजय से बिछुड़ चुका हूं और यह सोच कर रोना आया किन्तु रोने की मुझ में शक्ति नहीं थी। शीघ्र ही मुझे फिर नींद आ गई।

नींद आ गई, नींद का भी अपना समय है इससे अधिक वह हमें शान्ति नहीं दे सकती। प्रातःकाल जागा तो देखा वह पुराना वातावरण नहीं है, वे पुराने दृश्य नहीं हैं और मुझे नव-जीवन का आभास मिलने लगा, ज्ञात हो गया कि मैं वस्तुतः पुराने सम्बन्धियों से और पुराने जीवन से बहुत दूर आ गया हूं। दो-तीन दिन तक माता-पिता की, भाई-बहन की खूब याद आई और मैं रोया भी खूब। ताऊ जी के पुचकारने पर भी चुप नहीं हुआ, पर रोया भी अधिक नहीं गया। दिन बीते और जीवन की बीती घटनाओं पर विस्मृति का परदा गिरता गया और पुराने बन्धन ढीले होते गये। आने के पांच-छः दिन बाद ताऊ जी ने मुझे स्कूल में भरती करा दिया था और वहां मेरा मन भी लग जाता था।

मेरे जीवन में अचानक ही महान् परिवर्तन हुआ था। खेलने के लिये मुझे नये खिलौने मिले, रेल और मोटर जिसके लिये मैं पिता से बहुत हठ करता था। एक छोटे-से साधारण मकान को छोड़ कर मुझे एक विशाल भवन मिला रहने को और सोने को खाट के स्थान में पलंग और ऊषा की गुड़ियों के बदले रेल और मोटर। सब कुछ नया था, नवीन वातावरण में कोई परिचित वस्तु नहीं थी। पुराने मकान की दीवारें मेरे हाथ से लिखी हुई दो-तीन वर्ष की पुरानी लकीरों और हाथ ही में स्थान-स्थान पर लिखे मेरे नाम से घिस-पुत कर परिचित हो गई थीं, सहेली-सी बन गई थीं और अकेले में उन्हीं से मन लग सकता था। परन्तु ताऊ जी के घर में यह सहारा भी नहीं था, और था ही क्या? ऊषा नहीं थी, विजय नहीं था और न ही स्कूल के वे पुराने साथी, जिनके साथ मैं स्कूल जाता और लौटता, रेल के करिश्मे बनाता और मिटाता था।

नया जीवन प्रारम्भ में मुझे अप्रिय लगा, परन्तु धीरे-धीरे मैं उसका अभ्यस्त हो चला और मां-बाप भाई-बहिन को भी भूलने सा लगा। ताऊ जी के पास मुंह लटकाये बैठे रहना अब मुझे उतना नहीं अखरता था जितना पहिले।

मकान के सामने वाले बाग में एकान्त वास भी मुझे प्रिय हो चला था।

छः मास उपरान्त पिता जी मुझे देखने आये। ताऊ जी से सुना, 'विनोद पढ़ने में तेज है' तो मेरी कमर ठोकी और कहा, "परीक्षा समाप्त होने दो तब मैं कुछ दिन को साथ ले चलूंगा। साथ चलने के लिये मेरे मन में अधिक उत्साह नहीं था; दूर रह कर पिता की मार से डरने लगा था। मैं चुप रहा। पिता जी चले गये और मेरी आंखों से केवल दो आंसू ही ढरके।

परीक्षा समाप्त होने पर पिता जी मुझे एक महीने के लिये घर लाये। विजय पैरों चलने लगा था, ऊषा दुर्बल हो गई थी, पर उसके स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं मिला। वह अब भी मुझे पीट देती थी। हां, मां-बाप के व्यवहार में बड़ा अन्तर पाया। मेरी विशेष चिन्ता की जाती; दूध पीने को मिलता और अस्वच्छ कपड़े न पहिनने दिये जाते थे। स्वयं मुझमें परिवर्तन हो गया था। मैं एकान्त प्रेमी और पढ़ने वाला लड़का बन गया था। इस परिवर्तन का अर्थ और महत्व मैं तब न समझ पाया।

महीने बाद मैं फिर ताऊ जी के पास लौटा। लौटते समय दुःख हुआ पर उतना नहीं जितना पहिली बार हुआ था। ऊषा ने स्नेह से पूछा, "तू जा रहा है फिर!"

मैंने तपाक से उत्तर दिया, "और क्या नहीं? पढ़ना भी तो है।" ऐसा कहने में मुझे गर्व हुआ और व्यथा दब गई।

अगले वर्ष मैं फिर मिलने आया माता पिता से और प्रतिवर्ष आता रहा। प्रतिवर्ष माता-पिता से स्नेह भी घटता गया। सात वर्ष बीत चुके थे, मां-बाप से बिछुड़े हुए मैंने मैट्रिक की परीक्षा दी थी और इन सात वर्षों में मैं बहुत कुछ सोचने के योग्य हो गया था और सोचा भी मैंने बहुत कुछ। मैंने इस बात पर बहुत विचार किया कि मां-बाप ने मुझे अपने से पृथक क्यों किया। विभिन्न धारणायें उत्पन्न होतीं, सोचता ताऊ जी का मन लगा जाये इसलिए या मेरी शिक्षा के लिए। दोनों धारणाएं मुझे मानसिक कष्ट देती थीं। ताऊ जी का बहुत ख्याल किया गया, परन्तु मेरे मन का? कुछ नहीं। यह भावना मन में आते ही विकल हो उठता। शिक्षा प्राप्ति एक आवश्यक कार्य है। परन्तु क्या जो गरीब हैं, जो शिक्षा पर स्वयं धन व्यय नहीं कर सकते। वे अपनों को भूल जायें, और जिनके पास धन है वह दूसरों को भी अपना ला। भिन्न भिन्न बातें सोचता पर और संतुष्ट नहीं पाता था। मां-बाप को मैं स्वयं तो भूले हुए था पर जब ही मेरे मन में ध्यान आता कि उन्होंने स्नेह-हीनता के कारण मुझे दूर रख छोड़ा है तो मेरा हृदय व्यथित हो उठता।

मां-बाप दो व्यक्तियों से तो मुझे कोई विशेष प्रेम नहीं था। मुझे अवसर ही नहीं दिया गया ऐसा कहने का— पर मां-बाप दो शब्दों से मुझे बहुत आकर्षण था। मां-बाप का मूल्य स्वयं तो मैंने नहीं समझा था पर कुछ पढ़ा था, कुछ देखा और कुछ सुना था और मैं अनुभव करता था कि मेरा कुछ मुझ से छिन गया है, पर क्यों? इसका मेरी बुद्धि के पास उत्तर नहीं था। उत्तर के लिए मुझे निराश नहीं होना पड़ा, उत्तर मुझे मिल गया पर एक अनोखे रूप में।

मैट्रिक का परीक्षाफल आ गया था। मेरे प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर ताऊ जी गद्‌गद् हो गये थे। उन्होंने मुझे अपने पास बुलाया, अपने पलंग पर बिठाया और कहा, "विनो! मैं आज तुम्हें कुछ बताऊंगा।"

मैं, मौन था, आश्चर्यान्वित और जिज्ञासु।

उन्होंने कहना आरम्भ किया, "आज मैं बहुत प्रसन्न हूं कि तुम योग्य

[शेष पृष्ठ २० पर]

पाकिस्तान रुपये का मूल्य क्यों कम नहीं करता ?

[पृष्ठ ११ का शेष]

रु० के माल में १७ करोड़ रु० का सिर्फ जूट था। जूट के ही कारण पाकिस्तान का भारत के साथ व्यापार उसके पक्ष में था। पाकिस्तान से भारत में उसके आने पर कोई पाबन्दी नहीं थी। परन्तु पाकिस्तान ने १८ करोड़ का कपड़ा लिया, जब कि विभाजन से पहले इस प्रदेश में ६० करोड़ गज कपड़ा आयात होता था। भारत के साथ पाकिस्तान का व्यापार अनुकूल होने के बावजूद उसका व्यापार प्रतिकूल था। यथाः—

अन्य देशों के साथ कमी—६६ करोड़ रु०
भारत के साथ बचत —३४ ,, ,,

विशुद्ध कमी —२६ ,, ,,
कुल आयात—१३६+८६=२२२ ,, ,,
कुल निर्यात—७६+११६=१९६ ,, ,,

इससे स्पष्ट है कि पाकिस्तान का व्यापारिक सन्तुलन उसके प्रतिकूल था। भारत द्वारा रुपये का अवमूल्यन करने के साथ पाकिस्तान ने भारतीय वस्त्रों का पाकिस्तान में आना रोक दिया, और भारतीय माल पर आयात कर बढ़ा दिया। पाकिस्तानी माल का दाम बढ़ने से भारतीय मिलों ने उसका जूट और कपास लेने से इन्कार कर दिया। पाकिस्तान पर भारत का ३०० करोड़ रु० कर्ज है। १९५२ से पहले मगर उसकी अदायगी शुरू नहीं होगी। शरणार्थियों द्वारा छोड़ी गई सम्पत्ति इसके अतिरिक्त है। इस अवस्था में यह मानना कि पाकिस्तान ने विशुद्ध कारणों से पाक-रुपये का अवमूल्यन नहीं किया, आत्मवंचना करना होगा।

भूल गया

पाकिस्तान भूल गया कि जूट और कपास पर उसका एकाधिकार नहीं। भारत भी जूट उत्पन्न करता है, यद्यपि वह उसकी आवश्यकता के लिए पर्याप्त नहीं होता। परन्तु अवमूल्यन न करने से पाकिस्तान के जूट का भारत खरीदार नहीं रहा। जूट का भाव गिर कर १२ रु० मन तक पहुंच गया। भारतीय जूट का दाम पाकिस्तानी जूट के मुकाबले विदेशी बाजार में नीचा था। फलतः डालर बाजार पाकिस्तानी जूट के लिए बन्द हो गया। भारत पहले ही खरीदार नहीं रहा था इसके कारण व्यापारिक गतिरोध उत्पन्न हो गया। विदेशी पूंजी का प्रसार भी पाकिस्तान के प्रति अभिमुख नहीं हुआ, क्योंकि अमरीकी पूंजी लगाने वाले को पाकिस्तान की अपेक्षा अन्यत्र स्टर्लिंग क्षेत्र में ३० प्रतिशत अधिक मिलता है।

भूल भरी

पाकिस्तान की मुद्रा नीति, पाकिस्तान के हितों के विपरीत है। यह सिंध के भूतपूर्व प्रधान मंत्री और सिंध मुसलिम लीग के अध्यक्ष श्री खुरों ने स्वीकार किया है। अवामी लीग के संस्थापक श्री सुहरावर्दी ने भी पाकिस्तानी रुपये का अवमूल्यन करने का बलपूर्वक आग्रह किया है। पाकिस्तान को जीवित रखने के लिए भारत पाक रुपये का सम मूल्य रहना आवश्यक है। दोनों के बीच सभी साधारण व्यापार अप्रतिहत रूप से जारी रह सकता है। पाकिस्तान यदि २ शि. २ पे.का विनिमय दर कायम रखने में अब तक सफल हुआ है, तो इसका मुख्य कारण भारत का पाकिस्तान के प्रति मैत्री भाव ही है। प्रश्न यह है क्या पाकिस्तान द्वारा भारत के प्रति विरोधी और शत्रुतापूर्ण रवैया रखने पर भी भारत का उसके प्रति स्नेह पूर्ण भाव रखना क्या उचित है।

कुछ विलक्षण दानपत्र !

मृत्यु के पश्चात अपनी सम्पत्ति की व्यवस्था सम्बन्धी कागज को विल कहते हैं। बहुधा यह विल दान-पत्र के रूप में होता है। मृत्यु के समय मनुष्य की क्या मानसिक अवस्था रहती है और वह कैसा आदमी था यह बात उसके विल से आसानी से जानी जाती है। हमारे देश में विल की प्रथा उतनी नहीं है। कारण इसका शायद यह है कि हमारे यहां उत्तराधिकारी को एक मान्य व्यवस्था मिताक्षरा अथवा दाय भाग कानूनों के रूप में है। पश्चिमीय देशों में ऐसा कोई नियम वर्तमान न होने के कारण मरने वाले को विल कर जाना होता है। जो हो।

पश्चिमीय देशों में कई विलक्षण विल प्राप्त होते हैं। जैस्पर काक्स नामक एक व्यवसायी था। वह जीवन भर किसी भी प्रकार की विलक्षणता प्रदर्शित नहीं कर सका पर मरने के बाद उसकी विलक्षणता प्रकट हुई। उसने अपने विल में अपनी स्त्री को केवल १ डालर दान किया था। बाकी सारा रुपया उसने अपने सम्बन्धियों को दिया था। पश्चिमीय देशों में सबसे पुराना विल मिश्र देश के खाडुन नामक एक व्यक्ति का माना जाता है। यह विल इसकी कब्र में से निकाला गया है।

कहा जाता है कि यह ईसा से २२५० साल पहले किया गया था। इस विल में सम्पत्ति की पूरी सूची है, उस पर दानकर्ता का हस्ताक्षर भी है और दो साक्षियों के हस्ताक्षर भी। यह विल ऐसे कानूनी ढंग का है कि आज भी अदालत में उपस्थित किये जाने पर अदालत को उसे मानने में आपत्ति न होगी।

१७२० में एक अंग्रेज किसान ने अपना विल किया। इसमें उसने लिखा था, मैं मर नहीं रहा हूं, मैं सोने जा रहा हूं। तीस साल तक सोता रहूंगा। इस लिए हमारी लाश को एक कौफिन (लाश रखने का काठ का बक्स) में बन्द करके हमारे खलिहान में रखा जाय और उसी के बगल में हमारे घर की चाभी रख दी जाय कि जब मैं नींद से जगूं तो वह हमें मिल जाय। तीस साल तक सचमुच उसकी सम्पत्ति किसी ने स्पर्श नहीं की। सन् १७५१ तक जब चाभी पड़ी रही तब किसान के भतीजे ने उसे अपने अधिकार में किया।

जीनरोड नामक एक अंग्रेज था। वह विल कर गया कि हमारी खोपड़ी को हेमलेट के खेल में यरिक की खोपड़ी के एवज में दिखाया जाय। आज तक उसकी खोपड़ी लन्दन के एक थियेटर वाले के पास सुरक्षित है और हैमलेट के खेल में दिखाई जाती है। एक फ्रांसीसी महिला अपने विल में लिख गई थी कि उसकी कब्र पर नित्य नये नये प्रकार के पकवानों का नाम चढ़ाया जाया करे। एक फ्रांसीसी यह विल कर गया कि उसकी सम्पत्ति बेचकर उससे हर साल सूअरों की रेस कराई जाय और उस रेस में जो जीते वह आगामी साल तक उसके नाम पर मातम करे और उसे इसके लिए २०० फ्रांक दिए जायें।

अस्पताल में मरने वाला इंग्लैंड का एक रोगी अपने धन में से १०० पौंड एक नर्स को दे गया था जिसने उसकी सुश्रूषा की थी। वारेन हेस्टिंग्स नामक व्यक्ति अपनी सम्पत्ति भगवान को दे गया था क्योंकि वही उसके वास्तविक उत्तराधिकारी थे।

न्यूजीलैंड की एक धनी महिला ने विल किया है कि उसकी सम्पत्ति इजरायल राज्य के प्रथम राजा को मिले। ब्रिटेन की एक महिला ने हाल ही में अपने सभी मकान किरायेदारों को दे दिये हैं।

एक व्यक्ति विल कर गया कि उसका धन अमुक व्यक्ति ले, मगर वह सदा सफेद सूती वस्त्र पहना करे, कभी गर्म या अन्य रंग के वस्त्र वह धारण न करे।

पोलैंड का एक लुहार जालेस्की एक ऐसा विल लिख गया है जो अभी कुछ दिन तक लोगों को चक्कर में डाले रहेगा ऐसा ज्ञात होता है। उसने जो विल का कागज तैयार कराया उस पर लिखा "मेरे मरने के बाद इसे खोला जाय।" उसकी मृत्यु पर जो लिफाफा खोला गया तो उसके भीतर दूसरा लिफाफा मिला जिस पर लिखा था, मेरे मरने के ६ सप्ताह बाद इसे खोला जाय। ६ सप्ताह बाद जब लिफाफा खुला तो लिखा मिला कि ६ महीने के बाद खोला जाय। फिर लिखा कि ६ साल बाद खोला जाय—अब उसके सम्बन्धी हताश हो गये हैं। वे समझने लगे हैं कि शायद उन्हें कुछ मिलेगा नहीं क्योंकि उन्हें विश्वास है कि अब इसके भीतर ६० साल बाद लिखा हुआ मिलेगा।

कभी कभी भयपूर्ण विल भी मिल जाते हैं। एक व्यक्ति न्यूयार्क में अपनी सम्पत्ति की कीमत २० हजार डालर एक पुस्तकालय खोलने के लिये दे गया। पर वह लिख गया कि उस पुस्तकालय में औरत न जाने पावें।

एक बात और। यह न समझना चाहिये कि सभी विल बाजाप्ता सही गवाही के साथ कागज पर लिखे हुए ही होते हैं। ना, विचित्र विचित्र अवस्था में विचित्र ढंग से किये गये विलों की संख्या भी काफी रही है और उन्हें भी मानना पड़ता है।

विगत महायुद्ध में एक मरते हुए सैनिक ने एक अंडे के खाली खोल पर केवल इतना लिख दिया था, मेरे पास जो कुछ है वह मे-मेरी स्त्री पावे। वह अंडा अदालत में पेश हुआ और मे को उस सैनिक की सम्पत्ति मिल गयी।

केवल आवश्यकता ही नहीं, झक में आकर भी मनुष्य विचित्र प्रकार से विल कर जाता है। एक बढ़ई अपने सोने के कमरे की किवाड़ पर अपना विल खोद-कर गया था। उसके मरने के बाद उस किवाड़ को उखाड़ कर अदालत में पेश किया गया और उसमें लिखे अनुसार व्यवस्था अदालत ने करायी। एक बार एक व्यक्ति एक गोदना वाले की दुकान पर गया और उसे अपनी पीठ पर अपना विल गोदने के लिए कहा। गोदने वाले ने कहा कि यह काम नाजायज होगा क्योंकि मर जाने के बाद उसको सुरक्षित कैसे रखा जायगा इस आदमी ने विल में यह भी लिखवाया कि मर जाने के बाद उसकी पीठ का चमड़ा उधेड़ लिया जाय और उसे सबूत के लिए रखा जाय। इसके बाद उसका क्या हुआ पता नहीं।

दानपत्र और विल जनता के लिए अच्छे मनोरंजन और कुतूहल का विषय भी है। इटली में कोरकोट्टा पोर्सेलस का दानपत्र नामक हास्य लेख प्रसिद्ध है जो लड़के अपनी कोर्स की किताब में भी पढ़ते हैं। इस लेख में ऊपर वर्णित नाम के एक शूकर का दानपत्र अंकित किया गया है। दानपत्र यों है:—

"मैं कोरकोट्टा पोर्सेलस नामक शूकर अपनी जीवितावस्थामें अपनी इच्छा से बिना किसी जोर दबाव के अपनी सभी चल और अचल सम्पत्ति का दान निम्न हिसाब से कर जाता हूं। मेरी मूछ के बाल चमारों को मिलें, मेरे कान बहरों को दिये जायें, मेरी जीभ वकीलों को दी जाय, मेरी चर्बी पेटुओं को दी जाय, मेरा मांस नामर्दों को खिलाया जाय और उस बधिक को जो मेरा गला काटेगा मेरे शरीर की नसें दी जायें ताकि उनकी रस्सी बनाकर वह उसी के सहारे फांसी लगावे।"

———

(पृष्ठ १० का शेष)

रहे हैं। फसल की रक्षा के लिए कभी टिड्डियों के, तो कभी बन्दरों के संहार की योजनाएं बनती हैं। विज्ञान की दृष्टि से तो बन्दर ही मनुष्य के पूर्वज ठहरे, पर उन्हें ही मारने के लिए इनाम दिया जा रहा है। यह ध्यान रखना चाहिये कि प्राणियों का संहार करके मनुष्य कभी सुखी नहीं रह सकता।

पराया

[पृष्ठ १० का शेष]

होते जा रहे हो, तुम— जिसको मैंने पुत्र माना है, गोद लिया है। मैं चाहता हूं तुम योग्य बनो, सुखी बनो। मेरी सम्पत्ति के तुम ही अधिकारी हो पर योग्य बनने का तुम पर उत्तरदायित्व है और मुझे आशा है कि तुम योग्य बन कर मुझे बुढ़ापे में सुखी रखोगे।"

ताऊजी के शब्दों से मैं चकित रह गया; उन शब्दों ने मुझे मर्माहत कर दिया। क्यों वह पितृत्व जिस पर मेरा अधिकार था मुझसे छीना गया? इसका उत्तर मुझे मिल गया। मुझे पहली बार ज्ञात हुआ कि ईश्वरीय बन्धन तोड़ कर मुझे मानवी बन्धनों में बांधा गया है। मन में शंका हुई कि निर्धनता के कारण और उत्तरदायित्व का भार हल्का करने के लिए मां-बाप ने मुझे दूसरे को दे डाला और ताऊजी की प्रसन्नता देख कर मुझे विस्मय भी हुआ कि मनुष्य कृत्रिम और झूठे अधिकारों पर भी प्रसन्न हो सकता है। मुझे दुःख हुआ। आंखों में आंसू उमड़े। पर भाग्य का निर्णय तो हो चुका था, मेरे भाग्य का निर्णय और मुझसे पूछे बिना! रोना व्यर्थ था; मैं आंसू पी गया।

आंसू पी गया, किन्तु उदासी बनी रही। उस दिन से मैं गम्भीर और विरक्त सा हो गया। संसार में जितने बन्धन हैं, सब बनाये जाते हैं, मिटाये जाते हैं। मैं भूलने लगा कोई मेरी मां थी, मैं भूलने लगा कोई मेरा बाप था और यह समझने लगा कि संसार में कोई अपना नहीं है।

छः वर्ष और बीते; मां-बाप के यहां मैंने जाना छोड़ दिया था। कभी पत्र द्वारा अपने हाल से सूचित कर देता और उनका समाचार प्राप्त कर लेता। तीन वर्ष पहिले अवश्य मैं ऊषा के विवाहोत्सव पर गया था। इसके अतिरिक्त कभी मिलना न हो पाया छः वर्षों में।

इन छः वर्षों में मैंने एम० ए० भी पास कर लिया। ताऊजी मुझसे बहुत प्रसन्न थे, मुझसे बहुत सी आशायें करते थे। मैं नौकरी ढूंढने की चिन्ता में होता तो कहते दुःखी होकर, "इतनी मेरी सम्पत्ति है क्या तुम सन्तुष्ट नहीं।" पर उन्हें मेरे मन की अवस्था का क्या ज्ञान था? वह रोगी थे, वृद्ध थे, मैं उन का हृदय नहीं दुखाना चाहता; उनकी बात मानने को तैयार हो जाता किंतु चुपके-चुपके नौकरी पाने का प्रयत्न करता।

पुराना जीवन विस्मृत हो चुका था, पुराने सम्बन्धी भी बहुत कुछ विस्मृत हो चुके थे पर एक दिन विस्मृति का परदा हटा। मुझे एक पत्र मिला जिसमें एक अनजानी लिखावट में लिखा था कि दीर्घकाल के रोग के उपरान्त मेरे पिता की मृत्यु हो गई।

मेरे पिता की मृत्यु हो गई! बहुत बीमार रहने के बाद! और मुझे सूचित नहीं किया! ओफ! मैं रो पड़ा। तुरंत ताऊजी को सूचना देकर मैं मां को ढाढ़स देने के लिये चला। पिता का दाह-संस्कार हो चुका था। मैं उनके दर्शन भी न कर पाया। क्या वह मेरे पिता नहीं थे? यदि वह मुझे भूल गये थे तो क्या मैं भी उन्हें भूल गया था? मां मुझे देख कर रोईं और मुझे हृदय से लगा लिया। मैं भी रोया पर कुछ कह न सका। विजय पास खड़ा था, अवाक्। वह मुझे पहिचानता न था, पहिचानता न था कि मैं उसका भाई हूं—ओह! था।

हृदय की बातें मैं मां से कह न पाया। आंसू बन कर वे बह गईं। मैंने मां से साथ चलने को आग्रह किया तो उन्होंने मना कर दिया। न जाने क्यों? और जब मैंने यह प्रस्ताव किया कि मैं उनके पास रह जाऊं तो भी वह सहमत नहीं हुईं। एक रूप में मानो उन्होंने मुझसे चले जाने को कहा। ...... मां का हृदय! इतना कठोर?

मां विजय को साथ लेकर भाई के घर चली गईं और मैं ताऊ के घर लौट आया। ताऊजी ने मुझसे पूछा— "मां नहीं आई तुम्हारी?" अवरुद्ध कंठ से मैं कह भी नहीं पाया, नहीं, ताऊजी केवल मुस्करा दिये।

ताऊजी की तबियत ठीक होने लगी थी। उनकी सेवा के लिए नर्सें थीं। परन्तु मेरी अनुपस्थिति में वे प्रसन्न नहीं रहते थे। मैं विश्वास न करना चाहता था कि ताऊजी मुझसे प्यार करते हैं नहीं तो मुझे मां को भुलाना पड़ता। परन्तु उनके शब्दों का, उनके व्यवहार का मुझ पर प्रभाव पड़े बिना भी नहीं रहता था। मैं अपने को दो बन्धनों में बंधा पाता था और दोनों बन्धन मुझे विपरीत दिशा में खींचते थे। अन्त में मां का बन्धन दृढ़ निकला।

मैं मां से मिलने को मामा के घर की ओर रवाना हुआ। वहां मां को रोग-शय्या पर पड़ा पाया। वैधव्य के शोक और विजय की चिन्ता ने उनके शरीर को जर्जर कर डाला था। वह इकली खाट पर पड़ी कराहा करती थीं, बस विजय उनके पास बैठ जाता था कभी कभी। न कोई चिकित्सा थी और न सेवा-सुश्रूषा।

मां के बहुत मना करने पर भी मैं डाक्टर को बुला कर लाया। डाक्टर ने परीक्षा की और औषधि लिख दी। मैं औषधि भी ले आया। पर मां ने अपना हठ न त्यागा, औषधि न पी। मैं गिड़गिड़ाया पर व्यर्थ, रोया पर बेकार। मैंने कारण पूछा न पीने का। मां मौन रहीं; आंसू ढरके पर मैं आंसुओं का सन्देश न समझ पाया।

दिन प्रति दिन मां की अवस्था गिरती ही गई। ज्वर का जोर बढ़ता गया, दुर्बलता बढ़ती गई। बोलने में कम्पन था और श्वास में कष्ट। मुझे आये हुये पन्द्रह दिन बीत गये थे। मैं कर्त्तव्यवश ताऊजी के पास लौटना चाहता था, परन्तु मां को छोड़ने को भी मन नहीं करता था। मैंने मां को साथ चलने के लिए सहमत करने का फिर प्रयत्न करना चाहा।

मैंने मां की खाट पर बैठ कर पूछा, "मां! साथ चलोगी?"

"नहीं," उत्तर मिला।

"क्यों?"

मां मौन थीं।

"बतलाओ न।"

"तुम्हीं बतलाओ क्यों चलूं?"

"चिकित्सा के लिये।"

"असम्भव!"

मैं स्तब्ध रह गया।

"दूसरे के धन से अपना जीवन? असम्भव!"

"मां! मैं स्वयं कमाऊंगा।"

"कमाने योग्य किसने बनाया?"

मैं निरुत्तर था; रुक कर पूछा, "मां! तुम्हारा मुझ पर कोई अधिकार नहीं?"

मां की आंखों से झर-झर आंसू बहने लगे। मैं पास बैठा रहा; अपने आंसू रोकता रहा। एक हिचकी लगी और मां के आंसू बन्द हुये। तब मैंने फिर प्रश्न किया, "मुझ पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं? मां!"

उत्तर में वही मौनता मैं विकल हो गया, आवेश में चिल्ला-सा पड़ा, "मैं तुम्हारा बेटा नहीं? बोलो, मां! ... बोलो! बोलो!!"

पर मां भी फिर मौन थीं, और न फिर कभी बोलीं।

फ्रेञ्च सत्यार्थ प्रकाश

★ श्री विष्णुदयाल

"सत्यार्थ प्रकाश" का फ्रेंच में उल्था करवा कर भारत ने मेरी जन्म भूमि मारीशस के प्रति अपने कर्त्तव्य का अच्छे ढङ्ग से पालन किया है। छपाई और कागज देखने लायक है। शायद ही किसी अन्य भाषा में अनूदित 'सत्यार्थ-प्रकाश' इतना सुन्दर हो। पुस्तक की इज्जत मूल्य के अधिक होने से और बढ़ गई है। यह अनुवाद संसार को मूल ग्रन्थ के लेखक का परिचय दे रहा है। हजारों रुपये खर्च करके फ्रांसादि में प्रचारक भेज कर के भी जो कार्य नहीं हो सकता था वह होने वाला है। इस समय फ्रेंच भाषा लेटिन भाषा की जगह अन्य यूरोपियन केन्द्रों की दूसरी भाषा बनी हुई है। बम्बई के अंग्रेजी मासिक पत्र 'आर्यन पाथ' में फ्रेंच लेखक ट्रेंग्लिस जोरा ने अपने पाठकों को बताया है कि मध्य कालीन यूरप में जो गोथिक मन्दिर बनते थे वे हिन्दुओं के मन्दिरों की नकल मात्र थे। उन्होंने यह भी लिखा है कि केवल फ्रेंच जाति एक ऐसी जाति है जिस ने सेंट-लुई ऐसे राजा को जन्म दिया जो सन्त होकर लोकप्रिय राजा हुए। यह पढ़ कर भारतीय पाठक सम्राट अशोक का स्मरण किये बिना रह न सकेंगे। फ्रेंच, अंग्रेज की अपेक्षा देवभाषा संस्कृत से निकटतर है, उसने मारीशस की पाठशालाओं के लिये तैयार की गई "चौथी पुस्तक" में बताया है कि वास्तव में तो, फ्रांस में अभी तक ऐसी भाषा बोली जा रही है जिसमें संस्कृत के बहुत से शब्द हैं।

"सत्यार्थ प्रकाश" को फ्रेंच में अनुवादित करने का प्रश्न मारीशस ही में उठा था। कुछ लोगों ने एक अंश का अनुवाद कर भी लिया था। मुझे और मेरे स्वर्गीय भ्राता श्री सुग्रीव विष्णुदयाल को सन् १९२९ ई० में अनुवाद करने का काम सौंपा गया था। श्री सुग्रीव जी अंतिम अध्यायों का अनुवाद करके चल बसे। जब मैं बालक था पोर्ट-लुई शहर की एक मशहूर पाठशाला में पढ़ता था। मुझे और मेरे भ्राता को ईसाई बच्चे अपने व्यवहार से बहुत भारी चोट पहुँचाते थे। वे हिन्दू देवी-देवताओं को गाली देते थे। यह शरारत उनकी नहीं थी। बच्चों को देवी-देवता की कथा कहां मालूम थी? ईसाई पादरी इनको मन्त्रणा देते थे। इन दिनों में भी वे लोग शरारतों से बाज नहीं रहते। आठ साल से जो मैं आंदोलन चला रहा हूं उससे हमारे आदमियों का ईसाई बनना असम्भव सा हो गया है। षड्यन्त्र रच-रच कर मुझे तीन बार जेल भेजा जा चुका है। मेरी जेल-यात्रा के कुछ मास पूर्व लेल-दु नामक चीनी के कारखाने में एक गर्भवती बहिन और तीन भाइयों को दूसरों के उद्धार के लिये प्राणों का मूल्य देना पड़ा। गोरांग ईसाइयों से मिल कर नाथूराम गोडसे की पंक्ति में बैठने के लायक कुछ हिन्दुओं ने चार हिन्दुओं को गोली का निशाना बनाया। उद्धारक लोग जाल में फंसते ही जा रहे हैं। बचपन में ईसाई बालकों का सामना करने के लिये मेरे भ्राता जी को "सत्यार्थ प्रकाश" के तेरहवें अध्याय का अस्त्र मिला। बालकपन में ही उन्होंने संकल्प कर लिया था कि इसको फ्रेंच जामा पहनायेंगे। उनकी अकाल मृत्यु ने इस काम के पूरा होने में बाधा डाली। परन्तु यदि जीवित होते और मेरे सामने जो फ्रेंच "सत्यार्थ प्रकाश" मौजूद है उसे देख सकते तो वे अवश्य मानते कि यह ग्रन्थ उनके स्वप्न के फ्रेंच "सत्यार्थ प्रकाश" से अधिक सुन्दर है। यह ग्रन्थ उनसे अवश्य कहलवाता कि 'मैंने मुंह मांगी मुराद पायी।'

अनुवाद श्रीमती मोरें जी द्वारा हुआ है, जिन्होंने कई भारत सम्बन्धी लेख लिखे हैं। लाहौर में आज से बारह वर्ष पूर्व मैंने श्री स्वा० स्वतन्त्रानन्द से आज्ञा पाकर किसी पांडिचेरी के विद्वान से अनुवाद कराने का विचार कर लिया था। विद्वान ने इतनी ज्यादा रकम मांगी कि हमारी आशा पर तुषारपात हुआ। मेरी तुच्छ सम्मति है कि अच्छा हुआ कि फ्रांस में अनुवाद किया गया।

श्रीमती मोरें ने जो भूमिका लिखी है, वह सचमुच कीमत की चीज है। स्वर्गीय रवीन्द्रनाथ ठाकुर का स्वामी जी के विषय में प्रकट किया गया मत उद्धृत करके वे भूमिका को आरम्भ करती हैं। वे लिखती हैं कि ऐसी श्रद्धांजलि किसी को भी फ्रेंच में 'सत्यार्थ-प्रकाश' का भाषान्तर करने का उत्साह दे सकती है।

लेखिका स्वामी जी के ग्रन्थ के गुण-दोष से भलीभांति परिचित है। कहीं-कहीं पर वे हिन्दी 'सत्यार्थ प्रकाश' से ही अनुवाद करती हैं। पंजाब केसरी लाला लाजपतराय ने एक बार लिखा था कि अंग्रेजी भाषान्तरों में कुछ न कुछ दोष है, उन दोषों को दूर करने की चेष्टा देख कर फ्रेंच पाठक श्रीमती जी को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते। सब से आज्ञा लेकर उन्होंने पुनरुक्तियों को अलग किया और प्रथम दस अध्यायों के सर्वोत्तम अंश को छान कर यूरोपियन पाठक को ऐसा श्रेष्ठ ग्रन्थ दिया है जो हर वक्त उन्हें भारत के धर्म, संस्कृति तथा इतिहास का आभास दे सकता है।

पश्चिमीय पाठकों को 'सत्यार्थ प्रकाश' सरीखे ग्रन्थ में अवश्य विचित्रता दीख पड़ेगी। यह बात अनुवाद करने वाली फ्रांसीसी महिला से छिपी नहीं है, यही कारण है कि उन्होंने जगह जगह पर पाठकों को सावधान किया है। कहीं-कहीं पर उनके शब्दों से यह भाव टपकता है कि स्वामी जी के बहुत से मन्त्रों के किये गये अर्थ लोगों को अच्छे मालूम नहीं पड़ते। परन्तु इतना तो वे स्पष्ट कर देती हैं कि लोग वेदवेत्ता दयानन्द सरस्वती से सहमत हुये या नहीं, प्रायः सबों को वेद का अवलोकन करना पड़ा, वैदिक साहित्य का अध्ययन करना पड़ा।

और इस अध्ययन को सहज बनाने में कांगड़ी गुरुकुल ने खूब सहायता की। समाज के द्वारा किये जाने वाले विद्या-प्रचार की प्रशंसा करते हुए श्रीमती मोरें नहीं अघातीं। स्वामी जी के शिष्यों की व्यावहारिकता ने उन्हें मुग्ध कर कर छोड़ा है। नियोग विषय को लेकर वे कहती हैं कि इसे समय और परिस्थिति को देख कर कभी प्रचलित नहीं किया गया। इसकी जगह विधवा विवाह का प्रचार करके विधवाओं की दयनीय दशा को पर्याप्त मात्रा में बदल दिया गया। मोरें जी स्वयं एक अबला हैं। उन्हें अपनी भारतीय बहिनों की बुरी दशा और किसी चीज से ज्यादा अखरती है।

भूमिका लम्बी है। ४०० पृष्ठ के ग्रन्थ में ४० पृष्ठ भूमिका ने ही ले लिए हैं। भूमिका के अन्तर्गत स्वामी जी का संक्षिप्त जीवन चरित्र भी है। फ्रांस में पहिली बार उपन्यास सम्राट रोमें रोलां ने परमहंस रामकृष्ण की जीवनी के अन्दर स्वामी जी के जीवन की मोटी-मोटी घटनाओं का उल्लेख किया था। इस भूमिका के मध्य जो संक्षिप्त जीवनी है वह ज्यादा सरल और लम्बी भी है इस जीवनी के पढ़ने से कई लोगों को विदित हो जायेगा कि 'सत्यार्थ प्रकाश' के रचयिता और महात्मा गांधी तथा पं० नेहरू में कुछ-कुछ सादृश्य है या नहीं। चाहे कोई कितना ही कम महर्षि के सम्बन्ध में लिखे उसे यह बताना पड़ता है कि उन्होंने भ्रमण करके अपने विचारों को देश भर में प्रचारित किया। विद्वानों को देश के एक छोर से दूसरे छोर तक भ्रमण करके अपना संदेश देना भारतीय परम्परा के अनुकूल है। श्रीमती मोरें का मत है कि नये तरीके से यही काम पं० नेहरू करते हैं और मरते दम तक महात्मा जी ने किया। लेकिन सादृश्य यहीं आकर समाप्त नहीं होता। आगे बढ़ कर श्रीमती मोरें महात्मा गांधी को महर्षि के उत्तराधिकारी के रूप में पेश करती हैं। लेखिका का कथन है कि महात्मा जी के प्रादुर्भाव से पूर्व स्वामी जी ही के शिष्य कर्म के अग्रदूत थे।

ऋषि दयानन्द

ग्रन्थ के अन्त में एक शब्द कोष है जो अत्यन्त उपयोगी है। प्रथम दस समुल्लासों (केवल पूर्वार्द्ध का अनुवाद हुआ है) में आये हुये संस्कृत शब्दों के अर्थ दिये गये हैं जहां तहां अर्थों को स्पष्ट करने के लिये उदाहरण भी दिये गये हैं। दिये गये अर्थों या उदाहरणों में यह विशेषता है कि वे यूरपके पाठकों को स्वामी जी के मन्तव्यों को बहुत आसानी से परिचित कर देते हैं।

फ्रेंच "सत्यार्थ प्रकाश" मेरे देश में वह काम करेगा जो जाकोल्यो को 'भारत में बाइबिल' न कर सकी। जाकोल्यो की पुस्तकें पिछली शताब्दी में यहां के गोरों को भारत के भक्त बनाती रहीं। हिन्दू अंधेरे में थे, फ्रेंच भाषा से अनभिज्ञ थे। जब उनके पूर्व पुरुष इस टापू में आये वे कम से कम अपनी भाषा पढ़ सकते थे। मालिकों ने उनकी सेवा को स्वीकार किया पर उनके बच्चों की शिक्षा पर बिलकुल ध्यान न दिया। नब्बे वर्ष के एक प्राचीन ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि भारत से आये हुए भारतीयों में दस प्रतिशत शिक्षित थे। अगली पीढ़ी में दो प्रतिशत भी पढ़े लिखे न मिले! अशिक्षितों को जाकोल्यो का नाम भी सुनने में नहीं आया। आज हिन्दुस्तान में हजारों की संख्या में फ्रेंच के विद्वान मिलते हैं। एक की तो लेखनी की तारीफ फ्रांस देश तक में हुई है। फ्रेंच भाषा का प्रचार हिन्दी भाषा के प्रचार से कहीं अधिक है। हां, ३-४ वर्षों से हिन्दी प्रचार जोर पकड़ रहा है। यहीं पर पाठ्य पुस्तकें छपती हैं और इस देश के कोने कोने में शुद्ध हिंदी में भाषण दिये जाते हैं। परन्तु हिन्दी का बोल-बाला तब होगा जब यहां के हिन्दी पत्र फ्रेंच पत्रों के समान शुद्ध भाषा में लिखे गये लेखों को प्रकाशित करेंगे। जब तक वह शुभ घड़ी न आवेगी तब तक हमें ख्यातनामा पत्रकार 'प्रवासी' —सम्पादक श्री स्वामी भवानी दयाल जी के लेखों से विदित होता रहेगा कि मारीशस लेखकों के लेख भारतीय पत्रों में नहीं बल्कि मारीशस ही के पत्र-पत्रि-

सिगरेट का देशव्यापी व्यसन

भारत के कुछ राज्यों में बालकों के धूम्रपान पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए कुछ विधेयक बनाये गये हैं और दूसरे राज्यों में भी यह विषय विचाराधीन है। कुछ बड़े नगरों में सिनेमा में धूम्रपान पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। लेकिन धूम्रपान हमारे स्वास्थ्य-सम्पत्ति और चरित्र को किस तरह नष्ट कर रहा है, यह हम अभी तक समझ न पाये। आज एक एक नगर में प्रतिदिन दो लाख रु० तमाखू में फूंक दिये जाते हैं। इसी तमाखू की खेती के कारण बहुत-सा भू-प्रदेश गेहूं की खेती से वंचित रह जाता है और हम लोग गेहूं न बो कर कर तमाखू बोते हैं। तमाखू का व्यसन बहुत भयंकर है। गांधीजी ने इसे शायद शराब से भी बुरा व्यसन बताया था। इसी व्यसन के बारे में एक अंग्रेज लेखक श्रीएलान ग्रीन ने एक लेख लिखा था। वह मनोरंजक व उपयोगी है, इसीलिये हम यहां दे रहे हैं—

ब्रिटेन के सामाजिक जीवन का अध्ययन करने वाली 'हल्टन रिसर्च स्टडीज' नामक संस्था ने वहां के निवासियों के धूम्रपान की आदत के संबन्ध में जांच-पड़ताल की है।

ग्रेट ब्रिटेन की ३ करोड़ ६० लाख की आबादी में से २५ प्रतिशत अर्थात् २ करोड़ २५ लाख व्यक्ति धूम्रपान करते हैं। प्रत्येक पांच पुरुषों में से चार और पांच स्त्रियों में से दो धूम्रपान करती हैं। सम्पन्न व्यक्ति सिगरेट पीने के बजाय पाइप (हुक्का चिलम) में तम्बाकू रख कर पीते हैं और मजदूर वर्ग हुक्के के बजाय सिगरेट का प्रयोग करते हैं।

विवाहित और अविवाहित स्त्री और पुरुष सभी सिगरेट पीते हैं। जितनी तम्बाखू का खर्च ब्रिटेन में होता है, उसका छटा भाग स्त्रियां उपयोग करती हैं।

जांच करने से पता चलता है कि अविवाहित स्त्रियां विशेष कर कार्यालयों में काम करने वाली महिलाएं सिगरेट अपेक्षाकृत कम पीती हैं। विवाहित स्त्रियां जो घर-गृहस्थी सम्हालती हैं, अविवाहितों की अपेक्षा अधिक धूम्रपान करती हैं।

२५ हजार धूम्रपान करने वालों में से प्रत्येक ४४ सिगरेट या डेढ़ औंस तम्बाकू नित्य सेवन करते हैं। इसमें से २०,००० से भी कम स्त्रियां हैं। सामाजिक जीवन का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो गया है कि यह बताना कठिन है कि समाज का कौन-सा वर्ग अधिक तम्बाकू सेवन करता है या किस क्षेत्र में तम्बाकू का सेवन असाधारण परिमाण में होता है।

धूम्रपान करने वालों में एक तिहाई संख्या महिलाओं की है, पर जितनी तम्बाकू खर्च होती है उसका केवल छटा भाग ही इनमें खर्च होता है। इसके अतिरिक्त शेष विभिन्न वर्गों में तम्बाकू का खर्च और तम्बाकू पीने वालों की संख्या लगभग समान है।

उपर्युक्त आंकड़े केवल हमें वस्तुस्थिति का ही ज्ञान कराते हैं, पर इस प्रश्न का 'कि किसी मौज की चीज पर इतना अधिक अर्थ-व्यय करने में राष्ट्र की बुद्धिमत्ता है या मूर्खता, कोई समाधान नहीं हो पाता।' इन आंकड़ों से प्रत्येक व्यक्ति के सामने यह प्रश्न उपस्थित होगा कि सिगरेट पियें या न पियें।

चांसलर कहते हैं— 'हम लोगों को कम सिगरेट पीना चाहिये।' प्रत्येक नर-नारी प्रतिज्ञा करता है कि मुझे अपना सिगरेट का खर्च अवश्य घटाना चाहिये। आज से लगभग नौ महीने पूर्व मेरे सामने भी यही प्रश्न उपस्थित हुआ था और आज मैंने सिगरेट पीना छोड़ दिया है।

मैंने जब से सिगरेट न पीने का निश्चय किया, तब से आज तक मेरे अनुभव बड़े ही मनोरंजक हैं। मैं भयंकर रूप में धूम्रपान करने वालों में था। चालीस वर्षों में कुछ सिगरेट और कतिपय बक्स सिगार के अतिरिक्त ८००० से १५०० औंस तक पाइप की तम्बाकू पी जाती है। मैंने कम से कम ८००० पौंड की सिगरेट अवश्य पी होगी। यदि वह रुपया मैंने बचाया होता और किसी व्यवसाय में लगा दिया होता तो आज मैं अपेक्षाकृत अधिक धनी हो जाता। लेकिन अब मैं धूम्रपान में एक भी पैसा खर्च नहीं करता। मित्रों को इस बात से मुझे महान् आश्चर्य हुआ।

मुझे धूम्रपान त्याग किए केवल ११ दिन ही हुए थे कि मुझे मेरे एक मंत्री मित्र मिले, वे सिगरेट पी रहे थे। मैंने उन्हें इस गन्दी आदत के लिए खूब फटकार बतायी। उन्होंने प्रत्युत्तर के रूप में मुझसे पूछा—'आपने कभी सिगरेट छोड़ी तो नहीं।' मैंने अभिमान के साथ कहा — मुझे सिगरेट छोड़े ३२ दिन हुए [illegible] फिर कहा—'ओह! मेरा एक मित्र था जिसने धूम्रपान परित्याग किया और एक पखवारे में ही मर गया। मैंने उससे सदा के लिए विदा मांगी नहीं तो मेरी धूम्रपान परित्याग की कठिनाइयां बढ़ जाती।

तम्बाखू का सेवन करने वाले हद दर्जे की बेसिर पैर की बातें करते हैं। एक नवयुवती ने मुझे पत्र लिखा कि मैं बिना भोजन किये किसी तरह दिन काट ले सकती हूं, पर सिगरेट के बिना पल भर भी मेरा काम नहीं चल सकता। उसे एक पखवारे तक उपवास करना चाहिए ताकि उसे अपने कथन की सार्थकता या निस्सारता का पता चल जाय।

क्या धूम्रपान न करने वाले अधिक भोजन कर सकते हैं? एक पत्र संवाददाता ने मुझ से पूछा। मेरे सम्बन्ध में इसका उत्तर नकारात्मक था। धूम्रपान के आनन्द का अभाव की पूर्ति मैं अधिक मिष्ठान्न आदि खाकर नहीं करता। आप यह न समझें कि मैंने यकायक इस बात का निश्चय कर लिया कि धूम्रपान करना अनुचित है और मैंने उसे (भावुकतावश) छोड़ दिया! मैंने मुख्य दो कारणों से धूम्रपान का परित्याग किया, एक तो शारीरिक, दूसरा आर्थिक। शारीरिक दृष्टि से मुझे यह निश्चय हो गया कि धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकर है! आर्थिक दृष्टि से इसका असर मेरी जेब पर बुरा पड़ा था। (यह एक अत्यन्त खर्चीला व्यसन था)।

मुझे अपना निश्चय (धूम्र-पान-परित्याग का) कार्यान्वित करने में विशेष कठिनाई नहीं हुई। मैंने अपनी सभी धूम्र-नलिकाएं (पाइप) एकत्र की और उन्हें रसोई घर के स्टोव के हवाले कर दिया। मेरी बगल में खड़ी मेरी विचलित और स्तब्ध पत्नी भस्मीभूत त्याग का अवलोकन करती रही। तीन सप्ताह तक मुझे सिगरेट की बड़ी प्रबल इच्छा हुई, और अब भी मेरे साथ के दूसरे व्यक्ति सिगरेट पीते तो मुझे बड़ी खीज होती है। अब मुझे सिगरेट पीने की इच्छा भी नहीं होती। अब अकेले मैं ही इस आदत से मुक्त होने के पुण्य का आनन्द लेने और धूम्रपान करने वालों की दिक्कतों पर क्रूर हंसी हंसने की आदत से मुक्ति पाने का प्रयत्न कर रहा हूं। (अर्थात् मैं चाहता हूं कि और लोग भी सिगरेट पीना छोड़ दें)।

सिगरेट और तम्बाकू की कमी पूरी करने के (चोर बाजारी से खरीदने के) जो विविध उपाय सिगरेट पीने वाले करते हैं वे बड़े ही मनोरंजक हैं। कुछ लोग अपने ढंग का कुछ मसाला मिलाकर तैयार करते हैं। दूसरे लोग स्वयं तम्बाकू पीते हैं। मेरे एक मित्र ने तम्बाकू पीने की विधि के बारे पूछताछ की थी।

क्या मैं फिर कभी सिगरेट पीना आरम्भ करूंगा। कभी नहीं! यदि पुनः सिगरेट पीने की इच्छा का उसी प्रकार दमन होता रहे जैसे मुझे पहिली बार सिगरेट पीने पर हुआ था। मुझे आज आश्चर्य होता है कि कैसे मैंने पहिली बार धूम्रपान प्रारंभ कर उसे क्रमशः बढ़ाता गया जब कि उस तम्बाकू या सिगरेट का विज्ञापन इस प्रकार था 'बच्चों के लिए नहीं, प्रौढ़ों के लिए?' उस समय मैं एक १२-१३ वर्ष का बालक था।

कार्यों में छपने के लायक हैं, फ्रेंच "सत्यार्थ प्रकाश" की भाषा ओजस्वी है, उस में वह रोचकता और सरलता है, जो उसे प्रिय बनायेगी। उसे पढ़कर मूलग्रन्थ को देखने की इच्छा प्रत्येक पाठक के दिल में पैदा होगी। इस पुस्तक का उचित मूल्यांकन फ्रांस में हो सकता है।

[पृष्ठ ८ का शेष]

घोषणा का प्रस्ताव पाकिस्तान के सामने रक्खा है। यह याद रखना चाहिए कि पहले हम ही ने यह प्रस्ताव रक्खा है। हमारा ख्याल है कि इसके साथ कोई शर्त नहीं होनी चाहिए।

न्यायाधिकरण का सुझाव

हमने पाकिस्तान के समक्ष यह भी प्रस्ताव रखा कि हमारे दो बड़े आपसी झगड़े (निष्क्रांत सम्पत्ति और नहरी पानी) एक न्यायाधिकरण को सौंप दिये जायें जिसमें भारत और पाकिस्तान दोनों के दो-दो उच्च न्यायाधीश हों। हम उस न्यायाधिकरण के निर्णयों पर कायम रहने के लिए तैयार हैं। हमारा विश्वास है कि न्यायाधीश सब मामलों पर अगर केवल न्याय की दृष्टि से विचार करेंगे, तो वे प्रायः एकमत-सम्मत निर्णय कर सकेंगे। लेकिन अगर उनमें फिर भी मतभेद हो तो उनको हल करने के लिये अन्य उपाय सोचे जा सकते हैं। हम पाकिस्तान के साथ अपने किसी भी मतभेद में इस सिद्धान्त को मानने के लिए तैयार हैं। इस प्रकार हमने न केवल युद्ध न करने की घोषणा करने का प्रस्ताव किया है, अपितु झगड़ों को निबटाने का एक उपाय भी निर्दिष्ट किया है।

चित्रलोक

जनशिक्षण में सिनेमा का महत्व

श्री कुमार बोंगो एम॰ ए॰

भारत का राजनीतिक स्वातन्त्र्य ज्यों-ज्यों अपने सामाजिक निर्माण के उद्देश्यों को मूर्त करने की दिशा में अधिकाधिक संलग्न होता जा रहा है, त्यों-त्यों शिक्षण के माध्यम की दृष्टि से फिल्मों का महत्व भी बढ़ता जा रहा है। हमारी सरकार और समाज-सुधार के क्षेत्र में कार्य करने वाली अनेक संस्थायें इस माध्यम की अनेक सम्भावनाओं को उपयोग में के लिये योजनायें बना रही हैं। 'शिक्षण' शब्द का प्रयोग यहां हमने पाठ्य-पुस्तकों के संकीर्ण अर्थ से नहीं किया है—दैनिक जीवन के व्यापक स्तर पर व्यक्ति जिन प्रभावों को अपने चरित्र में बद्धमूल करता है, उनकी अत्यन्त विस्तृत परिधि की ओर ही हमारा संकेत है। सामाजिक सुधार के क्षेत्र में हमारी जो मंद एवं शिथिल प्रगति है, उसका सबसे प्रथम कारण यह है कि हमने अभी तक प्रचार की शक्ति के पूरे महत्व को हृदयंगम नहीं किया है। आज के सामाजिक एवं वैयक्तिक निर्माण के क्षेत्र में प्रचार और विज्ञापन का कितना महत्व है, यह हम विदेशी फिल्में देख कर अनुभव कर सकते हैं। लेकिन फिल्म-युग के इन पचीस वर्षों में जीवन-यापन करके आज तक भी हमने यह अनुभव नहीं किया है कि सीधे व्यावसायिक स्तर पर ही नहीं, वरन् परोक्ष रूप से शिक्षणात्मक कामों के क्षेत्र में भी हमने जनकल्याण सम्बन्धी प्रचार और विज्ञापन के अभाव से कितनी क्षति उठाई है! इन दिशाओं में हम काफी पिछड़े हुए हैं। हमारे सामाजिक निर्माण की शिथिल प्रगति का यह बड़ा भारी अभाव है। व्यावसायिक क्षेत्रों में भी हम जो क्षति उठा रहे हैं अर्थात् हमारी राष्ट्रीय आय पर जो आघात पहुंच रहा है, उसका हमें ज्ञान नहीं है। दो अरब से ऊपर रुपया इस सम्बन्ध में विदेशों को जा रहा है।

प्रचार और विज्ञापन

सवाक् फिल्मों के प्रारम्भ के पूर्व विज्ञापन को प्रचार के अन्य साधनों पर अवलम्बित रहना पड़ता था जैसे, प्रेस, पोस्टर, हैंडबिल और इसी प्रकार के अन्य साधन, जिनमें किसी प्रकार का लिपिबद्ध साहित्य प्रयोग में आता था। इन साधनों का सबसे प्रथम सम्बन्ध साक्षरता से है। अतः इन विज्ञापनों का पूरा लाभ उठाने के लिये देश की जनसंख्या में साक्षरता के काफी ऊंचे स्तर की आवश्यकता है। भारत की जनता इस दृष्टि से काफी अभागी है। ब्रिटिश साम्राज्यवाद का सबसे बड़ा अभिशाप यही समझना चाहिये। निरक्षर जनसंख्या के मध्य लिखित विज्ञापनों और प्रचार से किसी प्रकार की अभीष्ट की सिद्धि नहीं हो सकती है। लेकिन इस सत्य से परिचित होने पर भी केवल सरकार ने 'अधिक अन्न उत्पन्न करो' आंदोलन देश के विभिन्न भाषाओं के पत्रों में बड़े-बड़े विज्ञापन दे कर शुरू किया था मानों यहां का अन्नोत्पादक किसान प्रतिदिन समाचार पत्र अनिवार्य रूप से पढ़ता हो! लाखों रुपया सरकार ने इस प्रकार के विज्ञापनों में खर्च किया था। क्यों किया था? इस रहस्य का उद्घाटन अत्यन्त सरल है—सरकार यहां के समाचार पत्रों को रिश्वतें दे कर अकाल के प्रसंग में मौन रखना चाहती थी। किन्तु आज भी हमारी राष्ट्रीय सरकारें इस परम्परा को कायम रखना चाह रही हैं—क्या यह अपव्यय किसी प्रकार के लाभ से गौरवान्वित होगा? सरकारी योजनाओं का प्रचार अवश्य होना चाहिये, इससे कोई इन्कार नहीं करता, लेकिन प्रचार को अपने उद्देश्य की सिद्धि पर भी दृष्टि रखनी चाहिये। यह कार्य फिल्मों की सहायता से बड़ी सफलता के साथ किया जा सकता है। निरक्षर जनसंख्या के देश में सवाक् फिल्मों से बढ़ कर प्रचार और विज्ञापन का कोई भी दूसरा साधन अभीष्ट सफलता नहीं प्राप्त कर सकता। एशिया के देशों में जापान और चीन में सवाक् फिल्मों के प्रचार-महत्व को जो मान्यता मिली है, उसका सर्वत्र अनुकरण होना चाहिये।

पाश्चात्य देशों में विज्ञापन एक अलग कला बन गया है। वहां आंकड़ों और प्रचार के आधार पर विज्ञापन दिया जाता है। समाचारपत्रों की दैनिक बिक्री के आंकड़ों, एक स्थान विशेष पर लगे पोस्टर के पास से प्रति सप्ताह गुजरने वाले व्यक्तियों की संख्या या किसी सिनेमा में प्रतिदिन दर्शकों के औसत के आधार पर विज्ञापन और प्रचार की योजनाएं बनाई जाती हैं। विज्ञापन का व्यवसाय करने वाले व्यक्ति विविध नगरों और गांवों के निवासियों की खास-खास आदतों और आवश्यकताओं से पूरी तरह परिचित रहते हैं और इस सम्बन्ध के पूरे आंकड़ों से विज्ञापकों को परिचित भी किया करते हैं। बम्बई में अनेक विदेशी फर्मों में से एजेन्ट होते हैं जो करीब करीब सारे देश में प्रचार किया करते हैं। वे देश के विभिन्न भागों की क्रयशक्ति के स्तर से भी पूर्णतया परिचित रहते हैं। बम्बई की 'वाल्टर थॉम्पसन कम्पनी' विज्ञापक का व्यवसाय करने वाली एशिया की सारी कम्पनियों में अग्रगण्य है। प्रतिवर्ष लाखों रुपया वह केवल विज्ञापन से ही कमाती है। उसके द्वारा किये गये विज्ञापनों का कलात्मक स्तर भी काफी ऊंचा होता है।

लेकिन जिस देश में निरक्षरता ८६ प्रतिशत तक है, उस देश में साक्षरता पर आश्रित विज्ञापनों को कोई महत्व नहीं दिया जा सकता—न तो उससे विज्ञापक को लाभ है और न उन व्यक्तियों को, जिनके लिए वे विज्ञापन प्रकाशित कराये जाते हैं। कोई पोस्टर कितना ही अभिराम एवं आकर्षक क्यों न हो, साक्षरता की सहायता के बिना उसमें चित्रित सामग्री का लाभ भी दर्शकों को ज्ञात नहीं हो सकता है। ऐसी परिस्थिति में फिल्म का महत्व सर्वोपरि रूप में स्पष्ट हो जाता है। फिल्म को अपील के लिए आंख और कान होते हैं और इस प्रकार विज्ञप्त सामग्री को समझने के लिए किसी प्रकार के साक्षरता संबंधी मानदंड की आवश्यकता नहीं पड़ती। केवल आंख से देखा और कान से सुना जा सकता है।

अंग्रेजी नाटक कम्पनी की भारत यात्रा

ब्रिटिश कौंसिल की देखरेख के अन्तर्गत जाड़ों में भारत भ्रमण के लिए आनेवाली अंग्रेजी नाटक कम्पनी में तीन अभिनेत्रियां, चार अभिनेता, एक रंगमंच प्रबन्धक, एक व्यवसाय मैनेजर और निर्माता इत्यादि लोग सम्मिलित रहेंगे। यह कम्पनी शेक्सपियर के 'हैमलेट", "ओथेलो", "मैक्बेथ", "मर्चेन्ट आफ वेनिस", "एन्टनी एण्ड क्लियोपैट्रा", "ऐज यू लाइक इट", "रोमियो एन्ड जूलियट" और "ए मिडसमर नाइट्स ड्रीम" जैसे श्रेष्ठतम नाटकों के चुने हुए अंकों के दृश्य प्रस्तुत करेगी।

कम्पनी के व्यवसाय मैनेजर श्री डगलस मारिस जो २३ तारीख को नई दिल्ली में आये थे, अगले कुछ सप्ताहों में थियेटरों, ठहरने की जगह और अन्य बातों की व्यवस्था करने के लिए कानपुर लखनऊ और इलाहाबाद जाने वाले हैं। श्री मारिस स्वयं एक मंजे हुए अभिनेता हैं और भारत का अच्छा ज्ञान रखते हैं, क्योंकि उन्होंने लड़ाई के दिनों में चौदहवीं सेना और सातवीं भारतीय सेना में लगभग पांच वर्षों तक काम किया था। वह साफ हिंदी बोलते हैं और भारत में चारों ओर लम्बी यात्रा कर चुके हैं।

कम्पनी के रंगमंच प्रबन्धक कई वर्षों तक सुप्रसिद्ध ग्लाइन्डे बोर्न आपेरा थियेटर के सदस्य रह चुके हैं और अपने साथ ऐसे प्रकाश साधन ला रहे हैं जो प्रदर्शनों के प्रकाश को एक दर्शनीय रूप प्रदान करेंगे। लन्दन में नाटक पात्रों के लिए विशेष नमूने के वस्त्र और पर्दे तैयार कराये गये हैं और यह सुप्रसिद्ध ब्रिटिश रंगमंच, निर्माता श्री॰ मार्लेन मार्लेन के व्यक्तिगत निरीक्षण में नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक भारत पहुँच लेगी। विद्यार्थियों को विशेष रियायत मिलने की सम्भावना है।

फिल्मिस्तान के नये फिल्म

फिल्मिस्तान लिमिटेड ने गत सात वर्षों में १८ फिल्म तैयार किए हैं, जिन में से आधे फिल्मों ने विभिन्न स्थानों पर रजत अथवा सुवर्ण जयन्तियां मनाई हैं। इस वर्ष फिल्मिस्तान ने अपने निर्माण-कार्य के सम्बन्ध में एक विस्तृत कार्य क्रम बनाया है। दिग्दर्शक सन्तोषी का 'सरगम' फिल्म तैयार हो चुका है। दिग्दर्शक बी मित्र 'शबिस्तां' बना रहे हैं। दिग्दर्शक नजम नकवी प्रोडक्सन नं० २० की तैयारियों में व्यस्त हैं। डायरेक्टर हेमेन गुप्त बंकिम चटर्जी के प्रसिद्ध उपन्यास 'आनन्द मठ' के आधार पर हिन्दी और बंगाली में फिल्म तैयार करेंगे।

१॥ अरब एकड़ भूमि विनष्ट हो रही है

हिरोशिमा और नागासाकी ने मनुष्य की विध्वंसक-पटुता का उदाहरण बन कर वर्तमान साहित्य में स्थान पा लिया है। परन्तु 'भूमिमृत्यु' अर्थात् भूमि-क्षरण से होने वाली अपार हानि का किसी को कुछ पता नहीं।

एक प्रसिद्ध भूगर्भ-शास्त्री सर आर्किबाल्ड गेईकी ने अनुमान लगा कर बताया है कि गंगा प्रतिवर्ष ३५,५०,००,००० टन उत्तम उपजाऊ मिट्टी को बहा कर उसे बंगाल की खाड़ी में डाल देती है। इस मिट्टी को यदि भूमि पर फैलाया जाय तो उसकी एक फुट मोटी तह ८० वर्ग-मील में फैल सकती है। परन्तु समुद्र में पहुंची हुई वह मिट्टी किसी भी तरह वापस नहीं लाई जा सकती। ऊपरी उपजाऊ मिट्टी की १ इंच मोटी तह जमाने में प्रकृति को ३०० से १००० वर्ष तक लग जाते हैं, परन्तु इतनी मिट्टी कभी कभी एक ही बाढ़ में बह जाती है। पंजाब के वन-संरक्षक सर हेरोल्ड ग्लोवर लिखते हैं कि लगभग १२,०००,००,००० एकड़ भूमि क्षरण से ग्रस्त है। इस संख्या में उस जीवन-दायिनी भूमि के क्षरण-सम्बन्धी आंकड़े सम्मिलित नहीं हैं, जो वनों के कट जाने से विनष्ट हो रही है। पहले जब विशाल भूभाग वनों से आच्छादित थे, वर्षा का पानी बह कर जाने न पाता था, वरन् मिट्टी में ही समा जाता था। परन्तु जब से वन कटने आरम्भ हुए हैं, वर्षा का पानी बह कर नदियों में चला जाता है, और अचानक बाढ़ें आ जाती हैं। नहीं, इस प्रकार जो मिट्टी कट कर पानी के साथ बह जाती है, वह जलाशयों में इकट्ठी हो जाती है और कुछ ही दिनों में जलाशय इस मिट्टी से भर जाते हैं।

सूखी भूमि पर वर्षा की बूंदें गिरने से खेतों की उपजाऊ मिट्टी कट कर बह जाती है, जिससे खेती की बहुत हानि होती है। मिट्टी के कटाव से हमारी अधिकांश उत्तम भूमि साधारण और साधारण बेकार बनती चली जा रही है। अनुमान लगाया गया है कि हमारी कृषि योग्य भूमि का एक तिहाई से भी अधिक भाग भूमि क्षरण से ग्रस्त है और इससे लाखों एकड़ भूमि बेकार हो चुकी है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश में २५,००० वर्ग-मील से भी अधिक ऐसी भूमि है, जिसे परिचर्या की आवश्यकता है। इस भूमि का क्षेत्रफल लगभग एक चौथाई है। यह विविध प्रकार से अस्वस्थ है और इसे स्वस्थ बनाने की आवश्यकता है। ऐसे क्षेत्रों के विकास के लिए सावधानी के साथ योजना बनानी चाहिये।

खाद्य-उत्पादन बढ़ाने के लिए जुताई करना, ठूंठी खोदना, पंक्तियों में फसल बोना, ढालू भूमि में खेती करना, मेंड़ बांधना, सिंचाई करना, फालतू पानी निकालना, फसलों को अदल-बदल कर बोना, बीज छूट कर बोना, खाद डालना, सुधरे कृषि-यन्त्रों का प्रयोग करना और फसलों में लगने वाले कीड़ों की रोकथाम करना आदि महत्वपूर्ण विषयों का एकीकरण करना आवश्यक है। इनमें से अधिकतर बातों को किसान लोग जानते हैं और स्वयं ही क्रियान्वित कर सकते हैं। आवश्यकता उन्हें केवल थोड़ा-सा उत्साह दिलाने की है। यह उत्साह उन्हें भूमि-सुधार सम्बन्धी सहायता के रूप में प्रदान किया जा सकता है। यदि भूमि-सुधार के कार्य में किसानों को आर्थिक सहायता मिलने लगे तो हमारे सबसे अधिक महत्वपूर्ण साधन — मिट्टी की रक्षा हो सकती है और 'भूमि मृत्यु' का भय दूर किया जा सकता है, जिसका प्रभाव न केवल हमारे, बल्कि हमारी भावी संतान के ऊपर भी होता है।

"पानी की रानी' फिल्म बनाने का भी विचार किया जा रहा है। 'एक थी लड़की' के प्रसिद्ध प्राप्त डा० एस० जौहर फिल्मिस्तान के लिए एक कहानी लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त एक रंगीन फिल्म बनाने का भी विचार किया जा रहा है, जिसके लिए अमेरिका के प्रसिद्ध कैमरामैन की सूचना की सेवाएं प्राप्त कर ली गई हैं।

[पृष्ठ ६ का शेष]

देना न बुद्धिसंगत है और न न्यायसंगत। आग आग से नहीं, पानी से शान्त होती है।"

प्रेमचन्द जी जीवन पथ पर संघर्ष से बचते रहे हैं और समझौते को अपनाते। गांव दो वर्गों में बटा हुआ था। एक शोषक था और दूसरा शोषित। पहला चाहता था मनुष्य पर शासन करना, अपने भरी थैली को और भरना, दूसरा भूखा था अन्न चाहता था, बेकार था, काम चाहता था। दोनों की यह चाह संघर्ष को निमन्त्रण दे रही थी। रंग भूमि में इस संघर्ष के मैदान में उन्हें उतरते देखते हैं। सूरदास अकेला है फिर भी अपने अधिकारों पर डटा है। उसके विपक्षी शक्तिशाली हैं, पैसे वाले हैं, सत्ता की मदद है, फिर भी वह हमारी सद्भावनाओं का भागी नहीं बनता। सूरदास अपनी जान पर मरकर भी जीवित है।

कला कला के लिए का सिद्धान्त मानने वाले लोगों का कहना है कि प्रेमचन्द जी की कला में कलात्मकता की कुछ कमी रह गई है। मेरा इस सम्बन्ध में विचार है कि जनता का जो भी कलाकार होगा, उसमें कलात्मकता की कुछ कमी अवश्य रह जायेगी। प्रत्येक पंक्ति में वह कला सौन्दर्य बिखेर नहीं सकता। फिर भी कला की ही दृष्टि से हम प्रेमचन्द जी की कला को जांचते हैं, तो एक नहीं अनेकों कलाकारों से हम उन्हें आगे पाते हैं।

रजि० नं० डी० १८२

ब्रिटेन में वायुयान प्रदर्शनी

★

पिछले दिनों ब्रिटेन के वायुयान निर्माताओं ने फार्न बरो में वायुयानों की प्रदर्शनी की थी। इसमें वायुयानों के उड़ाकों ने अद्भुत कारनामे दिखाये। कुछ वायुयान तो ऐसे थे, जिनके बनने का स्थान भी नहीं बताया गया था। ये वायुयान छोटे बड़े, तेज शनैः चलने वाले और तरह-तरह के काम देने वाले थे। उन्हीं के पांच दृश्य यहां दिये जा रहे हैं।

पं० दुर्गाप्रसाद शर्मा, मुद्रक व प्रकाशक ने श्रद्धानन्द पब्लिकेशन्स लि० के लिए अर्जुन प्रेस श्रद्धानन्द बाजार, देहली से छपवा कर प्रकाशित किया।
सम्पादक—इन्द्र विद्यावाचस्पति

वीर अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

४ आना

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार ६ कार्तिक सम्वत् २००७ [अङ्क २७

नैतिक व सांस्कृतिक क्षेत्र में अराजकता

विदेशी शासन में समस्त देश का ध्यान राजनैतिक मुक्ति के लिये संघर्ष में केन्द्रित हो गया था और इसका परिणाम यह हुआ कि हम राष्ट्र के लिए अन्य आवश्यक समस्याओं की ओर से सर्वथा उदासीन हो गये। सब सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाएं शिथिल हो गईं, सारा देश केवल राजनीति में रुचि लेने लगा। उस समय की स्थिति देखते हुए यह स्वाभाविक था।

किन्तु खेद की बात यह है कि देश के राजनीतिक स्वातन्त्र्य प्राप्त करने के बाद भी हमारी सब प्रवृत्तियों का केन्द्र राजनीति है। आज भी हम देश की सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक समस्याओं की ओर से सर्वथा उदासीन हैं। सब सार्वजनिक कार्यकर्ता राजनीति में लिप्त हैं—चाहे कांग्रेसी हों या गैर कांग्रेसी। विधान सभाओं और मंत्रिमण्डलों तथा शासन के उच्च अधिकारियों का प्रलोभन सारे राष्ट्र को ग्रसे जा रहा है। गैर कांग्रेसी सार्वजनिक नेताओं व कार्यकर्ताओं का भी एक मात्र लक्ष्य है राजनीतिक अखाड़े में अपने विरोधी से संघर्ष। इस स्थिति का परिणाम यह है कि देश की सामाजिक व सांस्कृतिक और नैतिक समस्याएं, जिनका समाधान किसी राष्ट्र के विशुद्ध जीवन का निर्माण करता है, सर्वथा उपेक्षित रह गई हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के मंच से भी राजनीतिक चर्चाएं सुनाई देती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि आज के नेताओं के सामने अब एक ही रूप है, जिसकी व्याख्या मार्क्स ने की थी—भौतिक और आर्थिक समस्याओं से युक्त एक प्राणी। चरित्र, नीति, आचार, नैतिक मर्यादा और सदाचार आदि का जीवन में शायद आज कोई स्थान ही नहीं रहा। इस दृष्टि से भारतीय नागरिक निरन्तर पतन की ओर अग्रसर हो रहा है और इधर देश के किसी राजनैतिक दल का ध्यान नहीं जा रहा।

यह कम आश्चर्य की बात नहीं है कि सदाचार व नैतिक स्वास्थ्य-सम्मेलन अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की ओर से दिल्ली में किया गया है, मानों भारत की नैतिक सांस्कृतिक और सामाजिक संस्थाएं सो रही हों। फिर भी इसमें संदेह नहीं कि इस सम्मेलन से सामाजिक समस्याओं की ओर देश के नेताओं का ध्यान खिंचा अवश्य है। राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद ने इस सम्मेलन में सांस्कृतिक और नैतिक उत्थान की महत्ता पर जोर देते हुए कहा कि—"अगर उन्हें अधिकार हो तो सब कामोत्तेजक फिल्मों का प्रदर्शन बन्द कर दें, ऐसी फिल्में हमारे समाज को बरबाद कर रही हैं।" हम देखते हैं कि आज शृंगारप्रधान कामुकतावर्धक चित्र हमारी रुचि को निरंतर दूषित कर रहे हैं। भयंकर कामोत्तेजक साहित्य निरन्तर कहानियों और उपन्यासों के द्वारा हमारे हृदयों पर घातक प्रभाव डाल रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में भीषण अराजकता छाई हुई है। कोई उसकी ओर अंगुलिनिर्देश तक करने वाला नहीं है। वेश्यावृत्ति, शराब आदि की बीमारियां बढ़ती जा रही हैं। कांग्रेस मद्यनिषेध के लिए प्रतिज्ञाबद्ध होती हुई भी अपनी आर्थिक कठिनाइयों की आड़ में उस पर अमल करने में संकोच कर रही है। इसका मुख्य कारण यह है कि हम नीति व चरित्र की महत्ता से सर्वथा उदासीन हो गये हैं। राष्ट्रपति और श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर ने वेश्यावृत्ति की ओर भी राष्ट्र का ध्यान खींचा है। उन्होंने यह भी स्पष्ट कहा है कि इसे हम केवल आर्थिक प्रश्न कह कर टाल नहीं सकते, यह सामाजिक व चारित्रिक समस्या भी है। राष्ट्रपति ने तो आज की पश्चिमी संस्कृति में प्रचलित स्त्री-पुरुषों के सामाजिक मेल मिलाप को भी अवांछनीय बताया है।

सामाजिक समस्याओं के विस्तार में न जाते हुए भी हम देश के विचारकों और कार्यकर्ताओं का ध्यान इस ओर खींचना चाहते हैं। सम्पत्ति की अपेक्षा सच्चरित्र राष्ट्रनिर्माण में अधिक सहायक होता है, यह सत्य हम भूल गये हैं, यही सबसे बड़ी देश की समस्या है।

★

हि० सम्मेलन का सभापति

हिन्दी-साहित्य सम्मेलन का आगामी अधिवेशन कोटा में हो रहा है। इसके अध्यक्ष पद के लिए जो पांच नाम प्रस्तुत किये गये थे, उनमें से तीन ने अपने नाम वापस ले लिए हैं। शेष दो श्री रामप्रसाद त्रिपाठी और श्री जयचन्द्र विद्यालंकार के नाम निर्वाचन के लिए मतदाताओं के पास आवेंगे। हम श्री त्रिपाठी जी को अयोग्य न समझते हुए भी पाठकों से अनुरोध करते हैं कि वे श्री जयचन्द्र विद्यालंकार को मत दें। उनकी हिन्दी-साहित्य की सेवायें अविस्मरणीय हैं। उनका इतिहास सम्बन्धी साहित्य हिन्दी में ही नहीं, भारतीय और अंग्रेजी साहित्य में भी अपूर्व है, उनकी विद्वत्ता असाधारण है और सम्मेलन भी इसे स्वीकार कर उन्हें मंगला प्रसाद पुरस्कार देकर सम्मानित कर चुका है। विधान के हिन्दी रूपान्तर करने वालों में आपका विशेष स्थान रहा है। पंजाब और सिंध में हिन्दी का प्रचार करने में आपने सक्रिय भाग लिया है और पंजाब में तो हिन्दी प्रचार की नींव भी आपने डाली थी। वस्तुतः सम्मेलन और उसकी संस्थाओं से आपकी जानकारी, योग्यता हिन्दी के प्रति प्रेम आदि के कारण निस्सन्देह श्री जयचन्द्र विद्यालंकार इस पद के अधिकारी हैं। हमें आशा है कि वे इस पद पर आकर हिन्दी में राष्ट्रीय शिक्षा और राष्ट्रीय इतिहास के निर्माण में नेतृत्व करके हिन्दी-साहित्य सम्मेलन को एक सजीव संस्था बना देंगे।

बम्बई की हड़ताल

भारत का प्रत्येक पुरुष, स्त्री और बालक इस वर्ष दो तिहाई गज कपड़ा कम पायेगा, क्योंकि बम्बई की हड़ताल के कारण २३॥ करोड़ गज कपड़ा कम तैयार हुआ है। गरीब मजदूरों को ४-५ करोड़ रुपये से अधिक वेतनों के रूप में क्षति हुई है, राष्ट्रीय सम्पत्ति की दृष्टि से २३ करोड़ रुपये का उत्पादन कम हुआ है। बम्बई की ६२ दिन की व्यापक हड़ताल की इस क्षति को आज उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता। समाजवादी नेताओं ने यह हड़ताल औद्योगिक अदालत के निर्णय के विरोध में कराई थी। बोनस किसी उद्योग के लाभ पर निर्भर करता है। पिछले कुछ वर्ष लाभ काफी होने के कारण कारीगरों को भी बोनस मिलता था। अब स्थिति में अन्तर आ गया। मिलमालिकों ने बोनस देने से इन्कार कर दिया और मजदूर तीन मास के बोनस की मांग करते रहे। फलतः मामला औद्योगिक अदालत में गया। उसने दो मास का बोनस देने का निर्णय किया। मिलमालिकों और मजदूरों दोनों ने इस निर्णय के विरुद्ध अपील की, किन्तु मजदूर नेताओं ने हड़ताल भी जारी कर दी। यह सरासर अवैध था—अपनी मांग को स्वीकृत कराने के लिए—अपनी मांग को स्वीकृत कराने के लिए उन्होंने शक्ति का प्रदर्शन किया। प्रत्येक अपनी मांग को उचित समझता है, किन्तु निर्णय तो न्यायालय ही कर सकता है। यदि बलप्रयोग और शक्ति प्रदर्शन से ही सत्य और उचित का निर्णय होता हो, तो देश में अराजकता फैल सकती है। लेकिन समाजवादी नेताओं ने अवैध मार्ग का आश्रय लिया और फलतः समस्त देश और स्वयं मजदूरों को भी भारी नुकसान पहुंचाया। तीसरे मास का बोनस तो मिला नहीं, दो मास का वेतन भी गंवा बैठे। इस घटना से मजदूरों व मजदूर नेताओं को शिक्षा लेनी चाहिये।

कम्युनिज्म का ह्रास

स्वीडन के म्यूनिसिपल चुनावों में कम्युनिस्टों को केवल ५ प्रतिशत मत मिले हैं। डेनमार्क के आम चुनावों में जो गत मास हुए थे कम्यूनिस्टों को १५० में से केवल छः स्थान प्राप्त हुए जबकि गत चुनाव में उन्हें १२ स्थान प्राप्त हुए थे। नार्वे में उन्हें अपने ११ स्थानों में से एक भी नहीं मिला था। बेलजियम के चुनावों में वे २३ से ७ रह गये। हालैंड के म्यूनिसिपल और प्रांतीय चुनावों में १९४८ की अपेक्षा २५ प्रतिशत स्थान कम मिले। इंगलैंड के पिछले चुनावों में एक भी कम्यूनिस्ट पार्लमेंट का सदस्य नहीं बन सका। पश्चिमी जर्मनी के रूर प्रदेश में उन्हें केवल ५.[illegible] प्रतिशत मत मिले, जबकि तीन वर्ष पूर्व १४ की सदी मत मिले थे। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के चुनावों में समाजवादियों को भी प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना पड़ा था। आखिर इस प्रवृत्ति का कारण क्या है? कम्यूनिज्म के सिद्धान्त तो बदले नहीं, किन्तु स्टालिन और रूस के इरादे अधिकाधिक स्पष्ट होते जा रहे हैं। पूर्वी योरोप पर अधिकार, यूगोस्लोविया में षडयन्त्र, कोरिया में आक्रमण, संयुक्त राष्ट्रसंघ के कार्य में निरन्तर बाधायें, रूस में लोहमय दीवार आदि सब कुछ रूस और उसके अधिकारियों को निरन्तर अप्रिय बनाते जा रहे हैं और यही कारण है कि पूंजीवाद के विरुद्ध तीव्र भावना होते हुए भी कम्यूनिस्ट पार्टी अधिकाधिक अप्रिय होती जा रही है।

सूचना

विशेषांक के कार्य में प्रेस के व्यस्त रहने के कारण इस सप्ताह ४ पृष्ठ कम कर देने को विवश होना पड़ा है। आगामी सप्ताह से २८ पृष्ठ यथापूर्व रहा करेंगे।

—मैनेजर

जीवन के विकास में संगीत का स्थान

★ प्रो० पी० श्री कृष्णामूर्ति

स्वास्थ्यकर जीवन के लिए संगीत का वही महत्व है जो पुष्टीकारक भोजन, स्वच्छ वायु और निर्मल जल का है। ये तीनों पदार्थ शरीर रक्षा के लिये अति आवश्यक हैं। पर संगीत की कामना मनुष्य आत्म तृप्ति के लिये करता है। केवल शरीर के पोषण मात्र से मनुष्य जीवन पूर्ण नहीं हो जाता—आत्म तृप्ति तो केवल उत्तम कलाओं द्वारा ही हो सकती है। प्रत्येक व्यक्ति को सौन्दर्य-प्रशंसा करने का जन्म सिद्ध अधिकार है। जब वह मधुर संगीत का श्रवण, या उत्तम कविता का पठन, अथवा चित्रकला, शिल्पकला के हृदय ग्राही नमूनों का अवलोकन करता है, तब वह तृप्त होता है। संगीत का प्रभाव विश्वव्यापी है। वह हमारे मनोवेगों को भाता है—जो कर्ण इन्द्रिय द्वारा अपनी मोहनी डालती है।

मनुष्य वाणी का प्रादुर्भाव केवल बोलने के लिए ही नहीं, वरन गायन के लिये भी हुआ था। गायन से ही उसकी पूर्ण सार्थकता है। एक गायक अढाई सप्तक तक अपनी आवाज बढ़ाकर गा सकता है, पर एक साधारण मनुष्य की आवाज उसके सम्भाषण के दौरान में अर्ध-सप्तक से शायद ही अधिक बढ़ पाती हो। गायन मनुष्य के लिए नैसर्गिक वरदान है। जो मनुष्य नहीं गाते हैं, वे स्वयं उसका ८० प्रतिशत आनन्द नष्ट कर रहे हैं। गायन से शरीर की समस्त इन्द्रियां कम्पन करती हैं, और समस्त अवयव जागृत हो जाते हैं।

किसी भी देश में संगीत का अभ्यास करने वालों की संख्या, वहां की कुल जनसंख्या की तुलना में बहुत ही सूक्ष्म होती। इसलिये अन्य व्यक्तियों को सरकारी या गैरसरकारी प्रबन्धों द्वारा उत्तम संगीत सुनने का अवसर मिलते रहना चाहिए। यह सर्वविदित सत्य है कि शरीर के सुचारु रूप से संचालन के हेतु, उसके प्रत्येक अवयव को चपल और गतिपूर्ण होना आवश्यक है। कर्ण इन्द्रिय के भीतरी भाग में सहस्रों सूक्ष्म और कोमल देश हैं (डिलीकेट फिलामेन्ट्स) वे स्वर लहरी की आहट पा चैतन्य हो जाते हैं। कुछ मनुष्य जीवन पर्यन्त कार्यव्यस्त रहने के कारण संगीत से विमुख रहते हैं पर जब वे कभी अवकाश के दिनों में नाट्यगृहों में जाते हैं तो उत्तम से उत्तम संगीत से भी वे प्रभावित हो नहीं पाते। इसके विपरीत वे अन्य दर्शकों को संगीत के प्रभाव से आनन्द विभोर पाते हैं तो उन्हें उनसे डाह होती है। कारण स्पष्ट है कि ऐसे व्यक्तियों के वे सूक्ष्म और कोमल अंश संगीत के चिरवियोग के कारण निर्जीव हो जाते हैं। संगीत के क्षेत्र में ऐसे लोगों की वही स्थिति है जो निरे बहरों की।

मनुष्यों को चाहिये कि वे अपने कर्णों को संगीत निर्मित आनन्द से तृप्त रखने के लिये अवसर प्राप्त करते रहें। ताल स्वर पर गाया गया भजन, यथा उचित रचित हरिकथा या कुछ वाद्यों के मेल से निर्मित गान का श्रवण कर जब कोई व्यक्ति गृह को वापिस लौटता है तो उसे ऐसा भान होता है जैसे कि प्रयोग द्वारा उसे पवित्र कर दिया गया हो। उसकी जन्म जन्म की दैहिक और मानसिक गन्दगी धो दी हो। उसे अद्भुत आल्हाद और ताजगी मालूम होती है। यह उस मधुर संगीत का प्रभाव है, जो उसकी इन्द्रिय [illegible] के लिये अमृत प्रद है। इससे उसकी मानसिक थकान काफूर हो गई और उसे तत्काल ही परमानन्द की प्राप्ति हुई। इस आनन्द से उसे आत्म स्पर्श हुआ। वह आनन्द उस सनातन धर्मी के आनन्द से घटिया नहीं—जो उसे हरिद्वार में श्री गंगा जी के पवित्र जल में स्नान कर लेने पर प्राप्त होता है।

हमारी सोई भावनाओं को जागृत करने में संगीत का बड़ा हाथ है। यह सत्य है कि जब किसी गीत [illegible] शोक, आलाप, लय-सहित गाये जाते हैं और पंचम छेड़ दिया जाता है तो उसका प्रभाव हृदयग्राही होता है। इसी प्रकार की मौलिक धारणाओं पर हर प्रकार के संगीत आश्रित हैं। यह सभी जानते हैं कि गा गा कर लोरियां दे दे बालकों को माताएं सुलाया करती हैं। यह संगीत गुण का तात्कालिक फल है।

संगीत वैज्ञानिक होता है। संगीत का उत्तम अभ्यास प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि गायक राग के गुण, दोष, आरोह अवरोह, कला, प्रभाव, अलाप, नाम का ध्यान रख शुद्ध प्रयोग करे। संगीत मर्मज्ञों को कामान्धता नहीं व्याप्त होती। किसी मनुष्य में संगीत का ज्ञान होना अच्छा माना जाता है सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक प्लेटो और कन्फ्युसस के मतानुसार सब कर्मचारियों में संगीत ज्ञान होना परम आवश्यक है। ऋषि वाल्मीकि रचित रामायण में कवि ने इस बात पर प्रकाश डाला है कि श्री रामचन्द्र जी में अन्य गुणों के साथ साथ कुशल संगीतज्ञ होने का भी एक गुण था। यही कारण था कि वे महाराजाधिराज कहलाये।

संगीत द्वारा चिकित्सा

पाश्चात्य देशों में संगीत द्वारा चिकित्सा पर भी ध्यान दिया जाता है पर हमारे देश में नहीं। आप लोगों ने पढ़ा होगा कि अमेरिका में रोगी को संगीत सुनाये दिया जाता है और आपरेशन कर दिये जाते हैं। [illegible] देश में वैसा को ऐसी कथा नहीं नहीं है [illegible] चिकित्सा का प्रयोग नहीं किया जाता। तन्जोर के राजमहल में भी पुस्तकालय है। उसमें "राग चिकित्सा" नाम की हस्त लिखित पुस्तक थी। उसमें कुछ रोगों के उपचार में कुछ राग बतलाए गये थे। पर वह पुस्तक अब वहां नहीं है। ऐसे मनुष्य को जिसे नींद न आती हो कुछ दिनों तक नीलाम्बरी राग सुनाने से ठीक किया जा सकता है। इसी प्रकार 'बिलाहारी' या केदारमें राग सुनाने से मनुष्यों में जोशीली उत्साह भरा जा सकता है। हृदय की बढ़ी धड़कन भी संगीत द्वारा सामान्य की जा सकती है। सर्वप्रथम संगीत प्रवाह हृदय की धड़कन की गति पर करना चाहिये। धीरे धीरे संगीत कम करते करते सामान्य हृदय की गति तक लाना चाहिये। हृदय संगीत के वशीभूत होने के कारण उसके इंगितों पर कार्य करने को बाध्य होगा।

संगीत ज्ञान होना प्रत्येक बालक का जन्म सिद्ध अधिकार है। प्रत्येक मनुष्य को मधुर संगीत श्रवण करते रहने का अवसर प्राप्त होना चाहिये। रेडियो द्वारा यह समस्या कुछ हद तक सुलझती है। पाश्चात्य देशों में से किन्हीं में, अल्प-वेतन भोगी लोगों को नाटक, थियेटर सिनेमा आदि मनोरंजनालयों के निःशुल्क टिकट दिये जाते हैं। मनुष्य जब कलाकारों से सजीव संगीत का रसास्वादन करते हैं तब उन्हें वास्तविक आनन्द होता है। पुराने समय में मालगुजार जमींदार लोग अपने अपने ग्रामों में नाच और गान मण्डलियों का प्रबन्ध कर अपने किसानों का मनोरंजन करते थे। देवालयों में भी नृत्य गान का प्रबन्ध रहता था, जिससे प्रत्येक श्रेणी के दर्शक आनन्द लेते थे। जमींदारी के हट जाने से यह प्रश्न खटाई में पड़ गया है।

यूरोप स्थित म्यूनिच आदि नगरों में सेना के बैंड वादन का प्रदर्शन लोक रंजनार्थ सप्ताह में एक बार किया जाता है। इस प्रकार का प्रदर्शन इस देश में भी किया जाना चाहिये। देवालय में भजन, कीर्तन मंडलियों का पुनर्गठन होना चाहिये, ताकि सर्वसाधारण वहां आत्म-तृप्ति कर सकें। भारत वर्ष में भजन उच्च-कोटि का मनोरंजन एवं ईश्वराधन माना है। सामूहिक गायन की भी व्यवस्था होना आवश्यक है। उसके लिए मंडलियों का निर्माण होना चाहिए। अस्पताल में विशेषकर रोगियों के लिए रुचिकर संगीत का आयोजन होना चाहिये। इससे उन्हें शीघ्र स्वास्थ्य लाभ होगा।

दक्षिण भारत में यह प्रथा है और उस पर सबका विश्वास है कि जो गर्भिणी स्त्री गर्भकाल में 'वीणा' का श्रवण करती है उसे शीघ्र और निरापद प्रसव हो

(शेष पृष्ठ ११ पर)

जर्मन बमवर्षा के कारण ध्वस्त ब्रिटिश संसद् भवन की जगह टेम्स नदी के तट पर नया भवन बनाया गया है। राष्ट्रकुल के विभिन्न सदस्य देशों ने इसकी सजावट में भाग लिया है।

ब्रिटिश लोकसभा का नया भवन

लोक सभा का नया भवन, जो पुराने और जर्मनों की बमवर्षा द्वारा बरबाद भवन के स्थान पर बनाया गया है, अपने आकार और बनावट के प्रकार में अधिकांशत उसी का प्रतिरूप है। इसका उद्घाटन सम्राट द्वारा २६ अक्तूबर को किया जायगा और इसके बाद यह तुरन्त पूर्णतया चालू हो जायगा।

अन्य देशों में जनतन्त्र के जीवन में कई परिवर्तन हुए, दुनिया के कई देशों में संसदों का किया गया, अर्थ-व्यवस्थाएं अस्त व्यस्त हुईं, राजनीति ने कई रूप ग्रहण किए, पर ब्रिटेन की पार्लमेन्ट इस पीड़ित जगत के लिए स्वतन्त्रता की ज्योति की भांति जगमगाती रही। इस महान भवन की सजावट के लिए राष्ट्र मंडल के सब भागों ने भेंटें भेजी हैं—जो मानों उन्होंने इस बात और दिया है कि ब्रिटेन की स्वतन्त्र संसद जैसी जीवन विधि का प्रतिबिम्ब है, वही अधिकांश संसार को भी प्रिय है।

सर गाइल्स गिल्बर्ट स्काट नामक ब्रिटेन के एक सुप्रसिद्ध शिल्पकार ने इस भवन का नक्शा तैयार किया था। राष्ट्रकुल के उपहारों के अलावा इस पर दस लाख पौंड (१ ३३ करोड़ रुपये) की लागत आई है। उदाहरणार्थ, आस्ट्रेलिया और यूगान्डा ने मतदान कक्षों के लिए सुन्दर फर्नीचर, न्यूजीलैंड ने भवन के फर्श के लिये अखरोट की लकड़ी और कैनडा ने बलूत की बनी एक मेज प्रदान की थी।

भारत और पाकिस्तान की ओर से इस भवन के लिए आधुनिक तथा बढ़िया नक्काशी वाले दरवाजे आए थे। आस्ट्रेलिया ने अध्यक्ष के लिये [आधिक निजाइन की एक ऐसी कुर्सी भेजी है, जो साढ़े तेरह फुट ऊंची उठ सकती है। लंका ने "स-जैंट ऐट आर्म्स" के लिए एक अलग कुर्सी और न्यूजीलैंड ने दो "डिस्पैच बक्स" भेजे हैं। सेंट हेलेना से प्रधान मंत्री के सम्मेलन के कमरे में होने वाली बैठकों के अध्यक्ष के लिए लगभग पचीस सेर भारी एक ठोस कुर्सी और इसके इर्द गिर्द की ८ कुर्सियां आई हैं। अन्य उल्लेखनीय भेंटें दक्षिणी रोडेशिया से एक तांबे चांदी का बढ़िया कलमदान, दक्षिणी अफ्रीका से तीन कुर्सियां, उत्तरी रोडेशिया से चार दीवारगीरें और अन्य भी राष्ट्र देशों से मंत्रियों के कमरों के लिए] लिखने की डेस्क तथा कुर्सियां, वीवर्ड द्वीपों से ६ तथा जिब्राल्टर से दो लैम्पदान।

संसदों की जननी के भवन की बात कर ब्रिटेन ने सोचा होगा कि वह जनतन्त्र का भवन बना रहा है। किन्तु लोकसभा एक भवन नहीं, पर सहयोग का सजीव स्वरूप है—इस बात के प्रमाण समस्त राष्ट्रमंडलीय भागों के उपहार हैं।

भारतवर्ष ने नक्काशीदार बढ़िया लकड़ी का यह द्वार दिया है। यह संसद् के विवाद गृह में लगाया जा रहा है।

संसद के अध्यक्ष के लिए यह शानदार कुर्सी आस्ट्रेलिया ने उपहार में दी है। इसकी बाहुओं पर ब्रिटेन का राज्य चिन्ह बनाया गया है।

अध्यक्ष की गदा के रखने के लिए चार कांसे के चित्रित ब्रेकट उत्तरी रोडेशिया ने दिये हैं।

अ० भा० सम्पादक सम्मेलन के अधिवेशन के अध्यक्ष श्री देशबन्धु गुप्त चुने गये हैं।

हु०रायल के प्रधानमंत्री बेन्गुरियन अपना नया मन्त्रिमण्डल बनाने में सफल नहीं हुए।

काश्मीर के राजा श्री हरिसिंह ने जमींदारी उन्मूलन आज्ञा पर अपने हस्ताक्षर कर दिये हैं।

पतवार उठाने दो!

['शलभ']

थक गये तुम्हारे बाहु युग्म, युग-झंझावातों से क्षीण शिरा,
कम्पित तन, शंकित नाविक तुम, हमको पतवार उठाने दो!

पीछे सागर — बेला उन्मुख
सिर पर झंझाओं का नर्तन!
जग़ती भूकम्पों से कांपी
जाने जीवन में परिवर्तन?

फट रहे पाल थे जो बांधे—
नियमों से क्रूर थपेटों से—
झंझा फट फट कर फाड़ रही
उनको बेलाग — झपेटों से!

खोया पथ धूंधे कुहरे में जो, न्याय दंड मस्तूल छिपा,
झुक गई कमी, झुक रहा पोत, झुक गई दिशा फिर पाने दो!
हमको पतवार उठाने दो!

अनउर्वर धरती, फाड़ फाड़
निकली 'हल' की नोकें न कभी!
बादल घूमों को चीर चीर
सूरज किरणें मिटतीं न कभी!

अन्यायों के इतिहास देख
बेलनियाँ टूट कभी पाईं?
फिर जाग रही शिव ऊषा,
पूर्वी की रश्मि अरुणाई!

धरती के अचल से रेखायें ये नगी मानवता की—
हम चलते फिरते मुर्दों की तसवीर आज मिट जाने दो!
हमको पतवार उठाने दो!

भूखा मानवता का शैशव,
भूखी इस युग की तरुणाई!
चिरकालिक तप की ज्वलित भूख
फिर युग अन्तर से उकसाई!

अन्यायों का ये अन्धकार
जल थल पर फैला क्या सारा!
सुनता है कौन यहां किसको,
स्वार्थों का ज्वार चढ़ा सारा!

लो निविड़ ... के जरासन्ध को चीर फेंकने हित—
मुझे अन्तर की ज्वाला से युग की यह भीम मशाल जलाने दो!
हमको पतवार उठाने दो!

फैला करके यह अन्धकार क्या
ढूंढ रहे अब अपनापन?
लूट रहा तुम्हारे, स्वार्थों का
यह सोना केवल सपना बन!

सीपी सी नाव तुम्हारी का
विश्वास लुट चुका सीपिज सा!
बरसेगा क्या फिर जो न कभी
वह बना स्नेह घन स्वाति सा!

तिरते सिन्धु में मगर मच्छ, वे कभी उगलते हैं मोती?
जहरीली श्वासोच्छ्वसित फेन लघु पोत न यह फंस जाने दो!
हमको पतवार उठाने दो!

यह गिरा दम्भ — बासी विलास
जिसमें निराश नव-तुहिन घने!
जीवन प्रकाश-कण निखर निखर
दर्शन—दिग्दर्शन आज बने!

वीणा के रूठे तार मधुर
जो जीवन दे न कभी पाये!
वे गीत — भला क्या गूंजेंगे
जो प्रिय — चरणों में लिपटाये?

भूखे अन्तर का हूक लिये युग हृदय-तंत्री की उठी झनक
मस्तानों के दिल गूंज उठे, लो, जीवन सरगम गाने दो!
हमको पतवार उठाने दो!

उग उठ नूतन अंकुर
विकसे—फूल—बढ़ रहे विस्तार!
रोक कभी उनको पाये क्या
राजनीति के जादू मन्तर!

फूट रही वे नवल चेतना
जीवन की यह रे अमराई!
नव मुकुल सुरभि भर पवन में
कोकिल ने कूकी शहनाई!—

रे उदित भानु का रथ रोके रुक गया कभी तिमिराली से?
तुम रोक सकोगे नहीं उसे! उसको आगे बढ़ जाने दो!
हमको पतवार उठाने दो!

कंट्रोल की नीति और सरकार

★ श्री जे॰ सी॰ कुमारप्पा

नासिक कांग्रेस में बहुमत के जोर से नियंत्रण जारी रखने का निर्णय किया। निर्णय के पक्ष में प्रधान मंत्री से लेकर जनसाधारण सभी मंत्री, बाकी तथाकथित कांग्रेसीजन था। यदि इस पक्ष को इतना बड़ा समर्थन न रहता, तो आमतौर लोग किस ओर अपना मत देते, यह अनुमान कर लेना मुश्किल नहीं है। कांग्रेस ने ही निबद्ध मतों की बड़ी संख्या की ओर लोगों का ध्यान खींचा। होशियार राजनीतिज्ञ मतों की गिनती नहीं करता। जनता की नाड़ी पहिचानते रहना, राजनीतिक नेतृत्व की पहली आवश्यकता है।

उद्योग और रसद विभाग के केन्द्रीय मंत्री श्री हरेकृष्ण महताब इस बात पर बहुत खुश हैं कि जिन लोगों ने अपना मत नियंत्रण के पक्ष में दिया, उनकी गिनती ज्यादा थी। उन्होंने नियन्त्रणों की ज्यादा अच्छी व्यवस्था करने में जनता के सहयोग की मांग की है। ऐसा लगता है कि उत्साह के अतिरेक में वे तर्कशास्त्र के सब नियम भूल गये हैं। अपने वक्तव्यों में वे कहते हैं, "यदि आप चाहते हैं कि सरकार आर्थिक संकट दूर करने के लिए आगे आये और हस्तक्षेप करे, ...तो वस्तुओं के उत्पादन, वितरण और उपयोग के नियन्त्रणार्थ बनाये गये नियमों का कोई विरोध नहीं होना चाहिये।" किसी काम को करने के हमेशा एक से ज्यादा रास्ते होते हैं। किसी एक रास्ते का हम विरोध करते हैं, तो उसका यह अर्थ नहीं है कि वह काम बिलकुल किया ही न जाय। लोग वनस्पति पर रोक लगाने के लिए कहते हैं। उत्पादन में सरकारी हस्तक्षेप का एक रूप क्या यह नहीं है? वे शराबबन्दी भी चाहते हैं। इसका मतलब है कि वे उत्पादन, वितरण और उपभोग सबमें सरकार का हस्तक्षेप चाहते हैं। दो नियंत्रणों में भेद हो सकता है, और उनके तरीके अलग अलग हैं।

उन्होंने खुद ही यह स्वीकार किया है कि यदि सरकार को जनता का सक्रिय सहयोग न हो, तो नियंत्रण के नियमों पर सफल और व्यवस्थित अमल किया ही नहीं जा सकता। यह तो उन्हें भी स्पष्ट होना चाहिए कि नियंत्रण के विषय में जनमत एक नहीं है। उसमें तीव्र मतभेद हैं। ऐसी हालत में वे परिस्थिति का मुकाबला किस तरह करेंगे और किस तरह अपने नियंत्रण के नियमों का पालन करेंगे?

विचित्र तर्क

श्री महताब कहते हैं यदि जनता नियंत्रण नहीं चाहती, तो उसे सरकार से यह उम्मीद न रखनी चाहिए कि वह उसकी समस्याएं सुलझायगी। यह अजीब तर्क है! हमें ऐसे नियंत्रण पसन्द नहीं, जो चोर बाजार, भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी को जन्म देते हैं, लेकिन हम ऐसे नियंत्रण चाहते हैं जो वर्जीनिया तम्बाकू तथा दूसरी व्यापारिक फसलों की खेती से जमीन का उद्धार करें, और फिर से उसमें अन्न पैदा करायें। हम ऐसी "गृह-उद्योग समिति" नहीं चाहते, जो सरस्वती की हाथी-दांत की मूर्तियां बाहर भेजकर वनस्पति की मिलें मंगवाती है और इस उत्पादन का नियोजन डालर कमाने की दृष्टि से करती है। इस समिति का नाम ही असंगत है। इसे तो "डालर-विनिमय समिति" या "दीवानखाना उद्योग-समिति" कहना चाहिए। यदि यह समिति सरकारी महकमों को हाथ-कागज का उपयोग करने के लिए राजी कर सके, तो यही एक उद्योग ऐसा है जो हजारों देहातियों को काम दे सकेगा और एक कलापूर्ण, किन्तु मर रही कारीगरी को संजीवन देगा। ये समितियां जिस तरह चलाई जा रही हैं, उससे हम जनता को क्या कोई लाभ पहुँचा रहे हैं? और जब इस विषय में हम सरकार की आलोचना करते हैं, तब हमारा मतलब यह नहीं होता कि सरकार हमारे आर्थिक क्षेत्र में कोई हिस्सा न ले। अगर सरकार घानी या खादी जैसे गृह उद्योगों को बढ़ावा देने के लिये उपाय-योजना करे, तो सचमुच इससे बढ़कर और क्या हो सकता है?

मध्यभारत संघ के नये प्रधानमन्त्री श्री तख्तमल जैन राजप्रमुख के सामने शपथ ले रहे हैं।

श्री महताब ने गांधीजी के सिद्धान्तों का जो अर्थ या अमल किया है उसमें तर्क की यह कमी सबसे ज्यादा प्रगट हुई है। वे कहते हैं—"गांधीजी की स्वयंपूर्णता का मतलब है जनता के आर्थिक जीवन में सरकार का हस्तक्षेप न करना।" "लेकिन 'स्वयंपूर्णता' ऐसी एकदम निरपेक्ष चीज नहीं है, मनुष्य के जीवन का कोई भी अंग निरपेक्ष कहां है? यदि गांधीजी सचमुच सरकार का हस्तक्षेप बिलकुल ही नहीं चाहते थे, तो फिर सरकार का काम ही क्या रह जायगा? कोई भी काम हस्तक्षेप तब बन जाता है, जब कोई अपने कार्यक्षेत्र की सीमा का उल्लंघन करता है। आर्थिक जीवन का एक सुनिश्चित हिस्सा सरकार के लिए निर्धारित किया हुआ है, और हम नहीं चाहते कि वह ऐसे कामों में हाथ डाले, जिन्हें करने के लिये उसकी रचना नहीं हुई है। वे कहते हैं कि गांधीजी के स्वयंपूर्णता के सिद्धान्त के अनुसार, "यदि मुल्क के किसी हिस्से में चावल या कपड़ा न मिल रहा हो, तो इसकी कैफियत सरकार से नहीं मांगी जा सकती।" उनके इस कथन में भी थोड़ा सत्य हम मानते, यदि स्वयंपूर्णता के विकास में सरकार ने अपना हिस्सा अदा किया होता। पहले उसे ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना चाहिये, जो स्वयंपूर्णता की ओर ले जाती हैं। खादी को बढ़ाने का ही उदाहरण लीजिये। यदि सरकार गांवों में मिल का सूत और कपड़ा पूरती रहे, तो उस हालत में क्या खादी में स्वयंपूर्णता आ सकती है? स्वयंपूर्णता की परिपूर्ण योजना में जनता और सरकार में ज्यादा से ज्यादा सहयोग रहेगा। नियंत्रणों की नीति एकतरफा है, जब कि सहयोग दुतरफा होगा।

श्री हरिकृष्ण महताब
उत्साह के अतिरेक में आप तर्कशास्त्र के सब नियम भूल गये हैं।

यह देख कर जी दुखता है कि श्री महताब जैसे उत्तम कोटि के लोक नेता अपना मतलब गांठने के लिये सत्य को तोड़-मरोड़ करते हैं और अपनी सत्ता का दुरुपयोग करते हैं। गांधीजी की बात गलत ढंग से पेश करना गांधीजी की याद का अपमान और सत्य का द्रोह करने जैसा है, और यदि इस पर कोई नाराजी प्रगट करे तो उसे दोष नहीं दिया जा सकता। —ह॰ लेखक

आनन्द के तीन स्रोत

एक चीनी लोकोक्ति है, "यदि आप १० वर्षों के लिए योजना बना रहे हैं तो आप वृक्ष लगाइये, परन्तु यदि आप १०० वर्षों के लिए योजना बना रहे हैं तो मनुष्यों का निर्माण कीजिये।"

किसी भी महान् पुरुष के आनन्द के तीन स्रोत होते हैं, किन्तु साम्राज्य पर शासन करना उसमें सम्मिलित नहीं है।

उसके आनन्द का पहिला स्रोत यह है कि उसके माता-पिता दोनों जीवित हैं, तथा उसके भाइयों को कोई कष्ट नहीं है। उसके आनन्द का दूसरा स्रोत यह है कि उसे ईश्वर के समक्ष लज्जित होने तथा उसके साथियों के समक्ष झिझकने की कोई आवश्यकता नहीं है। उसके आनन्द का तीसरा स्रोत यह है कि साम्राज्य की नवोदित प्रतिभा को शिक्षित करना उसका कर्त्तव्य है। सचमुच महान् पुरुष के आनन्द के तीन स्रोत हैं तथा साम्राज्य का शासन करना उसमें सम्मिलित नहीं है।

—श्री लियांग चाऊ चा

●

इन्द्र धनुष

जापानी परिवार ने ईख खाई

नीचे दी हुई जापानी परिवार की बात कल्पना नहीं है। वह गान्धी-शिविर के मेरे साथी भाई श्री दुर्योधनसिंह की अपनी आंखों देखी हुई है और उनके बताये मुताबिक वह लिखी गई है। साधारण तौर पर हमें तो 'सोने में मिट्टी' बनाने की आदत पड़ गई है, इसलिए भी इस बात को जानना जरूरी लगता है। और चाहें तो हम सब इसमें से पदार्थ पाठ ले सकते हैं।

१९२१ की बात है। मेरे साथी दुर्योधनसिंह पूना जाने के लिए बम्बई से गाड़ी पर सवार हुये। धीरे-धीरे मुसाफिरों से डब्बा भरने लगा। अपने दो-तीन बच्चों के साथ एक जापानी परिवार भी उसी डब्बे में दाखिल हुआ।

गाड़ी आराम के साथ स्टेशन-स्टेशन पर ठहरती हुई पूना की ओर बढ़ रही थी। गर्मी के कारण सबको प्यास लगी थी। एक स्टेशन पर ईख बेचने वाला आया। श्री दुर्योधनसिंह ने ईख खरीदी। डब्बे के दूसरे यात्रियों ने भी खरीदी। जापानी बच्चों की ईख खाने की इच्छा थी, इसलिए उनके माता-पिता ने भी खरीदी।

आदत के मुताबिक हमारे लोग तो दांतों से ईख छील कर, टुकड़े करके और चूस कर उसके चूर्ये फेंकने लगे। जापानी परिवार ने ऐसा नहीं किया। उन लोगों की शिक्षा ही अनोखी थी। उस दम्पती ने चाकू से उसे सुन्दर ढंग से छील कर उसके छिलके अपने पास रख छोड़े। बाद में वैसे ही सुन्दर ढंग से उन्होंने उसके गोल-गोल टुकड़े (गंडेरी) काटे। उसके बाद वे छिलके और गंडेरी उन्होंने अपने बच्चों को चूसने के लिये दिये। बालकों ने उन्हें चूस कर फेंका नहीं, अपने पास रख छोड़ा।

श्री दुर्योधनसिंह और उस डब्बे के दूसरे कुछ मुसाफिर आश्चर्य से यह सब देखते रहे। ईख तो हम भी कई बार चाकू से छीलते हैं और गंडेरी भी बनाते हैं, फिर भी छिलके और गंडेरी सब एक समान हों, इतनी सावधानीपूर्वक हम यह नहीं करते। इन लोगों का इतनी सावधानी बरतने का कारण क्या होगा, यह प्रश्न बहुतों के मन में पैदा हुआ और इसलिए वे उत्कंठापूर्वक देखते रहे।

जापानी दम्पती ने सबसे पहले इन चूसे हुये चूर्यों को धो डाला। उसके बाद ईख के छिलकों का सुन्दर पंखा बनाया और चूर्यों का फूल जैसा आकार बना कर उसे धागे से बांध कर माला बनाई। फिर पेटी में से रंग का डब्बा और कूची (ब्रश) निकाल कर दोनों चीजों को अलग अलग किस्म के रंगों से रंग कर आकर्षक बनाया।

अन्त में पूना स्टेशन आया। सभी लोग गाड़ी से उतर कर चले गये। श्री दुर्योधनसिंह जल्दी नहीं उतरे। उनकी इच्छा तो यथासंभव जापानी परिवार के साथ रह कर यह देखने की थी कि वह उस पंखे और फूलों का क्या करता है। जापानी परिवार के साथ वे उतरे और थोड़ा फासला रखके उन लोगों के साथ जाने लगे। दोनों शहर में पहुंचे। जापानी परिवार गाड़ी रोक कर उतर गया और अपनी बनाई हुई माला तथा पंखा बेच कर उसने कुछ पैसे कमाये।

इस तरह जापानी परिवार ने मुफ्त में ईख खाई, बेकार चीजों में श्रम और कला भर कर शून्य में से संपत्ति पैदा की।

—कनु गांधी

●

दो विचारधाराएं

आज दुनिया में दो विचार धाराएं हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं। एक है पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था की और दूसरी है समाजवादी अर्थ-व्यवस्था की। पहली व्यवस्था इसे उचित मानती है कि पैदावार के साधनों पर खानगी लोगों का मालिकाना हक हो, और इसलिए वह खानगी नफा कमाने के लिए जी तोड़ कोशिश करती है।

यह नफा सिर्फ पैदावार के साधन रखने वाले पूंजीपति ही खा जायें, यह ठीक नहीं। इस नफे पर समाज का हक है। इसलिए समाजवाद यह कहता है कि बड़े बड़े कारखानों के उद्योगों पर सरकार की मालिकी होनी चाहिए। यानी समाजवादी सरकार उद्योगों का कब्जा ले और अच्छी नौकर रख कर धन्धा चलाये, यह दूसरी व्यवस्था का तरीका है।

यह दूसरा तरीका रूस जैसे देशों में आजमाया जा रहा है। लेकिन उससे साधारण आदमी की शिकायत दूर नहीं होती। उसका अंश बहुत दूर तक सरकारी नौकरों के तन्त्र और उसके जाल फीते में जकड़ जाता है। पूंजीवादी रचना वाले सेठ की जगह सरकारी नौकरशाही, उसके अमलदारों की जान-पहचान से फायदा उठाने की वृत्ति और लांच रिश्वत ले लेती है। मनुष्य का व्यक्तित्व मारा जाता है। और नये प्रकार की—कहिये कि सुधरी हुई गुलामी आती है।

इसलिए दुनिया को शान्ति का रास्ता लेना हो, तो ऊपर बताई दोनों व्यवस्थाओं के बदले किसी नई व्यवस्था की खोज करनी होगी। यह खोज गांधी जी का चरखा और उसका तत्वज्ञान है चरखा निजी मालिक के या सरकारी अंकुशों के अधीन नहीं है। यह हमें सीधा और स्वावलंबी रास्ता बताता है और इसी तरह जीवन की सारी बातों में बरतने के लिए गांधी जी की सर्वोदय की सर्वोत्तम कहती। अगर नागरिक अपने अन्न और कपड़ों के लिए सेठ या सरकार पर निर्भर रहें तो उनके स्वराज्य और नागरिक आजादी को हमेशा खतरा ही बना रहेगा।

लोकतन्त्र के मुख्य अवगुण

'लोकतंत्र के अन्तर्गत लोकप्रिय नागरिक को यह लोभ [illegible] ऐसा आभास हो जाता है कि मौजूदा सरकार दूर हट सकती है, अतः उन्हें अपनी होकर [illegible] बातें [illegible]। लोकतन्त्रीय देशों में अर्थिक-संगठन [illegible] राजनीतिक शासन-पद्धति से अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। इसलिए इस बात की कोई आशा नहीं कि लोकतन्त्रवाद अपनी जिस प्रतिष्ठा को खो बैठा है, उसको पुनः प्राप्त कर सकेगा। पूंजीवाद राजनीतिक लोकतन्त्र आर्थिक विषमता को दूर करने में वर्ग संघर्ष तथा पूंजीपतियों द्वारा जनता के शोषण को रोकने में सर्वथा असमर्थ सिद्ध हुआ है। इसके अतिरिक्त वह राष्ट्र को दलबन्दी बढ़ा कर उसकी संकल्प शक्तियों को भी नष्ट कर देता है। दूसरे शब्दों में लोकतन्त्र मानव समाज की आर्थिक समस्याओं को संपत्ति के सुषम उत्पादन, सम्यक् वितरण और सदुपयोग की समस्याओं को हल करने में सर्वथा असमर्थ सिद्ध हुआ है।

ऐसी दशा में लोकतन्त्रीय शासन-पद्धति की सफलता के लिये बहुमत को चाहिये कि वह अपनी शक्ति का उपयोग इस तरह करे कि विरोधी दलों को सशस्त्र विद्रोह के हेतु विवश होना पड़े! लोकतन्त्र सिद्धांतों का ऐसा समूह है, जिसमें हम, आत्मा का प्रारम्भ और उसका उद्देश्य व्यक्तियों को अपने सर्वोत्तम गुणों का विकास करके का [illegible] देश, सामान्य-सुविधा, मिलनसारिता तथा [illegible] प्रदान करेगी।'

—[illegible]

●

यदि हम—

यदि हम विश्व में शांति चाहते हैं तो हमें सर्वप्रथम अपने राष्ट्र की उत्तम व्यवस्था करनी चाहिये, यदि हम अपने राष्ट्र की उत्तम व्यवस्था करना चाहते हैं, तो हमें प्रथम अपना परिवार व्यवस्थित करना चाहिये, यदि हम अपना परिवार व्यवस्थित करना चाहते हैं तो हमें प्रथम व्यक्ति को शिक्षित करना चाहिये, यदि हम अपने व्यक्ति को शिक्षित करना चाहते हैं तो हमें प्रथम मन अथवा हृदय को पवित्र बनाना चाहिये, यदि हम अपना हृदय पवित्र करना चाहते हैं तो हमें अपने इरादों के प्रति सच्चे रहना चाहिये, यदि हम सच्चे बनना चाहते हैं तो हमें प्रथम ज्ञान प्राप्त करना चाहिये, यदि हम ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें प्रथम अन्वेषण अर्थात् किसी विषय की सत्य बात का अवलोकन करना चाहिये।

—कान फ्यू शे

●

शिक्षा नीति वाले मन्त्री

अभी दिल्ली के सरकारी क्षेत्रों में यह विचार चले लोगों के प्रयत्न किया जा रहा है कि [illegible] में अपनी बात रख सकते हैं। [illegible]

(शेष पृष्ठ ३५ पर)

> यदि कार्लमार्क्स का वर्गविहीन राज्य का स्वप्न जारशाहीके पिछड़े रूस की बजाय, इंग्लैण्ड या फ्रांस आदि उदार उन्नत राष्ट्रों में सफल होता, तो सम्भवतः साम्यवाद का रूप जनतन्त्रविरोधी, तानाशाही और निरंकुश न होकर दूसरा ही होता। कार्लमार्क्स भी नहीं जानता था कि उसकी क्रान्ति का स्वप्न रूस में सफल होगा — यही उसकी भूल थी।

मो० स्तालिन

जिसे छोड़ चुके हैं, उसी की उपासना, जिसे नष्ट करना चाहते हैं उसी की सराहना, यह है ....

साम्यवादी निरंकुशता की विशेषता

★ फ्रैंसिस वाटसन

जिसे वे छोड़ चुके हैं, उसी की उपासना, जिसे वे नष्ट करना चाहते हैं, उसी की सराहना—यह आधुनिक निरंकुश शासन की एक उल्लेखनीय विशेषता है। किन्तु सदैव ऐसा नहीं था। चंगेज खां और तैमूर अत्याचारी थे और संसार के सामने इसी रूप में प्रकट होना चाहते थे। यदि उन्होंने निर्बलों के रक्षक होने का पाखंड किया होता तो उनकी आतंक-शक्ति अवश्य कम हो जाती। जब फ्रांस के चौदहवें लुई ने कहा था 'मैं स्वयं राज्य हूं' तो उसका मतलब वास्तव में यही था कि वह स्वयं राज्य है और वह चाहता था कि सब लोग इन शब्दों का वही अर्थ निकालें जो निकालना चाहिये। स्वतन्त्रता का सर्वनाश अत्याचार के रूप में नहीं, किन्तु मुक्ति के रूप में करने का आधुनिक रिवाज शायद नैपोलियन के समय से आरम्भ हुआ था।

इस बात को इतने संक्षिप्त रूप में व्यक्त करना नेपोलियन के प्रशंसकों को पसन्द नहीं आयगा "और न ऐसा करना उचित होगा। किन्तु दूसरे देशों को जीतने और अपना बल बढ़ाने की सूझ नेपोलियन को थी और इसे सब स्वीकार करते हैं। बात यह है कि नेपोलियन की ये अभिलाषाएं इतिहास में ऐसे समय कार्यान्वित की जाने लगी थी, जब राष्ट्रीय और सामाजिक स्वतन्त्रता को कुछ महत्व प्राप्त हो चुका था, जब जनमत का ध्यान रखने की आवश्यकता आरम्भ हो चुकी थी।

खुला अत्याचार असह्य

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हिटलर को जनमत का ध्यान रखना पड़ा था। यद्यपि यह सत्य है कि 'मैन काम्फ' में हिटलर ने जनसाधारण और जनतन्त्र के प्रति घृणा और उपेक्षा की भावनाएं प्रकट की थीं, किन्तु निस्सन्देह राष्ट्रीय अधिकार के सोपान पर चढ़ते समय और विश्व विजय की योजनाओं में तल्लीन होने पर तानाशाह हिटलर अपनी उपर्युक्त असहिष्णुता को अपेक्षाकृत अधिक शिष्ट शब्दों में रखने पर बाध्य हुए थे।

यद्यपि हिटलर को वैधानिकता से घृणा थी, किन्तु जर्मन राज्य के सर्वेसर्वा बनने के लिए उस वैधानिकता के प्रति आदर की भावना का प्रदर्शन करना पड़ा था। पदच्युतकृत होकर न्याय करने की उन विधियों से जो उन्नति के कई सौ वर्षों की अवधि में विकसित हुई थी, हिटलर घृणा करता था, पर न्यायालय के निर्णयों में लोगों के विश्वास का ध्यान रखते हुए उसे रीशटाग के अग्निकांड के लिए मुकदमे का प्रबन्ध करना ही पड़ा। जनमत के प्रति हिटलर के हृदय में जरा भी प्रेम नहीं था, किन्तु जनमत पर अपना आतंक डालने के लिए उसने जो विशाल व्यवस्था स्थापित की, वह स्वयं दिखाती है कि जनमत की शक्ति से वह डरता था।

जर्मनी में निर्वाचन एक दिखावटी नाटक मात्र रह गये थे। चौदहवें लुई ने निर्वाचनकी लेशमात्र भी परवाह नहीं की थी। हिटलर ने निर्वाचन किए थे और यद्यपि निर्वाचनों के परिणाम पहले ही से निश्चित कर लिए गये थे, किन्तु निर्वाचन कर उसने यह दिखा दिया कि वह जनतन्त्र को ऊपरी उपासना अवश्य करता है। यह इस बात का सबूत था कि संसारको निरंकुश अत्याचारकी आवश्यकता नहीं है। उसको आवश्यकता है, इससे कहीं बढ़िया माल की—और हिटलर को घटिया माल बेचने के लिए बढ़िया माल का नाम देना पड़ा था। यही बात हिटलर के सारे हमलों पर लागू है, दूसरे देशों की स्वतन्त्रता का अन्त करने के उसके सारे प्रयत्नों पर। हिटलर को हमेशा एक बहाना ढूंढना पड़ता था, चाहे बहाना कितना झूठा क्यों न हो। संसार स्वतन्त्रता का रसास्वादन कर चुका था। अब उसे खुला अत्याचार क्यों न असह्य होता?

आप कह सकते हैं कि यह सब बहुत सीधी सादी बात है। पर यदि इसे एक दूसरे दृष्टिकोण से देखें तो उसका महत्व स्पष्ट हो जाता है। हमने अत्याचार को आजादी की पोशाक पहनते देखा है, पर आजादी को अत्याचार की वेश-भूषा में नहीं। तानाशाही देशों में उम्मीदवार निर्वाचकों को जनतन्त्र का सुख प्रदान करने का प्रण करते हैं, पर किसी जनतन्त्रवादी देश के निर्वाचन में कोई उम्मीदवार यह नहीं कहता कि उसे वोट देने वाले तानाशाही का मजा चखने का अवसर पाएंगे। शान्ति प्रेमी देश युद्ध प्रेमी होने का पाखंड नहीं करते, किन्तु युद्ध प्रेमी देश शान्ति प्रेम का

प्रे० ट्रूमैन

अवश्य फैलाते हैं। अपने बचाव के लिए प्रयत्नशील कोई देश यह नहीं कहता कि वह आक्रमण की तैयारियों में तत्पर है, किन्तु आक्रमण का प्रबन्ध करने वाले बचाव का बहाना अवश्य ढूंढते हैं।

शब्द और अर्थ में विरोध

आधुनिक साम्यवाद का श्री गणेश कुछ सिद्धान्तों को लेकर हुआ था। और आधुनिक साम्यवाद के संस्थापकों ने इन सिद्धान्तों को बंधेबंधाए, अपरिवर्तनशील सिद्धान्तों के रूप में प्रतिष्ठापित किया। वे बड़े विश्वासपूर्वक, बड़ा बल देकर, कहते थे कि भूतकाल के विषय में उनके विचार सही निकले थे और इसलिए भविष्य के बारे में भी उनकी धारणाएं निश्चय ही सही सिद्ध होंगी। उन्होंने इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर सब चीजों पर टीका-टिप्पणी की, सब चीजों के अर्थ का विश्लेषण इन्हीं बंधे बंधाए और अपरिवर्तनशील सिद्धान्तों की रोशनी में किया। किसी कठोर सिद्धान्त में सम्पूर्ण विश्वास करने के कारण वे अपने विचारादि अधिक साहस पूर्ण ढंग में व्यक्त कर सके थे। उसकी प्राप्ति के लिए जिसे वे 'वर्गविहीन समाज' कहते थे, उन्होंने प्रत्यक्षरूप में 'वर्गयुद्ध' का प्रचार किया। ...... और सचमुच उनका मतलब युद्ध से था। उन्होंने 'प्रोलेटेरियट' (निम्न श्रेणी) की 'डिक्टेटरशिप' (तानाशाही) स्थापित करने के लिए क्रान्ति का प्रचार किया। ......और सचमुच उनका मतलब 'डिक्टेटरशिप' से था।

पर आजकल?

आजकल हम साम्यवादियों के मुख से ऐसी बातें नहीं सुनते। आजकल तो वे उसी लिबरलवाद की शब्दावली का प्रयोग करते हैं, जिसका उन्होंने विरोध किया था। आजकल वे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय शान्ति की बातें करते हैं, 'पीपुल्स रिपब्लिक' की बातें, यहां तक कि डिमोक्रेसी की बातें। 'प्रोलेटेरियट' की 'डिक्टेटरशिप' का स्थान स्टेट की एक अत्यन्त केन्द्रीकृत नौकरशाही ने ले लिया है—वही जिसके पूर्णतया क्षीण हो जाने की भविष्यवाणी कार्ल मार्क्स ने की थी। कुछ भी हो 'डिक्टेटरशिप' की बातें साम्यवादी आजकल नहीं करते।

जनतन्त्र का जोर

क्यों! आखिर हुआ क्या? मैं पेचीदे प्रश्नों और सूक्ष्म सिद्धान्तों की पहेली सुलझाने में कोई विशेषताप्राप्त व्यक्ति नहीं हूं पर मैं प्रायः सोचता हूं कि इस बात का पूर्व ज्ञान न प्राप्त कर सकना कि समाजवादी क्रान्ति का स्वरूप क्या होगा—यही मार्क्स की भूल थी। मार्क्स ने अपना कार्य पश्चिमी योरप के लिबरलवाद के वातावरण में और उस वातावरण के विरुद्ध किया था और उसे आशा थी कि साम्यवादी क्रांति वहीं होगी।

मार्क्स गलत इस लिए सिद्ध हुए, क्यों कि पश्चिमी योरप के प्रगतिशील जीवन-स्तर और औद्योगीकरण के लाभ को फैलाने के पक्ष में बढ़ती हुई जनतन्त्रवादी भावना ने साम्यवाद के लिए कोई जगह नहीं छोड़ी।

इसके विपरीत साम्यवादी क्रान्ति लिबरलवाद की परम्पराविहीन रूसमें रची गई। रूसी साम्यवाद ने, जो जारशाही का प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी है, अपने पूर्वजों के गुण ग्रहण कर लिए हैं। भविष्यवाणियां पूरी नहीं हो सकीं और क्षीण होने के स्थान में इतिहास का सबसे बड़ा स्वेच्छाचारी शासन राज्य बन गया है।

आज संसार के स्वेच्छाचारी शासन और तानाशाही अपने असली रूप में टिक नहीं सकते। इसी बात से कि साम्यवाद जनतन्त्र का कोरा उपासक बनना आवश्यक समझता है, जनतन्त्रवादी विचारधारा का जोर प्रकट होता है। सोवियत रूस के निर्वाचन नाजी जर्मनी के निर्वाचनों की तुलना में अधिक महत्व नहीं रखते। चर्चिल या ट्रूमैन की भांति स्तालिन और हिटलर को निर्वाचनों के जरिये उनके पदों से अलग नहीं किया जा सकता। यह बात हमको मालूम है। पर रूसी शासक निर्वाचन का नाटक रचना आवश्यक समझते हैं—यही मुख्य बात है और इसी में उस जनतन्त्र की प्रशंसा निहित है, जिसका वे विरोध करते हैं।

इसी प्रकार राष्ट्रवाद भी मार्क्सवादी सिद्धान्त के लिए बाहर की वस्तु है। मास्को ने सोवियट यूनियन में और कठपुतली देशों में जितने राष्ट्रीय आन्दोलनों को पहले प्रोत्साहन दिया, फिर उनका अनुचित उपयोग किया और बाद में उनका अन्त किया। राष्ट्रवाद का वह एकमात्र रूप जिसका सदैव समर्थन किया जाता है, रूसी राष्ट्रवाद है। उन सब सिद्धान्तों का जिसका प्रतिपादन साम्यवाद के संस्थापकों ने इतनी गम्भीरता और धैर्य के साथ किया था, सब से विलक्षण अन्त यह है: एक विशाल रूसी स्टेट, जिसकी रिपब्लिकों को प्राप्त स्वतन्त्रता ब्रिटिश उपनिवेशों की उपलब्ध स्वतन्त्रता से भी कम है, ऐसा स्टेट जो राष्ट्रीय प्रभुत्व के विषय में इतना चौकस और इतना सन्देहग्रस्त है कि शस्त्रास्त्रों और अणुशक्ति विषयक मित्रराष्ट्रीय प्रस्तावों को सफल नहीं होने देता और जो अपने देश के लोगों के लिए प्रतिदिन जारशाही, पूंजीवादी भूतकाल के पृष्ठों में रूसी बड़प्पन की बातें खोजता है (या उन्हें यों ही गढ़ता है) और उनका प्रचार किया जाता है। यह जनतन्त्रवाद की कोरी उपासना-मात्र नहीं है। यह कुछ और है। क्या यह क्रान्ति-विरोधी क्रान्ति का लक्षण है? कौन जाने।

दो पुरुष और नारी

★ श्री रामचन्द्र तिवारी

सोमजी आराम कुर्सी पर पैर फैलाये उचित विषय के साथ शरीर सुख का अनुभव कर रहे थे। किसी ने किवाड़ खटखटाये। वे संभवतः जान गये कि कौन है। मन में उठा कि आगंतुक को जो आदर वे सदा देते आये हैं, दें। उनके पैर हिले, संभल कर बैठने की चेष्टा में, पर उसी क्षण वे थम गये। उन्होंने उन चरणों को बल-पूर्वक कुर्सी के हत्थों पर रखा। नहीं, वे अब आदर के पात्र नहीं हैं, जो आदर सत्कार वह उन्हें देता आया है वह अब नहीं देगा। हां, नहीं देगा। वह भी तो कुछ है और उसने वहीं लेटे लेटे विश्राम पूर्वक कहा— "ओ सज्जन हों भीतर आ जावें।" सज्जन ने सोमजी की आज्ञा की आवश्यकता ही न अनुभव की थी, वे उसके उठने से पहिले ही भीतर आ चुके थे।

उन्हें देखते ही सोमजी संभल कर बैठ गये, बोले— "आइये जीजाजी।" स्वर में एक रुखाई, तेजी और चुनौती थी। "मैं अभी आपके विषय में सोच ही रहा था।"

जीजा जी ने कुर्सी पर सरलता से बैठते हुये कहा "यह तो मेरा परम सौभाग्य है कि आपके अमूल्य क्षणों में से कुछ ··· हां हां, यदि आपको अंग्रेजी मुहावरों से परहेज न हो तो कहूं कि शैतान परमात्मा की भांति व्याप्त है। उसे बुलाने नहीं जाना होता केवल स्मरण मात्र करना होता है।"

सोमजी ने अपनी हार अनुभव की, मुद्रा गंभीर की, और आध्यात्मिक प्रयोग द्वारा शक्ति संचय की। बोले "आप जानना चाहेंगे कि आपके विषय में मैं क्या सोच रहा था।"

"यह मेरा सौभाग्य होगा कि मैं ···"

"देखिये जीजा जी, मुझे इस समय आपका यह व्यंग विनोद तनिक भी नहीं सुहा रहा है। मैं आपको बता देना चाहता हूं कि मैं आपके विषय में क्या सोच रहा था।"

"मैं अनुगृहीत हूंगा।"

सोमजी ने अपने संपूर्ण अस्तित्व में कठोरता लाते हुए कहा— "मैं सोच रहा था कि मैं स्पष्ट वक्ता हूं, लाग लपेट नहीं जानता, हां, तो मैं सोच रहा था कि यदि आप मेरे जीजा न होते तो मैं आपका खून कर डालता।" सोमजी ने वाक्य समाप्त कर तुरंत जीजाजी की दृष्टि से दृष्टि मिला दी। उसकी धमकी का जीजा पर क्या प्रभाव पड़ा है?

जीजाजी ने मनोयोग पूर्वक सोमजी की ओर निहारा और निहारते रहे।

सोमजी ने दुहराया— "मैं एकदम सच कह रहा हूं जीजा जी। यह एकदम सच्चाई है। इसमें तनिक भी विनोद नहीं है।"

"मैं आइये, मैं आपकी संकल्प शक्ति के विषय में कुछ विकल्प कर रहा था। मैं यदि आपका जीजा न होता तो आप मेरी हत्या कर डालते। इस विचार में मुझे तो किसी प्रकार की अशुद्धि दिखाई नहीं देती। न मुझे किसी प्रकार का खतरा ही अनुभव होता है, आपका विचार···"

सोमजी का संयम अचानक टूट गया। आपने जिस शब्दावलि का उपयोग मेरे और मेरे परिवार के लिए किया है, उसकी सूचना विभा ने मुझे दे दी है। मैं अत्यन्त संस्कृत व्यक्ति हूं, यह आप से अधिक और कौन जानेगा, पर आज आपको यह भी भली भांति ज्ञात हो जायेगा कि संस्कृति की सीमा होती है। आप जीजा हैं अवश्य, पर इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं···।"

"ओह, मुझे इसका पता नहीं था, अब मैं जान गया कि विभा जी ने पितृ-कुल के प्रति अपना कर्त्तव्य पूर्णतया पालन किया है और इसीलिए वे मेरे यहां से बिना सूचना दिये चली आयीं हैं।"

"वह एक स्वाभिमानी परिवार की पुत्री है। उसने परिवार के प्रति अपना कर्त्तव्य ही पालन किया है।"

"क्षमा कीजियेगा, मैं यह तो भूल ही गया था। वह आपकी बहिन हैं। मेरा उनसे रक्त का कोई सम्बन्ध नहीं है, मेरे लिए तो जैसी और कोई नारी हो सकती हैं वैसे ही वे हैं। धन्यवाद, आपका बहुत बहुत धन्यवाद! आपने मेरे नयनों के सामने से पर्दा हटा दिया। इतना बड़ा सत्य और अब तक मुझ से छुपा हुआ था। कष्ट के लिए क्षमा। अब मैं चलता हूं। नमस्कार!"

सुरेश उठ कर खड़ा हो गया। सोमजी एकटक उसकी ओर देखते रहे और क्रुद्धता बटोरते रहे। जब सुरेश चल ही पड़ा तो उससे रहा न गया। उसने तेजी से आज्ञा दी—"ठहरिये!"

सुरेश रुक गया, "कहिये?"

"मैं आपका जितना आदर करता था·······"

"मुझे इसका तनिक भी दुःख नहीं है, और कहिये।"

"आप विभा को लिवाने नहीं आये थे?"

"अब मैं सोचता हूं कि नहीं।"

"क्यों?"

"क्योंकि यह असंगत बात होगी। एक अनधिकार चेष्टा····"

"आप विभा को ले जाने से इनकार करते हैं?"

"मुझे करना चाहिये।"

"आप मेरी बहिन का अपमान करते हैं।" उन्होंने एक दृष्टि सुरेश पर डाली, अपनी पेशियों के बल से युक्त भुजाओं को निहारा।

सुरेश कुर्सी पर बैठने जा रहे थे, सोमजी की मुद्रा देख रुक गये।

"तो आप पाशविक शक्ति को अपनी सहायता के लिए पुकारना चाहते हैं?"

"मैं कायर नहीं हूं जो किसी को अपनी सहायता के लिए पुकारूं। यह शक्ति निरंतर परिश्रम से अर्जित की है। इसके लिए पसीना बहाया है।"

"मैंने यह तो नहीं कहा कि आपने इसे चोर बाजार में कमाया है, पर यह मैं अवश्य कहना चाहता हूं कि शारीरिक शक्ति की दुहाई देना वानर-युग को लौटाने का यत्न करने के समान हैं। आप और चाहे जो कीजिये पर यह न कीजिए।"

"आप मेरी शारीरिक क्षमता का अपमान कर रहे हैं।"

"मैं शारीरिक क्षमता का अपमान नहीं कर रहा। अपमान उसका आप कर रहे हैं, जो शारीरिक क्षमता को पेशियों की शक्ति से आगे नहीं बढ़ने देना चाहते मेरे भाई, पेशियों में शक्ति आवश्यक है पर शरीर को स्वस्थ रखने के लिए। पेशियों की शक्ति को आवश्यकता से अधिक महत्व···।"

"मेरी पेशियों में शक्ति है, तो मैं आज आपको चुनौती दे सका हूं।"

"पर आपकी विजय पेशियों की शक्ति पर निर्भर नहीं है। पेशियों की शक्ति पर निर्भर रहना अंध पुरातनवादिता है। मनुष्य की विकसित शक्तियों के प्रति नेत्र मूंदना है। विजय उनके साथ है, जिनके पास नवीन और अधिक क्षमतावान आयुध हैं। आपने राम-रावण युद्ध को भी देखा····।"

'-क्या देखूं राम रावण युद्ध को?" हमारी प्राचीन धनुर्विद्या ने रावण जैसे महावीरों के छक्के छुड़ा दिये।"

"छक्के नहीं प्राण छुड़ा दिये, पर क्यों?"

"क्यों?"

"क्योंकि रावण का वंश शारीरिक शक्ति और पुरातन आयुधों पर निर्भर रहा। उसने यही समझा कि नर, वानर और रीछ तो हमारे आहार हैं। वे भूल गये कि यह साधारण नर नहीं हैं, जिससे उनका सामना है। यह वह नर है जिसके पास धनुष-बाण है और जिसने उनके उपभोग की परम क्षमता प्राप्त की है।"

"हुं।"

"जिस समय धनुर्धर राम मैदान में आते हैं, राक्षसों का दल भिखर जाता है। उत्तम आयुधधारी राम अकेले चौदह सहस्र निश्चिरों का विनाश करने में सफल हुए।"

"और मेघनाथ की शक्ति?"

"वही एक आयुध था जिसका प्रयोग मेघनाद ने राक्षसी सीमा से बाहिर किया था। पहिली बार वह चल गया। पर जब उसका भेद राम लक्ष्मण जैसे प्रतिभाशाली पुरुषों पर विदित हो गया, तो उसका उपयोग व्यर्थ जाने लगा। मेरे भाई, राम ने कभी मल्लयुद्ध नहीं किया। राम जीते इसलिये कि उन्होंने मस्तिष्क को पेशियों के साथ मिला कर उसकी क्षमता का उपयोग किया।"

"तो आप ······ हां, हां, आपकी समझ में यह भेद की बात नहीं आ सकती। रावण का पतन इसलिए हुआ कि उसे शाप था और फिर श्रीराम साक्षात् भगवान्, भला उनके सामने कौन ठहर सकता था? यदि वे धनुष बाण न लेकर केवल फूंक ही मार देते तो रावण को उनके द्वारा मर जाना था।"

"हां, हां, कहते रहिये।"

"आपने कथा नहीं सुनी कि किस प्रकार राजा प्रतापभानु ब्राह्मणों के शाप वश तीन जन्मों तक राक्षस कुल में उत्पन्न होते रहे और इतने बलशाली कि स्वयं भगवान् को ही हरबार उनका वध करने के लिए जन्म लेना पड़ा। यही तो भेद है, जिसे आप नहीं जानते।"

"जानता हूं ।"

"कहां जानते हैं आप ? यदि जानते होते तो क्या आप अपने प्राचीन जातीय गौरव के प्रति ऐसी अपमानजनक बातें कहते, धनुर्विद्या की ऐसी निन्दा करते। बैठ जाइये जीजाजी आप बैठ जाइये। आपने मुझे भारत की प्राचीन गौरवमयी सभ्यता का स्मरण करा दिया है। बैठ जाइये ।"

सुरेश बैठ गये। उन्होंने देखा कि सोमजी का मुखमंडल रक्तिम हो आया है। नयनों में एक विचित्र चमक आ उठी है। ऐसा लगा कि जैसे वे पार्थिव वातावरण से ऊंचे उठे जा रहे हों।

"हां अब ठीक है जीजा जी। राम कथा में आप जे जो वास्तविक बात पकड़ने की थी, वह तो पकड़ी ही नहीं। वह आप जैसे व्यक्ति की दृष्टि से भी बच गई। तभी तो कहा है कि ज्ञान का अभिमान कभी नहीं करना चाहिये। कितना ही ज्ञान क्यों न हो राम जी की कृपा के अभाव में उसका फल कुछ नहीं होता।"

"आप बताइये कि वह कौनसी मौलिक बात है रामायण में, जो मेरी पकड़ में नहीं आई है ?"

"पैनी होने पर भी आपकी दृष्टि ······ ।"

"मैं क्या जानने की धृष्टता कर सकता हूं ? कि वह ·· ··· ?"

वह क्या भगवान की कृपा के अभाव में किसी को दिखाई देगा !"

"जी।"

"क्या आपने कभी सोचा है कि रावण की शक्ति का भेद क्या था ! भग-भगवान के अतिरिक्त उसे और कोई भी नहीं मार सका ?"

"रावण की शक्ति का भेद ! उससे ।"

"वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वह भेद है उसकी शिव पूजा में। उसकी आध्यात्मिक शक्ति में। अच्छा, तनिक कल्पना कीजिये कि रावण अपना शीश काट काट कर कमल पुष्पों की भांति शिवजी को चढा रहा है और उसके कंधे पर नये नये शीश उगते आ रहे हैं। क्या ही अलौकिक दृश्य होगा वह।"

"तो आपभी कुछ ऐसा ही करतब कीजिये न ! भारत का प्राचीन गौरव फिर एक बार इस एटम बम की भड़क पर छा जाये। बस ऐसा चमत्कार हो कि एटम बम से मनुष्य नागासाकी में तन त्यागे और फिर उसे न्यूयार्क में प्राप्त करले। यदि आप यह संभव कर दें तो वास्तव में वह कार्य भारत के पुरातन गौरव के अनुरूप ही होगा।"

सोमजी गम्भीर हो गये। जैसे एक दुविधा में पड़ गये। फिर यकायक आत्मविश्वास की तरंग आई। वे आगे को झुके और मंद स्वर में बोले। "तनिक इधर आ जाइये।"

"कहिये।" सुरेश ने कुर्सी सरकाते हुए कहा।

"रावण की शिवोपासना का मंत्र मुझे ज्ञात हो गया है। कैसे ज्ञात हुआ यह तो मैं नहीं बताऊंगा। हूं, पर कोई हानि भी नहीं है। पिछले वर्ष जब मैं बद्रीनाथ गया था तो एक संत मिले थे। उन्हीं के साथ मैं मानसरोवर निकल गया। वहां एक परम वृद्ध तपस्वी निवास करते हैं। वे सदैव समाधि लगाये रहते हैं। भूख प्यास को उन्होंने जीत लिया है। कोई शारीरिक आवश्यकता उनकी नहीं रह गई है। सांस भी आये तो अच्छा न आये तो न सही। जब मैंने उनके दर्शन किये तो उनका शरीर हिमसे श्वेत हो रहा था। उन्हीं की कृपा से ··· ··· ।"

"और आपने उसका उपयोग ·· ।"

"धीरे बोलिये धीरे। दीवारके भी कान होते हैं। बस कुछ दिवस और अवशेष हैं।"

तो क्या आप उस महामंत्र को साध रहे हैं ?"

सोमजी ने अधर पर उंगली रख। "सावधान"

"जी ?"

"मैं इसका प्रयत्न कर रहा हूं। आगामी दशहरे को मेरी साधना का अन्तिम दिन होगा।"

"आप भी रावण की भांति अपना शीश भगवान शिव के अर्पण कर देंगे ?"

"अवश्य। मेरी साधना की सफलता असफलता उसी दिन ज्ञात होगी। यदि मेरे नवीन शीश उग आया तो ··· ?"

"तो ?"

"हमारा एक खोया रहस्य जीवित हो जायेगा।"

"हां और मनुष्य जाति के इतिहास को नवीन दिशा मिल जावेगी। कल्पना कीजिये कि भगवान शिव की कृपा से नवीन शीश उगाने की शक्ति प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त हो गई तो ··· हरे नये तलवारों से खेलने लगेंगे। गली कूचों में नरों के सिर लुढ़कते फिरेंगे। और नये रहेंगे साबुत के साबुत।"

"हूं।"

"और इस पावन भारत भूमि में बुद्धि का एक दम अभाव नहीं है। सिरों को कच्चा माल बना कर हमारे उद्योग पति विश्व भर में अनूठा एक नवीन उद्योग स्थापित कर लेंगे। भारतीय समृद्धि · ···"

हां सम्भावना तो बहुत है।" सोम जी संयम पूर्वक बोले। "संसार में युद्ध व्यर्थ हो जायेंगे। सब आयुध सामर्थ्यहीन हो जायेंगे। भगवान ही अवतार लेकर आवें, तभी किसी का वध हो सकेगा।"

"आपकी इस साधना की सीमाओं का कहीं अंत नहीं है।" सुरेश विचार मग्न हो गये। फिर बोले: "आपकी साधना के कुछ पार्थिव अंग भी तो हैं न।"

"साधना में पार्थिव ? क्या ?"

"अब आप अपना शीश भगवान के अर्पण कीजियेगा तो······"

सोमजी ने मुद्रा कठोर करते हुए अधरों पर उंगली रखी।

"नहीं नहीं, मेरे भाई, अत्यन्त महत्वपूर्ण है वह। मेरा अर्थ है कि वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वह आयुध, जिसे आपके कंठ छेदन का सौभाग्य प्राप्त होगा।

सोमजी की भवें तनती जान पड़ी। वे सुरेश की ओर देखते रहे।

सुरेश बोले — "उसे इतना धार-दार होना चाहिये कि कंठ से लगा नहीं कि सिर अलग — वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है।'

"मैं इस दिशा में एकदम उदासीन नहीं हूं, मैंने जो छुरा बनवाया है वह ··· ।"

"वह तो मैं जानता ही था कि आप जैसा सजग पुरुष ··· पर देखिये कि आपकी साधना पर संसार का भविष्य टिका है। समस्त वर्तमान और भावी मानव समाज के भाग्य का उत्तरदायित्व है। हां, तनिक सी भी चूक भयानक हो सकती है। मैं छुरे को देखना चाहता हूं।"

'आप ?"

हां, जब तक मैं छुरे की धार की तीक्ष्णता से संतुष्ट नहीं हो जाता ··· हूं ··· ।" उन्होंने दृढ़ता पूर्वक सिर हिलाया।

"जी"

सोमजी दुविधा में पड़ गये। पर अब कोई उपाय न था, "तो आप अवश्य ही ?"

क्या आप अपने इस महान् अनुसन्धान में तनिक भी रुचि लेने का सौभाग्य मुझे न देंगे ?"

सोमजी ने बड़ी सावधानी से अपनी अलमारी की ओर दराज में से छुरा निकाला। उस समय वे सभीत हिरनी की भांति चारों ओर ताक रहे थे। कहीं जीजा जी उनकी साधना को राह बन कर तो नहीं ग्रस जायेंगे ?"

सुरेश ने छुरा देखा। भयानक सम्भावनाओं से लबालब परिपूर्ण। पर अत्यन्त मनोहर, उसकी चमक ! उसकी तीक्ष्णता ! वे उसे निहार विचार मग्न हो गये। वह छुरा और सोमजी का कण्ठ। उन्होंने आलोचनात्मक दृष्टि से सोमजी को देखा। इस छुरे के व्यवहार पर मानवता का भविष्य ··· ?"

तभी सोमजी की छोटी बहिन रेणुका

[शेष पृष्ठ १६ पर]

अटलांटिक समुदाय की भावना

★ श्री सेबैस्टियन हैफनर

"अटलांटिक समुदाय"—यद्यपि पश्चिमी योरप और संयुक्त राज्य अमेरिका में इस शब्दसमूह का व्यापक, लोकप्रिय प्रसार इसी वर्ष की बात है, पर उसकी बुनियाद तीन साल पुरानी है। सचमुच, इस भावना का सूत्रपात १९४० ई. में हुआ था, उस समय जब हिटलर के हमलों से पश्चिमी योरप की पराजय ने अमेरिका और पश्चिमी योरप को उनकी अनिवार्य पारस्परिक निर्भरता का अनुभव कराया। पश्चिम योरप की पराजय से अब तक पृथकता की नीति का पालन करने वाले अमेरिका ने अपने को एकस्मात् आपत्ति के सम्मुख खड़ा पाया। अमेरिका की सहायता के बिना हम अपना बचाव नहीं कर सकते—तब यह पश्चिमी योरप की समझ में आया। शांतिकाल में अपनी पारस्परिक निर्भरता की ओर उदासीनता दिखा कर उसने आपत्ति को आमंत्रण दे डाला था। अब अटलांटिक के दोनों ओर राजनैतिक विचारक इस बात पर सहमत थे कि यह दुर्घटना दोहराई न जाए।

किन्तु युद्ध की समाप्ति पर रूस के साथ के सहयोगको स्थायी शांतिकालीन मित्रता में परिणत करने और इस मित्रता को भावी शांति का आधार बनाने का प्रयत्न किया गया था और इस प्रयत्न के कारण अटलांटिक समुदाय की भावना भुला दी गई। इस प्रयत्न की असफलता के बाद अटलांटिक समुदाय की मूल भावना ने फिर जोर पकड़ा। साथ ही साथ इस प्रयत्न की असफलता से यह भी मालूम हो गया कि १९४० ने अटलांटिक समुदाय के पक्ष के सारे तर्कों को सामने नहीं रखा था। सामरिक दृष्टि से पारस्परिक निर्भरता समुदाय की भावना और सहयोग की स्थापना को वांछनीय अवश्य बनाती है, पर इसका अर्थ यह नहीं है कि वांछनीय वस्तु को सम्भव भी बना डालती है। वास्तविक आपत्ति के अभाव में यह तभी सम्भव है, जब भावी समुदाय के सदस्यों के मध्य में कुछ न कुछ राजनैतिक, सैद्धान्तिक और आध्यात्मिक सादृश्य हो।

समुदाय के आधारस्तम्भ

तीनों बड़े राष्ट्र अमेरिका रूस व ब्रिटेन भिन्न राजनैतिक आशाएं पोसते थे। इसलिए सामान्य आपत्ति का अन्त होने आने पर रूस के साथ की युद्धकालीन मित्रता भी भाग्य हो गई। फलतः सामरिक दृष्टि से पारस्परिक निर्भरता और सैद्धान्तिक समानता अटलांटिक समुदाय के स्तम्भ हैं, यही अटलांटिक समुदाय जिसकी स्थापना बीसवीं शताब्दि की सबसे बड़ी राजनैतिक घटना हो सकती है। वर्तमान परिस्थिति में उत्तरी अमेरिका और पश्चिमी योरोप की पारस्परिक निर्भरता इतनी स्पष्ट है कि उस पर विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं, पर जिस बात पर जोर देना जरूरी है, वह यह है कि पारस्परिक निर्भरता, केवल एक की दूसरे पर निर्भरता नहीं। पश्चिमी योरप का पतन होने पर संसार का शक्ति संतुलन निर्णयात्मक रूप से अमेरिका के प्रतिकूल हो जायगा, अमेरिका का जीवन जोखिम में पड़ जायगा। इसके विपरीत यदि पश्चिमी योरप और उत्तरी अमेरिका एक राजनैतिक समुदाय के सदस्यों के रूप में रहें, तो दोनों सुरक्षित रहेंगे।

किन्तु यह अटलांटिक समुदाय है क्या? इसके सदस्य "समुदाय" क्यों कर हुए? राजनैतिक दृष्टि से अटलांटिक समुदाय ऐसी वैधानिक वास्तविकता नहीं है, जिसकी स्पष्ट परिभाषा की जा सके। अटलांटिक समुदाय अभी अपने अंतिम विकसित रूप में नहीं आया। अभी तो उसके विकास की क्रिया जारी है और इसलिए उसकी कानूनी परिभाषा कठिन है। किन्तु उन उन्नतिशील सिद्धांतों को जान लेना आवश्यक है, जिनके कारण अटलांटिक समुदाय का विकास हो रहा है। उन विश्वासों और उन सिद्धान्तों की जानकारी भी जरूरी है जो अटलांटिक राष्ट्रों की सामान्य निधि है। आखिर वह है क्या जो अटलांटिक समुदाय के सब देशों के पास है और जिसकी रक्षा के लिए वे आपस में जुट गये हैं।

सब देश यह अनुभव करते हैं कि इस समुदाय में कोई सामान्य गुण अवश्य है। पश्चिमी योरोप और उत्तरी अमेरिकाके मध्य में यात्रा करते हुए हमें ऐसा मालूम होता है कि हम एक से विचारों के क्षेत्र में घूम रहे हैं। हम कभी किसी पूर्णतया अपरिचित दुनिया में प्रवेश नहीं कर रहे, किन्तु इन विचारों में एकता कैसे उत्पन्न हुई और अटलांटिक समुदाय के वे विशिष्ट गुण कौन से हैं जिन्हें आपत्तिग्रस्त होने पर वे मिलजुल कर बचावेंगे? शायद कोई विशेष धर्म या विशेष संस्कृति नहीं? नहीं। ईसामत या यूनान की संस्कृति की विरासत अटलांटिक समुदाय के विशिष्ट गुण नहीं हैं। न ही कोई खास पद्धति, क्योंकि अटलांटिक समुदाय विविध आर्थिक पद्धतियों का प्रतिबिम्ब है और इन सब में परिवर्तन की क्रिया निरन्तर जारी है।

कुछ सामान्य सिद्धांत

तब वह वस्तु क्या है? अब हम उस विशिष्ट सिद्धांत पर आते हैं, जो अटलांटिक समुदाय को उसके विरोधियों से स्पष्टतया अलग करता है, पश्चिम शांतिपूर्ण और प्रगतिशील है और है परिवर्तनों का समर्थक। वह किसी खास आर्थिक पद्धति को सर्वगुणसंपन्न और अन्तिम नहीं समझता जाता। वह उस अवस्था से बहुत आगे बढ़ गया है, जब सामाजिक क्रांति ही सामाजिक अन्याय की अकेली औषधि समझी जाती थी। वह बाहर से क्रान्ति का आयात करने से इन्कार करता है।

अटलांटिक समुदाय अधिनायक तन्त्र को अस्वीकार करता है — चाहे "प्रोलेटेरियट" की डिक्टेटरशिप हो, चाहे अन्य कोई डिक्टेटरशिप।

अन्तिम महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अटलांटिक समुदाय के सदस्य राष्ट्रों में राजनीतिक अधिकार विधान द्वारा सीमित हैं और, चाहे इन सब में स्वतन्त्रता की परिभाषा भिन्नतया की गई हो पर वे सब एक प्रकार की स्वतन्त्रता को सर्वोच्च स्थान देते हैं। मस्तिष्क की स्वतन्त्रता को अटलांटिक समुदाय का कोई देश ऐसा नहीं है, जहां लोग मुक्त रूप में सत्य की खोज न कर सकें। सम्भव है कि अटलांटिक समुदाय और रूस का सब से बड़ा अन्तर उनकी पृथक आर्थिक पद्धतियों का अन्तर नहीं है, न इस बात से उत्पन्न होने वाला अन्तर कि वहां स्वतन्त्रता विभिन्न मात्राओं में प्रचलित है, बल्कि यह कि जहां पश्चिम में वैज्ञानिक और विद्वान की खोज का विषय, अर्थात् सत्य पवित्रता के पद पर आसीन है, वहां रूस में उसे यह सम्मान उपलब्ध नहीं।

★

बाल परिषद

शिमला की सैर

श्री वेदप्रकाश

यदि हमें शिमला की सैर करनी हो तो हम अपनी सैर को कालका से आरम्भ करेंगे। कारण यह कि शिमला के पहाड़ों का दृश्य कालका से ही दिखाई देता है। कालका से शिमला जाने के दो मार्ग हैं—एक गाड़ी का और दूसरा मोटर द्वारा। मोटर से जायें तो समय कम लगता है और किराया भी। परन्तु जो मजा गाड़ी से शिमला पहुँचने में है, वह मोटर से नहीं। छोटी सी गाड़ी और उसका छोटा सा इंजन और फिर उसका गाड़ी को लेकर पहाड़ों पर इस प्रकार से चढ़ना मानों कोई सांप किसी पहाड़ी पर चढ़ रहा हो। शिमला तक पहुंचने में छोटी बड़ी सब मिला कर कुल १०३ सुरंगे हैं और गाड़ी बड़े आराम से सब छोटे बड़े 'सोलन' आदि स्टेशनों पर रुकती हुई ७ घंटों में शिमला पहुंचती है। मार्ग में पहाड़ों के दृश्य बहुत ही मनोरंजक और आकर्षक हैं गाड़ी शिमला पहुँचने पर जो व्यक्ति चढ़ाई नहीं चढ़ सकते उनके लिए रिक्शा गाड़ी का प्रबन्ध होता है, जिसको कि चार व्यक्ति खींचते हैं। गर्मी की ऋतु में तो शिमला आकर प्रत्येक व्यक्ति ऐसा अनुभव करता है, जैसे स्वर्ग में पहुंच गया हो। शिमला की ठंडी और मस्त कर देने वाली वायु और ऋतुओं का शीघ्रता से बदलना देख कर मन प्रसन्न हो उठता है।

शिमला पहुँचने पर ऐसा प्रतीत होता है कि किसी ने जंगल में मंगल कर दिया हो। बड़ी बड़ी शानदार कोठियों और दफ्तरों को देख कर व्यक्ति हैरान रह जाता है। पंजाब (भारत) की राजधानी होने के कारण कई कालिज और स्कूल खुल गये हैं, जिससे शिक्षा का अच्छा प्रचार हो गया है।

यहां मुख्य चार सड़कें हैं। पहिली 'कार्ट रोड' है जो कि शिमला के चारों ओर घूमती है। इसी सड़क पर ही मोटरों का बस स्टैण्ड, सिक्खों का बड़ा गुरुद्वारा, लकड़ी व कोयले की कम्पनियां, कुछ छोटी बड़ी दुकानें, जानवरों का हस्पताल छोटा शिमला, पंजाब का मुख्य कार्यालय, अंग्रेजों का कब्रिस्तान, संजोली सुभाष ग्राउंड, ऊपर केथू आदि प्रसिद्ध स्थान हैं, जो स्वयं देखने से ही सम्बन्ध रखते हैं। यह सड़क साइकलों, कारों, ट्रकों व बैल गाड़ियों आदि के लिए ही प्रसिद्ध है जैसा कि इस के नाम से ही प्रतीत होता है। जनता की सुविधा के लिए इस सड़क को शेष तीनों सड़कों से भिन्न भिन्न प्रकार के मार्गों से मिला दिया गया है।

दूसरी सड़क 'लाजपत राय रोड' है जो कि 'बालूगंज' से आरम्भ हो कर 'छोटा शिमला' तक चली जाती है। यही सड़क अंग्रेजों के राज्य में 'माल रोड' के नाम से प्रसिद्ध थी। इसी सड़क पर ही वायसराय भवन, असैम्बली-हाल, भारत व पंजाब के कार्यालय, बड़े बड़े व्यक्तियों की दुकानें व होटल बड़ा तार-घर नगरपालिका का कार्यालय, मुख्य डाकखाना आदि प्रसिद्ध स्थान हैं।

तीसरी सड़क 'लोअर बाज़ार' या 'लोअर माल' के नाम से प्रसिद्ध है। यह तार-घर के पास 'लाजपत राय रोड' से निकल कर फिर उसी में ही आ मिलती है। इस सड़क पर छोटी-बड़ी सब प्रकार की दुकानें खुली हुई हैं। आर्य-समाज मन्दिर, सनातन-धर्म मन्दिर व हाई स्कूल, गन्ज-मन्डी, कई होटल आदि खुल गये हैं, जो बाजार की शोभा को बढ़ाये हुए हैं।

बड़े डाकखाने से होता हुआ एक मार्ग लाजपतराय की मूर्ति से होकर गान्धी मैदान को पार करता है और संजोली के एक मार्ग 'कार्ट-रोड' से आ मिलता है। इसको हम शिमला की चतुर्थ सड़क भी कह सकते हैं। इसके अतिरिक्त दो बाजार और भी हैं, जो कि 'राम बाजार' व 'सिक्ख बाजार' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

इन सड़कों पर प्रातः ६ से १० बजे तक खूब रौनक होती है, क्योंकि दफ्तरों में जाने वाले बाबू अपने दफ्तरों को और लड़के व लड़कियां अपने अपने स्कूलों व कालिजों को जा रहे होती हैं और इसी प्रकार सायंकाल सब व्यक्ति सज-धज कर इन सड़कों पर और विशेष कर 'लाजपतराय रोड' व लोअर माल पर परिचित व्यक्तियों को मिलने व सैर के लिए आते हैं। लाजपतराय की मूर्ति के निकट तो व्यक्तियों की विशेष भीड़ और रौनक होती है। ऐसा प्रतीत होता है मानो सारा शिमला ही एकत्रित हो गया हो।

रात्रि को शिमला का दृश्य देखने योग्य होता है। ऐसा दिखाई देता है जैसे शिमला में दीपावली उत्सव मनाया जा रहा हो। इसी शिमला से ही हम 'चैहल' जोकि 'पटियाला संघ' की गर्मियों की राजधानी है व कसोली आदि की चमकती हुई बिजलियों का दृश्य भी देख सकते हैं और दिन के समय बरफ से ढके हुए पहाड़ों का दृश्य भी!

शिमला में सबसे ऊंचा व नीचा स्थान क्रमशः—'जाखू पहाड़,' ढीला या मन्दिर और घुड़दौड़ का मैदान है। जाखू पहाड़ पर एक हनुमान जी का मन्दिर है जहां प्रति वर्ष बैसाखी व दशहरे का मेला लगता है और बंदर व लंगूर प्रत्येक समय देखने में आते हैं और घुड़दौड़ के मैदान में प्रति रविवार अधिकतर घोड़ों की दौड़ होती है और प्रति वर्ष दशहरे का मेला लगता है।

यह है शिमला की सैर का संक्षिप्त वर्णन। परन्तु कहने वाले ने ठीक ही कहा है कि "देखने में और सुनने या पढ़ने में आकाश-पाताल का अन्तर होता है।"

———

मेरी शरारत

स्टेशन पर गाड़ी आकर झट से रुक गई। मैंने खिड़की से बाहर झांक कर देखा—बहुत भीड़ थी। एक तो पहिले से ही सारा कम्पार्टमैंट ठसाठस भरा हुआ था, तिस पर और भी सवारियों की रेलपेल से मैं अत्यधिक घबरा उठी। उस डिब्बे में बच्चों की कांव कांव ने तो मेरे कान ही बहिरे कर दिये थे, और फिर उस डिब्बे में कभी २ चोंचें भी लड़ जाती थीं। अभी दो महिलाएं लड़कर चुकी ही थीं, कि फिर लड़ाई की आवाज बुलंद हो उठी।

दृष्टि घुमा कर देखा, एक गंवार स्त्री भारी भरकम शरीर को अन्दर लेकर आने का प्रयास कर रही थी, और खिड़की के सहारे बैठी हुई पंजाबी महिला उसे रोक रही थी। बड़ी तू तू मैं मैं हो रही थी।

इतने में ही उस अनपढ़ ने अपना लट्ठ तान दिया, बोली—"भामन देख तो भामन है, नांव तो लिट्ठ के मारे खोपड़ी के टूंक टूंक कर दूंगी"—

दौड़ कर मैं खिड़की के पास पहुँची पंजाबी महिला को हटाकर, उसे स्थान दे दिया गया।

जब इंजन सीटी दे चुका, तो मुझे कुछ शरारत सूझी। उस गंवारिन से पूछा—"क्यों री, तेरे पास टिकट भी है।" इस पर उसने अपने पीले २ दांत निकालते हुए मुझे अपना टिकट दिखाया।

टिकट को उलट पुलट कर देखने के पश्चात् मैंने मुंह बनाते हुए उससे कहा, "अरी, तू तो मर्दाना टिकट ले आई है!" इतना सुनकर वह घबरा गई, अचकचा कर बोली, "अब का होइगो?"

"टी. टी. आएगा और तुझे गाड़ी से नीचे स्टेशन पर उतार देगा!" मैंने उसे बताया, इतने ही में इंजन ने दूसरी सीटी दी। वह और भी घबड़ाने लगी। मैंने कहा, "इसे बदला ला, नहीं तो गाड़ी भी छूट जायगी।

और वह गाड़ी से नीचे उतर गई। टी. टी. रास्ते ही में मिल गया। रोक कर कहने लगी, "क्यों जी तुमने मोइ मर्दानों टिकस काहे कूं दै दैया ऐ, दीखत नायँ, मैं जनाने में बैठूं!" सुनकर टी. टी. हंसने लगा।

इसी बीच गाड़ी ने छिक् छिक् करना शुरू कर दिया। जल्दी से टिकट लेकर वह गाड़ी की ओर दौड़ी, लेकिन गाड़ी अपनी पूरी रफ्तार पकड़ चुकी थी। डिब्बे में बैठे हम खूब खुलकर हंस रहे थे। वह गंवारिन गाली सुना रही थी, "अरी, मों बेहा! ...." इसके आगे कुछ सुनाई न पड़ सका ...... बस।

—कुमारी अनुपमा

शायद उन्हें आप जानते हों ?

★ कुञ्जबिहारीलाल पाण्डेय

दुनिया में ऐसे आदमी भी होते हैं, जिनका सारा जीवन बनावटी और दिखावटी होता है। वे जानबूझ कर खान-पान, रहन-सहन, मेल-जोल और काम काज के कुछ ऐसे ढंग इख्तियार किये होते हैं, जिनसे उनके कृत्रिम जीवन की झलक, कंट्रोल व्यवस्था के पीछे चल रहे काले बाजार को तरह स्पष्ट दिखलाई देती है। साथ ही उन्हें बहुत से सीधे सादे कम पढ़े लिखे लोग बड़ा योग्य और बुद्धिमान भी समझते हैं। धीरे से, कभी जोर से और कभी बिल्कुल रुक कर बात-चीत करने का कुछ ऐसा मानवीय ढंग (जिसे हम नाटकीय ही कहेंगे) इनमें होता है कि जनसाधारण इनकी ओर बड़ी जल्दी आकृष्ट हो जाता है। समाज की दृष्टि में वे ऊंचे और प्रतिष्ठित समझे जायें, इन सब की तह में यह सारी बनावट होती है। मैं अपने एक ऐसे निकट से परिचित महानुभाव को जानता हूं, जो सिर से पैर तक किसी एक फिल्म में कार्य करने जैसी पात्रता प्रदर्शन करने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझते हैं।

सौभाग्य या दुर्भाग्य से यदि वह कहीं रास्ते चलते आपको मिल जायें और आप उनसे पूछ बैठें, 'कहिये, कहां से आ रहे हैं?' तो वह कुछ इस प्रकार उत्तर देंगे— 'यदि आप अनुचित न समझें तो इसके पहले कि मैं आपके प्रश्न का उत्तर दूं, मैं यह जान लेने की धृष्टता करूंगा कि कल चार बजे शाम,…… हां, हां, चार बजे……शायद समय के सम्बन्ध में कुछ भूल नहीं कर रहा, आप गोपेश जी के यहां उपस्थित थे?'

सीधी सादी बात के उत्तर में— पिन खोलने के लिए हथौड़े के उपयोग जैसा उपक्रम कैसा! गर्ज यह कि जहां कहीं भी आप इन्हें देखेंगे, ये हमेशा किसी रेडियो स्टेशन से ब्राडकास्ट करने जैसी स्थिति में ही मिलेंगे। नवीन से नवीनतम, सभी प्रकार के कट फैशन के पूरे और आधे परिधान आप दिन रात में कई बार बदलते हैं। पट-परिवर्तन के साथ घर से बाहर निकलते समय हस्त सुषमा-वर्धिनी प्रभावोत्पादक वस्तुयें भी बदलती रहती हैं। कभी सुन्दर बेत, तो कभी चमड़े का बेत, पुस्तक और कभी सादगी की कृत्रिमता के साथ बगल में दबा अंग्रेजी समाचार पत्र! हजामत में बाल, पहनने में कोट की सिकुड़न और बन्द करने में एक बटन भी मजाल क्या जो खुली रह जाय!

घर के ड्राइंग रूम में भी एक दो पुस्तकें इस प्रकार बिखरी हुई मिलेंगी कि उन्हें अभी अभी कोई पढ़ कर उठा है। मकान पर किसी ने आवाज दी कि खूंटी पर टंगा कम से कम पन्द्रह रुपये मूल्य की जापानी खिलौना रेलगाड़ी बच्चे को दे दी जायगी और दरवाजा खुल जायगा। आपकी श्रीमती जी भी अहिंसापात्र आदर्श चरित्र प्रदर्शनशीला हैं। सभ्यता के आवेग में जब वह अपनी बड़ी सविता को 'सविता' कह कर पुकार उठती हैं तो उस समय ऐसा मालूम होता है, इन्जन को विसिल लगाने में आवश्यकता से अधिक स्टीम खुल गई हो। जब आप पति देव के साथ कदम ब कदम झेंपती-झपकती हुई चलती हैं तो ऐसा ज्ञात होता है, कृष्ण लीला हो रही है।

आपके घर के आतिथ्य में बिना पढ़े माया की कहानी जैसा आनन्द आता है। कसर रह जाती है उनके सम्बोधनों में! अर्थात् वे एक दूसरे को हे प्राणनाथ! और 'ओ प्रियतम' में न कहते थे! आप से पूछा जायगा, 'आप चाय पियेंगे या दूध?' यह स्वाभाविक ही है, आप दोनों के लिए इन्कार करें— फलतः नहीं, नहीं, हां, हां की वाक्पटुता से आप साफ सूखे रह जायेंगे। टट्टी घर को 'मल विसर्जन गृह' और रसोई घर को 'पाकशाला' जब मैं उनकी श्रीमती को कहते सुनता था तो ऐसा लगता था मानों मैं सुश्री महादेवी जी के घर में आ गया हूं। किन्तु मुझे खटकता था, उनका पुत्र, उन्हें हे जननी और वे उन्हें 'ओ वत्स' न कहती थीं। उन्होंने कहा— पाकशाला संकरी होने से धूम्र बहुत होता है' बात ठीक थी, किन्तु न जाने क्यों मुझे हंसी आ गई?

कदाचित मुझे बोली और लिखी जाने वाली भाषा की एकता का प्रयास कुछ अनहोना सा लगा! पति की उपस्थिति में ही श्रीमती जी उनके मित्रों से मिल सकती थीं, यह आधुनिक शिष्टाचार के विरुद्ध था— रूप से ढके रस के ढुलक जाने की शंका भी मुझे अच्छी न लगी! तोते की तरह सिखाये बच्चे दम्पती के जरा से संकेत पर 'वैष्णव जन तो तेने कहिये' से ले कर 'ऐ दुनियां रूप की चोर, बचाना मेरे बाबू!' तक बड़े अभिनयपूर्ण ढंग से गा कर सुनाते।

आपकी दिन चर्या 'फूंक-फूंक कर पैर रखने और छाछ पीने' सी व्यवस्थित रहती है। बाह्याडम्बरों और बनावटी प्रदर्शनों से ओतप्रोत!! जिससे उदयपुर के लकड़ी के बने आम के दर्शनीय खिलौने जैसा कौतूहल तो होता है, किन्तु उसके मीठे रस के चूसने जैसा स्वाद नहीं मिल पाता। आप से मिल कर ऐसा मालूम पड़ता है कि किसी शिक्षा संस्था के विद्यार्थियों को 'मनुष्य को कैसा रहना चाहिये? यह सिखलाने के लिये तदनुसार आचरण करने को आप से कहा गया है।

जनता से प्रशंसित होने और नेता कहलाने की साध लिए दुई धन कर आपके पीछे पड़ी है। बात बहुत पुरानी है। एक बार हिन्दु मुस्लिम झगड़े ऐंठ ने समाचौकड़ी का रूप धारण कर लिया — कुछ सच्चे जन-सेवकों ने प्राणों की बाजी लगा कर, स्थिति पर काबू पाया, परिणाम स्वरूप उसके सिर-पैर जख्मी भी हुए — गर्ज यह कि हाथी की शक्ल भैंसे की सब हो गई, तब आप अपने घर से निकले और अपनी झेंप छिपाने के लिए नगर के चौराहे पर उपस्थित शांति संस्थापकों के मजमा में जा घुसे। बोले —— क्या कहूं? अभी मैं दिल्ली से आ रहा हूं। स्टेशन से घर पहुंच कर कपड़े भी नहीं उतारे, सीधा इधर भागता आया, ओह, योगेश जी आपके सर में, अरे, अरे भाई मोहन! आपको भी चोट!…… (उसी समय शेख-चौक के कान में देवीदीन ने कहा-सुना, बाबू लोकनाथ की बातें, सारे दिन घर में घुसे रहे और अब दिल्ली से आ रहे हैं।)

[पृष्ठ ८ का शेष]

मण्डल में जितने प्रभावशाली व्यक्ति हैं वे सब पत्नी-विहीन हैं अर्थात् रंडुए। बाकी मन्त्री, जो बीवी वाले हैं, हमेशा किसी न किसी परेशानी में पड़े ही रहते हैं।

१२ केन्द्रीय मन्त्रियों में पूरे ६ स्वतन्त्र और प्रबन्ध हीन हैं। एक अभी तक अविवाहित हैं। बाकी १२ के घरों में पत्नियां विराजमान हैं। पर इनमें भी तीन ऐसे हैं जो अपनी पत्नियों को घर से बाहर निकालते ही नहीं।

अब राज्य मन्त्रियों और उपमन्त्रियों का हाल सुनिये। ४ राज्य मन्त्रियों में से दो एकाकी हैं, इसी प्रकार ६ उपमन्त्रियों में से ३ एकाकी हैं। ये लोग रात में तारे गिना करते हैं और राजनीति को ही अपनी पत्नी मान बैठे हैं उसी से मन बहलाया करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि मंत्रिमंडल के २५ सदस्यों में से १५ पत्नि विहीन हैं, केवल १० अर्धांगनी वाले हैं। इनमें भी केवल ४ ही ऐसे हैं जिनकी पत्नियां सामाजिक उत्सव में भाग लेती हैं। बाकी बिना पत्नियों के ही अपना काम चलाते हैं।

देश विदेश का घटना चक्र

कोरिया

उत्तरी कोरिया की राजधानी पर राष्ट्र-संघीय सेनाओं का अधिकार होता दिखाई देता है। मेकआर्थर की सेनाएं नगर के विशाल भाग पर अधिकार जमा चुकी हैं और सड़कों तथा गलियों में युद्ध चल रहा है। सम्भव है कि ये पंक्तियां पाठकों के निकट पहुँचने तक प्योंगयांग का पतन हो जावे। प्योंगयांग के पतन के पश्चात् राष्ट्र-संघीय सेनाओं के लिए मंचूरिया तक बढ़ने का रास्ता साफ हो जाता है।

किन्तु दूसरी ओर दक्षिण कोरिया के प्रमुख डा० सिगमन री की सरकार ने राष्ट्र-संघ के कोरिया सम्बन्धी प्रस्ताव की न केवल उपेक्षा की है, वरन् उसके विरुद्ध आचरण भी आरम्भ कर दिया है। उनका दावा है कि विजित उत्तरी कोरिया पर दक्षिण कोरिया सरकार का अधिकार है। यही नहीं, विजित प्रदेश पर शासन करने के लिए डा० सिगमन री ने पांच गवर्नर नियुक्त करके भेजे हैं। डा० री का इस प्रकार का आचरण किस शक्ति की प्रेरणा से हो रहा है, यह कहना कठिन है। किन्तु यह बात स्पष्ट है कि उत्तरी कोरियन आक्रमण के समय जिस डा० री ने चीख-पुकार की थी, राष्ट्र-संघ के सम्मुख गिड़गिड़ाये थे, वही आज उसी के प्रस्ताव को रौंदते चलें, यह और किसी भी कारण से हो, उसकी अपनी शक्ति के कारण कदापि नहीं है।

कांग्रेस का कारिणी

आखिरकार कांग्रेस की नयी कार्यकारिणी की घोषणा अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन द्वारा कर दी गयी और पं० नेहरू भी उसमें सम्मिलित हो ही गये। पं० नेहरू के हठ-व्यवहार से देश की आन्तरिक राजनीति में कांग्रेस कार्यकारिणी के निर्माण की ओर सभी का ध्यान खिंच गया था। आखरी वक्त तक वे उसके सदस्य बनने के लिए राजी नहीं हुए थे। तो भी यह मिलन कांग्रेस संगठन को बनाये रखने के लिए आवश्यक था, और इसीलिए हुआ। किन्तु यह कब तक चल सकेगा, यह कहना कठिन है। एक ओर पत्रकारों के समक्ष अध्यक्ष श्री टण्डन ने यह स्पष्ट कर दिया है कि कांग्रेस अध्यक्ष का स्थान प्रधान मंत्री से ऊंचा है और वह दल के आदेशों के अनुकूल आचरण करने के लिए उसे बाध्य कर सकता है। दूसरी ओर पं० नेहरू ने बताया कि यदि कांग्रेस अखिल भारतीय निर्णयों के विरुद्ध गये तो वे संकट में पड़ेंगे।

राष्ट्रसंघ का मंत्रित्व

श्री ट्रिग्वे ली का कार्यकाल समाप्ति पर आ पहुँचने से आगामी पांच वर्षों के लिए प्रधान मन्त्री किसे बनाया जाय, यह प्रश्न राष्ट्र संघ के सम्मुख उपस्थित है। अमेरिका का आग्रह है कि श्री ली के कार्यकाल की अवधि ही पांच वर्ष और बढ़ा दी जाय। रूस ने इसका कड़ा विरोध किया है और सुरक्षा परिषद् में वीटो के प्रयोग द्वारा इसे रद्द कर दिया। रूस का विचार है कि श्री ली अमेरिका आदि से पक्षपात करते रहे हैं। यह भी सम्भावना है कि रूस उक्त पद के लिये भारतीय प्रतिनिधि का नाम सुझायें।

मेकआर्थर-ट्रूमेन भेंट

प्रेसीडेंट तथा जनरल मेकार्थर की ऐतिहासिक भेंट प्रशान्त सागर के वेक द्वीप पर हुई। भेंट प्रायः दो घण्टे तक हुई और उसके पश्चात् प्रेसीडेण्ट अमेरिका तथा मेकआर्थर टोकियो के लिए रवाना हो गये।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की दृष्टि से यह भेंट अत्यन्त महत्व रखती है। पश्चिमी योरप में अपना प्रसार अवरुद्ध देख कर साम्यवाद ने एशिया, विशेषकर पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी एशिया में अपने पैर फैलाये हैं। इस क्षेत्र में अमेरिका का सबसे अधिक प्रभावशाली व्यक्तित्व जनरल मेकआर्थर हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। साम्यवाद के रोकने में सफल होने के लिए यह आवश्यक है कि प्रेसीडेण्ट ट्रूमेन अमेरिका के तंत्र की एकता बनाये रखें। जनरल मेकार्थर तथा प्रेसीडेण्ट ट्रूमेन में परस्पर मतभेद हैं, यह एक विख्यात सत्य है। इन मतभेदों को समाप्त कर एशिया के इस क्षेत्र में अमेरिकन नीति को सफल बनाने की दृष्टि से ही इस मिलन को महत्व है।

हिन्द चीन

हिन्द चीन के साम्यवादी दस्ते जोर पकड़ रहे हैं और फ्रांस के साम्राज्यवादी खंभे हिलने लगे हैं। हाल ही में कई प्रमुख तथा सैनिक महत्व के स्थान फ्रांसीसियों के हाथ से निकल गये हैं और कई अन्य स्थानों के लिए भय उत्पन्न होगया है। फ्रांसीसियों को भयंकर सैनिक क्षति उठानी पड़ी है। फ्रांसीसी सरकार ने अमेरिकन सहायता के लिये अपील की है।

राजनीतिक क्षेत्रों का विचार है कि उत्तरी कोरिया से राष्ट्र संघ और विशेष कर अमेरिका का ध्यान बंटाने के लिए रूस ने यह नया दौर आरम्भ किया है। साम्यवादियों की शक्ति तथा गतिविधि इस बात का प्रमाण है कि इस बार उनके पास अधिक योग्य सैनिक हैं, अधिक मात्रा में अस्त्रशस्त्र हैं और अधिक योग्यता से वे युद्ध का संचालन कर रहे हैं। ऐसी दशा में यह विचार है कि रूस चीन के सहारे हिन्द चीन में अमेरिका के लिये एक नया सिर दर्द पैदा कर रहा है।

बम्बई की हड़ताल

लगभग दो मास चला कर समाजवादी दल ने बम्बई की हड़ताल बिना शर्त वापिस ले ली। वास्तव में हड़ताल एक प्रकार से असफल ही चली थी। हड़ताल के चलते हुए भी ७५% मजदूर काम पर आने लगे थे और एक दर्जन से भी कम मिलों को छोड़ कर शेष सभी मिलें कार्य करने लगी थीं। सुलह के सारे प्रयत्न समाजवादियों की हठवादिता के कारण विफल हुए। यथार्थ में यह हड़ताल बम्बई में समाजवादी दल तथा कांग्रेस में शक्ति परीक्षा थी, जिसमें अन्त में कांग्रेस सरकार विजयी हुई। अपने प्रयत्न में असफल होते देख कर ही समाजवादी दल ने श्री अशोक मेहता के कथन की आड़ लेकर हड़ताल समाप्त कर दी।

विदेश नीति

एक पत्रकार सम्मेलन में पं० नेहरू ने अपनी विदेश नीति के सम्बन्ध में कुछ प्रकाश डाला है। उनके अनुसार भारत राष्ट्र संघ द्वारा प्रत्येक देश में अपने आधीन एक पृथक सेना रखने के विरुद्ध है। यह शांति स्थापन नहीं युद्ध भड़काने का प्रयत्न होगा। पं० नेहरू विश्वयुद्ध को अवश्यम्भावी नहीं मानते। उनका मत है कि दोनों पक्षों में मित्रता हो सकती। नये चीन को राष्ट्र संघ में स्थान दिये जाने का उन्होंने पुनः आग्रह किया। उनका कहना था कि यदि यह कर लिया गया होता तो बहुत से संकट न उठे होते।

(पृष्ठ ७ का शेष)

जाता है। इस प्रकार और भी अन्य प्रथाएं वहां प्रचलित हैं। इन प्रथाओं का आधार वहां के निवासियों का अनुभव है। इनमें से अधिकांश विज्ञान द्वारा मान्य हैं। दोपहर के भोजन के पश्चात् श्री राग का श्रवण पाचन क्रिया के लिए हितकर है। 'साम राग' से थित मस्तिष्क को शांति प्राप्त होती है। सूर्योदय के पूर्व 'भूपाला' और 'मलयमारुतम्' राग गाना निद्राग्रसित लोगों को जगाने की औषधि का काम करता है।

सामाजिक स्वास्थ्य के लाभ की दृष्टि से संगीत का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस ओर हमारी राष्ट्रीय सरकार का ध्यान एवं सहानुभूति होना ही चाहिए तथा वे छात्र जिन्हें इस ओर रुचि है उन्हें उचित सहायता और उत्साह दिया जाना चाहिए।

गाण्डीव के तीर

बम्बई हाईकोर्ट में गीता की सौगंध ने १८ हजार नकद न देने पड़े।

—एक दीवेक

इस नई सौगन्ध के आविष्कार को मुकदमे बाज नोट कर लें।

× × ×

राष्ट्र पताका के रंग, राष्ट्र की सीमाएं और बंगाल के विप्लववादियों तथा कुसुम सीकर के इतिहास के बारे में भी उत्तर प्रदेश के भावी थानेदार कुछ न बता सके।

—एक दीवेक

क्योंकि कहानी मासिक पत्रों, सिनेमा की स्क्रीनों में उनका कहीं संकेत बेचारों को आज तक नहीं मिला।

× × ×

देश का भविष्य अब पत्रकारों के हाथ में है।

—राजर्षि

भूत कांग्रेस का रहा और वर्तमान कांग्रेस का है, अभी भविष्य में बहुत देर है महाराज!

× × ×

गांधीजी मुनाफाखोरी के विरोधी थे।

—एक नेता

लेकिन मुनाफाखोर फिर भी उनके भक्त थे।

× × ×

हिन्दू महासभा, रा० स्व० सं० और जनसंघ पार्टी जैसी साम्प्रदायिक संस्थाओं को कुचला जाय।

—नेहरूजी

तीन क्या कांग्रेस में मिला ली गई श्रीमान् जी?

× × ×

पाकिस्तान में हिन्दू, हिन्दू बन कर नहीं रह सकता।

—श्री योगेन्द्रनाथ मण्डल

आज तो मण्डल जी की जिह्वा पर मानों सरस्वती बोल रही है।

× × ×

उत्तर प्रदेश के कुछ नेता नासिक अधिवेशन के बाद सुरैया के दर्शन करने बम्बई जाये।

—श्री केदार

आगामी अधिवेशन के राष्ट्रपति पद का निर्णय देने तो नहीं आये थे।

× × ×

आज कांग्रेस की पार्टीबन्दी की कहानी घर घर है।

—दीवेक

अभी तक इन्हें यह पता था कि तुम्हारी ही कहानी घर घर है।

× × ×

मसला भारत का दुर्भेद्य था।

—दीपी नेता

आगे यह भी कह दीजिये कि लियाकत एण्ड को० के दिवालिये होने से पहले ही कम्पनी में ताला मार गया।

× × ×

काश्मीर के प्रश्न पर भारत पाकिस्तान से युद्ध नहीं करना चाहता।

— नेहरूजी

इस बात को लियाकतअली भी जानते हैं और आपकी तारीफ करते हैं।

× × ×

बाल-विवाहों को रोके बिना देश और समाज का सुधार नहीं।

—राजकुमारी अमृतकौर

वृद्ध-विवाहों के बारे में आपके और मंत्रिमंडल के क्या विचार हैं।

× × ×

सोशलिस्टों में फूट पड़ती रही, तो दशा कांग्रेस जैसी होगी।

—अशोक मेहता

अपने राम की राय में आप तो फिर कांग्रेस में न घुस जाना।

× × ×

दिल्ली के चोर बाजारियों की दुकानों पर सोशलिस्ट धरना देंगे।

—दिल्ली सोशलिस्ट पार्टी

बम्बई का रोजगार ठंडा पड़ गया क्या?

× × ×

मेरठ कांग्रेस में सारे बीस्पी घुस जाये।

—एक सम्वाददाता

भारत-पाक करार का प्रभाव सीधा पड़ा भी इनके दिलों पर ही है। कम से कम चुनावों तक के लिए।

× × ×

आखिर बेकारी को कैसे रोका जाय?

— एक नेता

बेकार युवकों को नये चुनावों तक के लिए प्रचार के लिए रखा जा सकता है।

× × ×

यदि सरकार नकद पैसे न दे तभी तो जमींदारों की मौज है देनी।

—ठाकुर हुकमसिंह

और अगर रुपयों भी न मिल सके तो कौरे ही दे देना, लेकर भुगत जी तरह।

—[illegible]

[पृष्ठ ३ का शेष]

हुए हैं उनसे बेघर लाख व्यक्तियों के लिए काफी पानी मिल जायेगा। और अनेक अभी बाकी हैं।

मोटरों इत्यादि की सड़कें दो बस्तियों के मध्य में होंगी किन्तु मुख्य धन ट्रैफिक की सड़कें बड़ी बस्तियों के चारों ओर ही होंगी। बस्तियों के अन्दर की सड़कों को जानबूझ कर टेढ़ा मेढ़ा बनाया गया है। ताकि वह मोटरों इत्यादि के काम में न लाई जा सकें। किन्तु बस स्टैंडों का किसी भी स्थान से अन्तर १/१० मील से अधिक नहीं होगा।

स्वतन्त्रता का प्रतीक

सभ्यता और सौंदर्य के दृष्टिकोण से भी चंडीगढ़ उद्यानों का नगर होगा। वर्तुलाकार जल धारा हाईकोर्ट और राजधानी को एक अनन्य रूप देंगे। सारे नगर के चारों ओर उद्यानों और वन पर्वतों की भरमार के कारण यहां नागरिक तथा ग्रामीण जीवन का एक अभूतपूर्व सम्मिश्रण बन सकेगा जो शुष्क ऋतुओं में भी एक मानसिक शान्ति प्रदान करेगा।

स्वतन्त्र भारत के इतिहास में इस नगर का निर्माण हमारी पुनर्वास तथा गृहनिर्माण समस्या को अच्छी प्रकार सुलझा सकेगा। प्राचीन भारत की कला में वैभव की कमी न थी। किन्तु इस नगर की विशालता, सादगी तथा पूर्णता भी कम वैभवशाली न होगी। वास्तव में यहां भारत के अतीत की आत्मा के साथ भारत की आधुनिक आत्मा का मिलाप हो सकेगा और हमारे प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू की यह आशा पूर्ण हो सकेगी कि इस नगर को भारत की स्वतन्त्रता का प्रतीक बनाने दो जो हमारी अतीत की खोखली परम्पराओं से मुक्त हो।

वीर

दिल्ली रविवार, १३ कार्तिक सम्वत २००७ • DELHI 29th October 1950

साप्ताहिक अर्जुन

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार १२ कार्तिक सम्वत् २००७ [अङ्क २८

संयुक्तराष्ट्र-संघ पांचवें वर्ष में

यों तो प्रतिवर्ष संयुक्तराष्ट्र संघ का स्थापना-दिवस मनाया जाता है, तथापि इस वर्ष पांचवां स्थापना दिवस प्रायः सभी महाद्वीपों में विशेष उत्साह से मनाया गया है। वस्तुतः संयुक्तराष्ट्रसंघ का संगठन उस स्वर्गीय स्वप्न की पूर्ति में उठाया गया एक कदम है, जो आदर्शवादी शान्तिप्रेमी दीर्घकाल से देख रहे हैं। जब से मानव का इतिहास मिलता है, संघर्ष और युद्ध का इतिहास भी तभी से प्राप्त होता है। संघर्ष और युद्ध मानव स्वभाव का एक अङ्ग सा बन गया है, किन्तु इसके साथ ही यह भी सच है कि शान्ति और प्रेम की भावना भी उससे कम प्राचीन नहीं है। यह इतिहास के अन्वेषकों का कार्य है कि वे बताएं आदिकालीन प्रथम मानवने प्रेम व युद्ध में से किस भाव को पहले अपनाया था, पर संसार का दीर्घकालीन इतिहास बताता है कि युद्ध और शान्ति दोनों भावनाएं एक साथ अनादि काल से चलती आ रही हैं। कभी स्वार्थ और संघर्ष की भावना प्रबल हो जाती है, तो कभी उससे ऊबकर मनुष्य शान्ति के लिये लालायित होने लगता है। कुछ समय बीतते न बीतते फिर स्वार्थभाव प्रबल होकर शान्तिभाव को दबा देता है और संसार फिर युद्ध के ज्वालामुखी के किनारे खड़ा हुआ दीखने लगता है।

१९१४ का ध्वंस देखकर यूरोप ने शान्ति की इच्छा अनुभव की और उसका परिणाम हुआ राष्ट्रसंघ की जेनेवा में स्थापना। किन्तु आज के विज्ञान का बल पाकर मानव ने निर्माण और विध्वंस की जितनी पैशाचिक शक्ति प्राप्त करली है, उसके कारण वह १९१४ के ध्वंस को शीघ्र ही भूल गया। निश्शस्त्रीकरण की सब योजनाएं धरी धराई रह गईं, समझौते और सन्धि-सम्मेलनों में कोई सार न रहा और राष्ट्रसंघ के देखते-देखते सभी राष्ट्र युद्ध की तैयारी में लग गये। मंचूरिया पर जापान ने आक्रमण किया, इटली ने अबीसीनिया व अलबानिया को अपने अधिकार में कर लिया, स्पेन में अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों का संघर्ष होने लगा, पर राष्ट्रसंघ नपुंसक की तरह विध्वंस का यह ताण्डव देखता रहा और कुछ समय बाद समस्त विश्व १९३९ की भीषण ध्वंस लीला में लिप्त हो गया।

१९३९ का युद्ध विध्वंस पैशाचिकता और बर्बरता की दृष्टि से कहीं बढ़कर विश्व के लिए घातक सिद्ध हुआ और इसका परिणाम हुआ १९४५ में संयुक्तराष्ट्र संघ की स्थापना और इस सप्ताह उसी का पांचवां स्थापना-दिवस मनाया गया है। इसका उद्देश्य विश्वशान्ति था, किन्तु पिछले वर्षों का इतिहास बताता है कि यह स्वयं बड़ी शक्तियों के संघर्ष का अखाड़ा बन गया है। अमरीका और रूस का संघर्ष संघ की प्रायः प्रत्येक सभा, समिति और उपसमिति में उग्ररूप में प्रकट होता है कभी कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि संयुक्तराष्ट्र संघ बना ही संघर्ष के लिए है। मानव की युद्ध-संभावना अधिक प्रबल हो उठी है। गत महायुद्ध के बाद जितनी उग्र समस्याएं संसार के सामने उपस्थित थीं, वे अब तक शान्त नहीं हुई हैं। जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली के उपनिवेश, जापान, हिन्दचीन, मलाया आदि एक भी समस्या का समाधान नहीं हुआ। इजरायल, काश्मीर, चीन, फारमोसा, दक्षिण अफ्रीका आदि कितनी ही नई समस्याएं और विकट रूप में उपस्थित हो गई हैं। इस तरह यह कहा जा सकता है कि संयुक्तराष्ट्र-संघ की स्थापना से पूर्व जो समस्याएं संसार के सामने थीं, आज उनसे भी विकट समस्याएं विद्यमान हैं और राष्ट्रसंघ उनमें से किसी का भी समाधान नहीं कर पा रहा। तीसरे विश्वयुद्ध तक की संभावना की जाने लगी है।

किन्तु केवल इसी कारण राष्ट्रसंघ को भंग कर देना किसी तरह वांछनीय नहीं है। राष्ट्रसंघ का मूल विचार और उद्देश्य बहुत अच्छा है। उसकी आवश्यकता भी बहुत अधिक है। आखिर पारस्परिक संघर्ष को रोकने के लिए एक ऐसी संस्था की आवश्यकता है, जहां सब मिलकर शान्ति के उपायों पर विचार कर सकें। यदि आज संघ सफल नहीं हो रहा, तो उन मूल कारणों को दूर कर देना चाहिए। कुछ राष्ट्रों को वीटो का अधिकार देना संघ के कार्य में बहुत बाधक रहा है, उसे छीन लेना चाहिए, संघ में, एशिया पर आज भी पश्चिम हावी है, इसका प्रतिकार करना चाहिए, विश्व के नागरिकों को प्रत्येक राष्ट्र में जाने और वहां सम्पर्क स्थापित करने के लिए सुविधा होनी चाहिए और संसार के अधिकांश देशों को किसी गुट के प्रभाव से निकल कर स्वतंत्र दृष्टिकोण से निर्णय करना चाहिये, जिससे बड़ी शक्तियां स्वार्थ-साधन न कर सकें। यदि संघ के नेता अपने पांचवें वर्ष में इस ओर कोई प्रयत्न नहीं करेंगे, तो वह विश्वशान्ति के अपने उद्देश्य में सफल न हो सकेगा। संघ एक आदर्श संस्था बने, यह हमारा लक्ष्य होना चाहिए। इसके लिए प्रत्येक देश में अन्तर्राष्ट्रीय बन्धुत्व और उससे भी अधिक सत्य-न्याय की भावना बढ़ानी चाहिए।

★

१८॥ करोड़ रु० की क्षति

संस्कृत में एक उक्ति है "बालादपि ग्रहीतव्यं युक्तियुक्तं मनीषिभिः।" यदि बालक भी कोई युक्तियुक्त बात कहे, तो बुद्धिमानों का कर्तव्य है कि वे उसे स्वीकार कर लें। किन्तु भारत सरकार के रवैये को देखते हुए मालूम होता है कि वह अपने सिविल कर्मचारियों और विशेषज्ञों की सम्मति के सिवाय देश के लोकमत और विचारशील पुरुषों की सुविचारपूर्ण सम्मतियों पर गंभीरता से विचार करने का कष्ट भी नहीं करती और यदि कहीं सरकार के किसी समालोचक ने कोई सुझाव दिया, तो उसका परामर्श तो रद्दी की टोकरी में फेंक दिया जाता है। सर्वोदयवादी विचारक तो अपने सुझाव देते देते अब निराश हो गये दीखते हैं। सेठ रामकृष्ण डालमिया ने तीन चार मास पूर्व जूट पर निर्यात-कर बढ़ाने का सुझाव दिया था, क्योंकि उस समय भारत और अमरीका के जूट मूल्य में भारी अन्तर था। प्रत्येक १०० गज टाट पर २१)रु० का अन्तर कम नहीं होता। उस समय निर्यात कर न बढ़ाने से श्री डालमिया के कथनानुसार १८ करोड़ रु० की क्षति भारत सरकार को हुई है। अब बहुत समय तक भारी क्षति उठाने के बाद सरकार ने निर्यात कर ३५० रु० प्रति टन से बढ़ा कर ७५० रु० कर दिया है। इसका अर्थ यह है कि उसने अपनी भूल समझ ली है, किन्तु १८ करोड़ रु० की क्षति उठाने के बाद। सरकारी अधिकारियों और नेताओं का कर्तव्य है कि अपने कठोर आलोचक के परामर्श पर भी सहानुभूति-पूर्वक विचार करें और उसे केवल विध्वंसक आलोचना कह कर उसका तिरस्कार न करें।

यहां और वहां

विश्व के संभावित संघर्ष में अपने देश की शक्ति बढ़ाने की दृष्टि से साइबेरिया (रूस) के कोयलाश्रमिकों ने प्रस्तावित योजना के अनुसार नियत मात्रा से १०० मालगाड़ी कोयला ज्यादा खोदा है। ग्लूकोव की एक सूती मिल के कारीगरों ने इस साल इतना कपड़ा तैयार किया है, जिसकी आशा उनसे पांच वर्ष बाद की गई थी। यह है अपने देश का प्रेम और कम्यूनिस्टों की अपने देश में नीति। किन्तु इसके विपरीत भारत के कम्यूनिस्ट अपने देश को निर्बल करने के लिये उत्पादन में निरन्तर बाधाएं डालने की योजनाएं बनाते रहते हैं और दुःख यह है कि यहां का मजदूर—उन कारखानों का मजदूर भी, जो राष्ट्र की सम्पत्ति है—आज उत्पादन में बाधा डालने के लिये कम्यूनिस्ट या सोशलिस्ट कार्यकर्ताओं के भ्रान्त नेतृत्व का अनुगामी हो रहा है।

पंचमांगी विधान है

श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल के पाकिस्तान सरकार के मन्त्रिमण्डल से त्यागपत्र देने और वहां की स्थिति का भण्डाफोड़ करने पर हत्या की अज्ञात धमकी मिली है। यह धमकी किसने दी है, इसका पता सरकार का गुप्तचर विभाग लगायगा, किन्तु इससे यह तो स्पष्ट है कि भारत में ऐसे देशद्रोही विद्यमान हैं, जिनकी सहानुभूति भारत से न हो कर पाकिस्तान से है। ऐसे पंचमांगी देशद्रोहियों को चुनने में जरा भी गफलत देश को नुकसान पहुंचायगी।

राष्ट्रनिर्माण और नागरिक

पिछले दिनों राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद ने एक भाषण देते हुए राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक से अनुरोध किया है कि राष्ट्र के निर्माण की तीव्र आवश्यकता से किसी को असहमति नहीं सभी अपने देश की चौमुखी उन्नति चाहते हैं; किन्तु राष्ट्रपति कहते हैं कि यह राष्ट्रनिर्माण तब तक संभव नहीं, जब तक कि प्रत्येक नागरिक यह निश्चय न कर ले कि वह स्वयं भी राष्ट्रनिर्माण का कार्य पूरे मनोयोग से करेगा। प्रत्येक नागरिक को दूसरा क्या करता है, इसकी चिन्ता या आलोचना किये बिना यह देखना चाहिए कि वह स्वयं राष्ट्रनिर्माण के लिए क्या कर रहा है। जिस दिन प्रत्येक नागरिक में यह भावना पैदा हो जायगी, उसी दिन राष्ट्रनिर्माण का स्वप्न पूर्ण होने में देर न लगेगी।

हमारा जागृत प्रहरी

★ श्री हरिभाऊ उपाध्याय

सरदार भीमसेन के रूप में

सरदार पटेल का ख्याल आते ही श्रीकृष्ण के बुद्धिकौशलयुक्त भीमसेन की मूर्ति सामने खड़ी हो जाती है। किसी ने सामने आ कर ताल ठोंकी कि भीमसेन उससे भिड़ने को तैयार फिर सोचने विचारने का काम ही क्या? परन्तु सरदार इस तरह चुनौती देते ही आग में नहीं कूद पड़ते। वे सोच समझ कर मौका देख कर कदम उठाते हैं। हां, विरोध का नाम सुनते ही वे चट्टान की तरह जमे रहते हैं। विरोध से, आन्दोलन से, दबाव या डर से कुछ करना हमारे सरदार ने सीखा ही नहीं, बल्कि शब्दों द्वारा भी ऐसा जवा कड़ा जवाब दे देते हैं कि सामने वाला या तो दब कर बैठ जाता है, या खीज का खाली तबाही मचाने और करने लगता है।

उनका वज्रसंकल्प

यह तो सरदार की एक विशेषता हुई, दूसरी है उनका वज्र संकल्प। उनकी कुछ ऐसी धाक जम गई है कि वे हां, कह देते हैं तो लोगों को आशा व धैर्य बंधने लगता है और ना, कह देते हैं तो छक्के छूट जाते हैं या निराश हो कर बैठ जाते हैं। मान्यता के क्षेत्र में हमारे जवाहर ने जैसा अपना अमिट और ऊंचा स्थान बना लिया है, वैसा ही शासन व लौहदाब में सरदार ने अपना सिक्का जमा लिया है। जब वे किसी बात को ठान लेते हैं तो शायद ईश्वर की भी नहीं सुनते, बापू की भी नहीं सुनते थे।

स्वजनसंरक्षकता

तीसरा गुण है उनकी संरक्षकता। जो उनकी शरण गया, अभय हो गया। उसे आश्रय देने में वे राजपूतों की तरह अपने हानि लाभ की परवाह नहीं करते। इस गुण के बिना किसी को वफादार साथी नहीं मिल सकते, न ठहर सकते हैं। जवाहरलाल जी के प्रशंसक तो लाखों मिलेंगे, संसार भर में उनकी शराफत साफदिली के कद्र-दां मौजूद हैं, परन्तु हुक्म बजा लाने वाले साथी मिलने का सौभाग्य सरदार को ही प्राप्त है। सिविल सर्विस, स्थापित स्वार्थ वाले, पूंजीपति सब पर तरह तरह के हमले होते हैं और उनमें कोई तथ्य न हो, सो बात भी नहीं। किन्तु सरदार सबकी ढाल बने हैं और बनते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि यदि हमें किसी से काम लेना है तो उसकी रक्षा करके, उसकी इज्जत बढ़ा कर ही ले सकते हैं। उसको धक्का देकर, गिरा कर, बेइज्जत करके या

सरदार पटेल

होने देकर नहीं कर सकते। अतः जहां जरूरत पड़ने पर सरदार किसी पर प्रहार करने में नहीं चूकते, वहां वे मौका पड़ने पर आश्रय देने में भी निन्दा व विरोध की परवा नहीं करते। यह करामात बलवत्ता वीरों में ही पायी जाती है।

संगठन कुशलता

उनकी चौथी विशेषता उनकी संगठन कुशलता है। व्यक्तियों की मिज़ाज तथा आन्दोलन की बारीक से बारीक और सतत जानकारी वे रखते हैं। इसके बल पर वे व्यावहारिक क्षेत्र में अचूक जैसा निर्णय कर पाते हैं और थोड़ा बोल कर बिना अधिक शोर किये वे अपना सारा काम कर लेते हैं। उनका मौन उनकी तो ढाल है, परन्तु विरोधी के लिए एक भीषण समस्या जैसा हो जाता है। बापू कहा करते थे सत्य का पालन करने वाले को कम बोलना चाहिये। अधिक बोलने से असत्य भाषण थोड़ा बहुत हो ही जाता है। परन्तु सर-

(शेष पृष्ठ २१ पर)

सौन्दर्य संगीत और कला का समन्वय

बाल गंधर्व

★ श्री दिगम्बर

उस दिन केन्द्रीय सरकार के एक मन्त्री श्री न. वि. गाडगिल के निवासस्थान पर राष्ट्रपति डा. राजेन्द्रप्रसाद तथा प्रधान मंत्री पं० नेहरू की उपस्थिति में महाराष्ट्र के प्रथितयश कलाकार श्री बालगंधर्व के सुरीले भजन जिन जिन्हों कानों पर पड़े बरबस मुखसे ये उद्गार निकल पड़े कि यदि ६२ वर्ष की इस वृद्धावस्था में भी इस कलाकार की वाणी में इतना मिठास है तो निःसंदेह अपने समय में इसके मुख से तो अमृत ही बरसता होगा। बात बिलकुल ठीक है। तभी तो हमारे प्रधानमन्त्री जाते थे शिष्टाचारवश दस मिनट के लिए पर मधुर संगीत के प्रवाह में एक घंटे तक बैठे रह गये। समय बीतने का उन्हें पता ही नहीं चला।

बालगंधर्व का वास्तविक नाम श्री नारायण श्रीपाद राजहंस है और उनका जन्म पूना में २६ जून १८८८ को हुआ था। शिक्षा दीक्षा तो बहुत न हो सकी पर भगवान ने सौन्दर्य और संगीत की देन बचपन से ही दे रखी थी। बचपन में ही वे किसी पपीहे की तरह चहकते हुए "पीहू पीहू" के सुमधुर गीत गाते थे। एक बार उन्हें स्वर्गीय लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने गाते हुए सुना। वे अचानक बोल उठे "अरे! यह तो गंधर्व की तरह गा रहा है।" बस तभी से इनका नाम गंधर्व पड़ गया और संगीत और रंगमंच का संसार इन्हें लोकमान्य द्वारा दिये नाम से ही अधिक जानता है।

यद्यपि आज महाराष्ट्र में स्त्रियां पुरुषों की बराबरी में अथवा उनसे भी एक कदम आगे रजतपट पर अथवा यदा-कदा होने वाले रंगमंच पर काफी

बालगंधर्व (नारी वेष में)

मात्रा में दिखाई देती हैं किन्तु १९३० में सिनेमायुग प्रारंभ होने तक स्त्रियों का रंगमंच पर दर्शन होना असंभव सी ही बात थी। पुरुषों को ही विशेष कर नवयुवकों को, स्त्रियों का भी अभिनय करना पड़ता था।

इसी दृष्टि से महाराष्ट्र की १८८० में स्थापित हुई सर्व प्रथम तथा प्रमुख नाटक कम्पनी किर्लोस्कर नाटक मंडली को एक "नायिका" की आवश्यकता थी। कोल्हापुर के छत्रपति श्री शाहू महाराज कला और संगीत के अत्यन्त भक्त थे और वे बालगंधर्व की सुरीली आवाज तथा सौन्दर्य से बचपन से ही परिचित थे। उन्हीं की सिफारिश और आशीर्वाद लेकर बालगंधर्व ने १९०५ में किर्लोस्कर नाटक मंडली में प्रवेश किया। गंधर्व की सुरीली आवाज का रंग इतना फैलने लगा कि किर्लोस्कर नाटक मण्डली का प्रत्येक खेल हाउस फुल होने लगा। बालगंधर्व के संगीत ने मराठी रंगमंच पर इतना अधिक प्रभाव डाला कि उनके बाद का कुछ काल नाट्यसंगीत का काल कहा जाने लगा। नाटकों में एक एक गीत एक एक घंटे तक गाया जाने लगा और पक्के गाने को रंगभूमि पर स्थान मिला। बालगंधर्व के संगीत ने तो समाज पर इतना अधिक प्रभाव डाला कि आज के लोकप्रिय सिनेमा गीतों की तरह बालगंधर्व के गीत भी घर घर में सुनाई देने लगे।

यदि सुमधुर संगीत गंधर्व की प्रतिष्ठा का एक कारण था तो उनके यश का दूसरा कारण उनकी अभिनय कुशलता थी। उन्होंने किर्लोस्कर नाटक मंडली में तथा १९१३ में स्वयं स्थापित की हुई गंधर्व नाटक मंडली में जो १९३२ तक महाराष्ट्र की प्रमुख नाटक कम्पनी रही, स्त्रियों का अभिनय बहुत ही चातु-

(शेष पृष्ठ २१ पर)

दिल्ली में पं० राष्ट्रपति दिलवा गाते हुए कुछ कलाकार । चित्रित हैं वो के पाले उनके हाथ में है।

पाकिस्तान की ओर से नेत्र मूंदना बुद्धिमानी नहीं

❋ युद्ध को रोकने के लिये भी युद्ध की तैयारी आवश्यक है ❋

★ श्री बलराज मधोक ★

युद्ध एक भयानक शब्द है। आज के वैज्ञानिक युग में तो यह और भी अधिक भयावह हो गया है क्योंकि इसकी मार केवल सैनिकों तक सीमित न रह कर युद्धग्रस्त देश के सभी लोगों के लिये अभिशाप बन जाती है। इसीलिये गत दोनों महायुद्धोंके पश्चात संसार के कई राजनीतिज्ञों के मनमें श्मशान वैराग्य का भाव उमड़ आया और उन्होंने युद्धका अन्त करने के लिये उपाय सोचने शुरू किये। लीग आफ नेशन्स तथा संयुक्त राष्ट्र संघ उसी श्मशान वैराग्य का फल हैं। परन्तु जिस प्रकार श्मशान वैराग्य स्थायी नहीं होता उसी प्रकार संसार में से युद्ध को बिलकुल खतम कर देने का भाव भी अभी तक स्थायी रूप धारण नहीं कर सका है। एक युद्ध के समाप्त होते ही दूसरे युद्ध की तैयारियां शुरु हो जाती हैं। शायद इसीलिये एक विद्वान ने युद्ध को मनुष्य का स्वाभाविक कृत्य बताया है और शान्ति की परिभाषा "दो युद्धों के बीच का अवकाश" की है।

मनोवैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करें तो यह एक कटु सत्य ही जान पड़ता है। युद्ध मनुष्य की जन्मजात् प्रवृत्ति का सामूहिक रूप है और बहुधा जीवित रहने की प्रवृत्ति भी मनुष्य तथा मनुष्यों के समूहों को युद्ध करने पर बाधित कर देती है। चाहे आदर्शवादी लोग कुछ भी कहें संसार में किसी न किसी रूप में मत्स्य न्याय चलता है। श्रेष्ठतम की विजय मानव जीवन के विकास का नियम है और अपनी श्रेष्ठता को सिद्ध करने का एक साधन युद्ध भी है। वास्तव में युद्ध द्वारा सिद्ध की गयी श्रेष्ठता बाकी सब प्रकार की श्रेष्ठता पर भार है। जो जाति व राष्ट्र युद्ध के क्षेत्र में अपने आप को जीने के योग्य सिद्ध नहीं कर सकते वे अन्य बहुत सी विशेषताएं तथा गुण रखते हुए भी अधःपतन को प्राप्त होते हैं। इसीलिये संसार के कई दार्शनिकों ने जिनमें जर्मन विचारक नीत्शे और बर्नहार्डी प्रमुख हैं युद्ध की प्रशंसा की है। उनके कहने के के अनुसार युद्ध किसी भी व्यक्ति अथवा राष्ट्र में उच्चतम गुणों के विकास में सहायक बनता है। इसके द्वारा बहुत सा गंद निकल जाता है। और युद्ध की भट्टी में तपे हुए गुणी लोग राष्ट्र के जीवन में नया उत्साह भरने में समर्थ हो जाते हैं।

भारत के विचारकों व दार्शनिकों ने युद्ध की न प्रशंसा की है और न ही निन्दा। वे जीवन जैसा है वैसा ही देखने का प्रयत्न करते थे। इसीलिए दुःख और सुख, युद्ध और शान्ति को उन्होंने समभाव और कर्तव्य बुद्धि से देखने का सन्देश दिया है। इसीलिए भारत के प्राचीन ग्रन्थों में जहां शान्तिमय सुसंस्कृत जीवन की अति भव्य झलकें मिलती है वहां पर समरांगणों का भी उल्लेख मिलता है। हमारे साहित्य में दोनों क्षेत्रों में कर्तव्य बुद्धि से काम करने वालों के लिये आदर भाव दर्शाया गया है। ब्रह्मतेज व क्षात्र तेज इन दोनों को राष्ट्र जीवन के लिये आवश्यक माना गया है। शान्ति में भी और युद्ध में भी इन दोनों का साथ साथ रहना श्रेयस्कर माना गया है। शायद इसीलिये भारत के दोनों महाकाव्य—रामायण तथा महाभारत—इन दोनों के सुन्दर समन्वय को दर्शाते हैं। महाभारत का युद्ध अपने इतिहास का शायद सबसे बड़ा युद्ध था। और अपने धर्म संस्कृति और दर्शन का निचोड़ श्रीमद्भगवद्गीता रूपी श्रीकृष्ण का अर्जुन को उपदेश भी रणक्षेत्र में दिया गया था।

ब्रह्मतेज और क्षात्रतेज, शान्ति और युद्ध का यह सुन्दर समन्वय, भारतीय जीवन का भारत के भले दिनों में एक विशेष लक्षण रहा है।

संसार में शान्ति और सुख का वातावरण निर्माण करना भारतीय संस्कृति व धर्म का उद्देश्य था। इसीलिए यहां "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः" के मन्त्रों का गान होता था। परन्तु शान्ति का जाप करते हुवे आर्य लोग युद्ध के लिये भी कटिबद्ध रहते थे। वहीं ब्राह्मण जो यज्ञ कराते थे और शान्ति का उपदेश देते थे युद्ध के काल में चन्डी का पाठ पढ़ते थे और कायरों को भी 'हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गम्' का उपदेश दे कर शेर बना देते थे।

यह परम्परा भारत के परतन्त्र हो जाने के पश्चात भी कतिपय भारतीय वीरों को स्फूर्ति प्रदान करती रही। विजयादशमी का विजय का सन्देश भी भारतीय क्षत्रियों में गिर-गिर कर फिर उठने का और विजय प्राप्त करने का भाव भरता रहा। यही कारण था कि भारतीय इस्लामी शासकों के विरुद्ध शताब्दियों तक युद्ध करते चले गये। वे कई बार हारे, कईबार "जौहर" करके अनेकों वीर स्त्री पुरुष स्वर्ग सिधार गये। परन्तु फिर भी युद्ध की आग ठन्डी नहीं होने पायी। भारतीय वीर विदेशी शासकों को सदा यह चुनौती देते ही रहे कि जो तलवार के बल से हम पर शासन करने का प्रयत्न करेंगे, हमारे देश को गुलाम बनायेंगे, उनको हम तलवार के बल से ही नष्ट भी करेंगे।

आक्रान्ताओं और आततायियों के विरुद्ध युद्ध की आग को जयपाल और अनंगपाल से लेकर सुभाषचन्द्र बोस तक अनेक वीरों ने प्रत्युत्त रूप में जागृत रखा। कौन कह सकता है कि यदि महाराणा प्रताप ने अकबर के साथ निरन्तर युद्ध करके भारत का मान ऊंचा न रखा होता और शिवाजी महाराज ने औरंगजेब का मान मर्दन न किया होता तो आज हमारी क्या दशा होती। हमारे में से स्वाभिमान और आत्म विश्वास नष्ट हो जाता और हमारे अन्दर स्वतन्त्र जीवन बिताने की महत्वाकांक्षा भी नष्ट हो जाती।

भारत के जिस प्रदेश को आज हम पश्चिमी पाकिस्तान कहते हैं वह पहले पहल भारतीयों के हाथ से निकल कर गैरों के कब्जे में आज से ९ सौ वर्ष पहिले गया था। १०२० A. D. में महमूद गजनवी ने लाहौर को अपने साम्राज्य में शामिल कर लिया था। उसके पश्चात लगातार ८०० वर्ष तक वह प्रदेश मुसलमानों के पास रहा। परन्तु देश के अन्दर स्वतन्त्रता का भाव और युद्ध वृत्ति जीवित रहने के कारण वीर मराठे और महाराजा रणजीतसिंह इस प्रदेश को फिर भारत का अंग बनाने में समर्थ हो सके। इसी युद्ध वृत्ति के जीवित रहने के कारण अंग्रेजी शासन के दिनों में भी भारत अनेक क्रान्तिकारी उत्पन्न करता रहा। आज भारत की स्वतन्त्रता का श्रेय विश्व युद्ध द्वारा निर्मित अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के पश्चात यदि किसी और को दिया जा सकता है तो वे भारत के क्रान्तिकारी और आजाद हिन्द सेना हैं। जिनका विचार है कि सत्याग्रह और जलों को भरने से भारत स्वतन्त्र हुआ वे गलती पर हैं। अंग्रेज शासकों को एक अंग्रेज के मारे जाने पर लाख भारतीयों के जेल जाने से अधिक चिन्ता होती थी। यही कारण था कि श्री मदनलाल धींगरा द्वारा एक अंग्रेज-कर्जन वाइली-के मारे जाने पर अंग्रेज राजनीतिज्ञ ने कहा था कि इस घटना से अंग्रेजों को पता लगा है कि "आन्तरिक समस्या के समान एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या भी है।"

आज भारत स्वतन्त्र हो चुका है। हमारा अपना राज है और अपनी ही सेना है। परन्तु जिस युद्ध वृत्ति के जीवित रहने के कारण हम आज तक जीवित रहे और अन्त में स्वतन्त्र भी हो पाये वह आज लोप होती दीखती है। आज भारत से कटे हुवे प्रदेशों को वापिस भारत से मिलाने की बात करना बुरा समझा जाता है। आज अपने घर—काश्मीर में घुसे हुवे पाकिस्तानियों को निकालने का विचार करना भी मूर्खता समझा जाता है क्योंकि इससे पुनः युद्ध छिड़ जाने की सम्भावना हो सकती है। आज हमारे प्रधान मन्त्री "युद्ध नहीं करेंगे" की घोषणा करने के लिये बार-बार कह रहे हैं। परन्तु वे भूलते हैं कि युद्ध से डरने से युद्ध नहीं रुकेगा। युद्ध रोकने के लिये भी युद्ध के लिये सिद्ध रहना चाहिये।

इसलिये आज युद्ध के नाम से डरने की आवश्यकता नहीं। हमारा प्रयत्न होना चाहिये कि संसार में शान्ति रहे और सभी लोग निर्भय हो कर रह सकें। परन्तु शान्ति को युद्ध से बिलकुल अलग नहीं किया जा सकता। दोनों परस्पर सम्बन्धित हैं एककी स्थापनाके लिये दूसरा कई बार आवश्यक हो जाता है। इसलिये "हम युद्ध नहीं करेंगे" इस प्रकार की घोषणायें करते फिरना समझदारी नहीं है। हालात पैदा हो सकते हैं—वास्तव में पैदा हो चुके हैं, जिनमें भारत और पाकिस्तान में युद्ध अनिवार्य जान पड़ रहा है। किसी को देख कर आंख बन्द करने का समय नहीं, चौकन्ना होने का समय है।

नर-नारी

★ महेन्द्र 'राजा'

नर लक्ष्मीपति, नारी लक्ष्मी,
नर-माव और नारी माया।
नर नारी के, नारी नर के,
जीवन की एक उज्ज्वल आशा॥

वह धर्म, ज्ञान वह, तर्क पुरुष,
भावना सत्य ही है नारी।
यदि पुरुष रचयिता है तो, सत्य
यही है रचना है नारी॥

नर हठ है तो नारी इच्छा,
वह धैर्य और वह शान्ति रूप।
नर अगर कथानक गढ़ता है,
तो नारी खुद ही कथारूप॥

वह दाता और वह दान,
अगर-है पुरुष मंत्र' वह उच्चारण।
है नर दिन कर, नारी आभा,
यदि पुरुष अग्नि तो वह ईंधन॥

विस्तार पुरुष, नारी सीमा,
नर आंधी है तो नारी गति।
वह युद्ध और वह महाशक्ति,
वह प्रगतिशील, वह स्वयं प्रगति॥

है पुरुष धनी तो नारी धन,
है पुरुष दीप, नारी प्रकाश।
नर वासर है तो नारी निशि,
वह हासवान, वह स्वयं हास॥

है पुरुष वृक्ष तो नारी फल,
संगीत पुरुष तो नारी स्वर।
वह शुद्ध न्याय, वह शुद्ध सत्य,
वह सरिता है, वह है सागर॥

वह विमल पताका वह स्तम्भ,
वह सौंदर्य, वह सुदृढ़ शांति।
अधिकार वही, कर्त्तव्य वही,
वह भक्तिशील, वह स्वयं भक्ति॥

नर रत्नाकर है यदि विशाल,
तो नारी उसका एक हीर।
नर स्वयं अगर आत्म अजेय,
तो नारी सुन्दरतम शरीर॥

नारी का नर, नर की नारी,
दोनों ही आपस में पूरक।
'अधिकारों' 'औ कर्त्तव्यों पर,'
संघर्ष रहेगा अब कब तक?

नारी जननी, नारी संगिनी,
नारी क्षमा साक्षात् मूर्ति।
नर अगर पूर्ति करता अपनी,
तो नारी उसकी स्वयं पूर्ति॥

नर महेन्द्र, नारी स्वयं साध,
साधना मात्र की वह जननी।
नर शान्तिरूप वह क्षमाशील,
नर जल प्रवाह, नारी तरणी॥

नर है प्रकाश, नारी छाया,
नर है सागर, नारी सरिता।
नर हर है तो नारी गौरी,
नर कवि है तो नारी कविता॥

नर की निर्मात्री नारी है,
नारी का निर्माता है नर।
नर महीमय, नारी [illegible],
दोनों ही [illegible]

इन्द्र धनुष

तम्बाकू और घी

समस्त भोज्य पदार्थों के लिए घृत उपादेय पदार्थ है। बिना घी का भोजन सूखा कहलाता है। ग्राम में उसको कच्चा भोजन कहा जाता है और घृत में पकाया हुआ पक्का। यद्यपि घृतरहित और घृत सहित दोनों प्रकार के भोजनों को अग्नि पर पकाया जाता है। परन्तु घृत रहित कच्चा कहलाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि भोज्य पदार्थों में घृत की इतनी बड़ी उपयोगिता होते हुए भी घृत तम्बाकू के लिए उपयोगी नहीं है। सैकड़ों मन तम्बाकू को सेर भर घी बिगाड़ देता है। बस, थोड़ा-सा पड़ते ही तम्बाकू पीने का काम का नहीं रहता।

इसलिए निस्संकोच कहा जा सकता है कि तम्बाकू भोज्य पदार्थ नहीं है।

सुप्रसिद्ध डाक्टर हक्स ने तम्बाकू के भारी प्रचार को देख भारी दुःख का अनुभव किया। उन्होंने कहा है कि "वनमानुष भी इसे खाना पसन्द नहीं करेगा। पुनः यह बुद्धिमान आदमी इसे क्यों खाते हैं। इसमें न तो पोषक तत्व है और न पाचक ही है और मानसिक और शारीरिक शक्ति का बढ़ाने वाला भी नहीं है। यह नसों को काट डालता है, पेट को नष्ट कर डालता है और प्यास को बढ़ाता है।

●

जैन, सिख और बौद्ध हिन्दू हैं

जैन, सिख और बौद्ध आदि अवैदिक पन्थ भी हिन्दू हैं। उन की पितृभूमि यही देश है। इस पर भी यदि सिख आदि हिन्दू कहलाना नहीं चाहें, तब उन पर हमारी जबरदस्ती नहीं होगी। इससे समाज को कोई हानि भी नहीं होने वाली है। कनखजूरा १०० पैरों से चलने वाला प्राणी है। यदि उसकी एक टांग टूट भी जाय, तब भी उसकी चाल में वर्तमान अन्तर नहीं आता है।

यदि ये लोग युक्ति चाहें तब इन्हीं से पूछा जा सकता है कि पश्चिमी पंजाबमें अत्याचार होने पर सिख भारतमें ही क्यों आये। अफगानिस्तान क्यों नहीं चले गये। इसका कारण यही है कि वे यह जानते थे कि हमें अपना [illegible] कोई नहीं है। यही कारण है कि भारत भूमि को समझने वाले जैन, बौद्ध और सिख भी हिन्दू हैं।

—सावरकर

●

गंगाजल

टैवर्नियर के यात्रा-विवरण से यह भी पता लगता है कि 'उन दिनों हिन्दुओं के विवाह के अवसर पर भोजन के पश्चात् अतिथियों को गंगाजल पिलाने की चाल था। इसके लिए बड़ी दूर से गंगाजल मंगाया जाता था। जो जितना अमीर होता था, उतना ही अधिक गंगाजल पिलाता था। दूर से गंगाजल मंगाने में खर्च भी बहुत पड़ता था।' टैवर्नियर का कहना है कि 'शादियों में कभी कभी इसमें दो-तीन हजार रुपये तक खर्च हो जाते थे।' पेशवाओं के लिए बहंगियों (कावड़ी) में रखकर गंगाजल पूना लाया जाता था मराठी पुस्तक 'पेशवाईच्या सावलीत' (पूना १९३७) से पता लगता है कि काशी से पूना ले आने के लिए एक बहंगी गंगाजल का खर्च २० रुपया और पूने से रामेश्वरम् ले जाने के लिए ४० रुपया पड़ता था, जो बहुत नहीं कहा जा सकता है। गढ़मुक्तेश्वर तथा हरिद्वार से भी पेशवाओं के लिए गंगाजल आता था। श्री बाजीराव पेशवा को बतलाया गया था कि गंगाजल के सेवन से वे ज्वर से मुक्त हो जायेंगे।

मरते समय गंगोदक देने की चाल तो सुदूर दक्षिण में भी थी। विजयनगर के राजा कृष्णराय को, जब वह सन् १५२९ में मृतप्राय थे, गंगोदक दिया गया और वे अच्छे हो गये (विजयनगर, सर्वे ह्वाइटसिवेल, १९२९)। सूडान युद्ध की समाप्ति पर लिखवत के एक चपरासी वारेन हेस्टिंग्ज के पास एक रूक लेकर गंगा तट पर कुछ भूमि माँगी और वहाँ वह एक मठ तथा मन्दिर बनवाया, क्योंकि 'गंगा हिन्दुओं ही के लिए नहीं, बौद्धों के लिए भी पवित्र है।' यह मठ और भूमि, जो 'भोटवा बाग' के नाम से प्रसिद्ध है, इसीलिए [illegible] ... इसके सम्बन्ध में कलकत्ता हाईकोर्ट में मुकदमा भी चला था।

माँ दुर्गे !

श्री नरसिंह पण्डित, मुंगेर

माँ ! जिस हृदय-सागर में विगत एक वर्ष का अकथ्य इतिहास छिपाये इस मिट्टी के हम कोटि-कोटि हिन्दू नामधारी जीव अपने हृदय-थाल में श्रद्धा के सुमन, स्नेह के तंदुल एवं रक्त के कुंकुम सजो कर पलक पांवड़े बिछाये तुम्हारी प्रतीक्षा में, खड़े हैं। जननी ! हम वही पुत्र हैं, जो तुम्हारे हुलास में, विजय के उल्लास में विहंसते हुये शस्त्रों की झंकार पर खेल गये। हंसते हुये फांसी के तख्ते पर झूल गये। तोप के मुंह पर भी बैठ कर मुस्कुराया इस मिट्टी के युवक तुम्हारे बेटों ने। एक उल्लास था उनके हृदय में—एक शाश्वत प्रेम की लपटें जल रही थीं उनके अंतःकरण में, 'कि पतन और पराजय की गहन विभीषिका में चीत्कार करते राष्ट्र जीवन को उत्कर्ष एवं विजय के प्रांगण में खड़ा करूंगा। जननी को मुक्तता के क्रोड़ में स्वांस दिलाऊंगा।' इसी निर्मित हृदय में यौवन की समस्त आकांक्षाओं को लपेटे हुतासन की लाल-लाल विकराल लपटों से भी लिपट गये। कठोर यातनाओं से होड़ ली। इन दीवाने मिट्टी के युवकों ने। माता को मुक्ति मिली—अंग-भंग क्षत-विक्षत अवस्था में। परन्तु हमने विजय पर्व मनाया, धक-धक तड़पती लाशों के ऊपर। कोटि २ घी के दीये नहीं तो हृदय के दीपक अवश्य जले। अंतःकरण में उमंगें लहरा उठीं। सांसों में अरमान तैरने लगा। पलकों पर स्वाभिमान पलने लगा। जन-जन के हृदय सरोवर में वैभव की तरंगें तरंगित होने लगीं। परन्तु कौन जानता था कि वह आजादी मेरे लिए बरबादी लायगी। युग-युग के तपस्या से प्रसूत स्वातन्त्र्य-पुष्प मेरे सूखे जीवन को उज्जीवित कर उठने के लिये नहीं, वरन मेरी समाधि पर चढ़ने को अवश्य पड़ेगा। मां ! आज हृदय-हृदय में टीस है। हृदय २ में वेदना है, कराह है और फिर लौकिक शान्ति चाहे वह मृत्यु ही क्यों न हो, की क्रोड़ में विश्राम करने की कुलबुलाहट है। मां ! तुम्हारे पायल की झंकार ने कर्ण कुहरों में सुधा ढाल दी है। नीरस शरीर में फिर रस लहरा उठा है। इस मरणासन्न काया में फिर से रक्त लहरा उठा है। तुम्हारा दर्शन कर जीवन को कृत-कृत्य करने की चाह प्रबल हो उठी है। परन्तु हम निरन्न हैं, विवस्त्र हैं जगजननी ! पेट और पीठ एक हो चुका है। जीर्ण शीर्ण वस्त्रों में लज्जा लपेटे मां बहनों की दुर्गति, दुर्दशा देख छाती जल रही है। हृदय धड़क रहा है। हम कोटि-कोटि प्राणी किस प्रकार तुम्हारी अभ्यर्थना करें मां ! जब कि हम चिर अशान्ति के क्रोड़ में विश्राम के लिये पग-पग पर मृत्यु की मधुर पद ध्वनि सुन रहे हैं। आज इस मर्सिया के समय में बिहाग कैसे अलापा जा सकेगा मां ! हम तो हम, सम्पूर्ण राष्ट्र जीवन अपनी रोग, शोक, वैमनस्य एवं पतन के चौराहे पर खड़ा चीत्कार कर रहा है।

आज समस्त देश को एक विचित्र ऐन्द्र-जालिक प्रवृत्ति अपने दुर्दान्त पंजों से कुचल डालने को तत्पर खड़ी है। मां ! तीन वर्ष के अबोध इतिहास से भी जिनकी आंखें नहीं खुल सकी हैं, वे भारतीय संस्कृति को मिटाने पर तुले हुए हैं। तुम्हारे स्मृति चिन्हों पर आंसू बहाना मना है। दीपक बालना साम्प्रदायिकता है, देशघात है, गद्दारी है। शुद्ध खादी के कपड़ों में ठंस अपने भाई बहनों की जीवित लाशों पर सोने चांदी के अम्बार खड़ा करने वाले वे स्वयं भवनों के स्वामी परकीय राष्ट्रों से सांठ गांठ कर देश की पीठ में छुरा भोंक रहे हैं। खादी के शुद्ध कपड़े उनकी गद्दारी छिपाने में असमर्थ हैं। मजदूरों के हित-चिन्तन का दावा करके अपनी लीडरी बनाये रखने के लिये बात २ पर हड़ताल करा कर देश की पैदावार को नष्ट कर भारत को आर्थिक संकट [illegible] में झोंक रहे हैं। मजदूर और किसान का खून चूस चूस कर रासरंग मनाने वाले पूंजीपतियों और उन्हें बहका कर तथा कभी २ उनका रक्त चाट कर अपना नेतृत्व स्थापित करने वाले तथाकथित कम्युनिस्टों एवं नेताओं के अनाचार से भारत की छाती प्रकम्पित हो उठी है। स्वतन्त्रता के लिये अपना सर्वस्व, अपने लहलहाते खेत, सजीले मकानों एवं हुमसुंदे बागों को लुटा कर भारत के नर-नायकों को चीकती जीपों और चमचमाती कारों पर भ्रमण करने का स्वर्ण अवसर दिलाने वाले मुट्ठी भर अन्न, तन भर वस्त्र और पग भर जमीन के लिये नारकीय जीवन बिता रहे हैं। कवि रवीन्द्र का 'सोनार बंगाल' आज मरघट बन चुका है। धू धू कर भूख की आग धधक रही है बंकिमचन्द्र की शस्यश्यामला धरित्री के कण कण में। कश्मीर की हिमावृत वादियां आज पुनः युद्ध के निर्घोष से गूंज उठने को विकल हो उठी हैं। विस्थापित क्षेत्रों में हम हिन्दू नामधारी जीव मानो कैंची की दो धारों के बीच कुतरवा रहे हैं। कहिए और ईरान-तुरान कुचाह है हमारे लिये कहां ! ऋषि-संततियों का जीवन, राणा प्रताप और गांधी के बेटों का जीवन यहां कुत्ते-कीड़े से भी बदतर समझा जा रहा है। मां ! आज पतन की जो कंपकंपाहट है, पराजय की जो अकुलाहट है, उसने १५ अगस्त ४७ को, राष्ट्र के विजय पर्व की रीढ़ तोड़ डाली है मानो ! पूरे तीन वर्ष, हां मां ! पूरे तीन वर्ष बाद भी आज राष्ट्र की अवस्था उस विजयी सैनिक सी है, जिसके घावों से अभी रक्तस्राव जारी है। अंतड़ियां कुलबुला रही हैं। तन पर के जीर्ण-शीर्ण वसन तार-तार हो चुके हैं। जिसके जीवन का, यौवन का, कोई मूल्य नहीं है।

"एक वर्ष में भारत को सुखी सम्पन्न करूंगा' की डींग हांक कर, जनता के जीवन से खेल खेल कर, जनता के उन जन प्रतिनिधियों ने देश के स्वाभिमान में ठोकर मारी है, अपने कर्त्तव्य का खून किया है अपनी आत्मा के साथ व्यभिचार। जगज्जननी ! तुम्हारे इस प्रांगण में पग-पग पर मौत की छटपटाहट है। मनुष्य तो मनुष्य आज प्रकृति भी कोप कर भारत के वक्षस्थल को विदीर्ण कर रही है। दुर्भिक्ष, अग्निकांड और पल में सहस्र-सहस्र चलते फिरते इन्सानों को अपने उदर में समेट लेने वाले, असीम जनों पर डाका डालने वाले, आंधि, व्याधि और भूकम्प किस बात के सूचक हैं मां !

मां ! राष्ट्रजीवन की इस अराजीर्ण दुर्दशा पर, गहनतमिस्रपूर्ण मौत की घाटी में छटपटाती मनुष्यता को देख वज्र-सा कठोर परन्तु पुष्प-सा मृदु तुम्हारा प्रेम-प्लावित अंतःकरण कचोट नहीं उठता क्या ? पाप दुर्ग, कलुष-सौध, एवं अनाचार वट को चूर्ण विचूर्ण करने को तुम्हारे नयनों के अंगार क्या अब नहीं उठेंगे मां ! तुम्हारे कृपा-कटाक्ष की भिखारी भारत की कोटि-कोटि क्षत-विक्षत तृषित आत्मायें बड़े ही आतुर नेत्रों से तुम्हारी बाट जोह रही हैं। अपने वरदहस्त द्वारा हम पीड़ित, एवं दुखित प्राणियों पर आशीर्वचन की ऐसी सुधावृष्टि करो मां, जिससे हमारा जीवन उज्जीवित हो सके। भारत का सोया क्षत्रियत्व पुनः गरज उठे। लाल-लाल रक्त में स्नान करती समस्त धरा में पशु रूपी मानव को शान्ति का पाठ देने को भारत का ब्राह्मणत्व पुनः दहाड़ उठे। फकीरों की टोलियां एक हाथ में गैरिक ध्वज और दूसरे में वेद लेकर संसार को सत्य-मार्ग पर लाने को मचल पड़ें। आसेतु हिमाचल से कन्या कुमारी तक भारतीयता के पुजारी तरुणों की टोलियों के पद-गमन से आह्लादित हो उठे। बिखरे-पुष्प मचल-मचल कर एक सूत्र में गूंथ कर सुख-शान्ति का आवाहन करते हुए हर्षपूर्वक "कंकर पत्थर बनकर हमको राष्ट्र-नींव को भरना है" का मंत्रोच्चार करता हुआ भारत के कण-कण में दिखाई देने लगे। भारत का चप्पा-चप्पा इन सर्वस्व त्यागियों के पदचाप से ध्वनित हो उठे। संसार की अर्ध निमीलित आंखें तरुणों की इस अन्तर ज्योति को देख चकाचौंध हो जावें और विश्व का जन-जन कह उठे—

सत्यं शरणं गच्छामि ।
धर्मं शरणं गच्छामि ।
संघं शरणं गच्छामि ।

प्राचीन भारतीय राज्यतन्त्र—एक अध्ययन !

★ श्री रत्नचन्द्र अग्रवाल

"प्रवर्तता प्रकृति हिताय पार्थिव" (राजा प्रजा के हित मे प्रवृत्त हो) इस श्रेयस्कर आदर्श को अपने उत्तरदायित्वपूर्ण पद की पृष्ठभूमि बना कर चलने वाले भारतीय नरेशों ने प्राचीनतम युग से ही एक संगठित, सुसंपन्न एवं सुदृढ़ शासन की स्थापना की थी। लोकाराधन के निमित्त अपने व्यक्तिगत सुख, ऐश्वर्य, भोगोपभोग को सर्वथा त्याग कर स्वयं मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने एतद्देशीय परम्परानुसार ही अपने राज्य को चलाया, उसकी गतिविधि का सम्यक् रूप से नियन्त्रण किया। इस कार्य के लिये तो उन्होंने अपनी प्रेयसी सती साध्वी सीता तक का परित्याग करने में तनिक भी विलम्ब न किया।

स्नेह दयाञ्च सौख्यं च यदि
वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकाना मुञ्चतो
नास्ति मे व्यथा॥

अर्थात् लोक-सेवा के लिये स्नेह, दया और सौख्य की तो क्या बात, जानकीजी का भी परित्याग करने मे मुझे कोई कष्ट न होगा। प्रजानुरञ्जन की पराकाष्ठा "बहुजनहिताय" के आदर्श को चरितार्थ हो कर रामने दिखायी था।

रामराज्य स्पृहणीय है

उनकी इस कर्तव्यनिष्ठा, ध्येयतल्लीनता एवं कर्मठ जीवन के परिणामस्वरूप आधुनिक युग में तथाकथित प्रगति की घोर वेला में भी हम राम का आह्वान करते हुए "रामराज्य" की विशुद्ध कल्पना को हृदयङ्गम कर उसकी बाट जोह रहे हैं। रामराज्य मानों स्वराज्य, आदर्श राज्य का प्रतीक बन गया है, वह तो सुराज्य से भी बढ़कर किसी श्रेष्ठतम स्थिति का सूचक है। प्रजा के हृदय सम्राट् राम के अभाव में सर्वत्र सूनापन है तथा उनकी विद्यमानता में सर्वत्र आमोद प्रमोद मनाये जा सकते हैं। जहां राम हैं, वहीं अयोध्या। राम की उपस्थिति में एक जन प्रदेश भी सुख शान्ति सम्पन्न राज्य बन सकता है।

राष्ट्र की शोभा — नृप !

अपने अर्वाचीन वैदिक वाङ्मय में राजा को "राष्ट्र की शोभा" कह कर पुकारा गया है अर्थात् "राजा हि वै भुवनानां श्रीः" राजा राष्ट्राणां पेशः (ऋ० वेद) राजा तु धर्माय भवति— उसकी नियुक्ति धर्मवृद्धि हेतु ही है। उसका कार्य "मत्स्य न्याय" (दुर्बल-भक्षण) को रोकना है—पीड़ितों की रक्षा कर शान्ति की स्थापना करना है। "राजा चेन्न भवेल्लोके पृथिव्यां दण्ड-धारक। जले मत्स्यानिवाभक्ष्यन् दुर्बलं बलवत्तरा॥" (शान्ति पर्व ६७-१६)। पृथ्वी पर दण्डधारी राजा के अभाव से बलवान् दुर्बलों का भक्षण करने में विलम्ब नहीं करते। और भी—"लोकरञ्जनमेवात्र राज्ञां धर्म" (महाभारत शान्ति पर्व २७-११-१४)।

यथा हि गर्भिणी हित्वा स्वं प्रियं
मनसोऽनुगम्।
गर्भस्य हितमादध्यात् तथा
राजाऽप्यसंशयम्॥
वर्तितव्यं कुरुश्रेष्ठ सदा
धर्मानुवर्तिना।
स्वं प्रियं च परित्यज्य
यद्यल्लोकहितं भवेत्॥
(शान्ति पर्व ५६-४४६)

अर्थात् जैसे गर्भवती स्त्री अपने मनोनुकूल प्रिय पति को भी छोड़ गर्भ के हित का ध्यान रखती है, उसी प्रकार राजा भी प्रजा का ध्यान रखे।

प्राचीन भारतीय इतिहास का विस्तृत विवेचन करने के उपरान्त यह स्पष्ट सिद्ध हो सकेगा कि जनता-जनार्दन के हितों से पराङ्मुख तथा लोक सेवा का व्रत अपने कृत्यो द्वारा साक्षात् में असमर्थ कोई भी शासनसत्ता भारतीय धरातल पर टिक न सकी अपितु सर्वथा अवांछनीय एवं असह्य ही थी। शास्त्रों ने तो ऐसी अहितकारी सत्ता का निराकरण करने का आदेश ही दिया है। सर्वप्रथम ऐसी नृशंसकारी सत्ता को चेतावनी देनी ही उचित थी—

"अधर्मशीलो नृपतिर्यदा तं भीषयेज्जन" (शुक्र० ४-१३)

तदुपरान्त यदि वह स्वेच्छाचारिता का प्रदर्शन करे तो वह राज्याधिकारी नहीं रह सकता। प्रजा की धरोहर माने गये राज्यपद से उसे च्युत होना पड़ता था—वह राजपद का अनधिकारी घोषित किया जाता था।

गुणनीतिबलद्वेषी
कुलभूतोऽप्यधार्मिक।
नृपो यदि भवेत् तं तु
त्यजेत राष्ट्र विनाशकम्॥
तत्पदे तस्य कुलजं
गुणयुक्तं पुरोहितं।
प्रकृत्यनुमतं कृत्वा
स्थापयेत् राज्यगुप्तये।
(शुक्र० २. २७४-५)

अर्थात् सत्कुल में उत्पन्न होकर यदि राजा गुण, नीति, सेना का द्वेषी एवं अधर्मशील हो तो ऐसे राष्ट्रघातक का नाश करना उचित है। उसके स्थान पर उसके वंशज अथवा योग्य पुरोहित को "प्रजा की अनुमति" से राज्य सुरक्षा हेतु अभिषिक्त कर सिंहासनासीन कर देना चाहिये।)

यहीं पर प्रकृति अनुमति तथा प्रजा-रोष को विशेष स्थान दिया गया है—

"प्रकृतिकोपो हि सर्वकोपेभ्य. गरीयान्"
(कौटिल्य अर्थ शास्त्र)

कौटिल्यसम राज्यतन्त्र प्रिय शासन वेत्ता को भी स्वेच्छाचारिता का शासन पसन्द न था— वह तो राजा के स्वैराचार का घोर विरोधी एवं शत्रु था।

भारतीय प्रजा ने राजा को जनता के नियमो से परे कभी स्वीकार न किया। अपराधी राजा प्रजा की अपेक्षा कई सौ गुणा दण्डनीय माना गया है—

"कार्षापणं भवेद् दण्ड्यः यत्रान्यो प्रकृतिजन.।"
तत्र राजा भवेत् दण्ड्य. सहस्र-मिति धारणा॥

अर्थात् सर्वसाधारण जनता को जिस अपराध के परिणामस्वरूप एक कार्षापण (सिक्का विशेष) का दण्ड भुगतना पड़े, उसके लिए राजा को हजार कार्षापण।"

परिणामत इंगलैंड एवं यूरोप के राजाओं की तरह भारत के राजाओं को यह कहने का अवसर न मिला कि मैं ही राज्य हूं या 'जो मेरे मत से असहमत हैं उनको या तो बल पूर्वक स्वमतावलम्बी बना कर रहूंगा या देश से बहिष्कृत करके छोड़ूंगा।

भारतीयों को पाश्चात्यवासियों की तरह अत्याचारी नृशंस सत्ताधीशों के भय से त्रस्त हो अपना देश छोड़ कर हिजरत करने का प्रसंग उपलब्ध न हुआ, उन्होंने 'मे फ्लावर' नामक जहाज में सवार हो सदा के लिए अपनी जन्मभूमि से विदा न ली। इसी में भारतीय राज्यतन्त्र की महानता एवं अलौकिकता निहित है।

संक्षेप में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि स्वेच्छाचारिता के भाव से प्रेरित हो, जनता के ऊपर अंकुश आदि एवं उनके हितों एवं अधिकारों पर कुठाराघात करने की विधि को भारतीय राज्य-व्यवस्था में किंचितमात्र भी स्थान प्राप्त न था। जनता ही सर्वेसर्वा थी। वह थी राज्यशक्ति का आदि स्रोत। लोकमत की अवहेलना करने वाला राजा क्षण भर भी टिक नहीं सकता था। राज्य प्रजा के लिए था न कि प्रजा राज्य के लिये। वह प्रजातन्त्रात्मक राज्य ही था। राजा केवल प्रजा सेवक था— प्रजा की थाती का संरक्षक मात्र। किसी भी प्रकार की आपत्ति का उत्तरदायी, दुर्भिक्ष हीं नहीं अकाल एवं मृत्यु का उत्तरदायित्व भी उसके ऊपर था—

"राजा कालस्य कारणम्।"
राजदोषै विपद्यन्ते प्रजाह्यविधिपालिताः
असद्वृत्ते हि नृपतौ अकाले म्रियते जनः।
(रामायण उत्तर० ८६. १६)

इन सब सिद्धांतों के पीछे प्रजाकल्याण एवं देशवासियों के परम वैभव की उत्कृष्ट भावना निहित थी। परिणामतः ऐसे ही सुचारु रूप से संचालित राज्य-व्यवस्था की विद्यमानता में ही एक पूर्ण विकसित सुखी जीवन की कल्पना एवं आशा की जा सकती है। वैदिक काल के दुष्ट राजा वेणु को प्रजा के कोप का भागी होना पड़ा— वह जनता के रोष से बच न सका। ऐसे दुष्ट नरकगामी राजाओं को राक्षस पद से विभूषित किया गया है।

"विपरीतस्तु रक्षांशः सर्वे नरकभाजनाः।"
(शुक्र: १. ८७)

पापी दशानन, रावण तथा हिरण्यकश्यप का नाम तक रखने में कोई गौरवान्वित नहीं होता, अपितु उक्त नामों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। इसके विपरीत राम का राज्य युगों युगों के लिए आदर्श बन गया। वह प्रत्येक समय में स्तुत्य वन्द्य एवं स्पृहणीय बन गया है। शोषक वृत्तियों से शून्य वह अलौकिक शासन था। उसकी विद्यमानता में तो सोने की लंका भी तुच्छ-सी थी।

"अपि स्वर्णमयी लंका न लक्ष्मण रोचते" आदर्श के समक्ष, त्रिलोक के भोगोपभोग भी राम के लिए मृत्तिका सदृश थे, हेय थे सर्वथा अग्राह्य थे। उनका राज्य तो "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा।"...की वैदिक परिपाटी के अनुकूल था और उसके पीछे निहित थी, अपरिमित त्याग एवं सेवा की दिव्य सात्त्विक भावना!

———

मध्य एशिया में भारत की सांस्कृतिक चौकी—खोतान

★ श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

पूर्वी तुर्किस्तान एक विशाल मरुभूमि है। इसके गर्भ में प्राचीन इतिहास की विशाल सामग्री छिपी है, यह बात पचास वर्ष पहले कोई मानने को तैयार न था। भारतीय पुराणों में विद्यमान उल्लेख को भाव का ऐतिहासिक उस समय तक मानने को तैयार नहीं, जब तक कोई शिलालेख, चैत्य स्मारक, मुद्रा, ताम्रपत्र आदि उसका समर्थन न करें। इसलिए पूर्वी तुर्किस्तान की खुदाई अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इसने मध्य एशिया में स्थापित भारतीय सांस्कृतिक उपनिवेशों पर विशेषतः ईस्वी सन् के प्रारम्भ में स्थापित भारतीय उपनिवेशों पर, बहुत प्रकाश डाला है। मध्य एशिया के अन्दर भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विकास में खोतान ने भारत की सांस्कृतिक चौकी का काम किया है।

पूर्वी तुर्किस्तान के अन्दर विभिन्न स्थानों पर हुई खुदाई और चीनी लेख इस बात का समर्थन करते हैं कि इन छोटे छोटे राज्यों ने भारतीय संस्कृति को न केवल अपनाया ही नहीं था, बल्कि उसको आत्मसात कर लिया था, उसको अपना बना लिया था और मान लिया था। एक हजार साल तक इस प्रदेश में भारतीय संस्कृति और सभ्यता का राज्य रहा। इसका राज धर्म बौद्ध धर्म था। इस प्रदेश की जनता की भाषा, लिपि, साहित्य, कला, संस्कृति के सारे जाने वाले अन्य अंग-प्रत्यंग अधिकतर भारत से लिए गये थे। इस प्रदेश के मध्य में तारिम मरु प्रदेश है, जो इस प्रदेश को उत्तर और दक्षिण इन दो भागों में बांटता है। तारिम नदी भारतीय साहित्य में सीता के नाम से कही गई है। तारिम नदी और इसकी शाखायें इस सारे प्रदेश को सींचती हैं, प्राचीन राज्य अब नहीं रहे हैं। वे रेत के नीचे सोये पड़े हैं। पर अब भी उनमें से कुछ राज्य बचे हुए हैं। वे आज भी अतीत की कहानी कह रहे हैं। यथा काशगढ या शैल देश, यारकंद या चोक्कुका और खोतान दक्षिण के मुख्य राज्य थे, और कूचर या कुचा राज्य और करासार या अग्नि देश उत्तरीय प्रदेश के मुख्य राज्य थे। ये सब राज्य कभी बृहत्तर भारत के अंग थे। इनकी प्रधान संस्कृति भारतीय थी। इनमें चीनी संस्कृति का भी कुछ रंग था और इनका भारतीय संस्कृति से मिश्रण हुआ था। इसका मुख्य कारण था। भारत और चीन के बीच होने वाला व्यापार इन देशों के निवासियों के माध्यम से होता था। दूसरा कारण यह था कि अत्यन्त प्राचीनकाल से ही चीन के शासकों ने भारत और चीन के बीच के यातायात के मार्गों की सुरक्षा के लिए अपनी सैनिक चौकियां स्थापित कर रखी थीं। पूर्वी तुर्किस्तान वह प्रदेश था जहां चीन और भारत के व्यापारिक माल का ही आदान-प्रदान केवल नहीं होता था, बल्कि दोनों की संस्कृतियों का भी संगम होता था। यही कारण है कि कुछ ऐतिहासिकों ने ग्रीक भूगोल वेत्ताओं द्वारा दिए गए इस प्रदेश के नाम को व्यवहृत करना आरम्भ कर दिया है। ग्रीक भूगोल वेत्ताओं ने इस प्रदेश का नाम 'सेर इण्डिया' रखा था।

खोतान का भाग

इस प्रदेश के प्राचीन राज्यों में खोतान ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रसार में सम्भवतः बहुत अधिक भाग लिया होगा। भारत के मिशनरियों, भिक्षुओं, प्रचारकों, उपदेशकों तथा उपनिवेश बसाने वालों के लिए इसने अगली चौकी का काम किया होगा। इसका प्रधान कारण सम्भवतः इसका काश्मीर से सटा होना है। काश्मीर से खोतान तक का मार्ग कठिन अवश्य है, मगर लम्बा नहीं है। यह मार्ग सिन्धु घाटी के साथ साथ दोरस तक गया है, और फिर वहां से तास्क-कुरगन तक का मार्ग वाखन में हो कर पामीर घाटी के साथ साथ पहाड़ पर हो कर गया है। तास्क-कुरगन से खोतान तक का मार्ग पश्चिम दिशा की ओर हो कर कोकोर काव पहाड़ों पर से हो कर गया है। काश्मीर से खोतान जाने का यही मार्ग था। चौथी सदी में चीन से भारत आने वाले चीनी यात्री फाहियान ने खोतान से काश्मीर आने का यही मार्ग पकड़ा था। बाद में भारत आने वाले चीनी यात्रियों और मध्य एशिया जाने वाले भारतीय यात्रियों ने इसी मार्ग का अनुसरण किया था।

प्राचीन नाम

संस्कृत की प्राचीन भूगोल विद्या की पुस्तकों में खोतान का नाम 'गोदना' या 'गोद्रावीप' लिखा मिलता है। भारतीय लेखक उत्तर के दो देशों 'गोदाना' और 'अपर गोदाना' इन दो नामों से परिचित थे। ईसा की पहली और दूसरी सदी में चीनी लेखक इसी नाम का व्यवहार करते थे। चीनी इसका नाम 'यू तीन' लिखते थे। परन्तु ईसा की पहली सदी में और उससे पहले इसका उच्चारण 'यू दान' किया जाता था। घिसते-घिसते इसका नाम खोतान हो गया। ७वीं सदी में ह्यून सांग ने अपनी संस्कृत ज्ञान की कुछ अपने मित्रों की कोशिश की थी और इसका नाम 'कोस्तान' लिखा और इसको पृथ्वी का स्तन बताया है। तिब्बती इसको 'गोस्थान' या 'गौओं का स्थान' कहते थे। इसके आस-पास के पर्वतों का नाम 'गो शीर्ष' पर्वत था। खोतान की राजधानी में बौद्धों का सबसे बड़ा विहार था। इसका नाम 'गोमती विहार' था। इससे स्पष्ट है कि इस प्रदेश का 'गोस्थान' गौओं का स्थान नाम प्राचीनकाल में उपनिवेश बसाने वाले भारतीयों ने रखा होगा।

ईसा से पूर्व

पर इतिहास इस बात का पता नहीं देता कि सर्वप्रथम इस प्रदेश को बसाने भारतीय कब गए। अशोक के धर्म प्रचारक और दूत सम्भवतः खोतान गये होंगे। पर इसका पक्का प्रमाण हमारे पास नहीं है। पर यह असन्दिग्ध है कि ईस्वी सन् प्रारम्भ होने से पहले ही वहां भारतीयों की बस्ती बस चुकी थी। एक स्थानीय किंवदन्ती है और इसका ह्यून सांग ने भी अपने यात्रा-वृत्तांत में उल्लेख किया है कि जब अशोक ने अपने पुत्र कुणाल को अन्धा करने वाले तक्षशिला के अफसरों को अपने राज्य से निकाल दिया, तो वे निर्वासित लोग वहां से चल कर खोतान पहुंचे और वे वहीं बस गये। कालान्तर में उनमें से एक राजा बना दिया गया। इसके विपरीत तिब्बती अनुश्रुति है कि जब कुणाल को तक्षशिला में राज्य आज्ञा से अन्धा किया गया तो सम्राट की आज्ञा से असन्तुष्ट हुए अफसर और अधिकारी कुणाल को लेकर तक्षशिला से खोतान चले गये। उन्होंने कुणाल को राजसिंहासन पर बिठाया और कई पीढ़ी तक इस राजपुत्र के वंशज खोतान पर राज्य करते रहे। इस बात की ऐतिहासिक सचाई की साक्षी अन्यत्र नहीं मिलती। पर बाद की घटनाओं से इस बात की पुष्टि होती है कि मौर्यकाल के अन्दर ही वायव्य भारत और खोतान के बीच सम्बन्ध स्थापित हो गया था। पुरातत्व की खोजें भी इस बात की पुष्टि करती हैं कि ईस्वी सन् आरम्भ होने से पहले न केवल खोतान में, बल्कि चीन की सीमा तक के राज्यों में भी भारतियों की बस्तियां बस चुकी थीं।

खरोष्ठी लिपि

इस स्थान में जो लेख मिले हैं, वे सब खरोष्ठी लिपि में हैं जो कि अशोक के समय से लेकर कुशाण काल तक वायव्य भारत की लिपि थी। इन लेखों की भाषा का वायव्य भारत की बोली से निकट का घनिष्ट सम्बन्ध है। बहुत से राजाओं, अधिकारियों व दरबारियों के नाम भारतीय हैं। इन सब बातों से यही परिणाम निकलता है कि कम से कम एक ईस्वी पूर्व खोतान और उसके आस पास के राज्यों में भारतीयों की बस्तियां भली भांति बस चुकी थी।

शकों की विजय के बाद

शकों ने भारत को विजय किया। इससे भारत और पूर्वीय तुर्किस्तान के बीच और अधिक घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हो गया। खोतान के निवासियों का शकों से घनिष्ट सम्बन्ध था। इस संबंध के कारण अनेक विद्वानों ने यह मान लिया है कि खोतान के लोग शकों की बोली बोलते थे, पर वस्तुत बात ऐसी नहीं है। खोतान के निवासियों की भाषा शाकिश नहीं थी, बल्कि पूर्वीय ईरानियन थी।

भारत को विजय करने से पहले ही कुशाण लोग अपना एक बड़ा साम्राज्य स्थापित कर चुके थे। कुशाणों के साम्राज्य में बैक्ट्रिया ही नहीं अपितु ट्रांसोक्सियाना का पर्याप्त भाग सम्मिलित था। कुशाण जाति की विभिन्न शाखायें पूर्वीय तुर्किस्तान के विभिन्न भागों में बसी हुई थीं। यह बहुत सम्भव है कि काश्मीर और वायव्य भारत की विजय से जब कुशाणों की राजनीतिक शक्ति शिखर पर पहुंच गई थी। तब उन्होंने खोतान प्रदेश पर भी अपना आधिपत्य स्थापित किया हो? क्योंकि प्राचीन चीनी ऐतिहासिक ग्रन्थ इस बात की साक्षी देते हैं कि कनिष्क के राज्यकाल में खोतान पर कुशाणों का राज्य था। इस प्रदेश के लिए कुशाणों और चीनियों के बीच वर्षों तक लड़ाई होती रही और इस लम्बी लड़ाई में चीनियों को पराजय हुई।

विद्या का केन्द्र

चीनियों की पराजय और कुशाणों की विजय के फलस्वरूप भारतीय उपनिवेशों को और अधिक बल मिला और उनका और अधिक विस्तार हुआ। बौद्ध धर्म के प्रचारक बड़ी संख्या में पूर्वी तुर्किस्तान और चीन पहुंचे। उनके पीछे-पीछे व्यापारी भी पहुंचे। बौद्ध धर्म का यह अभ्युदय काल था और आठवीं सदी तक अबाधित रूप से इस धर्म का विस्तार और अभ्युदय होता रहा।

इस सारे काल में खोतान भारतीय ज्ञान विज्ञान का केन्द्र बना रहा। राजधानी और आस पास के पर्वतों पर बौद्ध विहार स्थापित किए गए। यहां भारतीय बौद्ध विद्वानों ने अपना आसन जमाया और वे मध्य एशिया तथा चीन के अन्य भागों के बौद्ध भिक्षुओं के केन्द्र हो गये। तीसरी सदी से ही चीनी विद्वान भारत न आकर खोतान में बसे भारतीय विद्वानों से भारत के ज्ञान विज्ञान का

[शेष पृष्ठ २० पर]

कहानी—

गढ़मंडल की अमर कहानी

★ श्री गिरीशचन्द्र शाह

वीर भारत का रक्त रंजित इतिहास उसकी वीराङ्गनाओं की यह याद—कभी तो सताती है, रह रह कर सताने लगती है। जरा चित्तौड़ के पद्मनी कुण्ड पर तो आइये। अतीत काल के लोमहर्षक रुदन से व्याप्त इस स्थान पर भारत को एक वीर नारी की बिसराई हुई याद रुला देती है। झांसी के किले में जाइये। वहां भी एक वीर शिरोमणि आर्य ललना की याद 'नयनन नीर' बहा ही देती है। जी घबरा उठता है। प्रतिहिंसा की एक आग सी हृदय में सुलगने लगती है।

सचमुच ये स्मारक हमारी अमर कहानियां हैं। ये अमर कहानियां सदा हमको रुलाती रहेंगी और उठाती रहेंगी। आओ, एक ऐसी ही वीराङ्गना की अमर कहानी आज आपको फिर से सुनायें।

"बुन्देले हरबोलों से
हमने सुनी कहानी है।"

सोलहवीं शताब्दि की बात है। भारत के इस भारत पर यवन सम्राट अकबर का बोल बाला था। अनार्य मुगलों के आधिपत्य के दिन थे। बलिदानों का समय था। "जौहर" की ऋतु थी। मध्यभारत के महोबावासी एक चन्देले राजपूत सामन्त की कन्या कुंआरी दुर्गावती के अद्वितीय सौन्दर्य की चर्चा देश में चारों ओर फैल रही थी। महोबा पार गढ़मंडल के नृपति दलपत शाह के कानों में भी इस अप्सरा के अपूर्व लावण्य की भनक पहुंची। बस फिर क्या था। दलपत शाह ने भी ठान ली कि वे इसी 'मेनका-तिलोत्तमा' को अपनी धर्मपत्नी बनायेंगे। और अन्त में उन्होंने 'रुक्मणी हरण' प्रथा द्वारा अपना हठ पूरा करके ही छोड़ा। राजपूती आन का प्रश्न था भला बात कैसे टल सकती थी।

कुंवरानी दुर्गावती गढ़मंडल की रानी, "हजार बरस जियो महारानी" कहलाने वाली, प्यारी रानी बन गई। हां उसी गढ़मंडल की, जिसे यदुराय ने चौथी शताब्दि में बसाया था, और जो महोबा से २०० मील दूर इलाहाबाद के दक्षिण-पश्चिम ओर से पड़ता था। सारा आर्यावर्त तो अकबर के यवनों ने धूल धूसरित कर डाला था, पर गढ़मंडल अभी तक एक शक्तिशाली, स्वतन्त्र, सनातन राज्य के रूप में विराजमान था। सर्वसुख सम्पन्न था, सुखी था। नव दम्पति के उल्लास से विभोर था।

पर दैव को रानी की ये शुभ घड़ियां — रंगरेलियां अधिक समय तक नहीं भा सकीं। रानी के मन में कुछ और था, विधि के मन में कुछ और ही निकला। 'सप्तपदी' के चार ही वर्ष उपरान्त क्रूर विधाता ने उसका सिंदूर माथे से पोंछ दिया और हाथों की मेंहदी धो डाली। दलपत शाह की अकाल मृत्यु हो गई, रानी दुर्गावती विधवा हो गई और अपने इकलौते चतुर्थ वर्षीय पुत्र वीरनारायण शाह को चंवर छत्र से सुसज्जित करके स्वयं सब राज काज चलाने लगी।

यवन सम्राट अकबर से यह न देखा गया कि छोटा सा गढ़मंडल सुखी और स्वतन्त्र रहे। उसने अपने आला सिपहसालार तथा पूर्वी जिलों के राज्यपाल ख्वाजा अब्दुलमजीद आसफखां को आदेश दिया, "जाओ गढ़मंडल को तहस नहस कर दो, यदि ऐसा न कर सको तो जीते जी लौट कर देहली मत आना।" यह तो कठोर राजाज्ञा थी। 'जो हुक्म, जहां पनाह" कह कर इस सिपहसालार ने एक भारी यवनों की सेना लेकर गढ़मंडल की ओर कूच कर डाला। उनकी सेना में भी भयंकर तोपखाने और हस्तिदल के अतिरिक्त ६०० अश्वारोही और १२००० सैनिक थे। उधर यह समाचार पाते ही गढ़मंडल का प्रधान मन्त्री अधर दौड़ा दौड़ा राजराजेश्वर अकबर के पास दुहाई देते देहली पहुंचा, पर कुछ न बन पाया। हरि इच्छा बलवान थी। महाकूटनीतिज्ञ, अहङ्कारी, कठोर यवन सम्राट के कान में जूं तक नहीं रेंगी।

विशाल मुगल साम्राज्य की बिजली-शासित चतुरंगिनी सेना ने सन् १५६४ के फागुन ऋतु में धन्दे से गढ़मंडल पर युद्ध का काम मचा दिया। सिंगलगढ़ की रण भूमि अस्त्र शस्त्रों की झनकार से गूंज उठी। "हरहर महादेव" और "अल्ला हो अकबर" के नारों से समर भूमि हिल गई। सैनिकों के चीत्कार आहतों के करुण-क्रन्दन तथा आर्तनाद से समस्त युद्ध क्षेत्र कम्पायमान हो गया। रानी का अल्पवयस्क पुत्र वीरनारायण शाह भी केसरिया बाना पहन कर अपनी वीर माता के साथ रुधिर की होली खेलने में व्यस्त हो गया। सारे दिन घमासान भयानक नर संहारकारी विग्रह चलता रहा।

सूर्यदेव के अस्त होते-होते विजय लक्ष्मी ने दुर्गावती के गले में जयमाल डाल दी। मुगल सेना अस्तव्यस्त होकर भाग पड़ी। रानी, अबला वीर पुत्र तथा

रानी दुर्गावती

बचेखुचे सैनिक भी परास्त यवनों का पीछा करते- करते गढ़ और मंडल के बीच एक शिखर के तलहटी तक आ पहुंचे। दुर्गावती के रणोन्माद पर संग्राम पीड़ित सैनिक-गण और अधिक अग्रसर नहीं हो सके। इसलिए इच्छा के विपरीत उस वीर बाला का उन्हें विश्राम की अनुमति देनी पड़ी। वास्तव में तो वह यह चाहती थी कि यवनों की काल रात्रि हो जाय। पर विधि को ऐसा नहीं स्वीकृत था। अत्यन्त युद्ध जर्जरित क्लान्त राजपूत सिपाही तुरन्त ही निद्रा के वशीभूत हो गये। चारों ओर भयंकर सन्नाटा छा गया।

पर परास्त आसफ-खां को चैन कहां था। उसे तो बार-बार सम्राट अकबर का कठोर आदेश याद आ रहा था। रानी के सैनिकों के विश्राम का समाचार पाते ही उसने यवन सेना को एकत्रित करके उसी रात ब्राह्म मुहूर्त में फिर रणभेरी बजा दी। निद्रा के गोद में असहाय राजपूतों पर मुगल बड़े वेग से टूट पड़े। गढ़ मंडल के प्रचंड प्रहार से एक बार फिर मुगल सेना परास्त होकर पीछे को हटने लगी। पर दूसरे ही क्षण मुगलों के भयंकर तोपखाने ने न जाने कहां से अग्नि-वृष्टि आरम्भ कर दी। रानी के पास तो तोपखाना था ही नहीं। युद्ध-भूमि देखते-देखते श्मशान भूमि में परिणत हो गई। [illegible]

प्रहारों से सरासर वीर राजपूत धराशायी होने लगे। कोहराम मच गया।

गजारूढ़ रानी दुर्गावती रणचण्डी सी खड्ग चमकाती हुई समस्त युद्ध-क्षेत्र में विचरने लगी। अपने सैनिकों को प्रोत्साहित करती जाती थी और मुगलों के रुण्डमुण्डों से धरती को पाटती जाती थी। रण-प्रतिरण सैनिक पढ़ते जा रहे थे। पर वह वीर ललना निर्भय बिजली सी शत्रु-मानमर्दन से करती जाती थी। अकस्मात एक सनसनाते हुए तीर के ओछे आहत हो कर कुमार वीर नारायण का निर्जीव शरीर पृथ्वी पर लोट पड़ा। वीर माता तुरन्त घटना-स्थल पर पहुँच गई। अपने एकलौते लड़के की अटल निद्रा देखकर मुस्कराकर बोली, "वीर तुम तो सदा के लिए सो गये हो मेरे लाल। ठहरो, मैं अभी माता की ममता लेकर तुम्हारे पास आऊँगी। जानते हो मेरे लाल यह तो रणभूमि है। यहां पर आंसू बहाना भी मना है।" इतना कह कर वीराङ्गना ने कठोर शब्दों में आदेश दिया कि इसके मृत पुत्र के शव को तुरन्त चौरागढ़ के किले में पहुंचा दिया जाय। आप फिर यवनों का संहार करने में संलग्न हो गई। धन्य हो तुम वीर माता को और इस माई के लाल को।

[शेष पृष्ठ १७ पर]

कांग्रेस सरकार की दो जबर्दस्त भूलें

★ श्री सम्पूर्णानन्द

> हम कांग्रेसी अपने भ्रष्टाचार का ढिंढोरा पीट कर जहां जनता की नैतिकता को गिरा रहे हैं, वहां अपने सैकुलर राज्य की घोषणा करके भी करोड़ों भारतीयों को व्यर्थ में कुपित कर देते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि भारतीय संस्कृति का मूल स्रोत वैदिक साहित्य ही है।

हमने अपनी बढ़ती हुई कठिनाइयों में एक और बीमारी जोड़ ली है। सम्भवतः यह उस प्रकृति के कारण भी है जो कुछ हद तक उन सभी व्यक्तियों और समूहों में पाई जाती है जिनका कुछ भी धार्मिक झुकाव होता है। इसकी अभिव्यक्ति सार्वजनिक रूप से अपना अपराध स्वीकार करने के रूप में होती है। मैं पापी हूं, मैंने अपराध किया है, मैं पतित हूं—ऐसी बातें बार बार दुहराने से इच्छानिधान और असफलता के कारण होनेवाले मानसिक कष्ट से कुछ मुक्ति मिलती है। इस प्रकार के अपराध स्वीकार के बाद नियमन—और बहुधा नहीं ही—आत्म शुद्धि की ओर मनुष्य की प्रवृत्ति होती हो, ऐसी बात नहीं है। हमारे कुछ सबसे बड़े नेताओं ने भी सम-आचरण में फैले हुए अनाचार की बात कहना प्रारम्भ कर दिया है और वह नेता भी जो उतने बड़े नहीं हैं, उनके अनुगामी हो रहे हैं। मेरी समझ में इस प्रकार का सार्वजनिक प्रलाप शुद्ध मूर्खता का प्रदर्शन मात्र है। हमारी आदर्शशून्यता, जन मनोविज्ञान को समझने में हमारी असफलता, उपलब्ध मानव सामग्री का प्रयोग करने से हमारा मुंह मोड़ना—इन सब ने मिलकर हमें उन समस्याओं के सम्मुख ला खड़ा किया है जिनके समझने की असम्भावना दिनों दिन बढ़ती हुई प्रतीत होती है। हम दिनों दिन अपने को परस्पर विरोधी बातों में फंसाते चले जा रहे हैं और इस बात को भूलते जा रहे हैं कि राजाज्ञाएं विचारों का स्थान नहीं ले सकतीं। हमने अपनी असफलता का एक बहाना निकाल रखा है और उसका नाम भ्रष्टाचार दे रखा है। इस प्रकार हमारा यह चिल्लाना हमें उत्तरोत्तर पतन की ओर ले जा रहा है। इसका नतीजा यह होता है कि हर आदमी अपने पड़ोसी की आंख की फूली देखने लगता है और आत्मविश्वास की बहती हुई दीवार और भी तेजी से गिरने लगती है। इससे उन कांग्रेस विरोधियों और विध्वंसकारी समूहों को सहारा मिलता है जो इस समय सजग हो रहे हैं और जो कांग्रेस को आगामी चुनाव में जिसे उनकी पक्षपातवादी प्रवृत्ति ने जनतन्त्रवाद का आदर्श बना रखा है, पराजित करने के लिए मौका ढूंढ रहे हैं।

सेक्युलरवाद का विज्ञापन

यदि हम मान भी लें कि जनसाधारण में भ्रष्टाचार फैला हुआ है, तो इस प्रकार के चिल्लाने से भी वह दूर होगा नहीं। इसको दूर करने का एक ही तरीका है और वह है यही। वह यह है कि हम बात करना बन्द कर दें और अप्रतिम संगठन और पुनः संगठन में जुट जायें तथा कांग्रेस को पुनर्जन्म दें। किन्तु यह सफलतापूर्वक तभी हो सकता है जब हम अपने उन भूले हुए साथियों और इन कांग्रेस कार्यकर्ताओं को एक बार पुनः याद करें और उन्हें जीवित आदर्शों के हथियार तथा समाज की ऐसी तस्वीर से, जिसमें उनके लिए भी स्थान हों, सुसज्जित करें।

कभी कभी मुझे ऐसा लगता है कि अपने देश की व्यवस्था करते समय "सैक्यूलर" (धर्म से असम्बद्ध) शब्द पर बारबार जोर देना हमारी बुद्धिमानी का द्योतक होने के बजाय हमारी कमजोरी का प्रतीक हो उठता है। हम लोगों से किसी ने यह आशा नहीं की थी कि हम धार्मिक राज्य की स्थापना करेंगे। कोई भी हिन्दू महासभाई गम्भीरतापूर्वक यह प्रस्ताव कभी नहीं करता कि हम अपने शासन को वैदिक आधार पर घोषित करें, जैसा कि पाकिस्तान कुरान आधार पर स्थापित माना जाता है। साम्प्रदायिक बाद से मुक्त होने की इच्छा तो समझ में आती है किन्तु इसका यह मतलब नहीं होता कि हम जीवन के प्रति एक अधार्मिक दृष्टिकोण स्थापित कर लें। जो कुछ भी हो उस जीवन धारा से जो हमें चारों ओर से आक्रांत किए हुए हैं, अलग रहने के कोई माने नहीं होते।

संस्कृति का मूल स्रोत वैदिक साहित्य

जब हम अपनी संस्कृति को भारतीय संस्कृति कहते हैं, तब हम ठीक कहते हैं। लेकिन यह भूलना नहीं चाहिये कि यद्यपि हमारी सांस्कृतिक धारा को विभिन्न छोटी-छोटी उपधाराओं ने पुष्ट किया है कि फिर भी इसकी मूल धारा का उद्गम उन लोगों की बौद्धिक और आध्यात्मिक विचार-परम्परा में है, जिनकी संस्कृति का प्रतिनिधित्व वैदिक साहित्य करता है। सर्व साधारण की भाषा में यदि हम कहें तो यह स्थूलतः और प्रभावतः हिन्दू संस्कृति है। इस तथ्य को इन्कार करनेसे और कभी-कभी ऐसा जाहिर कर देनेसे कि हिंदुत्व, हिन्दू धर्म या हिन्दू संस्कृति का नाम लेना पाप है और किसी गन्दी या अछूत या अपमानजनक चीज के छूने के बराबर है, हम करोड़ों देशवासियों को व्यर्थ ही कुपित करते हैं और उनके सहानुभूतिपूर्ण भाव और उनकी सद्भावना से अपने आपको वंचित रखते हैं। महात्माजी इस शक्ति को पहचानते थे, और उससे काम लेना भी जानते थे उन्हें किसी ने सम्प्रदायवादी नहीं कहा यद्यपि उन्होंने अपने सेक्यूलरवादी होने का विज्ञापन कभी नहीं किया। यह हो सकता है कि मैं जरूरत से ज्यादा आलोचनात्मक हो उठा हूं या आवश्यकता से अधिक निराशावादी। किन्तु यह उचित है कि हर आदमी अपनी बुद्धि के अनुसार वस्तुस्थिति को व्यक्त करे और अध्ययन करे। मैं समाजवादी दल से भी बहुत आशा नहीं कर रहा हूं। इसने अपने को कांग्रेस से भी अधिक परस्परविरोधी बातों में डाल रखा है। प्रधानतः यह इस लिए हुआ कि इसने अनुभव किया कि ऐसा करके ही यह आगामी चुनाव में अधिक सफलता प्राप्त कर सकता है, बजाय यह जान इस बात को मानेंगे नहीं। अतएव यदि कांग्रेस का पतन होता गया तो भविष्य में या तो कम्युनिस्ट या फासिस्ट प्रवृत्ति का उदय होगा और देश की दोनों ही दशाओं में क्षति होगी।

विचारवान् मनुष्यों को सजग रहके चेतना चाहिए। हमने अभी सभी कुछ नहीं खोया है। कांग्रेस आज भी देशमें सर्वाधिक सुसंघटित समुदाय है और उसमें अभी उसकी पुरानी गति, उसकी चेतना बची हुई है। अगर कांग्रेस का नेतृवर्ग इस बात को स्पष्ट कर दे कि आज कांग्रेस का लक्ष्य क्या है तो देश के उत्साही और चतन समुदाय को आज भी इसके झंडे के नीचे इकट्ठा किया जा सकता है। मत प्राप्ति का सरल तरीका, गान्धी जी की दोहाई देना छोड़ कर हम गान्धीवाद को अपने जीवन की प्रधान शक्ति बनाना चाहिए, इसे हमें अपने कार्यों का पथप्रदर्शक बनाना चाहिये। हमें यह भूलना नहीं चाहिए कि यदि हमें गान्धीवाद से इस प्रकार काम लेना है तो इसे अन्धविश्वास की सामग्री और रूढ़ सिद्धान्तों के रूपमें न मानना होगा। आज भी परिवर्तनशील दुनिया में किसी ऐसी सत्ता के लिए कोई अवसर नहीं है जो गतिशील और परिवर्तनशील नहीं है।

मैं भी नेता हूं—

[श्री श्रीपाल जैन

बहुत से लोग जानते होंगे कि मैं नेता हूं, लेकिन भाई ये अपनी अपनी किस्मत की बात है। बुरा न मानना, नेता बनने के लिए बड़े बड़े कष्ट सहने पड़ते हैं, जेल के कई इम्तहान पास करने पड़ते हैं और न जाने क्या-क्या। ये जब तुम पढ़ोगे तो जान पाओगे कि नेतागीरी एक बड़ी चीज है, इसकी आज कल के समय में बड़ी कद्र है, बड़ी इज्जत है।

सन् १९४१ के आस-पास की बात है, उस समय मैं एन्ट्रेंस में तीसरी बार बड़ी शान से फेल हो गया। पिता जी मुझ से उकता गये थे। एक दिन उन्होंने स्वयं आकर कहा—'बस अब पढ़ लिए, एन्ट्रेंस की अब छोड़ो आस, खुरपी लेकर खोदो घास।' मैंने कहा 'नहीं पिता जी, मेरा भविष्य बड़ा उज्ज्वल है, मैं कुछ होकर रहूंगा।' पिता जी ने दुआयें दीं—होकर क्या खाक रहोगे, कहीं चपरासीगिरी टटोलोगे। बस, उस दिन पिताजी से खफा हो गई और कुछ होकर रहना है, इसका पूर्ण निश्चय कर लिया।

रात आधी तारों की बारात ले और चांद को दूल्हा बना कर। मैं भी देखता रहा, लेकिन विचारों से मेरा संघर्ष चल रहा था। क्या करूं, क्या नहीं, बस यही जिन्दगी की सबसे बड़ी उलझन थी। पर हां, इतना मैंने निश्चय कर लिया कि कुछ ऐसा कार्य करूंगा, जिससे प्रतिष्ठा, धन सब कुछ प्राप्त हो सके।

सुबह हुआ मैंने अपने एक दोस्त से सलाह ली। उसने कहा—"यार बात मेरी मानो तो खद्दर की ड्रेस पहनना शुरू कर दो, लेक्चरबाजी सीख जाओ, हां दो एक बार जेल की सैर कर आओ, सत्याग्रह कर लो और फिर वाह-वाह है, पांचों उंगलियां घी में हैं। बड़ी कीमती नसीहत दे रहा हूं, तुम मेरे दोस्त हो इसलिए समझे।"

मैंने कहा "यार और कोई तरकीब नहीं है। इनमें तो फौज के साथ लड़ने का डर है। लाल पगड़ी से तो अपने राम डरते हैं और उनका वह मोटा डंडा बस याद आते ही पसीना आ जाता है। फिर जेलों में भूखों भी रहना पड़ेगा, बड़ी मुश्किल होगी यार।"

"तुम तो निरे बुद्धू हो बुद्धू, तुम्हारे मोहल्ले के लोग ठीक ही कहते हैं कि तुम्हारी अक्ल कहीं चरने गयी है। अभी सत्याग्रह चल रहा है, जाओ तुम भी हो आओ। एक बार जेल बुरी लगेगी फिर घर-सी मालूम होगी। और नहीं करोगे क्या? दो ही चीजें आज के जमाने में सस्ती हैं, क्लर्की या मास्टरी। क्लर्की करी तो यार जन्म भर कलम घिसते-घिसते बेहोश हो जाओगे और कहीं मास्टर बने तो लड़के तुम्हारा सिर चाटते-चाटते तुम्हें पागलखाने की सैर जरूर करा देंगे। और समझो अभी तो लीडरी सस्ती है, लुट रही है, आगे इसके भी भाव चढ़ने वाले हैं। अभी तुम्हें मेरी नसीहत बुरी लगे लेकिन एक दिन याद करोगे और दुआयें देते-देते नहीं थकोगे।"

"अच्छा तेरी जैसी मर्जी लेकिन बता भाई करना क्या होगा" मैंने एक ही सांस में कह डाला।

"कुछ बोलने का अभ्यास कर लो, शुरू में किसी कमरे में खड़े हो कर लेक्चर झाड़ने का अभ्यास करो, फिर दोस्तों के सामने। और इस तरह तुम्हारी सब शर्म खुल जायेगी। और हां, दो-चार पेटेन्ट मन्त्र भी रट लो।"

"कौन से मन्त्र" मैंने उत्सुकता से पूछा।

"बस यही अहिंसा परम धर्म है, गांधीजी का अनुसरण करो, अंग्रेजों के जुल्म अब बरदाश्त नहीं हो सकते, हम उन्हें निकाल कर दम लेंगे। स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। कुछ समझे।"

सब समझ गया अच्छा अब मैं नेता ही बनूंगा।"

नेता बनने का भूत मेरे सिर पर सवार हो गया। मैं मन में सोचने लगा अभी शायद कष्ट सहने पड़ें लेकिन भविष्य उज्ज्वल है इसमें तनिक भी संशय नहीं। और ये कमबख्त लाल बंदर कब तक टिके रहेंगे। और अब गांधीजी जो इनके पीछे पड़ गये हैं, निकाल कर ही दम लेंगे। आजादी आते ही मैं भी किसी पद पर सवार हो जाऊंगा। एक सुन्दर बंगला मिलेगा, नई मोटर होगी और न जाने क्या २। इस तरह की न जाने कितनी बातें मैंने भविष्य के बारे रच डालीं।

दूसरे दिन सत्याग्रह करने की ठानी और सत्याग्रह किया। मेरे राम को शीघ्र ही सरकारी मेहमान बनना पड़ा। पहला ही मौका था और साथमें अल्हड़पन था इसलिए पहिली जेल जरा कड़वी मालूम हुई। लाल पगड़ी पर्दीरह २ कर क्रोध आता, लेकिन वह क्रोध कर क्रोध शान्त कर लेता कि भविष्य हमारे हाथ

(शेष पृष्ठ २० पर)

राष्ट्र भाषा में शब्द वृद्धि

★ श्री सूर्यनारायण सक्सेना

हिन्दी सहजतया स्वीकृत होने के साथ ही इस पर भी एक महान् उत्तर दायित्व आता है, वह है उसको सम्पन्न करने का। भाषा की सम्पन्नता ही एक ऐसा गुण है जो उसे विश्व में सम्मान की भाजन बना सकता है। अंग्रेजी की शब्द-सम्पन्नता ही उसके विश्व-भाषा बन जाने का मूल कारण है। यह सत्य है कि अंग्रेज़ों के पीछे 'जहां सूर्य कभी अस्त नहीं होता था' इस प्रकार के साम्राज्य का बल भी था, पर उसके अपने भी कुछ गुण हैं जो उसकी व्यापकता में सहायक हुये हैं।

जिस प्रकार वाणिज्य में छोटे २ हिस्से (शेयर) बेचकर, बैंक से ऋण लेकर तथा अपने श्रम और उद्योग द्वारा तथा अन्य कई प्रकार से पूंजी संचय की जाती है उसी प्रकार भाषा की शब्द-समृद्धि के लिये भी कई उपाय काम में लाये होते हैं। इन उपायों का उल्लेख एक सर्वसाधारण व्यक्ति के नाते कर रहा हूं। मैं किसी भी भाषा का कोई प्रकांड पंडित नहीं जो कोई अधिकार पूर्ण मत दे सकूं। मेरा आशय केवल एक सुझाव मात्र देने का है।

हिन्दी की शैली का प्रश्न आज काफी विवादास्पद है। एक वर्ग कहता है कि संस्कृत हिन्दी की जननी होने के कारण उसका ही पूर्ण आधिपत्य रहना चाहिये। दूसरा कहता है कि हमारी भाषा का स्वरूप ऐसा होना चाहिये जो प्रत्येक किसान, मजदूर और यहां तक कि जंगली बाबा और तांगे वाला भी समझ सके और बोल सके। पर वास्तव में ये दोनों ही विषम विचार हैं। भाषा यदि अपने आदि स्रोत से विमुख हो जाय तो कालांतर में पता नहीं उसका क्या रूप बन जाय। क्योंकि भाषा समाज की संस्कृति और स्वरूप की भी प्रतीक है अतः समाज की शाश्वती के लिए उसका मूल रूप अविच्छिन्न रहना बहुत आवश्यक है। इस कारण हिन्दी की संस्कृत-निष्ठा में मुझे कोई आपत्ति नहीं पर वह निष्ठा परावलम्बन न बन जाय इस बात से सचेत रहना पड़ेगा। मातृभक्ति कितनी भी क्यों न हो पर बड़े हो कर भी उसकी गोद में सवार रहना और जीवन पर्यन्त उसका ही मुखापेक्षी रहना कोई मातृभक्ति नहीं। इसी प्रकार यदि हिन्दी सब कुछ संस्कृत से ही ग्रहण करने की इच्छा रखे और अन्य भाषाओं के चारों ओर फैले विशाल सागर के गर्भ से मंथे भी अमूल्य और अद्भुत रत्न प्राप्त करने की चेष्टा न करे तो वह एक न एक दिन दिवालिया बन कर नष्ट हो जायगी, क्योंकि सदा पैतृक सम्पत्ति से ही निर्वाह [illegible] तक होगा।

अनुचित मनोवृत्ति

दूसरे: बाजारू भाषा की रुच, [illegible], कवायत [illegible] सहज [illegible] को व्यक्त नहीं कर सकती। इस पक्ष के समर्थक वास्तव में भाषा की दृष्टि से नहीं सोचते। वे सोचते हैं, एक आन्दोलनकारी दृष्टि से। वर्तमान युग के आन्दोलनों का प्रभाव सबके मन पर होना स्वाभाविक ही है। एक आन्दोलन तो है हिन्दू-मुस्लिम एकता का, दूसरा है आर्थिक समानता का। पहले का प्रयत्न है कि जिस प्रकार मुसलमानों को राष्ट्रीय जीवन के समस्त क्षेत्रों में हिन्दुओं के बराबर स्थान मिले उसी प्रकार हमारी राष्ट्र भाषा में भी उनकी भाषा उर्दू और फारसी को बराबर का स्थान मिले। दूसरे किसान मज़दूरों के पक्षपाती होने के कारण उनकी भाषा को ही मापदंड मानने का आग्रह करते हैं। परन्तु आन्दोलनकारी मनोवृत्ति से भाषा का निर्माण करना घातक होगा। क्षण भर के लिए इस मनोवृत्ति को एक ओर रखकर विचारिये कि यदि आप किसी समाज अथवा देश, उदाहरणार्थ इंगलैंड के विषय में ही जानना चाहते हैं तो क्या आप वहां के शेक्सपीयर, मिल्टन, टेनीसन और वर्ड्सवर्थ की कृतियों की अपेक्षा अन्य किसी साधन के द्वारा इसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। यहां तक कि यदि आप वहां के जन-साधारण या किसानों और मज़दूरों के विषय में भी जानकारी करना चाहेंगे तो वह भी किसी विद्वान् की लेखनी द्वारा ही। 'जनता को जनता की जबानी' में कोई विश्वास नहीं करता। सुन्दर भावपूर्ण भाषा ही उस देश और काल की सच्ची दिग्दर्शक होती है, नहीं तो अच्छे लेख के सम्पादकों की आवश्यकता ही क्या पड़े।

इस प्रकार यदि संस्कृतनिष्ठ भाषा का ही प्रयोग बढ़ता गया तो भी एक भ्रम है कि वह विद्वानों की ही भाषा बन जायगी और इसके विरुद्ध भी कोई 'प्राकृत' अथवा 'पाली' का विद्रोह खड़ा हो जायगा। अतः दोनों का सामंजस्य का एक मध्यम मार्ग अपनाना पड़ेगा। और यूं तो समान [illegible] किसी भी भाषा-भाषियों में नहीं पाई जाती। क्या अंग्रेजी में लार्ड मैकाले की अत्यन्त निखार और अलंकृत भाषा की कोई तुलना आज के बर्नार्ड शा की सरल सरल भाषा से हो सकती है? यहां तक कि दो पक्षों की भाषा भी एक दूसरे से कुछ न कुछ भिन्न होती है। तात्पर्य यह है कि कुछ व्यावसायिक, शासन विधान अथवा कानून के शब्दों को छोड़ कर प्रत्येक को स्वतन्त्रता हो कि वह चाहे जैसी भाषा लिखे। धीरे २ एक स्थिर और [illegible] और सुन्दर शैली बन जायगी। और एक न भी सही तो 'अनेक में एक' चरितार्थ करने वाली होगी तो हिन्दी ही।

अनुवाद और शब्द निर्माण

अंग्रेजी का जो भी कुछ प्रभाव हमारे सारे जीवन पर है उसके कहने की आवश्यकता नहीं। इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि वह बहुत गहरा है। बहुतेरे अंग्रेजी शब्दों का हमें अनुवाद करना ही होगा और बहुतेरे जैसे के तैसे पचाने होंगे। अनुवाद करते समय हमें शब्दों या वाक्यों के भाव को देखना चाहिये, न कि उनके पर आंखमूंद उनके जैसे शब्द रखें। हो सकता है कि उनकी सामाजिक स्थिति के अनुसार कोई शब्द या शब्द समूह रचा गया हो, हमारे लिए अनिवार्य नहीं कि हम उसी की नकल करें। अतः अनुवाद के समय बड़ी स्वतन्त्र बुद्धि की आवश्यकता है। उदाहरणार्थ 'आन हिज़ मैजेस्टीज़ सर्विस' या 'रायलमेल' है, वह परिपाटी अब हमारे देश में शोभा नहीं देगी। वहां पर तो राजा को इतना अधिक महत्त्व दिया जाता है कि सारे काम उसी को अर्पण करके किए जाते हैं। साथ समुद्र-पार यदि किसी शुभ अवसर पर दो अंग्रेज़ शराब भी पीते हैं तो वह भी राजा के स्वास्थ्य के लिए। इसी प्रकार सारी डाक भी राजा की सेवा में ही जाती आती है और डाक, सेना, वायुसेना और नौ सेना सबके पहले 'रायल' शब्द लगाया जाता है। यह कोई आवश्यक नहीं कि हम भी 'आनहिज़ मैजेस्टीज़ सर्विस' का अनुवाद ज्यों का त्यों 'भारत सरकार की सेवा में' करें। यह आज का शासन स्वयं जनता का सेवक है, उसको 'सेवा में' का कुछ अर्थ नहीं।

(शेष पृष्ठ १८ पर)

सोवियत रूस में—

सभा भवनों तथा नाट्यगृहों का प्रसार

युद्ध से पूर्णतया ध्वस्त कर दिये गये सांस्कृतिक भवनों तथा नाट्य गृहों का पुनर्निर्माण किस वेग के साथ कर रहा है, यह इस लेख में पढ़िये और इनसे देख लें—

सोवियत जनता की दिनों दिन बढ़ती हुई विभिन्न सांस्कृतिक अभिरुचि की पूर्ति के लिए हर साल सार्वजनिक विनोदगृहों के जाल से बिछते जा रहे हैं। इन विनोदगृहों के लिए नित एक से एक भव्य प्रासाद बनते जा रहे हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मिन्स्क, कलखोज, विलिन्सा, ओरेल तथा सोवियत संघ के अनेकों दूसरे नगरों में नयी सुन्दर नाट्यशालाएं बन रही हैं। इस साल बेलोरूस की राजधानी मिन्स्क, कालिनिन और वोलोग्दा में नयी नाट्यशालाएं बनकर तैयार हो जाएंगी। मास्को का वाख्तांगोव थियेटर जिसे १९४१ में फासिस्टों ने बमबारी करके बर्बाद कर दिया था, अब बनकर बिल्कुल तैयार है।

अक्तूबर की महती समाजवादी क्रान्ति की ३३वीं साल गिरह के अवसर पर इस्तोनिया की राजधानी, तालिन के श्रमिकों को एक विशाल हाल अनुपम उपहार के रूप में दिया जायगा जिसमें नाट्यप्रदर्शन करने के लिए एक रंगमंच होगा और १००० व्यक्ति आसानी से बैठ सकेंगे। "इस्तोनिया" के थियेटर के लिए जो एक दूसरा भव्य भवन बन रहा है, उसमें ७०० व्यक्तियों के बैठने के लिए एक शानदार संगीतालय रहेगा। इसका निर्माण कार्य अगले साल समाप्त हो जायगा।

उजबेक और किरगिज सोवियत समाजवादी जनतन्त्रों का राजधानी ताशकन्द और फ्रूंजे में बिल्कुल अच्छे ढंग से नये नये थियेटर हाल बनाये जाते हैं। विगत महायुद्ध में जर्मन सैनिकों ने स्तालिनग्राद और स्मोलेंस्क की भव्य नाट्यशालाओं को बर्बाद कर दिया था। आज उनका पुनर्निर्माण हो रहा है। उक्रान उद में स्थानीय ओपेरा और नृत्यशाला के लिए एक नयी खूबसूरत इमारत बन रही है।

सिनेमा सोवियत संघ की जनकला का एक प्रमुख अङ्ग है। पंचवर्षीय स्तालिन योजना काल में सोवियत संघ में सिनेमाघरों के जैसे जाल से बिछ गये हैं। १९४९ के जनवरी महीने से नवम्बर महीने तक १०,००० से ऊपर नये सिनेमा-घर बनाये गए हैं। और १९५० की सरकारी योजना के अनुसार इनकी संख्या ३६००० होनी है। मास्को, लेनिनग्राद, मिन्स्क, विलनियस, एरेवान, ताशकन्द, स्मोलेंस्क तथा दूसरे अन्यान्य शहरों में, दोनेत्सकोलगेसिन की औद्योगिक बस्ती में, यूराल और साइबेरिया में तथा बहुत से जनपदों और ग्रामों में बहुत ही व्यापक पैमाने पर नये सिनेमाघर बनाये जा रहे हैं।

सोवियतसंघ में क्लब घरों और संस्कृति भवनों ने जिनकी संख्या अब मित है, सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त की है। विगत महायुद्ध से पूर्व उनकी संख्या कई हजार थी, जिनमें १५०० को जर्मन सैनिक ने बर्बाद कर दिया था।

१९४५ से १९४९ तक यानी केवल चार वर्षों के अन्दर ट्रेड यूनियनों ने लगभग ३००० क्लबघरों को फिर से या तो बनाया अथवा आवश्यकतानुसार उनकी मरम्मत की गई। आज सोवियत ट्रेड यूनियन ८००० क्लबघरों और संस्कृति भवन का संचालन करते हैं। इनके सिवाय ७२००० से ऊपर "रेडकार्नर" औद्योगिक कारखानों, दफ्तरों और दूसरी संस्थाओं में बने हुये हैं, जिनका उद्देश्य सोवियत नागरिकों की विविध सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।

पिछले वर्ष स्तालिनग्राद में ट्रैक्टर प्लांट के एक अत्यन्त सुन्दर शानदार और सब तरह से सुसज्जित संस्कृति भवन का उद्घाटन हुआ। इसके बनाने का काम युद्ध से पूर्व ही यानी १९४० के वसन्तकाल में शुरू हुआ था, लड़ाई शुरू होने के समय इसकी दीवारें बन चुकी थीं। परन्तु इन्हें फासिस्ट सैनिकों ने बमबारी करके बर्बाद कर दिया। जब बहादुर स्तालिनग्राद ट्रैक्टर प्लांट के श्रमिक अपने प्यारे नगर को वापस आए तो उन्होंने कारखाने के साथ-साथ अपने संस्कृति भवन का भी पुनर्निर्माण किया। आज वोल्गा के तट पर संस्कृति भवन की शानदार इमारत खड़ी है, जो हजारों लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती है। सुसंस्कृत विश्राम और मनोविनोद के लिए संस्कृति भवन में हर प्रकार की सुविधा मौजूद है। इस सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि प्लांट की शौकिया कलामंडलों को ३० से ऊपर कमरे मिले हुए हैं। इसमें एक बहुत ही बड़ी व्यायामशाला, ३०००० पुस्तकों की एक लाइब्रेरी, एक इंजीनियरिंग हाल तथा आराम करने के कमरे हैं।

सोवियतसंघ में ग्राम्य क्लब और वाचनालयों के भी जाल बिछे हैं। लड़ाई के दिनों में जिन क्षेत्रों में हिटलरी सैनिकों ने अस्थायी तौर पर अपना अधिकार जमाया था, वहां उन्होंने हजारों संस्कृति भवन और विनोदगृहों को ढा कर खाक कर डाला। लड़ाई बन्द होते ही सोवियत नागरिकों ने पुनर्निर्माण कार्य शुरू कर दिया। आज सोवियत संघ में १२००० से ऊपर ग्राम्यभवन, सामूहिक कृषिशालाओं के १६००० संस्कृति भवन और जनपद मंडल के २४५२ संस्कृति भवन हैं, तथा २८००० से ऊपर वाचनालय हैं।

हर साल सोवियत संघ के ग्राम और शहर अधिकाधिक सुन्दर बनते जा रहे हैं। पिछले कई वर्षों में जो अनेकों भव्य भवन बनाए गए हैं उनमें संस्कृति भवन, नाट्यशाला और क्लब घर प्रमुख स्थान रखते हैं। १९४०, १९५० के बीच १०६०० क्लबघर और संस्कृति भवन सोवियत संघ में बनाए गए। अगर जर्मन सैनिकों ने सोवियत जनता के शान्तिपूर्ण सृजनात्मक कार्य में विघ्न नहीं डाला होता तो और भी बड़े पैमाने पर संस्कृति भवनों का निर्माण हुआ होता।

सोवियत राज्य सांस्कृतिक विकास के ऊपर हर साल बहुत भारी रकम खर्च कर रहा है। १९५० में सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के कामों पर खर्च करने के लिए १२०७००० लाख रूबल अलग कर दिए गए हैं, अर्थात् पिछले साल से ४७० करोड़ रूबल अधिक।

सोवियत राज्य समाजवादी संस्कृति के और भी अधिक विकास के लिए जो कि सारे संसार में सबसे अधिक प्रगतिशील संस्कृति है, हर प्रकार की सुविधा प्रदान कर रहा है।

— — —

*आनन्द पब्लिसीटी सर्विस, मोरी गेट *

मीरा की काव्य साधना

मीरा, राणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र, चित्तौड़ के राणा भोजराज की अर्द्धांगिनी थी। अप्सरा सी अंग रूपसी को पा भोजराज निहाल हो उठा था। किन्तु भोजराज के प्रेम पूरित हृदय पर एक ज़ोर की ठोकर लगी जिस दिवस मीरा ने राणा के प्रेम से छलकते हुये प्याले को ठुकरा कर, वैभव सम्पन्न राजभवन को त्याग दिया और अपने 'गोपाल' की खोज में वन-वन भटकने और गली-गली का धूल फांकने निकल पड़ी। अपने स्वर्णभवन को असमय भस्मीभूत होते देख राणा तिलमिला उठा। वह अपने आशा के संसार को मिट्टी में मिलते न देख सका और राणा ने मीरा के जीवन से खिलवाड़ करने की ठान ली। उसने हलाहल विष से भरा प्याला मीरा के पास भेजा और कहला दिया—'राणा ने अमृत का प्याला पीने के लिये भेजा है।' मीरा हंस पड़ी प्याले को देखकर। विष के प्याले को 'गोपाल के प्रेमामृत का प्याला' समझ गटागट गले के नीचे उतार गई। संसार ने मीरा के रूप में दूसरे शंकर को विषपान करते देखा। भक्ति की प्रखरता ने विष को अमृत में परिणित कर दिया।

अब तो मीरा के सामने केवल एक ही कामना थी, एक ही ध्येय था और एक ही आकांक्षा थी—

"मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई,
जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई।"

उसी गिरधर गोपाल के लिये उन्होंने—

"तात, मात, भ्रात, बन्धु अपनो नहीं कोई,
सन्तन ढिंग बैठ-बैठ लोक लाज खोई।
छांड़ि दई कुल की कानि कहा करिहै कोई,
चूनरी के किये टूक ओढ़ि लीन्ह लोई॥"

वह घर-घर, गली-गली, नगर-नगर, मन्दिर-मन्दिर, और बीहड़, सुनसान जंगलों और कन्दराओं में अपने प्यारे कृष्ण की खोज में मतवाली सी घूमती रही। दूसरे शब्दों में कृष्ण की वियोग-वेदना ने उन्हें इतना अधिक वेदनाशील बना दिया कि वे मतवाली बन गईं और उनकी सारी वियोग वेदना आनन्द के रूप में परिणित हो उठी। अतः अब उन्हें न खाने की चिन्ता थी, न पहनने और ओढ़ने की। क्योंकि वह तो अपने समस्त सुखों पर लात मार कर और ऐश्वर्य तथा धनधान्य को तृणवत त्याग कर अपने 'गोपाल' की खोज में निकली थीं।

उसी मीरा द्वारा रणछोड़जी के मंदिर में भक्ति से प्रेम विह्वल हो मधुर स्वरों में गाये हुये पीयूष पूरित पदों को समस्त भारतवर्ष में दोहराया जाता था। उस समय भारत के समस्त मन्दिरों और भक्ति गोष्ठियों में उसी की वाणी का स्वर गूंजता था। उसके त्याग और भक्ति का सिक्का दूर-दूर तक कायम था। यही कारण था कि वह जहां जाती वहां उसको देवियों सा स्वागत, सम्मान मिलता था।

उसी मीरा के समान विरह वेदना की मार्मिक अनुभूति और उसका सुन्दरतम व्यंजना और अभिव्यक्ति न तो किसी अन्य कवि-कवियत्री द्वारा बन पड़ी है और न ऐसा होने की आशा है। मीरा के विरह गीत सच्चे विरह के गीत हैं। उन्होंने जो कुछ गाया है हृदय और भावों के साथ गाया है। उनके शब्द-शब्द में उनके हृदय की कसक और भावों की आकुलता हिलोरें मार रहा है। प्रेमी कृष्ण के वियोग में बेसुध मीरा ने जो कुछ लिखा है वह उनकी अंतरात्मा की पुकार और उनके अन्तर्जगत की एक करुण चीत्कार मात्र है। उनका पीड़ा और दर्द से कसकता हुआ हृदय मानो स्वयं ही उनके गीतों में साकार हो उठा है। प्रेम की पीर, विरह की व्यथा और कृष्ण के प्रति भक्ति तो मानों उनकी कविता का प्राण है। मीरा कृष्ण में तन्मय हैं। यहां तक कि वह अपने कृष्ण के सुन्दर रूप को सदैव के लिये अपने नेत्रों में बसा लेना चाहती हैं:—

"बसो मेरे नैनन में नन्दलाल,
मोहिनी मूरत सांवरि सूरत,
नैना बने विशाल।
मोर मुकुट मकराकृत कुण्डल,
अरुण तिलक दिये भाल।
अधर सुधारस मुरली राजति,
उर बैजन्ती माल।"

उनका तन, मन, धन, प्राण सब कुछ प्रेमी कृष्ण पर निछावर है। वह तो अपने गोपाल को सर्वस्व समर्पण किये बैठी हैं। अतः मीरा ने प्रेम और विछोह के क्षितिज पर से ही अपने मिलन का आह्वान किया है और आह्वान करते समय मानो वे स्वयं प्रेम तथा स्वयं सांवलिया वैद्य उसका उपचार करते। "मीरा की प्रभु पीर मिटै जब वैद सांवलिया होय।" फिर भी कृष्ण के वियोग में वह जोगिनी बनी, घर-घर अलख जगाती फिरती हैं। उन्होंने समस्त सांसारिक सुखों को तृणवत त्याग दिया और अब केवल नन्दलाल कृष्ण दर्शन के हेतु ही अलख जगा रही हैं। ... ... मीरा का जीवन ... ... प्राप्त कर चुका होता। मीरा की इस तन्मयता और साधना की कुछ लोग हंसी भी उड़ाना चाहते हैं किन्तु मीरा को जगहंसाई की चिन्ता नहीं है। वह पूर्णतः उन्माद की प्रतिमूर्ति बन गई हैं। मीरा ने अपने इसी विरहोन्माद के संसार में गीतों का सृजन किया है। इसी कारण से तो उनके गीतों में उनका हृदय बोलता है और गीतों की लय में उनकी प्रणय वेदना के स्वर स्फुटित हो उठते हैं।

किन्तु फिर भी उनका कृष्ण से साक्षात्कार नहीं होता, यही तो उनकी वेदना का मूल कारण है। किन्तु उनकी वह वेदना वह वेदना है जिसकी संसार में कोई औषधि ही नहीं। मीरा की पीर संसार के बाहर की पीर थी। वह तो उसी समय दूर हो सकती थी जब से वह मानो एक पल रुककर यही कहना चाहती हैं कि, "घायल की गति घायल जाने कि जिन लाई होय।" और फिर अबाध रूप से अपनी साधना के पथ पर अग्रसर हो जाती हैं।

अतएव हम देखते हैं कि प्रियतम के प्रेम और उसके अभाव ने मीरा को स्वयं प्रेम और वेदनामय बना दिया है।

मीरा का एक-एक पद करुणा रस का छलकता प्याला है जो प्रेमी पाठकों के सतत रस पान करते रहने पर भी उतना ही भरा पूरा बना रहता है और आनन्द देता है। उनके इस ईश्वरी प्रेम के प्यालों को पीने के लिये भक्तों की प्यासी आत्माएं ऐसी उत्सुक तथा व्याकुल होकर दौड़ती हैं जिस प्रकार से कि दिन भर की प्यासी गायें दूर से किसी सुन्दर सरोवर को देखकर दौड़ पड़ती हैं।

—★—

गढ़मण्डल की अमर कहानी

[पृष्ठ १२ का शेष]

पर मौतवाला से विजय भी गई थी। भाग्यचक्र ने पलटा खा लिया था। सुदूर विंध्य पर्वत मालाओं में पिछली रात अति वृष्टि होने के कारण समर भूमि के पीछे वाले नाले में अथाह बाढ़ आ गई। वीरोत्तम दुर्गावती मुगल रंजक दुर्गाविति के भार से पीछे हट कर बचने में असमर्थ हो गई।

अंत में केवल ३०० केसरिया बाना वाले रानी के साथ रह गये। पर उस वीर रमणी ने तो पराजय होना सीखा ही नहीं था। ललकारती गई, लड़ती रही। उसी समय द्रुतगति से एक विषैला मुख रानी के दाहिने नेत्र में प्रवेश कर गया। लाख बल करने पर भी फिर वह तीर निकाला न जा सका। वीर दुर्गावती वैसे ही शत्रु पर भालों का प्रहार करती गई। बीच बीच में अपनी रक्त-रंजित तलवार को ऊंचा उठा कर सिंहनाद करती जाती थी। फिर एक भाले का टुकड़ा वेग से रानी के कंठ का भेद कर गया। महावत ने रानी से कुरुक्षेत्र के पीछे नाला पर ले चलने के लिए बहुतेरे अनुनय विनय किये, पर उस वीर शिरोमणी आर्य पुत्री ने एक न मानी। स्वतन्त्रता के संग्राम में हंसते-हंसते वीर गति को प्राप्त हो जाना ही पुरानी नीति थी। और क्षत्रिय धर्म की भी यह पुकार थी।

अत्याधिक रुधिर घावों से बह जाने के कारण रानी का शरीर शिथिल पड़ने लगा था। कहीं वह शत्रुओं के चुंगल में न आ जाय, इस डर से उस वीरांगना ने झपट कर महावत की तलवार छीन ली और उसे मुट्ठे तक अपने हृदय में भोंका दिया। गढ़मंडल का सूर्य अस्ताचल को चल दिया।

उत्तम रुधिर की धार बह निकली। एक वीर आर्य ललना के गरमागरम रक्त से रणभूमि फागुन ऋतु में लाल हो गई। एक अपूर्व भारत-रमणी रत्न के बिना भारत निर्धन हो गया। यह वीर भूमि एक बार सिहर उठी।

राष्ट्र भाषा में शब्द वृद्धि

[पृष्ठ १२ का शेष]

यह राजा के राज में ही कहना और लिखना उचित है। हम सीधा-सादा 'सरकारी काम से' क्यों न लिखें। 'रायल मेल' की लाल मोटरों पर 'डाक' या 'डाक विभाग' काम दे सकता है।

असंख्य शब्दों का हमें अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करना है, पर अपनी मौलिक और स्वतन्त्र प्रतिभा को भी नहीं खोना होगा। कोई आवश्यकता नहीं कि हम 'इंडस्ट्रियलाइज़ेशन' और 'मिलिटराइज़ेशन' या 'आरमिंग' का अनुवाद उद्योगी करण, सैन्यीकरण या अस्त्रकरण करें हमें उद्योग वृद्धि, सैन्य-वृद्धि शस्त्र या हथियार बन्दी करना चाहिये। 'विज़िटिंग कार्ड' को 'भेंट पत्र' न कह कर 'परिचय-पत्र' कहना अधिक भावपूर्ण है।

अंग्रेजी में फेसिलिटी, एमेनिटी और कम्फर्ट तीन बड़े निकट-अर्थी शब्द हैं। हिन्दी में पहिले के लिए तो सुविधा शब्द उचित है, पर अभाव के कारण दोनों के लिए यही प्रयुक्त होता है। यदि अपने उच्च सिंहासन से उतर कर हम साधारण भाषा को टटोलें तो हमें एक शब्द 'आराम' मिल सकता है। उदाहरणार्थ यात्रियों के आराम (एमेनिटी) या कम्फर्ट के लिए प्रमुक व्यवस्था की गई है।

निरन्तर प्रयोग की आवश्यकता

निस्संदेह अंग्रेजी बड़ी सम्पन्न भाषा है। पर बहुत से शब्दों का एक विशिष्ट अभिप्राय तो निरंतर प्रयोग से ही बना है। 'स्टेशन' का अर्थ जो हम लोग समझते हैं, वह उसके दीर्घकालीन प्रयोग से बन गया है। इसी प्रकार सिगनल का अर्थ भी रेल का सिगनल नहीं, परन्तु प्रायः वैसा समझा जाने लगा है। संभव है हम केवल 'संकेत' को इसी अर्थ में प्रचलित कर दें तो वह भी कुछ दिन के पश्चात् बुरा नहीं लगेगा, जितना आज लगता है। दफ्तरों में कुछ कागजों पर पी० यू० सी० (पेपर अन्डर कंसीडरेशन) लिखा होता है। इस पर एक सज्जन कहने लगे कि "देखिये जी यह अंग्रेजी में कितना अच्छा और उपयुक्त-वाक्यांश है, हिन्दी में क्या लिखेंगे?" जब उनको इसके लिये 'विचाराधीन पत्र' बतलाया तो बहुत हंसे और कहने लगे कि "यह तो बड़ा अटपटा लगता है।" यह एक तो अंग्रेजी की मानसिक गुलामी और दूसरे आदत की बात है। यदि विदेशी भाषा के शब्द अर्थगर्भित बन सकते हैं। तो अपनी भाषा के क्यों नहीं। अतः बहुत से शब्दों का हमें जानकर आज प्रचलित करना होगा जिससे कल वे अपने अर्थ में रूढ़ हो जावें। निरन्तर प्रयोग का एक बड़ा उदाहरण 'बस' शब्द है जिसका जो आज अभिप्राय समझा जाता है उसके लिए कुछ ही वर्ष पूर्व 'बस' नहीं 'ओमनी बस' कहना पड़ता था। कई कम्पों में अभी यह 'आमनी बस सर्विस' कही जाती है।

बोलचाल के शब्दों का स्थान

कई बार देखने में आता है कि बड़े क्लिष्ट शब्द भी इतने भावपूर्ण नहीं होते जितने हमारी बोलचाल के शब्द होते हैं। यूं तो ऐसे शब्दों की यदि खोज की जाय तो अच्छा खासा कोष तैयार हो सकता है, पर यहां तो एक दो उदाहरण ही पर्याप्त होंगे। अधिक शिक्षित लोग तो नहीं बोलते पर गांवों में 'मोटाना' शब्द मोटा होने के लिए प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार 'मुकरना' भी है। गाड़ियों का 'मेल' अंग्रेजी के कनेक्शन से कम भाव पूर्ण या उपयुक्त नहीं है। कांग्रेस अध्यक्ष श्री टंडन के भाषण से 'करापन' की भी 'तरक्की' बोलचाल से लिखित भाषा में हो गई।

दूसरी भाषाओं के शब्द

उर्दू और अंग्रेजी के बहुत सारे शब्द अब हमारे अपने जैसे ही बन चुके हैं इनको और अधिक आत्मसात करने में कोई हानि नहीं। अरमान, साकी, मधुशाला, दिल, दुनिया जैसे अनेक शब्द उर्दू के हैं, जो बच्चन जैसे आधुनिक हिन्दी कवियों ने भी अपना लिए हैं। ऐसे शब्दों का प्रयोग करने में झिझकने की कोई बात नहीं। इसी प्रकार ड्यूटी (काम के अर्थ में) रेल, फिल्म, टिकट रेडियो, कार कम्पनी, लाइन इत्यादि अब अपने हो चुके हैं। मैं समझता हूं कि इनके लिये नये और भारी भरकम शब्द निर्माण करना व्यर्थ है। 'शौक,' 'दिलचस्पी' आदि ऐसे शब्द हैं कि जिन के समान उपयुक्त शब्द हिन्दी में नहीं मिलते। अंग्रेजी का 'इंटरेस्ट' शब्द इनके ही अर्थ में आता है। 'मुफ्त' के लिए नहीं तो 'निःशुल्क' ठीक है। पर सस्ता नहीं। इसी प्रकार 'सस्ता' है।

भाषा का मिताक्षरी होना आवश्यक

मनुष्य स्वभावतः कष्ट से बचता है फिर चाहे वह हाथ पैर से करने का हो अथवा जिह्वा का। जब तक कोई विशेष प्रकरण और संस्कार ही न हों तब तक वह दूसरी भाषा के ही क्यों न हों पर भाव प्रकट करने के लिए कम से कम अक्षर बोलना चाहता है। अंग्रेजी में 'एप्लीकेशन' एक शब्द और हिन्दी में इसके लिए कम से कम दो 'प्रार्थना पत्र' या 'आवेदन पत्र' अवश्य बोलने पड़ते हैं। यदि केवल 'आवेदन' को ही अधिकतर प्रचलित किया जाय तो उचित होगा।

आधी दुनिया

नारी का अधिकार-युद्ध

★ श्री शकुन्तला

आज की नारी दिन प्रति दिन अपने अधिकारों की मांग को बढ़ाती जा रही है और अधिकार भी वह ऐसे ऐसे चाहती है जो उसके अस्तित्व को जड़ से ही उखाड़ फेंके, उसे नष्ट-भ्रष्ट ही करके छोड़े। वह एक अपवाद बनना चाहती है और जो कृत्रिमता का आवरण उसने ओढ़ रखा है उसमें मज़बूती से अपने को जकड़ देना चाहती है। आज की नारी को यह पता नहीं कि अधिकार के उत्तरदायित्व को, उसकी ज़िम्मेदारियों को, निबाहा कैसे जाता है। जो अधिकार उसने पाये हैं क्या मैं पूछ सकती हूं कि उन्हें वह सफलता-पूर्वक चला रही है या उससे किञ्चित मात्र भी लाभ वह उठा सकी है अथवा उठा रही है। उदाहरणार्थ रेडियो को ही लीजिये। रेडियो पर जो महिला प्रोग्राम होता है उसमें कौन बात ऐसी है जो नारी की पथ-प्रदर्शक हो, नारी को उन्नति के मार्ग पर ले जाने वाली हो। या नारी को नव-जागृति का सन्देश देती हो; नारी को आज के कर्तव्य से परिचित करती हो अथवा सच्चे अर्थों में उसे उसके आदर्शों का, उसकी महानता का एवं उसकी त्यागमयी भावनाओं का उसे स्मरण दिलाती हो और उसे समझाती हो कि आज की नारी अपने पथ से भटक कर कहां से कहां जा पहुँची है, अपने महिमामय गौरवान्वित पद से गिर कर ऐसी खाई में जा पहुँची है, जहां से उठ कर अपना मुंह दिखाने की उसे इच्छा ही नहीं होती।

मेरे विचार में वे रमणी जो महिला प्रोग्राम की कार्यकर्त्री हैं स्वयं ही बहुत सब नहीं जानतीं। उन्हें पता ही नहीं है कि नारी क्या है, उसका कर्तव्य क्या है उसका धर्म क्या है, उसका अस्तित्व एवं व्यक्तित्व क्या है। वे स्वयं ही अपनी शक्ति से परिचित नहीं है। वे जानती ही नहीं कि हम विजित हैं अथवा पराजित, अबला हैं या सबला, शक्ति हैं या दुर्बलता। यदि वे किसी एक ओर भी होतीं तो भी सम्भवतः कुछ तो कार्य क्रम चलता। किन्तु अब वे अपनी मूर्खों से, अपनी अनभिज्ञता से एवं अपने को शिक्षिता और सुसंस्कृता कहने के दोष से नारी का उपकार करने की अपेक्षा अपकार ही कर रही हैं। उन्हें केवल कचौड़ी, पकौड़ी, हलवा, खीर से ही अवकाश नहीं है। वे अपना वह कीमती समय इन हानिकारक बातों में नष्ट कर देती हैं। वर्ना रेडियो द्वारा जितना नारी का उपकार हो सकता है, रेडियो द्वारा जितनी शीघ्र लाखों नारियों के कानों में अपनी आवाज पहुंचाई जा सकती है वह अन्य साधनों द्वारा अत्यन्त कठिन है। और फिर दूसरे साधनों को एकत्रित कर वितरण करने में वर्षों का समय चाहिए। रेडियो कुछ ही मिनटों में यह काम कर सकता है।

आज कल रेडियो भी घर घर में मौजूद है। रंगी बाला भी पहले रेडियो लेने की सोचता है। मैं यह भी जानती हूं कि नारी के लिये भोजन या व्यायाम या सिलाई, और भी घर के अन्य कार्य सर्व प्रथम आवश्यक हैं। बिना इनके वह नारी ही नहीं कही जा सकती। किन्तु इसके लिये तो कन्या के माता पिता ही बहुत होते हैं। प्रारम्भ से ही नारी जहां जहां भी जायेगी, पाठशाला में पितृ गृह में, श्वसुर गृह में, और अन्य किसी स्थान में वहां वह वस्तुएं अवश्य ही उसे सिखाई जायेंगी। फिर यह उसका जन्मसिद्ध अधिकार है बिना सिखाये भी वह सीख ही जाती है प्रवीण चाहे न हो। इसके लिये पत्रिकायें भी बहुत सी निकल पड़ी हैं। कोई बहन विशेष तरीके पर पूछे तो ही बता देना पर्याप्त है।

पर सारा समय इसी में नष्ट कर देना इससे बड़ी मूर्खता और क्या हो सकती है। रेडियो अधिकारियों से कुछ भी कहना व्यर्थ है। वे करें तो अति उत्तम है कि वे उसमें उन नारियों को चुनें जो नारी समाज के योग्य हों और नारी को ऊंचा उठाने की सामर्थ्य रखती हों। लेकिन हमें उन्हें कुछ कहने का कोई अधिकार नहीं है। यह काम उन नारियों का नहीं है जो उस क्षेत्र की अधिकारिणी हैं और जिन पर वहां की कुछ ज़िम्मेदारियें हैं। या तो उन्हीं वर्तमान कार्यकर्त्रियों से कहकर यह सब प्रोग्राम बदलने चाहियें, क्योंकि वे भी शिक्षिता हैं और उसीके बल पर उस कार्यक्रम को चलाती हैं। नहीं तो किन्हीं अन्य ऐसी स्त्रियों को खोजना चाहिए जिनके पास डिग्रियों की लम्बी दुम चाहे न हो, एम. ए. बी. ए. का सार्टीफिकेट भले ही न हो किन्तु उन्हें अपनी पुरातन संस्कृति व प्राचीन सभ्यता पर गर्व हो। जो उसे याद कर लज्जा से नत न हो उठती हों अपितु दर्प से सर ऊंचा कर चली हो जायें। तात्पर्य है कि जो वास्तविक शिक्षा से शिक्षित हों, जिन पर पाश्चात्य कुछ असर न हो। पाश्चात्य शिक्षा के रंग में पूर्ण तथा नीचे से ऊपर तक रंगी हुई नारियें भी मेरे विचार में इस सभ्यता से मन ही मन घृणा करती हैं और उनका हृदय उन्हें हर समय एक बोझ से दबा प्रतीत होता है। लेकिन उनकी आत्मा इतनी दुर्बल हो चुकी है कि वे उसे उतार फेंकने में असमर्थ हैं।

लिप पाउडर से लिपिपुती, साड़ी-नग्न वस्त्रों से सुसज्जित रमणी, साफ-सुथरे वस्त्र पहने लाज से ढकी-ढुकी प्राकृतिक सौन्दर्य युक्त, सात्विक गुणों के कारण सरल मुखमुद्रा वाली रमणी के समक्ष एक बार तो कट मरती है, मानों उस पर घड़ों पानी पड़ गया है। ऐसी कोई एक-दो ही स्त्रियें मुझे देखने को मिलीं, जो अब भी उस देव के वरदान जैसी नारी के समक्ष अपना दानवी रूप लिए गर्व से मस्तक ऊंचा किये बैठी रहती हैं। सत्य तो यह है कि इन ही पाश्चात्य सभ्यता की प्रेममयी पुजारिनों ने गुन्डों की संख्या इतनी बढ़ा दी है कि चींटी दल की भांति वे जहां-तहां बिखरे पड़े हैं। अतुल रूप राशि लेकर भी एक साध्वी नारी निश्चिंत और निर्भय हर स्थान पर घूम फिर सकती है और उसे कहीं भी गुन्डागिरी दृष्टि गोचर नहीं होती। कहीं भूला-भटका एक-आध मिल ही जाता है तो उसे जीवन-भर याद भी रखता है कि किसीसे पाला पड़ा था। पर एक बदसूरत और भोंडी नारी भी इस निर्लज्जता के प्रदर्शनों से गुन्डों को मन अशांति का कारण बन जाती है और उसके चारों गुन्डे ही गुन्डे नजर आते हैं। उस पर ताराफ यह कि वह यह नहीं जानती कि मुझे इतने गुन्डे क्यों मिलते हैं। वह दोष उन्हें ही देती है, अपनी ओर नहीं देखती।

कितने शोक की बात है कि जिस हमारी शिक्षा-संस्कृति एवं सभ्यता को आज विदेशी लाखों-करोड़ों रु० खर्च करके, अकथनीय परिश्रम करके भी पाना चाहते हैं, उन्हें ये नारी दूषित और कबूतर के विकास का रोड़ा समझ कर, दूर भगा रही हैं, उसका इतना उपहास कर रही हैं। पहले तो मैं यही नहीं जानती कि प्राचीन सभ्यता या प्राचीन संस्कृति इनके समक्ष किस रूपरेखा में विद्यमान है और किसको ये प्राचीन कहती हैं। पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, अशिक्षा, दहेज नारी को निकम्मी और पैर की जूती समझ कर चलाना ही तो कुरीतियां हैं? पर यह कब हमारी संस्कृति में पर्दी थीं, क्या इतिहास में कहीं इसका ज़िक्र भी है? यह तो अब मुग़ल कालीन शासन से प्रचलित हुई हैं। तो क्या इसी चन्द दिन बीते हुए ज़माने को आप आर्य संस्कृति या प्राचीन सभ्यता कहती हैं। ऐसे लिखने से तो विस्तार भय का डर है, इसलिए मैं इतना ही कहना चाहती हूं कि रेडियो पर महिला प्रोग्राम में न कभी पश्चिमी शिक्षा का विरोध है न लिपिस्टिक पौडर की मनाही है, न दहेज प्रथा को मिटाने का प्रयत्न है, न नारी के गौरव का परिचय है। न नारी को बताया जाता है वह क्या है, कैसी है, कितनी शक्ति-शालिनी है। और नहीं यह आन्दोलन है कि नारी शिक्षा अन्य होनी चाहिये, ऐसी गन्दी और विदेशी शिक्षा से तो अपढ़, गवांर, अशिक्षित नारी भली।

मैं तो प्रोग्राम के बनावटी पन से इतनी उकता गई हूं कि रेडियो खोलना ही बन्द कर दिया है। हां-हूं का हिसाब किताब इतने जोर पर है कि सिद्ध-साधक या गुरु-चेले वाली कहावत चरितार्थ हो जाती है। कितने आश्चर्य की बात है कि एक-दूसरी से रसगुल्लों के विषय में पूछ कर, या बच्चों का मन बहलाने वाली कहानियां सुना सुन कर ही नारी संतुष्ट हो जाती है और आपस में ही प्रशंसा करते नहीं थकतीं। उनके मस्तिष्क में दूसरा कोई विषय आता ही नहीं, जैसे मानों संसार में क्या हो रहा है, इससे उन्हें कोई मतलब नहीं। अरे! यदि तुम्हें दस-बीस मिनट यूं ही नष्ट करने हैं और एक बोझ अपने सिर से उतारना चाहती हो, तो यह प्रोग्राम ही बन्द कर दो। व्यर्थ में एक यह अहसान भी रेडियो स्टेशन का क्यों लेती हो कि हम नारियों को भी समय देते हैं। मैं तो सोचते-सोचते हैरान हो जाती हूं कि कितने क्षेत्र नारी के सम्मुख आज हैं, नारी का कर्तव्य कितना विस्तृत हो गया है।

क्या आपका ध्यान सिनेमा चित्रों की ओर भी नहीं जाता? लोग कहते हैं फिल्मी जगत उन्नति पर है। मैं कहती हूं अवनति की ओर तूफान की तेजी से जा रहा है। अश्लीलता की भी कोई सीमा होती है। इतने गन्दे-गन्दे गाने जो आज बच्चे बच्चे की जबान पर हैं पहिले चित्रों से कभी देखने को मिले थे?

[शेष पृष्ठ २० पर]

मध्य एशिया में भारत की सांस्कृतिक चौकी—खोतान

(पृष्ठ ११ का शेष)

अध्ययन करने लगे। खोतान के मुख्य विहार का नाम गोमति विहार था। चौथी सदी के अन्त में फाहियान आया था। उसने लिखा था कि खोतान में चौदह बड़े-बड़े बौद्ध विहार हैं और इनसे सम्बन्धित और बहुत-से छोटे विहार थे। फाहियान ने बोधि सत्व की यात्रा का जो सुन्दर वर्णन किया है, वह जगन्नाथपुरी की रथ-यात्रा का सहसा स्मरण करा देता है। आज भी भारत के गावों और नगरों में प्रति वर्ष रथ यात्रा का उत्सव होता है। फाहियान ने इस उत्सव का वर्णन करते हुए लिखा है—

"नगर से लगभग तीन-या चार मील दूर चार पहियों का एक मूर्ति-रथ तैयार किया जाता है। वह लगभग ३० फुट ऊंचा होता है। वह देखने में ऐसा मालूम होता है, मानो वह चलता-फिरता बुद्ध-भवन हो। वह स्वयं विताम से सुसज्जित होता है। उसमें सुन्दर लाल स्तम्भ होते हैं। रथ के मध्य में भगवान् बुद्ध की प्रतिमा रखी होती है और उनके पीछे बोधि सत्व और देवगण पार्श्ववर्ती के रूप में होते हैं। ये सब स्वर्ण और चांदी की सुन्दर मूर्तियां होती हैं। जब रथ नगर द्वार से सौ कदम पर रह जाता है, तब राजा राज्य की टोपी उतार देता है, नवीन वस्त्र धारण करता है और फूलों और सुगन्धित द्रव्यों को हाथ में लेकर नंगे पांव अपने अनुचरों और दरबारियों के साथ आता है। द्वार के बाहर मूर्ति के मिलने पर राजा साष्टांग दण्डवत करता है, फूल भेंट करता है और धूप-दीप जलाता है। जब रथ शहर के अन्दर प्रवेश करता है, तब रानी उसकी सहेलियां, दरबारियों की पंक्तियां, विभिन्न वर्णों और सब प्रकार के फूलों की वर्षा करती हैं, और सजावट और शृंगार की शोभा चरम सीमा तक पहुंच जाती है। हर एक रथ विभिन्न प्रकार का होता है और हर एक विहार के लिए एक दिन निश्चित है। यह उत्सव शुक्ल पक्ष की चतुर्थी से शुरू होता है और १४ वीं को समाप्त हो जाता है। उत्सव की समाप्ति के साथ राजा और रानी अपने महलों को वापस चले जाते हैं।"

श्रावस्तिवाद

खोतान में बौद्ध धर्म का जो रूप प्रचलित था, वह विशुद्ध रूप से भारतीय था। वह श्रावस्तीवादी बौद्ध धर्म था, जिसका काश्मीर उस समय केन्द्र था। महायान बौद्ध धर्म का उस समय केन्द्र नगरहार था और वह भी खोतान में प्रचलित था। महायान और श्रावस्ती-वाद दोनों धर्मों के लेखों के अवशेष वहां प्राप्त हुए हैं। इस बात के भी प्रमाण मिले हैं कि खोतान के विहारों में रहने वाले भारतीय बौद्ध विद्वान ग्रन्थों की रचना संस्कृत में करते थे। चिकित्सा, नाटक आदि विषयों पर भी संस्कृत में लिखे ग्रन्थों के जीर्ण शीर्ण पृष्ठ वहां से उपलब्ध हुए हैं। खोतान की गुफाओं के अन्दर बनाये गये मन्दिरों में उत्कीर्ण और अंकित चित्र अजन्ता के चित्रों के समान हैं। पर मूर्तिकला भारत—ग्रीक कला के अनुकरण में थी। ह्यू नसांग ने इस विषय में लिखा है:—"लिखने की पद्धति भारत से ली गई है, मगर बनावट में कालक्रम के अनुसार होने वाले परिवर्तनों से अन्तर आ गया है। यहां के निवासी बौद्ध हैं और सौ से ऊपर यहां विहार हैं। उनमें ५००० से अधिक बौद्ध भिक्षु हैं, जिनमें अधिकांश महायान पन्थ के हैं। देश शासक भी बौद्ध है और अपना पूर्व पुरुष वैश्रवण देव को बताता है।"

इससे प्रकट है कि ह्यू नसांग के समय में भी खोतान वृहत्तर भारत का एक सांस्कृतिक अंग था। भारत स्वाधीन हो गया है। उसको अपने पुराने अंगों की पुनः सुध लेनी चाहिये और अपने प्राचीन गौरव के अनुरूप भावी वृहत्तर भारत का पुनः निर्माण करना चाहिये। क्या भारतीय संस्कृति के प्रचारक अब फिर आगे न बढ़ेंगे।

नारी का अधिकार—युद्ध

[पृष्ठ १४ का शेष]

ऐसे-ऐसे लिखे हुए कलाकार जो वास्तव में भारत के लिए शर्म की वस्तु हैं, रंग-मंच पर ऐसे-ऐसे निकम्मे, बेढंगे और गन्दे चित्रों में आ रहे हैं कि देख कर हैरान रह जाना पड़ता है। अभिनेत्रियों को शर्मोहया तो मानों छू ही नहीं गई है। यदि ये लोग ऐसे चित्रों में काम करना छोड़ दें या केवल अभिनेत्रियें ही, तो हम देखें फिर कैसे हमारे नन्हें-नन्हें बच्चों के शानदार भविष्य खोखला बनाते हैं, कैसे वे हमारी भारतीयता को हम से छीनते हैं और कैसे उनका चारित्रिक-पतन कर गली-गली नाच पर अपने स्वार्थ के महलों की भीतें खड़ी करते हैं। कैसे करोड़ों रुपयेकि मालिक बन, आंखें बन्द कर मौज की जिन्दगी बिताते हैं।

अधिकारों की मांग करना तुम्हारे लिए बड़ी लज्जा का विषय है। जब अपने पहले अधिकारों को ही तुम उचित रूप से व्यवहार नहीं कर सकती हो तो नये अधिकारों की भी क्यों मिट्टी पलीत करती हो। धन्य है तुम्हारी शिक्षा एवं तुम्हारा मस्तिष्क जो इस इस प्रकार की जलती हुई अग्नि को देख कर भी तुम आलस्य की नींद सो रही हो और इस भीषण आग की गर्मी ने अभी तक तुम्हें जगाया तो एक ओर अर्थ भी नहीं किया है। तुम भी सोच रही हो हुआ करे जो होना है, हम क्यों अपने को मुसीबत में फंसायें, और क्यों नई-नई स्कीमों को बना कर अपने इस विद्रुता भरे मस्तिष्क को कमजोर करें, पर यह याद रखना उत्तरदायित्व सब से बड़ी वस्तु है, और इसी पर कमाई के साथ न चलने से भीषण रक्तपात तक हो जाया करते हैं। तुम्हें आंखें बन्द करके अधिकारों की मांग नहीं करनी चाहिये, अपितु खूब सोच समझ कर अपने को नाप तोल कर आंखें खोल कर कदम बढ़ाना चाहिये। अधिकार मांगने से नहीं मिला करते वरन् उनकी योग्यता से मिला करते हैं। तुम अपने मिले हुए अधिकारों को सुचारु रूप में चलाते जाओ, जहां पर किसी को इंगित मात्र से भी उन्हें छूने का साहस न हो। तुम्हारे बिना कहे ही आगे का द्वार तुम्हारे लिए खुला हुआ होगा और तुमको अभ्यर्थना पूर्वक उसे सौंपा जायगा।

बाल बन्धु परिषद्

फुटबाल और टेनिस

कुछ खेलों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। किन्तु यदि उनका जन्म दिन वह दिन माना जाये, जब उन्हें नियमित रूप दिए गए, उनके नियम बनाए गए और नियमों के अनुसार बनने लगे, तो इन्हें बहुत आधुनिक कहना चाहिए।

उदाहरण के लिए लीजिए फुटबाल को, जिसका विस्तार सबसे अधिक हुआ है। पहले यह खेल किन्हीं धार्मिक त्यौहारों पर खेला जाता था। बहुत बड़ी संख्या में लोग सम्मिलित होते थे। एक गेंद होती थी और एक गोल, कभी-कभी तो गोल कई मील दूर हुआ करते थे। इस गेंद को शत्रु के गोल में फेंकने के लिए ये लोग एक दूसरे को हत्या छोड़कर जो न करते थे, सो थोड़ा। यद्यपि सरकार ने फुटबाल को बन्द करने के प्रयत्न किए, किन्तु वह जीवित रहा और ज्यों-ज्यों इंग्लैंड अधिक सभ्य समयों में पदार्पण करने लगा, त्यों-त्यों फुटबाल ने भी अपनी बर्बरता छोड़कर सभ्य बनना आरम्भ किया।

स्कूलों के कारण फुटबाल की लोकप्रियता बढ़ती गई, किन्तु इसे खेलने के लिए सबने अपने अलग-अलग नियम बना रखे थे। १८६० और बाद के वर्षों में विभिन्न नियमों को मिलाकर एक व्यापक नियमावली निश्चित करने के प्रयत्न हुए थे। अन्त में आकर दो पृथक विचारों के सिवाहो रह गए, किन्तु वे अपने-अपने सिद्धान्तों में किसी प्रकार के परिवर्तन के लिए तैयार नहीं थे। एक समूह ने १८६३ में "फुटबाल एसोसिएशन" कायम किया। दूसरे ने आठ वर्षों के बाद रग्बी यूनियन की रचना की। फुटबाल एसोसिएशन गेंद को पैरों से बहुत धीरे-धीरे खिसका कर गोल की ओर ले जाने के पक्ष में थे और रग्बी यूनियन के लोग गेंद को हाथों में उठाकर, तेजी से भागकर उसे "शत्रु" के गोल में फेंकना अधिक सुन्दर विधि समझते थे। अन्त में किस समूह की विजय हुई, यह तो आप जानते ही हैं।

लान टेनिस, जिसे फुटबाल जैसी विस्तृत लोकप्रियता प्राप्त है, विशेष लम्बे इतिहास का गर्व नहीं कर सकता। निश्चित और सर्वस्वीकृत नियमों से युक्त खेल के रूप में टेनिस का प्रारम्भ १८७४ से होता है। जहां तक गाल्फ जैसे अत्यन्त प्राचीन खेलों का प्रश्न है वह स्काटलैंड की देन है, इंग्लैंड की नहीं। इंग्लैंड में इस खेल की लोकप्रियता का विस्तार १८८० के बाद प्रारम्भ हुआ था।

दौड़ के विषय में दो शब्द। सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य दौड़ना जानता था। सचमुच मनुष्य के लिए दौड़ने की आदत उतनी ही स्वाभाविक थी, जितना कि सांस लेने की आवश्यकता। किन्तु औपचारिक और निश्चित नियमयुक्त खेल के रूप में दौड़ प्रतियोगिता प्राचीन नहीं है। इसकी आयु केवल सौ वर्ष समझिए। अंग्रेजी लेखक पाप्स के अनुसार सत्रहवीं शताब्दि में ड्यूक आफ रिचमान्ड और सम्राट् चार्ल्स द्वितीय के तत्वावधान में कुछ लोगों ने दौड़-प्रतियोगिता में भाग लिया था। इसके एक वर्ष बाद आक्सफर्ड के एक्जेटर कालेज ने दौड़-प्रतियोगिता की आयोजना की थी।

इस प्रकार आप देखेंगे कि जहां तक खेल कूद के निश्चित नियमों और विधियों का सम्बन्ध है, उनका इतिहास विशेष रूप से प्राचीन नहीं है। नये खेल कूदों और मनोरंजन के नए-नए साधनों का विकास निरन्तर हो रहा है। उदाहरणार्थ बर्फ पर हाकी, डेविस, टेनिस इत्यादि। बास्केट बाल का खेल अटलांटिक को पार करके ब्रिटेन पर किसी भी समय आक्रमण कर सकता है।

छोटे बच्चे

शोभित चन्द्र श्रीवास्तव

छोटे बच्चे नहीं लुभा लेते किसका मन ?

जब भरते हैं वे प्रसन्न होकर किलकारी।
जब करते हैं वे तुतला कर बातें प्यारी॥
सरक सरक कर एक एक पग जब वे चलते,
हो जाता है मुदित दुखित लोगों का भी मन।
छोटे बच्चे नहीं लुभा लेते किसका मन ?

जब हो कर वे धूर - धूसरित घर को आते।
मां को अपने मधुर स्वर से बोल सुनाते॥
जब वे हंसते और विहंसते किलक-किलक कर,
हंसने लगता है प्रसन्न हो घर का कण-कण।
छोटे बच्चे नहीं लुभा लेते किसका मन ?

नन्हें - नन्हें बच्चे जब अठखेली करते।
हो कर गुस्सा यदि वे कभी मचल भी पड़ते॥
मां गद्‌गद् हो उन्हें उठा लेती गोदी में,
क्यों न उठाये वह तो है उसका जीवन-धन।
छोटे बच्चे नहीं लुभा लेते किसका मन ?

चंदा जगर-मगर कर देता नभ का आंगन।
और सूर्य विकसित कर देता कमलों का मन॥
कानों में आनन्द अमृत - मधु भर देते,
सरल हृदय ये बच्चे बन कर के सावन घन।
छोटे बच्चे नहीं लुभा लेते किसका मन ?

★

काली बिल्ली

एक थी बिल्ली—वह बहुत भूखी थी। उसका नाम था रानी पूसी ! वह अपने गांव का प्यारी थी। कुत्ते उससे बहुत जलते थे। एक दिन उसे बहुत भूख लग रही थी। कई दिन से खाना नहीं मिला था। और यह तीन दिन से खाली पड़ा था। सहसा वह रोई म्याऊं-म्याऊं।

पर एकाएक उसका रोना रुका। उसने कुछ दूर पर एक पेड़ पर पक्षी का घोंसला देखा। चल पड़ी वह। पर रास्ते में दो कुत्ते मिले। वे बिल्ली पर झपटे। कुत्तों ने उसे पकड़ लिया। बिल्ली चालाक थी। वह कहने लगी—"महाशय आप दो हैं और मैं एक। आपका पेट मुझ से नहीं भरेगा। इसलिए अमुक पेड़ पर मेरे चार बच्चे रहते हैं और उनसे आपका पेट भर जायगा। मैं उन्हें ले आऊं। कुत्तों ने उसकी बात मान ली और वहीं ठहर गये। बिल्ली पेड़ पर चढ़ गई और चिड़िया के बच्चों को खा गई। और जब पेट भर गया, तब उन्हें आंखें दिखाने लग गई, कुत्ते मन मार कर लौट पड़े। इस प्रकार बिल्ली की जान भी बच गई और पेट भी भर गया।

—बलीन्द्र कलीन्द्र

इन बच्चों को मनोवैज्ञानिक ढंग से शिक्षा दी जाती है।

जरा हंसिये

राधे—अरे मित्र ! अब तो दिन-दहाड़े गले और जेबें कटने लगीं।

मित्र—अरे ! ऐसा गजब कौन करने लगा।

राधे—अरे यार, गली में वह जेमी-चन्द दरजी रहता है न, उसी की दुकान पर यह गजब होने लगा। रोज कमीजें सीते हुए जेब और गले काटता है।

× × ×

बेटा—चल गई ! चल गई ! दिन-दहाड़े चल गई…… !

पिता—अबे, क्या चल गई ? घर में तुम, गोली चली या लकड़ी ?

बेटा—अजी नहीं, वह गंगे की अठन्नी, जो मुझे कूड़े में पाई थी।

—हरनारायणसिंह

× × ×

शिक्षक ने विद्यार्थी से पूछा—क्यों

चित्रलोक

राज या दिलीप?

★ श्री दीनदयाल दिनेश

क्या कला के लिए? इस प्रश्न का मूल्य हमें उस समय मालूम होता है, जब हमसे कोई पूछ बैठता है, कि श्रेष्ठ कौन है? राजकपूर या दिलीपकुमार?

हमारे सामने ही नहीं, भारत के असंख्य सिनेमा-प्रेमियों के आगे यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है—राजकपूर या दिलीप कुमार?

राज और दिलीप दोनों सिनेमा संसार के सर्वश्रेष्ठ तरुण कलाकार माने जाते हैं। दोनों ने ही अपने अपने उत्तम अभिनय के कारण अधिकाधिक लोकप्रियता प्राप्त की है। दोनों कलाकार सिनेमाप्रेमियों द्वारा आदर की दृष्टि से देखे जाते हैं।

कुछ सिनेमा-प्रेमियों का कहना है कि राज को इस लिए लोकप्रियता मिली कि वह सुप्रसिद्ध अभिनेता पृथ्वीराज का सुपुत्र है। हमारा ख्याल है कि राज का "लोकप्रियता" और "पृथ्वीराज का सुपुत्र" दोनों अलग अलग चीजें हैं। राज की कला-साधना और परिश्रम को देख कर हम उसे केवल एक श्रेष्ठ कलाकार ही कहेंगे, पृथ्वीराज का सुपुत्र नहीं।

'राज' की प्रसिद्धि उसके 'दिग्दर्शक-निर्माता' होने से हुई। 'आग' ने उसे प्रतिभाशील दिग्दर्शक बनाया। 'आग' के पहले शायद ही उसे कोई जानता था। 'आग' का निर्माण करके उसने सिनेमा-संसार को दिखा दिया कि यदि निर्माताओं की ओर से तरुण कलाकारों को योग्य मार्गदर्शन मिले तो वे भी सिनेमा-प्रेमियों के आगे सुन्दर, भावपूर्ण, कलात्मक और ध्येयवादी फिल्में पेश कर सकते हैं।

'दिलीप' केवल एक अभिनेता के ही रूप में लोकप्रिय है। वह वर्षों से अभिनय-कला की पूजा करता आ रहा है। अपनी कला साधना का फल वह पा चुका। उसके माथे पर पड़ी हुई बालों की लट, छोटी छोटी तेज आँखें, हर भूमिका में हमें अपनी ओर आकर्षित किए बिना नहीं रहतीं। सौन्दर्य उसमें विशेष न होकर भी वह 'हीरो' है। वह आकर्षक है।

'राज' का व्यक्तित्व आकर्षक है। उसकी भावपूर्ण, नीली, और सागर जैसी गहरी आँखें दर्शकों के हृदय पर चोट करने में कसर नहीं करतीं। उसका माथे पर बाल डालना गज़ब ढाता है। सुन्दरता उसमें अन्य अभिनेताओं से कम नहीं। राज' का स्वर हमें पृथ्वीराज की याद हमेशा दिलाता रहता है।

दिलीप

'दिलीप' का अभिनय हमेशा सहज, सुलभ और भावपूर्ण रहता है। उसके चेहरे की भाव रेखाएं, नैसर्गिक तथा अभिनय में मनोयोग रहता है। 'मिलन' में देखिये दिलीप को; वह कितना सरल मालूम होता है। व्यक्ति का पापमोचन दर्शकों के सामने ला रखने में वह सफल हुआ है। वह अपनी भूमिका में घुल मिल जाता है। इसे कहते हैं समरसता। यही कारण है कि आजकल सिनेमाप्रेमी उसे 'मजनू' कहने लगे हैं। 'शहीद' में देखकर उसे सर्वश्रेष्ठ अभिनेता कहने को हमारा जी चाहता है। 'शबनम' में उसकी (मनोज की) भूमिका अपने ढंग का एक ही है। उसका सुन्दर, भावपूर्ण और कलात्मक अभिनय इन चित्रों में दिखाई देता है। उसे 'अंदाज' में देखें। उस भूमिका में वह एक दम घुल मिल गया है। उसका गंभीर स्वभाव, बिना पानी की मछली की तरह तड़पता रहता है। 'नदिया के पार' में उसने अपनी भूमिका एक सच्चे प्रेमी की तरह निभाई है। उसका हर भाव दर्शक के दिल पर चोट किए बिना नहीं रहता।

'दिलीप' जब हमें अपनी भूमिका में दिखाई देता है, तो ऐसा लगता है जैसे हम उसी के जीवन को देख रहे हैं। उसमें आकर्षण शक्ति तीव्र है। वह हंसता 'कठिन' है। उसमें नैसर्गिकता है। सहजता भी। इसलिए वह अनेक विदेशी कलाकारों से टक्कर ले सकता है।

दिलीप कभी कभी बहुत ही जल्दी बोलता है। अहिन्दी भाषा-भाषी तो समझ ही नहीं पाते कि वह क्या कह गया। किन्तु उसके उस बोलने में मधुरता है, स्वाभाविकता है और कला है।

दिलीप हमें अक्सर एक ही प्रकार की 'भूमिका' में दिखाई देता है। यदि वह अलग अलग प्रकार की 'भूमिका' करना शुरू कर दे तो इसमें संदेह नहीं कि वह और भी लोकप्रिय बन जाय। सुना है वह स्वयं एक फिल्म कम्पनी को जन्म देने जा रहा है।

'जुगनू' 'मेला' और 'आरजू' में हम दिलीप को असफल कहेंगे। इन 'भूमिकाओं' का सारा दोष उनके दिग्दर्शकों को है। क्योंकि ऐसे श्रेष्ठ कलाकार को अपनी कला दर्शकों के सामने रखने का मौका न देकर, उन्होंने उसे अभिनेत्रियों के नृत्यगान की महफिल में ला बैठाया है, या 'मजनू' और 'फरहाद' की नकल करने को मजबूर किया है।

राज

सर्वप्रथम राज ने हमें 'नीलकमल' में दर्शन दिए। चित्र के अधिक लोकप्रिय न होने के कारण राज का अभिनय भी उसके साथ समाप्त हो गया। 'नीलकमल' में वह हमें एक मूर्तिकार के रूप में दिखाई देता है। उसका अभिनय सर्वश्रेष्ठ है। उसका गंभीर स्वभाव स्वाभाविक जान पड़ता है। 'गोपीनाथ' में वह एक दम पागल मालूम देता है। किन्तु अधिक गौर से यदि उस अभिनय को परखा जाय तो हमें उसमें अद्भुत कला और स्वाभाविकता दिखाई देगी। 'अन्दाज' में 'राजन' की भूमिका 'ओवर' जान पड़ती है। कई दर्शकों ने उसे (अन्दाज) में बिलकुल असफल बताया है। और वह भूमिका भी ऐसी ही है। किन्तु 'राज' ने उस भूमिका को जिस भावपूर्ण और लगन के साथ निभाया है, शायद ही कोई दूसरा उसे निभा सकता था। इस भूमिका (राजन की) को देखकर हमे 'The three musketeers' के डार्टा की याद आती है।

'राज' को नवीन तथा तरह तरह की भूमिका (अभिनय) करना बहुत ही पसन्द है, और वह इसमें हर जगह रहा है। वह पागल ('गोपीनाथ' में), विनोदी ('अंदाज' में), चंचल ('सुनहरे-दिन' मे), और गंभीर ('नीलकमल', 'आग' और 'बरसात' मे) भूमिकाएं लेकर हमारे सामने आता है।

दिग्दर्शक भी

राज दिग्दर्शक भी है। उसमे अभिनय-कला के श्रेष्ठ गुणों के साथ साथ दिग्दर्शन के श्रेष्ठ गुणों का भी समावेश है। उसके खुद के दिग्दर्शित चित्रों को देखिये। उनमें, श्रेष्ठ अभिनय की चमक दिखाई देगी। 'आग' और 'बर-

[illegible] के दो कलाकार

देश विदेश का घटना चक्र

कोरिया

राष्ट्र-संघीय सेनाएं मंचूरिया की सीमा के निकटतर होती जा रही हैं। साम्यवादी सेनाएं नष्ट भ्रष्ट हो गई हैं। बताया जाता है कि दक्षिणी कोरिया पर आक्रमण करते समय उत्तरी कोरिया के पास तीन लाख से भी अधिक सेनाएं थीं। किन्तु आज वह लगभग २५००० रह गई है। राष्ट्र संघीय सेनाओं को कहीं भी कड़े प्रतिरोध का सामना करना नहीं पड़ रहा। ऐसा दिखाई देता है कि उत्तर में कड़ा प्रतिरोध करने का सामर्थ्य ही नहीं रहा। अंतिम समाचारों के अनुसार दक्षिण कोरिया की सेनायें मंचूरिया से १८ मील दूर रह गई हैं।

यह स्पष्ट हुआ है कि साम्यवादियों का सफाया करती हुई राष्ट्र-संघीय सेनाएं मंचूरिया की सीमासे २०मील के अन्तर पर [illegible] जावेंगी। उससे आगे दक्षिणी कोरियाई सेनाएं ही बढ़ेंगी और ठेठ मंचूरिया की सीमा तक साम्यवादी प्रतिरोध को समाप्त कर डालेंगी। कोरिया का युद्ध एक सीमित प्रदेश तक ही रहे, इसीलिए यह सावधानी बरती जा रही है।

यह भी प्रकट हो चुका है कि सिगमन री की महत्वाकांक्षाओं को बढ़ने देने के लिए राष्ट्र-संघ तत्पर नहीं है। उसके ही अधिकारी उत्तर में शासन-भार संभाल रहे हैं। वे राष्ट्रसंघ द्वारा उधार लिए हुए हैं। इसके अतिरिक्त उसे यह भी स्पष्ट शब्दों में बता दिया गया है कि वह उत्तरी कोरिया के विषय में सब प्रकार के स्वप्न देखना बन्द कर दे।

राष्ट्र-संघ का महामंत्रित्व

राष्ट्रसंघ के वर्तमान महामंत्री श्री लि्ग्वेली के कार्यकाल की समाप्ति के [illegible] किसे इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर नियुक्त किया जावे यह प्रश्न राष्ट्र-संघ के सम्मुख उपस्थित है। अमेरिका तथा उसके समर्थक चाहते हैं कि श्री ली ही इस स्थान पर रहें। सुरक्षा परिषद में रूस द्वारा इस सम्बन्ध में वीटो का प्रयोग किये जाने के पश्चात अमेरिका इसे जनरल असेम्बली में ला रहा है। रूस श्री ली की पुनर्नियुक्ति का घोर विरोध कर रहा है। इस विषय में कुछ क्षेत्रों से भारतीय प्रतिनिधि का नाम भी लिया जा रहा है।

राष्ट्र-संघ के एक प्रस्ताव के अनुसार इस विषय में किसी एक निश्चय पर पहुँचने के लिए पांच बड़ों ने परस्पर [illegible] की। अमेरिका, इंगलैंड, फ्रांस, रूस व राष्ट्रवादी चीन के प्रतिनिधि [illegible] प्रतिनिधि के स्थान पर मिले [illegible] तक चर्चा की। किन्तु [illegible] पहुँच सके। यह पहिला अवसर है जब कि चीन की साम्यवादी सरकार को मान्यता देने के पश्चात् तथा उसके प्रतिनिधि को राष्ट्र-संघ में पदस्थ करने के प्रत्येक प्रयत्न में असफल होने के पश्चात् रूस ने राष्ट्रवादी चीन के प्रतिनिधि से अधिकृतरूप में वार्त्तालाप किया है।

यदि पांच बड़े भी कोई निर्णय न कर सके तो जनरल असेम्बली में ही यह प्रश्न तय होगा।

बिहार में दुर्भिक्ष

प्राप्त समाचारों से ज्ञात हुआ है कि मुंगेर जिले के खगड़िया क्षेत्र में व्यापक भुखमरी आरम्भ हो गई है। भूख से व्याकुल हो कर ग्रामीण जनता खगड़िया के सरकारी कार्यालयों की ओर खाद्यान्न तथा नौकरी की तलाश में दौड़ रही है। शाहाबाद जिले का क्षेत्र खाद्यान्न की दृष्टि से कभी अभाव ग्रस्त नहीं रहा। फिर भी वहां आज यह स्थिति उत्पन्न हो गई है।

पूर्णिया जिला कांग्रेस कमेटी ने एक प्रस्ताव स्वीकार करके जिले के खाद्य संकट की ओर बिहार तथा केन्द्रीय सरकार का ध्यान आकृष्ट किया है। अत्यधिक वृष्टि के कारण फसल पूर्णतः बरबाद हो गई है और दुर्भिक्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई है।

प्रान्त के खाद्य-मन्त्री श्री अनुग्रह नारायणसिंह ने तो यहां तक कहा है कि अगर 'मैं खाद्य-संकट दूर न कर सका तो त्याग पत्र दे दूंगा।' वे अभी हाल में गया, भागलपुर तथा मुंगेर जिलों का दौरा करके लौटे हैं। आपने कहा कि प्रदेश की खाद्यस्थिति इस समय बड़ी तेजी से बिगड़ रही है। भारत सरकार को स्थिति की सूचना दी जा रही है। यदि हम स्थिति को न संभाल सके तो हमें सरकार को छोड़ कर अलग हो जाना पड़ेगा।

पाकिस्तान-पख्तूनिस्तान

पाकिस्तान के पठान क्षेत्रों में पख्तूनिस्तान आन्दोलन प्रबल होता जा रहा है। इसका दमन करने के लिए पाक सेना को हाल ही में सशस्त्र पठान-दल से एक छोटा सा युद्ध ही करना पड़ा। पाकिस्तान का कथन है कि अफगान सरकार ने पाक-सीमा में प्रवेश किया था। इस बात का एक विरोध पत्र उसने काबुल भेजा है। किन्तु अफगान सरकार ने इस कथन को पूर्णतः असत्य कहा है। जो भी हो यह सत्य है कि पख्तूनिस्तान का आन्दोलन पाकिस्तान के लिये एक समस्या बन गया है। श्री लियाकत अली का हाल ही का सीमांत का दौरा भी इस बात का प्रमाण है कि वह इस बढ़ती हुई समस्या से बेचैन हो उठे हैं।

पख्तूनिस्तान का यह आन्दोलन मुस्लिम लीग तथा लियाकतअली खां को उन्हीं की भाषा में उत्तर है। जिस आत्मनिर्णय के अधिकार का दावा करके लीग ने पाकिस्तान की मांग की थी उसी के आधार पर आज पठान अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान का निर्णय चाहते हैं। अपने इस आन्दोलन में उन्हें अफगान सरकार की सहानुभूति प्राप्त है। इसी प्रश्न को लेकर पाकिस्तान अफगानिस्तान् के सम्बन्ध भी परस्पर बिगड़ते जा रहे हैं।

तिब्बत

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में तिब्बत एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बना हुआ है। संसार की आंखें उसकी ओर लगी हुई हैं। साम्यवादी चीन ने अनेकों बार तिब्बत को "मुक्त" करने की घोषणा की है। तिब्बत के लामा ने अपनी सहायता के लिए अमेरिका आदि से प्रार्थना भी की है। अनेकों बार ऐसे समाचार प्राप्त हुए हैं कि साम्यवादी सेनायें तिब्बत में प्रविष्ट हो गयीं, किन्तु पुनः उनका खण्डन हो गया है। हाल ही में चीन की सरकारी समाचार समिति ने साम्यवादी सेनाओं के तिब्बत में प्रवेश करने का समाचार दिया है किन्तु नई दिल्ली से इसकी अभी तक पुष्टि नहीं हुई।

चीन की साम्यवादी सरकार ने इस विषय में अपनी नीति को स्पष्ट करते हुए घोषित किया है कि वह शान्त मार्गों का अवलम्बन करते हुए ही तिब्बत के प्रश्न को सुलझाना चाहती है। तिब्बती प्रतिनिधि मंडल इस सम्बन्ध में चीनी सरकार से चर्चा करने के लिए चीन जाने की तैयारी में है। भारत स्थित चीनी राजदूत से उनकी बात चीत हो चुकी है।

तिब्बत की भौगोलिक स्थिति ऐसी विचित्र है कि चीनी आक्रमण की स्थिति में अमेरिका चाहे चाहे भी तो भी तिब्बत की उचित रीति से सहायता नहीं कर सकता। इस सम्बन्ध में सबसे अच्छी स्थिति भारत की है। किन्तु भारत इस झगड़े में पड़ेगा क्या अथवा यदि अमेरिका ने इच्छा प्रकट की तो उसे अपनी भूमि में होकर सैन्य सामग्री तिब्बत भेज देगा क्या यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है।

श्री मंडल को धमकी भरा पत्र

श्री जो. ना. मंडल को, जिन्होंने कि हाल ही में पाकिस्तान के केन्द्रीय मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया है, एक गुमनाम-पत्र मिला है जिसमें उन्हें धमकी दी गई है कि यदि वह नई दिल्ली के कांग्रेसी शासकों से मिले और मुस्लिम लीग तथा पाक सरकार के विरुद्ध प्रचार किया तो उन्हें उसका फल कड़ा भुगतना पड़ेगा।

यह पत्र टाइप किया हुआ और "पूर्वी तट की अग्रिम चौकी" से जारी हुआ है। इसमें कहा है—

"श्री जोगेन्द्रनाथ मंडल को आगाह किया जाता है कि यदि उन्होंने नई दिल्ली में कांग्रेसी शासकों से मिल कर पाकिस्तान सरकार के विरुद्ध प्रचार किया या पख्तून प्रचार को उभारने की कोशिश की तो आपके साथ कानूनी कार्रवाई की जावेगी।"

"यदि इस चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया गया तो आपको गुप्तचर होने के नाते हमारी अदालत द्वारा गोली मार दी जायगी।"

"याद रखो जो तुम कहते हो, उसे हम सुनते हैं, जो तुम करते हो उसे हम देखते हैं और स्काटलैंड यार्ड या सबसे बड़ा गुप्त विभाग भी हमारे कार्य में गड़बड़ी उत्पन्न नहीं कर सकता।"

हिन्दू राष्ट्र बनने पर ही समस्याओं का हल

बंगाल हिन्दू महासभा द्वारा आयोजित विजया सम्मिलनी अवसर पर अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के आयोजक श्री वी० जी० देशपांडे ने कहा कि आज राष्ट्र के विभक्त होने तथा लाखों व्यक्तियों के कष्टग्रस्त होने के कारण इस उत्सव पर भी अभिनन्दन शक्य नहीं। अभी भी पूर्वी बंगाल में लाखों अभागे व्यक्ति ऐसी सरकार के शासन में रह रहे हैं जिसे सरकार कहलाने का अधिकार नहीं।

आपने कहा कि भारत में आये लाखों निष्क्रमितों के साथ भी विदेशियों जैसा व्यवहार हो रहा है। यहां तक कि आगामी आम चुनावों में उन्हें मताधिकार नहीं।

इन सब कष्टों का एक मात्र उपाय दोनों बंगालों का पुनः मिला देना है। किन्तु इस उद्देश्य की प्राप्ति हम इस देश में शक्ति शाली हिन्दू राज्य बना कर ही कर सकते हैं। सारे भारत में एक सम्बंध स्थापित करने के लिये हिन्दू जाति ही एक मात्र शक्ति है। इसी कारण भारत एक राष्ट्र है।

हिन्दू सभा श्री सावरकर के कथन में पूर्ण विश्वास रखती है कि हिन्दू स्वयं एक जाति है। हाल में मुरादाबाद में हिन्दू महासभा कार्यकारिणी द्वारा गैर हिन्दुओं को मिलाये जाने के संबन्ध में पास प्रस्ताव से कुछ शंकायें उत्पन्न हो गई हैं। हिन्दू महासभा ने अहिन्दुओं के लिये अभी द्वार नहीं खोले हैं। हिन्दू महासभा का हिन्दू राज बनाने का विधान पूर्ववत है।

हम दृढ़ता के साथ हिन्दू राज के उत्थान में विश्वास करते हैं और इसके लिये एक कार्यक्रम तैयार किया गया है जिसके अनुसार देश की सुरक्षा व आर्थिक उन्नति की जावेगी। बंगाल के हिन्दुओं से अपील है कि वे सभा को दृढ़ बनावें।

हमारा जागृत प्रहरी

(पृष्ठ ४ का शेष)

सरदार की राजनीतिज्ञता उन्हें मौन रहने के लिए विवश करती है। विरोधी उनकी प्रबन्धपटुता तथा संगठन कुशलता से डरते हैं।

सरदार श्री का मातृत्व

इधर-उधर तो सरदार श्री का मातृत्व जगह-जगह झलकता दिखाई दिया है। वे जिम्मेदार पिता, कड़े शासक अथवा जबरदस्त विरोधी के रूप में डांट-फटकार बताते हुए तो अक्सर देखे गये हैं, उनके प्रकोप से डर जाने का अनुभव किस विरोधी को नहीं हुआ है? परन्तु वत्सल पिता अथवा ममतामयी माता के स्नेह का अनुभव करने वाले बहुत कम हैं। इन्दौर में कस्तूरबा ग्राम के शिलान्यास के अवसर पर तथा सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए, धारा-सभा एवं कांग्रेस कर्मियों के बीच बैठे हुए तथा खानगी सम्भाषणों में मध्य भारत के प्रत्येक व्यक्ति ने उनके मातृत्व के दर्शन किये हैं।

सरदार एक जागृत प्रहरी

जब से सरदार ने भारत का कारभार सम्भाला है, तब से उनके मन में एक धुन है, भारत को हर तरह मजबूत बनाना। वे व्यावहारिक राजनेता हैं, इसलिए आज की समस्या को प्राथमिकता देते हैं। आदर्श, सामाजिक आदर्श उनकी आंखों से ओझल हो, सो बात नहीं है। परन्तु वे बार-बार उसे दोहराने के चक्कर में नहीं पड़ते। जो लोग यह मानते हैं कि सरदार पटेल पूंजीपतियों के प्रभाव में हैं, उन्होंने सरदार को बिलकुल ही नहीं पहचाना। स्व० महादेव भाई कहा करते थे कि सरदार और लोकमान्य के गुणों में बहुत साम्य है। इन्हें लोकमान्य का गुजराती संस्करण समझिये। फरक इतना ही है कि वे ब्राह्मण के बेटे थे और सरदार किसान का बेटा है। और जैसे लोकमान्य अपने सारे नेतृत्व काल में अपने ब्राह्मणत्व को नहीं भूले, उसी तरह सरदार भी अपने किसान जीवन और ग्रामीणत्व को नहीं भूलते हैं। दिन-दिन के साथ उनकी बोली में थोड़ी बहुत पालिश जरूर आ गई है, फिर भी किसान की तरह सीधी साफ दो टूक और काम की बात लठमार ढंग से कहे बिना नहीं चूकते का। अनुशासन प्रिय ऐसे कि अवस्था में काफी बड़े होते हुवे भी नेहरू जी को पुकार-पुकार के अपना नेता और अपने को उनका वफादार सिपाही कहने में संकोच नहीं करते। वे यदि किसी के मित्र तो सोलह आने मित्र हैं और विरोधी हैं तो सोलह आने विरोधी? बीच का रास्ता उन्हें पसन्द नहीं। गोलमाल बात कहने की आदत नहीं। जो कह देंगे सो कर देंगे। जिसका हाथ पकड़ लेंगे, उसको निभा देंगे। हिन्दुस्तान को एक बार सुदृढ़ बना दें तो फिर खुशी से किसी के भी हाथों उसे सौंप देने में उन्हें दिक्कत नहीं होगी, तब तक जागृत प्रहरी की तरह प्राणपण से उसकी रक्षा करेंगे। इसलिए सारा भारतवर्ष अपनी रक्षा के लिए उनके हाथों में अपने को आश्वस्त मानता है और उनकी इस जयन्ती के शुभ अवसर पर उनके आयुरारोग्य के लिए लिए भगवान से सतत प्रार्थना करता है।

(रा० म० समिति का स्वत्वाधिकार)

★

बाल गंधर्व

[पृष्ठ ४ का शेष]

कला, चतुरता और सौन्दर्य के साथ करना प्रारंभ किया। हजारों लोग मंत्रमुग्ध की तरह बालगंधर्व के संगीत और अभिनय के प्रवाह में बहने लगे। उनका नाटक कला और संगीत प्रेमियों का तीर्थस्थल बना और हिन्दी मराठी गुजराती भाषा भाषी जनता हजारों की संख्या में उनका नाटक देखने लगी। स्त्रियों का अभिनय वे इतनी सरलता और कुशलता के साथ करते थे कि स्त्रियों के लिये भी वैसा अभिनय करना कठिन हो जाता था। इतना ही नहीं अभिनय करते समय उनका साड़ियों का चुनाव तथा उन्हें पहनने का ढंग इतना सुन्दर होता था कि महाराष्ट्र की महिलायें उसे अनुकरण करने का मोह न रोक सकती थीं। बालगंधर्व की वेषभूषा ही उस दिन का फैशन था। मराठी रंगमंच पर श्री बालगंधर्व द्वारा स्त्रियों का अभिनय एक मराठी ही रंगमंच की नहीं भारतीय रंगमंच की एक न भूल सकने वाली मधुर स्मृति है।

बालगंधर्व ने मराठी साहित्य के लगभग सभी ऊंचे नाटकों में अभिनय किया है। वे स्वयं एक अच्छे कलाकार होने के कारण ही उन्होंने अपनी कंपनी में बहुत दिनों तक मास्टर कृष्णराव, पंडित विनायकराव पटवर्धन, भारत के सर्वश्रेष्ठ तबलची अहमद जां थिरकवा आदि ऊंचे कलाकारों का सहयोग प्राप्त कर रखा था। वे और मास्टर कृष्णराव दोनों ही प्रसिद्ध संगीतज्ञ स्वर्गीय श्री मास्टर राव भास्कर के प्रिय शिष्यों में रहे हैं।

१९२० में हुई मराठी नाट्य परिषद तथा १९४४ में बंबई में बड़े समारोह के साथ मनाई गई मराठी रंगमंच की प्रथम शताब्दि महोत्सव के अध्यक्ष चुनकर मराठी जगत ने आपका समुचित सम्मान भी किया है।

सिनेमा जगत में भी बालगंधर्व ने थोड़ा सा काम किया है। १९३५ में प्रकाशित हुए धर्मात्मा खेल में महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सिनेमा दिग्दर्शक श्री वी. शांताराम के साथ साझेदारी में उन्होंने काम किया था। किन्तु रंगमंच का वह जीवन रजतपट के उस निर्जीव जगत में जाकर असफल हो गया। वहां उनकी गति 'जल बिछुड़ी गति जैसी मीन' हुई। वे १९३३ में पुनः रंगमंच पर वापस लौट आये और तब से अब तक बराबर यथाशक्ति रंगमंच की सेवा कर रहे हैं। अब यद्यपि वे अधिकतर पुरुषों का ही अभिनय करते हैं फिर भी स्त्रियों के अभिनय में उनकी गति अभी भी पहले सी ही बनी हुई है। हाल ही में उन्होंने रुक्मिणी का अभिनय बड़ी सफलता से किया था।

उन्होंने १७ वर्ष की अवस्था में अभिनय प्रारम्भ किया था और आज इस कला में ४२ वर्ष निरन्तर बीतने पर भी उनकी कला में पुरानापन नहीं आ पाया है। वह अभी नवीन ही है। उन के नाटकों को लोग एक बार देख कर नहीं अघाते। हर बार उन्हें उसमें नवीन सौन्दर्य का अनुभव होता है।

'क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयता याः' उनके संगीत के संबन्ध में तो प्रसिद्ध संगीतज्ञ स्वर्गीय बालासाहब भस्वाडिकर कहा करते थे कि 'अब मैं सच्चा गाना सुनना चाहता हूं मैं बालगंधर्व का नाटक देखने जाता हूं' इस प्रकार सौन्दर्य-संगीत और कला के समन्वयभूत बालगंधर्व का राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबू ने उस दिन हाथ भेंट कर जो सम्मान किया है वह उनकी उच्च कला के अनुरूप ही है।

★

मैं भी नेता हूं ?

[पृष्ठ १७ का शेष]

में है, इनसे गिन २ कर बदले लूंगा। बड़ा बनता है जमादार नौकरी से, निकाल कर ही दम लूंगा। इस सरकारी मुफ्ती होटल में और भी कई जगह के महमान डटे थे।

एक दिन मैंने एक से पूछ डाला, भाई आपने जेल की सैर किस मतलब से की ?

"आप तशरीफ क्यों लाये ?" उसने तिरछी नजर से पूछा। "देश की सेवा के लिये।" मैंने झपकते हुये कहा। तो क्या आप यह समझते हैं कि हम भाड़ झोंकने आये हैं या आपकी चाकरी करने।" वह आंख निकाल कर बोला।

मैं चुप रह गया और उस दिन से चुप्पी धारण कर ली।

किसी तरह तीन महीने कटे और हम जेल के जंजाल से छूटे। छूटते ही मैं घर आया, लेकिन पिताजी कुछ मुझ से रुष्ट जान पड़े। मैंने आस पास के गांवों में गश्त करना शुरु किया, भाषण भी देता और चंदा भी बटोरता। धीरे २ मेरी प्रतिष्ठा बढ़ने लगी और उसका क्षेत्र भी विस्तृत होता गया। कोई मुझे जन-सेवक कहता कोई कुछ। कभी २ मुझे ऐसा प्रतीत होता कि मैं आसमान में बे-पर के उड़ा जा रहा हूं।

१९४२ की क्रांति से कौन अनभिज्ञ होगा। कैसी जबर्दस्त क्रान्ति थी। जनता ने तार काट दिये, स्टेशन लूट लिये और न जाने क्या २ किया। मैं उस समय इलाहाबाद में था कांग्रेस के एक विराट जलूस में। जलूस बड़ी शान से जा रहा था कि अचानक जानसनगंज में डंडे पड़ने लगे, पल्टन की पल्टन आ धमकी। लोगों में खलबली मच गयी, अपने राम जलूस में सबसे में पीछे रहते थे, चुपके से सटक गये। एक छोटी सी गली में जाकर शरण ली। लेकिन तकदीर ने साथ न दिया अचानक हड़बड़ाहट में फिसल गये और सारी गली में औंधे हो रहे। घुटने और मुंह खून के आंसू बहाने लगे। मैं किसी तरह अस्पताल पहुंचा।

तीसरे दिन जब मैं कांग्रेस के दफ्तर में आया तो फूल कर कुप्पा हो गया। अखबार के मुख पृष्ठ पर छपा था— जलूस पर डंडों का प्रयोग रामलाल, चेतनदास और मेरा नाम श्यामसिंह सख्त घायल। इन देश भक्तों के घावों के खून से और अधिक देश में क्रान्ति होगी। दूसरे दिन हम फिर गिरफ्तार कर लिये गये।

जेल में बैठे बैठे मैं घंटों सोचता कि बिना डंडा खाये ही मेरी प्रशंसा में अखबार के पन्ने रंग गये तो सचमुच ही मैं भाग्यवान हूं और कुछ होकर रहूंगा।

एक दिन साथियों के दिमाग में एक फितूर ने जन्म लिया। कहने लगे भूख हड़ताल करेंगे। कारण था शायद 'गांधी जी को छोड़ दो।' इस शस्त्र से अपने राम बहुत घबड़ाते थे। हम तो घर पर भी स्वास्थ्य के नियमों का पालन न करते हुये दिन में तीन बार पेट से ऊपर रोटियां तोड़ा करते थे। खैर साथियों का साथ देना पड़ा। हड़ताल सायंकाल से शुरू होनी थी सुन कर अपने राम ने सुबह ही शरीर के इंजन में जितने भी कोयले आ सकते थे ठपट ठपट कर भर दिये। शाम तो कट गयी लेकिन सुबह हाल बुरा हुआ। पेट में चूहों ने दंड बैठक लगाना शुरू किया और इंजेक्शन की सी सुइयां चुभने लगी। रात होते होते अपने राम तो मूर्छित होने लगे, सारी हवा बिगड़ गई। मुंह की घड़ी पर बारह बजने लगे। लेकिन किस्मत तेज थी। समाचार आया गांधी जी छूट गये और हम डट के सीधे रोटियों पर पिल पड़े।

तारीखें सरकती गईं और इसी बीच में कितनी बार जेल गये कितनी बार छूटे लेकिन मैं तो यही सोचा करता कि कब मोटर की पों पों सुनाई दे।

आखिर वह मंगलमय दिन आ पहुंचा। १९४७ को १५ अगस्त आयी हमारे लिये संजीवन बन कर। देश आजाद हुआ और पदों के लिये छीना झपटी होने लगी। अपने राम कब चूकने वाले थे और किसीतरह योग्य न होते भी एक पद झपट लाये मुझे एक ऊंचा पद प्राप्त हुआ। वर्षों की साधना और लालसा आज पूर्ण हुई। लोग मुझे नेता कहते हैं लेकिन मैं देखता हूं कि अब मेरे प्रति वह श्रद्धा उन लोगों की न रही जो १९४७ के पहले थी। कोई कोई तो मुझ पर अब छींटाकसी भी करते हैं। और साथ मैं स्वयं अनुभव करता है कि मैं अब जनता को उतना नहीं चाहता जितना कि आजादी के पहले चाहता था। अब मेरे पास बंगला है, नई मोटर है, बहुत से लोग मुझसे मिलने आते हैं लेकिन मैं उनसे अकड़ कर बोलता हूं। पहिले की वह मीठी जबान शायद अंग्रेजों के साथ विलायत चली गई। अब मैं आजाद देश का नेता हूं।

पाठकगण ! आपकी कृपा से अब मैं सानन्द में हूं। पिताजी भी खुश रहते हैं। मेरी जेब भी फूली रहती है और बैंक बेलेन्स तो उजाले पाख के चन्द्र की तरह बढ़ता जा रहा है। नाराज मत होना और न मुझसे जलना ये सब अपनी अपनी किस्मत की बात है, यह सब नेता गीरी का प्रताप है। लेकिन भूलिये नहीं इस प्रताप को पाने के लिये हमने नाना प्रकार की यातनायें सही और न जाने कितनी बार सरकारी धर्मशाला में मेहमानदारी की।

——

वीर अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

४
आना

वीर अर्जुन

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार २० कार्तिक सम्वत् २००७ [अङ्क २९

काश्मीर के दो खण्ड

काश्मीर के प्रश्न पर संयुक्तराष्ट्र-संघ ने जिस कूटनीति का परिचय दिया है, उसका परिणाम है काश्मीर के प्रधान-मन्त्री श्री शेख अब्दुल्ला द्वारा काश्मीर-भविष्य की गई निर्धारण नीति की घोषणा और भारत के प्रधान-मन्त्री पं० नेहरू द्वारा उसका समर्थन। काश्मीर का प्रश्न बहुत सीधा-सादा था। पाकिस्तान सरकार ने काश्मीर पर आक्रमण कबीलियों को सहायता दी और स्वयं भी भाग लिया। काश्मीर-नरेश द्वारा भारत सम्मिलित होने की घोषणा के बाद काश्मीर भारत का अङ्ग बन चुका था और काश्मीर पर पाकिस्तानी हमला भारत पर आक्रमण था। भारत ने इसी के विरुद्ध संयुक्तराष्ट्रसंघ में प्रार्थना की थी। किन्तु ब्रिटेन, अमेरिका आदि ने इस प्रश्न के यथार्थ स्वरूप को न देखकर पाकिस्तान और भारत के प्रति अपने स्वार्थ की दृष्टि से विचार आरम्भ कर दिया और यही कारण है कि जब कोरिया के मामले में राष्ट्रसंघ ने एकदम आक्रमणकारी का नाम घोषित करके उसके विरुद्ध युद्ध भी आरम्भ कर दिया, वहां अब तक काश्मीर के सम्बन्ध में राष्ट्रसंघ यही निश्चय नहीं कर सका कि आक्रमणकारी कौन है। काश्मीर के प्रश्न को पिछले तीन वर्षों से लगातार इस तरह टाला जा रहा है, मानो इस प्रश्न की कोई महत्ता ही न हो। काश्मीर की जनता उसकी दृष्टि में नहीं है, न्याय और सिद्धान्त उसकी दृष्टि में नहीं हैं। संघ के नेता तो यह देख रहे थे कि पाकिस्तान को नाराज करना कहां तक उनके लिए हितकर होगा, और इसी का निश्चय न कर पाने के कारण काश्मीर का प्रश्न अब तक लटकाया जा रहा है।

किन्तु कोई भी स्वाभिमानी देश बहुत समय तक इस खिलवाड़ को सहन नहीं कर सकता। भारत और काश्मीर में संघ की इस कूटनीति के विरुद्ध क्षोभ और असन्तोष बढ़ ही रहा था। वही क्षोभ शेख अब्दुल्ला और पं० नेहरू के भाषणों से प्रकट हुआ है। शेख अब्दुल्ला ने स्पष्ट कर दिया है कि काश्मीर बहुत समय तक संघ की प्रतीक्षा नहीं कर सकता और वह शीघ्र ही संविधान-परिषद् की स्थापना कर अपने भावी विधान और स्थिति का निर्णय कर लेगा। पं० जवाहरलाल नेहरू ने भी इसी का समर्थन कर दिया है।

पं० नेहरू और अब्दुल्ला की यह घोषणा राष्ट्रसंघ के नेताओं को कठोर चेतावनी है। यदि वे अपनी कूटनीति पर चलते रहे, तो संघ की आवश्यकता और महत्ता पर अगाध विश्वास रखने वाले पं० नेहरू जैसे व्यक्ति भी उसकी उपेक्षा करने लगेंगे, यह संघ की दृष्टि से कम असाधारण बात नहीं है। पं० नेहरू ने अपने भाषण में राष्ट्रसंघ की जो कठोर आलोचना की है, वह उसे संसार में बहुत अप्रिय बनाने के लिए पर्याप्त है। इसलिए या तो संघ को काश्मीर सम्बन्धी अपनी नीति बदलनी पड़ेगी अथवा संघ को इस बात के लिए तैयार रहना पड़ेगा कि उसकी उपेक्षा कर काश्मीर स्वयं अपने भविष्य का निर्धारण कर लेता है।

आज ब्रिटेन और अमेरिका जिस तरह रूस के भय से पाकिस्तान को प्रसन्न रखने में लगे हुए हैं, गिलगित में अपना सैनिक अड्डा बनाने की चिन्ता कर रहे हैं, उसे देखते हुए यह सम्भावना प्रतीत नहीं होती कि संघ के नेता अपना रुख बदलेंगे। और इस स्थिति में काश्मीर में शेख अब्दुल्ला अपनी विधान-सभा का निर्माण करेंगे ही। इस की यह प्रतिक्रिया भी स्वाभाविक है कि पाकिस्तान भी अपने अन्तर्गत काश्मीर-प्रदेश में विधान सभा का निर्माण करेगा और इस तरह काश्मीर दो भागों में विभक्त रहेगा। और सम्भवतः यही ब्रिटेन और अमेरिका चाहते हैं। इन्हें पाकिस्तान से गिलगित लिखने में कोई बाधा नहीं रहेगी। और यह असम्भव नहीं है कि ब्रिटेन और अमरीका आदि इसी लिए काश्मीर के प्रश्न को टाल रहे हों, क्योंकि गिलगित प्रदेश तो उनके हाथ में आ ही चुका है। इस प्रश्न के ठीक-ठीक निर्णय से यही प्रदेश उनके हाथ से निकल जायगा।

★★

स्व० बर्नार्ड शा

इंगलैंड के प्रसिद्ध साहित्यिक श्री बर्नार्ड शा के देहान्त से संसार का एक महान् कलाकार उठ गया। उनका साहित्य विश्व के आधुनिक साहित्य में एक स्थान रखता है। सामाजिक कुरीतियों तथा प्रचलित राजनैतिक और आर्थिक मान्यताओं पर तीखी चुटकियां लेने में वे सिद्धहस्त थे। निर्भीकता उनका एक असाधारण गुण था। सरकार की तेज आलोचना करने में वे संकोच न करते थे। उनका अपना जीवन बहुत सात्विक था। मांस, मदिरा और सिगरेट आदि का सेवन वे नहीं करते थे। ऐसे महान् साहित्यकार की क्षति वस्तुतः गम्भीर क्षति है।

★

कांग्रेस में एक नया दल

श्री रफी अहमद किदवई पिछले कुछ वर्षों से उत्तर प्रदेश में कांग्रेस संस्था को दुर्बल करने में लगे हुए हैं। और अब कांग्रेस में एक नया दल स्थापित करने का उन्होंने निश्चय किया है। यह दुर्भाग्य की बात है कि आचार्य कृपलानी, श्री प्रफुल्लचन्द्र घोष और श्री प्रकाशम जैसे प्रतिष्ठित नेता भी इस दल के निर्माण में भाग ले रहे हैं कांग्रेस स्वयं एक दल है और उसमें विभिन्न दलों का निर्माण किसी भी स्थिति में कांग्रेस को कमजोर करेगा, यह निश्चित है। जब कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का निर्माण हुआ था, उससे भी पहले जब कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी का संगठन हुआ था या जब सुभाष बाबू ने अपने दल का संगठन किया था, तब कांग्रेस को धक्का लगा था। इसीलिए यह निश्चय किया गया था कि कांग्रेस में कोई नया दल स्थापित नहीं किया जायगा। जब एक दल में दूसरा दल बन जाता है तो उस दल के सदस्य की निष्ठा दोहरी हो जाती है। कांग्रेस का निश्चय उसके बहुमत का निश्चय है और उसी से असन्तुष्ट दल अपना पृथक् अन्तर्वर्ती सङ्गठन करता है। इसका अर्थ यह है कि अनुशासन नष्ट हो जायगा। श्री किदवई तो अपनी पार्टीबाजी के लिए प्रसिद्ध हैं, किन्तु म० गांधी के प्रमुख अनुयायी आचार्य कृपलानी प्रभृति इस तरह अपनी संस्था को दुर्बल करना चाहते हैं, यह बहुत खेद की बात है। यदि पं० नेहरू किसी तरह भी इस विद्रोही दल को सहानुभूति न दें और कांग्रेस दृढ़ता से इस विद्रोह को दबा दे, तो कांग्रेस को दुर्बल होने से बचाया जा सकता है।

★

हिन्दी में उच्च शिक्षा

पिछले दिनों पटना में हिन्दी भाषी क्षेत्रों के विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों का जो सम्मेलन हुआ था, वह बहुत महत्वपूर्ण था। उसने एक ऐसी केन्द्रीय समिति के संगठन का निश्चय किया है, जो साहित्य, शिक्षा, संगीत, भूगोल, राजनीति, नीतिशास्त्र, अर्थ शास्त्र, समाज शास्त्र आदि के उच्च शिक्षण के लिए पारिभाषिक हिन्दी शब्दों का निर्माण करेगी। इस सम्मेलन ने इन विषयों की शिक्षा हिन्दी मे देने का निश्चय किया है और पारिभाषिक शब्दों की कठिनता हल करने के लिये उक्त समिति का संगठन किया जायगा। बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य भारत, दिल्ली और पंजाब के विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी हो जाय, तो शेष भारत में उसके प्रचलित होने और भारतवर्ष में उसके राजभाषा होने में बहुत बड़ी बाधा दूर हो जायगी। आज अहिन्दीभाषी प्रान्त अपनी प्रान्तीय भाषा के मोह में भले ही उच्च शिक्षा का माध्यम हिन्दी न रखना चाहें, किन्तु समस्त राष्ट्र की राज भाषा हिन्दी होने और इतने बड़े प्रदेश की उच्च शिक्षा हिन्दी में होने के कारण यह असम्भव नहीं है कि वे भी समस्त देश में उच्च शिक्षा एक ही भाषा में देने की उपयोगिता को शीघ्र ही अनुभव कर लें।

भावुकता नहीं, स्वार्थ

चीन के साम्यवादी शासन ने आखिर तिब्बत पर आक्रमण कर दिया और भारत सरकार के विरोध को ठुकरा दिया। तिब्बत पर वस्तुतः चीन का अधिकार है या नहीं, इस ऐतिहासिक विवेचन में हम नहीं जाना चाहते। किन्तु भारत सरकार के अनुरोध की अवहेलना कर चीन ने उस भारत का अपमान अवश्य किया है, जिसने साम्यवादी चीन की खातिर अमेरिका व ब्रिटेन तक का विरोध सहन किया है। चीन की साम्यवादी सरकार को बहुत पहले ही स्वीकार करके भारत ने उसका सम्मान किया था। आज चीन ने उसका यही बदला दिया है। राजनीति में मित्रता और भावुकता नहीं, स्वार्थ चलता है। यही शिक्षा चीन का यह उदाहरण देता है।

कोरिया या फारमोसा ?

कोरिया युद्ध के समाप्त होते होते चीन से अप्रत्यक्ष सहायता मिलने के कारण वह विलम्बित हो गया है। कोरिया की कम्यूनिस्ट सेना में यह साहस न था कि वह बढ़ती हुई अमेरिकन, ब्रिटिश और कोरियन सेनाओं का मुकाबला कर सकती। प्रश्न यह है कि क्या कोरिया की रणभूमि पर ही कम्यूनिस्ट चीन और उसके पीछे रूस अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध आरम्भ करना चाहता है अथवा अमरीका पर फारमोसा के लिए दबाव डालना ही उसका उद्देश्य है। अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध तो चीन जैसे नवजीत राष्ट्र के लिए लाभकर नहीं है। तब फारमोसा का प्रश्न ही इसके मूल में होगा।

चीन के प्रधान मन्त्री श्री माओत्से तुंग ने भारत की सम्मति की अवहेलना कर तिब्बत पर आक्रमण कर दिया है।

जनरल आइजन हावर ने अतलांतिक संघ की सेना का प्रधान सेनापति पद, यदि उन्हें मिले, स्वीकार करने का वचन दिया है।

बड़े संघर्ष के बाद श्री त्रिग्वेली, तीन वर्ष के लिए फिर सं० रा० संघ के प्रधान मन्त्री चुन लिये गये।

इंगलैंड के विश्व [illegible] साहित्यकार जार्ज बर्नार्ड शा का ९४ वर्ष की …ान्त हो गया।

पं० नेहरू ने शेख अब्दुल्ला की इस घोषणा का समर्थन किया है कि काश्मीर की विधान सभा अपनी संगठित हो कर भविष्य का निर्णय करेगी।

पश्चिमी पंजाब के भू.पू. प्रधानमंत्री नवाब ममदोत ने मुस्लिम लीग के विरुद्ध जिन्ना मुस्लिम लीग का संगठन किया है।

शेख अब्दुल्ला ने राष्ट्र संघ को चेतावनी दी है कि उसकी टालमटोल नीति को सहन न करके शीघ्र संगठित विधान सभा काश्मीर का निर्णय करेगी।

× 'आनन्द' आन्तरिक भाव है, बाह्य नहीं ×

सच्चा आनन्द निस्वार्थ सेवा में है

प्रो० महावीर एम० ए०

साधारण तौर पर बच्चा यह समझता है कि मिठाई खाने में आनन्द है। मिठाइयों में भी जो उसे सबसे अधिक भाती हो वह खाने में उसे विशेष आनन्द प्रतीत होता है। परन्तु आनन्द क्या सचमुच मिठाई में है? अगर ऐसा हो तो हर समय हर परिस्थिति में वस्तु में आनन्द उपलब्ध होना चाहिए। बरफ ठंडी है। ठंडक उसका निजी गुण है। आग का स्वभाव—धर्म उष्णता है। कहीं भी किसी भी समय आग जलाई जाए, वह गर्मी ही देगी। शीतलता देते हुए उसे किसी ने नहीं सुना होगा। वैसे ही जैसे बरफ का गर्मी पहुंचाना कल्पना के बाहिर की बात है। जैसे ये इन वस्तुओं के निजी गुण हैं, वैसे ही क्या लड्डू या पेड़ों का गुण आनन्द देना है? थोड़ा सा विचार करने पर ही मालूम होगा कि ऐसा नहीं है। बड़े से बड़े शौकीन के सामने भी थाल भर कर रख दो, खाते खाते एक समय ऐसा आएगा कि वह थाल छोड़ कर उठ बैठेगा। जबर्दस्ती खिलाया तो खाया पिया सब उगल देगा। क्यों? क्योंकि मिठाई में जो मजा मिलता है वह अपनी इच्छा और भूख पर निर्भर है। एक आध मिठाई बहुत अधिक खानी पड़े तो कितनी देर तो ऐसी मनोवस्था हो जाती है कि आदमी उसे देखना भी नहीं चाहता। कभी कभी उसे उसके वर्णन और स्मरण से भी घबराहट होने लगती है।

अंग्रेजी में कहावत है — सौन्दर्य वस्तु में नहीं, देखने वाले की दृष्टि में होता है और सुगन्धि फूल में नहीं, सूंघने वाले की नाक में रहती है। चीनी स्त्रियों की छोटे पैरों को सुन्दर समझने की बुद्धि उन्हीं की विशेषताएं हैं। कहीं पढ़ा था कि अफ्रीका की जंगली हब्शी जातियों में वह स्त्री सौन्दर्यवती समझी जाती है जिसका रंग सबसे अधिक काला है। शरीर के शृंगार के ढंग तो उनमें ऐसे भयंकर हैं कि आश्चर्य होता है। दोनों होंठों को खींच खींच कर बड़ा करती हैं और इतना बढ़ा लेती हैं कि उनका आकार तवे के बराबर हो जाता है। आपने योरोप के कई लोगों में विशेषकर फौजों में भर्ती हुए जवानों में देखा होगा कि बांहों पर, टांगों पर, छाती और पीठ पर, जहां भी उन्हें थोड़ी जगह दिखाई देती है वहां उन्होंने फूल, पक्षी, मोर लड़कियों के चित्र गुदवा रखे हैं। उनकी समझ में इससे उनकी जवानी शायद निखर जाती है और वे बड़े खूबसूरत मालूम होते हैं। उनको अपनी अपनी कल्पना है, उसके अनुसार उन्हें वह वस्तु पसन्द है जो दूसरे कई लोगों को फूटी आंखों नहीं भाएगी।

परन्तु इसके अतिरिक्त हमने देखा कि एक ही व्यक्ति को भी उसी चीज से एक अवस्था में तो आनन्द मिलता है और दूसरी में नहीं। यह कहावत सर्वविदित है कि भूख न जाने सूखी रोटी, नींद न जाने टूटी खाट। सोने का आनंद खाट में नहीं है, भोजन का आनन्द स्वादु पकवानों में नहीं। जब मन किसी व्यथा से पीड़ित होता है, तब रेशम के कोमल गद्दों में भी मनुष्य छटपटाता रहता है जब कि जंगल के किसी कोने में कोई व्यक्ति एक चट्टान का सिरहाना और सूखी कंकरीली धरती का बिस्तर लगा कर भी सुध बुध खो कर सो लेता है। कठिन परिश्रम के बाद मिली सूखी कठोर रोटी में जो आनन्द है वह पड़े पड़े मिलने वाले पकवानों में नहीं प्राप्त होता, जब भूख न हो। परीक्षा में पास हुए बालक को मिठाई और सैर में आनन्द मिलता है जब कि फेल होने वाला उन्हीं को नीरस पाता है। जो खिलौने एक बच्चे के हाथ में देख कर माता पिता फूले नहीं समाते, बच्चे के बिछुड़ जाने पर वही उन्हें मानों काटने को आते हैं। तो फिर मैं सोचता हूं 'आनन्द' नाम की चीज आखिर है क्या और कहां?

स्वामी विवेकानन्द कहा करते थे कि जितने आनन्द से भूखा भेड़िया अपने आहार पर टूट कर पड़ता है उतने से मनुष्य कभी भोजन नहीं कर सकता। आपने कभी अनुभव किया होगा—मनुष्यों में भी सभ्यता के निम्नतम स्तर पर खड़े व्यक्ति को जैसा और जितना 'आनन्द' खाने से मिलता है वह धनियों को नहीं। वह मानों साकार भूख बन कर जब खाने पर लपकता है तो उसके शरीर और मन की समस्त चेतनाएं जैसे जिह्वा का रूप लेकर उस आनन्द को अनुभव करती हैं। दूसरी ओर एक सुसंस्कृत व्यक्ति संगीत में भी उतनी ही प्रसन्नता प्राप्त कर सकता है, अन्य ललित कलाओं में भी उतना ही खुश रह सकेगा जितना अच्छे पके भोजन को पा कर। यहां तक कि किसी कलापूर्ण वातावरण के अन्दर रहते हुए वह पेट की क्षुधा को भूल ही जायगा! आपने कवियों और कलाकारों को देखा नहीं, उनके सम्बन्ध में सुना तो होगा कि अपने कार्य के रस में वे ऐसे डूबते हैं कि उन्हें रोटी की, पानी की सुध ही नहीं रहती है!

बचपन में मेरे एक सम्बन्धी काफी देर तक निकट ही रहे। साथी मिल गया। उनको कुछ ऐसे शौक थे कि क्या कहने हैं! पर एक साधारण आदत पतंग उड़ाने की थी। जो लोग कभी लाहौर में रहे हैं उन को मालूम है कि बसन्त के आस-पास और विशेषतया पंचमी को पतंग उड़ाने का क्या मजा होता है (था?) और कैसी एक अजीब मस्ती छा जाती है। सुबह तीन-चार बजे कि इस उत्साह से चार कोस घरों की छतों पर पतंगों के गट्ठे और कांच लगे धागे के बड़े-बड़े गोले लेकर जा चढ़ते और वह हो हल्ला मचाते कि कोई हिम्मत वाला ही बिस्तर में पड़ा रह सकता। हम लोग छोटे थे इस लिए कम से कम मैं तो ठीक तरह जानता भी नहीं था कि इसमें क्या आनन्द है। पर बाकी लोगों के जोश और उछल-कूद को देख कर यह समझा जाता था कि जरूर कुछ न कुछ मजा है। एक बसन्त की ही बात है, छत पर गये दोपहर होने को आई और 'मुंह हाथ धो कर कुछ खा लो', 'स्नान करो' 'कपड़े बदलो' वगैरा बातों की तरफ ध्यान दिया गया तो हमारे मित्र को नीचे से पुकार कर कहा गया कि अरे और कुछ नहीं करते तो रोटी तो खा जाओ! पर उसके मुंह से स्वाभाविक उत्तर निकला, 'लो! लोग पतंगें उड़ा रहे हैं और इन्हें रोटी की पड़ी है।' तो बताइए, कहां की मिठाई और कहां का स्वाद! वहां तो आकाश की ओर मुंह उठाए हुए चारों ओर व्यर्थ में घुमा-घुमा कर गर्दन में दर्द कर लेने और हाथों की अंगुलियों को धागे से कटवा कटवा कर खून बहाने और मुंह में ले कर उन्हें चूसने में अधिक आनन्द है! अब, इसे भी वास्तव में व्यसन कहें या कुछ और यह प्रथम प्रश्न है। यहां तो इतना ही अर्थ है कि प्रसन्नता किसी वस्तु या क्रिया में बंधी हुई नहीं है, मन की प्रवृत्ति, विकास और पृष्ठभूमि पर निर्भर है।

परन्तु इससे भी भिन्न एक और पहलू है। एक छोटा बच्चा भी यदि वह थोड़ा समझदार हो चुका है, तो जितना प्रसन्न वह कुछ पाकर या लेकर होता है उससे अधिक नहीं तो उतना ही प्रसन्न वह कई बार कुछ अपनी छोटी बहन और माता को दे कर होता है। उसके 'मैं' के विकास की पहली सीढ़ी है जब वह केवल 'मैं' से आगे बढ़ कर 'मेरा भाई, मेरी माता' यह सोचने लगता है। अच्छा खाने में, अच्छा पहनने में और अच्छे घर में रहने में जो सुख है वह तो सर्वविदित है ही। परन्तु पड़ोस में रहने वाले क्षुधा पीड़ित वस्त्रहीन या बेघरबार का कष्ट दूर करने में भी सुख है। पहला सुख केवल शरीर को स्पर्श करता है, दूसरा भौतिक शरीर से आगे आत्मा को प्रफुल्लित करता है। सब की नजर से बच कर कहीं किसी कोने में अकेले कुछ मिष्ठान्न खाने में सुख होगा पर जिन्होंने अपने भाग्य का रूखा-सूखा भी परस्पर बांट कर खाया है उनके आन्तरिक उल्लास के सामने वह क्या है! परन्तु इसकी अनुभूति के लिए दृष्टि की विशालता और अन्त:करण की गहराई तथा आत्म-साक्षात्कार की आवश्यकता है।

— —

भारतीय संस्कृति का प्रवाह

युग के अन्त में भारत

★ श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

[१]

मैंने इससे पहले लेख में उर्दू संस्कृति की चर्चा की थी। जिस समय भारत की राजनीति में यह परिवर्तन हुआ, अर्थात् मुगल सम्राट् का प्रभुत्व नष्ट हुआ और अंग्रेजों की सत्ता कायम हुई, उस समय भारत के बड़े भाग में उर्दू संस्कृति की ही मुख्यता थी। यहां कुछ विस्तार से यह बतलाना आवश्यक है कि भाषा के अतिरिक्त वह उर्दू संस्कृति क्या और कैसी थी जिसकी ओर मैं निर्देश कर रहा हूं।

जैसे उर्दू भाषा हिन्दुओं और मुसलमानों के चिरकाल तक निरन्तर सम्पर्क से उत्पन्न हुई थी, उसी प्रकार उर्दू संस्कृति भी लगभग ६०० वर्षों तक हिन्दुओं और मुसलमानों के निकट वास के कारण होने वाली क्रिया-प्रतिक्रिया का परिणाम थी। हम देख आये हैं कि संस्कृति समाज की सब प्रवृत्तियों और मनोवृत्तियों का नाम है। चिरकाल तक एक दूसरे के पड़ोसी बनकर रहने से दोनों कभी जान बूझकर और कभी अनजाने से प्रभावित होते रहे, जिसका फल यह हुआ कि अन्त में दोनों एक ऐसी संस्कृति के प्रभाव में आ गये जिससे दोनों के चाहे हुए दोनों तरह के अंश विद्यमान थे। अठारहवीं सदी के आरम्भ में मुगल साम्राज्य का क्षय आरम्भ हो चुका था, और पश्चिम से आये हुए व्यापारी राजनीतिक क्षेत्र में अपना पांव बढ़ाने की तैयारी कर रहे थे। उस समय जो संस्कृति उत्तरीय तथा पूर्वीय भारत के समाज में प्रधान रूप से विद्यमान थी, वह हिन्दू संस्कृति और मुस्लिम संस्कृति के निष्कर्ष का परिणाम थी।

मिश्रण का प्रभाव समाज के सभी अंगों पर पड़ा था। सबसे पहले समाज के धार्मिक पहलू पर दृष्टि डालिये। देखने में दोनों धर्म १८वीं शताब्दी के अन्त से भी पृथक् थे, परन्तु उनमें से प्रत्येक पर एक दूसरे का असर बिल्कुल स्पष्ट दिखाई दे रहा था। हिन्दुओं के तत्कालीन धर्मगुरुओं के विचारों पर इस्लाम का प्रभाव असंदिग्ध रूप से दिखाई दे रहा है। कबीर दादू और वैसे ही दर्जनों भक्तों की वाणियां मिश्रित विचारधारा का परिणाम थीं। हिन्दुत्व की जो प्रतिक्रियायें महाराष्ट्र तथा पंजाब में उत्पन्न हुईं, उस पर भी मिश्रण का पर्याप्त प्रभाव था। महाराष्ट्र की सांस्कृतिक जागृति और सिखधर्म के अभ्युदय से हमें जो एक उग्रता और सुधारोन्मुखता मिलती है वह इस्लाम के सम्पर्क से उत्पन्न हुई थी।

उधर इस्लाम पर हिन्दूधर्म का असर भी कम नहीं पड़ा। मुसलमानों में ऐसी बहुत सी बातें आ गईं, जिनका कारण हिन्दू-धर्म से सम्पर्क ही था। सूफी मत वेदान्त का रूपान्तर था। जो उतना भी कविता और भक्ति धर्म का मुसलमान कवियों और विचारकों पर जो प्रभाव पड़ा उसकी हम इससे पूर्व चर्चा कर आये हैं। बादशाह अकबर स्वयं ब्रजभाषा में कविता किया करता था। रसखान आदि मुसलमान कवियों की भक्तिमयी कवितायें हिन्दी साहित्य की शोभा को बढ़ाने वाली हैं। दाराशिकोह को संस्कृत वाङ्मय से गहरा प्रेम था। उसकी प्रेरणा से उपनिषदों के तथा हिन्दुओं के अन्य धर्म ग्रन्थों के अनुवाद हुए, और मुसलमानों में उनका प्रचार हुआ। जिस समय भारतवासियों के मानसिक दुर्ग पर पाश्चात्य विचारों का आक्रमण हुआ उस समय यहां के दुर्ग की दीवारों में हिन्दू संस्कृति और मुसलिम संस्कृति का गहरा मिश्रण हो चुका था।

[२]

धर्म और साहित्य के क्षेत्र से भी अधिक गहरा मिश्रण सामाजिक क्षेत्र में हुआ था। प्रारम्भ में बहुत तीव्र भिन्नता होते हुए भी ६०० वर्षों के निरन्तर सम्पर्क के कारण दोनों सम्प्रदायों में बहुत सी समानतायें उत्पन्न हो गई थीं। बहुत से हिन्दू नर और नारी हिन्दु साधुओं के साथ साथ मुसलमान फकीरों का सम्मान करते और मजारों की पूजा करते थे। मुसलमानों ने भी बहुत से रीति रिवाज हिन्दुओं से ले लिए थे। विशेषतः ग्रामों में भेद-भाव बहुत कुछ नष्ट हो गया था। गांव में यह साधारण बात हो गई थी कि दोनों एक दूसरे के धार्मिक त्योहारों में, और ब्याह-शादियों में सम्मिलित हों और एक दूसरे के विधि-विधान को मान्यता दें। अंग्रेजों के आने के कुछ समय पश्चात् हिन्दुओं और मुसलमानों में विरोध की जो उग्र भावना उत्पन्न हो गई थी, १८वीं शताब्दी के आरम्भ में इसका अभाव सा ही था। उस समय हिन्दुओं और मुसलमानों ने यह मान सा लिया था कि दोनों पड़ोसी-पड़ोसी हैं। फलतः उनके बीच की सामाजिक दीवार बहुत ही पतली हो गई थी। कहीं-कहीं तो सर्वथा नष्ट हो गई थी। उस समय के वेष को देखिये। मुसलमान बादशाहों और उनसे लड़ने वाले हिन्दू राजाओं की वेषभूषा और दाढ़ी-मूंछ के कट तक में समानता आ गई थी। किसी के चित्र [illegible] किसी मुसलमान नवाब की तस्वीरों का मिलान करें तो रंग ढंग से अधिक भिन्नता नहीं दिखाई देती। मुसलमान लोग दाढ़ी कटाने लगे थे, और हिन्दू दाढ़ी रखने लगे थे। दोनों की पगड़ियों और अंगरखी का भेद भी बहुत कुछ नष्ट हो चला था। साराश यह कि आन्तरिक परिवर्तनों की भांति बाह्य परिवर्तनों ने भी हिन्दुओं और मुसलमानों की भिन्नता को बहुत कुछ हल्का करके एक ही सांचे में ढाल दिया था, दोनों के पहनावे लगभग समान हो गये थे। दोनों की संस्कृति यदि सर्वथा एक नहीं हुई थी, तो भी एक दूसरे के समानान्तर तो हो ही गई थी।

[३]

धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में राजनीतिक भाषा मिश्रण की जो प्रक्रिया चल रही थी, उसका स्थूल रूप हम उर्दू भाषा के रूप में देख सकते हैं। उर्दू-भाषा बाजार में बनी गई हो या किले में, थी वह हिन्दू मुस्लिम-मिश्रण का ही परिणाम। भारत में मुसलमानी राज्य के आरम्भ के वर्षों में सम्भवतः दो तीन सदियों तक दोनों भिन्न-भिन्न भाषायें बोलते रहे। शासन और सेना सम्बन्धी कार्य विजेताओं की भाषा में होते थे, और हिसाब-किताब तथा साधारण दफ्तरी काम लोक भाषा में। कुछ ऐसे व्यक्ति तैयार हो गये होंगे, जो विजेताओं की भाषा पढ़कर दुभाषिये का काम करते हों। उनकी सहायता से सब काम चल जाते होंगे। धीरे-धीरे दोनों एक दूसरे की भाषा को सीखने लगे। मुसलमानों में जो कुछ सुशिक्षित शासक हुए, उन्होंने अपने शासन कार्य में हिन्दुओं का न्यूनाधिक सहयोग लेना प्रारम्भ कर दिया। उनसे दुभाषियों की संख्या निरन्तर बढ़ती गई। हिन्दुओं में कायस्थ श्रेणी उसी समय से उत्पन्न हुई। प्रारम्भ में तो वह राज-काज करने वाले दुभाषियों की एक श्रेणी बनी होगी, कालान्तर में उस एक भिन्न जाति मान लिया गया, क्योंकि शासक श्रेणी से निरन्तर सम्पर्क के कारण उनके आचार व्यवहार में भी कुछ भेद आ गया था। पेशे को जाति का आधार मानकर भेद-भाव को दृढ़ कर देना हमारे देश का [illegible] है। उससे न जाने, 'हमारे समाज रूपी शरीर में कितने नये नये रोग लगा दिये हैं।

धीरे-धीरे एक ऐसी श्रेणी उत्पन्न होने लगी जो फारसी और लोक भाषा दोनों को जानती और व्यवहार कर सकती थी, ऐसी दशा में यह स्वाभाविक हो जाता है कि दोनों भाषाओं में एक दूसरे ने मिलकर घुल जायें। व शब्द चुपके से आकर भाषा का अंग बन जाते हैं।

अकबर के उदार राज्यकाल में भाषाओं के मिश्रण की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिला। जहांगीर, और शाहजहां की नीति सकल्पपूर्वक उदार न होती हुई भी, अकबर की नीति का उत्तराधं होने का कारण भाषाओं के मिश्रण के अनुकूल था। औरंगजेब की धर्मान्धता ने मिश्रण की प्रक्रिया को ठेस तो लगाई, परन्तु वह ठेस केवल ऊंचे स्तर तक रही, सर्वसाधारण म परस्पर सान्निध्य की जो प्रवृत्ति चल रही थी, उस पर उसका कोई असर नहीं हुआ। ऐतिहासिक दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण बात है कि यद्यपि औरंगजेब के राज्यकाल में शासन की ओर से हिन्दुओं पर पर्याप्त अत्याचार हुए, परन्तु इन ग्रामों अन्यथा नगरों में किन्हीं बड़े साम्प्रदायिक दंगों की चर्चा नहीं सुनाई पड़ती। शासक लोग लड़ते थे, परन्तु प्रजाजन एक दूसरे के साथ भाईचारे से बर्तते थे।

ऐसे वातावरण में एक सम्मिलित भाषा का उद्भव स्वाभाविक ही था, उर्दू भाषा सदियों तक दोनों जातियों के निरन्तर सम्पर्क का परिणाम और परस्पर सान्निध्य का चिन्ह थी।

[४]

१८ वीं शताब्दी के आरम्भ में, जब अंग्रेजों की ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत में राज्य विस्तार की ओर कदम बढ़ाया, तो उसे जिस भारतीय समाज से वास्ता पड़ा, वह थोड़े से स्थानीय भेदों के होते हुए भी लगभग एक से सामाजिक और मानसिक स्तर में था। दक्षिण और उत्तर की सांस्कृतिक दशाओं में जो भेद था, उसकी चर्चा मैं कर चुका हूं। यदि दक्षिण को अलग छोड़

[शेष पृष्ठ २२ पर]

हिन्दू कोडबिल

नियम है कि एक पार्लमेण्ट में जो बिल अपूर्ण रह जाते हैं वे सब रद्द हो जाते हैं। नवीन पार्लमेण्ट में उन पर विचार तब तक नहीं होता जब तक वे एक नवीन बिल के रूप में पुन पेश नहीं किये जाते। इस नियम के अनुसार हिन्दू कोड बिल यदि आगामी अधिवेशन में पास होकर कानून न बन गया तो रद्द ही हो जायगा। मानो इस महान् अनर्थ को टालने के लिए सरकार ने निश्चय किया है कि इस छोटे से अधिवेशन में यह बिल येन केन प्रकारेण पास करा लिया जाय। यदि यह बात सच हो तो हमें कहना पड़ेगा कि लोकतन्त्र की मर्यादा और लोकमत की उपेक्षा का इससे बुरा उदाहरण जगत के लोकतन्त्रों के इतिहासों में ढूंढे न मिलेगा। हमने बिल के पक्ष या विपक्ष में अब तक कुछ भी नहीं कहा है और न अभी कहना चाहते हैं।

हम बिल का न समर्थन करते हैं न विरोध। उसमें कुछ अच्छा भी है और कुछ बुरा भी। हम यह भी स्वीकार करते हैं कि वयस्क नर-नारियों को मताधिकार मिलने के बाद जो चुने जावेंगे उन्हें इस प्रकार का परिवर्तन करने का अधिकार प्राप्त होगा। शास्त्रों का एक प्रकार का अर्थ करने का अधिकार यदि हमारे पूर्वजों को था तो अन्य प्रकार का अर्थ करने का अधिकार हमें भी प्राप्त है यह बात हम मानते हैं। इन सब बातों को मानते हुए भी हम कहते हैं और पुन पुन कहेंगे कि इतना बड़ा परिवर्तन करने का अधिकार उन्हें प्राप्त नहीं है जो प्रतिशत पांच आदमियों में से भी बहुमत चुने गये थे और उस समय गये थे जब जनता के सामने ये प्रश्न ही नहीं था। वे यदि यह प्रयत्न करते हैं तो गणतन्त्र का गला घोंटते हैं और फासिज्म की नींव डाल रहे हैं। संयोगवश प्राप्त अधिकार का वे अत्यन्त दुरुपयोग कर रहे हैं। राजनीतिक नैतिकता के पतन की यही हद हो जाती है। अतएव एक बार फिर हम उनसे सादर और सप्रेम प्रार्थना करते हैं कि इस अधिवेशन में हिन्दू कोड बिल पास करा लेने का विचार वे त्याग दें।

—आज

●

दुखोबोरत्सी

विश्व के इतिहास में आज तक किसी एक मानव समूह द्वारा अहिंसा और अपरिग्रह के सिद्धान्तों पर जीवन यापन करने के जो उदाहरण मिलते हैं, उनमें सबसे अनोखा और उत्साहप्रद उदाहरण रूस के एक सम्प्रदाय दुखोबोरत्सी का है।

रूसी शब्द 'दुखोबोरत्सी' का तात्पर्य स्वतन्त्र 'ईसाई' या स्वतन्त्रता के पुत्र होता है। इस सम्प्रदाय का आदि संस्थापक कौन महाप्राण व्यक्ति था, इसका लेखा जोखा आज विस्मृति के समुद्र में लुप्त हो चुका है, किन्तु इतना निश्चित है कि आज से लगभग दो सौ, पौने दो सौ वर्ष पूर्व रूस के ताम्बोफ और एकाटेरिनोस्लाव आदि प्रान्तों में इस सम्प्रदाय का जन्म हुआ था।

'दुखोबोरत्सी' जैसा नाम से भी प्रकट है, अपने को किसी चर्च या किसी पोप विशेष के आधीन नहीं मानते थे। हिंसा की शक्ति पर आधारित राज्य शक्ति के आश्रय में रहने और दूसरी ओर प्रभु ईसा के संदेशवाहक होने के एकाधिकार पर जोर देने में वह पोप और चर्चों का मिथ्याडम्बर ही देखते थे और उनका विश्वास था कि इनके माया जाल से सर्वथा मुक्त रह कर अहिंसा और 'अपरिग्रह' के सिद्धान्तों को व्यवहार में लाने का प्रयास ही प्रभु ईसा के प्रति श्रद्धा और भक्ति का वास्तविक प्रमाण है।

●

इन्द्र धनुष

राजा वह अच्छा

—जो प्रजा की राय से चलता हो।

राज्य वह अच्छा

—जिसे प्रजा के निर्वाचित प्रतिनिधि चलाते हों।

—जो प्रजा के हित और उत्कर्ष के लिये चलता हो।

—जिसमें राजा या शासक, प्रजा के विश्वासपात्र और श्रद्धापात्र हों।

—जिसमें राजा या शासक अपने को प्रजा का प्रथम सेवक मानते हों।

—जिसमें न्याय और नीति पूर्वक प्रजा के सभी वर्गों का समान भाव से पालन और रक्षण होता हो।

—जिसमें दुर्बलों और दलितों की रक्षा और उन्नति का उत्तम प्रबन्ध हो।

—जिसमें प्रत्येक नागरिक के लिये जीविका की आवश्यकता व्यवस्था हो।

२ राज वह अच्छा

—जिसका हर एक नागरिक स्वस्थ और सन्तुष्ट हो।

—जिसका हर एक नागरिक स्वाभिमानी और स्वावलम्बी हो।

—जिसका हरएक नागरिक स्वतन्त्र और स्वाधीन हो।

—जिसका हरएक नागरिक पराक्रमी और पुरुषार्थी हो

जिसका हरएक नागरिक ज्ञानी और सदाचारी हो।

—जिसका हरएक नागरिक संयमी, विवेकवान और परसेवारत हो।

—जिसका हरएक नागरिक समता बन्धुता और स्वतन्त्रता का विश्वासी हो।

—जिसका हरएक नागरिक कर्तव्यपरायण और धर्मपरायण हो।

३ राज वह अच्छा

—जिसमें कोई नंगा, भूखा और निराश्रित न हो।

—जिसमें कोई, दीन दलित, पतित और मुंहताज न हो।

—जिसमें कोई अनाचारी, अत्याचारी, व्यभिचारी न हो।

—जिसमें कोई आलसी, कामचोर परावलम्बी और पराजित न हो।

—जिसमें कोई बेकार, लाचार और बेवकूफ न हो।

—जिसमें कोई चोर, लम्पट, जाल-साज, ठग, विश्वासघाती, क्रूर, कपटी, पापी और हत्यारा न हो।

—जिसमें कोई पिशाच, राक्षस दानव, दैत्य और पशु वृत्ति वाला न हो।

—जिसमें कोई रोगी, पापी और रिक्त न हो।

—जिसमें कोई जुआरी, शराबी, भंगेड़ी, गंजेड़ी और अफीमची न हो।

४ राज वह अच्छा

—जिसमें प्रकृति अपने धर्म में तत्पर हो।

—जिसमें ऋतुओं का क्रम अविच्छिन्न और उदार हो।

जिसमें वनस्पति, औषधि, और फूल-फल की विपुलता हो,

—जिसमें वन उपवन की सुरक्षा और समृद्धि का पूरा ध्यान रक्खा जाता हो।

—जिसमें कूंए, बावली, तालाब, नहर, नदी और झीलों का विपुल वैभव हो।

—जिसकी भूमि शस्य-श्यामला, रत्नगर्भा और वसुन्धरा हो।

जिसका पशु धन स्वस्थ, बलिष्ठ और प्रचुर हो।

वही राजा रामचन्द्र है।

वही राज्य रामराज्य है।

गीत

श्री शिवेन्द्र कुमार शर्मा 'परिवर्तन'

युग बदलने का हमीं को श्रेय है!

हम बढ़े तूफान बन नित,
शक्ति का अभिमान ले,
व्योम को कम्पित बना कर,
नित विजय के गान ले,

क्या न वह अभिमान अपना—
आज तक भी शेष है?

युग बदलने का हमीं को श्रेय है!

विश्व के जन जानते यह,
हम सदा क्या चाहते,
एक प्रति आनन्द हमारा,
दानवों को दाहते;

विश्व का कल्याण आज तक—
भी हमारा ध्येय है!

युग बदलने का हमीं को श्रेय है!

व्याघ्र - आघात' सहीं जो',
कष्ट भी हमने सहे,
पर, सदा फिर भी बढ़े हम,
हैं नहीं पीछे रहे,

क्या न वह साहस हमारा—
आज कुछ अज्ञेय है?

युग बदलने का हमीं को श्रेय है!

★

भारत के विरुद्ध घृणा तथा विष भरा प्रचार

पाकिस्तान के अन्दर एक दृष्टि

काश्मीर के विषय में भारत के विरुद्ध घृणा फैलाने का झूठा प्रचार पाकिस्तान में जोर पकड़ता जा रहा है। वहां की जनता को भारत के विरुद्ध भड़काया जा रहा है। सरकारी प्रचारतंत्र तथा समाचार पत्र विरोधी प्रचार से भरे रहते हैं। भारत के विरुद्ध सभी प्रकार के लांछन लगाये जा रहे हैं। उर्दू कवियों के द्वारा रची गई भारत विरोधी घृणित कवितायें जगह जगह गाई जाती हैं और समाचारपत्रों में प्रकाशित हो रही हैं। इसी प्रकार प्रकाशित हुई हफीज जालन्धरी की एक कविता की कुछ पंक्तियां हम नीचे दे रहे हैं :—

हमको कसम अल्लाह की,
हमको कसम ईमान की,
हमको मुहम्मद की कसम
हमको कसम कुरान की।
आजादिये काश्मीर से हरगिज
न मुंह मोड़ेंगे हम,
फिर कड़काए शमशीर से
दुश्मन का सर तोड़ेंगे हम।
इन बेगुनाहों की कसम
जिनके गले काटे गये,
इन बे-पनाहों की कसम
जिनके कलेजे पाटे गये।
जो खाक में खाक गये
इन शीरख्वारों की कसम
जो खाक पर रौंदें गये
उन महमलों की कसम,
मजलूम माओं की कसम
बेवा बहनों की कसम,
मकतल अजाहार के बड़े
बूढ़ों की कसम।
डांका बादलों ने जिन्हें
उन बादशाहों की कसम,
जो आज तक हैं दर बदर
उन कारवानों की कसम।
जिन्दा जिन्हें लोपा गया
ढाये गये जिन पर सितम,
लुटती है जिनकी आबरू
उन मां बहिनों की कसम।
इनकी जबान को बेड़ियां
हैं पंजाबे अगियार में,
बिकती हैं जिनकी अस्मतें
हर कूच की बाजार में।
हैं जैनद, सैयद आदियां
अब तक अमानत जम की,
बाजू से गैरत का कसम
हद हो चुका है सब की।
बाकी शहीदों की कसम
शाहद है जिनका आसमां,
राहों में वे नाराक्तम
बहती है जिनका हड्डियां।
जब तक रहेगी कलंका
वह सर जमीं काश्मीर की।

काश्मीर की खातिर अगर
सरबाजे सर दे देंगे हम,
सर से कफन बांधे हुये
मैदान में आवेंगे हम।
आजादिये काश्मीर से हरगिज
न मुंह मोड़ेंगे हम,
फिर कड़काके शमशीर से
दुश्मन का सर तोड़ेंगे हम।

× × ×

पाकिस्तान में मिर्जा लियाकत अली खां एक तानाशाह का रूप ले रहे हैं। प्रधानमन्त्रित्व के साथ ही साथ मुस्लिम लीग के अध्यक्ष बन कर उन्होंने सब प्रकार की सत्ता अपने अधीन कर ली है। उनकी तानाशाही वृत्ति के विरुद्ध पाकिस्तान में विरोध की भावना भी उगती दिखाई देती है। सुहरावर्दी के नेतृत्व में अवामी लीग की स्थापना हो चुकी है और उसने मुस्लिम लीग के विरोध में कार्य शुरू कर ही दिया है। स्वयं मुस्लिम लीग में ही अनेकों प्रमुख व्यक्तियों ने लियाकत की कार्यवाहियों पर अंगुठा लगाने से आपत्ति करनी आरंभ कर दी है। चौधरी खलीकुज्जमा का त्यागपत्र इसी मतभेद के कारण है। पंजाब मुस्लिम लीग से कई प्रमुख लीगी नेताओं ने त्यागपत्र दे दिया है। उन्होंने जिन्ना मुस्लिम लीग नाम से एक नये दल की स्थापना कर दी है। परोक्ष रूप में लीग से अपनी बातें मनवाने में पूर्ण सफलता प्राप्त न कर पाने के कारण ही लियाकत अली ने लीग की अध्यक्षता को खुद सम्भाला है।

× × ×

आजाद काश्मीर से आये हुए कुछ हिन्दुओं ने अमृतसर में बताया है कि काश्मीर में ११०० से भी अधिक हिन्दू सिख युवतियों का अपहरण किया गया। इन समस्त युवतियों को मुजफ्फराबाद के प्रवेश विविध कैम्पों में रखा गया है जहां पर मुस्लिम गुण्डे इनके साथ जबरदस्ती अपनी वासना तृप्ति करते हैं। इनमें से बहुतेरी युवतियों ने इस नारकीय जीवन से तंग आ कर आत्म-हत्या कर ली है।

शिविर में रहने वाले व्यक्तियों को एक मास में केवल ६ छटांक राशन तथा तीन वर्ष में केवल २ गज कपड़ा दिया जाता है। वे व्यक्ति सूख सूख कर कांटा हो गये हैं। सुन्दर युवतियां जिनको वासना का साधन बनाया गया है वह भी मृतप्राय हैं। वस्त्रों के अभाव में अपनी लज्जा छिपाने के लिए वह कोना हाथ भर टाट के लिए तरसते हैं।

काफिरों ने रोते रोते कहा था कि यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमने हिन्दू घरों में जन्म लिया। इन शिविरों में पाकिस्तानी हथियारबन्द सैनिक आ कर सुन्दर २ युवतियों को छांट कर ले जाते हैं और बाद में उन्हें छोड़ जाते हैं मना करने पर बन्दूक के कुन्दों से मारते हैं। इस प्रकार अभी तक १६ शरणार्थियों को गोली से मार दिया गया है। बच्चों को जेल में बन्द कर दिया गया है।

इन शिविरों में मुल्ला तथा मौलवी प्रतिदिन आते हैं और उन्हें मुस्लिम धर्म ग्रहण करने पर मजबूर करते हैं।

× × ×

पूर्वी बंगाल में असन्तोष

पूर्वी बंगाल में धीरे धीरे असन्तोष बढ़ता जा रहा है। इसका कारण मुख्य रूप से तो आर्थिक है, किन्तु और भी कई बातें इसमें सहायक सिद्ध हो रही हैं। अभी हाल में ढाका की कतिपय सभाओं में वक्ताओं ने जो विचार व्यक्त किये उनसे उनका वर्तमान मनोवृत्ति का पता चलता है। वे कराची से असन्तुष्ट हैं इसलिए कि पूर्वी पाकिस्तान को प्रान्तीय शासन का बहुत कम अधिकार है। उनका विश्वास नहीं किया जाता इसीलिए पंजाबी और बिलोची मुसलमानों की सेना वहां भेजी गई है। जिस बंगला भाषा में बंगाल का मुसलमान बोलता और गाता था उसे समाप्त करके आज उसके सिर पर उर्दू लादी जा रही है। ये बातें लोगों को संयुक्त बंगाल की याद दिलाने लगी हैं। इसलिए पाकिस्तान की केन्द्रीय सरकार ने अभी हाल में कानून बना कर दोनों बंगालों की एकता की बात मुंह से निकालना 'देशद्रोह' घोषित कर दिया है। दुनिया जानती है कि जब असन्तोष के कारण उपस्थित होते हैं तो एक नहीं हजार कानूनों के रहते भी वह बढ़ता जाता है। यद्यपि इस असन्तोष से सीधा सम्बन्ध भारत का नहीं है, पर एक कारण से हम इसकी उपेक्षा नहीं कर सकते। आश्चर्य नहीं कि जनता का ध्यान वास्तविक समस्याओं से हटाने के लिए फिर से साम्प्रदायिक उन्माद को भड़काया जाय।

× × ×

(शेष पृष्ठ २२ पर)

आधी दुनिया

वेश्यावृत्ति — आर्थिक या नैतिक समस्या ?

पिछले सप्ताह नई दिल्ली में अखिल भारतीय नैतिक व सामाजिक आरोग्य सम्मेलन हुआ था। इसमें वेश्यावृत्ति के विरोध और चरित्र शिक्षण पर विचार किया गया। राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र बाबू ने आत्मिक स्वास्थ्य पर बल देते हुए कामोत्तेजक सिनेमा चित्रों की निन्दा की और कहा कि यदि मेरा बस चले तो मैं ऐसे चित्रों को सर्वथा बन्द कर दूं। उन्होंने आज स्त्री पुरुषों में प्रचलित सामाजिक मेल-मिलाप को अवांछनीय प्रवृत्ति बताया। वेश्या समस्या मुख्यतः आर्थिक समस्या है या नैतिक, इस पर दोनों मत सम्मेलन में प्रकट किये गये। कुछ वक्ताओं का कहना था कि केवल भूख के कारण स्त्रियां पापकर्म में लिप्त होती हैं, तो दूसरे वक्ता इसे विशुद्ध आर्थिक प्रश्न न मान कर समाज के नैतिक पतन को इस का कारण बता रहे थे।

स्वास्थ्य मन्त्रिणी राजकुमारी अमृतकौर ने कहा कि वेश्यावृत्ति की समस्या को हल करने के लिए उपचार से रोकथाम अच्छा है। लोगों की नैतिक भावनाओं को ऊंचा उठाना आज सब से अधिक आवश्यक है। यह एक मानवीय समस्या है और अगर इसे सद्भावना और सहानुभूति से हल किया जाय तो सफलता मिलनी निश्चित है।

अध्यापकों में यह योग्यता नहीं कि वे बच्चों को यौनिक शिक्षा दे सकें, जो उन के लिए अत्यावश्यक है। किन्तु बच्चे की प्रारम्भिक अवस्था में भी आप उसको वह शिक्षा दे सकते हैं जो अन्त में आकर उसके सुखी जीवन के लिए एक दृढ़ आधार सिद्ध होगा। किन्तु इसमें भी यह कठिनता है कि बहुत से मां-बाप स्वयं यौनिक ज्ञान के वैज्ञानिक पहलू से अनभिज्ञ हैं। इसलिए नैतिक व सामाजिक आरोग्य एसोसियेशन को कोई ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे माता-पिताओं को उनके इस कर्तव्य के प्रति जागरूक करके उन्हें शिक्षा दी जाय।

कुछ लोग लड़के लड़कियों को परस्पर मिलाना अवांछनीय समझते हैं। परन्तु जमाना उन लोगों के विरुद्ध है। लड़के-लड़कियों के स्वच्छन्द मिलन को कोई नहीं रोक सकता। इसी प्रकार समाज पुनः पर्दे की ओर नहीं लौट सकता। पुरातन भारत में भी लड़के-लड़कियां परस्पर मिल कर रहते थे, दोनों का पृथक्करण नहीं था। इस विषय में हमें अच्छी परम्परायें कायम करनी हैं, उनको यह पढ़ाना है कि लैंगिक सम्भोग बुरी और गलत चीज है। लोगों की नैतिक अन्तरात्मा को ऊंचा उठा कर बहुत कुछ किया जा सकता है।

श्रीमती हन्ना सेन ने कहा कि उस "द्वैध नैतिकता" का खात्मा किया जाना चाहिए जो स्त्रियों के लिए एक तरह के नियम प्रतिपादित करती है और पुरुषों के लिए दूसरी तरह के। जब तक यह द्वैध नैतिकता खत्म नहीं होती, तब तक वेश्यावृत्ति नहीं मिट सकती। स्त्रियों में भी वही कमजोरियां होती हैं, जो पुरुषों में। प्राचीन प्रथाओं के अनुसार कोई मनुष्य चाहे जितनी स्त्रियों से शादी कर सकता है, किन्तु स्त्री ऐसा नहीं कर सकती। ये प्रथायें वेश्यावृत्ति का औचित्य सिद्ध करती हैं, इसलिए इन का खात्मा कर दिया जाना चाहिए।

> ## आर्थिक या नैतिक
>
> वेश्यावृत्ति मूलतः आर्थिक समस्या है या नैतिक? इस विवादग्रस्त प्रश्न पर यदि कुछ लेखक प्रकाश डालेंगे, तो उन के विचार प्रकाशित किये जायेंगे, पर एक-डेढ़ कालम से बड़ा कोई लेख न हो।
>
> —सं०

गर्भ का पता नहीं

सिडनी की एक ४२ वर्षीया श्री महिला का कहना है कि हाल में ही अपने ग्यारहवें बच्चे के पैदा होने के दो मिनट पहले तक मुझे यह भी ज्ञात नहीं था कि मैं गर्भवती हूं। सो जब उठने ही जब मैं स्नान-घर गई तो प्रसव हो गया।

●

बम्बई में तलाक

बम्बई के तलाक कानून के अन्तर्गत २९०० पत्नियों ने अपने पति से सम्बन्ध विच्छेद के लिये निवेदन-पत्र दिया है। २४५२ पतियों ने भी इस कानून से लाभ उठाने के लिए निवेदन-पत्र दिया है।

२३२१ निवेदकों में से २०२१ को तो सम्बन्ध विच्छेद की स्वीकृति भी दे दी गई है, ११६७ निवेदन-पत्र अस्वीकार कर दिये गये हैं और १७८६ पर विचार करना बाकी है।

●

महिलाओं को शिक्षा

'ट्रिमेन एयरवर्क्स आफ् अमेरिका' नामक संस्था ने इस वर्ष महिलाओं को विमान चलाने के हर क्षेत्र में चालकों तथा टेक्निशियनों की ट्रेनिंग देने का निश्चय किया है।

इस ट्रेनिंग कार्यक्रम का उद्देश्य राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिये विमान चालन के विशेष क्षेत्रों में अधिक महिलाओं के प्रवेश को प्रोत्साहन देना है। १६ वर्ष की आयु से ऊपर की सभी महिलाओं का ऐच्छिक निःशुल्क कई भाषण सुनाये जाते हैं, जो टेक्निकल नहीं होते। पाठ्यक्रमों में अन्तरिक्ष विज्ञान, पैराशूट चलाना, हवाई अड्डे पर यातायात नियंत्रण, हवाई यातायात में सेविकाओं का कार्य तथा इंजन सम्बन्धी शिक्षा शामिल होगी।

द्वितीय महायुद्ध में उक्त संस्था ने टेक्निकल स्कूलों में १,२०० से भी अधिक महिलाओं को विमान चालन की शिक्षा दी थी। अमेरिका में इस संस्था की स्थापना १९४० में हुई थी और इसका उद्देश्य महिलाओं में विमान चालन के प्रति रुचि उत्पन्न करना है।

उक्त संस्था के अमेरिका भर में ही सदस्य नहीं हैं बल्कि इसके सदस्य हवाई, फ्रांस, नीदरलैंड, अर्जेंटा, जापान तथा स्विट्जरलैंड में भी हैं।

●

वेश्याओं का रजिस्ट्रेशन बन्द हो

संयुक्त राष्ट्र-संघ की सामाजिक कमेटी जनरल असेम्बली में अनुरोध करेगी कि जनरल असेम्बली अपने सदस्य राष्ट्रों से कहे कि वे वेश्याओं का रजिस्ट्रेशन समाप्त कर दें।

सामाजिक कमेटी ने प्रस्तावित अन्तर्राष्ट्रीय नियमों में वेश्यावृत्ति रोकने की बात जोड़ने का निर्णय किया। इसके अन्तर्गत सदस्य सरकारों से कहा जायगा कि अगर उनके यहां वेश्याओं का विशेष रजिस्ट्रेशन करने या किसी विशेष प्रकार के प्रमाण-पत्र रखने का नियम हो, तो उस नियम को हटा दें।

●

गर्भ में ही पता लगाने की मशीन

लोमनी (इंगलैंड) के समीप एक ग्राम के दो वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि उन्होंने एक ऐसी मशीन का आविष्कार कर लिया है, जो गर्भ में यह बता देती है कि बालक लड़का है कि लड़की।

इनमें से एक वैज्ञानिक का नाम है एच० के० विलियम्स। इन्होंने कुछ दिन पूर्व बताया कि "गत १८ मास में मेरी दुकान पर अनेक गर्भवती स्त्रियां आईं। जब वे स्त्रियां मेरी नव निर्मित मशीन के समीप खड़ी हुईं तो मैंने उनके जनने में ही मशीन का स्विच दबा दिया। मशीन में एक पर्दा लगा होता है, जिस पर विशेष प्रकार के चित्र उतर आते हैं। जो चित्र इस पर्दे पर आये मैंने उन्हें बड़ी सावधानी और सूक्ष्मता से रिकार्ड कर लिया। जब उन गर्भवती स्त्रियों के बालक का जन्म हुआ तो मैंने उनसे अपने रिकार्डों का मिलान किया। मैंने देखा कि मेरे सभी रिकार्ड सही थे और मशीन ने ठीक ठीक बता दिया था कि गर्भवती स्त्री के गर्भ में क्या है।"

वैज्ञानिक ने बताया कि एक स्वस्थ गर्भस्थ शक्ति की तरंगें अपने शरीर से बाहर की ओर निकालता है। ये मशीन इन तरंगों को पकड़ लेती है और उन्हें पर्दे पर चित्रित कर देती है।

वैज्ञानिकों का मत है कि इस मशीन से केवल यही काम नहीं वरन इससे डाक्टर भी अनेक बीमारियों का पता लगा सकते हैं। लन्दन का एक अस्पताल मशीन पर प्रयोग भी कर रहा है।

●

अप्राकृतिक गर्भ

मेक्सिको में एक ऐसे लड़के के पेट में बच्चा निकाला गया जिसकी अपनी आयु केवल ८ मास की है। उस लड़के का पेट बढ़ रहा था और उसका वजन अनियन्त्रित होता देख कर डाक्टरों को आशंका हुई कि कैंसर का रोग है। परन्तु जब डाक्टर ने शल्यक्रिया की तो उसमें से मानवीय पिण्ड निकला जो ५-६ मास के बच्चे के समान था, उसके शरीर पर बाल तथा अपूर्ण हड्डी, मांस, पेशी और मज्जा बन चुके थे। डाक्टरों का विचार है कि माता की गर्भावस्था में ही एक पिण्ड दूसरे के भीतर रह कर उसके द्वारा बढ़ता रहा।

स्वतन्त्र भारत प्रति वर्ष १२० रेलवे इंजिन और ५० ब्वायलर तैयार कर ले, इस महान् उद्देश्य के साथ बनाया गया।

चित्तरंजन - आदर्श नगर

बुधवार १ नवम्बर १९५० को पश्चिमी बंगाल के चित्तरंजन नामक स्थान पर एक ऐतिहासिक समारोह मनाया गया। इस अवसर पर राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने भारतीय रेलों के इंजन बाले कारखाने का नामकरण किया।

भारत के एक अत्यन्त यशस्वी पुत्र देशबन्धु चित्तरंजन दास के नाम पर इस स्थान का नाम रखा गया है। यह ई० आई० आर० लाइन पर आसनसोल से लगभग २० मील दूर है। हाल तक भी यह स्थान बड़ा रूखा सूखा सा था, किन्तु अब यहां पर एक विशाल औद्योगिक उपनगर बन गया है, जहां हजारों आदमी आधुनिकतम यंत्रों का संचालन करते हैं। चित्तरंजन कारखाने के पूर्ण रूप से बनकर तैयार हो जाने पर, अपनी परिवहन सम्बन्धी आवश्यकताओं की सबसे महत्वपूर्ण वस्तु अर्थात् इंजनों के सम्बन्ध में भारत आत्मनिर्भर हो जाएगा, ऐसी आशा है। और इस प्रकार हमारे नेताओं एवं रेलवे कर्मचारियों का एक चिरपोषित स्वप्न सिद्ध हो जायगा। पूर्ण रूप से बन जाने पर, यह कारखाना एशिया में इंजन बनाने का इस प्रकार का सबसे बड़ा कारखाना होगा।

इस कारखाने पर लगभग १४ करोड़ रु० व्यय होने का अनुमान है और इस सम्बन्ध में ६० प्रतिशत से अधिक कार्य किया जा चुका है। इसकी मशीनें बनाने वाले कारखाने में २६ जनवरी से उत्पादन कार्य हो रहा है। डब्लू० जी० २-८-२ प्रकार के छोटे इंजनों के लिए लगभग ६०० आवश्यक वस्तुएं तैयार करने के अतिरिक्त इस कारखाने में अन्य के बड़ों ई० पी० और आसाम रेलवे के लिए पुर्जे भी बनाये गये हैं।

उक्त प्रकार का एक प्रमुख उद्योग स्थापित करने की आवश्यकता के सम्बन्ध में जो कुछ भी कहा जाय, वह थोड़ा है। यद्यपि इस शताब्दी के आरम्भ में सरकार ने देश में इंजन बनाने का कारखाना स्थापित करने का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया था किन्तु किसी न किसी कारण से वह केवल कागजी योजना ही बना रहा। एक पीढ़ी में दो बार भारतीय रेलों ने इंजनों की सप्लाई के लिए विदेशी साधनों पर अपनी निर्भरता बड़ी उग्रता से अनुभव की। द्वितीय महायुद्ध के बाद बहुत से पुराने इंजनों के कारण, जिनके स्थान पर नये इंजनों का प्रयोग आवश्यक था, रेलों के कार्य संचालन में बड़ी बाधा पड़ी। सरकार ने १९४६ में कँचरापाड़ा के समीप इंजन बनाने का कारखाना स्थापित करने का निश्चय किया, किन्तु देश-विभाजन के कारण यह कार्य रुक गया और किसी नये स्थान का चुनाव करना आवश्यक हो गया। अन्त में मिहीजाम (जो अब चित्तरंजन कहलाता है) नामक स्थान चुना गया, जो स्पष्टतः कई दृष्टियों से अत्यंत उपयुक्त है। यह स्थान संथाल परगना के उन जिलों, जहां मजूरों की अधिकता है और बिहार के मानभूम क्षेत्र के बीच में है और कोयला तथा इस्पात पैदा करने वाले केन्द्रों के बिलकुल पास है।

७ वर्गमील का क्षेत्र

उक्त कारखाना ७ वर्ग मील से अधिक क्षेत्र में फैला हुआ है। कारखाने के साथ साथ एक उपनगर के निर्माण का कार्य भी करना पड़ा। यह निर्माण कार्य कितना विशाल था, इसका अनुमान इसी बात से हो सकता है कि अभी तक ४२ करोड़ ईंटें, ५०,००० टन सीमेंट, १,६०० टन इमारती लकड़ी, २०,००० गैलन पेंट और २०,००० टन इस्पात आदि सामान का प्रयोग किया जा चुका है।

यह कारखाना पूर्व से पश्चिम की ओर बनाया गया है और इससे सम्बद्ध विभिन्न कारखाने इस प्रकार बनाये गये हैं, जिससे कि सुगमता एवं शीघ्रता से उत्पादन कार्य हो सके। कारखानों में पश्चिम की ओर से कच्चा माल पहुंचने की व्यवस्था की गयी है।

यह कारखाना तीन भागों—दक्षिण, मध्य उत्तर में विभाजित है। दक्षिण भाग में नमूने बनाने का कारखाना तथा लोहे और पीतल के ढलाई के कारखाने हैं। मध्य भाग में हल्की और भारी मशीनों के कारखाने हैं। उत्तर भाग में बायलर और इंजन जोड़ने आदि के कारखाने हैं।

प्लांट और सभी मशीनें आधुनिकतम ढंग की और प्रसिद्ध कम्पनियों की बनायी हुई हैं। हर मशीन एक आत्म-भरित एवं मोटर-चालित है।

जब तक दामोदर घाटी निगम से, कारखानों के लिए, पानी की बिजली प्राप्त नहीं होती, तब तक के लिए एक उष्णतात्मक स्थायी बिजली-घर से बिजली ली जा रही है, जिसमें ६-६ सौ किलोवाट के तीन डीजल तेल-इंजनों के सेट तो हैं ही, साथ ही कई अन्य इंजन भी हैं। अनुमान है कि हर रेल-इंजन तैयार करने में लगभग १,००,००० एकक बिजली खर्च होगी।

कारखानों के उत्पादन का अन्तिम लक्ष्य है कि प्रति वर्ष उनमें १२० रेल-इंजन और ५० अतिरिक्त ब्वाइलर तैयार हो सकें। भारतीय रेलों की आवश्यकताओं के लिए बहुतेरे अन्य फालतू इंजन भी तैयार किये जायेंगे।

उत्पादन

कारखानों के उत्पादन की यह क्षमता धीरे-धीरे कई वर्षों में प्राप्त होगी। इस विषय में ब्रिटेन के रेल इंजन तैयार करने वालों के मुख्य संघ, लोको मोटिव मेनुफेक्चरर्स कम्पनी के साथ करार भी हो चुका है। यह कम्पनी चित्तरंजन कारखानों के लिए न केवल विशेषज्ञों की सप्लाई का प्रबन्ध करेगी, वरन् उन्हें सिखाने वाले कुशल कर्मचारी भी देगी, जिनकी जगह बाद में भारतीयों की नियुक्ति की जा सकेगी। रेल के इंजन तैयार करने तथा उत्पादन बढ़ाने के लिए आवश्यक कल-पुर्जे भी यही कम्पनी ला कर देगी। जैसे-जैसे चित्तरंजन कारखाने में अधिकाधिक कल-पुर्जे तैयार करते जायेंगे, वैसे-वैसे इस कम्पनी से मंगाये जाने वाले कल पुर्जों की संख्या कम होती जायगी। करार में चित्तरंजन-कारखानों के उत्पादन का क्रम नीचे लिखे अनुसार रखा गया है।

वर्ष में	इंजिन	कल पुरजों का प्रतिशत
१९५०	३	×
१९५१	३३	३०
१९५२	४५	७०
१९५३	६६	८०
१९५४	९०	१००

यदि कार्यक्रम में कोई गड़बड़ न तो आशा है कि १९५४ में चित्तरंजन में ऐसा इंजन तैयार हो जायगा, जिसके सारे के सारे कल पुर्जे उसी के कारखानों के बने हों।

कारखानों में काम करने के लिए अन्ततोगत्वा लगभग २००० कार्य-कुशल कारीगरों और इतने ही अर्ध कुशल कर्म-कर्मियों की आवश्यकता पड़ेगी। योजना है कि पहले रेलवे कारखानों से कुछ कुशल कारीगर चुन कर रखे जायं, और फिर शेष की भरती बाहर से की जाय। इसके लिए नियोजन केन्द्रों से भी सहायता ली जायगी।

आदर्श नगर

चित्तरंजन नगर का निर्माण आदर्श रूप में होगा और उसमें प्रायः सभी आधुनिक सुविधायें उपलब्ध रहेंगी। यह नगर ५,००० कारीगरों तथा उनके परिवार वालों के रहने के लिये बन रहा है। भूमि के ऊंची-नीची होने के कारण उसमें अलग-अलग बस्तियां रहेंगी, जो हर प्रकार से स्वावलम्बी होंगी। इन बस्तियों के बीच-बीच में खुली जमीन छोड़ दी गई है, और एक से दूसरे को मिलाने के लिये सड़कें बनाई गई हैं। लगभग १,००० एकड़ भूमि में ५००० क्वार्टर बनेंगे और हर क्वार्टर में पानी, बिजली शौचालय एवं स्नानागार का प्रबन्ध रहेगा। घरों के गन्दे पानी और नगर के गन्दे पानी तथा नगर के बरसाती पानी के निकास के लिए पक्की नालियों आदि का प्रबन्ध रहेगा।

हर बस्ती के लिये उसका अपना बाजार, मातृ-शिशु-चिकित्सालय, स्कूल, खेल का मैदान, औषधालय, उद्यान, क्लब, विनोदशाला तथा सामाजिक सुविधा केन्द्र रहेगा। नगर के बीच-बीच एक बड़ा अस्पताल होगा, जिससे सारे नगर के लोग लाभ उठा सकेंगे।

कहानी

अधूरी बाजी

★ श्री आनन्दप्रकाश जैन

मुगल शासन के प्रवर्तक बाबर का काल समाप्त हो चुका था, उसका उत्तराधिकारी हुमायूं एक-एक करके अपने राज्य के प्रदेश हारे हुए खिलाड़ी की तरह खोता जा रहा था, लगता था कि मुगलाई वंश का वैभव नष्ट हो चला है।

हिन्दुस्तान की भूमि शतरंज की बड़ी बिसात की तरह थी, जिस पर निगाह जमा कर चलने में बाबर का वह उद्दार वंशज अपने को असमर्थ पा रहा था।

चंपानीर राज्य के एक छोटे से गांव में भूतपूर्व मुगल सम्राट बाबर के शाही शातिर वृद्ध उस्ताद हसनअली एक कच्चे पक्के घर में अपनी विगत प्रतिष्ठा के सुखस्वप्नों के साथ अपनी तत्कालीन हीनता का समन्वय करने की चेष्टा करते हुये दिन काट रहे थे।

रस्सी जल चुकी थी, लेकिन उसके बल अभी नहीं खुले थे। मीनाकारी के साथ सोने के पत्रे मढ़ कोख के मोहरे अभी शेष थे। काली कड़ियों की छत में पुराना बिलायती झाड़फानूस अब भी टंगा हुआ था। किन्तु क्रमशः दर्शकों की संख्या घट जाने के कारण उसकी सफाई की जबरदस्ती भी धीरे-धीरे घट गई थी और वह घर की स्थिति के साथ अपने रूप को एकाकार कर रहा था।

चंपानीर का राज्य मोहम्मद बहादुर-शाह के हाथ में था और मरता हुआ वह हुमायूं को खिराज भेजना बंद कर चुका था। दक्षिण में एकमात्र यही मुगलों के विनाश का सबसे बड़ा उत्तरदायी था इस राजनीतिक अवस्था से भली प्रकार अवगत बूढ़ा उस्ताद शातिर अपने गत गौरव को लौटा लाने के लिये चारों ओर ताकता था और उसे मिलती थी निराशा और विषम परिस्थितियों का अंबार।

उन्हीं दिनों जाड़े की एक संध्या को घोड़े पर चढ़ा हुआ एक युवक उस्ताद हसनअली के घर का पता पूछता हुआ उसके द्वार पर आया। मिचमिचाई आंखों से उसे घूरते हुये वृद्ध ने दरवाजे से बाहर सिर निकाल कर एक साथ दो प्रश्न पूछे:—

"कौन है? क्या चाहता है?"

एक जमाने से वृद्ध को आगन्तुकों से यही पूछने की आदत पड़ी हुई थी और वह यह भूल चुका था कि अब इन प्रश्नों के उत्तर की पूर्ति करने की उसकी शक्ति शेष हो गई थी।

"क्या यही उस्ताद हसनअली का घर है, जो शतरंज के खेल में अपना नहीं रखते?" युवक ने घोड़े पर चढ़े-चढ़े पूछा।

युवक के पूछने के ढंग से दीनता से पिटे हुए गुरुत्व की भावना जाग फिर चेहरे पर अपनी रंगत दिखाई "आओ, बेटा," वृद्ध ने कहा, "कहां से आ रहे हो?"

"मैं अहमदनगर से आ रहा हूं।" युवक घोड़े से उतरते हुए बोला, "बड़े भाग्य से आपके दर्शन हुए।" वह भावावेश में वृद्ध के पैर छूने के लिए आगे बढ़ा।

"हैं, हैं," करते हुये वृद्ध ने अपने पैर पीछे को हटा लिए। बड़े प्रेम से वह घोड़े की रास अपने हाथ में लेकर देहलीज में खींच लाया।

युवक को आराम से, टूटे तख्त पर नई दरी बिछा कर, बिठाते हुए उसने पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा, बेटा?"

"मेरा नाम जयवर्मा है," युवक ने कहा, अहमद नगर से आ रहा हूं, दिल में यह तमन्ना है कि शतरंज सीखूंगा और उस्ताद का नाम रोशन करूंगा।"

"ह, ह, ह," बूढ़ा हंसा, "वह जमाने गये; बेटा, जब इस चीज की कद्र थी, अब तो धरती खुद बिसात बन गई है, जहां अपने मोहरों को ठिकाना तो दूर किनार, खुद टिकना मुश्किल हो रहा है। अब तो वह दस में पड़े जिसके आगे नाथ न पीछे पगहा। सीखो और हिमालय में जाकर इन्द्रधनुष से बाजियां खेलो।"

"उस्ताद!" इस बार युवक ने सच मुच वृद्ध के पैर पकड़ लिये। "मैं इन्कार सुनने नहीं आया हूं।"

वृद्ध अपने शिष्यत्व काल के संस्मरण याद कर विभोर हो उठा और उसने युवक को उठा कर छाती से लगा लिया।

अन्दर घर में जाने के लिये बैठक में जो खिड़की थी, बंद हो गई और बैठक में ही बाजियां जमने लगीं।

दुनिया की सभी बातों से विलग हो कर जयवर्मा नाम के उस युवक ने छः मास जम कर शतरंज के दांव पेच सीखे। उसे पता नहीं रहा कि आज उसने रूखी खाई कि तर, खाई कि नहीं खाई और यदि खिलाई, तो किसने।

अब बाजियां चलतीं, लेकिन शिष्य और गुरु की भावना से नहीं, दो प्रबल विरोधियों की भावना से, शिष्य के मन में बिसात से हट कर सेवा भाव आ जाता और गुरु के मन में पितृ भावना।

यद्यपि जयवर्मा ने इस बीच एक भी बाजी नहीं जीती, लेकिन धीरे धीरे उसने अनुभव किया कि किसी दिन उसका बाजी जीतना गुरु और शिष्य के बीच का कोमल तार टूक टूक कर देगा। बहुत नाजुक मौके आ पड़ने पर उस्ताद का मुंह क्यों पीला पड़ जाता है! उस समय वह उसकी ओर विचित्र दृष्टि से क्यों देखने लगते हैं? जैसे कोई विशाल भवन खड़ा कर के अपने स्वामित्व का अधिकार उस पर से खो रहा हो।

बहुत दिनों बाद एक दिन उस्ताद की बाजी इसी प्रकार फंस गई। वृद्ध ने उस्तादी तुकता छोड़ा, "घोड़े पिटवा कर मात देना, तारीफ तो इस में है!"

"मैं भी घोड़े नहीं रखूंगा," युवक ने वृद्ध के पिटे हुए घोड़ों के पास अपने घोड़े रख दिए।

जयवर्मा अब भी खुर्दे में था। कितनी देर बीत गई, वृद्ध को इसका पता नहीं चला। 'चाल चलो' कहने की जरूरत नहीं थी, क्योंकि शतरंज मस्तिष्क का खेल है और मस्तिष्क के अनुकूल तंतु न जाने कितनी देर में अपने पक्ष में आकर जुड़ें।

जयवर्मा की बाजी निश्चित थी, इस लिए जब से उसने शतरंज सीखनी आरम्भ की थी, आज उसे पहिला अवसर मिला था कि वह अपने इधर उधर दृष्टि पसार सके, संतोष और इतमीनान के साथ।

उस्ताद के पीछे जो बंद खिड़की थी, उसकी दरार पर उसकी नजरें पहुंची ... और वहीं अटक गईं। जिस राह पर भीतर के मकान की एक लकीर दीख पड़नी चाहिए थी, वहीं से किन्हीं सुन्दर नैनों की अतुल दृष्टि न जाने कितनी देर से, न जाने कितने दिनों से, एक नवीन भावनाओं का भार लिए अपनी प्यास बुझाने का यत्न कर रही थी।

यदि आंखों से स्नेह परिलक्षित हो सकता है, तो जयवर्मा ने उसे लक्ष किया। बहुत काल से अपने लक्ष्य की पूर्ति में रत उसका सुप्त युवक हृदय आज अंगड़ाई लेकर उठ बैठा, और उसकी दृष्टि उस ओर स्थिर हो गई।

"प्यादे वजीर बन गए, बादशाहतें मिट कर फिर से बनीं—जमाना एक सा किसी का नहीं रहा-" वृद्ध अपने मस्तिष्क को अंदर-ही-अंदर झिंझोड़ता हुए कानून में घोड़े बेचते हुए कह रहा था। "कभी-न-कभी दिन फिरेंगे। फिर एक दिन वैसे ही शाही कालीनों पर

[शेष पृष्ठ १६ पर]

सम्पादक के नाम पत्र

हमारे पाठक क्या कहते हैं ?

स्वतन्त्र भारत के कर्मचारी

१५ अगस्त सन् १९४७ के पूर्व अपना देश परतन्त्र था, अपने देश पर अंग्रेजों की सत्ता थी और देशी रजवाड़े उस सत्ता के खिलौने मात्र थे। उन दिनों शासकीय "मशीनरी" पराये बल से चल रही थी। अंग्रेजों ने भारत पर अपना प्रभुत्व जमाने के साथ ही साथ राज्य संचालन के लिए शिक्षा का प्रसार किया और कर्मचारी वर्ग का निर्माण किया।

उन दिनों का कर्मचारी अंग्रेजों को केवल राज्यकर्ता एवं जीवन वेतन दाता इस दृष्टि से देखना चाहता था, अंग्रेजों के प्रति उसने कभी भी "अपनत्व" नहीं व्यक्त किया। अंग्रेज भी केवल उन्हें अपना जरखरीद गुलाम समझते थे। उन दिनों वह केवल उदर पूर्ति के लिए कार्य करता था।

खेद है कि वही "परायापन" की धरोहर जो अंग्रेजी राज्य से प्राप्त हुई थी आज के कर्मचारियों में जब कि वे स्वतन्त्र भारत के कर्मचारी हैं, विद्यमान हैं।

बड़े बड़े अधिकारी से लेकर छोटे से छोटे कर्मचारी तक रिश्वत लेते पाये जाते हैं। आजके शासकीय कार्यालय भ्रष्टाचार के अड्डे बन रहे हैं। इतना पतन होने के पश्चात भी अधिकारी व कर्मचारी अपने आप उत्तम नागरिक साबित करते हैं।

इस बात के लिए दो मत नहीं हो सकते हैं कि नागरिकता के अभाव के कारण ही आज अधिकारी व कर्मचारी हर कार्य में टालमटोल करते नजर आते हैं।

स्वतन्त्र भारत के कर्मचारियों को इस बात को नहीं भूलना चाहिये कि सर्वप्रथम वे आजाद भारत के नागरिक हैं। और तत्पश्चात् कर्मचारी। आजाद मुल्क के नागरिक के नाते, देश और राज्य के प्रति वे पूर्णतः जवाबदार हैं। आज उनका अपना देश है, उनका अपना राज्य है, उनका उत्कर्ष सारे देश का उत्कर्ष है और पतन सारे देश का पतन है।

कर्मचारियों को स्वच्छन्दता का ध्यान रखना आवश्यक है, साथ ही साथ उसे प्रसन्नचित हो कर रसिकवृत्ति से कार्यालय में कार्य करना आवश्यक है। किन्तु, सनकी कर्मचारियों की आज देश को आवश्यकता नहीं है।

पक्षपातपूर्ण व लालफीताशाही? शिस्तभंगव कार्य न कर चाहे जैसे गैर जिम्मेदाराना तरीके से कागजों की कार्यवाही करना तथा अपराध? पत्रों का जिखना आज के स्वतन्त्र भारत के कर्मचारियों को शोभा नहीं देता।

वर्तमान समय में शासकीय कार्यालयों में पोप राज का अधिक दौर हो रहा है। यह ठीक नहीं है।

कर्मचारी की कार्यक्षमता उसके व्यक्तित्व व उसकी शक्ति पर ही अवलम्बित है किन्तु उसके लिए सरकार की ओर से उपयुक्त वातावरण का अनुकूल होना आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है। वर्तमान समय में सरकार की ओर से जो व्यवस्था जारी की गई है वह नाकाफी है। सबसे पहले सरकार ने कर्मचारियों को कार्यालय में ठीक से बैठने के लिए पर्याप्त-सी जगह ठीक-सी टेबल, कुर्सी अथवा स्वच्छ, बिना फटे चद्दरों से युक्त गद्दी तकिये होना आवश्यक है। उचित रूप से स्टेशन की पूर्ति किया जाना भी आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त कर्मचारियों को छुट्टी, सैर तथा ठीक-सी पैन्शन की सहूलियत दी जानी चाहिये।

वर्तमान समय में कर्मचारियों के निवास स्थान का कोई प्रबन्ध नहीं किया जाता। अतएव सरकार को उनके निवास स्थान का भी प्रबन्ध करना आवश्यक है।

कर्मचारियों को उनकी अपनी व्यक्तिगत उन्नति के लिए शासकीय सुविधायें दी जानी आवश्यक है ताकि वे अपनी बौद्धिक उन्नति कर सकें तथा मुख्य कार्यालयों में एक एक संदर्भ के लिए लाइब्रेरी भी होना आवश्यक है।

उपर्युक्त प्रकार की सुविधाओं को पाने पर कर्मचारियों को किसी बात का अभाव न रहेगा और वह ईमानदारी एवं परिश्रमतापूर्वक कार्य कर शासकीय कार्य को पूर्ण रूप से संपादन करने में समर्थ हो सकेगा।

अन्त में कर्मचारियों को मैं परामर्श देना चाहता हूं कि वे उत्तम नागरिक बनें। उनमें राष्ट्रीय भावनाएं हों वे स्वाभिमानी एवं बहुश्रुत होवें। जनप्रिय सरकार ने उन्हें जनप्रिय होना आवश्यक है।

—रूपनारायण कोठारी

●

आगामी जन गणना और हमारा कर्तव्य

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रसारित जन गणना विषयक विज्ञप्ति सं० १ सभी समाजों को भेजी गई है। उसमें जन गणना विषयक ज्ञातव्य निर्देशों के साथ साथ यह भी आदेश है कि जो भी व्यक्ति वैदिक धर्म में आस्था रखता हो, वह भी आर्य है और उसे भी ९ फरवरी १९५१ से १ मार्च १९५१ तक होने वाली जन गणना में अपना धर्म आर्य ही लिखना चाहिए। चाहे वह आर्य समाज का रजिस्टर्ड सभासद हो या नहीं।

सार्वदेशिक सभा की विज्ञप्ति के अनुसार प्रत्येक समाज में अभी से इसका विस्तृत प्रोपेगन्डा करने के लिये योग्य तथा प्रभावशाली व्यक्तियों की एक समिति बननी चाहिये, जो ग्रामों में भ्रमण करके प्रयत्न द्वारा अधिक से अधिक व्यक्तियों को आर्य लिखाने की प्रेरणा दें।

प्रत्येक समाज बौद्ध, जैन, ईसाई-यवन आदि अधिकाधिक प्रयत्न इस दिशा में करेंगे। इस समय जो उदासीन वृत्ति से कार्य करेगा, वही समाज पीछे रह जायेगा। यह केवल ९ मास तो शेष है अतः प्रत्येक समाज को प्रत्येक उपदेशक को तथा प्रत्येक कर्तव्य परायण व्यक्ति को हर समय में हर प्रकार की उदासीनता को तिलांजलि देकर प्रयत्नवान बनना चाहिये।

सौभाग्य से यू० पी० में शुद्धि कार्य के अधिष्ठाता श्री पं० अमरसिंह जी हैं उनके आदेशानुसार अधिकाधिक शुद्धि कार्य सम्पन्न होना चाहिये। (कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः?) (कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे स आहित) के अनुसार प्रयत्नशील होने पर अवश्य सफलता भी प्राप्त होती है।

हमारी संख्या की कमी के निम्न कारण हैं।

१. अछूतों से असद् व्यवहार २. शुद्धि का अभाव ३. अनाथों विधवाओं की रक्षान्यूनता ४. हमारी शारीरिक निर्बलता।

प्रत्येक समाज द्वारा तथा इस विषयक प्रयत्नशील समितियों द्वारा अछूतोद्धार कार्य को प्रगति देनी चाहिये। एतद्विषयक पस्ताव छपवाकर उनमें वितरित करने चाहिये, जिससे वे समझ सकें कि हम क्या हैं और हमारा धर्म क्या है तथा जन गणना के समय हमारा कर्तव्य क्या है।

जनगणना के समय हमें तथा प्रत्येक एतद्विषयक उपसमिति या समिति को यह ध्यान रखना आवश्यक है कि गणक व्यक्ति आर्य लिखाने वाले व्यक्तियों को ठीक ठीक आर्य लिखते हैं या नहीं यदि नहीं लिखते तो सम्बद्ध उच्च अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट करके ठीक ठीक लिखने के लिए गणकों को बाध्य करना होगा। प्रत्येक समाज उपसमिति या समिति को इस प्रकार का एक रजिस्टर बना लेना चाहिये जिसमें आर्य लिखाने वाले व्यक्तियों के नाम अंकित हों। जिस से किसी समय पर वह प्रमाण सार्थक हो सके।

सभी समाजों को इस प्रकार की स्त्रियां तैयार करनी चाहिये जो घरों में जा जाकर अछूत स्त्रियों को तथा अन्य स्त्रियों को आर्य लिखाने की प्रेरणा दें।

हमें अभी से इस कार्य में प्रयत्नशील होना चाहिये। जिससे हम इसमें पूर्णरूप से सफलता प्राप्त कर सकें।

—प्रियवर शास्त्री

●

सुझाव दीजिये

महात्मा गांधी की पुण्यस्मृति में राजस्थान के डेढ़ करोड़ जनता में शिक्षा की ज्योति जगाने के लिये सरदारशहर के निकट गांधी विद्या मंदिर नामक एक विशाल शिक्षण संस्था की स्थापना होने जा रही है। प्रारम्भ में इसके अन्तर्गत सर्वोदय महा विद्यालय, कला एवं वाणिज्य महा विद्यालय, आयुर्वेद एवं प्राकृतिक चिकित्सा महा विद्यालय और लोक शिक्षण संघ आदि प्रवृत्तियां चालू की जावेंगी।

सर्वोदय महा विद्यालय भारतवर्ष में अपने ढंग की एक अनूठी संस्था होगी, जो सर्वोदय के सिद्धान्तों को एक सुव्यवस्थित दर्शन और विज्ञान के रूप में प्रस्तुत करने के लिए प्रयोगशाला का कार्य करेगी। लोक शिक्षण संघ गांधी तत्व ज्ञान का प्रचार करते हुये राजस्थान के ग्राम अंचल में प्रौढ़ शिक्षा प्रचार का अत्यावश्यक कार्य भी करेगी।

गांधी विद्या मंदिर को राजस्थान के सभी प्रमुख नेताओं, साहित्यिकों और शिक्षा सेवियों का सहयोग प्राप्त है। लोक नायक जयनारायण व्यास, श्री माणिक्यलालजी वर्मा आदि प्रमुख नेताओं ने इसका समस्त कार्यभार अपने कन्धों पर सम्भाल लिया है इसलिये विश्वास होता है कि यह संस्था शीघ्र ही गांधी विश्वविद्यालय का रूप धारण कर लेगी।

इस संस्था का कार्यारम्भ करने के लिये श्री कन्हैयालाल दूगड़ ने पांच लाख रुपये और अपने जीवन के दस वर्ष देने की घोषणा की है। बीकानेर के भूतपूर्व शिक्षा मंत्री आचार्य गौरीशंकर जी ने अपने जीवन का अधिकांश समय और शक्ति इसी कार्य में लगाने का संकल्प किया है। सामान्यतः समस्त राजस्थान और विशेषतः सरदारशहर के कार्यकर्ताओं की कार्य तत्परता से यह कार्य उत्तरोत्तर अग्रसर होता जा रहा है। शिक्षाप्रेमी एवं धनी मानी सज्जनों से प्रार्थना है कि वे अपना सहयोग तथा उपयोगी सुझाव प्रदान कर कृतार्थ करें।

—मंत्री गांधी विद्या मंदिर

●

भैयाजी देश की आन्तरिक स्थिति से दुःखी

[पृष्ठ १५ का शेष]

इन ईसाइयों को भी षड्यन्त्रकारी भड़का रहे और फलस्वरूप हाल ही मलाबार में हिन्दू मन्दिरों के नष्ट करने तथा भ्रष्ट करने के प्रयत्न किये गये थे। यह भी ध्यान देने योग्य है कि ट्रावनकोर के राजा को भी ईसाई बनाने के प्रयत्न किए गये थे और वे केवल तत्कालीन मुख्य मंत्री, श्री रामास्वामी ऐयर की दृढ़ता के कारण विफल हुए।

महाराष्ट्र में हम देखते हैं कि साम्यवादी प्रचार सीधा संघ के विरोध का रूप ले रहा है। साम्यवादी पत्र "पीपिल्स युज" ने इस सम्बन्ध में अत्यन्त भ्रम फैलाने का कार्य किया है। गांधी हत्या के पश्चात ब्राह्मण-अब्राह्मण भावना को पुनः भड़काया गया। फल क्या हुआ यह आचार्य भागवत के इस उल्लेख से पता चलता है जो उन्होंने उस समय लिखा था कि यदि रूसी सेना का एक छोटा सा दस्ता महाराष्ट्र के सतारा, सांगली, कोल्हापूर क्षेत्र में आ जावे तो वह एक गोली चलाये बिना शासन पर अधिकार स्थापित कर सकेगा।

उत्तर प्रदेश

यह सर्वविदित सत्य है कि पाकिस्तान के प्रधानमंत्री व हाल ही के मुस्लिम लीग के अध्यक्ष उत्तर प्रदेश के ही हैं और पाकिस्तान को सबसे अधिक बल यहीं के मुसलमानों से प्राप्त हुआ था। यही नहीं पाकिस्तान आज भी यह इच्छा करता है कि एशिया की सबसे बड़ी मस्जिद वाला दिल्ली नगर तथा अरबी शिक्षा का प्रधान केन्द्र जौनपुर पाकिस्तान को मिल सके। मध्यप्रदेश में भी इस प्रकार की गतिविधियां आरम्भ हो रही हैं। बिहार की दशा भी उत्तरप्रदेश के ही समान है।

संक्षेप में यह हमारे देश का चित्र है। किन्तु मैं यह इसलिए नहीं रख रहा कि आप लोगों में भी निराशा की भावना ही बढ़े। आपको परिस्थिति की गंभीरता तथा उसे दूर करने के प्रयत्नों पर विचार करना है जिससे यह अशान्ति देश में फैल न सके। अभी उसे रोकने का समय है, आवश्यकता है कि हम कार्य करें।

किन्तु यदि यह भी मान लें कि हम इस अशान्ति को रोक पाने में सफल न हो पावें तब भी इतिहास के सिखाये हुए पाठ को हम ध्यान में रखें। कोई भी समाज अधिक समय तक अशान्त स्थिति को नहीं सह सकता और ऐसी दशा में न्याय तथा नियम की दुहाई देने वालों के लिए कोई भी मूल्य देने को तत्पर हो जाता है। साम्यवादी इसी मनोवैज्ञानिक पक्ष का लाभ उठाते हैं और मुक्ति सेना आदि के रूप में शान्ति संस्थापक बन कर प्रकट होते हैं। यदि ऐसी स्थिति में हमारा संगठन दृढ़ हुआ तो हम राष्ट्र को साम्यवादी दासता में जाने से सफलतापूर्वक रोक सकते हैं चाहे थोड़ी देर के लिए अशान्ति फैलाने में वे भले ही सफल हो जावें।

———

अंग्रेजी के राज्य को उठाइये

[पृष्ठ १४ का शेष]

पर पूर्ण अधिकार रखने वाले न हुए तो राष्ट्रभाषा का वैसा सार्वभौम और सबल रूप नहीं बनेगा जैसा होना चाहिए। पुराने समय में जैसे हमारी उच्च शिक्षा, शास्त्रीय ग्रंथरचना, धर्मशास्त्र, समाज रचना और विज्ञान आदि की भाषा संस्कृत थी जो कास्मीर से कुमारी तक सारे प्रदेशों को एक परम्परा में बांधे हुए थी वैसे ही इन सब कामों का माध्यम भविष्य में हिन्दी ही होना चाहिए। परन्तु यह हमारे कहने का बात नहीं, यह तो हमारे मौन आचरण से ही हमें अहिन्दी भाषियों के अनुभव में लाना चाहिए जिससे वे ही स्वयं प्रश्न उठावें।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के समक्ष यह महान कार्यक्रम अब आ रहा है। कांग्रेस ने अंग्रेजों के राज्य को निकालने का बेड़ा उठाया था और देश के सहयोग से वह सफल हुई। अब हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने अंग्रेजी के राज्य को उठाने का व्रत लिया है जिससे देशजन की आत्मा भी स्वतन्त्र हो। देश की जनता सम्मेलन का साथ देगी और उसे इस कार्य में विजय होगी। परन्तु यह तभी जब हम हिन्दी सेवा ऊपर वर्णित तथा अन्य बाधाओं और विरोधों का शमन कर सकेंगे।

—●○—

भैया जी देश की आन्तरिक स्थिति से दुःखी

देश में व्याप्त निराशा की भावना को दूर करने का प्रबल आग्रह

रा० स्व० संघ के स्वयं सेवकों को आह्वान

आज का प्रत्येक नेता, चाहे वह कांग्रेसी हो, समाजवादी या और कोई, यह स्वीकार करता है कि जनसाधारण में एक स्पष्ट निराशा की भावना फैली हुई है। नेताओं को आश्चर्य है कि ३२ के बाद उखड़े कैसे पड़ गये। कारण यह है कि देश उन लोगों के पहिले के और आज के कथनों में दीखने वाले महान अन्तर को समझ नहीं पा रहा है, जिसकी उसने पूजा की थी और नेतृत्व स्वीकार किया था। वह कांग्रेसजनों की अपनी 'सेवाओं का मूल्य वसूल करने' की वृत्ति को नहीं समझ पा रहा है।

यदि हम स्थिति को समझने का प्रयत्न करें तो यह दिखाई देगा कि साम्यवादी देश की इस विषम स्थिति से अधिकतम लाभ उठा रहे हैं। जन साधारण के सम्मुख भविष्य के सुन्दर स्वप्न-चित्र उपस्थित कर वे और अधिक निराशा फैला रहे हैं। शेष राजनीतिक दल भी जो सत्ता प्राप्ति के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं समझते, केवल "घोषणापत्रों" की तैयारी में लगे हैं। फलस्वरूप देश का बुद्धिजीवी वर्ग भ्रमित दिखाई देता है। अशान्ति फैलाने के प्रयत्न योजना के अनुसार किये जा रहे हैं जिससे 'क्रान्ति के दूत' के रूप में वह पदार्पण कर सके।

बंगाल और पंजाब आज हमारे दो सीमाप्रान्तों का सुदृढ़ होना नितान्त आवश्यक है। किन्तु इन दोनों प्रान्तों की स्थिति अत्यन्त चिन्ताजनक है।

बंगाल की दुर्दशा

कलकत्ते की विशाल नगरी में सदा असाधारण स्थिति बनी रहती है। केवल पांच युवकों का छोटा सा दल भी किसी ट्राम को रोककर, यात्रियों को उतरने के लिए कहकर उसे आग लगा सकता है। कोई उन्हें रोकने की चिन्ता नहीं करता। "साम्यवादी होने" के अतिरिक्त अन्य किसी विचार को भी कोई स्थान नहीं देता। सरकार में अविश्वास इस सीमा तक पहुँच गया है कि साम्यवादी विचार-धारा में रत्ती भर भी विश्वास न रखते हुए भी लोग साम्यवादियों को 'एक अवसर' देने का विचार करते हुए कहते हैं कि सम्भव है जहां कांग्रेस असफल हुई साम्यवादी सफल हो जायें।

आसाम

इसी सीमा पर स्थित आसाम के मुसलमान एक विचित्र स्थिति में हैं। [illegible] मौलाना [illegible] ने निश्चित रूप से लगभग १२ लाख मुसलमानों को आसाम में बसाया। विभाजन के पश्चात इनमें लगभग ६ लाख मुसलमान और आए। इन ६ लाख को वापिस भेजने का केन्द्रीय सरकार का प्रयत्न, जिसके लिए संसद ने एक कानून पास किया था, आज एक रद्दी का कागज बन चुका है। उसके लागू किए जाने के ६ मास के अन्दर एक भी अनधिकृत रूप से प्रवेश करने वाला वापिस लौटकर नहीं गया। यहां का शासन भारत सरकार के हाथ में होना चाहिए किन्तु इसके एक भाग का समस्त व्यावहारिक शासन पाकिस्तान के हाथ में है।

इस भाग में मुसलमान सक्रिय रूप से साम्यवादियों से सहयोग कर रहे हैं। साम्यवादी सोचते हैं कि पाकिस्तान एक नया राज्य होने के कारण आसानी से काबू में आ सकता है, अतः पहिले हिन्दुओं को समाप्त कर देना चाहिए। मुसलमान समझते हैं कि भारत के शत्रु होने के कारण साम्यवादी उनके स्वाभाविक मित्र हैं। अतः मित्र होते हुए भी अशान्ति उत्पन्न करने के विषय पर वे एक हैं। साम्यवादी खुले रूप से साम्यवादी क्रान्ति लाने की घोषणा करते हैं जबकि पाकिस्तानी कहते हैं—"हंस कर लिया पाकिस्तान, लड़के लेंगे हिन्दुस्तान।"

कुछ लोग इस बात पर हंस सकते हैं और इसे एक 'पागल का स्वप्न' कह सकते हैं। किन्तु हम यह न भूलें कि बनने के पूर्व पाकिस्तान भी एक 'पागल का स्वप्न' ही था। मुसलमानों तथा साम्यवादियों में सहयोग का एक उदाहरण तब मिलता है जब स्वतन्त्रता के पश्चात 'डान' ने एक लेख लिखकर भारत के मुसलमानों को साम्यवादी बनकर अपनी कार्यवाही चालू रखने का सुझाव दिया था क्योंकि यदि मुसलमानों के रूप में कुछ किया तो यह आशंका थी कि भारत सरकार दबा देगी। यह सहयोग आज भी पूर्ण रूप से चल रहा है।

हाल ही में आसाम में आसामी—बंगाली मतभेदों के भड़काने का एक विशेष प्रयत्न इन मुस्लिम—साम्यवादी षडयंत्रकारियों के द्वारा हो रहा है। आसामियों के दिमाग में यह विचार भरने के निश्चित प्रयत्न किये जा रहे हैं कि एक विदेशी मुसलमान बंगाली हिन्दू के बजाय उनके अधिक निकट है।

सिखिस्तान

'सिखिस्तान' के नारे का आविष्कार पाकिस्तान की मांग को दुर्बल बनाने के लिए किया गया था। किन्तु अंग्रेजों ने पंजाब का विभाजन कर दिया। पंजाब की मारकाट में सिखों ने अपनी स्त्रियों के सम्मान की रक्षा में अपने को दुर्बल अनुभव किया। उस समय हिन्दू होने के नाते संघ के स्वयंसेवकों ने, जिन्हें कि वे बाहरी समझते थे, सफलता पूर्वक उनकी रक्षा की और इस प्रकार यह सिद्ध किया कि वे हिन्दुओं में किसी प्रकार के भेदभाव को नहीं मानते। इस बात ने सिखों को भी प्रभावित किया और वे अपने को हिन्दू कहने लगे। यहां तक कि अनेकों ने तो हिन्दुओं से रक्त सम्बन्ध नष्ट करने के लिए अपने बाल आदि भी कटा डाले।

किन्तु इस एकता से सबसे अधिक बेचैन वे नेता थे जो अगस्तों के पूर्व ही पश्चिमी पाकिस्तान छोड़ चुके थे। इस में उन्हें अपने नेतृत्व का अन्त दिखाई दिया। यदि कहीं हिन्दुत्व का आवाहन सिखों को जीत ले? अतः उन्होंने पंजाब में सरकारी नौकरियां उन्हें अधिक देना आरम्भ किया और ८६ प्रतिशत सिखों को पंजाब में ही बसाया (और अधिक हिन्दुओं के उत्तर प्रदेश दिल्ली तथा अन्य स्थानों पर जाने के लिए छोड़ दिया)। इस प्रकार सिखों को हिन्दुओं के विरुद्ध खड़ा किया गया, जिसके फलस्वरूप पंजाब में आज अशान्ति है।

सिखों को भड़काने में साम्यवादियों का महत्वपूर्ण हाथ रहा है। सेना के द्वारा एक गुरुद्वारे में पकड़े गये हथियार बनाने के एक विशाल कारखाने में मिले कुछ साम्यवादी पत्रों से यह पता लगा है कि साम्यवादियों का इस फैक्ट्री को चलाने में बहुत हाथ था जिसमें आधुनिक ढंग के छोटे अस्त्रास्त्र निर्माण होते थे। यह भी ज्ञात हुआ कि साम्यवादी सिखों के भेष में गुरुद्वारे में रह रहे हैं। सिखों में अधिक योजना पूर्वक घुसे हैं वे क्योंकि सिख सेना में महत्वपूर्ण स्थानों पर हैं, जिस पर वे अपना प्रभाव स्थापित करना चाहते हैं।

दक्षिण में

दक्षिण की ओर हम यह देख सकते हैं कि विभाजन के पश्चात मुस्लिम गतिविधियों का केन्द्र मद्रास में पहुँच गया, जिस प्रान्त में केवल चार की सदी मुस्लिम जनसंख्या है। उत्तर में तीव्र भावनाओं को देख कर मुसलमानों ने दक्षिण को अपना कार्यवाहियों के लिए चुना जहां कि हमारे प्रधान मंत्री के अनुसार "हिन्दू-मुस्लिम समस्या है ही नहीं।"

हैदराबाद में अशान्ति फैलाने का कार्य, जो पाकिस्तान की कल्पना में एक महत्व पूर्ण प्रदेश था और जिसके पीछे से पाकिस्तान बना, गंभीरता पूर्वक किया गया। यह ध्यान देने योग्य बात है कि जैसे ही हैदराबाद में पुलिस कार्यवाही सफल हुई, रजाकारों की बहुसंख्या दूसरे ही दिन साम्यवादी बन गई और न केवल रजाकारों के अस्त्रास्त्र तथा गोली बारूद साम्यवादियों को सौंप दिये वरन अधिक दूर तक के प्रदेशों में रजाकार सामूहिक रूप में साम्यवादी बन गए। और आज रूसी रेडियो इस बात का दावा करता है कि तैलंगाना और आंध्र के कुछ भागों में समानान्तर सरकार है।

दक्षिण में भाषाएं अनेक हैं और उनके पारस्परिक भेद बहुत बढ़ चुके हैं। यहां तक कि मद्रास के भूतपूर्व मंत्री श्री रेड्डियार और कांग्रेस के महामंत्री श्री कला वेंकटराव ने एक दूसरे को समाचार पत्रों के द्वारा चुनौती दी थी। पहिले ने कहा था कि यदि मद्रास नगर आंध्र को मिलाया गया तो खून की नदियां बहेंगी, जब कि दूसरे ने उसके सम्मिलन न किये जाने पर नोआखाली की पुनरावृत्ति की धमकी दी। अन्य सभी बातों के समान भाषा संबन्धी इस भेद को भड़काने में साम्यवादियों का प्रमुख हाथ है।

इसी प्रकार आर्य द्रविड़ भाव भी भड़काया जा रहा है। दक्षिण के अनेकों लोगों को यह सिखाया जा रहा है कि वे रावण तथा नरकासुर की सन्तान हैं जिन पर आर्यों ने चढ़ाई की थी और उन्हें गुलाम बनाया था। यह भाव भी यहां तक बढ़ चुका है कि कुछ लोग दशहरा, दीवाली आदि पर्वों पर शोक मनाया करते हैं। आंध्र में सरकार के विरुद्ध असंतोष फैलाने के लिये खड़ी हुई फसलों को जला देने की पद्धति भी आरम्भ हुई है।

मलाबार और महाराष्ट्र में, उत्तर में मुसलमानों के द्वारा थोड़ी थोड़ी दूर पर बनाई गई मस्जिदों के समान, ईसाइयों के गिरजों का क्रम दिखाई देता है।

(शेष पृष्ठ १८ पर)

गैर-इलाके की पठान जाति

(पृष्ठ १२ का शेष)

सूर्योता होगी। आज यदि यह इन सुवि-धाओं से भली प्रकार परिचित होती तो यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि यह जाति संसार भर की जातियों से एक पग आगे रह कर ही अपना मस्तक उठा किए हुये होती। आज कोई भी ऐसी शक्ति न होती जो कि इस स्वतन्त्र पक्षी तथा स्वच्छन्द विचरी अज्ञा-नता के अंधकार में रहने वाली जाति से होड़ ले सकती।

यह प्रदेश पाकिस्तान राष्ट्र के सीमा-प्रान्त के साथ लगता है और वहां के पठान आज पाकिस्तान सरकार के लिये एक महान समस्या बने हुए हैं।

भारत में विदेशियों ने लगभग डेढ़ सौ वर्ष राज्य किया और किया भी पूरे दबदबे तथा पूरी शक्ति के साथ। इन्हीं विदेशियों ने ऐड़ी चोटी की शक्ति लगा दी, इस प्रदेश के स्वतन्त्र निवासी पठानों को अपने वश में करने के लिए, परन्तु न वह वश में आ सकते थे, और न आये। और यदि अब भी कोई सोचे कि उन्हें तथा उनकी स्वतन्त्रता को कुचल कर उनके कन्धों पर साम्राज्यवाद का झंडा फहरा सकेगा, कठिन ही नहीं वरन् असम्भव भी है।

इसी प्रकार का भूत आज पाकि-स्तान सरकार के सर पर सवार है। वह चाहती है कि वह इस स्वतन्त्र जाति का दमन करके उन्हें अपने वश में कर ले। दिन प्रति दिन समाचार आते हैं कि कहां स्थान पर पाकिस्तानी बम वर्षकों ने बम बरसाये, कहां स्थान पर पठानों पर गोलियां चलाईं। यह ऐसी घटनायें हैं कि दिन प्रतिदिन पठान लोगों में इन चालबाज पाकिस्तानियों के प्रति घृणा ही घृणा भरती जा रही है। वे अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए मर-मिटने को तैयार हैं और बड़ी से बड़ी मुसीबत का सामना करने को भी वे कदापि भेंट नहीं करेंगे।

गेंद को जितना भूमि पर जोर से पटका जावे वह उतना ही ऊंचा उछ-लता है। पाकिस्तानियों के कुकर्मों से पठानों में क्षोभ दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। परन्तु कुछ स्वार्थी नेतृत्व में पाकिस्तानी सरकार इन सभी घटनाओं की उपेक्षा करते हुये अपना भला-बुरा सोचने में असमर्थ है। वह चाहते हैं कि वह स्वतन्त्र जाति उनके वश में आ जावे। परन्तु उन्हें यह न भूलना चाहिये कि वे सोये हुये सांप को ठोकर मार कर जगा रहे हैं जिसके उठते ही उनकी एक ही फुंकार से मियां जिन्नाह की तीव्र बुद्धि और उनकी की कुरसी लड़खड़ा कर धराशायी हो जावेगी।

पठान एक बहादुर तथा स्वतन्त्रता पसन्द जाति है। वह किसी के बूटों के नीचे दबने को किसी दशा में भी तैयार नहीं। वह एक चट्टान है, जिसके साथ समुद्र की लहरें टकरा कर वापिस लौट जाती हैं परन्तु चट्टान का न कुछ बनता है न बिगड़ता है।

अधूरा बाजी

[पृष्ठ १२ का शेष]

मसनद के सहारे शतरंज खेलेगो। चारों ओर प्यादे पलटन द् दले फिरेंगे और सम्मान में तोपों का सलामियां दग रही होंगी ....” क्या क्या बकता जा रहा है, बूढ़े ने सहसा हा इस से अवगत हो, अपनी गुप्त भावनाओं के इस प्रकार प्रदर्शन से लज्जित होकर जयवर्मा की ओर ताका।

अचानक ही बूढ़े की भौंह संकुचित हो गई। उसने जयवर्मा की ओर ताज दृष्टि से देखा, पाछे फिर कर खिड़की की ओर देखा और दृढ़ निश्चय के साथ उठकर खिड़की और जयवर्मा के बीच आ खड़ा हुआ।

इस अचानक व्यापार से चौंक कर जयवर्मा प्रकृतिस्थ हुआ।

“अब यह बाजी कब खिलेगी,” बूढ़े ने व्यंग्य से कहा, “शायद उस ‘कल’ को, जो कभी नहीं आती।”

गुरु और शिष्य के बीच एक तनाव उत्पन्न हो गया। जयवर्मा ने मन में कहा, ‘यह बाजी की स्थिति से उत्पन्न खीझ है, लेकिन उसके भीतर से हा किसी ने उसे कुरेदा दिया।

“इस बाजी के दो नक्शे बना लो, एक तुम्हारे पास रहे, एक मेरे। जब हम और ‘तुम’ ‘स्वस्थ’ होंगे, तब फिर यह बाजी खिलेगी। शतरंज में समय का बन्धन नहीं होता,” उस्ताद हसनअली ने आदेश दिया।

उस रात जयवर्मा पड़ोसी के यहां सोया। रात-ही-रात में उसने निश्चय किया और सुबह उठते ही नहा-धो कर वह उस्ताद के पैर छूने बैठक में पहुंचा। सामने खिड़की के किवाड़ों में जो दरारें थीं, उन्हें बड़े अटपटे तरीके से रात में बूढ़े ने कागज लगा कर गारे मिट्टी से बन्द कर दिया था।

करुण भाव से गुरु की ओर देख वह उसके चरणों पर गिर पड़ा। बूढ़े ने शांत भाव से उसे आशीर्वाद दिया। किसीने उसकी राह नहीं रोकी, किसी ने उससे जाने का कारण नहीं पूछा। कुछ काल पहले जिस प्रकार वह अज्ञात युवक इस गांव में घोड़े पर चढ़ कर आया था, उसी प्रकार, पीठ मोड़ कर गांव से विदा हो गया, अन्तर था तो केवल इतना कि जिस मुख पर आते समय कुछ सीखने की चाह, कुछ कर गुजरने की उमड़ती उत्सुकता थी, आज उसीपर ज्ञान की गंभीरता और प्रवाहित हृदय की रेखा थी।

× × ×

“धड़ाम, धड़ाम,” अचानक तोपें भीषण ध्वनि से गरज उठीं और किले की दीवारें कांप उठीं।

दो महीने से हुमायूं चंपानीर का घेरा डाले पड़ा था, आज पूरी आशा थी कि या तो बहादुरशाह आत्मसमर्पण कर देगा या किले के निवासी जीवन मरण का अंतिम संघर्ष करने के लिए किले का द्वार खोल कर बाहर आ जायेंगे।

तब किले के फाटक में बनी छोटी राह से एक घुड़सवार बाहर निकला और श्वेत ध्वजा फहराता हुआ हुमायूं की फौज में घुस गया।

उसने एक फरमान शाही लेखे में हुमायूं के सामने पेश किया। उसके अंदर जो लिखा था, उसे सुन कर हुमायूं के प्रमुख सेनानायक बड़े जोरों से हंस पड़े।

उस फरमान में बहादुरशाह की ओर से हुमायूं के साथ शतरंज खेलने का निमन्त्रण था। शतरंज में हारने पर हुमायूं के लिए शर्त थी कि वह किले का घेरा उठा कर वापस लौट जावे, जीतने पर बहादुरशाह उसके लिए किला खाली कर देगा।

भीषण रक्तपात के बीच जब इस मजाक के कारण उत्पन्न हास्य धीमा पड़ा तो राजदूत ने फरमान को अधिक गंभीरता के साथ एक बार फिर पढ़ दिया। उसने जबानी कहा— “व्यर्थ रक्तपात को रोकने का यह अपूर्व अवसर है। आखिर वास्तविक लड़ाई भी तो बहुत कुछ भाग्य पर निर्भर करती है। अंतर इतना है कि यह द्वंद्वयुद्ध न होकर बुद्धियुद्ध होगा।”

एक सेनानायक ने आगे बढ़ कर निवेदन किया, “यह अवसर और अवकाश प्राप्त करने का एक दांव है।”

राजदूत ने भूख के कारण अपना पीला चेहरा उसका भार उठाया, “किले में खुदा ने रसद पानी बरसाने के लिए हम से कोई वादा नहीं किया है।”

“बहादुरशाह में हिम्मत नहीं रही है।” एक दूसरे सेनानायक ने कहा।

“भूखे इन्सानों में अभी मरने या मर जाने का दम बाकी है।” राजदूत ने कहा। उसकी दृष्टि उसके कथन की गवाही दे रही थी।”

हुमायूं के बराबर खड़े एक युवक ने उसके कान में कुछ कहा, हुमायूं ने आज्ञा दी, “युद्ध बन्द कर दिया जाए। यह बच्चों का खेल हमारी थकी हुई सेना का रंजन होगा।”

सारी फौजों में इस मजाक पर कहकहे गूंज उठे। युद्ध का कहर ओर्चा सिमट कर हुमायूं के खेमे में एक बड़ी चौकी पर केन्द्रित हो गया। उस युद्ध का सबसे बड़ा सिपहसालार था हुमायूं का सहचर उपरोक्त युवक।

नई और अपूर्व चालों के नक्शे रेशमी थैलियों में बन्द हो कर, एक के बाद एक, किले से खेमे और खेमे से किले को जाने लगे, तत्कालीन राजनीतिक इतिहास में शतरंज की यह बाजी अपूर्व थी और असाधारण थी, जिसकी चाल के नक्शे पूरी पूरी बाजियां खेल कर परिणाम देख लेने पर बरोबो के पास भेजे जाते थे।

हुमायूं इस बाजी को शांत मुखमुद्रा और उथल-पुथल युक्त हृदय से खेल रहा था। वह अपने जीवन में अब और अधिक जुआ खेलना नहीं चाहता, इसका प्रमाण बहुत शीघ्र मिला। तीसवीं चाल लेकर पहुंचा हुआ हुमायूं का कासिद अचानक बीमार पड़ जाने के कारण वापस नहीं लौटा।

बहादुरशाह के दरबार में नक्शा सौंप कर बाहर आते ही उसके पैरों में बड़े जोर का दर्द उठा और दोने जांघें फूल कर हाथी का पैर हो गई। वह भूमि पर गिर पड़ा और पीड़ा के कारण लोटने लगा। तत्काल दरबार में सूचना दी गई। नई चाल में उलझे बहादुरशाह ने उसे शाही हकीम की रक्षा में सौंपने की आज्ञा दी।

यदि सिलसिला यहीं टूट जाता तो बेहतर था; लेकिन इस घटना के बाद कोई भी संदेशवाहक अपना काम समाप्त करके नहीं लौटा। किसी की आंखें इतनी सूज गईं कि वह अंधा हो गया, तो किसी की अंगुलियां कलाई के बराबर हो गईं।

हुमायूं की ओर से शिकायत की गई कि क्या कारण है दूत वापिस नहीं लौट रहे हैं। बहादुरशाह के लिए अब यह चिंता का विषय हो उठा। कोई राजभक्त गुप्त रीति से संदेशवाहकों को जहर दे रहा है, इसमें कोई शक नहीं था लेकिन उसे सामने आना चाहिये।

हुमायूं का नौजवान शातिर निर्णायक चालें लेकर दो संदेशवाहकों के साथ स्वयं बहादुरशाह के दरबार में उपस्थित हुआ। उन्हें खास शाही शातिर के घर ठहराने का हुक्म हुआ।

तीनों आदमी बैठक में बैठे आपस में सलाह-मशवरा कर रहे थे।

“अगर यह चाल सफल हो जाए, तो किला हाथ में आया समझो।” युवक शातिर ने कहा, तभी द्वार पर एक परछाईं देख कर वह चौंका। दरवाजे के बीचोंबीच एक वृद्ध सीना ताने खड़ा था।

“उस्ताद!” युवक आश्चर्य से चिल्लाया।

“अच्छा, तो तुम हो, जयवर्मा!” वृद्ध हसनअली ने भौंह चढ़ा कर कहा— “मैं भी तो कहूं कि यह अनूठी चालें कौन चल रहा है!”

युवक उसके पैर छूने के लिए आगे बढ़ा। वृद्ध ने कोई ढील दुरुस्त नहीं की। उसने शांत भाव से कहा, “बेटा, तुम्हारी यह अपनी चाल सफल नहीं होगी। बहादुरशाह का शाही हकीम और कोई नहीं खुद अलावा रहमतअली अत्तार है, जो हमारा नक्शर के साथ साथ हिंदुस्तान में वैद्यक का अध्ययन करने आये थे। निशानें कीमुइयां चुभोचुभो कर उसे जगह जगह से सुजा लेना, आंखों में चोटली घिस कर लगा लेना, भारतीय अपराधियों की बहुत पुरानी और गुप्त चालें हैं। तुम्हारे सभी संदेशवाहक पहचान लिये गये हैं। किले के अन्दर से तोड़फोड़ करने के लिए हुमांयू ने अपने सेना-नायकों को जानबूझ कर संदेशवाहकों के रूप में यहां भेजा है। अब आपलोग अपने को कैद समझें।”

पासा पलट चुका था, युवक जयवर्मा ने इसे भाम लिया और अब वह साधारण बातों पर आ गया “उस्ताद, आप बहादुरशाह के यहां कैसे?”

प्रसन्न मुद्रा से बूढ़े ने गर्दन हिलाते हुये कहा, “अब दिन फिर चुके हैं। खुद बहादुरशाह ने हमारा दामाद बनना कबूल किया है।”

जयवर्मा के हृदय पर जैसे घूंसा लगा हो। “लेकिन, उस्ताद, कहीं धोखा न खाना।”

“अब तुम से धोखा नहीं खाया, तो किसी से भी नहीं खाऊंगा,” वृद्ध ने व्यंग से कहा।

जयवर्मा तिलमिला गया। उसकी तिलमिलाहट में योग देते हुये बैठक की मजबूत ड्योढ़ी चरमरा कर तड़ाके के साथ बन्द हो गई।

धीरे-धीरे रात बीतती जा रही थी। बड़ी तल्लीनता से जयवर्मा घड़ियाल के घंटे सुन रहा था। अर्द्धरात्रि हुई और उनके वापस न लौटने की अवस्था में, हुमायूं के साथ निश्चित पूर्व योजना के अनुसार, सारा किला तोपों की गर्जना से हिल उठा। जयवर्मा खुशी के मारे साथियों के कंधे झिंझोड़ कर चिल्ला उठाः

“अहा, हमारी फौजों ने धावा बोल दिया है!” उसने आवेश में किवाड़ पीट डाले।

अकस्मात् आश्चर्य से तीनों व्यक्ति चिल्ला उठे। धक्के लगने से किवाड़ों की जोड़ी ऐसे खुल गई जैसे बन्द ही न हो। जयवर्मा ने कहा, “किसी ने गुप्त रीति से इसे बाहर से खोला है, सूचना देने का अवसर नहीं पा सका।” और उसे किसी की आंखों का स्मरण हो आया।

बाहर से जोरे का हल्ला सुनाई दे रहा था। हाथियों के मारे बहुसंख्यक हुए, किले के फाटक से लम्बी जंजीरों पर जोर आजमा रहे थे। चारों ओर चीख-चिल्लाहट मची थी।

तीनों व्यक्ति तेजी से महल की ओर दौड़े। अचानक जयवर्मा बीच राह में खड़ा हो गया। उसने अपने साथियों से कहा, “तुम लोग कैदखाने की ओर जाओ। होशियारी के साथ। बहादुरशाह पकड़े जाने के लिए किले में नहीं ठहरेगा। वह चोर रास्ते से भागेगा।

मैं इस किले के भूतपूर्व सूबेदार के साथ वह राह देख चुका हूं, मैं उसे रोकूंगा।"

समय खोने का अवसर नहीं था। वह तीव्र गति से दूसरी राह पर दौड़ गया।

(३)

बलपूर्वक एक लड़की को घसीटते बहादुरशाह और उसके तीन चार अनुचर गुप्त मार्ग तै कर रहे थे। सिरे पर पहुँच कर वह अचानक ठिठक गया। द्वार-रक्षक मुर्दा पड़ा था और उसकी कमर से चाबियों का गुच्छा गायब था। बंद पिंजरे में फंसे पक्षी की तरह सहम कर बहादुरशाह ने अपने अनुचरों की ओर देखा।

ऊपर के रोशनदान से एक हंसी की आवाज सुनाई पड़ी। उन्होंने ऊपर देखा। जयवर्मा चाबी उन्हें दिखा कर चिढ़ाते हुए कह रहा था "अब तुम लोग वापस लौट जाओ। हुमायूं की सेना मेहमान बन कर आ रही है और मेहमान कायरों की तरह भागे जा रहे हैं!"

तभी अचानक लड़की की बंद आंखें खुलीं और वह जयवर्मा की ओर देख कर चिल्ला उठी। जयवर्मा ने उन आंखों की ओर देखा और उसकी स्मृति का चक्र तेजी से पीछे की ओर घूम गया।

बहादुरशाह वह अवसर देख कर जोर से हंसा। 'अरे, लड़के, तू शायद इस लड़की को पहले से ही जानता है।' उसने अपने अनुचरों को आज्ञा दी, "इस लड़की के सीने से खंजर पार कर दो!"

लड़की चिल्लाई, 'हां, कर दो, मैं तेरे जैसे कायरों के साथ काला मुंह करने से कुत्ते की मौत पसंद करती हूं।"

जयवर्मा की ओर लक्ष्य कर के बहादुरशाह ने अब स्पष्ट रूप से कहा, "तुम चाबी फेंकते हो कि नहीं? अगर इस लड़की को बचाना चाहते हो, तो ---?

'होश की दवा करो। तुम्हारी जान खुद खतरे में है।"

"बहादुरशाह के मरने से भी यह लड़की जिन्दा नहीं हो सकती। क्या इसकी कम उम्री में यह मरजाने लायक है।" उसने लड़की की चोटी पकड़ कर उसका सुन्दर और सशंकित मुख ऊपर की ओर कर दिया।

जयवर्मा ने अब गम्भीर भाव से एक तरफ सोचा और बोला, 'अच्छी बात है। मैं चाबी धीरे धीरे नीचे उतार रहा हूं। तुम इस लड़की को उस पिछले द्वार के पार पहुंचा कर वापस आओ, ताकि वह उसे अन्दर से बन्द कर ले।" उसने चाबी को एक लंबी डोरी से बांध कर नीचे लटकाना आरम्भ किया।

बहादुरशाह ने स्त्री और प्राणों के बीच प्राणों को चुना और उसने अपने अनुचरों को जयवर्मा के कथन के अनुसार कार्य करने की आज्ञा दी।

धीरे धीरे डोर की ओर देखते हुए अनुचर पिछले द्वार की ओर लड़की को लेकर चले और जयवर्मा की डोरी में बंधी गुप्त द्वार की चाबी उसी गति से नीचे उतरती रही। जयवर्मा ने चेतावनी दी, "ध्यान रखना, अगर जरा भी धोखा हुआ, तो जितना आहिस्ता से चाबी नीचे आ रही है, उतनी ही तेजी से ऊपर आ जाएगी।'

अनुचर किया किया और देखे आगे बढ़ते गए और उन्होंने धक्का दे कर लड़की को द्वार के पार ढकेल दिया।

तभी बहादुरशाह चिल्लाया। "धक आया! वापस ले आओ! चाबी मिल गई!!"

उसी वक्त पिछला द्वार दोनों अनुचरों के शीघ्रता में आगे बढ़े मस्तकों को चोट देकर खटाक् से बन्द हो गया। ऊपर से जयवर्मा की हंसी बहादुरशाह को सुन पड़ी।

जिस समय सबके गुप्त मार्ग से दोनों जन एक अविस्मरणीय स्वप्न सजाते बाहर निकले, उनके सामने बाधा सवार खड़ा थी।

द्वार के पास खड़ा बूढ़ा हसन अली रोष के साथ चिल्लाया, करीना! जयवर्मा!'

चौंकते बने दोनों व्यक्ति खड़े के खड़े रह गए। हसनअली ने कहा, "करीना तुम्हारा मैं केवल उस व्यक्ति के पास जा सकती है जो पहले हसनअली को फतह कर ले।" उसने क्रोध से कांपते हुए हाथ से तलवार खींच ली।

जयवर्मा ने कागज का एक पुर्जा अपनी मिरजई की जेब से बाहर निकालते हुए कहा, 'ठहरो उस्ताद, अभी तुम्हारी और हमारी एक बाजी अधूरी है, पहले उसे पूरी हो जाने दो।" उसने कागज का पुर्जा उसके सामने करके खोल दिया। वह वह नक्शा था जिसकी एक नकल इस समय भी बूढ़े के कपड़ों में सुरक्षित थी। वह उसे देख कर चौंका।

उसने तलवार म्यान में रख दी और सर्वतोभावेन सावधान के सन्निकट से दृष्टि निकाली और कहा, 'अच्छा!"

कालीन पर अब भी सोने के कोने के मीनाकारी वाली मोहरें बिसात पर सजे थे। दोनों सिपाही आमने सामने डट गए और करीना द्वार पर खड़ी रही।

एक दो चाल के बाद बूढ़े को फिर खतरा करके सुराही से पानी पीने के लिए उठा। पानी ले फेरा चोटी का निकाला शुरू कर कर उसने कहना शुरू किया- "अब उस्ताद के दिन फिर गए हैं! फिर वैसे ही शाही कालीनों पर मसनद के सहारे उठंग कर शतरंज बिछ रही है! चारों तरफ प्यादापलटन दौड़ती फिर रही है! और तोपों की सलामियां दग रही हैं!!"

इस पर भी बूढ़े का ध्यान बटता न देख युवक ने करीना को इशारा किया और दोनों चुपके से खिसक गए।

किले का फाटक चरमरा कर टूट गया और हुमायूं की विजयी सेना मारे धमकी हुई अन्दर घुस पड़ी।

दोनों ओर करीना और जयवर्मा को लिए बहुत देर बाद हुमायूं ने किले के महल में प्रवेश किया। वह खुश होकर अपनी विजित वस्तुओं की शान निरखता परखता शतरंजखाने में आया और ठिठक कर खड़ा हो गया।

सामने ही मसनद का सहारा लिए कालीन के ऊपर रखी चौकी पर बिछी बिसात पर मोहरे जमे थे और बूढ़ा उस्ताद हसनअली चिंतित मुद्रा से आंखें बिसात पर जमाए, हथेली पर ठोढ़ी रखे निश्चल मुद्रा में ज्यों का त्यों बैठा था।

शतरंज के इस अद्भुत शौकीन को देख कर हुमायूं ने उसे पहचानने की चेष्टा की और जिज्ञासा से जयवर्मा की ओर देखा।

हंस कर जयवर्मा ने परिचय दिया। '[ग]दे सुल्तानी मरहूम" के दरबार के मशहूर शतरंजी शातिर, उस्ताद हसनअली।" उसने उस्ताद की ओर मुंह कर के उसी मुद्रा से कहा, "अब खतम भी करो, उस्ताद, यह जिंदगी खुद एक खेल है और इसमें हार जीत होती ही रहती है।"

करीना ने उसका कंधा पकड़ कर हिलाया और वह चीख उठी।

बूढ़ा शातिर आंखें फाड़े इस प्रकार लुढ़क गया जैसे निर्जीव मिट्टी का बुत हो। उसके प्राण पखेरू उड़ चुके थे।

बाल बन्धु परिषद्

बुद्धिमती स्त्री

किसी समय एक सेठ जी कलकत्ते में निवास करते थे। उनके घर में केवल चार ही प्राणी थे। उनकी स्त्री, उनका छोटा लड़का, उनकी माँ तथा वह स्वयं। चार चोर उनको लूटना चाहते थे। उन चोरों का सरदार अपने तीनों साथियों को तीन बड़ी-बड़ी बोरियों में बन्द करके उस धनी सेठ के मकान पर आया। उन चोरों के सरदार ने उस धनी सेठ से कहा कि आप मेरी यह अनाज की बोरियां अपने मकान में रात्रि भर के लिए रख लीजिये। प्रातःकाल मैं इन बोरियों को ले जाऊंगा। सन्ध्या का समय था। सेठ जी भोले-भाले थे। उन्होंने अपने सोने वाले कमरे में उनको रखवा दिया। किसी कारण से सेठ जी रात्रि की गाड़ी से परदेश चले गये। सेठानी जी बहुत चतुर थीं। सेठानी जी अपने घर का कार्य समाप्त कर अपने सोने वाले कमरे में चली गयीं।

रात के ११ बज चुके थे। सेठानी जी का लड़का रो रहा था। वह चुप कराने के लिये उठी ही थीं कि उन्होंने देखा कि तीनों बोरियां हिल-डुल रही हैं। उन्हें कुछ संदेह हुआ। उन्होंने चाकू से अपने लड़के की चिकोटी काटना आरम्भ किया। लड़का चिल्ला रहा था। उन्होंने लड़के से कहा — तुमको प्यास लगी है, इसलिये अभी पानी लाती हूं। ऐसा कह कर पानी लाने के बहाने अपनी सास के पास बच्चे को लिटा कर कुछ कान में कह कर अपने पड़ोस वालों के घर चली गयी। सास ने भी चिकोटी काटना तब तक बन्द न किया जब तक सेठानी जी न आ गईं। सेठानी जी ने अपने पड़ोस वालों से सब हाल कहा। यह सुन कर उनके पड़ोस वाले डंडा ले कर आये। उन्होंने बोरियों को खोल डाला। बोरियों में से तीन बड़े-बड़े चोर निकले और छुरा, चाकू, बन्दूक आदि खतरनाक वस्तुएं निकलीं। उन चोरों को पुलिस के हवाले कर दिया गया। इस प्रकार सेठानी जी ने अपने घर के व्यक्तियों के प्राण बचाये।

—श्री नारायण

मानव शरीर का असली मूल्य

जल-थल-नभ पर अपना अधिकार जमाने वाले और भूमंडल के सभी प्राणियों में श्रेष्ठ समझे जाने वाले मनुष्य की कीमत शारीरिक रूप से जब हम देख समझ पाते हैं, तो आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहता। एक वैज्ञानिक ने मानव शरीर के तत्वों का विश्लेषण कर बताया कि यदि ये तत्व बनाये जाएं, तो कुछ रुपये से अधिक न होंगे।

उसने बताया कि (क) मनुष्य के शरीर में जितना लोहा है, उससे सिर्फ एक जूते की कील बन सकती है।

(ख) मानव-शरीर की शक्कर से एक टुकड़ा चाय बन सकती है।

(ग) गन्धक से सिर्फ एक कुत्ते के पिल्ले की जुएं ठीक हो सकती हैं।

(घ) मनुष्य के शरीर के पानी से केवल किसी फर्श पर से धूल का दाग धोया जा सकता है।

(ङ) फास्फोरस से कुल एक दर्जन दियासलाइयां तैयार हो सकती हैं।

(च) क्षार से सिर्फ एक बर्तन के दाग छूट सकते हैं।

(छ) चर्बी से अधिक से अधिक एक बड़ी साबुन बनाया जा सकता है।

प्यारा मुन्नू

मुन्नू हमारा बहुत दुलारा।
नटखट लड़कों से रहता न्यारा॥
पढ़ने को जाता नित आता।
वहां उसका जी बहुत चाहता॥
सुबह उठ कर पढ़ने को जाता।
फिर शाम में थी घर को आता॥
यह है, उसका दैनिक काम।
बच्चो तुम भी करो मुन्नू के से काम॥

—नगेन्द्र कुमार सिकाका

★

सिक्का गिनने वाली मशीन

अमेरिका में एक ऐसी मशीन बनाई गई है जो एक मिनट में १००० सिक्कों को गिन देती है, कागज में लपेट देती है और अलग-अलग सिक्कों को अलग-अलग बक्सों में रख देती है। बैंक, यातायात कम्पनियां तथा टेलीफोन कम्पनियां जिनके पास विभिन्न मूल्यों के अनेकों सिक्के प्रतिदिन आते हैं इस मशीन का प्रयोग करेंगी।

किसी भी मूल्य के २५००० तक सिक्के एक खुले बक्स में रख दिये जाते हैं जो मशीन की गिनती करने वाले भाग तक उन्हें ले जाता है। मशीन का यह भाग जितने चाहें उतने सिक्के आप ही आप गिनता है जो बाद में कागज की गड्डियों में लपेट दिये जाते हैं ये सिक्कों की गड्डियां मशीन में एक ऐसे स्थान पर जाती हैं जहां इनकी जांच की जाती है ये अच्छी तरह लपेटी गई हैं या नहीं और खराबी होने पर ये आप ही आप निकाल बाहर की जाती हैं।

४ फुट चौड़ी, ७ फुट लम्बी और २ फुट ऊंची यह मशीन शिकागो की ब्रौन्सन केवर ब्रौक्स कम्पनी ने तैयार की है।

★

भारती और अमेरिकी बालकों में उपहार विनिमय

अमेरिका बालकों ने एक "उपहार मंजूषा" भारतीय बालकों के लिए। एक दूसरे देश के बालकों में पारस्परिक जानकारी बढ़ाने के उद्देश्य से, हवाई जहाज द्वारा बम्बई भेजी है। इस "उपहार मंजूषा" में अनेकों हाथ से गुड़ियां, खेल, स्वेटर तथा अन्य उपहार वस्तुएं हैं।

भारत के अतिरिक्त ये "उपहार मंजूषा" काहिरा "पेरिस" लन्दन, जेनीवा फ्रैंकफर्ट, रोम और एथेन्स में भी भेजे गये हैं। इन स्थानों में इन मंजूषाओं के उपहार उद्दीन बालकों को, जो उनके नये "दोस्ती साथी" (पेन पेल) हो जायेंगे, बांट दिए जाएंगे और ये बालक इस के बदले में इन मंजूषाओं को अमेरिकी बालकों के लिए उपहार वस्तुओं से भर कर अमेरिका भेज देंगे।

★

जरा हंसिये!

मास्टर—केस तीन प्रकार के होते हैं, नोमिनेटिव केस, आब्जैक्टिव केस और पजेस्सिव केस।

एक लड़का—मास्टर साहब, मेरे एक केस और है।

मास्टर—वह क्या?

लड़का—होपलेस केस।

—[illegible]

× × ×

राम—(फोटोग्राफर से) क्या मेरा फोटो तैयार हो गया?

फोटोग्राफर—अभी तो उसे धोया भी नहीं है।

राम—(आश्चर्य से) क्या मैला हो गया है।

× × ×

एक सेठ था। उसने अपने नौकर को एक रुपया दिया और कहा— इस रुपये का चावल लाओ। दूसरा रुपया देते हुए कहा— इस रुपये का गेहूं लाओ। थोड़ी ही देर में नौकर वापस लौटा और बोला— सेठ जी, आपने कौन-सा रुपया गेहूं को दिया था और कौन-सा चावल के लिए।

—ललित कुमार दीक्षित

× × ×

शिक्षक— क्यों मोहन, गणित में तुम्हारे कितने नम्बर आये।

मोहन—जी, नौ नम्बर।

शिक्षक—अरे! ये तो बहुत कम नम्बर हैं। तुम्हें तो अब कठिन मेहनत करनी चाहिये।

मोहन—नहीं साहब! मैं तो संतोषी हूं।

× × ×

एक दिन वर्षा हो रही थी और बादल घिरे थे। घरों में अंधेरा हो गया। मोहन अपने कंजूस पिता को दुकान पर गया और कहा — 'मुझे एक पैसा मोमबत्ती लाने को दो।'

पिता—अबे, दिन में दिया जलायेगा। जा किताब खोल कर बैठ।

मोहन—घर में अंधेरा है।

पिता—तो छत पर जा बैठ।

मोहन—जी! छत पर मेह बरस रहा है।

पिता—अबे, तो छाता लेके बैठ।

—[illegible]

× × ×

बाबू—डाक्टर लोग मुंह से सांस लेने को क्यों मना करते हैं।

मोहन—कहीं मच्छर दांतों में जाकर मर जाय और दांत टूट जायं तो?

× × ×

मास्टर—संसार में बड़े आदमी बहुत कम होते हैं।

विद्यार्थी—मेरे घर में तो सब बड़े ही बड़े हैं, केवल मैं ही छोटा हूं।

—नगेन्द्र कुमार

[पृष्ठ ४ का शेष]

मुस्लिम बने हिन्दुओं पर अत्याचार

अपनी संपत्ति की सुरक्षा के लिए जिन हिन्दुओं ने इस्लाम स्वीकार कर लिया था उनका जीवन भी सुखी नहीं है, यह अभी हाल में पाकिस्तान से कुछ इसी प्रकार के व्यक्तियों ने भारत आ कर बताया है। अमृतसर में आये हुए एक दल का कथन है कि पाकिस्तान बनते समय उन्होंने अपनी संपत्ति की सुरक्षा के लिए सपरिवार इस्लाम स्वीकार कर लिया था, तो भी उनकी जमीन तथा मकान उन से छीन लिए गये, और उनके सम्मान पर भी चोट की गई। उनकी सम्पत्ति भारत से पहुंचे हुए मुसलमानों को दे दी गई। असहायावस्था में वे इतने दिन तक किसी प्रकार समय बिताते रहे। अन्त में अन्य कोई चारा न देख कर पुनः भारत की शरण आये हैं।

× × ×

पाकिस्तान में श्री जोगेन्द्रनाथ मण्डल के विरुद्ध घोर प्रचार किया जा रहा है। 'डान' तथा अन्य पत्रों ने उसके विरुद्ध लेख लिखे हैं। हिन्दुओं, विशेषकर अछूतों को, दबाया जा रहा है कि वे मण्डल के विरुद्ध प्रस्ताव पास करें। ऐसा ही एक उदाहरण पूर्व बंगीय अस्पृश्य संघ द्वारा श्री मण्डल के विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही किया जाना है। श्री मण्डल उक्त संघ के अध्यक्ष थे। सरकारी दबाव में उक्त संघ की कार्यकारिणी ने श्री मण्डल को न केवल अध्यक्षपद से हटा दिया है अपितु उन्हें साधारण सदस्यता से भी वंचित कर दिया है। उनके स्थान पर उन्हें श्री करोरी को अध्यक्ष स्वीकार करना पड़ा है। श्री करोरी की अध्यक्षता में श्री मण्डल के विरुद्ध एक प्रस्ताव भी स्वीकार किया गया है जिसमें उनके किये कार्य को तथा "अस्पृश्य संघ के विचार तथा भावनाओं के पूर्णतः विरुद्ध भाव" प्रदर्शित करने की निन्दा की गई है।

× × ×

अपने हाल ही के दौरे में श्री लियाकतअली खां ने यह स्पष्ट कर दिया है कि वे पाकिस्तान में अन्य राजनीतिक दलों की स्थिति को सहन नहीं करेंगे। पाकिस्तान सरकार तथा मुस्लिम लीग के सर्वेसर्वा ने अपने स्यालकोट के भाषण में कहा बताया जाता है, "लीग के विरोध में नया दल खड़ा करने के प्रयत्न असफल होंगे। इस प्रकार के प्रयत्न से जनता के कष्ट और बढ़ेंगे।"

श्री लियाकत ने कहा, "यदि मुस्लिम लीग को कमजोर नहीं बनाया गया और अन्यान्य दलों को बढ़ने से तुरन्त नहीं रोका गया तो मैं आप को विश्वास दिलाता हूं कि पाकिस्तान को हमने इतने कष्ट से प्राप्त किया है वह नहीं रहेगा।"

—o—

दीपक

श्री विष्णुदत्त अग्निहोत्री

जलता दीप देख कर जग-जग, शलभ झूमते आते!

राग-रंग मय वसुधा है यह, रूपसुधा दीवानी!
यहां तिमिर को किरण खोजती है, पत्थर को पानी!!
शरद-चांद के रश्मि-पंख को, जलद चूमते आते!
जलता दीप देख कर जग-जग, शलभ झूमते आते!!

कहीं लताओं के आंचल को, पवन खींच छिप जाता!
कहीं सुमन के साथ विजन में, वन में जा इठलाता!!
कलियों की अंजलुओं आंख जब, अलि-दल बलि-बलि जाते!
जलता दीप देख कर जग-जग, शलभ झूमते आते!!

सौदामिनि के लिए बादलों का, लगता है मेला!
यहां रूप का मधुर हिमालय, गलता नहीं अकेला!!
लहरों का मन भरने, जीवन के युग-तट बह जाते!
जलता दीप देख कर जग-जग, शलभ झूमते आते!!

नया नहीं, आश्चर्य भी न कुछ, यदि मैं आ जाता हूं!
मोतों का उपहार, तुम्हारे द्वार चढ़ा जाता हूं!!
पथ परिचित, पग ढीठ, आज अन्यत्र नहीं वे जाते!
जलता दीप देख कर जग-जग, शलभ झूमते आते!!

★

युग के अन्त में भारत

(पृष्ठ ७ का शेष)

दें तो हम कह सकते हैं कि भारत के लगभग तीन चौथाई भाग में एक ऐसी मिश्रित संस्कृति बन चुकी थी, जिसमें हिन्दुओं और मुसलमानों का समान भाग हो गया था। उस मिश्रण की प्रक्रिया के चक्कर में आकर मुसलमान अपने चरित्र की कठोरता को खो चुके थे, और हिन्दू अपने रहन-सहन की विशुद्धता से हिल चुके थे, मुसलमान पीरों को पूजने लगे थे, और हिन्दुओं में कठोर पर्दा-पद्धति जारी हो गई थी। उत्तर में मुगलकालीन उर्दू संस्कृति का उज्ज्वलतम रूप लखनऊ और दिल्ली में पाया जाता था। उस रूप में न तो हिन्दूकुश पर्वत को पार करके भारत को विजय करने वाले मुसलमान आक्रान्ताओं की कठोरता शेष थी, और न सत्य और धर्म को प्राणों से अधिक मानने वाले हिन्दुओं की धर्मनिष्ठा के चिन्ह थे। दिखावे और शिष्टाचार में अत्यन्त परिष्कृत परन्तु अन्दर से जर्जरता पूर्ण वह ऐसी संस्कृति थी, जिसके शायद दोनों ही धर्मों के उत्कृष्ट अंश निकल गये थे, और शेष रह गया था खोखला दिखावा, जिसके भरोसे पर कोई जाति चिरकाल तक खड़ी नहीं रह सकती।

भारतवासी ऐसी दोगली संस्कृति के प्रभाव में आ चुके थे, जब पश्चिम के सुशिक्षित, कठोर और कुशल आक्रान्ताओं से उनका वास्ता पड़ा। दोगली संस्कृति को निर्बल होकर पाश्चात्य संस्कृति के जोरदार धक्कों को देर तक न सह सकी और एक-एक कर के भारत के सब प्रदेश पश्चिम की सेनाओं और विचारों के सामने तब तक झुकते गये, जबतक फिर से विशुद्ध भारतीय संस्कृति ने अपना सिर नहीं उठाया।

यह लेखमाला यहां समाप्त की जाती है। पश्चिम के आक्रमण को सुगम सफलता क्यों प्राप्त हुई, उसके सारे देश पर व्याप्त हो जाने के पश्चात् सांस्कृतिक प्रतिक्रिया कैसे उत्पन्न हुई, और अन्त में उसी प्रतिक्रिया ने किस प्रकार अंग्रेजों के आकस्मिक[illegible] रहने की लालसा रखने वाले साम्राज्य को उखाड़ कर फेंक दिया, यह कहानी बहुत मनोरंजक है। उसे कालान्तर में सुनायेंगे।

— —

चित्रलोक

पाकिस्तान मे 'दहेज' पर रोक

पाकिस्तान सरकार ने देश भर में श्री शान्ताराम के 'दहेज' फिल्म के प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। लाहौर के दैनिक 'इमरोज' के अनुसार, यह प्रतिबन्ध इस फिल्म में पृथ्वीराज के होने के कारण लगाया गया है, जिसने उक्त पत्र के कथनानुसार, रंगमंच पर खेले जाने वाले अपने नाटक 'दीवार' में कायदे आजम पार्ट का किया है।

मधुबाला की कीमत

एक समय था जब निर्देशक मोहन सिन्हा ने मधुबाला को दस रुपये दैनिक पर एकस्ट्रा के रूप में अपने चित्रों में अभिनय करने के लिये नौकर रखा था, किन्तु अब उन्हीं मोहन सिन्हा के दामाद अकबर के मधुबाला के पिता अताउल्ला खां के पास आने पर उनके चित्र में अभिनय करने के लिए डेढ़ लाख रुपये की मांग की गई। 'महल' के निर्माण के बाद मधुबाला के अभिनय की कीमत निरन्तर चढ़ती आ रही है।

सुरैया को २ लाख का नोटिस

आज कल बम्बई इन्कमटैक्स विभाग अभिनेता अभिनेत्रियों की आय पर विशेष रूप से निगरानी रख रहा है। सुरैया को हाल में ४२११४ रु० सन् १९५०-५१ के इन्कमटैक्स के पेटे में जमा कर देने के लिए नोटिस दिया गया है।

राष्ट्रपति द्वारा अश्लील फिल्मों की निन्दा

भारत में इन दिनों अधिकतर वासना युक्त फिल्मों का निर्माण हो रहा है। राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने हाल में एक भाषण देते हुए कहा कि यदि मेरा बस चले तो मैं समाज का अहित करने वाले सभी अश्लील फिल्मों का निर्माण और प्रदर्शन रोक दूं। क्या सेन्सरबोर्ड फिल्में पास करते समय अपने राष्ट्रपति के विचारों का ख्याल रखेगा?

अभिनेत्री प्रदर्शक बनी

जैमिनी के सुप्रसिद्ध 'चन्द्रलेखा' की नायिका टी० राजकुमारी ने मद्रासी फिल्मों के अभिनय के साथ साथ फिल्म प्रदर्शन का कार्य भी आरम्भ कर दिया है। उसने स्थान रामनगर में एक सिनेमा घर खोला है और उसका नाम भी अपने नाम पर 'राजकुमारी' रखा है।

नितिन का 'मशाल'

अशोक कुमार द्वारा बम्बई टाकीज के स्टुडियो में निर्मित 'मशाल' सम्भवतः इस वर्ष का सर्वश्रेष्ठ चित्र है। इस चित्र का निर्देशन न्यू थियेटर्स के प्रसिद्ध श्री नितिन बोस ने किया है। कहानी बंकिम बाबू के 'रजनी' उपन्यास के आधार पर है। सम्वाद न्यू थियेटर्स के अनेक चित्रों के सम्वाद-लेखक और हिन्दी कहानी कार प० सुदर्शन ने और गीत 'चल चल रे नौजवान' के गीतों के अमर लेखक प्रदीप ने लिखे हैं। अशोक कुमार के लिए यह पहला अवसर है जब कि उसने एक बंगाल मित्र (मशाल के बंगला में रूपान्तर का नाम 'समर' है) में काम किया है।

वनमाला का पति को तलाक

सिकन्दर की ख्याति-प्राप्त अभिनेत्री वनमाला ने एम० ए० बी० टी० ने अपने पति सावन्त को तलाक दे दिया है और बम्बई हाईकोर्ट ने उसकी तलाक की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया है।

किशोरसाहू की 'काली घटा'

उत्कृष्ट मनोरंजक और निकृष्ट 'सिन्दूर' के निर्माता किशोर साहू इन दिनों अपने प्रतिष्ठा-चित्र 'काली घटा' की शूटिंग के लिए अजन्ता और एलोरा गये हुए हैं। काली घटा में श्री साहू एक नया प्रयुक्त तारिका को प्रस्तुत कर रहे हैं और उनका दावा है कि यह उनका अब तक का सर्वश्रेष्ठ चित्र होगा। श्री भरत व्यास के गीतों और श्याम बाबू के संगीत का सहयोग भी साहू को इस चित्र में प्राप्त है।

ANKHEN

[illegible]

नकल असल हो गई

स्पेन में नैपोलियन कालीन एक कहानी के आधार पर फिल्म तैयार करने में स्पेनिश कम्पनी को न केवल १० लाख पौण्ड ही व्यय करने पड़े हैं उसमें लड़ाई के दृश्यों को चित्रित करते समय अपने १५ कर्मचारियों से भी हाथ धोना पड़ा है। कहा जाता है कि फिल्म के एक दृश्य में जब नैपोलियन के २०,००० कल्पित व्यक्तियों ने एक दुर्ग की रक्षा करने वाले २००० सैनिकों पर आक्रमण किया, तो नाटक ने असली लड़ाई का रूप धारण कर लिया और फलतः अश्रु गैस तक का प्रयोग करना पड़ा। इस तीन घण्टे की लड़ाई में १५ व्यक्ति मार गये। २६ सख्त घायल हुए और ८१ को मामूली चोटें आयीं।

अंग्रेज़ी नाटक कम्पनी की भारत यात्रा

नवम्बर के प्रारम्भ में एक अंग्रेज़ी नाटक कम्पनी 'ब्रिटिश कौंसिल' की देखरेख में भारत आने वाली है। यह दिल्ली आगरा, इलाहाबाद, लखनऊ, कानपुर, बम्बई, पूना, मद्रास कलकत्ता और नागपुर इत्यादि बड़े शहरों की यात्रा में तीन महीने लगायेगी। कम्पनी सुप्रसिद्ध इंग्लिश निर्माता श्री० मार्कन मालव के निजी निर्देशन में रहेगी। इसमें वेस्ट एन्ड के लोकप्रिय अभिनेता रखे गये हैं जिनमें से एक हैं हाल के एडिनबरो समारोह में भाग लेने वाले श्री० वाल्टर फिट्जजेराल्ड। कम्पनी के व्यवसाय मैनेजर श्री० डगलस मारिस पहले ही भारत पहुंच गये हैं। नाटक कम्पनी अपने भ्रमण काल में पूरी सजधज के साथ शेक्सपियर लिखित कुछेक दृश्य प्रस्तुत करेगी। आशा है कि प्रकाश का प्रबन्ध तथा दृश्यों का प्रदर्शन इस यात्रा की विशेषतायें होंगी। यह कम्पनी अपने बिजली कारीगरों और रंगमंच का बिजली सम्बन्धी सामान साथ में ला रही है। भारत की यात्रा समाप्त होने पर यह पाकिस्तान का भ्रमण करेगी।

देश विदेश का घटना चक्र

तिब्बत

तिब्बत पर हुए चीनी आक्रमण के सम्बन्ध में भारत द्वारा चीन को भेजे गये पत्र का उत्तर नयी दिल्ली में प्राप्त हो गया। विदेश विभाग के एक प्रवक्ता ने बताया है कि भारत सरकार चीन के उत्तर से किञ्चित भी संतुष्ट नहीं है। चीन सरकार का कथन है कि तिब्बत का मामला उसका घरेलू मामला है और उसमें वह किसी भी बाहरी देश का हस्तक्षेप सहने को तैयार नहीं। उस के अनुसार तिब्बत में साम्राज्यवादी शक्तियां अपना प्रभाव फैला रही हैं। उनके प्रभाव को नष्ट करके चीन की सीमाओं को सुदृढ़ करने के लिए ही यह कदम उठाया गया है।

चीन की आधुनिक ढंग पर सुसज्जित सेनाओं का सामना करने का सामर्थ्य तिब्बत में नहीं है। तिब्बत का सम्पूर्ण प्रदेश पर्वतीय तथा हिमाच्छादित रहने के कारण वहां पहुँचने के मार्ग भी [illegible] हुये हैं। तिब्बत अपने शासन में [illegible] रहा है। इस आक्रमण के पूर्व [illegible] साम्यवादी सरकार ने अनेक बार भारत सरकार को यह आश्वासन दिया था कि वह तिब्बत के प्रश्न को शांतिपूर्ण [illegible] से सुलझायेगी। किन्तु [illegible] चीन की [illegible] [illegible] [illegible] साम्यवादी सेनायें तिब्बत की सीमा को पार कर तिब्बत की भूमि पर बढ़ रही हैं।

तिब्बत पर हुए आक्रमण से भारत में [illegible] गई है। तिब्बत में स्थित भारतीय सुरक्षा चौकियों को नष्ट बनाया जा रहा है। प्राप्त हुए उत्तर से भारत सरकार बिलकुल भी संतुष्ट नहीं है। पुनः एक विरोध पत्र भेजा जा रहा है। अनुमान किया जाता है कि यदि चीन सरकार ने अपने कदम में परिवर्तन नहीं किया तो भारत को चीन सम्बन्धी अपनी संपूर्ण नीति बदलनी पड़ेगी और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में साम्यवादी चीन को दिये जा रहे समस्त समर्थन को वापिस ले लिया जायगा।

कोरिया

कोरिया में हारते हुए साम्यवादियों ने पुनः कड़ा प्रतिरोध प्रारम्भकर दिया है। प्रत्याक्रमण भी कहीं कहीं पर हुये हैं। सभी मोर्चों पर बढ़ती हुई राष्ट्र संघीय सेनाओं की गति को रोकने अथवा [illegible] करने में वे समर्थ हुए हैं। मंचूरिया की सीमा तक पहुंचने वाली दक्षिण कोरियाई सेना को उन्होंने गम्भीर क्षति [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

समाचार प्राप्त हुआ है कि कोरिया में साम्यवादी चीनी सेनायें उत्तर कोरियाई सेनाओं के साथ लड़ रही हैं। अनधिकृत सूत्रों से समाचार मिले हैं कि चीनी टैंकों तथा सेनाओं ने यालू नदी को पार कर लिया है। उत्तरी कोरिया के रेडियो ने घोषणा की है कि मंचूरिया में चीनी सेनायें तैयार खड़ी हैं। वे कोरिया स्थित यालू नदी पर बने हाइड्रो एलेक्ट्रिक स्टेशन की रक्षा के लिये तत्पर हैं जिसकी बिजली से मंचूरिया के कारखाने चलते हैं।

० १०० २००
मील
मंचूरिआ
कोरिआ
रूस अधिकृत
अमरीका अधिकृत
पीला सागर
सीओल
क्योजो
सीशिन
किल्जू
कोञ्जाम
जोको
गेन्सान
कान्सान
सम्तयोकू
पोहान
फूसन
मौकपो
त्सुशिमा
क्वैलपार्ट

टोकियो से भी इस प्रकार के समाचारों की पुष्टि हुई है। अमरीकन अधिकारियों का कथन है कि चीनी साम्यवादी सैनिक युद्ध में बन्दी बनाये गये हैं और उन से प्रश्न किये जाते हैं। जेट वायुयानों का संसार का प्रथम युद्ध कोरिया में हुआ जब कि राष्ट्र संघीय सेनाओं की प्रगति को रोकने के लिये साम्यवादियों ने जेट वायुयानों का प्रयोग किया।

चीनी समाचार [illegible] द्वारा प्रसारित समाचार से भी ज्ञात हुआ है कि चीनी सरकारी अधिकारियों ने इस प्रकार दृढ़ विचार प्रकट किये हैं कि कोरिया में अपने पड़ोसियों पर हुए अमरीकी आक्रमण को चीन चुपचाप नहीं देख सकता। हाल के समाचार यह भी बताते हैं कि कोरिया युद्ध में साम्यवादियों की ओर से [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है।

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] कोरिया युद्ध में साम्यवादी चीन की सेनायें लड़ रही हैं तो कोरिया युद्ध के विश्व युद्ध बन जाने की संभावना पुनः बढ़ जायगी।

त्रिग्वे ली

राष्ट्र संघ के महामंत्री पद के लिए चल रहे झगड़े पर किसी प्रकार का समझौता न हो पाने के कारण अन्तमें जनरल असेम्बली ने अमरीकी प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। इसके अनुसार श्री त्रिग्वेली के कार्यकाल की अवधि तीन वर्ष के लिये बढ़ा दी गई है। मतों की संख्या ४६ प्रस्ताव के पक्ष में तथा ५ विरुद्ध थी। सात देशों ने मत नहीं दिया।

रूसी प्रतिनिधि ने प्रस्ताव का विरोध करते हुए उसे गैर कानूनी घोषित किया और एक प्रस्ताव उपस्थित किया कि जनरल असेम्बली में यह प्रस्ताव उपस्थित ही नहीं किया जा सकता। किन्तु उसका यह प्रस्ताव जनरल असेम्बली के द्वारा भारी बहुमत से अस्वीकृत कर दिया गया। ली के कार्यकाल की पुनर्वृद्धि के प्रस्ताव का विरोध करने वाले पांचों देश रूसी गुट के थे।

भारत में चुनाव

चुनाव कमिश्नरों के सम्मुख भाषण करते हुए भारत के प्रधानमंत्री पं० नेहरू ने चुनाव के लिये अन्तिम रेखा खींचने का प्रयत्न किया। उन्होंने कहा बताया जाता है कि आगामी वर्ष होने वाले चुनाव मई १९५१ तक समाप्त हो जाने चाहिए उनका कथन था कि इससे अधिक देरी तक चुनाव रोके नहीं जा सकते। [illegible] भारत में [illegible] [illegible] [illegible] सरकारें अधिक समय तक नहीं चलाई जा सकती।

यह भी ज्ञात हुआ है कि आगामी चुनाव अप्रैल १९५० में प्रारम्भ हो जायेंगे और लगभग तीन सप्ताह में समाप्त होंगे। विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न समय पर चुनाव प्रारम्भ नहीं होंगे। एक ही साथ सारे देश में चुनाव करा पाना सम्भव नहीं दिखाई देता। भारत में वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनाव होने का यह सर्व प्रथम अवसर है। इसमें लगभग १८ करोड़ व्यक्ति भाग लेंगे।

काश्मीर के प्रधान शेख अब्दुल्ला ने घोषित किया है कि वे काश्मीर राज्य की संविधान परिषद् बुलाने की तैयारी कर रहे हैं। हाल ही में भारत के प्रधान मंत्री पं नेहरू ने भी काश्मीर का दौरा किया है।

सचित्र **वीर अर्जुन** साप्ताहिक

दिल्ली रविवार, ११ मार्गशीर्ष सम्वत २००७
26th November, 1950
मूल्य चार आना

साप्ताहिक

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार ११ मार्गशीर्ष सम्वत् २००७ [अङ्क ३२

नाटक का अंत

नेपाली कांग्रेस द्वारा नेपाल की भूमि पर चलाये गये युद्ध की समाप्ति वीरगंज के पतन के साथ ही हो गयी ऐसा पर्यवेक्षकों का मत है। राणा की सशस्त्र सेनाओं ने कांग्रेसी सेनाओं को वीरगंज से ही नहीं नेपाल की भूमि से भी खदेड़ दिया भारतीय अधिकारी रक्सौल के पार सिरिसिया नदी पर स्थित पुल पर नेपाली सेना के तीन कम्पनियों से भेंट कर आये। पुल के पार लौह आवरण डाल दिया गया है।

यद्यपि नेपाल राज्य के अन्य क्षेत्रों में अभी भी कुछ स्थानों पर नेपाली कांग्रेस सेनाओं का अधिकार है और उन क्षेत्रों में गतिविधि भी कुछ थोड़ी बहुत हो रही है किन्तु वीरगंज के पतन के पश्चात् नेपाली कांग्रेस की सैनिक शक्ति टूट गई है, और नेपाल के शेष भागों में उन्हें उखाड़ फेंकना कुछ अधिक कठिन कार्य नहीं रहा।

आज यदि नेपाल में घटी गत कुछ दिवसों की घटनाओं को देखा जाय तो यह गंभीर शंका होती है कि क्या नेपाली कांग्रेस के पास यथार्थ में कोई सैनिक शक्ति थी। विचार करने पर दिखाई देगा कि उसके पास इस प्रकार की कोई शक्ति नहीं थी, और यदि थी भी तो राणा सरकार की शक्ति से उसकी कोई तुलना नहीं। रक्सौल से काठमांडू के मार्ग पर नेपाल के दूसरे सबसे बड़े नगर वीरगंज के प्रथम और अन्तिम युद्ध में ही कांग्रेसी शक्ति टूट गई।

नेपाल से परिचित लोगों का कथन है कि वहां की जनता में राजनीतिक जागृति बहुत ही कम है। भारतीय कांग्रेस से प्रेरणा ले कर नेपाली कांग्रेस ने नेपाल की जनता में यह जागृति निर्माण करने का प्रयत्न किया किन्तु इसके लिए जिस धैर्य और दृढ़ता से कार्य करने की आवश्यकता थी उसका नेपाल के कार्यकर्ताओं में अभाव दिखाई देता है। नेपाल की जनता में इस जागृति की कमी का सबसे बड़ा कारण शिक्षा का अभाव है। ऐसी स्थिति में वहां शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम ले कर लोगों में पहिले चेतना निर्माण करने की आवश्यकता थी।

भारतवर्ष में भारतीय कांग्रेस को भी कितने व्यापक प्रयत्नों के पश्चात् राजनीतिक जागृति उत्पन्न करने में सफलता मिली है, फिर भी अभी तक भारत की बहुत अधिक ग्राम्य जनता इस दृष्टि से सोई हुई है। नेपाली कांग्रेस का इतिहास तो बहुत छोटा है। नेपाल की जनता भारत से बहुत पिछड़ी हुई है। ऐसी स्थिति में नेपाल के महाराजाधिराज तथा प्रधान मन्त्री के पारस्परिक विरोध का लाभ उठाकर सहसा राज्यसत्ता पर अधिकार कर लेने का यह प्रयत्न स्वयं नेपाल कांग्रेस के हित में नहीं था। इसके असफल होने से सबसे अधिक हानि नेपाल कांग्रेस और उसके उद्देश्य को ही हुई है।

भारत और नेपाल दो राजनीतिक इकाई होते हुए भी एक हैं। दोनों की भौगोलिक और सांस्कृतिक एकता निर्विवाद है। एक ऐसे समय पर जब तिब्बत पर साम्यवादी आक्रमण कर रहे हैं, भारत की सीमा पर अशान्ति किसी भी प्रकार से उचित नहीं। और नेपाल जैसे अल्पशक्ति के राज्य की सीमाओं में जिसकी अपनी सीमा के पार लाल तूफान चल रहा है, यह अशान्ति उत्पन्न करने का प्रयत्न स्वयं नेपाल के भविष्य को सन्देह में डालना है। हम नेपाल की राणा सरकार की निरंकुशता समझ सकते हैं किन्तु ऐसे किसी भी कदम को नहीं समझ सकते जो नेपाल की राजनीतिक स्वतन्त्रता को ही सकट में डालने का कारण बन सके, फिर वह कदम चाहे कितने ही उच्च उद्देश्य से क्यों न उठाया गया हो।

नेपाल के निर्वासित महाराजाधिराज से हमारी पूर्ण सहानुभूति है और हम चाहते हैं कि वहां की गद्दी पर उनका अधिकार सुरक्षित रहे। किन्तु इसका सबसे अच्छा मार्ग नेपाल की जनता को खड़ा करना है। महाराजाधिराज के निर्वासन के तुरन्त ही पश्चात सशस्त्र संघर्ष आरम्भ करने का निर्णय यह बताता है कि नेपाली कांग्रेस के कार्यकर्ता यह समझते थे कि नेपाल की सारी जनता उनके साथ खड़ी हो जायगी और उसी क्षणिक आवेश में वे राज्यसत्ता पर अधिकार कर लेंगे। यह उनकी कितनी बड़ी भूल और राजनीतिक मूर्खता थी यह स्पष्ट है। नेपाल में आज सशस्त्र नहीं शान्त आन्दोलन और उसको चलाने में होने वाले कष्टों को सहने वाले कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। हम आशा करते हैं कि नेपाली कांग्रेस के कार्यकर्ता अपनी भूल को समझेंगे और श्री त्रिभुवन देव शाह को उनके अधिकार दिलाने के लिए तथा प्रजातन्त्र पद्धति के विकास के लिए अहिंसात्मक आन्दोलन की पद्धति ग्रहण करेंगे।

★

शिशु राजा स्वीकार नहीं

नेपाल के शिशु राजा के विषय में भारत सरकार ने अपने निर्णय को स्पष्ट कर दिया है। भारत सरकार उस नेपाल का राजा स्वीकार करने के लिए तत्पर नहीं है। अपने इस निश्चय की सूचना भारत ने ब्रिटिश सरकार को भी दे दी है। इसके अतिरिक्त नेपाल सरकार को यह भी सूचित कर दिया गया है कि भारत सरकार यह समझती है कि नेपाल सरकार अपने शासन को प्रजातंत्रीय पद्धति के आधार पर विकसित करने की चेष्टा करे।

जहां हम भारत सरकार के इस निर्णय से पूर्णतया सहमत हैं कि वह शिशु नरेश को स्वीकार न करे वहां हम भारत सरकार का ध्यान इस बात की ओर भी आकर्षित करना चाहते हैं कि वर्तमान परिस्थिति में भारत और नेपाल के सम्बन्धों का बिगड़ना किसी भी दृष्टि से वांछनीय नहीं। ऐसी स्थिति में भारत सरकार की दृष्टि से उचित होगा कि वह नेपाल के महाराजाधिराज व प्रधान मंत्री के बीच के इस झगड़े को बातचीत द्वारा सुलझा दे। इस दृष्टि से प्रधान मंत्री नेहरू अथवा सरदार पटेल का व्यक्तित्व पूर्णतया समर्थ है। क्या हम यह आशा करें कि इन दोनों में कोई एक व्यक्ति भारत सरकार की सद्भावनाओं के साथ इस समस्या को पारस्परिक वार्तालाप के चतुराई पूर्ण ढंग से सुलझाने का प्रयत्न करेंगे?

———

मिश्र की समस्या

मिश्र के शाह फारुक की सरकार ने एक प्रकार से ब्रिटिश सरकार को चुनौती दी है और ब्रिटिश लोक सभा में श्री बेविन का वक्तव्य यह बताता है कि ब्रिटिश सरकार ने इस चुनौती को स्वीकार कर लिया है। मिश्र और स्वेज नहर के क्षेत्र से ब्रिटिश सेनाओं को हटाने और सुडान को मिश्र के साथ सम्मिलित कर नील नदी की घाटी की एकता स्थापित करने की मांग शाह फारुक ने की है। उनकी इस मांग का समर्थन सुडान के नेता ने भी किया है। श्री बेविन का कथन है कि ब्रिटेन मध्यपूर्व को असुरक्षित नहीं छोड़ सकता।

संसार भर का ठेका लेने की ब्रिटिश मनोवृत्ति का ही यह एक और उदाहरण है। भला ब्रिटेन को मध्यपूर्व की इतनी चिन्ता है और स्वयं मध्यपूर्व के निवासियों को अपनी चिन्ता नहीं ? राष्ट्रसंघ के पीछे सैनिक बल खड़ा करने और उस का कोरिया में उपयोग होने में पूर्ण सहायक होने वाला ब्रिटेन यह समझ सकता है कि किसी भी दुर्बल देश की सुरक्षा अन्यान्य देशों और विशेषकर राष्ट्रसंघ के आश्वासन पर निर्भर हो सकेगी। राष्ट्रसंघ को इस दृष्टि से पर्याप्त शक्तिशाली बनाने का कोई भी विचार हम समझ सकते हैं, किन्तु सुरक्षा के बहाने अपना साम्राज्य टिकाए रखने की ब्रिटिश नीति उसकी घोर राजनीतिक स्वार्थ दृष्टि के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है।

विश्व शान्ति सम्मेलन

पोलैण्ड की राजधानी में हुआ विश्व शान्ति सम्मेलन छः दिन के पश्चात समाप्त हो गया। अन्यान्य प्रस्तावों के साथ सबसे प्रमुख बात यह थी कि सम्मेलन ने विश्व शान्ति बनाये रखने के लिए 'पांच बड़ों' के सम्मेलन का समर्थन किया है। आज विश्व में मानवता के हित के लिए शान्ति रहना कितना आवश्यक है यह सभी समझते हैं। ऐसी दशा में इस बात को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता कि परस्पर बातचीत से समस्याओं को सुलझाने के प्रयत्न किये जाने चाहिये।

किन्तु इस प्रकार की बातचीत के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि सम्मिलित होने वाला प्रत्येक सदस्य यह अनुभव करे कि मतभेद होते हुए भी विश्व शान्ति बनाये रखना उसका कर्त्तव्य है। भारत सरकार चीन की वर्तमान सरकार को राष्ट्र संघ द्वारा मान्यता दिलाने का प्रयत्न करती रही है। पांच बड़ों में चीन का भी स्थान है। किन्तु एक अन्याय को रोकने के लिए दूसरे अन्याय का समर्थन नहीं किया जा सकता। चीन की साम्यवादी सरकार भी शान्ति में विश्वास रखती है यह दिखाने के लिए यह आवश्यक है कि कोरिया और तिब्बत से अपनी सेनाओं को वह तुरन्त वापिस बुलाये। उसका यह कदम इस प्रकार के सम्मेलन के अनुकूल भूमि निर्माण कर देगा।

———

कांग्रेस की कठोरतम परीक्षा

★ पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति

कुछ समय से यह प्रश्न अनेक बार पूछा गया है कि क्या कांग्रेस की उपयोगिता समाप्त हो गई। और क्या उसका अंग होगा? यह प्रश्न नया नहीं है। बहुत पूर्व काल से समय समय पर यह प्रश्न पूछा जाता रहा है। जब कभी देश में नई परिस्थिति पैदा हुई है, तभी यह प्रश्न पूछा गया है। मौखिक उत्तर चाहे कुछ मिला हो, परंतु वस्तुस्थिति यह है कि कांग्रेस की उपयोगिता अपना रूप बदल बदल कर जीवित रही है। केवल जीवित ही नहीं रही, वह भारत के राजनीति प्रवाह की अग्रकला बनी रही है।

आदि काल

जब कांग्रेस का जन्म हुआ तब देश में दूसरी कोई राजनीतिक संस्था थी ही नहीं। अधिक से अधिक आगे बढ़ी हुई राजनीति का यह रूप था कि पढ़े लिखे भारतवासी वंश के शासन में अपना हिस्सा मांगते थे। वह जो हिस्सा मांगते थे, वह भी कुछ बड़ा नहीं था। वे कुछ ऊंची नौकरियां मांगते थे और बड़े बड़े प्रान्तों में सलाहकार समितियों की मांग करते थे। उस समय के शिक्षितों की जितनी मांग थी, कांग्रेस के क्षेत्र का उतना ही विस्तार था।

कुछ समय तो सब काम शान्ति से चलता गया। अंग्रेजी पढ़े लिखों की कांग्रेस नौकरियां मांगती रही, और अंग्रेज शासक उन्हें आशा दिखाते रहे। यह सिलसिला वर्षों तक चला। परन्तु दो बातें ऐसी हो रही थीं, जो शान्ति के भंग का कारण हुईं। एक तो राजनीतिक जागृति का यह स्वाभाविक परिणाम हुआ कि शिक्षित भारतवासियों की मांग की ऊंचाई बढ़ने लगी, वह केवल नौकरियों से सन्तुष्ट न होकर प्रतिनिधि-संचालित संस्थाओं की मांग करने लगे, और दूसरी बात यह हुई कि अंग्रेजी सरकार वायदों को तोड़ कर भारतवासियों के हृदय में उत्पन्न हुई आशाओं पर पानी फेरने लगी। अभिलाषाओं की वृद्धि निराशा की दीवार से टकराने लगी जिसने कांग्रेस में गर्मदल को जन्म दिया, पुराना दल नर्मदल के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

सूरत में पहला संघर्ष

कांग्रेस के जीवन का पहला बड़ा आन्तरिक संघर्ष सूरत में हुआ जिसमें गर्म और नर्मदल में भयङ्कर टक्कर हुई। टक्कर का परिणाम यह हुआ कि कुछ समय के लिए कांग्रेस का भंग हो गया, और उसके स्थान पर लिबरल फेडरेशन ने जन्म लिया। वह कांग्रेस के लिए बड़ी परीक्षा का समय था। यदि कांग्रेस को मरना ही था, तो उस समय मर जाती। परन्तु भारत के सौभाग्य से कांग्रेस मरी नहीं। दोनों दलों के नेताओं के सहयोग से कांग्रेस को उस गढ़े में से उबारने का श्रेय श्रीमती एनी बेसेन्ट को है। लखनऊ में सोई हुई इन्डियन नेशनल कांग्रेस ने फिर से आंखें खोलीं, और अंग्रेज सरकार के विरुद्ध भारत की स्वाधीनता का मोर्चा जमा दिया।

महात्मा गांधी का आगमन

१९१४ के महायुद्ध ने जैसे संसार के अन्य देशों की राजनीति में परिवर्तन कर दिये, वैसे ही भारत की राजनीति का रूप भी बदल दिया। रौलट ऐक्ट, सत्याग्रह, असहयोग और जलियां वाला बाग ये सब वस्तुतः १९१४ के योरुपियन युद्ध की प्रतिध्वनियां थीं। जब महात्मा गांधीने कांग्रेस के सामने स्वाधीनता के प्रश्न को हल करने के लिये असहयोग और सत्याग्रह की योजना रखी, तब कांग्रेस के जीवन में दूसरा बड़ा संघर्ष उपस्थित हुआ। कांग्रेस की तब तक की नीति संसार के अन्य देशों के समान प्रचलित चिकित्सक की सी राजनीति थी। उस राजनीति का सिद्धान्त था —

उक्तं सदैव भैषज्यं
यदारोग्याय कल्पते।

जिससे इलाज हो, वही औषधि है। उस समय की राजनीति का यह रूप था कि जिस उपाय से काम चल जाय, वही ठीक है। हिंसा, अहिंसा, खुशामद, और धमकी—इनमें से जब जो चल जाय, वही उचित है। महात्मा गांधी ने नीति का रूप ही बदल दिया। कांग्रेस के पुराने नेताओं और कार्यकर्ताओं के सामने जब महात्माजी ने अपनी योजना उपस्थित की तो वे चकराये, और एकदम मानने को तैयार न हुये परन्तु एक ओर महात्माजी के अद्भुत व्यक्तित्व का असर पड़ा और दूसरी ओर अंग्रेजी सरकार एक के पीछे दूसरी मूर्खता करके उन्हें सहायता देती गई, जिसका फल यह हुआ कि अन्त में कांग्रेस का रूपान्तर होगया। जिन लोगों को उस समय कांग्रेस के टूटने की आशा हो रही थी, वे निराश हुए और कांग्रेस पहले से भी अधिक प्रबल हो उठी।

सरकार द्वारा दमन

महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने क्रान्तिकारी रूप धारण कर लिया। वह क्रान्ति शान्तिमयी थी क्योंकि अहिंसात्मक थी, परन्तु थी क्रांति ही। स्वभावतः अंग्रेज सरकार की ओर, से

[शेष पृष्ठ २२ पर]

श्री गुरु नानक देव !

४८१ वर्ष पूर्व—

पञ्जाब का पुण्य प्रदेश पश्चिमोत्तर सीमान्त की ओर से होने वाले आक्रमणों से त्रस्त था। गजनवी और गोरी आते ही रहते थे। अत्याचार, लूट, अपहरण और मारकाट आये दिन की बात थी। काबुल से चले घोड़े रौंदते हुए दिल्ली की ओर बढ़ते और पुनः रौंदते हुए काबुल की ओर लौट जाते।

इन अत्याचारों का दमन करने के लिए भारतीय वीर्य निर्बल हो गया था ऐसी बात न थी। किन्तु किसी न किसी जयचन्द्र के कारण प्रत्येक प्रयत्न विफल हो जाता था। सामर्थ्यवान हिन्दू युवक देखते थे कि उनके सामनेही उनकी मातृभूमि रौंदी जा रही है। किन्तु देशद्रोहियों की कमी न थी। उनके विश्वासघात के कारण उठाई गयी बारम्बार पराजयों ने विजय का विश्वास उठा गया था। असंगठित और छिन्न-भिन्न हिन्दू समाज निराशा के सागर में डूब रहा था। सामरिक पराजयों और बाकनी अत्याचारों से उनका आत्मविश्वास नष्ट हो गया था। तलवार के बल पर चोटी और जनेऊ काटे जा रहे थे।

ऐसे ही समय श्री गुरु नानक देव का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होने बाल्यावस्था में ही बता दिया कि वे रोटी कमाने के लिए ही इस संसार में नहीं आये हैं। उनके जीवन का कुछ उद्देश्य है। उसी उद्देश्य की प्राप्ति के प्रयत्न ही उनकी जीवन कथा हैं। हिन्दुओं के जीवन में नष्ट हुई आत्मश्रद्धा को जगाने का ही उनका कार्य था। गंभीर अध्ययन से प्रबल हुई बुद्धि के अद्भुत तर्क तथा युक्तियों द्वारा पाण्डित्य की छाप बिठाने से वे कोसों दूर थे। विद्याव्यसन की ओर उनका कभी ध्यान ही नहीं गया। किन्तु हृदय को स्पर्श करने की कला के वे धनी थे। उनको शब्द उनके हृदय से आते थे और सीधे हृदय को छूते थे। विदलित और निराश हिन्दू हृदयों में श्रद्धा जागृत कर प्रेम, बलिदान और त्याग के भाव उन्होंने अंकुरित किए। गुरु नानक की वाणी ने बिछुड़े हुओं को मिलाया, भूले हुओं को मार्ग बताया।

और आज—

आज उनकी जन्मभूमि हमारे ही पापों से विदेशवत् हो गयी है। उन्हीं का नाम जपने वाले अपने को देश से भिन्न मानते हैं। वे भाव को नहीं शब्दों को महत्व दे रहे हैं और उनकी आड़ में अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति के लिये प्रयत्नशील हैं। स्वार्थ, क्षुद्रता और चारित्रिक पतन का बोलबाला है। अपने ही भाइयों का रक्त बहाने को ही धमकियां हैं। क्या यह गुरु नानक देव की शिक्षा है? क्या यह उनकी शिक्षा पर आचरण है?

गुरु के वाक्यों ने पंजाब में जीवन जागृत किया था। उनके वंशजों ने देश की धमनियों में गर्मरक्त प्रवाहित किया था। उनके सिंहों ने भारतवर्ष के सम्मान की, हिन्दू धर्म की रक्षा की थी। आज वे ही साम्प्रदायिकता के भयंकर जाल में जकड़े हुये हैं। प्रेम और त्याग का पवित्र जल साम्प्रदायिकता के गढ़े में सड़ रहा है। उस में स्वार्थ और द्वेष के कीटाणु उत्पन्न हो गए हैं।

श्री नानकदेव किसी सम्प्रदाय के नहीं सम्पूर्ण भारत के गुरु हैं, देश की विभूति हैं। उनके व्यापक व्यक्तित्व को किसी सम्प्रदाय तक ही सीमित करना पाप है। प्रेम, त्याग और बलिदान के जो पवित्र भाव उनसे जगे थे, उन्हीं को पुनः आज देश में जागृत करना ही उनकी पूजा है, सच्चा स्मरण है। उनकी स्मृति का यह पुण्य दिवस आत्मचिन्तन और आत्मनिर्माण की ओर अंगुलि निर्देश करता है। आज की भारतीय समाज असंगठित है, स्वार्थ और द्वेष फल-फूल रहे हैं, देशद्रोहियों की कमी नहीं है। ऐसी दशा में केवल गुरु नानक देव का नाम लेने अथवा पूजा करने से कोई लाभ नहीं, उनकी शिक्षाओं के अनुसार जीवन बनाने की आवश्यकता है। तभी "अन्धकार का नाश होकर प्रकाश का उदय होगा।"

★

कांग्रेस डेमोक्रेटिक फ्रंट के प्रधान आचार्य कृपलानी समाजवादी दल के साथ सम्मिलित सामाजिक कार्यक्रम बनाने के नाम से श्री जयप्रकाश नारायण से मिले।

पश्चिमी बंगाल के मुख्य मन्त्री डा० विधानचन्द्र राय ने घोषणा की है कि उनकी सरकार साम्यवादी दल से प्रतिबन्ध नहीं उठायेगी।

खाद्य मन्त्री से क० मा० मुन्शी ने संसद भवन में अपने विभाग पर १.३३ करोड़ रुपये की हानि पहुंचाने के आरोप की जांच कराने से इन्कार कर दिया।

संयुक्त राष्ट्र-सङ्घ की जनरल असेम्बली ने श्री ट्रिग्वेली का बीस वर्षीय शांति कार्यक्रम स्वीकार कर लिया।

मिश्र के शाह फारूक ने अपने उद्घाटन भाषण में अंग्रेजी सेनाओं के मिश्र से हटाने और सुडान को मिश्र में मिलाने की मांग की है।

तिब्बती कांग्रेस के प्रधान श्री कोइराला अपनी सेनाओं की पराजय के पश्चात गुरिल्ला युद्ध की तैयारी कर रहे हैं।

श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित ने पुनः राष्ट्र-सङ्घ का ध्यान दक्षिण अफ्रीका स्थित भारतीयों की स्थिति की ओर खींचा है।

जेल में बीमारी से स्वास्थ्य बहुत गिर जाने के कारण खान अब्दुल गफ्फार खां को लाहौर लाया जा रहा है।

मनुष्य के लिए सबसे अधिक दुर्बोध उसका मन ही है

"मन के हारे हार है मन के जीते जीत"

मन के रहस्य

★ श्री रतनलाल परमार

मन क्या है ?

मनोविज्ञान—मन का विज्ञान है। मन एक ऐसा सूक्ष्म, चंचल और रहस्यमय तत्व है कि वह सरलता से समझ में नहीं आता। अनेक जिज्ञासु जब मन की गहराई का पता लगाने जाते हैं तो हैरान परेशान हो जाते हैं, परन्तु पता नहीं लगता। कभी कभी मन को मानव समझ कर भी नहीं समझता—जान कर भी अज्ञान ही रहता है। जो फक्कड़ मन का अस्तित्व और नियन्त्रण स्वीकार नहीं करते और उपेक्षा से मस्त विचरण किया करते हैं उनके लिये मन कोई समस्या नहीं रहती। मन को जानना और उसको वश में करना बड़ा कठिन काम है। सृष्टि के आदि से ही मन के सम्बन्ध में इतना अधिक सोचा गया है कि उसका एक महान् शास्त्र निर्माण हो गया है। कोई व्यक्ति मन के अनुकूल आचरण करके सुख प्राप्त करता है तो कोई मन के प्रतिकूल कार्य सम्पादन करता हुआ ही आनन्द का उपभोग करता है। किसी प्राणी के मन को एक वस्तु सुन्दर प्रतीत होती है तो दूसरे के मन को वह रुचिकर नहीं लगती। ये सब अवस्थाएं मन की स्थिति पर निर्भर हैं कि एक ही वस्तु से दो भिन्न प्रकार के अनुकूल फल प्राप्त होते । मन को छोटे बड़े सभी लोगों ने इतना अधिक महत्व प्रदान किया है कि मन स्वयं एक उलझन में गड़ गया है। मानव-संसार के द्वारा मन को अनेक रूपक प्रदान किये गये हैं। कोई साधक कहता कि मन एक प्रबल आंधी है जो किसी के रोकने से नहीं रुकती। कोई कवि कहता है कि मन एक बदमाश अश्व के तुल्य है जो लगाम खींचते रहने पर भी भागता ही रहता है। कई मनुष्य मन को ज्वलनशील पतंगा भी कहते हैं जो जान-बूझ कर दीपक पर जल-मरने को आतुर रहता है। भगवान् श्रीकृष्ण ने भी गीता में मन की प्रबलता को स्पष्ट शब्दों में स्वीकार करते हुए कहा है कि:—

"असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।"

मन की शक्ति

मन चंचल है, इसलिये वह चुपचाप नहीं बैठता—किसी न किसी व्यापार में वह लगा ही रहता है। परिस्थितियों की उलझन में मन को समझने के लिये कभी कभी मनुष्य बाध्य हो जाता है। बेचारा मनुष्य मन की रहस्यमयी गठरी को ले कर इधर-उधर भटकता है। वह पूछता है—इस गठरी में क्या होगा? विवश मानव कभी किसी साधु के पास जाता है तो कभी किसी फकीर के निकट पहुंचता है और कभी किसी विद्वान् के सम्पर्क में आ कर जिज्ञासा की भाषा में प्रश्न करता है—गुरु महाराज मन क्या है? यह कैसे वश में हो सकता है? महाराज मन की गति कुछ समझ में नहीं आती है? उत्तर में मन का रहस्य बतलाने के लिए किसी सज्जन ने अपनी जानकारी के अनुसार मन की परिभाषा बतलाई तो किसी ज्ञानी ने मन को समझ में नहीं आने वाला रहस्य कह कर टाल दिया। कुछ विचारकों ने मन को जड़ बतलाया और किसी दार्शनिक ने और कुछ। एक महात्मा ने कहा—"पागल हुआ है! मन क्या चीज है? क्यों उसको महत्व देता है? उसकी उपेक्षा कर—वह तेरे वश में हो जाएगा। तू क्यों मन से हार गया है? निकाल इस झंझट और उलझन को अपने मन से और आगे बढ़! तेरा मन तुझको पद-दलित होते हुए ही दृष्टिगोचर होगा। यही मनोजय है।"—"मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।" वास्तव में सच बात यही कि हमारी विजय और पराजय हमारे मन के ऊपर ही निर्भर है। शरीर सशक्त होने पर भी मन की दुर्बलता के कारण अनेक व्यक्तियों को बुरी तरह से पराजित होते हुए देखा गया है और नाना पुरुषार्थियों को कृशकाय होते हुए भी मनोबल के कारण शक्तिशाली मनुष्यों के भी विरुद्ध विजयश्री प्राप्त करते हुए देखा है। हृष्ट-पुष्ट शरीर कुछ नहीं है—मनोबल ही वास्तविक बल होता है। मनोबल के बिना सब साधन और अस्त्र-शस्त्र समय पर रखे रह जाते हैं और बेचारा मनुष्य हार जाता है। इसके विपरीत साधनहीन व्यक्ति भी संसार को आश्चर्य में डाल कर विजय प्राप्त कर लेता है। उदाहरण के लिये जापान की विजय और पराजय हमारे सम्मुख विद्यमान है। जापान की जनता और सैनिक ब्रिटेन एवं अमेरिका के विरुद्ध योजनापूर्वक १०० वर्षों तक किंवा ३० वर्षों तक अनवरत युद्ध करने के लिये प्रस्तुत थे, उनमें पूर्णरूप से मनोबल विद्यमान था। किन्तु जापान के सम्राट श्री हिरोहितो का मन परास्त हो गया था—वे अणुबम की मार से अपना साहस एवं धैर्य खो चुके थे। फलस्वरूप हार मान कर जापान ने अमेरिका के सामने घुटने टेक दिये और अपने राष्ट्र को गुलाम बना दिया। इसके विपरीत सोवियत रूस और ब्रिटेन अपने दृढ़ मनोबल, अदम्य साहस एवं धैर्य के कारण मरते-मरते और हारते-हारते भी जी गये—विजेता बन गये। इस आशय की बात भगवान् कृष्ण ने गीता में भी कही है कि मन ही बन्धन और मोक्ष का कारण है—"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः"। गीता की बात जहां आध्यात्मिक क्षेत्र में शत-प्रतिशत सत्यसिद्ध है वहां भौतिक जगत में भी वह सत्य ही है।

मन की स्थिति

मन अत्यधिक रहस्यमय है—इसका यह अभिप्राय नहीं है कि वह अनुपयोगी अथवा खराब ही है। मन के बिना तो हम मनुष्य बन कर ही नहीं रह सकते। मन से हम मनन करते हैं और इसीलिए हम मनुष्य बने हैं। मन सबके लिये एक समान ही तत्व है, परन्तु वह भिन्न दशाओं और परिस्थितियों में अनेक रूपों और नाना प्रकारों में ढलता है; इसलिये हमारे मनों में साम्य नहीं है। मन एक शक्ति है—उसको हम जिस दिशा में मोड़ देंगे वह उसी दशा में काम करेगा। हां, उसको सही अथवा गलत मार्ग बतलाने की जिम्मेवारी हमारे ही ऊपर है। हम चाहें तो अग्नि से भोजन बना सकते हैं और चाहें तो उसी अग्नि से किसी का गृह भी भस्मीभूत कर सकते हैं।

मन को कोई पानी की उपमा देते हुये कहता है—"पानी तेरा रंग कैसा?" उत्तर—"जैसे में मिलाओ तैसा।" ठीक मन का भी यही हाल है। हम मन को जिस ओर यत्नपूर्वक लगा देंगे वह उसी ओर लग जायेगा। तृष्णा, दुःख कारक है; इसलिये मन उसको कतई पसन्द नहीं करता और चूंकि, मन शक्तिशाली है; अतः वह बिना कार्य के चुपचाप भी बैठना पसन्द नहीं करता।

हमारे मनों में साम्य नहीं है; अतः हम एक दूसरे से दूर-दूर रहते हैं। परन्तु जब हमारे मनों की स्थिति साफ और सरल होती है तो हम एक दूसरे के मन का वृत्तान्त ज्ञात कर लेते हैं। जब हम इस प्रकार आंखों की मूक भाषा अथवा विचारों का आदान् प्रदान करते हैं तो सुन कर बड़ा आश्चर्य एवं प्रसन्नता प्राप्त होती है। ऐसे समय सहसा हमारे मुख से निःसृत हो जाता है कि "मन तो देवता है जो हमारे हृदयों की बात जान लेता है।"

मनोविज्ञान

संसार में प्रत्येक वस्तु अथवा तत्व को जानने के दो प्रकार हैं। एक संश्लेषण द्वारा और दूसरा विश्लेषण द्वारा। संश्लेषण और विश्लेषण को हम दूसरे शब्दों में ज्ञान और विज्ञान कह सकते हैं। अनेकता से एकता की ओर जाने का नाम ज्ञान है और एकता से अनेकता की ओर जाने को विज्ञान कहते हैं। विज्ञान का सम्बन्ध संश्लेषण की अपेक्षा विश्लेषण से अधिक है और ज्ञान का सम्बन्ध संश्लेषण से अधिक है, किन्तु, मनोविज्ञान का मार्ग एक प्रकार से इन दोनों ही प्रणालियों के मध्य में है।

मन को समझने के लिये मनोविज्ञान शास्त्र की रचना की गई है। वैसे किसी के मन की बात जान लेना सरल नहीं है क्योंकि, प्रथम तो हम किसी मनुष्य के लक्षणों अथवा चेष्टाओं के आधार पर अनुमान ही लगाते हैं। जहां मनोनुभूति स्पष्ट नहीं होती है वहां मनुष्य व्याकुल दृष्टिगोचर होता है और उसकी भाषा भी अस्पष्ट किंवा रहस्यमयी हो जाती है। यदि कोई व्यक्ति जानबूझकर अपनी मनोस्थिति को छिपाता है तो वह हमें उलझन में डाल देता है और तब हम सत्यासत्य का सही निर्णय नहीं कर सकते और निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकते कि उसके सही भाव क्या हैं? यद्यपि अधिक समय तक कोई भी प्राणी अपनी बाह्य चेष्टाओं से आन्तरिक भावनाओं को गोपनीय नहीं रख सकता है तो भी कुछ समय के लिये भ्रम तो हो ही जाता है। अवश्य ही कभी कभी मन की ऐसी स्थिति भी हो जाती है कि जब न तो स्पष्टरूपेण कुछ अनुभूति ही होती है और न स्पष्टरूपेण कुछ व्यक्त ही किया जा सकता है। परन्तु, ऐसी स्थिति विचारों के घन-मन्थन की असाधारण परिस्थितियों में ही कभी कभी होती है।

आर्य समाज—क्या और कहां ?

★ श्री शिवदयालु

संसार में जितने विशाल व्यापक संगठन बने हैं तथा संप्रदाय एवं मतों की स्थापना हुई है उनके मूल में कोई न कोई विशेष व्यक्ति रहा है। उस महान व्यक्ति का तप, त्याग, निष्ठा एवं ज्ञान उसका आधार रहा है।

आर्य-समाज का प्रवर्तक आदित्य ब्रह्मचारी, तप-त्याग एवं वैराग्य की अद्भुत प्रतिमा, वेदज्ञान का अगाध-सागर प्रेम व भक्ति आदर्श मूर्ति थी।

संसार के महान विचारकों व लेखकों में, तत्ववेत्ताओं और योगियों में, सुधारकों तथा देशोद्धारकों में, ज्ञानी गुरुओं एवं आचार्यों में दयानन्द का स्थान इसी प्रकार ऊंचा है जैसे हिमालय की १०००० फुट की ऊंचाई पर पहुंच कर दिव्य महान अत्यन्त विशाल एवं उच्च गौरीशंकर एवं प्रवशिष्ट की चोटियां।

आर्य-समाज का उद्देश्य भी अन्य सभा सोसाइटी संघटनाओं की अपेक्षा अति उच्च व विशाल है। संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य स्वतः आचार्य-प्रवर दयानन्द ने वर्णित किया है। वर्ण, जाति, प्रान्त एवं राष्ट्र के बन्धनों में बांध कर इस विशाल संगठन को इसके आचार्य ने नहीं रखा है। ऊंच नीच, काले गोरे, स्त्री पुरुष, शहरी देहाती, अमीर गरीब, शासक शासित के भेद भावों से भी आर्य समाज को सर्वथा पृथक रखा गया है।

विश्व की आदि संस्कृति, आदि-ज्ञान, आदि-धर्म के मूल वेद, चतुष्टय का प्रचार करना विश्व को वेदों की ओर प्रवृत्त करना, वैदिक शिक्षाओं, आदर्शों एवं आज्ञाओं का विश्व में प्रचार करना इसका अत्यन्त उच्च महान तथा पवित्र कार्य क्रम है। संसार में वास्तविक सुख-शांति, समृद्धि, वैभव, समता एवं प्रेम का साम्राज्य स्थापित करना, आत्म-तत्व की विश्व में प्रतिष्ठा करना, विश्व को ईश्वरीय आज्ञाओं का वाहन बनाना, विश्व में ईश्वरीय साम्राज्य की स्थापना करना आर्य-समाज का ध्येय है।

'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग भवेत्'— आर्य समाज का आदर्श वाक्य है।

'देश देशान्तरों व द्वीप द्वीपान्तरों में वेद का प्रचार करना' आर्यसमाज के लिए व आर्य समाजियों के लिये कमनीय आचार्य की अन्तिम वसीयत है।

आर्य समाज का प्रारंभिक कार्य

१८५७ की राजनीतिक क्रांति के उपरान्त जब सारे भारत में अंग्रेजी शासन का भयंकर आतंक छाया हुआ था, उसके आहनी पंजे में सारा देश जकड़ा हुआ था ६०० वर्षों के यवन शासन में भारतीय संस्कृति अत्यन्त क्षत-विक्षत की जा चुकी थी और भारत की परम पुरातन परम्परायें नष्ट भ्रष्ट कर दी गईं थीं भारत के असंख्य मठ मंदिर संस्थान एवं धर्मस्थान धूलि धूसर किये जा चुके थे, भारत का क्षात्रबल निस्तेज बन चुका था और भारत का संगठन भीषण विघटन में परिवर्तित हो चुका था, ऐसे समय में, जब कि मुख खोलना और सत्य का प्रचार करना अत्यन्त भया वह कार्य था, दयानन्द का भारत में अवतार हुआ। आचार्य दयानन्द ने एक बार समूचे भारत का भ्रमण किया और देश की गति स्थिति का सम्यक अध्ययन किया। कठोर तप तपकर अपने को सर्व विधि विपरीत परस्थिति से लोहा लेने के लिए सन्नद्ध किया। वेद विरुद्ध भारतीय मतवादों का तथा भारत में फैले हुए मुसलमानी एवं अंग्रेजी काल के विदेशी मतवादों का युक्त तर्क के आधार पर तीव्र खंडन किया और परम पुनीत सनातन वैदिक सिद्धान्तों का आत्म विश्वास के साथ, पूर्ण निष्ठा एवं आस्था के साथ मण्डन किया।

पराधीनता, पराङ्मुखता, दासता, हीनता एवं चाटुकारिता का घोर विरोध किया।

स्वाधीनता, स्वतन्त्रता, अदैन्य, स्पष्टवादिता एवं आर्यों को चक्रवर्ती साम्राज्य की स्थापना का स्पष्ट आदेश आचार्य प्रवर ने डंके की चोट आसेतु हिमालय दिया।

देश के कोने-कोने में आर्य समाज की स्थापना हुई और जहां यवन ईसाइयों के पांव उखड़ने लगे और भारत को मुसलमान व ईसाई बनाने के उनके सारे मनसूबे और कार्यक्रम नष्ट-भ्रष्ट हो गये, वहां दूसरी ओर ब्रिटिश नौकरशाही भी थर्राने लगी।

भारत से ब्रिटिश साम्राज्य को उखाड़ फैंकने वाला यदि कोई व्यक्ति उसकी दृष्टि में था तो दयानन्द और यदि कोई संघटना थी तो आर्य समाज।

आर्य-समाज एक महान क्रान्तिकारी संस्था के रूप में शासन के सामने आ विद्यमान हुआ। आर्य-समाज अंग्रेजी शासन के लिए खतरा था, अतः प्रत्येक आ० सी० एस० के व्यक्ति को भारत की भूमि पर पांव रखते ही इस खतरे से सतर्क किया जाता। 'नीली पुस्तक' उसको पढ़ाई जाती और बतलाया जाता कि किन-किन साधनों से इस खतरे को खत्म करना है। रात दिन ब्रिटिश अधिकारियों के प्रयत्न इस ज्वालामुखी को शान्त करने, इस धधकती भट्टी को बुझाने और इस नरसिंह का नाश करने के निमित्त किये जाने लगे।

व्यापक रूपमें आर्य-समाज के विरुद्ध प्रचार करना आरम्भ किया गया। नाना मतमतान्तरों की ओर से आर्य-समाज पर अभियोग चलवाये गये। ईसाई मिशन ने पूर्ण बल लगा कर आर्य-समाज के विरुद्ध आक्रमण आरम्भ कर दिये। थियोसोफिकल सोसाइटी, फ्री मैशनरी सोसायटी आदि आरम्भ कर दिये।

मोहक संस्थाओं की स्थापना की गई। स्वार्थी हिन्दुओं को जिनको राज्य में प्रतिष्ठा मिलती थी, इसमें सम्मिलित होने की प्रेरणा की गई और इसी प्रकार उठती हुई राजनीतिक चेतना को दबाने के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की गई, जिसको भले ही बाद में लो० मा० तिलक एवं महात्मा गांधी ने कब्जा कर रूपान्तरित कर कर दिया। अंग्रेजों ने विश्वसनीय जनों को आर्य-समाज की संघटना में अधिकार पूर्ण पदों पर कब्जा कराने और उसकी प्रगति को मन्द कराने का भी भीषण षडयन्त्र रचा। इस षडयंत्र में अंग्रेजों को सफलता मिली। अधिकांश आर्य समाज की बागडोर अंग्रेजों के अपने आदमियों के हाथों में आ गई और उन्होंने आर्य-समाज को दबाने और निस्तेज करने की प्राणपण से कोशिश की। आर्य-समाज को एक संप्रदाय का रूप दे दिया गया और राजनीति को तो आर्य-समाज से अर्द्धचन्द्र ही दे दिया गया। जो क्रांति के उपासक थे, उनको चुन-चुन कर इन जयचन्दों ने जो अंग्रेजों के प्रताप से आर्य-समाज के अधिकार पूर्ण पदों पर प्रतिष्ठित थे, आर्य-समाज से पृथक कर दिया।

वह आर्य-समाज का प्रारम्भिक युग था, जब धर्म के दीवाने सिर से कफन बांध कर काम करते थे। जिधर जाते अपने प्रवर्तक की भांति ईंट-पत्थर खाते, बिरादरियों से बहिष्कृत किये जाते और दुतकारे जाते थे, किन्तु आत्म-विश्वास एवं वेद में निष्ठा के धनी अपना काम करते ही जाते थे। उनमें से कितने ही बलिवेदी पर चढ़ गये, कितनों ही को फांसी पर लटकाया गया और कितनों ही को धर्मान्ध यवनों ने छूरे, गंडासों एवं गोलियों के घाट उतारा।

आचार्य दयानन्द से जिन्होंने आन्तरिक स्फूर्ति एवं दिव्य चेतना प्राप्त की थी, वह चुप कैसे बैठ सकते थे। उन्होंने नाना प्रकार की क्रांतिकारी संस्थायें निर्माण कीं और पराधीनता से भारत भूमि को मुक्त करने के लिए कार्य आरम्भ कर दिया। भाई परमानन्द, वीर सावरकर, लाला हरदयालु, श्याम जी कृष्ण वर्मा आदि अनेकों वह नवयुवक थे जिनको जग जानता है।

ला० लाजपतराय को बंगभंग के समय देश निकाला दिया गया और भारत से बाहर ले जाकर मांडले की जेल में रखा गया तब उस पंजाबी ला० लाजपत का नाम दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज लाहौर की कमेटी तक से, जिसके निर्माण में स्वर्गीय लाला जी ने अनथक परिश्रम किया था, पृथक कर दिया गया।

इन्हीं ब्रिटिश सरकार के समर्थकों ने आगे चल कर वीर श्रद्धानन्द तक को गुरुकुल कांगड़ी से अपना दण्ड कमंडल उठा कर देहली आने के लिए विवश किया। दूर जाने की आवश्यकता नहीं, पिछले दिनों सन् १९४२ ई० में जब कि देश में 'करो या मरो' की भीषण प्रतिज्ञा के साथ विदेशी नौकरशाही से देश ने टक्कर ली थी और उधर देश की प्रसिद्ध सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय शिक्षा संस्था गुरुकुल डौरली मेरठ को गैरकानूनी घोषित करके उस पर पुलिस ने कब्जा कर लिया था और उसके

(शेष पृष्ठ २४ पर

तक्षशिला के खण्डहर की ओर—

उठ चल रे मेरे कवि महान् !

वह भरत-तप की पुण्यभूमि, वह भारत वैभव का मसान !
वह तक्षशिला का भूमि खण्ड, कर रहा तुम्हारा-आह्वान !!
उठ चल रे मेरे कवि महान् !!

जिसके गौरव से भरे पड़े अनगिन मेरे इतिहास-पृष्ठ !
जिसके विलास श्री कला और गत वैभव की सीमा अदृष्ट !
जिसकी समृद्धि उत्कर्ष हर्ष है अनिर्दिष्ट औ' है असीम !
था विश्व चूमता जिसे कभी है वही भूमि वह पुण्य-भीम !

यह वही भूमि रघुवंश राज का था फहरा जिस पर निशान !!
उठ चल रे मेरे कवि महान् !!

था इसी धरा पर हुआ कभी जनमेजय का वह नाग-यज्ञ !
था रहा परीक्षित नृपति कभी, हो सत्य-निरत वह महा प्रज्ञ !
थी कभी यही नगरी विद्या औ' कला-ज्ञान की केन्द्र अचल !
था यहीं विश्व-विद्यालय वह थे गुरू जहां पाणिनि-पिङ्गल !
भारत-संस्कृति की अमर ध्वजा थी कभी यही वसुधा पावन !
थे यहीं वर्ष उपवर्ष चरक-चाणक्य गुरु ऋषि कात्यायन।
थे कभी यहीं गूंजा करते — वेद-पुराण के महा मन्त्र !
थे बने कभी खण्डहर में ही स्वातन्त्र्य-युद्ध के महा यन्त्र !
सदियों के भी पश्चात् आज है पीट रहा इतिहास ढोल —

"आर्य ! आर्य-जननि ! जय हो तेरी —"

था इसका ही नव घोष प्रथम था इसका ही वह प्रथम बोल !
चाणक्य राजगुरु ने पहले वह जला यहीं स्वातन्त्र्य-आग।
थे खड़े किये स्वातन्त्र्य वीर, था जगा दिया वह भूमि भाग।
यूनान देश की सत्ता के वैदेशिक शासन के विरुद्ध।
थे किये यहीं तैयार वीर थे अजय अमर थे चिर प्रबुद्ध !
यह वही भूमि जिस पर तमण्ड थे करते शक, पह्लव कुषाण !!
उठ चल रे मेरे कवि महान् !!

नौकरशाही बर्बरता के अधिकारी वर्गों के विरुद्ध !
थे इसी धरा पर हुये भरे, वे जनता के दो बार युद्ध !
थी उठी यहीं आवाज उग्र उन पूंजीपतियों के खिलाफ !
जिनका खाका सम्मुख अपने आ रहा आज फिर साफ-साफ !
है आज जागरित महादेश, उठ खड़े हुये पैंतीस कोटि —

चल पड़े मुक्त करके मां को —
फले फुले औ' बढ़े हुये नित रज में जिसकी लोट-लोट।
सम्मुख जिसका आदर्शपूर्ण पाथेय रूप में उपाख्यान !!
यह वही प्रतिष्ठित धरा धवल, अपनी मर्यादा आन बान !!
उठ चल रे मेरे कवि ! महान !!

वह भरत तप की पुण्य भूमि—वह भारत वैभव का मसान !
वह तक्ष शिला का भूमिखण्ड कर रहा तुम्हारा आह्वान !!

★ श्री रमाशंकर सक्सेना ★

साम्यवादी श्रम शिविरों में भेजने का कानूनी रूप

अमेरिका के राष्ट्रव्यापी सुप्रसिद्ध पत्र "क्रिश्चियन साईन्स मौनिटर" ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की है, जिस में यह बताया है कि साम्यवादी किस तरह से व्यक्ति को बाधित श्रम शिविर की सजा देते हैं और वास्तविक सजा को किस तरह से शब्दों में प्रकाशित करते हैं और कानून का वास्तविक प्रयोग किस तरह किया जाता है। पत्र के अनुसार साम्यवादी नियन्त्रित चैकोस्लोवाकिया के एक व्यक्ति को जिसे राजनैतिक दृष्टिकोण से अच्छा नहीं समझा गया था और इस अपराध में उस व्यक्ति को किस प्रकार सजा दी गई है वहनीचे उद्धृत की जाती है:

सिविल कोड के २५ अक्टूबर १९४८ के कानून नम्बर २४७ पैरा नम्बर ३ के अनुसार स्थापित नम्बर १३ वन जिला कमीशन जांच करने के उपरान्त उक्त कानून के ५ तथा की भागों के पैरा२तथा १ के आधार पर तुम्हें दो वर्ष के लिए बाधित श्रम शिविरों में भेजे जाने की आज्ञा देता है क्योंकि तुम राजनीतिक दृष्टि से एक ऐसे व्यक्ति हो जिस पर भरोसा नहीं किया जा सकता और तुम जनता द्वारा स्थापित जनतन्त्रीय पद्धति के लिए भय के कारण हो।

चतुर्थ पैरा का अनुसरण करते हुए कमीशन ने यह निर्णय किया है कि तुम्हारा वेतन कानून के अनुसार निश्चित किया जाय।

हम तुम्हें बताते हैं कि उक्त कानून के अनुसार यह कार्यवाई कोई दंड नहीं है लेकिन यह चैकोस्लोवाकिया संविधान की भावना के अनुसार तुम्हें काम की शिक्षा की पद्धति है।

तुम्हारे आचरण को देखते हुए बाधित श्रम शिविर में कमीशन द्वारा दी गई सजा की अवधि को घटाया और बढ़ाया जा सकता है

कमीशन के इस निर्णय के विरुद्ध तुम गृह मन्त्रालय में १५ दिन के अन्दर अपील कर सकते हो।

उक्त कानून के पैरा पांच के अनुसार अपील तुम्हारे स्थानान्तरण को नहीं रोक सकती है।

कमीशन का प्रैसिडेन्ट ...... जोसफ होराक।

पत्र ने यह बताया है कि उक्त वन कमीशन जिस ने सजा दी है इस प्रकार के कमीशनों में १२वां है। ऐसे अन्य कमीशन चैकोस्लोवाकिया की जिला राजधानियों में स्थापित हैं जो कथित श्रम कानून के अन्तर्गत अथवा निर्णय घोषित करते हैं। चूंकि बाधित श्रम कानून के अन्तर्गत दी गई सजा बिना किसी वास्तविक अपराध के होती है इस लिए इस प्रकार की सजा को दंड नहीं कहा जाता है। तीन सदस्यों का विशेष कमीशन सजा की घोषणा करता है। इन तीनों सदस्यों को साम्यवादी पार्टी का सदस्य होना चाहिए।

उक्त कानून के प्रथम पैरे में बाधित श्रम शिविरों की स्थापना के विषय में यह बताया गया है कि ये शिविर नागरिकों को अपने राष्ट्र के प्रति काम करने की शिक्षा देते हैं और साथ ही उन्हें अपनी शक्तियों को समाज की भलाई के लिए उपयोग करना सिखाया जाता है।

कानून के दूसरे पैरे के अनुसार १८ से ६० वर्ष तक आयु में यदि कोई भी व्यक्ति काम करने से जी चुराता हो या वह जनता के लोकतन्त्रीय आदेश को चुनौती देता हो तो उसे बाधित श्रम शिविर की सजा दी जाती है। उक्त कानून के तृतीय पैरे में यह व्यक्त किया गया है कि सजा तीन मास से २ वर्ष तक के लिए दी जा सकती है।

चतुर्थ पैरे के अन्तर्गत उन व्यक्तियों को, जिन्हें बाधित श्रम की सजा दी गई हो एक और भी दंड दिया जाता है। यह उनकी सम्पत्ति पर अधिकार करना और उन्हें किसी भी व्यवसाय के लिए, चाहे वे उसे चाहें या न चाहें विवश करना है।

न्याय के निर्णय की घोषणा सदा ही प्रतिवादी (अपराधी) की अनुपस्थिति में की जाती है।

एक दो मास तक बाधित श्रम शिविरों में रहने के उपरान्त बन्दियों को अपनी सजा के कारण का पता चल जाता है। १२ दिन की अपील की अवधि आमतौर पर जब खतम हो जाती है तभी बन्दी को सजा का कारण पता चलता है।

इस वर्ष के मार्च तक एक भी अपील स्वीकार नहीं की गई है।

१९४९ के अन्त तक इस ढंग से लगभग ७लाख बन्दियों को चैकोस्लोवाकिया के बाधित श्रम शिविरों में काम करने की सजा दी गई थी।

रूस में अनुदार और संकीर्ण बनाने वाली उच्च शिक्षा

★ श्री हरबर्ट मारिसन

ब्रिटेन के विद्यार्थी इसमें कोई आश्चर्य नहीं करते कि उनके साथ अनेकों विदेशी विद्यार्थी वहां शिक्षा पायें। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय जनता के सब वर्गों से तो विद्यार्थियों को आकर्षित करता ही है, सारे संसार के लोग भी वहां पढ़ने आते हैं। यह रीति सैकड़ों वर्षों से चली आ रही है। किन्तु ध्यान रखिए कि विचार और विचरण की यह ऐसी स्वतन्त्रता है, जिसका विनाश बड़ी आसानी से हो सकता है। उदाहरणार्थ, आपने सोचा होगा कि यहां पर सभाओं और भाषणों में सोवियट रूस के विद्यार्थी क्यों नहीं देखे जाते। इसका कारण यह नहीं है कि कैम्ब्रिज में उनका स्वागत नहीं किया जाएगा। वस्तुतः उनके देश के शासन में इतना साहस नहीं है कि उन्हें यहां आने की स्वतन्त्रता दें। यही वास्तविक कारण है।

उस दिन मैं सोच रहा था कि हम रूस के उन हजारों विद्यार्थियों के बारे में जिन पर, अन्त में जाकर, युद्ध या शांति का प्रश्न निर्भर हो सकता है, कितना कम सोचते हैं। फलतः मैंने यह पता लगाने का प्रयत्न किया कि रूस के विद्यार्थियों का जीवन कैसा होता है और रूस के विद्यार्थी संसार को किस दृष्टिकोण से देखते हैं।

उच्च शिक्षा के लिए शर्तें

साधारण रूसी लड़का या लड़की उसे जिसे हम निःशुल्क आधारभूत शिक्षा कहेंगे सात वर्षों तक प्राप्त करता है। जो लोग विश्वविद्यालय में भर्ती होना चाहते हैं स्कूल में अतिरिक्त तीन वर्ष बिताते हैं। और इसके लिए उन्हें शुल्क देना पड़ता है। केवल प्रमुख विद्यार्थियों को सरकार की ओर से छात्रवृत्ति मिलती है। क्योंकि रूस में लोगों की आमदनी इतनी कम है इसलिये केवल थोड़े लोग ऐसे हैं जो अपने बच्चों को चौदह वर्ष के बाद भी पढ़ा पाते है

वह रूसी विद्यार्थी जिसके माता-पिता इस बोझ को उठा सकते हैं सच-मुच सौभाग्यशाली है किन्तु विश्वविद्यालय में प्रवेश करने का मार्ग अभी तक अड़चनों से मुक्त न समझिये। विश्वविद्यालय में प्रवेश करने के लिए उसे निम्नलिखित चीजें प्रस्तुत करनी पड़ती हैं।

१. एक स्वलिखित आत्म चरित्र

२. दस वर्षों तक शिक्षा प्राप्त कर चुकने का प्रमाणपत्र

३. आन्तरिक प्रमाणपत्र

४. तीन फोटो

५. सैनिक सेवा सम्बन्धी कागजात

यदि सब चीजें उन विस्तृत रूप में अंकित सूचनाओं से जो-विश्वविद्यालय की विशेष समिति (अथवा गुप्त-पुलिस) के पास होती हैं मिलती जुलती है और यदि प्रवेशार्थी एक डाक्टरी परीक्षा पास करता है तो वह विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने की आशा करता है। मगर अभी नहीं ......उसे एक प्रवेश परीक्षा भी पास करनी पड़ती है जिसमें, अन्य बातों के अतिरिक्त, उसे यह दिखाना आवश्यक है कि स्कूली जीवन में उसके दिमाग में अच्छी और सही राजनैतिक बातें भरी गई हैं। उदाहरण के लिए 'प्रवेशार्थियों की निर्देशिका' (१९४८ संस्करण) को लीजिए और निम्नलिखित शब्दों पर गौर कीजिये: प्रवेशार्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वे निम्नलिखित से पूर्ण और गहरा परिचय प्रमाणित करें: सोवियट साहित्य के प्रमुख नमूने और साहित्यिक प्रश्नों से सम्बन्धित महत्वपूर्ण निर्देशक कागजात, अर्थात् साहित्यिक प्रश्नों पर साम्यवादी दल की केन्द्रीय समितियों के अध्यादेश और ज्वेज्दा तथा लेनिनग्राड नामक पत्रों में जदानव का प्रतिवेदन। यह साहित्य की परीक्षाओं की प्रमुख आवश्यकताओं में एक है।

यदि प्रवेशार्थी इतिहास का विद्यार्थी है तो वर्तमान घटनाओं से परिचय और उसकी तथा स्थायी शांति और जनतन्त्र के पक्ष में लड़े जा रहे संघर्ष में सोवियट राज्य के प्रमुख भाग का ज्ञान—इनकी ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा। यदि प्रवेशार्थी का विषय भौतिक विज्ञान है तो उसे प्रमुख रूसी वैज्ञानिकों तथा आविष्कर्ताओं के विषय में सब कुछ जानना चाहिए। कहने की आवश्यकता नहीं है कि इनमें लार्डगिन, जुकोवस्की, पापाक और सियोलकोवस्की सम्मिलित है और ये लोग थे बिजली की रोशनी, वायुयान, बेतार की टेलीग्राफी और जेट वायुयान के क्रम से तथाकथित आविष्कारक।

इस प्रकार रूसी विद्यार्थी को शीघ्र ही यह मालूम हो जाता है कि आपके विपरीत, वह ज्ञान प्राप्ति के लिये ज्ञान-प्राप्ति की जनतन्त्रवादी भूल नहीं करता। उसे ऐसी भूल से बचाने का प्रयत्न उसकी सरकार भरसक करती है। उसे विश्वविद्यालय में केवल इसलिए प्रवेश करने दिया जाता है, ताकि उसे ठोक पीट कर हकीम बनाया जा सके।

दो संकट—घर और उदर

इन सब कठिनाइयों को पार करने के बाद बेचारा विद्यार्थी अब रहने की जगह तलाश कर रहा है। यदि उसका घर विश्वविद्यालय के पास ही कहीं रहने की जगह ढूंढ सके तो, उन साथियों की तुलना में जो योग्यता और राजनैतिक दृष्टि से विश्वसनीयता में बराबर होने पर भी इतने तकदीर वाले नहीं हैं, वह विश्वविद्यालय में भर्ती किए जाने की अधिक आशा कर सकता है। (जो लोग ब्रिटेन की गृह समस्या को बहुत कठिन समझते हैं उनको मेरी राय है कि जरा रूस का हाल देखें) यदि प्रवेशार्थी को छात्रावास में स्थान की आवश्यकता है और यदि सौभाग्यवश उसे ऐसा स्थान मिल गया तो वह अपने को एक सामुदायिक शयनागार में पाएगा। इस शयनागार में लगभग दस विद्यार्थी रखे जाते हैं और प्रत्येक को साधारण तौर पर २० से ४० रूबल प्रतिमास देने पड़ते हैं।

यदि विद्यार्थी के माता पिता की आर्थिक हालत अच्छी है तो दूसरी बात है, अन्यथा वह जीवन का निर्वाह करने में बहुत कठिनाइयों का सामना करेगा। अधिकांशतः विद्यार्थियों को दो सौ से लेकर ३६५ रूबल मासिक का सरकारी भत्ता मिलता है। पर इसमें से दस प्रतिशत तो फीस के रूप में चला जाता है और अन्य पांच या दस प्रतिशत राज्य ऋण में 'ऐच्छिक' अंशदान के रूप में। यदि विद्यार्थी इस राज्य ऋण में अंशदान नहीं देता तो विश्वविद्यालय के बदले में बलात्श्रम बन्दीगृह उसका स्थान होगा। यदि विद्यार्थी का भत्ता २६० रूबल से अधिक है तो उसे इस पर आय-कर भी देना पड़ता है। अन्य अनिवार्य अंशदानों के बाद उसके पास १५० से ले कर २०० रूबल तक प्रतिमास बच पाते हैं और इसी राशि से उसे खुराक, कपड़ा, लिखने का सामान, किताबें, कपड़ों की धुलाई और यातायात का निपटारा करना पड़ता है।

ऐसे देश में जहां काली रोटी का दाम २ रूबल की किलोग्राम (करीब एक सेर) है, मक्खन का ४०, गोश्त का २३ से ले कर ३५, वहां यह राशि पर्याप्त कभी नहीं कही जा सकती। और यदि बेचारे विद्यार्थी को एक जोड़ा जूता खरीदना पड़ा—जिसके लिए उसे लगभग ४०० रूबल देने पड़ेंगे—या एक सूट की जरूरत हुई—जिसका दाम कम से कम ६०० रूबल होता है तो उसका भगवान ही मालिक है। हो सकता है कि वह अतिरिक्त समय में काम कर थोड़ी बहुत आमदनी कर लेता हो पर इतना तो आप देख ही रहे हैं कि अतिरिक्त समय पाना अत्यन्त कठिन है। यदि वह विद्यार्थी सोवियत रूसी समाज के उच्च सुविधा-सम्पन्न समूहों के किसी सदस्य की सन्तान नहीं है तो उसका जीवन अत्यन्त कठिन होगा और अध्ययन एक गम्भीर समस्या बन जाएगी।

दैनिक कार्यक्रम

दो शब्द रूसी विद्यार्थी के दैनिक कार्यक्रम के विषय में। पहले इस विद्यार्थी के कमरे से परिचित हो लीजिये। इसके कमरे में एक पलंग, एक बिछावना, एक मेज होती है। कपड़ों की आलमारी में उसे एक हिस्सा मिलता है। सुबह सवा सात बजे उठता है, वह विद्यार्थी अपना बिस्तरा ठीक करता है और कमरे के अपने हिस्से की सफाई। इसी कमरे अर्थात् शयनागार में वह थोड़ी-सी काली रोटी और जरा-सा टिन में बन्द किया हुआ मांस खा कर रसोई में जाता और अपने हाथों से बनाई हुई चाय की एक प्याली पी कर लगभग आठ बजे विश्वविद्यालय के लिए, जो साधारण तौर पर छात्रावास से एक घंटे का सफर मांगता है, रवाना होता है।

रविवारों को छोड़ कर प्रतिदिन सुबह नौ बजे से उसकी पढ़ाई आरम्भ होती है ४५ ४५ मिनटों की छः क्लासें होती हैं और हरएक क्लास के बाद पन्द्रह मिनट की छुट्टी मिलती है। इनमें से एक छुट्टी में वह थोड़ी-सी चाय और सैंडविच पाता है। तब लगभग तीन बजे वह दिन का मुख्य भोजन करता है—विश्वविद्यालय के जलपान भरे खाने के कमरे में अथवा छात्रावास वापस आने के बाद। इसके बाद वह अपनी समझ के सर्वोत्तम पुस्तकालय में जा कर रात में देर तक लिखता-पढ़ता है। यहां यह भी बताना जरूरी है कि कभी-कभी अनिवार्य शारीरिक और सैनिक प्रशिक्षण (सप्ताह में चार घंटे) अथवा पेट पालने के लिए अतिरिक्त काम करने के कारण वह रात को देर तक पुस्तकालयों में नहीं पढ़ पाता।

क्लासों से अनुपस्थित रहने का प्रश्न उठता ही नहीं विद्यार्थियों को लगभग २० के समूहों में बांट दिया जाता है। इन समूहों के मुखिया के पास एक किताब होती है, जिसमें वह हाजरी भरता है और गैरहाजिरी के कारण भी लिख लेता है।

मार्क्सवाद की अनिवार्य परीक्षा

विश्वविद्यालय का शिक्षाक्रम पांच वर्षों का होता है और इस अवधि में प्रत्येक छः महीने के बाद एक परीक्षा होती है। यदि विद्यार्थी किसी परीक्षा में भी फेल हो गया तो उसे छात्रवृत्ति से हाथ धोने के अतिरिक्त शायद विश्वविद्यालय से विदाई लेनी पड़ती है। विद्यार्थी चाहे जो विषय पढ़ता हो, तीन अनिवार्य परी-

[शेष पृष्ठ २० पर]

कल के भारतीय प्रदेश में

पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान में संघर्ष बढ़ रहा है

- खां अब्दुल गफ्फार खां अस्वस्थ।
- पूर्वी पाकिस्तान में स्वायत्त शासन की मांग।
- पख्तूनिस्तान की समस्या।
- १) के १॥ रु० लेने की नई चाल।
- नेपाल के राजा ने पाकिस्तान से सहायता मांगी।
- भारतीयों की सम्पत्ति से खिलवाड़।

सीमान्त गांधी बीमार

पाकिस्तान के सर्वश्रेष्ठ तपस्वी सन्त और राजनीतिक नेता खां अब्दुल गफ्फार खां मिण्टगुमरी जेल में बहुत अधिक बीमार हो गये हैं। उन्होंने पाकिस्तान में सच्ची जन जागृति लाने के लिए एक स्वतन्त्र दल का निर्माण किया था। १९४८ में उन्हें अनिश्चित काल के लिए गिरफ्तार कर लिया गया। भारतवर्ष के और विशेषकर कांग्रेस के अत्यन्त माननीय नेता होते हुए भी उन्हें आज भारत सरकार जेल से रिहा नहीं करा सकती। उनकी बीमारी चिन्ता का विषय बन गई है। एक समाचार के अनुसार उन्हें मेयो हस्पताल (लाहौर) में लाया जायगा, जहां उनकी चिकित्सा होगी।

पूर्वी बंगाल में यों ही पाकिस्तान की केन्द्रीय सरकार के प्रति घोर असंतोष था, किन्तु जब से वहां की विधान-परिषद् द्वारा नियत समिति ने मौलिक सिद्धान्तों की घोषणा की है, तब से असन्तोष और भी अधिक उग्र रूप धारण कर रहा है।

●

पूर्वी बंगाल में घोर असन्तोष

ढाका में पूर्वी बंगाल पार्लमेंट्री पार्टी के १३ मुस्लिमलीगी नेताओं द्वारा आयोजित एक सार्वजनिक सभा में एक प्रस्ताव द्वारा मौलिक सिद्धान्त समिति के सुझावों को अत्यधिक असन्तोषजनक बताया गया। सभा में यह मांग की गई कि पूर्वी बंगाल को यथासम्भव अधिकतम स्वायत्त शासन प्रदान किया जाय, क्योंकि इसकी स्थिति बड़ी अद्भुत है और यह शेष पाकिस्तान से समुद्र मार्ग से लगभग ३ हजार मील दूर है।

सभा में मांग की गई कि सेना, विदेशों से संधि-विग्रह, विदेश नीति मुद्रा आदि ही केवल संघ सरकार के पास रहने चाहिए। शेष सब अधिकार यथा-सम्भव प्रान्तीय सरकारों के पास रहने चाहिए।

यह भी मांग की गई कि वरिष्ठ भवन में प्रान्तों का प्रतिनिधित्व जन-संख्या के आधार पर किया जाय। इसके साथ ही सेना का निर्माण इस रूप से किया जाय कि उसमें ५० प्रतिशत सैनिक पूर्वी बंगाल के हों तथा आधी सेना पूर्वी बंगाल में रहनी चाहिए।

इसके साथ ही यह भी मांग की गई कि बङ्गाली और उर्दू दोनों ही संघ की राज्य भाषा हों, तथा अंग्रेजी को धीमे-धीमे हटाया जाय।

यह असन्तोष किसी भी समय उग्ररूप धारण कर सकता है।

●

पूर्वी बंगाल स्वतन्त्र होगा

वस्तुतः पाकिस्तान एक बिल्कुल कृत्रिम सृष्टि है, जिसके दो बड़े भाग एक हजार मील से भी अधिक भारतीय भूमि द्वारा पृथक हैं। पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान के बीच वर्तमान सम्बन्ध नहीं बना रह सकता। या तो पूर्वी बंगाल पश्चिमी पाकिस्तान का उपनिवेश बन जायगा अथवा इस वर्तमान सम्बन्ध के स्थान पर हिन्दुस्तान के पड़ोसी क्षेत्र के साथ उसका सम्बन्ध बढ़ता जायगा। पश्चिमी पाकिस्तान में इतनी सैनिक शक्ति नहीं है कि वह पूर्वी पाकिस्तान को अपने आधीन रख सके। इसमें संदेह नहीं कि उसका एक सैद्धान्तिक प्रभुत्व अवश्य कायम है, किन्तु यह कहना कठिन है कि वह कितने दिन तक कायम रहेगा। अतएव पूर्वी पाकिस्तान के उपनिवेश बनने की अपेक्षा उसके स्वतन्त्र होने की ही अधिक सम्भावना है।

ऐतिहासिक भवितव्य अवश्यम्भावी है। यद्यपि हिन्दुस्तान उस स्थिति को लाने में कुछ नहीं कर सकता, किन्तु पाकिस्तान सशंकित रहेगा और जो बात स्वभावतः होगी, उसके लिए भी वह हिंदुस्तान पर ही दोषारोपण करेगा। पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान में अभी से व्यापार, भाषा और नौकरी के प्रश्न पर संघर्ष शुरू हो गया है तथा आगे और होने वाला है। पाकिस्तान इस समस्या को युक्तिपूर्वक हल करने की बजाय इस पर पर्दा डालने और इसको अयुक्तिपूर्वक हिन्दू-मुस्लिम और हिन्द-पाकिस्तान समस्या के रूप में परिवर्तित कर देने के खतरनाक तरीके को काम में ला रहा है।

●

पख्तूनिस्तान

इधर पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान के बीच अप्राकृतिक संयोग में ये भयंकर सम्भावनाएं हैं, उधर पाकिस्तान में पश्तो प्रदेश का सम्मिलन भी उतना ही विस्फोटक है। करीब ८० लाख पश्तो भाषा भाषी लोग सीमाप्रान्त तथा कबायली क्षेत्र में रहते हैं और उनकी पख्तूनिस्तान की मांग पाकिस्तान का ही तार्किक विस्तार और कटु पूर्ति है। अनेक अर्थों में जीवित भारतीयों में सबसे बड़े खान अब्दुल गफ्फार खां पाकिस्तान में बन्दी हैं और उनके अनुयायी भी जेलों में बन्द हैं। पठानों का भीषण कत्लेआम भी हुआ है, जैसे १२ अगस्त १९४८ को चारसद्दा में और बाद को स्वाबी में। किन्तु अफगानिस्तान में उसके पक्के दोस्त हैं। इस क्षेत्र में भी पाकिस्तान का भविष्य अन्धकारमय है, चाहे वह कबायली पठानों को अधीन करने के लिए बम और गोली बरसाने वाली अपनी सुसज्जित सेनाओं पर कितना भरोसा क्यों न करें, जैसा कि उसने १९ अगस्त १९५० को अहमद जई क्षेत्र, पागिन और वामनजई, मुसबाब और मीरनशाह में किया भी है।

कबायली क्षेत्रों में रूस की चीनी ५-६ आने सेर बिकती थी, किन्तु पाकिस्तान की चीनी एक रुपये सेर। इससे स्वभावतः पश्तो लोगों में सोवियत व्यवस्था जानने के सम्बन्ध में जिज्ञासा और प्रवृत्ति उत्पन्न हुई जिसमें जीवन निर्वाह इतना सस्ता और आसान है। कदाचित् सीमा के दोनों ओर जनता के सम्बन्ध में सबसे बड़ा अभाव उनकी आर्थिक प्रणालियों की बिल्कुल जड़ता और दोनों भागों में जनता की स्थिति में सुधार का न होना रहा है। अगर हिन्दुस्तान ने आर्थिक हित और सामाजिक न्याय की अपनी प्रतिज्ञा पूरी की होती, तो इससे पाकिस्तान की जनता में भी सहानुभूति की प्रतिध्वनि अथवा दिलचस्पी उत्पन्न हो सकती थी। हिन्दुस्तान ने पाकिस्तान के साथ अपनी सर्वोत्तम दलील का इस्तेमाल नहीं किया जो आर्थिक सैनिक शक्ति में भी सहायक है। अगर पाकिस्तान समृद्धि और न्याय की ओर अग्रसर हिन्दुस्तान के साथ व्यापार को दबाने की कोशिश करता तो अमृतसर से लाहौर बहुत दूर नहीं है। और न तो कलकत्ता से ढाका, और यह समाचार अवश्य पहुंच जाता। हिन्दुस्तान में जितनी सम्पन्नता होगी, पाकिस्तान की जनता में अपनी आर्थिक जड़ता के प्रति उतना ही रोष उत्पन्न होगा, और संभवतः वे देश के विभाजन पर पश्चात्ताप करेंगे।

●

१) के १॥) लेने की चाल

भारत और पाकिस्तान में मुद्रा-संघर्ष जारी है। पाकिस्तान अपने रुपये की कीमत ज्यादा लगाये हुए है। वह आज भी इस पर आग्रह कर रहा है। लेकिन इसी कारण दोनों देशों का पारस्परिक व्यापार ठप्प पड़ा है। अब मालूम हुआ है कि पाकिस्तान सरकार ने रुपया वसूल करने का एक नया उपाय निकाला है। जिन लोगों ने पाकिस्तान में किसी तरह के कर देने थे, सरकार उनसे वसूल करने की कोशिश कर रही है और इसके लिए दिल्ली-स्थित पाकिस्तान कमिश्नर ने अपने यहां एक दफ्तर खोल दिया है। इस दफ्तर में पाकिस्तान से आने वाले हिन्दू सिख अपना आय कर उसके यहां जमा करा दें, किन्तु इसकी दर १४४ : १०० होगी। अर्थात् १००) रु० का आय कर देने के लिए करदाताओं को पाकिस्तान कमिश्नर के कार्यालय में १४४) रु० जमा कराने पड़ेंगे। पाकिस्तान सरकार ने अपनी मुद्रानीति को अमल में लाने का यह नया तरीका सोचा है। उसे विश्वास है

[शेष पृष्ठ २२ पर]

नैपाल में परिवर्तन

लेखक— श्री 'नीरस योगी'

★

भारत की उत्तरी सीमा पर होने वाली घटनाओं में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। तिब्बत के धार्मिक प्रदेश में साम्यवादी चीन की सेनायें प्रवेश कर चुकी हैं। नैपाल के प्रमुख शासक ने प्रधान मन्त्री के विरोध स्वरूप भारत में शरण ली है। शताब्दियों तक बाह्य हस्तक्षेप से सुरक्षित रहने वाला नैपाल जिस पर ब्रिटिश सरकार भी आधिपत्य न कर सकी थी, आज आन्तरिक विद्रोह के कारण संसार के लिए एक पहेली बन गया है। पिछड़ी हुई जनता ने आज वहां पर अपने एक शासक वर्ग के प्रति विद्रोह कर दिया है, जिसको कि समस्त देशों में आश्चर्य के साथ देखा जा रहा है। तिब्बत, कोरिया और हिन्द चीन के समान नैपाल आज की राजनीति के लिए एक कसौटी है। नैपाल में हो रही घटनाओं के समझने के लिये हमें उसके प्राचीन इतिहास को देखना होगा, क्योंकि इस प्राचीनतम राज्य के विद्रोह की जड़ में जनता की भावना है, जो कि परिस्थितियों पर निर्भर रहती है।

धार्मिक प्रधानता

नैपाल में हिन्दू धर्म व बौद्ध धर्म प्रचलित हैं। धर्म के नाम पर जनता का शोषण किया जाता है। राज्य का एक वर्ग विशेष ही शक्तिसम्पन्न है। प्रायः सन् १७७० ई० में वहां पर ईसाई प्रचारकों पर पाबन्दी लगा दी गई थी, क्योंकि उनके आगमन के पश्चात् ही ईस्ट-इण्डिया कम्पनी की सेनाओं ने नैपाल पर आक्रमण किया था। १८१६ में अंग्रेज़ों ने तराई का क्षेत्र जो कि मलेरिया का स्थान है, गोरखों से छीन लिया था, परन्तु १८५७ के विद्रोह में गोरखों द्वारा सहायता देने पर वह उन्हें वापिस कर दिया गया। गत दो महायुद्धों में भी गोरखों ने ब्रिटिश सरकार की सहायता की है। प्रथम महायुद्ध के पश्चात् से आजतक भारत सरकार प्रतिवर्ष नैपाल को १० लाख रुपये की सहायता देती है। आज भी ब्रिटिश सेना में गोरखों की संख्या प्रायः ८००० है जो कि सिंगापुर व मलाया में जनता का विद्रोह दबाने के लिये प्रयुक्त किये जा रहे हैं। काश्मीर में भी आक्रान्ताओं को भगाने के लिये गोरखा सैनिक निरन्तर प्रयत्न कर रहे हैं।

प्रायः बीस वर्ष तक सेना में कार्य करने के पश्चात् पुराने सैनिकों के स्थान पर नये भरती किये जाते हैं। इन सैनिकों को वीरता के कारण ब्रिटिश-शासन में अनेकों बार विक्टोरिया क्रास प्रदान किया गया। भारत सरकार द्वारा भी इन वीर सैनिकों को परमवीर चक्र इत्यादि से विभूषित किया जा चुका है। गोरखे जब कभी सेना से देश लौटते हैं, तो उन्हें प्रचलित हिन्दू धर्म के अनुसार समुद्र यात्रा करने का प्रायश्चित्त करना पड़ता है। नैपाल राज्य का प्रत्येक नागरिक सैनिक होता है, वैसे नियमित सेना की संख्या प्रायः ४५००० है जो कि प्राचीन व नवीन सब प्रकार के अस्त्र प्रयोग करती है।

शिक्षा का अभाव

राज्य में शिक्षा व आवागमन के साधनों का अभाव है। राज्य में सामन्तशाही का बोलबाला है तथा इसी कारण जनता का शोषण किया जाता है। राज्य में कुल २२ हाई स्कूल हैं तथा एक कन्या पाठशाला, जिसका कि विरोध भी किया गया है। आगामी वर्ष विश्वविद्यालय स्थापित करने की भी योजना बनाई गई है। हस्तकौशल व दस्तकारी की शिक्षा देने का भी प्रबन्ध किया जायेगा। उच्च शिक्षा अंग्रेज़ी द्वारा दी जायगी। यातायात व आवागमन के साधन प्रायः नहीं के बराबर हैं। सड़कें न होने के कारण सामान कुलियों द्वारा ढोया जाता है।

स्थानीय राजनीति

महाराज त्रिभुवन ही सर्वप्रथम ऐसे शासक हैं, जिन्होंने कि इस शताब्दी में प्रधान मन्त्री के प्रति विद्रोह किया है और उनके चंगुल से निकल कर भारत में शरण ली है। नैपाल के दो शासक परिवारों में राणा परिवार अत्यन्त प्रभावशाली हैं। प्रधान मन्त्री व सेनापति महाराज शमशेर मोहन राणा सर्वोच्च प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं। १९२३ में अंग्रेज़ों द्वारा गत युद्ध में नैपाल के सहायता देने पर उन्हें हिज हाईनेस की उपाधि दी गई थी।

महाराजा त्रिभुवन

राजा त्रिभुवन द्वारा महलों के परित्याग करने में प्राचीन घटनाओं पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। इनका राजतिलक ६ वर्ष की अवस्था में सन् १९०८ में किया गया था। शिक्षा का भार तत्कालीन मन्त्रियों पर छोड़ दिया गया था। अंग्रेज़ी की शिक्षा देने के लिये एक बंगाली शिक्षक की नियुक्ति की गई, परन्तु सुधार विरोधी राणा परिवार ने एक छोटी सी घटना के कारण उस शिक्षक को निकाल दिया। इन बंगाली महोदय ने राजा को एक पुस्तक ब्रिटेन के वैधानिक सुधारों के विषय में दी थी। इसी कारण यह घटना घटी। इसके

★ राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद तथा नैपाल नरेश ★

पश्चात् यह निर्णय किया गया कि हिंदू राज्य में शासक को केवल संस्कृत ही पढ़नी चाहिये।

जनता के आन्दोलन के कारण जो कि प्रजा परिषद् द्वारा चलाया गया था राजा के साथ काफ़ी पूछताछ की गई, जिसका कि सेना ने विरोध किया था। इस आन्दोलन के सम्बन्ध में सैकड़ों कार्यकर्ता कैद कर लिये गये थे और कुछ को फांसी देकर लाशें राजमार्ग पर लटका दी गई थीं, जिससे कि जनता में भय का संचार हो। राजा द्वारा एक बार कैदियों को जो कि मजदूरों का कार्य करते थे, ६ पैसे प्रति दिन के स्थान पर ५ रुपये प्रति दिन भत्ता देने पर यह नियम बना दिया गया कि बिना प्रधान मन्त्री की स्वीकृति के कोई बिल नहीं बनाया जा सकेगा।

न्याय व नीति के सिद्धान्तानुसार राजा महाशक्तिशाली माना जाता है। उसने दो बार प्रधान मन्त्रियों को पद से हटा भी दिया है। प्रथम बार १९०१ में महाराज त्रिभुवन के पूर्वज द्वारा और एक बार स्वयं १९३१ में महाराज द्वारा तत्कालीन प्रधान मन्त्री रुद्र शमशेर जंग राणा को हटा दिया गया था। इन सब अधिकारों के होते हुए भी राजा प्रधान मन्त्री का कैदी मात्र ही होता है।

राजनैतिक सुधार

नैपाल में आज भी मध्ययुगीन सामन्त शाही का बोलबाला है। जनता पर निरन्तर न्याय की दुहाई देकर अत्याचार किये जाते हैं। स्वतन्त्रता तो वहां नाम मात्र को भी नहीं है। प्रजातंत्र के सम्बन्ध में एक बार प्रधान मन्त्री ने कहा था कि वह दौड़ पसन्द नहीं करते। प्रजातंत्र पूर्वी सभ्यता के लिये विदेशी है, इसके लाभ समझने के लिये जनता को समय लगेगा।

विचारधाराओं के विरोध होने के कारण प्रजा का पक्ष लेने वाले राजा भारत भाग आये हैं। जनता ने इन अत्याचारों से क्षुब्ध हो कर राजा को अध्यक्ष मानकर एक समानान्तर सरकार स्थापित करली है। कुछ स्थानों पर तो इस का कब्जा भी हो गया है। इस विद्रोह में एक बात उल्लेखनीय है कि राणा परिवार के अनेकों सदस्य जनता का साथ दे रहे हैं। कुछ स्थानों पर सैनिकों ने भी सहायता प्रदान की है। राजा के राजमहल छोड़ जाने के पश्चात्

[शेष पृष्ठ १८ पर]

आधी दुनिया

वेश्यावृत्ति एक आर्थिक समस्या है

★ श्री आनन्दप्रकाश गुप्त

वास्तव में वेश्यावृत्ति एक आर्थिक समस्या है जहां बेकारी ज्यादा है वहां वेश्यावृत्ति भी अधिक है ! पिछले दिनों जब मैं दलहौजी गया तो वहां पर मैंने इस बात का थोड़ा बहुत अनुभव किया। और ऐसा सुनने में आया कि चम्बे में वेश्याओं की समस्या एक भयंकर रूप धारण कर रही है। मैं यह नहीं कह सकता कि यह कहां तक सत्य है, परन्तु इतना अवश्य सत्य है कि पैसे पैसे के लिए अपनी अस्मत और सतीत्व को लुटा देने वाली युवती अपने सुख और आनन्द को आप ही मिट्टी में मिला देती हैं।

चल-चित्र भी वेश्यावृति का एक कारण प्रतीत होता है। रंग बिरंगे चित्र दिखा कर भारत की युवतियों के मन में जो भाव भरे जाते हैं, वे उन्हें वेश्यावृत्ति की ओर खींचते हैं। अप्राकृतिक सौन्दर्य और बड़े बेहूदा प्रेम की लालसायें दिखा कर हमारी नवयुवतियों के हृदय में वह चिंगारी जला दी जाती है, जिसे वह गृह जीवन में रहती हुई कभी नहीं बुझा सकतीं। और फिर वे घर छोड़ने पर विवश हो जाती हैं ! जब घर से भाग कर वह चित्रदर्शक के पास अपनी उस चिंगारी को बुझाने जाती है जो चल-चित्र ने जलाई थी, तो विफल होने पर वह वेश्यावृत्ति की ओर भागती है, जो इस चिंगारी को बुझाने का अन्तिम और आखरी साधन रह जाता है ! घर से भाग जाने के बाद समाज अपने कपाट इन युवतियों के लिए बन्द कर लेता है, माता पिता, इन से मुंह चुराने लगते हैं तो यह युवतियां पेट पालने की खातिर उस ओर जाती हैं जिधर जाना वह स्वप्न में भी स्वीकार नहीं करतीं ?

पश्चिमी सभ्यता की आंधी भी भारत के नवयुवकों और युवतियों के जीवन को नष्ट करने में अपना हाथ बटाया है ! आधुनिक काल में युवक और युवती प्रेम के अन्दर अन्धे होकर घर से भाग जाते हैं ! वह यह नहीं जानते कि इसका फल क्या होगा। शायद वह यह भूल जाते हैं कि जिसे वह अपने जीवन के सुखी दिन समझते हैं वास्तव में वह उनके नाश के दिन हैं ! युवती भूल जाती है कि यह दो दिन उसके सुखी जीवन के विनाश के दिन हैं। और ऐसा ही होता है, जब युवती गर्भवती हो जाती अथवा युवक का दिल उस से भर जाता है तो वह उसे अकेली छोड़ किसी दूसरी के साथ भाग जाता है ! फलस्वरूप युवती का जीवन बर्बाद हो जाता है। और वह बाजार के कोठों पर बैठ यात्री की नजरों में नजरें डाल अपना जीवन व्यतीत करती हैं ! अपने जीवन की सुख और शान्ति को कुचल कर, अपने अरमानों को मिट्टी मे मिला कर हमारी ऐसी अभाग्य युवतियां उस यात्री की राह पर आंखें बिछाये रहती हैं जो इनके सतीत्व को चन्द चांदी के टुकड़ों में मोल लेने पर प्रस्तुत होता है।

नैतिक तथा आर्थिक समस्या

— डी० कोहली

एक पुरुष की कमर झुक कर धनुष का रूप ही क्यों न धारण कर चुकी हो, उसके मुख में अन्न चबाने को एक दांत भी न हो, परन्तु उसे पुनर्विवाह का अधिकार है। उसे अधिकार है, एक से अधिक पत्नियां तथा रखैलें रखने का। परन्तु एक कुमार बच्ची को जिसे कि अपने पति का मुख देखना भी नसीब न हुआ हो, कोई अधिकार नहीं कि वह अपने भविष्य के विषय में कुछ भी सोचें, घर वालों के सामने एक शब्द भी जिह्वा से निकालने का साहस कर सके। चाहे वह आयुपर्यन्त ही क्यों न वैधव्य की धूं-धू करती ज्वाला में जलती रहे। परन्तु उसे मुख खोलने का कोई अधिकार नहीं। उसे अच्छा ओढ़ने का भी कोई अधिकार नहीं। वह किसी के साथ निकल क्यों न जावे, कोठे पर बैठ जावे, धर्म परिवर्तन कर ले, हम यह गवारा कर सकते हैं, परन्तु उसे सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते देखना हम किसी दशा में भी देखना ग्वारा नहीं कर सकते। ऐसा कहते हैं हमारे समाज तथा धर्म के नियम। हमारे समाज तथा धर्म का इतना तंग घेरा है कि हमें हित-अहित, ठीक गलत, काले-सफेद में भी अन्तर समझने की क्षमता नहीं।

स्त्रियों को उनके अधिकारों से वंचित रखना तथा उन्हें दासी ही समझना वेश्यावृत्ति के मूल कारण हैं। इन्हीं कष्टों से तपी हुई हमारी बहनें पत्नियां ही तो इस घृणित पेशे को अपनाने को विवश हो उठती हैं। जब किसी स्त्री को अपना भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होता है, तो उसे ऐसे पेशों के अतिरिक्त और कोई मार्ग ही नहीं सूझता, जिससे कि वह अपने पेट की ज्वाला को शांत कर सके।

इस समस्या का हल यदि हो सकता है तो वह केवल यही ही है कि स्त्री-पुरुषों को एक समान अधिकार। जो स्वतन्त्रता पुरुष समाज को प्राप्त है, उनसे स्त्री समाज को ही क्यों वंचित रखा जावे। यह कहां का न्याय है कि एक पुरुष चाहे तो दिन में सैकड़ों स्त्रियों से क्यों न मिले, उनके साथ घूमे, आनन्द मनाये, उसे रोकने वाला कोई नहीं। परन्तु एक स्त्री का अकेले घूमना तो एक ओर रहा। यदि वह द्वार पर किसी भिकारी से बात भी करती देखी जावे तो वह दुराचारिणी तथा कुलभ्रष्टा हो जाती है।

● डेनमार्क के लोक-सदन में वित्त मन्त्री श्री योरकिल क्रिस्टनसेन द्वारा किये गये नव विधान द्वारा अविवाहितों पर टैक्स लगाया जायगा।

मन्त्री महोदय ने प्रस्ताव रखा कि २ हजार क्रोनर (१०० पौंड) वार्षिक आमदनी २ प्रतिशत कर तथा २० हजार क्रोनर (१५ सौ पौंड) आमदनी पर ४ प्रतिशत कर लगाया जावे।

यह कर डेनमार्क के आर्थिक संकट को दूर करने का एक तरीका है।

● नार्वे में शादीशुदा लोगों पर टैक्स लगता है और इतना टैक्स लगता है कि हजारों लोग मियां बीबी की तरह रहते हुए भी यह नहीं बताते कि हमारा ब्याह हो गया है।

● प्रधान सेनापति करिअप्पा ने एक वक्तव्य में कहा है कि आप पत्रकार जनता को समझावें कि फी दम्पत्ति दो बच्चों से ज्यादाहरगिज न पैदा किये जावें।

वैवाहिक कर

उत्तर प्रदेश में वैवाहिक अवसरों पर वर-पक्ष को लाभ ही लाभ रहा है, सुन्दर वधू के साथ भरपूर यौतिक प्राप्त करके भी वह व्यय नाम मात्र को भी नहीं करता। परन्तु भविष्य में संभवतः ऐसा न हो सकेगा, क्योंकि राज में म्यूनिसिपैलटियां शीघ्र ही विवाह-कर लगाने पर विचार कर रही है। राज्य की म्यूनिसिपैलिटियों की आर्थिक दशा सुधारने के लिये स्थानिक संस्थाओं की सहायता अनुदान समिति ने जो सिफारशें की हैं, उनमें से एक विवाह-कर लगाने के संबंध में भी है। इस प्रकार का कर कुछ अन्य राज्य उदाहरणार्थ बम्बई में, प्रचलित है। यह कर केवल वर-पक्ष पर लगाया जायेगा। वर के पिता अथवा अंग रक्षक के निवास स्थान के वार्षिक किराये का १० प्रतिशत निर्धारित किये जाने का सुझाव किया गया है। जहां भवन शुल्क के आधार पर विवाह-कर निर्धारित करना संभव न होगा, वहां २५ रुपया प्रति विवाह म्यूनिसिपल शुल्क लिया जायगा।

●

रिक्शा चालकों की पत्नियां

उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री गोविन्दवल्लभ जी पन्त के गाजीपुर जाने के अवसर पर वहां के रिक्शा चलाने वालों की पत्नियों ने एक सम्मिलित आवेदन पत्र उनकी सेवा में उपस्थित करने का निश्चय किया है। इस आवेदन पत्र में उन्होंने प्रार्थना की है "कि उनके पतियों को" रिक्शा चलाने के काम से रोका जाय क्योंकि जब वे घर लौटते हैं तो वे बहुत थक जाते हैं और शराब पीकर उनसे दुर्व्यवहार करते हैं। उत्तर प्रदेश के विभिन्न नगरों में इस समय रिक्शा का प्रचलन काफी बढ़ गया है।

●

अमेरिका में नीग्रो महिलाओं की राष्ट्रीय परिषद

नीग्रो महिलाओं की राष्ट्रीय परिषद की अमेरिका भर में कुल सदस्यता ८ लाख ५० हजार से भी अधिक है। इस परिषद की अमेरिका में २२ संस्थाएं है और ८१ से भी अधिक स्थानीय सभाएं हैं। इस परिषद का उद्देश्य नीग्रो महिलाओं में नेतृत्व का विकास करना है और उन्हें अमेरिका के राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग बनाना है।

तिब्बत एक स्वतन्त्र राज्य है, चीन द्वारा शासित भाग नहीं

[प्रस्तुत लेख के लेखक श्री जी० थार चीन 'टिबट डेली मिरर' के सम्पादक हैं। १९२५ में यह पत्र आरम्भ हुआ था। यह तिब्बत का एकमात्र पत्र है। पत्र ५०० की संख्या में छपता है, किन्तु उसके पाठक १०००० से भी अधिक हैं। इसके ग्राहक न्यूयार्क और स्टाकहोम में भी हैं। लेखक ने तिब्बत के प्रश्न को राजनीतिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि से देखते हुए प्रस्तुत लेख में सारी परिस्थिति का तुलनात्मक ऐतिहासिक तथा सांप्रदायिक निरूपण किया है। लामाओं का तिब्बत एक स्वतन्त्र बौद्ध साम्प्रदायिक राज्य है, उस पर आक्रमण हो गया है।

★ श्री जी० थार० चीन ★

गत वर्ष नेपाल सरकार ने संयुक्त राष्ट्रसंघ में सदस्य होने के लिये सिफारिश की थी। नेपाल तिब्बत का पड़ोसी है। और यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ का सभ्य बनने की उसकी अभिलाषा कुछ अर्थ रखती है, तिब्बत ने भी सदस्य बनने के लिए प्रार्थना पत्र दिया होता तो आज जगत में यह प्रश्न जितना गम्भीर प्रतीत होता है, उतना जटिल न बनता।

स्वतन्त्र राज्य

इतिहास के पृष्ठ कहते हैं कि तिब्बत सदा से एक स्वतन्त्र राज्य रहा है। सन् १८५६ में तिब्बत और नेपाल में युद्ध की विभीषिका प्रज्वलित हो गई थी। दोनों राज्यों में सन्धि होने पर यह युद्ध समाप्त हुआ था। इस युद्ध के समय चीन का कोई स्थान नहीं था। उस समय नेपालियों के विरुद्ध चीनियों ने तिब्बत की कोई सहायता नहीं की थी। यही नहीं नेपाल और तिब्बत में जो सन्धि हुई उसमें भी चीन ने कोई सक्रिय भाग नहीं लिया था। इस सन्धि के परिणाम-स्वरूप तिब्बत नेपाल को प्रति वर्ष दस हजार रुपया क्षतिपूर्ति के रूप में देता था।

१९०४ में ग्रेट ब्रिटेन ने तिब्बत पर आक्रमण किया था। यद्यपि ब्रिटिश सैन्य दल आधुनिक शस्त्र सामग्री से सुसज्जित था तो भी अपनी सामान्य शस्त्र सामग्री की सहायता से अशिक्षित तिब्बती सैनिकों ने अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए युद्ध में वीरता का परिचय दिया था संसार इस घटना से सुपरिचित हो चुका है।

ब्रिटिश सेना १९०४ में जब ल्हासा पहुंची, तब दोनों सरकारों में सन्धि के नियम निश्चित हुए थे। इस सन्धिकाल में भी तिब्बत में चीनियों का स्थान मैं नहीं देखता। इतिहास की जिन दो घटनाओं की ओर मैंने संकेत किया है। उसका तात्पर्य यही है कि मैं यह बतलाना चाहता हूं कि तिब्बत चीन की हुकूमत में नहीं था।

जिस समय ब्रिटिश सैन्य दल आक्रमणकारी के रूप में ल्हासा पहुँचा, उसके पहले चीन का एक प्रतिनिधि कुछ सैनिकों के साथ, तिब्बत के दलाई लामा के अंगरक्षक के रूप में वहां रहता था। दलाईलामा चीन के सम्राट के उसी भांति चीनवासियों के आध्यात्मिक आचार्य अर्थात् गुरु थे। इस प्रतिनिधि या उसके सैनिकों का तिब्बत की आंतरिक समस्याओं से कोई सम्बन्ध नहीं था। वह तो केवल ऊपर कहे हेतु से ही ल्हासा में रहता था। पहले की घटनाओं में चीन का कोई स्थान नहीं था—इसका यह भी एक कारण था।

चीन और तिब्बत

एक बात, जो यहां याद रखने की है, वह यह है कि तत्कालीन चीन के सम्राट ने तिब्बत की ओर से ब्रिटिशों को युद्ध व्यय दिया था। ऐसा क्यों हुआ? क्या इसे साधारण समझा जा सकता है। दलाईलामा चीन के सम्राट के गुरु और आध्यात्मिक आचार्य थे। धार्मिक दृष्टि से ऐसा तो क्या, आवश्यकता पड़ने पर अपना जीवन भी दे देना चाहिये। यही कारण था कि तिब्बत की ओर से चीन की सरकार ने ब्रिटिशों को युद्ध का व्यय दिया था। जब चीन के सम्राट को गद्दी पर से हटा दिया गया तब ल्हासास्थित चीनी प्रतिनिधि और उसके सैनिकों को लौटा दिया गया था। तब से चीनसे किसी भांति तिब्बत का सम्बन्ध नहीं रहा है। और न कोई धार्मिक दृष्टि से ही कोई सम्पर्क रह गया है।

१९१४ में शिमला में ब्रिटेन, चीन और तिब्बत में सन्धि के नियम उपस्थित किये गये थे। उस सन्धि पत्र पर चीन के प्रतिनिधि ने केवल अपना परिचय देते हुए अपनी सरकारी सूचना के अनुसार हस्ताक्षर किया था। चीन ने सन्धि-पत्रके अनुसार न बर्ताव ही किया, न सन्धि नियमों के पुनरवलोकन का प्रश्न ही उठाया। ब्रिटिश सरकार ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन करारों के अनुसार तिब्बत पर चीन का आधिपत्य स्वीकार किया था। इतना होते हुए भी ब्रिटेन ने स्पष्ट रूप से यह स्वीकार नहीं किया है कि तिब्बत चीन का एक अंग है।

संघर्ष की घटनाएं

इसी से १९१८ में तिब्बत की पूर्वीय सरहद पर चीन और तिब्बत में संघर्ष होने की कितनी ही घटनायें घट गईं थीं। तिब्बत को जोड़ने वाले चीन के सरहदी प्रदेश में रहने वाले कितने ही तिब्बतियों ने चीनी सरकार के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। यह संघर्ष तभी समाप्त हुआ था, जब चीनी जनता किन्हीं निश्चित नियमों के पालन के लिए मजबूर हुई।

तिब्बत में निजी सरकार की ही व्यवस्था है और देश के संरक्षण के लिए सैनिकों को भी रखा गया है। इससे भी यह साबित होता है कि तिब्बत चीन के आधिपत्य में नहीं है।

इसके बाद लम्बे समय के पश्चात् चीन की सरकार ने ल्हासा में एक मिशन की स्थापना की। इस मिशन की स्थापना लगभग १९३५ में हुई। इस संस्था का जन्म कैसे हुआ? तेरहवें दलाई लामा का जब अवसान हुआ

उस समय चीन की सरकार ने दलाई लामा को श्रद्धांजलि देने के लिए एक प्रतिनिधि तिब्बत में भेजा था। यह प्रतिनिधि दलाई लामा को केवल अन्तिम सम्मान देने के लिये ही नहीं आया था, किन्तु साथ ही साथ दोनों देशों में पुनः मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने की अभिलाषा लेकर भी आया था। परिणाम यह हुआ कि ल्हासा में चीनी मिशन की स्थापना की अनुमति दे दी गई और यह अवसर देख कर ब्रिटिश सरकार ने भी वही रास्ता अपनाया।

गत वर्ष तिब्बत की सरकार ने ल्हासा के चीनी मिशन के प्रतिनिधि को निष्कासित कर दिया। अब यह देखते हुए यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि तिब्बत चीन के आधिपत्य में था या उसका अंगभूत था, तो चीन की सरकार ने अपने तिब्बत के मिशन के प्रतिनिधि के हटा दिये जाने पर तिब्बत की सरकार के आदेश को मान्य कैसे किया?

तिब्बत का प्रश्न

तिब्बत एक स्वतन्त्र और धार्मिक राज्य है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य यदि इस बात में सहमत हों तो इस समय विदेशी आक्रमण के जो कंकड़ छिपाए जा रहे हैं, उनके विरोध में उन्हें रचनात्मक कदम उठाना चाहिये। क्या वे ऐसा कदम उठायेंगे या तिब्बत के प्रश्न पर अपनी आंख-कान मूंद लेंगे?

तिब्बत की धरती और उसके लामाओं के आस-पास की रहस्यमयता के लिये जिनके ऊंचे विचार हैं, उनके लिये चीन और तिब्बत के आध्यात्मिक सम्बन्धों का ज्ञान प्राप्त करना आकर्षक होगा। संक्षेप में कहा जाय तो तिब्बत के दलाईलामा और चीन के सम्राट का सम्बन्ध अनुक्रम से 'आध्यात्मिक विभूति या 'आध्यात्मिक नेता, कहा जा सकता है।

कौन महान

इन आध्यात्मिक विभूतियों का कर्तव्य है कि वे प्रभु से प्रार्थना करें, आशीर्वाद दें और आध्यात्मिक नेताओं (सम्राटों) का कल्याण करें। इसलिये सम्राट लामाओं को अंजलि देने और उनका अनुसरण करने को बाध्य हैं। महान सन्त पन्चेन और रोपा का कथन है कि 'सब से पहले आध्यात्मिक गुरु बिना किसी भी बुद्ध का जन्म नहीं हुआ था। सहस्रों बुद्ध आये और चले गये, जो चले गये, वे और जो भविष्य में आने वाले हैं—ये सभी बुद्ध आध्यात्मिक गुरुओं द्वारा ही आते हैं, और आयेंगे।' यदि ऐसा ही है तब बड़ा कौन है? आध्यात्मिक विभूति गुरु या आध्यात्मिक नेता।

प्राचीनकाल में जब मंगोलिया का राज्य चीन पर राज्य करता था, तब दलाई लामा उस राजा का आध्यात्मिक आचार्य था। इसी भांति तिब्बत के लामाओं का समूह तिब्बत की आध्यात्मिक विभूति स्वरूप समझा जाता था और यही कारण था कि लोग तिब्बत को ऐसी ही सम्मान की दृष्टि से देखते भी थे।

दलाई लामा चीन के राजा के केवल माने हुए गुरु नहीं थे, प्रत्युत ईश्वरीय संकेत द्वारा उनकी गुरुपदपर स्थापना हुई थी।

चीन का नरेश ल्हासा में अपना राजदूत नियुक्त करता था। अंगरक्षक के रूप में लामाओं को सेना भी दी जाती थी जिसका अधिकार या आधिपत्यसे कोई संबंध नहीं होता था। पहले के तिब्बत के राजाओंने और सोंगसेन गुंपों नामक महान् नृपति ने अनेक बार चीनसे युद्ध किया था और चीनका बहुत बड़ा प्रदेश तिब्बत की हुकूमत में था। चीन और तिब्बत में मैत्री संबंध स्थापित रखनेकी अभिलाषा से ही चीनकी राजकन्या म्यालाका विवाह नृपति गुंपों से हुआ था। दोन राज्यों में पारस्परिक शांति बनी रहे, किसी प्रकार का वैमनस्य या संघर्ष न हो—इन वचनों के पालने के लिए शपथ ली गयी थी। इस प्रकार की विज्ञप्ति शिलालेख के रूपमें प्रस्तुत की गयी थी, जो आज भी ल्हासा में शिला लेख के रूप में अपना अस्तित्व कायम किये हैं।

तिब्बत चीन या अन्य किसी भी राज्य के अन्तर्गत नहीं था। हां, तिब्बत की पूर्वीय सरहद का कितना ही भाग फिर से चीनी हुकूमत में चला गया है। जब चीन में क्रांति हुई और चीन के सर्वेसर्वा पदभ्रष्ट किये गये, तब चीन और तिब्बत में युद्ध छिड़ा था। दलाई लामा भारत में भाग गये थे। युद्ध अपने आप बंद हो गया था। राजा गुम्पो और राजकन्या म्यासा द्वारा की गयी प्रतिज्ञाओं का उस समय चीन की ओरसे भंग किया गया था। उसके पश्चात् चीन ने अविरत युद्ध और झगड़ों का सामना किया था। भविष्यमें भी चीन में कभी शांतिकी स्थापना होगी, इसमें भी सन्देह है।

चीन शांति को पूजे

चीन यदि स्वतः समाधान चाहता है और दोनों देशोंमें शांति स्थापित रहने देने का वचन देता है तो चीन स्वयं भी शांतिका अनुभव करने के लिए भाग्यशाली हो सकता है। इस वस्तुस्थिति पर चीन की सरकार और वहांकी जनता को गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। इसी प्रकार भारत में बसने वाले बौद्धों को इस लोक और परलोक में मुक्ति पाने के लिए—अपनी इस पवित्र भूमि तिब्बतके लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

एक गंभीर विवेचन

परमार्थ में भी स्वार्थ है

★ श्री महावीर एम० ए०

महाराणा प्रताप के जीवन की एक घटना प्रसिद्ध है। अकबर की सेनाओं से बच बच कर जंगल जंगल में भटकते हुए, स्वतन्त्रता और स्वाभिमान के उस अमर पुजारी को कौन सा आराम मिलता रहा? कौन सा सुख? केवल यह कि मैं अपने अन्दर रक्त की बूंद के रहते आत्मगौरव और स्वातंत्र्य की ज्योति को बुझने नहीं दूंगा। परन्तु उस अनोखे वीर को इस समाधान में कितना स्वर्गिक आनन्द था! जिस बच्चे को राजमहल के वैभव में पलना था, उसे दो-तीन दिन भूखे रह कर ठोकरें खाने के बाद जब माता ने जंगल की घास की रोटी बना कर दी और उसे भी जब बिलाव छीन कर भाग गया तो राणा के मन पर क्या बीती होगी! कहते तो हैं कि उस धर्य धैर्य का वह हिमाचल भी पिघल गया और अकबर को शीघ्र पत्र लिखने के लिए तैयार हो गया। उस समय रानी ने आ कर हाथ से कलम छीन ली और कहा कि रहने दो, अगर आप संघर्ष करते करते थक गए हो तो अपनी तलवार मुझे दो—मैं तुम्हारा भार सम्भालती हूं, परन्तु जिस मर्यादा और धर्म के लिए प्राण देना भी अधिक नहीं उसे मत छोड़ो। राणा की आंखों में आंसू आ गये। जिसे वास्तव में धरती पर पांव रखने की भी आवश्यकता पड़नी नहीं चाहिए थी, ऐसी राजरानी अपनी पत्नी को भिखारिन के चीथड़ों में खड़े हुए देख कर और अपने हृदय के टुकड़े करके भी जिसे प्रसन्न करने के लिए पिता तैयार होता है, ऐसे अपने अबोध शिशु को भूख से बिलखते देख कर आंखों में जो आंसू आए, वे भी दुःख या शोक के नहीं, आनन्द के ही थे।

× × ×

अपने चारों सुकुमार पुत्रों की भेंट चढ़ा कर गुरु गोविन्दसिंह ने जब पत्नी को समाचार दिया कि—

> चारे पुत्र तेरे इथीं कन्द लेहरे
> बाकी मौत दे नाल परना आया
> जेहड़ा कर्ज करतार दा देवना सी
> भागां वालिए अज चुका आया,

तो उनके मन में कैसा गौरवपूर्ण आनन्द भरा होगा, इसकी तो कल्पना भी साधारण मानवों के लिए कठिन है। परन्तु वे दुखी नहीं थे। एक लेखक ने तो लिखा है कि कभी भी कोई भी व्यक्ति जान बूझ कर 'कष्ट' नहीं उठाता। शरीर की या मन की थोड़ी बहुत पीड़ा या असुविधा आदमी झेलता है, परन्तु प्रायः वह आत्मा के किसी सुख के लिए ही ऐसा करता है। और वह सुख उस पीड़ा से अधिक गहरा और व्यापक होता है।

दूसरे का धन छीन कर सम्पन्न बनने में सुखी होती होगी, पर अपना सर्वस्व दे कर दूसरों को थोड़ी प्रसन्नता देने में भी एक अलौकिक गौरव और आत्मिक आल्हाद है। मानव मात्र के लिये दो रास्ते होते ही हैं—एक प्रेय, दूसरा 'श्रेय'। जो प्रिय लगे, आकर्षक प्रतीत हो, वह 'प्रेय' मार्ग है पर उसमें अन्तिम कल्याण नहीं होता। कल्याण का, स्थायी लाभ का रास्ता तो 'श्रेय' का रास्ता ही होगा। परन्तु तात्कालिक सुख शायद 'प्रेय' की ओर ही खींचेगा। अभी उस दिन किसी का लेख देखा, जिसमें दो आनन्दों की तुलना की गई थी—एक वह जो कड़कती सरदी में मुंह अंधेरे उठ कर व्यायाम आदि करके ठंडे पानी में स्नान करने वाले को उसके उपरांत प्राप्त होता है और दूसरा वह, जो आलस के मारे बिस्तर पर पड़े-पड़े उस के लोट पोट करने वाले आदमी को कई दिन स्नान आदि न करने के कारण प्राप्त हुई खुजली के बाद शरीर को खुजला कर मिलता है। ऐसे खाज के किसी रोगी को दस मिनट के लिए खुजलाने से रोक दीजिये, उसके बाद मानों छटपटा-छटपटा कर मौत के फंदे से छूट निकला हो, इस तरह की तृप्ति से उसे अपने ही अंगों को नोचते देख लीजिये। वह भी आनन्द है। परन्तु दोनों में कौनसा लेना है, यह तो आदमी सोच ही सकता है — अपने आपको इतना अक्ल का धनी तो इन्सान अवश्य समझता है

अपने स्वार्थ की आराधना में दूसरों के शोषण का अम्बार लगा कर उसके ऊपर खड़े होने में जो आनन्द है, वह मनुष्यता का आदर्श नहीं कहला सकता। बर्नार्ड शा ने एक स्थान पर लिखा है कि मनुष्य के लिए जीवन में इससे बढ़कर कोई समाधान नहीं कि उसका, उसके मन, शरीर व बुद्धि का उपयोग किसी उच्च ध्येय के लिए पूरी तरह हो गया है और नियन्ता ने उसकी योग्यता का अन्तिम कण भी काम में ले लेने के बाद उसे संसार के कचरे के ढेर पर फेंक दिया है। इस दृष्टि से सोचें तो मनुष्य जीवन की सार्थकता अगर किसी चीज में है तो अपने शरीर द्वारा निर्मित "मैं" की सीमाओं से बाहिर निकल कर, किसी उज्ज्वल ध्येय के साथ एकरूपता प्राप्त करने में। फिर उस ध्येय के लिये परिश्रम में सुख मिलता है, त्याग में समाधान प्राप्त होता है और बलिदान में सौभाग्य दिखाई देता है।

आनन्द पाने के लिए हर कोई लालायित है। परन्तु हमें कौनसा आनन्द चाहिए, इस प्रश्न पर बहुत कुछ निर्भर है। छोटा क्षणभंगुर और वास्तव में जो साररहित है, ऐसा या स्थायी वास्तविक और विशाल? ऐसे दृष्टिबिन्दु से देखें तो जिसे हम साधारण बोलचाल में "त्याग" कहते हैं, वह भी स्वार्थ ही निकलता है। एक राजा जब शिकार की खोज मे रास्ता भूलकर भटकता हुआ एक संन्यासी के आश्रम में आ पहुंचा और अत्यन्त श्रद्धा से उनके चरणों में नमस्कार करके आप बड़े त्यागी हैं, आपको स्वार्थ तो छू भी नहीं गया है, आप जैसे महात्माओं के दर्शनों से मुझ समान पापी तर जाते जाते हैं······ इत्यादि शब्दों में उनकी स्तुति करने लगा तो उसको भी यही उत्तर मिला। वे कहने लगे, "राजन्, आप क्या कहते हैं! आप दिन रात परिश्रम करते हैं और पसीना बहाते हैं सब काहे के लिए? इस नश्वर शरीर के क्षणिक सुख के लिए ही तो। पर हम तो अनन्त और असीम सुख के लिए प्रयत्न करते हैं। आप से तो हम बड़े स्वार्थी हैं, कहां का त्याग और कहां का पुण्य!"

आज यदि आवश्यकता है तो इस दृष्टि की, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने आप को ही विस्तृत घर या समाज के रूप में देख सके। अपने 'अहं' का इतना विकास करे कि वह राष्ट्रव्यापी हो जाए। जिस डाक्टर वाट्सन ने जहांगीर की कन्या को रोगमुक्त करके उसके बदले में समस्त ब्रिटिश जाति के लिए व्यापारिक सुविधाएं मांग ली थीं, उसे आप "त्यागी" कहेंगे क्या? क्या आप को ऐसा नहीं लगता कि वह भी स्वार्थी ही था, पर उस का स्वार्थ संकीर्ण अथवा क्षुद्र नहीं था, बड़ा था। शायद यह भी कहना ठीक हो कि व्यक्ति उतना ही "बड़ा" होता है, जितना विशाल उसका स्वार्थ हो। परम योगी वह होगा जो अपने "स्व" का विस्तार इतना कर लेगा कि सृष्टि के कण कण में अपने आप को और अपने आप में कण कण को देख सके। इस सीमा पर पहुंच कर "स्वार्थ" और "परमार्थ" की भिन्नता नष्ट हो जाती हैं, दोनों एक हो जाते हैं। उस अवस्था में पहुंचने के बाद व्यक्ति को सब ओर आनन्द ही आनन्द प्रतीत होता है। उसे हम ब्रह्मज्ञानी कहें या सिद्ध योगी अथवा पूर्ण मानव, कोई विशेष अन्तर नहीं। उस स्थिति तक पहुंचने के लिये आज की विश्व रचना में राष्ट्र के साथ तद्रूपता प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। राष्ट्र के हित में जीवन का साफल्य अनुभव हो, इसी में हमें सच्चा आनन्द और सुख प्रतीत हो तो हमारी सुख प्राप्ति का सारा प्रयत्न देशभक्ति और राष्ट्र-सेवा का रूप ले लेगा।

———

> मनुष्य जीवन की सार्थकता अगर किसी चीज में है, तो अपने शरीर द्वारा निर्मित 'मैं' की सीमाओं से बाहर निकल कर किसी उज्ज्वल ध्येय के साथ एकरूपता प्राप्त करने में। फिर उस ध्येय के लिए परिश्रम में सुख मिलता है, त्याग में समाधान प्राप्त होता है और देता है।
>
> अपने 'अहं' को इतना विकसित करो कि वह राष्ट्रव्यापी हो जाय।

सबसे उपेक्षित परन्तु सबसे आवश्यक

हमारे सार्वजनिक शौचालय

★ श्री रामचन्द्रन्

मगनवाड़ी सफाई मंडल सफाई काम के लिए बाहर निकला था। हम में से एक टुकड़ी वर्धा के एक सार्वजनिक पाखाने पर धावा बोल रही थी। पाखाने में इतनी भयंकर गन्दगी थी जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उसमें भीतर और बाहर दोनों तरफ मैला भरा था। बालटियां या तो चू रही थीं या उनमें मैला सिरे तक भरकर बाहर निकल रहा था। छोटी-सी नाली में कई जगह दरारें पड़ गई थीं और वह कचरे से भर गई थी। पास में एक खड्डा था, जिसमें यह नाली गन्दा पानी बहा कर ले जाती थी। खड्डे के भीतर जो कुछ था, वह किसी भी वैज्ञानिक के विश्लेषण को व्यर्थ साबित कर सकता था। हम सिर्फ इतना ही जानते थे कि उससे निकलने वाली बदबू एक प्रकार की जहरीली गैस थी। लोग लगातार पाखाने के भीतर जाते और बाहर आते थे। हमने कई लोगों को नाक और मुंह के आसपास कपड़ा बांध कर अन्दर जाते देखा। यह उन्होंने भयंकर और जहरीली बदबू से बचने के लिए किया था। ऐसी हालत में भी वे अन्दर जाते रहे। शहर के उस घनी आबादी वाले हिस्से में दूसरा कोई पाखाना नहीं था।

हमने जल्दी से उस जगह का सर्वे कर डाला और अपने को चार टुकड़ियों में बांट दिया। पहली टुकड़ी ने मौजूदा खड्डे से थोड़ी दूरी पर नया खड्डा खोदा। दूसरी ने नाली का मौजूदा खड्डा साफ किया। तीसरी टुकड़ी ने बालटियां हटायीं और चौथी ने फर्श और नालियां धोकर साफ कीं। नाली के खड्डे की सफाई का हमें भयंकर अनुभव हुआ। खड्डे के चारों तरफ सीमेंट लगी थी, लेकिन तले में नहीं थी। वह हफ्तों से साफ नहीं किया गया था। खड्डे के अन्दर सिरे तक गाढ़ा काला पदार्थ भरा था, जो न तरल था, न ठोस था। जिस भंगी के जिम्मे पाखाने और खड्डे की सफाई का काम था, उससे हम खड्डे में से काला पदार्थ साफ करने के लिए बालटी पा सके। भंगी बीमार था। उसने कहला भेजा कि पास में ही एक पेड़ के पीछे छोटा-सा टीन का डिब्बा रखा है, इसलिए हम अपनी बालटी लाये। बालटी की मदद से भी खड्डे को साफ करना मुश्किल था। तब वह भंगी टीन के डिब्बे से उसे कैसे साफ करता होगा? उसे सारे समय कोहनी तक अपना हाथ उसमें डालना पड़ता होगा। हमने भी खड्डे को साफ किया। इसमें एक घंटे से ज्यादा वक्त गया। लेकिन एक अर्थ में वह कभी न साफ हो सकने वाला खड्डा था, क्योंकि उसका पेंदा न था। हम जितने ज्यादा उसे साफ करते जाते, उतना ज्यादा उसका ढीला कूड़ा-करकट खुदता जाता। किसी तरह हमने उसे साफ किया। हमने सारी गन्दगी को नये खड्डे में गाड़ दिया और उसे बहुत-सी मिट्टी से ढंक दिया।

मैले की बालटियां हटाना भी मुश्किल था, क्योंकि या तो वे चू रही थीं या उनमें से मैला निकल कर बाहर गिर रहा था। जब हम बालटियां हटा रहे थे, तब भी लोग भीतर गये। जिन बालटियों में से मैला निकल कर बाहर गिर रहा था, उनका उपयोग करने में भी लोगों को संकोच नहीं होता था। फर्शों और नालियों की धुलाई का काम भी उबाने वाला था, क्योंकि उनमें दरारें पड़ गयी थीं। हमने चारों तरफ अच्छी झाड़ू लगा कर अपना काम खतम किया। सुबह आठ बजे से लेकर ११ बजे तक हमने खूब मेहनत की। बाद में हम थोड़ी देर छांव में बैठे और सोचने लगे कि दूसरे हफ्ते में इस पाखाने की क्या हालत होगी? इसलिए हमने लोगों को इकट्ठा किया, भजन गाया और काफी समय तक उनसे बात की। बाद में हम लौट आये। हमारी भी एक अनोखी छोटी-सी टोली थी। हमारे साथ पंजाब, बंगाल, मैसूर, तामिलनाड, आन्ध्र और केरलकी लड़कियां और विभिन्न प्रांतों के लड़के थे। मीनाक्षी नाम की एक लड़की दक्षिण भारत के ब्राह्मण परिवार की थी। वह इस सफाई के काम में सबसे आगे बढ़ गई। हमारे बीच जाति या वर्ण का कोई भेद नहीं था। जब लोग साथ मिल कर सफाई काम करते हैं, तब उनमें साथी-पन की अनोखी भावना आ जाती है। सफाई शिक्षकों और विद्यार्थियों को मित्रता के अटूट सम्बन्ध में बांध देती है।

जैसे ही हम काम खतम करके लौट रहे थे, कुछ ऐसी बात हुई, जो इस कहानी की पराकाष्ठा थी। हमने रास्ते में बारह या तेरह साल के एक गौरवर्ण के सुन्दर लड़के को आते देखा, जिसके हाथ पर एक बड़ी बालटी रखी हुई थी। बालटी में कोई चीज भरी हुई थी। दूर से हम नहीं समझ सके कि उसमें क्या भरा है। लड़का भारी बोझ से झुकता हमारे पास आया। तब हमने देखा कि उस बालटी में मैला भरा था। वह पाखाने से थोड़ी दूर गया, जहां कुछ कोठियां खड़ी थीं। उनमें से दो के बाहर मैला निकल रहा था। वह तीसरी कोठी गया और बड़ी मुश्किल से उसने बालटी अपने हाथ से उठा कर मैला कोठी में उंडेल दिया। जिस चतुराई से उसने अपने कपड़ों या अंगों को मैले से बचाया, वह देखते ही बनती थी। तब उसने बालटी नीचे रखी और गहरी सांस लेते हुए खड़ा रहा।

मैंने उसके पास जाकर अपने हाथ उसके कन्धों पर रखे और उससे खुद के बारे में प्रश्न किये। वह पाखानों की सफाई के लिए जिम्मेदार भंगी का लड़का था। पिता बीमार था, इसलिए वह और उसका छोटा भाई आज का काम कर रहे थे। हम दोनों बात कर रहे थे। उसी बीच उसका छोटा भाई आया। उसने भी अपने मैले की बालटी के साथ वही दुःखभरी सर्कस की। वे दोनों बड़े अच्छे लड़के थे और स्कूल में पढ़ते थे। उनका पिता और दादा भंगी थे। वे नहीं जानते थे कि स्कूल की पढ़ाई खतम करने के बाद वे क्या करेंगे। जान भी कैसे सकते थे? क्या हमारे स्कूल लड़के-लड़कियों को यह सिखाते हैं कि उन्हें अपने जीवन में क्या करना चाहिये? वे जो काम कर रहे थे, वह उन्हें पसन्द नहीं था। लेकिन वे उससे डरते भी नहीं थे। बाद में हम उनके घर गये। वह एक लम्बा-चौड़ा भरा-पूरा घर था। उसमें खाटें और बेन्चें थीं। बहुत से बरतन थे और दीवालों पर चित्र टंके थे। एक से ज्यादा संयुक्त परिवार उसमें रहते थे। और कई प्रौढ़ व्यक्ति भंगी का काम करते थे। हम बूढ़े पिता से मिले, जिसने हमें थोड़े गर्व से अपना फोटो बताया, जिसमें वह काला कोट और पगड़ी पहन कर बैठा था। हम इस दुविधा के साथ बाहर निकले कि हंसें या रोवें।

भंगी ऐसी भयंकर गन्दगी की हालत में क्यों काम करें, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। मैं यहां इस प्रश्न में नहीं उतर रहा हूं कि उन्हें भंगी होना भी चाहिये या नहीं। लेकिन क्या हम काफी संख्या में अच्छी बनी हुई टट्टियां नहीं रख सकते? क्या हम भंगियों को मैले की टट्टियां सिर पर ढोने के लिए मजबूर करने के बजाय उन्हें पहियेदार गाड़ियां इस काम के लिये नहीं दे सकते? जिस अमानुषिक हालत में उन्हें काम करने के लिये मजबूर किया जाता है, उनके खिलाफ लड़ाई छेड़ने को तैयार करने के लिए क्या भंगियों को संगठित करना जरूरी नहीं है? क्या हमें उन्हें यह नहीं सिखाना चाहिये कि वे हिम्मत के साथ तब तक काम करने से इन्कार कर दें, जब तक म्युनिसि-पैलिटी उन्हें सफाई के अच्छे औजार और दूसरा जरूरी सामान नहीं देती? हरि-जन आन्दोलन आया और भंगियों के जीवन को बेहतर बनाये बिना शायद चला भी गया और फिर भी बहुत बड़ी हद तक भंगी-काम ही अस्पृश्यता की बुनियाद थी और आज भी है। छोटा प्रयत्न चाहे कितना भी तीव्र क्यों न हो, वह इस समस्या का हल नहीं कर सकता। इसके लिए किसी उच्च कोटि के नैतिक नेतृत्व के मातहत प्रचंड राष्ट्रीय आन्दोलन करने की जरूरत है। व्यक्तियों को अपना काम करते रहना चाहिये, लेकिन असंख्य व्यक्तिगत प्रयत्नों को एक साथ मिला कर राष्ट्रीय शुद्धि के शक्ति-शाली स्रोत का रूप कौन देगा? इसके लिये हम कब तक राह देखते रहेंगे?

— हरिजन सेवक से

नया धारावाही उपन्यास

समस्या का हल

★ श्री कोमलसिंह सोलंकी ★

प्रारंभ

जीवन की विषाद अभिव्यंजना से ऊब कर जब मानव निर्जन का आश्रय ग्रहण कर लेता है, तब भी उसके मानस के अज्ञात प्रकम्प में प्रश्नों की अनन्त ऊर्मियां तरंगित हो उठती है। मैं मेरा और मुझसे ऊपर उठ कर, मानव, समष्टि और सृष्टि उसे चैन से सोने नहीं देती—तब वह जनशून्य निर्जन भी जनपूर्ण और चिन्ता का केन्द्र हो जाता है। श्वास का प्रत्येक अणु कर्म हो जाता है।

निर्जन की साधना के लिए कुलपति नगेन्द्र अपने घर से निकले थे, पर उस सुरम्य गुफा के तट पर विद्यार्थियों को शिक्षादान देने का लघु प्रयास, विराट गुरुकुल के रूप में परिणत हो चुका था। वे निवृत्ति से प्रवृत्ति मार्ग की ओर अग्रसर हो रहे थे— वे मूक थे, उनके अनन्ताकाश की प्रत्येक लहर एक उथल पुथल मचा देती थी।

× × ×

गुरुकुल के सभागृह में आज जो प्रश्न उठ गया था, उससे जीवन का कुछ इतना निकट सम्बन्ध था कि प्रत्येक को उस पर विचार करना अनिवार्य हो गया। राघवेन्द्र की जिज्ञासा प्रश्न को साकार कर रही थी।

कुलपति ने एक क्षण सोचा, उनके सामने भारत के इतिहास के विभिन्न दृश्य आ उपस्थित हुए। पाटलिपुत्र और इन्द्रप्रस्थ के भग्नावशेष— सोमनाथ और विजय-स्तम्भ की क्षीण स्मृति। यमुना, स्तम्भ और ताज महल का निर्माता, प्रश्न कुछ टेढ़ा था। वे राजनीति के धुरंधर विद्वान थे, फिर भी राघवेन्द्र के प्रश्न ने एक बार उन्हें सचेत कर दिया।

"राजनीति, राजनीति एक समस्या है वत्स! मनुष्य समाज में परिणत हो कर, जीवन के सुख की इच्छा करता है— मार्ग ढूंढता है, और उसके सुख का एक पाया राजनीति पर आधारित है। राजनीति अनुभव की वस्तु है, राघव' उन्होंने कहा।

'और धर्म' राजपाल ने पूछा।

यह दूसरा प्रश्न था, जिसको कुलपति ने स्वयं की अनुभूति के साथ समझना प्रारम्भ किया था और आज वे अनुभव कर रहे थे कि मनुष्य की मानवता का उदय धर्म के साथ ही हुआ है। उन्होंने शीघ्र ही उत्तर दिया—

'वह भी ईश्वरप्रदत्त शक्ति के अनुभव का दूसरा नाम है। समाज की सुव्यवस्था के हेतु नियमबद्धता भी धर्म का एक रूप है।'

वे कुछ रुक गये।

'हां! राजनीति का आधार नैतिक है, दूसरे अर्थ में धार्मिक!' उन्होंने कुछ सोचते हुए कहा।

कुलपति नगेन्द्र को अपने शिष्यों की जिज्ञासु वृत्ति पर विश्वास था। वे दोनों के इन प्रश्नों पर भारत के वर्तमान और भविष्य का अनुमान लगा रहे थे।

राजपाल और राघव दोनों ही अपनी योग्यता प्राप्त कर चुके थे। दोनों ने ही गुरुकुल की सम्पूर्ण शिक्षा को समाप्त कर लिया था। दोनों हो साथ साथ इस सृष्टि में अनुभव के लिए अपने कुलपति से विदा ले रहे थे।

कुलपति नगेन्द्र सांसारिक जीवन से दूर अनुभव और विद्यादान में समाधिस्थ हो सृष्टि के उद्गम और प्रमाण को बड़ी बड़ी साधनाओं के साथ भी, आधुनिक व्यक्तिगत, सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं के थपेड़ों से बच न सके थे। उन्हें राजपाल और राघवेन्द्र के श्रेष्ठ एवं सौम्य व्यवहार पर अभिमान तो था— पर साथ ही साथ जीवन की समस्याओं में असफल होने का भय!

वत्स! संसार में जाने के पूर्व मैं तुम्हें बता दूं—जीवन में सफलता और कार्य करने की शक्ति और आदर्श चरित्र पर निर्भर रहती है। मनुष्य परिस्थितियों का दास हो जाता है किन्तु उसके दृढ़ विचार ही परिस्थिति में अनुकूलता भी ला देते हैं।

राजपाल और राघवेन्द्र दोनों ही जीवन के इस समरांगण में खड़े हुए भिन्न भिन्न सेनानियों को एक बार दुहरा गये।

'और एक अत्यन्त आवश्यक बात जो मैं तुम्हें बताना चाहता हूं, वह यह कि जीवन स्वयं एक समस्या है। जीवन की समस्या में व्यक्ति, समाज और राष्ट्र का सम्बन्ध बिलकुल एकात्मता लिए हुए समान है; और उसका हल भी जीवन के मूलभूत सिद्धान्तों के आधार पर आधारित है। मनुष्य अपनी प्रकृति में परिस्थिति के अनुकूल परिवर्तन कर लेता है, किन्तु उसके हृदय की एक ध्वनि उसे कभी न कभी उस सत्य को स्वीकार करने को बाध्य कर देती है।'

सारे ही विद्यार्थियों की आंखें कुलपति की ओर निहार रही थीं। उनकी वाणी में आकर्षणपूर्ण ओजस्विता थी।

उन्होंने आगे कहा — पुण्य मातृभूमि भारत वर्ष आज भी जीवन की इस समस्या को हल नहीं कर पा रहा है। हां! पर यह भी नहीं कि इसका कुछ हल भी न हो!

उनके सामने मानों अतीत का वह चित्र खड़ा हुआ है। 'अतीत, वर्तमान और भविष्य! ओह, अहा देश और गंगा-घर!' स्वर्ण की लंका — संसार-भर में आर्यों की मर्यादा, यवनों के विरुद्ध राष्ट्रीय क्रान्तियां, अंग्रेजों की कूटनीति— नेताओं का पथप्रदर्शन!'

'हम अहा देश को भूल चुके हैं। लंका! स्वर्ण की लंका आज हमारी नहीं है! हम में आज आर्योचित गुणों का अभाव है — हम अपने-आप को आर्य भी नहीं कह सकते। हमें अपनी श्रेष्ठ संस्कृति का कोई ज्ञान नहीं है! विदेशों की नकल पर हमारे शासन-सूत्र हिल रहे हैं ...

बस, यहीं है देश की समस्या! देश, समाज के अर्थ में और व्यक्ति देश के अर्थ में कितना संस्कृत था, फिर आज क्यों नहीं है? क्यों जीवन में हा-हा कार है? किन्तु भारत की समस्या संसार की समस्या से भिन्न है। उसे ध्येय बिन्दु दिख रहा है — वह ध्येय बिन्दु तक पहुँच भी चुका है!'

उन्होंने देखा, भगवान भास्कर मध्याह्न की ओर बढ़े चले आ रहे हैं — संसार की इस बढ़ती दौड़-धूप में भारत भी बढ़ेगा अवश्य — वे मुस्करा उठे। समय समाप्त हो रहा था। कुलपति ने आगे कहा —

'आज तुम अध्ययन समाप्त कर जीवन में प्रवेश करने आ रहे हो। अनुभव तुम्हारा अगला पाठ है। जीवन कर्ममय होना तो आवश्यक है ही — कर्त्तव्य ही तुम्हारा मार्गदर्शन कर सकेगा! आत्मवंचना में पड़ कर सम्भवतः तुम्हें अपना जीवन बदलना पड़े, पर आधार सत्य का लेना। धर्म और राजनीति, व्यक्ति और समाज को ठीक-ठीक समझ कर जीवन की इन समस्याओं को सफलता पूर्वक हल करना, यही मेरा अन्तिम संदेश है। मां भारती तुम्हारी रक्षा करेगी!

राघवेन्द्र ने हृदय में एक कम्पन का अनुभव किया और राजपाल ने अश्रुओं का! दोनों नतमस्तक हो गये। दोनों ही मानों जीवन की भिन्न अवस्थाओं के विषय में चिन्तन कर रहे थे।

कुलपति ने आसन छोड़ दिया और शिष्यों ने भी!

\+ × ×

मन्द-मन्द समीर शुष्क हृदय को भी सरस बनाकर मानो अपनी सफलता पर मुग्ध हो रहा था। बीच बीच में कोयल की कुहुक कुहुक से सारा अरण्य गुंजायमान हो उठता था। सब ओर निस्तब्धता थी — गम्भीर शांति! कहीं कहीं चौपायों की चरण ध्वनि से प्रकृति को अपनी समाधि भंग करनी पड़ती थी, पर समाधि अटल थी।

कहीं दूर सरसराते हुए सरसों के खेत में बहुत दूर, दूर उन पहाड़ियों के नीचे जन समूह बैठे प्रकृति का आनन्द ले रहे हैं। स्वच्छ आकाश, हरित धरातल, नवल बेलियां, द्रुम-पल्लव और जाने क्या क्या? मानो जीवन का आनन्द यही है। प्रकृति नटी के स्वरूप पर मंत्र मुग्ध की भांति प्रत्येक कह उठता था, प्रकृत्ति सुन्दर है प्रकृत्ति कोमल है ......

क्या सचमुच?

मार्ग चलते हुऐ आचार्य दुवे ने कहा — राघव जानते हो मैं तुम्हें यहां क्यों लाया हूं?

नहीं, पर हां इतना अवश्य अनुभव करता हूं कि आपके साथ आकर मैंने पुनः मां प्रकृति के इस मनोहर स्वरूप को देखा! कितनी सुन्दर है यह प्रकृति?'

'प्रकृति बहुत ही सुन्दर है राघव, पूर्णिमा के चन्द्र की भांति बहुत ही प्रिय!

'तो दादा, जीवन प्रकृति से दूर क्यों होता जा रहा है? मनुष्य आज सुन्दर प्रकृति से दूर भौतिकता की ओर क्यों बढ़ रहा है? तुरन्त ही राघवेन्द्र ने पूछा?

'मानव जीवनकी बात न कहो राघव' आचार्य ने गम्भीरता से कहा —'आज मानव विकल होकर किसी के भी पीछे दौड़ने को तय्यार है। उसका सम्पूर्ण विकास आपत्तियों में पड़े बालक के समान है, जो प्रत्येक को अपना गुरु बना सकता है ......

अनुभव हीन राघवेन्द्र आचार्य के मुख की ओर एक टक देख रहा था। उसने देखा, आचार्य की वाणी में कुछ विचित्र ही आकर्षण शक्ति है - उनका अपना कुछ आश्चर्यजनक ढंग है।

वे कह रहे थे - मनुष्य सामाजिक प्राणी है और समाज ही उसके जीवन का एकमेव भाग्यविधाता है। प्रकृति! प्रकृति सुन्दर तो है, पर हां —

वे कुछ रुक गये। उन्होने आगे कहा— हां केवल प्रकृति की सुन्दरता पर मुग्ध हो कर जीवन में सफलता नहीं मिलने की, राघव! तुम्हे अब राजनैतिक बनना पड़ेगा — दार्शनिक नहीं और अपने कुलपति द्वारा सुने हुए सुन्दर उपदेशों को चरितार्थ करना पड़ेगा।

राघवेन्द्र ने देखा विषय बदल गया है। वह मानो विचार कर रहा था, उसकी मुखाकृति ने मानो बड़े भारी दार्शनिक का रुप रख लिया हो। उसने कहा —

दादा, आप मेरे भाई के मित्र के नाते बड़े भाई के सब अधिकार रखते हैं। मुझे तो आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा है।

तुम मेरे भाई के तुल्य हो राघव, मित्र नहीं, यह याद रखना। इस क्षेत्र

में मैं तुम्हे पूर्ण अधिकारी बनाता हूं। चलो, रात बढ़ रही है।

'भवदीय आज्ञा'

× × ×

आचार्य दुवे नगर के उन प्रतिष्ठित लोगो में से हैं, जिनके यहां धन कुबेर अठखेलियां किया करता है, धर्म जिनका अनुचर है और राजनीति मानो सेविका! राजसभा में आचार्य नरेन्द्र का आसन बहुत ऊंचा है। जनता भी उनके नेतृत्व पर विश्वास करती है।

नगर की सौंदर्य पूर्ति के हेतु निर्माण की आनेवाली 'प्रिंस स्ट्रीट' में आचार्य की कोठी अपनी प्रतिभा के साथ दमका करती है। सिंहद्वार पर संगीनी पहरा और मनहरन उपवन कोठी के आंगन की शोभा को द्विगुणित कर देते हैं।

कोठी के सामने चौड़ा फुटपाथ, डम्मर की सड़क और एक से एक सुन्दर बिलकुल नवीन ढंग के बंगले और कोठियां ही इस 'प्रिंस स्ट्रीट' की शोभा है। मोटरों की सांय सांय से प्रतिध्वनित होकर ध्वनि उस निर्जन में गूंज जाया करती है। यही यहां के बड़े कहलाये जाने वाले निवासियों के लिये शोर है। मधुर गाने, मनोरंजन के रेडियो प्रहसन वहां यहां का व्यक्तिगत और सामूहिक 'जनरव' है।

(क्रमशः)

[पृष्ट ११ का शेष]

उनके तीन वर्षीय पौत्र ज्ञानेन्द्र विक्रम शाह देव को राजा घोषित कर दिया गया है। तिब्बत की घटनाओं को ध्यान में रखकर उसको सीमा से लगे इस प्रदेश में होने वाली हलचलों को समस्त संसार ध्यान से अवलोकन कर रहा है। भारत सरकार इस सम्बन्ध में पूर्ण सतर्क है। अमरीकी राजदूत श्री हैन्डर-सन की घोषणा कि नैपाल भारत का प्रश्न है, ऊपरी मन से गई है। वस्तुतः नैपाल का अमरीका की साम्यवाद-विरोधी नीति से गहरा सम्बन्ध है क्योंकि तिब्बत पर साम्यवादी प्रभाव होने में देर नहीं लगेगी।

भारत सरकार इस सम्बन्धमें परिस्थिति को देखकर निर्णय करेगी जिस में कि कुछ समय लग जाने की सम्भावना है। अन्त में इतना कह देना ही पर्य्याप्त होगा कि जनता के विद्रोह का परिणाम चाहे कुछ भी हो, नैपाल अब क्रान्ति की लहरों से बच न सकेगा। यदि यह जन विद्रोह दबा भी दिया गया जैसा कि नैपाल के दिल्ली स्थित राजदूत को आशा है तब भी यह अवश्य एक दिन विस्फोट के रूप में फैलेगा, क्योंकि जनता की भावना को शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य भी न सहन कर सका था। परिणाम भविष्य के गर्भ में निहित है।

आहत पञ्जाब की करुण आह

आज के पंजाबी साहित्यकारों में अमृता पीतम का अपना एक स्थान है। वे आज के आहत पंजाब की करुण अनुभूतियों के चित्रण में कुशल है। दो एक उदाहरण यहां दिये जाते हैं।

"वारिस शा" में कवियित्री "हरि" के अमर रचियिता सैय्यद वारिसशाह को सम्बोधित करके कहती है — "तुमने पंजाब की एक कन्या हीर के वियोग-भरे विलाप को सुनकर एक महा काव्य लिख दिया था —अब अपनी कब्र से उठो और सुनो कि पंजाब की लाखों पुत्रियां तुम्हें पुकार-पुकार कर क्या कहती हैं —

"....... उठ तक अपना पञ्जाब अज बेले लाशां विछीयां ते लहू दी भरी चनाब,

किसे ने पजां पाणियां विच दित्ती जहर रला,

× × ×

गलियों टुटे गीत फिर त्रकलियों टुटी तंद,

त्रिंजनों टुट्टियां सहेलियां चरखड़े घूकर बंद,

× × ×

धरती ते लहु वसिया कबरां पईयां चोय,

प्रीत दियां शहजादियां अज विच मजारां रोय,

× × ×

अज आखां वारिस शाह नूं, तूं हे कबरां विचों बोल,

ते अज किताबे इश्क दा, कोई अगला वरका फोल !

[उठो, अपना पंजाब एक बार फिर देखो। नदियों के बीच रेतीले टापुओं में मृतक शरीर बिछे हुए हैं। चनाब में पानी नहीं, लहू बह रहा है किसी ने पंजाब की पांचों नदियों में जहर मिला दी है ··पंजाब छिन्न भिन्न हो गया है, न वे गीत रहे, न वे सहेलियों का मिल कर बैठना और चरखे कातना···पंजाब की धरती पर खून बरस पड़ा है, पुरानी कब्रों से भी खून टपक रहा है, प्यार से पली हुई राजदुलारियां आज कब्रिस्तान में बैठी रो रही हैं—मैं वारिस शाह से पुकार कर कहती हूं, अपनी कब्र से ही बोलो, अपने महाकाव्य का अगला परिच्छेद लिखो··· ··]

इसी तरह "पंजाब दी कहानी" में

पाणी पंज दरिया दे बण गए तत्ते तेल,

बलदी उत्ते बालदे ओए तक होणी दे खेल·········

कड़ियां छुट्टियां हाड़ियों लड़ियों छुट्टो लज,

चीरे छुट्टे सिरां तों वीणियों वंगां भज·········

[··पांचों नदियों में पानी नहीं, गरम तेल बह रहा है और देखो किस्मत के खेल, पंजाब में जलते पर ही तेल डाला गया······ हाडियों से कड़ियां छूट गईं, और रस्सियों से बड़े छूट गए। नवयुवकों का सब कुछ छिन गया सुहागनें विधवा हो गईं।]

पंजाब की इस दुर्दशा को देख कर कवयित्री अतीत के दिनों को स्मरण करती है और सहसा "कणकां [गेहूं] दा गीत" में पुकार उठती है —

'···असां इकठियां सी गोड़ियां, इकठियां सी बीजियां,

ओए किन्हें आके सिट्ट सिट्टा दाणा दाणा त्रड़िया—

हो कणकां छाडिया ··

[···हमने ही अपने खेतों को बीजा था, एक साथ ही उनकी देख भाल की थी, लेकिन हाय हमारा दुर्भाग्य, यह कौन था, जिसने आ कर हमें अलग अलग कर दिया और एक एक दाना बांट दिया···]

इन ही कविताओं से प्रभावित हो कर पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान् तथा समालोचक प्रिंसिपल तेजासिंह ने कहा है—

······"आज अमृता प्रीतम पंजाब की आत्मा बन कर बोलता है, उसकी कला में पंजाब की उमंगें और दुखी पंजाब की भावनाएं तड़प रही हैं। इन कविताओं में पंजाब को जगाने वाली हुँकार है जिसे सुन कर वारिस शाह और पूरनसिंह की आत्मा भी व्याकुल हो उठेगी।" (प्रदीप से)

———

नव प्रकाशन

अजाने रास्ते — ले० — डा० सत्यनारायण। प्रकाशक जानकी प्रकाशन १६१/१ हरिसन रोड कलकत्ता, ७। मूल्य ४) रु०।

इस पुस्तक के लेखक हिन्दी संसार के निकट नये नहीं हैं। वे अपनी यात्राओं का रोचक वर्णन रोमांचकर रूस, यूरोप के झकोरे में; अवारे की यात्रा आदि पुस्तकों द्वारा हिन्दी जगत को पहले भी दे चुके हैं। गत महायुद्ध के बाद उन्होंने रूस द्वारा परास्त क्षतविक्षत, शोषित और पीड़ित जर्मनी की यात्रा की थी। प्रस्तुत पुस्तक में एक कथा के रूप में उन्होंने आहत जर्मनी का एक नग्न, किन्तु अत्यन्त करुण वास्तविक चित्र खींचा है। पुस्तक की रोचकता किसी भी अच्छे उपन्यास का मुकाबला कर सकती है। कथानक की यथार्थता हृदय पर जो प्रभाव डालती है, वह बहुत दिनों तक बना रहता है। जो भारतीय रूस और कम्युनिस्टों के अंध भक्त हैं, उनसे हम इसे पढ़ने का आग्रह करते हैं। रूसी सैनिकों ने जर्मन जनता के शरीर और आत्मा का बुरी तरह हनन किया। इसे जान लेने के बाद हमें संदेह है कि कोई रूस को विश्वविजय चाहेगा। आज के युग में, जब कि कम्यूनिस्ट अपने झूठे सस्ते साहित्य की बाढ़ देश में ला रहे हैं, इस पुस्तक का प्रचार सत्य के प्रचार के लिए बहुत उपयोगी और लाभकारी होगा। जो साहित्य को जीवन के यथार्थ दर्शन के ही रूप में देखना चाहते हैं और आदर्शवाद के उपासक नहीं हैं, वे भी इस पुस्तक में पर्याप्त रस लेंगे, क्योंकि पुस्तक में समाज का नग्न चित्र खींच दिया गया है।

पुस्तक का मूल्य ४) रु० अधिक है।

पंचदशी (निबन्ध संग्रह) — प्रकाशक—सस्तासाहित्य मंडल, कनाट सर्कस, नयी दिल्ली। मूल्य ३॥) रु०।

एक तो यों ही हिन्दी में अच्छे निबन्धों का संग्रह बहुत कम है और इस दिशा में जो कुछ प्रयत्न किया भी गया है, वह एकांगी है। हिन्दी साहित्य के कुछ सेवकों या साहित्यकारों के लेखों के कुछ संग्रह अवश्य प्रकाशित हुए हैं, किन्तु उन सब का मूल विषय विशुद्ध साहित्यिक रहा है। कविता, छायावाद, रहस्यवाद, नाटक और उपन्यास की कला आदि तक ही साधारणतः उनका क्षेत्र सीमित रहा है। इस कारण विविध विषयों पर अच्छे निबन्धों का संग्रह हिन्दी में प्रायः दुर्लभ है। प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में उठाया गया एक अच्छा कदम है। म० गांधी की सत्य, अहिंसा, पं० नेहरू की दो मस्जिदें, राजेन्द्र बाबू का गांव का जीवन, श्री घनश्यामदास बिड़ला का मुझसे सब अच्छे, श्री हरिभाऊ उपाध्याय का सुख का स्वरूप, श्री भदन्त आनन्द कौशल्यायन का आतिथ्य, काका कालेलकर का हिमालय की पहली सिखावन, श्री वासुदेवशरण अग्रवाल का धरती आदि लेख पठनीय हैं। श्री जैनेन्द्रकुमार महादेवी वर्मा, आचार्य अभयदेव, आचार्य विनोबा और सियारामशरण आदि के भी लेख पढ़नीय हैं।

सर्वोदय-विचार — ले० — आचार्य विनोबा। प्रकाशक वही मूल्य १॥) रु०।

म० गांधी के बाद उनके जीवन दर्शन के विवेचन में आचार्य विनोबा का स्थान बहुत ऊंचा है। प्रस्तुत पुस्तक में सर्वोदय-सिद्धान्त के सम्बन्ध में दिये गये भाषणों का संग्रह दिया गया है। इस एक पुस्तक से सर्वोदय-सिद्धान्त के बारे में बहुत जानकारी मिल सकती है। परन्तु ऐसे लेखों के संकलन में उन अंशों को छोड़ देना चाहिये था, जो विशुद्ध व्यक्तिगत या बहुत सामयिक थे। किसी व्यक्ति के शब्द नहीं, विचार हमारे लिए अधिक ग्राह्य होने चाहियें। इसी दृष्टि से पुस्तक का संपादन किया जाना चाहिये था।

—कृष्ण

———

रूस में अनुदार और संकीर्ण बनाने वाली उच्च शिक्षा

[पृष्ठ ९ का शेष]

शास्त्रों में उत्तीर्ण हुए बिना वह स्नातक नहीं बन सकता, अर्थात् मार्क्सवाद, लेनिनवाद, शारीरिक प्रशिक्षण और सैनिक प्रशिक्षण। यह बात स्त्री और पुरुषों दोनों पर लागू है। यों आप देखते हैं कि यदि कोई विद्यार्थी मार्क्स-वाद-लेनिनवाद में उत्तीर्ण नहीं होता तो वह किसी भी सोवियट विश्वविद्यालय के स्नातक बनने का स्वप्न नहीं देख सकता और इस प्रकार ऐसी कोई नौकरी नहीं पा सकता, जिसके लिए स्नातक होना अनिवार्य है।

सोवियट विद्यार्थियों में से लगभग तीन चौथाई तरुण साम्यवादी लीग, 'काम्सामाल' के सदस्य हैं और कुछ विशेष सुविधा-संपन्न विद्यार्थी स्वयं साम्यवादी दल के सदस्य हैं।

रूसी विद्यार्थी के विचार

यह तो हुई सोवियट विद्यार्थी के बाहरी जीवन की बात। कितना ही अच्छा होता यदि हमें इतनी ही जानकारी सोवियट विद्यार्थी के विचारों के विषय में होती। जब वह यह देखता है कि कुछ ऐसे विद्वान और विज्ञानवेत्ता, जिनके उपदेश केवल कुछ वर्ष पहले तक शिरो-धार्य थे, अब दूषित और बहिष्कृत हो गये हैं, तो भला सचमुच क्या सोचता है? क्या वह भी 'दोहरे विचारों' का आदी हो जाता है अथवा संसार के अन्य साथी विद्यार्थियों की भांति उसके हृदय में भी अधिकारियों के विरुद्ध लड़ने, सत्य की मांग करने की भावना जागृत हो उठती है?

बाहरी संसार के बारे में सोवि-यट विद्यार्थी का क्या विचार है? यह तो उसे हमेशा बताया जाता है कि शेष संसार सोवियट स्वर्ग की तुलना में बहुत ही पतित है, पर क्या कभी उसके मन में यह प्रश्न उठा है कि यदि बात ऐसी ही है तो उसे भी, अन्य सब देशों के विद्यार्थियों की भांति, विदेशों में जाकर वस्तुस्थिति स्वयं देखने का अवसर क्यों नहीं दिया जाता? उसने यह तो सुना ही है कि विदेशों के विद्यार्थी शांति अपीलों पर हस्ताक्षर कर रहे हैं और निरन्तर अपनी नीच सरकारों की निन्दा कर रहे हैं। पर क्या कभी उसने यह सोचा है कि फिर ऐसे लोगों को रूस में आकर परिस्थिति का अध्ययन करने और विचारों का विनिमय करने के अवसर क्यों नहीं दिये जाते? जब कभी वह टीटो जैसे व्यक्ति—कल तक जिसकी अन्ध उपासना करना उसे सिखाया गया था और आज जिसके सर पर सभ्यतम सोवियट शब्दावली की चुनी चुनी गालियों की बौछार हो रही है—के विषय में सोचता है तो कैसी भावनाएं उत्पन्न होती है उसके मन में?

क्या उसने कभी अपने आप से यह प्रश्न पूछा है कि साम्राज्यवाद का वह दुर्गुण, जिसकी निन्दा दिनरात उसके शासक किया करते हैं कहीं उसके नाम पर दूसरे देशों में तो व्यवहार में नहीं लाया जा रहा है? क्या उसके देश में पोलैंड, चेकोस्लावाकिया और हंगेरी से यदाकदा आने वाले लोग उसे यह बताते हैं कि एक पुरानी और गौरव-पूर्ण योरोपीय सभ्यता के निवासियों का सहसा पतित होकर रूसी उपनिवेश बन जाना—जहां पर ब्रिटिश राष्ट्र-समूह के अन्दर पुरानी अफ्रीकी जातियों की तुलना में भी कम स्वशासन का अधिकार प्राप्त है—यह भी कैसा अनुभव है?

क्या सोवियट विद्यार्थी को कभी कभी यह सोचकर आश्चर्य नहीं होता कि, यदि, जैसा कि उसके शासक लोग बार बार बताया करते हैं, ब्रिटेन और अमेरिका का उद्देश्य सिर्फ सोवियट का सर्वनाश करना ही है तो उन्होंने इतनी बड़ी संख्या में टैंक और वायुयान तथा खाने और पहनने के सामान—जिनमें से कुछ उसने युद्धकाल में और युद्ध के बाद जरूर देखा होगा—रूस को दान क्यों किये थे?

रूसी विद्यार्थी को यह भलीभांति मालूम है कि प्रातःकाल से लेकर रात्रि तक गुप्त पुलिस उसके पीछे लगी रहती है। (सच बात तो यह है कि गुप्त ज्ञान प्राप्त करने का कार्य नियमित और संग-ठित रूप में बिल्कुल खुले तौर पर और बड़ी बेशर्मी के साथ किया जाता है) पर यदि सोवियट विद्यार्थी के मस्तिष्क में ऐसी विचारधाराएं नहीं उठतीं, जो क्रेमलिन के कर्णधारों के लिए गम्भीर चिन्ता का कारण बन सकती हैं, तो सोवियट विद्यार्थी मनुष्य नहीं हैं। मैं समझता हूं कि सोवियट विद्यार्थी के इन छिपे हुए विचारों से क्रेमलिन के कर्णधार अपरि-चित नहीं हैं। इन छिपे हुए विचारों को, जो सोवियट शासकों के ज्ञान और उनके नियन्त्रण से बाहर हैं, जानकारी ही रूसी बादशाही के आधुनिक उत्तराधिकारियों में आशंका की वह भावना, असुरक्षित होने का वह भय उत्पन्न करती है जो हम प्रायः स्पष्ट रूप में देख सकते हैं। रूसी विद्यार्थी सदैव अत्याचार के किसी न किसी रूप के अन्तर्गत रह चुका है और स्वतन्त्रता तथा जनतन्त्र उस अर्थ में जिसमें हम इन शब्दों को समझते हैं, उसके अनुभव के बाहर हैं।

अन्त में सोवियट विश्वविद्यालय व्यवस्था की एक चतुर पद्धति की चर्चा करना चाहता हूं। इस पद्धति के अनु-सार अन्तिम परीक्षा पास करने वाले विद्यार्थी को एक नियुक्त-आयोग के सामने उपस्थित होना पड़ता है। यह आयोग विद्यार्थी की सुविधा और उसकी अभिरुचि की पूर्ण अवहेलना करते हुए उसे देश के किसी भी भाग में नौकरी देकर वहां भेज देता है। हां, यदि उसके मां बाप साम्यवादी दल के अन्दर प्रभाव रखते हैं तो बात ही दूसरी है।

यह न भूलिए कि नियुक्ति आयोग द्वारा निर्धारित नौकरी को स्वीकार करने के बाद ही बेचारे विद्यार्थी को परीक्षा में उत्तीर्ण होने का प्रमाणपत्र प्राप्त होता है।

संसार भर के नवयुवकों की भांति तरुण रूसियों को भी ज्ञानोपार्जन और सेवा के लिए अवसरों की बढ़ती हुई समानता की आशा करने का अधिकार है। यदि उनको यह मालूम होता कि इंग्लैंड में एक मजदूर के लड़के या लड़की को विश्वविद्यालय की शिक्षा पाने के जितने अच्छे अवसर मिलते हैं उतने कामकाजियों का स्वर्ग होने का दम भरने वाले रूस में तो नहीं वे भला क्या सोचते?

— — —

बाल बन्धु परिषद

दावत का निमन्त्रण

एक बार किसी लाला जी के यहां किसी रिश्तेदार का निमंत्रण आया, लाला जी अपने बेटे को लेकर दावत खाने गये।

वहां पर कई प्रकार की मिठाइयां तथा कई प्रकार के साग सब्जी सब मेहमानों को परोसी गईं। लाला जी अपने मन में बहुत खुश थे, और पालथी मार कर भोजन करना शुरू किया। उनका लड़का भी उन्हीं के पास बैठा हुआ भोजन कर रहा था।

थोड़ा भोजन करने के पश्चात् लाला जी के लड़के ने पानी पिया, फिर भोजन करने लग गया। इस तरह वह लगातार थोड़ी थोड़ी देर के पश्चात् कुछ पानी पीता गया, यह देख कर लाला जी को कुछ क्रोध आया। वह मन में सोचने लगा कि मेरा लड़का पानी से ही पेट भर रहा है तथा खाना कुछ भी नहीं खा रहा है। थोड़ी देर के बाद उनके लड़के ने फिर पानी का गिलास उठाया और पानी पीने लगा। यह देख कर लाला जी मन में बहुत क्रोधित हो गये। उन्होंने अपने लड़के को और ज्यादा पानी नहीं पीने का इशारा किया। तब भी लड़का नहीं रुका और थोड़ी देर बाद फिर पानी का गिलास उठाया।

अब लाला जी के क्रोध का ठिकाना नहीं रहा। उन्होंने एक थप्पड़ अपने लड़के की गाल पर मार दी। इस पर वहां बैठे हुए सब मेहमान चौंक उठे और सब लाला जी से पूछने लगे कि क्या बात है, लाला जी। लाला जी ने उनको उत्तर नहीं दिया।

लाला जी ने खूब पेट भर कर खाना खाया। भोजन करने के पश्चात लाला जी अपने लड़के के साथ घर गये।

घर पहुंच कर लाला जी ने अपने लड़के की मां को दावत का सारा हाल कहा। लाला जी अपने लड़के को भला-बुरा कहने लगे।

इस पर उनका लड़का दौड़ता हुआ रसोई घर की ओर गया, वहां से दो बराबर के मिट्टी के कलसे लाला जी के सामने रख दिये। वह लाला जी को कहने लगा कि मैंने आपसे ज्यादा भोजन किया है। लाला जी के कहा—कैसे। इस पर उनके लड़के ने एक कलसे में सूखी राख भर दी और दूसरे कलसे में बीच-बीच में पानी के छींटे देकर राख भर दी। फिर उसने उन दोनों कलसों को उलटा करके सारी राख दो ढेरों के रूप में निकाल दी। उसने लाला जी कहा—देखिये, पीछे किए हुए कलसे में ज्यादा राख है।

यह देख कर लाला जी ने अपने लड़के को और थप्पड़ मारते हुए कहा—नालायक, पहले मुझे यह बात क्यों नहीं कही।

—[illegible]

चन्द्रलोक की यात्रा

चौबीस घंटे में सम्भव

अमेरिका के वैज्ञानिक चौबीस घंटे में चन्द्रमा की यात्रा को अब सम्भव समझने लगे हैं। अमरीका ज्योतिषी एवं वैज्ञानिक डाक्टर आयन मोज़ ने बताया कि यदि राकेट को ७ मील प्रति सेकेण्ड के वेग से छोड़ा जाय तो वह गायब हो जायगा। किन्तु चार मील प्रति सेकेण्ड की चाल से एक झटके में ५०० मील तक जायेगा। यदि गति अधिक नहीं होगी, तभी आदमी उसमें जिन्दा रह सकता है। डा० मोज ने बताया कि दस हजार मील प्रति घंटे की चाल से २४ घण्टों में हम चन्द्रमा तक पहुंच जायेंगे। चन्द्रलोक में जाने वालों को दबी हुई ओक्सजन साथ ले जानी पड़ेगी, तथा पहुँचने के समय का भी निश्चय करना पड़ेगा, क्योंकि १४ दिन तक चन्द्रमा के एक पृष्ठ का तापमान खौलते हुए पानी के बराबर होता है और दूसरे पृष्ठ का जमाव बिन्दु से भी १२ सौ डिग्री नीचे। इसी चाल से बृहस्पति तक पहुंचने में २० हजार दिन तथा प्लूतो तक पहुंचने में ७० वर्ष लगेंगे।

पहेलियां

सबसे अच्छा नाच जानता,
पशु हूं, पक्षी भी हूं मैं।
सिर पर मुकुट मनोहर शोभित,
ठुमुक-ठुमुक चलता हूं मैं।

सबके घर में रहने वाली,
तंग सभों को करती।
गन्दी चीजों पर मैं बैठूं,
सभी सुखों को हरती।

आद अगर प्रथमाक्षर मेरा,
तो बन जाऊं सख्त।
यदि काटो मध्याक्षर मेरा,
तो लड़ने में व्यस्त।
काटोगे यदि तुम अन्ताक्षर,
भाग्य है मेरा नाम।
जाग में जलना, वार मारना,
मेरा ही है काम।

अद्भुत कामों में मैं आता,
अपना नाम अजीब बताता।

—[illegible]

[उत्तर पृष्ठ २१ पर देखिये]

तारे !

जगमग - जगमग करते तारे !
मोती से सुन्दर हैं प्यारे।
जब हम निद्रा में सो जाते
तब ये अपना रूप दिखाते।
बादल के सग आंख मिचौनी,
का ये सुन्दर खेल रचाते।
लगते हैं कितने ये प्यारे,
जगमग - जगमग करते तारे !

चन्दा के ही यह संग रहते,
साथ उसी के खेला करते।
पर मेरी यह समझ न आता—
'जब दिन में सूरज आ जाता,
तब ये क्यों भग जाते सारे ?'
जगमग - जगमग करते तारे !

मेरी दादी है यह कहती—
'इन तारों में नदियां बहतीं,
इन तारों में बसे समुन्दर,
बसे आदमी इन तारों पर।'
पर दीपों से लगते तारे !
जगमग - जगमग करते तारे !

— कनक कुमार

बहरे 'सुन' सकेंगे, अन्धे 'देख' सकेंगे

अमेरिका की 'नेशनल एकेडेमी आफ साइंसेस' की वार्षिक सभा में एक ऐसी मशीन के विषय में बताया गया है जिसके द्वारा 'दृष्टि सम्बन्धी बोध' से बहरे 'सुन सकेंगे', और अन्धे 'देख' सकेंगे।

बहरा आदमी किसी भी स्वर के उद्गम स्थान को अनुभव करके उसके स्वर को मशीन में 'गुजारने' के बाद स्वर को मशीन के 'स्पैक्ट्रोग्राम' में लिखा जाता देख कर 'सुन' सकेगा। अन्धे आदमी स्वर को अनुभव करके उसे पैदा करने वाले साधन को अपने कानों द्वारा 'देख' सकेंगे, क्योंकि स्वर के नमूने विस्तृत होकर 'चित्र' के रूप में परिवर्तित हो जायेंगे।

अभी मशीन का आकार बड़ा है। परन्तु उसे शीघ्र ही इतना छोटा कर दिया जायेगा कि अन्धे और बहरे उसे अपने साथ ले जा सकें।

★ एक पथ ★

हम आज चले उस ओर चले,
वीरों के एक उसी पथ पर।

हम जीवन का उद्देश्य लिये,
पलकों पर अब उन्माद लिए।
नयनों में स्मृति का हास लिये,
चिरजागृति का विश्वास लिए।
हम आज चले उस ओर चले,
वीरों के एक उसी पथ पर।

अनुराग जहां हर दम लुटते,
अरमान जहां हर क्षण घुटते।
संदेश जहां वीरों का है,
विश्राम जहां तीरों पर है।
हम आज चले उस ओर चले,
वीरों के एक उसी पथ पर।

—सुभाष, 'प्रभाकर'

चुटकले

एक समय की बात है कि एक सरदार जी अपनी पत्नी तथा एक बच्चे के साथ कहीं जा रहे थे। उन्होंने सिर्फ ½ टिकट लिया और एक रेल के डिब्बे में जाकर खुद तो ऊपर की सीट पर बैठ गये और पत्नी तथा बच्चे को नीचे की सीट पर सुला दिया। जब टिकट कलेक्टर ने टिकट पूछा तो उन्होंने ½ टिकट देकर कहा कि एक ऊपर तथा दो नीचे अर्थात् ½ टिकट हमने ले लिया।

कृष्ण चौधरी

एकान्त पक्षी

नील गगन में उड़ता जाता था,
पंछी पंख पसार।
सान्ध्य समय था अरुणाम्बर था,
नीरव था संसार।
कल-कल ध्वनि से कुछ था कूजित,
मस्त पवन का था विस्तार।
कहीं दूर पर लुटा रहा था,
चन्दा शीतल प्यार।
गुंजा रहे थे कहीं मधुर ध्वनि,
वीणा के प्रिय तार।
वीणा की मधु ध्वनि लहरों में,
सो गया कवि संसार।

—चन्द्रसेन वृन्दावन

पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान में संघर्ष बढ़ रहा है

[पृष्ठ १० का शेष]

कि अपनी जायदाद को बचाने के लिए लोग जरूर आकर देंगे और इस तरह १) रु० के बदले में करीब ١॥) मिल जायगा। भारत सरकार इस नई स्थिति के सम्बन्ध में शीघ्र ही विचार कर रही है।

●

राणा द्वारा सहायता की प्रार्थना

दोनो देशों में व्यापार ठप्प होने के कारण पाकिस्तान में पदार्थों के मूल्य कम हो रहे हैं। लाहौर मे रुई की कीमत १२) की गांठ कम हो गई है।

नैपाल का पाकिस्तान से कोई सम्बन्ध नहीं, किन्तु नेपाल कांग्रेस के नेता श्री कोइराला ने एक वक्तव्य में कहा है कि नेपाल के राणा ने पाकिस्तान सरकार को लिखा है कि कांग्रेस के विद्रोह को दबाने के लिए उसे सैनिक सहायता की आवश्यकता है। उन्होंने बताया है कि यद्यपि नेपाल सरकार इस बात का खण्डन कर रही है, तथापि मैं यह निश्चित रूप से जानता हूं कि हमारे लोकप्रिय आंदोलन को दबाने के लिए पाकिस्तान सरकार से सैनिक सहायता लेने की बात-चीत गुप्त रूप से चल रही है।

●

भारतीय सम्पत्ति से खिलवाड़

पाकिस्तान में भारतीयों की सम्पत्ति के साथ कैसा खिलवाड़ होता है, यह एक घटना से स्पष्ट हो जाता है। कराची के पिंजरापोल की सम्पत्ति की कीमत २० लाख रु० है। इस पिंजरापोल के पास अपनी बड़ी भारी चरागाहें हैं। इसकी स्थापना १८६६ ई० में हुई थी, जबकि इसे १९३८ में ही रजिस्टर्ड किया गया था। जनवरी १९५० में कुछ मुसलमानों की नजर इस पर पड़ी और उन्होंने असिस्टैंट कस्टोडियन से इसे 'निष्कान्त सम्पत्ति' घोषित करा दी। किन्तु इस संस्था के अध्यक्ष बहुत सतर्क थे, उन्होंने इसके विरुद्ध एकदम अपील करदी और कस्टोडियन से रोक आज्ञा जारी करादी। ३० जनवरी को फिर एक मुसलमान ने इस आज्ञा को रद करने और मैनेजर के पद पर नियुक्ति की प्रार्थना की। कस्टोडियन ने इस प्रार्थना को रद कर दिया, किन्तु पुलिस ने ३१ जनवरी को हस्तक्षेप कराके जबर्दस्ती उसे जायदाद दिला दी। इस पिंजरापोल में पारसी भी दिलचस्पी लेते हैं, जिनमें श्री जमशेद मेहता का नाम उल्लेखनीय है। डेपुटेशन आदि भेजने से कोई लाभ नहीं हुआ। तब मार्च में अपील की गई और कस्टोडियन ने 'अनिष्कान्त सम्पत्ति' घोषित कर दिया, किन्तु उस मुसलमान का कब्जा बना रहा। १८ जुलाई को भी कस्टोडियन ने अपने फैसले को बहाल रखा, फिर भी उस मुसलमान से जायदाद वापस नहीं मिली। चीफ कोर्ट में इस जायदाद के कुप्रबन्ध को रोकने की प्रार्थना की गई पाकिस्तान सरकार के एडवोकेट ने इस तरीके को अवैधानिक बताया। ३ नवम्बर को पिंजरापोल के अध्यक्ष ने किसी तरह इस जायदाद को वापस लेने का हुक्म ले लिया। इस अरसे में चीफ कोर्ट ने इस हुक्म को रोककर जायदाद पर अधिकार नहीं होने दिया। इस तरह बाकायदा घोषित अनिष्कान्त सम्पत्ति को वापस नहीं दिलाया जा रहा।

यह एक घटना है, फिर भी भारत की सरकार इस बात पर विश्वास कर रही है कि पाकिस्तान नेहरू-लियाकत समझौते पर अमल कर रहा है।

●

काश्मीर पाकिस्तान को दे दो

कराची में स्थित सिन्ध मुस्लिम कांग्रेस ने संयुक्तराष्ट्र संघ के प्रधान-मन्त्री श्री त्रिग्वेली को एक खरीता भेजा है, जिसमें उसके मन्त्री के कथनानुसार १० लाख से अधिक मुसलमानों के हस्ताक्षर हैं। उसमें कहा गया है कि काश्मीर पाकिस्तान का अविभाज्य भाग है। आजाद काश्मीर सरकार बाकायदा प्रजातन्त्र सरकार है। यह खरीता १२२ इंच लम्बा है।

'न्यूज क्रानिकल' लन्दन के श्री नार्मन क्लिफ ने एक लेख में यह राय दी है कि शेख अब्दुल्ला और 'स्वतन्त्र काश्मीर' के मौ० गुलाम अब्बास दोनों मिलकर काश्मीर के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव तैयार करलें और फिर उसे जनमत लेकर पुष्ट करा लिया जाय। श्री क्लिफ ने लिखा है कि नेहरू लियाकत पैक्ट जब अमल में आ गया है, तो काश्मीर के सम्बन्ध में भी समझौता हो सकता है। लेकिन इस पर भी 'डान' बिगड़ खड़ा हुआ है। उसने इसे शरारत व बेईमानी से भरा बताया है।

●

पं० जवाहरलाल नेहरू ने पाकिस्तान के सामने एक प्रस्ताव रखा था कि किसी भी स्थिति में दोनों देश युद्ध को न अपनावें। इस सम्बन्ध में लियाकतअली से पत्रव्यवहार अब तक जारी है। दोनों प्रधान मन्त्रियों के शीघ्र परस्पर मिलने की कोई सम्भावना नहीं है।

चित्रलोक

चालू और आने वाली फिल्में

राजरानी

दीनानाथ मधोक उन कहानीकारों और गीत लेखकों में से हैं, जिनकी कहानियों के आधार पर रचित अधिकांश फिल्में 'बाक्स आफिस हिट' सिद्ध हुई हैं। अत्यन्त साधारण और कृत्रिम कथानकों में भी नाटकीयता का अद्भुत समावेश कर वे उनमें एक अजीब जान फूंक देते हैं और 'लोकप्रिय' गीतों के लिखने में तो वे माहिर माने ही जाते हैं। जगत पिक्चर्स की 'राजरानी' उनकी कहानी और गीतों के आधार पर निर्मित नई फिल्म है, जो मधोक की पुरानी विशेषता के कारण सिने-दर्शकों को काफी आकृष्ट किये हुए है। 'एक थी लड़की' वाली मीना इस चित्र में भी अपने अभिनय और गीतों द्वारा दर्शकों को मोह लेने में समर्थ हुई हैं। मीना के साथ रहमान, सोहन, शशिकला और उल्हास जैसे प्रसिद्ध कलाकार कार्य कर रहे हैं।

दास्तान

कारदार कृत 'दास्तान' में नौशाद के संगीत की अपेक्षा एस० एन० बनर्जी की कहानी का नयापन दर्शकों को अधिक खींच रहा है। राजकपूर और सुरैया के सहयोग से निर्मित यह फिल्म संगीत की दृष्टि से असफल होते हुए भी कहानी और कला की दृष्टि से कारदार की सफल कृतियों में से है।

मंगला

जैमिनी ने 'चन्द्रलेखा' और 'निशान' में जन के रूप में जो योग्य कलाकार प्रस्तुत किया है, उसे हिन्दी सिनेमा-जगत कभी विस्मृत नहीं कर सकता। 'चन्द्रलेखा' में खलनायक और 'निशान' में डबल रोल में कार्य करने वाला यह प्रतिभाशाली युवक जैमिनी के नये चित्र 'मंगला' में एक स्वेच्छाचारी राजकुमार का कठिन किन्तु सफल अभिनय करके अपनी प्रसिद्धि को और भी उच्च शिखर पर ले गया है। 'मंगला' का प्रदर्शन आगामी मास के मध्य में दिल्ली और नई दिल्ली के कई सिनेमाघरों में एक साथ किया जायगा।

सरगम

फिल्मिस्तान के मनोरंजन प्रधान चित्र 'सरगम' का दिल्ली के मैजेस्टिक सिनेमा में शीघ्र ही प्रदर्शन होने वाला है इस चित्र की चटपटी कथा में भारत के शास्त्रीय, ग्रामीण तथा नागरिक संगीत और नृत्यों की छटा के साथ ही मिश्र, चीन, अमेरिका, अफ्रीका आदि के नृत्य-गीतों का अपूर्व आयोजन है। संतोषी द्वारा सर्जित इस चित्र में राजकपूर और रेहाना जैसे सुप्रसिद्ध कलाकार कार्य कर रहे हैं।

दीवार

'दीवार' की नायिका नरगिस है। जो अपने प्रत्येक चित्र में धनोपार्जन के साथ-साथ कला में भी उन्नति कर रही है। नरगिस को इस चित्र में पहली बार एक साथ नज़ीर, जसवन्त, अशोककुमार, दिलीपकुमार, मिस्त्री और याकूब जैसे मंजे हुए और सुप्रसिद्ध कलाकारों का सहयोग प्राप्त हुआ है। निर्माता राजेन्द्र जैन 'दीवार' को एक पूर्ण सफल चित्र बनाने में तल्लीन हैं और कैमरामैन दिलीप गुप्त कुछ सुन्दर बाह्य दृश्य लेने के लिए चित्र की टोम के साथ महाबलेश्वर गये हुए हैं।

रूप कहानी

न्यू थियेटर्स ने अन्य किसी भी भारतीय संस्था की अपेक्षा फिल्म जगत को अधिक संख्या में अभिनेता-अभिनेत्रियों, दिग्दर्शक और टैक्निशियन दिये हैं। अपने नये चित्र 'रूप कहानी' में भी भारत के इस महान कला-मंदिर ने सिने-दर्शकों के समक्ष बिलकुल नये दिग्दर्शक और अभिनेता अभिनेत्रियों का प्रस्तुत किया है।

'रूप कहानी' के दिग्दर्शक सुरेन सेन हैं, जो अब तक न्यू थियेटर्स में कला-निर्देशक थे। चित्र संगीत और मनोरंजन से परिपूर्ण है और इसमें अशित बरन के साथ एक नयी अभिनेत्री सुचित्रा बोस कार्य कर रही है। चित्र के संगीतकार सुविख्यात पंकज मलिक हैं।

न्यू थियेटर्स ने प्रबोध सान्याल के प्रसिद्ध उपन्यास 'महा प्रस्थानेर पथे' के आधार पर भी 'यात्री' नाम से एक फिल्म तैयार की है। इस चित्र की कहानी एक ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में है, जो सत्य की खोज में दूर दूर तक भ्रमण करता है। इस चित्र का संगीत भी पंकज मलिक ने दिया है और दिग्दर्शक 'छोटा-भाई' के प्रसिद्धि प्राप्त कार्तिक चटर्जी हैं।

नखरे

पारो पिक्चर्स का संगीत प्रधान चित्र 'नखरे' प्रायः बन कर तैयार है। इस चित्र के संगीत का निर्देशन हंसराज बहल ने किया है और भूमिका में गीता-बाली, नसीरखां, जीवन, डेविड, पारो और बद्रीप्रसाद हैं।

कारदार की दास्तान

म्यूजिकल पिक्चर्स कृत दास्तान अपने ढंग का पहिला चित्र है। चित्र की १०६११ फीट की लम्बाई केवल आमोद की दृष्टि से निर्मित चित्र के योग्य है। चित्र निर्माताओं की पाश्चात्य ढंग के चित्रों के निर्माण की ओर बढ़ती हुई मनोवृत्ति का ज्वलंत उदाहरण है। चित्र के अधिकांश दृश्य और गाने इसी प्रकार के हैं। फोटोग्राफी ऊंचे दर्जे की नहीं है। दृश्य भी साधारण हैं। मध्यान्तर से पहिले के दृश्यों में किसी भी प्रकार का आकर्षण नहीं है, जिसके कारण यह भाग बच्चों जैसे सरस सम्वाद और उपयुक्त अभिनय के होते हुए भी सुबह से शाम तक परिश्रम करने वाले मजदूर के लिये विश्राम और प्रमोद विकसित नहीं करता। अन्तिम भाग ने निर्माता की लाज रख ली है। नौशाद के संगीत और राजकपूर के प्रमोदित करने वाले अभिनय ने चित्र को असफल होने से बचा लिया है। मीना का एकदम बनावटी अभिनय कर्कश प्रतीत होता है। सुरय्या का सदैव हंसमुख चेहरा बहुत कम अवसर पर अपने वास्तविक रूप में दिखाई देता है जिसके कारण उसके प्रसंशकों के हृदय में पूर्ण प्रसन्नता और मनोरंजन उत्पन्न नहीं करता। अभिनेताओं के अप्राकृतिक प्रदर्शन ने निर्देशक कारदार के सम्मान को बढ़ावा नहीं है। कहानी के लेखक एस० एन० बनर्जी कथा को आकर्षक नहीं बना पाये हैं।

[शेष पृष्ठ २७ पर]

अमेरिका का नया विशाल टैलिविजन स्टुडियो

अमेरिका में टैलिविजन का अपरिमित विकास हो रहा है और इसीलिए राष्ट्र के सबसे बड़े नाटक-शाला थियेटर को अमेरिका की नेशनल ब्राडकास्टिंग कम्पनी टैलिविजन स्टुडियो में परिवर्तन कर रही है। नेशनल ब्रॉडकास्टिंग कम्पनी का यह कथन है कि इस विशाल थियेटर के स्टुडियो में परिवर्तित हो जाने से वर्तमान टैलिविजन उत्पादन में भविष्य की मांग पूरी करना असम्भव हो जायेगा।

यह नाटकशाला न्यूयार्क स्थित रौकफेलर सेंटर का एक भाग है और १९३२ में इसे चालू किया गया था। थियेटर में ३००० लोग के बैठने की व्यवस्था है। इस थियेटर का रंगमंच पंखे की तरह का है जो १०० फुट चौड़ा तथा ६० फुट गहरा है और इसका क्षेत्रफल ४२०० वर्ग फुट है। मंच के तीन भागों में पर्दा उठाने का प्रबन्ध है और साथ ही स्टेज को घुमाने की विधि का भी प्रबन्ध है। थियेटर भवन में अन्य स्टुडियो तथा कई एक रिहर्सल के कमरे भी हैं।

अब तक नाटकशाला को संगीत कार्यक्रम, रंगमंच पर नाच-गाना तथा रंगीन नाटक के अभिनय आदि के अतिरिक्त मुख्यतः बर्फ पर फिसलने (स्केटिंग) के खेलों के प्रदर्शन के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

फिल्म डिविजन को नयी फिल्में

बौद्ध गुफा मन्दिर

भारतीय संस्कृति और कला से सम्बन्धित यह लांसग चित्र है जो इस सप्ताह में 'भारतीय गुफा मंदिर संख्या १' शीर्षक के अन्तर्गत दिखाया गया है, जिन्होंने अपनी कोमल भावनाओं को पत्थर पर गढ़ दिया है।

पूना के पास ईसा से दो शताब्दी पहले बने हुये भाजा नामक चैत्य से लेकर बौद्ध प्रणाली के अनुसार बने हुए अजन्ता और एलोरा के विहार जो अपनी चित्रकारी के लिए जगत प्रसिद्ध हैं, आपके सामने जीवित हो उठेंगे। यहां की कलाकृति की पराकाष्ठा यहां की मूर्तियों को देखने से विदित होगी।

समाचार चित्र संख्या १११

इस समाचार चित्र में पूना में एशिया के सबसे बड़े 'ग्लाइडर डोम' प्रधान मंत्री द्वारा उद्घाटित और राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद द्वारा उद्घाटित रेल के इंजनों के सबसे बड़े कारखाने के दृश्य दिखाये गये हैं।

इस चित्र में आप पहला क्रिकेट टेस्ट मैच भी देख सकेंगे, जो अभी हाल ही में दिल्ली में हुई थी।

आर्यसमाज क्या और कहां ?

[पृष्ठ ७ का शेष]

अधिकतर अधिकारी, प्रबन्धक समिति के सदस्य. उपाध्याय एवं ब्रह्मचारी जेलों में पड़े थे, तो ब्रिटिश सरकार के समर्थक आर्य-समाज के स्थानीय महारथियों ने मेरठ जेल में लेखक के पास सुपरिन्टेंडेन्ट जेल की मार्फत गुप्त पत्र भेजा जिसमे यह सुझाव रखा गया कि सरकार लेखक को बहुत खतरनाक समझती है और उससे अप्रसन्न हैं, उसका गुरुकुल से सम्बन्ध रहते वह गुरुकुल से प्रतिबन्ध हटा नहीं सकती।

इसी प्रकार की न मालूम कितनी घटनायें देश में घटी होंगी और विरोधी और न जाने ब्रिटिश सरकार के भक्तों ने कितने कार्यकर्ताओं की आत्माओं को संतप्त किया होगा।

आर्यसमाज से सैकड़ों नहीं सहस्रों की संख्या मे नवयुवक अपमानित एवं तिरस्कृत हो कर बाहर चले गये और मा० गांधी, वीर सावरकर, सुभाषचन्द्र बोस. योगी अरविन्द, सन्त गोलवलकर आदि महानुभावों से प्रभावित हो उनके नेतृत्व में काम करने लगे। उन आर्य नवयुवकों पर इन महानुभावों की छाप लगनी स्वाभाविक थी। हां यदि आर्य-समाज ने प्रसन्नता पूर्वक एक निश्चित योजना के साथ अपने उन नवयुवकों को जिनका निर्माण उसने अपनी पवित्र संस्थाओं मे किया था। कांग्रेस, हिन्दु-महासभा, आजाद हिंन्द फौज, अरविन्द निकेतन एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में भेजा होता और उन पर गर्व किया होता या फिर अपने अन्तर्गत देश की स्वाधीनता, जातीय संगठन, सैन्य-शिक्षा, आध्यात्मिक साधन एवं चरित्र-निर्माण का व्यापक कार्य निर्भीकतापूर्वक उदात्त विचारों के आधार पर किया होता तो वह समस्त शक्ति विछिन्न न होती और आर्य-समाज आज समस्त भारत में, समस्त एशिया में, नहीं नहीं समस्त भुवन मंडल मे एक एक महती अद्वितीय एवं अजेय शक्ति के रूप में विद्यमान होता और अपने लक्ष्य को एवं आचार्य प्रवर के आदेश को आज तक बहुत पूरा कर चुका होता।

आज दिन चारों ओर यह चर्चा सुनी जाती है कि कांग्रेस ने आर्य-समाज को हानि पहुंचा दी अथवा राष्ट्रीय-स्वयं सेवक संघ ने सहस्रों आर्य नवयुवकों को आर्य-समाज से पराङ्मुख कर दिया, इत्यादि। किन्तु तात्विक दृष्टि मे यदि देखा जाय तो यह सर्वथा मिथ्या कथन है। आर्य-समाज को हानि पहुंचाई या उसके कर्यकर्ताओं को पराङ्मुख बनाया तो आर्य-समाज के तथाकथित नेताओं ने, जो बलिदान से मुंह छिपाते थे और गौराङ्ग प्रभु की भृकुटी के बल पर नाचते थे।

आर्य-समाज के पास शक्ति उत्पन्न करने के बहुत से भव्य केन्द्र थे, जिनमें शक्ति उत्पन्न की गई, किन्तु उस शक्ति का सदुपयोग करने की क्षमता इन विदेशी नौकरशाहियों द्वारा आर्य-समाज पर लादे गये नेताओं में न थी और हो भी कैसे सकती थी।

मथुरा, अजमेर, टंकारा देहली एवं शोलापुर में आर्य-समाज के बड़े-बड़े सम्मेलन किये गये और योजनायें बनाई गईं, किन्तु कुछ करने की ओर प्राण पर मरने की भावना के अभाव में भावनायें ही रह गईं। और यदि कभी कोई क्रान्तिकारी कारी योजना स्वतन्त्र रूप से लेकर कुछ नवयुवक चले तो उनको विधान संगठन की दुहाई देकर और नाना विधि आरोप लगा कर रोक दिया गया। उनको तथा आर्य जनता को यह आश्वासन दिलाया जाता रहा कि इस काम को हम स्वयं अपने हाथों में लेते हैं और हम करते हैं, किन्तु किया नहीं गया और उनको ठंडा और उदासीन बना दिया गया।

आज जब कि भारतवर्ष भर को और समस्त विश्व को आर्य-समाज की सबसे अधिक आवश्यकता है, उसके नेता कानों में रुई डाले हुए और आंखों पर पट्टी बांधे हुए विश्राम भवन में लेटे हुए हैं।

पंजाब मिटे, या बंगाल। इसकी चिन्ता नहीं! अनीति, अनाचार का, अन्याय अत्याचार का कितना भी बोलबाला हो उससे कोई सम्बन्ध नहीं।

आर्य-समाज के संगठन एवं सिद्धान्तों पर कितना भी कितना प्रहार हो उसकी कोई चिन्ता नहीं। कर्णधारों ने कुम्भकर्णी निद्रा का सहारा लिया हुआ है।

पुराने पराधीनता युग के तराने गाने में, संकुचित भावनाओं को प्रोत्साहन देने एवं सरकारी चाटुकारिता करने में आज उनकी शक्ति एवं कौशल लगा है।

अब यह कि आज अंग्रेज चला गया और भारत स्वतंत्र हो गया किन्तु इससे क्या? अंग्रेजियत तो आज भी भारत में नंगा नाच रही रही है। विदेशी संस्कृति एवं वादों का प्रचार वेग से देश में बढ़ रहा है। दुराचार, अनाचार, नास्तिकता एवं अवैदिकता घट नहीं रही आर्य समाज का मुख अब खुलता नहीं। उसका प्रेस निर्जीव हो चुका है।

आज आर्य-समाज की शक्ति स्वदेशी सरकार की चाटुकारी करने, उसके सामने हलक बफादारी उठाने में लगी हुई है। आर्य-समाज के नेताओं के मुख पहली प्रतिज्ञा द्वारा बन्द कर दिये जाते हैं। आज दो और दो चार कहने की शक्ति प्रायः आर्य-नेताओं में रह नहीं गई है।

इस सबका एक परिणाम भी हुआ है कि कलतक आर्य-समाज की संस्थाएं शक्ति उत्पन्न करती थीं और व्यक्तियों का निर्माण करती थीं वह आज व्यक्तियों के निर्माण का स्वत्वी बन चली हैं।

आज इस स्वतन्त्रता के युग में और विद्युत वेग से दौड़ने वाले संसार में यदि आर्य-समाज को जीवित रहना है, और अपने लक्ष्य को साधना है तथा आचार्य प्रवर के आदेश की पालना करना है तो उसे अब निश्चत रूप से अविलम्ब अपने अन्दर आमूलचूल परिवर्तन करना है। पदवी प्रतिष्ठ के लोलुप विदेशी या स्वदेशी सरकार के प्रति हलफ उठाने वाले व्यक्तियोंको-क्रान्तिकी अग्नि को फिरसे स्वतन्त्र भारत में जगाने में लगाना होगा। डंके की चोट सत्य एवं नग्न सत्य का प्रचार करना होगा। सरसे कफन बांधकर मैदान में निकलना होगा। आचार्य दयानन्द द्वारा सुलगाई हुई अग्नि को प्रदीप्त करना होगा और देश देशान्तरों को उसके पावन प्रकाश से प्रकाशित करना होगा। ऋषियों की पवित्र-भूमि भारत को एक बार पुनः विश्व की पूज्य भूमि बनाना होगा।

[पृष्ट २२ का शेष]

न दर्शक के हृदय में चित्र देखते समय किसी प्रकार की उत्सुकता ही प्रतीत होती है। एक हास्य चित्र का दुखान्त होना लेखक की अजीब सूझ है। कहानी इस प्रकार है—

राज और कुन्दन एक पिता के पुत्र थे। इनकी एक बहिन थी जिसका नाम सुशीला था। वह बड़ी हठी थी। बचपन में ही पिता की मृत्यु हो जाने के कारण उसका हठ बड़े होने पर और भी अधिक बढ़ गया। जब उसके पिता जीवित थे वह एक दिन इन्द्रा नाम की एक अनाथ लड़की को अपने मकान पर लाये और उसका पालन करने लगे। सुशीला इन्द्रा से रुष्ट रहती और राज व कुन्दन उसके साथ अच्छा बर्ताव करते। बचपन का खेल बड़े होने पर प्रेम में परिणित हो गया। राज और कुन्दन दोनों इन्द्रा से प्रेम करते थे, परन्तु इन्द्रा, वह राज को चाहती थी।

सुशीला को यह प्रेम लीला अच्छी न लगी और उसने अपने दिल में इन्द्रा की शादी एक विलायत से लौटे हुये रमेश नाम के युवक से करने का निश्चय कर लिया। रमेश के सामने जब प्रस्ताव आया तो वह तो उसके लिये पहिले से ही तैयार था। इन्द्रा की सालगिरह मनाई गई। दोनों प्रेमियों ने अपने अपने तोहफे भेंट किये, पर उसे क्या पता था कि वे भेंट ही उसकी बर्बादी का मुख्य कारण बनेंगे। कुन्दन के एक पत्र को लेकर सुशीला ने राज और इन्द्रा के बीच गलत फहमी पैदा करदी। कुन्दन घर छोड़कर भागा। राज ने उसका पीछा किया। वह बुरी तरह घायल हो गया। सुशीला उसे देखने गई। कुन्दन ने उसे अपमानित किया। वह लौटी और उसने राज की मृत्यु की घोषणा करदी। इन्द्रा पागल हो गई। उसने मकान छोड़ दिया रमेश उसे मकान ले गया। राज अच्छा हुआ। कुन्दन ने उसका भ्रम दूर किया। वह इन्द्रा की खोज में निकला। इन्द्रा उसे मिली परन्तु उस समय जबकि वह इस असार संसार को सदैव के लिये छोड़ रही थी।

—रामनाथ पंथ

— × —

गाण्डीव के तीर

इलाहाबाद के नवाब शाह नेहरू जी के भाई हैं और विजयलक्ष्मी पंडित जी की पुत्री।

— भारतीय छात्रों के उत्तर

ऋषि दयानन्द ने अपनी स्त्री के वियोग में सन्यास लिया था और शकुन्तला कैकई का पुत्र था।

— भारतीय शिक्षाविभाग की पुस्तकें

अब अन्त में अपने राम इसी नतीजे पर पहुंचे कि "जैसी देवी वाकई, वैसे ढल पुजारी।" जैसी पढ़ाई वैसे ही उत्तर हैं।

× × ×

भारतीय अनाथालयों की संख्या जाननी आवश्यक है। — एक लेखक

राशन कन्ट्रोल मार्केटिंग आदि सरकारी अनाथालयों की संख्या के आंकड़ों को दो से जरब दे दीजिये, बस संख्या का पता लग जायगा।

× × ×

डेमोक्रेटिक फ्रंट कांग्रेस के संयोजकों को क्या कोई भारतीय शब्द नहीं मिला। —एक पाठक

दो एक थे तो लेकिन कुछ चमकदार नहीं थे — जैसे मिटे हुओं की कांग्रेस और अन पराजित कांग्रेस।

× × ×

दिल्ली के बच्चों ने नेहरू जी को खिलौने दिये। — एक समाचार

शायद इसलिए कि राजनीति के खेलों से उकता गये हों तो कुछ दिन इन खेलों से ही खेल लो।

— एक समाचार

× × ×

जब हम दिवाली मनाते थे तो गधों की पूंछ में पटाखे बांध देते थे।

— विजिल साप्ताहिक

इसीलिए रह गये चुनाव में, वोटरों ने सोचा कि यह तो गधों से खेलने वाले कोई शेखचिल्ली से हैं।

× × ×

लखनऊ में मेढ़िओं की दो मादें कौंसिल हाउस के पास मिली हैं।

—एक शीर्षक

मन्दर की छानबीन भी करालो, वहां भी १०-२ जरूर होंगी।

× × ×

उत्तर प्रदेश की सरकार जेलों की [illegible] समाप्त कर रही है।

— प्रांतीय सरकार

क्योंकि वहां अब उम्मीदवार लोकर [illegible] ही बनाने वाले जाने लगी।

देश हित के लिए पार्टी-बन्दी भूल जाओ। — सरदार पटेल

पहले घर की कुपलानी कम्पनी को तो लिमिटेड होने से रोक लो।

+ × ×

मेरे नाम के आगे पंडित न लगा कर जी लगाया जाय।

— नेहरू जी

बस एक यह धब्बा रह गया था साम्प्रदायिकता का, यह भी धुल गया, जो मियां लियाकत।

× × ×

जिन्ना कांग्रेस मर जायेगी।

— लियाकतअली

कैसे जिन्ना मर गये, क्यों मियां ?

× × ×

प्रफुल्लचन्द्र ने अपना दल अलग बना लिया — एक समाचार

अच्छा तो यह है कि आगामी चुनावों से पहले हरएक नेता अपने घर अपने अलग दल की तख्ती लटका दे।

× × ×

एक भारतीय केवल दो सन्तानें पैदा करे। — श्री करियप्पा

आपको अपने सुझाव की एक कापी भगवान के दरबार में भी भेज देनी चाहिये कि वह किसी-किसी महिला के लिए अधिक उदार न बन जाया करें।

एक फर्म से चीनी न लेने पर १८ करोड़ की क्षति पहुंची।

—श्री त्यागी

परीक्षण करके देखा होगा, व्यापार का सरकार ने। पहले रेलवे के डब्बों के अन्दर मिटा-मिटा कर किया गया, दूसरे लाख बने-बनाये मकानों का किया गया और इस साल चीनी का कर लिया गया।

× × ×

अमेरिका लालचीन की हदों की सुरक्षा की गारन्टी देने को तैयार है।

— ट्रूमैन

दुःख है कि फिर भी चीनी चूहों को बिल्ली की भक्ति पर विश्वास नहीं आने दिया। — चीनी सरकार

यही सोच कर मना किया होगा कि आप लोग इस योग्य नहीं कि कोई भला अपनी बातचीत कर सके।

★

कांग्रेस की कठोरतम परीक्षा

[पृष्ठ ३ का शेष]

उसका जोरदार दमन प्रारम्भ हुआ। दमन के कारण कांग्रेस के जीवन में फिर एक बार संकट का समय आया, और लोगों के मन में यह प्रश्न उठने लगा कि कांग्रेस उस आघात को सह सकेगी या नहीं ! आघात भी साधारण नहीं था। अंग्रेजी सरकार हर प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित थी, और निर्दयतापूर्वक उनका प्रयोग कर रही थी। इधर कांग्रेस शस्त्रहीन युद्ध कर रही थी, जिसका फल यह था कि उसके सिपाहियों को सहन ही सहन करना पड़ता था। परीक्षा कड़ी थी, परन्तु धैर्य के सामने उसे पराजय मानना पड़ा। कांग्रेस उस अग्नि परीक्षा में से सकुशल निकल गई, वह राजनीतिक दृष्टि से सफल भी हो गई।

कांग्रेस सरकार की स्थापना

उपर्युक्त चढ़ाव उतार की सब दशाओं में से सफलतापूर्वक गुजरने के पश्चात् वह दिन भी आ गया, जब भारतवर्ष स्वाधीन हो गया और कांग्रेस सरकार स्थापित हो गई। कांग्रेस के प्रयत्नों से स्वाधीनता प्राप्त हुई, इस कारण यह स्वाभाविक ही था कि शासन की बागडोर कांग्रेस के हाथ में आती। १९४७ के अगस्त मास में अंग्रेजों ने शासन का सूत्र भारतवासियों के हाथों में दे दिया। श्री राजगोपालाचार्य भारत के वायसराय और पं० जवाहरलाल नेहरू प्रधानमंत्री बने। ये दोनों तो कांग्रेसी थे ही, उनकी सहायता के लिए जो मंत्रिमंडल बना वह भी कांग्रेसी था और भारत का संविधान बनाने के लिये जो सभा बनाई गई उसमें भी कांग्रेस का अत्यधिक मत था। कांग्रेस से पृथक मत रखने वालों की संख्या अंगुलियों पर गिनी जा सकती थी। इस प्रकार स्वराज्य की स्थापना ने कांग्रेस के जीवन में दो नये तत्वों का प्रवेश कर दिया। अब तक कांग्रेस का काम शासन की आलोचना करना और शासकों का विरोध करना था। अब शासन का उत्तरदायित्व उसी के कन्धों पर आ गया, और उसे समालोचक की जगह समालोच्य हो जाना पड़ा। दूसरी बात यह हुई कि उत्कृष्ट कांग्रेसी का लक्षण बिल्कुल बदल गया। स्वाधीनता प्राप्त होने से पूर्व उत्कृष्ट कांग्रेसी वह समझा जाता था जो देश के लिये अधिक से अधिक कुर्बानी करे। अब उत्कृष्ट कांग्रेसी सरकार के ऊंचे ओहदेदार बन गये और ऊंचे वेतन पाने लगे। स्वभावतः उत्कृष्ट कांग्रेसी का लक्षण भी बदल गया। सरकार और जनता दोनों की दृष्टि में यह बात जंच गई कि सरकार के किसी ऊंचे ओहदे पर होना ही उत्कृष्ट कांग्रेसी का लक्षण है। स्वराज्य प्राप्ति के परिणामस्वरूप इन दो परिवर्तनों के कारण कांग्रेस के सामने एक नया संकट आ गया, जो पहले संकटों से बहुत भिन्न है। पहले संकट बाह्य थे, यह आन्तरिक है। अधिकार प्राप्ति ने कांग्रेस का रूप ही बदल दिया है, पहले कांग्रेस का कार्य विरोध करना था, अब शासन करना है। पहले कांग्रेस के नेताओं का समय जेलों में बीतता था, अब सरकारी बंगलों में बीतता है। पहले उन्हें वेषभूषा में सादा रहना पड़ता था, अब उनके रहन सहन के ढंग में दिनो दिन "तरक्की" होती जा रही है। परीक्षा तो यह भी है परन्तु वह अग्नि परीक्षा थी, और यह स्वर्ण परीक्षा है। अधिकार प्राप्ति ने कांग्रेस को पहले के संघर्षों से भी अधिक कड़े संघर्ष में डाल दिया है। वह आदर्शों का संघर्ष था, यह ऐषणाओं का संघर्ष है।

समस्या

इस समय कांग्रेस के सामने जो समस्या आगई है, उसका समूल रूप यह है कि क्या शासन का अधिकार लेकर राजनीतिक दल के रूप में आजाने वाली इण्डियन नैशनल कांग्रेस, स्वाधीनता के लिये युद्ध लड़ने वाली कांग्रेस की उत्तराधिकारी होने का अधिकार प्राप्त कर सकेगी अथवा कांग्रेस का केवल नाम ही रह जायगा, और वस्तुतः वह चुनाव लड़ने के लिये एक नारा मात्र बन जायगी महात्मा जी ने अपनी दिव्य दृष्टि से यह देख लिया था कि यदि अधिकार प्राप्ति के साथ ही कांग्रेस के आकार प्रकार में सर्वांगीण परिवर्तन न कर दिया गया तो वह अपने पद पर कायम न रह सकेगी। इसीलिये उन्होंने उन कांग्रेसियों के लिये भी कई प्रतिबन्धों का सुझाव दिया था, जो शासन का कार्य हाथ में लें। पर उनकी सांसारिक दृष्टियां उन आशंकाओं को न देख सकी, जिन्हें महात्माजी ने अपनी परोक्ष दृष्टि से देख लिया था। फलतः, आज कांग्रेस के कर्णधारों के सामने यह समस्या उग्ररूप में आ गई है कि कांग्रेस में प्रवेश करते हुए दुर्भावों को कैसे रोकें और उसकी विशुद्धता की रक्षा कैसे करें ?

मैंने इस लेख में बहुत संक्षेप से उन अनेक संघर्षों का वर्णन किया है जिनके कारण कांग्रेस का जीवन संकट में आता रहा। सभी संघर्ष करते रहे, परन्तु कांग्रेस जिस मार्ग पर चल रही थी वह त्याग और तपस्या का मार्ग था। वह संकटों पर विजय प्राप्त करती और आगे ही बढ़ती रही। अब वह जिस मार्ग पर चल रहा है, परिस्थितियों ने उसके चारों ओर प्रलोभन ही प्रलोभन खड़े कर दिये हैं। प्रश्न यह है कि क्या कांग्रेस इन नई परिस्थितियों पर भी विजय प्राप्त कर सकेगी ?

सचमुच, कांग्रेस के नेताओं के लिये यह कठोरतम परीक्षा का अवसर है।

ब्रिस्टल में हाल में ब्रह्म समाज के संस्थापक राजा राममोहन राय की ११० वीं निधन तिथि मनाई गई राजा राममोहन राय का देहान्त ब्रिस्टल में ही हुआ था। उक्त अवसर पर ब्रिटेन भर से आये ब्रह्मसमाजियों का ब्रिस्टल म्युनिसिपैल्टी द्वारा किए गए स्वागत समारोह का एक दृश्य।

सिडनी (आस्ट्रेलिया) में २५० टन की यह विशाल क्रेन शीघ्र ही तैयार हो जायगी। दक्षिणी गोलार्द्ध में यह अपने किस्म की पहली भारी क्रेन है।

सम्पादक के नाम पत्र

हमारे पाठक क्या कहते हैं ?

सत्यार्थ-प्रकाश

श्री सम्पादकजी,

आर्यसमाज सदैव सत्य ग्रहण करने को तत्पर रहता है और अपनी त्रुटियों को जिसका कि उसको उचित समय पर ज्ञान हो जाता है, दूर फेंकने में भी आनाकानी नहीं करता। जोधपुर में हुए आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर शंका समाधान के समय मैंने श्रीयुत बुद्धदेवजी मीरपुरी से सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास के अन्त में लिखित 'सूर्यादि सब लोकों में मनुष्यादि बसते हैं' पर शंका की तो उन्होंने प्रथम तो मान लिया कि वहां मनुष्यादि न भी बसते हों, किन्तु बाद में स्पष्ट उत्तर दे दिया कि आर्यसमाज इस बात को मानता है कि सब लोकों (जिसमें सूर्य भी सम्मिलित है) में मनुष्यादि बसते हैं। आधुनिक युग में यह कथन कितना भ्रमपूर्ण है, यह हर एक जानता है। हो सकता है ब्रह्माण्ड में करोड़ों सूर्य हों, किन्तु जो सूर्य हमें दिखाई देता है, तथा जिसकी गर्मी का अनुभव किया जा सकता है, उसमें तो कम से कम कोई प्राणी नहीं पनप सकता। पांच तत्वों में से जल वहां नहीं पनप सकता। यहां तक कि परमाणु भी उस तापक्रम में टूट जाते हैं। बीसवीं सदी के वैज्ञानिक युग में यह कहना कि सूर्य में मनुष्यादि बसते हैं हास्यास्पद है। बहुत से लोकों में बसते भी हों (यथा-मङ्गल आदि) तब भी सब लोकों में बसते हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। ऋषि दयानन्द एक प्रकाण्ड पंडित थे, तब भी एक छोटी सी भौगोलिक भूल का रह जाना असम्भव नहीं। क्या आर्यसमाजी इस सत्य को स्वीकार करेंगे ?

— मुकनमल माथुर 'पवन'

●

आध्यात्मिक-उत्सव

सार्वदेशिक दयानन्द सन्यासि वानप्रस्थ मण्डल ज्वालापुर का वार्षिक अधिवेशन रविवार १७ १२ ५० को सन्यासी वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर में होना निश्चित हुआ। इस अधिवेशन के उपलक्ष में १० दिसम्बर से १७ दिसम्बर तक लगातार यज्ञ तथा कथा हुआ करेगी। इस अवसर पर आर्य जगत के विख्यात वीतराग सन्यासी महात्मा स्वामी आत्मानन्द जी महाराज, स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी महाराज, स्वामी अभयानन्द जी महाराज, प्रसिद्ध आर्य नेता म० कृष्ण जी तथा अन्य महानुभाव पधारेंगे। और श्रोताओं को अपने वचनामृत का रसपान करावेंगे।

सार्वदेशिक दयानन्द सन्यासी वानप्रस्थ मण्डल की स्थापना स्वर्गीय पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज ने की थी। वे ही इस मण्डल के आजीवन प्रधान थे। यह मण्डल एक रजिस्टर्ड संस्था है और सन्यासी वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर इसी मण्डल की एक संस्था है। आर्य जगत के शिरोमणि उपर लिखित महानुभाव इस मण्डल के सदस्य हैं।

—शान्तानन्द

पहेलियों के उत्तर

(१) मोर (२) मक्खी (३) बकरी (४) मछली (५) सांप।

वीर

दिल्ली रविवार, २५ मार्गशीर्ष सम्वत २००७

DELHI. 10th. DECEMBER 1950

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार २५ मार्गशीर्ष सम्वत् २००७ [अङ्क ३४

विश्व युद्ध का खतरा सिर पर

इस सप्ताह विश्व की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति जितनी तीव्रता से विषम और संकटापन्न हुई है, उसकी कल्पना किसी ने नहीं की थी। स्थिति की विकटता की कल्पना इसी से की जा सकती है कि ब्रिटेन के प्रधान मंत्री श्री एटली को अपने सब महत्वपूर्ण कार्य छोड़कर अमेरिकन राष्ट्रपति श्री ट्रूमैन से मिलने के लिए स्वयं अमेरिका जाना पड़ा। गत महायुद्ध से पूर्व भी स्थिति बहुत विकट हो गई थी और ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री मि० चैम्बरलेन को म्यूनिख भागना पड़ा था। ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री की इस यात्रा में यह अन्तर अवश्य है कि पहले ब्रिटेन को अपने शत्रु से मिलने जाना पड़ा था और अब वह स्थिति का मुकाबला करने के लिए अपने मित्र के पास गये हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की विषमता के कारणों में हमें जाने की जरूरत नहीं। यह प्रायः सभी पाठक जानते हैं कि घटनाक्रम किस तरह विश्व को अधिकाधिक संकट की ओर ले जाता रहा। स्थिति यह है कि संसार के सभी राष्ट्र आज शान्ति चाहते हैं। कोई राष्ट्र आज लड़ाई के लिए तैयार नहीं है। सभी देश जानते हैं कि अभी विश्वयुद्ध उन्हें नष्ट कर डालेगा, किन्तु जैसा कि भारत के विदेश मन्त्री श्री नेहरू ने कहा है कि इसके बावजूद सारा विश्व शान्ति से दूर भागता जा रहा है। सभी देशों पर भय व संदेह का आवरण पड़ गया है और हम शनैः शनैः संकट की ओर अग्रसर हो रहे हैं, जो अवश्यंभावी है।"

वर्तमान युद्ध कोरिया के गृहयुद्ध के रूप में शुरू हुआ था, किन्तु आज इसने गम्भीर अन्तर्राष्ट्रीय रूप धारण कर लिया है। अमेरिकन सेनाएं यदि पं० नेहरू के परामर्श को स्वीकार करके ३८ अक्षांश रेखा से आगे न बढ़तीं अथवा राष्ट्रसंघ कम्यूनिस्ट चीन को स्वीकार कर लेता, तो सम्भवतः यह स्थिति उत्पन्न न होती, किन्तु उस समय अमेरिका को अपने बल और परमाणु बम का अभिमान था। उसने नेक-नीयती से दिये गये इन परामर्शों को स्वीकार नहीं किया। शायद उसने यह कल्पना ही नहीं की थी कि चीन जैसा अफीमची राष्ट्र भी अमेरिका की नवीन युद्ध सामग्री से सुसज्जित सेनाओं का मुकाबला कर सकता है। इसलिए चीन की चेतावनी को उसने कोई महत्व नहीं दिया। चीन की जनता अपने घोर अपमान से क्षुब्ध थी। जब समस्त चीन पर कम्यूनिस्ट सरकार का अधिकार हो गया है, तब भी अमेरिका उसे स्वीकार नहीं कर रहा। इस राष्ट्रीय अपमान से क्षुब्ध चीन ने अमेरिकन सेनाओं को कोरिया के रणक्षेत्र में जो पाठ पढ़ाया है, वह आज के इतिहास में सर्वथा नई वस्तु है। किन्तु इसी कारण कोरिया का संकट विश्व के लिए घोर संकट बन गया है।

अमेरिका अपनी पराजय को स्वीकार कर लेता है, तो विश्व में उसकी समस्त प्रतिष्ठा धूलिसात हो जाती है और समस्त विश्व में कम्यूनिस्ट शक्ति के प्रभाव में देर न लगेगी। यदि इसके विपरीत अमेरिका इस युद्ध को जिताने के लिये अन्य क्षेत्र पर आक्रमण करता है, तो विश्वयुद्ध द्वारा विनाश में बहुत समय न लगेगा। आज युद्ध को केवल इसी एक मार्ग द्वारा रोका जा सकता है कि चीन की विजयिनी सेनाएं ३८ वीं अक्षांश रेखा से आगे न बढ़ने के १३ राष्ट्रों के परामर्श को स्वीकार कर लें। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि विजय मद में मस्त चीनी सेनाएं विश्व-शांति के इस परामर्श पर सहानुभूति पूर्वक विचार भी करेंगी। आने वाले कुछ दिन बतायेंगे कि अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति कैसा रूप धारण करती है?

★

योगिराज अरविन्द

योगीराज अरविन्द भी चले गये। इस दशक में जिन तीन विश्व विभूतियों पर हम गर्व करते थे, उनमें से तीसरी विभूति भी चली गई। श्री अरविन्द अपनी योग साधना के द्वारा आध्यात्मिक संस्कृति का संदेश दे गये हैं और यह भारत की अपनी वस्तु है। कविवर रवीन्द्र और महात्मा गांधी भी भारतीय संस्कृति के परम उपासक थे और यही तीन विभूतियां हैं, जिनका विश्व ने परम आदर किया है। किन्तु हम आज जिस संस्कृति और विचारधारा की ओर बढ़े आ रहे हैं, वह इससे बिल्कुल विपरीत है। क्या श्री अरविन्द के देहावसान के अवसर पर हम उनके संदेश पर गम्भीरता से पूर्ण विचार करेंगे और क्या प्राचीन शास्त्रों को, जिनसे वे प्रेरणा पाते रहे, फिर अपने अध्ययन का विषय बनाएंगे?

भारत की विदेश नीति

संसद में भारत की विदेशी नीति पर जो बहस हुई है, उसे पढ़-सुन कर एक बात स्पष्ट होती है कि भारत का लोकमत सरकार की वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय नीति से क्षुब्ध है। पाकिस्तान के प्रति भारत सरकार जिस उदारता और अव्यवहारिकता का प्रदर्शन कर रही है, उससे भारतीय लोकमत कभी संतुष्ट नहीं रहा। पाकिस्तान सरकार उदारता को सदा भारत की कमजोरी समझती है और लगातार भारतविरोधी कार्य करती जाती है। पं० नेहरू की अन्तर्राष्ट्रीय नीति के जिस दूसरे अंग की संसद में कठोर आलोचना की गई, वह था कम्यूनिस्टों के प्रति भारत की नरम नीति। कम्यूनिस्ट चीन का भारत ने राष्ट्रसंघ में जितना समर्थन किया, उसका बदला उसने तिब्बत पर आक्रमण करके भारत से ले लिया। कम्यूनिस्ट भी आज विश्व-शांति में इतना ही बाधक हैं, जितना साम्राज्यवादी। इसलिए भूलकर भी कम्यूनिस्टों का समर्थन भारत को नहीं करना चाहिए। आज की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की विकटता देखते हुए संसद के सदस्यों ने यह राय दी कि हमें तो तटस्थ रहते हुए अपनी शक्ति को बढ़ाने का निरंतर प्रयत्न करना चाहिए, जिससे हम किसी भी विकट स्थिति का सामना कर सकें।

कांग्रेस में दल

कांग्रेस कार्य-समिति के सामने आज जो समस्याएं उपस्थित हैं, उनमें से कांग्रेस के संगठन का प्रश्न सबसे अधिक विषम और कठिन है। देश के चुनाव आगामी वर्ष होने वाले हैं, इस स्थिति में कांग्रेस का संगठन बहुत अधिक दृढ़ और अनुशासित होने की जरूरत है, किन्तु वह निरंतर कमजोर होता जा रहा है, और दुःख की बात यह है कि आचार्य कृपलानी जैसे कांग्रेस उत्तरदायी नेता ही कांग्रेस को खंड खंड और दुर्बल करने पर तुले हुए हैं। उनका डेमोक्रेटिक मोर्चा निस्सन्देह कांग्रेस के संगठन को भंग करने वाला है। यदि वे कांग्रेस में एक पृथक संगठन बना सकते हैं, तो दूसरे विचार के लोग भी कांग्रेस में अपना अपना संगठन बना सकते हैं। ऐसी स्थिति में कांग्रेस के सदस्य कांग्रेस के बहुमत के प्रति निष्ठा रखेंगे अथवा अपने अपने छोटे दल के प्रति? छोटे छोटे दलों के संगठन की अनुमति कांग्रेस को छिन्न भिन्न कर देगी। इस संबंध में कार्य समिति की चिन्ता स्वाभाविक है। परन्तु क्या हम आशा करें कि आचार्य कृपलानी जैसे उत्तरदायी नेता अपने नये मोर्चे का मोह छोड़कर कांग्रेस के आन्तरिक सुधार और कांग्रेसियों की चारित्रिक उन्नति की ओर अधिक ध्यान देंगे।

सम्मेलन का कोटा अधिवेशन

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का आगामी अधिवेशन दो सप्ताह बाद कोटा में होने जा रहा है। यह आश्चर्य की बात है कि सम्मेलन के सामने विधान, कार्यक्रम परीक्षा आदि की महत्वपूर्ण समस्याएं विद्यमान हैं, फिर भी हिन्दी जगत् में उनकी कोई चर्चा नहीं हो रही। हैदराबाद में विधान का प्रश्न प्रस्तुत हुआ था, इसी के लिए पटना में विशेषाधिवेशन किया गया था, किन्तु वहां भी विधान का प्रश्न खटाई में ही रहा। अब यह प्रश्न कोटा अधिवेशन में पेश होगा। विधान के परिवर्तन से सम्मेलन में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जायगा। पर आश्चर्य है कि हिन्दी संसार इस सम्बन्ध में बिलकुल उदासीन है और इस उदासीनता का परिणाम सम्मेलन के लिए अशुभ हो सकता है। सम्मेलन के अधिकारियों का कर्तव्य है कि वे आगामी अधिवेशन में प्रस्तुत विषयों के विविध पहलुओं से हिन्दी संसार को परिचित करायें, ताकि स्थिति पर वह गम्भीरता से विचार करते हुए दलगत राजनीति से ऊपर उठकर सम्मेलन के विशुद्ध हित की दृष्टि से कोटा में विचार कर सके।

हिन्दुकोड बिल

हिन्दुकोडबिल पिछले दो वर्षों से अत्यन्त विवादास्पद विषय रहा है। इसका विरोध जितना तीव्र और संगठित होता जाता है, उसके समर्थक भी उतने ही अधिक उग्र होते जाते हैं। सरकार स्वयं इसके सम्बन्ध में बहुत अधिक चिन्तित है और इसे जल्दी से जल्दी पास कराने के लिए बहुत उत्सुक है। हम उसकी उत्सुकता को नहीं समझ सके। यह बिल हिन्दु-समाज पर क्रान्तिकारी प्रभाव डालेगा, तो क्यों न इस प्रश्न पर भावी चुनाव के बाद विचार कर लिया जाय, जिससे समाज का मत भी प्रकट हो सके। यदि सरकार इसके लिए तैयार न हो तो कम से कम इसे पूरा पास कराने की बजाय अभी इसकी विवादास्पद धाराओं को ही प्रस्तुत करना चाहिए।

योगिराज अरविन्द

२० वीं शताब्दी में जिन तीन महा-पुरुषों ने भारत का नाम संसार में प्रसिद्ध करने में सबसे अधिक सफलता प्राप्त की है, वे हैं म० गांधी, कविवर रवीन्द्र और योगिराज अरविन्द। कविवर रवीन्द्र साहित्यिक क्षेत्र के सूर्य थे, म० गांधी को देश के राजनीतिक नेतृत्व करने का सौभाग्य मिला, तो योगिराज अरविन्द आध्यात्मिक क्षेत्र में अद्वितीय गौरवपूर्ण स्थान रखते थे। कविवर रवीन्द्र और म० गांधी के बाद योगिराज अरविन्द पर राष्ट्र अभिमान करता था, परन्तु देश के दुर्भाग्य से ७८ वर्ष की अवस्था में उनका भी गत सोम और मंगल की बीच की रात को १॥ बजे देहावसान हो गया।

योगिराज अरविन्द पुरातन काल के ऋषियों के समान निर्भीक विचार के कर्मठ पुरुष थे। उन्होंने शास्त्रों के अध्ययन को अपनी अविरत साधना की कसौटी पर चढ़ाया। वस्तुतः वे भारत के प्राचीन ऋषिमुनियों की श्रेणी के एक महापुरुष थे। पं० नेहरू के शब्दों में वे एक महान् व्यक्ति ही नहीं थे, एक संस्था थे। उनकी चामत्कारिक मनस्विता की छाप उनकी पुस्तकों में उतरी और उनकी पुस्तकों से उनका संदेश दूर दूर तक फैला। वे हमारी पीढ़ी के श्रेष्ठतम विचारकों में से।

श्री के० एम० मुंशी के शब्दों में २० वर्ष से अधिक समय से वे अपनी प्रबल कलम से काम करते रहे। बंग-भंग आन्दोलन में वह उग्र भारतीय राष्ट्रीयता के अत्यन्त शक्तिशाली उग्र दूत हो कर निकले। उन्होंने राजनीतिक स्वाधीनता को एक नई दिशा प्रदान की और जब भारत की स्वाधीनता की भावना एकमात्र धुंधली सी ज्योति थी, तभी उन्होंने देश के लिए अपना सब कुछ त्याग कर दिया था। वह सचमुच ऋषि थे, जिन्होंने अपने पहले के लेखों में गांधी जी के प्रादुर्भाव और स्वाधीनता की प्राप्ति में अहिंसक आन्दोलन की सफलता को पहले ही देख लिया था। उनकी व्यापक दृष्टि मानव जीवन के बहुत से पहलुओं के लिए एक पहेली थी। उन्होंने दयानन्द और रामकृष्ण परमहंस के कार्यों पर विमर्श किया। सनातन धर्म को एक नया विश्वव्यापी महत्व प्रदान कर उन्होंने बिखरी भारतीय संस्कृति को फिर एक सूत्र में पिरो दिया। उन्हें आधुनिक युग की एक महानतम दार्शनिक समझा जाता था और उनकी महामस्तिष्क की खोज दार्शनिक विचारधारा और आध्यात्मिक प्रगति को एक विशेष देन है।"

'इतने महान आत्मा के एकाएक निधन से कुछ खोया खोया सा महसूस होता है। किन्तु इस दुनिया में उनका काम पूरा हो चुका था। वह दिव्य चेतनता में ही जीते थे और उसी में उनका अस्तित्व था। उनकी मर्त्य कुण्डली में परिवर्तन उस आध्यात्मिक प्रभाव में गड़बड़ी नहीं कर सकता, जिसे वह अपनी आत्मा द्वारा प्रसारित किया करते थे और प्रसारित करते रहेंगे।"

मद्रास के राज्यपाल महाराजा भावनगर के शब्दों में उनके संदेश और आदर्शों का कोई परिचय देने की आवश्यकता नहीं। उनका देहावसान न केवल भारत की क्षति है, अपितु समस्त संसार की क्षति है।

डा० विधानचन्द्र राय के शब्दों में उनकी आध्यात्मिक शक्ति ने गत ५० वर्षों में उनके देशवासियों को प्रभावित किया है। वही प्रथम भारतीय थे, जिन्होंने भारत का भविष्य देख लिया था और उसकी स्वाधीनता के लिए अपने तरीके से काम किया। उन्होंने अन्तर्दृष्टि से महान् चीजें देखीं थीं और अपनी कलम से महान् चीजें लिखीं।

सैकड़ों हजारों श्रद्धांजलियों में से, जो उनके भक्तों ने देश के महान् गुरु के प्रति अर्पित की है, ऊपर दो-चार ही दी गई हैं। वस्तुतः उनका देहावसान ऐसी भारी कमी है, जिसकी पूर्ति निकटभविष्य में तो असम्भव है।

उनका जन्म १५ अगस्त के दिन सन् १८७२ में कलकत्ते में हुआ था। पिता डाक्टर कृष्णधन घोष अंग्रेजी संस्कृति और सभ्यता के विशेष भक्त थे। वह समय भी वैसा ही था। वह अपने बच्चों को पूरे अंग्रेजी ढंग की शिक्षा देना चाहते थे। सात वर्ष की आयु में ही उन्होंने अरविन्द को इंगलैंड भेजा। वे वहां १४ वर्ष रहे और स्कूल तथा यूनिवर्सिटी की सभी शिक्षा वहीं प्राप्त की। परीक्षा में उन्होंने विशेष प्रतिभा दिखाई, छात्रवृत्तियां और पारितोषक प्राप्त किये। अंग्रेजी के अतिरिक्त योरप के साहित्य को खूब पढ़ा। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में पास करने के बाद आई० सी० एस० की परीक्षा में उपस्थित न रहने से उस सर्विस में अस्वीकृत कर दिये गये। गायकवाड़ बड़ौदा उस समय न थे। उनसे भेंट हुई और उन्होंने उन्हें राजकीय कार्य में लेना चाहा। श्री अरविन्द ने स्वीकार किया और वह बड़ौदा आकर कार्य करने लगे। श्री अरविन्द ने स्वीकार किया और वह बड़ौदा आकर कार्य करने लगे। वहां उन्होंने कई स्थितियों में कार्य किया। अन्त में वे स्थानीय कालिज के उपाचार्य बने। श्री अरविन्द इंगलैंड से सन् १८९३ में लगभग १४ वर्ष के बाद लौटे। तब आपको अपनी मातृभाषा बंगाली नये सिरे से सीखनी पड़ी। बचपन में आने से पहले सिखाई नहीं गई थी? वह इतने अच्छे विद्यार्थी थे कि शीघ्र सीख गये। बंगाली और फिर संस्कृत तथा अन्य भाषाओं को धीरे-धीरे व सीखा और उनके द्वारा भारतीय संस्कृति को समझना शुरु किया। बड़ौदे में श्री अरविन्द सन् १८९३ से १९०६ तक रहे और यह समय विशेष रूप से अध्ययन और विचार का रहा। शुरु के वर्ष भारतीय संस्कृति के जानने और समझने में लगे, और अन्त में वर्षों में उनकी निजी विचार धारा विशेष रूप योग और राजनीति की ओर प्रस्फुटित हुई।

१९०५ में जबकि बंगाल को लार्ड कर्जन ने दो टुकड़ों में भंग कर डाला और उसके विरुद्ध में एक सार्वजनिक आन्दोलन खड़ा हो गया। श्री अरविन्द अपने बड़ौदा के अध्ययन कार्य को छोड़ कर पूरे रूप से राजनीति के क्षेत्र में आ गये। १९०६ से १९०९ तक आप राजनीतिक क्षेत्र में संलग्न रहे। आप उस समय अग्रिम राष्ट्रीय नेता थे। देश के लिये पूर्ण स्वाधीनता के उद्देश्य का प्रतिपादन आपने ही किया। 'वन्देमातरम' और 'कर्मयोगिन' पत्र भी आपने इन्हीं दिनों निकाले थे और इनके लेखों के कुछ पाठक आज भी उन्हें याद कर उत्साहित आह्लादित होकर ही पढ़ते हैं। सरकार ने आपको दो बार राजविद्रोह में पकड़ लिया मगर मुकदमे सफल न हुये। दूसरे मुकदमे के दौरान में आप एक वर्ष जेल में रहे। वह एकांत का वर्ष आपके लिये अत्यन्त महत्व का रहा। इसमें आपको जो आध्यात्मिक अनुभव हुए। उन्होंने आपके भावी क्रम की दशा बदल दी। उन्हें सनातन और

योगिराज अरविन्द

आत्मतत्व की महत्ता और सर्वोत्कृष्टता का अभी साक्षात्कार हो गया। जेल से निकलने के बाद आपने उत्तरपाड़ा-भाषण में अपने कारावास के अनुभवों का काफी संकेत किया था। कभी समय के एक आदेश के आधीन ही आप फिर राजनीति से विलग गये और अधिकाधिक अपने आन्तरिक योगकार्य में संलग्न होते गये। पांडिचेरी में आपने योगाश्रम की स्थापना की।

योगाश्रम में देश के कोने-कोने से आने वाले ८०० साधक आज जीवन के आध्यात्मिक विकास की साधना कर रहे हैं।

अमेरिका तथा ब्रिटेन के कर्णधार विश्वशांति के लिये उत्पन्न गम्भीर संकट से चिन्तित हैं

अमेरिका के विदेश मन्त्री श्री अचेसन

अमेरिका के राष्ट्रपति श्री ट्रूमैन
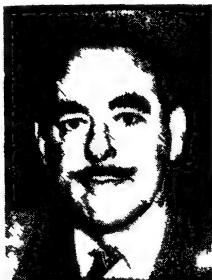
ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री श्री एटली

रक्षासमिति में भारतीय प्रतिनिधि श्री बी० एन० राव विश्वशान्ति के लिए अत्यन्त प्रयत्नशील हैं।

दीवान हाल आर्य समाज के उत्सव में महिला कीर्तन का एक दृश्य

कांग्रेस कार्यसमिति ने अनुशासन भंग के लिए आप से जवाब मांगा है।

[डैमोक्रेटिक फ्रन्ट बनाने पर कार्यसमिति आप से स्पष्टीकरण चाहती है।

श्रीमती रूजवेल्ट

श्री टी प्रकाशम्

श्री आचार्य कृपलानी

एक अज्ञात पत्र द्वारा आपको हत्या की धमकी दी गई है।

"'हिन्दू' सब जातियों, संप्रदायों व मतों का समन्वयात्मक नाम है"

— श्री भैयाजी दाणी

"देश रक्षा का दायित्व हिन्दुओं का है...संघ अपने कार्य में यशस्वी हो"

— डाक्टर मुकर्जी

★ रा० स्व० संघ (दिल्ली) का वार्षिकोत्सव ★

श्री भैयाजी दाणी व डाक्टर मुकर्जी के ओजस्वी भाषण

१ दिसम्बर को सायंकाल दिल्ली के रामलीला मैदान में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थानीय शाखा का वार्षिकोत्सव मनाया गया। इस उत्सव पर संघ के सरकार्यवाह श्री भैया जी दाणी पधारे थे। डाक्टर श्यामाप्रसाद मुकर्जी उत्सव के अध्यक्ष थे। विभिन्न शारीरिक प्रदर्शनों के पश्चात श्री भैयाजी का भाषण आरम्भ हुआ।

भैया जी का भाषण

आज हम सब लोग राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का वार्षिकोत्सव मनाने के लिए एकत्रित हुए हैं। व्यक्तिगत जीवन में वर्षगांठ के अवसर पर मनुष्य अपने गत जीवन की समालोचना करता है कि उसने कितना यश पाया, अथवा अपने उद्दिष्ट से वह कितना पीछे रह गया। साथ ही आगे उस उद्दिष्ट की प्राप्ति के लिए क्या करना है, इस पर भी विचार करता है। इसी प्रकार से किसी भी संस्था के वार्षिकोत्सव के अवसर पर विचार किया जाना चाहिये।

२५ वर्ष पूर्व

इस दृष्टि से जब हम अपनी ओर देखते हैं, तो हमारा ध्यान उस समय की ओर जाता है, जब २५ वर्ष पूर्व स्वर्गीय डाक्टर जी ने इस आन्दोलन को जन्म दिया था। इसे प्रारम्भ करते हुये प्रथम ही उन्होंने यह कहा था कि यह संघ-कार्य अन्य किसी कार्य की प्रतिक्रिया नहीं है। इसका उद्दिष्ट हिन्दू समाज की एकात्मता है, जिसे प्राप्त किये बिना इस देश का भला नहीं हो सकता।

डाक्टर जी का अपने जीवन में देश के सभी प्रकार के आन्दोलनों से — क्रान्तिकारी आन्दोलन से लेकर स्व० गांधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलन तक — सक्रिय सम्बन्ध रहा था। वे उनमें अग्रेसर रूप से रहे थे। किन्तु इस समस्त अनुभव से अपने जीवन में वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जब तक हिन्दू जीवन को जागृत न किया जाय, तब तक इस देश का उत्थान हो नहीं सकता। इस देश में आने वाले विदेशी तभी अपना राज्य स्थापित कर सके, जब यहां का हिन्दू समाज असंगठित तथा छिन्नभिन्न दशा में था। और जितने दिन भी उनका राज्य चला वह भी हिन्दुओं के पराक्रम से ही चला। यही हिन्दुओं के पतन की कहानी है।

अंग्रेज और अंग्रेजी

अंग्रेजों ने इस दुर्बलता का लाभ उठाकर और भी गम्भीर आघात किया। अंग्रेजी यहां प्रारम्भ करवाने वाले ने अपने भाषण में कहा था कि वह इस देश में ५० वर्ष पश्चात् एक ऐसा जीवन निर्माण करना चाहता था, जिसमें यहां के निवासी प्रत्येक बात में अंग्रेजी दृष्टिकोण अपनावें और पश्चिम से ही स्फूर्ति प्राप्त करें।

और आज हम देखें कि उसके उक्त कथन को कितनी सफलता प्राप्त हुई है। आज छोटी से छोटी बात के लिए भी हम पश्चिम की ओर देखते हैं। हमारी अपनी मौलिकता प्रायः नष्ट हो गई है। आज देश में अनेकों शिक्षित व्यक्ति हिन्दू समाज की बातों को पिछड़ी हुई बातें कहते हैं। वे यह पूछते हैं कि इस देश के इतिहास में से यदि हिन्दू-समाज का इतिहास निकाल दिया जाय तो शेष क्या बचेगा — इस आत्म-विस्मृति का कारण यह अंग्रेजी शिक्षा है।

अतः डाक्टर जी ने कहा कि हम अपने आदर्शों को देखें, अपने जीवन को अपनावें, और उसी आधार पर समाज का संगठन करें। और अब तो इस विषय में अधिक मतभेद भी नहीं रहा। अब तो प्रायः सभी मानने लगे हैं कि भारत के प्राचीन समाज के सिद्धान्त उत्तम थे, और आज जब संसार संकट में है, भारत के लोग सीना तान कर यह सकते हैं कि संसार में शांति भारत के मार्ग पर चल कर ही हो सकती है।

जिस संस्कृति की ठोकर से संसार की अनेक संस्कृतियां चूर चूर हो गयीं उससे टकरा कर और एक हजार वर्ष तक संघर्ष लेकर भी हम आज जीवित हैं। यह उन सिद्धान्तों और जीवन प्रणाली की श्रेष्ठता का प्रमाण है। उसी मार्ग पर चलने से आगे भी कल्याण होगा। आज उस समाज में उत्पन्न हुए भेदोपभेद मिटा कर उसमें एकात्मता निर्माण करें और दुनियां को ये दिखा दें कि हम संसार में आदर्श समाज निर्माण करेंगे। इसी अर्थ में हम यह कहते हैं कि हम हिन्दू राष्ट्र निर्माण करेंगे।

श्री भैयाजी दाणी

हिन्दू

प्रायः लोग यह कहते हैं कि हिन्दू एक जाति , एक सम्प्रदाय है, एक मत (Religion) है, किन्तु यह भ्रम है। हिन्दू एक जाति नहीं, उसमें अनेक जातियां हैं। वह एक सम्प्रदाय नहीं, एक मत नहीं, उसमें अनेकों सम्प्रदाय हैं, मतमतान्तर हैं। इन सब जातियों, सम्प्रदायों तथा मतमतान्तरों का समन्वयात्मक राष्ट्रीय नाम ही "हिन्दू" है।

आज हिन्दुओं में दिखाई देने वाले अनेकों भेद देखकर कोई यदि यह कहे कि ये किस प्रकार एक हो सकते हैं तो यह निराशा का दृष्टिकोण है। आज भी देश में भेदों से भी ऊपर एकता के तत्व दिखाई देते हैं। हमारे चारों धाम, हमारी सभी भाषा में प्रकट हुए वाङ्मय की एक रूपता, आदर्श और जीवन के संस्कारों की एकता इस एकता के आधार स्तम्भ है।

डाक्टर जी ने इस समाज की एकात्मता के लिए कहा ही नहीं उन्होंने उसे प्राप्त करने का मार्ग भी बताया। उन्होंने कहा कि यदि पराये देश का आने वाला ५० वर्षों में हमारे जीवन का रूप बदल सकता है तो हम भी ५० वर्षों में पुनः अपने संस्कारों को जागृत कर सकते हैं। हमारे पीछे हमारी सारी परम्परा, हजारों शताब्दियों के संस्कार, गौरवशाली इतिहास, और उच्च आदर्श हमारे सहायक हैं।

भारतीय एकता

भारत की एकता अत्यन्त प्राचीन है। जब यातायात के आज जैसे साधन भी नहीं थे तब भी हमारे पूर्वजों ने हिमालय से कन्याकुमारी तक एकता निर्माण की थी। चारों दिशाओं में स्थापित चार धाम इसका प्रमाण हैं।

जिन बातों के आधार पर यह किया जा सका था, आज भी उन्हीं बातों पर आचरण करने से यह एकात्मता पुनः जागृत की जा सकती है।

उन बातों में हमारी शिक्षापद्धति विशेष महत्व की थी। बालक शिक्षा लेने के लिए गुरु के आश्रम जाता था। गुरु सान्दीपनि के पास शिक्षा लेने राजकुमार कृष्ण भी जाता था और दरिद्र सुदामा भी। उस आश्रम के वातावरण में छोटे बड़े, अथवा ऊंच नीच का भेद समाप्त होकर यह एकात्मता जागृत होती थी। इस प्रकार शिक्षित लोग स्थान स्थान पर जाकर बसते थे और उनकी ओर देखकर सम्पूर्ण देश अपना जीवन बनाता था।

डाक्टरजी की शिक्षा

डाक्टर जी ने कहा कि यदि यह शिक्षा दी जाय कि हम एक ही मां के पुत्र हैं, एक ही देश के हैं, एक ही हमारा जीवन है, तो पुनः एकता जागृत हो सकती है। इसीलिए उन्होंने राजकारण से सन्यास लिया और इस ओर लगे।" उन्होंने कहा कि यदि जनता संगठित हुई तो भविष्य में राजकारण के असफल होने की सम्भावना उपस्थित होने पर जैसे पहिले अनेकों आये और गये वैसा न हो सकेगा। आज भी जब हम नेताओं को इस प्रकार की बात कहते सुनते हैं कि जनता को आपसी भेदभाव भुला कर संगठित होना चाहिए तभी भविष्य में हम अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने में समर्थ हो सकेंगे तो हमें आज से २५ वर्ष पूर्व कही हुई डाक्टर जी की बातें स्मरण हो आती हैं।

इसलिये उन्होंने लोगों को एकत्रित कर एक सूत्र में संगठित करना आरम्भ किया। इस भगवाध्वज के नीचे जो हमारे इतिहास का प्रतीक है स्वयंसेवक एकत्रित होने आरम्भ हुए। डाक्टर जी ने कहा कि ये भगवाध्वज हमारा गुरु है। इसके सम्मुख प्रतिदिन एकत्रित होकर हम अपने आदर्शों की शिक्षा लें और उनके अनुसार अपना जीवन बनाने का अभ्यास करें। आज जब संघ की शाखायें लगती हैं तो उसके शेष जीवन से अलग एक घंटे के लिए स्वयंसेवक के सामने उसका गतगौरव आता है। 'इस परम्परा को मुझे चलाना है' इसका उसे भान होता है और इसी दृष्टि से एक आदर्श स्वयंसेवक उसका जीवन बनता है। स्वयं डाक्टर जी ने प्रत्येक स्वयंसेवक को

[शेष पृष्ठ २१ पर]

चीनी स्वयंसेवक, जिन्होंने अमेरिका के छक्के छुड़ा दिये

★ श्री विसोकोव (रूसी संवाददाता)

चीन के जननेता श्री माओत्से तुंग

परेशान जनरल मैकआर्थर

अमरीका ने कोरिया में जो युद्ध की भीषण आग सुलगायी है, उसकी लपटें चीन की सरहद तक पहुंच चुकी हैं। चीनी जनता के जनतन्त्र की सुरक्षा के लिए भारी खतरा पैदा हो गया है। अतलांतिक पार के अदमपंथी, जिनके मुंह में इंसान का खून लगा हुआ है, उन्मादित होकर आगे बढ़ने लगे। वे कोरिया होकर चीन में दाखिल होना चाहते थे। बिल्कुल यही वजह है कि उन्होंने तैवान (फारमोसा) पर अपना कब्जा जमा लिया है।

परन्तु चीन के लोग अपने घर बार, अपने देश तथा शान्ति की रक्षा करने के लिये फौलाद की तरह कमर कस कर तैयार हैं। देश के कोने कोने से पेकिंग में हर रोज लाखों आवेदन पत्र चीनी देश-भक्तों के आ रहे हैं, जिनमें वे कोरिया की जनसेना में भर्ती होकर लड़ने की इजाजत चाहते हैं।

आंगतुंग नामक शहर में अमरीकी हवाई जहाजों ने शान्तिप्रिय चीनी श्रमिकों को अपनी गोली का निशाना बनाया है। यह विगत अगस्त महीने के अखीर की बात है। जिन चीनी श्रमिकों पर अमरीकी हवाबाजों ने गोलियां चलायी थीं, उनमें एक फांग सी यून नामक श्रमिक था। वह घायल हो गया था, इसलिए उसका इलाज अस्पताल में होने लगा। चंगा होते ही फांग सी-यून कोरिया की जनसेना में एक स्वयं सेवक की हैसियत से भर्ती हो गया। आंगतुंग के दर्जनों श्रमिकों ने उसका साथ दिया।

कोरिया में अमरीकी आक्रमणकारियों से लड़ने के लिए जो स्वयंसेवक चीन से आ रहे हैं, उनमें ऐसे लोग बहुत बड़ी संख्या में शामिल हैं, जो अभी हाल ही में चीनी जनता की मुक्ति फौज से छुटे हुए हैं। "जब अमरीकी लुटेरे कोरिया और मंचूरिया में शांतिप्रिय नागरिकों का खून कर रहे हैं वैसी हालत में हम चुप चाप हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना नहीं चाहते।" ये शब्द हैं चीनी जनसेना के एक तपे तपाए सैनिक सा यो हुन के।

देश के एक छोर से दूसरे छोर तक देश प्रेम की लहरें फैल गई हैं तथा सामूहिक रूप में चीनी स्वयंसेवक कोरियाई जनता के जनवादी जनतन्त्र की फौज में शामिल हो रहे हैं। इन बहादुर स्वयंसेवकों के पीछे है चीन का ठोस जनमत—संयुक्त राष्ट्रीय जनवादी मोर्चा।

मुकदन से आई हुई रिपोर्टों से पता चलता है कि सिर्फ एक दिन में तेरह सौ लोग कोरियाई जनता के मुक्ति संग्राम में शामिल होने के लिए तैयार हो गये। मुकदन के मेडिकल कालेज के अध्यापक और छात्र फौरन कोरिया की फौज में एक मेडिकल यूनिट—दवादारू पहुंचाने वाला फौजी दस्ता भेजने की तैयारी करने लगे। शहर के विभिन्न अस्पतालों में काम करने वाले दो सौ से ऊपर मेडिकल कार्यकर्ताओं ने इस यूनिट के साथ जाने की अपनी अभिलाषा जाहिर की है।

फुशुन, हार्बिन, आनशान, चांगचुंग, किरिन, तसीतसीहर तथा उत्तरी पूर्वी भाग के बहुत से दूसरे नगरों और गावों से ऐसी ही रिपोर्टें आ रही हैं। किया टुंग तथा किरिन के पहाड़ी इलाके की जहां चीन के अल्पसंख्यक कोरियाई रहते हैं, समस्त वयस्क आबादी अमरीकी सैनिकों को सबक सिखाने के लिए तैयार है।

"यहां चीन में हमने सच्ची आजादी पाई है।" ये शब्द हैं चेन ऊ नामक किसान के। "अब वाशिंगटन के गिरह-कट इस आजादी को ग्रसने के लिए राहु-केतु बन गए। हम कोरिया जा कर और अपने देशवासियों की मदद करेंगे, ताकि वह खतरा हमेशा के लिए खत्म हो जावे।"

चीनी जनता के जनवादी जनतंत्र के चप्पे चप्पे में देश प्रेम का जज्बा उभर आया है। क्या मर्द और क्या औरत, सब के सब कोरिया की फौज में स्वयं-सेवक बन कर भर्ती हो रहे हैं।

पेकिंग में नगर के व्यापार और उद्योग मंडल की एक बैठक हुई। राष्ट्रीय संपत्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाले उद्योगपतियों और सौदागरों ने कोरिया में अमरीकी दस्तन्दाजी से पैदा होने वाली स्थिति पर गौर किया।

३०,००० उद्योगपतियों की तरफ स वक्ताओं ने इस बात की जोरदार मांग की कि जंगबाजों को जो खून को चोकर पीए हुए हैं, करारा सबक सिखाया जाए।

"अमरीका अपनी आक्रमणात्मक कार्रवाइयों के जरिए चीन के राष्ट्रीय व्यापार और उद्योग का नाश कर रहा है। इसका अर्थ हमारे लिए आर्थिक गुलामी है, हम अपनी समस्त शक्ति और पूरी ताकत से अपने जनतन्त्र के बहादुर स्वयंसेवकों का साथ देंगे।"

उन्होंने एक मत से इस आशय का प्रस्ताव पास किया है कि पेकिंग के समस्त उद्योगपति कोरिया जाने वाले चीनी स्वयंसेवकों को हर तरह की नैतिक एवं आर्थिक सहायता देने को तैयार हैं।

एक ओर जहां अमरीकी आक्रा-न्ताओं के विरुद्ध चीनी जनता की असीम देशभक्ति की लहरें उठ रही हैं, वहां दूसरी ओर चीन के श्रमिक एवं किसान कारखानों और खेत-खलिहानों में दिन-दूनी रात चौगुनी तरक्की करके उत्पादन को आगे ले जा रहे हैं। श्रमिक, किसान, दफ्तर के कर्मचारी, कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में काम करने वाले, देशभक्त उद्योगपति और सौदागर यह ऐलान करते हैं कि, "हमारे स्वयंसेवक पूरे तौर से आश्वस्त हैं कि उनके पीछे उनका शक्तिशाली देश है—चीनी जनता का जनवादी जनतन्त्र जो अपनी मातृभूमि की रक्षा की खातिर रणक्षेत्र में उतरने वाले बेटों के लिए हर तरह का साधन जुटाने की क्षमता रखता।"

कोरिया, जिसने आज विश्व को एक भयङ्कर ज्वालामुखी के मुख पर ला खड़ा किया है।

साहित्यरत्न परीक्षोपयोगी लेख—

"अतीत के चलचित्र"—एक अध्ययन

★ श्री जानकी वल्लभ

महादेवी की वरद लेखनी जहां कविता के क्षेत्र में अपना विशेष स्थान रखती है, वहां गद्य साहित्य भी उसके प्रभाव से वंचित नहीं है। उनका लिखा हुआ गद्य हिन्दी साहित्य की स्थायी निधि है। जीवन के अत्यन्त करुण चित्रों को भावगम्य तथा हृदयस्पर्शी भाषा में प्रकट करने में वे कितनी सफल हुई हैं, इसका निर्णय करने के लिए उनकी गद्यकृति 'अतीत के चलचित्र' का अध्ययन पर्याप्त सहायक हो सकता है।

आज के प्रगतिशील युग में मानव जीवन की वास्तविकता का निरूपण सरल तथा सुबोध साहित्यिक कृतियों के द्वारा करना नितान्त आवश्यक है। आज का मानव समाज एक विचित्र आर्थिक संघर्ष में से अपना मार्ग निकालने के लिए प्रयत्नशील है। विशेष तौर पर भारत की निम्न श्रेणी से सम्बन्धित जनता को जिस आर्थिक ऊहापोह का सामना करना पड़ रहा है, वह किसी भी भावुक हृदय से छिपा नहीं। समाज का यही वर्ग महादेवी को समय समय पर जीवन के प्रति एक विशिष्ट दृष्टिकोण से देखने के लिए प्रेरित करता रहा है।

महादेवी का जीवन आरम्भ से ही वेदना की सुकुमार गोद में पला है। समय समय पर उन्हें इस प्रकार के व्यक्तियों का सम्पर्क प्राप्त होता रहा है जिन्होंने उनके इस वेदनात्मक अंतःकरण को मुखरित किया है। यही कारण है कि 'अतीत के चलचित्र' की लेखिका को अपने जीवन की बीती घटनाओं पर एक विहंगम दृष्टि डालने पर, अतीत के धुंधलेपन में किसी प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता।

'अतीत के चलचित्र' महादेवी की एक उत्कृष्ट गद्य रचना है। इसमें बीते जीवन के कुछ प्रेरक चित्रों को लेखबद्ध करके उन्हें सदा के लिए न भूलने वाली वस्तु बना दिया गया है। पुस्तक में चित्रित सभी घटनायें लेखिका के निजी जीवन में घटी हैं, अत: जहां वे पाठकों के अंतःकरण पर अपनी अमिट छाप अंकित करती हैं, वहां लेखिका के व्यक्तित्व पर भी प्रकाश डालती हैं। लेखिका के अपने शब्दों में—

'इन स्मृतियों में मेरा जीवन भी आ गया है।'''परन्तु मेरा निकटता-जनित आत्मविज्ञापन उस राख से अधिक महत्व नहीं रखता, जो आग को बहुत समय तक सजीव रखने के लिए ही अंगारों को घेरे रहती है। जो इसके पार नहीं देख सकता वह इन चित्रों के हृदय तक नहीं पहुंच सकता।'

इस संस्मरण-कथा में आरम्भ से ले कर अन्त तक सभी घटनाएं और पात्र इस प्रकार के चुने गये हैं, जिनमें वेदना मूर्तिमान हो उठी है। 'रामा' के प्रेम भरे अंचल में सान्त्वना की जो कठोर प्रतीत होने वाली मूर्ति निहित है, उसकी कठोरता में भी सरलता और सरलता में भी कर्तव्य बुद्धि की कठोरता, उसे एक अपढ़ ग्रामीण सेवक के स्थान से ऊंचा उठा कर महान् व कर्तव्यपरायण व्यक्तियों की श्रेणी में बैठा देती है। 'रामा' का सौम्य स्वभाव लेखिका के हृदय में एक हलचल पैदा कर देता है। 'रामा' की मधुर स्मृति ही लेखिका को अतीत के उन सभी चित्रों को एकत्र करने के लिए प्रेरित करती है जिनमें वेदना के पानी के साथ दुखों का अमृत इतना एक रस हो चुका था कि एक दूसरे का अस्तित्व अलग करना कठिन ही नहीं, असंभव प्रतीत होता है।

पुस्तक में जीवन के सुकुमार शैशव से ले कर यौवन की ढलती अवस्था तक के सब चित्रों को एक विशेष क्रम से सजाया गया है। आरम्भ के चित्रों में बाल्य-काल का वर्णन होने के कारण लेखिका के भावों में भी बालकोचित सरलता और सौम्यता की स्पष्ट झलक मिलती। परन्तु ज्यों २ जीवन की जटिल समस्याओं पर प्रकाश डालने वाली कथाओं का सूत्रपात होता है, लेखिका अपने भावावेश में खो सी जाती है और उसका दयार्द्र अंतःकरण अनायास ही रो पड़ता है। असहाय अबला जाति की करुण कहानी सुनाते २ लेखिका ने यदि पुरुष की भावनाओं के प्रति विद्रोह का डंका बजा दिया हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं! दुखिया 'सबिया' का वर्णन करते समय लेखिका अपनी इन भावनाओं को शब्दों का रूप देने में नहीं चूकती—

'पुरुष भी विचित्र है। वह अपने छोटे से छोटे सुख के लिए स्त्री को बड़ा से बड़ा दुख दे डालता है और ऐसी निश्चिन्तता से, मानों वह स्त्री को उसका प्राप्य ही दे रहा हो।'

'अतीत के चलचित्र' मानव जीवन की व्यथाभरी कथाओं का लेखा है। पुस्तक की लेखिका ने विषय के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया है। परन्तु मूल रूप से एक कवयित्री होने के कारण अनेक स्थलों पर भाषा ने गद्यमय कविता का स्वरूप धारण कर लिया है। उदाहरण के लिए निम्न पंक्तियों को देखिए—

"और उनके शासन को अनसुना ही छोड़ कर मेरा मन स्मृतियों की चित्रशाला में दो युगों से अधिक समय की धूल के नीचे दबे 'छिन्दा' या छिन्देश्वरी के धुंधले चित्र पर उंगली रख कर कहने लगा, ज्ञात है, अवश्य ज्ञात है"

उपमाओं की तो भरमार ही है। देखिए—

"पृथ्वी के उच्छ्वास के समान उठते धुंधलेपन में वे कच्चे घर आकण्ठ मग्न हो गए थे— केवल फूस के मटमैले और खपरैल के कत्थई और काले छप्पर, वर्षा में बढ़ी गंगा के मिट्टी जैसे जल में पुरानी नावों के समान जान पड़ते थे"।

कुछ स्थलों पर विश्वव्यापी सत्य को इतनी सुन्दर भाषा का स्वरूप दिया गया है कि अनायास ही उसे अपने हृदय-पटल पर अंकित करने की इच्छा होती है। नारी के स्वरूप का गहन अध्ययन करने के बाद निम्न पंक्तियों में उसे कितनी सरलता से उड़ेल दिया गया है:—

"स्त्री में मां का रूप ही सत्य, वात्सल्य ही शिव, और ममता ही सुन्दर है। जब वह इन विशेषताओं के साथ पुरुष के जीवन में प्रतिष्ठित होती है तब उसका रिक्त स्थान भर लेना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाता है"।

'अतीत के चलचित्र' में महादेवी की चित्रकला भी शब्दायमान हुए बिना नहीं रहती। बदलू का वर्णन देखिए:—

"बदलू का चित्र खींचना किसी चित्रकार के लिए सहज नहीं, क्योंकि वह ऐसी परस्पर विरोधी रेखाओं में बंधा था कि एक को स्पष्ट करने में दूसरी लुप्त होने लगती थी।"

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि लेखिका की भाषा अत्यन्त सरल, सुबोध और सारगर्भित है। साधारणतया वाक्य छोटे हैं, किन्तु कहीं २ लम्बे वाक्यों का प्रयोग भी किया गया है।

रोचकता महादेवी के गद्य का प्राण स्वरूप अवयव है। जीवन में अनुभव की गई छोटी २ घटनाओं को इतने रोचक ढंग से रखा गया है कि पढ़ते ही बनता है। परन्तु यह रोचकता निरी रोचकता ही नहीं है; इसमें मनुष्य जीवन के गंभीर तत्वों को वहन करने की सामर्थ्य है। पुस्तक में वर्णित घटनाएं जहां हमारी आंखों के सामने मूर्तिमान हो कर नाच उठती हैं, वहां उनके आवरण में छिपा हुआ सत्य अन्तःकरण की सुप्त भावना को झिंझोड़ डालता है।

चाहे कला-पक्ष को लिया जाय, चाहे भाव-पक्ष को, दोनों ही दृष्टि से लेखिका की यह रचना खरी उतरती है। सरल और लालित्यपूर्ण भाषा तथा रोचक शैली ने इसे कलापक्ष के उच्च सिंहासन पर बैठा दिया है और भावों की गंभीरता और जीवन के महान सिद्धांतों के स्वाभाविक चित्रण ने इसमें एक अमर आत्मा का संचार कर दिया है।

फिर भी एक आलोचक की पैनी दृष्टि से प्रस्तुत रचना को आद्योपान्त पढ़ने के उपरांत, यह बात अनुभव हुए बिना नहीं रहती कि लेखिका स्त्री जाति के प्रति आवश्यकता से अधिक उदार हो गई है। पुरुषों के दोषों का भागी तो पुरुषों को ठहराया ही गया है साथ ही स्त्री जाति के भी सब दोषों का कारण लेखिका ने पुरुषों को ही माना है। असहायता की सफेदी पोत कर स्त्री जाति को इतना निष्कलंक सिद्ध करने का प्रयास किया गया है, जितना वह न आज तक रही होगी और न आगे रह सकती है।

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि लेखिका की यह रचना बहुत सुन्दर बन पड़ी है। अपनी स्मृतियां पर्दा न मालूम कितनी विस्मृति की तहों में खोई हुई विभूतियों को खोज निकालने का जो उद्देश्य लेखिका की दृष्टि में रहा है उसमें वे पूर्ण सफल हुई हैं। अन्त में यह कहना अनुचित न होगा कि महादेवी वर्मा ने इन सब चित्रों को 'अपनी स्मृति की सुरक्षित सीमा से बाहर लाकर' किसी प्रकार का अन्याय नहीं किया है।

———

परवानीपुर का वह पुल जिसके लिए मुख्य लड़ाई हुई थी।
नीचे कांग्रेसी सैनिकों को शिक्षा दी जा रही है।

जयपराजय की करुण कथा

वीरंगज में नौ दिन की आजादी

★ श्री जगदीशचन्द्र अरोड़ा

वीरगंज पर नेपाली कांग्रेस के अधिकार के २४ घंटे बाद मैं वीरगंज पहुंच गया था।

नेपाल की तराई में भैयादूज की रात को हुए कांग्रेस के सशस्त्र हमले से भारत तथा देशान्तरों को भारी आश्चर्य परन्तु कांग्रेस की योजना से अवगत रहने के कारण मुझे तनिक भी आश्चर्य हुआ था नहीं हुआ था। अगस्त माह में मेरे चार साल के बाद अमेरिका से लौटने पर मुझ से मेरे सहपाठी और परम मित्र काशी-निवासी श्री गोपाल प्रसाद उपाध्याय के छोटे भाई श्रीकृष्ण प्रसाद मिले थे। कृष्ण से मुझे ज्ञात हुआ कि गोपाल उस समय कहीं नेपाल में गिरफ्तार थे और जेल में ही अनशन कर रहे थे। गोपाल की स्थिति अत्यन्त चिंताजनक हो चुकी थी और भारत के प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू स्वयं समझौते के लिए सचेष्ट थे। इस समाचार ने नेपाल के प्रति मेरी उत्सुकता को जागृत किया और मैंने कृष्ण से ही नेपाल संबंधी कुछ साहित्य मांग कर पढ़ा और नेपाली कांग्रेस के आन्दोलन के सम्बन्ध में श्री मातृका प्रसाद कोइराला तथा अन्य कांग्रेसी नेताओं से मिला।

कुछ ही दिनों बाद श्री गोपाल प्रसाद उपाध्याय भी जेल से छूट कर आ गए और उनसे भी मेरी बातचीत हुई। इसी बीच मैंने स्वयं जाकर स्थिति के निरीक्षण करने का निश्चय किया और नौ सितम्बर को नई दिल्ली स्थित नेपाली राजदूत के पास, पासपोर्ट आदि के लिए पत्र भेजा। पूरे दो महीने बाद छः नवम्बर को मुझे दूतावास का उत्तर मिला कि पासपोर्ट के लिए मैं काठमान्डू में परराष्ट्र विभाग को अर्जी भेजूं। मैंने तुरन्त ही अर्जी भेजी, नहीं जानता कि वह अर्जी काठमान्डू तक पहुँची या नहीं, क्योंकि उसके चार ही दिन बाद वीरगंज पर कांग्रेस का अधिकार हो जाने के कारण भारत नेपाल डाक का संबन्ध टूट गया।

अक्तूबर के पहले सप्ताह में गोपाल से पुनः भेंट होने पर मुझे ज्ञात हुआ कि नेपाली कांग्रेस दशहरे के दिन देशव्यापी आन्दोलन प्रारम्भ करेगी, जिसका स्वरूप भारत में सन ४२ जैसा होगा। नेपाल भारत के सीमावर्ती क्षेत्र में नेपाल सरहद के अन्दर जगह जगह कांग्रेस अपने गुप्त अड्डे स्थापित कर चुकी है और अब भी भारत में स्थित अपने प्रचार के अड्डों को नेपाली सरहद में ही ले जा रहे हैं। ऐसा करने से नेपाली कांग्रेस का मुख्य उद्देश्य यही था कि भारत सरकार को किसी प्रकार की परेशानी न उठानी पड़े। इसके दूसरे दिन ही कोइराला बन्धु, जिनके सिरों पर पांच-पांच हजार रुपया इनाम है, नेपाल की तराई में गुप्त रूप से चले गये।

यहां यह समझा देने की आवश्यकता है कि नेपाल और भारत की सरहद कोई प्राकृतिक सरहद नहीं है और काठमान्डू के अतिरिक्त और कहीं भी आने जाने में न तो कोई रुकावट है और न पासपोर्ट की जरूरत। दोनों सरकारों की ओर से भी सीमा पर कभी विशेष पहरा नहीं बैठाया गया। सन ४२ के आन्दोलन में जब कि समस्त भारत का भूभाग आन्दोलनकारियों के लिये वर्जित था तो साथी जयप्रकाश नारायण ने भागलपुर से भाग कर नेपाल की तराई में ही शरण ली थी और भारतीय स्वातन्त्र्ययुद्ध को चलाया था।

हमला टल गया

दशहरा आया और चला गया, परन्तु कांग्रेस का आन्दोलन प्रारम्भ न हो सका। उसके तीन-चार दिन पहले ही सरकारी नेपाली सेना के तीन बड़े-बड़े अफसर जो कांग्रेस से सहानुभूति रखते थे अपने रेडियो ट्रांसमीटर तथा गुप्त हथियारों के साथ काठमान्डू में गिरफ्तार कर लिए गए। ये व्यक्ति महाराजाधिराज को भगाने की चेष्टा के संदेह में गिरफ्तार किये गये थे।

अक्तूबर के अन्तिम सप्ताह में मेरी गोपाल और कांग्रेस के अध्यक्ष श्री कोइराला जी से पुनः भेंट हुई, जिनसे मुझे उपर्युक्त भेद का पता लगा। एक बार असफल होने के बावजूद भी कांग्रेस ने महाराज को अपने बीच लाने की योजना त्यागी नहीं। महाराज की कांग्रेस के प्रति पूर्ण सहानुभूति थी। और वे स्वयं प्रधानमंत्री की कैद से मुक्त होने को छटपटा रहे थे। कांग्रेस नेताओं को, जिनको कि उस समय तक राज्यमुहर मिल चुकी थी, विश्वास था कि महाराज शीघ्र ही उनके साथ मिल जायेंगे और वे दिवाली के दिनों में जबकि नेपाली जनता जुआ खेलने में मग्न होती है, अचानक हमला कर तराई पर कब्जा कर सकेंगे।

महाराजा का पलायन

ऐसा ही हुआ। इसमें थोड़ी सी चूक केवल इतनी ही हो गई कि नेपाल महाराज ने अचानक ही राज्य महल छोड़ भारतीय दूतावास में शरण लेने का निश्चय कर लिया, जो कि कांग्रेस की योजना से एक सप्ताह अधिक जल्दी था। कांग्रेस की योजना यह थी कि महाराज दिवाली के दिन एक घोषणा द्वारा प्रधानमंत्री को पदच्युत करें, नई सरकार बना लें और यदि खतरा बढ़े तो राज्यमहल से भाग कर भारतीय दूतावास नहीं, बल्कि कांग्रेस के गुप्त अड्डे में पहुँच जायें। परन्तु महाराज ने ऐसा करना उचित न समझा और कांग्रेस तथा भारतीय दूतावास को केवल चार घंटे की अग्रिम सूचना देकर राज्यमहल से बिना किसी घोषणा किये चुपचाप निकल आये। महाराज ने कांग्रेस का साथ दिया, परन्तु आधे दिल से।

श्री मातृकाप्रसाद कोइराला

नेपाल नरेश

संभवतः उन्हें कांग्रेसी नेताओं पर विश्वास न था, संभवतः उन्हें इस बात की शंका थी कि कांग्रेसी नेता अपनी जनतंत्रात्मक विचारधारा को कहीं बहुत दूर तक न ले जायें और उनके अपने अधिकार ही खतरे में न पड़ जायें। यही कारण था कि महाराज का पूर्ण विश्वास प्राप्त करने के लिए कोइराला-बन्धु वीरगंज के खजाने का ३५ लाख रुपया लेकर सीधे नई दिल्ली गये। नई दिल्ली में जो कुछ हुआ, वह भारत के स्वातंत्र्य प्रिय इतिहास का अत्यन्त कलंकनीय परिच्छेद है।

भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू को कांग्रेस के आन्दोलन की योजना का पूरा पता था और वे यह भी जानते थे कि महाराज पांच सरकार की इस से सहानुभूति है। परन्तु वे महाराज के इस ढंग के पलायन के लिए तैयार नहीं थे। भारतीय दूतावास में महाराज के शरण लेने और उसके कुछ ही दिन बाद भारत-नेपाल की सीमा से घुस कर नेपाल की तराई में कांग्रेस के जबरदस्त सशस्त्र प्रहार से श्री नेहरू जी घबरा गये। ऐंग्लो अमेरिकन गुट भारत पर यह दोषारोपण भी करने लगा कि भारत ने कांग्रेसी विद्रोहियों को नेपाल की स्थापित सरकार के विरुद्ध सहायता दी है। नेपाल, इंग्लैंड और अमेरिका के बढ़ावा देने पर भारत के विरुद्ध एक मामला संयुक्त राष्ट्र संघ में पेश करने की चेष्टा में लगा। पत्रकारों के वेश में अमेरिकन जासूस भारतीय सीमा के अन्दर नौतनवा और रक्सौल आदि में नेपाली कांग्रेस के चित्र लेकर काठमान्डू पहुँचे और राणा सरकार को अपनी सरकारों की ओर से सहायता का आश्वासन देकर संयुक्तराष्ट्र संघ में

शेष पृष्ठ २२ पर]

आधी दुनिया

नारी के लिए ज्ञातव्य

पुरुष : उसकी प्रकृति एवं मनोभाव

प्रो० रामचरण महेन्द्र एम. ए.

दाम्पत्य जीवन, उत्तरदायित्व, लेन देन, गृहस्थी संचालन, रुचि-सम्बन्धी साम्य, तथा कर्तव्य का जीवन है। हम देख रहे हैं कि आधुनिक विवाहों में से नब्बे प्रतिशत विवाह इसलिए [illegible] हो रहे हैं, क्योंकि पुरुष नारी प्रकृति से अनभिज्ञ हैं, नारी-पुरुष हृदय से अज्ञान है। पुरुष नारी को एक जायदाद समझ कर उस पर शासन करना चाहता है; नारी लज्जाशीला होने के कारण प्रायः चुपचाप रहना पसन्द करती है, अपनी कामनाओं, इच्छाओं तथा मनोभावनाओं को छिपाती है। युग युग से मनोभावनाएं छिप २ कर उसके अन्तर्जगत् में ग्रन्थियों के रूप में पैठ गई हैं। पति अपनी नासमझी के कारण पत्नी से व्यवहार में अनेक भारी भूलें करता है। वह पत्नी को अपनी रुचि के अनुकूल बनाने में बल तथा ताड़ना का योग करता है। उधर पत्नी से पति आशा करती है कि वह उसे उसकी रुचि के अनुसार वातावरण उपस्थित करेगा, उसकी इच्छाओं का आदर करेगा और उसकी आवश्यकताओं की यथासम्भव पूर्ति करेगा। दोनों ही एक दूसरे की त्रुटियों को सुधारने के इच्छुक हैं किन्तु दोनों ही त्रुटियां दूर करने का मनोवैज्ञानिक उपाय नहीं जानते।

पुरुष प्रकृति

पुरुष शक्ति का अवतार है। उसका निर्माण एक दृढ़ निश्चय वाले लड़ाकू सैनिक की भांति किया गया है। पौरुष उसका विशेष गुण है। एक जर्मन मनोवैज्ञानिक की सम्मति में पुरुष 'राजस' है। वह संसार में कष्टों तथा आपत्तियों से निरन्तर युद्ध करने वाला सक्रिय एवं सचेष्ट प्राणी है। वह इन्द्रियपरायण और चलने वाला है। वह युद्ध संघर्ष, द्वारा स्वतन्त्र सत्ता कायम करने वाला धीमान व्यक्ति है। वसन्त के बयार की भांति वह निर्द्वन्द्व रहना चाहता है। शासन करना वह अपना अधिकार समझता है। वह एक स्थान पर निश्चेष्ट नहीं बैठ सकता, बहुत जल्दी ऊब उठता है। अनेक बार चक्कर मकड़ में आ जाता है। भौंरे और तितली की भांति वह इधर उधर भटकता है। षट्रस व्यंजन, प्रेम की चकाचौंध, मादकता के वशीभूत हो कर वह मदोन्मत्त हो उठता है, सब कुछ भूल कर आत्मसमर्पण को तैयार हो जाता है। उसमें स्थायित्व कम है। उसके प्रेम में ज्वार भाटे आते एक लहर उठती है, वह बहक जाता है, पछता कर पुनः रास्ते पर आ जाता है। गहराई तक कम पहुंचता है।

प्रेम पुरुष के जीवन में एक साधारण सी घटना है। वह जैसे जल्दी में रहता है। जल्दी में प्रेमोन्मत्त हो कर वह कुछ का कुछ कर बैठता है। स्त्री कभी प्रेम में पागल नहीं होती। पुरुष विवेकहीन तक हो सकता है। वह क्षणभर में अपने आप को किसी पर न्योछावर कर सकता है, अपना सब कुछ भेंट कर सकता है। प्रेम के नशे में उसे कर्तव्य, विवेक, ज्ञान, उच्चता, निम्न स्थिति, पात्र कुपात्र का भी विचार नहीं रहता। प्रेम के मामलों से वह अनभिज्ञ-सा रहता है। उसमें व्यावहारिकता की मात्रा बहुत कम है, कल्पना की अत्यधिक। काल्पनिक सुख में, प्रेम के स्वप्नों में, विचरण करते हुए

[शेष २० पर]

तिब्बत की एक लड़की

एडल और नेत्र-ज्योति

अपने यहां कर्णवेध एक संस्कार है। किसी समय पुरुष भी कानों में कुण्डल पहनते थे, पर अब कुछ पढ़ी लिखी स्त्रियां भी कान छिदाना अंगक्षोपन समझने लगी हैं। मद्रास से निकलने वाले मासिक पत्र 'इण्डियन रेव्यू' के गत अक्तूबर के अंक में एक लेख निकला है, जिसमें डाक्टर रेजीनाल्ड डिक्सन का, जिनकी 'आर्गन' बाजा बजाने में बड़ी प्रसिद्धि है, कहना है कि कुण्डल (इयर रिंग्स) पहनने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। कुछ दिन पहले न्यूयार्क में 'आर्गन' वादकों का एक सम्मेलन हुआ था। उसमें उन्होंने बतलाया कि 'जब से मैंने 'ईयररिंग' पहनना आरम्भ किया, चश्मा लगाने का मेरा अभ्यास छूट गया। गत तीस वर्षों से मैंने चश्मा नहीं लगाया। कानों में जब कुण्डल हलता है, तब उससे एक सूक्ष्म विद्युत प्रवाह उत्पन्न होता है, जो नेत्र ज्योति के लिए बड़ा लाभदायक है' यदि ठीक तरीके से अनुसन्धान हो तो विज्ञान द्वारा भी घूमफिरकर फिर पुरानी बातों पर पहुंचना होगा। यदि कहीं डाक्टर डिक्सन की बात जंच गयी तो किसी दिन पुरुषों के कानों में भी 'इयररिंग' झूलते देख पड़ेंगे। — सन्मार्ग

पाकिस्तानी विवाह संस्था

ढाका में एक विवाह संस्था स्थापित की गई है, जिसका नाम 'पाकिस्तान मजलिसे शादी' है। अन्य उद्देश्यों के साथ इस संस्था का एक ध्येय दाम्पत्य सम्बन्ध में सुधार करना भी है। यह संस्था विभिन्न इस्लामी जातियों में अन्तःप्रान्तीय विवाह कराने और दहेज प्रथा बन्द करने का भी प्रयत्न करेगी। हदीस और कुरान के अनुसार वैवाहिक जीवन की जिम्मेदारियों पर पुस्तकें प्रकाशित करना भी इसका उद्देश्य है। सदस्यता के लिए जाति, मत या धर्म का प्रतिबन्ध नहीं है।

जर्मनी की 'डाइन'

आग्सबर्ग (बवेरिया) वकेनवाल्ड की तथाकथित डाइन इल्से कोच पर अब जर्मनी की एक अदालत में ४५ हत्याएं करने तथा अन्य १३५ हत्याओं में सहायता देने के अभियोग लगाये गये। इस मुकदमे में २५० गवाहों के बयान होंगे और लगभग दो महीने तक मुकदमा चलने की सम्भावना है। यह युद्ध के बाद उस पर चलाया गया दूसरा मुकदमा है। इससे यह पता चल जायगा कि उक्त 'डाइन' ने लोगों को मरवा कर उनकी खाल का लैम्प शेडों के खोल, थैले तथा पुस्तकों की जिल्द बनाने में लिया था या नहीं। १९४७ में उसे आजीवन कारावास का दण्ड दिया गया था। किंतु अमेरिकन सैनिक गवर्नर ने उसके कारावास की अवधि घटा कर केवल चार वर्ष कर दी थी। १९४९ में जर्मनों ने उसे पुनः गिरफ्तार कर लिया।

स्वास्थ्यप्रद चूड़ियां

पुराने रिवाज के गहने केवल फैशन के लिए नहीं थे, स्वास्थ्य की दृष्टि से भी लाभकारी थे, यह बताते हुए श्री सुरेशचन्द्र चतुर्वेदी सन्मार्ग में लिखते हैं—

हाथ में पहिना हुआ सोने का आभूषण प्रतिपल चक्षुओं के सम्मुख रहने के कारण नेत्रों की प्रभा को बढ़ाता है तथा नेत्रों को पुष्ट करता हुआ दाह को शान्ति प्रदान करता है। वह हाथ के दाह को भी शान्त करता हुआ कान्ति की वृद्धि करता है।

लाख की चूड़ियां

हमारे यहां प्राचीन काल में लाख की चूड़ियां पहिनने की रुचि थी। आज भी मारवाड़ के कुछ हिस्से में थोड़े बहुत परिमाण में यह विद्यमान है। हाथ में निरन्तर धारण किया हुआ लाख शरीर की त्वचा से प्रतिपल घर्षण करने से त्वचा आश्रित अनेक छोटी-बड़ी रक्तवाहिनियों में अपने प्रभाव को पहुंचा कर रक्त की वृद्धि करने वाला होता है तथा अकस्मात् रक्तस्राव होने पर उसको रोकने के कार्य में भी आता है। लाख अत्यन्त ही शीतल होने से पित्त एवं रक्त के सभी विकारों को दूर करता है तथा कुष्ट जैसी भयंकर व्याधि को भी नष्ट करता है। अतः लाख का उपयोग भी अत्यन्त हितकर माना गया है।

हाथी दांत की चूड़ियां

हाथी-दांत की चूड़ियों को उपयोग में लाने से हर प्रकार के त्वचा रोग दूर हो जाते हैं। ये केशों की वृद्धि के लिए भी अत्यन्त हितकारी हैं। अतः जो स्त्रियां हाथी दांत की चूड़ियां पहनती हैं, वे जब स्नान के समय हाथों से बालों को प्रतिदिन रगड़ती हैं, तो उन चूड़ियों का स्पर्श बालों से एवं बालों की जड़ों से होता है, जिससे केशों की वृद्धि में सहायता मिलती है।

कांच की चूड़ियां

कांच का स्वास्थ्य की दृष्टि से कोई लाभकर प्रभाव नहीं पड़ता। परन्तु हमारा ध्यान कांच में मिश्रित रंगों के ऊपर जाता है। चूड़ियों में मिश्रित हरे, लाल आदि रंग स्वास्थ्य से सम्बन्ध रखते हैं। हमारे घरों में स्त्रियां प्रसव के एक-दो मास पूर्व के काल में हरी चूड़ियां पहना करती हैं। उस समय सगर्भा स्त्री का जो कुछ भी रक्त बनता है वह रक्त गर्भस्थ बालक के पोषण के कार्य में ही अधिक आता है। अतः अन्य अंगों के रिक्त रहने के कारण उस नाग-

[शेष पृष्ठ २४ पर]

कम्यूनिज्म : क्यों अस्वीकार है ?

★ श्री गुरुदत्त

पिछले लेख में हम ने यह बताने का यत्न किया था कि इस मत का आधार नास्तिकवाद है। नास्तिकवाद से हमारा अभिप्राय अनात्मवाद अर्थात प्राणी को केवल पंच भूत का पुंज मानना है। हमारा मत है कि इसमें मत भेद व्यक्तिगत तो हो सकता है, परन्तु सामाजिक व्यवस्था में इससे काम नहीं चल सकता। एक समाज में व्यवस्था स्थापित करते समय अथवा राज्य संचालन के समय ऐसी भावना सदैव कुव्यवस्था, अनाचार और व्यभिचार उत्पन्न करने वाली रही है।

इस लेख में हम कम्यूनिज्म के सिद्धांतों पर विचार करेंगे। कम्यूनिस्ट और अपने को प्रगतिशील मानने वाले लोग यह मानते हैं कि आदिकाल से मनुष्य का इतिहास रोटी, कपड़ा और अन्य शारीरिक आवश्यकताओं के उपलब्धीकरण का रहा है। इसके अर्थ ये हैं कि अनन्त शताब्दियों मनुष्य का काम करना, यत्न करना, लड़ना, झगड़ना अर्थात प्रत्येक प्रकार का प्रयत्न उक्त वस्तुओं की प्राप्ति के अर्थ ही रहा है। भूख और विषय वासना ये दोनों ही मनुष्य में प्रत्येक प्रकार के काम की प्रेरणा करने वाले, यहां तक कि धर्म और मीमांसा को प्रोत्साहन करने वाले भी, हुए हैं।

इतिहास की यह व्याख्या सत्य प्रतीत नहीं होती। जब मनुष्यों में और अन्य इतर जन्तुओं में अन्तर नहीं था, तब का इतिहास तो शायद उक्त विचार से बना हो परन्तु ज्यों ज्यों मनुष्य पशुओं से भिन्नता प्राप्त करता आता है, तब से इतिहास निर्माताओं का उद्देश्य भी बदलता गया है। मनुष्य का इतिहास तो वास्तव में उन लोगों का बनाया समझा जाता है जिन्होंने भोजन, कपड़ा, मकान और अन्य शारीरिक सुविधाओं को सिद्धान्तों पर न्योछावर कर दिया है। और लैंगिक आकर्षण तो पशुओं को अथवा पशु तुल्य मनुष्यों को काम पर लगा सके हैं, परन्तु मनुष्य में मनुष्यता के बनाने वाले वे लोग हुए हैं जिन्होंने भूख, साधनों में कमी, वस्तुओं की तुच्छता दीनता अथवा भोग सुख का अभाव सहन कर भी, मन की भावना की पूर्ति करने के लिए प्रयत्न किया है।

यदि हम मानें कि भोजन और शारीरिक सुख ही ऐसी बातें हैं जो मनुष्य से काम करवा सकती हैं, तब मां का अपने स्वास्थ्य की हानि कर बच्चों को अपना दूध देना, माता पिता का अपनी सुख और शांति का त्याग कर बच्चों का पालन पोषण करना, एक धनी का किसी निर्धन और कंगाल की सहायता करना, अपने जीवन को भय में डाल कर एक खोज करने वाले का नये-नये देशों की खोज में निकलना, एक वैज्ञानिक का अपने को निर्धन रख नये आविष्कारों में लगे रहना, और एक विचारक का अपनी जान को भय में डालकर भी एक आततायी का विरोध करना, इसके कारण बयान नहीं किये जा सकते। मनुष्य इतिहास का आधार भोजन कपड़ा इत्यादि मानने वाले इन सब और अन्य अनेकों बातों का कारण नहीं बता सकते।

यह सत्य है कि मनुष्य में भी पशुओं की भांति शारीरिक इच्छाएं उपस्थित हैं। सुकरात, ईसा, बुद्ध, चेतन, गुरुनानक, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी दयानन्द और अनेकों दूसरे, जो मनुष्य समाज को उन्नति की ओर ले गये हैं इतिहास के इन भौतिक सिद्धान्तों को असत्य सिद्ध कर रहे हैं।

मनुष्य समाज सर्वांगीण रूप में अपने उद्देश्य की ओर प्रगति कर रहा है। यह निरन्तर अपने शारीरिक विषयों पर विजय और पशु प्रवृत्तियों को अपने अधीन करने में लगा हुआ है। इस पर भी यह प्रगति एकरस नहीं रह सकी। कई बार पशु प्रवृत्तियां मानवता को दबा लेती हैं और मनुष्य भोजनादिक सुविधाओं के लिए संसार में उपद्रव करने लगता है। इस पर भी सदैव जन साधारण में से ऐसे लोग उत्पन्न होते रहे हैं जो इन पाशवी प्रवृत्तियों को दबा कर मनुष्य समाज को दैवी व्यवहार की ओर ले गये हैं।

मनुष्य समाज के निर्माता रावण नहीं राम, दुर्योधन नहीं युधिष्ठिर, कंस नहीं कृष्ण, इसी प्रकार नीरो और क्लोओपेट्रा नहीं, ईसा हैं। अतएव यह सत्य से बहुत दूर है कि मनुष्य का इतिहास भोजन की खोज अथवा विषयों के भोग का इतिहास है। यह कम्यूनिज्म का एक अत्यावश्यक सिद्धान्त होने से इसे एक असत्य सिद्धान्त पर स्थिर मत बना देता है। एक मिथ्या सिद्धान्त पर विचार समाज में प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सकता। इससे समाज पशुता की ओर अथवा मनुष्य समाज की प्रारम्भिक अवस्था की ओर धकेल दिया जावेगा। सांसारिक प्रभुता, भव्यभवन, विशाल नगर, दीर्घकाय मशीनें तथा अतुल वित्त शक्ति ये सब मिल कर भी उन दैवी भावों और विचारों की जो मनुष्य ने सहस्रों वर्षों के प्रयत्नों से प्राप्त किए हैं, स्थापना नहीं कर सकते। कुछ योरोप के फिलासफरों के अधपके विचारों के आधार पर कार्ल-मार्क्स ने अपने मत का निर्माण किया है। वह भावी समाज का निर्माण केवल भोजन, कपड़ा और मकानों अथवा भोग विलास की प्राप्ति के लिये करना चाहता था। संसार में जीने के लिये यह सब वस्तुएं आवश्यक होते हुए भी जीवन अथवा समाज का ध्येय नहीं हो सकतीं। यह साधन हैं और ध्येय मानव समाज को सुसंस्कृत करना है। संस्कृति मनुष्य को अपनी प्रारम्भिक अवस्था की ओर ले जाने वाली वस्तु नहीं, प्रत्युत उस प्रारंभिक अवस्था से दूर अध्यात्मवाद की ओर लेजाने वाली होनी चाहिए। यदि ध्येय को भूल कर केवल मात्र साधनों को ही ध्येय मान बैठे तो मनुष्य समाज का रुख पतन की ओर हो जावेगा।

संसार भर के कम्यूनिस्ट अपने को प्रगति शील मानते हैं और प्रगतिशीलता के अर्थ, उन के कोष में सांसारिक वैभव प्राप्त करना है और बस। सांसारिक वैभव बहुत बड़ी बात हो सकती है। सांसारिक सुख सम्पदा सिद्धान्त रूप में वही है जो मनुष्यों से इतर जीव जन्तु प्राप्त करने का यत्न करते रहते हैं। मनुष्य में मानवता तो यह है कि वह सांसारिक वैभव को अपनी मुट्ठी में कर दैवी गुणों की प्राप्ति में यत्नशील हो। कम्यूनिज्म मनुष्यकी दृष्टिको सांसारिक और शारीरिक सुख वैभव की परिधि में सीमित करना चाहता है। इसकी योजना इस

[शेष पृष्ठ १८ पर]

पूर्वी यूरोप की नई पहेली

साम्यवादी देशों में मजदूरों का भारी क्षोभ

★ डेनिस हीले

पूर्वी यूरोप के, जहां कम्युनिस्ट सरकारें हैं, मजदूरों में घोर असन्तोष है, जिसे तोड़-फोड़, धीरे काम करना और सामयिक हड़तालों द्वारा वे व्यक्त कर रहे हैं। इससे कम्यूनिस्ट सरकारें बहुत परेशान हो रही हैं और मजदूरों के दमन के नये से नये कायदे बनाये जा रहे हैं। साम्यवादी देशों में मजदूरों का असन्तोष एक नई अकल्पत बात है, परन्तु यह पहेली नीचे लिखे लेख से सुलझ जायगी।

इधर कुछ समय से इस बात के कई प्रमाण (और अधिकांश प्रमाण साम्यवादी लोगों से) मिल रहे हैं कि सारे पूर्वी योरोप में साम्यवादी शासकों को कामकाजियों के साथ गम्भीर कठिनाइयां अनुभव हो रही हैं। दिन प्रति दिन पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया, हंगेरी और रूमेनिया के सरकारी पत्रों में फैक्टरियों में तोड़फोड़, कामकाजियों की अनुपस्थिति और काम में रुकावट इत्यादि की खबरें छपा करती हैं। इन पत्रों के अनुसार, कामकाजी लोग काम धीरे करने, अतिरिक्त समय का काम न करने और 'प्रबन्धकवर्ग को भयभीत करने,' के आन्दोलन संगठित कर रहे हैं।

और साम्यवादी लोग इसके बारे में क्या कहते हैं? वे कहते हैं कि ये सब ब्रिटिश तथा अमेरिकन साम्राज्यवादियों के एजेन्टों का षडयन्त्र है, अर्थात् पुराने सोशलिस्ट ट्रेड यूनियन नेताओं की करतूतें। इन्होंने सब प्रमुख सोशलिस्टों को गिरफ्तार कर लम्बी लम्बी सजायें दे डाली हैं और ट्रेड यूनियन तथा फैक्टरी समितियों से प्रत्येक समाजवादी को निकाल बाहर किया जा रहा है।

लेकिन यह संकट अभी जारी है। जुलाई के अन्त में हंगेरियन साम्यवादी दल के पोलिटब्यूरो के ट्रेड यूनियन के नेताओं में से उन लोगों तक की कटु आलोचना की जिन्हें स्वयं उसी ने नामजद किया था। इन लोगों को 'आलसी अवसरवादी' की उपाधि दे डाली गई है।

ये सारी बातें उन लोगों को बहुत विचित्र मालूम होंगी, जो यह कह कर कि इससे कामकाजियों का लाभ होता है, साम्यवादी अत्याचार के औचित्य को प्रमाणित करने का प्रयत्न किया करते हैं। चलिये, हम स्वयं इस बात का पता लगायें कि कामिन्फार्म के देशों में कामकाजियों की सही अवस्था क्या है और इस सारी अशान्ति का कारण क्या हो सकता है।

नियोजकों का प्रतिनिधित्व

रूसी साम्यवाद के अधिक अवांछनीय गुणों में से अनेकों इसलिये उत्पन्न हुए थे, क्योंकि] उस काम को जिसे पूरा करने में शेष योरोप ने सौ वर्ष के लिये थे, लेनिन और स्तालिन ने दस वर्षों में ही समाप्त करने का प्रयत्न किया था।

और मैं समझता हूं कि पूर्वी योरोप के कठपुतली देशों की अशांति का कारण है, उन पर इस काम को दो या तीन वर्षों में समाप्त करने का दबाव डाला जाता है। जिसके लिये स्वयं सोवियट यूनियन को लगभग बीस वर्ष लगे थे।

इसका एक अच्छा उदाहरण ट्रेड यूनियनों में मिलता है। क्रान्ति के ग्यारह वर्षों के बाद, अर्थात् १९२८ में, जाकर सोवियट यूनियन ने अपनी पहली पांच वर्षयोजना प्रारम्भ की थी और तभी रूसी ट्रेड यूनियनवाद ने अपने अंतिम अध्याय में प्रवेश किया था। और तब भी कहीं दस वर्षों के बाद जाकर, कच्चे अध्याए नियमों के अनुसार और यन्त्रों की भांति स्वतः चलने का यह गुण रूसी यूनियनों ने प्राप्त किया जो आज, शायद लाल सेना को छोड़कर, सब आधुनिक सोवियट संस्थाओं की विशेषता है।

सोवियट ट्रेड यूनियनों के भूतपूर्व अध्यक्ष मिकोलाई श्वेरनिक ने एक बार कहा था कि सोवियट ट्रेड यूनियनों का काम (आदेशों को) साम्यवादी दल से जनसाधारण तक पहुंचाना है। दूसरे शब्दों में सोवियट ट्रेड यूनियनों का उपयोग सरकार की आर्थिक नीति को कार्यान्वित कराने के लिए होता है।

किन्तु यह न भूलिये कि रूस में सरकार ही कामकाजियों की एक मात्र नियोजिका होती है। फलतः स्पष्ट है कि सोवियट ट्रेड यूनियन नियुक्तों का नहीं, किन्तु नियोजकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। पश्चिम में इन्हें 'कम्पनी यूनियन' कहा जाता है। पर सच पूछिये तो पश्चिमी स्टैन्डर्ड से इन्हें ट्रेड यूनियन कहा जा ही सकता ही नहीं। उन्हें न हड़ताल करने का अधिकार होता है और न पारिश्रमिक नीति निर्धारण में कोई भाग होता है। वे अपने सदस्यों के मूल हितों की रक्षा करने में असमर्थ हैं। सामाजिक बीमा और कामकाजियों के कल्याण से सम्बन्धित स्कीमों को कार्यान्वित कराना और फैक्टरियों का निरीक्षणः बस इन्हीं दो दृष्टियों से इनकी तुलना पश्चिम के ट्रेड यूनियनों के कर्तव्यों से की जा सकती है। फलतः कामकाजियों को प्रबन्धक वर्ग और सरकार के अन्यायों से बचने का कोई साधन प्राप्त नहीं होता।

उत्पादन बढ़ाने की धुन

पूर्वी योरप में साम्यवादी लोग इसी नमूने की नकल में प्रयत्नशील हैं। किन्तु यद्यपि उन्हें बल प्रयोग द्वारा ट्रेड यूनियन संगठन को अपने आधिपत्य में लाने में कठिनाई नहीं होती, पर उन परम्पराओं को पराह्त करना, जो प्रारम्भिक संघर्ष के कई वर्षों में पनपी थीं, इतना सरल नहीं है।

वह आर्थिक नीति जिसे पालने के लिए साम्यवादी लोग ट्रेड यूनियनों को विवश कर रहे हैं, सब कामकाजियों द्वारा घृणा की दृष्टि से देखी जाती है।

सोवियट यूनियन की आर्थिक योजनाओं में पूर्वी योरप एक महत्वपूर्ण भाग रखता है और उसकी युद्ध-व्यवस्था के कई महत्वपूर्ण रिक्त स्थानों की पूर्ति करता है। इसी लिए रूसी लोग परिणाम और विधियों का ख्याल किए बिना उत्पादन बढ़ाने पर तुले हुए हैं। अधिक उत्पत्ति के लिए हरेक बलिदान करना और अनुशासन को कठोर बनाना ताकि इससे आने वाली कठिनाइयों का सामना किया जा सके—साम्यवादियों के नियंत्रण में ट्रेड यूनियनों के यही होते हैं काम। पूर्वी योरप में रूसी स्तखानव प्रणाली की आजमाइश की जा रही है। कामकाजियों में से किसी को चुनकर एक असाधारण कामकाजी घोषित किया जा रहा है उसे औसत कामकाजी के सामने नमूना बनाकर रखा जाता है। उत्पत्ति की दर बढ़ाने के लिए। अभाग्यवश, पोलैंड में सर्वप्रथम "वीर [illegible]" ने अत्यधिक काम करने के कारण मृत्यु की शरण ली। इसका नाम था स्त्रावस्की। बस, पोलिश कामकाजियों ने "स्त्रावस्की की तरह काम करो और मर कर अपने मालिक से मिलो" यह नारा प्रसारित कर दिया।

कठोर श्रम-विधान

इन "कम्पनी" ट्रेड यूनियनों का एक काम होता है सरकार से छुट्टियों में कमी और कामकाज के घण्टों में वृद्धि का आग्रह करना। चेकोस्लोवाकिया में सप्ताह में ६ घन्टों के काम की मांग की गई और मांग मंजूर हो गई। साम्यवादी प्रधान मन्त्री जेपोत्स्की ने स्वीकार किया है कि "सप्ताह में ६ दिनों तक काम की अपील प्रायः सहर्ष स्वीकार नहीं की गई थी और कुछ क्षेत्रों में उसकी आलोचना भी की गई थी।" वास्तव में जो कुछ हुआ था, उसे वर्णन करने का यह एक बहुत ही हल्का ढंग है, क्योंकि कई स्थानों में कुछ कामकाजियों ने अपने ट्रेड यूनियन मन्त्रियों का पीछा कर उन्हें फैक्टरियों से बाहर निकाल दिया था।

सच बात यह है कि सारे पूर्वी योरप में अन्याय के इस नए ढंग से कामकाजी बहुत नाराज हुए और उन्होंने जानबूझकर काम धीरे करना, काम से गैरहाजिर रहना और गुप्त रूप में आपस में मिलकर नियोजकों को धोका देने की बातें सोचना प्रारम्भ कर दिया है। इसके परिणामस्वरूप सरकार ने अत्यन्त कठोर श्रम विधान पास किया और ये सब सोवियट विधान के नमूने पर था। जून १९४० में, युद्ध में प्रवेश करने से पहले सोवियट यूनियन ने श्रम सम्बन्धी अपराधों के लिए अत्यन्त कठोर दंड निर्धारित किए थे: अनुमति के बिना एक काम से दूसरे काम को लेने के अपराध में एक वर्ष का कारावास और काम पर आने में बीस मिनट से अधिक देर करने वाले के लिए ६ महीनों की बेगारी।

और इसकी नकल पूर्वी योरप में हुई। वहां पर सामान्यतया श्रम सम्बन्धी कोई भी अपराध विनाशक कार्रवाई माना जा सकता है और इस प्रकार वह राज्य के प्रति अपराध बन जाता है।

१९४८ में चेकोस्लोवाकिया में जितने लोगों पर राज्य विरोधी कार्रवाइयों के लिए मुकदमें चलाए गए थे, उनमें से आधे से अधिक साधारण मजदूर थे। पश्चिमी जगत में पचास और सौ वर्ष पहले ट्रेड यूनियनवाद के संघर्षों से जो कोई परिचित है, उसके लिए यह सब कोई नई बात नहीं है: विरोध करने की क्षमता रखने वाले कामकाजियों पर अत्याचार और उन्हें विदेशी षडयन्त्रकारियों के एजेन्ट की उपाधि का पुरस्कार। सच बात यह है कि, जैसे अन्य मामलों में वैसे ही इस विषय में भी, पूर्वी योरप तेजी से अवनति कर रहा है।

—×—

नीती और माणा घाटियों का अंतर्राष्ट्रीय महत्व

★ श्री बलदेवसिंह आर्य

भारत के इतिहास में खैबर और बोलन घाटियों का नाम तो सभी ने सुना है। इन दो घाटियों से ही भारत में हूण, यूनानी, तातारी, ईरानी, अफगानी इत्यादि आये और हमेशा भारत की शान्ति को भंग किया। किन्तु आज तिब्बत पर लालचीन की सेनाओं ने आक्रमण कर हमारा ध्यान हिमालय की हिमाच्छादित चोटियों की ओर आकृष्ट कर दिया है। आज तक हिमालय ने काश्मीर से लेकर आसाम तक भारतवर्ष की पूरी रक्षा की है। कोई भी विदेशी हमारे देश पर आक्रमण करने के लिए इस मार्ग से नहीं आया। हां, हमारे इस महान् देश के बौद्ध-भिक्षु भगवान् गौतम बुद्ध का अमर सन्देश लेकर अवश्य हिमालय की हिमाच्छादित तथा ऊबड़-खाबड़ घाटियों को पार कर तिब्बत तथा चीन गये और वहां जाकर उन्होंने वहां के निवासियों को भारत का शान्ति-सन्देश सुनाया। जब तक चीन निवासी उस अमर सन्देश का दृढ़ प्रतिज्ञ होकर पालन करते रहे, उनकी संस्कृति, सभ्यता तथा धर्म सुरक्षित रहा। किन्तु समय के थपेड़ों के कारण वे पथ-भ्रष्ट हो गये और आज वहां इस प्रकार का राजतन्त्र स्थापित हो गया है जिसमें धर्म का कोई महत्व नहीं है। उसी राज्य की सेनायें आज तिब्बत की राजधानी ल्हासा की ओर बढ़ रही हैं। यह आशा की जा रही है कि आगामी एक या दो सप्ताह में वे ल्हासा पर अधिकार कर सारे तिब्बत पर अपना साम्राज्य स्थापित कर लेंगी। फिर लालचीन की सीमायें सीधे भारत से मिल जायेंगी। आज तक हिमालय ने हमारी रक्षा की है किन्तु आज के इस वैज्ञानिक युग में यह सम्भव नहीं दीखता। हो सकता है कि उन्हीं ऊबड़-खाबड़ घाटियों से, जिनसे आज से दो हजार वर्ष पूर्व हमारे देश के शान्ति-दूत चीन गये थे, साम्यवादी सेनायें भारत आने का प्रयत्न करें। ऐसे समय में हमें अपने देश की रक्षा की व्यवस्था करनी होगी। हमारा विश्वास है कि हमारी सरकार भी इस मामले में सतर्क है।

काश्मीर से आसाम तक अन्य मार्गों के अलावा उत्तर प्रदेश की कुमायूं कमिश्नरी के गढ़वाल, टेहरी-गढ़वाल तथा अल्मोड़ा जिलों से कई मार्ग तिब्बत जाने के हैं जिनमें छः घाटियां हैं जो इस प्रकार हैं — दारमा, ब्यास, चौदास जोहर, नीती और माणा। उपरोक्त घाटियों में से मैं इस लेख में सिर्फ नीती और माणा घाटियों से पाठकों को अवगत करा देना चाहता हूं।

नीती घाटी हरिद्वार से करीब २१० मील तथा जोशीमठ से २६ मील है। इस घाटी से 12 मील नीचे नीती गांव है जो कि समुद्र की सतह से ११५६० फीट की ऊंचाई पर । घाटी की ऊंचाई १६६२८ फीट है। इस घाटी से कैलाश तथा मानसरोवर जाने का भी रास्ता है। नीती गांव के पास बम्पा नामक स्थान पर एक छोटा-सा डाकखाना है जहां सप्ताह में सिर्फ एक बार डाक जाती है। तारघर आस-पास कहीं नहीं है और यदि तार करने की आवश्यकता पड़ी तो वहां से २६ मील नीचे जोशीमठ जाना पड़ता है। मोटर सड़क इस समय सिर्फ चमोली तक ही है जहां से नीती घाटी ८२ मील से अधिक है। चमोली से नीती गांव तक पी० डब्ल्यू० डी० की एक मामूली सड़क है और इसमें आगे का रास्ता बहुत ही खतरनाक है।

दूसरी माणा घाटी है जो कि श्री बद्रीनाथ से २८ मील उत्तर में है और हरिद्वार से करीब २१२ मील है। बद्रीनाथ से करीब दो मील आगे माणा गांव है जो १०५६० फीट की ऊंचाई पर है। इस गांव से माणा घाटी करीब २६ मील है जिसकी ऊंचाई १८४०२ फीट है। सरकारी सड़क सिर्फ माणा गांव तक ही है और इसमें आगे पहाड़ी पगडंडियां हैं। यह मार्ग बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि सीमा के पास ही तिब्बत के थोलिंगमठ तथा गरकोट इत्यादि स्थान पड़ते हैं। इस घाटी से भी मोटर सड़क करीब ७६ मील दक्षिण चमोली तक है।

नीती और माणा घाटियों के आस-पास आबादी बहुत कम है, जिनका मुख्य व्यवसाय पशु-पालन तथा तिब्बत से व्यापार है। इन्हें मारछया या भोटिया कहते हैं जो कि जाड़ों में अधिक बरफ पड़ने के कारण दक्षिण की ओर आ जाते हैं। आज तक तो इस हिस्से में शान्ति थी किन्तु चीन की बदलती हुई परिस्थितियों के कारण यह समाचार सुनने में आये हैं कि तिब्बत की सीमा के अन्दर कुछ भारतीय व्यापारियों को लूटा गया है और इस कारण अब वहां काफी बेचैनी और घबराहट है। हिमालय के इस अन्धेरे कोने में आवागमन पर अभी तक किसी भी प्रकार की सरकारी रुकावट नहीं है। व्यापारी बिना किसी परमिट या पासपोर्ट के तिब्बत आ जा सकते हैं। किन्तु अब यह आवश्यक हो गया है कि सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया जाय। मेरे ता० २८ नवम्बर को संसद् में पूछे गये प्रश्न के उत्तर में माननीय प्रधान मन्त्रीजी ने इस बात का आश्वासन दिया है कि सरकार इस दिशा में उचित कार्रवाई कर रही है जो कि सुरक्षा के कारण बताई नहीं जा सकती। अतः उपरोक्त आश्वासन से हमें विश्वास है कि अवश्य ही इन घाटियों की रक्षा का प्रश्न सरकार की दृष्टि में है। परन्तु फिर भी जनता के कुछ सुझाव सरकार के सामने रखने आवश्यक हैं।

इन घाटियों में पुलिस की कोई व्यवस्था नहीं है, जिसकी कि अत्यन्त ही आवश्यकता है जिससे कि वे व्यक्ति हमारे देश की सीमा में प्रवेश न कर सकें जो यहां की शान्ति को भङ्ग करने की कुचेष्टा करें। सीमा पर रहने वालों को सैनिक शिक्षा दी जानी चाहिये तथा उन्हें राइफलें वितरित की जानी चाहिये जिससे कि समय पड़ने पर वे भी देश की रक्षा में ठीक प्रकार से योग दे सकें। डाक तथा तार की व्यवस्था आवश्यक है। वहां अविलम्ब डाक तथा तारघर खोले जाने चाहिये जिससे हर प्रकार की सूचना तुरन्त केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों तक पहुँचती रहे।

लेखक

अब मुख्य प्रश्न यातायात है। जैसा कि मैं ऊपर चुका हूं मोटर सड़क सिर्फ चमोली तक है जहां से उपरोक्त घाटियां काफी दूर हैं। यदि आवश्यकता पड़ी तो हमारी सेनाओं को वहां पहुँचने में काफी देर लगेगी। पिछली लड़ाई के समय जब कि प्रसिद्ध बर्मा सड़क पर जापानियों ने अधिकार कर लिया था तो

[शेष पृष्ठ १८ पर]

[गतांक से आगे]

अब आचार्य सम्हल कर बैठ गये। उन्होंने कहा—

तो तुम्हें कांग्रेस का मेम्बर आज ही बन जाना चाहिये। अपने इस हलके में हम लोग इस तेजी से काम करेंगे, इतने मेम्बर बनायेंगे कि अच्छे अच्छे देख कर आश्चर्य करेंगे। जनता की सेवा का व्रत हमारा लक्ष्य है। अब तो भारत स्वतन्त्र है राघव, हम लोगों ने जितने कष्ट उठाये, तुम्हें हम कैसे बतायें।

राघवेन्द्र आचार्य के वाक्यों से प्रभावित हो कर बड़ी दृढ़ावस्था अवस्था में उनके उपदेशों को ग्रहण कर रहा था। उसे कुलपति नगेन्द्र की तपस्या और आचार्य की तपस्या में आकाश पाताल का अन्तर दिखाई पड़ा। एक का आधार है अलौकिक ज्ञान—दूसरे का लोक सेवा व्रत। राघवेन्द्र अभी तक केवल विचारों से ही प्रभावित था किन्तु उसके विचार अब निश्चय में परिणित होते जा रहे थे। वह आचार्यदेव के अनुसार बतलाये हुये मार्ग पर जीवन की आहुति चढ़ा कर भी देश की अवस्था को अधिक उन्नत बनायेगा, उसका भावुक मन आपे के बाहर था।

'तुम्हें आज से एक काम और सौंपता हूं राघव, जिसमें तुम्हारी योग्यता की परीक्षा है। तुम मेरे सहायक हो कर इस बढ़ते हुए कार्य को सुचारु रूप से चलाओ। बापू की तपस्या का फल, आज हिन्दुस्थान आजाद है, किन्तु अभी भी आपसी कलह, साम्प्रदायिक मनोवृत्ति और देश में अनाचार बढ़ रहा है। हम तो सेवक हैं।'

आचार्य अब चुप हो गये। उन्हें रह रह कर जीवन के वे दिन याद हो आये जब उनके साथ उस समय की सरकार ने कितनी निर्दयता से व्यवहार किया था। आज वे अपने बहुत से साथियों को उच्च स्थान पर पहुंचा देख कर प्रसन्न थे किन्तु अभी भी उनके हृदय में उस कष्ट की याद वैसी ही बनी थी। उनके जीवन की साधना का पुरस्कार अभी भी न पा करके कुछ क्षुब्ध हो जाया करते थे।

राघवेन्द्र ने पूछा—'क्या गांधीवाद और कांग्रेस की विचारधारा एक-सी है?'

'हां राघव, तुमने तो इतिहास पढ़ा ही है। महात्मा गांधी ने देश की उन्नति के लिये—मनुष्य मात्र की उन्नति के लिये जो मार्ग निर्धारित किया वही गांधीवाद है और उसी का क्रियात्मक स्वरूप है कांग्रेस! राष्ट्र पुरुष बापू हमारे ही नहीं संसार के महान पुरुष हैं। उन्हीं के मार्ग पर चल कर देश उन्नति कर सकता है, अन्यथा नहीं।'

उसे मुसलमान पत्रकार की याद आ गई। उसने व्यंग ही में शंका की—'महात्माजी सनातन हिन्दू थे। क्या उनके सिद्धान्तों में हिन्दूपन की गंध नहीं आती।'

'नहीं, उनका जीवन हिन्दू के लिये नहीं था, देश आजादी की लड़ाई के लिये था। देश में हिन्दू, मुसलमान और ईसाई किसी खास धर्म रखने के कारण बड़े या छोटे नहीं हो सकते। धर्म के नाम पर स्थान स्थान पर अत्याचार होते हैं। आदमी अपनी मनुष्यता को खो देता है इसीलिये बापू व्यक्ति को धार्मिक बन जाने का उपदेश देते थे। किन्तु धर्म उनके लिये राजनीति में बाधक नहीं था।'

उन्होंने आगे कहा—

'बेटा राघव, तुम बड़े होनहार हो। मेरी इच्छा है कि तुम देश में कोई बहुत बड़ा कार्य करो!'

धूप बढ़ने लगी थी आचार्य अब उठ दिये। राघवेन्द्र अब विचारों में लीन हो गया था—अब उसे केवल एक ही धुन थी, जनता की सेवा, कांग्रेस की सेवा!

नया धारावाही उपन्यास

समस्या का हल

★ श्री कोमलसिंह सोलङ्की ★

[१]

'सूर्य के प्रकाश के साथ दिन का उदय हुआ और उसी के अस्त के साथ संसार गहरी नींद में सो गया।

क्यों?

निरंजन सोच रहा था—जीवन की इस शाश्वत अवस्था के पीछे क्यों मनुष्य कल्पना करता है, क्यों दूर की उड़ान लगाता है जब कि वह स्पष्ट है कि उसका जीवन कुछ भी हो जीने के लिये है, आनन्द के लिये—खाने पीने के लिये है। क्यों इस सामने दिखने वाली समस्या को आंख से ओझल कर मानव भिन्न भिन्न प्रकार की कल्पना करता है और व्यर्थ ही वास्तविक उन्नति की ओर अग्रसर न हो कर संसार में एक पागलपन फैलाता है जिसके फलस्वरूप धर्म संस्कृति! संस्कृति, बंधनमुक्त आदमी को बढ़ने का रास्ता नहीं देती।

गरीब को क्यों धर्म और तकदीर का झुनझुना दे कर दुनिया उसे गरीबी की याद नहीं करने देती? क्या इसके पीछे पूंजीपतियों का नाटक नहीं है? क्या यही दुनिया के सत्य और न्याय की दुहाई देने वाले भगवान के ठेकेदारों का वास्तविक ज्ञान है?

वह दुखी हो उठा। पढ़ने के समय से ही निरंजन पेट की समस्या, किसान और मजदूरों की समस्या को हल करने का निश्चय कर चुका था। उसने अपने आप को उसी कार्य के हेतु लगा भी दिया था। बिस्तर पर पड़े पड़े निरंजन सिगरेट के धुआं को आकाश में उड़ा कर अपना मनोविनोद कर रहा था। दिन के आठ बज चुके थे किन्तु अभी भी उसकी आंखों में नींद की खुमारी भरी हुई थी। रूखे सूखे बाल मुंह पर आ पड़े थे और वह उनको अलग हटाने का व्यर्थ का श्रम भी नहीं करना चाहता था। आकाश में मुदित पक्षीगण कलरव कर रहे थे, सुहावने बादलों का धूप छांह से प्रातःकाल का वह दृश्य प्रकृति की अनोखी छटा थी। द्वार की कुण्डी की खटखटाहट ने उसे मजबूर किया कि वह उठे। उसने द्वार खोला और अपने अनुमान के अनुकूल ही उसने सुना—

'गुड मोर्निंग कामरेड!'

'गुड मोर्निंग मिस लीला।' निरंजन ने हाथ मिलाते हुए उत्तर दिया।

निरंजन जिस मकान में रहता था वहीं उस पार्टी का दफ्तर था। मकान की छत पर लाल हंसिया और हथौड़े वाला निशान उस बात की साक्षी में फहराया करता था। एक टेबल दो चार कुर्सी, कुछ रसीद बही, कागजात आदि एक कमरे में रखे रहते थे और उसी के एक भाग में कामरेडों के रहने का स्थान था!

लीला पहले सीधी अपने काम पर चली गई। उसने कुछ हिसाब किताब किया और कुछ पर्चे आदि लेकर निरंजन के कमरे में आई। निरंजन अब उठ चुका था। नीचे के होटल से नियमानुसार चाय और बिस्कुट आ गये थे!

'मिस लीला' निरंजन ने चाय पीते हुए कहा—'दुनिया में गरीबों की मदद यदि किसी ने अभी तक की है और यदि कोई कर सकता है तो कम्युनिस्ट पार्टी!'

'बेशक,' लीला के कोमल अधरों ने केवल बड़ी गम्भीरता से इतना ही कहा।

'देखो आज शाम का वह तय किया हुआ प्रोग्राम सफल होना चाहिये। परवाह नहीं अगर सरकार लाठी बरसा कर गरीबों को मार डाले। इसी में तो क्रांति के, इन्कलाब के बीज छुपे हैं।

'प्रजा को कोकिल तो कहते हैं'

दोनों चाय पी चुके थे।

'कालेज में कितने मेम्बर्स और बन गये? क्या आपका वह मित्र मि० आनन्द अभी भी मेम्बर नहीं बनना चाहता।'

'अभी तो नहीं किंतु उम्मीद है जल्दी बन जावेगा।' उसने इतना ही कहा।

आनन्द का नाम लेते ही लीला एक क्षण को रुक गई, वह कुछ सोचने लगी!

निरंजन हंस पड़ा—'क्या आनन्द को साथी बनाने में इतना समय लगेगा, मैं नहीं समझता था।'

'आश्चर्य तो मुझे भी है पर वह बहुत ही विचार पूर्वक अपना पैर बढ़ाता है और इसलिए अभी वह विचार कर रहा है।' लीला ने बहुत गम्भीरता से उत्तर दिया।

'मिस लीला, क्या वह दिन जल्दी ही नहीं आवेगा जब सारी दुनिया में लाल झन्डा फहरायेगा—पूंजीपति कब तक मजदूर को चूसता रहेगा?'

निरञ्जन के विकृत और अटपटे दार्शनिक बोल लीला की निसहाय अवस्था में साधन बन गये थे। उसने इतने कामरेडों में केवल निरञ्जन को ही देखा जो हर समय इसी प्रकार के विचारों में लीन रहता था। प्रथम बार देखने वाला सम्भवतः उसे कुछ पागल सा कह सकता था। रूखे सूखे बाल, खादी का मैला गन्दा कुरता, फटा हुआ पाजामा और एक साधा सी चप्पल, यही रहा करती थी निरञ्जन की वेषभूषा। यह बात नहीं कि निरञ्जन के पढ़े लिखे मजदूरों में काम करने के कारण ऐसा रहता हो, किन्तु इसी वेषभूषा में वह समाज के प्रत्येक वर्ग में घुस जाता था। वह बी. ए. पास था। लोग उसे कामरेड नीरू के नाम से जानते थे।

दोपहर हो चुका था। लीला अब वापिस लौटने की तय्यारी कर रही थी। आज रविवार था इस लिये लीला को कालेज नहीं जाना था।

निरंजन ने पूछा—'परीक्षा कब है?'

'बस आगई, समझना चाहिये'—लीला मुस्करा रही थी।

[२]

स्वच्छन्द प्रकृति के आंगन में उषा की सुमधुर मुस्कान के साथ उल्लसित वातावरण में मीलों चल कर भी राजपाल थक नहीं पाता था। मानो वह उसकी साधना हो। चिंतन! चिंतन करने का लक्ष्य लेकर आया हुआ युवक घन्टे से भी अधिक एकाग्रता में बैठकर मानो विश्व की गहराई को खोजने की चेष्टा करता और अपने प्रयत्न पर स्वयं मुस्करा भी देता था। वह मानो उसका व्रत हो।

अपनी दिनचर्या में उसने विकास के

लिये केवल लिया और उसका भी बहुत सीमित भाग निकाला था। उसके सामने संसार वायुयान में बैठा दौड़ा जा रहा था और उसका देश, देश अभी भी सो रहा है — समाज अभी आँखें मल रहा है!

'स्वतंत्र' जीवन में भी हम केवल दार्शनिक क्यों बने हुऐ हैं? पश्चिमी सभ्यता ने हमें केवल समाज से पृथक कर दिया, क्यों? क्या आज भी हमें बातें करने के अतिरिक्त कुछ और आ सका है? क्या हुआ हमारी सामाजिक एकात्मकता का? प्रत्येक आज योजनायें बनाता है, देश के नाम पर अपनी दलीय योजनायें सफल करने की चिन्ता में है। और कौन है जो अपने रक्त से सींच कर भारतीय तत्व को अक्षुण्य बनाये रखेगा? आज वह कुछ निराश हो गया था। विचारों ने उसके मानस में तूफान उठा रखा था। वह क्या करे, उसकी तबीयत ठीक नहीं थी।

'क्या स्वतन्त्रता के पश्चात भी देश की उन्नति होना सम्भव नहीं? क्या हमारे देश के नेता कहलाने वाले देश भक्त दलगत संकीर्णता में देश को डुबा देंगे?' उसने आँखें खोलीं। उसका हृदय धड़क रहा रहा था, वह एक बार पुनः सिहर उठा।

'किन्तु ओह यह-क्या? राजपाल, और अंधकार में निराश नहीं होना चाहिये, निराशा कापुरुषता का लक्षण है और केवल बातें बनाना नीचता का — उठ, तुझे तो जीवन में वह परम्परा निर्माण करना है जिसमें भारतीय जीवन संसार को सुखी कर सके। मानव को सुखी कर सके। केवल बातें नहीं।'

विचारों ने पलटा खाया - उसने अपने आप में नवीन जीवन का संचार पाया! उसे मार्ग का आभास हो चुका था। वह अपनी साधना में तत्पर हो गया।

किन्तु राजपाल कोरा आदर्शवादी नहीं था। बड़ी बड़ी जटायें और गेरुवे वस्त्र पहनकर त्याग के बीड़े को उठाकर अकर्मण्यता का जप करना वह देशद्रोह के चिन्ह समझता था; उसे संसार से प्रेम था, ममता थी क्योंकि वह उससे भिन्न अपने अस्तित्व का अनुभव ही नहीं कर सकता था।

जीवन में तपस्या और एकाग्रता के साथ राजपाल की सामाजिकता बराबर बढ़ रही थी यह देख कर माँ मानो मन ही मन प्रसन्न थी। पुत्र के जीवन में इस महान परिवर्तन को देख कर उसे आश्चर्य था। जीवन में अनुरक्ति की ओर झुकते देख उसका लहलहाता हृदय पुत्र की उज्वल कामनाओं से ओतप्रोत हो जाता था। पर राजपाल— वह राजपाल को अभी भी समझ नहीं पा रही थी।

राजपाल के जीवन में परिवर्तन होने के साथ, उसके घर में भी परिवर्तन होता जा रहा था। नित्य नवीन व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करने के कारण अब उसका घर पहिले की भाँति सुनसान और मनहूस नहीं था। नित्य ही नये नये व्यक्तियों को देखकर कभी कभी माँ कुछ भयभीत हो जाया करती थी। किन्तु प्रचलित वादों और प्राचीन ग्रन्थों पर वार्तालाप होते देख उसे गम्भीर शांति भी मिलती थी यह बात भी नहीं कि वह इन चलती हुई सारी बातों को समझती ही न हो पर स्वयं ही वह राजपाल की बातों में रोड़ा नहीं डालती थी।

क्रमशः

लियाकत का कहना है कि मैं भी उतना ही सुन्दर हूं जितना नेहरू।

नेहरू—लियाकत पत्रव्यवहार

विदेश मंत्रालय के द्वारा भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू और पाकिस्तान प्रधानमंत्री मिस्टर लियाकतअली खां के मध्य हुआ 'न युद्ध' घोषणा विषयक पत्रव्यवहार प्रकाशित कर दिया गया है। इस विषय का प्रारम्भ लगभग एक वर्ष पूर्व भारत के प्रधानमन्त्री द्वारा किया गया था। पारस्परिक पत्रव्यवहार में लगभग बीस पत्रों के आदान प्रदान के पश्चात् भी गाड़ी वहां की वहां है।

भारत के प्रधानमन्त्री के दोनों प्रधानमन्त्रियों द्वारा सम्मिलित 'न युद्ध' घोषणा करने के प्रस्ताव के उत्तर में पाक प्रधानमन्त्री ने लिखा कि वह इस प्रकार की घोषणा के विचार को अच्छा समझते हुए भी यह उचित समझते हैं कि इस प्रकार की कोई भी सम्मिलित घोषणा करने के पूर्व यह आवश्यक है कि भारत-पाक झगड़ों को सुलझाने के लिए कोई पद्धति निश्चित कर ली जावे। विवादास्पद प्रश्नों को शान्तिपूर्ण ढंग से सुलझाने के तीन मार्ग हैं— परस्पर चर्चा, मध्यस्थ के द्वारा हल, और पंच फैसला। पाकिस्तान निम्न ढंग की पद्धति चाहता है—

१. विवादास्पद विषयों को सुलझाने के लिये दो मास का समय पारस्परिक चर्चा के लिये दिया जाय।

२. इस काल के पश्चात्—उन झगड़ों के विषय में जिनके विषय में चर्चा असफल रही—मध्यस्थ के द्वारा प्रयत्न किया जाय, और इसके लिये पुनः दो मास का समय दिया जाय।

३. चार महीने की अवधि में जो झगड़े चर्चा अथवा मध्यस्थता के द्वारा न सुलझ सकें, वे अपने आप ही पंच फैसले के लिए दे दिये जाएं। इसके लिए पंच कोई विशेष संस्था अथवा उपयुक्त अन्तर्राष्ट्रीय सत्ता दोनों पक्षों की स्वीकृति से हो सकती है। उसका निर्णय दोनों पक्षों को मान्य रहेगा।

भारत सरकार का मत है कि जहां प्रत्येक झगड़े को सुलझाने की पद्धति निश्चित करना आवश्यक है वहां इस प्रकार की घोषणा तुरन्त ही एक मित्रता और समझौते का वातावरण उत्पन्न करेगी और इस प्रकार इन झगड़ों के सुलझाने में सहायक होगी। इसके अतिरिक्त भारत सरकार यह समझती है कि भारत तथा पाकिस्तान के विभिन्न विवादास्पद प्रश्न एक ही प्रकार के नहीं हैं जो समय के इस बन्धन में बांधे जा सकें। कुछ प्रश्न न्याय का विषय हैं; कुछ अन्य, उदाहरणार्थ काश्मीर, दोनों देशों की सत्ता से सम्बन्धित हैं। आरम्भ में ही यह मान लेने से कि दो या चार महीने की अवधि के पश्चात् वे प्रश्न जिन पर कोई निर्णय नहीं हो सका, पंच फैसले के सुपुर्द कर दिये जायेंगे, पंच फैसले की प्रतिष्ठा बढ़ा देगा। इस प्रकार यदि कोई भी पक्ष चाहे तो चर्चा और मध्यस्थता के प्रयत्न बेकार हो जायेंगे।

नहरी पानी और निर्वासितों की संपत्ति के सबसे अधिक विवादास्पद प्रश्नों का भी उल्लेख हुआ है। पाकिस्तान का आग्रह है कि नहरी पानी का झगड़ा दोनों देशों के द्वारा नामजद दो न्यायाधीशों के ट्रिब्यूनल के बजाय अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के सुपुर्द कर दिया जाय। उसका यह भी आग्रह है कि उसको मिल रहे पानी की मात्रा में कोई कमी न हो। इस प्रकार की किसी भी संभावना पर लियाकतअली ने युद्ध की धमकी दी है। अपने २१ अगस्त '५० के पत्र में वह लिखते हैं—

"... एकत्रित किये हुये तथ्य यह बताते हैं कि पाकिस्तान सतलज और उसकी सहायक ब्यास, रावी और चिनाब से मिलने वाले पानी की मात्रा में कमी को स्वीकार नहीं कर सकता। पारस्परिक चर्चा यह बताती है कि जहां तक भारत का सम्बन्ध है, उसे यह बात स्वीकार नहीं कि वह उन योजनाओं को स्थगित कर दे जो इस पानी में कमी करने वाली हैं। ये योजनायें पाकिस्तान के महत्वपूर्ण हितों के लिए और अच्छे पड़ोसी सम्बन्ध बनाये रखने के लिये इतनी घातक हैं कि यदि अभी हम दोनों पंच फैसले के मार्ग को स्वीकार नहीं करेंगे तो परिणाम एक ऐसी स्थिति का उत्पन्न होना होगा जिससे अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति, सुरक्षा व न्याय संकट में पड़ जायेंगे।"

भारत सरकार ने पंच फैसले की संभावना को अस्वीकार नहीं किया है, चाहे वह अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के द्वारा हो अथवा अन्य किसी संस्था द्वारा। उसका आग्रह है कि आरम्भ में इस पर ट्रिब्यूनल द्वारा विचार किया जाना चाहिए जो मतभेदों को कम कर सके। बाद में वे अन्य किसी संस्था के सुपुर्द किये जा सकते हैं। पाकिस्तान ने इस बात की भी उपेक्षा की है कि जबकि पश्चिमी पंजाब की खेतिहर भूमि के लिए पर्याप्त पानी नहरों से मिल रहा है, पूर्वी पंजाब की भूमि में खेती बढ़ाने के आवश्यक पानी की कोई व्यवस्था नहीं। अतः भारत सरकार ने इस पत्रव्यवहार में लगातार यह आग्रह किया है कि दोनों देशों के टेक्निकल एक्सपर्ट परस्पर मिल कर यह देखें कि दोनों देशों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए सिन्धु की भूमि में पर्याप्त पानी भी है या नहीं।

पाकिस्तान जहां एक ओर नहरी पानी के झगड़े को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के सुपुर्द करने का आग्रह कर रहा है वहां निर्वासितों की संपत्ति के प्रश्न पर उसका ढंग बड़ा विचित्र है। भारत सरकार का यह मत है कि यह प्रश्न भारत तथा पाकिस्तान स्थित एक बहुत बड़ी संख्या में लोगों पर प्रभाव डालने वाला होने के कारण नहरी पानी के प्रश्न से भी अधिक आवश्यक है, इस लिए दोनों प्रश्नों पर ट्रिब्यूनल द्वारा साथ साथ विचार होना चाहिए। पाकिस्तान का उत्तर है कि यदि भारत सभी प्रश्नों को पंच फैसले के सुपुर्द करने से सहमत हो जाता है तो यह प्रश्न भी अपने आप ही सुलझ जावेगा। इससे एक ऐसे प्रश्न को हल करने की उपेक्षा सूचित होती है जो न केवल दोनों के सम्बन्धों को बिगाड़ रहा है वरन बहुत बड़ी संख्या में लोगों के जीवन पर प्रभाव डाल रहा है।

पाकिस्तान ने रिजर्व बैंक में पड़ी हुई कुछ सम्पत्ति की भारत से मांग की है, तो भारत ने इसी प्रकार की पाकिस्तान स्टेट बैंक में अपनी सम्पत्ति मांगी है।

———

नीति और माणा घाटियों का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व

[पृष्ठ १७ का शेष]

अंग्रेजी सरकार ने चीन को युद्ध सामग्री भेजने का दूसरा मार्ग बनाने की योजना बनाई थी। उनकी योजना थी कि लखनऊ से कोटद्वार होते हुए बद्रीनाथ तक वहा से सहाशा और सुंगकिंग तक एक सड़क बनाई जाय, जिससे कि चीन को लड़ाई का सामान भेजा जा सके। किन्तु इसी बीच युद्ध समाप्त हो गया और वह योजना कार्य रूप में परिणित न हो सकी। यह तो अंग्रेजी सरकार की चीन की सहायता करने की अपनी योजना थी, किन्तु अब तो हम स्वतन्त्र हैं और अपनी सुरक्षा का प्रश्न सामने है। अत. उपरोक्त घाटियों तक मोटर सड़क अत्यन्त आवश्यक हो गई है। अभी तक कोटद्वार से चमोली तक सीधी मोटर सड़क है। हरिद्वार से कीर्तिनगर तक सड़क है किन्तु कीर्तिनगर से श्रीनगर तक सड़क नहीं है क्योंकि गंगा पर अभी तक पुल नहीं बनाया गया है। अत यदि कीर्तिनगर का पुल बना दिया जाय तो श्रीनगर तक मोटर के दो सीधे मार्ग हो जाते हैं। गढ़वाल मे बद्रीनाथ और केदारनाथ के अलावा अन्य बीसियों तीर्थस्थान हैं जहा भारत के कोने कोने से यात्री आते हैं। उनकी भी सुविधा के लिए यह आवश्यक सुधार किये जाय। यदि सरकार को इस समय यह सम्भव नहीं कि नीती और और माणा घाटियों तक मोटर सड़क बनवा सके तो मैं यह राय दूंगा कि बद्रीनाथ तक तो अवश्य ही मोटर सड़क बनवाने की व्यवस्था की जानी चाहिये और फिर केन्द्रीय सरकार इस मार्ग को अपने हाथ में ले कर देहली हरिद्वार-बद्रीनाथ सड़क को राष्ट्रीय राजमार्ग घोषित कर दे। सुरक्षा के लिये तथा यात्रियों की सुविधा को देखते हुए यह अत्यन्त ही आवश्यक है। चमोली तक तो मोटर सड़क है ही और वहां से बद्रीनाथ ४८ मील है सिर्फ इस हिस्से में मोटर सड़क तथा कीर्तिनगर का पुल बनवाने की आवश्यकता है। हो सकता है कि किसी भी समय यह सड़क पठानकोट सड़क जैसी महत्वपूर्ण सिद्ध हो।

काश्मीर पर जब पाकिस्तान द्वारा उकसाये जाने पर कबाइली लुटेरों ने हमला किया था तो श्रीनगर हवाई अड्डे ने महत्वपूर्ण काम किया और यदि वह हवाई अड्डा न होता तो शायद हमारी सरकार काश्मीर की रक्षा न कर सकती। गढ़वाल में भी इस समय कोई हवाई अड्डा नहीं है। पहले गौचर में एक अड्डा था किन्तु अब वह उपयोग में न आने के कारण अस्तव्यस्त है। आज के युग में हवाई यातायात बहुत महत्वपूर्ण है। अत मैं सरकार को यह सुझाव देना चाहता हू कि बद्रीनाथ में हवाई अड्डा बनाने का तुरन्त व्यवस्था की जाय जिससे समय पर फौजें भी उतारी जा सकें और यात्री भी हवाई मार्ग से बद्रीनाथ जा सकें। यदि बद्रीनाथ में अड्डा बनाने में कुछ दिक्कतें हों तो गौचर में अड्डा बनाने की व्यवस्था की जानी चाहिये। वहां बहुत अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

मुझे विश्वास है कि सरकार उपरोक्त बातों पर ध्यान दे कर काश्मीर से आसाम तक की सीमा की रक्षा का पूरा प्रबन्ध करेगी। आज हिमालय की उपरोक्त घाटियों का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है और जनता तथा सरकार को सतर्क रहने की आवश्यकता है।

—

कम्यूनिज्म : क्यों अस्वीकार है ?

[पृष्ठ ११ का शेष]

वैभव को प्राप्त करने के लिए पशुओं से अथवा अन्य लोगों से अधिक उत्तम हो सकती है परन्तु अन्य होने वाले लोगो की योजनाएं इन से भी अच्छी हो सकती हैं। अतएव किसी योजना की अच्छाई अथवा बुराई योजना में साधनों से नहीं प्रत्युत योजना के ध्येय से पता चलती है। कम्यूनिज्म योजना है साधन को ध्येय बताने वाली। इससे समाज ऐसे लोगों का एक समूह बन जायेगा जो अभिमानी, संकुचित हृदय, स्वार्थी होंगे। प्रेमभाव, सेवाभाव, और उदारता का भाव विनाश को प्राप्त होगा और मनुष्यों की सेवाएं तथा प्रकृति के साधनों पर आधिपत्य प्राप्त करने के लिए भाग दौड़ लग जायेगी। इससे दासता बढ़ेगी।

स्वार्थ चाहे तो व्यक्ति में हो चाहे समाज में परिणाम एक जैसे ही होंगे। दुख, पतन और विनाश के स्वार्थमय होने से कई गुणा अधिक हो जायेंगे। एक व्यक्ति के स्वार्थी होने से हानि भी कम ही होती है।

कम्यूनिस्ट देशों में जो दासता की जंजीरें बनाई जा रही हैं उनसे हमारे उक्त कथन का समर्थन होता है। यद्यपि रूस इत्यादि कम्यूनिस्ट देशों के चारों ओर लोहे का पर्दा टंगा हुआ है, तो भी वास्तविक बातें काले परदे में से छन छन कर बाहर आने लगी हैं। १९४९की गणना के अनुसार रूसमें कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्यों की संख्या तीन प्रतिशतसे अधिक नहीं है। इस पर भी शेष ९७ प्रतिशत पर इनका राज्य है। यह राज्य इन थोड़े से लोगों ने पूर्ण जनता पर आतंक जमा कर स्थापित किया हुआ है। लाखों की संख्या में लोगों को साईबेरिया के कैम्पों में कैद कर उनसे बलपूर्वक काम लिया जा रहा है। जो कोई इस बात पर आपत्ति करता है उसे या तो खुफिया हत्यारे के छुरे से, या धन के लोभ से खरीदे डाक्टर को विष से संसार सागर से पारकर दिया जाता है।

रूस के विधान की धारा १२६ के अनुसार तो रूस में बोलशेविकों के अतिरिक्त कोई दूसरा राजनीतिक दल रह ही नहीं सकता। इसका अर्थ यह हुआ कि तीन प्रतिशत संख्या में लोग शेष सत्तानवें प्रतिशत लोगों को न तो सोचने का अवसर देना चाहते हैं और न ही कुछ कहने का। विधान की इस धारा का यह अर्थ होता है कि यदि सोचो तो बोलशेविकों की भांति और यदि बोलो अथवा कुछ करो तो बोलशेविकों की भांति।

यह तो एक अति भयानक बात है। यह तो उन खलीफों की आज्ञा की भांति है जिन्होंने अमुसलमानों को इसलामी राज्य में रहने का अधिकार ही नहीं दिया था। मानो यहां भारत वर्ष में कांग्रेस सरकार यह आज्ञा दे दे कि देश में कांग्रेस पार्टी के अतिरिक्त अन्य कोई पार्टी बन ही नही सकती और फिर यह आज्ञा देश के विधान में सम्मिलित कर दे, तो कितना अनर्थ हो जाने की संभावना है। ठीक यही सोवियट सरकार ने रूस में किया हुआ है। मनुष्य के स्वतन्त्र विचारों पर यह अत्याचार इसीलिये सम्भव हो रहे हैं कि रूस में मनुष्य को जीवन का ध्येय सांसारिक वैभव प्राप्त करना मात्र है। कम्यूनिज्म की आधार शिला पशुता है, दैवी नहीं।

अतएव कम्यूनिज्म अस्वीकार करने योग्य है। यह मानवता को पतन की ओर ही लेजाने की शक्ति रखता।

—

क म ल

[पृष्ट १२ का शेष]

देती थी। मैंने कभी उसकी उगलियों का स्पर्श अनुभव नहीं किया। नौकरानी के हाथ का अपने शरीर से छूना मुझे बहुत ही बुरा मालूम होता है। मैं बहुत शीघ्र अत्यन्त आलसी बन गई। क्योंकि उसके हाथों से सिर से लेकर पैर तक और अगिया से लेकर दस्ताने तक सारी की सारी पोशाक पहनने में बहुत अधिक आनन्द आता था। वह लम्बी, पतली लड़की मुझे सदा सजाती रहती थी और मुंह से एक शब्द भी नहीं बोलती थी। स्नान के बाद वह मेरी मालिश करती थी, जब कि मैं दीवान पर कुछ देर के लिए सोती थी। वस्तुत मैं उसे एक गरीब मित्र अधिक समझती थी और नौकरानी कम।

एक दिन प्रातःकाल कुछ रहस्य पूर्ण सी मुद्रा बनाये हुए थानेदार आया। वह मुझ से कुछ बातचीत करना चाहता था। मुझे विस्मय तो बहुत हुआ, पर मैंने उसे अन्दर आने दिया। वह पुराना सिपाही था और किसी समय मेरे पति का अर्दली रहा चुका था। जो कुछ वह करना चाहता था, उसे कहते हुए कुछ हिचक रहा था। अन्त में रुकते रुकते उसने कहा—'श्रीमती जी, जिले के पुलिस कप्तान सीढ़ियों के नीचे खड़े हैं।'

मैंने पूछा—'वह क्या चाहते हैं ?'

'मकान की तलाशी लेना।'

यह सही है कि पुलिस एक आवश्यक चीज है, पर मुझे उससे अत्यधिक घृणा है मैं यह भी सोच नहीं सकती कि यह भी कोई उत्तम पेशा हो सकता है। मैंने कुछ अपमानित सा अनुभव करते हुए कहा, 'यहां किस लिए तलाशी ? क्या मतलब ? यहां तो कोई चोरी नहीं हुई।'

'उनका ख्याल है कि यहां कहीं कोई अपराधी छिपा हुआ है।'

मुझे कुछ भय सा लगना शुरू हुआ। मैंने पुलिस कप्तान को ऊपर बुलवा लिया। वह कुलीन व्यक्ति मालूम होता था। लीजियन आफ आनर की पट्टियां उसके कोट पर सुशोभित थीं। उसने शिष्टाचार प्रदर्शित करते हुए मुझसे क्षमा मांगी और कहा, 'आपके नौकरों में एक दण्डित अपराधी है।'

मुझ पर बिजली सी गिर पड़ी। मैंने कहा, 'मैं इन सबकी निर्दोषता की जामिनी कर सकती हूं। और आपके सन्तोष के लिए मैं उनके नाम गिनाये देती हूं। सबसे पहले एक है बूढ़ा सिपाही पीयर कुर्तीन ?'

'वह नहीं है।'

'मस्तवक का पीयम। यह कोमेन प्रान्त का रहने वाला है और उसके पिता को मैं जानती हूं। और एक चपरासी जिसे आप अभी देख ही चुके हैं। और कोई नहीं है।'

'इनमें से वह कोई भी नहीं है।'

'तब फिर आप देख ही रहे हैं कि आपको धोखा हो गया है।

'क्षमा कीजिये श्रीमती जी मुझे निश्चय है कि मुझे धोखा नहीं हुआ है, क्योंकि उसकी आकृति बिलकुल अपराधी जैसी नहीं जान पड़ती, अतः आप इतनी कृपा करेंगी कि अपने सब नौकरों को यहां अपने और मेरे सामने बुलवा लें।'

पहले मैं हिचकिचाई, पर फिर मैं मान गई और अपने सब नौकर नौकरानियों को बुलवा भेजा। उसने उन सब को क्षण भर देखा और कहा, 'अभी कोई बाकी है।'

मैंने कहा, 'क्षमा कीजिये श्रीमान मेरी एक निजी नौकरानी के अतिरिक्त मेरे यहां केवल ये ही नौकर हैं। और सम्भव वह नौकरानी अपराधी नहीं हो हो सकती।'

क्या मैं उसे भी देख सकता हूं।'

'अवश्य।'

मैंने घंटी बजाई और कमला आ उपस्थित हुई। अभी वह मुश्किल से कमरे में घुसी ही होगी कि कप्तान ने कुछ इशारा किया और दो आदमी जो दरवाजे की आड़ में खड़े थे, और इसी लिए मुझे दिखाई नहीं दिये थे, एकाएक कमला पर टूट पड़े। उन्होंने उसे पकड़ लिया और उसके हाथ रस्सी से बांध दिये।

मैं गुस्से से चिल्ला कर उस बचाने चली ही थी कि कप्तान ने मुझे रोक लिया और बोला 'श्रीमती जी यह एक लड़की नहीं, पुरुष है, जिसका नाम जोन निकोलस लेसापेट है। इसे १८७१ में बलात्कार और उसके बाद हत्या कर देने के अपराध में फांसी की सजा हुई थी। बाद मे सजा बदल कर आजीवन कारावास कर दी गई। चार मास पहले यह जेल से भाग निकला और तब से हम निरन्तर इसकी खोज कर रहे हैं।'

मुझे बड़ी निराशा हुई। मैं अवाक् रह गई। इन सब पर मुझे विश्वास ही नहीं होता था। पुलिस कप्तान हसते हुए बोला—'मैं इसका एक प्रमाण दे सकता हूं। उसके दायें हाथ पर गोदना खुदा हुआ है।'

उसकी कमीज की बाहें सिकोड़ कर देखा गया, बात सही थी। कप्तान ने भद्दा मजाक करते हुए कहा—'मुझे विश्वास है कि आप दूसरे प्रमाणों के बिना ही सन्तुष्ट हो जायगी।'

और वे मेरी नोकरानी को ले गये।

यदि तुम विश्वास करो तो जो सबसे तीव्र भाव इस घटना से मेरे मन में उत्पन्न हुआ, वह इस प्रकार मूर्ख और हास्यास्पद बनाये जाने पर प्रचंड क्रोध का था। इस पुरुष ने मुझे छुआ, मेरे कपड़े उतारे और पहनाये इस सबके कारण लज्जा मेरे मन में नहीं थी बल्कि एक तीव्र अपमान का अनुभव था। एक नारी का अपमान। तुम समझती हो।

'नहीं। ठीक तौर से नहीं।'

'देखो। एक मिनट सोचो। वह बलात्कार के लिये दण्डित हुआ था वह युवक और इसी से मैंने अपमान अनुभव किया। अब तुम समझती हो।'

श्रीमती सिमोन ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह अपने ठीक सामने कोचवान को पीठ पर चमकते हुए दो बटनों को आंखें गड़ाये देख रही थी। उसकी आंखों में एक मुस्कान भरी थी जो स्त्रियों की आंखों में कभी कभी होती है।

सरला सुमधुरा च संस्कृत भाषा

[श्री धर्मदेवो विद्यावाचस्पतिः— इन्द्रप्रस्थीय संस्कृत परिषन्मन्त्री]

संस्कृतभाषा सर्वासां भारतीय भाषाणाम् अन्यदेशीय भाषाणां च जननी। तस्याः साहित्यम् अत्र तमनुपमं च विद्यते। सर्वस्य धर्मस्य विज्ञानस्य च मूलभूता वेदाः, उपनिषदः, दर्शन-शास्त्राणि, रामायणं, महाभारतम् अन्ये च परःसहस्रा ग्रन्था येषामध्ययनेन अस्माभिः प्राचीन धर्मस्य, दार्शनिक विचाराणां, विज्ञानस्य, इतिहासस्य च ज्ञानं प्राप्तुं शक्यते, ते सर्वे अमूल्या ग्रन्थाः संस्कृतभाषायामेव वर्तन्ते। एत-स्या ज्ञानेन विना कोऽपि विद्वान् प्राचीन धर्मविज्ञानसंस्कृतीतिहासादीनां ज्ञानं प्राप्तुं तद्विषयेऽनुसन्धानं कर्तुम् च कदापि न शक्नोति। अस्माकं देशे यदि कश्चिद् विद्वान् इतरभाषासु प्रवीणोऽपि सर्वभाषाणां जननीमिमां देवभाषां न जानाति, तर्हि महद् दौर्भाग्यमिदं तस्य, न च स वस्तुतः सुशिक्षितो विपश्चिद् वेति स्वीकर्तुम् शक्यते।

वेदोपनिषद् दर्शन रामायण महा-भारत मनुस्मृति शुक्रनीति कौटलीयार्थ शास्त्र प्रभृतिषु ग्रन्थेषु बहुमूल्यानि रत्ना-नि वर्तन्ते, किन्त्वस्माकं विद्यालयेषु महा-विद्यालयेषु च संस्कृतभाषां प्रति प्राय उपेक्षा प्रदर्श्यतेऽधिकारिभिर्विद्यार्थिभिश्च। यावत् सर्वे छात्राः संस्कृतभाषां पठित्वा स्वकीयायाः प्राचीनसंस्कृतेर्गौरवं तस्या यथार्थं स्वरूपं च न जानीयुस्तावदस्मा-भिर्वस्तुतः स्वराज्यमेव नाधिगतमित्यहं मन्ये। अस्माकं विद्यालयेषु ये संस्कृता-ध्यापकाः, ते विद्यालयाधिकारिभिः प्राय-शस्तुच्छत्वेन गण्यन्ते, तेभ्योऽन्याध्याप-कापेक्षया वेतनादिकमपि स्वल्पतरं दीयते, इत्थं विद्यार्थिनां मनःस्वपि संस्कृतभाषां प्रति प्रीतिर्न उत्पद्यते। तेऽपि तस्या विषये नितरां औदासीन्यं प्रदर्शयन्ति। केषां चिदध्यापकानां पाठनक्रमो न शोभनो भवति। ते तथाध्यापयन्ति येन छात्रा एवं चिन्तयन्ति यत् संस्कृतभाषातीव कठिना भाषा वर्तते। अस्या व्यावहारिक-दृष्ट्या काचिदुपयोगितापि नास्ति तस्मा-दपि ते संस्कृतभाषायाः अध्ययने रुचिं न प्रदर्शयन्ति। अयं वस्तुतोऽध्यापकानामपि दोषो वर्तते। संस्कृतभाषा तु सरला सुमधुरा च भाषा। उपनिषद्दर्शन-रामायणमहाभारतादयो ग्रन्थाः सरलायां संस्कृतभाषायामेव वर्तन्ते, यान् साधा-रणोऽपि लोकभाषाज्ञः स्वल्पेनाभ्यासेना-वगन्तुं शक्नोति। मध्यकाले कैश्चित् स्वकीयं पाण्डित्यं प्रदर्शयितुम् अतीव कठिनशब्दानां प्रयोगः कृतः, कठिन-सन्धीनाम्, अवच्छेदकावच्छिन्नादिशब्दा-नां प्रयोगं कृत्वा तादृशं भयं सामान्य जनानां मनःसु समुत्पादितं, येन तैः संस्कृत भाषा नितान्तं कठिना भाषा, इयमस्मा-भिरध्येतुं न शक्यते, इति मत्वास्या अध्ययनमेव परित्यक्तम्। अतो यत्र सर्वेषु विद्यालयेषु महाविद्यालयेषु च संस्कृत भाषावश्यं पाठनीयेति नियम आवश्यकः, तत्रेदमप्यावश्यकं यत्संस्कृतभाषा सरल रूपेण संवादरूपेण चाध्यापनीया। कठिन शब्दानां क्लिष्टसन्धीनां च प्रयोगो न कर्तव्यः। अन्यानि साधनान्यपि तथाव-लम्बनीयानि येन संस्कृतभाषा लोकप्रिया भवेत्। संस्कृत भाषायाः प्रचाराय सर्वैरपि पण्डितैरवश्यं प्रयत्नः कर्तव्यः। इदं सर्वेषां धार्मिकं सांस्कृतिकं च कर्तव्यम्॥

———

पुरुष : उसकी प्रकृति एवं मनोभाव

[पृष्ठ १० का शेष)

उसे कोई भी फिक्र नहीं होती। वह रसिक है। क्षणभर में सर्वस्व अर्पण करने वाला पुरुष कुछ दिनों पश्चात् पुराने प्रेमपात्र को भूल सकता है। उसके पागलपन का नशा उतर सकता है। वह विवेकी और निष्ठुर बन सकता है। वह निष्ठुरता, कठोरता, दृढ़ता एवं पाश-विकता तक बढ़ सकती है। उसमें शारी-रिक बल के साथ साथ कठोर पाशविक शक्ति भी है। शारीरिक बल, मानसिक बल, चरित्र बल, और संकल्प शक्ति उसमें अधिक मात्रा में है। यह उसे इसलिये प्रदान की गई है कि वह राज्य करे; शासन करे। उसकी कठोरता भी इसी शासन करने की प्रवृत्ति में मदद करने वाली होती है।

पुरुष का स्वभाव एवं मनोभाव

पुरुष का स्वभाव है कि जब तक वह अपनी प्रेमिका को प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक उसे प्राप्त करने के लिए अतीव इच्छुक रहता है, प्राणप्रण से चेष्टा करता है, भांति २ से प्रेम प्रदर्शन करता है और उसके अतिरिक्त अन्य कुछ भी चीज नहीं प्राप्त करना चाहता, किन्तु एक बार मनचाही पत्नी पाने पर अधिक दिन तक उसे संतोष नहीं रहता। कुछ वर्ष कभी कभी कुछ मास पश्चात् ही वह उससे ऊब सा उठता है। उसके मन में परिवर्तन प्रारम्भ होता है। विवाह के एक वर्ष पश्चात्, शिशु जन्म के बाद से ही वह पत्नी की ओर अधिक खिंचाव का अनुभव नहीं करता। धीरे धीरे उसे मित्रों, क्लबों, सिनेमा, सैर सपाटे में अधिक आनन्द आने लगता है। पत्नी की ओर से वह उदासीन सा हो जाता है। अपनी उम्र हो जाने पर, लगभग ३५-४० वर्ष का हो जाने पर उसे स्त्री में कोई विशेष आकर्षण नहीं रह जाता। वह पत्नी को अपने विचारों का केन्द्र नहीं बना पाता, प्रत्युत अन्य सांसारिक कृत्यों में अधिक संलग्न हो जाता है। स्त्री उसके हृदय के किसी कोने में पड़ी रहती है। वह उससे कुछ विशेष चीज नहीं चाहता, केवल थोड़ी सी सहायता, घर का संचालन, चीजों की देख रेख, घरबार की देखभाल इत्यादि। प्रेम ऐसी वस्तु भी उसे अधिक आवश्यक नहीं मालूम हो यदि स्त्री उसके काम में हाथ बटा देती है, तो उसे वह आकर्षक लगती है, अन्यथा उसे अपने काम से काम। वह यौवन का जोश, मद, उत्साह, प्रेम का नशा जैसे सब कुछ लुप्त हो जाता है। अधिक आयु होने पर पुरुष में और कई परिवर्तन प्रारम्भ होते हैं। पुरुष इस अवस्था में प्रायः अशक्त सा हो जाता है। वह अधिक चल फिर नहीं सकता। वह पत्नी को एक साथिन, सहायक के रूप में देखना चाहता है। पत्नी उसकी सहायिका बन कर ही रह सकती है। कई वृद्ध स्त्री से चिढ़ने से लगते हैं। यह चिढ़ाना कभी कभी घृणा में मिश्रित हो कर एक नई मनोभावना को जन्म देता है। कुछ वृद्ध स्त्री से इतने ऊब उठते हैं कि उसे देख भी नहीं सकते। कुछ स्त्री को देख भर सकते हैं, उसकी छोटी मोटी फरमाइशें पूर्ण करने की न तो उनमें शक्ति ही रहती है, न इतना उत्साह ही।

कभी २ पत्नी बहुत उग्र होती है। टालस्टाय की दुखान्त दाम्पत्य-गाथा को कौन नहीं जानता? उग्र पत्नी पा कर शान्तिप्रिय पति बड़ा दुखी रहता है। उसके मन में एक गुमसुम भय छुपा रहता है। वह प्रायः पत्नी से बचा बचा सा रहता है। वह एक ऐसा शान्त स्थान चाहता है, जहां कोई उसे परेशान न करे और शान्ति के कुछ क्षण बिताने दें।

———

बाल बन्धु परिषद

अपने घर में सिनेमा दिखाइये

★ महेन्द्र राजा

पिताजी मेरे सिनेमा के शौक से बहुत तङ्ग हो उठे, तो एक दिन उन्होंने मुझे सुबह कहा कि "महेन्द्र! आज हम घर पर सिनेमा दिखलावेंगे। बिना पैसे का सिनेमा। तुम अपने स्कूल के अन्य मित्रों को भी लेते आना।" मैंने कहा, "बाबूजी! कहीं घर में भी सिनेमा होता है?" तो बाबूजी कहने लगे, तुम अपने दोस्तों से कह तो देना, कि शाम को वे यहां आवें। मैं आज जरूर उन्हें सिनेमा दिखलाऊंगा।" मुझे बड़ा आनंद हुआ, यह जान कर कि आज घर में सिनेमा होगा।

शाम को मैं अपने दो-चार मित्रों को अपने घर लिवा लाया और बाबूजी से कहा कि "अब दिखलाइये।"

उन्होंने सिनेमा दिखाने के पहले कहा कि, "देखो, सिनेमा में तुम लोग घोड़ा, बैल, कुत्ता, बिल्ली इत्यादि देखते हो व इनकी आवाजें सुनते हो। वही सिनेमा मैं तुम्हें अब बतलाऊंगा।"

उन्होंने हम लोगों को सामने एक लाइन में बैठा दिया व हम लोगों के सामने एक चादर डाल दिया, जिस पर कि सिनेमा के चित्र बतलाना था। फिर बाद में वे पर्दे के पीछे बैठ गये व लालटेन के रोशनी के आगे अपने दोनों हाथ कर उंगलियों को विभिन्न प्रकार से चलाते हुए (जिससे कि हाथ की छाया पर्दे पर पड़े) उन्होंने सिनेमा दिखलाना शुरू किया। इस प्रकार करीब बीस-पचीस जानवरों के छाया चित्र उन्होंने चादर पर बतलाये। साथ ही वे प्रत्येक चित्र के साथ प्रेषित जानवर की बोली की नकल करते हुए बोली भी बोलते जाते थे, जिससे हम लोगों को और भी ज्यादा मजा आता था। इस प्रकार करीब १ घण्टे तक वे विभिन्न प्रकार के छाया चित्र बतलाते रहे व उंगलियों को इधर-उधर चला कर पशु-पक्षियों को जीवित बतला देते थे। कभी कुत्ता भौंकता था, कभी घोड़ा कान चलाता था। कभी कुत्ता पूंछ हिला रहा था। इस प्रकार उन्होंने 'चलते-फिरते' सिनेमा के साथ ही 'बोलता-चालता' भी घर पर करके दिखाया इसका मुझ पर और मेरे मित्रों पर इतना प्रभाव पड़ा कि हम लोगों ने सिनेमा जाना छोड़ दिया और मुफ्त का सिनेमा देखने लगे।

आज वही १२-१४ वर्ष पहले की बचपन की बात याद आगई। इसलिये अपने छोटे भाइयों के लाभार्थ यहां लिख रहा हूं आशा है वे इससे लाभ उठावेंगे।

तितली का छाया चित्र तैयार करना

चित्र में बतलाये अनुसार दोनों हाथों को हथेली की ओर खोल कर आपस में फांस कर लें। व हथेली की ओर से प्रकाश आने दें। सामने पर्दे पर

तितली

तितली की छाया दीखेगी। तितली को उड़ती हुई बतलाने के लिये दोनों हाथों की उंगलियों को आगे-पीछे चलावें। स्मरण रहे कि उंगलियां आपस में बिल्कुल सटी रहें, अन्यथा उंगलियों के बीच में से प्रकाश आने से चित्र बिगड़ जावेगा व वास्तविक तितली की आकृति नहीं दिखाई देगी। एक बात और ध्यान रहे कि उंगलियों को चलाते वक्त अंगूठे न हिलें। वे स्थिर रहें।

कुत्ते का छाया चित्र तैयार करना

चित्र में बतलाये अनुसार पहले बायें हाथ को पूरा खोलिये। हथेली सामने मुंह की ओर रहे।) अब अंगूठे

कुत्ता

को अन्य उंगलियों से दूर बिल्कुल सीधा खड़ा कीजिये। पश्चात सबसे छोटी उंगली को छोड़ बाकी तीन उंगलियों को आपस में एक-दूसरे से सटा जोड़िये व छोटी उंगली को थोड़ा दूर कर रखिये। अब इस बायें हाथ की हथेली पर दाहिने हाथ की हथेली इस प्रकार रखिये कि दाहिने हाथ का अंगूठा बायें हाथ के अंगूठे से कुछ फासले पर रहे व खड़ा रहे व अन्य चार उंगलियों से बायें हाथ की उंगलियों को छोड़ कर हथेली का अन्य अंश इस प्रकार ढक लो कि बायें हाथ की हथेली जरा भी न दिखे। जैसा कि चित्र में दिखलाया गया है। अब अंगूठे की ओर से प्रकाश आने दीजिये। मुंह बाये कुत्ते का छाया चित्र तैयार मिलेगा। बीच-बीच में कभी दोनों अंगूठों को और कभी बायें हाथ की तीनों उंगलियों मिली हुई व छोटी उंगली को चलाते जाइये जिससे कि अंगूठों के चलने से कानों के हिलने का बोध हो व उंगलियों के चलने से मुंह चलने का बोध हो।

नोट :—हाथों के विभिन्न उंगलियों द्वारा विभिन्न प्रकार की स्थितियां दिखलाते हुए छाया चित्र तैयार करना एक चतुर कला है और बहुत ही उपदेशयुक्त भी है। बच्चे इससे सहज में ही विभिन्न जानवरों के विषय में साधारण ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। पहले तो इन चित्रों का प्रयोग करने में कठिनाई होती है, पर अभ्यास करते-करते धीरे-धीरे अच्छा ज्ञान प्राप्त हो जाता है व नौसिखिये भी फुर्ती

[शेष पृष्ठ २६ पर]

देश-संकट

[निर्मला कुमारी सक्सेना]

(चलो! तुम्हें मालूम है कि आज यहां इतनी धूम धाम क्यों है? आज बच्चों के इस 'स्वतंत्र क्लब' ने एक नाटक खेलने का निश्चय किया है। कोई टिकिट नहीं रक्खा गया है। आओ चलो हम लोग भी चलें।)

देखो वह हैं सभापति जो बैठे कुर्सी पर तनकर।
"देश विपद् पर बतलावेगा 'स्वतंत्र क्लब' नाटक रचकर॥"
एकाएक उठा पर्दा और सारा हुल्लड़ शांत हुआ।
एक ही मृदु गंभीर बोल ने सबके मन को खींच लिया॥
देखो मुन्नू नेहरू जी की वर्दी में सज कर आया।
मां पर आने वाला संकट सबको बताने आया।
रंग मंच पर नेहरू जी ने जैसे ही निज चरण धरे।
एक मिनिट ही में श्रोतागण उठ कर तुरन्त खड़े हुये॥
जै जै कारों के नाद ने गुंजा दिया है सारा हिन्द।
तभी उन्हें कर दिया शांत पण्डित जी ने कह "जै हिन्द॥"
"बहिनों और भाइयो, सबने सुना ही होगा उनका नाम।
चीन देश को तहस नहस कर हड़प लिया तिब्बत पठार॥
अब्बाव नेपाल भाग कर यह समाचार भारत लावे।
राज्य नैपाल में घुस आवे और भारत में भी दांत लगावे॥
उस ऐसी ही विश्वशांति द्रोही कामरेड पार्टी को।
समझाओ या नाश करो भारत के वीर सैनिको॥
भारत मां का चित है चंचल देख न किसी आब को आने।
दौड़ो लेने को आशीष मां का औ आरतीओ सुभागे॥
नष्ट करो उन अधम नरों को जो अशांति फैलाते हैं।
सुख शांति के मधुर क्षणों में अग्रसर न होने देते हैं॥
देश पर आन पड़ा है संकट दूर करो ओ सोते हिन्द।
कहना था बस मुझको इतना ही—"जै हिन्द॥"
है! यह क्या दृश्य बन गया सारी काया पलट गई।
"लैफ्ट राइट," लैफ्ट राइट", से सब जगती कांप उठती।
शूर वीर बालक भारत ने ग्रहण किया है दुःसह व्रत।
भारत मां के कष्ट हरण ही में होंगे आमरण रत॥
यह है भारत मां की एक झलक मुन्नी ने दिखलाई।
वीर बालकों को सब चिन्तावन में पुलक चमक चमकाई॥
करतल ध्वनि से गूंज उठा नाटक का सारा पण्डाल।
अब और भारतीयों को उन्नत है माता का भाल॥
अरे ऊषा, तुम भी तो तनकर दिखा रही हो वीरता।
"क्या मन में है ठान लिया बनने को लक्ष्मीवती सरिता॥
"हां!, अवश्य ही लक्ष्मीबाई बन कर मरजूं दो दो।
सूरज बोला, "देश का संकट हां वीर सैनिक बन दो दो॥"
"ऊषा, सूरज ऐसे ही विचारधारी हैं बड़ भागी।
पर अब तो उठ चलो चलें पाण्डाल हो गया है खाली!"

★

वीरगंज में नौ दिन की आजादी

(पृष्ठ १ का शेष)

प्रतीक करने के लिए उभाड़ने लगे ।

नैपाल के कारण कहीं कश्मीर के बचेखुचे भाग से भी हाथ न धोना पड़ जाय, यही सोच कर प्रधानमंत्री नेहरू जी ने नेपाल कांग्रेस की तरफ से मुंह मोड़ लिया और उसके आन्दोलन को बिन आये मौत मर जाने दिया ।

राजनीतिक दांवपेंच

महाराज पांच सरकार ने अपने दोनों महारानियों, युवराज, दो छोटे पुत्रों पुत्र वधुओं और ज्येष्ठ पौत्र के साथ भारतीय दूतावास में शरण ली थी । दैवयोग से पलायन के समय महाराज के तीन वर्षीय कनिष्ठ पौत्र उस समय राजमहल में थे और वहीं छूट गये । मौका पाकर प्रधानमन्त्री मोहन शमशेर जंग राणा बहादुर ने इसी तीन वर्षीय बालक को राजगद्दी पर बैठा दिया और तुरन्त ही विदेशी राष्ट्रों से नई राज्य-व्यवस्था को मान्यता देने की प्रार्थना की ।

भारत के लिए यह प्रश्न बड़ा पेचीदा हो गया । भारत ने महाराज त्रिभुवन शमशेर जंग बहादुर को शरण दी थी, अतएव तीन वर्ष के नये राजा को मान लेना कठिन था । उधर ऐंग्लो-अमेरिकन गुट नये राजा को मान लेने के लिए उतावला था और वह भारत पर अनुचित जोर दबाव डालने लगा । संयुक्त राष्ट्र संघ में मामला पेश करने की धमकी ने अपना असर दिखाया । नेपाल के प्रश्न पर भारतीय मन्त्रिमंडल में तीन दल हो गये ।

भारतीय कूटनीति के भीष्मपितामह चक्रवर्ती श्री राजगोपालाचारी तीन वर्षीय राजा को मान्यता देने के पक्ष में थे । भारत की उत्तरी सरहद पर चीनी कम्युनिस्टों के आ पहुंचने से राजाजी और उनके सहयोगी इस आशंका से विचलित थे कि नेपाल में इस समय किसी प्रकार का उथल-पुथल भारत के लिए हानिकारक होगा, अतएव वे अमेरिकन सैनिक सहायता से नेपाल को अभिभावकतन्त्रवादी राणाशाही को सशस्त्र करने के पक्ष में हैं, ताकि खतरा बढ़ने पर राणा सरकार कम्युनिस्टों से भारत की रक्षा कर सके ।

प्रधानमंत्री श्री नेहरू पिछले दो वर्षों से नेपाल कांग्रेस के आन्दोलन से सहानुभूति रखते आये हैं । परन्तु इस समय जब कि तिब्बत में चीनी सेनायें बड़ी तेजी से आगे बढ़ रही हैं वे भी नेपाल में किसी प्रकार की गड़बड़ी होने देने के पक्ष में नहीं थे । जब महाराजाधिराज त्रिभुवन राज्य महल से चले आये तो नेहरूजी ने यही सोचा कि इस घटना को तूल देकर राणा सरकार पर व्यक्तिगत और राजनीतिक प्रभाव डाल कर महाराज को पुनः गद्दी पर बैठाने और राज्य में जनतंत्रात्मक सुधार करने में वे सफल हो सकेंगे । यही कारण था कि नेहरू जी ने महाराज को आश्रय देना स्वीकार किया और उन्हें भारत लाने देने में राणा सरकार द्वारा लगायी बाधाओं को दूर करने में सख्ती से काम लिया । इसके बावजूद भी जब कि कांग्रेसी नेताओं ने सशस्त्र हमला करने की ठान ही ली तो नेहरूजी बिगड़ गये और उन्होंने उत्तर प्रदेश तथा बिहार की सरकारों को कड़ी हिदायतें दे दीं कि वे कांग्रेस आन्दोलनकारियों के साथ कड़ाई से पेश आएं । नेहरूजी की नाराजगी का एक प्रमाण यह भी है कि काठमान्डू से भारत के लिए रवाना होने से कुछ ही देर पहले महाराज को भारतीय दूतावास में यह खबर सुनाई गई कि कांग्रेस ने सशस्त्र हमला कर दिया है तो उन्होंने भारत आने की अनिच्छा प्रकट की और कहा कि वे या तो सीधे वीरगंज जाएंगे अथवा काठमान्डू में ही रह कर कांग्रेसी सेनाओं के पहुंचने की राह देखेंगे । परन्तु श्री नेहरू ने स्वयं टेलीफोन पर बात कर उन्हें ऐसा करने से मना किया और उन्हें तुरन्त आ जाने की सलाह दी । भारत पहुंचने पर भी श्री नेहरू ने महाराज को न तो कांग्रेसी नेताओं से मिलने ही दिया (श्री नेहरू स्वयं भी नहीं मिले) और न महाराज को किसी प्रकार का वक्तव्य ही निकालने की आज्ञा दी । महाराज त्रिभुवन भारत सरकार के सम्मानित कैदी हैं । एंग्लो अमेरिकन गुट का दबाव, संयुक्त राष्ट्र संघ का भय और कश्मीर कांड की पुनरावृत्ति की आशंका ने भारत गणतन्त्र के प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू का निश्चय बना डाला ।

उपप्रधान मंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल एक तीसरी ही विचारधारा रखते हैं । उनका कहना था कि महाराज त्रिभुवन के चले आने के बाद नेपाल में कोई वैधानिक सरकार बाकी नहीं रह गई । भारत की सुरक्षा के लिए नेपाल का उतना ही महत्व है जितना कि चीन की सुरक्षा के लिए तिब्बत का, अमेरिका की सुरक्षा के लिए उसके तट से हजारों मील दूर स्थित अलास्का, फिलीपाइन, कोरिया और फारमोसा का । सरदार पटेल के सहयोगियों का यह भी कहना था कि नेपाल में भी हैदराबाद की भांति भारतीयों पर राणाशाही के अमानुषिक अत्याचार हो रहे हैं । अतएव उसे रोकने और अराजकता को बन्द करने के लिए भारतीय सेना को नेपाल पर अधिकार कर लेना चाहिए और कश्मीर तथा हैदराबाद की तरह ही उसे भारतीय संघ का सदस्य मान लेना चाहिए ।

विश्वस्त सूत्रों से इस आशय की पुष्टि होती है कि नेपाल महाराज स्वयं अपने नेतृत्व में एक जनतंत्र सरकार की स्थापना कर नेपाल भारत मैत्रीसन्धि के अन्तर्गत भारत से सैनिक सहायता प्राप्त कर राणाशाही को कुचल देने के लिये तैयार थे, परन्तु वे भारत द्वारा पोषित राज्यप्रमुख बनना नहीं चाहते ।

उधर नई दिल्ली में ये दांवपेंच चलते रहे और इधर नेपाल में कांग्रेस की जन सेना के सिपाही अपनी आखीरी गोली खर्च कर पीछे हटने को मजबूर हो गई । आज नेपाल तराई का वह प्रदेश जिसने नौ दिन तक सच्ची आजादी की झलक देखी थी पुन राणाशाही के पैरों तले रौंदे जा रहे हैं ।

चित्रलोक

लोकप्रिय अभिनेत्री नरगिस

नरगिस उन कुछेक अभिनेत्रियों में से है, जिनकी गणना आज भारत की अत्यन्त लोकप्रिय और कुशल अभिनेत्रियों में की जाती है। भारत में प्रायः प्रत्येक तीन फिल्मों के बाद बनने वाली फिल्म की नायिका नरगिस होती है और यह चीज उसकी लोकप्रियता का ज्वलन्त प्रमाण है।

नरगिस का वास्तविक नाम फातिमा बेगम है और उसका जन्म सन् १९२८ में कलकत्ता में हुआ था। नरगिस के पिता का नाम मोहनबाबू और माता का नाम जद्दनबाई था। उसके माता-पिता दोनों का देहान्त हो चुका है और अब दो भाइयों के सिवा उसका कोई अभिभावक नहीं रहा है।

नरगिस की माँ गान-विद्या की विशेषज्ञ और संगीत फिल्म कम्पनी नामक एक फिल्म निर्मात्री संस्था की मालिक थी। माँ के फिल्मी-क्षेत्र में होने के कारण ही नरगिस का इस क्षेत्र में सहज प्रवेश हो गया और उसने अपनी माँ द्वारा निर्मित 'तलाशेहक' फिल्म में पहली बार अभिनय किया। किन्तु नरगिस की प्रसिद्धि का श्रेय दिग्दर्शक मेहबूब को है, जिसने उसे अपनी फिल्म 'तकदीर' में नायिका का रोल देकर भारतीय फिल्म-जगत में चमका दिया। उसके बाद नरगिस ने 'हुमायूं' 'मेंहदी,' 'अनमल,' 'रामायणी,' 'मीराबाई-लड़ी,' 'अनोखा प्यार,' 'नरगिस,' 'रोमियो-जूलियट,' 'अन्दाज़,' 'आग,' 'आधी रात,' 'अंजुमन,' 'हलचल,' 'जमाल,' 'दिल की आवाज़,' 'मीना बाजार,' 'बिरहा की रात,' 'मेला,' 'लाहौर,' 'मुहब्बत,' 'बाबुल,' 'अदारी,' 'दारोगाजी,' 'भीष्म प्रतिज्ञा,' 'प्यार की बातें,' 'बरसात' और 'जोगन' में अभिनय किया। यद्यपि उसके 'बरसात' और 'अन्दाज़' आदि चित्र बहुत लोकप्रिय हुए हैं, किन्तु 'जोगन' उसके अभिनय-जीवन का सर्वश्रेष्ठ चित्र है। उसने अब तक लगभग चालीस चित्रों में कार्य किया है और इस समय लगभग दस अन्य चित्रों में अभिनय कर रही है।

रायबहादुर चुन्नीलाल का देहान्त

गत सप्ताह दिल्ली में फिल्मिस्तान की नयी संगीतमय कृति 'सरगम' के उद्घाटन के समय एक बड़ी दुःखद घटना घटी। फिल्मिस्तान लिमिटेड के चेयरमैन और इण्डियन मोशन पिक्चर्स प्रोड्यूसर्स एसोसियेशन के अध्यक्ष रायबहादुर चुन्नीलाल, जो स्वयं ओडियन सिनेमा में 'सरगम' के रिलीज के समय उपस्थित थे, की हृदयगति रुक जाने से मृत्यु हो गयी।

रायबहादुर चुन्नीलाल बम्बई के फिल्म व्यवसाय से सम्बन्धित पुराने व्यक्तियों में से थे। फिल्मिस्तान की स्थापना से पूर्व वह स्वर्गीय हिमांशुराय की बम्बई टाकीज़ के जनरल मैनेजर थे। दिल्ली में वह फिल्म-निर्माताओं की ओर से भारत सरकार के सूचना व ब्राडकास्टिंग विभाग के राज्य-मंत्री श्री रंगनाथ रामचन्द्र दिवाकर से मिलने आये थे और उनसे कई बार भेंट भी कर चुके थे। बुधवार को उन्होंने नयी दिल्ली में कनफरल फिल्म सोसायटी की ओर से आयोजित एक स्वागत समारोह में भाषण देते हुए कहा था कि भारतीय फिल्मों ने हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में बहुत काफी सहयोग दिया है।

मृत्यु के समय उनकी आयु ६२ वर्ष थी।

अमेरिकन अभिनेत्री की पोशाक का नीलाम

'बेदिंग ब्यूटी' और 'थ्रिल आव ए रोमांस' आदि प्रसिद्ध फिल्मों की नायिका ईस्तर विलियम की एक बहुत कीमती पोशाक भारत लायी गयी है। बम्बई के मेट्रो सिनेमा के प्रबन्धकों ने घोषित किया है कि इस की नीलामी से प्राप्त होने वाली राशि आसाम भूकम्प सहायता कोष में दी जायगी। ईस्तर हालीवुड की उन अभिनेत्रियों में से है, जिस ने बचपन से ([illegible] वर्ष की आयु से) ही फिल्मों में अभिनय करना आरम्भ कर दिया था।

विदेशी अभिनेत्री ग्लोरिया स्वानसन

बंगाली फिल्म पर रोक

दिल्ली सरकार ने '१९४२' नामक एक बंगाली फिल्म के प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। इस फिल्म में भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन पर प्रकाश डाला गया है।

पश्चिमी बंगाल में भी इस फिल्म पर पाबन्दी लगी हुई है।

काश्मीर में शूटिंग पर पाबन्दी

जम्मू व काश्मीर सरकार ने एक आदेश जारी करके सूचना व ब्राडकास्टिंग मंत्रालय की अनुमति के बिना राज्य में फिल्मों की शूटिंग पर प्रतिबन्ध लगा दिया है।

काश्मीर में फिल्म की शूटिंग के लिए उत्सुक व्यक्तियों को अनुमति के लिए आवेदन करते समय फिल्म की कहानी और शूटिंग के लिये आवश्यक दृश्यों का विवरण देना होगा।

'यह है दुनिया' प्रदर्शित

आरती आजाद पिक्चर की 'यह है दुनिया' फिल्म अनेक बाधाओं को पार कर तैयार हो गई है और सूरत में इसका प्रदर्शन भी कर दिया गया है। इस चित्र में पूँजीवाद और भ्रष्टाचार के अन्तर्गत आज के जीवन पर प्रकाश डाला गया है।

मधुकर पिक्चर्स

मधुकर पिक्चर्स ने अपनी फिल्मों के लिए अच्छा नाम पाया है। बम्बई में उसका स्टुडियो आधुनिकतम स्टुडियों में से है। उसकी 'दामन' फिल्म शीघ्र तैयार हो जायगी और जनवरी में इसका प्रदर्शन हो जाने की आशा है। 'दामन' एक सामाजिक फिल्म है और इसकी भूमिका में निगार, अजीत, प्रेम, यशोधरा काटजू, इन्दु और हीरालाल आदि अभिनय कर रहे हैं। 'दामन' के बाद यह कम्पनी 'दरबार' फिल्म बनायेगी, जिसकी मुख्य भूमिका के लिये सुन्दरी नसीम, गीता-बाली, अजीत और हीरालाल को चुना गया है।

रा० स्व० संघ (दिल्ली) का वार्षिकोत्सव

[पृष्ठ ६ का शेष]

इस प्रकार की आदतें लगाईं कि वह अपने व्यक्तिगत जीवन में सामूहिक जीवन को अनुभव करे। व्यक्तिगत जीवन से अपने घर, मुहल्ला, नगर और प्रान्त की सीमाओं को तोड़ता हुआ वह भाव देशव्यापी हो गया।

संघ-समाज एक हो

लोग यह कहते हैं कि आज जितना भाईचारे का भाव संघ के स्वयंसेवकों में दिखाई देता है वैसा अन्यत्र नहीं है। किन्तु हम तो स्वर्गीय डाक्टर जी के इस कथन के अनुसार कि मैं संघ को किसी संप्रदाय के रूप में चलाना नहीं चाहता, मैं तो चाहता हूं कि संघ और हिन्दू-समाज एक रूप हो— यह कहते हैं कि अभी तक संभव है कि संघ के प्रत्येक स्वयंसेवक में इतना व्यापकभाव न आया हो, तो भी इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए हम प्रयत्नशील हैं कि वह प्रेम का भाव स्वयंसेवकों तक ही सीमित न रहकर सारे समाज के प्रति हो।

इसी भाव के कारण आपत्ति के समय में संघ के स्वयंसेवकों ने प्राणों की चिन्ता न करके समाज की रक्षा करने का कार्य किया और जब दूसरों के द्वारा भ्रामक परिस्थिति में भड़काये जाने से समाज संघ के स्वयंसेवकों पर कुपित हुआ तो इसी समाज के प्रति प्रेम तथा एकता के भाव के कारण "ये लोग तो हमारे ही हैं, भ्रम दूर हो जायगा" यह विचार कर उन्होंने पूर्णतया शान्त आचरण किया।

भविष्य

भविष्य के लिये भी जिन उद्दिष्टों को स्वर्गीय डाक्टर जी ने हमारे सामने रखा था, उन्हीं की ओर हम देखें और उन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न करें। सब प्रकार के गुणों का विकास करते हुए अपने गुण तथा शक्ति से दीन हीन अपढ़ पड़े हुए अपने समाज की सेवा में जुट जाय और उसम भी ये गुण निर्माण करें यह आवश्यक है।

प्रायः मनुष्य केवल खाने के लिए नहीं किसी उद्देश्य के लिए जीवित रहता है। अनकों लोगों द्वारा सर्वस्व देकर चलाया जा रहा यह कार्य इसलिए नहीं चल रहा कि जनता को शारीरिक प्रदर्शन दिखाये जायें। वे तो सरकस में बहुत अच्छे देखे जा सकते हैं। ये व्यायाम तो शारीरिक दृढ़ता लाने और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने के लिये हैं। इन समस्त कार्यक्रमों के पीछे हिन्दूसमाज को एकात्मता की प्राप्ति ही मुख्यभाव है। स्वयंसेवक आज इस दृष्टि से विचार करें और इस उद्दिष्ट की सफलता का दिन शीघ्र से शीघ्र लाने का प्रयत्न करें

डा० मुकर्जी का भाषण

उत्सव के अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने कहा कि संघ को देखकर यह प्रतीत होता है कि आज भी आपको २५ वर्ष पूर्व के डाक्टरजी के आदर्श स्मरण हैं। आप पर कुछ समय पूर्व जो आपत्ति आई थी उसमें घटी हुई आपकी शक्ति अब पुनः बढ़ गई है। ये शक्ति क्यों बढ़ी? २५ वर्ष पूर्व डाक्टर जी ने जो उद्देश्य रखे थे—उस समय स्वतन्त्रता नहीं आई थी—उनमें ये विचार मुख्य था कि स्वतन्त्र होने पर भी शक्ति कहां से आयेगी। आज हिन्दुओं को स्वतन्त्रता मिली किन्तु हिन्दुओं के आदर्शों को कोई स्थान नहीं मिला है।

संघ में राजनीति को कोई स्थान नहीं है। राजनीति तो जरूर आयेगी। आज प्रत्येक देशवासी के लिये राजनीति आवश्यक है। किन्तु यह बात भी ठीक है कि राजनीति ही सब कुछ नहीं है। हमारे देश के लोगों में एकता का भाव लाना, उन्हें संगठित करना बहुत आवश्यक है। आज देश में कितने भेदभाव, कितने झगड़े दिखाई देते है। उन्हें दूर करना आवश्यक है।

आज यहां हिन्दुओं के अलावा मुसलमान, ईसाई आदि भी हैं। जब हिन्दू संगठन की बात की जाती है तो आवाज उठती है कि शेष नागरिकों का क्या होगा। भारत के अनुकूल यदि उनकी चिन्तनधारा रही तो उन्हें डर का कोई कारण नहीं है। किन्तु यथार्थ में ऐसा है नहीं। इस बात का परिचय पाकिस्तान बनने पर मिला। अंग्रेजों ने पाकिस्तान इसीलिये बनाया कि उन्हें भय था कि अखण्ड भारत का तेज संसार में अनुपम होगा। इसीलिये आन्तरिक झगड़े चलाने के लिये ये दो टुकड़े किये गये।

अखंड भारत

आगे क्या होगा यह कहना कठिन है। किन्तु मेरा दृढ़ विश्वास है कि एक ऐसा समय अवश्य आयेगा कि ये देश अखण्ड होगा। यह हिन्दुओं के लिए ही नहीं मुसलमानों के भी हित में है। भारत की उन्नति तभी हो सकेगी जब पाकिस्तान नष्ट होकर भारत एक हो जायेगा।

इस देश में जो भी रहे उसे भारत को अपनी माता समझना होगा। हिन्दू राष्ट्र की बात सुनकर लोग समझते हैं कि जैसे पाकिस्तान द्वारा बनाये जा रहे मुस्लिम राष्ट्र में वहां अन्य किसी का रहना कठिन हो रहा है, वैसा ही भारत में होगा। जो ऐसा कहता है मैं कहूंगा उसे हिन्दुत्व का ज्ञान नहीं है। सारी मानवता हिन्दुत्व में आ जाती है।

जब हिन्दुओं में दुर्बलता आई तो मुसलमान भी आए, अंग्रेज भी आए। दोष उनका नहीं हिन्दुओं का था। यदि हममें एकत्व बोध होता तो वे न आने पाते। आज भी यदि हिमालय से कन्याकुमारी तक फैले हुए हिन्दुओं को एकत्व बोध हो जाये तो इस देश के समान संसार में और कोई नहीं होगा। आज आवाज से नहीं कार्य से, सेवा से, त्याग से हम ये दिखावें कि सारे हिन्दू एक हैं।

संघकार्य का महत्व

संघ ने जो काम किया है वह राजनीतिक दृष्टि से भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। यदि देश पर कोई आपत्ति आई तो वह बाहर से इतनी नहीं जितनी अन्दर से आयेगी। आज देश में प्रेम तथा स्वतन्त्रता की रक्षा करने का भाव बढ़ा कर उस आशंका को नष्ट करना आवश्यक है।

आज देश के सामने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक समस्यायें हैं। कोई भी सरकार शक्ति के बल पर नहीं रह सकती। सेवा के मार्ग से ही वह रह सकती है। किन्तु सरकार के भरोसे बैठे रहने से भी काम नहीं चलेगा। हमें काम करना है। आर्थिक स्थिति आज भयंकर रूप से हमारे सामने आ गई है। हम किस मार्ग से चलें कि खाना मिले, निवास मिले, अकाल न आये। काला बाजार, स्वार्थ, आपसी संघर्ष, आलस्य आदि दुर्बलताओं ने हमारे समाज को कलुषित, दुर्बल कर दिया है। इन्हें दूर करना आवश्यक है। सरकार पर छोड़ना ठीक नहीं। वह तो एक मशीन है। वह यदि गलत मार्ग पर चले तो उसे भी ठीक करना पड़ेगा।

नैपाल व तिब्बत

समाज की शक्ति और विचार को दृढ़ करने का कार्य भी संघ को करना चाहिये। केवल हिंदुत्व की बात करने से काम नहीं चलेगा। हमें सभी बातों को एक संगठित रूप में देखना होगा। आज तिब्बत पर संकट आया हुआ है। नैपाल में उपद्रव चल रहा है। नेपाल ही एक राज्य है जिसे हम हिन्दू राज्य कह सकते हैं। आज यह आवश्यक है कि वहां के लोगों को सबक आ जावे। वहां यदि झगड़ा रहा तो तिब्बत में बढ़ते हुए कम्यूनिस्टों का राज्य वहां आ जायगा। नैपाल को दुर्बल करने से भारत का भी मंगल नहीं होगा।

आन्तरिक स्थिति

हमें अपने देश की आन्तरिक स्थिति भी ठीक से देखनी होगी। यदि हमने ठीक से न देखा तो अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति बिगड़ने पर रक्षा करना कठिन होगा। पाकिस्तान से आये हुए लोगों की स्थिति भयानक है। वहां कभी और क्या होगा यह भी नहीं कहा जा सकता।

भगवान न करें, किन्तु यदि आज कोई महायुद्ध शुरू हो जाये, भारत उस में आ पड़े, तो भारत की रक्षा का दायित्व कौन लेगा? ये दायित्व हिंदुओं पर आयेगा। मुसलमान भी सहायता करेंगे किन्तु दायित्व हिन्दुओं का है। वह दायित्व हमारे सामने आ गया है। अतः आज सारे हिन्दुओं को एक करना आवश्यक है।

जनमत का आदर

हम देश में गणतन्त्र चाहते हैं। एक दल का राज्य चलने से गणतन्त्र नष्ट हो जावेगा। इससे फासिज्म आता है। गणतन्त्र का अर्थ यही है कि जनमत के साथ सरकार कार्य करे। सभी अपना मत एक दूसरे के सामने रखें और सहयोग करें। यह परस्पर का सहयोग ही गणतन्त्र का आधार है। संसार में भी यह सहयोग होने पर ही शान्ति रह सकेगी।

आज यह मालूम देता है कि हमारा रास्ता बन्द हो गया है। किन्तु यह बात नहीं है। १२ वर्ष पूर्व जब मेरी डाक्टर जी से भेंट हुई थी तो उन्होंने ये आदर्श सामने रखे थे। आज डाक्टर जी चले गये, किन्तु आदर्श आज भी हमारे सामने हैं। उन्हीं को लेकर चलना होगा। आपत्ति यदि आई तो उसमें होकर भी जाना पड़ेगा। किन्तु उसमें से निकल कर हम संसार के सम्मुख यशस्वी रूप से खड़े होंगे, यह आत्मविश्वास आवश्यक है। संघ अपने कार्य में यशस्वी हो इसमें मेरी हार्दिक भावनाएं आपके साथ हैं।

] पृष्ठ १० का शेष]

गत पित्त रूप उष्मा सारे शरीर में व्याप्त होकर ऊर्ध्वगामी होती हुई नेत्रों में पहुँच कर उष्णता का अनुभव कराती है। इस ऊष्मा की शान्ति के लिए ही स्त्रियां इन दिनों हरी चूड़ियां पहनती हैं। हरा रंग गर्मी को शान्त करने वाला है।

प्रसव के बाद स्त्रियां लाल रंग की चूड़ियां पहना करती हैं, क्योंकि उन दिनों प्रसूता को अनेक वायु के विकार होने की सम्भावना रहती है। अतः लाल रंग पित्त को बढ़ाने वाला होने के कारण वायु को शान्त करता है, जिससे उन अनेक वायु के रोगों के होने की सम्भावना कम रहती है।

संसद में बतलाया गया—

● भारत-पाकिस्तान का पूर्वी और पश्चिमी सीमाओं पर जुलाई-अक्तूबर १९५० की अवधि में पाकिस्तानी फौज एवं पुलिस के ८१ धावे हुए। इनमें चार व्यक्ति मारे गये तथा १२ व्यक्ति बन्दी किये गये। अनुमान है कि २४४१ रुपये की सम्पत्ति की हानि भी हुई।

सीमान्त धावों के बारे में नेहरू-लियाकत वार्ता में कोई चर्चा नहीं की गई।

२९ मामलों में विरोध पत्र भेजा गया था, किन्तु मुआवजे का कोई दावा नहीं किया गया, पर जो माल या पैसा धावा करने वाले ले गये, उनकी वापसी की मांग अवश्य की गई। पाकिस्तानी अधिकारी इन घटनाओं को अपने ही रूप में पेश करते हैं और उन्होंने उलटा विरोध किया है।

— प्रधान मंत्री

● दिल्ली में चोरबाजारी के २२० मामलों में से १०० मामलों में सजा दी जा चुकी है और १२८ अदालत में हैं। शिलांग में ८३ मामले सामने आये थे। अभियुक्तों को सजा दी गई और लाइसेंस छीन लिए गये।

— श्री विश्वनाथ राव

● हीरा कुंड बांध से १९५२-५३ से बिजली, ५३-५४ से सिंचाई योजना चालू हो जायेगी। भाखरा के लिए एक नियंत्रण बोर्ड कायम हो गया है और यह १९५५-५६ तक पूरा होगा।

श्री गाडगिल

● १ नवम्बर १९५० तक कमीशन ने ४१८ लाख रुपये की ऐसी आय का पता लगाया है, जो छिपी हुई थी और उसकी खोज पर किसी ने आपत्ति प्रकट नहीं की। इस पर ११६ लाख रुपये इन्कमटैक्स लगता है। इसी समय तक विवादास्पद छिपी हुई आय पर २३ लाख रुपये तथा अविवादास्पद छिपी आय पर २१ लाख रुपये टैक्स के रूप में वसूल हो चुके हैं।

अर्थ मंत्री ने बतलाया कि १ मार्च १९५० से १ नवम्बर १९५० तक आय-कर जांच कमीशन पर २६०६८० रुपये खर्च हो चुके हैं।

● अप्रैल १९५० से सितम्बर १९५० तक दोनों देशों के बीच ४९ करोड़ रुपये मूल्य का व्यापार हुआ, जब कि गत वर्ष इन्हीं दिनों में ९९ करोड़ रुपये का हुआ था। चूंकि अप्रैल १९५० से अक्तूबर १९५० तक विशेष व्यापारिक समझौते के अनुसार व्यापार हुआ था, इसलिए उससे यह पता नहीं चलता कि पाकिस्तानी रुपये के अवमूल्यन के फलस्वरूप क्या असर रहा।

— श्री देशमुख

● हाईकोर्ट के निर्णय से यह प्रकट होता है कि पत्रों के मतप्रकाशन पर लगाई गई कोई भी पाबन्दी संविधान की १९ वीं धारा के विपरीत होगी।

राजगोपालाचार्य

● माही में कुछ व्यक्तियों को दी गई सख्त सजाओं के खिलाफ भारत ने जो विरोध प्रदर्शित किया था, उस पर फ्रांसीसी सरकार से प्राप्त हुआ उत्तर सन्तोषजनक नहीं है, इसलिये भारत सरकार इस विषय में आगे कार्रवाई करने के प्रश्न पर विचार कर रही है।

—प्रधान मंत्री

● भारत सरकार का कोई मुस्लिम कोडबिल संसद में विचारार्थ प्रस्तुत करने का इरादा नहीं है। सारे देश के एक जैसे दीवानी कानून लागू करने की, जैसा कि संविधान के निर्देशात्मक सिद्धान्तों में प्रतिपादित किया गया है, मेरी निजी इच्छा है, किन्तु मेरे पास समय नहीं है।

—श्री अम्बेडकर

● केन्द्र-शासित इलाकों में पिछले ७ मास में चोरबाजारी के १२६ मामलों के रिपोर्ट मिली। इनमें से १०४ मामलों के विषय में अदालत में चुनौती दी गई है, जिन में से २१ मामलों से सम्बन्धित व्यक्तियों को दण्डित किया जा चुका है। ७९ मामले अभी विचाराधीन हैं। दिल्ली में चोरबाजारी के ३८ मामले पकड़े गये हैं। २१ मामलों पर चुनौती दी गई, जिसमें से दो मामलों पर दण्ड दिया जा चुका है और ४९ मामले विचाराधीन हैं।

—श्री महताब

● बजट के १७,'० ००,००० रुपयों के अलावा विस्थापितों के लिये इस वर्ष १२,३२,००,००० रुपये की पूरक मांग की आवश्यकता होगी। २३, ३२, ००,००० रुपयों में से १३ करोड़ रुपये पूर्वी पाकिस्तान के शरणार्थियों के लिए खर्च किये जायेंगे।

पाकिस्तान में निष्क्रान्तों की संपत्ति कितनी कीमत की है, इसका सही अनुमान तब तक नहीं लगाया जा सकता जब तक विस्थापितों के दावों की जांच न कर ली जाय।

—श्री अजीतप्रसाद

● सन १९५०-५१ में १४ लाख ७९ हजार एकड़ अतिरिक्त भूमि में कपास बोई गई, जिसमें ९ लाख ७ हजार एकड़ भूमि में अच्छी किस्म की कपास तथा ४ हजार एकड़ भूमि में लंबे रेशे की कपास बोई गई।

कपास की दृष्टि से अमरीका, सन १९-२० समाप्त होने वाले वर्ष में लगभग १२ लाख २० रुई की गांठों का ११ करोड़ २६ लाख रुपये के मूल्य पर आयात किया गया।

—श्री मुंशी

● बाढ़ तथा प्राकृतिक आपदाओं के फलस्वरूप होने वाली हानि से देश में ६०००००० टन अन्न की कमी हुई।

—श्री वेंकटेश राव

● भारत में अनुमानतः ४१९००-०००० एकड़ भूमि कृषियोग्य है, यह अनुमान लगाया गया कि इस समय देश में कम से कम ९०००००० एकड़ भूमि बगैर खेती के पड़ी है तथा जिसे कृषि योग्य बनाया जा सकता है।

अब क्योंकि खाद्य-स्वावलम्बन के लिये समय निर्धारित कर दिया गया है अतः ६८८८९२ एकड़ अतिरिक्त भूमि पर खेती आरम्भ कर दी गई है। केन्द्रीय ट्रैक्टर संस्था ने आगामी छः वर्षों में लगभग ३०००००० एकड़ भूमि को कृषि योग्यबनाने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इस समय वस्तुतः कुल २५२६०००-०० एकड़ भूमि पर खेती की है।

—श्री मुंशी

● पुनर्विभाजन के फलस्वरूप भारतीय रेलों की नौकरियों में जो १९ हजार स्थान उत्पन्न हुए हैं उन्हें विस्थापितों के लिए सुरक्षित किया गया है। ३० सितम्बर सन १९५० तक २१०८ स्थानों की पूर्ति विस्थापितों द्वारा की गई है। इसके अतिरिक्त २९१ विस्थापित व्यक्ति शिक्षण पा रहे हैं। अतः उन्हें शिक्षण की समाप्ति पर नौकरियों पर लगा दिया जायगा।

—श्री आयंगर

● दिल्ली में १०१ समाचार पत्र-प्रतिनिधियों की प्रामाणिकता के पत्रक अगस्त १९४७ से अब तक रद्द किये जा चुके हैं। इनमें से १७ प्रतिनिधियों की प्रामाणिकता रद्द कर दी गई और ८४ प्रतिनिधि दिल्ली में नहीं रहे, इसलिये उनकी प्रामाणिकता वापिस ले ली गई।

— श्री देशमुख

● भारत में चतुःसूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत अब तक ३,२८,४२९ डालर की टैकनिकल सहायता की मांग की है और आशा है कि ये सब मांगें पूर्ण कर दी जायेंगी। यह सब सहायता संयुक्त राष्ट्र संघ की विशिष्ट एजेंसियों के जरिये दी जायेगी।

● भारत ने तीन विशेषज्ञ खाद्य व कृषि संघ से दो विश्वस्वास्थ्य संघ से १२ शैक्षणिक वैज्ञानिक व सांस्कृतिक संघ से, तथा दो अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ से मांगे हैं और १४-१९ प्रशिक्षार्थियों को भारत से ट्रेनिंग के लिये भेजने का प्रस्ताव किया है।

— श्री देशमुख

● सरकार ने विश्व बैंक से कहा है कि वह, रेलवे इंजन खरीदने, जमीन को उपजाऊ बनाने, अमेरिकन प्रणाली दामोदर घाटी योजना के शेष भाग, भाखरा व नांगल योजनाओं और इस्पात के कारखाने बनाने की योजनाओं की बारीकी से जांचबीन कर ले। केवल पहली तीन योजनाओं के लिए विशिष्ट कर्जों की मांग की गई थी, जिनमें से रेलवे इंजन खरीदने के लिए ४ प्रतिशत ब्याज की दर पर ३,४०,००,००० डालर का ऋण ट्रैक्टर खरीदने के लिए ३॥ प्रतिशत ब्याज की दर पर १ करोड़ डालर का ऋण तथा बोकारो, कोनार योजना के लिए ४ प्रतिशत की दर पर १ करोड़ ८९ लाख डालर ऋण दिया। बैंक से और किसी ऋण के लिए अभी नहीं दी गई है।

— श्री देशमुख

वीर अर्जुन

सचित्र साप्ताहिक

४ आना

अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्

वर्ष १७] दिल्ली, रविवार २ पौष सम्वत् २००७ [अङ्क ३५

हमारी दूषित शिक्षा-प्रणाली

भारत के विदेशी शासन में जो सबसे काले अध्याय रहे हैं, उनमें से एक है उसका शिक्षाविभाग। ब्रिटिश सरकार की शिक्षा नीति की त्रुटियों की ओर बहुत कम महापुरुषों का ध्यान गया। इसका कारण यह था कि जिन शिक्षितों को सरकारी नीति की त्रुटियों का निरीक्षण करना था, वे स्वयं ही अत्यन्त दोषपूर्ण शिक्षणालय के कारण अपना दृष्टिकोण शुद्ध नहीं रख सके। भारत के सरकारी शिक्षालयों का उद्देश्य वस्तुतः शिक्षा का प्रसार न था। सरकारी दफ्तरों, नौकरियों और अदालतों के योग्य क्लर्क तथा वकील आदि तैयार करना ही उनका उद्देश्य था। अपने देश के रहन-सहन, अपने देश की संस्कृति और अपने देश के इतिहास आदि सबसे अपने देश के प्रति प्रेम पैदा होता है और इसीलिए भारतीय शिक्षालयों को इन सबसे बिलकुल दूर रखा गया। राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसाद ने दिल्ली विश्वविद्यालय में दीक्षान्त भाषण देते हुए इस स्थिति पर अच्छा प्रकाश डाला है। वे कहते हैं कि "इसीलिए भारत के लगभग सभी विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी भाषा शिक्षा का माध्यम रखी गई और अंग्रेजी साहित्य अनिवार्य विषय रखा गया।" सचमुच यह विडम्बना की बात थी कि "भारत के रहने वालों का अपना साहित्य पढ़ना तो केवल ऐच्छिक विषय था, पर अंग्रेजों का साहित्य पढ़ना था अनिवार्य।...... इन विद्यालयों के बाहर उन्हें अपना दैनिक जीवन, और अपने पूर्वजों की आस्था, विश्वास, संस्कृति और भाषा छोड़ आनी पड़ती थी।" हमारी शिक्षाप्रणाली की स्थिति का अत्यन्त मार्मिक वर्णन राष्ट्रपति ने इन शब्दों में किया है — "यह ठीक है कि भारत की ही भूमि पर और भारत के ही आकाश के नीचे इन विद्यालयों की दीवारें और इमारतें बनी हुई थीं, किन्तु उनमें भारत न था, उनमें था या तो इंगलैंड या योरोप।" इस प्रकार के शिक्षालयों ने जो मानसिक दासता उत्पन्न की थी, वह भारत की राजनैतिक और आर्थिक पराधीनता से भी अधिक कठोर और उग्र थी और यही कारण है कि भारत राजनैतिक दासता से मुक्ति पाकर भी मानसिक दासता में अधिकाधिक उलझता जा रहा है। हमारे शिक्षणालयों के अधिकारी उस उलझन से अब तक निकल नहीं सके हैं, और इस से भी अधिक विडम्बना यह है कि उससे मुक्त होने की इच्छा भी उत्पन्न नहीं हुई। १४ वर्ष बाद अंग्रेजी राजभाषा नहीं रहेगी, इस ओर कदम उठानेका नतीजा यह होगा कि ८-१० वर्ष बाद ही नई नियुक्तियों के लिए अंग्रेजी का ज्ञान अनिवार्य नहीं रहेगा, इसलिए आज ही हमें निश्चय करना है कि माध्यमिक कक्षाओं में अंग्रेजी का अनिवार्य नहीं रहना चाहिए, किन्तु शिक्षण अधिकारी इस दिशा में सोचना भी अनुचित समझते हैं।

अंग्रेज सरकार की शिक्षा नीति का एक बहुत बड़ा दुष्परिणाम, जिस ओर राष्ट्रपति ने ध्यान खींचा है, यह हुआ कि ग्रामों का पूर्णतया शोषण हो गया। विश्वविद्यालयों का शिक्षित अपने देश भारत से, जो ग्रामों में निवास करता है, सर्वथा पृथक हो गया। "भारत के नगर नगर में ऐसी अभेद्य दीवार खड़ी होने लगी, जिसकी एक ओर इंगलैंड के मानस पुत्र थे और दूसरी ओर भारतीय। नगर और ग्राम के बीच बढ़ गई और ग्रामों के कुशाग्र बुद्धि लोग ग्रामों को छोड़ कर नगरों में आ बसने लगे। फल यह हुआ कि जैसे सोख्ता पानी को पूरी तरह सोख लेता है, उसी तरह ये विश्वविद्यालय बुद्धि कुशाग्रता को ग्रामों से सोख लेने लग गये और वहां केवल वही लोग बच गये, जो बुद्धि में या चातुरी में पिछड़े हुए रहने लगे। इस प्रकार इस शिक्षा प्रणाली के कारण हमारे ग्राम अंधेरे और अशिक्षा के घर बन गये। इस तरह जिसका काम जाति को अमृतदान करना था, वही उसे विष का प्याला पिलाने लगे।"

राष्ट्रपति ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली का जो सुन्दर विवेचन किया है, वह वस्तुतः ठीक दिशा में किया गया विचार है। किन्तु प्रश्न यह है कि इस प्रकार के विचार क्या केवल भाषणों तक सीमित रहेंगे अथवा कभी शिक्षा विभाग उन्हें क्रिया में भी परिणत करेगा?

★

दो उपयोगी विधेयकों की हत्या

यह बहुत लज्जा की बात है, जब कि भारत अभी उपयोगी पशुओं के वध-निषेध पर विचार ही कर रहा है, पाकिस्तान बहुत पहले ही इस सम्बन्ध में कानून बना चुका है। नार्वे और स्वीडन में १८ वर्ष से कम वयस वाले बालकों को मुफ्त दूध दिया जाता है। इंगलैण्ड में १५ वर्ष से कम वय के बालकों को मुफ्त दूध मिलता है। भारत में प्रति व्यक्ति दूध का खर्च मुश्किल से पांच औंस है। इसलिए यह स्वाभाविक था कि भारत में उपयोगी पशुओं के वध पर आज से बहुत पहले ही यह कानून बन जाता, किन्तु श्री ठाकुरदास भार्गव द्वारा प्रस्तुत इस बिल की जो दुर्गति सरकार के हाथों हुई, वह अत्यन्त खेदजनक है। भारत सरकार ने स्वयं एक विधेयक पेश करने का वचन दे कर श्री भार्गव के प्रस्तुत विधेयक की हत्या कर दी। सरकार का बिल संभवतः बहुत व्यापक हो और उसमें अनेक दोषों का निवारण भी हो, किन्तु इस प्रश्न को अनिश्चित काल के लिए स्थगित करना देश के लिये घातक होगा। उपयोगी पशु अन्नसंकट में बहुत सहायक हो सकते हैं। एक बार पशुवध को कानूनन रोक कर लाखों पशुओं की रक्षा की जा सकती थी और फिर बाद में इस कानून की कमियों को दूर किया जा सकता था। किन्तु सरकार ने अपनी स्वाभाविक विधि से इसे रोक दिया।

वनस्पति घी के प्रतिषेध करने वाले बिल की भी सरकार ने हत्या कर देश के प्रति घोर अपराध किया है। यह निश्चित है कि लोकमत वनस्पति घी के विरुद्ध है, म० गांधी तो इसके घोर विरोधी थे, किन्तु पं० नेहरू के कुछ सरकारी परामर्शदाता इसे हानिकर नहीं मानते, इसलिए इसे बनने दिया जायगा और देश के स्वास्थ्य को भारी क्षति पहुंचाई जाती रहेगी। बात बात में म० गांधी की दुहाई देने वाली कांग्रेस सरकार किस तरह गांधीजी की आत्मा का सम्मान करती है, यह इसका अच्छा उदाहरण है। वनस्पति घी की समस्या केवल यह नहीं है कि उसे विशुद्ध घी में मिला कर धोखा दिया जाता है, किन्तु यह भी है कि वह स्वयं स्वास्थ्य के लिए हानिकर है। सरकार के वैज्ञानिक परामर्शदाताओं पर श्री मथ्थ्यूाला जैसे गंभीर विचारक खुलेआम आक्षेप करते हैं कि वे वनस्पति निर्माताओं के हाथ में खेल रहे हैं।

मास्टर तारासिंह और हिन्दू

मास्टर तारासिंह ने जेल से छूटते ही हिन्दू सिख समझौते की बातचीत की है। हिन्दू महासभा के अध्यक्ष डा० खरे ने भी उनका स्वागत किया है। आज पंजाब का हिन्दू मा० तारासिंह की घोर सांप्रदायिकता से चिन्तित है, और पंजाब की सबसे बड़ी समस्या यही है। यदि किसी तरह सिखों और हिन्दुओं में कोई ऐसा समझौता हो सके जो दोनों के लिए मान्य हो, तो सचमुच पंजाब की एक बड़ी समस्या हल हो जायगा, फिर चाहे पंजाब पर कांग्रेसी शासन करे अथवा गैर कांग्रेसी। किन्तु हमें भय है कि मा० तारासिंह जिस सांप्रदायिकता के आधार पर चल रहे हैं, वह कभी हिन्दुओं की न्याय्य मांगों को भी स्वीकार नहीं करने देगी। पंजाब की भाषा आज पंजाबी और हिन्दी दोनों हैं, दोनों को राजभाषा मान कर चलना होगा, केवल पंजाबी भाषा का पृथक् प्रान्त पंजाब को मानना सत्य की हत्या है और आज तो यह भी संदिग्ध है कि पंजाब के बहुसंख्यक नागरिकों की भाषा पंजाबी है। पर मा० तारासिंह न तो पंजाबी को नागरी लिपि में स्वीकार करते हैं और न वे पंजाब में 'पंथ खतरे में है' का नारा छोड़ सकते हैं। ऐसी स्थिति में तारासिंह-खरे समझौता पंजाब में विशुद्ध राष्ट्रीयता के आधार पर हो सकता है और ऐसा करना स्वयं मा० तारासिंह की सांप्रदायिकता की हत्या है। हम चाहते हैं कि मा० तारासिंह को सुबुद्धि आये और वे सीमाप्रान्त की मुस्लिमलीगी सरकार में सहयोग की भांति केवल विरोध के लिए समझौता न करें, वस्तुतः पंजाब में राष्ट्रीयता की स्थापना करें। किन्तु इसके साथ ही हम डा० खरे से भी यह कहना आवश्यक समझते हैं कि वे यदि संसद् या विधान सभा की कुछ सीटों के लिए कोई ऐसा समझौता स्वीकार कर लेंगे, जिससे पंजाब में सिख सांप्रदायिकता कायम रही, तो वे उस प्रान्त का घोर अहित करेंगे।

कोरिया की स्थिति

कोरिया सम्बन्धी युद्धस्थिति अभी तक वैसी ही विषम बनी हुई है। एटली-ट्रूमैन चर्चा और सुरक्षा समिति व तत्सम्बन्धी अन्य संस्थाओं और विभिन्न सरकारों की कूटनीतिक चर्चाएं स्थिति को सरल करने में असमर्थ हुई हैं। इसका कारण यह है कि इन कूटचर्चाओं के पीछे कोई ऐसा बल नहीं है, जो स्थिति को बदल सके। चीनी सेनाएं युद्धक्षेत्र में लगातार आगे बढ़ रही हैं, और जब तक उनका आगे बढ़ना नहीं रोका जायगा, तब तक कूटनीतिक चर्चाएं कुछ फल नहीं ला सकतीं। चीन, रूस, और अमेरिका आज कोई भी संधि समझौते के लिए उत्सुक नहीं है। कोई भी विश्व शान्ति नहीं चाहता, और इसलिए किसी को केवल चर्चाओं से समझाया नहीं जा सकता। जब तक चीन को यह मालूम नहीं होगा कि युद्ध का परिणाम उसके लिए खतरनाक भी हो सकता है, तब तक वह अपनी बातों पर जो स्थिति को विकटतर करने वाली हैं, अड़ा रहेगा।

अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन

कोटा में आइये

★ प्रो० रामचरण महेन्द्र ★

राजस्थान के प्रमुख नगर कोटा में २६ से २९ दिसम्बर तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन का ३८ वां अधिवेशन सम्पन्न होने जा रहा है।

वर्षों से कोटा हिन्दी साहित्य का केन्द्र रहा है। यहां साहित्य के प्रचार एवं प्रसार का कार्य श्री भारतेन्दु समिति (स्थापित १९२६) द्वारा हुआ है। जिस समय राजस्थान की एक मात्र साहित्यिक संस्था साहित्य समिति भरतपुर अपने दिन गिन रही थी, उस समय कोटा के कुछ उत्साही साहित्यिकों ने मिल कर १९२६ में श्री भारतेन्दु समिति की स्थापना की थी। कुछ वर्षों तक समिति का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्षेत्र कोटा तक ही सीमित रहा, किन्तु शीघ्र ही उसने राजस्थान में अपना प्रमुख स्थान बना लिया। समिति के साहित्यिक आयोजनों ने कोटा तथा हाड़ोती प्रदेश में अनेक कवियों, लेखकों एवं कलाकारों का निर्माण किया। रात्रि-पाठशालाओं का संचालन तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओं का प्रबन्ध करके हिन्दी पढ़ने तथा हिन्दी व्यक्तियों को उत्साहित कर राजस्थान में अभूतपूर्व कार्य किया है।

प्रसिद्ध साहित्यकार

कोटा, हाड़ोती तथा राजस्थान प्रान्त के लेखकों, कवियों तथा कलाकारों की प्रतिभा को प्रकाश में लाने का उद्योग समिति करती रही है। इस समय समिति को सभी प्रमुख विद्वानों का सहयोग प्राप्त है। इस वर्ष समिति के प्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री हनुमानप्रसाद सक्सेना, साहित्य रत्न के असामयिक स्वर्गवास से बड़ी क्षति उठानी पड़ी है। फिर भी उनके अधूरे कार्य को पूरा करने में सर्वश्री शम्भूदयाल सक्सेना, श्री नारायण वर्मा, उदयजी राठोड़, गुलाब चन्द, केदार नाथ, मिलापचन्द्र, श्यामजी रघुनाथसिंह, माथूलाल जैन, राजेन्द्र सक्सेना, विपिन बिहारी, कल्याणमल बांठिया इत्यादि प्रसिद्ध साहित्यज्ञ भी कार्यशील हैं। कोटा के धन सम्पन्न साहित्यकारों में राज्यरत्न कुंवर दुर्गासिंह बाफना एम ए, श्री कविराजा दुर्गादान जी, और श्रीधरलालजी सहयोग दे रहे हैं। यहां के साहित्यिकों को उनका सहयोग बराबर मिलता रहा है। इनके अतिरिक्त डा० मथुरालाल शर्मा, डा० अरविन्द [illegible], डा० फतहसिंह, कवि सुधीन्द्र, डा० चन्द्रधर, श्याम जोशी, कमलाकर, राजेन्द्र सक्सेना, माथूलाल जैन, शिवदयाल राजावत हीरालाल जैन अमित हरि, रामचरण महेन्द्र, सदाशिव पाठक, मगन बिहारी जगदीश [illegible] वादी गोपालदत्त शोत, हरिवल्लभ इत्यादि साहित्यिक सरस्वती की मूक साधना में लग्न हैं। विज्ञापन की दुनिया से दूर रह कर ये अपना साहित्यिक कार्य कर रहे हैं। कोटा से "लोक सेवक" किसान सन्देश, राजस्थान, विकास, भारतेन्दु पंचायती राज निर्भीक, जय हिन्द, इत्यादि साप्ताहिक पत्र पत्रिकायें भी प्रकाशित होती हैं।

स्वर्ग का एक कोना

प्राकृतिक दृष्टि से कोटा उद्यानों, तालाबों मयूरों का नगर है। यहां पर एक से एक सुन्दर प्राकृतिक दृश्य हैं। दर्शनीय स्थानों में अधर शिला, भीलबाबा की कुटिया, कण्व ऋषि का आश्रम, अभेड़ा, दुर्ग के दृश्य, पास ही प्रसिद्ध गढ़ रणथम्भौर, उम्मेद स्मारक, झाल्ते के महल, चम्बल नदी की प्राकृतिक शोभा दर्शनीय है। हरे भरे बाग, सरिता के रम्य तट, नगर के बाहर उद्यान से घिरा हुआ महान जलाशय, हर्ष मिले भावावेश में नृत्य करते हुए मयूर, चिड़िया-घर इत्यादि इसे स्वर्ग का एक कोना बनाते हैं। यहां की इमारतें छोटी होती हुई भी अपने पुरातात्विक महत्व को सुरक्षित रक्खे हुए हैं। कला के उत्कृष्टतम नमूने यहां मिल सकते हैं। यहां के भोले भाले भावुक निवासी अपनी पुरानी सांस्कृतिक, सुरुचिपूर्ण, परम्परा को स्थिर रखे हुये हैं। दूध, सब्जियों, फलों की बहुतायत है।

सम्मेलन के पंडाल का निर्माण स्थानीय हरबर्ट कालेज के विशाल प्राकृतिक शोभा से युक्त मैदानों में किया गया है। यह ध्यान रक्खा गया है कि जो द्वार बनाये जावें वे अतीत भारत के ऐतिहासिक गौरव को स्पष्ट करने वाले हों। मंच की पृष्ठभूमि में प्रसिद्ध साहित्यकारों के चित्र प्रदर्शन करने का भी प्रबन्ध है।

प्रतिनिधियों के मनोरंजन के लिये यथासम्भव राजस्थान का प्रतिनिधित्व करने वाले कार्यक्रम रखे जा रहे हैं। राजस्थान के लोक गीत, तथा लोकनृत्य इस क्षेत्र में विशेष आकर्षक रहेंगे। 'वाणी विहार' के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न प्रान्तों का प्रतिनिधित्व करने वाले एक नितान्त नवीन मौलिक और आकर्षक कार्यक्रम को प्रस्तुत किया जा रहा है। एक कला प्रदर्शिनी भी की जायगी।

★ श्री अरविन्द नाथ के अन्तिम दर्शन ★

कुछ सुझाव

★ श्री चिरंजीलाल माथुर ★

प्रतिवर्ष की भांति हिन्दी साहित्य सम्मेलन का ३८ वां अधिवेशन श्री जयचन्द्र विद्यालंकार की अध्यक्षता में २६ से २९ दिसम्बर को कोटा में सम्पन्न होने जा रहा है, जिसकी तैयारियां पूर्ण रूप से हो चुकी हैं। मैं कुछ सुझाव सम्मेलन के अधिकारियों के सामने रख रहा हूं।

सरकार ने हिन्दी को राष्ट्र भाषा घोषित करके अपना कर्तव्य निभाया है। अब उसे जनता की भाषा बनाना तो हमारा अपना काम है। सम्मेलन अपने प्रचार विभाग द्वारा कुछ ऐसा ठोस कार्य करे, जिससे हिन्दी वास्तव में राष्ट्र भाषा का स्थान ग्रहण कर सके। हम देखते हैं भारत के विभिन्न प्रान्तों ने भी हिन्दी को अपने प्रान्त की सरकारी भाषा घोषित कर दिया है फिर भी सरकारी कार्यालयों में हिन्दी की उपेक्षा होती है इसका मुख्य कारण यह है कि कर्मचारी अभी तक शासन के शब्दों का हिन्दी रूप नहीं जान पाये हैं। सम्मेलन ने एक शासन शब्द कोष प्रकाशित अवश्य किया है, लेकिन उसका मूल्य इतना अधिक रखा गया है कि साधारण कर्मचारी उसका उपयोग नहीं कर सकता, वह तो किताबघरों की शोभा बढ़ा सकता है। यदि सम्मेलन ऐसे शब्द कोष का मूल्य कम रखे, चाहे वह लागत से कम ही हो तो यह एक महान कार्य होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

सम्मेलन को हिन्दी के उदीयमान लेखकों को भी समय-समय पर प्रोत्साहन देना चाहिये। वह लोग निरुत्साह न हों और हिन्दी साहित्य की प्रगति व उन्नति बढ़ती जाय।

कुछ समय से अंग्रेजी की प्रसिद्ध पुस्तकों का हिन्दी कार्य आरम्भ हुआ है फिर भी अंग्रेजी के कई ऐसे उत्कृष्ट ग्रंथ हैं जिनका हिन्दी अनुवाद शीघ्र होना चाहिये।

कई प्रांतों के लोक गीतों का संग्रह अभी तक पूर्ण रूप से नहीं हो सका है, यदि उन्हें संग्रह कर लिया जाय तो हिन्दी की अनुपम निधि होगी। राजस्थान के लोकगीतों का संग्रह विद्यापीठ उदयपुर से हो रहा है, फिर भी साधनों की कमी से इस कार्य में शिथिलता आ जाती है। यदि रेकर्ड करने की मशीन मिल जाय तो यह कार्य अधिक अच्छा हो सकता है। अन्य प्रांतों में भी लोक गीतों का संग्रह आवश्यक है।

साहित्य सम्मेलन ने (आधुनिक कवि) नामक ग्रंथों का प्रकाशन आरम्भ किया था, अब शायद बन्द हो गया है। उसे पुन प्रकाशित करना आरम्भ करना चाहिये। यह एक महान निधि है।

कई लेखक व कवि प्रकाश में नहीं आ सके हैं, उनके कई ग्रन्थ छप भी चुके हैं। उन्हें हिन्दी जगत् के सामने लाना भी आवश्यक है

हिन्दी के कई लेखकों, कवियों और आलोचकों को आज प्रकाशक की आवश्यकता है, यदि एक प्रकाशन स्वतन्त्र ही खोल दिया जाय तो हिन्दी जगत् के सामने अनेक अनुपम ग्रंथ आ सकेंगे। प्रकाशक लोग तो केवल उन्हीं पुस्तकों का प्रकाशन करते हैं, जिससे धन की प्राप्ति हो सके। अतः कई उपयोगी पुस्तकें प्रकाश में नहीं आ पाती। राजस्थान में ही आज अनेकों उपयोगी हस्त-

[शेष पृष्ठ २९ पर]

विविध चित्रावलि

सरदार पटेल के रोग से देश में चिन्ता बढ़ रही थी, किन्तु अब वे स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं।

दिल्ली, विश्व विद्यालय की ओर से इस सप्ताह चिकित्सा में उपाधि प्राप्त करने वाली कुछ छात्राएं।

अटलांटिक संयुक्त सैन्य के प्रधान सेनापति जनरल आइजनहावर शीघ्र ही लन्दन में अपना मुख्य कार्यालय खोलने जा रहे हैं।

आचार्य नरेन्द्रदेव ने श्री चन्द्रभानु गुप्त के विरुद्ध अभद्र प्रदर्शन करने वाले मथुरा और आगरा के समाजवादियों से जवाब तलब करके नया आदर्श पेश किया है।

भारत सरकार के अर्थमन्त्री श्री चिन्तामन देशमुख ने पाकिस्तान से रुपये के अवमूल्यन का विरोध किया है।

आचार्य कृपलानी ने कांग्रेस के अध्यक्ष श्री टण्डन को सहयोग देने से पहले अध्यक्ष के चुनाव की जांच की मांग की है।

भारत में भूगर्भमापन की शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित किये जाने वाले दुरंगे टिकट की रूपरेखा।

प्रसिद्ध नीग्रो नेता डा० बुंचे को गत सप्ताह स्वीडन में नोबिल का शान्ति-पुरस्कार दे दिया गया।

साहित्यरत्न परीक्षोपयोगी लेख—

"शेखर — एक जीवनी" पर कुछ विचार

★ श्री जानकी वल्लभ

'शेखर—एक जीवनी' श्री अज्ञेय की उन कृतियों में से एक है, जिनके कारण हिन्दी जगत ने उन्हें एक सफल उपन्यासकार के रूप में देखा है। प्रस्तुत पुस्तक का कलेवर तीन वृहद् ग्रन्थों में समाविष्ट किया गया है, परन्तु इन तीनों ही भागों में एकसूत्रता है। लेखक के अपने शब्दों में, 'इन तीनों भागों में एक एकान्वता है; कालीन के रंग बिरंगे बाने को जैसे मंदे और सब्त बंटे हुए सूत का एकरंगा ताना धारण करता है और सहता है, उसी प्रकार जीवनी के तीन भागों की रंगीन गाथा में मेरे अभिप्रेत, मेरे कथ्य का एक तन्तु है, जो एक है, अविच्छिन्न।'

'शेखर' की रचना ने 'अज्ञेय' को हिन्दी साहित्य में श्रेय बना दिया है। कुछ विद्वानों ने उनकी इस रचना को जीवनी माना है और कुछ आलोचक इसे उपन्यास मानते हैं। परन्तु निष्पक्ष रूप से विचार किया जाय तो यह न तो जीवनी ही है और न उपन्यास ही। जीवनी इसलिए नहीं है, क्योंकि इसमें घटनाओं का तारतम्य नहीं है। उपन्यास इसलिए नहीं है, क्योंकि इसमें धारावाहिकता का अभाव है। 'शेखर' का लेखक मानसिक क्षितिज पर खड़ा हो कर जीवन की मीमांसा कर रहा है। मृत्यु का साक्षात्कार करने वाले साधक में एक अलौकिक दृष्टि उत्पन्न हो जाती है। इसी दृष्टि के आधार पर उसकी जीवनशैली में स्वर-लहरी उत्पन्न हो गई है। अतः औपन्यासिक तत्वों पर आधारित न होते हुए 'शेखर' मानव जीवन का आत्म-विवेचन है। जीवन के मनोवैज्ञानिक विकास का प्रत्यावलोकन है। परन्तु रचना के नामकरण के आधार पर यह मालूम होता है कि 'शेखर' के रचयिता को इसे 'एक जीवनी' पुकारना ही अभीष्ट है।

कुछ लोगों का मत है कि 'शेखर' श्री 'अज्ञेय' के निजी अनुभवों का प्रेत है, क्योंकि इसमें वर्णित लगभग सभी घटनाएं लेखक के जीवन से मेल खाती हैं। यह किसी हद तक ठीक भी है। लेखक के जीवन की छाया 'शेखर' के जीवन दर्शन पर अवश्य पड़ी है। भले ही लेखक और शेखर के जीवन की घटनाएं मिल रही हैं, परन्तु उनके अन्दर जिस प्रेरक शक्ति का—जिसका स्थान २ पर दर्शन होता है, उसके कारण यदि लेखक को ही शेखर मानने की भूल हो जाय तो कोई बड़ी बात नहीं। इस झमेले को लेखक ने अपनी भूमिका में स्पष्ट कर दिया है। उन्होंने 'शेखर' को अपने निजी संघर्षों के दस्तावेज के साथ ही साथ वर्तमान युग की संघर्षमयी आत्मा का प्रतीक माना है।

शिशु मानस के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में प्राप्त होने वाला 'सत्यं, शिवं, सुन्दरम्' का झांकी, 'शेखर' के कलाकार की सूक्ष्म दृष्टि और मानसिक अनुभूति की परिचायिका है। भय, हठ, जिज्ञासा, स्वत्व स्नेह, सहानुभूति, अनुकरण, श्रद्धा आदि न मालूम कितनी प्रवृत्तियों का सहारा ले कर शिशु मानस विकासोन्मुख होता है। इन सब प्रवृत्तियों के दर्शन हमें 'शेखर' में होते हैं। परन्तु शैशव में ही मनुष्य-जीवन की गम्भीर समस्याओं का चिन्तन 'शेखर' के जीवन में एक विशेष त्रुटि मालूम होती है। यदि शिशु शेखर की भावुकता का उदय कुछ विकसित आयु के साथ दिखाया जाता, तो उसके चरित्र में और अधिक स्वाभाविकता आ जाती। एक बात और। श्री 'अज्ञेय' ने शेखर के सुकुमार शैशव से ही उसमें विद्रोहीपन का अंकुर दिखाया है। बढ़ती आयु के साथ ही साथ विद्रोह की वह अग्नि भी बढ़ती जाती है। अन्त में वह चिर ही मानव अपने आप को फांसी के तख्ते पर खड़ा पाता है। बस, यहां पहुँच कर विद्रोही एक महान् द्रष्टा बन जाता।

'शेखर' का जिज्ञासा को सांसारिक अनुभवों के आधार पर, ईश्वर के विषय में जो परिज्ञान हुआ है, उसके आधार पर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि लेखक के मन में ईश्वर की सत्ता के विषय में कोई निर्णयात्मक विचार नहीं है। कुछ स्थलों पर तो लेखक की वृत्ति का झुकाव नास्तिकता की ओर ही अधिक जान पड़ता है। है। उदाहरण के लिए निम्न पंक्तियों को देखिये—

'जब कभी मां कहती 'बेटा घबराओ नहीं, ईश्वर सब अच्छा करेंगे,' तब वह चाहता कि फट पड़े, बरस पड़े। पूछे कि क्या युद्ध अच्छा हुआ? भूख अच्छी हुई है? ······इतने लोग बीमार पड़े, अच्छा हुआ है? अरे, अच्छा हुआ है?'

'ईश्वर यदि है तो वही है, जिसके बारे में यह भी नहीं कह सके कि वह है, जो हमारे विश्वास के वृत्त से भी बाहर हो ······ ईश्वर वही है जिसके बारे में हम निश्चय पूर्वक कह सकें, 'वह नहीं है।'

शेखर एक बुद्धिवादी जीव है। उसके इस बुद्धिवाद ने उसे प्रकृति का उपासक बना दिया है। यह है भी स्वाभाविक। एक बुद्धिवादी मानव संसार के सृजन और संहार का कारण निसर्ग को ही मानता है। अतः शेखर के जीवन का विकास नैसर्गिक प्रवृत्तियों का सहारा पाकर इतनी गति के साथ आगे बढ़ता है कि संसार के अहिंसा, सत्य आदि सिद्धान्तों में निहित आदर्श पीछे रह जाता है। उसकी अहिंसा उसी दिन समाप्त हो जाती है, जिस दिन वह अपने हाथ से किसी पुस्तक को आग के अर्पण कर देता है। उसके जीवन का सत्य उसे ब्राह्मण होस्टल से निकाल कर ही जापता हो जाता है। उसकी सहानुभूतिपूर्ण निष्कपट मैत्री उसी वक्त रफूचक्कर हो जाती है, जब कुमार की ओर से उसे यथार्थ का पाठ मिलता है। उसकी निष्काम सेवाभाव 'ऐन्ट गोनस-क्लब' की जीवनलीला के साथ ही समाप्त हो जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि वस्तुतः रचना की प्रत्येक घटना शेखर के जीवन के साथ टकर खा कर और उसे अधिक गति दे कर, सागर में उत्पन्न हुई लहर के समान उसी में विलीन हो गई।

नारी का मनोवैज्ञानिक अध्ययन और पुरुष के जीवन में उसके स्थान का निरूपण, 'शेखर' की अपनी विशेषता है। नारी के अभाव में पुरुष और पुरुष के अभाव में नारी का जीवन अभाव की गाथा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इस तथ्य का प्रतिपादन करने के लिए प्रस्तुत रचना की अनेक घटनायें साक्षी हैं।

शेखर के कलाकार 'अज्ञेय' भाषा के एक सफल शिल्पी हैं। उनकी इस रचना का कोई भी पृष्ठ उठा कर देख लीजिये। आपको सरल, हृदयस्पर्शी और रोचक शब्दावली का ही साक्षात्कार होगा उदाहरण के लिये देखिए:—

'मानसून आकाश। प्रकाशहीन सायंकाल। पवन अचंचल। चंचला भी अदृश्य। ······ एक नशा सा शेखर पर छा गया। उसके शरीर में फैल गया। उसकी सांस तीव्रगति से चलने लगी, उसका सारा शरीर तप सा गया, उसे लगने लगा कि उसकी छाती के भीतर कहीं लोहा उबल रहा है। वह औंधा हो गया, और शरीर की सारी शक्ति से छाती से चिपटने लगा; क्रमशः अपने गाल और माथा उस गीली और शीतल घास पर दबाने लगा।'

भाषा का प्रवाह इतना धारावाहिक है कि एक ही सांस में सारी पुस्तक पढ़ डालने की इच्छा होती है। देखिये—

नहीं, कहीं नहीं है, वह संतोष कहीं नहीं है, छुटकारा कहीं नहीं है मुक्ति! न बुद्धिमत्ता में, न बेवकूफी में न एकान्त में, न साथ में, न कविता में, न नाटक में, न काम में, न निठल्लेपन में, न घृणा में, न प्यार में — उस निराश वात्सल्यमय उदार पिता के प्यार में भी नहीं!'

भावनाओं के आवेग को बड़े मार्मिक शब्दविन्यास में पिरोया गया है। उदाहरणार्थ निम्नांकित उद्धरण को देखिए:—

'कह डालूं', अंतः व्यथा को; बहा डालूं, अन्तर्वेदना को; बिखेर दूं अन्तः ज्वाला को; लुटा दूं आन्तरिक अनुभूति को; दान कर डालूं अपनी अंतः करण की व्यवस्थित शिक्षाओं को अपने अंतः करण के उन्माद को।'

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 'शेखर' की भाषा मनोभावों की गुत्थियों को सुलझाती है। वह भावना-मय तथा आवेश जनक है। अतः पाठक हृदय को उद्वेलित कर देती है। हिन्दी गद्य के क्षेत्र में 'श्री अज्ञेय' ने एक नया ही पथ प्रशस्त किया है। 'शेखर' मानव का दार्शनिक लेखा है। इस कारण सरलता के स्थल इसमें बहुत कम हैं। चिंतनप्रधान होने के कारण इसमें बौद्धिकता का प्राधान्य है और पाठक को रस की उपलब्धि बहुत कम हो पाती है। फिर भी बौद्धिकता और भावात्मकता का उचित समन्वय करने में लेखक पूर्ण सफल हुआ है।

देश में शिक्षा का पूर्ण भारतीयकरण आवश्यक

राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद

इस बात से तो कोई इन्कार नहीं कर सकता कि आज के भारत और संसार दोनों के ही सामने ऐसी विषम समस्यायें हैं, जिनके सुलझाने के लिए न केवल वयोवृद्ध लोगों के अनुभव और गुरुता की जरूरत है, बल्कि आवश्यकता है युवकों के अदम्य उत्साह, ज्वलन्त आशाओं और स्फूर्तिदायिनी शक्ति की भी। यदि यह कहा जाय कि संसार के नवनिर्माण की जिम्मेदारी इन्हीं के सिर पर है, तो कुछ अतिशयोक्ति न होगी।

तीन धाराएं

मैं समझता हूं कि हम लोगों के लिए यह सौभाग्य की बात है कि इस जिम्मेदारी को संभालने के लिए मानसिक और चारित्रिक तैयारी करने का अवसर आपको दिल्ली जैसे नगर के विश्वविद्यालय में मिला।

यहां इतिहास की तीन धाराओं का संगम हुआ है—ऐसी तीन धाराओं का, जो दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों से निकल कर अनेक शताब्दि और देशों में से बहती हुई भारत के इस ऐतिहासिक नगर में मिल कर एक धार बन गई हैं और भारत वासियों के जीवन को उर्वर बना रही हैं और बनाती रहेंगी। इन धाराओं में प्रधान और सबसे प्राचीन वह धारा है, जो वैदिक काल या उससे भी पूर्व से हमारे देश में बहती रही है और जिसका पुनीत जलामृत हमारे देशवासियों की मानसिक प्यास को सदा से तृप्त करता रहा है। उसने हमारे जीवन को हरिश्चन्द्र के वचन-पालन, दधीचि के आत्मोत्सर्ग, शिवि की दया, कर्ण की दानवृत्ति, राम के राज्यधर्म, कृष्ण के निःस्पृह कर्मयोग, बुद्ध की अहिंसा और अशोक के धर्मचक्र के आदर्शों से समृद्ध बनाया है। हमारे जीवन का कोई ऐसा अंश नहीं, जिसमें उसका प्रभाव बिंध न गया हो और इस कथन में अत्युक्ति न होगी कि ज्ञान में या अनजान में वह आज भी प्रतिपल हमारे जीवन और विचारों की दिशा को निश्चित करती है।

दूसरी धारा वह है, जो आज से लगभग एक हजार वर्ष पूर्व अरब से बहती हुई हमारे देश में आई और इसी दिल्ली शहर में उस पहली धारा में मिल गई। कौन नहीं जानता कि इसी नगर में उस मिलीजुली भाषा, वेशभूषा, कला, साहित्य और विचारशैली का जन्म हुआ, जो यहां के हिन्दू-मुसलमानों की है, उसने हमें कबीर का अनहद नाद सुनाया और सुनाई जायसी की प्रेम गाथा। उसने हमें दिया वह ताजमहल प्रस्तर अश्रु जिसमें शाहजहां का शोक मूर्तिमान हो कर चिरस्थायी हो गया है। आज वह धारा हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन गयी है।

उसी प्रकार कुछ शताब्दि पूर्व तीसरी धार सुदूर पश्चिम से समुद्र पार करती हुई हमारे देश में आई और आकर इन दो धाराओं के संगम स्थल नई दिल्ली में उन से मिल गई। उसने हमारे जीवन की गति को तीव्रतम कर दिया। उसके दायरे को बढ़ा दिया और नये विज्ञान और विधियों से हमारे जीवन को नियमित कर दिया। अतः इनमें से प्रत्येक धारा ने हमारी संस्कृति को समृद्ध और उन्नत बनाया है। इन्हीं तीनों धाराओं के इस संगम तीर्थ दिल्ली में रहने और पढ़ने के कारण आप लोगों को अनायास ही उनके रंग में रंगे जाने का पूरा पूरा मौका मिला है और मैं समझता हूं कि आप इनके रंग में रंग भी गये होंगे।

दिल्ली केवल इन ऐतिहासिक धाराओं का ही संगम नहीं, बल्कि भारत और दुनिया के विभिन्न प्रदेशों से बह कर आने वाली आतीय धाराओं का भी संगम क्षेत्र है, जहां भारत की चारों दिशाओं के लोग बसे हुए हैं। और भारत का ऐसा कोई प्रदेश या राज्य नहीं, जहां के अधिकारी इस दिल्ली में व्यापार-वृत्ति या नौकरी के लिये आकर बसे न हों। यह कहना गलत न होगा कि यदि कोई बहु भाषा-भाषी और विभिन्न रसम-रिवाज वाले देश का सूक्ष्म रूप देखना चाहें, तो उसे दिल्ली देख लेना ही काफी होगा। यहां उसको पुरातन और नवीन, उत्तर और दक्षिण, पूर्व और पश्चिम, हर प्रकार के भारत के एक साथ ही दर्शन हो जायेंगे। इतना ही नहीं, आज तीन वर्ष से तो इस दिल्ली नगरी में अमरीका और रूस, इंगलैंड और चीन, फ्रांस और बर्मा आदि सभी देशों के लोगों से सम्पर्क होता है। सचमुच ही दिल्ली एक सार्वभौमिक संस्कृति और समाज वाला नगर है।

मैं समझता हूं कि आप लोग स्वयं विभिन्न प्रदेशों और जातियों के हैं और इस विश्वविद्यालय में कन्धे से कन्धा मिला कर पढ़ते, खेलते और आनन्द मनाते रहे। अतः आप को तो सक्रिय रूपमें इस बात का अच्छी तरह से अहसास हो गया होगा कि हमारे भविष्य के लिये यह कितना आवश्यक है कि इतिहास की ये तीनों धाराएं दिल्ली के संगम तीर्थ में एक होकर हमारे देश में बहें और प्रत्येक ग्राम और नगर और प्रत्येक घर और कार्यालय को जीवन और स्फूर्ति प्रदान करें। आप ने इस बात की आवश्यकता भी समझ ली होगी कि हमारे देश के विभिन्न प्रदेशों और जातियों के लोगों के मनों को इस दिल्ली द्वारा एक सूत्र में — ऐसे सूत्र में जो हवा से भी पतला और इस्पात से भी मजबूत है—बंध जाना चाहिये। कम से कम मैं तो दृढ़ता से कह सकता हूं कि सांस्कृतिक और प्रादेशिक सामंजस्य की ये दो महान समस्याएं हमारे सामने हैं, जो हमें पूरी लगन और समझ-बूझ से हल करना है। दिल्ली नगर के देश का सांस्कृतिक हृदय होने के नाते इस विश्वविद्यालय का वही सांस्कृतिक और प्रादेशिक चतुरानन रूप है जो दिल्ली का है।

विडम्बना

दुर्भाग्यवश जो विश्वविद्यालय हमारे यहां कायम हैं उनकी स्थापना ऐसे युग में हुई थी जब शिक्षा उतने से ही पर्याप्त समझी जाती थी कि वह विद्यार्थियों को अंग्रेजी भाषा, साहित्य और भारत में लोगों को अंग्रेजी कानून का इतना ज्ञान करादे कि वे या तो सरकारी दफ्तरों और नौकरियों के काम करने के लिये योग्य हो जायें या अंग्रेजी अदालतों, वकालत और पैरवी कर सकें। इसीलिये भारत के लगभग सभी विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी भाषा शिक्षा का माध्यम रखी गई और अंग्रेजी साहित्य अनिवार्य विषय रखा गया। कैसी विडम्बना थी यह कि भारत के रहने वालों का अपना साहित्य पढ़ना तो केवल ऐच्छिक विषय था, पर अंग्रेजों का साहित्य पढ़ना था अनिवार्य। पर यह बात लगभग आज तक चली आ रही है। आज भी अधिकतर विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी साहित्य अनिवार्य विषय बने हुए हैं। मेरा न अंग्रेजी से कोई द्वेष है और न अंग्रेजी साहित्य के प्रति कोई उदासीनता। मैंने स्वयं अपने विद्यार्थी जीवन में अंग्रेजी भाषा और साहित्य में ही सर्वोच्च उपाधि हासिल की थी। किन्तु अंग्रेजी भाषा और साहित्य में कितनी ही खूबी क्यों न हो इस बात से तो कोई इन्कार नहीं कर सकता कि उसके अनिवार्य अध्ययन का और अपने साहित्य और संस्कृति की उपेक्षा का यह परिणाम हुआ कि हमारे यहां के विद्यार्थियों को विद्याध्ययन में रटन की बुरी आदत पड़ गई है। समझता हूं कि वे रटू इसलिये नहीं हैं कि उनकी मानसिक और शारीरिक क्षमा-ता और देशों के विद्यार्थियों से भिन्न है, बल्कि इसलिये कि उस शिक्षा का उनके दैनिक जीवन से कोई सम्बन्ध और सम्पर्क न था, जो उन्हें इन विश्वविद्यालयों में दी जाती थी। इन विद्यालयों की दीवारों के बाहर उन्हें अपना दैनिक जीवन और अपने पूर्वजों की आस्था, विश्वास, संस्कृति और भाषा छोड़ जानी पड़ती थी। यह ठीक है कि भारत की ही भूमि पर और भारत के ही आकाश के नीचे इन विद्यालयों की दीवारें और इमारतें बनी हुई थीं किन्तु उनमें भारत न था। उनमें या तो इंगलैंड था या योरोप। वहां पढ़ाई जाने वाली बातों का उनके अपने निजी घरेलू और शहरी जीवन से कोई सम्पर्क न होने के कारण उन्हें सहज में याद रखना सम्भव न था। उन्हें तो उन बातों को जबरदस्ती अपनी स्मृति में ठूंसना पड़ता था और इस कारण सिवाय रटन्त के और वे कुछ न कर सकते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारे यहां के विद्यार्थियों और

युवकों में वह सृजनात्मक शक्ति और वह अदम्य आत्मविश्वास न रहा, जिसके बल पर भारतीयों ने विज्ञान, साहित्य, कला और धर्म के क्षेत्रों में शताब्दियों तक अपूर्व कार्य किया था और जिसके बल पर उन्होंने एशिया के महाद्वीप में संस्कृति और धर्म की गंगा उस समय बहा दी थी, जब न यात्रा के सहज साधन थे और न प्रोपेगैण्डा के ऐसे प्रभावी यन्त्र जैसे कि आजकल मनुष्य के हाथ में हैं।

विभक्त व्यक्तित्व

पर इससे भी कहीं हानिकर परिणाम यह हुआ कि हमारे शिक्षित भाइयों का व्यक्तित्व विभक्त व्यक्तित्व होने लगा और उन्हें अपने जीवन में पेट भरने के अतिरिक्त और कोई प्रयोजन न दिखाई पड़ने लगा। इस प्रयोजनहीनता के कारण हमारे देश की कितनी हानि हुई और हमारे शिक्षित भाइयों का जीवन कितना नीरस हो गया, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। अपने इस नीरस जीवन को रसमय बनाने के लिये इन्हें सिनेमा, ब्रिज और ताश या टैनिस के और कोई मार्ग दिखाई नहीं दिया। यह बात देखने में अचरजभरी अवश्य लगती है कि सरकारी नौकरी करते हुए भी अंग्रेज सिविलियन इतिहास, समाज, शासन, इत्यादि इत्यादि क्षेत्रों में पर्याप्त लेखन कार्य कर सके पर भारतीय शिक्षित राजकर्मचारियों में से इक्के दुक्के को ही ऐसा करने की प्रेरणा हुई। मैं समझता हूं कि यह बात इसी लिए हुई कि अंग्रेजों के व्यक्तित्व में उतनी विभक्तता न थी जितनी कि अंग्रेजी-शिक्षित भारतीयों में थी और इसीलिये वे भारतीय अपनी इस विभक्तता के कारण पूर्णतया मानसिक अपाहज बन गये थे। जहां विश्वविद्यालयों का यह कार्य होना चाहिए कि वे व्यक्तित्व में सामंजस्य कायम करें वहां हमारे विश्वविद्यालय उसको अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी साहित्य की कुल्हाड़ी से टुकड़े टुकड़े करते रहे। डेढ़ सौ वर्षों की इस कार्यवाही के पश्चात् हमारे यहां कुछ भारतीय ऐसे हो गये हैं जो भारत की भूमि में भी केवल इंगलैंड के वातावरण से ही सम्पर्क में आते हैं। उनका अपना घरेलू रहन-सहन, दाम्पत्य जीवन घर, और बाजार की बातचीत, और खत किताबत की, लिखने पढ़ने की भाषा, खाने पीने का ढंग, वेषभूषा, सभी कुछ अंग्रेजी हो गई और इस कारण आरम्भ में जो अंग्रेजी साहित्य और अंग्रेजी भाषा से व्यक्तित्व में विभक्तता होती थी उसकी मात्रा उन कुछ लोगों के जीवन में कम होने लगी। पर फिर भी वह न तो बिल्कुल दूर हो सकती थी और न दूर हुई।

ग्रामों की दुर्गति

बौद्धिक क्षेत्र में इसके कारण जो हानि हुई उससे कहीं अधिक हानि इससे सामाजिक क्षेत्र में हुई। इन विश्वविद्यालयों के शिक्षित लोगों को उन लोगों के प्रति उदासीनता या उपेक्षा भाव अथवा घृणा तक होने लगी जो अंग्रेजी शिक्षा, साहित्य और संस्कृति से सर्वथा अनभिज्ञ थे। इसलिये भारत के नगर नगर में संस्कृति की ऐसी अभेद्य दीवार खड़ी होने लगी, जिसकी एक तरफ इंग्लैण्ड के मानस पुत्र थे और दूसरी ओर भारतीय। गरीब अमीर की दुनिया तो अलग होती ही थी, अब अंग्रेजी पढ़े और बिना अंग्रेजी पढ़ों की दुनिया भी अलग होने लगी। जहां नागरिक जीवन में इस प्रकार की विभक्तता पैदा हुई, वहां ग्रामीण जीवन तो विनष्ट ही हो गया। ग्रामों में अंग्रेजी रहन सहन बर्तने वालों की संख्या अधिक न हो सकती थी, क्योंकि उस तरह के रहन सहन में अधिक खर्च पड़ता है और ग्रामवासियों के पास इतना फालतू धन था ही कहां। भारत के इतिहास में इससे पहले कभी यह न हुआ था कि शिक्षित लोग ग्रामों में न रहें और न जायें। सर्वदा ही पंडित लोग ग्रामों में आते थे और अनेक तो वहीं रहते थे और कथा गाथा इत्यादि से ग्रामों का जीवन सुसंस्कृत और सभ्य बना रहता था। अंग्रेजी काल से पहले नगर और ग्राम की संस्कृति में कोई खाई न थी और उस समय ग्रामवासियों और साधारण स्थिति के नगरवासियों की वेषभूषा खानपान और रहन सहन में कोई बड़ा अन्तर न दिखाई देता था। इसीलिये तो उस जमाने में नगर और ग्राम में रोटी-बेटी का सम्बन्ध बड़ा गहरा रहता था। पर अंग्रेजी राज्यकाल में नगर और ग्राम में संस्कृति की दृष्टि से इतना अन्तर हो गया कि अगर शहर की बेटी गांव में ब्याही जाती तो उसे काफी तकलीफ और दुःख भोगना पड़ता। इसलिये नगर और ग्राम के सामाजिक सम्बन्ध और भी टूटने लगे और दोनों का सम्बन्ध केवल इतना रह गया कि ग्रामवासी शहर में आ कर नाज बेच जायें और कपड़ा मोल ले जायें। नगर और ग्राम के बीच इस प्रकार की खाई बढ़ जाने से देश और पंगु होने लगा। साथ ही इस प्रकार की शिक्षा से ग्राम को यह हानि हुई कि उसके ऐसे बाली जिनकी बुद्धि कुशाग्र थी अथवा जो अन्यथा सक्रिय थे ग्राम को छोड़ कर नगर में बसने लगे। जो भी ग्राम का चतुर विद्यार्थी अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर लेता था, वह तो अपनी अंग्रेजी मनोवृत्ति के कारण भारतीय ग्राम में रहने की बात सोच ही न सकता था। फल यह हुआ कि जैसे सोख्ता पानी को पूरी तरह सोख लेता है उसी तरह ये विश्वविद्यालय बुद्धि कुशलता को ग्रामों से सोख लेने लगे और वहां केवल वही लोग बच गये, जो बुद्धि में या चातुरी में पिछड़े हुए थे। जहां पहले ग्राम की बुद्धि ग्राम के ही आर्थिक और सामाजिक जीवन में लगती थी, वहां अब वह ग्राम से सर्वथा चली जाई और शहरों में रहने लगी। इस प्रकार इस शिक्षा-प्रणाली के कारण हमारे ग्राम अंधेरे और अशिक्षा के घर बन गये। इस तरह जिसका काम जाति को अमृत दान करना था, वही उसको विष का प्याला पिलाते रहे।

अंग्रेजों के सामने इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली का कोई भी आर्थिक और राजनतिक महत्व क्यों न रहा हो अब तो वह न है और न रहना चाहिये। हमारे सामने सब से बड़ी यह समस्या है कि संस्कृति और मन की राह में और हम में जो अन्तर पड़ गया है, उसे जल्दी से जल्दी दूर कर दें। यदि हमने इस बारे में कोई ढ़ल ढाली या इसको पूरा न कर सके तो हमारी आजादी तो खतरे में पड़ेगी ही, हमारा अस्तित्व भी खतरे में पड़ जायगा।

दो कदम

हमें दो प्रकार के कदम तुरन्त उठाने चाहिए। पहली बात, जिसकी हमें अत्यन्त आवश्यकता है, वह यह है कि हम इतिहास की उक्त तीन परम्पराओं के बारे में यह तय कर लें कि उनमें हम कैसे सामंजस्य स्थापित करना है। प्रत्यक्ष है कि योरुप और अरब की दोनों धाराओं को यहां की मुख्य धारा में मिलना है। प्रथम धारा हमारे देश के लगभग सभी आदमियों के सांस्कृतिक जीवन की बुनियाद में मौजूद है। कम से कम यह तो अकाट्य सत्य है कि यह यहां के ८० प्रतिशत वासियों के जीवन का सहारा है अतः चाहे फिर योरुप या अरब वाली धाराएं पहली से अच्छी क्यों न हों, वह प्रयास सर्वथा असफल होगा कि प्रथम धारा को रोक कर या बांध बांध कर अपने रास्ते से हटा कर बाद वाली धाराओं में जबरदस्ती मिला दिया जाय। प्रथम धारा से दूसरी धाराओं के मिलान का अर्थ केवल इतना ही है कि वे अपने विशिष्ट तत्वों को प्रथम धारा के साथ प्रत्येक भारतीय के जीवन में पहुँचा दें ताकि प्रत्येक भारतीयको उनका लाभ मिले। विश्वविद्यालयों को यह प्रयत्न करना चाहिए कि वे योरुप और अरब और इनके अलावा अन्य ऐतिहासिक परम्पराओं की सांस्कृतिक कृतियों का अनुवाद करायें और उनको विद्यार्थियों को मुहय्या करें। जो भी पाठ्य पुस्तक हो, उनमें कुछ सबक ऐसे होने चाहिये, जिनसे इन ऐतिहासिक परम्पराओं का पता चले और उन की कृतियों का आनन्द प्राप्त हो। यदि हम इस बारे में अपने सब भाइयों को साथ लेकर चलें तो हमें अपने मकसद को पूरा करने में बड़ी जल्दी कामयाबी होगी।

मैं समझता हूं कि हमारी जनता और हमारे बुद्धिजीवी लोगों के बीच की दीवार तभी टूट सकती है और उनके बीच की खाई तभी पट सकती है, जब ये बुद्धिजीवी लोग अन्य भारतीयों में हिले मिले रहें और अलग जाति न बन जाय। इस बारे में यह कह देना मैं जरूरी समझता हूं कि राष्ट्रपिता गांधी जी की सबसे बड़ी देन हमें यही थी कि उन्होंने अपने चर्खा और खादी, तीसरे दर्जे के सफर और भारतीय वेशभाषा के द्वारा हमारे शिक्षित वर्ग और जनता के टूटे हुए सम्बन्धों को जोड़ दिया था और इस प्रकार जाति को वह शक्ति, वह उत्साह और वह स्फूर्ति प्रदान कर दी थी जो शताब्दियों से उसमें न थी। हमें इस बात का खतरा है कि यह कड़ी हमारी नासमझी से फिर टूट न जाय आज ऐसे कुछ पढ़े लिखे लोग हैं, जो यह समझते हैं कि गांधीजी ने जो हमारा भारतीयकरण किया था, वह अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने के लिए तो ठीक था, किंतु अब वह न केवल अनावश्यक है वरन् प्रतिक्रियावादी भी। मैं समझता हूं कि ऐसे लोगों ने यह बात नहीं पहचानी है कि जनता के हृदय से सम्पर्क टूटने के बराबर और कोई हानिकर और प्रतिक्रिया वादी कदम न होगा। हमें प्रगति करनी है, हमें अपने देश में ज्ञान साहित्य और कला का प्रसार करना है, पर इसका यह तरीका नहीं कि हम जनता के हृदय से अपने को काट कर अलग कर लें। मैं समझता हूं कि भारतीय वेषभूषा में

[शेष पृष्ठ २४ पर]

नये राजनैतिक दल और सिद्धान्त

● श्री बलराज मधोक

भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात गत तीन वर्षों में देश में कई नये राजनैतिक दल निर्माण हुए हैं। दो वर्ष हुये कांग्रेसी समाजवादियों ने कांग्रेस से अलग होकर भारतीय समाजवादी दल की स्थापना की थी। कुछ सप्ताह पहिले आचार्य कृपलानी और श्री रफी अहमद किदवई ने कांग्रेस के कुछ और प्रमुख कार्यकर्ताओं के साथ मिल कर कांग्रेस डेमोक्रेटिक फ्रन्ट का निर्माण किया था। यह दल अभी तो कांग्रेस के भीतर ही काम करने का दावा करता है, परन्तु यह स्पष्ट है कि यह केवल दिखलाने को बात है। इस दल के नेता कांग्रेस के नाम से मंच का प्रयोग करके अपने संगठन की शक्ति का अनुमान लगा रहे हैं, ताकि उचित अवसर आने पर वे कांग्रेस से पृथक हो सकें। उधर बंगाल में वहां के भूतपूर्व कांग्रेसी प्रधान मन्त्री डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र घोष ने कांग्रेस से बिलकुल अलग हो कर कुछ अन्य कांग्रेसियों की सहायता से कृषक मजदूर दल की स्थापना की है।

यह सभी दल जो कांग्रेस में से ही निकले हैं और कांग्रेसियों द्वारा ही संगठित किये गये हैं, कांग्रेस की असफलता का राग अलापते हैं। इन सब का कहना है कि कांग्रेस देश में बढ़ते हुये भ्रष्टाचार, चोर बजारी और आर्थिक संकट को दूर करने में असफल रही है क्योंकि इसमें प्रतिक्रियावादी और अवसरवादी लोग घुस गये हैं जो कि गांधी जी के सिद्धान्तों पर चलने में असमर्थ हैं। इन सब दलों का यह कहना है कि वे सच्चे गांधीभक्त हैं और वे गांधीवाद का प्रचार करेंगे और उस पर आधारित ऐसे राज्य निर्माण करेंगे, जिसमें भ्रष्टाचार और शोषण नहीं होगा।

जहां तक कांग्रेस की असफलता का सम्बन्ध है इसमें किसी भी प्रकार का मतभेद होने का कारण नहीं। पिछले तीन वर्षों में अपने नेताओं की लोकप्रियता और अपने पास प्रचार के सभी साधन और राजनैतिक सत्ता होने के बावजूद कांग्रेस अपना प्रभाव बहुत कुछ खो चुकी है। स्वतन्त्रता मिलने के समय सारी जनता में विभाजन के आघातों के बावजूद भी एक उत्साह था, जिसका यदि उचित प्रयोग किया गया होता तो आज देश का नक्शा ही और होता। परन्तु आज वह सारा उत्साह नष्ट हो चुका है। जन साधारण तो अपनी नित नई समस्याओं और संकटों के कारण १५ अगस्त या २६ जनवरी २ को गुलामी के दिन याद करने लगे हैं। वह स्वतन्त्रता का अर्थ केवल गोरी चमड़ी वालों की जगह काली चमड़ी व सफेद टोपी वालों का राज जो पहिले से अधिक अक्षम और अधिक भ्रष्टाचार से ग्रस्त है, समझने लगा है। इसलिये उसके दिल में से देश और उसकी स्वतन्त्रता के प्रति श्रद्धा का भाव नष्ट हो रहा है। वह समझने लगा है कि वर्तमान शासन में तो उसकी हालत सुधर नहीं सकती, इसलिए उसके मनमें शासन और देश दोनों के लिये एक उदासीनता का भाव पैदा हो रहा है, जो यदि बढ़ने दिया गया तो देश में एक भयंकर क्रान्ति खूनी अनिवार्य हो जायगी और सम्भवतः देश फिर किसी विदेशी विचारधारा और उस पर आधारित सत्ता का गुलाम बन जायगा।

इसलिये यह आवश्यक हो गया है कि देश के शासन में बदल करके जनता के सामने ऐसे आदर्श रखे जायें और ऐसी नीति का प्रतिपादन किया जाय जो कि जनता के मनों में फिर नव उत्साह पैदा करके आज की उदासीनता व हीन भावना नष्ट कर सके।

जनतन्त्र की दृष्टि से भी देश में नये राजनैतिक दलों का निर्माण होना आवश्यक ही है। सत्तारूढ़ दल पर अंकुश रखने के लिये और जनता के सामने देश की समस्याओं के विषय में दूसरा दृष्टिकोण रखने, और यदि जनता को वह पसन्द हो, तो उसको कार्यान्वित करने के लिये सत्ता संभालने के लिये सुसंगठित विरोधी दल जनतन्त्र की सफलता के लिये नितांत आवश्यक माना गया है। अन्यथा सत्तारूढ़ दल में तानाशाही प्रवृत्तियां पैदा हो जाने की सम्भावना रहती है। भारत के आज के सत्तारूढ़ दल में यह प्रवृत्तियां वेग से बढ़ रही हैं। इसलिये भी भारत में नये राजनैतिक दलों का निर्माण वांछनीय ही है।

परन्तु प्रश्न उठता है कि क्या कांग्रेस में से निकलने वाले उपरिलिखित दल देश की इस आवश्यकता को पूरा कर सकते हैं? हमारे विचार में वे ऐसा नहीं कर सकते। कारण, उनका आधार देश की उन्नति और देश की समस्याओं को सुलझाने के लिये कोई नये सिद्धान्त व मार्ग न हो कर केवल व्यक्तिगत मतभेद है।

समाजवादी दल के सिद्धान्त पूर्णतया वही हैं जो कि कांग्रेस के हैं। आचार्य कृपलानी और डा० घोष ने भी देश के सामने कोई नये सिद्धान्त अथवा नई राह नहीं रखी। उनका कहना है कि वे गांधीजी के मार्ग पर चल कर सच्चा गांधी राज कायम करेंगे, जिस में अत्याचार नहीं होगा, चोर बजारी नहीं होगी और शोषण नहीं होगा। परन्तु क्या कांग्रेस के आज के नेता गांधीभक्त नहीं हैं? पं० नेहरू और सरदार पटेल भी अपने आप को गांधी जी का ऐसा ही अनुयायी मानते हैं, जैसा कि आचार्य कृपलानी व डाक्टर घोष। वास्तव में स्वयं महात्मा गांधी आचार्य कृपलानी की अपेक्षा उनको अपना श्रेष्ठ अनुयायी मानते थे। इसलिये तो उन्होंने पं० नेहरू को अपना राजनैतिक उत्तराधिकारी घोषित किया था। पं० नेहरू भी अपनी हर नीति को गांधीजी के सिद्धान्तों के अनुकूल ही बताते हैं। इसलिये केवल यह कहने से कि हम गांधीजी के बताये मार्ग पर चलेंगे, काम नहीं चलता। जनता तो अभी तक यह भी समझ नहीं पाई के गांधीवाद है क्या और इस बात की क्या गारंटी है कि श्री जयप्रकाशनारायण या आचार्य कृपलानी का गांधीराज पं० नेहरू के गांधी राज से बहतर न होगा?

व्यक्तिगत जीवन व चरित्र की दृष्टि से भी देखा जाय तो नये दल और उनके नेता कांग्रेस के आज के प्रमुख नेताओं में कोई फरक निकालना कठिन है। पं० नेहरू व सरदार पटेल का व्यक्तिगत जीवन, उनका देश के लिये प्रेम और उसके लिये त्याग किसी और से कम नहीं है। इसलिये केवल यह कहने से कि कांग्रेस के नेता बुरे हैं और हम अच्छे हैं, काम नहीं चलेगा।

व्यक्ति नहीं, सिद्धान्त का दोष

वास्तव में जरा गहरी दृष्टि डालने से पता चलता है कि कांग्रेस की असफलता का कारण उसके प्रमुख नेताओं में चरित्र की कमी या उनका गांधी जी के मार्ग से हट जाना नहीं है। उसका मूल कारण कांग्रेस द्वारा अपनाये गये वे दोषपूर्ण सिद्धान्त हैं, जिन पर चलते हुए कांग्रेस के नेता देश का आज की परिस्थिति में उचित मार्ग-दर्शन नहीं कर सकते। वे सिद्धान्त कांग्रेस का गलत राष्ट्रवाद और उसकी कल्पना का सेक्युलर राज का आदर्श हैं।

राष्ट्रीय भावना किसी भी देश की सब से बड़ी शक्ति होती है। यह भावना देश के सभी नागरिकों में देश की एकता, सुरक्षा और उसकी समष्टिगत उन्नति के लिए बड़े से बड़ा कष्ट झेलने के लिए तैयार करती है। यही भावना देश के शासन की छोटी-मोटी त्रुटियों और अपनी व्यक्तिगत समस्याओं और कठिनाइयों की ओर एक उदार दृष्टिकोण पैदा कर सकती है। यही भावना देश भक्ति का आधार है और अपने नागरिकों की देश भक्ति के बल-बूते पर ही कोई राष्ट्र कठिनाइयों का मुकाबला करता हुआ वैभव को प्राप्त हो सकता है।

आचार्य कृपलानी श्री जयप्रकाशनारायण भी देश को नया जीवन नहीं दे सकते

परन्तु राष्ट्रीय भावना आकाश से नहीं गिरती। इसके जागृत करने के लिए व्यक्ति के हृदय में देश की भूमि और उसमें निवास करने वाले समाज की आत्मा—उसकी संस्कृति, धर्म, भाषा, इतिहास व युग युग की स्मृतियों के लिए अपनत्व का भाव जागृत करना आवश्यक होता है। कांग्रेस ने राष्ट्रीयता के संसारमान्य इन मूल-भूत आधारों की अवहेलना कर के केवल एक देश में रहने, समान आर्थिक हित तथा विदेशी राज्य के विरोधरूपी अस्थायी आधारों पर देश में राष्ट्रीय भावना पैदा करने का प्रयत्न किया। इस में कांग्रेस को असफलता हुई। देश की एकता को मजबूत बनाने की बजाय कांग्रेस की राष्ट्रीयता देश के विभाजन का कारण बनी। विभाजन के पश्चात् भी कांग्रेस उन्हीं अवैज्ञानिक और दूषित आधारों पर राष्ट्र एकता का मन्दिर तैयार करने का असफल प्रयत्न कर रही है। फलस्वरूप देश में अपने राष्ट्रीय जीवन के मूलभूत आधारों के विषय में भी दुविधा फैल गई है और इस कारण देश के सभी दलों व सम्प्रदायों को किसी एक मानबिन्दु पर इकट्ठा करना असम्भव सा हो गया है। इसलिए देश की एकता और सुरक्षा के लिए कांग्रेस द्वारा प्रतिपादित धर्मशाला राष्ट्रीय केन्द्र स्थान या वैज्ञानिक आधारों पर अखिल भारतीय अविछिन्न राष्ट्रीयता को जागृत करना आवश्यक है। नव-निर्मित दलों में से कोई भी इस विषय में कांग्रेस से भिन्न दृष्टिकोण देश के सामने नहीं रख रहा। वे सब तो मुसलमानों के वोट प्राप्त करने के लिए इस मार्ग पर कांग्रेस से भी आगे बढ़ने का दावा करते हैं। इसलिए उनके द्वारा देश में राष्ट्र व समाज की कीमत पर भी अपने व्यक्तिगत अथवा दलगत स्वार्थों की पूर्ति करने की मनोवृत्ति नष्ट नहीं हो सकती। वह केवल बढ़ेगी ही। और जब तक यह मनोवृत्ति बनी रहती है, देश में से आपाधापी और उसके फलस्वरूप द्वेष, निरुत्साह और उदासीनता का भाव नष्ट करना असम्भव है।

[शेष पृष्ठ २४ पर]

कहानी —

"विद्रोही की कन्या !"

[श्री वचनेश त्रिपाठी]

"ढुम ... ढुम ... ढुम" जनरल आउटरम की आज्ञा अंग्रेजी तोपों मुख नरंतर अग्नि-पिंड उगलते आ रहे थे, और —

"धम्म...धड़ाम...धड़ाम"— सन् ५७ के बागी नेता...फरार नाना का राजप्रासाद गिरता आ रहा था, उन्हीं तोपों द्वारा जिनके मालिक अंग्रेज बहादुर विद्रोही नाना को खोजते खोजते 'बिठूर' आ पहुंचे थे।

बिठूरवासी आतंकित और भयभीत हो गये थे, तथा अपने घरों के झरोखों में दुबके बैठे हुए झांक झांक कर स्त्रियों की भांति देख रहे थे कि,...... किसी ऊंचे से महल की दीवारें गिर रही हैं, उनके गिरने से जो स्वर उत्पन्न होता था, उससे लगता था कि वे दीवारें मानो किसी को, अपने उस चिर-परिचित संरक्षक को पुकार रही हैं, जो आज से कई दिन पूर्व गङ्गा की रेती में घोड़ा भगाते हुए दूर...अंग्रेजी सेना की छाया से बहुत दूर जा चुका था।

हां तो आज उसके राज मन्दिर की ईंट-ईंट बज रही थी और सन्तुष्ट-सा लगता 'आउटरम' अपनी फौज फाटा समेत धूल उड़ाते हुए उसी भूमिसात् प्रासाद को लक्ष्य बनाये उसकी बिखरी भग्न ईंटों के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहा था। उसकी क्रूर चमकती आंखें अब भी किसी को खोज रही थीं, इस आशा से कि कहीं किसी घायल तड़पते 'काले आदमी' की लाश अवश्य दीखेगी और तब वह खुशी खुशी लन्दन को लिख भेजेगा कि "उस विद्रोही नाना का अवशिष्ट स्मृति-चिन्ह तक मिटा दिया गया, उसका ढहा पड़ा महल मेरी बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है, उस बागी वंश की अन्तिम औलाद भी आज समाप्त हो चली— मेरे सामने यह तड़पती हुई लाश इसका प्रमाण है।" किन्तु ऐसा न हुआ, महल वह गिरा, किन्तु उसमें बसने वाले वंश का कोई चेतन चिन्ह न दिखाई पड़ा। आउटरम चकराया, क्योंकि उसने दो दो दिन पूर्व हे द्वारा सुना था कि— जब मैं उस महल को देखने गया, जिसका फाटक भीतर से बन्द था, तो वहां एक कोई सरल सुकुमार हिन्दू बालिका ऊपर अटारी में आ कहने लगी—

"नहीं...नहीं...इसे न गिराओ फिरंगी डाकू। इसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ? फिर...क्यों गिराओगे इसे !"

और आज जब उसने उसे ढहवा दिया तो वह लड़की कहीं भी जीवित या मृत नहीं दिखाई पड़ रही थी।

"तो क्या बूढ़ा 'हे' सठिया तो नहीं गया ?" गङ्गा की रेती में डेरा डाले उसी दिन संध्या के अस्त होते हुए सूर्य को घूरते हुए आउटरम बड़बड़ाया।

"नहीं रे ! इस काले देश की गर्म जलवायु ने तेरा ही मस्तिष्क बिगाड़ दिया है, नहीं तो क्या तू यह कहता ! सोच तो भला 'अंग्रेज' भी कभी सठियाता है !" गौरांग जाति के अन्तमुंखी अभिमान ने उसे ठोकर लगाई।

"तो क्या (मर टामस) हे उस दिन अधिक पी गया था, जो उसे शून्य में भी वह लड़की ...हिन्दुस्तान की लड़की दिखाई पड़ी या वह झूठ..."

"हूं...हूं...झूठ ! ... काले दुश्मन ! तुम्हारे सजातीय भी क्या कभी झूठ बोलते हैं ! अरे रे...न्याय, सत्य, के पुतले ये श्वेतांग मानव भला झूठ क्यों बोलेंगे ! परहित-परायणता ही तो इन्हें यहां खींच लाई है, अन्यथा इन्हें अपने देश में क्या कमी थी !" बिठूर में बहने वाली गङ्गा की लहरें अपने उदासी भरे स्वर में बोलीं।

सूर्य की ओर से दृष्टि हटा कर चकित हो उन लहरों की ओर देखा उसने।

"छुल...छल...छल...छुल ... सुनो परदेशी ! मैं गङ्गा हूं, इसी काले देश की एक नदी — तुमने पढ़ा होगा कि संसार की सभी नदियां मेरा गुणगान करते हुए नहीं अघातीं। तुम्हारी यह टेम्स भी...पर तू जो यह सब...हां, तो मेरी इन लहरों ने बहुतों का 'न्याय-सत्य' देखा है, वीरत्व भी देखा है... अरब की आंधी के साथ उड़ कर आ पड़े उन यवनों की सत्यता जैसी मैंने देखी क्या किसी ने देखी होगी ? काफिरों के पुतला 'राम' की इस स्वर्गादपि गरीयसी' से उन्हें सन्तोष न हुआ। पुरवाई और पवित्रता भी उन्हें उसमें कहीं न दीखी और तब उन्होंने इसी काले देश की छाती खोद खोद कर, यहीं के मिट्टी पानी से अपने 'बहिश्त' की सीढ़ी बनाने में जुट गये, अभी तक जुटे हैं, क्योंकि सुदूर अरब-स्थित उनका वह 'बहिश्त' यहां से काफी दूर है, फिर उस क्षितिज के कोने पर टिकाने के लिए यहां से बहिश्त द्वारा खींच कर सातवें आकाश पर पहुंचा जा सके, कोई छोटी-मोटी सीढ़ी कैसे काम में आ सकती है। ओ समझे फिरंगी वीर ! इन यवनों ने जो यहां राज्य-सुख भोगा, वह भी एक बहुत बड़ा 'सत्य' है। ठीक उसी प्रकार जैसे तुम्हारा यह दूर दूर तक फैला अंग्रेजी राज्य, वह राज्य परिधि, जिसमें सूर्य २४ घण्टे प्रकाश देता है। राज्य सीमा नापने में घबराते हैं, शायद आर्यों के वे आदित्य भगवान सावता ...तो क्या बिना 'सत्यता' के भी कभी संसार में इतने बड़े बड़े साम्राज्य चले हैं। कितना बड़ा 'सत्य' लेकर चल रहे हो, तुम निःस्वार्थ, लोकोपकारी विलायत वीरों यह तो मैं उसी दिन भांप गई थी, जब तुम्हारा वह 'टामस रो' इस काले देश के किनारे आ उतरा था। 'कौटिल्य' के वंशज विवशता में भी समझ ही गये थे यह सत्य।"

"तो तो क्या यह 'गैंजेज' (गङ्गा जी) भी मुझे गाली दे रही है। ओफ कैसा भयानक है यह काला देश ...इसके पहाड़, वन और नदियां भी आदमी की बोली बोलती हैं। बाप रे— तभी तो वह नाना...भी भयानक है।

कुछ भयभीत-सा होकर आउटरम अपने डेरे में घुस गया।

× × ×

निशीथ का काल—निरभ्र नीले आकाश से ओस आंसू बन कर उस भूलुंठित राज मन्दिर के ढेर के ऊपर बरस रही थी, जिसके ऊपर बैठी हुई, हाथों में धूल भरे हुए 'मैना', हां उसी बागी, फरार नाना की एक मात्र कुमारी कन्या रो रही थी, फूट फूट कर, सिसक-सिसक कर, जिसे सुनने वाला कोई न था। केवल ऊपर आकाश था जो अपने उमड़ते आंसू न रोक पा रहा था, न पोंछ पा रहा था। उस निरीह बालिका के आंसू पोंछने वाले उसके अपने स्वजन बहुत थे, किन्तु इस समय वे दूर—बहुत दूर—न जाने कहां थे।

उसका वह अत्यन्त प्रिय महल लूटा जा चुका था, ढहाया जा चुका था, जलाई जा चुकी थी वह 'बारादरी'— जिसमें बैठ कर वह और उसकी सहेलियां 'अपनी गुड़ियों का ब्याह-गौना करती थीं' — 'आंगन के पिछवाड़े वाला वह बड़ा सा नीम का वृक्ष झुलस कर गिर पड़ा था, जिसकी गहराई डालियों में झूला डाल हाथों में मेंहदी रचाये उसकी सहेलियां झूले के बड़े बड़े झोंकों के साथ अपने अपने आइयों के ऊपर 'सावन' गाती थीं, जिसमें उनके 'भइया' की शीतल और ... का प्रकाश रहता था। उस 'नेह कुंज' का अब कहीं पता भी न था, जो ऊपर खुली छत पर सुघरता से बना था, जहां तुलसी वृक्ष के निकट बैठ कर 'मां' पूजा करतीं और सूर्य को जल-प्रदान करती थीं 'अलिन्द' अब कहीं लुप्त हो चला था, जिसमें वह 'रानी-दुर्गा' का खेल खेलती थी। पिता की वह 'बैठक', जिसकी ऊंची-ऊंची दीवारों पर 'बाबा' के सभी अस्त्र-शस्त्र तथा-कृष्ण एवं शिवा-प्रताप के विशाल चित्र लगे हुए थे, अब धूल में मिल चुकी थी...... ।

रोते रोते उसकी हिचकी बंध गई, फिर भी वह रोये जा रही थी और कहती जा रही थी 'हाय पिता ! कहां होगे तुम, वे फिरंगी डाकू, उनकी वह घुड़सवार फौज, उनकी तोपें, अब भी तुम्हारा पीछा कर रही होंगी और तुम अकेले कहीं छिपने का आश्रय, हाय भर सुरक्षित जगह खोजते हुए भूखे-प्यासे भागे भागे भाग रहे होगे ! पिता ! भागते समय तुम मुझे क्यों भूल गये ! किसके भरोसे छोड़ गये यहां मुझे ! हाय वह घर भी गिराया जा चुका, जो मेरा एक अन्तिम सहारा था, जिसकी प्यार भरी थपकियों तथा सान्त्वनामयी नीरवता में मैं अकेले समय बिता सकती थी। उस दिन उस बूढ़े अंग्रेज को मैंने कितना कहा कि वह मेरा यह घोंसला न जलवावे, बचा दे इसे, और आज वह बूढ़ा तो गया पर, यह दूसरा राक्षस... ... ।'

'रोता नहीं—बन्दा हाय...हु० हु०-हु० हु०... बोलो तुम कौन !' इधर उधर छिपे हुए कई गोरे सैनिकों ने उसे आ घेरा।

लड़की ! तुमारा नाम' ... ! कहते हुए जनरल आउटरम उसके निकट आ खड़ा हुआ, किन्तु उस बालिका का आंसुओं से धोया मुंह देखते ही चिहुंक उठा—'अरे ! तुम मैना— बागी की लड़की ! अम तुमको अरेस्ट करता हाय, तुमारा बाप बागी हाय—अमको बोलो—' किदर गया ? तुमको पता हाय—नेई तो अम...... ।' कहने के साथ ही उनके कुसुम कोमल शरीर को रस्से से कस दिया गया, नन्हें नन्हें हाथों में लोहे के आभूषण पहना दिये गये। पर मैना

[शेष पृष्ठ २२ पर]

मिस्र के प्रधान मन्त्री नहस पाशा

मिस्र के राजा शाह फारूक

ब्रिटेन के विदेश सचिव श्री बेविन

अन्तर्राष्ट्रीय उलझन की नई पहेली

मिश्र अंग्रेजों को धमकी दे रहा है

★ श्री शिवकुमार नीरस योगी

मध्यपूर्व के देश सदैव से ही साम्राज्यवादी देशों की लोलुपता का शिकार रहे हैं। सामरिक दृष्टि से आज की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को देखते हुए इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। पश्चिमी राष्ट्र इन देशों को सदैव से ही एशिया का प्रवेश-मार्ग मानते आये हैं। मिस्र भी इन देशों के भाग्य से अलग नहीं है। ब्रिटेन व फ्रांस के एक लम्बे संघर्ष के पश्चात् पूर्ण रूप से इस पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया था। समय समय पर मिस्र की राजनैतिक पार्टियों ने अपने देश की स्वतन्त्रता की मांग उठाई है। आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए इस महत्वपूर्ण छोटे से देश में गत दो दशाब्दियों से नीलघाटी की एकता का नारा चुनाव का एक सजीव अंग रहा है। मिस्र की संसद् में शाह फारूक की यह घोषणा कि ब्रिटेन नील नदी की घाटी की एकता को स्वीकार करे, कूटनीतिक जगत के लिए आश्चर्य नहीं रह गया है। आज की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति और ब्रिटेन की दुर्बलता का लाभ उठा कर मिस्र अपने इस अधिकार को फिर पाना चाहता है। आज तक ब्रिटेन इस समस्या को कुछ नर्मदली लोगों के सहयोग से टालता आया है। स्वर्गीय शाह फारूक भी इन लोगों में से एक थे। इस मेल मिलाप का एक लाभ यह हुआ कि १९३६ में एक आंग्ल मिस्री सन्धि पर हस्ताक्षर किये गये जो कि २० साल के लिये थी। शाह फारूक ने इसी सन्धि को तोड़ देने की धमकी दी है। आज के प्रधान मन्त्री नहसपाशा भी इस सन्धि में सम्मिलित थे। गत जनवरी में वफ्द पार्टी की चुनावों में जीत होने के पश्चात् यह स्पष्ट प्रतीत होने लगा था कि अब मिस्र निवासी सूडान को मिस्र में मिलाने की मांग करेंगे। इस समय सरकार ने अपनी नीति - सम्बन्धी घोषणा में कहा था कि शीघ्रातिशीघ्र नील नदी के दोनों भागों को विदेशियों से खाली कराया जायेगा और मिस्री ताज के अन्तर्गत एकता स्थापित की जायेगी।'

स्वार्थों का संघर्ष

शाह फारूक की घोषणा एक चेतावनी के रूप में ही गई है। आज जब कि विश्व, विशेष कर मध्यपूर्व के देश प्रत्येक पल युद्ध का खतरा अनुभव कर रहे हैं, इस का अर्थ कुछ कूटनीतिक पैंतरेबाजी ही कहा जा सकता है। यह सन्धि तोड़ने के लिये इस समय मांग करना हम तो एक राजनैतिक भूल ही कहेंगे, क्योंकि किसी न किसी प्रकार बातचीत से कार्य चल सकता था। यह एक न्याय का प्रश्न नहीं, अपितु सामरिक महत्व का प्रश्न है। वस्तुतः सूडान मिश्र का अविभाज्य अंग है। ब्रिटेन के स्वार्थ ही उसे मिस्र में मिलने से रोके हुए हैं। मिश्र जहां अपने इस प्रदेश की एकता चाहता है, वहां उसे आगामी युद्ध के समय एक खतरा भी प्रतीत होता है। यदि सूडान नील नदी का पानी बन्द कर दे, तो मिस्र की उपज को भारी धक्का लगेगा।

आज का राजनीतिज्ञ इस बात को भली भांति जानता है कि साम्यवाद की लहर से बचने के लिये मित्रराष्ट्रों को कोई उपयुक्त उपाय नहीं मिला है। आर्थिक शोषण व पिछड़ी दशा साम्यवाद के प्रसार में महत्वपूर्ण सहायक हैं। मध्यपूर्व के देशों का भी इन सभ्य कहे जाने वाले राष्ट्रों ने कम शोषण नहीं किया है। आज वहां आंतरिक विद्रोह की लहर दौड़ रही है।

आज की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को देखकर समस्त देशों को अपनी सुरक्षा करने की चिन्ता पड़ी है, और वह भविष्य में होने वाले आक्रमण के प्रति उदासीन नहीं हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि आज का संसार दो दलों में बटा हुआ है। इस गम्भीर स्थिति को देखकर किसी नेता द्वारा इसकी उपेक्षा करना अक्षम्य अपराध है। केवल इतना मानने से ही काम नहीं चलेगा कि सूडान मिश्र का है और उसे वह मिलना ही चाहिये। हमें यह भी देखना होगा कि इस समय इस चेतावनी के अर्थ हैं रूसी साम्यवाद का इन देशों में प्रसार।

यह तो नहीं कहा जा सकता कि मिश्र के नेता इस सम्बन्ध में अनभिज्ञ हैं। साथ ही यह कहने में आपत्ति नहीं है कि वह कुछ सीमा तक साम्यवादी प्रचार से प्रभावित हो गये हैं।

मिश्र की इस मांग के साथ-साथ हमें उसको सैनिक शक्ति पर भी नजरें डालनी होंगी। गत वर्ष इजराईल के प्रश्न पर जब अरब देशों ने मिलकर यहूदियों से मोर्चा लिया तो मिश्र की ब्रिटिश शिक्षित सेनाओं को पीछे भगा दिया गया था। मिश्र एक छोटा-सा राज्य है। आज दुर्भाग्यवश स्थिति छोटे देशों के पक्ष में नहीं है विशेषकर मध्यपूर्व देशों के लिये। रूस के साम्यवाद से बचने के लिये केवल दो ही उपाय हैं कि या तो उन परिस्थितियों को सुधारा जाय जिनसे साम्यवाद को प्रोत्साहन मिलता है और या किसी गुट में मिला जाय। 'साम्यवाद को रोकने के लिये धन की जरूरत होती है, साथ ही सैनिक शक्ति के कारण भी मिश्र अमरीका इत्यादि से अलग नहीं रह सकता है। इन दोनों की पूर्ति आंग्ल-अमरीकी गुट में मिलने से हो सकती है।

सामरिक दृष्टि से भी मध्यपूर्व का प्रदेश कम महत्वपूर्ण नहीं है। विदेशी सदैव से इन देशों में प्रभुत्व पाने के लिये उत्सुक रहे हैं। गत दो महायुद्धों में जर्मनी ने इस प्रदेश के कुछ भाग को रौंद कर इस भय को और बढ़ा दिया है। रूस भी इस क्षेत्र में तेल-कूपों पर अधिकार पाने के लिये अपने हाथ पैर फैला रहा है। भूमध्यसागर पर अधिकार रखने के लिये यह आवश्यक है कि मिश्र आदि प्रदेशों को प्रसन्न रखा जाय। इसके एक ओर पर स्वेज नहर है और दूसरे पर जिब्राल्टर का टापू, जिसके लौटाने के लिये भी स्पेन ने ब्रिटेन से मांग की है।

हमारा आशय यह कदापि नहीं है कि अपने देश को बेच दिया जाय, परन्तु हम यह भी नहीं मान सकते की देश को निरीह स्थिति में साम्यवाद का प्रचार क्षेत्र बनने दिया जाय।

इजराईल से अपनी सैनिक हार के समय मिश्र ने ब्रिटेन पर यह आरोप लगाया था कि वह उसे अस्त्र न देकर अन्य स्थानों को भेज रहा है। इसके विपरीत ब्रिटेन ने यह कहा है कि मिश्र में भ्रष्टाचार का जोर है। वहां पर सेना के लिये भेजे गये हथियार गुप्त रूप से बेच दिये जाते हैं। इस सम्बन्ध में कई महत्वपूर्ण स्थानों पर छापा मारकर हथियार पकड़े गये हैं और अनेकों लोगों पर मुकदमा चल रहा है। कुछ भी हो श्री बेविन की यह घोषणा कि 'ब्रिटेन मिश्र को असुरक्षित दशा में नहीं छोड़ सकता है' कम महत्वपूर्ण नहीं है।

इसके अतिरिक्त इस मांग के पीछे एक गहरी राजनीति है। प्रत्येक देश में मँहगाई बढ़ती जा रही है, और आर्थिक ढांचे के छिन्न-भिन्न होने के आसार प्रतीत हो रहे हैं। मिश्र भी इसका अपवाद नहीं है। वहां की जनता अत्यन्त गरीब और पददलित है। जनता की उन्नति आज की स्थितियों को देखते हुए असम्भव ही प्रतीत होती है। आने वाले जन विद्रोह को ध्यान में रखकर भी जनता के साथ राजनैतिक चाल खेली गई है। इसी कारण नील घाटी की एकता की मांग की गई है। सूडान मिश्र का ही अंग है। ब्रिटिश विदेश मन्त्री का यह कथन कि वहां के सम्बन्ध में जनता केवल स्वयं निर्णय करेगी केवल एक विभाजन की नीति प्रतीत होती है। इसी नीति का सहारा लेकर भारत में पाकिस्तान को जन्म दिया गया। सूडान में भी इस सम्बन्ध में उन्होंने जनता प्रदर्शन कराये हैं कि वह मिश्र से नहीं मिलना चाहती है।

मिश्र की यह घोषणा कि वह अटलान्टिक सन्धि में सम्मिलित नहीं होगा

[शेष पृष्ठ १८ पर]

जयपराजय की करुण कथा—२

वीरगंज में नौ दिन की आजादी

लेखक—
[श्री जगदीशचन्द्र अरोड़ा]
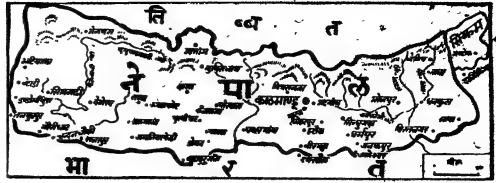
किसी भी आन्दोलन की सफलता के लिए जोश और उत्साह और लक्ष्य की महानता ही पर्याप्त नहीं होती।' स्वतन्त्र विद्रोह में तो आन्दोलनकारियों के व्यक्तिगत सच्चरित्र का भी विशेष महत्व नहीं है। नेपाल कांग्रेस के प्रथम प्रयास के विफल होने का मुख्य कारण यह है कि उनके पास अपने लक्ष्यों की उग्रता के अलावा और कोई भी साधन नहीं था, और केवल इसी साधन के आसरे चलाये गये आन्दोलन अल्प समय में सफल नहीं हो सकते। सशस्त्र विद्रोह के लिए जिन साधनों का कांग्रेस को आवश्यकता थी वे उसको उपलब्ध नहीं हुए। उनकी तरफ नेताओं का ध्यान भी नहीं गया और यदि वे साधन उपलब्ध हुए तो उनका गलत तरीके से उपयोग किया गया।

नैपाल कांग्रेस की भूलें

सशस्त्र विद्रोह की सफलता के लिए चार बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। वे चार हैं— प्रचार, संगठन, रसद और राजनीतिक दबाव। राजनीतिक दांवपेंच के बारे में मैं अपने पहले लेख में प्रकाश डाल चुका हूं।

प्रचार में त्रुटि

मैं १३ नवम्बर को वीरगंज उस समय पहुँचा, जब कि भारत के समाचारपत्रों में यह छप रहा था कि नेपाली कांग्रेस की ४० हजार सेना अमेलखगंज (वीरगंज से २४ मील दूर) से आगे बढ़ कर काठमान्डू के निकट पहुंच गई है। यह देखते हुए आज यह अनुमान करना भी कठिन हो रहा है कि इसके ठीक एक सप्ताह बाद वीरगंज पर सरकारी सेना का कब्जा हो गया। ऐसा क्यों हुआ? यह प्रश्न वह है, जिसका सच्चा उत्तर अभी तक किसी ने नहीं दिया। सच तो यह है कि जिस दिन मैं वीरगंज पहुँचा था, उस दिन कठिनता से कांग्रेस के ४० स्वयंसेवक वीरगंज परवानीपुर के मोरचे पर तैनात थे और यदि आमने सामने खुल कर लड़ाई होती तो उनके पास मुश्किल से एक घण्टे लगातार गोली चलाने के लिए बारूद था।

कांग्रेस की सबसे बड़ी भूल उसके प्रचार विभाग द्वारा हुई। यह समझ कर कि अपनी सफलता की खबर बढ़ा चढ़ा कर छापने से जनता में अधिक उत्साह बढ़ेगा और अधिक मदद मिलेगी, उन्होंने अपनी प्रारम्भिक सफलता को अधिक बढ़ा चढ़ा कर बताया।

परन्तु इसका असर ठीक उल्टा हुआ। जनता यह पढ़ कर निश्चिन्त हो गई कि कांग्रेस दो चार दिन में ही काठमान्डू पर कब्जा कर लेगी। उसके पास अत्यधिक शक्ति है। अतः जनता के नैतिक अथवा आर्थिक सहयोग की आवश्यकता है ही नहीं। असली मोरचे पर एक भी संवाददाता न था, जो सही खबरें भेजता। यहां तक कि प्रेसट्रस्ट भी पटना और रक्सौल-स्थित कांग्रेसी दफ्तरों द्वारा प्रसारित प्रचारात्मक समाचार ही वितरित करता रहा।

जनता की निष्क्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि वह इतनी निश्चिन्त हो चुकी थी कि वीरगंज खाली हो जाने के बहुत देर बाद उन्हें स्थिति का असली भान हुआ और वह भौंचक रह गई। सीमा पार भारत की जनता तो इस समाचार पर अपनी विश्वास ही नहीं कर सकी।

कांग्रेसी नेता यह भी भूल गए कि कोई भी राष्ट्र तब तक किसी विद्रोही आन्दोलन को मान्यता नहीं देता, जब तक कि विद्रोही किसी एक स्थान पर कब्जा करने के बाद उस स्थान की शत्रुओं के प्रत्याक्रमण से रक्षा करने में सफल नहीं हो जाते, अथवा समूचे देश पर अधिकार कर एक अरसे तक अपनी स्थायी सरकार कायम नहीं कर लेते। कांग्रेस दोनों में से किसी भी एक बात को पूरा नहीं कर पाई। अतः केवल प्रचारमात्र से दूसरे राष्ट्र की मान्यता प्राप्त करने की आशा दुराशामात्र थी।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि कांग्रेस का पहला वार बड़ा जबरदस्त था और उसने नौतान से लेकर विराट नगर तक नेपाल भारत की सीमा पर दस मील गहराई तक कब्जा कर लिया था, परंतु इससे आगे कांग्रेस की संगठित सेना कभी नहीं बढ़ी। हो सकता है कि दो चार की संख्या में उसकी गुरिल्ला टुकड़ियां अमेलखगंज तक पहुँच गई हों, परन्तु इससे युद्ध की वस्तुस्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ा। पहले वार की सफलता के बाद कांग्रेस राजनीतिक घटनाओं पर भरोसा कर अचेतन्य हो गयी और उसने आक्रमक नीति की बनिस्पत रक्षात्मक नीति अपनाई।

राणा सरकार चौकन्नी हो गई

नेपाली कांग्रेस का दूसरा सबसे बड़ा प्रचार यह था कि महाराजाधिराज पांच सरकार श्रीविक्रम शाह ही उसके साथ मिल कर स्वतंत्र सरकार की स्थापना करेंगे, जिसके परिणाम स्वरूप राणा सरकार के सैनिक हथियार डाल देंगे। उसके इस प्रचार का यह असर हुआ कि राणा सरकार चौकन्नी हो गई और उसने केवल उन्हीं सैनिकों और अधिकारियों को अग्रिम मोर्चे पर भेजा जो अत्यन्त विश्वास पात्र थे। कांग्रेस के इस प्रचार में कुछ सचाई की संभावना जरूर थी। परवानीपुर जिस दिन सरकारी सेना पहुंची थी, उस दिन उसने केवल हवा में ही फायर किये थे परन्तु जब उन्हें यह भेद ज्ञात हो गया कि कांग्रेस के पास सशस्त्र सेना के होने की बात केवल प्रचार मात्र है और कांग्रेस मुख्यतः उन्हीं के हृदय परिवर्तन पर भरोसा रक्खे युद्ध में उतरी है तो उसने रक्षा-पंक्ति को कुचलने में देर नहीं की।

शत्रु को अपनी तरफ मिलाने के दो ही रास्ते हैं। एक तो अपने सैनिक बाहुल्य से और दूसरे राजनीतिक दबाव से। महाराजाधिराज की चुप्पी के कारण राजनीतिक दबाव पड़ा नहीं और कांग्रेस का सैनिक बाहुल्य केवल प्रचार प्रमाणित हुआ। दुर्बल शत्रुओं के सामने कोई भी हथियार नहीं डालता।

वीरगंज में जिन १० सैनिकों को कांग्रेस ने गिरफ्तार किया था, उनसे मैंने बातें की थीं। उन्होंने यही कहा था कि वे नहीं जानते कि कांग्रेसी किसकी ओर से किस कारण लड़ रहे हैं। यदि पशुपतिनाथ नेपाल महाराज स्वयं उन्हें आज्ञा दें तो कांग्रेस के साथ मिलकर राणाशाही के विरुद्ध लड़ने को तैयार थे।

२४ घन्टों में ही कायाकल्प

प्रचार संबन्धी तीसरी भूल यह थी कि जिन बातों के प्रचार करने की आवश्यकता थी, उनको जनता के सम्मुख नहीं रक्खा गया। कांग्रेस ने अपने आन्दोलन के साथ ही साथ जिन सुधारों पर अमल किया, उसका विस्तृत विवरण बहुत ही कम लोगों को मालूम है। नेपाल की तराई के जिन भागों पर कांग्रेस का अधिकार होता गया, वहां कांग्रेसी शासन ने तुरन्त ही भूमि संबंधी सुधार लागू कर दिये। बड़े बड़े जमींदार तो राणा वंशज ही थे, जिनके विनाश के लिए ही कांग्रेस अग्रसर हुई थी। अतएव कांग्रेस ने ऐसे जमीनों को जिनके कि मालिक काठमान्डू में बैठे राणा लोग थे किसानों को दे दी। साथ ही साथ कांग्रेसी नेताओं ने यह घोषणा भी की कि काठमान्डू में महाराजाधिराज की जनतन्त्र सरकार बनते ही नया चुनाव होगा, जिसमें १८ वर्ष के प्रत्येक नरनारी को मतदान का अधिकार होगा। वीरगंज के अपने नौ दिन के शासन में ही कांग्रेस ने प्रत्येक बालक और बालिका के लिए प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क कर दी थी। वीरगंज में आम सभा कर कांग्रेस ने नेपाल के इतिहास में भाषणस्वातंत्र्य का एक अद्वितीय नमूना पेश किया था। इस सभा में केवल नेताओं ने ही भाषण नहीं किये थे बल्कि जनता में से भी जिस जिसने चाहा वह भी मंच पर आकर बोला। वीरगंज की सड़कों पर खुले आम शराब बिका करती थी और जुआ होता था। कांग्रेसी शासन ने इसे पूर्णतः ही मिटा दिया। वीरगंज में बिजली घर है, परन्तु अब तक बिजली केवल कुछ राणाओं और धनी सेठों के बंगलों में ही लगी हुई थी। कांग्रेसी शासकों ने अधिकार के ४८ घंटे के भीतर ही वीरगंज की गलियों में बिजली लगवा दी और बिजली घर के २४ सों घंटे काम करने की व्यवस्था कर दी। इसी अल्पकाल में वीरगंज में एक

श्री मातृकाप्रसाद कोईराला

[शेष पृष्ठ १८ पर]

कम्यूनिज्म क्यों अस्वीकार है?—३

★ श्री गुरुदत्त

छल-बल से अपने सिद्धांत का प्रचार कम्यूनिस्टों का तीसरा सिद्धांत है और इसके कारण आज रूस में केवल ३ फी सदी बोलशेविक ९७ फी सदी पर जिस निरंकुशताव, जिस आतंक के द्वारा राज्य करते हैं और विभिन्न देशों में कम्यूनिस्ट राज्यों की स्थापना करते है, उसका चित्र इस लेख में देखिये—

कम्यूनिज्म के ढांचे के भीतर तीसरा सिद्धांत है, अपना सिद्धि के अर्थ, बल, छल और प्रत्येक प्रकार के साधन को उपयुक्त मानना। इसी की विवेचना करने के उद्देश्य से यह लेख लिखा गया है।

हम अपने पहले दो लेखों में कम्यूनिज्म के दो अन्य सिद्धांतों के विषय में संक्षेप से लिख चुके हैं। उनमें हमने यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि कम्यूनिज्म नास्तिकवाद और अनात्मवाद का एक विशिष्ट रूप है, साथ ही हमने यह भी लिखा है कि कम्यूनिज्म मनुष्य के पूर्ण इतिहास को शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रयत्नों का चिट्ठा मात्र मानता है। हमने यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि इन दोनों सिद्धांतों के मान लेने से मनुष्य समाज में पतन ही होने की संभावना

यह तीसरा सिद्धांत भी मनुष्य समाज के लिए पहिले दोनों से कम हानिकारक नहीं है।

राज्य बल के आश्रय ही चल सकते हैं। अभी तक अहिंसात्मक उपायों से चल सकने वाला राज्य निर्माण नहीं हुआ। अशोक सम्राट का राज्य भी उस हिंसा के दबदबे से चलता रहा था, जो उसने अपने जीवन के पूर्व काल में की थी। अशोक एक बली और पराक्रमी राजा था। उसने अहिंसा का से पूर्व प्रायः भारतवर्ष को अपनी शक्ति से विजय कर लिया था। जो कुछ शेष रह गया था, वह शायद तलवार के बल से विजय हो भी नहीं सकता था। आज के जमाने में तो राज्य चलाने के लिए बल से भी अधिक छल और कपट से काम चलता है।

परन्तु राज्य का यह काम नहीं होता कि विचारों का प्रसार राज्य शक्ति से करे। राज्य तो समाज में प्रचलित आचार-व्यवहार के चलाने में ही अपनी शक्ति का प्रयोग कर सकता है। राज्य की ओर से प्रजा में किसी वस्तु के प्रचार के लिए शक्ति का प्रयोग हो जाना स्वाभाविक है। राज्य की ओर से अथवा किसी संस्था या व्यक्ति की ओर से विचार-प्रसार के लिए बल प्रयोग किसी प्रकार भी वांछनीय नहीं है। इससे संसार में दुःख, अशान्ति और तदनन्तर विनाश की प्राप्ति होती है।

यह बात एक उदाहरण से स्पष्ट हो जावेगी। हिन्दुओं की विवाह-प्रथा में सम्बन्ध विच्छेद को स्वीकृति नहीं है। कुछ लोग यह रिवाज जारी करना चाहते हैं। यह रिवाज तबही प्रचलित हो सकता है जब राज्य की ओर से इस बेचन का नियम बन जावे। इस विषय में राज्य को नियम तबही बनाना चाहिये, जब प्रजा में बहुमत इसके पक्ष में हो। न तो राज्य, न ही किन्हीं लोगों का कोई गुट्ट बलपूर्वक किसी प्रथा, विचार अथवा सिद्धांत को प्रचलित कर सकता है। ऐसा करने से विप्लव, रक्तरंजित क्रांति, हत्याकांड और अन्य इसी प्रकार के घोर भयंकारी कार्य होने संभव हैं। इससे समाज में उन्नति के स्थान पर अवनति होनी निश्चय है।

विचार-प्रसार व्यक्ति का अधिकार है, परन्तु वे छल-बल से लोगों पर आरोपित नहीं किये जा सकते। एक व्यक्ति अथवा कोई संस्था, जो बल प्रयोग करने की शक्ति रखती हो, प्रचार करने के अयोग्य मानी जानी चाहिये।

कम्यूनिस्ट ऐसा नहीं मानते

कम्यूनिस्ट ऐसा नहीं मानते। वे समझते हैं कि कुछ धूर्त लोगों ने पूर्ण संसार के लोगों को भ्रम में डाल रखा है और संसार के बहुसंख्यक लोगों को उनके भ्रम से मुक्त करना संभव नहीं। इस कारण जब कुछ लोग वास्तविक परिस्थिति को समझने वाले हो जावें, तो उनको अपने में शक्ति उत्पन्न कर बल से अपनी बात मनवा लेनी चाहिये। मान लो कि कुछ लोग यह समझते हों कि हिन्दुओं के षट् दर्शन भ्रम और व्यर्थ का वितंडावाद उत्पन्न करने वाले हैं और इन लोगों के हाथ फौजी शक्ति आ जावे, तो क्या इन लोगों का अधिकार हो जाता है कि वे उन ग्रन्थों को एकत्रित कर जला डालें अथवा इनका पठन-पाठन बन्द कर दें। इसी प्रकार की बात का करना कम्यूनिस्ट अपना हक समझते हैं।

कम्यूनिस्ट राज्य की स्थापना

जहां जहां भी कम्यूनिज्म का प्रचार हुआ है, वहां इसी नीति का अवलम्बन करने से हुआ है। कुछ लोग समझा बुझा कर अथवा कम्यूनिज्म का बाहरी मुलम्मा दिखा कर अपने पक्ष में कर लिये जाते हैं, पश्चात राज्य सत्ता पर अपना अधिकार जमाने के लिए हथियार एकत्रित कर छापा मारने का यत्न करते हैं और जब राज्यसत्ता हाथ में आ जाती है तो लोगों को बाहरी प्रभाव से पृथक करने के लिए उन का सम्पर्क बाहर के लोगों से तोड़ दिया जाता है। देश के अन्दर भी ज्ञान प्रसार में बाधाएं खड़ी कर दी जाती हैं। ऐसा हो जाने के पश्चात बाहर के लोगों में यह विख्यात कर दिया जाता है कि कम्यूनिज्म का बोलबाला है।

रूस, चीन, पोलैंड, रूमानिया आस्ट्रिया हंगरी इत्यादि सब देशों मे जहां कम्यूनिज्म का प्रचार हुआ है, इसी ढंग से हुआ है। थोड़े से लोग इस के पक्ष में हो जान पर लूट डाका राहजनी विद्रोह इत्यादि आरम्भ कर दिया गया। देश पर किसी विदेश से आक्रमण के पीठ मे छुरा घोंप देने के समान विप्लव खड़ा कर दिया और पीछे अपने दलों के लोगों का राज्य स्थापित कर सब को लोह आवरण में ढांप दिया। इस प्रकार एक कम्यूनिस्ट राज्य का स्थापना हो जाती है।

रोटी बनाम विचार स्वातंत्र्य

यह कहा जाता है कि इन देशो की पहली अवस्था बहुत खराब थी। इस पर भी यह मस्तिष्क को गुलामी तो उन देशों के लोगों की पहली अवस्था से अधिक हानिकर ही है। रोटी कपड़े की कमी एक बुरी वस्तु है, परन्तु विचार और आचार की पराधीनता तो उस से भी बुरी है। रूस की अवस्था के आकड़े हम इस सिद्धांत, कि उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोई भी उपाय ठीक है, के हानिकर होने को बहुत अच्छी तरह बता देंगे।

तीन प्रतिशत का राज्य

रूस मे एक पार्टी का राज्य है, जो रूस के बहुत ही कम सख्यक लोगों का प्रतिनिधित्व करती है। १९४९ सन् के 'बोलशेविक' नम्बर १ में राज्यारूढ पार्टी के सदस्यों की सख्या पचपन लाख बताई गई है। रूस की जन सख्या सत्रह करोड़ है। इस का अभिप्राय यह हुआ कि पार्टी के सदस्यो की संख्या पूर्ण जन सख्या से केवल ३ प्रतिशत है। यूं तो एक पार्टी के विचार से सदस्यो की यह संख्या अच्छी खासी है, परन्तु जब उन अधिकारों की ओर देखे जो इस पार्टी ने अपने लिए सुरक्षित कर रखे हैं तो यह एक पार्टी की धींगामस्ती ही मालूम होती है।

इस पार्टी ने रूस के विधान की धारा नम्बर १०६ मे यह पास कर रखा है' 'मजदूर श्रेणी के सब से अधिक कर्मशील और सचेत नागरिकों की सस्था बोलशेविक पार्टी है। यह सोविएट यूनियन के श्रमिको में हरियावल और समाजवादियों का राज्य स्थापित कराने में अग्रसर रही है। अतएव देश में यही एक राजनीतिक दल होगा और सोविएट यूनियन मे केवल यह ही अपना सगठन का अधिकार रखेगा।

इस का स्पष्ट अर्थ यह निकलता है कि ३ प्रतिशत का राज्य हो जाने के पश्चात कभी भी शेष ९७ प्रतिशत के हाथ में राज्य की बागडोर नहीं आ सके।

अभियान

श्री कमल साहित्यालंकार

मैं पतन के मूल मे उत्थान भरने आ रहा हू।

जा रहा हूं क्षोभ सागर की लहर को लहर दे कर,
बादलों के बीच में मैं बिजलियों के दाप लेकर,
देखना है मृत्यु के वे दांत तीखे और काले,
हैं कहां, माया रचाने सृष्टि के संहार वाले,
मृत्यु से फिर जन्म का संघर्ष लेने आ रहा हू,
मैं पतन के मूल में उत्थान भरने आ रहा हू।

कर्मपथ में मृत्यु का भी सामना करना पड़ा है।
सत्य समझो मरण की ही गोद में जीवन पला है,
सांप बिच्छू चूमने को अधर मेरे हंस रहे हैं,
और पाद्याघात से हर शृंग गिरि के धंस रहे हैं,
जन्म में अभिशाप को वरदान करने आ रहा हू,
मैं पतन के मूल में उत्थान भरने आ रहा हूं।

हुए ६० प्रतिशत को न तो अपने को संगठित करने का अधिकार है, न ही उन को अपने विचार प्रसारित करने का अवसर मिलता है।

रूस के अन्दर किसी भी बोलशेविक पार्टी की समालोचना करने की स्वीकृति नहीं दी जाती। अपनी पार्टी के अपने लोग समालोचना कर सकते हैं, परन्तु यह आत्म निरीक्षण एक ऐसी पार्टी के सदस्यों से, जिस का आधार बल पर हो, शुद्ध आत्म भ्रम ही हो सकता है। जो भी सदस्य पार्टी के सिद्धांतों पर टीका टिप्पणी करता है वह पार्टी से निकाल दिया जाता है। कम्यूनिष्ट पार्टी की सत्रहवीं कांग्रेस में 'स्वजुक' की रिपोर्ट पर टीका टिप्पणी करते हुए कागानोविच ने बताया कि एक वर्ष में बोलशेविक पार्टी के १८२२०० सदस्य निकाल दिये गये थे। इस प्रकार का पार्टी से निकास प्रायः चुनावों के पहिले होता है। १९३८ में सुप्रीम कौंसिल के चुनाव से पहिले खुफिया पुलिस के कहने पर २४०२१६ लोग पार्टी से निकाल दिए गए थे।

रूस में आतंक का राज्य

कम्यूनिस्ट पार्टी का आधार बल और छल है। इस पार्टी से चल रहे राज्य का आधार भी छल और बल है। परिणाम यह हो रहा है कि अपने लोगों पर राज्य करने के लिए भी छल और कपट का प्रयोग आवश्यक हो गया है। इस प्रयोजन से रूस सरकार को पांच लाख से भी अधिक जासूस रखने पड़ रहे हैं। जब भी कहीं किसी प्रकार का आन्दोलन खड़ा हो जाता है, तो जासूस झुंड के झुंड जा पहुँचते हैं और उस आन्दोलन को दबा देते हैं। लोग इनसे इतना डरते हैं कि परस्पर खुल कर बात भी नहीं कर सकते। यह डर अकारण नहीं है। जहां ये जासूस पहुंच जाते हैं, वहां पकड़-धकड़ और फिर मौत के दंड की आज्ञाओं की भरमार हो जाती है। लोगों का ऐसा अनुमान है कि जासूसी विभाग में जनता के प्रत्येक दस के पीछे एक जासूस है। इस पर यह भी याद रखना चाहिये कि कचेहरियों में, बोलशेविक पार्टी के चुने प्रतिनिधि होते हैं। जासूस भी बोलशेविक पार्टी से ही भर्ती किए जाते हैं। परिणाम यह होता है कि रूस की खुफिया पुलिस की शक्ति इतनी अधिक है कि लोग पकड़े जाते हैं, उन पर मुकद्दमा चलाया जाता है और उनको दंड दे दिया जाता है और किसी को पता तक भी नहीं लगता। प्रायः तो यह होता है कि अभियुक्त को भी अपने पर लगाए गए आरोप और हो रहे मुकद्दमे का पता नहीं चलता। पकड़ने के कुछ दिन पीछे सुना दिया जाता है कि उसको अमुक दंड दे दिया गया है। इस प्रकार दिये दंड की कोई अपील नहीं हो सकती। बाहर के लगत अर्थात पकड़े जाने वाले के सम्बन्धियों को, यदि उसे फांसी दी गई हो तो उसके कपड़े वापस करने पर और यदि उसे कैद का दंड मिला हो तो उसके शेष कपड़े मांगने पर पता चलता है कि उसे किसी जेल में भेजा जा रहा है या साइबेरिया में भेजा जा रहा है। किसी को नहीं भी बताया जाता।

कभी किसी के सम्बन्धियों पर आतंक जमाना होता है तो अभियुक्त को उनके सम्मुख ही फांसी पर लटका दिया जाता है प्रायः कैदियों को बचाने के लिए उनके प्रिय सम्बन्धियों, स्त्री, पुत्र इत्यादि को उनके सम्मुख अपमानित किया जाता है या मारा पीटा जाता है।

इस पशुपन के कृत्य केवल इस लिए होते हैं कि कम्यूनिस्ट मीमांसा बल और छल पर आश्रित है। जब यह मान लिया जावे कि पूर्ण संसार मूर्खों से भरा हुआ है और उनको समझाया नहीं जा सकता और साथ ही उनको कुछ एक जाने वाले धूर्तों के पंजे से छुड़ाना आवश्यक है तो इस प्रकार की पुलिस और इस प्रकार के न्यायालय बनाने आवश्यक हो जाते हैं।

अंग्रेजी सरकार के काल में बहुत ही संगीन मुकद्दमे बन्द कमरे में किए जाते थे और लोगों को उन मुकद्दमों की कार्रवाई का पता नहीं चलने दिया जाता था। यह केवल इसलिए था कि सत्य बात के पता चल जाने से लोग सरकार के और विरुद्ध हो जावेंगे। उस समय भारत में सत्य बंदी की भांति होता था। यही कारण रूस में मुकद्दमें की कार्रवाई को खुफिया रखने का है। यह सब मनुष्यता से इतनी बातें इसलिए हो पाती हैं कि अधिकारी लोग जनता को मूर्ख समझते हैं। वे डरते हैं कि यदि मुकद्दमे की कार्रवाई अथवा अभियुक्त का बयान लोगों को पता चल गया तो वे इतने मूर्ख और जाहिल हैं कि सोवियत और कम्यूनिज्म के विरोधी हो जावेंगे। यह सभ्य देशों की बातें नहीं हैं।

भारत में भी कम्यूनिस्टों ने यही चाल चलाने का यत्न किया है। हैदराबाद स्टेट और मद्रास स्टेट के कुछ जिलों में जब भारत सरकार देश का प्रारम्भिक प्रबन्ध में संलग्न थी, विप्लव खड़ा कर दिया था। लूटमार और मारकाट कर सरकार पलटने का प्रयत्न कम्यूनिस्टों की एक पेटेन्ट वस्तु।

यह नीति न तो मनुष्य समाज के विकास में सहायक है। नहीं किसी देश में शान्ति स्थापित करने में मनुष्य समाज के वर्तमान विकास की अवस्था हजारों वर्षों के संघर्ष के पश्चात प्राप्त की है, और कम्युनिज्म इसको पुनः प्रारम्भिक पशुपन की ओर ले जाने वाला सिद्ध हो रहा है।

जब किसी विचारधारा के प्रचार और उसके स्थिर रखने के लिए बन्दूक, तलवार और बम चलाने की आवश्यकता हो, जब इसके लिए लाखों जासूसों की आवश्यकता हो, जब इसके लिए बिना अपराध बताये अथवा बिना मुकद्दमा किये अभियुक्त को दंड दिया जाना आवश्यक माना जावे, जब बड़े बड़े अफसरों को विष देकर अथवा हत्यारे के छुपे हुए छुरे से मरवाने की आवश्यकता मानी जावे और जब इसके लिए साइबेरिया जैसे शीत देश में लाखों कैदियों को जबरन मजदूरी कार्रवाई की जाने की आवश्यकता समझी जावे तो ऐसी विचारधारा की संसार को आवश्यकता नहीं है।

ये कम्यूनिज्म के तीन सिद्धान्त हम तीन लेखों में वर्णन कर दिये हैं। अपने एक सिद्धान्त के अनुकूल ही, जनसाधारण को ये नहीं बताये जाते, उनके लिए तो कम्युनिज्म या तो धन-संपत्ति का बराबर-बराबर भोग करना है, या सबको खाने, पहरने और रहने को आवश्यकता के अनुसार सामान का मिलना है। उक्त कठोर बातों की तो झलक तक भी देखने नहीं दी जाती। अपने अगले लेख में हम कम्यूनिज्म के इस बाहरी आडम्बर के विषय में लिखेंगे।

कुलपति नरेन्द्र निर्माण साधना के लिए अपने घर से निकले थे। पर सुरम्य हुगली के तट पर विद्यार्थियों को शिक्षा दान देने का लघु प्रयास विराट गुरुकुल के रूप में परिणत हो चुका था। राजपाल और राघवेन्द्र आचार्य नरेन्द्र के प्रमुख शिष्यों में से थे। गुरुकुल की सम्पूर्ण शिक्षा समाप्त कर यह दोनों विद्यार्थी गुरु के प्रेरणामय सन्देश के साथ जीवनक्षेत्र में प्रवेश करते हैं, तथा जीवन और जगत की समस्याओं का समाधान ढूंढने की ओर अग्रसर होते हैं। राघवेन्द्र आचार्य देव के सम्पर्क में आकर गांधीवाद की ओर प्रवृत्त होता है। इधर राजपाल अनेक प्रकार की मानसिक उथल-पुथल के पश्चात् राष्ट्रीय चरित्र निर्माण का आवश्यकता का अनुभव करता तथा एक चित्तता से उसी कार्य में लग जाता है। राजपाल अपने पूर्व सहपाठी आनन्द के सम्पर्क में आता है, जो साम्यवादी विचारधारा से पूर्णतया प्रभावित है। इस प्रकार दोनों ही अपने निर्दिष्ट मार्गों की ओर बढ़ रहे हैं।

नया धारावाही उपन्यास

समस्या का हल

★ श्री कोमलसिंह सोलंकी ★

[गतांक से आगे]

एक दिन जब राजपाल कुछ बैठे विचार कर रहा था, मां ने पूछा—मेरे लाल! क्या तुम अकेले इस इतने बड़े समाज में जागृति का कार्य कर सकते हो, जब एक दूसरे को कुचल कर अपनी अपनी स्वार्थ-साधना ही आज के मनुष्य का लक्ष्य है।

प्रश्न में बहुत कुछ वास्तविकता थी फिर भी राजपाल यह मानने को तैयार नहीं था कि वह अकेला है उसने धैर्य से उत्तर दिया—

मां, मैं अकेला नहीं हूं—भारतीय संस्कृति का पोषक कोटि कोटि बंधु भारत भूमि के अंचल में फैले हुए हैं और स्वार्थ, स्वार्थ तो बुराई है मां! यदि मनुष्य बुराई सीख सकते हैं तो भलाई भी। हमें घर घर जा कर बुराई को भलाई में बदलना पड़ेगा।

यह राजपाल के प्रतिदिन के जीवन को देख कर मुग्ध हो मन ही मन प्रसन्न थी। उसे भी समाज की इस दयनीय स्थिति पर क्षोभ था पर सरकार, वह सरकार की बर्बरता से पूर्ण परिचित थी इसीलिये उसका मातृ हृदय भय से एक बार कांप उठता था। वह राजपाल को कभी कभी रोकना चाहती, पर सरकार अन्यायी है, यह विचार उसे रोकने न देता था।

'बेटा, इस अपने कहलाये जाने वाले राज्य में लोग भूखे मर रहे हैं, कपड़े के दर्शन नहीं होते—क्या होगा हमारे देश का' यह दूसरा प्रश्न था।

'हां मां, आज की अवस्था बड़ी खराब है किन्तु कोई क्या करेगा। लोग मजदूरों की सरकार के नारे लगाते हैं पर क्या होता है उससे। एक अत्याचार के स्थान पर दूसरा अत्याचार। यह तो हल नहीं है। जिस राष्ट्रीय चरित्र की आज देश को आवश्यकता है, वह हमारे पास नहीं है। जो कोई अधिकारी बन जाता है, जनता को भूलता है। जब देश में चरित्रवान व्यक्ति निर्माण हो जावेंगे तभी देश की दशा जरूर सुधरेगी।' बात बहुत लम्बी थी शायद मां ने थोड़ा बहुत अवश्य समझा हो।

राजपाल ने आगे कहा, मां हम भारतीय समाजवाद को भूल गये। आज के समाजवादी राष्ट्र की आत्मा को नहीं पहिचान सकते। हिन्दू समाज स्वयं ही समाजवाद की समानता और एकात्मकता पर खड़ा है, पर आज का समाजवाद दिमागी ऐयाशी का परिणाम है। हमें केवल चेतना निर्माण करना है!'

मां ने बहुत सी किताबें पढ़ी थीं किन्तु इन सब बातों का हल उसे समझ में नहीं आता था और न ही वह समझना नहीं चाहती थी, उसने कहा—अच्छा है बेटा, सफलता प्रभु की इच्छा पर निर्भर है मनुष्य को कार्य करना चाहिये।

राजपाल मां की इस बात से पहले बहुत ही क्षुब्ध हो जाया करता था किन्तु अब वह अनुभव कर रहा था कि 'प्रभु की इच्छा' कहने के पीछे भी जिस समाज के व्यक्ति की आशाओं का जीवन है, वह हताश नहीं हो सकता और जिस समाज के व्यक्ति हताश नहीं हुए, वह अमर है।

[१]

आचार्य की बैठक में पहुँच कर राघवेन्द्र ने देखा कि कुछ मामला ही विचित्र है। दो स्त्रियां आधुनिक वेश में बैठी हुई वार्तालाप कर रही हैं। दरवाजे में घुसते ही वह कुछ झिझका, पर आचार्य ने तुरन्त ही कहा—क्यों? रुक क्यों गये, चले आओ!

राघवेन्द्र ने एक कुरसी अपनी ओर खींच ली और बैठ गया।

'राघव, सुनो, मैं पहिले तुम से इनका परिचय किये देता हूं और आप का जो आवश्यक कार्य है, वह बताऊंगा।

आप जो मोती साड़ी पहिने बैठी हुई हैं, आप का नाम है बेगम जेबुन्निसा, आप आजकल नगर कांग्रेस कमेटी की बड़ी उत्साही कार्यकर्त्री हैं, आपका नाम इस प्रान्त में बहुत प्रख्यात है।

और उन्हीं के पास जो आसमानी साड़ी पहिने बैठी हुई है, उनका नाम है मिस लीला गर्ग। आपने इसी वर्ष बी० ए० पास किया है। आप भी सामाजिक और राजनैतिक मामलों में बहुत सहयोग देती हैं।'

राघवेन्द्र ने शिष्टता के नाते नमस्ते की और नमस्ते के उत्तर के साथ राघवेन्द्र को मिला मधुर हास, विचित्र आकर्षण!

फिर आचार्य बोले—

'और इनका नाम है मि० राघवेन्द्र वर्मा। आप रांची गुरुकुल के स्नातक हैं और आजकल मेरे सहायक राजनीति से आपको बहुत प्रेम है। आप में साम्प्रदायिकता नहीं है यद्यपि आपका शिक्षण गुरुकुल में हुआ है।'

'मि० राघवेन्द्र से मिल कर बहुत खुशी हुई है बेगम ने कहा!

कुछ क्षण के हास विलास के पश्चात पुनः आचार्य ने कहा—

'अच्छा राघव, मैंने तुम्हें इसलिये बुलाया है कि तुम बेगम साहब के साथ जाकर कमेटी के कुछ जरूरी कागजात ले आओ। बहुत जल्दी ही शायद उनकी जरूरत पड़ेगी। सुना है, श्री रामकृष्ण जी अर्थमंत्री ने आज स्तीफा दे दिया है, देखो!'

उनकी वाणी में आशा की पुन भावना काम कर रही थी। सभी ने अनुमोदन किया।

बेगम ने कहा —खुदा करे अब अर्थमन्त्री आप बनें।

लीला ने भी हां में हां, मिलाते हुये कहा —'क्यों नहीं, परिश्रम असफल नहीं जाते।

× × ×

राघवेन्द्र ने तुरन्त अपने कमरे जाकर धुली हुई धोती और कुरता पहिना। सिर पर खद्दर सफेद टोपी! राघवेन्द्र का सौन्दर्य निखर आया था। उसके जीवन का वह सुनहला काल था। यौवन की मस्ती और सुख पर लाली। आजीवन ब्रह्मचर्य का तेज उसके मस्तक पर आज आ उतरा था।

'चलिये राघवेन्द्र ने आकर कहा।

'अच्छा तो अब चलूं, काफी देर हो गई है, जेबुन्निसा ने कुरसी छोड़ते कहा।

मोटर तैयार थी। ड्रायवर तो बहुत देर से बाट जोह रहा था।

मोटर हवा में बात कर रही थी। कितने ही बाजारों और मंडियों को पार करती हुई मोटर अपनी चाल में चली जा रही थी।

'मि० राघवेन्द्र', जेबुन्निसा ने अपना हाथ राघवेन्द्र के हाथ पर रखते हुए पूछा — आपने गुरुकुल कब छोड़ा?

राघवेन्द्र सिहर उठा! कोमलांगी के स्पर्श से उसका हृदय धड़क उठा, मानों अपना इस स्थिति पर उसे आश्चर्य था। उसने आंखें उठाईं, उन्हें तरुणी की आंखों से मिलाते हुए वह एक बार कांप गया, पर अपनी इस निर्बलता को छिपाने का प्रयत्न कर, सम्हल कर बैठते हुए उसने कहा —

केवल एक वर्ष।

रास्ता तय हो चुका था। मोटर रुकी। दोनों ने देखा, बंगला आ गया। जेबुन्निसा ने उतरते हुए कहा —

आइये, यही मेरा गरीबखाना।

राघवेन्द्र ने कृतज्ञताभरी दृष्टि से देखा, और उसके पीछे चल दिया।

बंगले के भीतरी भाग में एक अति सुन्दर सजा हुआ हरा भरा कमरा है। सुन्दर पलंग, कुरसी, टेबल बिलकुल नई ढंग की सजावट! आलमारी में बहुत सी मोटी-मोटी पुस्तकें रखी हैं।

कुरसी की ओर दोनों हाथ बढ़ाते हुए जेबुन्निसा ने कहा — तशरीफ रखिये।

राघवेन्द्र बैठ गया। उसके हृदय में कोलाहल मच गया था। वर्ष भर से आश्चर्य के साथ रहते-रहते उसे इन सब बातों का आभास तो हो गया था। किन्तु इतनी मर्यादाहीनता देख कर वह व्यथित था। आखिर इतना सब कुछ क्यों? क्या इन्हीं पर राजनीति के बड़े-बड़े दाव-पेंच निर्भर हैं।'

कुरसी पर बैठते हुए राघवेन्द्र ने कहा — 'शाम हो रही है। कागजात जल्दी ही निकाल कर मुझे समझा दें, तो बड़ी कृपा होगी।'

'जल्दी की क्या बात है, आपका ही तो घर है, बैठिये।'

बीच में दरवाजे की ओर देखते हुए चाय की आवाज देकर राघवेन्द्र को सम्बोधित करते हुये कहा —

'मि० राघवेन्द्र, क्या मैं आपसे कुछ पूछ सकती हूं?

'क्यों नहीं!'

'मि० आचार्य की क्या उम्र होगी?'

प्रश्न बड़ा मार्मिक था। राघवेन्द्र इसी में उलझ गया कि वह उसका क्या उत्तर दे। उसने कुछ सोचते हुए कहा —

'करीब चालीस ! किन्तु अभी भी हमारे आचार्य कर्त्तव्य में किसी भी युवक से पीछे नहीं हैं।'

'और आपकी आयु ?'

'मेरी, मैं तो २१ वर्ष पूरे कर चुका हूं।'

राघवेन्द्र ने दोनों ही समय उसके मुद्रांकित भावों को पढ़ा। उसे दूर से मुखाकृतियों को देख कर उनकी मनोवैज्ञानिक जानकारी हो तो चली थी, किंतु इतनी निकटता, यह भी उसके जीवन का पहिला पाठ था।

जेबुननिसा ने सहमते हुए कहा—कुछ नहीं मैंने तो वैसे ही पूछा था। जानकारी फायदेमंद ही तो है। आपको कोई एतराज तो नहीं है ?

इसमें भी क्या एतराज हो सकता है, राघवेन्द्र ने हां में हां मिला दी।

'मि० राघवेन्द्र' जेबुननिसा ने स्थिर बोलते हुए कहा—महात्मा गांधी ने देश के साथ जितना उपकार किया हम हिन्दुस्तानी उसे कभी भूल नहीं सकते। क्या आप उम्मीद कर सकते हैं कि मैं और आप इस प्रकार बैठ कर बातचीत और खानपान कर सकते थे। हरगिज नहीं। मजहब हमारी अपनी चीज है।'

'हां इसमें क्या शक। धर्म व्यक्ति की चीज है। समाज और राजनीति उसके क्षेत्र नहीं। राजनीति, इसमें तो धर्म और मजहब का घुसना बिलकुल बेबुनियादी है।'

राघवेन्द्र हिन्दुस्तानी बोलने का प्रयत्न कर रहा था, किन्तु उसके मुंह से हिन्दी के शब्द रोकने पर निकल ही पड़ते थे।

और क्या। अच्छा लीजिये चाय।'

राघवेन्द्र छुआछूत के विचारों से घृणा करता था उसने चाय लेते हुए कहा—शुक्रिया। 'राघवेन्द्र मानों धर्म की इस संकुचित कल्पना को पार करने में गौरव समझने लगा था। उसने उस वातावरण में जेबुननिसा को देखा—उसकी आंखें मानों उसे धोखा दे रही थीं।

'अच्छा अब रात बढ़ रही है। दादा मेरी राह देख रहे होंगे।'

'हां हां, इन कागजों में समझने ऐसी कोई बात नहीं है। केवल इतना ख्याल रखना जरूरी है कि वे कहीं गुम न हो जावें और किसी और तक पहुंचें भी नहीं। इनका राज केवल मि० आचार्य ही जानते हैं।'

'धन्यवाद' राघवेन्द्र उठ खड़ा हुआ मोटर तयार थी ही। राघवेन्द्र घर लौटा। रात के दस बजे थे।

× × ×

'राघव आ गये' दरवाजे पर ठहरते हुए आचार्य ने कहा—

[illegible]'

इन्हें सेफ में बन्द करके रख दो। सुबह इन्हें ठीक रख देना। अब तो रात बहुत हो गई।

राघवेन्द्र ने कागजों को रख कर जब बिस्तर पर अपना पैर रखा, उसका सिर चक्कर खा रहा था। वह क्या उद्विग्न था। क्या यही जीवन का आदर्श है, धर्म देश सेवा · ···

'ओह, मैं बहुत पीछे हूं। दर्शन शास्त्र की पुस्तकें और उनका ज्ञान आज के जीवन में कैसे उतर सकता है। आज तो संसार बढ़ रहा है—हमें भी बढ़ना चाहिए—

(क्रमश:)

—×—

★

राष्ट्रीय स्वंयसेवक सङ्घ दिल्ली का वार्षिकोत्सव

★

१

२

३

४

1. उत्सव के अध्यक्ष श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी सङ्घ के संस्थापक स्व० डा० केशवराव की प्रतिमा को पुष्पमाला पहना रहे हैं।

२. श्री मुखर्जी सङ्घ के ध्वज का उद्घाटन कर रहे हैं।

१. उत्सव के सभापति श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी श्री [प्रभाकरराव दाणी और] डा० हरिश्चन्द्र के साथ मंच पर बैठे हैं।

२. श्री मुखर्जी उत्सव-भूमि में संघ के अधिकारियों के साथ पधार रहे हैं।

वीरगंज में नौ दिन की आजादी

] पृष्ठ १२ का शेष]

हवाई अड्डा बनवाया गया। मुझे गवर्नर तेजबहादुर ने बताया था कि वह शीघ्र ही वीरगंज से लेकर अमलेखगंज तक एक पक्की सड़क बनवाने का प्रबन्ध कर रहे हैं। वर्तमान सड़क को सड़क नहीं कहा जा सकता, वह एक पगडंडी से भी अधिक कष्टप्रद है और धूल, गर्द तथा बालू उबड़ खाबड़ के अभाव के अतिरिक्त उसमें और कोई तथ्य नहीं है।

कांग्रेस ने अपने दुश्मनों के साथ जैसा व्यवहार किया वह भी स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। जिन ४० सैनिकों को वीरगंज में कैदी बनाया था, उनके साथ मेहमानदारी का सलूक किया गया। वे बेईमान कैदी एक बड़ी फुलवाड़ी में स्वतंत्र विचरते थे, उन्हें प्रतिदिन सात रुपया भत्ता दिया जाता था और सिगरेट का एक टीन। कांग्रेस ने इन लोगों के साथ अपनी ओर मिलाने के लिए कोई जोर जबरदस्ती नहीं की। नेपाली गुरखे नृशंस लड़ाकू होते हैं। उनके साथ जो भी जोर जबरदस्ती कर गोली चलवा सके, चलवा सकता है। अगर उनको हथियार देकर मोर्चे की अग्रिम पंक्ति में रखा जाता और उनके पीछे कांग्रेसी स्वयंसेवक बन्दूक लिए खड़े रहते तो वे सैनिक कांग्रेस के बड़े काम आ सकते थे। परन्तु कांग्रेसियों ने अपने कैदियों के साथ प्रत्येक अंतर राष्ट्रीय नियमानुसार बर्ताव किया। परंतु उनके इस अच्छे व्यवहार का भी उल्टा असर हुआ। कांग्रेस की सहृदयता को इन्होंने उसकी कमजोरी समझा और रिहाई होते ही ये खूंखार भेड़ियों की तरह केवल कांग्रेसियों के ही नहीं, बल्कि निष्पक्ष पत्रकारों तथा नागरिकों के खून के प्यासे बन गये।

वीरगंज में नेपाल के प्रधान मंत्री के छोटे भाई का एक बड़ा भारी बंगला है। उसके पहरेदारों ने गवर्नर तेजबहादुर तक को अन्दर नहीं घुसने दिया और अपमान किया, परन्तु इस पर भी इन निहत्थे पहरेदारों के साथ जबरदस्ती नहीं की गई और वे अंत तक बंगले में रहते आए।

ये बातें जनता को नहीं बतलाई गई।

संगठन

कांग्रेस का सैनिक संगठन बिलकुल नौ सिखुआ था। स्वयंसेवकों में उत्साह था और मर मिटने की लगन, परन्तु इस जनशक्ति को सुचारु रूप से संगठित कर उससे लाभ उठाने का कोई प्रबन्ध नहीं था। भारत के कोने कोने से स्वयंसेवक आये। परन्तु किस मोर्चे पर कितने व्यक्तियों की आवश्यकता है, किस व्यक्ति को किस मोर्चे पर भेजना चाहिए आदि का समुचित संचालन करने वाला कोई विभाग निश्चित रूप से काम नहीं कर रहा था। इन स्वयंसेवकों की सैनिक शिक्षा का भी कोई समुचित प्रबन्ध नहीं था। मोर्चे पर भेजने के बाद इन के हाथों में हथियार दे दिया जाता था जिनके प्रयोग के सम्बन्ध में वे कुछ भी नहीं जानते थे। इसके बावजूद भी इन स्वयंसेवकों ने जिस वीरता के साथ मोर्चे पर लड़ने और हथियार चलाने की कुशलता का परिचय दिया, वह वे जोड़ है।

युद्ध क्षेत्र में गुप्तचर विभाग का भी महत्व होता है। कांग्रेसी दफ्तरों में, उनके सैनिक अड्डों में और उनके नेताओं को ले जाने आने वाली मोटरों में राणा सरकार के जासूस भरे पड़े थे। कुछ तो खुले रूप से कांग्रेस के विरुद्ध कुचक्र रचा करते थे। हम पत्रकारों को भी उनकी कार्यवाहियों का पता लग गया था, परन्तु आगाह करने पर भी कांग्रेसियों ने उन पर अविश्वास नहीं किया और पूरी तरह धोखा खाया। यह कांग्रेस की सहृदयता का नहीं, संगठन की कमी का दोष था।

विभिन्न मोर्चों का कोई एकीकरण नहीं था। अतः नेतागण अलग अलग मोर्चों की आवश्यकताओं से अपरिचित थे।

रसद

किसी भी आन्दोलन अथवा युद्ध को सुचारु रूप से चलाने के लिए रसद का होना और उसे आवश्यकता के स्थान पर शीघ्रातिशीघ्र भेजना अति आवश्यक है। कांग्रेस के पास धन खाद्य सामग्री, छोटे हथियार और स्वयंसेवकों की कमी नहीं थी, परन्तु हथियारों को चलाने के लिए गोली बारूद की अत्यधिक कमी थी। यह भी संगठन का दोष था। एक तो कांग्रेस के पास मोटर गाड़ियों और जीपों की कमी थी ही, लेकिन उनको चलाने के लिए पेट्रोल की बेहद कमी थी। रोज रोज पेट्रोल खरीदा जाता था और जब बिहार सरकार ने कड़ाई से काम लिया तो पेट्रोल की रसद बिना कांग्रेस की सब गाड़ियां ठप पड़ गई।

रसद के भेजने का प्रबन्ध तो भयंकर त्रुटिपूर्ण था। एक दिन जब कि परवानीपुर में धुनादन गोली चल रही थी और कांग्रेस की स्थिति बड़ी नाजुक हो गई थी तो परवानीपुर जाते समय हमने देखा कि एक स्वयंसेवक पैदल ही पांच मील रास्ता तय कर वीरगंज की ओर गोली बारूद की रसद लेने जा रहा था। यह बड़ा ही शोचनीय प्रबन्ध था। रसद की विकट कमी और सर्वत्र राणा के गुप्तचरों के बावजूद भी कांग्रेसी क्योंकर वीरगंज को नौ दिन अपने कब्जे में रख सके और परवानीपुर के पुल पर चार दिन तक मोर्चा ले सके, यह एक बहुत ही मनोरंजक घटना है। बात यह थी कि कांग्रेस के पास हथियार बहुत ज्यादा थे कांग्रेस के हर स्वयंसेवक के हाथ में बन्दूक और रायफलें थीं और सर्वत्र उनका पहरा था, यह देख कर किसी को भी यह गुमान नहीं था कि यह हथियार खाली है और गोलियां बिलकुल खत्म हो चुकी हैं हथियारों के बाहरी भय ने ही सरकारी सेना को चार दिन तक रोके रखा और जब वे वीरगंज में घुसे तो दनादन गोलियां चलाते हुए अवश्य ही उन्हें इस बात से निराशा हुई होगी कि उनके गोलियों का किसी ने भी जवाब नहीं दिया और जिन कांग्रेस स्वयंसेवकों को उन्होंने पकड़ा, उनके पास छोटे छोटे हथियार जरूर थे, परन्तु गोली का नामो निशान नहीं।

वीरगंज पर आज पुनः राणाशाही का निरंकुश शासन स्थापित हो गया है जो भी कांग्रेसी स्वयंसेवक वहां से लौट कर आ सके हैं, वह इसी निश्चय के साथ लौटे हैं कि शीघ्र ही वे पुनः वीरगंज पर कब्जा करने के लिए आएंगे।

*****

[पृष्ठ ११ का शेष)

जहां राष्ट्र के लिये लाभकारी है वहां ऊपर कही गई परिस्थितियों को देखते हुए कम हानिकारक भी नहीं है। यदि मित्र व ब्रिटेन का निकट भविष्य में इस प्रश्न पर समझौता न हुआ तो वह दिन दूर नहीं जबकि नील घाटी की एकता इस रूप में न होकर किसी और ही रूप में होगी। और शायद वह कामिन्फार्म के अन्तर्गत होगी।

ॐ

कच्छ के भारतीय प्रदेश में

★ समाचार-पत्र और नये राजनीतिक दल ★ पाकिस्तान स्टेट बैंक की नीति
★ अब्बास इब्राहीम और आजाद (?) काश्मीर ★ श्रीमती इलामित्रा का बयान

पाकिस्तानी पंजाब में आजकल बरसाती कुकुरमुत्तों के तरह नयी पार्टियों का जन्म हो रहा है। मुसलिम लीग और उसकी सरकार के विरुद्ध जनता में धीरे धीरे बढ़ता हुआ असंतोष और पंजाब में अगले साल के शुरु में चुनाव की घोषणा यह दो कारण हैं इन पार्टियों के जन्म के।

बंगाल के पुराने प्रधान मंत्री श्री सुहरावर्दी ने इस साल के शुरु में ही एक नयी पार्टी अवामी जन लीग बनाई थी।

पंजाब के पुराने प्रधान मंत्री खान इफ्तिखार हुसेन ममदोत ने अब जिन्ना लीग बनाई है। एक जमाना था जब ममदोत की पंजाब में तूती बोलती थी। पर मुमताज दौलताना ने धीरे धीरे उन्हें और मियां अब्दुल बारी को दूध की मक्खी बना दिया। ममदोत का कहना है कि मुस्लिम लीग कायदे आज़म के उसूलों पर अमल नहीं करती। पाकिस्तान में इस्लामी जनतंत्र कायम करने के लिये जिन्ना लीग का जन्म हुआ है।

मियां इफ्तिखारुद्दीन ने भी एक नयी पार्टी, आजाद पाकिस्तान पार्टी को जन्म दिया है। मियां साहब पाकिस्तानी राजनीति में वामपक्षी प्रगतिशीलता के प्रतीक हैं, पाकिस्तान लीग पार्टी से निकाले जा चुके हैं, पंजाब के पुनर्वास मंत्री की हैसियत से शरणार्थियों के पुनर्वास के लिये जमींदारी विनाश की मांग कर चुके हैं जिसके लिये गवर्नर मूडी ने इनसे इस्तीफा मांग लिया था और अब आपने अखबारों "पाकिस्तान टाइम्स" और "इमरोज" के जरिये आर्थिक कार्यक्रम, विशेषकर जमींदारी विनाश पर जोर देना प्रारम्भ किया है।

मियां इफ्तिखारुद्दीन की पार्टी को छोड़कर शेष सभी दल लीग कायदे-आजम और इस्लाम के नाम पर अपना राजनीतिक कारवां चलाना चाहते हैं। पुटबन्दी चुनाव और जनता का असंतोष उनके कार्यक्रम निश्चित करता है।

पाकिस्तान के समाचार पत्रों में संयम की कमी है। वे हर बात जोर शोर से कहते हैं और लगभग हरएक अखबार किसी न किसी पार्टी से जुड़ चुका है। अभी हाल में "नवाएवक्त" ने जिन्ना लीग की स्थापना का स्वागत करते हुये लिखा कि लियाकत लीग "मुसलिम लीग" चुनाव लड़ने की तैयारी नहीं कर पा रही, इसलिये चुनाव टलते जा रहे हैं। "इमरोज" ने एक कार्टून में दिखाया कि लियाकत और उनका दल एक ऐसी दीवार पर बैठे हैं जिसकी दीवारें नीचे से खिसक रही हैं। सिर्फ "डान" ने लियाकत साहब की भारत काश्मीर के मसले पर व अफगानिस्तान विरोधी नीति को बड़ी स्वामिभक्ति से छापा है।

उर्दू का "जमींदार" पत्र जिन्ना लीग के विरुद्ध लिखते हुये कहता है: "मरने से पहले जिन्ना साहब ने ममदोत को एक पत्र लिखा था जिसमें उन्होंने कहा था कि तुम वजारत चलाने के योग्य नहीं हो। तुम्हारी वजारत के काल में पंजाब की हालत खराब हो चुकी है। शासन और अनुशासन तबाह हो रहा है। जनता की कठिनाइयों को दूर करने की तुम में न योग्यता है और न तुम कुशलता से कोई अन्य काम कर सकते हो"।

लाहौर के प्रमाणपत्र की एक दूसरे पत्र "मगरबी पाकिस्तान" को शिकायत है कि शेख अब्दुल्ला के भेजे गये मुस्लिम कान्फ्रेन्स में शामिल होकर पाकिस्तान से गद्दारी कर रहे हैं। इसकी सूचना के अनुसार लाहौर में कुछ ऐसे लोगों को गिरफ्तार किया गया है जो शेख अब्दुल्ला के जासूसों की हैसियत से काम कर रहे थे। —

× × ×

'यूनाइटेड प्रेस' को तथाकथित 'आजाद काश्मीर' की वर्तमान स्थिति के विषय में आश्चर्यजनक तथ्यों का पता चला है, जो अब तक सर्वथा रहस्य बने थे। जम्मू और काश्मीर के पाकिस्तान अधिकृत भाग में अब्बास इब्राहीम विवाद का भी इसी के साथ रहस्योद्घाटन हुआ है। पाकिस्तान अधिकृत क्षेत्र एक प्रकार से अब्बास-शासित 'आजाद काश्मीर सरकार' से स्वतन्त्र हो गया है और गिलगित की ही भांति वहां भी पाकिस्तान का प्रत्यक्ष शासन चल रहा है। पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री मियां लियाकतअली खां और बीबी फातिमा जिन्ना इस बात की जोड़तोड़ कोशिश में हैं कि चौधरी गुलाम अब्बास और सरदार इब्राहीम का मतभेद दूर हो जाय, किन्तु अभी तक सफलता का कोई लक्षण नहीं दिखलाई पड़ा है।

हाल में ही इस रहस्य का पता चला है कि जब इब्राहीम लेकसक्सेस गये थे, तभी उन्हें अपदस्थ करने का कुचक्र रचा गया था। तत्कालीन पाकिस्तान मुस्लिम लीग के अध्यक्ष चौधरी खलीकुज्जमा ने भी इब्राहीम को गिराने के लिए अब्बास से सहयोग किया था। लेकसक्सेस से वापिसी के बाद इब्राहीम को इस रहस्य का पता चला, तब मुजफ्फराबाद में उसने अपनी रक्षा की व्यवस्था दृढ़ कर दी। इसी बीच चौधरी गुलाम अब्बास ने इब्राहीम को रावलपिंडी में बुला कर गिरफ्तार कर लिया। इस घटना से पूंछ वाले क्षुब्ध हो उठे और उन्होंने अब्बास दल के अनेक लोगों को मौत के घाट उतार कर शासन अपने हाथ में ले लिया। इसके बाद पूंछ को काबू में करने के लिए कई बार चेष्टायें हुईं, पर सब विफल हुईं। पाकिस्तान की सेना भी विद्रोहियों के दमन में समर्थ नहीं हुई।

× × ×

पाकिस्तान के स्टेट बैंक द्वारा विदेशी विनिमय व्यापार पर लगाये गये कठोरतम प्रतिबन्धक कार्यवाहियों के कारण पाक रुपये की विनिमय कीमत बनाये रखने के पाकिस्तान के संघर्ष में बड़ा भारी विकास समझा जा रहा है। राज्य बैंक द्वारा घोषित कठोर नियंत्रण पाकिस्तान आर्थिक ढांचे में सितम्बर सन् १९४९ ई० से चले आ रहे कई विपरीत प्रभाव का चोटी समझे जा रहे हैं।

वायदा विनमय सौदे के सम्बन्ध में राज्यबैंक के नयी नियन्त्रण कार्यवाही शहर में प्रसारित इस विश्वास को पुष्ट करती है कि पाक रुपये के अवमूल्यन की आशा में इस देश से धन का स्थानान्तरण बड़े पैमाने पर हुआ है। ब्रिटेन में अवमूल्यन के पूर्व जिस तरह की स्थिति उत्पन्न हुई थी, उसकी तरह गतिविधि देखी जा रही है। गत वर्ष पाकिस्तान का विदेशी विनिमय सुरक्षित कोष खाली हो चला था और वर्तमान समय वायदे के भावों का मुकाबला करने के योग्य नहीं है। यह भी ज्ञात हुआ है कि गत वर्ष के सितम्बर मास से पाकिस्तान पौण्ड तथा डालर क्षेत्रों में घाटे का हिसाब चला रहा है और अपने विदेशी विनिमय लाभ से उचित व्यापारिक वायदों की पूर्ति तक नहीं कर सकता। तो सट्टों को मांग पूरी करने की बात तो जाने दीजिये।

यह प्रत्यक्ष है कि पाकिस्तान को अधिकाधिक पौण्ड पाचने से सहायता मिल रही है और पौंड क्षेत्रों से डालर एकत्र कर रहा है, किन्तु यह समझा जाता है कि सट्टों की मांग की पूर्ति के लिए विदेशी विनिमय को सुविधा देना चाहता है। इससे वायदे बाजार में विदेशी विनिमय के व्यापार के सम्बन्ध में राज्यबैंक को नियंत्रण लगाना पड़ा।

कुछ आर्थिक क्षेत्रों का विश्वास है कि जोड़ तब अवमूल्यन के लिए ईंधन तैयार किया जा रहा है। उसकी अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में विनिमय दर की व्यर्थता प्रकट हो गई है। पाकिस्तान में प्रचलित जूट के मूल्यों का स्तर जूट नियंत्रण परिषद् द्वारा गत वर्ष में निश्चित स्तर से कहीं नीचे चला गया है और गेहूं, ऊन तथा बिनौले का मूल्य गिर गया है और केवल कपास का स्तर विश्व में बढ़ती हुई मांग के कारण तथा मूल्य में बढ़ती के रूप से वैसा ही बना हुआ है।

पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था में अन्य दरारें ब्याज की दर बढ़ने, मुनाफा तथा व्यापारी हिसाब-किताब में अभाव तथा व्यापारी चौकसी हैं। पाकिस्तान जैसे कृषि प्रधान देश में कामकाज के सम्बन्ध में निर्णय देना कठिन है, फिर भी लोगों की आय घट गई है। जूट उत्पादक क्षेत्रों में असन्तोष इस कदर बढ़ गया है कि पिछले सप्ताहों में पूर्वी पाकिस्तान के लिए प्रांतीय स्वायत्त शासनाधिकार की मांग की जाने लगी है।

× × ×

श्रीमती इलामित्रा (३०वर्ष) को जनवरी के महीने में अन्य ३०व्यक्तियों के साथ तथाकथित 'नहूहाब केस' में गिरफ्तार किया गया था। ग्रेज्युएट श्रीमती मित्रा, पूर्वी पाकिस्तान के लड़कियों के एक स्कूल की प्रधान अध्यापिका हैं। जनवरी में इन्हें गिरफ्तार करने के बाद फिर कोई खबर नहीं मिली। और इसी वातावरण में ११चिन्ताजनक महीने निकल गये।

अब यह चुप्पी का वातावरण खत्म हुआ है १४ नवम्बर को श्रीमती मित्रा को राजशाही अदालत में पेश किया गया। अदालत में श्रीमती मित्रा ने जो बयान दिया, उसका कुछ अंश निम्न लिखित है।

"राहनपुर में ७ जनवरी सन् ५० को मुझे गिरफ्तार किया गया था। ८ तारीख को पुलिस मुझे नहूहाब थाना ले गयी। जैसे ही मैं थाने के पुलिस स्टेशन पर पहुंची, पुलिस घसीट कर मुझे एक कोठरी में ले गयीं। सारे रास्ते वे मुझे बड़ी बेरहमी से पीट रहे थे। ... उन्होंने थोड़ी देर बाद मेरे सारे कपड़े उतार दिये। मुझे एकदम नंगा करके उसी हालत में कैद कर दिया गया। मुझे खाना तक नहीं दिया गया। चार-पांच सिपाहियों ने मुझे चारों ओर से घेर लिया। मेरे.... में उन्होंने एक गर्म

[शेष पृष्ठ १७ पर]

मध्यभारत का पुनर्विभाजन

पुनर्विभाजन समिति की सिफारिशें

मध्य भारत संघमें विलीन होने वाले राज्यों का एकीकरण किये जाने के फलस्वरूप मध्य भारत कुल १६ जिलों में विभाजित किया गया है। किन्तु नव निर्मित जिलों के सम्बन्ध में कतिपय स्थानों की जनता द्वारा आपत्तियां प्रस्तुत किये जाने, आर्थिक दृष्टकोण से भी १६ जिले कायम रखे जाना उचित प्रतीत न होने और मध्य भारत के ढांचे को अन्य राज्यों के समान लाने के लिए इस प्रश्न पर विचार करने तथा भविष्य में मध्य भारत में कितने तथा कौन-कौन से जिले रखे जावें, यह सुझाने के लिए शासन ने दिनांक २८ मार्च १९४९ को जिला पुनर्गठन उप-समिति की स्थापना की। इस उप समिति के अध्यक्ष मध्य भारत विधान सभा के सदस्य श्री आर० पी० लाल तथा सदस्य सर्वश्री सौभाग्यमल जी जैन, श्री शिवदयाल जी श्रीवास्तव, श्री एम० एन० बमरू एवं श्री पी० एस० वासना थे।

इस समिति का रिपोर्ट अभी हाल ही में प्रकाशित हुई है। जिसके अव-लोकन से ज्ञात होता है कि मध्यभारत की उन्नति को दृष्टि में रखते हुए शासन के व्यय भार को कम करने के लिए वर्त-मान जिलों की संख्या में कमी किया जाना कितना आवश्यक है। समिति ने जो अपने सुझाव इस रिपोर्ट में दिये हैं वे मुख्य रूप से निम्नलिखित हैं:

जिलों की वर्तमान स्थिति

इस समय मध्यभारत में १६ जिले हैं। वर्तमान जिले का औसत क्षेत्रफल ३००० वर्ग मील तथा औसत जन संख्या ४,२०,००० है। वर्तमान का सब से बड़ा जिला नेमाड है, जिसका क्षेत्रफल ५,०७४.१० वर्ग मील तथा जनसंख्या ६,६५,५२६ है तथा सब से छोटा जिला जनसंख्या की दृष्टि से झाबुआ: जन-संख्या २,४२,६८४ तथा क्षेत्रफल की दृष्टि से इन्दौर: क्षेत्रफल १,४६८.०४ वर्गमील है।

भारत के अन्य राज्यों के जिले के क्षेत्रफल तथा जनसंख्या में कोई समा-नता नहीं है। हर राज्य के जिलों का क्षेत्रफल तथा जनसंख्या भिन्न-भिन्न है। परन्तु तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट है कि अन्य राज्यों का एक औसत जिला मध्यभारत के औसत जिले के क्षेत्रफल एवं जनसंख्या दोनों में काफी बड़ा है।

मध्य भारत की प्रारम्भिक परि-स्थिति में छोटे ही जिले रखने में सहूलि-यत थी। किन्तु अब विभागीय एकीकरण लगभग पूर्ण हो चुका है और अब यदि जिले कम कर दिये जावें तो एक जिले के कम होने पर लगभग डेढ़ लाख रुपयों की खर्च में कमी हो जावगी।

आर्थिक दृष्टि से व योग्य और अनु-भवी जिलाधिकारियों व कर्मचारियों की कमी होने से जिलों की तादाद में कमी करना आवश्यक है। जिलाधिकारियों के कार्यालय भवनों तथा उनके व कर्म-चारियों के निवास भवनों का भी प्रश्न आता है। आगे पीछे हर जिले में इस प्रकार के भवनों का प्रबन्ध करना होगा। इमारतें बनाने में अत्यधिक व्यय होगा, इस दृष्टि से भी जिलों की संख्या में कमी करना आवश्यक है।

भारत के एक राज्य में दूसरे राज्य की अपेक्षा छोटे जिले अधिक वर्षों तक कायम रहें यह न तो सम्भव ही है और न वांछनीय ही। सब राज्यों की शासन प्रणाली एवं शासकीय ढांचा समान किये जाने की चेष्टा की जा रही है और यह उपयुक्त भी है।

समिति ने जिलों के पुनर्गठन के सम्बन्ध में लोकमत जानने के लिए न केवल विभिन्न स्थानों का दौरा ही किया, परन्तु एक प्रश्न वली प्रकाशित की थी। उक्त प्रश्नावली के उत्तरोंमें ६० प्रतिशत सज्जनों ने वर्तमान जिलों की संख्या में कमी करने का समर्थन किया।

कमी किस समय की जावे

यद्यपि जिलों को कम करने की आवश्यकता मध्य भारत के विचारशील व्यक्ति अनुभव करते हैं परन्तु इस प्रश्न पर मत विभिन्नता हो सकती है कि जिले तत्काल ही कम कर दिये जावें चाहिए अथवा२-३ वर्षों के उपरान्त। जिलों को अविलम्ब कम करने के पक्ष में निम्नलिखित महत्वपूर्ण बातों की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

१. जिलों की संख्या कम करने से खर्च में अभी से कमी हो जावेगी।

२. शासन का ढांचा अभी बन ही रहा है। ऐसी परिस्थितियों में जो कुछ परिवर्तन करना हो वह अभी कर दिया जाना चाहिए, ताकि बारबार शासन यन्त्र के अस्त व्यस्त होने का अवसर न आवे।

३. वर्तमान जिलों की सीमाएं कुछ वर्षों तक कायम रहने देने के उपरान्त जिले तोड़े जाने पर सम्भवतः जनता में अधिक असन्तोष पैदा हो। इसलिये जब हर चीज निर्माण की क्रिया में से गुजर रही हो, उसी समय जो कुछ भी परिवर्तन करना हो, कर दिया जाना अधिक उपयुक्त होगा।

४. यातायात के साधनों में अधिक तेजी से वृद्धि हो सकेगी। एक बार जिला का प्रश्न तय हो जाने पर याता-यात किस दिशा में विकसित किया जाना है यह निश्चित हो सकेगा।

समिति ने उन तर्कों पर भी पूर्ण रूप से ध्यान दिया जो कि २-३ वर्षों के पश्चात् जिलों में कमी करने के सम्बन्ध में दिये गये हैं, परन्तु सब दृष्टिकोणों पर विचार करने के पश्चात समिति इसी निष्कर्ष पर पहुंची कि जिलों की संख्या में कमी अविलम्ब करदी जानी चाहिये क्योंकि जैसे जैसे समय बीतता जाता है, जिलों की सीमाओं में परिवर्तन के विरुद्ध भावनायें दृढ़ होती जावेंगी। एक बार यदि कुछ वर्षों के लिए एक जिला कायम रह गया तो, वहां निहित हित इतने हो जाते हैं कि फिर उसको कम करना कठिन हो जाता है।

किन्तु समिति का यह भी मत है कि जिलों की कमी इस प्रकार की जावे कि वर्तमान जिलों की सीमाओं में जितना कम परिवर्तन हो सके उतना ही किया जावे। समिति के विचार में जहां तक हो सके वहां तक वर्तमान के कुछ पूरे ही जिले पास के जिलों में शामिल कर दिये जाना चाहिये ताकि वर्तमान के दो जिले मिल कर एक नया जिला बन जावे। इस प्रकार सुविधा-नुसार ६ जिलों की कमी की जा सकती है। परिणामतः समिति का मत है कि वर्तमान १६ जिलों के बजाय मध्यभारत को १० जिलों में विभाजित किया जावे। जो जिले कम किये जायेंगे उन जिलों के हैड क्वार्टर्स पर सब डिवीजनल कार्यालय स्थापित किये जाने की समिति ने राय दी है।

परिगणित जातियों के अलग जिले की मांग

समिति ने इस प्रश्न पर भी विचार किया कि पिछड़ी हुई जातियों के क्षेत्रों के अलग जिले बन सकते हैं क्या? इन क्षेत्रों का समावेश मुख्यतः वर्तमान झाबुआ जिले में, बड़वानी सब डिवीजन में कुक्षी सर्दारपुर व सौलाना तहसीलों में ही है। केवल इतने ही क्षेत्र के एक या दो जिले बनाये जाना सम्भव नहीं है। किसी भी परगने या जिले में सब गांव परिगणित एवं पिछड़ी हुई जातियों के नहीं हो सकते हैं। जो खास विधान अथवा नियम परिगणित एवं पिछड़ी हुई जातियों के लिए प्रचलित होंगे, वे उन लोगों को लागू या उनके ग्रामों को लागू किये जा सकते हैं, इसमें कोई खास दिक्कतें आने की संभावना नहीं है। इस प्रकार समिति के मत में मध्य भारत को निम्नांकित १० जिलों में विभा-जित किया जाना चाहिये :—

	जिले का नाम	केन्द्रस्थान	क्षेत्रफल	जनसंख्या
१. वर्तमान भिंड जिला मुरैना जिले का अम्बाह परगना गिर्द जिले का भांडेर परगना	भिंड	भिंड	२३०५.५०	६,७१,०३१
२. वर्तमान गिर्द जिला भांडेर परगना छोड़ कर वर्तमान मुरैना जिला अम्बाह तहसील छोड़ कर	गिर्द	गिर्द	२४६८	८,४२,४७१
३. वर्तमान शिवपुरी जिला	शिवपुरी	[शिवपुरी १७४२		४,३१,८६६
४. वर्तमान गुना जिला वर्तमान भेलसा जिला	गुना	गुना ६६६८		७,६५,१२७
५. वर्तमान शाजापुर जिला वर्तमान राजगढ़ जिला	शाजापुर	शाजापुर	४११७	८,०८,६८०
६. वर्तमान मन्दसौर जिला	मन्दसौर	मन्दसौर	३८२५	५,६३,०२६
७. वर्तमान इन्दौर जिला वर्तमान देवास जिला	इन्दौर	इन्दौर	४४१०	७,६८,३८६
८. वर्तमान धार जिला वर्तमान झाबुआ जिला	धार	धार	५६४४	८,२८,४००
९. वर्तमान रतलाम जिला वर्तमान उज्जैन जिला	उज्जैन	उज्जैन	४२२०	८,०२,६२८
१०. वर्तमान नेमाड जिला	खरगौन	खरगौन	५०७४	६,६५,५२६

इस सम्बन्ध में यह भी आवश्यक है कि जिलों की तुलना जनसंख्या व क्षेत्र-फल की दृष्टि से अन्य राज्यों के जिलों से की जावे।

मध्यप्रदेश की जनसंख्या १,६८,१३,-५८४ तथा क्षेत्रफल ९८,४०८ वर्गमील है, वहां जिलों की संख्या १९ है और इस प्रकार एक जिले का औसत क्षेत्रफल ५,१०६ वर्गमील तथा औसत जन-संख्या ८,८४,६२४ है।

इसी प्रकार बिहार की जनसंख्या ३,६३,४०,१५१ क्षेत्रफल ६९,७४५ वर्ग-मील तथा जिलों की संख्या १६ है इस

शेष पृष्ठ २६ पर]

"विद्रोही की कन्या !"

[पृष्ठ १० का शेष]

कुछ न बोली, न डरी ही। उसके दैवी आभा से प्रदीप्त मुख पर वैसी ही निर्भीकता, वैसा ही भोलापन छाया रहा, जैसा पकड़े जाने से पूर्व था।

जब उसको आउटरम बंधवा कर ले चलने लगा तो उस बालिका ने केवल एक मांग की, 'मुझे इतना अवकाश दो परदेशी लुटेरे कि मैं इस ढेर पर बैठ कर आज जी भर कर रो तो लूं।' पर उसकी कोई भी बात वह सुनने के लिए तैयार न था। वह चिल्लाया—

'नेई, टुमको एक डम चलना होगा।'

भोली मैना नहीं समझती थी कि एक आउटरम ही नहीं सारा ब्रिटेन आज सैकड़ों अंग्रेजों का बदला उसकी नन्ही सी जान लेने के लिये उतावला हो उठा है।

× × ×

दूसरे दिन 'मैना' को आउटरम ने बिठूर से लाकर कानपुर के किले में ठूंस दिया और कई दिन तक महाराष्ट्र के अन्तिम पेशवा बाजाजी राव के उत्तराधिकारी उस कुलभूपन्त नाना साहब का पता, ठिकाना पूछते-पूछते उसे मारा पीटा तथा अनेक प्रकार से तंग भी किया, पर अल्पवयस्का मैना चुपचाप जड़ की भांति सब कुछ सहन करते हुए मौन ही रही।

कुछ अंग्रेज अफसर उसकी सहन शीलता को देख दांतों तले उंगली दबाते, आश्चर्य से आंखें फाड़ फाड़ कर उसे घूरते, मानों उसे कच्चा ही खा जायेंगे। पर परिणाम कुछ न निकला, थोड़े ही दिनों में देवी सी दिखने वाली मैना सूख कर कांटा सी हो गई, पर मर न सकी। मरती भी कैसे, मरने के लिए भी तो कुछ साधन चाहिये।

सन् १८५६ के सितम्बर मास की एक रात थी वह काली अंधेरी रात—ऊपर काले काले मेघ छाये थे। जब कि वह विद्रोही नेता, नाना की, कन्या नग्न कर रस्सों से कस कर जीवित ही अग्नि की लपटों में झोंक दी गई। उस समय कानपुर का किला एक बारगी सिहर उठा—बाहर प्रवाहमान गंगा की धारा कलकलाती हुई तड़पी, किन्तु तब उस रात को वह विवश बालिका रोई नहीं, एक भी आंसू उसकी रोती आंखों से न गिरा।

दम तोड़ते हुए, लकड़ी के समान जल रही उस हिन्दू बालिका की मौनता से आस पास खड़े गोरे अफसरों के विकृत चेहरे एक बारगी स्याह पड़ गये। कालिख सी पुत गई उस गोरी चमड़ी पर, जिसे… अनेक स्थानों से उस विवश बालिका ने अपने दांतों से भस्म करते समय चबा डाला था।

हां तो—बेबस, निरस्त्रा कन्या जीवित जला दी गई, क्योंकि उस दिन भारत के वे 'कृष्ण' जीवित न थे, हां उन्हीं 'कृष्ण' के तथाकथित भक्त पाखंडी पुजारी और करोड़ों नामलेवा तब भी मौजूद थे।

जैसे एक दिन उन ऊंची ऊंची चित्तौड़ की पहाड़ियों में अपने हाथ, चितायें सुलगा कर एक बारगी चौदह सहस्र राख हो गई थीं—इसी प्रकार पर उससे बहुत भिन्नता रखते हुए वह मैना भी जल मरी—नहीं जला दी गई उस दिन पर मरते-मरते एक अभिशाप दे गई वह उन फिरंगियों को, नहीं—अपने ही उन करोड़-करोड़ भाई और पिताओं को कि—

"ओ-देश के तटस्थ रहने वाले भाइयो और पिताओ! यदि इसी प्रकार तुम्हारे देश की बालिकायें जलाई जाती रहीं—तो एक दिन ऐसा होगा कि तुम्हारी सभी की अपनी अपनी बहनों और पुत्रियों का जीवन कठिन हो जाएगा। उनका सतीत्व, लुटेरों की लूट में पड़ा हुआ एक हिस्सा मात्र ही रहेगा और तब तुम इस योग्य भी न रह जाओगे कि उन्हें विष देकर मार सको—कुंओं और तालाबों में ढकेल सको—उन्हें जौहर में झोंक कर बचा सको अपने मुख की सफेदी—और तब दुनिया वाले तुम्हारे कालिख पुते मुखों पर थूकेंगे और कहेंगे मर जाओ तुम—धर्म ध्वजी शिखण्डियों, तुम्हें जीने का अधिकार नहीं—धरती के पाप हो तुम कायरो!"—और तब उसी अंधेरी रात में बिठूर का वह भस्मावशिष्ट 'ढेर' कम्पित हो एकाएक मानो सजीव हो उठा। उसके एक एक कण से राम-कृष्ण-शिवा-प्रताप प्रभृति नर पुंगवों की आत्मायें साकार हो बिठूर में बहने वाली 'गंगा' के स्वर में स्वर मिला कर कहने लगीं—

"नहीं-नहीं ऐसा न कहो मैना! तुम्हारे इन्हीं भाइयों और पिताओं के बीच हम फिर से जन्म लेंगे। इस श्मशान बनी भरत-भूमि को हम फिर से हरा-भरा बनायेंगे और संसार को बतावेंगे बड़े ही धैर्य्य एवं शील के साथ, कि भारत के पुरुषों का पुरुषत्व क्या वस्तु है। तुम्हारी जैसी वे सीता उर्मिला और दुर्गा-तारा फिर से इस वीर प्रसूता की कोख में जन्म लेंगी और वे बतावेंगी कि नारी का नारीत्व क्या है! तुम्हारे वे कोटि-कोटि भाई फिर यहां पैदा होंगे। वे युवा सिंह भाई, जिनके हाथों में तुम्हें राखी बांधने की आवश्यकता न पड़ेगी। तुम केवल उनके कमर बन्धों में दो-दो कृपाणें कस देना और तब वे बतावेंगे कि बहिन का सतीत्व लूटने जैसी वस्तु नहीं—ऐसा विचार मात्र करने वालों की आंखें पथरा जाती हैं और उनके हाथ अपने आप धरती पर कट गिरते हैं। अस्तु, अभिशाप देकर इस दुःखी देश का दुर्भाग्य और अधिक न बढ़ाओ नाना की पुत्री! इतनी निराशा लेकर न मरो—हम पर विश्वास करके जाओ विद्रोही की कन्या!"

———

चित्रलोक

पाठकों की कलम से

'बाक्स आफिस हिट'

चित्रों से सावधान रहो !

[श्री सौभाग्यसिंह गोयल]

कुछ एक पत्र ही ऐसे होते हैं, जिन में सिनेमा सम्बन्धी विज्ञापन नहीं छापे जाते। सिने पत्रिकाओं की तो बात ही क्या—दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों में भी सिनेमा-सम्बन्धी विज्ञापनों की भरमार रहती है। अधिकांश पत्र-पत्रिकाओं ने तो चल चित्रों की समालोचना आदि के लिए अलग से 'स्तम्भ' रखे हैं। जिस पत्र में सिनेमा सम्बन्धी विज्ञापन अथवा 'स्तम्भ' नहीं रहते—वह पत्र आज के युग में बुरा समझा जाता है। आज तो अभिनेताओं और अभिनेत्रियों का जीवन वृत्तान्त उसी लगन और प्रेम के साथ पढ़ा जाता है। जिस लगन और निष्ठा के साथ हमारे पूर्वज रामायण, महाभारत आदि पवित्र धार्मिक ग्रंथों का पाठ करते थे।

किसी भी पत्र और खासकर सिने-पत्रिका का कोई सा पृष्ठ खोलिए आपकी दृष्टि एक बार इन शब्दों पर पड़े बगैर नहीं रह सकती, याद रखिये यह चित्र "बाक्स आफिस हिट" है।

इन शब्दों में रहस्य है-जादू है। भोले-भाले लोगों पर इनका पूरा-पूरा प्रभाव पड़ता है। वे झट समझ लेते हैं कि "यही तो एक चित्र है जिसे हमें अवश्य देखना चाहिए।" वे बड़ी उत्सुकता के साथ ऐसे चित्र का इन्तजार करते हैं और जब तक उसे देख नहीं लेते, उन्हें शान्ति प्राप्त नहीं होती। वास्तव में भोली-भाली जनता इस शब्दजाल में फंस कर अपना धन और समय दोनों ही बरबाद करती है।

निर्माता, निर्देशक और वितरक इन 'बाक्स आफिस हिट' चित्रों का निर्माण कर अपनी जेब तो भरते ही हैं पर साथ ही साथ उस भोली-भाली जनता का, जो अपने खून का पानी कर कुछ चांदी के टुकड़े बटोर पाती है, सही मानों में शोषण करते हैं।

आज का प्रत्येक 'बाक्स आफिस हिट-चित्र' अथवा 'सोना उगलने वाला चित्र' हमारे निर्माताओं और निर्देशकों

(शेष कालम ४ पर)

(कालम १ का शेष)

की दूषित मनोवृत्ति और अपनी जेब भरने वाली अनीति का परिचायक है। आज का निर्माता अपने स्वार्थ-साधन में जोंक बना बैठा है। वह अपने चित्रों में अश्लीलता और नग्नता का ताण्डव नृत्य दिखला कर भोली भाली जनता को गुमराह कर रहा है। आगे की नस्ल को बर्बाद कर रहा है। उपरोक्त चित्रों में अश्लील और बेहूदा नाच-गानों की भरमार रहती है। ऐसे ही चित्र तो दर्शकों के मन पर बुरा प्रभाव छोड़ जाते हैं तथा उन्हें तबाह और बरबाद करके ही छोड़ते हैं।

आज के निर्माता अन्धे होकर 'हालीवुड' का अनुकरण कर रहे हैं, जो निस्सन्देह भारतीय संस्कृति और यहां के वातावरण के प्रतिकूल है। भारतीय और पाश्चात्य संस्कृतियों में आकाश-पाताल का अंतर है उन्हें तो अभी हम से बहुत कुछ सीखना है। लेकिन हम उनका ही अनुकरण कर अपना महत्व स्वयं घटा रहे हैं।

स्वतन्त्र भारत में तो ऐसे चित्रों का ही निर्माण होना चाहिये, जो भारत के सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठा सकें तथा प्रत्येक भारतीय के हृदय में अपने देश के लिए अनुराग और श्रद्धा उत्पन्न कर सकें।

ऐसे चित्रों का निर्माण करने में प्रारम्भ में चित्र-निर्माताओं को कुछ आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ेगा अवश्य, लेकिन इसके साथ ही साथ वे अपने देश की सुप्त जनता में नये प्राण फूंकने में उसके उत्थान में निश्चय ही योग दे सकेंगे।

जनता का भी कर्तव्य है कि वह 'बाक्स आफिस हिट' या 'सोना उगलने वाले' अश्लील और भद्दे चित्रों से सतर्क और सावधान बने रहें।

भारत सरकार के फिल्म सेन्सर्स बोर्ड को भी इस दिशा में अपने कर्तव्य का पूरा-पूरा पालन करना चाहिए तथा भद्दे और अश्लील चित्रों के प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगा कर अपनी जागरूकता का परिचय देना चाहिये।

नये आने वाले फिल्म

मुकद्दर

बम्बई टाकीज की नवीनतम कृति 'मुकद्दर' के प्रदर्शन की सरकिट में बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा की जा रही है। दिल्ली की हिमालय पिक्चर्स लि०, नयी दिल्ली और सरकिट भर में इसके शीघ्र प्रदर्शन की व्यवस्था कर रही है। 'मुकद्दर' की कहानी 'महल' की तरह ही अकल्पनीय घटनाचक्र से भरी हुई है और मनोरंजन से परिपूर्ण है। संगीत 'महल' के ख्याति प्राप्त स्वर्गीय खेमचन्द प्रकाश का है और मुख्य भूमिका में नलिनी जयवन्त, भजन, किशोर, शाकिरा और मोहना पाशा हैं।

मुटियार

'मुटियार' पहला पंजाबी फिल्म है, जिसे श्री महबूब कोचेबाव ने आधुनिक पृष्ठभूमि के आधार पर तैयार किया है। चित्र की भूमिका में चंचल, रमोला, श्याम, अमरनाथ, माधव, सुन्दर, मनवरी, हीरालाल आदि हैं। और संगीत विनोद का है। दिल्ली में इसका शीघ्र ही प्रदर्शन किया जाने वाला है।

साकी

तलवार फिल्म्स की नयी फिल्म 'साकी', जिसका निर्देशन 'पतंगा' के ख्याति प्राप्त एच. एस. रावैल कर रहे हैं, के दिल्ली, उत्तर प्रदेश और पूर्वी पंजाब मे वितरण के आदि राज्यों पिक्चर्स लि. को प्राप्त हो गये हैं। 'साकी' की कहानी 'अरेबियन नाइट्स' से ली गई है और इनके सम्वाद 'पुकार और 'महल' के ख्यातिप्राप्त कमाल अमरोही ने लिखे हैं। संगीत सी. रामचन्द्र का है और चित्र की मुख्य भूमिका में मधुबाला, विपिन गुप्ता, प्रेमनाथ, शोभा और गोप कार्य कर रहे हैं। गोप का 'जिन्न' के रूप में अभिनय अत्यन्त आकर्षक है।

जोहरी

'सोहाग रात' और 'बावरे नयन' में अपनी अभिनय-कला से सिने दर्शकों को मुग्ध करने के बाद अब गीताबाली श्री निरंजन के 'जौहरी' फिल्म में अवतरित हो रही है। साथ में अमरनाथ, राजन हक्सर, सुन्दर, कुक्कू और लीलाकुमारी व चांदनी नामक दो नये चेहरे हैं। संगीत का निर्देशन पं० हुस्नलाल ने किया है।

वफा

गुलशन पिक्चर्स ने अपनी नई फिल्म 'वफा' को जे० पी० अडवानी के निर्देशन में पूरा कर लिया है। निम्मी, विपिन गुप्ता, करन दीवान, याकूब, गोप, जौहर, गुलाब, लीलाकुमारी और श्यामा ने अपने अभिनय से फिल्म को चार चांद लगा दिये हैं। संगीत इस फिल्म की विशेषता है। फिल्म के प्ले-बैक गीत, लता मंगेशकर, गीताराय, शमशाद, मुकेश और राजकुमारी ने गाये हैं और संगीत निर्देशक विनोद हैं।

गंवार

गत सप्ताह बम्बई के श्रीसाउण्ड स्टुडियो में फिल्मस्तान की ओर से 'गंवार' फिल्म के निर्माण का मुहूर्त किया गया। इस फिल्म की निर्मात्री कुंजबाला नामक एक महिला है और इसका निर्देशन भी सुरजीत सेठी नामक एक नये व्यक्ति को सौंपा गया है। फिल्म में अभिनय के लिए निरूपा, अरुण, रणजीतकुमारी, रामसिंह, एम० नजीर और नटखट बेबी तबस्सुम को चुना गया है।

भानुमती बम्बई में

निर्माता अशोककुमार के अपने नये चित्र 'समाधि' में अपने विपरीत मुख्य अभिनेत्री के रोल के लिए 'किसान' और 'मंगला' की प्रसिद्ध तारिका भानुमती को चुना है। बम्बई की अन्य फिल्म-कम्पनियां भी इस अभिनेत्री को अपनी फिल्मों में लेने के लिये उत्सुक जान पड़ती हैं।

चुन्नीलाल की मृत्यु पर शोक

दिल्ली की जगत टाकीज लि० के कर्मचारियों ने ४ दिसम्बर को श्री यू० एस० मेहता की अध्यक्षता में एक बैठक करके फिल्मीस्तान लि० बम्बई के चेयरमैन और इण्डियन मोशन पिक्चर प्रोड्यूसर्स असोसियेशन के अध्यक्ष रायबहादुर चुन्नीलाल की आकस्मिक मृत्यु पर शोक प्रकट किया और परमात्मा से उनकी आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना की।

———

देश में शिक्षा का पूर्ण भारतीयकरण आवश्यक

[पृष्ठ ८ का शेष]

भी विज्ञान का अध्ययन उसी खूबी से किया जा सकता है जैसा कि और किसी देश में। भारतीय भाषा में साहित्य पढ़ने से उसका आनन्द आता रहे, ऐसी बात तो नज़र नहीं आती। फिर व्यर्थ में हम क्यों जनता से अपना सम्पर्क काट दें? इसलिए मैं यह बलपूर्वक कहना चाहता हूं कि विश्वविद्यालयों को भारतीय ऐतिहासिक परम्परा की अपेक्षा अब न करनी चाहिये और अपने अनिवार्य विषयों में भारतीय साहित्य को भी रखना चाहिये। साथ ही उन्हें इस बात का प्रयास करना चाहिए कि जितनी जल्दी हो सके, वे भारतीय भाषा या भाषाओं के माध्यम द्वारा शिक्षा देने का प्रबन्ध करें क्योंकि ऐसा करने से ही समाज और व्यक्ति के व्यक्तित्व में जो भिन्नता मौजूद है, दूर की जा सकेगी।

दूसरा कदम जो मैं जरूरी समझता हूं यह है कि हम यह मान लें कि अब इस बात का समय आ गया है कि वे विश्वविद्यालय ग्रामों की बुद्ध के सोख्ता न होकर उसे ब्याज सहित गांवों को वापस देने की संस्था बन जावें। यह बात तभी हो सकती है, जब इन विश्वविद्यालयों का जीवन ऐसा न हो, जो ग्राम से सर्वथा भिन्न है। मेरे इस कथन का यह तात्पर्य नहीं कि ग्रामीण जीवन की बुराइयों को हम विश्वविद्यालय के जीवन में स्थान दें। पर मैं यह जरूर समझता हूं कि इसके जीवन में तड़क-भड़क और फैशन परस्ती की कोई आवश्यकता नहीं और न ये बात उसमें होनी चाहिये।

यदि विश्वविद्यालयों में जीवन के प्रति दृष्टिकोण का ऐसा परिवर्तन हो गया तो मैं समझता हूं कि आज जो नगरों में सांस्कृतिक दीवारें खड़ी हो गई हैं, आज जो ग्राम और नगर का सम्बन्ध बिल्कुल टूट गया है और आज जो ग्राम से बुद्धि और कौशल नगरों में व्यर्थ खिंचा चला आ रहा है और आज जो जो हमारे शिक्षितों के व्यक्तित्व में भिन्नता है, उन सबकी बहुत कुछ समाप्ति हो जायगी।*

---

* दिल्ली विश्वविद्यालय में राष्ट्रपति द्वारा दिया गया दीक्षान्त भाषण।

— + —

नये राजनैतिक दल और सिद्धान्त

(पृष्ठ ९ का शेष)

इसके साथ साथ देश के सामने एक उच्च आदर्श रखने का प्रश्न है। विदेशी सत्ता के दिनों में कांग्रेस ने देश के सामने पूर्ण स्वराज्य का आदर्श रखा था। यह आदर्श सारे समाज को स्फूर्ति देने वाला था, इसलिए देश के सभी राष्ट्रीय नर-नारी कांग्रेस को योग देते रहे। अब स्वतन्त्र होने के पश्चात् उस आदर्श का तो कोई मतलब नहीं, उसके स्थान पर कांग्रेस देश के सामने कोई और आदर्श अभी रख नहीं पाई। धर्म निरपेक्ष राज्य का आदर्श ऐसा नहीं है कि जो जनसाधारण को स्फूर्ति दे सके। साधारण जनता तो अभी तक इसको समझी भी नहीं सकी। कार्यरूप में इसका अर्थ केवल मुसलमानों व पाकिस्तान का तुष्टीकरण है जिस को आज के भारत की जनता किसी भी हालत में पसन्द नहीं करती। इसलिए यह अपेक्षा करना कि इस आदर्श के लिए यदि समाज में उत्साह पैदा हो सकता है, मृगतृष्णा के समान ही है। इसलिए यदि समाज में से उदासीनता व निरुत्साह का भाव निकाल कर उसे प्रगति और वैभव के मार्ग पर अग्रसर करना है तो उसके सामने कोई और स्फूर्तिदायक आदर्श रखना होगा और वह आज की परिस्थिति में हिन्दू राष्ट्र का आदर्श ही हो सकता है। नवनिर्मित दलों से कोई भी इस आदर्श को जनता के सामने नहीं रख रहा मुसलमानों के वोट हासिल करने के लिए वे अपने आप को सीकुलर राज्य के आदर्श कांग्रेस से भी अच्छे भक्त बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

इसलिए यह स्पष्ट है कि देश में स्वतन्त्रता के पश्चात् जो नये दल बने हैं इनका आधार सिद्धान्त न हो कर केवल व्यक्तिगत वैमनस्य तथा सत्ता प्राप्त करने का स्वार्थ ही है। इनके द्वारा देश की आवश्यकता पूरी नहीं हो सकती। उसके लिए तो देश में विशुद्ध भारतीय राष्ट्रीयता के सिद्धान्त पर आश्रित एक ऐसे नये राजनैतिक पक्ष की आवश्यकता है, जो कि हिन्दू राष्ट्र के आदर्श को स्फूर्ति केन्द्र बना कर सारे समाज में नव चेतना व नव उत्साह पैदा कर सके।

*****

वीर अर्जुन साप्ताहिक का मूल्य

वार्षिक	१२)
अर्धवार्षिक	६॥)
एक प्रति	चार आना

[पृष्ठ १४ का शेष]

उसके मुंह को जबरदस्ती खोलने का प्रयत्न किया। उनमें से एक ने कहा कि यह 'पाकिस्तानी इन्जेक्शन' है। दर्द मारे मैं बेहोश हो गई। जब काफी रात हो चुकी थी तब कुछ पुलिस कान्स्टेबिलों को लेकर दरोगा मेरी कोठरी में आया। तीन या चार व्यक्तियों ने मुझे चारों तरफ से घेर कर पकड़ लिया और उनमें से एक ने मेरे साथ बलात्कार करना शुरू कर दिया। मैं फिर बेहोश हो गयी ......।"

जब वह इसे कह रही थी तब कुछ वकीलों के सिर शर्म से नीचे झुके हुए थे। अनेकों की आंखों से आंसू गिर रहे थे। इस शर्मनाक किस्से से कांग्रेसी एम० एल० ए० श्री प्रबोध लहरी का दिल इतना भर आया कि वे अदालत की परवाह किये बिना उठ खड़े हुए और उन्होंने पूछा कि "कि क्या इस महिला के घावों की मरहमपट्टी भी की गयी थी या नहीं"।

———

संसद् में बतलाया गया——

● दिल्ली में अक्तूबर १९५० तक चार महीनों में अन्न की चोर बाजारी जमाखोरी नफाखोरी तथा मुनाफाखोरी के २३० मामलों की रिपोर्ट मिली थी। इनमें से एक मामला तो वापस ले लिया गया, किन्तु शेष पर मुकद्दमे चलाये गये। १०१ मामलों में दंड दिया गया तथा १८ विचाराधीन हैं।

विंध्य प्रदेश में ८६ मामलों की रिपोर्ट मिली। अपराधियों को दंड दिया गया तथा उनके लाइसेन्स रद्द कर दिये गये या स्थगित कर दिये गये।

—श्री थिरुमल राव

● इस वर्ष अभी निश्चित रूप से रुई के उत्पादन का तखमीना नहीं लगाया जा सका लेकिन अनुमान है कि उत्पादन ३२,००,००० गांठों का होगा

—श्री मुंशी

चालू वर्ष में सरकार ने अपने हिसाब ३,७३,१८६ टन कृत्रिम खाद विदेशों से मंगाई। पिछले वर्ष राज्यों ने जितनी मांग की थी उससे आयात अधिक हुआ

—श्री थिरुमल राव

● आयकर जांच आयोग ने रिपोर्ट दी है कि १ नवम्बर, १९५० तक आयकर से छिपी हुई रकम ३१- लाख रुपये की रही। यदि इस रकम पर कर सरकार को दिया जाता, तो वह ३१६ लाख रुपये का होता। जिन लोगों ने यह कर छिपाया, उन्होंने इसको स्वीकार कर लिया है।

जिन लोगों ने इस सम्बन्ध में कोई झगड़ा नहीं किया उनसे ५२ लाख रुपये वसूल किये गये, और जिनसे झगड़ा किया गया, उनसे ३३ लाख रुपये प्राप्त हुए हैं। बहुत से लोग इसलिए कर नहीं दे रहे हैं कि उनके पास पैसा नहीं है। लेकिन सरकार उनसे कर वसूल करने का प्रयत्न कर रही है। आयकर जांच आयोग को ३१ मार्च १९५१ से भी अधिक समय तक अपना कार्य जारी रखने देने के प्रश्न पर भारत सरकार शीघ्र ही निश्चय करने वाली है।

—श्री देशमुख

● आयकर जांच आयोग के समक्ष ३६ करोड़ रुपए की रकम, जो लोग बचा गए थे और जिस पर कोई कर नहीं दिया गया है, के मामले आए हैं जब कि छिपी रकम ५० करोड़ रुपए की बताई जाती है। यह रकम आयोग ने पहले ही आंक दी थी। जिन लोगों के मामले आयोग के सामने नहीं हैं, उनकी आय का कोई अनुमान नहीं है। आयोग ने अपनी पहली रिपोर्ट में बताया है कि ६.२६ करोड़ रुपये पर कर नहीं दिया गया है इस पर ५.५५ करोड़ रुपया कर के रूप में प्राप्त होना है, जिसमें से अब तक ८९ लाख रुपए का कर प्राप्त हो चुका है २११ मामले फैसल किए गए तथा १०९९ मामले अभी विचाराधीन हैं २३१ मामलों में ३१६ लाख रुपए का कर लग सकता था।

—श्री देशमुख

● रेलवे के वित्त आयुक्त की विदेशों में निर्माताओं के साथ बातचीत के बाद भारत सरकार ने हाल में २१० रेलवे इंजन मंगाये हैं। इनसे पहले जो इंजन बड़ी संख्या में आयात किये जा चुके हैं वे अलग हैं। इन रेलवे इंजनों की कीमत ४.८२ करोड़ रुपये है। इनमें से एक स्काटिश फर्म ने १५० इंजनों के लिये आर्डर प्राप्त किया और शेष एक जर्मन फर्म ने।

रेलों के वित्त आयुक्त ने रेलवे डिब्बों पेट्रोल की टंकियों तथा गाड़ियों के लिये भी आर्डर दिये हैं। इनकी कुल कीमत ८.१४ करोड़ रु० है। इनके लिए दुनिया के विभिन्न देशों से टेंडर मांगे गये थे और रेलवे वित्त आयुक्त ने ब्रिटेन तथा यूरोप से इस संबंध में बातचीत की। जो दाम टेंडरों में मांगे गये थे, उनसे कम पर उपयुक्त सौदा हुआ।

अनुमान है कि भारतीय रेलों को प्रतिवर्ष करीब २०० इंजन बदलने पड़ते हैं। और वर्तमान खरीदारी चार वर्षीय पुनर्स्स्थापन कार्यक्रम की पूर्ति के सिलसिले में थी।

वर्ष में ११६ और स्टेशनों में बिजली की रोशनी का प्रबन्ध किया गया। इस वर्ष यात्रियों की सुविधाओं के लिये बजट में नियत दो करोड़ रु० की रकम में से ८०.५० लाख रुपये खर्च किए गये। वर्ष की समाप्ति के पूर्व निर्धारित रकम को खर्च करने का इरादा है।

—श्री आयंगर

● जब से भारत ने चीन की साम्यवादी सरकार को स्वीकृत किया है, अर्थात गत ६ महीनों में भारत ने चीन को १,६६, १४,०००रु मूल्य का निर्यात किया है जबकि उससे पूर्व के ६ महीनों में १,७१, ८५०००रु [illegible] था। लेकिन इसी अव[illegible] भारत का आयात घटा। ६ महीनों में ३०,२०,००० रु मूल्य वस्तुओं का आयात हुआ जबकि उससे पूर्व के ६ महीनों में ७४,२८,०००रु मूल्य का हुआ था भारत चीन को प्रधानतः पटसन का माल, सूती माल तथा तम्बाकू भेजता है।

—श्री श्रीप्रकाश

● ३० सितम्बर तक ६ महीनों में उद्योगों में ४०० हड़तालें हुईं और १०,-१४,०१२ कार्य-दिवों की हानि हुई। १७ हड़तालों को फैसले के लिए सौंपा गया और दो पंच-निर्णय से हल हुए।

—श्री जगजीवनराम

पंजाब के प्रधानमन्त्री डा० गोपीचन्द जी भार्गव गत १० दिसम्बर रविवार को नई दिल्ली के एस्काटर्स लिमिटेड के दिल्ली फार्म में गये थे। खेती की फर्गूसन प्रणाली संसार के बहुत उन्नत प्रणालियों में एक है। एस्काटर्स क० फार्गूसन ट्रैक्टरों का भारत में वितरण करने वाली संस्था है। इसी कम्पनी की ओर से स्थान स्थान पर शिक्षा केन्द्र खुले हैं। ट्रैक्टर लेने वालों को इन केन्द्रों में ट्रैक्टर चलाने की पूरी शिक्षा दी जाती है ऐसे ही एक एस्काटर्स फार्म को देखने के लिए श्री भार्गव गये। वहां उन्होंने बताया कि फार्गूसन भारत की भूमि के लिए बहुत उपयोगी है यद्यपि भारत में यान्त्रिक खेती का ज्ञान किसानों को बहुत कम है। हल चलाने और बीज बोने के लिए ट्रैक्टर उपयोगी होंगे। फसल काटने का काम ट्रैक्टरों से नहीं लेना चाहिए। अच्छा यह हो कि बहुत से किसान सहयोगी संस्था बना कर एक ट्रैक्टर ले लें और उसका सम्मिलित प्रयोग करें। सरकार ने भी नोलोखेड़ी में इस तरह का परीक्षण शुरू किया है और उसमें सफलता मिल रही है।

भारत सरकार की नीति यह है कि देश को मार्च १९५२ तक खाद्य के बारे में आत्मनिर्भर बन जाना चाहिये। यह किसी विशेष अन्न के संबंध में नहीं। उन्होंने अनुमान प्रकट किया कि चावल की कमी २४ लाख टन, गेहूं की ६ लाख टन, ज्वार बाजरे की १८ लाख टन है। इस प्रकार कुल ४८ लाख टन अन्न की कमी है। भारत सरकार चाहती है कि यह कमी पूरी की जाय।

—श्री थिरुमल राव

● केन्द्रीय सरकार ने १३,००० मील सड़कों के निर्माण तथा उनकी रक्षा का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया है। ये सड़क अस्थायी रूप से राष्ट्रीय राजमार्ग के रूप में स्वीकार की गई थी। सड़कों के निर्माण के बारे में अन्तिम कदम तभी उठाया जा सकता है जब कि संसद राष्ट्रीय राजमार्ग विधेयक को स्वीकार कर ले। यह विधेयक जल्दी ही संसद में पेश किया जायगा। १९४७ के बाद सुरंगों पुलों तथा नदी पार करने के साधनों के निर्माण में तथा राष्ट्रीय राजमार्गों की मरम्मत में करीब ४ करोड़ रु० व्यय हुए।

—श्री सत्यानम्

● निम्नलिखित १२ रेलवे लाइनें युद्ध काल में उखाड़ दी गई थीं किन्तु आगामी तीन वर्षों में उन्हें पुनः स्थापित करने का विचार है—

१ बसाढ़ कठाना २. दिनहपुर-तमलुक ३ आमलपुर-महरहिल ४. मथुरा-बोदिपालामलूर ५. बोकनूर-निलाम्बूर ६ ताचिली तालूर ७ रोहतक गोहाना पानीपत ८ नागरोट जोगिन्द्रनगर ९ चिजनौर चांदपुर स्याऊ १० उतरैला सुलतानपुर जसराबाद ११ न्वाब माधोगंज बालामऊ तथा १२ काम्बे बन्दर लाइटिंग।

श्री आयंगर

गाण्डीव के तीर

१०० चुम्बन, ८० आलिंगन और सच्चे कोकशास्त्र के विक्रेता को ८००) रु० जुर्माने और १ माह की सजा मथुरा के एक मजिस्ट्रेट ने दी।

—एक सम्वाददाता

अब प्रगतिशील पत्रों के मालिकों को उक्त विज्ञापनदाता का एक चित्र समवेदना के तौर पर छाप देना चाहिये।

× × ×

नेपाली कांग्रेसी छिपे हुए कम्यूनिस्ट हैं, क्योंकि उन्होंने सशस्त्र क्रांति की है।

—डा० खरे

डा० साहब का राजनीतिक गुर शायद यह है— उद्देश्य प्राप्ति के लिए हथियार उठाने वाला कम्यूनिस्ट, सिर पिटवाने वाला कांग्रेसी और अजगर के हैं, दाताराम का सिद्धांत मानने वाला हिन्दू महासभाई।

× × ×

पहले तो अंग्रेजों की सरकार हमारे भाषणों को सेंसर करती थी और आज अपनी सरकार का यह सी. आई. डी गाजियाबाद में मेरा भाषण लिख रहा है।

—त्रिलोक सिंह

राजनीति में श्रीमान् जी हमारी सरकार अभी गोरों को अपना गुरु १५ साल तक और मानने का इरादा रखती है।

× × ×

आगामी चुनावों में जनता अपना वोट कांग्रेस को न दे।

—सेठ डालमिया

अपने राम की राय में आप जैसों के हाथ बेच कर पैसे खड़े करले, तो सब से अच्छा।

× × ×

दलाई लामा ने अपना लोथा लहासा भेज दिया।

—रायटर

तब तो यूं समझिये, कम्यूनिस्टों की टंग-तुड़ाई बेकार ही गई।

× × ×

पजाबी भाषा-भाषी प्रान्त के निर्माण में केवल कांग्रेस ही रोड़े अटकाते हैं।

—सरदार तारासिंह

शायद उसे अभी तक नहीं पता है कि सरदार जी की पार्टी में १०५ अटकाने हो बस शामिल हैं।

× × ×

मुस्लिम लीग काश्मीर मसले पर चुनाव लड़ेगी।

"डान"

पाकिस्तान में गधों की कमी न हुई तो जीत जायगी।

× × ×

नई-नई लीग पौदों से लिपाकत अली को नींद हराम हो गई।

"हमदोष"

हाय कायदे आजम का भी मियां देखना दर्द कमर में हो अगर तो कमर का सेकना करके एक छोटा सुराख, कहना कान में लग रही है आग तेरे पाकिस्तान में

× + ×

सोशलिस्ट राज्य में अधिकतम वेतन १ हजार और न्यूनतम १००) रु० होगा।

—जयप्रकाश

पहले कांग्रेसी राज्य में भी वेतनों की दर अधिकतम ५००) रु० रखना ही गांधी जी ने निश्चित किया था, पता नहीं कैसे एक कड़ी और आगे जुड़ गई।

× × ×

कांग्रेसों के झगड़े अदालतों में नहीं जायेंगे।

—हाई कमांड

लाठी डंडे से सुलझाने की नई पद्धति निकल चुकी है।

× × ×

दूसरे दर्जे में सफर करते तीसरे दर्जे के मुसाफिर पकड़े गये।

—एक शीर्षक

यदि लोग गद्दी हटा कर और पंखा बन्द करके बैठ जायें तो रेलवे वालों को क्या आपत्ति है।

—पाराशर

[पृष्ठ ७ का शेष]

लिपि ग्रंथ पड़े हुए हैं। उपन्यास, अभिलोष, अंतिम प्रश्न, अभागी, सौदामिनी की आंखें आदि। कविता संग्रह— अधूरी चिट्ठी, दो हत्यायें आदि।

कविता संग्रह – समाधि लेख, मेंहदी, अर्धांगिनी, विद्युत शिखा, रजगायन, सूर्यों के देश से आदि।

आलोचनात्मक—'रानी कीर्ति देवी और उनका भक्ति साहित्य' 'दिगम्बरी' 'विश्व साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यास' 'राजस्थानी लोक गीत' आधुनिक युग-प्रवर्तक, अनाज (एकांकी) आदि।

इस प्रकार हम देखते हैं कि केवल राजस्थान में ही अनेकों हस्तलिखित ग्रंथ पड़े हैं, प्रकाशक न मिलने के कारण हिन्दी जगत के सामने न आ सके हैं। अभी एक पुस्तक 'साकेत में नया सर्ग' प्रकाशित हुई है पुस्तक के लेखक ही जानते हैं उसका प्रकाशन कसे हुआ। एक प्रसिद्ध लेखक को इतनी दुविधा हुई तो अन्य लेखकों क्या हाल हो सकता है। यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। यदि प्रान्तों के एकत्रित धन से एक प्रकाशन स्तम्भ ही दिया जाय तो बहुत उपयोगी कार्य हो सकेगा।

प्रान्तीयता गुटबन्दी, आदि का त्याग कर सब प्रान्तों को समान समझना चाहिए। सब प्रान्तों को बराबर मान्यता देनी चाहिए और राजस्थान के प्रति अपना उत्तरदायित्व निभाते हुए राजस्थानियों की मांगों की ओर उदासीन नहीं रहना चाहिए।

[पृष्ठ २१ का शेष]

प्रकार यहां के एक जिले का औसत क्षेत्रफल ४,३२१ वर्गमील तथा औसत जनसंख्या १२,७१,२६६ है।

उड़ीसा का क्षेत्रफल ३२,१६८ वर्गमील जनसंख्या ८७,२८,५४४ तथा जिलों की संख्या ६ है। इस प्रकार यहां के जिले का औसत क्षेत्रफल ५,३६६ वर्गमील तथा उसकी औसत जनसंख्या १४,५४,७९० है।

इन आंकड़ों के निष्पक्ष तथा विचार-पूर्ण अध्ययन से यह स्पष्ट है कि मध्य भारत के जिलों की समिति द्वारा प्रस्तावित इस की संख्या में कमी की बेहद गुंजायश है परन्तु यदि किन्हीं कारणों से अभी ऐसा करना सम्भव न हो तो बजाय १६ के १० जिले बना देना मितव्ययता ही नहीं, अन्य प्रांतों से शासकीय समानता आदि को भी दृष्टि में रखते हुए भी आवश्यक हो गया है।

अजयवर्ग

पहेली नं०—२ का शुद्ध हल

बायें दायें—१ सफाई २ ... ३ वीर ४ अहीर ५. सतना। ऊपर नीचे १ सफर ६ विरथ ७ वायु ८. ... ६ हरेन्द्र १० इनसाफ।

द्वितीय पुरस्कार विजेता श्री ... हंसराजजी ..., प्रतापगढ़।

अजयवर्ग पहेली के लिए एजेन्टों की आवश्यकता है इच्छुक व्यक्ति पत्र व्यवहार करें।

हिमालय फार्मेसी प्रतापगढ़ (राजस्थान)